Yoga Vasishtha, Book 7 — Nirvāṇa II — part 1, chapters 1–108

Liberation, part two. Sanskrit with English and Hindi.

From yogavasishtha.com — edition of 28 September 2026. The Sanskrit is in the public domain. The English and Hindi translations were made with a language model and have not been reviewed by a Sanskrit scholar: read them as a study aid, not as an authority. Each verse gives the Sanskrit in Devanagari and IAST, then the English, then the Hindi.

Chapter 1

7.1.1

श्रीराम उवाच । नैष्कर्म्यात्कल्पनात्यागात्तनुः पतति देहिनः । कथमेतदतो ब्रह्मन्संभवत्याशु जीवतः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | naiṣkarmyātkalpanātyāgāttanuḥ patati dehinaḥ | kathametadato brahmansaṃbhavatyāśu jīvataḥ || 1 ||

Sri Rama said: The body of the embodied being falls due to the renunciation of imagination from inaction. How does this happen, O Brahman, quickly to the living being?

श्री राम ने कहा: निष्क्रियता से कल्पना के त्याग से शरीर गिरता है। हे ब्रह्मन्, यह कैसे होता है जीवित के लिए शीघ्र?

7.1.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । जीवतः कल्पनात्यागो युज्यते न त्वजीवतः । रूपमस्य यथातत्त्वं शृणु श्रवणभूषणम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jīvataḥ kalpanātyāgo yujyate na tvajīvataḥ | rūpamasy yathātattvaṃ śṛṇu śravaṇabhūṣaṇam || 2 ||

Sri Vasistha said: The renunciation of imagination is appropriate for the living being, not for the non-living. Listen to the true nature of its form, which is an ornament for the ears.

श्री वसिष्ठ ने कहा: कल्पना का त्याग जीवित के लिए उपयुक्त है, अजीवित के लिए नहीं। इसके रूप की सच्ची प्रकृति सुनो, जो कानों का आभूषण है।

7.1.3

अहंभावनमेवाहुः कल्पनं कल्पनाविदः । नभोर्थभावनं तस्य संकल्पत्याग उच्यते ॥ ३ ॥

ahaṃbhāvanamevāhuḥ kalpanaṃ kalpanāvidaḥ | nabhorthabhāvanaṃ tasya saṃkalpatyāga ucyate || 3 ||

Those who know imagination call the sense of 'I' as imagination. The renunciation of that is called the renunciation of imagination.

कल्पना को जानने वाले 'मैं' की भावना को कल्पना कहते हैं। उसका त्याग कल्पना का त्याग कहलाता है।

7.1.4

पदार्थरसमेवाहुः कल्पनं कल्पनाविदः । नभोर्थभावनं तस्य संकल्पत्याग उच्यते ॥ ४ ॥

padārtharasamevāhuḥ kalpanaṃ kalpanāvidaḥ | nabhorthabhāvanaṃ tasya saṃkalpatyāga ucyate || 4 ||

Those who know imagination call the essence of objects as imagination. The renunciation of that is called the renunciation of imagination.

कल्पना को जानने वाले वस्तुओं के रस (पदार्थरस) को कल्पना कहते हैं। उसका त्याग कल्पना का त्याग कहलाता है।

7.1.5

इदं वस्त्विति संवेगमाहुः कल्पनमुत्तमाः । नभोर्थभावनं तस्य संकल्पत्याग उच्यते ॥ ५ ॥

idaṃ vastviti saṃvegamāhuḥ kalpanamuttamāḥ | nabhorthabhāvanaṃ tasya saṃkalpatyāga ucyate || 5 ||

The supreme ones call the intense feeling of 'this is the object' as imagination. The renunciation of that is called the renunciation of imagination.

उत्तम लोग 'यह वस्तु है' की भावना को कल्पना कहते हैं। उसका त्याग कल्पना का त्याग कहलाता है।

7.1.6

स्मरणं विद्धि संकल्पं शिवमस्मरणं विदुः । तच्च प्रागनुभूतं च नानुभूतं च भाव्यते ॥ ६ ॥

smaraṇaṃ viddhi saṃkalpaṃ śivamasmaraṇaṃ viduḥ | taccaprāganubhūtaṃ ca nānubhūtaṃ ca bhāvyate || 6 ||

Know that remembrance is intention, and forgetfulness is auspicious. That which has been experienced before is not experienced again.

स्मरण संकल्प है, और भूलना शिव है | जो पहले अनुभव किया गया है, वह फिर से नहीं अनुभव किया जाता |

7.1.7

अनुभूतां नानुभूतां स्मृतिं विस्मृत्य काष्ठवत् । सर्वमेवाशु विस्मृत्य गूढस्तिष्ठ महामते ॥ ७ ॥

anubhūtāṃ nānubhūtāṃ smṛtiṃ vismṛtya kāṣṭhavat | sarvamevāśu vismṛtya gūḍhastiṣṭha mahāmate || 7 ||

Forget the memory of what has been experienced and what has not been experienced, like a piece of wood. Forget everything quickly, O great-minded one, and remain hidden.

जो अनुभव किया गया है और जो नहीं अनुभव किया गया है, उस स्मृति को भूल जाओ, जैसे कि एक लकड़ी का टुकड़ा | सब कुछ जल्दी भूल जाओ, और छिपे रहो, हे महामते |

7.1.8

सर्वास्मरणमात्रात्मा तिष्ठायातेषु कर्मसु । अर्धसुप्तशिशुस्पन्द इवाभ्यस्तोपपत्तिषु ॥ ८ ॥

sarvāsmaraṇamātrātmā tiṣṭhāyāteṣu karmasu | ardhasuptaśiśuspanda ivābhyastopapattiṣu || 8 ||

Remain in all actions with the essence of complete remembrance, like the spontaneous movement of a half-asleep child.

सभी कर्मों में पूर्ण स्मरण की आत्मा के साथ रहो, जैसे अर्ध-सोये बच्चे का स्वाभाविक स्पंदन |

7.1.9

निःसंकल्पप्रवाहेण चक्रं प्रस्पन्दते यथा । स्पन्दस्वकर्मस्वनघप्राक्संस्कारवशात्तथा ॥ ९ ॥

niḥsaṃkalpapravāheṇa cakraṃ praspandate yathā | spandasvakarmasvanaghaprāksaṃskāravaśāttathā || 9 ||

Just as the wheel moves spontaneously without intention, so too one should engage in one's own actions, influenced by past impressions.

जैसे चक्र बिना किसी इरादे के स्वतः ही चलता है, वैसे ही एक व्यक्ति को अपने कर्मों में लगना चाहिए, जो पिछले संस्कारों से प्रभावित होते हैं |

7.1.10

अविद्यमानचित्तस्त्वं सत्त्वसंस्कारमागतः । प्रवाहपतितेष्वेव स्पन्दस्व स्वेषु कर्मसु ॥ १० ॥

avidyamānacittastvaṃ sattvasaṃskāramāgataḥ | pravāhapatiteṣveva spandasva sveṣu karmasu || 10 ||

You, whose mind is non-existent, have arrived at the purity of impressions. Engage in your own actions, which have fallen into the natural flow.

तुम, जिसका मन अनुपस्थित है, संस्कारों की शुद्धता तक पहुंच गए हो | अपने कर्मों में लगो, जो स्वाभाविक प्रवाह में गिर गए हैं |

7.1.11

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे । असंकल्पः परं श्रेयः स किमन्तर्न भाव्यते ॥ ११ ॥

ūrdhvabāhurviraun̐myeṣa na ca kaścicchṛṇoti me | asaṃkalpaḥ paraṃ śreyah sa kimantarna bhāvyate || 11 ||

With arms raised, I speak, but no one listens to me. Without desire, the supreme good is attained, so why should it not be realized?

हाथ उठाकर मैं बोलता हूँ, लेकिन कोई मेरी बात नहीं सुनता। इच्छा रहित से परम कल्याण प्राप्त होता है, तो फिर यह क्यों न होना चाहिए?

7.1.12

अहो मोहस्य माहात्म्यं यदयं सर्वदुःखहा । चिन्तामणिर्विचाराख्यो हृत्स्थोऽपि त्यज्यते जनैः ॥ १२ ॥

aho mohasya māhātmyaṃ yadayaṃ sarvaduḥkhahā | cintāmaṇirvicārākhyo hṛtstho'pi tyajyate janaiḥ || 12 ||

Oh, the greatness of delusion! This, which removes all sorrows, the wish-fulfilling gem of thought, is abandoned by people even though it resides in the heart.

ओह, मोह की महानता! यह, जो सभी दुःखों को दूर करता है, विचार का चिन्तामणि, लोगों द्वारा त्याग दिया जाता है भले ही यह हृदय में रहता है।

7.1.13

अवेदनमसंकल्पस्तन्मयेनैव भूयताम् । एतावत्परमं श्रेयः स्वयमेवानुभूयताम् ॥ १३ ॥

avedanamasankalpas tanmayenaiva bhūyatām | etāvatparamaṃ śreyah svayamevānubhūyatām || 13 ||

May one be absorbed in the state of non-desire and non-suffering. May one experience the supreme good by oneself.

मन को इच्छा और दुःख से मुक्त करें और अपने आप ही परम कल्याण का अनुभव करें।

7.1.14

किल तूष्णीं स्थितेनैव तत्पदं प्राप्यते परम् । परमं यत्र साम्राज्यमपि राम तृणायते ॥ १४ ॥

kila tūṣṇīṃ sthitenaiva tatpadaṃ prāpyate param | paramaṃ yatra sāmrājyamapi rāma tṛṇāyate || 14 ||

Indeed, by remaining silent, one attains that supreme state where even the highest sovereignty is considered insignificant.

वास्तव में, चुप रहकर, वह परम स्थिति प्राप्त होती है जहाँ सबसे ऊँची साम्राज्य भी तुच्छ मानी जाती है।

7.1.15

गम्यदेशैकनिष्ठस्य यथा पान्थस्य पादयोः । स्पन्दो विगतसंकल्पस्तथा स्पन्दस्व कर्मसु ॥ १५ ॥

gamyadeśaikanisthasya yathā pānthasya pādayoḥ | spando vigatasaṃkalpas tathā spandasva karmasu || 15 ||

Just as the feet of a traveler move towards the destination, so too should one act in deeds without desire.

जैसे एक यात्री के पैर लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं, उसी प्रकार इच्छा रहित कर्मों में भी स्पन्दन करें।

7.1.16

सर्वकर्मफलाभोगमलं विस्मृत्य सुप्तवत् । प्रवाहपतिते कार्ये स्पन्दस्व गतवेदनम् ॥ १६ ॥

sarvakarmaphalābhogamalaṃ vismṛtya suptavat | pravāhapatite kārye spandasva gatavedanam || 16 ||

Forgetting all the fruits of actions, be like one asleep. In the flow of actions, act without feeling.

सभी कर्मों के फलों को भूलकर, सोये हुए की तरह रहें। कार्यों के प्रवाह में, भावनाओं के बिना कार्य करें।

7.1.17

स्पन्दस्वाकृतसंकल्पं सुखदुःखान्यभावयन् । प्रवाहपतिते कार्ये चेष्टितोन्मुक्तशष्पवत् ॥ १७ ॥

spandasvākṛtasaṃkalpaṃ sukhaduḥkhānyabhāvayan | pravāhapatite kārye ceṣṭitonmuktasaṣpavat || 17 ||

Act without any preconceived notions, not thinking about happiness or sorrow. In the flow of actions, act like a blade of grass moving freely.

किसी पूर्वनिर्धारित विचार के बिना कार्य करें, सुख या दुःख के बारे में सोचे बिना। कार्यों के प्रवाह में, एक घास की पत्ती की तरह स्वतंत्र रूप से कार्य करें।

7.1.18

रसभावनमन्तस्ते मालं भवतु कर्मसु । दारुयन्त्रमयस्येव परार्थमिव कुर्वतः ॥ १८ ॥

rasabhāvanamantaste mālaṃ bhavatu karmasu | dāruyantramayasyeva parārthamiva kurvataḥ || 18 ||

Let the essence of your actions be like a garland within you. Act as if you are a wooden machine, working for the sake of others.

अपने कार्यों का सार आपके अंदर एक माला की तरह हो। ऐसे कार्य करें जैसे आप एक लकड़ी की मशीन हों, दूसरों के लिए काम कर रहे हों।

7.1.19

नीरसा एव ते सन्तु समस्तेन्द्रियसंविदः । आकारमात्रसंलक्ष्या हेमन्ततौ लता इव ॥ १९ ॥

nīrasā eva te santu samastendriyasaṃvidaḥ | ākāramātrasaṃlakṣyā hemantartau latā iva || 19 ||

Let all your sensory perceptions be without taste, like a vine in winter, barely noticeable.

आपकी सभी इंद्रिय संवेदनाएं स्वादहीन हों, जैसे सर्दी के मौसम में एक लता जो बहुत कम नजर आती है।

7.1.20

बोधार्कपीतरसया स्पन्दन् षड्वर्गसत्तया । यन्त्रस्पन्दोपमस्तिष्ठ वल्ल्येव शिशिरे द्रुमः ॥ २० ॥

bodhārkapītarasayā spandan ṣaḍvargasattayā | yantraspandopamastiṣṭha vallyeva śiśire drumaḥ || 20 ||

With the radiance of enlightenment, vibrate with the essence of the six senses. Stand like a machine, moving like a vine in winter.

बोध की चमक के साथ, छह इंद्रियों की सत्ता के साथ कंपित हों। एक मशीन की तरह खड़े रहें, सर्दी के मौसम में एक लता की तरह हिलते हुए।

7.1.21

चिदान्तररसान्येव प्रवृत्तान्यपि धारय । स्वयत्नेनेन्द्रियाण्याशु हेमन्तर्तुस्तरूनिव ॥ २१ ॥

cidāntararasānyeva pravṛttānyapi dhāraya | svayatneneindriyāṇyāśu hemantartustarūniva || 21 ||

Just as trees shed their leaves in the winter, so too should you, with effort, control your senses which are inclined towards worldly pleasures.

जैसे सर्दी के मौसम में पेड़ अपने पत्ते गिरा देते हैं, वैसे ही आपको भी अपनी इन्द्रियों को, जो विषय-भोगों में लगी हुई हैं, प्रयास से नियंत्रित करना चाहिए।

7.1.22

सरसेन्द्रियवृत्तेस्ते कुर्वतोऽकुर्वतस्तथा । संसारानर्थसार्थोऽयं न कदाचन शाम्यति ॥ २२ ॥

sarasendriyavṛttes te kurvato'kurvatas tathā | saṃsārānarthasārtho'yaṃ na kadācana śāmyati || 22 ||

Whether you engage in sensual activities or not, the cycle of worldly miseries never ceases.

चाहे आप इन्द्रियों की क्रियाओं में लगें या न लगें, संसार के दुःखों का चक्र कभी नहीं रुकता।

7.1.23

निःसंकल्पमरुज्ज्वालायन्त्राम्बुस्पन्दवद्यदि । स्पन्दसे तदनन्ताय श्रेयसे परिकल्पसे ॥ २३ ॥

niḥsaṃkalpamarujjvālāyantrāmbuspandavadyadi | spandase tadanantāya śreyase parikalpase || 23 ||

If you vibrate like a machine without desires and without pain, you will attain the highest good, which is endless.

यदि आप इच्छा और दुःख के बिना एक यंत्र की तरह स्पंदित होते हैं, तो आप अनंत कल्याण प्राप्त करेंगे।

7.1.24

एतदेव परं धैर्यं जन्मज्वरनिवारणम्। यदवासनमभ्यस्ता निजकर्मसु कर्तृता ॥ २४ ॥

etadeva paraṃ dhairyaṃ janmajvaranivāraṇam | yadavāsanamabhyastā nijakarmasu kartṛtā || 24 ||

The highest courage is to be free from the fever of birth, which is achieved by being detached from one's actions.

जन्म के ज्वर से मुक्ति पाना ही सबसे बड़ा धैर्य है, जो अपने कर्मों से अलग होने से प्राप्त होता है।

7.1.25

अवासनमसंकल्पं यथाप्राप्तानुवृत्तिमान्। शनैश्चक्रभ्रमाभोग इव स्पन्दस्व कर्मसु ॥ २५ ॥

avāsanamasankalpaṃ yathāprāptānuvṛttimān | śanaiścakrabhramābhoga iva spandasva karmasu || 25 ||

Be free from desires and detached, following the natural course of actions. Like the slow rotation of a wheel, engage in your duties.

इच्छा और आसक्ति से मुक्त होकर, प्राकृतिक क्रम के अनुसार कर्मों में लगे रहें। जैसे चक्र का धीमा घूमना, वैसे ही अपने कर्तव्यों में लगे रहें।

7.1.26

मा कर्मफलबुद्धिर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि। उभयं वा त्यजैतत्त्वमुभयं वा समाश्रय ॥ २६ ॥

mā karmaphalabuddhirbhūrmā te saṅgo'stvakarmaṇi | ubhayaṃ vā tyajaitattvamubhayaṃ vā samāśraya || 26 ||

Do not be attached to the fruits of your actions, nor be attached to inaction. Abandon both or embrace both equally.

अपने कर्मों के फलों से आसक्त न हो, न ही अकर्मण्यता से आसक्त हो | दोनों को त्याग दो या दोनों को समान रूप से स्वीकार करो ||

7.1.27

बहुनात्र किमुक्तेन संक्षेपादिदमुच्यते। संकल्पनं मनोबन्धस्तदभावो विमुक्तता ॥ २७ ॥

bahunātra kimuktēna saṃkṣēpādidamucyatē | saṃkalpanaṃ manōbandhastadabhāvō vimuktatā || 27 ||

What more needs to be said here? In brief, this is stated: Resolution is the bondage of the mind; its absence is liberation.

इसमें और क्या कहना है? संक्षेप में यह कहा जाता है: संकल्प (resolution) मन का बंधन है; उसका अभाव मुक्ति है ||

7.1.28

नेह कार्यं न वाऽकार्यमस्ति किंचिन्न कुत्रचित्। सर्वं शिवमजं शान्तमनन्तं प्राग्वदास्यताम् ॥ २८ ॥

nēha kāryaṃ na vā'kāryamasti kiṃcinna kutracit | sarvaṃ śivamajaṃ śāntamanantaṃ prāgvadāsyatām || 28 ||

Here, there is no duty nor non-duty; nothing exists anywhere. Everything is auspicious, unborn, peaceful, and infinite. Let it be proclaimed thus.

यहाँ न तो कर्तव्य है न ही अकर्तव्य; कहीं कुछ भी नहीं है | सब कुछ शिव, अजन्मा, शांत और अनंत है | ऐसा घोषित किया जाए ||

7.1.29

पश्यन्कर्मण्यकर्मत्वमकर्मणि च कर्मताम्। यथाभूतार्थचिद्रूपः शान्तमास्व यथासुखम् ॥ २९ ॥

paśyankarmaṇyakarma tvamakarmaṇi ca karmatām | yathābhūtārthacidrūpaḥ śāntamāsva yathāsukham || 29 ||

See inaction in action and action in inaction. Remain peaceful, realizing the true nature of consciousness, as you are comfortable.

कर्म में अकर्म और अकर्म में कर्म देखो | चेतना की वास्तविक प्रकृति को समझकर, सुखपूर्वक शांत रहो ||

7.1.30

अवेदनं विदुर्योगं चित्तक्षयमकृत्रिमम्। अत्यन्तं तन्मयो भूत्वा तथा तिष्ठ यथासि भोः ॥ ३० ॥

avēdanaṃ viduryōgaṃ cittakṣayamakṛtrimam | atyantaṃ tanmayō bhūtvā tathā tiṣṭha yathāsi bhoḥ || 30 ||

They know yoga as the cessation of the mind's fluctuations, which is natural and effortless. Becoming completely absorbed in that state, remain as you are, O wise one.

उन्होंने योग को मन की वृत्तियों के निरोध के रूप में जाना, जो स्वाभाविक और प्रयासरहित है | उस अवस्था में पूरी तरह से डूबकर, जैसे हो वैसे ही रहो, हे बुद्धिमान |

7.1.31

समे शान्ते शिवे सूक्ष्मे द्वैतैक्यपरिवर्जिते। ततेऽनन्ते परे शुद्धे किं केन किल खिद्यते ॥ ३१ ॥

same śānte śive sūkṣme dvaitaikyaparivarjite | tate'nante pare śuddhe kiṃ kena kila khidyate || 31 ||

In the state of equanimity, peace, auspiciousness, subtlety, devoid of duality and non-duality, what is there to be disturbed in the infinite, supreme, pure state?

समता, शांति, कल्याण, सूक्ष्मता, द्वैत और अद्वैत से रहित स्थिति में, अनंत, परम, शुद्ध स्थिति में क्या विचलित हो सकता है?

7.1.32

नोदेतु त्वयि संकल्पो मरुभूमाविवाङ्कुरः। इच्छा नोदेतु भवति लतिकेवोपलोदरे ॥ ३२ ॥

nodetu tvayi saṃkalpo marubhūmāvivāṅkuraḥ | icchā nodetu bhavati latikevopalodare || 32 ||

May no intention arise in you, like a sprout in the desert. May no desire arise in you, like a creeper in a rock.

तुममें कोई संकल्प न उत्पन्न हो, जैसे रेगिस्तान में अंकुर। तुममें कोई इच्छा न उत्पन्न हो, जैसे चट्टान में लता।

7.1.33

अवेदनस्य शान्तस्य जीवतो वाप्यजीवतः। नेह किंचित्कृतेनार्थो नाकृतेनापि कश्चन ॥ ३३ ॥

avedanasya śāntasya jīvato vāpyajīvataḥ | neha kiṃcitkṛtenārtho nākṛtenāpi kaścana || 33 ||

For one who is free from suffering, peaceful, whether living or dead, there is no benefit from action or inaction.

जो दुःख से मुक्त है, शांत है, चाहे जीवित हो या मृत, उसके लिए कर्म या अकर्म से कोई लाभ नहीं है।

7.1.34

यत्कर्माकर्म शान्तेऽन्तः शाश्वताभेदरूपिणि। न कर्मणि च कर्माणि न कर्तर्यपि कर्तृता ॥ ३४ ॥

yatkarmākarmā śānte'ntaḥ śāśvatābhedarūpiṇi | na karmaṇi ca karmāṇi na kartaryapi kartṛtā || 34 ||

In the peaceful, eternal, non-dual state, action and inaction are the same. There is no action in action, nor is there any doer in the doer.

शांत, नित्य, अद्वैत स्थिति में, कर्म और अकर्म एक ही हैं। कर्म में कोई कर्म नहीं है, और कर्ता में कोई कर्ता नहीं है।

7.1.35

अहंममेति संविदन्न दुःखतो विमुच्यसे। असंविदन्विमुच्यसे यदीप्सितं तदाचर ॥ ३५ ॥

ahaṃmameti saṃvidanna duḥkhato vimucyase | asaṃvidanvimucyase yadīpsitaṃ tadācara || 35 ||

If you have the awareness of 'I' and 'mine', you will not be freed from suffering. If you are free from this awareness, you will be liberated. Do what is desired.

यदि आपमें 'मैं' और 'मेरा' की संवेदना है, तो आप दुःख से मुक्त नहीं होंगे। यदि आप इस संवेदना से मुक्त हैं, तो आप मुक्त हो जाएंगे। जो आपको पसंद है, वह करें।

7.1.36

अहं ममेति नास्त्यलं यदस्ति तच्छिवं परम्। परात्परं त्विदं शिवादशब्दमर्थरूपकम्॥ ३६॥

ahaṃ mameti nāstyalaṃ yadasti tacchivaṃ param | parātparaṃ tvidaṃ śivādaśabdamartharūpakam || 36 ||

There is no end to 'I' and 'mine'. That which exists is the supreme Shiva. Beyond that, this is the form of the word Shiva, which is beyond the supreme.

मैं और मेरा का कोई अंत नहीं है। जो है, वह परम शिव है। उससे परे, यह शिव शब्द का रूप है, जो परम से भी परे है।

7.1.37

यदृश्यते जगदिदं खलु किंचिदेतद्हेम्नोऽङ्गदत्वमिव भाति न विद्यमानम्। अस्य क्षयं विदुरवेदनमेव पश्चात्सत्यं तदेव परमार्थमथावशिष्टम्॥ ३७॥

yaddṛśyate jagadidaṃ khalu kiṃcidedadheṃno'ṅgadatvamiva bhāti na vidyamānam | asya kṣayaṃ viduravedanameva paścātsatyaṃ tadeva paramārthamathāvaśiṣṭam || 37 ||

Whatever is seen in this world appears as a mere ornament of gold, not truly existing. Its destruction is known as non-existence, and what remains is the true, ultimate reality.

जो कुछ भी इस जगत में दिखाई देता है, वह सोने के आभूषण की तरह प्रतीत होता है, वास्तव में मौजूद नहीं है। इसका विनाश अविद्यमानता के रूप में जाना जाता है, और जो शेष रहता है, वह सत्य और परम वास्तविकता है।

Chapter 2

7.2.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अद्वैतैक्यं विमननं शान्तमात्मन्यवस्थितम् । यथा पङ्कमयं सैन्यं तथा शिवमयं जगत् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | advaitaikyaṃ vimananaṃ śāntamātmanyavasthitam | yathā paṅkamayaṃ sainyaṃ tathā śivamayaṃ jagat || 1 ||

Shri Vasishtha said: The non-dual unity, free from thought, is established in the peaceful self. Just as an army is made of mud, so is the world made of Shiva.

श्री वसिष्ठ ने कहा: अद्वैत एकता, विचार से मुक्त, शान्त आत्मा में स्थित है। जैसे सेना मिट्टी की बनी होती है, वैसे ही जगत् शिव का बना हुआ है।

7.2.2

मनोहंकारबुद्ध्यादिचित्तमेव च तन्मयम् । कालाकारक्रियाशब्दशक्तिसंदर्भसंयुतम् ॥ २ ॥

manohaṅkārabuddhyādicittameva ca tanmayam | kālākārakriyāśabdaśaktisaṃdarbhasaṃyutam || 2 ||

The mind, ego, intellect, and other aspects of consciousness are all made of that (Shiva). They are associated with time, form, action, sound, and power.

मन, अहंकार, बुद्धि और चेतना के अन्य पहलू सभी उसी (शिव) से बने हैं। वे समय, रूप, क्रिया, शब्द और शक्ति से जुड़े हुए हैं।

7.2.3

शिवपङ्कमया एव रूपालोकमनःक्रमाः । तन्मयत्वादनन्तत्वादतः किं केन चेत्यते ॥ ३ ॥

śivapaṅkamayā eva rūpālokamanḥkramāḥ | tanmayatvādanantatvādataḥ kiṃ kena cetayate || 3 ||

Forms, worlds, and mental processes are all made of Shiva. Due to their nature of being made of Shiva and being infinite, what can be thought of by whom?

रूप, लोक और मानसिक प्रक्रियाएँ सभी शिव से बनी हैं। उनके शिव से बने होने और अनंत होने के कारण, किसने क्या सोचा?

7.2.4

मातृमेयप्रमाणादिदेशकालौ दिगादि च । भावाभावविवर्तादिशिवपङ्कमयात्मकम् ॥ ४ ॥

mātṛmeyapramāṇādideśakālau digādi ca | bhāvābhāvavivartādiśivapaṅkamayātmakam || 4 ||

The subject, object, measure, place, time, direction, and transformations of existence and non-existence are all of the nature of Shiva.

विषय, वस्तु, माप, स्थान, समय, दिशा, और अस्तित्व और अनस्तित्व के परिवर्तन सभी शिव के स्वभाव के हैं।

7.2.5

अहंममेत्यतः सारान्नेतरत्परमेश्वरात् । असंसक्तमतिस्तिष्ठ हा शिलोदरमौनवत् ॥ ५ ॥

ahaṃmametyataḥ sārānnetaratparamēśvarāt | asaṃsaktamatistiṣṭha hā śilodaramaunavat || 5 ||

Therefore, abandon the essence of 'I' and 'mine' other than the supreme Lord. Remain with an unattached mind, like the silence of a stone belly.

इसलिए, 'मैं' और 'मेरा' की सार को परमेश्वर के अलावा छोड़ दें। असंलग्न मन के साथ रहें, जैसे पत्थर के पेट की चुप्पी।

7.2.6

श्रीराम उवाच । अहंममेत्यसद्रूपं ज्ञस्याभावयतः प्रभो । अशुभं कर्मणां त्यागादनुष्ठानाच्च किं शुभम् ॥ ६ ॥

śrīrāma uvāca | ahaṃmametyasadrūpaṃ jñasyābhāvayataḥ prabho | aśubhaṃ karmaṇāṃ tyāgādanuṣṭhānācca kiṃ śubham || 6 ||

Shri Ram said: O Lord, what good is there in the renunciation of evil deeds and the performance of good deeds, which cause the false identification with 'I' and 'mine' to disappear?

श्री राम ने कहा: हे प्रभो, 'मैं' और 'मेरा' की असत्य पहचान को दूर करने वाले अशुभ कर्मों के त्याग और शुभ कर्मों के अनुष्ठान में क्या शुभ है?

7.2.7

श्रीवसिष्ठ उवाच । पृच्छामि यदहं तत्त्वं कथयाशु ममानघ । यदि जानासि तत्त्वेन कर्म तावत्किमुच्यते ॥ ७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pṛcchāmi yadahaṃ tattvaṃ kathayāśu mamānagha | yadi jānāsi tattvena karma tāvatkimucyate || 7 ||

Vasishtha said: I ask you, O sinless one, tell me the truth about what I am. If you know the truth, what is this action called?

वसिष्ठ ने कहा: मैं पूछता हूँ, हे निष्पाप, मुझे यह सत्य बताओ कि मैं कौन हूँ। यदि तुम सत्य को जानते हो, तो यह कर्म क्या कहलाता है?

7.2.8

विस्तारः कर्मणः कीदृङ् मूलं तस्य च किं भवेत् । नाशनीयं च निपुणं कथं कथय नाश्यते ॥ ८ ॥

vistāraḥ karmaṇaḥ kīdṛṅ mūlaṃ tasya ca kiṃ bhavet | nāśanīyaṃ ca nipuṇaṃ kathaṃ kathaya nāśyate || 8 ||

What is the extent of action? What is its root? And how can it be destroyed skillfully?

कर्म का विस्तार क्या है? उसका मूल क्या है? और उसे कुशलता से कैसे नष्ट किया जा सकता है?

7.2.9

श्रीराम उवाच । यन्नाशनीयं निपुणं तन्नूनं च विनाश्यते । मूलकाषेण भगवन्न शाखादिविकर्तनैः ॥ ९ ॥

śrīrāma uvāca | yannāśanīyaṃ nipuṇaṃ tannūnaṃ ca vināśyate | mūlakāṣeṇa bhagavanna śākhādivikartanaiḥ || 9 ||

Shri Ram said: That which is skillfully destroyed is indeed destroyed. O Lord, it is not destroyed by cutting off the branches.

श्री राम ने कहा: जो कुशलता से नष्ट किया जाता है, वह वास्तव में नष्ट हो जाता है। हे भगवन्, डालों को काटने से नहीं नष्ट होता।

7.2.10

शुभाशुभं नाशनीयं स्वकर्म खलु धीमता । मूलकाषविनाशेन तच्च नष्टं भवत्यलम् ॥ १० ॥

śubhāśubhaṃ nāśanīyaṃ svakarma khalu dhīmatā | mūlakāṣavināśena taccanaṣṭaṃ bhavatyalam || 10 ||

Good and evil deeds are indeed to be destroyed by the wise. By the destruction of the root, that is indeed destroyed.

शुभ और अशुभ कर्म वास्तव में बुद्धिमान द्वारा नष्ट किए जाने चाहिए। मूल के नष्ट होने से वह वास्तव में नष्ट हो जाता है।

7.2.11

कर्मवृक्षस्य वक्ष्यामि ब्रह्मन्मूलानि मे श्रृणु । यन्निकाषेण निर्मूलो न स भूयः प्ररोहति ॥ ११ ॥

karmavṛkṣasya vakṣyāmi brahmannmūlāni me śṛṇu | yannikāṣeṇa nirmūlo na sa bhūyaḥ prarohati || 11 ||

I will tell you, O Brahman, the roots of the tree of action; by uprooting which, it does not grow again.

मैं आपको, हे ब्रह्मन्, कर्म के वृक्ष की जड़ें बताऊंगा; जिसके उखाड़ने से वह फिर से नहीं उगता।

7.2.12

देहस्तावदयं ब्रह्मन्कर्मवृक्षः समुत्थितः । रूढः संसारविपिने विचित्राङ्गलताञ्चितः ॥ १२ ॥

dehastāvadayaṃ brahmannkarmavṛkṣaḥ samutthitaḥ | rūḍhaḥ saṃsāravipine vicitrāṅgalatāñcitaḥ || 12 ||

This body, O Brahman, is the tree of action that has arisen, rooted in the forest of the world, adorned with various branches.

यह शरीर, हे ब्रह्मन्, कर्म का वृक्ष है जो उत्पन्न हुआ है, संसार के वन में जड़ा हुआ, विविध शाखाओं से सुशोभित।

7.2.13

कर्मबीजं तरोरस्य सुखदुःखफलावलेः । क्षणतारुण्यकान्तस्य जराकुसुमहासिनः ॥ १३ ॥

karmabījaṃ tarorasya sukhaduḥkhaphalāvaleḥ | kṣaṇatāruṇyakāntasya jarākusumahāsinaḥ || 13 ||

The seed of action of this tree bears the fruits of happiness and sorrow, momentary youth and beauty, and old age like withered flowers.

इस वृक्ष के कर्म का बीज सुख और दुःख के फलों को देता है, क्षणिक यौवन और सौंदर्य, और वृद्धावस्था जैसे मुरझाए फूल।

7.2.14

मुहूर्तं प्रति कालोग्रमर्कटध्वंसिताकृतेः । निद्राहेमन्तजठरलीनस्वप्नदलोद्गतेः ॥ १४ ॥

muhūrtaṃ prati kālogramarkaṭadhvaṃsitākṛteḥ | nidrāhemantajaṭharalīnasvapnadalodgateḥ || 14 ||

Every moment, time is fierce, destroying the form like a monkey, arising from dreams hidden in the belly of sleep and winter.

प्रति क्षण, समय क्रूर है, बंदर की तरह रूप को नष्ट करता है, नींद और सर्दी के पेट में छिपे स्वप्नों से उत्पन्न होता है।

7.2.15

स्ववार्धकशरच्छान्तशीर्णेहापर्णसंततेः । जगज्जंगलजातस्य कलत्रोपतृणावलेः ॥ १५ ॥

svavārdhakaśaracchāntaśīrṇehehāparṇasaṃtateḥ | jagajjaṅgalajātasya kalatropatṛṇāvaleḥ || 15 ||

Born in the world, adorned with the leaves of desires, withered by the arrows of old age, and covered with the grass of family.

संसार में जन्म लेकर, इच्छाओं के पत्तों से सुशोभित, वृद्धावस्था के बाणों से मुरझाया हुआ, और परिवार की घास से ढका हुआ।

7.2.16

पल्लवावयवा हस्तपादपृष्ठादयोऽरुणाः । पत्राणि तनुवृत्तानि सुरेखाणि चलानि च ॥ १६ ॥

pallavāvayavā hastapādapṛṣṭhādayo'ruṇāḥ | patrāṇi tanuvṛttāni surekhāṇi calāni ca || 16 ||

The parts of the sprouts, such as the palms, feet, and back, are reddish. The leaves are thin, circular, well-lined, and moving.

पल्लवों के अंग, जैसे हाथ, पैर और पीठ, लालिमा लिए हुए हैं। पत्तियाँ पतली, गोल, अच्छी तरह से रेखांकित और हिलती हुई हैं।

7.2.17

अरुणाः पवनालोला मृद्व्यो मसृणमूर्तयः । स्नाय्वस्थिदिग्धसरसा अङ्गुल्यो बालपल्लवाः ॥ १७ ॥

aruṇāḥ pavanālolā mṛdvyo masṛṇamūrtayaḥ | snāyvasthidigdhasarasā aṅgulyo bālapallavāḥ || 17 ||

The reddish, wind-blown, soft, and smooth-bodied tendrils are sinewy, bony, directional, and juicy. The fingers are like young sprouts.

लालिमा लिए हुए, हवा से उड़ते हुए, कोमल और चिकने शरीर वाले लताएँ स्नायुमय, अस्थिमय, दिशानुकूल और रसीली हैं। अंगुलियाँ नन्हे पल्लवों की तरह हैं।

7.2.18

मृद्व्यो मसृणतीक्ष्णाग्रा वृत्ता रूढाः पुनःपुनः । द्वितीयेन्दुकलाकाराः कलिका नखपङ्क्तयः ॥ १८ ॥

mṛdvyo masṛṇatīkṣṇāgrā vṛttā rūḍhāḥ punaḥpunaḥ | dvitīyendukalākārāḥ kalikā nakhapaṅktayaḥ || 18 ||

The soft, smooth, sharp-tipped, circular, and firmly rooted again and again, are like the second lunar digit. The buds are in the rows of nails.

कोमल, चिकने, तीक्ष्ण अग्र वाले, गोल, और बार-बार जड़े हुए, दूसरे चंद्र अंश के समान हैं। कलिकाएँ नखों की पंक्तियों में हैं।

7.2.19

कर्मणः परिफुल्लस्य देहरूपतयेति हि । कर्मेन्द्रियाणि मूलानि दुष्टानि ग्रन्थिमन्ति च ॥ १९ ॥

karmaṇaḥ pariphuLLasya deharūpatayeti hi | karmeMdriyāṇi mūlāni duṣṭāni granthimanti ca || 19 ||

For the fully blossomed action, it is said to be the form of the body. The organs of action are the roots, impure, and knotted.

पूर्ण रूप से खिले हुए कर्म के लिए, यह शरीर का रूप कहा जाता है। कर्मेंद्रियाँ जड़ें हैं, अशुद्ध और गाँठदार हैं।

7.2.20

स्थिरास्थिग्रन्थिनद्धानि पङ्कमग्नात्मकानि च । वासनारसपीतानि निजरक्तरसानि च ॥ २० ॥

sthirāsthigranthinaddhāni paṅkamagnātmakāni ca | vāsanārasapītāni nijaraktarasāni ca || 20 ||

They are firmly bound by bone knots, have a nature submerged in mud, are drunk with the juice of desires, and are of their own blood essence.

वे अस्थि गाँठों से मजबूती से बँधे हुए हैं, कीचड़ में डूबे हुए स्वभाव वाले हैं, इच्छाओं के रस से मतवाले हुए हैं, और अपने रक्त रस के हैं।

7.2.21

गुल्फवन्ति दृढाङ्गानि सुत्वञ्चि मसृणानि च । तेषामपि च मूलानि विद्धि बुद्धीन्द्रियाणि हि ॥ २१ ॥

gulphavanti dṛḍhāṅgāni sutvañci masṛṇāni ca | teṣāmapi ca mūlāni viddhi buddhīndriyāṇi hi || 21 ||

Know that the roots of the strong and smooth organs are indeed the sense organs.

जानो कि मजबूत और चिकने अंगों की जड़ें वास्तव में इन्द्रियाँ हैं।

7.2.22

सुदूरमपि जातानि पञ्चस्तम्बानि तानि तु । वासनापङ्कमग्नानि रसवन्ति महान्ति च ॥ २२ ॥

sudūramapi jātāni pañcastambāni tāni tu | vāsanāpaṅkamagnāni rasavanti mahānti ca || 22 ||

Even those born far away, those five pillars, are immersed in the mire of desires, full of essence, and great.

दूर से भी उत्पन्न हुए, वे पाँच स्तंभ, इच्छाओं की कीचड़ में डूबे हुए, सार से भरपूर, और महान हैं।

7.2.23

तेषां मूलं बृहत्स्तम्भं मनो व्याप्तजगत्त्रयम् । पञ्चस्रोतःशिराकृष्टमुक्तानन्तरसद्रवम् ॥ २३ ॥

teṣāṃ mūlaṃ bṛhatstambhaṃ mano vyāptajagattrayam | pañcasrotaḥśirākṛṣṭamuktānantarasadravam || 23 ||

The root of those is the great pillar, the mind, which pervades the three worlds, drawn by the five streams, and has a continuous flow of pure essence.

उनकी जड़ महान स्तंभ, मन, है, जो तीनों लोकों में व्याप्त है, पाँच धाराओं द्वारा खींचा गया है, और शुद्ध सार का निरंतर प्रवाह है।

7.2.24

तस्य मूलं विदुर्जीवं चेत्योन्मुखचिदात्मकम्। चेत्यस्य चेतनं मूलं सर्वमूलैककारणम्॥ २४॥

tasya mūlaṃ vidurjīvaṃ cetyonmukhacidātmakam | cetyasya cetanaṃ mūlaṃ sarvamūlaikakāraṇam || 24 ||

The root of that is known to be the individual soul, which is consciousness turned towards the object. The root of the object is the conscious self, the sole cause of all roots.

उसकी जड़ जीव कही जाती है, जो वस्तु की ओर मुड़ी हुई चेतना है। वस्तु की जड़ चेतन आत्मा है, जो सभी जड़ों का एकमात्र कारण है।

7.2.25

चितेस्तु ब्रह्म मूलं यत्तस्य मूलं न विद्यते। अनाख्यत्वादनन्तत्वाच्छुद्धत्वात्सत्यरूपिणः॥ २५॥

cites tu brahma mūlaṃ yat tasya mūlaṃ na vidyate | anākhyatvādanantatvācchuddhatvātsatyarūpiṇaḥ || 25 ||

The root of consciousness is Brahman, which has no root. It is indescribable, infinite, pure, and the embodiment of truth.

चेतना की जड़ ब्रह्म है, जिसकी कोई जड़ नहीं है। यह अवर्णनीय, अनंत, शुद्ध, और सत्य का स्वरूप है।

7.2.26

सर्वेषां कर्मणामेवं वेदनं बीजमुत्तमम्। स्वरूपं चेतयित्वान्तस्ततः स्पन्दः प्रवर्तते॥ २६॥

sarveṣāṃ karmaṇāmevaṃ vedaṇaṃ bījamuttamam | svarūpaṃ cetayitvāntastataḥ spandaḥ pravartate || 26 ||

Thus, the experience of all actions is the supreme seed | By contemplating one's true nature, the vibration begins

इस प्रकार, सभी कर्मों का अनुभव उत्तम बीज है | अपने स्वरूप को सोचकर, स्पंदन शुरू होता है

7.2.27

मुने चेतनमेवाद्यं कर्मणां बीजमुच्यते। तस्मिन्सति महाशाखो जायते देहशाल्मलिः॥ २७॥

mune cetanamevādyaṃ karmaṇāṃ bījamucyate | tasminsati mahāśākho jāyate dehaśālmalīḥ || 27 ||

O sage, consciousness is said to be the primary seed of actions | When it exists, the great tree of the body is born

हे मुनि, चेतना कर्मों का प्राथमिक बीज कही जाती है | जब वह होती है, तब शरीर का महान वृक्ष उत्पन्न होता है

7.2.28

एतच्चेतनशब्दार्थभावनावलितं यदि। तत्कर्म बीजतामेति नो चेत्सत्परमं पदम्॥ २८॥

etaccetanaśabdārthabhāvanāvalitaṃ yadi | tatkarma bījatāmeti no cet satparamaṃ padam || 28 ||

If this meaning of the word 'consciousness' is contemplated | Then that action attains the state of a seed, otherwise it is the supreme state

यदि चेतना शब्द का अर्थ सोचा जाता है | तो वह कर्म बीज की अवस्था को प्राप्त होता है, अन्यथा वह परम अवस्था है

7.2.29

चितिश्चेतनशब्दार्थभावनावलिता यदि। तत्कर्म बीजतामेति नो चेदाद्यं परं पदम्॥ २९॥

citiścetanaśabdārthabhāvanāvalitā yadi | tatkarma bījatāmeti no cedādyaṃ paraṃ padam || 29 ||

If consciousness is contemplated with the meaning of the word 'consciousness' | Then that action attains the state of a seed, otherwise it is the primary supreme state

यदि चेतना चेतना शब्द के अर्थ के साथ सोची जाती है | तो वह कर्म बीज की अवस्था को प्राप्त होता है, अन्यथा वह प्राथमिक परम अवस्था है

7.2.30

तस्माद्वेदनमेवेह कर्म कारणमाकृतेः । यदेतत्कर्मणां प्रोक्तं त्वयैवोक्तं मुनीश्वर ॥ ३० ॥

tasmādvedanameveha karma kāraṇamākṛteḥ | yadetatkarmaṇāṃ proktaṃ tvayaivoktaṃ munīśvara || 30 ||

Therefore, the experience itself is the cause of action here | As you, O great sage, have said about the actions

इसलिए, अनुभव स्वयं यहाँ कर्म का कारण है | जैसा कि आपने, हे महान मुनि, कर्मों के बारे में कहा है

7.2.31

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्य राघव सूक्ष्मस्य कर्मणो वेदनात्मनः । कस्त्यागः किमनुष्ठानं यावद्देहमिति स्थितम् ॥ ३१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asya rāghava sūkṣmasya karmaṇo vedanātmanaḥ | kastyāgaḥ kimanuṣṭhānaṃ yāvaddehamiti sthitam || 31 ||

Vasishtha said: O Raghava, what is the renunciation and what is the practice of this subtle action which is the essence of experience, as long as one is in the body?

वसिष्ठ ने कहा: हे रघुवंशी, इस सूक्ष्म कर्म का जो अनुभव का आत्मा है, उसका त्याग क्या है और उसका अनुष्ठान क्या है, जब तक शरीर में स्थित है?

7.2.32

यच्चेत्यते नु तेनाशु बहिरन्तश्च भूयते । सत्याकारमसत्यं वा भवत्वाहितविभ्रमम् ॥ ३२ ॥

yaccetyate nu tenāśu bahirantaśca bhūyate | satyākāramasatyaṃ vā bhavatvāhitavibhramam || 32 ||

Whatever is thought of, by that it quickly becomes external and internal. Whether it is true or false, let it be a delusion caused by attachment.

जो भी सोचा जाता है, उससे वह शीघ्र ही बाह्य और आंतरिक हो जाता है। चाहे वह सत्य हो या असत्य, वह आसक्ति से उत्पन्न भ्रम हो जाए।

7.2.33

न चेत्यते चेत्तदलं भ्रमादस्माद्विमुच्यते । भ्रमः सत्योऽस्त्वसत्यो वा किं विचारणयानया ॥ ३३ ॥

na cetayate cettadalaṃ bhramādasmādvimucyate | bhramaḥ satyo'stvasatyo vā kiṃ vicāraṇayānayā || 33 ||

If it is not thought of, then it is enough, one is freed from this delusion. Whether the delusion is true or false, what is the use of this contemplation?

यदि वह नहीं सोचा जाता है, तो वह पर्याप्त है, मनुष्य इस भ्रम से मुक्त हो जाता है। चाहे भ्रम सत्य हो या असत्य, इस विचार का क्या उपयोग है?

7.2.34

एतच्चेतनमेवान्तर्विकसत्युद्भवभ्रमैः । वासनेच्छामनःकर्मसंकल्पाद्यभिधात्मभिः ॥ ३४ ॥

etaccetanamevāntarvikasatyudbhvabhramaiḥ | vāsanecchāmanaḥkarmasaṃkalpādyabhidhātmabhiḥ || 34 ||

This consciousness itself expands internally with delusions arising from impressions, desires, mental actions, resolutions, and so forth.

यह चेतना स्वयं ही आंतरिक रूप से विकसित होती है संस्कारों, इच्छाओं, मानसिक कर्मों, संकल्पों आदि से उत्पन्न भ्रमों के साथ।

7.2.35

प्रबुद्धस्याप्रबुद्धस्य देहिनो देहगेहके । आदेहं विद्यते चित्तं त्यागस्तस्य न विद्यते ॥ ३५ ॥

prabuddhasyāprabuddhasya dehino dehagehake | ādehaṃ vidyate cittaṃ tyāgastasya na vidyate || 35 ||

For the enlightened and the unenlightened, for the embodied in the body-house, the mind exists as long as the body exists; there is no renunciation of it.

जाग्रत और अजाग्रत के लिए, शरीर-घर में रहने वाले शरीरी के लिए, मन तब तक मौजूद रहता है जब तक शरीर मौजूद है; इसका त्याग नहीं होता।

7.2.36

जीवतां तस्य संत्यागः कथं नामोपपद्यते । केवलं कर्मशब्दार्थभावनाभावने सति ॥ ३६ ॥

jīvatāṃ tasya saṃtyāgaḥ kathaṃ nāmopapadyate | kevalaṃ karmaśabdārthabhāvanābhāvane sati || 36 ||

How can there be a renunciation of the living beings? Only in the absence of the contemplation of the meaning of the word 'action'.

जीवों का त्याग कैसे हो सकता है? केवल कर्म शब्द के अर्थ की भावना के अभाव में।

7.2.37

कर्माकर्मत्वमुत्सृज्य स्वयमेव भवत्यजम् । असंभवति संत्यागे कर्मणो यः करोति हि ॥ ३७ ॥

karmākarmatvamutsṛjya svayameva bhavatyajam | asaṃbhavati saṃtyāge karmaṇo yaḥ karoti hi || 37 ||

Abandoning the distinction between action and inaction, one becomes free by oneself. It is impossible to renounce action by performing it.

कर्म और अकर्म के भेद को छोड़कर, स्वयं ही मुक्त हो जाता है। कर्म का त्याग करना असंभव है, जो उसे करता है।

7.2.38

इदं कर्तव्यतात्यागं न किंचित्तेन तत्कृतम् । बोधादिदंतासंवित्तेः स्वयं विलयनात्तु यत् ॥ ३८ ॥

idaṃ kartavyatātyāgaṃ na kiṃcittena tatkṛtam | bodhādidāṃtāsaṃvitteḥ svayaṃ vilayanāttu yat || 38 ||

This renunciation of duty does not accomplish anything. It is the realization of the self that leads to the dissolution of the sense of doership.

यह कर्तव्य का त्याग कुछ भी नहीं करता। यह आत्म-ज्ञान है जो कर्तापन के भाव को विलीन करता है।

7.2.39

जगतस्तं विदुस्त्यागमसङ्गं मोक्षमेव च । वेदनं सति संवेद्ये सर्गादावेव वेद्यदृक् ॥ ३९ ॥

jagatastāṃ vidustyāgamasangaṃ mokṣameva ca | vedanaṃ sati saṃvedye sargādāveva vedyadṛk || 39 ||

The wise know that the renunciation of the world is non-attachment and liberation itself. The experience of the knowable arises at the beginning of creation.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि संसार का त्याग असंगता और मुक्ति है। ज्ञेय का अनुभव सृष्टि के आरंभ में होता है।

7.2.40

नोत्पन्ना विद्यते नैव तस्मात्किं क्वेव वेदनम् । वेद्योन्मुखत्वं संत्यज्य रूपं यद्वेदनस्य वै ॥ ४० ॥

notpannā vidyate naiva tasmātkim kveva vedanam | vedyonmukhatvaṃ saṃtyajya rūpaṃ yadvedanasya vai || 40 ||

That which is not born does not exist. Therefore, what is the experience? Abandoning the tendency towards the knowable, that is the form of experience.

जो उत्पन्न नहीं हुआ है, वह अस्तित्व में नहीं है। तो अनुभव क्या है? ज्ञेय की ओर उन्मुखता को छोड़कर, यह अनुभव का रूप है।

7.2.41

न वेदनं तन्नो कर्म तच्छान्तं ब्रह्म कथ्यते । चेतनं प्रोच्यते कर्म संसृत्याभ्रविकासितम् ॥ ४१ ॥

na vedaanaṃ tanno karma tacchaantaṃ brahma kathyate | chetanaṃ prochyate karma saṃsṛtyābhra vikāsitam || 41 ||

Neither knowledge nor action is called the peaceful Brahman. Action is said to be conscious, expanded by the cloud of transmigration.

न ज्ञान और न ही कर्म शान्त ब्रह्म कहलाता है। कर्म चेतन कहा जाता है, जो संसार के बादल से विकसित होता है।

7.2.42

अचेतनं विदुर्मोक्षं ज्ञं प्रत्येवोपदेशगीः । त्यागो हि कर्मणां तस्मादादेहं नोपपद्यते ॥ ४२ ॥

achetanaṃ vidurmokṣaṃ jñaṃ pratyevopadeśagīḥ | tyāgo hi karmaṇāṃ tasmādādehaṃ nopapadyate || 42 ||

The wise know liberation to be non-conscious. Indeed, the renunciation of actions does not apply to the body.

बुद्धिमान लोग मोक्ष को अचेतन मानते हैं। वास्तव में, कर्मों का त्याग शरीर पर लागू नहीं होता।

7.2.43

यैस्तु संपूज्यते कर्म तन्मूलं तैर्न मुच्यते । मूलं स्वकर्मणः संविन्मनसो वासनात्मनः ॥ ४३ ॥

yais tu saṃpūjyate karma tanmūlaṃ tairna mucyate | mūlaṃ svakarmaṇaḥ saṃvinmanaso vāsanātmanaḥ || 43 ||

Those who worship action do not get liberated from its root. The root of one's own action is the tendency of the mind.

जो लोग कर्म की पूजा करते हैं, वे उसके मूल से मुक्त नहीं होते। अपने कर्म का मूल मन की वासना है।

7.2.44

सा चादेहं समुच्छेत्तुमृते बोधान्न शक्यते । राम केवलमेषान्तः कर्ममूलकरा परा ॥ ४४ ॥

sā cādehaṃ samucchettumṛte bodhānna śakyate | rāma kevalameṣāntaḥ karmamūlakarā parā || 44 ||

That tendency cannot be uprooted without knowledge, O Rama. This inner cause of action is supreme.

वह प्रवृत्ति ज्ञान के बिना उखाड़ी नहीं जा सकती, हे राम। यह आंतरिक कर्म का कारण परम है।

7.2.45

सूक्ष्मसंविदसंवित्त्या स्वयत्नेन निकृन्त्यते । येन संविदसंवित्त्या स्वयत्नेन विचार्यते ॥ ४५ ॥

sūkṣmasaṃvidasaṃvittyā svayatnena nikṛntyate | yena saṃvidasaṃvittyā svayatnena vicāryate || 45 ||

By subtle awareness and personal effort, it is uprooted. By which awareness and personal effort, it is examined.

सूक्ष्म चेतना और स्वयं के प्रयास से यह उखाड़ा जाता है। जिस चेतना और स्वयं के प्रयास से यह परीक्षित होता है।

7.2.46

तेन संसृतिवृक्षस्य मूलकाषो वितन्यते ॥ ४६ ॥

tena saṃsṛtivṛkṣasya mūlakāṣo vitanyate || 46 ||

By that, the root of the tree of transmigration is cut off.

उसके द्वारा, पुनर्जन्म के वृक्ष की जड़ कट जाती है।

7.2.47

अचेतनाकाशमनन्यदेकं तदेवमस्ति त्विदमर्थहीनम् । तद्व्योमरूपं यत एतदेवं निरामयं चेतनसारमाहुः ॥ ४७ ॥

acetanākāśamananyadekaṃ tadevamasti tvidamarthahīnam | tadvyomarūpaṃ yata etadevaṃ nirāmayaṃ cetanasāramāhuḥ || 47 ||

That one, non-dual, non-conscious space exists as such, devoid of meaning. That which is of the nature of space, being such, is said to be without defect, with consciousness as its essence.

वह एक, अद्वैत, अचेतन अंतरिक्ष ऐसा ही अस्तित्व में है, अर्थहीन। जो अंतरिक्ष के स्वभाव का है, ऐसा होने से, उसे दोषरहित, चेतना के सार के रूप में कहा जाता है।

Chapter 3

7.3.1

श्रीराम उवाच । अवेदनं वेदनस्य मुनीन्द्र क्रियते कथम् । नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | avedanaṃ vedaṇasya munīndra kriyate katham | nāsato vidyate bhāvo nābhāvo vidyate sataḥ || 1 ||

Sri Rama said: How is the absence of perception caused, O sage? There is no existence of the non-existent, nor is there non-existence of the existent.

श्री राम ने कहा: हे मुनीन्द्र, अज्ञान कैसे होता है? असत् का कोई अस्तित्व नहीं है, न ही सत् का कोई अभाव है।

7.3.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः । यदा तदैव सुकरं वेदनावेदनं स्वयम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nāsato vidyate bhāvo nābhāvo vidyate sataḥ | yadā tadaiva sukaraṃ vedaṇāvedanaṃ svayam || 2 ||

Vasishtha said: There is no existence of the non-existent, nor is there non-existence of the existent. When this is understood, the perception and non-perception become easy.

वसिष्ठ ने कहा: असत् का कोई अस्तित्व नहीं है, न ही सत् का कोई अभाव है। जब यह समझ में आ जाता है, तो ज्ञान और अज्ञान स्वयं ही सहज हो जाता है।

7.3.3

एतौ वेदनशब्दार्थौ रज्जुसर्पभ्रमोपमौ । असत्यावुदितौ विद्धि मृगतृष्णाम्भसा समौ ॥ ३ ॥

etau vedaṇaśabdārthau rajjusarpabhramopamau | asatyāvuditau viddhi mṛgatṛṣṇāmbhasā samau || 3 ||

Know these two meanings of the word 'perception' to be like the illusion of a snake in a rope, unreal like the mirage water.

इन दो अर्थों को ज्ञान के शब्द के रूप में समझो, जैसे रस्सी में साँप का भ्रम होता है, असत्य जैसे मृगतृष्णा का जल।

7.3.4

अबोधस्त्वनयोः श्रेयान्बोधो दुःखाय चैतयोः । तस्मात्सदेव बुद्ध्यस्व माऽसद्बुद्ध्यस्व राघव ॥ ४ ॥

abodhas tv anayoḥ śreyān bodho duḥkhāya caitayoḥ | tasmāt sadeva buddhyasva mā'sadbuddhyasva rāghava || 4 ||

Ignorance is better than these two; knowledge leads to suffering for both. Therefore, always think of the real, do not think of the unreal, O Raghava.

इन दोनों में अज्ञान श्रेष्ठ है; ज्ञान दोनों के लिए दुःख का कारण है। इसलिए, हे रघुवंशी, हमेशा वास्तविक का चिंतन करो, अवास्तविक का चिंतन मत करो।

7.3.5

जन्तोर्वेदनशब्दार्थबोधो दुःखकरः परः । निष्कृत्य ज्ञप्तिशब्दार्थबोधं तिष्ठ यथास्थितम् ॥ ५ ॥

jantor vedaṇaśabdārthabodho duḥkhakaraḥ paraḥ | niṣkṛtya jñaptiśabdārthabodhaṃ tiṣṭha yathāsthitam || 5 ||

The understanding of the meaning of the word 'perception' by the individual is the greatest cause of suffering. Having abandoned the understanding of the meaning of the word 'knowledge', remain as you are.

ज्ञान शब्द के अर्थ का बोध जीव के लिए सबसे बड़ा दुःख का कारण है। ज्ञान शब्द के अर्थ के बोध को त्यागकर, जैसे हो वैसे ही रहो।

7.3.6

सर्वावबोधावसरे ज्ञप्तिशब्दार्थयोरिहनिर्वाणोदय इत्येव परमोमिति शाम्यताम् ॥ ६ ॥

sarvāvabodhāvasare jñaptiśabdārthayorihanirvāṇodaya ityeva paramomiti śāmyatām || 6 ||

In the moment of complete realization, the meaning of the word 'knowledge' is the arising of nirvana, thus it is the supreme state, let it be calmed.

पूर्ण ज्ञान के क्षण में, 'ज्ञान' शब्द का अर्थ निर्वाण का उदय है, इसलिए यह परम अवस्था है, चलिए इसे शांत करें।

7.3.7

शुभाशुभात्मकर्म स्वं नाशनीयं विवेकिनातन्नास्तीत्यवबोधेन तत्त्वज्ञानेन सिध्यति ॥ ७ ॥

śubhāśubhātmakarma svaṃ nāśanīyaṃ vivekinātannāstītyavabodhena tattvajñānena sidhyati || 7 ||

The actions of good and evil nature should be destroyed by the wise through the realization that they do not exist, by the knowledge of reality.

अच्छे और बुरे स्वभाव के कर्मों को बुद्धिमान द्वारा उनके अस्तित्व न होने की समझ से नष्ट किया जाना चाहिए, वास्तविकता के ज्ञान से।

7.3.8

कर्ममूलनिकाषेण संसारः परिशाम्यतिसुविचारितमन्विष्टं यावत्कर्म न विद्यते ॥ ८ ॥

karmamūlanikāṣeṇa saṃsāraḥ pariśāmyatisuvicāritamanviṣṭaṃ yāvatkarma na vidyate || 8 ||

The cycle of existence (samsara) is calmed by the destruction of the root of actions, as long as the well-examined actions do not exist.

अस्तित्व के चक्र (संसार) कर्मों की जड़ के नष्ट होने से शांत होता है, जब तक सुविचारित कर्म मौजूद नहीं होते।

7.3.9

चिद्रूपो बिल्वमज्जान्तश्चित्तसंज्ञां यदात्मनिकरोति तद्यथा बिल्वान्न स्वल्पमपि भिद्यते ॥ ९ ॥

cidrūpo bilvamajjāntaścittasaṃjñāṃ yadātmanikaroti tadyathā bilvānna svalpamapi bhidyate || 9 ||

When the consciousness (cidrūpo) takes the form of the mind (cittasaṃjñāṃ) within the bilva fruit, it does not split even a little, just like the bilva fruit.

जब चेतना (चिद्रूपो) बिल्व फल के अंदर मन (चित्तसंज्ञां) का रूप लेती है, तो वह बिल्व फल की तरह थोड़ा भी नहीं टूटती।

7.3.10

न यथा संनिवेशान्तः संनिवेशस्ततः पृथक्तथा नभोर्थादि पृथङ् न परस्मान्मनागपि ॥ १० ॥

na yathā saṃniveśāntaḥ saṃniveśastataḥ pṛthaktathā nabhorthādi pṛthaṅ na parasmānmanāgapi || 10 ||

Just as the inner dwelling is not separate from the dwelling itself, similarly, the sky and other elements are not separate from the supreme self, not even by a thought.

जैसे अंतर्निहित निवास निवास से अलग नहीं होता, उसी तरह, आकाश और अन्य तत्व परम आत्मा से अलग नहीं होते, विचार से भी नहीं।

7.3.11

यदेवाम्भस्तदेवान्तर्द्रवत्वमपृथग्यथा । चित्त्वमेव तथा चित्तं तद्रूपत्वात्तदर्थयोः ॥ ११ ॥

yadevāmbhastadevāntardravatvamapṛthagyathā | cittvameva tathā cittaṃ tadrūpatvāttadarthayoḥ || 11 ||

Just as the liquidity of water is inseparable from water itself, similarly, the nature of consciousness (cittva) is inseparable from the conscious entity (citta) due to their identical nature and purpose.

जैसे जल की द्रवता जल से अलग नहीं होती, वैसे ही चेतना का स्वभाव चेतना से अलग नहीं होता क्योंकि दोनों का रूप और अर्थ एक ही है।

7.3.12

यथा द्रवत्वं पयसि यथाऽऽलोकश्च तेजसि । तथा ब्रह्मण्यतद्भावं चित्त्वं चित्तं च विद्यते ॥ १२ ॥

yathā dravatvaṃ payasi yathā'lokaśca tejasi | tathā brahmaṇyatadbhāvaṃ cittvaṃ cittaṃ ca vidyate || 12 ||

Just as liquidity is in water and light is in fire, similarly, the nature of Brahman (atadbhāvaṃ) is present in both consciousness (cittva) and the conscious entity (citta).

जैसे द्रवता जल में होती है और प्रकाश अग्नि में होता है, वैसे ही ब्रह्म का स्वभाव चेतना (चित्त्व) और चेतना वाले तत्व (चित्त) में विद्यमान है।

7.3.13

चेतनं कर्म तत्स्वान्तर्न्निर्मूलं भ्रमयक्षवत् । उदेत्यहेतुकं तच्चेन्नोदितं तन्न विद्यते ॥ १३ ॥

cetanaṃ karma tatsvāntarnnirmūlaṃ bhramayakṣavat | udetyahētukaṃ taccennoditaṃ tanna vidyatē || 13 ||

The conscious action (karma) arises from within, without any external cause, like an illusion or a demon. If it arises without a cause, then it does not exist.

चेतना वाला कर्म अन्दर से उत्पन्न होता है, बिना किसी बाहरी कारण के, जैसे भ्रम या यक्ष। यदि यह बिना कारण के उत्पन्न होता है, तो यह अस्तित्व में नहीं है।

7.3.14

चेतनं कर्म तच्चेतद्भाति स्पन्द इवानिलः । अहेतुकं यदात्मैतद्बहिरन्तश्च सार्थधीः ॥ १४ ॥

cetanaṃ karma taccetadbhāti spanda ivānilaḥ | ahetukaṃ yadātmaitadbahirantaśca sārthadhīḥ || 14 ||

The conscious action (karma) appears like the vibration of the wind. If it is without a cause, this self is both external and internal, comprehending the meaning.

चेतना वाला कर्म वायु की कंपन के समान प्रतीत होता है। यदि यह बिना कारण के है, तो यह आत्मा बाहरी और आन्तरिक दोनों है, जो अर्थ को समझता है।

7.3.15

विस्तारः कर्मणां देहः सोऽहंतात्मा ससंसृतिः । अचेतनानहन्त्वेन शाम्यत्यस्पन्दवातवत् ॥ १५ ॥

vistāraḥ karmaṇāṃ dehaḥ so'haṃtātmā sasaṃsṛtiḥ | acetanānahantvena śāmyatyaspandavātavat || 15 ||

The expansion of actions is the body, which is the ego-self with transmigration. It calms down like the wind without vibration through the non-ego state of the non-conscious.

कर्मों का विस्तार शरीर है, जो अहंकार आत्मा है जिसमें पुनर्जन्म होता है। यह अचेतन अहंकार रहित अवस्था में कंपन रहित वायु के समान शान्त हो जाता है।

7.3.16

अचेतनादनन्तात्मा भूत्वा ज्ञोऽप्युपलोपमः । संसारमूलकषणं कुरु क्रोडमुखाग्रवत् ॥ १६ ॥

acetanādanantātmā bhūtvā jño'pyupalopamaḥ | saṃsāramūlakaṣaṇaṃ kuru kroḍamukhāgravat || 16 ||

Having become the infinite self, though conscious, like a lifeless object, perform the action of the root cause of the world like the tip of a crocodile's mouth.

अचेतन अनन्त आत्मा बनकर, चेतन होते हुए भी निष्क्रिय की तरह, संसार के मूल कारण का कार्य मगरमच्छ के मुंह की नोक की तरह करो।

7.3.17

कर्मबीजकलाकोशत्याग एवं कृतो भवेत् । नान्यथा राघवान्तस्ते शान्तमस्तु सदा स्थितम् ॥ १७ ॥

karmabījakalākośatyāga evaṃ kṛto bhavet | nānyathā rāghavāntaste śāntamastu sadā sthitam || 17 ||

The abandonment of the seed of action and the sheath of art should be done, not otherwise, O Raghava, let there be peace always.

कर्म के बीज और कला के कोश का त्याग किया जाना चाहिए, अन्यथा नहीं, हे रघुवंशी, सदा शान्ति हो।

7.3.18

कर्मबीजकलात्यागे त्वेतस्मादितरात्मनि । अविद्यमाने जीवस्य तज्ज्ञैर्विदितवस्तुभिः ॥ १८ ॥

karmabījakalātyāge tvetasmāditarātmani | avidyamāne jīvasya tajjñairviditavastubhiḥ || 18 ||

In the abandonment of the seed of action and the sheath of art, in the other self, in the non-existence of ignorance, by those who know the reality.

कर्म के बीज और कला के कोश के त्याग में, दूसरे आत्मा में, अज्ञान के अभाव में, वास्तविकता को जानने वालों द्वारा।

7.3.19

शान्तैर्न गृह्यते किंचिन्न च संत्यज्यतेऽपि च । त्यागादानेन जानन्ति ततस्तैः शान्तमानसम् ॥ १९ ॥

śāntairna gṛhyate kiṃcinna ca saṃtyajyate'pi ca | tyāgādānena jānanti tatastaiḥ śāntamānasam || 19 ||

The peaceful do not grasp anything, nor do they abandon anything. Through the act of giving up, they know the peaceful mind.

शान्त लोग कुछ भी नहीं ग्रहण करते, न ही कुछ त्याग देते हैं। त्याग के द्वारा, वे शान्त मन को जानते हैं।

7.3.20

आकाशशून्यहृदयैर्ज्ञैर्यथास्थितमास्यते । क्रियते च यथाप्राप्तं नाप्येतैः क्रियतेपि च ॥ २० ॥

ākāśaśūnyahṛdayairjñairyathāsthitamāsyate | kriyate ca yathāprāptaṃ nāpyetaiḥ kriyatepi ca || 20 ||

Those with hearts empty like the sky, the wise, accept things as they are. They act according to what is appropriate, and yet they do not act.

आकाश की तरह शून्य हृदय वाले, ज्ञानी लोग, चीजों को जैसी हैं वैसी स्वीकार करते हैं। वे जो उचित है उसके अनुसार कार्य करते हैं, और फिर भी वे कार्य नहीं करते।

7.3.21

प्रवाहपतितं सर्वं स्पन्दते शान्तमानसम् । तेषां कर्मेन्द्रियाण्येवमर्धसंसुप्तबालवत् ॥ २१ ॥

pravāhapatitaṃ sarvaṃ spandate śāntamānasam | teṣāṃ karmeṃdriyāṇyevamardhasaṃsuptabālavat || 21 ||

All that flows downstream moves, the mind is peaceful | Their sense organs are like half-asleep children

जो प्रवाह में गिरता है वह सब स्पंदित होता है, मन शांत होता है | उनके कर्मेन्द्रियाँ आधे सोए बच्चों की तरह होते हैं

7.3.22

रसे निर्वासने लब्धे रसा अप्यतिनीरसाः । नान्तस्तिष्ठन्ति न बहिरज्ञाननिपुणा इव ॥ २२ ॥

rase nirvāsane labdhe rasā apyatinīrasāḥ | nāntastiṣṭhanti na bahirajñānanipuṇā iva || 22 ||

Even when the essence is obtained from the essence, it is still tasteless | They do not remain inside or outside, like those skilled in ignorance

जब रस से रस प्राप्त होता है, तब भी वह अति नीरस होता है | वे अंदर या बाहर नहीं रहते, जैसे अज्ञान में निपुण लोग

7.3.23

कर्मणो वेदनं त्यागः स च सिद्धः प्रबोधतः । अवस्तु नेतरेणार्थः किं कृतेनाकृतेन वा ॥ २३ ॥

karmaṇo vedanaṃ tyāgaḥ sa ca siddhaḥ prabodhataḥ | avastu netareṇārthaḥ kiṃ kṛtenākṛtena vā || 23 ||

The renunciation of the experience of action is accomplished through awakening | There is no other meaning, what is the use of doing or not doing

कर्म के अनुभव का त्याग ज्ञान से सिद्ध होता है | कोई और अर्थ नहीं है, करने या न करने से क्या लाभ

7.3.24

अवेदनमसंवेद्यं यदवासनमासितम् । शान्तं सममनुल्लेखं स कर्मत्याग उच्यते ॥ २४ ॥

avedanamasanvedyaṃ yadavāsanamāsitam | śāntaṃ samamanullekhaṃ sa karmatyāga ucyate || 24 ||

That which is not experienced and is not perceivable, which is peaceful, equal, and without distinction | That is called the renunciation of action

जो अनुभव नहीं किया जाता और जो अनुभव नहीं किया जा सकता, जो शांत, समान और भेदरहित है | वह कर्म त्याग कहलाता है

7.3.25

अपुनःस्मरणं सम्यक् चिरविस्मृतकर्म तत् । स्थितं स्तम्भोदरसमं स कर्मत्याग उच्यते ॥ २५ ॥

apunaḥsmaraṇaṃ samyak ciravismṛtakarma tat | sthitaṃ stambhodarasamaṃ sa karmatyāga ucyate || 25 ||

That which is not remembered again, which is rightly forgotten action | That is steady like a pillar, that is called the renunciation of action

जो फिर से याद नहीं किया जाता, जो सही तरीके से भूली हुई क्रिया है | जो स्तंभ की तरह स्थिर है, वह कर्म त्याग कहलाता है

7.3.26

अत्यागं त्यागमिति ये कुर्वते व्यर्थबोधिनः । सा भुङ्क्ते तान्पशूनज्ञान्कर्मत्यागपिशाचिका ॥ २६ ॥

atyāgaṃ tyāgamiti ye kurvate vyarthabodhinaḥ | sā bhuṅkte tānpashūnajñānkarmatyāgapiśācikā || 26 ||

Those who practice renunciation with the wrong understanding are consumed by the demon of ignorance in the form of renunciation of action.

जो लोग गलत समझ के साथ त्याग करते हैं, उन्हें कर्म त्याग का पिशाच अज्ञान खा जाता है।

7.3.27

समूलकर्मसंत्यागेनैव ये शान्तिमास्थिताः । नैव तेषां कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ॥ २७ ॥

samūlakarmasaṃtyāgenaiva ye śāntimāsthitāḥ | naiva teṣāṃ kṛtenārtho nākṛteneha kaścana || 27 ||

Those who are established in peace by completely renouncing all actions, for them, there is no benefit from what is done or not done.

जो लोग सभी कर्मों का पूर्ण त्याग करके शांति में स्थित हो जाते हैं, उनके लिए किये हुए या न किये हुए काम से कोई लाभ नहीं होता।

7.3.28

समूलमलमुद्धृत्य कर्मबीजकलामिति । नित्यमेकसमाधानास्तज्ज्ञास्तिष्ठन्त्यतः सुखम् ॥ २८ ॥

samūlamalamuddhṛtya karmabījakalāmiti | nityamekasamādhānāstajjñāstiṣṭhantyataḥ sukham || 28 ||

By completely uprooting the root cause of actions, those who are always in one-pointed concentration, knowing that, abide in happiness.

कर्मों की मूल जड़ को पूर्ण रूप से उखाड़कर, जो लोग हमेशा एकाग्रता में रहते हैं, वे उस ज्ञान के साथ सुख में रहते हैं।

7.3.29

प्रवाहपतिते कार्ये ईषत्स्पन्दा अतन्मयाः । घूर्णमाना इव क्षीबा यन्त्रसंचारिता इव ॥ २९ ॥

pravāhapatite kārye īṣatspandā atanmayāḥ | ghūrṇamānā iva kṣībā yantrasaṃcāritā iva || 29 ||

In the flow of actions, those who are slightly active but not self-centered, are like whirling objects driven by a machine.

कर्मों के प्रवाह में, जो लोग थोड़े सक्रिय हैं लेकिन स्वयं केंद्रित नहीं हैं, वे यंत्र द्वारा चलाए जाने वाले घूमते हुए वस्तुओं की तरह हैं।

7.3.30

मोक्षलक्ष्म्या विलासिन्या व्यसनोपहता इव । अर्धसुप्तप्रबुद्धाभाः कामप्यवनिमागताः ॥ ३० ॥

mokṣalakṣmyā vilāsinyā vyasanopahatā iva | ardhasuptaprabuddhābhāḥ kāmapyavanimāgatāḥ || 30 ||

Appearing as if half-asleep and half-awake, they are afflicted by the play of liberation, as if struck by misfortune, and have descended to the earth for desire.

आधे सोए और आधे जागे हुए की तरह दिखाई देते हुए, वे मोक्ष के खेल से पीड़ित हैं, मानो विपत्ति से ग्रस्त हों, और इच्छा के लिए पृथ्वी पर उतरे हैं।

7.3.31

यत्समूलं परित्यक्तं तत्त्यक्तमिति कथ्यते । अमूलकाषस्त्यागो यः स शाखालवनोपमः ॥ ३१ ॥

yatsamūlaṃ parityaktaṃ tattyaktamiti kathyate | amūlakāṣastyāgo yaḥ sa śākhālavanopamaḥ || 31 ||

That which is abandoned along with its root is said to be truly abandoned | The abandonment without the root is like a forest of branches

जो मूल सहित त्याग दिया जाता है, वही वास्तव में त्याग कहलाता है | मूल के बिना त्याग शाखाओं के जंगल के समान है

7.3.32

अकृष्टमूलशाखाग्रलवनः कर्मपादपः । पुनः शाखासहस्रेण दुःखाय परिवर्धते ॥ ३२ ॥

akṛṣṭamūlaśākhāgralavanaḥ karmapādapaḥ | punaḥ śākhāsahasreṇa duḥkhāya parivardhate || 32 ||

The tree of karma with unpulled roots and branches grows again with a thousand branches, causing sorrow

जिसकी जड़ें और शाखाएँ नहीं उखाड़ी गई हैं, वह कर्म का वृक्ष फिर से हजारों शाखाओं के साथ बढ़ता है, दुःख पैदा करता है

7.3.33

अवेदनात्मना तेन कर्मत्यागोऽङ्ग सिध्यति । क्रमेण नेतरेणात एतदेवाहरन्भव ॥ ३३ ॥

avedanātmanā tena karmatyāgo'ṅga sidhyati | krameṇa netareṇāta etadevāharanbhava || 33 ||

Through ignorance, the abandonment of karma is not accomplished | Only gradually, not otherwise, does this happen

अज्ञान के द्वारा, कर्म का त्याग सिद्ध नहीं होता | केवल क्रमशः, अन्यथा नहीं, यह होता है

7.3.34

ये त्वेवं कर्मसंत्यागमकृत्वान्यत्प्रकुर्वते । अत्यागं त्यागरूपात्म गगनं मारयन्ति ते ॥ ३४ ॥

yetvevaṃ karmasaṃtyāgamakṛtvānyatprakurvate | atyāgaṃ tyāgarūpātma gaganaṃ mārayanti te || 34 ||

Those who do not abandon actions properly and engage in other activities, they defile the sky of renunciation

जो लोग कर्मों का उचित त्याग नहीं करते और दूसरी गतिविधियों में लगे होते हैं, वे त्याग के आकाश को दूषित करते हैं

7.3.35

बोधात्मकतया कर्मत्यागः संपद्यते स्वयम् । दग्धबीजा निरिच्छोच्चैरक्रियैव भवेत्क्रिया ॥ ३५ ॥

bodhātmakatayā karmatyāgaḥ saṃpadyate svayam | dagdhabījā niricchoccairakriyaiva bhavetkriyā || 35 ||

Through awareness, the abandonment of karma happens by itself | With the seed burnt, action becomes inaction effortlessly

बोध के द्वारा, कर्म का त्याग स्वयं ही हो जाता है | बीज जल जाने पर, क्रिया बिना किसी प्रयास के अक्रिया बन जाती है

7.3.36

बुद्धीन्द्रियेहितं कर्म सफलं रसभावनात् । वेष्टितव्यं कुदाम्नेव स्पन्दोऽन्यो निष्फलोऽङ्गजः ॥ ३६ ॥

buddhīndriyehitam karma saphalam rasabhāvanāt | veṣṭitavyam kudāmneva spando'nyo niṣphalo'ṅgajaḥ || 36 ||

The action that is beneficial to the intellect and senses is fruitful due to the absorption in essence | It should be embraced like a flower, any other movement is fruitless, born of the body

बुद्धि और इंद्रियों के लिए हितकारी कर्म रस भावना से सफल होता है | इसे फूल की तरह आलिंगन करना चाहिए, अन्य स्पंदन निष्फल है, शरीर से उत्पन्न

7.3.37

कर्मत्यागे स्थिते बोधाज्जीवन्मुक्तो विवासनः । गृहे तिष्ठत्वरण्ये वा शाम्यत्वभ्येतु वोदयम् ॥ ३७ ॥

karmatyāge sthite bodhājjīvanmukto vivāsanaḥ | gṛhe tiṣṭhatvaraṇye vā śāmyatvabhyetu vodayam || 37 ||

When one is established in the renunciation of actions, one becomes liberated while living due to enlightenment, free from desires | Whether one stays at home or in the forest, one should be peaceful and attain enlightenment

जब कोई कर्म त्याग में स्थित हो जाता है, तो बोध से जीवन्मुक्त हो जाता है, वासनाओं से मुक्त | चाहे घर में रहे या वन में, शांत रहे और बोध प्राप्त करे

7.3.38

गेहमेवोपशान्तस्य विजनं दूरकाननम् । अशान्तस्याप्यरण्यानि विजना सजना पुरी ॥ ३८ ॥

gehamevopaśāntasya vijanaṃ dūrakānanam | aśāntasyāpyaraṇyāni vijanā sajanā purī || 38 ||

For the one who is peaceful, even the home is a solitary distant forest | For the one who is not peaceful, even the forests are crowded with people

जो शांत है, उसके लिए घर भी एक दूरस्थ एकांत वन है | जो शांत नहीं है, उसके लिए वन भी जनसमूहों से भरा हुआ शहर है

7.3.39

परिशान्तमतेर्ज्ञस्य स्वप्नेऽप्यप्राप्तमानवा । निर्मला विततां हृद्या हृद्येव वनभूमिका ॥ ३९ ॥

pariśāntamaterjñasya svapne'pyaprāptamānavā | nirmalā vitatā hṛdyā hṛdyeva vanabhūmikā || 39 ||

For the wise one with a peaceful mind, even in dreams, the unattainable becomes attainable | The pure, expansive, and delightful forest land is like the heart itself

जिसका मन शांत है, उस ज्ञानी के लिए स्वप्न में भी अप्राप्य प्राप्य हो जाता है | निर्मल, विस्तृत और हृदयविभोर वनभूमि हृदय के समान है

7.3.40

ज्ञस्य निर्वाणदृश्यस्य निस्पन्दार्था नभोमयी । शान्ताशेषविशेषार्था जगदेव महाटवी ॥ ४० ॥

jñasya nirvāṇadṛśyasya nispandārthā nabhomayī | śāntāśeṣaviśeṣārthā jagadeva mahāṭavī || 40 ||

For the wise one who sees nirvana, the motionless essence is like the sky | The world itself is the great forest, peaceful and devoid of all distinctions

जिस ज्ञानी को निर्वाण दिखाई देता है, उसके लिए निष्क्रिय सत्ता आकाश के समान है | संसार स्वयं ही शांत और सभी भेदों से रहित महान वन है

7.3.41

अनन्तसंकल्पवतो हृदयस्थजगत्स्थितेः । हृद्येवावर्तते भूमिरज्ञस्याखिलसागरा ॥ ४१ ॥

anantasaṃkalpavato hṛdayasthajagatsthiteḥ | hṛdyevāvartate bhūmirajñasyākhilasāgarā || 41 ||

In the heart of one who has infinite desires, the entire world resides. For the ignorant, the whole ocean of the world revolves in the heart.

अनंत इच्छाओं वाले के हृदय में सारा जगत स्थित है | अज्ञानी के हृदय में सारा सागर घूमता है || ४१ ||

7.3.42

जनस्याज्ञस्य दीनस्य विविधद्वन्द्वसंकटा । सारम्भा विविधाकारा हृद्येव ग्राममण्डली ॥ ४२ ॥

janasyājñasya dīnasya vividhadvandvasaṃkaṭā | sārambhā vividhākārā hṛdyeva grāmamaṇḍalī || 42 ||

For the ignorant and miserable person, various dualities and difficulties arise. These diverse forms of troubles are like a village circle in the heart.

अज्ञानी और दीन व्यक्ति के लिए, विविध द्वंद्व और संकट उत्पन्न होते हैं | ये विविध रूपों में परेशानियाँ हृदय में ग्राम मंडली की तरह हैं || ४२ ||

7.3.43

विविधकार्यविकारदशामयी सपुरपत्तनमण्डलपर्वता । मुकुरकोश इव प्रतिबिम्बिता हृदि भवत्यमला मलिने मही ॥ ४३ ॥

vividhakāryavikāradaśāmayī sapurapattanamaṇḍalaparvatā | mukurakośa iva pratibimbitā hṛdi bhavatyamalā maline mahī || 43 ||

The earth, with its various activities, transformations, conditions, cities, towns, and mountains, is reflected in the heart like an image in a mirror. It becomes pure in the pure heart and impure in the impure heart.

पृथ्वी, उसके विविध कार्यों, परिवर्तनों, दशाओं, नगरों, ग्रामों और पर्वतों के साथ, हृदय में दर्पण में प्रतिबिंब की तरह प्रतिबिंबित होती है | यह शुद्ध हृदय में शुद्ध और अशुद्ध हृदय में अशुद्ध हो जाती है || ४३ ||

Chapter 4

7.4.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । साहंतादिजगच्छान्तौ बोधे संवित्कलात्मनि । संशान्तदीपसंकाशस्त्यागः सिद्ध्यति नान्यथा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sāhaṃtādijagacchāntau bodhe saṃvitkalātmani | saṃśāntadīpasaṃkāśastyāgaḥ siddhyati nānyathā || 1 ||

Shri Vasistha said: In the awareness that is the essence of consciousness, from the beginning to the end of the world, renunciation is achieved in the form of a peaceful lamp, and not otherwise.

श्री वसिष्ठ ने कहा: चेतना के स्वरूप में ज्ञान की अवधि में, जगत के आरम्भ से अंत तक, त्याग शांत दीप के रूप में सिद्ध होता है, अन्यथा नहीं।

7.4.2

न त्यागः कर्मसंत्यागो बोधस्त्याग इति स्मृतः । अजगत्प्रतिभैकात्मा योऽनहंतादिरव्ययः ॥ २ ॥

na tyāgaḥ karmasaṃtyāgo bodhastyāga iti smṛtaḥ | ajagatpratibhaikātmā yo'nahaṃtādiravyayaḥ || 2 ||

Renunciation is not the giving up of actions; it is the renunciation of the ego. The one who is beyond the world, whose essence is pure consciousness, and who is imperishable, is known as the true renunciate.

त्याग कर्मों को छोड़ना नहीं है; यह अहंकार का त्याग है। जो जगत से परे है, जिसका स्वरूप शुद्ध चेतना है, और जो अविनाशी है, वही सच्चा त्यागी कहलाता है।

7.4.3

अयं सोहमिदं तन्म इति निःस्नेहदीपवत् । शान्ते परमनिर्वाणे प्रबोधात्मेति शिष्यते ॥ ३ ॥

ayaṃ so'hamidaṃ tanma iti niḥsnehadīpavat | śānte paramanirvāṇe prabodhātmeti śiṣyate || 3 ||

This 'I am this, that is mine' is like a lamp without attachment. In the peaceful supreme liberation, it is known as the essence of enlightenment.

यह 'मैं हूँ, यह मेरा है' आसक्ति रहित दीप के समान है। शांत परम मुक्ति में, यह प्रकाश का स्वरूप कहलाता है।

7.4.4

अयं सोहमिदं तन्मे शान्तमित्येव यस्य नो । न ज्ञानं तस्य नो शान्तिर्न त्यागो न च निर्वृतिः ॥ ४ ॥

ayaṃ so'hamidaṃ tanme śāntamityeva yasya no | na jñānaṃ tasya no śāntirna tyāgo na ca nirvṛtiḥ || 4 ||

For one who does not have the peaceful realization 'I am this, that is mine,' there is no knowledge, no peace, no renunciation, and no contentment.

जिसके पास 'मैं हूँ, यह मेरा है' की शांत अनुभूति नहीं है, उसके लिए न ज्ञान है, न शांति है, न त्याग है, और न संतोष है।

7.4.5

ममेदमयमेवाहमित्येतावति यः क्षयः । बोधात्मा शिवमाशान्तं तस्मादन्यन्न विद्यते ॥ ५ ॥

mamedamayamevāhamityetāvati yaḥ kṣayaḥ | bodhātmā śivamāśāntaṃ tasmādanyannavidyate || 5 ||

For one who has the realization 'I am this, this is mine,' the dissolution of the ego leads to the peaceful and blissful state of enlightenment. There is nothing else beyond this.

जिसके पास 'मैं हूँ, यह मेरा है' की अनुभूति है, उसके लिए अहंकार का विलय शांत और आनंदमय प्रकाश की अवस्था में होता है। इसके अलावा कुछ और नहीं है।

7.4.6

अहमंशे विदा क्षीणे सर्वमेव क्षयं गतम् । न किंचिच्च क्वचित्क्षीणं निर्वाणैकघनं स्थितम् ॥ ६ ॥

ahamaṃśe vidā kṣīṇe sarvameva kṣayaṃ gatam | na kiṃcicca kvacitkṣīṇaṃ nirvāṇaikaghanaṃ sthitam || 6 ||

When the sense of 'I' is destroyed, everything is destroyed. Nothing is destroyed anywhere, and it remains as the pure essence of Nirvana.

जब 'मैं' का भाव नष्ट हो जाता है, तब सब कुछ नष्ट हो जाता है। कहीं भी कुछ नष्ट नहीं होता है, और यह निर्वाण के शुद्ध स्वरूप में स्थित रहता है।

7.4.7

अहविदनहंवित्त्वादेव शाम्यत्यविघ्नतः । एतावन्मात्रसाध्येयं किमिवेयं कदर्थना ॥ ७ ॥

ahavidanahaṃvittvādeva śāmyatyavighnataḥ | etāvanmātrasādhyeyaṃ kimiveyaṃ kadarthanā || 7 ||

By the mere knowledge of the absence of 'I', one attains peace without obstacles. This much is to be accomplished; why this useless talk?

केवल 'मैं' की अनुपस्थिति के ज्ञान से, एक बिना किसी बाधा के शांति प्राप्त करता है। इतना ही साधना करना है; यह व्यर्थ बात क्यों?

7.4.8

अहंनाहमिति भ्रान्तिर्न च चित्त्वादृतेऽस्ति सा । चित्त्वं चाकाशविशदमतः क्वैषा भ्रमस्थितिः ॥ ८ ॥

ahaṃnāhamiti bhrāntirna ca cittvādṛte'sti sā | cittvaṃ cākāśaviśadamataḥ kvaiṣā bhramasthitiḥ || 8 ||

The delusion of 'I am not I' does not exist without the knowledge of consciousness. Consciousness is as pure as the sky, so where is the place for this delusion?

'मैं नहीं मैं' की भ्रांति चेतना के ज्ञान के बिना नहीं होती। चेतना आकाश की तरह शुद्ध है, तो इस भ्रांति के लिए जगह कहाँ है?

7.4.9

न भ्रमो भ्रमणं नैव न भ्रान्तिर्भ्रामकोऽस्ति वा । अनालोकनमेवेदमालोकान्नेदमस्ति ते ॥ ९ ॥

na bhramo bhramaṇaṃ naiva na bhrāntirbhāmako'sti vā | anālokanamevedamaālokānnedamasti te || 9 ||

There is no delusion, no wandering, no deluded one, nor is there a deluder. This is merely non-perception; from perception, this does not exist for you.

न भ्रम है, न भटकना है, न भ्रांत है, न भ्रामक है। यह केवल अनुभूति का अभाव है; अनुभूति से, यह आपके लिए मौजूद नहीं है।

7.4.10

विद्धि चिन्मात्रमेवेदमसद्रूपोपमं ततम् । तेनालं मौनमास्स्वैवं सर्वं निर्वाणमात्रकम् ॥ १० ॥

viddhi cinmātramevedamasadrūpopamaṃ tatam | tenālaṃ maunamāssvaivaṃ sarvaṃ nirvāṇamātrakam || 10 ||

Know that this is merely pure consciousness, devoid of any form. Therefore, remain silent; everything is merely Nirvana.

जानो कि यह केवल शुद्ध चेतना है, जिसमें कोई रूप नहीं है। इसलिए, मौन रहो; सब कुछ केवल निर्वाण है।

7.4.11

येनैवाशु निमेषेण त्वहमित्येव चेतति । तेनैव नाहमित्येव चेतित्वाशु न शोच्यते ॥ ११ ॥

yenaivāśu nimeṣeṇa tvahamityeva cetati | tenaiva nāhamityeva cetitvāśu na śocyate || 11 ||

By whatever means one quickly thinks 'I am,' by that very means one should quickly think 'I am not,' and thus one should not grieve.

जिस तरह से कोई शीघ्रता से सोचता है कि 'मैं हूँ,' उसी तरह से उसे शीघ्रता से सोचना चाहिए कि 'मैं नहीं हूँ,' और इस तरह से उसे दुःख नहीं करना चाहिए।

7.4.12

अहंभावं नभोर्थेन निर्वाच्यारूढबाणवत्। अजस्रमाशु वाऽक्षीणं तिष्ठावष्टब्धतत्पदः ॥ १२ ॥

ahaṃbhāvaṃ nabhorthena nirvācyārūḍhabāṇavat | ajasramāśu vā'kṣīṇaṃ tiṣṭhāvaṣṭabdhatatpadaḥ || 12 ||

Remove the ego as if it were a firmly lodged arrow in the sky, continuously and quickly, and remain steadfast in that state.

अहंकार को आकाश में गहराई से धँसा हुआ बाण की तरह निकालें, निरंतर और तुरंत, और उस स्थिति में स्थिर रहें।

7.4.13

सनभोर्थामहन्तां त्वं चेतन्नेवमनारतम्। सर्वभावैरनारूढो भव तीर्णभवार्णवः ॥ १३ ॥

sanabhorthāmahantāṃ tvaṃ cetannevamanāratam | sarvabhāvairanārūḍho bhava tīrṇabhavārṇavaḥ || 13 ||

Think of yourself as the sky, not attached to any state, and become one who has crossed the ocean of existence.

अपने आप को आकाश के रूप में सोचें, किसी भी स्थिति से अनुरक्त न हों, और अस्तित्व के समुद्र को पार करने वाले बनें।

7.4.14

स्वभावमात्रविजये स्वयं यस्य न वीरता। तस्योत्तमपदप्राप्तौ पशोर्ब्रूहि कथैव का ॥ १४ ॥

svabhāvamātravijaye svayaṃ yasya na vīratā | tasyottamapadaprāptau paśorbrūhi kathaiva kā || 14 ||

If one does not have the courage to conquer one's own nature, how can one attain the highest state? Tell me, how can a beast achieve this?

अगर कोई अपने स्वभाव को जीतने की हिम्मत नहीं रखता, तो उसे उच्चतम स्थिति कैसे प्राप्त हो सकती है? बताओ, किस तरह से एक पशु इसे प्राप्त कर सकता है?

7.4.15

षड्वर्गो निर्जितः पूर्वं येनोत्तमविदा स्वतः। भाजनं स महार्थानां नेतरो नरगर्दभः ॥ १५ ॥

ṣaḍvargo nirjitaḥ pūrvaṃ yenottamavidā svataḥ | bhājanaṃ sa mahārthānāṃ netaro naragardabhaḥ || 15 ||

One who has conquered the six enemies (lust, anger, greed, attachment, pride, and envy) by oneself is a vessel for great purposes, not an ordinary man who is like a donkey.

जो अपने आप से छह दुश्मनों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और ईर्ष्या) को जीत लेता है, वह महान उद्देश्यों का पात्र है, एक साधारण व्यक्ति जो गधे की तरह है, नहीं।

7.4.16

यस्य स्वान्तर्मनोवृत्तिर्जीयमाना जिताथवा। विषयः स विवेकानां स पुमानिति कथ्यते ॥ १६ ॥

yasya svāntarmanovṛttirjīyamānā jitāthavā | viṣayaḥ sa vivekānāṃ sa pumāniti kathyate || 16 ||

One whose mental activities are being conquered or have been conquered, that object is said to be the subject of discrimination, and he is called a wise man.

जिसकी मानसिक गतिविधियाँ जीती जा रही हैं या जीत चुकी हैं, वह विषय विवेक का विषय कहा जाता है, और वह पुरुष कहलाता है।

7.4.17

अर्थो दृषदिवाम्भोधौ यो य आपतति त्वयि। तस्मादेव पलायस्व नाहमित्येव भावयन् ॥ १७ ॥

artho dṛṣadivāmbhodhau yo yo āpatati tvayi | tasmādeva palāyasva nāhamityeva bhāvayan || 17 ||

Whatever meaning falls upon you like a reflection in water, from that very thing you should flee, thinking 'I am not this.'

जो भी अर्थ पानी में प्रतिबिंब की तरह आप पर पड़ता है, उसी से भाग जाओ, सोचते हुए 'मैं यह नहीं हूँ।'

7.4.18

नाहमस्मीति बुद्धापि सोपपत्तिकमप्यलम्। जानानो ज्ञप्तिमात्रं च किमज्ञ इव मुह्यसि ॥ १८ ॥

nāhamasmīti buddhvāpi sopapattikamapyalam | jānāno jñaptimātraṃ ca kimajña iva muhyasi || 18 ||

Even after realizing 'I am not this,' and understanding the logical reasoning, why do you still get confused like an ignorant person, knowing only the mere perception?

यह जानकर भी कि 'मैं यह नहीं हूँ,' और तर्कसंगत समझ के बावजूद, आप एक अज्ञानी की तरह क्यों भ्रमित हो जाते हैं, जो केवल प्रतीति जानता है?

7.4.19

न ज्ञेयमर्थतोऽस्तीह हेम्नीव कटकादिता। भ्रान्तिमात्रादृते सा च शाम्यत्यस्मरणेन ते ॥ १९ ॥

na jñeyamarthato'stīha hemnīva kaṭakāditā | bhrāntimātrādṛte sā ca śāmyatyasmaraṇena te || 19 ||

There is nothing to be known here in reality, just like the appearance of a bracelet in gold. That delusion ceases with your forgetfulness.

यहाँ वास्तव में कुछ भी जानने के लिए नहीं है, जैसे सोने में कंगन की तरह दिखाई देता है। वह भ्रम आपके भूल जाने से समाप्त हो जाता है।

7.4.20

यो यो भाव उदेत्यन्तस्त्वयि स्पन्द इवानिले। नाहमस्मीति चिद्वृत्त्या तमनाधारतां नय ॥ २० ॥

yo yo bhāva udetyantastvayi spanda ivānile | nāhamasmīti cidvṛttyā tamānādhāratāṃ naya || 20 ||

Whatever feeling arises within you like a vibration in the wind, lead it to non-support with the thought 'I am not this' through the activity of consciousness.

जो भी भाव आपके अंदर वायु में स्पंदन की तरह उठता है, उसे 'मैं यह नहीं हूँ' के विचार से चेतना की गतिविधि द्वारा असहारा की ओर ले जाओ।

7.4.21

लोभो लज्जा मदो मोहो येनादाविति नो जिताः। निरर्थकमनर्थेऽस्मिन्स किमर्थं प्रवर्तते ॥ २१ ॥

lobho lajjā mado moḥo yenādāviti no jitāḥ | nirarthakamanarthe'smin sa kimarthaṃ pravartate || 21 ||

Greed, shame, pride, and delusion—these are not conquered by one who is not self-controlled. What purpose does such a person serve in this meaningless existence?

लोभ, लज्जा, मद और मोह—ये उसके द्वारा नहीं जीते जाते जो आत्मसंयम से रहित है | ऐसे व्यक्ति का इस निरर्थक अस्तित्व में क्या प्रयोजन है?

7.4.22

अहन्त्वं पवने स्पन्द इव यत्त्वयि संस्थितम्। परमात्मनि तन्नान्यदेतत्स्पन्द इवानिले ॥ २२ ॥

ahantvaṃ pavane spanda iva yattvayi saṃsthitam | paramātmani tannānyadetatspanda ivānile || 22 ||

The sense of 'I' is like the vibration in the wind. Whatever is established in you, that is not different from the Supreme Self, just as the vibration is not different from the wind.

अहंता पवन में स्पंदन की तरह है | जो कुछ भी आपमें स्थित है, वह परमात्मा से भिन्न नहीं है, जैसे स्पंदन वायु से भिन्न नहीं है |

7.4.23

असर्गसंविदा सर्गः परेऽस्तोऽतिविराजते। संनिवेशविशेषेण दुरर्थोऽपि हि शोभते ॥ २३ ॥

asargasaṃvidā sargaḥ pare'sto'tivirājate | saṃniveśaviśeṣeṇa durartho'pi hi śobhate || 23 ||

Creation shines brilliantly in the Supreme, which is beyond creation. Even the most difficult tasks shine beautifully due to their unique arrangement.

सृष्टि परम में, जो सृष्टि से परे है, अति उज्ज्वल रूप से चमकती है | अपने विशिष्ट व्यवस्था के कारण, सबसे कठिन कार्य भी सुंदर रूप से चमकते हैं |

7.4.24

परमात्मा तु नोदेति नास्तं याति कदाचन। न चास्मादन्यदस्तीति को भावोऽभाव एव वा॥ २४॥

paramātmā tu nōdēti nāstaṃ yāti kadācana | na cāsmādanyadastīti ko bhāvō'bhāva ēva vā || 24 ||

The Supreme Self neither rises nor sets. There is nothing other than it. What is this existence or non-existence?

परमात्मा न तो उदित होता है न ही अस्त होता है | इसके अलावा कुछ भी नहीं है | यह अस्तित्व या अनस्तित्व क्या है?

7.4.25

परं परे पूर्णं पूर्णे शान्तं शान्ते शिवं शिवे। इत्येवमात्रं विततं नाहं न च जगन्न धीः॥ २५॥

paraṃ pare pūrṇaṃ pūrṇe śāntaṃ śānte śivaṃ śive | ityēvamātraṃ vitataṃ nāhaṃ na ca jaganna dhīḥ || 25 ||

The Supreme is complete in the complete, peaceful in the peaceful, auspicious in the auspicious. Thus, it is spread out. There is no 'I', no world, no intellect.

परम पूर्ण में पूर्ण है, शांत में शांत है, शिव में शिव है | ऐसा ही फैला हुआ है | न तो 'मैं' है, न ही जगत है, न ही बुद्धि है |

7.4.26

अनिर्वाणे विनिर्वाणं शान्तं शान्ते शिवे शिवम्। निर्वाणमप्यनिर्वाणं सनभोर्थं न वापि तत्॥ २६॥

anirvāṇe vinirvāṇaṃ śāntaṃ śānte śive śivam | nirvāṇamapyanirvāṇaṃ sanabhorthaṃ na vāpi tat || 26 ||

In the state of non-liberation, there is liberation; in peace, there is peace; in auspiciousness, there is auspiciousness. Even in liberation, there is non-liberation; the essence of existence is neither this nor that.

अनिर्वाण में विनिर्वाण है, शान्ति में शान्ति है, शिव में शिव है | निर्वाण में भी अनिर्वाण है, अस्तित्व का सार न तो यह है न वह।

7.4.27

शस्त्राघाताः प्रसह्यन्ते सह्यन्ते व्याधिवेदनाः। नाहमित्येवमात्रस्य सहने का कदर्थना॥ २७॥

śastrāghātāḥ prasahyante sahyante vyādhivedanāḥ | nāhamityevamātrasya sahane kā kadarthanā || 27 ||

Weapons' blows are endured, diseases' pains are endured; what is the use of enduring just the thought 'I am not'?

शस्त्रों के आघात सहे जाते हैं, रोगों के दर्द सहे जाते हैं; 'मैं नहीं हूँ' यह विचार सहने में क्या फायदा?

7.4.28

जगत्पदार्थसार्थानामहमित्यक्षयोऽङ्कुरः। तस्मिन्निर्मूलतां याते जगन्निर्मूलतां गतम्॥ २८॥

jagatpadārthasārthānāmahamityakṣayo'ṅkuraḥ | tasminnirmūlatāṃ yāte jagannirmūlatāṃ gatam || 28 ||

The thought 'I am' is the seed of all worldly desires; when this seed is destroyed, the world becomes rootless.

'मैं हूँ' यह विचार सभी संसारिक इच्छाओं का बीज है; जब यह बीज नष्ट हो जाता है, तो संसार बेजड़ हो जाता है।

7.4.29

बाष्पेणेवाहमर्थेन निःसारेणापि सारवत्। व्यामलः परमादर्शस्तच्छान्तौ संप्रसीदति॥ २९॥

bāṣpeṇevaahamarthera niḥsāreṇāpi sāravat | vyāmalaḥ paramādarśastacchāntau saṃprasīdati || 29 ||

Like a tear, the meaning of 'I' is insignificant yet appears significant; the supreme mirror, though spotless, reflects peacefully in that tranquility.

एक आँसू की तरह, 'मैं' का अर्थ निरर्थक है लेकिन फिर भी महत्वपूर्ण लगता है; परम दर्पण, जो निर्दोष है, उस शान्ति में शान्तिपूर्वक प्रतिबिम्बित होता है।

7.4.30

अहमर्थः परे वायौ स्पन्दस्तत्प्रशमे तु तत् । अनिर्देश्यमनाभासमनन्तमजमव्ययम् ॥ ३० ॥

ahamarthera pare vāyau spandastatpraśame tu tat | anirdeśyamanābhāsamamanantamajamavyayam || 30 ||

The meaning of 'I' is in the supreme ether; the vibration ceases in that tranquility; it is indescribable, without appearance, infinite, unborn, and imperishable.

'मैं' का अर्थ परम आकाश में है; उस शान्ति में स्पन्दन समाप्त हो जाता है; यह अवर्णनीय, अदृश्य, अनन्त, अजन्मा और अविनाशी है।

7.4.31

अहमर्थः पुरो द्रव्यप्रतिबिम्बप्रदश्चिति । तच्छान्तौ सा निराभासमनन्तमजमव्ययम् ॥ ३१ ॥

ahamarthaḥ puro dravyapratibimbapradaściti | tacchāntau sā nirābhāsam anantam ajam avyayam || 31 ||

The essence of the self is reflected in the material world | In its tranquility, it is without reflection, eternal, unborn, and imperishable || 31 ||

स्वयं का अर्थ धन के प्रतिबिम्ब में प्रकट होता है | उसकी शान्ति में, वह बिना प्रतिबिम्ब के, अनन्त, अजन्मा और अविनाशी है || ३१ ||

7.4.32

अहमर्थाम्बुदे क्षीणे परमार्थशरन्नभः । परयानन्तया लक्ष्म्या स्वच्छयाच्छं विराजते ॥ ३२ ॥

ahamarthāmbude kṣīṇe paramārthaśarannabhaḥ | parayānantayā lakṣmyā svacchayācchaṃ virājate || 32 ||

When the cloud of the self's essence dissipates, the sky of the ultimate truth shines | With supreme, endless splendor, it radiates pure brilliance || 32 ||

जब स्वयं के अर्थ का बादल छँट जाता है, तो परम सत्य का आकाश चमकता है | परम, अनन्त शोभा से, यह शुद्ध चमक फैलाता है || ३२ ||

7.4.33

अहमर्थमलोन्मुक्तमव्यक्तं ताम्रमङ्ग चेत् । तत्परं परमाभासं संपन्नं हेम कान्तिमत् ॥ ३३ ॥

ahamarthamalonmuktamavyaktaṃ tāmram aṅga cet | tatparaṃ paramābhāsaṃ saṃpannaṃ hema kāntimat || 33 ||

If the self's essence is freed from impurities and is unmanifest, then it is like copper | That supreme, radiant, and complete is like golden brilliance || 33 ||

अगर स्वयं का अर्थ अपने मल से मुक्त और अव्यक्त है, तो वह ताँबे के समान है | वह परम, चमकदार, और पूर्ण सोने की चमक के समान है || ३३ ||

7.4.34

यथा निरभिधार्थश्रीर्भजत्यव्यपदेश्यताम् । तथानहन्ताहन्तेयं ब्रह्मत्वमधिगच्छति ॥ ३४ ॥

yathā nirabhidhārthaśrīrbhajatyavyapadeśyatām | tathānahantāhanteyaṃ brahmatvamadhigacchati || 34 ||

Just as the splendor of the unmanifest essence attains indescribability | Similarly, this non-egoistic self attains the state of Brahman || 34 ||

जैसे अव्यक्त अर्थ की शोभा अवर्णनीयता को प्राप्त होती है | वैसे ही, यह अहंकाररहित स्वयं ब्रह्मत्व को प्राप्त होता है || ३४ ||

7.4.35

अस्त्यहन्त्वे स्थितं ब्रह्म सनामेव पदार्थवत् । शान्तवत्सदिवाभासं तद्वत्स व्यपदेशवान् ॥ ३५ ॥

astyahantve sthitaṃ brahma sanāmeva padārthavat | śāntavatsadivābhāsaṃ tadvatsa vyapadeśavān || 35 ||

In the state of ego, Brahman is established as if it were an object | Like the tranquil, ever-existent, and luminous, it is described as such || 35 ||

अहंकार की स्थिति में, ब्रह्म एक वस्तु के रूप में स्थापित है | शान्त, सनातन, और प्रकाशमान के समान, यह ऐसे ही वर्णित है || ३५ ||

7.4.36

अहमर्थो जगद्बीजं यदि दग्धमभावनात् । तदहन्त्वं जगद्बन्ध इत्यादेः कलनैव का ॥ ३६ ॥

ahamartho jagadbījaṃ yadi dagdhamabhāvanāt| tadahantvaṃ jagadbandha ityādeḥ kalanaiva kā|| 36 ||

If the seed of the world, which is the meaning of 'I', is burned by non-existence, then the bondage of the world is indeed a mere imagination.

यदि 'मैं' का अर्थ, जो कि जगत का बीज है, अभावना से दग्ध हो जाता है, तो जगत का बन्धन केवल कल्पना है।

7.4.37

सद्ब्रह्म शिवमात्मेति परे नामकलङ्किता । उदेत्यहन्ता कुम्भत्वादिव मृद्धातुविस्मृतिः ॥ ३७ ॥

sadbrahma śivamātmeti pare nāmakalaṅkitā| udetyahantā kumbhatvādiva mṛddhātuvismṛtiḥ|| 37 ||

The supreme is adorned with names such as Sat, Brahma, Shiva, and Atman. Arising as 'I', it is like the forgetfulness of the essential nature of the pot, etc.

परम को सत्, ब्रह्म, शिव और आत्मा जैसे नामों से सजाया गया है। 'मैं' के रूप में उठते हुए, यह घड़े की मूल प्रकृति की भूल की तरह है।

7.4.38

अहमर्थादियं बीजात्सत्ता बिम्बलतोत्थिता । यस्यां जगन्त्यनन्तानि फलान्यायान्ति यान्तिच ॥ ३८ ॥

ahamarthādiyaṃ bījātsattā bimbalatotthitā| yasyāṃ jagantyanantāni phalānyāyānti yāntica|| 38 ||

From the seed of the meaning of 'I', existence arises like a reflection. In it, the infinite fruits of the world come and go.

'मैं' के अर्थ के बीज से अस्तित्व प्रतिबिम्ब की तरह उत्पन्न होता है। इसमें जगत के अनन्त फल आते जाते रहते हैं।

7.4.39

साद्यब्ध्युर्वीनदी सेयं रूपालोकैषणादिका । अहमर्थस्य मरिचबीजस्यान्तश्चमत्कृतिः ॥ ३९ ॥

sādryabdhyurvīnadī seyaṃ rūpālokaiṣaṇādikā| ahamarthasya maricabījasyaantaścamatkṛtiḥ|| 39 ||

This, resembling the ocean, river, and stream, is the form, world, and desire, etc., and is the inner delight of the seed of the meaning of 'I', like a mirage.

यह, समुद्र, नदी और धारा की तरह, रूप, लोक और इच्छा आदि है, और 'मैं' के अर्थ के बीज की अन्तर्निहित आनन्द है, मृगतृष्णा की तरह।

7.4.40

द्यौः क्षमा वायुराकाशं पर्वताः सरितो दिशः । इत्यामोदोऽहमर्थोग्रकुसुमस्य विकासिनः ॥ ४० ॥

dyauḥ kṣamā vāyurākāśaṃ parvatāḥ sarito diśaḥ| ityāmodo'hamarthograkusumasya vikāsinaḥ|| 40 ||

The sky, earth, air, space, mountains, rivers, and directions are the delight of the blossoming flower of the intense meaning of 'I'.

आकाश, पृथ्वी, वायु, आकाश, पर्वत, नदियाँ, और दिशाएँ 'मैं' के अर्थ के तीव्र फूल के विकसित होने की आनन्द हैं।

7.4.41

अहमर्थः प्रविसृतः प्रकटीकुरुते जगत्सद्रूपालोकमननं प्रवृत्त इव वासरः ॥ ४१ ॥

ahamarthaḥ pravisṛtaḥ prakaṭīkurute jagatsadrūpālokamananaṃ pravṛtta iva vāsaraḥ || 41 ||

The self, having entered into the world, manifests itself like the day that has begun.

आत्मा, जब संसार में प्रवेश करता है, तब वह एक नए दिन की तरह प्रकट होता है।

7.4.42

प्रवृत्तेन दिनेनार्थः प्रकटीक्रियते यथासज्जगदहन्त्वेन क्षणान्निर्मीयते तथा ॥ ४२ ॥

pravṛttena dinenārthaḥ prakaṭīkriyate yathāasajjagadahantvena kṣaṇānnirmīyate tathā || 42 ||

Just as the day reveals the world, the self creates the world moment by moment.

जैसे दिन संसार को प्रकट करता है, वैसे ही आत्मा क्षण-क्षण में संसार को रचता है।

7.4.43

अहमित्यर्थदुस्तैललवो ब्रह्मणि वारिणिप्रसृतो यत्तदाश्वेतत्त्रिजगच्चक्रकं स्थितम् ॥ ४३ ॥

ahamityarthadustailalavo brahmaṇi vāriṇiprasṛto yattadāśvetattrijagaccakrakaṃ sthitam || 43 ||

The self, which is the essence of 'I', flows into Brahman like a drop of oil in water, and that which is pure and bright, the three worlds are established in it.

आत्मा, जो 'मैं' का सार है, ब्रह्म में तेल की बूँद की तरह प्रवाहित होता है, और जो शुद्ध और उज्ज्वल है, उसमें तीनों लोक स्थित हैं।

7.4.44

उन्मेषमात्रेणाहन्ता जगन्त्यनुभवत्यहोन निमेषेण दृगिव सत्यानीत्यप्यसन्त्यलम् ॥ ४४ ॥

unmeṣamātreṇāhantā jagantyanubhavatyahona nimeṣeṇa dṛgiva satyānītyapyasantyalam || 44 ||

By the mere opening of the eyes, the self experiences the world, but in the blink of an eye, it realizes the eternal truth.

आँखों के खुलने मात्र से आत्मा संसार का अनुभव करता है, लेकिन पलक झपकते ही वह सनातन सत्य को जान लेता है।

7.4.45

अहमर्थे प्रविसृते संसारो ह्यनुभूयतेनान्तर्भूय परिक्षीणे लोचनस्येव तारके ॥ ४५ ॥

ahamarthe pravisṛte saṃsāro hyanubhūyatenāntarbhūya parikṣīṇe locanasyeva tārake || 45 ||

When the self enters the world, it experiences the world, but when it is absorbed and diminished, it is like the pupil of the eye.

जब आत्मा संसार में प्रवेश करता है, तो वह संसार का अनुभव करता है, लेकिन जब वह लीन और क्षीण हो जाता है, तो वह आँख की पुतली की तरह होता है।

7.4.46

अहमंशे निरंशत्वं नीते शाश्वतसंविदा । शाम्यतीयमशेषेण संसारमृगतृष्णिका ॥ ४६ ॥

ahamaṃśe niraṃśatvaṃ nīte śāśvatasaṃvidā | śāmyatīyamaśeṣeṇa saṃsāramṛgatṛṣṇikā || 46 ||

When the sense of 'I' is dissolved in the eternal consciousness, the thirst for the path of worldly existence is completely pacified.

जब मैं का भाव सनातन चेतना में विलीन हो जाता है, तब संसार के मार्ग की तृष्णा पूरी तरह शांत हो जाती है।

7.4.47

स्वसंविद्भावनामात्रसाध्येऽस्मिन्वरवस्तुनि । सिद्धमात्रात्मनि स्वैरं मा खेदं गच्छमा भ्रमीम् ॥ ४७ ॥

svasaṃvidbhāvanāmātrasādhye'sminvaravastuni | siddhamātrātmani svairaṃ mā khedaṃ gacchamā bhramīm || 47 ||

In this supreme reality, which is attained merely by the contemplation of one's own consciousness, do not be distressed or confused, for it is already accomplished.

इस परम वस्तु में, जो केवल अपनी चेतना के भावना से प्राप्त होती है, चिंता या भ्रम मत करो, क्योंकि यह पहले से ही सिद्ध है।

7.4.48

स्वयत्नमात्रसंसाध्यादसहायादिसाधनात्। अनहंवेदनान्नान्यच्छ्रेयः पश्यामि तेऽनघ ॥ ४८ ॥

svayatnamātrasaṃsādhyādasahāyādisādhanāt | anahaṃvedanānnānyacchreyaḥ paśyāmi te'nagha || 48 ||

From the effort of self-realization alone, without any external aid, I see no greater good than the realization of the non-ego.

आत्म-साधना के प्रयास से ही, किसी बाहरी सहायता के बिना, मैं अहंकार के अभाव की पहचान से बढ़कर कोई अच्छाई नहीं देखता।

7.4.49

विस्मृत्याहं त्वमास्स्व प्रविसृतविभवः पूरिताशेषविश्वो विष्वक्शैलान्तरिक्षक्षितिजलधिमरुन्मार्गरूपोऽमलात्मा। स्वस्थः शान्तो विशोकः करणमलकलावर्जितो निष्प्रपञ्चो निःसंचारश्चरात्मा सकलमसकलं चेति सिद्धान्तसारः ॥ ४९ ॥

vismṛtyāhaṃ tvamāssva pravisiṛtavibhavaḥ pūritāśeṣaviśvo
viṣvakśailāntarikṣakṣitijaladhimarunmārgarūpo'malātmā | svasthaḥ śānto viśokaḥ karaṇamalakalāvarjito
niṣprapañco niḥsaṃcāraścarātmā sakalamasakalaṃ cetti siddhāntasāraḥ || 49 ||

Forgetting the 'I', be the all-pervading, complete universe, pure in essence, embodied in the forms of mountains, sky, earth, oceans, and winds. Be at peace, free from sorrow, devoid of impurities, beyond the material world, motionless, and the essence of all that is manifest and unmanifest.

अहं को भूलकर, व्यापक, पूर्ण विश्व बनो, जो पर्वतों, आकाश, पृथ्वी, समुद्रों और हवाओं के रूप में शुद्ध आत्मा है। शांत, दुःखरहित, दोषरहित, संसार से परे, निश्चल, और प्रत्येक व्यक्त और अव्यक्त का सार बनो।

Chapter 5

7.5.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्वभावं स्वं विजित्यादौइन्द्रियाणां सचेतसाम् । प्रवर्तते विवेके यः सर्वं तस्याशु सिध्यति ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | svabhāvaṃ svaṃ vijityādauindriyāṇāṃ sacetasām | pravartate viveke yaḥ sarvaṃ tasyāśu sidhyati || 1 ||

Shri Vasishtha said: One who, having conquered one's own nature at the outset, engages in discrimination with a conscious mind, everything is quickly accomplished for that person.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो पहले अपने स्वभाव को जीत लेता है, और सचेत मन से विवेक का उपयोग करता है, उसके लिए सब कुछ शीघ्र ही सिद्ध हो जाता है।

7.5.2

स्वभावमात्रं येनान्तर्न जितं दग्धबुद्धिना । तस्योत्तमपदप्राप्तिः सिकतातैलदुर्लभा ॥ २ ॥

svabhāvamātraṃ yenāntarna jitaṃ dagdhabuddhinā | tasyottamapadaprāptiḥ sikatātailadurlabhā || 2 ||

One whose intellect is burnt and who has not conquered even a bit of one's own nature, for that person, the attainment of the highest state is as difficult as obtaining oil from sand.

जिसकी बुद्धि जल चुकी है और जिसने अपने स्वभाव का थोड़ा सा भी नियंत्रण नहीं किया है, उसके लिए उत्तम पद की प्राप्ति रेत से तेल निकालने जितनी कठिन है।

7.5.3

स्वभावमात्रं येनान्तर्न जितं दग्धबुद्धिनातस्योत्तमपदप्राप्तिः सिकतातैलदुर्लभा ॥ ३ ॥

svabhāvamātraṃ yenāntarna jitaṃ dagdhabuddhinātasyottamapadaprāptiḥ sikatātailadurlabhā || 3 ||

By the one whose nature is conquered within, whose intellect is burnt, the attainment of the highest state is as rare as oil in sand.

जिसकी प्रकृति अंदर से जीत ली गई है, जिसकी बुद्धि जला दी गई है, उसके लिए उत्तम पद प्राप्त करना रेत में तेल के समान दुर्लभ है।

7.5.4

अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् । मम पूर्वं भुशुण्डेन कथितं मेरुमूर्धनि ॥ ४ ॥

atraivodāharantīmamitihāsaṃ purātanam | mama pūrvaṃ bhuśuṇḍena kathitaṃ merumūrdhani || 4 ||

In this context, they narrate this ancient story, which was previously told to me by Bhushunda on the peak of Meru.

इस संदर्भ में, वे इस प्राचीन कथा को सुनाते हैं, जो पहले भुशुण्ड ने मुझे मेरु की चोटी पर सुनाई थी।

7.5.5

पुरा भुशुण्डः कस्मिंश्चित्पृष्ट आसीत्कथान्तरे । मया कदाचिदेकान्ते मेरोः शिखरकोटरे ॥ ५ ॥

purā bhuśuṇḍaḥ kasmiṃścitpṛṣṭa āsītkathāntare | mayā kadācid ekānte merorśikhara koṭare || 5 ||

Once, Bhushunda was asked a question in a different context by me in solitude on the peak of Meru.

एक बार, भुशुण्ड ने मेरु की चोटी पर एकांत में मुझसे एक अलग संदर्भ में एक प्रश्न पूछा था।

7.5.6

मुग्धबुद्धिमनात्मज्ञं कं त्वं सुचिरजीवितम्। स्मरसीति मया पृष्टेनोक्तं तेनेदमङ्ग मे ॥ ६ ॥

mugdhabuddhimanātmajñaṃ kaṃ tvaṃ sucirajīvitam| smarasīti mayā pṛṣṭeno'ktaṃ tenedaṅga me || 6 ||

Who is that foolish, ignorant person who has lived for a long time? When I asked, 'Do you remember?' he did not answer, and thus I am distressed.

वह कौन है जो मूर्ख, अज्ञानी है और लंबे समय तक जीवित रहा है? जब मैंने पूछा, 'क्या तुम याद करते हो?' तो उसने कोई उत्तर नहीं दिया, और इसलिए मैं दुःखी हूँ।

7.5.7

भुशुण्ड उवाच। आसीद्विद्याधरः पूर्वमनात्मज्ञः सुखेदितः। लोकालोकान्तरश्रृङ्गे शुष्क आर्यो विचारवान् ॥ ७ ॥

bhuśuṇḍa uvāca| āsīdvidyādharaḥ pūrvamanātmajñaḥ sukheditaḥ| lokālokāntaraśṛṅge śuṣka āryo vicāravān || 7 ||

Bhushunda said: There was a Vidyadhara in the past who was ignorant of the self and sought pleasure. He was dry and thoughtful on the peak between the world and the non-world.

भुशुण्ड ने कहा: पहले एक विद्याधर था जो आत्मज्ञान से वंचित था और सुख चाहता था। वह लोक और अलोक के बीच की चोटी पर सूखा और विचारशील था।

7.5.8

तपसा बहुरूपेण यमेन नियमेन च। अक्षीणायुरतिष्ठत्स पुरा कल्पचतुष्टयम् ॥ ८ ॥

tapasā bahurūpeṇa yamena niyamena ca| akṣīṇāyuratiṣṭhatsa purā kalpacatuṣṭayam || 8 ||

With various forms of austerity, restraint, and discipline, he remained with un diminished lifespan for four kalpas in the past.

विभिन्न तपस्या, संयम और अनुशासन के साथ, उसने चार कल्पों तक अक्षुण्ण आयु के साथ पहले रहा।

7.5.9

ततश्चतुर्थे कल्पान्ते विवेकस्तस्य चोदभूत्। विदूरस्येव वैदूर्यमौचित्याज्जलदोदयात् ॥ ९ ॥

tataścaturthe kalpānte vivekastasya codabhūt| vidūrasyeva vaidūryamaucityājjaladodayāt || 9 ||

Then, at the end of the fourth kalpa, his discernment arose like the brilliance of a cat's eye gem from the clouds.

फिर, चौथे कल्प के अंत में, उसका विवेक बादलों से बिल्लौर की चमक की तरह उभरा।

7.5.10

पुनर्मृतिः पुनर्जन्म जरा मेति विभावयन्। लज्जेऽहं तत्किमेकं स्यात्स्थिरमित्यवमृश्य सः ॥ १० ॥

punarmṛtiḥ punarjanma jarā meti vibhāvayan| lajjē'haṃ tatkimēkaṃ syātsthiramityavamṛśya saḥ || 10 ||

Reflecting on repeated death, rebirth, and old age, he thought, 'I am ashamed; what could be the one stable thing?' and thus he contemplated.

पुनः मृत्यु, पुनर्जन्म और बुढ़ापे पर विचार करते हुए, उसने सोचा, 'मुझे शर्म आती है; एक स्थिर चीज क्या हो सकती है?' और इस प्रकार उसने सोचा।

7.5.11

मामाजगाम संप्रष्टुमष्टादशमयीं पुरीम्। स्वामुपोह्य विरक्तात्मा संसाररसतां गतः ॥ ११ ॥

māmājagāma saṃpraṣṭum aṣṭādaśamayīṃ purīm| svāmupohya viraktātmā saṃsārārasatāṃ gataḥ || 11 ||

He went to the city of eighteen months to meet his uncle, having abandoned his own self, he attained the essence of worldly pleasures.

उन्होंने अपने मामा से मिलने के लिए अठारह महीने की नगरी की यात्रा की, अपने आप को त्याग कर वे संसार के रस को प्राप्त हो गए।

7.5.13

विद्याधर उवाच। मृदूनि परितापीनि दृषद्दृढबलानि च। छेदे भेदे च दक्षाणि स्वशस्त्राणीन्द्रियाणि च ॥ १३ ॥

vidyādhara uvāca| mṛdūni paritāpīni dṛṣaddṛḍhabalāni ca| chede bhede ca dakṣāṇi svaśastrāṇīndriyāṇi ca || 13 ||

Vidyadhara said: The senses are soft, causing pain, firm and strong, skilled in cutting and piercing, and are one's own weapons.

विद्याधर ने कहा: इन्द्रियाँ नरम, दुःख पहुँचाने वाली, मजबूत और शक्तिशाली, काटने और चीरने में दक्ष, और अपने हथियार हैं।

7.5.14

पर्याकुलानि मलिनानि विपत्प्रदानि दुःखोर्मिमन्ति गुणकाननपावकत्वाथार्दान्धकारगहनानि तमोमयानि जित्वेन्द्रियाणि सुखमेति च किं ममार्थैः ॥ १४ ॥

paryākulāni malināni vipatpradāni duḥkhormimanti guṇakānanapāvakatvāthārdāndhakāragahanāni tamomayāni jitvendriyāṇi sukhameti ca kiṃ mamārthaiḥ || 14 ||

Conquering the senses that are agitated, impure, causing misfortune, full of sorrow, like a forest fire, dark and dense, full of darkness, what use are my desires?

उन इंद्रियों को जीतकर जो उत्तेजित हैं, अशुद्ध हैं, दुर्भाग्य लाती हैं, दुःख से भरी हुई हैं, जंगल की आग की तरह हैं, अंधेरे और घने हैं, अंधकार से भरे हुए हैं, मेरी इच्छाओं का क्या उपयोग है?

Chapter 6

7.6.1

विद्याधर उवाच । यदुदारमनायासं क्षयातिशयवर्जितम् । पदं पावनमाद्यन्तरहितं तद्वदाशु मे ॥ १ ॥

vidyādhara uvāca | yadudāramanāyāsaṃ kṣayātiśayavarjitam | padaṃ pāvanamādyantarahitaṃ tadvadāśu me || 1 ||

Vidyadhara said: Tell me quickly about that supreme state which is easily attainable, free from decay and excess, pure, and devoid of beginning and end.

विद्याधर ने कहा: मुझे शीघ्र बताओ उस परम पद के बारे में जो सरलता से प्राप्त होता है, क्षय और अतिशय से रहित है, पवित्र है, और आदि और अंत से रहित है।

7.6.2

एतावन्तमहं कालं सुप्त आसं जडात्मकः । इदानीं संप्रबुद्धोऽस्मि प्रसादादात्मनो मुने ॥ २ ॥

etāvantamahaṃ kālaṃ supta āsaṃ jaḍātmakaḥ | idānīṃ saṃprabuddho'smi prasādādātmano mune || 2 ||

For so long, I have been asleep, inert in nature. Now, I am awakened by the grace of the self, O sage.

इतने समय तक, मैं सोया हुआ था, जड़ स्वभाव वाला। अब, मैं आत्मा की कृपा से जागा हुआ हूँ, हे मुनि।

7.6.3

मनो महामयोत्तप्तं क्षुब्धमज्ञानवृत्तिषु । मामुद्धर दुरन्तेहं मोहादहमिति स्थितात् ॥ ३ ॥

mano mahāmayottaptaṃ kṣubdhamajñānavṛttiṣu | māmuddhara durantehaṃ mohādahamiti sthitāt || 3 ||

My mind is agitated by the great illusion, disturbed by ignorant tendencies. Save me from this difficult situation, from the delusion of thinking 'I am this.'

मेरा मन महान माया से उत्तप्त है, अज्ञान की वृत्तियों से विचलित है। मुझे इस कठिन स्थिति से उबारो, 'मैं यह हूँ' कहने के भ्रम से।

7.6.4

श्रीमत्यपि पतन्त्याशु शातनाः कातरादयःगुणवत्युग्रपत्रेऽपि तुहिनानीव पङ्कजे ॥ ४ ॥

śrīmatyapi patantyāśu śātanāḥ kātarādayaḥguṇavatyugrapatre'pi tuhinānīva paṅkaje || 4 ||

Even the prosperous, who are wicked and timid, fall quickly like snowflakes on a lotus leaf with strong, virtuous petals.

यदि धनवान हों भी, दुष्ट और डरपोक लोग तेजी से गिरते हैं, जैसे कमल के पत्ते पर बर्फ के फूल।

7.6.5

जायन्ते च म्रियन्ते च केवलं जीर्णजन्तवः । न धर्माय न मोक्षाय मशका इव पङ्कजे ॥ ५ ॥

jāyante ca mriyante ca kevalaṃ jīrṇajantavaḥ | na dharmāya na mokṣāya maśakā iva paṅkaje || 5 ||

They are born and die, merely as worn-out creatures. Not for dharma, not for moksha, like flies on a lotus.

वे जन्म लेते हैं और मरते हैं, केवल पुराने जीव के रूप में। न धर्म के लिए, न मोक्ष के लिए, कमल पर मक्खियों की तरह।

7.6.6

भावैस्तैरेव तैरेव तुच्छालम्भविडम्बनैः । चिरेण परिखिन्नाः स्मो विप्रलम्भाः पुनः पुनः ॥ ६ ॥

bhāvaistaireva taireva tucchālambhaviḍambanaiḥ | cireṇa parikhinnaḥ smo vipralambhāḥ punaḥ punaḥ || 6 ||

With those very emotions, through trivial deceptions and mockeries, we have become exhausted over time, again and again experiencing disappointments.

उन्हीं भावों से, तुच्छ छल-कपट और विडंबनाओं के द्वारा, हम समय के साथ थक गए हैं, बार-बार निराशाओं का अनुभव करते हुए।

7.6.7

नान्तोऽस्त्यस्य न च स्थैर्यावस्थाऽविश्रान्तमानसम् । भ्रमतो भोगभङ्गेषु मरुभूमिष्विवाध्वनः ॥ ७ ॥

nānto'styasya na ca sthairyāvasthā'viśrāntamānasam | bhramato bhogabhaṅgeṣu marubhūmiṣvivādhvanaḥ || 7 ||

There is no end to this, nor is there a stable state; the mind is restless, wandering in the enjoyments and destructions like a traveler in the desert.

इसका कोई अंत नहीं है, न ही कोई स्थिर अवस्था है; मन बेचैन है, भोगों और विनाशों में भटकता हुआ, जैसे कोई यात्री रेगिस्तान में भटकता है।

7.6.8

आपातमधुरारम्भा भङ्गुरा भवहेतवः । अचिरेण विकारिण्यो भीषणा भोगभूमयः ॥ ८ ॥

āpātamadhurārambhā bhaṅgurā bhavahētavaḥ | acirēṇa vikāriṇyo bhīṣaṇā bhogabhūmayaḥ || 8 ||

The beginnings seem sweet, but they are fragile causes of existence; quickly they change and become terrible experiences.

शुरुआत मीठी लगती है, लेकिन ये अस्थिर अस्तित्व के कारण हैं; जल्दी ही ये बदल जाते हैं और भयानक अनुभव बन जाते हैं।

7.6.9

मानावमानपरया दुरहंकारकान्तया । न रमे वामया तात हतविद्याधरश्रिया ॥ ९ ॥

mānāvamānaparayā durahaṅkārakāntayā | na rame vāmayā tāta hatavidyādharashriyā || 9 ||

With excessive pride and disrespect, and with harsh egoistic love, I do not find pleasure, O father, with the lost glory of the Vidyadharas.

अति अहंकार और अपमान से, और कठोर स्वार्थी प्रेम से, मुझे विद्याधरों की खोई हुई श्री में आनंद नहीं मिलता, हे पिता।

7.6.10

दृष्टाश्चैत्ररथोद्यानभुवः कुसुमकोमलाः । कल्पवृक्षलतादत्तसमस्तविभवश्रियः ॥ १० ॥

dṛṣṭāścaitrarathodyānabhuvaḥ kusumakomalāḥ | kalpavṛkṣalatādattasamastavibhavaśriyaḥ || 10 ||

The delicate flowers of the Caitraratha garden have been seen, possessing all the splendor of the wish-fulfilling trees.

चैत्ररथ उद्यान के कोमल फूल देखे गए हैं, जो कल्पवृक्ष की सारी समृद्धि और शोभा से युक्त हैं।

7.6.11

विहृतं मेरुकुञ्जेषु विद्याधरपुरेषु च विमानवरमालासु वातस्कन्धस्थलीषु च ॥ ११ ॥

vihṛtaṃ merukuñjeṣu vidyādharapureṣu cavimānavaramālāsu vātaskandhasthalīṣu ca || 11 ||

Enjoyed in the gardens of Meru, in the cities of the Vidyadharas, in the best aerial chariots, and in the abodes of the wind.

मेरु के उद्यानों में, विद्याधरों के नगरों में, श्रेष्ठ विमानों में और वायु के आश्रयों में आनंद लिया।

7.6.12

विश्रान्तं सुरसेनासु कान्ताभुजलतासु च हारिहारविलासासु लोकपालपुरीषु च ॥ १२ ॥

viśrāntaṃ surasenāsu kāntābhujalatāsu cahārihāravilāsāsu lokapālapurīṣu ca || 12 ||

Resting in the armies of the gods, in the embrace of beloveds, in the playful activities of Hari and Hara, and in the cities of the guardians of the world.

देवताओं की सेनाओं में, प्रियजनों की बाहों में, हरि और हर के विलास में, और लोकपालों के नगरों में विश्राम किया।

7.6.13

न किंचिदुचितं साधु सर्वमाधिविषोष्मणादग्धं भस्मायते तात विज्ञातमधुना मया ॥ १३ ॥

na kiṃciducitaṃ sādhu sarvamādhiviṣoṣmaṇādagdhaṃ bhasmāyate tāta vijñātamadhunā mayā || 13 ||

Nothing is appropriate, O virtuous one, everything is burnt by the fire of sorrow and reduced to ashes, O dear one, this is known to me now.

कुछ भी उचित नहीं है, हे साधु, सब कुछ दुःख की आग से जलकर भस्म हो गया है, हे प्रिय, यह अब मुझे ज्ञात है।

7.6.14

रूपालोकनलोलेन वनिताननगृध्नुनासावभासेन दोषाय दुःखं नीतोस्मि चक्षुषा ॥ १४ ॥

rūpālokanalolena vanitānanagṛdhnunāsāvabhāsena doṣāya duḥkhaṃ nītosmi cakṣuṣā || 14 ||

Enchanted by the playful glances of beautiful women, I am led to sorrow by the fault of my eyes.

सुंदर स्त्रियों की खेल भरी दृष्टि से मोहित होकर, मैं अपनी आँखों के दोष से दुःख में ले जाया गया हूँ।

7.6.15

इदं गुणावहं नेदमिति मुक्त्वा विकल्पनम्रूपमात्रानुसारित्वादवस्तुन्यपि धावति ॥ १५ ॥

idaṃ guṇāvahaṃ nedamiti muktvā vikalpanamrūpamātrānusāritvādavastunyapi dhāvati || 15 ||

Having said, 'This is endowed with qualities, that is not,' the mind, following mere appearances, runs even towards non-existent things.

कहकर, 'यह गुणों से युक्त है, वह नहीं है,' मन, केवल रूप का अनुसरण करते हुए, असत् चीजों की ओर भी दौड़ता है।

7.6.16

तावदायाति विरतिं न वशं यावदापदाम्। नानाबन्धपरं चेतः परानर्थेहितोन्मुखम् ॥ १६ ॥

tāvadāyāti viratiṃ na vaśaṃ yāvadāpadām | nānābandhaparaṃ cetḥ parānarthehitonmukham || 16 ||

The mind does not come under control until it faces calamities; it is inclined towards various attachments and is focused on the welfare of others.

मन तब तक शांत नहीं होता जब तक कि उसे विपत्तियों का सामना नहीं करना पड़ता | यह अनेक आसक्तियों के प्रति लगा हुआ है और दूसरों के हित के लिए उत्साहित है |

7.6.17

घ्राणमेतदनर्थाय धावच्चैवामितः स्फुटम्। न निवारयितुं तात शक्नोमीह हयं यथा ॥ १७ ॥

ghrāṇametadanarthāya dhāvaccaivāmitaḥ sphuṭam | na nivārayituṃ tāta śaknomīha hayaṃ yathā || 17 ||

This nose is clearly running towards harm; O father, I cannot restrain it, just as I cannot control a horse.

यह नाक स्पष्ट रूप से अनर्थ की ओर दौड़ रही है | हे पिता, मैं इसे रोक नहीं सकता, जैसे कि मैं घोड़े को नियंत्रित नहीं कर सकता |

7.6.18

गन्धोदकप्रणालेन मुखश्वासानुपातिना । वैरिणेवातिदोषेण घ्राणेनास्मि नियोजितः ॥ १८ ॥

gandhodakapraṇālena mukhaśvāsānupātinā | vairiṇevātidōṣeṇa ghrāṇenāsmi niyojitaḥ || 18 ||

I am engaged by the sense of smell, which is like an enemy with excessive faults, through the channel of fragrant water and the breath from the mouth.

मैं घ्राणेंद्रिय द्वारा नियोजित हूँ, जो सुगंधित जल और मुख से निकलने वाली साँस के मार्ग से एक शत्रु के समान अत्यधिक दोषों वाला है |

7.6.19

चिरं रसनया चाहमनया नयहीनया । गजगोमायुगुप्तेषु दुःखाद्रिष्वलमाहतः ॥ १९ ॥

ciraṃ rasanayā cāhamanayā nayahīnayā | gajagomāyuguptēṣu duḥkhādrīṣvalamāhataḥ || 19 ||

I am long afflicted by the tongue, which is without any guidance, among the elephants, cows, and buffaloes that are protected.

मैं लंबे समय से बिना किसी निर्देश के जीभ से पीड़ित हूँ, जो सुरक्षित हाथियों, गायों और भैंसों में है |

7.6.20

निरोद्धुं न च शक्नोमि स्पर्शलम्पटतां त्वचः । ग्रीष्मकालसमिद्धस्य तापमंशुमतो यथा ॥ २० ॥

nirodhuṃ na ca śaknomi sparśalampṭatāṃ tvacaḥ | grīṣmakālasamiddhasya tāpamaṃśumato yathā || 20 ||

I cannot restrain the greedy nature of the skin for touch, just as I cannot control the heat of the sun in the summer.

मैं त्वचा की स्पर्श के लिए लालसा को रोक नहीं सकता, जैसे कि मैं ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की गर्मी को नियंत्रित नहीं कर सकता |

7.6.21

शुभशव्दरसार्थिन्यो मुनेः श्रवणशक्तयः । मां योजयन्ति विषमे तृणेच्छा हरिणं यथा ॥ २१ ॥

śubhaśavdarasārthinyo muneḥ śravaṇaśaktayaḥ| māṃ yojayanti viṣame tṛṇecchā hariṇaṃ yathā || 21 ||

The auspicious sounds, which are the essence of the sage's hearing abilities, connect me to the uneven ground, just as a deer is drawn to the grass.

शुभ शब्द, जो मुनि की श्रवण शक्ति का सार हैं, मुझे असमतल भूमि से जोड़ते हैं, जैसे हरिण घास की इच्छा से आकर्षित होता है।

7.6.22

प्रणताः प्रियकारिण्यः प्रह्वभृत्यसमीरिताः । वाद्यगेयरवोन्मिश्राः शुभशब्दश्रियः श्रुताः ॥ २२ ॥

praṇatāḥ priyakāriṇyaḥ prahvabhṛtyasamīritāḥ| vādyageyaravonmiśrāḥ śubhaśabdaśriyaḥ śrutāḥ || 22 ||

The humble servants, who are dear and bring joy, are heard singing and playing instruments, blending their voices with auspicious sounds.

विनम्र सेवक, जो प्रिय हैं और आनंद लाते हैं, वाद्य और गायन करते हुए सुने जाते हैं, जिनकी आवाजें शुभ शब्दों से मिली हुई हैं।

7.6.23

श्रियः स्त्रियो दिशश्चैव तटाश्चाम्भोधिभूभृताम् । दृष्टा विभवहारिण्यः प्रक्वणन्मणिभूषणाः ॥ २३ ॥

śriyaḥ striyo diśaścaiva taṭāścāmbhodhibhūbhṛtām| dṛṣṭā vibhavahāriṇyaḥ prakvaṇanmaṇibhūṣaṇāḥ || 23 ||

The glorious women, directions, and shores of the ocean-bearing earth are seen adorned with resounding jewels, carrying wealth.

गौरवशाली स्त्रियाँ, दिशाएँ और समुद्र-धारी पृथ्वी के तट गहनों से सजे हुए दिखाई देते हैं, जो धन को लेकर चलते हैं।

7.6.24

चिरमास्वादिताः स्वादु चमत्कारमनोरमाः। प्रह्वकान्ताजनानीताः षड्रसा गुणशालिनः ॥ २४ ॥

ciramāsvāditāḥ svādu camatkāramanoramāḥ| prahvakāntājanānītāḥ ṣaḍrasā guṇaśālinaḥ || 24 ||

For a long time, they have been tasted, sweet, wonderful, and delightful to the mind, brought by humble beloved people, possessing six tastes and virtues.

लंबे समय से चखे जाते हैं, स्वादिष्ट, चमत्कारिक, और मन को आनंद देने वाले, विनम्र प्रियजनों द्वारा लाए गए, छह रसों और गुणों से युक्त।

7.6.25

कौशेयकामिनीहारकुसुमास्तरणानिलाः। निर्विघ्नमभितः स्पृष्टा भृशमाभोगभूमिषु ॥ २५ ॥

kauśeyakāminīhārakusumāstaraṇānilāḥ| nirvighnamabhitaḥ spṛṣṭā bhṛśamābhogabhūmiṣu || 25 ||

The silken garments, garlands of beloved women, flowers, and bedspreads are touched all around without obstruction, intensely on the lands of enjoyment.

रेशमी वस्त्र, प्रिय स्त्रियों के हार, फूल, और बिछौने बाधा के बिना चारों ओर स्पर्श किए जाते हैं, आनंद की भूमि पर तीव्रता से।

7.6.26

वधूमुखौषधीपुष्पसमालम्भनभूमयः। अनुभूता मुने गन्धा मन्दानिलसमीरिताः ॥ २६ ॥

vadhūmukhauṣadhīpuṣpasamālambhanabhūmayaḥ | anubhūtā mune gandhā mandānilasamīritāḥ || 26 ||

O sage, the fragrances of the bride's face, medicinal herbs, flowers, and the earth have been experienced, carried by the gentle breeze.

हे मुनि, वधू के मुख, औषधियों, पुष्पों और भूमि की सुगंधें मंद हवा के साथ अनुभव की गई हैं।

7.6.27

श्रुतं स्पृष्टं तथा दृष्टं भुक्तं घ्रातं पुनः पुनः। संशुष्कविरसं भूयः किं भजामि वदाशु मे ॥ २७ ॥

śrutaṃ spṛṣṭaṃ tathā dṛṣṭaṃ bhuktam ghrātaṃ punaḥ punaḥ | saṃśuṣkavirasaṃ bhūyaḥ kiṃ bhajāmi vadāśu me || 27 ||

I have heard, touched, seen, eaten, and smelled again and again. Now, tell me quickly, what should I enjoy next, as everything has become dry and tasteless?

मैंने सुना, छुआ, देखा, खाया और सूंघा है, बार-बार। अब बताओ, मुझे अब क्या भोगना चाहिए, क्योंकि सब कुछ सूखा और बेस्वाद हो गया है?

7.6.28

भुक्त्वा वर्षसहस्राणि दुर्भोगपटलीमिमाम्। आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं न तृप्तिरुपजायते ॥ २८ ॥

bhuktvā varṣasahasrāṇi durbhogapaṭalīmimām | ābrahmasstambaparyantaṃ na tṛptirupajāyate || 28 ||

Even after enjoying thousands of years of difficult pleasures, from Brahma to a blade of grass, there is no satisfaction.

हजारों वर्षों तक कठिन भोगों का आनंद लेने के बाद भी, ब्रह्मा से लेकर एक तिनके तक, संतोष नहीं मिलता।

7.6.29

साम्राज्यं सुचिरं कृत्वा तथा भुक्त्वा वधूगणम्। भंक्त्वा परबलान्युच्चैः किमपूर्वमवाप्यते ॥ २९ ॥

sāmrājyaṃ suciraṃ kṛtvā tathā bhuktvā vadhūgaṇam | bhaṃktvā parabalānyuccaiḥ kimapūrvamavāpyate || 29 ||

After ruling a kingdom for a long time, enjoying a multitude of wives, and defeating enemies, what new achievement is gained?

एक राज्य को लंबे समय तक शासित करने, बहुत सी पत्नियों का आनंद लेने और शत्रुओं को हराने के बाद, क्या नया उपलब्धि प्राप्त होती है?

7.6.30

येषां विनाशनं नासीद्यैर्भुक्तं भुवनत्रयम्। तेऽपि तेऽप्यचिरेणैव समं भस्मपदं गताः ॥ ३० ॥

yeṣāṃ vināśanaṃ nāsīdyairbhuktaṃ bhuvanatrayam | te'pi te'pyacireṇaiva samaṃ bhasmapadaṃ gatāḥ || 30 ||

Those whose destruction did not occur, who enjoyed the three worlds, even they, in a short time, have all turned to ashes.

जिनका विनाश नहीं हुआ, जिन्होंने तीनों लोकों का आनंद लिया, वे भी, थोड़े समय में, सब राख हो गए।

7.6.31

प्राप्तेन येन नो भूयः प्राप्तव्यमवशिष्यते। तत्प्राप्तौ यत्नमातिष्ठेत्कष्टयापि हि चेष्टया ॥ ३१ ॥

prāptena yena no bhūyaḥ prāptavyamavaśiṣyate | tatprāptau yatnamātiṣṭhetkaṣṭayāpi hi ceṣṭayā || 31 ||

When one has achieved that which leaves nothing more to be achieved, one should strive for it even with great effort.

जब कोई वह प्राप्त कर लेता है जिसके बाद कुछ और प्राप्त करना नहीं बचता, तब उसे बड़े प्रयास से भी उसके लिए प्रयत्न करना चाहिए।

7.6.32

येन कान्ताश्चिरं भुक्ता भोगास्तस्येह जन्तुभिः। दृष्टो न कस्यचिन्मूर्ध्नि तरुर्व्योमप्लवश्च वा ॥ ३२ ॥

yena kāntāściraṃ bhuktā bhogāstasyeha jantubhiḥ | dṛṣṭo na kasyacinmūrdhni tarurvyomaplavaśca vā || 32 ||

By which the beloveds are enjoyed for a long time, such pleasures are not seen on the head of any being in this world, nor a tree that reaches the sky.

जिससे प्रियजन लंबे समय तक भोगे जाते हैं, ऐसे भोग इस लोक में किसी के सिर पर नहीं देखे जाते, न ही कोई आकाश को छूने वाला पेड़ देखा जाता है।

7.6.33

चिरमासु दुरन्तासु विषयारण्यराजिषु। इन्द्रियैर्विप्रलब्धोऽस्मि धूर्तबालैरिवार्भकः ॥ ३३ ॥

ciramāsu durantāsu viṣayāraṇyarājiṣu | indriyairvipralabdho'smi dhūrtabālairivārbhakaḥ || 33 ||

For a long time, I have been deceived by the senses in the dense forest of sense objects, like a child deceived by cunning children.

लंबे समय तक, मैं इंद्रियों के घने जंगल में धोखा खाया हूँ, जैसे कि एक बच्चा चालाक बच्चों द्वारा धोखा खाया हो।

7.6.34

अद्य त्वेते परिज्ञाता मया स्वविषयारयः। कष्टा इन्द्रियनामानो वञ्चयित्वा तु मां पुनः ॥ ३४ ॥

adya tve te parijñātā mayā svaviṣayārayaḥ | kaṣṭā indriyanāmāno vañcayitvā tu māṃ punaḥ || 34 ||

Today, I have recognized these enemies of my own senses, which are difficult and have deceived me again.

आज, मैंने इन अपनी इंद्रियों के शत्रुओं को पहचान लिया है, जो कठिन हैं और फिर से मुझे धोखा देते हैं।

7.6.35

संसारजङ्गले शून्ये दग्धं नरमृगं शठाः। आश्वास्याश्वास्य निघ्नन्ति विषयेन्द्रियलुब्धकाः ॥ ३५ ॥

saṃsārajaṅgale śūnye dagdhaṃ naramṛgaṃ śaṭhāḥ | āśvāsyāśvāsya nighnanti viṣayendriyalubdhakāḥ || 35 ||

In the empty forest of the world, the wicked burn the human animal, reassuring and killing it, those who are greedy for sense objects.

संसार के खाली जंगल में, दुष्ट लोग मनुष्य जानवर को जलाते हैं, आश्वस्त करते हुए और मारते हुए, जो इंद्रियों के विषयों के लोभी हैं।

7.6.36

विषमाशीविषैरेभिर्विषयेन्द्रियपन्नगैः । येन दग्धा न दृष्टास्ते द्वित्रा एव जगत्यपि ॥ ३६ ॥

viṣamāśīviṣairebhirviṣayendriyapannagaiḥ | yena dagdhā na dṛṣṭāste dvitrā eva jagatyapi || 36 ||

Those who are not seen to be burnt by the poisonous snakes of the senses, they are indeed the true warriors in this world.

जो लोग इन्द्रियों के विषयी सर्पों द्वारा जले नहीं दिखाई देते, वे ही इस जगत में सच्चे योद्धा हैं।

7.6.37

भोगभीमेभवलितां तृष्णातरलवागुराम् । लोभोग्रकरवालाढ्यां कोपकुन्तकुलाङ्किताम् ॥ ३७ ॥

bhogabhīmebhavalitāṃ tṛṣṇātaralavāgurām | lobhograkaravālāḍhyāṃ kopakuntakulāṅkitām || 37 ||

The one who is adorned with the terrifying desires, the trembling cravings, the fierce greed, and the anger of the family, is indeed a great warrior.

जो भयानक इच्छाओं, काँपती तृष्णाओं, भयंकर लोभ और क्रोध से सज्जित है, वह वास्तव में एक महान योद्धा है।

7.6.38

द्वन्द्वजालरथव्याप्तामहंकारानुपालिताम् । चेष्टातुरंगमाकीर्णां कामकोलाहलाकुलाम् ॥ ३८ ॥

dvandvajālarathavyāptāmahaṃkārānupālitām | ceṣṭāturaṃgamākīrṇāṃ kāmakolāhalākulām || 38 ||

The one who is surrounded by the chariot of dualities, nurtured by ego, filled with the turmoil of desires, and overwhelmed by the noise of lust, is indeed a great warrior.

जो द्वन्द्वों के रथ से घिरा है, अहंकार से पालित है, इच्छाओं के तूफान से भरा है, और वासना के शोर से घिरा है, वह वास्तव में एक महान योद्धा है।

7.6.39

शरीरसीमान्तगतां दुरिन्द्रियपताकिनीम् । ये जेतुमुत्थितास्तात त एवेह हि सद्भटाः ॥ ३९ ॥

śarīrasīmāntagatāṃ durindriyapatākinīm | ye jetumutthitāstāta tā eveha hi sadbhataḥ || 39 ||

Those who rise to conquer the senses that are difficult to control and reach the limits of the body, they are indeed the true warriors in this world.

जो लोग नियंत्रण से बाहर होने वाली इन्द्रियों को जीतने के लिए उठते हैं और शरीर की सीमा तक पहुँचते हैं, वे ही इस जगत में सच्चे योद्धा हैं।

7.6.40

सुसाध्यः करटोद्भेदो मत्तैरावणदन्तिनः । नोत्पथप्रतिपन्नानां स्वेन्द्रियाणां विनिग्रहः ॥ ४० ॥

susādhyaḥ karaṭodbhedo mattairāvaṇadantinaḥ | notpathapratipannānāṃ svendriyāṇāṃ vinigrahaḥ || 40 ||

It is easier to control a mad elephant than to control one's own senses that have strayed from the right path.

एक पागल हाथी को नियंत्रित करना सहज है, लेकिन सही रास्ते से भटके हुए अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित करना कठिन है।

7.6.41

पौरुषस्य महत्त्वस्य सत्त्वस्य महतः श्रियः । इन्द्रियाक्रमणं साधो सीमान्तो महतामपि ॥ ४१ ॥

pauruṣasya mahattvasya sattvasya mahataḥ śriyaḥ | indriyākramaṇaṃ sādho sīmānto mahatāmapi || 41 ||

O virtuous one, the conquest of the senses is the boundary even for the great ones, for the greatness of manliness, the greatness of virtue, and great prosperity.

हे साधो, इन्द्रियों का वश में करना महान लोगों के लिए भी सीमा है, पुरुषार्थ की महानता, सत्त्व की महानता और महान समृद्धि के लिए।

7.6.42

तावदुत्तमतामेति पुमानपि दिवौकसाम् । कृपणैरिन्द्रियैर्यावत्तृणवन्नापकृष्यते ॥ ४२ ॥

tāvaduttamatāmeti pumānapi divaukasām | kṛpaṇairindriyairyāvattṛṇavannāpakṛṣyate || 42 ||

A man attains the highest state, even among the gods, as long as he is not dragged away like a blade of grass by his miserable senses.

मनुष्य तब तक देवताओं में भी उत्तम स्थिति प्राप्त करता है, जब तक कि वह अपने दीन इन्द्रियों द्वारा तृण की तरह खींचा नहीं जाता।

7.6.43

जितेन्द्रिया महासत्त्वा ये त एव नरा भुविशेषानहमिमान्मन्ये मांसयन्त्रगणांश्चलान् ॥ ४३ ॥

jitendriyā mahāsattvā ye ta eva narā bhuviśeṣānahamimānmanye māṃsayantragaṇāṃścalān || 43 ||

Those who have conquered their senses are the great souls, the best among men on earth. I consider them to be the true embodiments of the moving machine of the body.

जो अपने इन्द्रियों को जीत चुके हैं, वे महान आत्माएँ हैं, पृथ्वी पर सबसे बढ़िया पुरुष हैं। मैं उन्हें शरीर के चलने वाले मशीन के सच्चे रूप मानता हूँ।

7.6.44

मनःसेनापतेः सेनामिमामिन्द्रियपञ्चकम् । जेतुं चेदस्ति मे यत्नो जयामि तदलं मुने ॥ ४४ ॥

manaḥsenāpateḥ senāmimāmindriyapañcakam | jetuṃ cedasti me yatno jayāmi tadalaṃ mune || 44 ||

O sage, if there is an effort to conquer this army of the five senses, which is the army of the commander of the mind, then I will conquer it, enough of that.

हे मुनि, यदि मन के सेनापति की इस इन्द्रिय-पंचक सेना को जीतने का प्रयास है, तो मैं इसे जीत लूँगा, बस इतना ही।

7.6.45

इन्द्रियोत्तमरोगाणां भोगाशावर्जनादृते । नौषधानि न तीर्थानि न च मन्त्राश्च शान्तये ॥ ४५ ॥

indriyottamarogāṇāṃ bhogāśāvarjanādṛte | nauṣadhāni na tīrthāni na ca mantrāśca śāntaye || 45 ||

Except for the renunciation of the desire for enjoyment, which is the disease of the best senses, there are no medicines, no holy places, nor any mantras for peace.

इन्द्रियों के उत्तम रोगों के लिए, भोग की आशा को त्यागने के अलावा, शांति के लिए कोई औषधि, कोई तीर्थ, न ही कोई मंत्र नहीं है।

7.6.46

नीतोऽस्मि परमं खेदमभिधावद्भिरिन्द्रियैः एक एव महारण्ये तस्करैः पथिको यथा ॥ ४६ ॥

nīto'smi paramaṃ khedamabhidhāvadbhirindriyaiḥ eka eva mahāraṇye taskaraiḥ pathiko yathā || 46 ||

I am led to great sorrow by the senses that rush forward. Like a traveler alone in a great forest, beset by robbers.

मैं बहुत दुःख में डाला गया हूँ उन इंद्रियों द्वारा जो आगे बढ़ती हैं। जैसे एक यात्री अकेला एक बड़े जंगल में, डाकुओं से घिरा हुआ।

7.6.47

पङ्कवन्त्यप्रसन्नानि महादौर्भाग्यवन्ति च गन्धिशैवलतुच्छानि पल्वलानीन्द्रियाणि च ॥ ४७ ॥

paṅkavantyaprasannāni mahādaurbhāgyavanti ca gandhiśaivalatucchāni palvalānīndriyāṇi ca || 47 ||

The senses are full of mire, unpleasant, full of great misfortune, like foul-smelling weeds, and like muddy pools.

इंद्रियाँ कीचड़ से भरी हुई हैं, अप्रिय, बड़े दुर्भाग्य से भरी हुई हैं, दुर्गंध वाली घास की तरह, और कीचड़ वाले तालाबों की तरह।

7.6.48

दुरतिक्रमणीयानि नीहारगहनानि च जनितातङ्कजालानि जङ्गलानीन्द्रियाणि च ॥ ४८ ॥

duratikramaṇīyāni nīhāragahanāni ca janitātaṅkajālāni jaṅgalānīndriyāṇi ca || 48 ||

The senses are difficult to overcome, dense like fog, and they create a web of anxieties, like a forest.

इंद्रियाँ पार करना मुश्किल है, कुहरे की तरह घनी हैं, और वे चिंताओं का जाल बनाती हैं, जंगल की तरह।

7.6.49

पङ्कजानि सरन्ध्राणि सुदुर्लक्ष्यगुणानि च ग्रन्थिमन्ति जडाङ्गानि मृणालानीन्द्रियाणि च ॥ ४९ ॥

paṅkajāni sarandhrāṇi sudurlakṣyaguṇāni ca granthimanti jaḍāṅgāni mṛṇālānīndriyāṇi ca || 49 ||

The senses are like lotuses with hidden qualities, knotted, with dull limbs, and like reeds.

इंद्रियाँ छिपे हुए गुणों वाले कमलों की तरह हैं, गाँठों वाली, मंद अंगों वाली, और नरकुल की तरह।

7.6.50

रूक्षाणि रत्नलुब्धानि कल्लोलवलितानि च दुर्ग्रहग्राहघोराणि क्षाराम्बूनीन्द्रियाणि च ॥ ५० ॥

rūkṣāṇi ratnalubdhāni kalolavalitāni ca durgrahagrāhaghorāṇi kṣārāmbūnīndriyāṇi ca || 50 ||

The senses are harsh, greedy for jewels, agitated by waves, difficult to grasp, terrible, and like salty waters.

इंद्रियाँ कठोर हैं, रत्नों के लिए लालची हैं, लहरों से व्याकुल हैं, पकड़ना मुश्किल है, भयानक हैं, और नमकीन पानी की तरह हैं।

7.6.51

बान्धवोद्वेगदायीनि देहान्तरकराणि च । करुणाक्रन्दकारीणि मरणानीन्द्रियाणि च ॥ ५१ ॥

bāndhavodvegadāyīni dehāntarakarāṇi ca | karuṇākrandakārīṇi maraṇānīndriyāṇi ca || 51 ||

The senses cause sorrow to relatives, lead to another body, produce lamentations of pity, and are the causes of death.

इन्द्रियाँ बंधुओं को दुःख देती हैं, दूसरे शरीर का कारण बनती हैं, दया के रोने का कारण बनती हैं, और मृत्यु का कारण बनती हैं।

7.6.52

अविवेकिष्वमित्राणि मित्राणि च विवेकिषु । गहनानन्तशून्यानि काननानीन्द्रियाणि च ॥ ५२ ॥

avivekiṣvamitrāṇi mitrāṇi ca vivekiṣu | gahanānantashūnyāni kānanānīndriyāṇi ca || 52 ||

The senses are enemies to the unwise but friends to the wise. They are deep, endless, empty, and like forests.

इन्द्रियाँ अज्ञानी के लिए शत्रु हैं और ज्ञानी के लिए मित्र हैं। वे गहन, अनन्त, शून्य और वन की तरह हैं।

7.6.53

घनास्फोटान्यसाराणि मलिनानि जडानि च । विद्युत्प्रकाशान्येतानि भीमाभ्राणीन्द्रियाणि च ॥ ५३ ॥

ghanāsphoṭānyasārāṇi malināni jaḍāni ca | vidyutprakāśānyetāni bhīmābhrāṇīndriyāṇi ca || 53 ||

The senses are like dense clouds, impure, inert, and like lightning flashes. They are terrifying like dark clouds.

इन्द्रियाँ घने बादलों की तरह हैं, अशुद्ध, जड़, और बिजली की चमक की तरह हैं। वे भयानक और काले बादलों की तरह हैं।

7.6.54

क्षुद्रप्राणिगृहीतानि वर्जितानि कृतात्मभिः । रजस्तमोभिभूतानि स्वेन्द्रियाण्यवटानि च ॥ ५४ ॥

kṣudraprāṇigṛhītāni varjitāni kṛtātmabhiḥ | rajastamobhibhūtāni sveindriyāṇyavaṭāni ca || 54 ||

The senses are seized by inferior beings, avoided by the self-realized, and overwhelmed by passion and ignorance. They are like holes.

इन्द्रियाँ नीच प्राणियों द्वारा पकड़ी जाती हैं, स्वयं-साक्षात्कार वालों द्वारा त्याग दी जाती हैं, और रजोगुण और तमोगुण से घिरी हुई हैं। वे छेदों की तरह हैं।

7.6.55

पातनैकान्तदक्षाणि दोषाशीविषवन्ति च । रूक्षकण्टकलक्षाणि श्वभ्राग्राणीन्द्रियाणि च ॥ ५५ ॥

pātanaiakāntadakṣāṇi doṣāśīviṣavanti ca | rūkṣakaṇṭakalakṣāṇi śvabhrāgrāṇīndriyāṇi ca || 55 ||

The senses are skilled only in causing downfall, full of faults like poison, rough and thorny, and like the edges of pits.

इन्द्रियाँ केवल पतन करने में सक्षम हैं, विष की तरह दोषपूर्ण हैं, रूखी और काँटेदार हैं, और गड्ढों की किनारों की तरह हैं।

7.6.56

आत्मंभरीण्यनार्याणि साहसैकरतानि च । अन्धकारविहारीणि रक्षांसि स्वेन्द्रियाणि च ॥ ५६ ॥

ātmaṃbharyanāryāṇi sāhasaikaratāni ca | andhakāravihārīṇi rakṣāṃsi svendriyāṇi ca || 56 ||

Those who are self-centered, non-noble, reckless, and dwell in darkness are demons with their own senses.

जो आत्मकेंद्रित, अनार्य, साहसी और अंधकार में रहने वाले हैं, वे अपनी इंद्रियों के साथ राक्षस हैं।

7.6.57

अन्तःशून्यान्यसाराणि वक्राणि ग्रन्थिमन्ति च । दहनैकार्थयोग्यानि दुर्दारूणीन्द्रियाणि च ॥ ५७ ॥

antaḥśūnyānyasārāṇi vakrāṇi granthimanti ca | dahanaikekārthyogyāni durdārūṇīndriyāṇi ca || 57 ||

Those who are empty inside, without essence, crooked, full of knots, fit only for burning, and have uncontrollable senses are demons.

जो अंदर से खोखले, बेसार, टेढ़े, गांठों से भरे, जलाने के लिए ही उपयुक्त, और जिनकी इंद्रियाँ अनियंत्रित हैं, वे राक्षस हैं।

7.6.58

घनमोहप्रबन्धीनि दुष्कूपगहनानि च । महावकरतुच्छानि कुपुराणीन्द्रियाणि च ॥ ५८ ॥

ghanamohaprabandhīni duṣkūpagahanāni ca | mahāvakaratucchāni kupurāṇīndriyāṇi ca || 58 ||

Those who are bound by dense delusion, full of evil wells, great holes, and have worthless and impure senses are demons.

जो घने मोह से बंधे हुए, बुरे कुएं से भरे, बड़े छेदों से युक्त, और जिनकी इंद्रियाँ निकम्मी और अशुद्ध हैं, वे राक्षस हैं।

7.6.59

अनन्तेषु पदार्थेषु कारणानि घटादिषु । संभ्रमाणि सपङ्कानि चक्रकाणीन्द्रियाणि च ॥ ५९ ॥

anantеṣu padārtheṣu kāraṇāni ghaṭādiṣu | saṃbhramāṇi sapaṅkāni cakrakāṇīndriyāṇi ca || 59 ||

Those who are causes of endless things, like pots, are confused, full of impurities, and have senses like spinning wheels are demons.

जो अनंत वस्तुओं के कारण हैं, जैसे घड़े, भ्रमित हैं, अशुद्धियों से भरे हुए हैं, और जिनकी इंद्रियाँ घूमते पहियों की तरह हैं, वे राक्षस हैं।

7.6.60

आपन्निमग्नमिममेवमकिंचनं त्वं मामुद्धरोद्धरणशील दयोदयेन । ये नाम केचन जगत्सु जयन्ति सन्तस्तत्संगमं परमशोकहरं वदन्ति ॥ ६० ॥

āpannimagnamimamevamakiṃcanaṃ tvaṃ māmuddharodayanaśīla dayodayena | ye nāma kecana jagatsu jayanti santastatsaṃgamaṃ paramaśokaharaṃ vadanti || 60 ||

O compassionate one, please lift me up with your merciful nature, as I am helpless and submerged in difficulties. Those who are victorious in this world say that the company of saints is the supreme remover of sorrow.

हे दयालु, मुझे अपनी दयालु प्रवृत्ति से उठाओ, क्योंकि मैं असहाय और कठिनाइयों में डूबा हुआ हूँ। जो लोग इस जगत में विजयी होते हैं, वे कहते हैं कि संतों का संग शोक का सर्वोच्च नाशक है।

Chapter 7

7.7.1

भुशुण्ड उवाच । ततस्तस्य मया ब्रह्मंस्तच्छ्रुत्वा पावनं वचः । इदमुक्तं यथापृष्टं सुस्पष्टपदया गिरा ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | tatastasya mayā brahmaṃstacchrutvā pāvanaṃ vacaḥ | idamuktaṃ yathāpṛṣṭaṃ suspṣṭapadayā girā || 1 ||

Bhushunda said: Having heard his purifying words, I spoke this clearly, as requested, with distinct words.

भुशुण्ड ने कहा: उसके पवित्र शब्दों को सुनकर, मैंने स्पष्ट शब्दों में इसे कहा, जैसे प्रश्न किया गया था।

7.7.2

साधु विद्याधराधीश दिष्ट्या बुद्धोऽसि भूतये । भवान्धकूपकुहराच्चिरेणोत्थानमिच्छसि ॥ २ ॥

sādhu vidyādharādhīśa diṣṭyā buddho'si bhūtaye | bhavāndhakūpakuharāccireṇotthānamicchasi || 2 ||

Well done, O Lord of the Vidyadharas! By good fortune, you are wise for the benefit of beings. You desire to rise from the dark pit of ignorance after a long time.

शुभ कर्म, हे विद्याधरों के स्वामी! भाग्य से, आप प्राणियों के लिए बुद्धिमान हैं। आप अज्ञान के अंधकार कुहरे से बहुत समय बाद उठना चाहते हैं।

7.7.3

पावनीयं तव मती राजते घनरूपिणी । विवेकेनानलेनेव कनकद्रवसंततिः ॥ ३ ॥

pāvanīyaṃ tava matī rājate ghanarūpiṇī | vivekenānaleneva kanakadravasaṃtatiḥ || 3 ||

Your pure mind shines like a dense cloud, and with discrimination, it flows like a stream of molten gold.

आपका पवित्र मन घने बादल की तरह चमकता है, और विवेक के साथ यह पिघले हुए सोने की धारा की तरह बहता है।

7.7.4

उपदेशगिरामर्थमादत्ते हारिहेलया । मुकुरे निर्मले द्रव्यमयत्नेनैव बिम्बति ॥ ४ ॥

upadeśagirāmarthamādatte hārihelayā | mukure nirmale dravyamayatnenaiva bimbati || 4 ||

The meaning of the instruction is taken effortlessly, like a clear mirror reflecting an object.

उपदेश का अर्थ स्वाभाविक रूप से ग्रहण किया जाता है, जैसे स्पष्ट दर्पण किसी वस्तु को प्रतिबिंबित करता है।

7.7.5

यदिदं वच्मि तत्सर्वमोमित्यादातुमर्हसि । अस्माभिश्चिरमन्विष्टं नात्र कार्या विचारणा ॥ ५ ॥

yadidaṃ vacmi tatsarvamomityādātumarhasi | asmābhiściramanviṣṭaṃ nātra kāryā vicāraṇā || 5 ||

Whatever I say, you should accept it all as true. It has been sought by us for a long time; there is no need for further deliberation.

जो मैं कहता हूँ, उसे आप सब सत्य मान लें। यह हमारे द्वारा बहुत समय से खोजा गया है; इस पर और विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

7.7.6

यत्किंचित्स्वदतेऽन्तस्ते बुध्यस्वाबोधमुत्सृजन् । नासि त्वं चिरमप्यन्तः प्रेक्षितोऽपि न लभ्यसे ॥ ६ ॥

yatkiṃcitsvadate'ntaste budhyasvābodhamutsṛjan | nāsi tvaṃ ciramapyantaḥ prekṣito'pi na labhyase || 6 ||

Whatever you perceive within yourself, realize it by abandoning ignorance | Even if you are observed for a long time, you cannot be grasped

जो कुछ भी तुम अपने अंदर देखते हो, उसे अज्ञान को छोड़कर समझो | चाहे तुम्हें लंबे समय तक देखा जाए, तुम्हें पकड़ा नहीं जा सकता

7.7.7

नाहंत्वमस्ति न जगदिति निश्चयिनस्तव । सर्वमस्ति शिवं तच्च न दुःखाय सुखाय ते ॥ ७ ॥

nāhaṃtvamasti na jagaditi niścayinastava | sarvamasti śivaṃ tacca na duḥkhāya sukhāya te || 7 ||

There is no 'I' or 'you', nor is there a world, this is certain for you | Everything is auspicious, and that is neither for sorrow nor for happiness

न मैं हूँ न तुम हो, न ही जगत है, यह तुम्हारे लिए निश्चित है | सब कुछ कल्याणकारी है, और वह न दुःख के लिए है न सुख के लिए

7.7.8

किमज्ञत्वाज्जगज्जातं जगतोऽथ किमज्ञताविचार्यापीति नो विद्म एकत्वादलमेतयोः ॥ ८ ॥

kimajñatvājjagajjātaṃ jagato'tha kimajñatāvicāryāpīti no vidma ekatvādalametayoḥ || 8 ||

From ignorance, the world is born, then what is ignorance? We do not know even after examination, due to the oneness of these two.

अज्ञान से संसार उत्पन्न होता है, फिर अज्ञान क्या है? हम इसे जानते नहीं हैं, भले ही हम इसका विचार करें, इन दोनों की एकता के कारण।

7.7.9

मृगतृष्णाम्बुवद्विश्वमवस्तुत्वात्सदप्यसत् । यश्चेदं भाति तद्ब्रह्म न किंचित्किंचिदेव वा ॥ ९ ॥

mṛgatṛṣṇāmbuvadviśvamavastutvātsadapyasat | yaścedaṃ bhāti tadbrahma na kiṃcitkiṃcideva vā || 9 ||

Like the mirage water, the world is non-existent though it appears to exist | That which shines here is Brahman, nothing else whatsoever

मृगतृष्णा के जल की तरह, जगत अवास्तविक है हालाँकि वह अस्तित्व में दिखाई देता है | जो यहाँ चमकता है वह ब्रह्म है, कुछ और नहीं

7.7.10

मृगतृष्णाम्बुवद्विश्वं नास्ति त्वमथवास्ति च । प्रतिभासोऽपि नास्त्यत्र तदभावादतः शिवम् ॥ १० ॥

mṛgatṛṣṇāmbuvadviśvaṃ nāsti tvamathavāsti ca | pratibhāso'pi nāstyatra tadabhāvādataḥ śivam || 10 ||

Like the mirage water, the world does not exist, nor do you exist | Even the appearance does not exist here, hence it is auspicious

मृगतृष्णा के जल की तरह, जगत अस्तित्व में नहीं है, न ही तुम हो | यहाँ प्रतिभास भी नहीं है, इसलिए यह कल्याणकारी है

7.7.11

विश्वबीजमहंत्वं त्वं विद्धि तस्माद्धि जायते । साद्यब्ध्युर्वीनदीशादिजगज्जरठपादपः ॥ ११ ॥

viśvabījamahaṃtvaṃ tvaṃ viddhi tasmāddhi jāyate | sādryabdhyurvīnadīśādijagajjaraṭhapādapaḥ || 11 ||

Know that the ego is the seed of the universe| From it, the entire world, including oceans, rivers, and mountains, is born

यह जानो कि अहंकार विश्व का बीज है| इससे ही समुद्र, नदियाँ, पर्वत आदि सम्पूर्ण जगत उत्पन्न होता है

7.7.12

अहंत्वबीजादणुतो जायतेऽसौ जगद्द्रुमः । तस्येन्द्रियरसाढ्यानि मूलानि भुवनानि हि ॥ १२ ॥

ahaṃtvabījādaṇuto jāyate'sau jagaddrumaḥ | tasyendriyarasāḍhyāni mūlāni bhuvanāni hi || 12 ||

From the seed of ego, the tree of the world is born| Its roots are the senses, and its branches are the various worlds

अहंकार के बीज से जगत का वृक्ष उत्पन्न होता है| इसकी जड़ें इंद्रियाँ हैं, और इसकी शाखाएँ विभिन्न लोक हैं

7.7.13

तारकाजालकलिका ऋक्षौघः कोरकोत्करः । वासनागुच्छविसराः पूर्णचन्द्रः फलालयः ॥ १३ ॥

tārakājālakalikā ṛkṣaughaḥ korakotkaraḥ | vāsanāgucchavisarāḥ pūrṇacandraḥ phalālayaḥ || 13 ||

The network of stars, the multitude of constellations, the radiant sun, the desires like tendrils, the full moon, and the abode of fruits

तारों का जाल, नक्षत्रों का समूह, चमकता सूर्य, वासनाएँ जैसे लताएँ, पूर्ण चंद्रमा, और फलों का आश्रय

7.7.14

स्वर्गादयो बृहद्वर्गा महाविटपकोटराः । मेरुमन्दरसह्यादिगिरयः पत्रराजयः ॥ १४ ॥

svargādayo bṛhadvargā mahāviṭapakoṭarāḥ | merumandarasahyādigirayaḥ patrarājayaḥ || 14 ||

Heaven and other realms are like vast enclosures, great trees with hollows, and mountains like Meru, Mandara, and Sahya are like the kings of leaves

स्वर्ग और अन्य लोक विशाल घेरे के समान हैं, महान पेड़ों के खोखले और मेरु, मंदर, सह्य जैसे पर्वत पत्तों के राजा के समान हैं

7.7.15

सप्ताब्धयोऽग्रसुतयः पातालं मूलकोटरम् । युगानि घुणवृन्दानि पर्वाणि गुणपङ्क्तयः ॥ १५ ॥

saptābdhayo'grasutayaḥ pātālaṃ mūlakoṭaram | yugāni ghuṇavṛndāni parvāṇi guṇapaṅktayaḥ || 15 ||

The seven oceans are the foremost offspring, Patala is the root hollow, the yugas are clusters of qualities, and the seasons are rows of qualities

सात समुद्र अग्र संतान हैं, पाताल मूल का खोखल है, युग गुणों के झुंड हैं, और ऋतुएँ गुणों की पंक्तियाँ हैं

7.7.16

अज्ञानमुत्पत्तिमही नरा विहगकोटयः । उपलम्भो बृहत्स्तम्भो दवो निर्वाणनिर्वृतिः ॥ १६ ॥

ajñānamutpattimahī narā vihagakoṭayaḥ | upalambho bṛhatsstambho davo nirvāṇanirvṛtiḥ || 16 ||

Ignorance is the great origin of men and birds | Realization is the great pillar, the forest fire is the ultimate bliss

अज्ञान मनुष्यों और पक्षियों की महान उत्पत्ति है | उपलब्धि महान स्तम्भ है, जंगल की आग परम आनंद है

7.7.17

रूपालोकमनस्कारा विविधामोदवृत्तयः । वनं विपुलमाकाशं शुक्तिजालं मुखत्वचः ॥ १७ ॥

rūpālokamanaskārā vividhāmodavṛttayaḥ | vanaṃ vipulamākāśaṃ śuktijālaṃ mukhatvacaḥ || 17 ||

Forms, perceptions, and mental impressions are various enjoyments | The forest is vast sky, the oyster's net is the skin of the face

रूप, अलोक, और मनस्कार विविध आमोद वृत्तियाँ हैं | वन विपुल आकाश है, शुक्ति का जाल मुख की त्वचा है

7.7.18

विचित्रशाखा ऋतव उपशाखा दिशो दश । संविद्रसमहापूरो वातस्पन्दो निवर्तनः ॥ १८ ॥

vicitraśākhā ṛtava upaśākhā diśo daśa | saṃvidrasamahāpūro vātaspando nivartanaḥ || 18 ||

The strange branches are the seasons, the sub-branches are the ten directions | The great fullness of consciousness is the pulsation of the wind, the turning back

विचित्र शाखाएँ ऋतुएँ हैं, उपशाखाएँ दस दिशाएँ हैं | चेतना की महान पूर्णता वायु की स्पंदन है, वापसी है

7.7.19

चन्द्रार्करुचयो लोला मज्जनोन्मज्जनोन्मुखाः । रम्याः कुसुममञ्जर्यस्तिमिरं भ्रमरभ्रमः ॥ १९ ॥

candrārkarucayo lolā majjanonmajjanonmukhāḥ | ramyāḥ kusumamañjaryastimiraṃ bhramarabhramaḥ || 19 ||

The rays of the moon and sun are wavering, immersed and emerging, open-mouthed | The beautiful flower clusters are darkness, the buzzing of bees

चंद्रमा और सूर्य की किरणें लहराती हैं, डूबी और उभरी हुई, मुँह खोले हुए | सुंदर फूलों के गुच्छे अंधकार हैं, भ्रमर की भनभनाहट है

7.7.20

पातालमाशागणमन्तरिक्षमापूर्य तिष्ठत्यसदेव सद्वत् । तस्यानहन्ताग्निहतेऽहमर्थबीजे पुनर्नास्ति सतोऽपि रोहः ॥ २० ॥

pātālamāśāgaṇamantarikṣamāpūrya tiṣṭhatyasadeva sadvat | tasyānahantāgnihate'hamarthabīje punarnāsti sato'pi rohaḥ || 20 ||

Filling the underworld, the realm of hope, and the sky, it stands as if non-existent yet existent | In its seed of 'I am,' destroyed by the fire of 'not I,' there is no growth even of the existent

पाताल, आशा का समूह, और आकाश भरकर, यह असत् के समान सत् के रूप में खड़ा है | इसके 'मैं हूँ' के बीज में, 'मैं नहीं' की अग्नि से नष्ट होने पर, सत् का भी विकास नहीं होता

Chapter 8

7.8.1

भुशुण्ड उवाच । विद्याधर धराधारो गिरिकन्दरमन्दिरः । दिगन्तराम्बराचारचारसंचारचञ्चरः ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | vidyādhara dharādhāro girikandaramandiraḥ | digantarāmbarācāracārasaṃcāracañcaraḥ || 1 ||

Bhushunda said: The bearer of knowledge, the supporter of the earth, the abode of the mountain peaks, the one who moves in the sky and wanders in all directions.

भुशुण्ड ने कहा: विद्याधर, धरती का धारक, पर्वत की चोटियों का निवास, आकाश में विचरण करने वाला, सभी दिशाओं में भटकने वाला।

7.8.2

ईदृशोऽयं जगद्वृक्षो जायतेऽहंत्वबीजतः । बीजे ज्ञानाग्निनिर्दग्धे नैव किंचन जायते ॥ २ ॥

īdṛśo'yaṃ jagadvṛkṣo jāyate'haṃtvabījataḥ | bīje jñānāgninirdagdhe naiva kiṃcana jāyate || 2 ||

Such is this tree of the world, which arises from the seed of ego. When the seed is burned by the fire of knowledge, nothing arises.

ऐसा ही यह विश्व का वृक्ष है, जो अहंकार के बीज से उत्पन्न होता है। जब बीज ज्ञान की अग्नि से जल जाता है, तब कुछ भी उत्पन्न नहीं होता।

7.8.3

प्रेक्ष्यमाणं च तन्नास्ति किलाहंत्वं कदाचनेतावदेव तज्ज्ञानमनेनैव प्रदह्यते ॥ ३ ॥

prekṣyamāṇaṃ ca tannāsti kilāhaṃtvaṃ kadācanaetāvadeva tajjñānamanenaiva pradahyate || 3 ||

That which is seen does not exist, for ego never exists. Only to that extent is knowledge burned by it.

जो देखा जाता है, वह अस्तित्व में नहीं होता, क्योंकि अहंकार कभी नहीं होता। केवल उस हद तक ही ज्ञान उससे जल जाता है।

7.8.4

अहंत्वभावाच्चाहंत्वमस्ति संसारबीजकम् । नाहंत्वभावान्नाहंत्वमस्तीति ज्ञानमुत्तमम् ॥ ४ ॥

ahaṃtvabhāvācca'haṃtvaṃmasti saṃsārabījakam | nāhaṃtvabhāvānnāhaṃtvaṃmastīti jñānamuttamam || 4 ||

From the existence of ego, there is ego, which is the seed of the world. From the non-existence of ego, there is no ego; this is the supreme knowledge.

अहंकार के अस्तित्व से अहंकार होता है, जो संसार का बीज है। अहंकार के अनस्तित्व से अहंकार नहीं होता; यही उत्तम ज्ञान है।

7.8.5

सर्गादावेव सर्गस्य किलास्याभावयोगतः । कुतोऽहंत्वं कुतस्त्वंत्वं कुतो द्वित्वैक्यविभ्रमः ॥ ५ ॥

sargādāveva sargasya kilāsyābhāvayogataḥ | kuto'haṃtvaṃ kutastvaṃtvaṃ kuto dvitvaikyavibhramaḥ || 5 ||

From the very beginning of creation, due to the union with non-existence, where is ego, where is the sense of self, where is the delusion of duality and oneness?

सृष्टि के आरंभ से ही, अनस्तित्व के साथ एकता के कारण, अहंकार कहाँ है, स्वयं का भाव कहाँ है, द्वैत और एकता का भ्रम कहाँ है?

7.8.6

समाकर्ण्य गुरोर्वाक्यं यतन्ते ये स्वयत्नतः । संकल्पत्यागमामूलं पदप्राप्तौ जयन्ति ते ॥ ६ ॥

samākarṇya gurorvākyaṃ yatante ye svayatnataḥ | saṃkalpatyāgamāmūlaṃ padaprāptau jayanti te || 6 ||

Those who, having heard the words of the Guru, strive with their own efforts, attain success in reaching the goal by renouncing their desires.

जो गुरु के वचन सुनकर अपने प्रयास से प्रयत्न करते हैं, वे अपनी इच्छाओं का त्याग करके लक्ष्य प्राप्ति में सफल होते हैं।

7.8.7

रन्धनाज्जयमाप्नोति स्वशास्त्रे सूपकृत्कृते । विवेकी स्वविवेकित्वं यतनादेव नान्यथा ॥ ७ ॥

randhanājjayamāpnoti svaśāstre sūpakṛtkṛte | vivekī svavivekitvaṃ yatanādeva nānyathā || 7 ||

One attains victory through cooking in one's own well-prepared scripture. A wise person attains self-discernment only through effort, not otherwise.

किसी व्यक्ति को अपने अच्छे तरीके से तैयार किए गए शास्त्र में पकाने से विजय प्राप्त होती है। एक विवेकी व्यक्ति प्रयास के द्वारा ही आत्म-विवेक प्राप्त करता है, अन्यथा नहीं।

7.8.8

चिच्चमत्कारमात्रं त्वं जगद्विद्धीह नेतरत् । नाशासु न बहिर्नान्तरेतत्क्वचन विद्यते ॥ ८ ॥

ciccamatkāramātraṃ tvaṃ jagadviddhīha netarat | nāśāsu na bahirnāntaretatkvacana vidyate || 8 ||

You should know the world as mere wonder of consciousness, nothing else. It does not exist in desires, nor outside, nor inside, nor anywhere else.

आपको संसार को चेतना के आश्चर्य के रूप में जानना चाहिए, कुछ और नहीं। यह इच्छाओं में नहीं है, न बाहर, न अंदर, न कहीं और।

7.8.9

संकल्पोन्मेषमात्रेण जगच्चित्रं विलोक्यते । तदनुन्मेषविलयि चित्रकृच्चित्तचित्रवत् ॥ ९ ॥

saṃkalponmeṣamātreṇa jagaccitraṃ vilokyate | tadanunmeṣavilayi citrakṛccittacitravat || 9 ||

With just the opening of the eyes of intention, the varied world is seen. When that opening is dissolved, it is like the painter's mind, full of varied pictures.

केवल इरादे की आँखों के खुलने से विविध संसार दिखाई देता है। जब वह खुलना विलीन हो जाता है, तो यह चित्रकार के मन की तरह होता है, जो विविध चित्रों से भरा होता है।

7.8.10

मण्डपोऽस्ति महास्तम्भो मुक्तामणिविनिर्मितः । बहुयोजनलक्षाणि कान्तकाञ्चनचित्रितः ॥ १० ॥

maṇḍapo'sti mahāstambho muktāmaṇivinirmitaḥ | bahuyojanalakṣāṇi kāntakāñcanacitritaḥ || 10 ||

There is a grand pavilion with a great pillar, made of pearls and gems, adorned with many beautiful golden ornaments.

वहाँ एक विशाल पैविलियन है जिसमें एक महान स्तंभ है, जो मोती और रत्नों से बना है, और कई सुंदर सोने के आभूषणों से सजा है।

7.8.11

मणिस्तम्भसहस्रेण वृतोऽग्रे प्रोतमेरुणा । इन्द्रायुधसहस्राढ्यकल्पसंध्याभ्रसुन्दरः ॥ ११ ॥

maṇistambhasahasreṇa vṛto'gre protameruṇā | indrāyudhasahasrāḍhyakalpasandhyābhrasundaraḥ || 11 ||

Surrounded by thousands of jewel-studded pillars at the front, covered with the best silk, beautiful like the clouds at dusk adorned with thousands of Indra's weapons.

हजारों मणि स्तम्भों से घिरा हुआ, आगे रेशम से ढका हुआ, इन्द्र के हजारों अस्त्रों से सुशोभित, संध्या के बादलों की तरह सुंदर।

7.8.12

स्त्रीबालपुरुषादीनां वास्तव्यानामितस्ततः । क्रीडार्थं स्थापिता यत्र नानारचनयान्तरे ॥ १२ ॥

strībālapuruṣādīnāṃ vāstavyānāmitastataḥ | krīḍārthaṃ sthāpitā yatra nānāracanayāntare || 12 ||

For the residence of women, children, and men, various arrangements are made here and there for playful purposes.

स्त्रियों, बच्चों और पुरुषों के निवास के लिए, यहाँ-वहाँ खेल-कूद के लिए विभिन्न व्यवस्थाएँ की गई हैं।

7.8.13

भूतबीजपरापूर्णास्तमोरिपुसघुंघुमाः । तमःप्रकाशचित्राख्या लोकान्तरसमुद्गकाः ॥ १३ ॥

bhūtabījaparāpūrṇāstamoripusaghughumāḥ | tamaḥprakāśacitrākhyā lokāntarasamudgakāḥ || 13 ||

Filled with the essence of all beings, they are the destroyers of darkness, known as the pictures of light and darkness, and are the granaries of other worlds.

सभी प्राणियों की आत्मा से भरपूर, वे अंधकार के नाशक हैं, प्रकाश और अंधकार की तस्वीरें कहलाती हैं, और दूसरे लोकों के भंडार हैं।

7.8.14

आमोदसुभगा लोलजलदावलिपल्लवाः । लीलापद्माकरे स्त्रीणां विलूनाकल्पपादपाः ॥ १४ ॥

āmodasubhagā lolajaladāvalipallavāḥ | līlāpadmākare strīṇāṃ vilūnākalpapādapāḥ || 14 ||

Beautiful with fragrance, swaying like rows of clouds, they are like lotus flowers in the playful pond of women, like wish-fulfilling trees with drooping branches.

सुगंध से सुंदर, बादलों की पंक्तियों की तरह लहराते हुए, वे स्त्रियों के खेल के तालाब में कमल के फूलों की तरह हैं, झुके हुए डालों वाले कल्पवृक्षों की तरह।

7.8.15

बालनिःश्वासचलिताः कन्दुकानि कुलाचलाः । संध्याम्बुदाः कर्णपूराश्चामराः शरदम्बुदाः ॥ १५ ॥

bālaniḥśvāsacalitāḥ kandukāni kulācalāḥ | sandhyāmbudāḥ karṇapūrāścāmarāḥ śaradambudāḥ || 15 ||

Moved by the breath of children, the balls are like mountains, the evening clouds are like earrings, and the autumn clouds are like fly whisks.

बच्चों की साँसों से हिलते हुए, गेंद पहाड़ों की तरह हैं, संध्या के बादल कर्णफूलों की तरह हैं, और शरद के बादल चौरी की तरह हैं।

7.8.16

कल्पान्तकालजलदास्तालवृन्तपदं गताः । भूतलं द्यूतफलकं वितानं तारकाम्बरम् ॥ १६ ॥

kalpāntakālajaladāstālavṛntapadaṃ gatāḥ | bhūtalaṃ dyūtaphalakaṃ vitānaṃ tārakāmbaram || 16 ||

At the end of the cosmic cycle, the clouds of destruction descend upon the earth, transforming it into a gaming board, with the sky as the canopy of stars.

कल्पान्त के समय विनाशकारी बादल धरती पर उतरते हैं, जिससे धरती एक खेल का बोर्ड बन जाती है, और आकाश तारों का छत बन जाता है।

7.8.17

भूतशारपरावर्ते द्यूतेऽक्षाः शशिभानवः । व्योमाजिरे जगद्भासपणे गृहनिवासिनाम् ॥ १७ ॥

bhūtaśāraparāvarte dyūte'kṣāḥ śaśibhānavaḥ | vyomājire jagadbhāsapāṇe gṛhanivāsinām || 17 ||

In the cycle of existence, the dice of the moon's phases roll, and the stars in the sky become the stakes in the game of the universe's illumination for the inhabitants of the houses.

अस्तित्व के चक्र में, चंद्रमा के चरणों के पासे लुढ़कते हैं, और आकाश के तारे ब्रह्मांड की प्रकाश की बाजी बन जाते हैं, घरों के निवासियों के लिए।

7.8.18

इति संकल्प एवान्तश्चिरभावनया यथा। अग्रस्थदृश्योपमया सत्यतामिव गच्छति॥ १८॥

iti saṃkalpa evāntaścirabhāvanayā yathā | agrasthadṛśyopamayā satyatāmiva gacchati || 18 ||

Thus, the resolution itself comes to an end through prolonged contemplation, just as an object placed in front appears to be real.

इस प्रकार, संकल्प स्वयं लंबी ध्यान से अंत तक पहुंचता है, जैसे सामने रखा हुआ वस्तु वास्तविक प्रतीत होता है।

7.8.19

तथैवायं जगद्रूपः संकल्पैः सुसमुत्थितः। चिच्चमत्कारमात्रात्मा चित्रकृच्चित्तचित्रवत्॥ १९॥

tathaivāyaṃ jagadrūpaḥ saṃkalpaiḥ susamutthitaḥ | ciccmatkāramātrātmā citrakṛccittacitravat || 19 ||

Similarly, this world form is well-arisen from resolutions, being the essence of pure consciousness and wonder, like a painter with a mind full of pictures.

इसी प्रकार, यह जगत् रूप संकल्पों से उत्पन्न है, शुद्ध चेतना और आश्चर्य का सार है, जैसे एक चित्रकार जिसके मन में चित्र भरे हों।

7.8.20

असत्यमेव स्फुरति सर्वमस्ति च नास्ति च। असदुत्थित एवायं कुतोपीव समुत्थितः॥ २०॥

asatyameva sphurati sarvamasti ca nāsti ca | asadutthita evāyaṃ kutopīva samutthitaḥ || 20 ||

Only the unreal appears; everything exists and does not exist. Arisen from the unreal, from where has this even arisen?

केवल असत्य ही प्रकट होता है; सब कुछ है और नहीं भी है। असत् से उत्पन्न, यह कहां से उत्पन्न हुआ है?

7.8.21

हेम्नीव कटकादित्वं संसारोदरकोटरः। चिच्चमत्कार एवायमविकल्पनसंक्षयः॥ २१॥

hemnīva kaṭakāditvaṃ saṃsārodarakoṭaraḥ | ciccamatkāra evāyamavikalpanasaṃkṣayaḥ || 21 ||

Just as the golden ornament is the essence of gold, this world is the essence of consciousness, which is the wonder of the self, free from all doubts.

जैसे सोने का आभूषण सोने का सार होता है, वैसे ही यह संसार चेतना का सार है, जो स्वयं का चमत्कार है, सभी संदेहों से मुक्त है।

7.8.22

अत्यन्तमेव स्वायत्तो यथेच्छसि तथा कुरु। यश्चान्नपानदानादावनादरमुपेयिवान्। तस्येदं पश्चिमं जन्म न स कर्म समुज्झति॥ २२॥

atyantameva svāyatto yathecchasi tathā kuru | yaścānnapānadānādāvanādaramupeyivān | tasyedaṃ paścimaṃ janma na sa karma samujjhati || 22 ||

You are completely independent; do as you wish. One who shows disrespect in giving food and water, for them, this life is the last, and they do not abandon their karma.

आप पूर्णतः स्वतंत्र हैं; जैसे चाहो वैसा करो। जो भोजन और पानी देने में अनादर करता है, उनके लिए यह जीवन अंतिम है, और वे अपने कर्म को नहीं छोड़ते।

7.8.23

प्राप्तो विवेकपदवीमसि पावनात्मन्पुण्यां पवित्रितजगत्त्रितया द्वितीयाम्। नाधः पतिष्यसि पुनर्मनसाऽमुनेति जानामि मौनममलं पदमुत्सृज त्वम्॥ २३॥

prāpto vivekapadavīmasi pāvanātmanpuṇyāṃ pavitritajagattritayā dvitīyām | nādhaḥ patiṣyasi punarmansasāmuneti jānāmi maunamamalaṃ padamutsṛja tvam || 23 ||

You have attained the second stage of pure wisdom, which purifies the three worlds. You will not fall again; I know this. Abandon the impure state of silence.

आपने तीनों लोकों को पवित्र करने वाली दूसरी स्तर की पवित्र ज्ञान प्राप्त की है। आप फिर नहीं गिरेंगे; मैं यह जानता हूँ। मौन की अपवित्र स्थिति को छोड़ दो।

Chapter 9

7.9.1

भुशुण्ड उवाच । अबुद्ध्यमानश्चेत्यादिचिद्रूपमपि चानघ । शान्तचिद्धन एवास्व निर्मलाप्स्वन्तरंशुवत् ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | abuddhyamānaścetyādicidrūpamapi cānagha | śāntaciddhana evāsva nirmalāpsvantaraṃśuvat || 1 ||

Bhushunda said: O sinless one, even the form of consciousness, which is not perceived, is pure and tranquil within itself, like the rays of the sun.

भुशुण्ड ने कहा: हे निष्पाप, जो चेतना का रूप नहीं समझा जाता, वह भी शान्त और निर्मल है, जैसे सूर्य की किरणें.

7.9.2

अचेतनं चेतनान्तश्चेतनादेव विद्यते । स्वेऽसादृश्येऽपि सदृशं पयोराशौ यथानलः ॥ २ ॥

acetanaṃ cetanāntaścetanādeva vidyate | sve'sādṛśye'pi sadṛśaṃ payorāśau yathānalaḥ || 2 ||

The non-conscious arises from consciousness itself, even though it is dissimilar, just as fire in a water-filled pot.

अचेतन चेतना से ही उत्पन्न होता है, भले ही यह असमान हो, जैसे पानी से भरे घड़े में आग।

7.9.3

सचेतनाचेतनयोर्हेतुश्चित्त्वात्तथैव चित् । विनाशोत्पादयोर्वह्निज्वालायाः पवनो यथा ॥ ३ ॥

sacetanācetanayorhetuścittvāttathaiva cit | vināśotpādayorvahñijvālāyāḥ pavano yathā || 3 ||

The cause of both the conscious and the non-conscious is consciousness itself, just as the wind is the cause of the creation and destruction of a flame.

चेतन और अचेतन दोनों का कारण चेतना ही है, जैसे हवा लौ के उत्पन्न और विनाश का कारण होती है।

7.9.4

नाहमस्तीति चिद्रूपं चिति विश्रान्तिरस्तु ते । ततो यथा यादृशेन भूयते तादृशो भव ॥ ४ ॥

nāhamastīti cidrūpaṃ citi viśrāntirastu te | tato yathā yādṛśena bhūyate tādṛśo bhava || 4 ||

May you rest in the form of consciousness, knowing 'I am not.' From that, become whatever you are meant to be.

चेतना के रूप में विश्राम करो, जानते हुए 'मैं नहीं हूँ।' उससे, जो भी तुम बनने के लिए नियत हो, वही बनो।

7.9.5

चिद्रूपः सर्वभावानामन्तर्बहिरसि स्थितः । प्रसन्नाम्बुभरस्यान्तर्बहिश्चैव यथा पयः ॥ ५ ॥

cidrūpaḥ sarvabhāvānāmantarbahirasi sthitaḥ | prasannāmbubharasyāntarbahiścaiva yathā payaḥ || 5 ||

The form of consciousness is present within and without all beings, just as water is present within and without a clear water-filled vessel.

चेतना का रूप सभी भावों के अंदर और बाहर स्थित है, जैसे पानी एक साफ पानी से भरे पात्र के अंदर और बाहर स्थित है।

7.9.6

नाहमस्तीति चिद्रूपं चितौ चेल्लग्नमङ्ग ते । न चान्यच्चेतितं ब्रह्म रूपं केनोपमीयते ॥ ६ ॥

nāhamastīti cidrūpaṃ citau cellagnamanga te | na cānyaccecitaṃ brahma rūpaṃ kenopamīyate || 6 ||

I am not, this is the form of consciousness | In consciousness, this is perceived as a limb of yours | There is no other consciousness, Brahma's form, how can it be compared?

मैं नहीं हूँ, यह चेतना का रूप है | चेतना में, यह आपका अंग प्रतीत होता है | कोई अन्य चेतना नहीं है, ब्रह्म का रूप, इसे किससे तुलना की जा सकती है?

7.9.7

ससुरासुरपातालभूविष्टपमिवोषितम् । नानाभावाजवीभावक्रियाकालमिवाकुलम् ॥ ७ ॥

sasurāsurapātālabhūviṣṭapamivouṣitam | nānābhāvājavībhāvakriyākālamivākulam || 7 ||

As if inhabited by gods, demons, and the underworld, the earth and heaven | As if disturbed by various states, behaviors, actions, and times

जैसे देवताओं, असुरों और पाताल से आबाद है, पृथ्वी और स्वर्ग | जैसे विभिन्न अवस्थाओं, व्यवहारों, क्रियाओं और समयों से व्याकुल है

7.9.8

यथा रङ्गमयं कुड्ये जगन्मौनमिव स्थितम् । तथा चिच्चित्रकचितं खे कुड्ये चात्मसंस्थितम् ॥ ८ ॥

yathā raṅgamayaṃ kuḍye jagannmaunamiva sthitam | tathā ciccitra kacitaṃ khe kuḍye cātmasaṃsthitam || 8 ||

Just as a painting is on a wall, the world appears as if silent | Similarly, the diverse consciousness is in the sky, on the wall, and situated in the self

जैसे एक पेंटिंग दीवार पर होती है, वैसे ही दुनिया मौन सी लगती है | इसी तरह, विविध चेतना आकाश में, दीवार पर, और आत्मा में स्थित है

7.9.9

तेनैव भूयते भूरि यच्चित्तं कचितं स्वतः । अचेतनं चेतनं वा यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ९ ॥

tenaiva bhūyate bhūri yaccittaṃ kacitaṃ svataḥ | acetanaṃ cetanaṃ vā yathecchasi tathā kuru || 9 ||

By that alone, the world becomes abundant, which is painted by the mind itself | Whether it is inanimate or animate, do as you wish

उसी से, दुनिया पर्याप्त हो जाती है, जो मन द्वारा ही पेंट की जाती है | चाहे वह जड़ हो या चेतन, जैसा तुम चाहो वैसा करो

7.9.10

चिच्चमत्कृतयो व्योम्नि स्फुरन्त्येता जगत्तया । अर्कांशुवदरोधिन्यः स्वच्छा विदितवेदिनाम् ॥ १० ॥

ciccmatkṛtayo vyomni sphurantyetā jagattayā | arkāṃśuvadarodhinyaḥ svacchā viditavedinām || 10 ||

The wonders of consciousness shine in the sky, manifesting the world | Like the rays of the sun, they are pure and known to the knowledgeable

चेतना के चमत्कार आकाश में चमकते हैं, दुनिया को प्रकट करते हुए | सूर्य की किरणों की तरह, वे शुद्ध हैं और ज्ञानी लोगों को ज्ञात हैं

7.9.11

तिमिराक्रान्तदृष्टीनां यथा केशोण्ड्रकादि खे । स्फुरत्येवं जगद्रूपमनात्मन्येव तिष्ठताम् ॥ ११ ॥

timirākrāntadṛṣṭīnāṃ yathā keśoṇḍrakādi khe | sphuratyevaṃ jagadrūpamanātmanyeva tiṣṭhatām || 11 ||

Just as those whose vision is obscured by darkness see a hair or a piece of cotton in the sky, similarly, the world appears to exist in the non-self.

जैसे जिनकी दृष्टि अंधेरे से ढकी होती है, वे आकाश में बाल या रूई की तरह देखते हैं, वैसे ही जगत का रूप अनात्म में स्थित प्रतीत होता है।

7.9.12

एवं जगत्त्वमहमित्यवबोधरूपमाभासमात्रमुदितं न च नोदितं च। अर्कांशुजालरचनानगराभमत्र कुड्यादि सत्यमिदमस्ति न खे लतेव ॥ १२ ॥

evaṃ jagattvamahamityavabodharūpamābhāsamātramuditaṃ na ca noditaṃ ca |
arkāṃśujālaracanānagarābhamatra kuḍyādi satyamidamasti na khe lateva || 12 ||

Thus, the world, which appears as the notion 'I am this,' is merely an illusion, neither real nor unreal. It is like the reflection of a city in a mirror, which seems real but is not actually in the sky.

इस प्रकार, जगत, जो 'मैं यह हूँ' के रूप में प्रतीत होता है, मात्र एक भ्रम है, न तो वास्तविक है और न ही अवास्तविक। यह दर्पण में नगर की प्रतिबिंब की तरह है, जो वास्तविक प्रतीत होता है लेकिन आकाश में वास्तव में नहीं होता।

Chapter 10

7.10.1

भुशुण्ड उवाच । विद्धि त्वं चेतनादेव चेतनेतरचेतनम् । जलेऽग्निरिव चिज्जाड्ये नातो भिन्ने मनागपि ॥ ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | viddhi tvaṃ cetanādeva cetanetaracetanam | jale'gniriva cijjāḍye nāto bhinne manāgapi || 1 ||

Bhushunda said: Know that from consciousness alone arises the distinction between the conscious and the non-conscious, just as fire in water is not different from water itself.

भुशुण्ड ने कहा: जान लो कि चेतना से ही चेतन और अचेतन का भेद होता है, जैसे जल में अग्नि जल से ही अलग नहीं होती।

7.10.2

तद्वेदनावेदनयोरभेदात्स्वस्थमास्यताम् । निर्यन्त्रमेव चित्रस्थज्ञप्तिवद्व्योममध्यवत् ॥ ॥ २ ॥

tadvedanāvedanayorabhedātsvasthamāsyatām | niryantrameva citrasthajñaptivadvyomamadhyavat || 2 ||

Due to the non-difference between the knower and the known, let there be peace. Just as the sky is free from any support, so too is the consciousness in the heart free from any limitations.

ज्ञाता और ज्ञेय के भेद के अभाव से शांति हो। जैसे आकाश किसी आधार से मुक्त है, वैसे ही हृदय में चेतना किसी सीमा से मुक्त है।

7.10.3

ब्रह्मण्यशेषशक्तित्वादचित्त्वं विद्यते तथा । अक्षुब्धे विमले तोये भाविफेनलवो यथा ॥ ॥ ३ ॥

brahmaṇyaśeṣaśaktitvādacittvaṃ vidyate tathā | akṣubdhe vimale toye bhāvifenalavo yathā || 3 ||

In Brahman, which is the abode of all powers, non-consciousness exists in the same way. Just as future foam bubbles exist in undisturbed, pure water.

ब्रह्म में, जो सभी शक्तियों का आश्रय है, अचेतना उसी तरह मौजूद है। जैसे भविष्य के फेन के बुलबुले अक्षुब्ध, निर्मल जल में मौजूद होते हैं।

7.10.4

न कारणं विनोदेति जलात्फेनलवो यथा । न कारणं विनोदेति सर्गादि ब्रह्मणस्तथा ॥ ॥ ४ ॥

na kāraṇaṃ vinodeti jalātphēnalavo yathā | na kāraṇaṃ vinodeti sargādi brahmaṇastathā || 4 ||

Just as foam bubbles do not arise without the cause of water, similarly, the creation and other activities of Brahman do not arise without a cause.

जैसे फेन के बुलबुले जल के कारण के बिना नहीं उत्पन्न होते, वैसे ही ब्रह्म की सृष्टि और अन्य गतिविधियाँ कारण के बिना नहीं उत्पन्न होतीं।

7.10.5

न च कारणमस्त्यत्र सर्गवृत्तावकारणे । नातः संजायते किंचिज्जगदादिर्न नश्यति ॥ ॥ ५ ॥

na ca kāraṇamastyatra sargavṛttāvakāraṇe | nātaḥ saṃjāyate kiñcijjagadādirna naśyati || 5 ||

There is no cause in the causeless creation and activities. Nothing arises from it, and the universe does not perish.

अकारण सृष्टि और गतिविधियों में कोई कारण नहीं है। इससे कुछ भी उत्पन्न नहीं होता, और ब्रह्मांड नष्ट नहीं होता।

7.10.6

अत्यन्तं कारणाभावान्न किंचिज्जायते जगत्। मरावम्बिव नास्त्येव दृष्टमप्यग्रतो जगत्॥ ६॥

atyantaṃ kāraṇābhāvānna kiṃcijjāyate jagat | marāvambviva nāstyeva dṛṣṭamapyagrato jagat || 6 ||

Due to the absolute absence of cause, nothing in the world is born. The world is not real, like a mirage, even though it is perceived.

कारण के पूर्ण अभाव से जगत में कुछ भी उत्पन्न नहीं होता। जगत मरीचिका के समान वास्तविक नहीं है, भले ही यह दृश्यमान हो।

7.10.7

ब्रह्मानन्तमजं शान्तमतोऽस्तीदं न सर्गधीः। कारणाभावतस्तेन ब्रह्मैवेदमखण्डितम्॥ ७॥

brahmānantamajaṃ śāntamato'stīdaṃ na sargadhīḥ | kāraṇābhāvatastena brahmaivedamakhāṇḍitam || 7 ||

Brahman is infinite, unborn, and peaceful. Therefore, this world is not a creation. Due to the absence of cause, this is indeed the undivided Brahman.

ब्रह्म अनन्त, अजन्मा, और शान्त है। इसलिए, यह जगत सृष्टि नहीं है। कारण के अभाव के कारण, यह अखण्डित ब्रह्म ही है।

7.10.8

अतः शिलोदराभोऽसि व्योमकोशोपमोपि च। ब्रह्मैकघनरूपत्वादजोऽनवयवोऽसि च॥ ८॥

ataḥ śilodarābho'si vyomakośopamopi ca | brahmaikaghanarūpatvādajo'navayavo'si ca || 8 ||

Therefore, you are like a stone within the belly, and like the sky within a pot. Due to the nature of Brahman being one and solid, you are unborn and without parts.

इसलिए, तुम पेट के भीतर पत्थर के समान हो और घड़े के भीतर आकाश के समान हो। ब्रह्म के एक और ठोस होने के कारण, तुम अजन्मा और अंशों से रहित हो।

7.10.9

ज्ञोऽसि किंचिन्न किंचिद्वा निःशङ्कमलमास्यताम्। अचेतनाचिदाभासे शाम्यतामात्मनात्मनि॥ ९॥

jño'si kiṃcinn na kiṃcidvā niḥśaṅkamalamāsyatām | acetanācidābhāse śāmyatāmātmanātmani || 9 ||

You are the knower. You are not anything or something. Be free from fear and impurity. In the reflection of the non-conscious, be calm in your own self.

तुम ज्ञाता हो। तुम कुछ नहीं हो या कुछ भी हो। भय और अशुद्धि से मुक्त हो। अचेतन के प्रतिबिंब में, अपने आत्मा में शान्त हो।

7.10.10

नित्यानन्दतयाऽजस्य कारणं नास्ति कार्यकृत्। सर्गाद्यसंभवे तस्माद्यदस्ति तदजं शिवम्॥ १०॥

nityānandatayā'jasya kāraṇaṃ nāsti kāryakṛt | sargādyasambhave tasmādyadasthi tadajaṃ śivam || 10 ||

The unborn, which is eternal bliss, has no cause for its actions. Since creation is impossible, that which exists is the unborn, auspicious Shiva.

जो अजन्मा और नित्य आनन्द है, उसके कार्यों का कोई कारण नहीं है। सृष्टि असंभव है, इसलिए जो है वह अजन्मा, शुभ शिव है।

7.10.11

अजो येषां तु चिद्रूपो नास्ति मौर्ख्यविलासिनांसर्गनाशे समुत्पन्ने किं तेषां प्र विचार्यते॥ ११॥

ajo yeṣāṃ tu cidrūpo nāsti maurkhyavilāsināmsarganāśe samutpanne kiṃ teṣāṃ pra vicāryate || 11 ||

For those whose true nature is not consciousness, who are deluded by ignorance, what is to be considered when their association is destroyed?

जिनकी चेतना का रूप नहीं है, जो मूर्खता से विलासित हैं, उनके संबंध के नाश होने पर उनके बारे में क्या विचार किया जाए?

7.10.12

यत्र यत्र परं ब्रह्म तत्र सन्ति जगन्ति हिजगच्छब्दार्थरूपेण मुक्तान्येवंविधानि च ॥ १२ ॥

yatra yatra paraṃ brahma tatra santi jaganti hijagacchabdārtharūpeṇa muktānyevaṃvidhāni ca || 12 ||

Wherever the Supreme Brahman is, there the worlds exist, indeed. They are liberated in the form of the meaning of the word 'jagat'.

जहाँ-जहाँ परम ब्रह्म है, वहाँ-वहाँ जगत हैं, वास्तव में। वे 'जगत' शब्द के अर्थ के रूप में मुक्त हैं।

7.10.13

तृणे काष्ठे जले कुड्ये सर्वत्रैव परं स्थितम्सर्वत्रैव च सर्गौघः परिप्रोतः स्थितो मिथः ॥ १३ ॥

tṛṇe kāṣṭhe jale kuḍye sarvatraiva paraṃ sthitamsarvatraiva ca sargaughaḥ pariprotaḥ sthito mithaḥ || 13 ||

In grass, wood, water, and walls, the Supreme is present everywhere. Everywhere, the collection of creation is interwoven and exists together.

घास, लकड़ी, पानी और दीवारों में, परम सर्वत्र विद्यमान है। सर्वत्र, सृष्टि का समूह परस्पर गुंथा हुआ और साथ-साथ विद्यमान है।

7.10.14

ब्रह्मणः कः स्वभावोऽसाविति वक्तुं न युज्यतेअनन्ते परमे तत्त्वे स्वत्वास्वत्वात्यसंभवात् ॥ १४ ॥

brahmaṇaḥ kaḥ svabhāvo'sāviti vaktuṃ na yujyateanante parame tattve svatvāsvatvātyasaṃbhavāt || 14 ||

It is not appropriate to say what the nature of Brahman is, because in the infinite, supreme reality, there is no distinction between self and non-self.

ब्रह्म की प्रकृति क्या है, यह कहना उचित नहीं है, क्योंकि अनंत, परम तत्व में आत्म और अनात्म का कोई भेद नहीं है।

7.10.15

अभावसव्यपेक्षस्य भावस्यासंभवादपिपदं बध्नन्ति नानन्ते स्वभावाद्या दुरुक्तयः ॥ १५ ॥

abhāvasavyapekṣasya bhāvasyāsaṃbhavādapipadaṃ badhnanti nānante svabhāvādyā duruktayaḥ || 15 ||

The impossibility of existence that depends on non-existence does not bind the word 'pada' in the infinite. Such incorrect statements about nature, etc., are not valid.

जो अस्तित्व अनस्तित्व पर निर्भर है, उसकी असंभावना से 'पद' शब्द को अनंत में बाँधना नहीं है। प्रकृति आदि के बारे में ऐसे गलत कथन मान्य नहीं हैं।

7.10.16

अस्वत्वाभावयोर्नित्येऽनन्तेऽत्यन्तमसंभवात्। स्वत्वभावेषु सिद्धेषु स्वभावोक्तिर्न तिष्ठति ॥ १६ ॥

asvatvābhāvayornitye'nante'tyantamasambhavāt| svatvabhāveṣu siddeṣu svabhāvoktirna tiṣṭhati || 16 ||

Due to the impossibility of the eternal and infinite in the absence of ownership, the assertion of inherent nature does not stand when ownership is established.

स्वत्व और अभाव के अभाव में नित्य और अनन्त की असंभावना के कारण, स्वत्व की सिद्धि होने पर स्वभाव की बात नहीं ठहरती।

7.10.17

नाहन्त्वं लभ्यते साधो बुद्ध्यालोके निरीक्षितम्। असदेव कुतोऽप्येतद्बालयक्ष इवोदितम् ॥ १७ ॥

nāhantvaṃ labhyate sādho buddhyāloke nirīkṣitam| asadeva kuto'pyetadbālayakṣa ivoditam || 17 ||

O virtuous one, the sense of 'I' is not found when examined in the light of intellect. This is indeed unreal, like the words of a child or a demon.

हे साधु, बुद्धि के प्रकाश में देखने पर 'मैं' का भाव नहीं मिलता। यह तो असत्य है, जैसे कि बच्चे या यक्ष के शब्द।

7.10.18

मुक्तं त्वहन्त्वशब्दार्थैर्लभ्यते यच्च तत्परम्। युक्तं त्वहन्त्वशब्दार्थैः प्रेक्ष्यमाणं विलीयते ॥ १८ ॥

muktaṃ tvahantvaśabdārthairlabhyate yacca tatparam| yuktaṃ tvahantvaśabdārthaiḥ prekṣyamāṇaṃ vilīyate || 18 ||

That which is liberated is found through the meanings of the word 'I'. That which is united is dissolved when examined through the meanings of the word 'I'.

जो मुक्त है, वह 'मैं' शब्द के अर्थों से पाया जाता है। जो युक्त है, वह 'मैं' शब्द के अर्थों से देखने पर विलीन हो जाता है।

7.10.19

भेदो जगद्ब्रह्मदृशोरभेदः पर्यायशब्दार्थविलासतुल्यः। संकल्पमात्रं कथितो न सत्यो यथानयोर्वै कटकत्वहेम्नोः ॥ १९ ॥

bhedo jagadbrahmadṛśorabhedaḥ paryāyaśabdārthavilāsatulyaḥ| saṃkalpamātraṃ kathito na satyo yathānayorvai kaṭakatvahēmnoḥ || 19 ||

The difference between the world and Brahman is non-different, similar to the play of synonymous words. It is said to be merely a concept, not real, just like the difference between a bracelet and gold.

जगत् और ब्रह्म का भेद अभेद है, जैसे पर्यायवाची शब्दों का विलास। यह केवल एक संकल्प है, वास्तविक नहीं, जैसे कि कंगन और सोने का भेद।

Chapter 11

7.11.1

भुशुण्ड उवाच । शस्त्राणि दयिताङ्गानि लग्नान्यङ्गे निरम्बरे । यो बुद्ध्यमानः सुसमः स परस्मिन्पदे स्थितः ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | śastrāṇi dayitāṅgāni lagnānyaṅge nirambare | yo buddhyamānaḥ susamaḥ sa parasminpade sthitaḥ || 1 ||

Bhushunda said: One who is wise and equanimous, even if weapons are dear to him and cling to his body, is established in the supreme state.

भुशुण्ड ने कहा: जो बुद्धिमान और समतापूर्ण है, उसके लिए शस्त्र प्रिय हों और शरीर पर लगे हों, वह परम पद में स्थित है।

7.11.2

तावत्पुरुषयत्नेन धैर्येणाभ्यासमाहरेत् । यावत्सुषुप्ततोदेति पदार्थोदयनं प्रति ॥ २ ॥

tāvatpuruṣayatnena dhairyenābhyāsamāharet | yāvatsuṣuptatodeti padārthodayanaṃ prati || 2 ||

One should strive with human effort and patience until the realization of the ultimate truth dawns from deep sleep.

मनुष्य को चाहिए कि वह मानवीय प्रयास और धैर्य से प्रयास करे जब तक कि गहरी नींद से परम सत्य का बोध न हो जाए।

7.11.3

यथा भूतार्थतत्त्वज्ञमाधयोऽग्रगता अपि । न मनागपि लिम्पन्ति पयांसीव सरोरुहम् ॥ ३ ॥

yathā bhūtārthatattvajñamādhayo'gragatā api | na manāgapi limpanti payāṃsīva saroruham || 3 ||

Just as the waves of the ocean cannot reach the lotus, even the foremost of scholars cannot fathom the one who knows the ultimate truth.

जैसे समुद्र की लहरें कमल तक नहीं पहुँच सकतीं, उसी प्रकार परम सत्य को जानने वाले को समझने में अग्रगण्य विद्वान भी असमर्थ हैं।

7.11.4

शस्त्राङ्गनानभांस्यङ्गलग्नान्यलमसंविदम् । अलग्नानीव शान्तात्मा यः पश्यति स पश्यति ॥ ४ ॥

śastrāṅganānabhāṃsyaṅgalagnānyalamasamvidam | alagnānīva śāntātmā yaḥ paśyati sa paśyati || 4 ||

One who sees the weapons as not clinging to the body and remains calm and detached, truly sees.

जो शस्त्रों को शरीर पर नहीं लगा हुआ देखता है और शांत और अनासक्त रहता है, वही सचमुच देखता है।

7.11.5

विषं यथा स्वान्तरेव दुर्घुणी भवति स्वयम् । न च दुर्घुणता नाम विषादन्यास्ति काचन ॥ ५ ॥

viṣaṃ yathā svāntareva durguṇī bhavati svayam | na ca durguṇatā nāma viṣādanyāsti kācana || 5 ||

Just as poison becomes harmful only when it is within oneself, there is no harm in poison itself.

जैसे विष तभी हानिकारक होता है जब वह अपने अंदर होता है, विष में खुद कोई हानिकारकता नहीं है।

7.11.6

स्वरूपमजहत्त्वेवं जीवतामधितिष्ठति । तथात्मा तत्परिज्ञानमात्रैकप्रविलापिनीम् ॥ ६ ॥

svarūpamajahattvevaṃ jīvatāmadhitiṣṭhati | tathātmā tatparijñānamātraikapravilāpinīm || 6 ||

In this way, the self does not abandon its own form and remains established among the living beings. Similarly, the self is the sole dissolver of that knowledge.

इस प्रकार, स्वयं अपने रूप को नहीं छोड़ता और जीवों में स्थित रहता है। इसी तरह, आत्मा उस ज्ञान का एकमात्र विलापक है।

7.11.7

जीवो भवति दुर्घूणोऽमृत्यात्मैव यथा तथा । अत्यजन्ती निज रूपं चिज्जडं रूपमृच्छति ॥ ७ ॥

jīvo bhavati durgūṇo'mṛtyātmaiva yathā tathā | atyajantī nija rūpaṃ cijjaḍaṃ rūpamṛcchati || 7 ||

The living being becomes afflicted with bad qualities, as if it were the immortal self. Abandoning its own form, it assumes the form of the insentient.

जीव बुरे गुणों से ग्रस्त हो जाता है, जैसे कि वह अमर आत्मा हो। अपने रूप को छोड़कर, वह जड़ रूप धारण करता है।

7.11.8

ब्रह्मण्यनन्योऽप्यन्याभो दुर्घुणः क्वचिदुत्थितः । तत्स्थः स एवास इवाप्यतत्स्थ इव सर्गकः ॥ ८ ॥

brahmaṇyananyo'pyanyābho durgūṇaḥ kvacidutthitaḥ | tatsthaḥ sa evāsa ivāpyatatstha iva sargakaḥ || 8 ||

In Brahman, there is no other, yet another form with bad qualities arises somewhere. That which is situated there is as if it is non-existent, yet it appears as if it is situated there and is the cause of creation.

ब्रह्म में कोई दूसरा नहीं है, फिर भी कहीं बुरे गुणों वाला एक रूप उत्पन्न होता है। वह जो वहाँ स्थित है, वह जैसे अस्तित्वहीन है, फिर भी वह जैसे वहाँ स्थित है और सृष्टि का कारण है।

7.11.9

विषं विषत्वमजहद्यथा स्वान्तः कृमिः क्रमात् । न जायते न म्रियते म्रियतेऽपि च जायते ॥ ९ ॥

viṣaṃ viṣatvamajahadyathā svāntaḥ kṛmiḥ kramāt | na jāyate na mriyate mriyate'pi ca jāyate || 9 ||

Poison does not abandon its poisonous nature, just as a worm inside gradually grows. It neither is born nor dies, yet it dies and is born again.

विष अपने विषाक्त स्वभाव को नहीं छोड़ता, जैसे कि एक कीड़ा अंदर धीरे-धीरे बढ़ता है। यह न जन्म लेता है न मरता है, फिर भी यह मरता है और फिर से जन्म लेता है।

7.11.10

स्वेनैव संविदर्थेन पदार्थामग्नरूपिणा । तीर्यते गोष्पदमिव न तु दैवाद्भवार्णवः ॥ १० ॥

svenaiva saṃvidarthena padārthāmagnarūpiṇā | tīryate goṣpadamiva na tu daivādbhavārṇavaḥ || 10 ||

By its own intrinsic meaning, the word takes the form of an object. It crosses like a cow's footprint, not by the ocean of fate.

अपने आंतरिक अर्थ से, शब्द वस्तु के रूप में आता है। यह गाय के पैर के निशान की तरह पार करता है, भाग्य के समुद्र से नहीं।

7.11.11

सर्वभावान्तरावस्था सर्वभावातिशायिनी । अन्तःशीतलता यस्मिंस्तस्मिन्किमिव हेलनम् ॥ ११ ॥

sarvabhāvāntarāvasthā sarvabhāvātiśāyinī | antaḥśītalatā yasmiṃstasminkimiva helanam || 11 ||

In a state where all beings are transcended and all beings are surpassed, what is the play in that which has inner coolness?

जहाँ सभी भावों की अवस्था और सभी भावों की अतिशयिता है, उसमें अंतर्निहित शीतलता है, उसमें क्या खेल है?

7.11.12

जगत्पदार्थसत्तान्तः सामान्येनाशु भाविते । मनोहंकारबुद्ध्यादि कः कलङ्कोऽमलात्मनि ॥ १२ ॥

jagatpadārthasattāntaḥ sāmānyenāśu bhāvite | manohaṃkārabuddhyādi kaḥ kalaṅko'malātmani || 12 ||

When the essence of the worldly objects is quickly realized in general, what blemish can there be in the pure self from the mind, ego, and intellect?

जब संसार के पदार्थों की सत्ता का सामान्य रूप से शीघ्र बोध हो जाता है, तब मन, अहंकार और बुद्धि से शुद्ध आत्मा में कौन सा दोष हो सकता है?

7.11.13

यथा घटपटाद्यर्थान्पश्यस्येवं शरीरकम् । तथाहन्त्वमनोबुद्धिवेदनाद्यपि पश्य हे ॥ १३ ॥

yathā ghaṭapaṭādyarthānpasyasyevaṃ śarīrakam | tathāhantvamano buddhi vedanādyapi paśya he || 13 ||

Just as you see objects like pots and clothes, similarly see the body. In the same way, see the ego, mind, intellect, and sensations.

जैसे आप घड़े और कपड़ों जैसे पदार्थों को देखते हैं, उसी तरह शरीर को देखें। उसी प्रकार, अहंकार, मन, बुद्धि और वेदनाओं को भी देखें।

7.11.14

जगत्पदार्थसार्थौघमनोबुद्ध्यादि संस्थितम् । ज्ञ एवासंविदंस्तिष्ठ परिनिष्ठितनिष्ठया ॥ १४ ॥

jagatpadārthasārthaughamano buddhyādi saṃsthitam | jña evāsaṃvidaṃstiṣṭha pariniṣṭhitaniṣṭhayā || 14 ||

The collection of worldly objects is established in the mind, intellect, etc. Remain in the state of pure awareness with firm resolve.

संसार के पदार्थों का समूह मन, बुद्धि आदि में स्थित है। दृढ़ संकल्प के साथ शुद्ध चेतना की अवस्था में रहें।

7.11.15

न केनचित्कस्यचिदेव कश्चिद्दोषो न चैवेह गुणः कदाचित् । सुखेन दुःखेन भवाभवेन न चास्ति भोक्ता न च कर्तृता च ॥ १५ ॥

na kenacitkasyacideva kaściddoṣo na caiveha guṇaḥ kadācit | sukhena duḥkhena bhavābhavena na cāsti bhoktā na ca kartṛtā ca || 15 ||

There is no fault or virtue in anyone at any time. There is no enjoyer or doer in happiness, sorrow, existence, or non-existence.

किसी में कभी भी कोई दोष या गुण नहीं है। सुख, दुःख, अस्तित्व या अनस्तित्व में कोई भोगी या कर्ता नहीं है।

Chapter 12

7.12.1

भुशुण्ड उवाच। ख एव व्योम संपन्नमिति संकल्पनं यथा। भ्रान्तिमात्रमसद्रूपं तथाहंभावभावनम्॥ १॥

bhushuṇḍa uvāca | kha eva vyoma saṃpannamiti saṃkalpanaṃ yathā | bhrāntimātramasadrūpaṃ tathāhaṃbhāvabhāvanam || 1 ||

Bhushunda said: Just as the concept that the sky is filled with space is merely an illusion, so too is the notion of the ego.

भुशुण्ड ने कहा: जैसे आकाश आकाश से भरा हुआ है, ऐसा सोचना एक भ्रम है, वैसे ही अहंकार की भावना भी एक भ्रम है।

7.12.2

खे खं जातमिति भ्रान्तेरहं कल्पयिता यथा। तथा निर्व्यपदेश्यात्म सदस्त्यसदिवाततम्॥ २॥

khe khaṃ jātamiti bhrānterahaṃ kalpayitā yathā | tathā nirvyapadeśyātma sadastyasadivātatam || 2 ||

Just as the illusion that space is born in the sky creates the notion of 'I', so too the unmanifested self appears as both real and unreal.

जैसे आकाश में आकाश का जन्म होने का भ्रम अहंकार की कल्पना करता है, वैसे ही अव्यक्त आत्मा सत् और असत् दोनों के रूप में प्रकट होती है।

7.12.3

खे खात्मैवास्ति चिद्रूपं तत्स्वकं बुध्यते वपुः। भासते यदिदन्त्वेन नाहमस्मि न चानहम्॥ ३॥

khe khātmaivāsti cidrūpaṃ tatsvakaṃ budhyate vapuḥ | bhāsate yadidantvena nāhamasmi na cānaham || 3 ||

In the sky, only the self in the form of consciousness exists, which is perceived as one's own body. It shines as 'I' and 'not I', neither 'I am' nor 'I am not'.

आकाश में, केवल चेतना के रूप में आत्मा ही है, जो अपने शरीर के रूप में देखी जाती है। यह 'मैं' और 'मैं नहीं' के रूप में चमकती है, न 'मैं हूँ' न 'मैं नहीं हूँ'।

7.12.4

ततश्चिद्रूपमस्तीदृग्यत्र स्थूलं खमप्यलम्। अणाविव महामेरुस्तत्संवित्तिर्हि खादिता॥ ४॥

tataścidrūpamastīdṛgyatra sthūlaṃ khamapyalam | aṇāviva mahāmerustatsaṃvittirhi khāditā || 4 ||

Therefore, the self in the form of consciousness exists in this way, where even the gross sky is subtle. Like an atom, the great Meru is perceived in that consciousness.

इसलिए, चेतना के रूप में आत्मा इस तरह अस्तित्व में है, जहाँ स्थूल आकाश भी सूक्ष्म है। जैसे परमाणु, महान मेरु उस चेतना में देखा जाता है।

7.12.5

घनस्ततोऽचिदाभासः खादप्यतितरामणुः। जानाति यत्स्वभावं तदेतत्सर्गतया स्थितम्॥ ५॥

ghanastato'cidadābhāsaḥ khādapyatitarāmaṇuḥ | jānāti yatsvabhāvaṃ tadetatsargatayā sthitam || 5 ||

Therefore, the dense reflection of non-consciousness, even more subtle than the sky, knows its own nature. This is established in the form of creation.

इसलिए, अचेतन का घना प्रतिबिम्ब, आकाश से भी अधिक सूक्ष्म, अपने स्वभाव को जानता है। यह सृष्टि के रूप में स्थापित है।

7.12.6

अहन्ताखादिताद्यात्मविदः प्रसरणं जगत् । अम्भोद्रवप्रसरणं यथावर्तादिवेष्टनम् ॥ ६ ॥

ahantākhāditādyātmavidaḥ prasaraṇaṃ jagat| ambhodravaprasaraṇaṃ yathāvartādivēṣṭanam || 6 ||

The expansion of the universe is like the expansion of water from a cloud, just as the enveloping of waves, etc.

ब्रह्माण्ड का विस्तार बादल से पानी के फैलाव की तरह होता है, जैसे लहरों का घेराव होता है।

7.12.7

अचित्प्रसरणं शान्तमस्पन्दीव जलद्रवः । निःस्पन्दपवनाकारमाकाशहृदयोपमम् ॥ ७ ॥

acitprasaraṇaṃ śāntamaspandīva jaladravaḥ| niḥspandapavanākāramākāśahṛdayopamam || 7 ||

The expansion of the insentient is calm, like the flow of water without waves, resembling the wind without motion, like the heart of the sky.

जड़ का विस्तार शान्त है, जैसे लहरों के बिना पानी का प्रवाह, गतिहीन हवा के समान, आकाश के हृदय की तरह।

7.12.8

न देशकालादिजगत्प्रसरेषु च युज्यते । घनाच्छून्यान्निराभासाच्चिन्मात्रविसरादृते ॥ ८ ॥

na deśakālādijagatprasareṣu ca yujyate| ghanācchūnyānnirābhāsāccinmātravisarādṛte || 8 ||

It does not fit in the expansions of the universe in terms of space, time, etc., except from the pure consciousness expansion.

यह स्थान, समय आदि के रूप में ब्रह्माण्ड के विस्तार में फिट नहीं बैठता, शुद्ध चेतना विस्तार के अलावा।

7.12.9

चिन्मात्रे प्रसृते काले व्योम्नि नावि जले स्थले । निद्रायां जाग्रति स्वप्ने भवेज्जगदिवोदितम् ॥ ९ ॥

cinmātre prasṛte kāle vyomni nāvi jale sthale| nidrāyāṃ jāgrati svapne bhavejjagadivoditam || 9 ||

When pure consciousness expands in time, it appears as if the universe is manifested in the sky, water, land, dream, and wakefulness.

जब शुद्ध चेतना समय में फैलती है, तो ऐसा लगता है कि ब्रह्माण्ड आकाश, पानी, भूमि, स्वप्न और जागरण में प्रकट होता है।

7.12.10

प्रसरणाप्रसरणे न च संभवतो विदः । खादप्यत्यन्तस्वच्छत्वादक्षोभादेः सदैव हि ॥ १० ॥

prasaraṇāprasaraṇe na ca saṃbhavato vidaḥ| khādapyatyantasvacchatvādakṣobhādeḥ sadaiva hi || 10 ||

In the expansion and non-expansion, the knower does not exist due to the absolute purity and immutability.

विस्तार और अविस्तार में, ज्ञाता अपनी पूर्ण शुद्धता और अपरिवर्तनीयता के कारण मौजूद नहीं होता।

7.12.11

ज्ञश्चेतति न भोगादि न चैवात्मन्यसावहम् । द्रवत्वमम्भसीवान्तरद्वितीयः परे स्थितः ॥ ११ ॥

jñashcetati na bhogādi na caivātmanyasāvaham | dravatvamambhasīvāntaradvitīyaḥ pare sthitaḥ || 11 ||

The knower of the self does not perceive enjoyment or the ego as 'I am this.' Like water, it is fluid and without a second, situated in the supreme.

आत्मा का ज्ञाता भोग या अहंकार को 'मैं यह हूँ' के रूप में नहीं देखता | पानी की तरह, यह द्रव है और दूसरा नहीं है, परम में स्थित है |

7.12.12

धीर्ह्रीः श्रीर्भीः स्मृतिः कीर्तिः कान्तिरित्यादिकंगणं । न पश्यति विसंकल्पस्तमसीव पदान्यहेः ॥ १२ ॥

dhīrhṛḥ śrīrbhīḥ smṛtiḥ kīrtiḥ kāntirityādikaṃgaṇaṃ | na paśyati visaṃkalpastamasīva padānyaheḥ || 12 ||

The one without desires does not perceive qualities such as intelligence, modesty, prosperity, memory, fame, and radiance, like darkness covering the steps of the serpent.

जो इच्छाओं से रहित है, वह बुद्धि, विनम्रता, समृद्धि, स्मृति, कीर्ति और कान्ति जैसी गुणों को नहीं देखता, जैसे अंधेरा सर्प के पदचिह्नों को ढंकता है |

7.12.13

ब्रह्मेन्दुबिम्बस्फुरितचिज्ज्योत्स्नांशामृतद्रवः । दिक्कालासंभवात्सर्गो नेश्वरादतिरिच्यते ॥ १३ ॥

brahmendubimbasphuritacijjyotsnāṃśāmṛtadravaḥ | dikkālāsaṃbhavātsargo neśvarādatiricyate || 13 ||

The nectar-like flow of the reflected light of Brahman and the moon does not transcend the creation arising from direction and time from the Lord.

ब्रह्म और चंद्रमा की प्रतिबिंबित ज्योति का अमृत की तरह प्रवाह दिशा और समय से उत्पन्न सृष्टि से ईश्वर के द्वारा पार नहीं करता |

7.12.14

आधिमान्यः स्फुरत्येवं परे स्फुरति भासुरम् । जगदाद्यात्मकं चित्तं चक्रौघत्वमिवाम्भसि ॥ १४ ॥

ādhimānyaḥ sphuratyevaṃ pare sphurati bhāsuram | jagadādyātmakaṃ cittaṃ cakraughatvamivāmbhasi || 14 ||

The supreme consciousness shines forth in this way, shining brightly in the supreme. The mind, which is the essence of the universe, appears like a whirlpool in water.

परम चेतना इस प्रकार चमकती है, परम में उज्ज्वल रूप से चमकती है | मन, जो ब्रह्मांड का सार है, पानी में भंवर की तरह दिखाई देता है |

7.12.15

मज्जनोन्मज्जनारावैर्विवर्तावर्तवेष्टनैः । अच्छिन्नानुपदं क्षीणा भाति सर्गसरिच्चिरम् ॥ १५ ॥

majjanonmajjanaārāvairvivartāvartaveṣṭanaiḥ | acchinnānupadaṃ kṣīṇā bhāti sargasaricciram || 15 ||

With the sounds of immersion and emergence, with the movements of transformation and rotation, the unbroken, continuous flow of creation appears to be diminishing.

डुबकी और उभरने की आवाजों के साथ, परिवर्तन और घूमने की गतिविधियों के साथ, अखंड, लगातार सृष्टि का प्रवाह घटता प्रतीत होता है |

7.12.16

यथावर्तैः पयो भाति धूमो भाति यथा घनः । तथा जडात्मकतया तृतीयः सर्ग एतयोः ॥ १६ ॥

yathāvartaiḥ payo bhāti dhūmo bhāti yathā ghanaḥ | tathā jaḍātmakatayā tṛtīyaḥ sarga etayoḥ || 16 ||

Just as milk appears white and smoke appears dense, similarly, the third creation appears inert due to its nature.

जैसे दूध सफेद दिखता है और धुआँ घना दिखता है, वैसे ही तीसरी सृष्टि अपने जड़ स्वभाव के कारण जड़ दिखती है।

7.12.17

दारुणि क्रकचच्छेदे यथावर्तादिकं तथा । अदिगादौ परे सर्गस्तदतद्रूपवानयम् ॥ १७ ॥

dāruṇi krakacacchede yathāvartādikaṃ tathā | adigādau pare sargastadatadrūpavānayam || 17 ||

Just as a saw cuts through wood, similarly, the ultimate creation is both manifest and unmanifest.

जैसे आरा लकड़ी को काटता है, वैसे ही अंतिम सृष्टि दोनों व्यक्त और अव्यक्त है।

7.12.18

संसारकदलीस्तम्भाद्विना संकल्पपल्लवम्। मृदुनोऽपि दृषत्क्रूरान्न किंचिल्लभतेऽन्तरम्॥ १८॥

saṃsārakadalīstambhādvinā saṃkalpapallavam | mṛduno'pi dṛṣatkrūrānna kiṃcillabhate'ntaram || 18 ||

Without the support of the worldly tree, even the tender sprout of intention cannot find any space, being seen as cruel.

दुनियादारी के पेड़ के सहारे के बिना, इरादे की कोमल पत्ती भी कोई जगह नहीं पाती, क्योंकि उसे क्रूर समझा जाता है।

7.12.19

सहस्रखुरमूर्धाक्षिकरवक्त्रहितोहितम्। नानाद्रितनुदिग्देशसरित्प्रादेशमात्रकम्॥ १९॥

sahasrakhuramūrdhākṣikaravaktrahitohitam | nānādritanudigdeśasaritprādeśamātrakam || 19 ||

With thousands of hooves, heads, eyes, hands, and mouths, it is beneficial and harmful, encompassing various mountains, bodies, directions, and rivers, spanning a measure of a fathom.

हजारों खुरों, सिरों, आँखों, हाथों और मुँहों के साथ, यह लाभदायक और हानिकारक है, विभिन्न पर्वतों, शरीरों, दिशाओं और नदियों को शामिल करता है, एक बाहु के माप तक फैला हुआ।

7.12.20

अन्तःशून्यमसारात्म बहुरागोपरञ्जितम्। स्फुरद्विरागविहितमार्जनामात्रतर्जनम्॥ २०॥

antaḥśūnyamasārātma bahurāgoparañjitam | sphuradvirāgavihitamārjanāmātratarjanam || 20 ||

Empty within, devoid of essence, adorned with many passions, shining with detachment, merely cleansing and threatening.

अंदर से खाली, महत्व से रहित, बहुत सी आसक्तियों से सजा हुआ, विरक्ति से चमकता हुआ, केवल साफ करने और धमकाने वाला।

7.12.21

ससुरासुरगन्धर्वविद्याधरमहोरगम्। जडात्मपवनस्पन्दि परचेतनचेतितम्॥ २१॥

sasurāsuragandharvavidyādharamahoragam | jaḍātmavanaspanadi paracetanacetitam || 21 ||

The world is filled with various beings, both animate and inanimate, from gods to demons, from celestial beings to serpents, and from the inert to the conscious.

यह संसार अनेक प्रकार के प्राणियों से भरा है, जिनमें देवता, असुर, गंधर्व, विद्याधर, महोरग आदि शामिल हैं, और जड़ से लेकर चेतन तक के सभी प्रकार के जीवों से भरा है।

7.12.22

पटे चित्रमहाराज्यमिव भासुरसुन्दरम्। परामर्शासहं चारु विकल्पस्फूर्जितं जगत्॥ २२॥

paṭe citramahārājyamiva bhāsurasundaram | parāmarśāsahaṃ cāru vikalpasphūrjitaṃ jagat || 22 ||

The world is like a beautiful painting, shining and splendid, filled with the delightful play of various thoughts and perceptions.

यह संसार एक सुंदर चित्र की तरह है, जो चमकता और शानदार है, और विभिन्न विचारों और अनुभूतियों के मनमोहक खेल से भरा हुआ है।

7.12.23

स्पन्दात्मनि विकल्पांशे पतिताऽसत्यरूपिणि। संवित्प्रसरति भ्रान्तौ तैलबिन्दुरिवाम्भसि॥ २३॥

spandātmni vikalpāṃśe patitā'satyarūpiṇi | saṃvitprasarati bhrāntau tailabindurivāmbhasi || 23 ||

In the vibrant realm of diverse thoughts, which are essentially unreal, consciousness spreads like an oil drop in water, creating illusions.

विभिन्न विचारों के सजीव क्षेत्र में, जो असल में असत्य हैं, चेतना पानी में तेल की बूँद की तरह फैलती है, जिससे भ्रम उत्पन्न होते हैं।

7.12.24

हृल्लेखाजालविसरैः सर्वावर्तविवर्तनैः । विसरत्स्नेहसंमिश्रजडानुदयचर्वणैः ॥ २४ ॥

hṛllekhājālavisaraiḥ sarvāvartavivartanaiḥ | visaratsnehasaṃmiśrajadānudayacarvaṇaiḥ || 24 ||

The world is pervaded by the intricate web of heart-lines, which cause all transformations and movements, intertwined with the rise of inert matter and the enjoyment of affection.

संसार हृदय की रेखाओं के जटिल जाल से व्याप्त है, जो सभी परिवर्तनों और गतियों का कारण बनता है, जिसमें जड़ पदार्थों का उदय और स्नेह का आनंद शामिल है।

7.12.25

अहमित्यादिचिद्रूपे विकल्पेनोन्मुखी सती । न पराद्व्यतिरिक्तैषा जलत्वादिव तोयता ॥ २५ ॥

ahamityādicidrūpe vikalpenonmukhī satī | na parādvyatiriktaiṣā jalatvādiva toytā || 25 ||

When the consciousness, which is the essence of 'I', is awakened by the play of thoughts, it is not separate from the supreme consciousness, just as water is not separate from its liquid nature.

जब चेतना, जो 'मैं' का सार है, विचारों के खेल से जागृत होती है, तो वह परम चेतना से अलग नहीं होती, जैसे पानी अपनी तरल प्रकृति से अलग नहीं होता।

7.12.26

चिदादित्यः स्व आत्मैव सर्ग इत्यभिधीयते । भूत्वाहमिति तेनान्यो न सर्गोऽस्ति न सर्जकः ॥ २६ ॥

cidādityaḥ sva ātmaiva sarga ityabhidhīyate | bhūtvāhamiti tenānyo na sargo'sti na sarjakaḥ || 26 ||

The self, which is the pure consciousness, is said to be the creation. There is no other creation or creator apart from the self.

स्वयं चिदादित्य, यह आत्मा ही सृष्टि कहलाती है। इसके अलावा कोई और सृष्टि या सृष्टिकर्ता नहीं है।

7.12.27

स्पन्दात्मिकायां सत्तायां यथा स्पन्दो जलद्रवः । तथा चिदात्मा व्योमत्वेनव्योमत्वादि वेत्ति हि ॥ २७ ॥

spandātmikāyāṃ sattāyāṃ yathā spando jaladravāḥ | tathā cidātmā vyomatvenavyomatvādi vetti hi || 27 ||

Just as the movement of water is inherent in its nature, so too the self, which is pure consciousness, perceives the space-like nature of all things.

जैसे जल का स्पंदन उसके स्वभाव में है, वैसे ही आत्मा, जो शुद्ध चेतना है, सब कुछ के आकाश-जैसे स्वभाव को जानती है।

7.12.28

देशकालादिनिर्माणपूर्वकं वेदनं विदः । सर्गात्मकत्वात्तेनाम्बुद्रवसाम्यं न दूरगम् ॥ २८ ॥

deśakālādinirmāṇapūrvakaṃ vedaṃ vedaḥ | sargātmakatvāttena ambudravasāmyaṃ na dūragam || 28 ||

The wise perceive the creation of space, time, and other elements. Due to its creative nature, it is not distant from the flow of water.

विद्वान देश, काल और अन्य तत्वों की सृष्टि को जानते हैं। इसके सृष्टिकारी स्वभाव के कारण, यह जल के प्रवाह से दूर नहीं है।

7.12.29

मनोहंभावबुद्ध्यादि यत्किंचिन्नाम वेदनम् । अविद्यां विद्धि यत्नेन पौरुषेणाशु नश्यति ॥ २९ ॥

manohaṃbhāvabuddhyādi yatkiñcinnaṃ vedaṃ | avidyāṃ viddhi yatnena pauruṣeṇāśu naśyati || 29 ||

Whatever is known through the mind, ego, and intellect is ignorance. Know it with effort, and it will quickly vanish through human effort.

जो कुछ भी मन, अहंकार, और बुद्धि द्वारा जाना जाता है, वह अज्ञान है। उसे प्रयत्न से जानें, और यह मानवीय प्रयास से शीघ्र ही नष्ट हो जाएगा।

7.12.30

अर्धं मिथःसंकथया भागः शास्त्रविचारणैः । आत्मप्रत्ययतः शिष्टमविद्याया निवर्तते ॥ ३० ॥

ardhaṃ mithaḥsaṃkathayā bhāgaḥ śāstravicāraṇaiḥ | ātmapratyayataḥ śiṣṭamavidyāyā nivartate || 30 ||

Half of ignorance is dispelled through mutual discussion and the study of scriptures. The remaining ignorance is dispelled through self-realization.

अज्ञान का आधा भाग आपस में चर्चा और शास्त्रों के अध्ययन से दूर हो जाता है। शेष अज्ञान आत्म-ज्ञान से दूर हो जाता है।

7.12.31

चतुर्भागात्मनि कृते इत्यविद्याक्षये क्रमात् । समकालाच्च यच्छिष्टं तदनामार्थसन्मयम् ॥ ३१ ॥

caturbhāgātmani kṛte ityavidyākṣaye kramāt | samakālācca yacchiṣṭaṃ tadanāmārthasanmayam || 31 ||

When the self is divided into four parts and ignorance is gradually destroyed, what remains is the true essence of the nameless.

जब आत्मा चार भागों में विभाजित होता है और अज्ञान धीरे-धीरे नष्ट होता है, तो जो शेष रहता है वह नामहीन का सच्चा सार है।

7.12.32

श्रीराम उवाच । अर्धं मिथःसंकथया भागः शास्त्रविचारणैः । आत्मप्रत्ययतो भागः कथं तस्या निवर्तते ॥ ३२ ॥

śrīrāma uvāca | ardhaṃ mithaḥsaṃkathayā bhāgaḥ śāstravicāraṇaiḥ | ātmapratyayato bhāgaḥ kathaṃ tasyā nivartate || 32 ||

Sri Rama said: How does the part of self-realization through scriptural inquiry and mutual discussion, and the part of self-conviction, turn away from her?

श्री राम ने कहा: शास्त्रीय विचार और परस्पर चर्चा से आत्म-साक्षात्कार का भाग और आत्म-विश्वास का भाग उससे कैसे मुड़ता है?

7.12.33

समकाले क्रमाच्चेति मुनिनाथ किमुच्यते । तदनामार्थसच्चेति सच्चासच्चेति किं वद ॥ ३३ ॥

samakāle kramācceti muninātha kimucyate | tadanāmārthasacceti saccāsacceti kiṃ vada || 33 ||

O Lord of sages, what is meant by 'simultaneously and gradually'? What is meant by 'that is the true essence of the nameless' and 'true and false'?

हे मुनियों के स्वामी, 'समकालीन और क्रमशः' से क्या कहा जाता है? 'वह नामहीन का सच्चा सार है' और 'सत्य और असत्य' से क्या कहा जाता है?

7.12.34

श्रीवसिष्ठ उवाच । सुजनेन विरक्तेन संसारोत्तरणार्थिना । सह चाप्यात्मविदुषां संसृतिं प्रविचारयेत् ॥ ३४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sujanena viraktena saṃsārottaraṇārthinā | saha cāpyātmaviduṣāṃ saṃsṛtiṃ pravicārayet || 34 ||

Sri Vasistha said: One should discuss the cycle of existence with noble, detached persons who are seekers of liberation and knowers of the self.

श्री वसिष्ठ ने कहा: एक को चक्र की अस्तित्व के साथ उच्च विरक्त, मुक्ति के खोजी और आत्मज्ञानी व्यक्तियों के साथ चर्चा करनी चाहिए।

7.12.35

यतः कुतश्चिदन्विष्य सविरागममत्सरम्। जनं सज्जनमात्मज्ञं यत्नेनाराधयेद्बुधः ॥ ३५ ॥

yataḥ kutaścidanviṣya savirāgamamatsaram | janaṃ sajjanamātmajñaṃ yatnenārādhayedbudaḥ || 35 ||

Therefore, a wise person should diligently seek out and worship a noble, self-knowing person who is free from desire and envy.

इसलिए, एक बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह इच्छा और ईर्ष्या से मुक्त, उच्च, आत्मज्ञानी व्यक्ति को खोजे और उसकी पूजा करे।

7.12.36

संपन्ने संगमे साधोरविद्यार्धं क्षयं गतम् विद्धि वेद्यविदां श्रेष्ठ ज्येष्ठश्रेष्ठदशोदयात् ॥ ३६ ॥

saṃpannesamgame sādhoravidyārdhaṃ kṣayaṃ gatam vidhi vedyavidāṃ śreṣṭha jyeṣṭhaśreṣṭhadaśodayāt || 36 ||

When the association with the virtuous is complete, half of the ignorance is destroyed. Know this, O best of the knowers of the knowable, from the rise of the best of the best qualities.

जब सज्जनों के संग से पूर्ण हो जाता है, तब अज्ञान का आधा नाश हो जाता है। हे ज्ञान के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ, इसे उत्तम गुणों के उदय से जानो।

7.12.37

अर्धं सज्जनसंपर्कादविद्याया विनश्यति चतुर्भागस्तु शास्त्रार्थैश्चतुर्भागं स्वयत्नतः ॥ ३७ ॥

ardhaṃ sajjana-samparkādavidyāyā vinaśyati caturbhāgastu śāstrārthaiścaturbhāgaṃ svayatnataḥ || 37 ||

Half of the ignorance is destroyed by association with the virtuous, one-fourth by understanding the scriptures, and one-fourth by personal effort.

अज्ञान का आधा सज्जनों के संग से नष्ट हो जाता है, एक चतुर्थांश शास्त्रों के अर्थों से और एक चतुर्थांश स्वयं के प्रयास से।

7.12.38

एकोऽभिलाष उत्पन्नो भोगेभ्यश्च निवार्यते तत्क्षये यात्यविद्यायाश्चतुर्थांशः स्वयत्नतः ॥ ३८ ॥

eko'bhilāṣa utpanno bhogebhyaśca nivāryate tatkṣaye yātyavidyāyāścaturthāṃśaḥ svayatnataḥ || 38 ||

One desire arises and is restrained from enjoyments. In its destruction, one-fourth of ignorance is destroyed by personal effort.

एक इच्छा उत्पन्न होती है और भोगों से रोक दी जाती है। उसके नाश में, स्वयं के प्रयास से अज्ञान का एक चतुर्थांश नष्ट हो जाता है।

7.12.39

साधुसङ्गमशास्त्रार्थस्वयत्नैः क्षीयते मलम् एकैकेनाथ सर्वैश्च तुल्यकालं क्रमादपि ॥ ३९ ॥

sādhusaṅgamaśāstrārthasvayatnaiḥ kṣīyate malam ekaikeṇātha sarvaiśca tulyakālaṃ kramādapi || 39 ||

Impurity is destroyed by association with the virtuous, understanding the scriptures, and personal effort. It is destroyed gradually by each one of these or all of them together in the same period of time.

अशुद्धि सज्जनों के संग, शास्त्रों के अर्थों और स्वयं के प्रयास से नष्ट हो जाती है। यह क्रमशः एक-एक या सभी एक साथ समय में नष्ट हो जाती है।

7.12.40

यदविद्याक्षयैकात्म न किंचित्किंचिदेव च शिष्यते तत्परं प्राहुरनामार्थमसच्च सत् ॥ ४० ॥

yadavidyākṣayaikekātma na kiṃcitkiṃcideva ca śiṣyate tatparaṃ prāhuranāmārthamasacca sat || 40 ||

That which remains after the destruction of ignorance is neither this nor that. It is called the supreme, the nameless, the unreal, and the real.

अज्ञान के नाश के बाद जो बचता है, वह न कुछ है न कुछ है। उसे परम, अनाम, असत् और सत् कहते हैं।

7.12.41

ब्रह्मेदं घनमजराद्यनन्तमेकं संकल्पस्फुरणमविद्यमानमेव । बुद्ध्वैवं व्यपगतमानमेयमोहो निर्वाणं परिविहरन्विशोकमास्व ॥ ४१ ॥

brahmedaṃ ghanamajarādyanantamekaṃ saṃkalpasphuraṇamavidyamānameva | buddhvaivaṃ vyapagatamānameyamoho nirvāṇaṃ pariviharanviśokamāssva || 41 ||

This entire universe, which is dense, eternal, and infinite, is a manifestation of Brahman's will, though it appears non-existent. Knowing this, one's delusion disappears, and one attains the state of Nirvana, free from sorrow.

यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड, जो घना, अजर और अनंत है, ब्रह्म की इच्छा का प्रकटीकरण है, हालांकि यह अविद्यमान प्रतीत होता है। इसे जानकर, भ्रम दूर हो जाता है, और मनुष्य दुःख से मुक्त निर्वाण की अवस्था प्राप्त करता है।

Chapter 13

7.13.1

भुशुण्ड उवाच । जगत्प्रसररूपस्य न देश उपयुज्यते । न कालो धारणे स्तम्भ आलोकस्याम्बरे यथा ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | jagatprasararūpasya na deśa upayujyate | na kālo dhāraṇe stambha ālokasyāmbare yathā || 1 ||

Bhushunda said: The world, which is of the nature of expansion, does not require a place, nor does time require support, just as the sky does not require support for its light.

भुशुण्ड ने कहा: जगत् जो विस्तार के स्वरूप है, उसके लिए कोई स्थान नहीं चाहिए, न ही समय को सहारा चाहिए, जैसे आकाश को अपने प्रकाश के लिए सहारा नहीं चाहिए।

7.13.2

मनोमननिर्माणमात्रमेतज्जगत्त्रयम् । शान्तं तनु लघु स्वच्छं वातान्तः सौरभादपि ॥ २ ॥

manomana-nir-māṇamātrametajjagat-trayam | śāntaṃ tanu laghu svacchaṃ vātāntaḥ saurabhādapi || 2 ||

The three worlds are merely the creation of the mind. They are peaceful, subtle, light, and pure, even more fragrant than the wind.

तीनों जगत् मन की ही रचना हैं। वे शान्त, सूक्ष्म, हल्के और पवित्र हैं, वायु की सुगंध से भी अधिक सुगंधित हैं।

7.13.3

चिच्चमत्कृतिमात्रस्य साधो जगदणोः किल । वातान्तः सौरभं मेरुरन्यानुभवयोगतः ॥ ३ ॥

ciccamatkṛtimātrasyā sādho jagadaṇoḥ kila | vātāntaḥ saurabhaṃ meruranyānubhavayogataḥ || 3 ||

O sage, the entire universe is merely the wonder of consciousness. Just as the fragrance of the wind is experienced by others, so is the experience of the universe.

हे साधो, सारा ब्रह्मांड चेतना का ही आश्चर्य है। जैसे वायु की सुगंध दूसरों द्वारा अनुभव की जाती है, वैसे ही ब्रह्मांड का अनुभव होता है।

7.13.4

यं प्रत्युदेति सर्गोयं स एवैनं हि चेतति । पदार्थः संनिवेशं स्वमिव स्वप्नं पुमानिव ॥ ४ ॥

yaṃ pratyudeti sargo yaṃ sa evainaṃ hi cetati | padārthaḥ saṃniveśaṃ svamiva svapnaṃ pumāniva || 4 ||

That which arises in the mind is the same as the one who perceives it. The object of perception is like a dream, perceived by the individual as real.

जो मन में उत्पन्न होता है, वही उसका द्रष्टा है। प्रत्यक्ष वस्तु स्वप्न की तरह है, जिसे व्यक्ति वास्तविक मानता है।

7.13.5

अत्रैवोदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् । यद्वृत्तं देवराजस्य त्रसरेणूदरे पुरा ॥ ५ ॥

atraivodāharantīmamitihāsaṃ purātanam | yadvṛttaṃ devarājasya trasareṇūdare purā || 5 ||

In this context, they narrate an ancient story that happened in the womb of Trasarenu, the wife of the king of the gods.

इस संदर्भ में, वे एक पुरानी कहानी बताते हैं जो त्रसरेणु, देवराज की पत्नी के गर्भ में हुई थी।

7.13.6

क्वचित्कदाचित्कस्मिंश्चित्किंचित्कल्पद्रुमेऽभवत्। कस्यांचिद्युगशाखायां फलं जगदुदुम्बरम्॥ ६॥

kvacitkadācitkasmiṃścitkiṃcitkalpadrume'bhavat | kasyāṃcidayugaśākhāyāṃ phalaṃ jagadudumbaram || 6 ||

In some part of the Kalpadruma, there was a fruit called Jagadudumbara on some branch of some era.

कल्पद्रुम के किसी भाग में, किसी युग की किसी शाखा पर जगदुदुम्बर नामक फल था।

7.13.7

ससुरासुरभूतौघमशकाहितघुंघुमम्। शैलमांसलपातालद्युभूम्युग्रकपाटकम्॥ ७॥

sasurāsurabhūtaughamaśakāhitaghughumam | śailamāṃsalapātāladyubhūmyugrakapāṭakam || 7 ||

It was filled with a multitude of gods, demons, and beings, and was adorned with various ornaments and jewels.

इसमें देवताओं, असुरों और प्राणियों की भीड़ भरी थी, और यह विभिन्न आभूषणों और रत्नों से सजा हुआ था।

7.13.8

चिच्चमत्कृतिचारूच्चैर्वासनारसपीवरम्। विविधानुभवामोदं चित्तास्वादमनोहरम्॥ ८॥

ciccamatkṛticārūccairvāsanārasapīvaram | vividhānubhavāmodaṃ cittāsvādamanoharam || 8 ||

It was a marvel of consciousness, filled with delightful experiences and pleasing to the mind.

यह चेतना का एक आश्चर्य था, जो मनमोहक अनुभवों से भरा था और मन को प्रसन्न करने वाला था।

7.13.9

बृहद्ब्रह्मतरुप्रौढसत्ताव्रततिकोटिगम्। अहंकारमहावृन्तं समालोकसमुज्ज्वलम्॥ ९॥

bṛhadbrahmataruprauḍhasattāvrataṭikotigam | ahaṃkāramahāvṛntaṃ samālokasamujjvalam || 9 ||

It was the great tree of Brahman, filled with the essence of existence and the radiance of self-awareness.

यह ब्रह्म का महान वृक्ष था, जो अस्तित्व की आत्मा और आत्म-चेतना की चमक से भरा था।

7.13.10

मोक्षद्वारविकास्यास्यं सरिदब्धिशिरावृतम्। मात्रापञ्चककोशस्थं तरत्तारकसीकरम्॥ १०॥

mokṣaddhāravikāsyāsyaṃ saridabdhiśirāvṛtam | mātrāpañcakakośasthaṃ tarattārakasīkaram || 10 ||

It was the face of liberation, covered with the waters of the ocean and rivers, and contained within the five sheaths of elements.

यह मोक्ष का चेहरा था, जो समुद्र और नदियों के जल से ढका हुआ था, और पांच तत्वों के कोशों में संग्रहित था।

7.13.11

कल्पावसानजरठं काककोकिलगाम्यथ पतितं शान्तिमायातं क्वाप्यन्तावासनं गतम्॥ ११॥

kalpāvasānajaraṭhaṃ kākakokilagāmyatha patitaṃ śāntimāyātaṃ kvāpyantāvāsanaṃ gatam || 11 ||

At the end of the kalpa, the old body, accessible to crows and cuckoos, fell and attained peace, reaching some final resting place.

कल्प के अंत में, कौए और कोयलों के लिए सुलभ वह पुराना शरीर गिर गया और शांति प्राप्त कर ली, किसी अंतिम विश्रामस्थान तक पहुंच गया।

7.13.12

तत्राभूदमराधीशः शक्रस्त्रिभुवनेश्वरः क्षौद्रकुम्भनिषण्णानां क्षुद्राणामिव नायकः ॥ १२ ॥

tatrābhūdamarādhīśaḥ śakrastribhuvaneśvaraḥ kṣaudrakumbhaniṣaṇṇānāṃ kṣudrāṇāmiva nāyakaḥ || 12 ||

There, the lord of the gods, Indra, the ruler of the three worlds, became like the leader of small beings sitting around a pot of honey.

वहां, देवताओं के स्वामी, इंद्र, तीनों लोकों के शासक, छोटे प्राणियों के नेता की तरह बन गए, जो मधु के घड़े के चारों ओर बैठे हुए थे।

7.13.13

गुरूपदेशस्वाभ्यासात्स क्षीणावरणोऽभवत् महात्मा भावितान्तात्मा पूर्वापरविदां वरः ॥ १३ ॥

gurūpadeśasvābhāsātsa kṣīṇāvaraṇo'bhavat mahātmā bhāvitāntātmā pūrvāparavidāṃ varaḥ || 13 ||

Through the practice of the teachings of the guru, he became free from impurities, a great soul, purified in his inner self, and the best among those who know the past and the future.

गुरु के उपदेशों के अभ्यास से, वह दोषों से मुक्त हो गया, एक महान आत्मा, अपने अंतर्मन में शुद्ध, और भूत और भविष्य को जानने वालों में सबसे बढ़कर।

7.13.14

नारायणादिषु ततः कदाचिद्वीर्यशालिषु क्वचिदेव निलीनेषु सत्स्वेकः ससुराधिपः ॥ १४ ॥

nārāyaṇādiṣu tataḥ kadācidvīryaśāliṣu kvacideva nilīneṣu satsvekaḥ sasurādhipaḥ || 14 ||

Then, sometimes, among the powerful ones like Narayana and others, he alone, along with the king of the gods, remained hidden.

तब, कभी-कभी, नारायण जैसे शक्तिशाली लोगों में, वह अकेला, देवराज के साथ, छिपा रहा।

7.13.15

शस्त्रज्वालानलोद्भारैरयुध्यत महासुरैः विजितस्तैर्महावीर्यैरतो व्यद्रवदाद्रुतम् ॥ १५ ॥

śastrajvālānalodbhārairayudhyata mahāsuraiḥ vijitastairmahāvīryairato vyadravadādrutam || 15 ||

He fought with the great demons who had the power of weapon-flames, but was defeated by their great might and thus fled hurriedly.

वह शस्त्र-ज्वाला की शक्ति वाले महान असुरों से लड़ा, लेकिन उनकी महान शक्ति से पराजित होकर शीघ्रता से भाग गया।

7.13.16

दिशो दश सुवेगेन दुद्रावाभिद्रुतोऽरिभिः । न विश्रामास्पदं प्राप परलोक इवाधमः ॥ १६ ॥

diśo daśa suvegena dudrāvābhidruto'ribhiḥ | na viśrāmāspadaṃ prāpa paraloka ivādhamaḥ || 16 ||

In all ten directions, he fled swiftly, pursued by enemies | He found no place of rest, like the lowest in the other world || 16 ||

सभी दस दिशाओं में, वह तेजी से भागा, शत्रुओं द्वारा पीछा किया गया | उसने कोई विश्राम स्थान नहीं पाया, जैसे दूसरी दुनिया में निम्नतम व्यक्ति हो || 16 ||

7.13.17

तद्भान्तदृष्टिष्वरिषु मनाक् छिद्रमवाप्य सः । प्रशमं कायसंकल्पं नीत्वा स्वं स्वान्तरे बहिः ॥ १७ ॥

tadbhāntadṛṣṭiṣvarriṣu manāk chidramavāpya saḥ | praśamaṃ kāyasaṃkalpaṃ nītvā svaṃ svāntare bahiḥ || 17 ||

In the eyes of those who were afraid, he found a small opening | He calmed his body's resolve and took himself inside || 17 ||

डरे हुए लोगों की दृष्टि में, उसने एक छोटा सा खुला हुआ स्थान पाया | उसने अपने शरीर के संकल्प को शांत किया और अंदर चला गया || 17 ||

7.13.18

कमप्यर्कांशुकोशस्थं त्रसरेणुं विवेश सः । संविद्रूपतया पद्मकोशं मधुकरो यथा ॥ १८ ॥

kamapyarkāṃśukośasthaṃ trasareṇuṃ viveśa saḥ | saṃvidrūpatayā padmakośaṃ madhukaro yathā || 18 ||

He entered a trembling particle of sunlight contained in a ray | Like a bee entering a lotus, he took the form of consciousness || 18 ||

उसने एक कंपित सूर्य किरण के कण में प्रवेश किया | जैसे मधुमक्खी एक कमल में प्रवेश करती है, वह चेतना के रूप में प्रवेश किया || 18 ||

7.13.19

स तत्राशु विशश्राम चिरादाश्वासमाययौ । अथ विस्मृतसंग्रामो निवृत्तिं समुपागमत् ॥ १९ ॥

sa tatrāśu viśaśrāma cirādāśvāsamāyayau | atha vismṛtasaṃgrāmo nivṛttiṃ samupāgamat || 19 ||

He quickly rested there, regaining his breath after a long time | Then, forgetting the battle, he attained peace || 19 ||

वह वहाँ शीघ्र ही विश्राम करता है, लंबे समय के बाद अपनी सांस वापस लेता है | फिर, युद्ध को भूल कर, उसने शांति प्राप्त की || 19 ||

7.13.20

कल्पितं सद्म तत्राथ स क्षणादनुभूतवान् । तस्मिन्सद्मनि पद्मान्ते रेमे स्व इव विष्टरे ॥ २० ॥

kalpitaṃ sadma tatrātha sa kṣaṇādanubhūtavān | tasminsadmani padmānte reme sva iva viṣṭare || 20 ||

He then experienced a created abode there in an instant | In that abode, at the end of the lotus, he enjoyed as if on his own bed || 20 ||

फिर उसने एक क्षण में वहाँ एक निर्मित आश्रय अनुभव किया | उस आश्रय में, कमल के अंत में, वह अपने बिस्तर पर होने की तरह आनंद लेता है || 20 ||

7.13.21

गृहस्थः स ददर्शाथ कल्पितं नगरं हरिः । मणिमुक्ताप्रवालादिकृतप्राकारमन्दिरम् ॥ २१ ॥

gṛhasthaḥ sa dadarśātha kalpitaṃ nagaraṃ hariḥ | maṇimuktāpravālādikṛtaprākāramandiram || 21 ||

Then the householder, Hari, saw the imagined city, adorned with walls and palaces made of jewels, pearls, and coral.

फिर गृहस्थ हरि ने एक कल्पित नगर देखा, जिसके प्राकार और मन्दिर मणि, मुक्ता और प्रवाल से बने थे।

7.13.22

नगरान्तर्गतोऽपश्यत्ततो जनपदं हरिः । नानाद्रिग्रामगोवाटपत्तनारण्यराजितम् ॥ २२ ॥

nagarāntargato'paśyattato janapadaṃ hariḥ | nānādrigramagovāṭapattnāraṇyarājitam || 22 ||

Then Hari saw a countryside within the city, adorned with various mountains, villages, cow sheds, towns, and forests.

फिर हरि ने नगर के अंदर एक जनपद देखा, जो विभिन्न पर्वतों, गांवों, गौशालाओं, नगरों और वनों से सजा हुआ था।

7.13.23

ताद्दग्रतिश्चेतितवान्सशक्रो भुवनं ततः । साद्यब्ध्युर्वीनदीशान्तं सक्रियाकालकल्पनम् ॥ २३ ॥

tādṛgratiścetitavānsaśakro bhuvanaṃ tataḥ | sādryabdhyurvīnadīśāntaṃ sakriyākālakalpanam || 23 ||

Then, along with Indra, he created such a world, complete with oceans, mountains, rivers, and the passage of time.

तब, इंद्र के साथ, उसने ऐसा ही एक विश्व बनाया, जिसमें समुद्र, पर्वत, नदियाँ और समय का प्रवाह शामिल था।

7.13.24

ताद्दग्रतिश्चेतितवान्स शक्रस्त्रिजगत्ततः । सपातालमहीव्योमविष्टपार्कादिपर्वतम् ॥ २४ ॥

tādṛgratiścetitavān sa śakrastrijagattataḥ | sapātālamahīvyomaviṣṭapārkādiparvatam || 24 ||

Then, along with Indra, he created the three worlds, complete with the underworld, the earth, the sky, and the mountains.

तब, इंद्र के साथ, उसने तीनों लोकों की सृष्टि की, जिसमें पाताल, पृथ्वी, आकाश और पर्वत शामिल थे।

7.13.25

तत्रातिष्ठत्सुरेशत्वे स भोगभरभूषितः । पुत्रो बभूव तस्याथ कुन्दो नामाथ वीर्यवान् ॥ २५ ॥

tatrātiṣṭhatsureśatve sa bhogabharabhūṣitaḥ | putro babhūva tasyātha kundo nāmātha vīryavān || 25 ||

There, he established himself as the lord of the gods, adorned with the splendor of enjoyments. Then, he had a son named Kunda, who was very powerful.

वहाँ, उसने देवों के स्वामी के रूप में अपने आप को स्थापित किया, भोगों की शोभा से सजा हुआ। तब, उसका एक पुत्र हुआ जिसका नाम कुंड था, जो बहुत शक्तिशाली था।

7.13.26

ततो जीवितपर्यन्ते त्यक्त्वा देहमनिन्दितः । निर्वाणमाययौ शक्रो निःस्नेह इव दीपकः ॥ २६ ॥

tato jīvitaparyante tyaktvā dehamaninditaḥ | nirvāṇamāyayau śakro niḥsneha iva dīpakaḥ || 26 ||

Then, at the end of his life, the unblemished one, abandoning his body, attained Nirvana like a lamp without oil.

तब, जीवन के अंत में, निर्दोष व्यक्ति ने अपने शरीर को छोड़ दिया और तेल रहित दीपक की तरह निर्वाण प्राप्त किया।

7.13.27

कुन्दस्त्रैलोक्यराजोऽभूज्जनयित्वा सुतं निजम् । कालेन जीवितस्यान्ते जगाम परमं पदम् ॥ २७ ॥

kundastailokyarājo'bhūjjanayitvā sutaṃ nijam | kālena jīvitasyaante jagāma paramaṃ padam || 27 ||

Kunda, the king of the three worlds, having begotten his own son, at the end of his life, attained the supreme state.

कुन्द, तीनों लोकों के राजा, अपने पुत्र को जन्म देकर, जीवन के अंत में परम पद प्राप्त किया।

7.13.28

तत्पुत्रोऽपि तथैवाथ कृत्वा राज्ये सुतं निजम् । जगाम जीवितस्यान्ते पावनं परमं पदम् ॥ २८ ॥

tatputro'pi tathaivātha kṛtvā rājye sutaṃ nijam | jagāma jīvitasyaante pāvanaṃ paramaṃ padam || 28 ||

His son also, in the same manner, having established his own son in the kingdom, at the end of his life, attained the supreme purified state.

उसका पुत्र भी, उसी प्रकार, अपने पुत्र को राज्य में स्थापित करके, जीवन के अंत में परम पवित्र स्थिति प्राप्त किया।

7.13.29

एवं पौत्रसहस्राणि समतीतानि सुन्दर । तत्राद्यापि सुरेशस्य येषां राज्ये स्थितोंऽशकः ॥ २९ ॥

evaṃ pautrasahasrāṇi samatītāni sundara | tatrādyāpi sureśasya yeṣāṃ rājye sthitoṃ'śakaḥ || 29 ||

Thus, thousands of descendants have passed, O beautiful one, and even today, the share of the lord of the gods is established in their kingdom.

इस प्रकार, हजारों वंशज बीत चुके हैं, हे सुंदर, और आज भी, देवराज का हिस्सा उनके राज्य में स्थापित है।

7.13.30

इत्यद्ययावदमरेश्वरवंश एव संकल्पिते जगति शक्रपदं विधत्ते । तस्मिन्क्षतेऽपि गलितेऽपि हतेऽपि नष्टे क्वाप्यम्बरे दिनकरातपपावनाणौ ॥ ३० ॥

ityadyayāvadamareśvaravaṃśa eva saṃkalpite jagati śakrapadaṃ vidhatte | tasminkṣate'pi galite'pi hate'pi naṣṭe kvāpyambare dinakarātapapāvanāṇau || 30 ||

Thus, even today, the lineage of the lord of the gods continues to hold the position of Indra in this world. Even if it is diminished, dissolved, destroyed, or lost, the purifying sun remains somewhere in the sky.

इस प्रकार, आज भी, देवराज का वंश इस जगत में इंद्र का पद धारण करता है। चाहे वह घट जाए, विलीन हो जाए, नष्ट हो जाए या खो जाए, पवित्र सूर्य आकाश में कहीं न कहीं बना रहता है।

Chapter 14

7.14.1

भुशुण्ड उवाच । तस्य शक्रस्य कुलजः कश्चिदासीत्सुराधिपः । तत्रोत्तमगुणः श्रीमान्पाश्चात्या यस्य सा तनुः ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | tasya śakrasya kulajaḥ kaścidāsītsurādhipaḥ | tatrottamaguṇaḥ śrīmānpāścātyā yasya sā tanuḥ || 1 ||

Bhushunda said: There was a certain king in the lineage of Indra, who was the lord of the gods. He had excellent qualities and his body was western.

भुशुण्ड ने कहा: इन्द्र के वंश में एक राजा था, जो देवताओं का स्वामी था। उसके गुण उत्तम थे और उसका शरीर पश्चिमी था।

7.14.2

अथेन्द्रकुलपुत्रस्य तस्य तत्र बभूव ह । प्रतिभाज्ञानसंप्राप्तिर्बृहस्पतिगिरोदिता ॥ २ ॥

athendrakulaputrasya tasya tatra babhūva ha | pratibhājñānasamprāptirbṛhaspatigiroditā || 2 ||

Then, in the lineage of Indra, he obtained knowledge and intelligence as declared by Brihaspati.

तदनन्तर, इन्द्र के वंश में, उसने बृहस्पति द्वारा घोषित ज्ञान और बुद्धि प्राप्त की।

7.14.3

ततो विदितवेद्योऽसौ यथाप्राप्तानुवृत्तिमान् । चकार जगतां राज्यमाज्यपानामधीश्वरः ॥ ३ ॥

tato viditavedyo'sau yathāprāptānuvṛttimān | cakāra jagatāṃ rājyamājyapānāmadhīśvaraḥ || 3 ||

Then, having known the knowable, he acted according to the obtained knowledge and established the kingdom of the world as the lord of the sacrifices.

तदनन्तर, ज्ञान प्राप्त करने के बाद, उसने प्राप्त ज्ञान के अनुसार कार्य किया और यज्ञों का स्वामी बनकर संसार के राज्य की स्थापना की।

7.14.4

युयुधे दानवैः सार्धमजयत्सर्वशात्रवान् । शतं चकार यज्ञानामज्ञानोत्तीर्णमानसः ॥ ४ ॥

yuyudhe dānavaiḥ sārdhamajayatsarvaśātravān | śataṃ cakāra yajñānāmajñānottīrṇamānasaḥ || 4 ||

He fought with the demons and conquered all enemies. He performed a hundred sacrifices with a mind free from ignorance.

उसने दानवों से युद्ध किया और सभी शत्रुओं को पराजित किया। उसने अज्ञान से मुक्त मन से सौ यज्ञ किए।

7.14.5

उवास कार्यवशतो बिसबालान्तरे चिरम् । अन्यान्यपि च वृत्तान्तशतान्यनुबभूव ह ॥ ५ ॥

uvāsa kāryavaśato bisabālāntare ciram | anyānyapi ca vṛttāntaśatānyanubabhūva ha || 5 ||

He stayed for a long time in the midst of the forest due to his duties. He experienced many other events as well.

उसने अपने कार्यों के कारण वन में लंबे समय तक रहा। उसने अन्य कई घटनाओं का भी अनुभव किया।

7.14.6

कदाचिदासीत्तस्येच्छा प्रबोधबलशालिनःब्रह्मतत्त्वमवेक्षेऽहं यथावद्ध्यानवानिति ॥ ६ ॥

kadācidāsīttasyecchā prabodhabalaśālinaḥbrahmatattvamavekṣe'haṃ yathāvaddhyānavāniti || 6 ||

Once, there arose a desire in him, who was endowed with the power of awakening, to contemplate the true nature of Brahman, as he was engaged in deep meditation.

एक बार, उसमें जो जागरूकता की शक्ति से युक्त था, एक इच्छा उत्पन्न हुई कि वह ब्रह्म के सच्चे स्वरूप पर ध्यान करे, जैसे वह गहरी ध्यान में लगा हुआ था।

7.14.7

सोऽपश्यत्प्रणिधानेन तत एकान्तसंस्थितःसबाह्याभ्यन्तरेऽशेषकारणत्यागशान्तधीः ॥ ७ ॥

so'paśyatpraṇidhānena tata ekāntasaṃsthitaḥsabāhyābhyantare'śeṣakāraṇatyāgaśāntadhīḥ || 7 ||

Then, by his resolve, he saw that which is established in solitude, with a mind peaceful due to the renunciation of all external and internal causes.

तब, अपने संकल्प से, उसने उसे देखा जो एकान्त में स्थित है, जिसका मन बाहरी और आंतरिक सभी कारणों के त्याग से शांत है।

7.14.8

सर्वशक्तिपरं ब्रह्म सर्ववस्तुमयं ततम्सर्वथा सर्वदा सर्वं सर्वैः सर्वत्र सर्वगम् ॥ ८ ॥

sarvaśaktiparaṃ brahma sarvavastumayaṃ tatamsarvathā sarvadā sarvaṃ sarvaiḥ sarvatra sarvagam || 8 ||

Brahman, the supreme power, pervades all things, in all ways, at all times, everywhere, and is omnipresent.

ब्रह्म, परम शक्ति, सभी वस्तुओं में व्याप्त है, सभी तरीकों से, सभी समय में, हर जगह, और सर्वव्यापी है।

7.14.9

सर्वतः पाणिपादान्तं सर्वतोक्षिशिरोमुखम्सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य संस्थितम् ॥ ९ ॥

sarvataḥ pāṇipādāntaṃ sarvatokṣiśiromukhamsarvataḥ śrutimalloke sarvamāvṛtya saṃsthitam || 9 ||

With hands and feet everywhere, with eyes, heads, and faces everywhere, with ears everywhere, it envelops the entire world.

हाथ और पैर हर जगह, आँखें, सिर, और चेहरे हर जगह, कान हर जगह, यह पूरे संसार को घेरे हुए है।

7.14.10

सर्वेन्द्रियगुणैर्मुक्तं सर्वेन्द्रियगुणान्वितमसक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥ १० ॥

sarvendriyaguṇairmuktaṃ sarvendriyaguṇānvitamasaktaṃ sarvabhṛccaiva nirguṇaṃ guṇabhoktṛ ca || 10 ||

It is free from all sense qualities, yet it possesses all sense qualities. It is unattached, the supporter of all, without qualities, and the enjoyer of qualities.

यह सभी इंद्रिय गुणों से मुक्त है, फिर भी यह सभी इंद्रिय गुणों से युक्त है। यह अनासक्त है, सभी का आधार है, गुणों से रहित है, और गुणों का भोक्ता है।

7.14.11

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च। सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥ ११ ॥

bahirantaśca bhūtānāmacaraṃ caramaeva ca | sūkṣmatvāttadavijñeyaṃ dūrasthaṃ cāntike ca tat || 11 ||

Both outside and inside all beings, moving and unmoving, due to its subtlety, it is imperceptible, both far and near.

बाहर और अंदर सभी प्राणियों में, चल और अचल, अपनी सूक्ष्मता के कारण, वह अज्ञेय है, दूर और पास दोनों में।

7.14.12

सर्वत्र चन्द्रार्कमयं सर्वत्रैव धरामयम्। सर्वत्र पर्वतमयं सर्वत्राब्धिमयं तथा ॥ १२ ॥

sarvatra candrārkamayaṃ sarvatraiva dharāmayam | sarvatra parvatamayaṃ sarvatrābdhimayaṃ tathā || 12 ||

Everywhere is the essence of the moon and the sun, everywhere is the essence of the earth, everywhere is the essence of the mountains, and everywhere is the essence of the ocean.

हर जगह चंद्रमा और सूर्य का सार है, हर जगह पृथ्वी का सार है, हर जगह पर्वत का सार है, और हर जगह समुद्र का सार है।

7.14.13

सर्वत्र सारगुरुकं सर्वत्रैव नभोमयम्। सर्वत्र संसृतिमयं सर्वत्रैव जगन्मयम् ॥ १३ ॥

sarvatra sāragurukam sarvatraiva nabhomayam | sarvatra saṃsṛtimayam sarvatraiva jagannayam || 13 ||

Everywhere is the essence of the guru, everywhere is the essence of the sky, everywhere is the essence of the cycle of life, and everywhere is the essence of the universe.

हर जगह गुरु का सार है, हर जगह आकाश का सार है, हर जगह जीवन के चक्र का सार है, और हर जगह ब्रह्मांड का सार है।

7.14.14

सर्वत्रैव च मोक्षात्म सर्वत्रैवाद्यचिन्मयम्। सर्वत्र सर्वार्थमयं सर्वतः सर्ववर्जितम् ॥ १४ ॥

sarvatraiva ca mokṣātma sarvatraivādyacinmayam | sarvatra sarvārthamayam sarvataḥ sarvavarjitam || 14 ||

Everywhere is the essence of liberation, everywhere is the essence of the primordial consciousness, everywhere is the essence of all meanings, and everywhere is devoid of all.

हर जगह मोक्ष का सार है, हर जगह आदि चेतना का सार है, हर जगह सभी अर्थों का सार है, और हर जगह सभी से रहित है।

7.14.15

घटे पटे वटे कुड्ये शकटे वानरे तथा। धाम्नि व्योम्नि तरावद्रावनिले सलिलेऽनले ॥ १५ ॥

ghaṭe paṭe vaṭe kuḍye śakaṭe vānare tathā | dhāmni vyomni tarāvadrāvanile salile'nale || 15 ||

In a pot, cloth, banyan tree, wall, cart, monkey, in a home, sky, stars, clouds, wind, water, and fire.

घड़े, कपड़े, बरगद के पेड़, दीवार, गाड़ी, बंदर, घर, आकाश, तारों, बादलों, हवा, पानी, और आग में।

7.14.16

नानाचारविचाराणि विविधावृत्तिमन्ति च। परमाण्वंशमात्रेऽपि त्रिजगन्ति ददर्श सः ॥ १६ ॥

nānācāravicārāṇi vividhāvṛttimanti ca | paramāṇvaṃśamātre'pi trijaganti dadarśa saḥ || 16 ||

He saw the three worlds, with their diverse customs and thoughts, even in the smallest particle.

उसने सबसे छोटे कण में भी अपने विविध व्यवहार और विचारों के साथ तीनों लोकों को देखा।

7.14.17

मरिचस्यान्तरे तैक्ष्ण्यं शून्यत्वमिव चाम्बरे। त्रिजगत्सत्यसति च विद्यते चिन्मयात्मनि ॥ १७ ॥

maricasya'ntare taikṣṇyaṃ śūnyatvamiva cāmbare | trijagatsatyasati ca vidyate cinmayātmani || 17 ||

Just as the pungency of black pepper is perceived in its absence, and emptiness is perceived in the sky, the three worlds exist in the pure consciousness, whether they are real or unreal.

जैसे काली मिर्च की तीखी गंध उसके अभाव में भी महसूस होती है, और आकाश में शून्यता का अनुभव होता है, वैसे ही तीनों लोक शुद्ध चेतना में अस्तित्व रखते हैं, चाहे वे सत्य हों या असत्य।

7.14.18

इत्येवं भावयन्मुक्तभावया शुद्धसंविदा । शक्रः क्रमेण तेनैव तथैव ध्यानवानभूत् ॥ १८ ॥

ityevaṃ bhāvayanmuktabhāvayā śuddhasaṃvidā | śakraḥ krameṇa tenaiva tathaiva dhyānavānabhūt || 18 ||

Thus, meditating with a liberated mind and pure consciousness, Indra gradually became absorbed in meditation.

इस प्रकार, मुक्त मन और शुद्ध चेतना के साथ ध्यान करते हुए, इंद्र धीरे-धीरे ध्यान में डूब गए।

7.14.19

ध्यानेन सर्वमेकत्र पश्यंश्चिरमुदारधीः । ददर्शेममसौ सर्गमस्मदीयं महामतिः ॥ १९ ॥

dhyānena sarvamekatra paśyaṃściramudāradhīḥ | dadarśemamasau sargamasmadīyaṃ mahāmatiḥ || 19 ||

Through meditation, the wise one saw everything as one and, after a long time, perceived this creation as his own.

ध्यान के द्वारा, बुद्धिमान ने सब कुछ एक में देखा और लंबे समय के बाद, इस सृष्टि को अपना माना।

7.14.20

ततोऽस्मिन्विचरन्सर्गे शक्रान्ते शक्रतां गतः । चकार राजतां राज्यं वृत्तान्तशतशोभितम् ॥ २० ॥

tato'sminvicaransarge śakrānte śakratāṃ gataḥ | cakāra rājatāṃ rājyaṃ vṛttāntaśataśobhitam || 20 ||

Then, wandering in this creation, Indra, having attained the state of Indra, established a kingdom adorned with hundreds of stories.

फिर, इस सृष्टि में भटकते हुए, इंद्र, इंद्र की अवस्था प्राप्त करके, सैकड़ों कहानियों से सजे एक राज्य की स्थापना की।

7.14.21

विद्याधरकुलाधीश इत्यद्यैव स देवराड् । तस्येन्द्रस्य कुलोत्पन्न इति विद्धि यथास्थितम् ॥ २१ ॥

vidyādharakulādhīśa ityadyaiva sa devarāḍ | tasyendrasya kulotpanna iti viddhi yathāsthitam || 21 ||

The lord of the Vidyadhara clan, known as Devaraja, is indeed the same today | Understand that he is born from the lineage of that Indra, as it truly is || 21 ||

विद्याधर कुल के अधीश, जिन्हें देवराज कहा जाता है, वह आज भी वही हैं | उस इन्द्र के कुल से उत्पन्न है, इसे ठीक से समझो || २१ ||

7.14.22

ततो हृदयबीजस्थप्राङ्मुख्याभ्यासयोगतः । बिसबालनिवासादिवृत्तान्तमनुभूतवान् ॥ २२ ॥

tato hṛdayabījasthaprāṅmukhyābhyāsayogataḥ | bisabālanivāsādivṛttāntamanubhūtavān || 22 ||

Then, through the practice of facing east with the heart's seed, he experienced the story of living in Bisabala and other events || 22 ||

तब, हृदय के बीज के साथ पूर्व दिशा की ओर मुख करके अभ्यास करने से, उसने बिसबाल में रहने और अन्य घटनाओं की कहानी का अनुभव किया || २२ ||

7.14.23

यथैष शक्रः कथितस्त्रसरेणूदरास्पदः । बिसबालास्पदश्चैतत्कुलजः कान्तिमानथ ॥ २३ ॥

yathaiṣa śakraḥ kathitastrasareṇūdarāspadaḥ | bisabālāspadaścaitatkulajaḥ kāntimānatha || 23 ||

Just as this Indra is said to be the abode of the essence of fear, so too is this abode of Bisabala, born from the lineage, radiant || 23 ||

जैसे यह इन्द्र भय की सार का आश्रय कहा जाता है, वैसे ही यह बिसबाल का आश्रय है, कुल से उत्पन्न, चमकदार || २३ ||

7.14.24

तथा शतसहस्राणि तत्रेतश्चान्यतश्च खे । तादृशव्यवहाराणि समतीतानि सन्ति च ॥ २४ ॥

tathā śatasahasrāṇi tatretaścānyataśca khe | tādṛśavyavahārāṇi samatītāni santi ca || 24 ||

Similarly, hundreds of thousands of such interactions have occurred there and elsewhere in the sky, and they continue to exist || 24 ||

इसी प्रकार, हजारों ऐसे व्यवहार वहाँ और आकाश में अन्य स्थानों पर हुए हैं, और वे अभी भी मौजूद हैं || २४ ||

7.14.25

वहतीयमविच्छिन्ना चिरायैवं तरङ्गिणी । तावदृश्यसरित्प्रौढा रूढारूढे च तत्पदे ॥ २५ ॥

vahatīyamavicchinnā cirāyaivaṃ taraṅgiṇī | tāvadṛśyasaritprauḍhā rūḍhārūḍhe ca tatpade || 25 ||

This unbroken, ever-flowing river of time continues to flow for a long time, becoming more and more profound in its established path || 25 ||

यह अविच्छिन्न, सदा बहती समय की नदी लंबे समय तक बहती रहती है, अपने स्थापित मार्ग में और अधिक गहरी होती जाती है || २५ ||

7.14.26

इति मायेयमादीर्घा प्रसृता प्रत्ययोन्मुखी । सत्यावलोकमात्रातिविलयैकविलासिनी ॥ २६ ॥

iti māyeyamādīrghā prasṛtā pratyayonmukhī | satyāvalokamātrātivilayaikavilāsinī || 26 ||

Thus, this illusion (māyā) is long-lasting and expansive, directed towards impressions, and its sole delight is in the dissolution that comes from merely glancing at the truth.

इस प्रकार, यह माया लंबी और विस्तृत है, संस्कारों की ओर मुड़ी हुई है, और इसका एकमात्र आनंद सत्य के एक नज़र डालने से होने वाले विलयन में है।

7.14.27

यतः कुतश्चिन्मायेयं यत्र क्वचन वानघ । यथाकथचित्संपन्नमात्रैव परिदृश्यते ॥ २७ ॥

yataḥ kutaścinmāyeyaṃ yatra kvacana vānagha | yathākathacitsaṃpannamātraiva paridṛśyate || 27 ||

From wherever this illusion arises, wherever it may be, O sinless one, it is seen as merely having come into existence in some way or another.

जहाँ से भी यह माया उत्पन्न होती है, जहाँ भी हो, हे निष्पाप, यह केवल किसी तरह से अस्तित्व में आई हुई दिखाई देती है।

7.14.28

अहंभावचमत्कारमात्रादृष्टरिवाम्बुदात् । जायते मिहिकेवाशु प्रेक्षामात्रविनाशिनी ॥ २८ ॥

ahaṃbhāvacamatkāramātrādṛṣṭarivāmbudāt | jāyate mihikevāśu prekṣāmātravināśinī || 28 ||

Like a cloud that appears from the mere sight of wonder at the sense of 'I', it arises quickly like a mirage and is destroyed by mere observation.

जैसे एक बादल जो अहं भाव के चमत्कार के दर्शन से ही प्रकट होता है, वैसे ही यह तेजी से मृगतृष्णा की तरह उत्पन्न होती है और केवल देखने से ही नष्ट हो जाती है।

7.14.29

येनायताभिमतदर्शनद्रष्टृदृश्यमुक्तस्वभावमवभासनमात्मतत्त्वम्। सर्वार्थशून्यमत एव च शून्यरूपमेकं खमात्रमिव मात्रविकल्पमेव ॥ २९ ॥

yenāyatābhimatadarśanadraṣṭṛdṛśyamuktasvabhāvamavabhāsanamātmatattvam | sarvārthaśūnyamata eva ca śūnyarūpamekaṃ khamātramiva mātravikalpameva || 29 ||

By which the desired vision, the seer, and the seen are revealed as having the nature of liberation, that is the essence of the self. It is devoid of all meanings and thus has the form of emptiness, like the mere sky, merely a conceptual construct.

जिससे इच्छित दर्शन, द्रष्टा और दृश्य मुक्त स्वभाव के रूप में प्रकट होते हैं, वह आत्मतत्त्व है। यह सभी अर्थों से शून्य है और इसलिए शून्य रूप धारण करता है, जैसे केवल आकाश, केवल एक कल्पना।

Chapter 15

7.15.1

भुशुण्ड उवाच । यत्राहंत्वं जगत्तत्र पूर्वमागत्य तिष्ठति । पराण्वन्तरपीन्द्रस्य त्रसरेणूदरे यथा ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | yatrāhaṃtvaṃ jagattatra pūrvamāgatya tiṣṭhati | parāṇvantarapīndrasya trasareṇūdare yathā || 1 ||

Bhushunda said: Wherever the sense of 'I' exists, the world exists there, having come before and remaining, like the subtle, intermediate, and gross bodies within the minute particle of the universe.

भुशुण्ड ने कहा: जहाँ 'मैं' का भाव है, वहाँ संसार है, पहले आकर और रहते हुए, जैसे सूक्ष्म, मध्यम और स्थूल शरीर अणु के अंदर हैं।

7.15.2

भ्रमस्य जागतस्यास्य जातस्याकाशवर्णवत् । अहंभावोऽभिमन्तात्मा मूलमाद्यमुदाहृतम् ॥ २ ॥

bhramasya jāgatasyāsya jātasyākāśavarṇavat | ahaṃbhāvo'bhimantātmā mūlamādyamudāhṛtam || 2 ||

The illusion of this moving world, which has arisen like the color of the sky, is said to have the sense of 'I' as its root cause, which is the abhimana (ego) of the self.

इस चल संसार का भ्रम, जो आकाश के रंग की तरह उत्पन्न हुआ है, 'मैं' के भाव को अपना मूल कारण माना जाता है, जो आत्मा का अभिमान (अहंकार) है।

7.15.3

वासनारससंसिक्तादहंबीजकणादयम् । ब्रह्माद्रौ व्योमविपिने जायते त्रिजगद्द्रुमः ॥ ३ ॥

vāsanārasasaṃsiktādahaṃbījakaṇādayam | brahmādrau vyomavipine jāyate trijagaddrumaḥ || 3 ||

From the seed of 'I' (ahambija) imbued with the essence of desires (vasana), the tree of the three worlds (trijagat) arises in the vast sky of Brahman.

वासना के रस से सिक्त 'मैं' के बीज से, ब्रह्म के व्योम में तीनों लोकों का वृक्ष उत्पन्न होता है।

7.15.4

तारकापुष्पनिकरो विलीनाचलपल्लवः । सरित्सारशिरापूरो वासनासारतत्फलः ॥ ४ ॥

tārakāpuṣpanikaro vilīnācalapallavaḥ | saritsāraśirāpūro vāsanāsāratatphalaḥ || 4 ||

The tree of the three worlds is adorned with the flowers of stars, its branches are the dissolved mountains, its rivers are the veins, and its fruits are the essences of desires.

तीनों लोकों का वृक्ष तारों के फूलों से सजा है, इसकी डालें विलीन पर्वत हैं, इसकी नदियाँ नसें हैं, और इसके फल वासनाओं के सार हैं।

7.15.5

अहंत्वसलिलस्येदं जगत्स्पन्द उदाहृतः । चिञ्चमत्करणस्वादुर्वासनाविसरद्रवः ॥ ५ ॥

ahaṃtvasalilasyedaṃ jagatspanda udāhṛtaḥ | ciñcamatkaraṇasvādurvāsanāvisaradravaḥ || 5 ||

This world is said to be the vibration of the water of the sense of 'I', which is the sweet juice of the play of consciousness, flowing from desires.

यह संसार 'मैं' के भाव के जल का स्पंदन कहा जाता है, जो चेतना के लीला का मधुर रस है, जो वासनाओं से प्रवाहित होता है।

7.15.6

तारकासीकरासारो नभोनन्तनिखातवान्। भावाभावमहावर्तो नानागिरितरङ्गकः ॥ ६ ॥

tārakāsīkarāsāro nabhonantanikhātavān | bhāvābhāvamahāvarto nānāgiritaranggakaḥ || 6 ||

The essence of the stars, the ocean of the sky, the great whirlpool of existence and non-existence, the waves of various mountains.

तारों का सार, आकाश का समुद्र, अस्तित्व और अनस्तित्व का महान भँवर, विविध पर्वतों की लहरें।

7.15.7

त्रिलोकीविलिखल्लेखो विलोलालोकफेनिलः। ब्रह्माण्डबुद्बुदोद्भेदः कवाटापीडपीवरः ॥ ७ ॥

trilokīvilikhallēkhō vilolālōkaphēnilaḥ | brahmāṇḍabudbudōdbhēdaḥ kavāṭāpīḍapīvaraḥ || 7 ||

The inscription of the three worlds, the foam of the swaying universe, the bubbles of the cosmos, the swelling of the door panels.

तीनों लोकों का अंकन, लहराते ब्रह्मांड का फेन, ब्रह्मांड के बुलबुले, दरवाजे की सूजन।

7.15.8

भूपीठदृढडिण्डीरपिण्डश्चिद्घनमद्गुमान्। चित्राजवं जवीभावमज्जनोन्मज्जनात्मकः ॥ ८ ॥

bhūpīṭhadṛḍhaḍiṇḍīrapiṇḍaściddhanamadgumān | citrājavaṃ javībhāvamajjanōnmjjjanātmakaḥ || 8 ||

The firm foundation of the earth, the lump of consciousness, the treasure of pride, the diverse speeds, the nature of immersion and emergence.

पृथ्वी का मजबूत आधार, चेतना का ढेर, अभिमान का खजाना, विविध गतियाँ, डूबने और उभरने का स्वभाव।

7.15.9

जरामरणमोहादिवीचीचयचमत्कृतिः। उत्पन्नध्वंसिदेहादिबिन्दुवृन्दैकबन्धुरः ॥ ९ ॥

jarāmaraṇamōhādivīcīcayacamatkṛtiḥ | utpannadhvaṃsidēhādibinduvṛndaikabandhuraḥ || 9 ||

The astonishing array of old age, death, delusion, etc., the single cluster of dots of the born and the destroyed bodies, etc.

बुढ़ापा, मृत्यु, भ्रम, आदि का चकित कर देने वाला विस्तार, उत्पन्न और नष्ट शरीरों का एक गुच्छा।

7.15.10

अहंत्वपवनस्पन्दो जगदित्यवगम्यताम्। अहंत्वपद्मसौगन्ध्यं जगदित्यवबुध्यताम् ॥ १० ॥

ahaṃtvapavanaspaṃdō jagadityavagamyatām | ahaṃtvapadmasaugandhyaṃ jagadityavabudhyatām || 10 ||

The pulsation of the wind of ego, let the world be understood thus, the fragrance of the lotus of ego, let the world be realized thus.

अहंकार की हवा की धड़कन, संसार को ऐसे समझा जाए, अहंकार के कमल की सुगंध, संसार को ऐसे समझा जाए।

7.15.11

नाहंत्वजगती भिन्ने पवनस्पन्दवत्सदा। पयो द्रवत्वमिव च वह्निरौष्ण्यमिवापि च ॥ ११ ॥

nāhaṃtvajagatī bhinne pavanaspadavatsadā | payo dravatvamiva ca vahnirauṣṇyamivāpi ca || 11 ||

I am not different from the world, just as the wind is always in motion, water is always fluid, and fire is always hot.

मैं जगत से भिन्न नहीं हूँ, जैसे वायु हमेशा स्पंदित होती है, पानी हमेशा द्रव होता है, और अग्नि हमेशा गर्म होती है।

7.15.12

जगदस्त्यहमर्थेऽन्तरहमस्ति जगद्धृदि। अन्योन्यभाविनी त्वेते आधाराधेयवत्स्थिते॥ १२॥

jagadastyahamarte'ntarahamasti jagaddhṛdi | anyonyabhāvinī tvetē ādhārādheyavatsthitē || 12 ||

The world exists within me, and I exist within the world. These two are mutually dependent, like a support and that which is supported.

जगत मेरे अंदर है, और मैं जगत के अंदर हूँ। ये दोनों परस्पर निर्भर हैं, जैसे आधार और आधेय।

7.15.13

जगद्बीजमहंत्वं यो मार्ष्टि वोधादवेदनात्। अलं चित्रं जलेनेव तेन धौतं जगन्मलम्॥ १३॥

jagadbījamahantvaṃ yo mārṣṭi vodhādavedanāt | alaṃ citraṃ jaleneva tena dhautaṃ jagannmalam || 13 ||

The one who cleanses the impurities of the world through the knowledge of the self as the seed of the world, that person makes the world pure like water cleanses dirt.

जो व्यक्ति आत्मा को जगत के बीज के रूप में जानकर जगत की मलिनता को धो देता है, वह व्यक्ति जगत को पानी की तरह शुद्ध करता है।

7.15.14

अर्हत्वं नाम तत्किंचिद्विद्याधर न विद्यते। अकारणमवस्तुत्वाच्छशशृङ्गमिवोदितम्॥ १४॥

arhatvaṃ nāma tatkiñcidvidyādhara na vidyate | akāraṇamavastutvācchaśaśṛṅgamivoditam || 14 ||

There is no such thing as worthiness, O Vidyadhara. It is said to be non-existent, like the horns of a hare, because it lacks a cause.

हे विद्याधर, योग्यता नाम कोई ऐसी चीज नहीं है। यह असत्य है, जैसे खरगोश के सींग, क्योंकि इसमें कारण की कमी है।

7.15.15

ब्रह्मण्यतिततेऽनन्ते संकल्पोल्लेखवर्जिते। अहंत्वकारणाभावान्न कदाचन सन्मयम्॥ १५॥

brahmaṇyatitatē'nanantē saṃkalpollēkhavarjitē | ahaṃtvakāraṇābhāvānna kadācana sanmayam || 15 ||

In the infinite Brahman, which is beyond all concepts and descriptions, there is no cause for the sense of 'I'. Therefore, it never truly exists.

अनंत ब्रह्म में, जो सभी कल्पनाओं और वर्णनों से परे है, 'मैं' की भावना का कोई कारण नहीं है। इसलिए, यह कभी वास्तव में अस्तित्व में नहीं है।

7.15.16

अवस्तुन्येति सर्गादौ न संभवति कारणम्। अतोऽहंत्वादि नास्त्वेववन्ध्यासुत इव क्वचित्॥ १६॥

avastunyeti sargādau na saṃbhavati kāraṇam| ato'haṃtvādi nāstvevavandhyāsuta iva kvacit|| 16 ||

In the beginning of creation, there is no cause for the non-existent| Therefore, the sense of 'I' does not exist, like a barren woman's son|| 16 ||

सृष्टि के आरंभ में, अवास्तविक का कोई कारण नहीं होता| इसलिए, 'मैं' की भावना भी नहीं होती, जैसे बाँझ औरत का बेटा|| १६ ||

7.15.17

तदभावाज्जगन्नास्ति चित्त्वं जगदभावतः। शिष्टं निर्वाणमेवातः शान्तमास्व यथासुखम्॥ १७॥

tadabhāvājjagannāsti cittvaṃ jagadabhāvataḥ| śiṣṭaṃ nirvāṇamevātaḥ śāntamāssva yathāsukham|| 17 ||

Due to the absence of that, the world does not exist| Consciousness does not exist due to the absence of the world| Therefore, what remains is only liberation| Be peaceful as you wish|| 17 ||

उसके अभाव से जगत नहीं होता| चेतना भी जगत के अभाव से नहीं होती| इसलिए, जो बचता है वह केवल मोक्ष है| अपनी इच्छा अनुसार शांत रहो|| १७ ||

7.15.18

अभावादुपपत्तिस्थादेवं जगदहंत्वयोः। रूपालोकमनस्काराः शान्तास्तव न चेतरत्॥ १८॥

abhāvādupapattisthādevaṃ jagadahaṃtvayoḥ| rūpālokamanaskārāḥ śāntāstava na cetarat|| 18 ||

From the absence, the existence of the world and the sense of 'I' is established| The forms, perceptions, and mental impressions are peaceful for you, not otherwise|| 18 ||

अभाव से, जगत और 'मैं' की भावना की स्थिति होती है| रूप, प्रत्यक्ष, और मानसिक संस्कार आपके लिए शांत हैं, दूसरे नहीं|| १८ ||

7.15.19

यन्नास्ति तत्तु नास्त्येव शेषं शान्तमसि धुवम्। संप्रबुद्धोऽसि मा भूयो निर्मलां भ्रान्तिमाहर॥ १९॥

yannāsti tattu nāstyeva śeṣaṃ śāntamasi dhuvam| saṃprabuddho'si mā bhūyo nirmalāṃ bhrāntimāhara|| 19 ||

That which does not exist, truly does not exist| The rest is peaceful, you are certainly peaceful| You are awakened, do not bring back the pure delusion|| 19 ||

जो नहीं है, वह वास्तव में नहीं है| शेष शांत है, आप निश्चित रूप से शांत हैं| आप जागृत हैं, शुद्ध भ्रांति को वापस न लाएं|| १९ ||

7.15.20

व्यपगतकलनाकलङ्कशुद्धः शिवमसि शान्तमसीश्वरोऽसि नित्यः। स्वमपि भवति पर्वतोपमानं जगदपि वा परमाणुरूपमेव॥ २०॥

vyapagatakalanākalaṅkaśuddhaḥ śivamasi śāntamasiśvaro'si nityaḥ| svamapi bhavati parvatopamānaṃ jagadapi vā paramāṇurūpameva|| 20 ||

Free from the blemish of imagination, you are pure, auspicious, peaceful, the lord, and eternal| Even the self becomes like a mountain, or the world becomes like an atom|| 20 ||

कल्पना के दोष से मुक्त, आप शुद्ध, शिव, शांत, ईश्वर, और नित्य हैं| स्वयं भी पर्वत के समान हो जाता है, या जगत भी परमाणु के समान हो जाता है|| २० ||

Chapter 16

7.16.1

भुशुण्ड उवाच । कथयत्येवमप्येवं स विद्याधरनायकः । आसीत्संशान्तसंवित्तिः समाधिपरिणामवान् ॥ १ ॥

bhushuṇḍa uvāca | kathayatyevamapyevaṃ sa vidyādharanāyakaḥ | āsītsaṃśāntasaṃvittiḥ samādhipariṇāmavān || 1 ||

Bhushunda said: Even after narrating thus, that leader of the Vidyadharas remained in a state of tranquil consciousness, absorbed in the transformations of samadhi.

भुशुण्ड ने कहा: इस प्रकार कहने के बावजूद, वह विद्याधर नायक शांत चेतना में रहा, समाधि के परिणामों में डूबा हुआ।

7.16.2

प्रबोध्यमानोऽपि मया भूयोभूयस्ततस्ततः । न पपात पुरोदृश्ये परं निर्वाणमागतः ॥ २ ॥

prabodhyamāno'pi mayā bhūyobhūyastatastataḥ | na papāta purodṛśye paraṃ nirvāṇamāgataḥ || 2 ||

Even though I tried to awaken him repeatedly, he did not fall into the visible world, having attained the ultimate nirvana.

मैंने उसे बार-बार जगाने की कोशिश की, लेकिन वह दृश्य जगत में नहीं गिरा, क्योंकि उसने परम निर्वाण प्राप्त कर लिया था।

7.16.3

स प्राप परम स्थानं तावन्मात्रप्रबोधवान् । केनचिन्नाधिकेनाङ्ग यत्नेनातिशयैषिणा ॥ ३ ॥

sa prāpa parama sthānaṃ tāvanmātraprabodhavān | kenacinnādhikenaṅga yatnenātiśayaiṣiṇā || 3 ||

He attained the ultimate state with just a little awakening, not by any excessive effort, O friend, seeking supreme excellence.

वह थोड़े से जागरण के साथ परम स्थिति को प्राप्त हुआ, किसी अतिरिक्त प्रयास के बिना, हे मित्र, जो उत्कृष्टता की खोज कर रहा था।

7.16.4

अत उक्तं मया राम यदि शुद्धे हि चेतसि । उपदेशः प्रसरति तैलबिन्दुरिवाम्भसि ॥ ४ ॥

ata uktam mayā rāma yadi śuddhe hi cetasi | upadeśaḥ prasarati tailabindurivāmbhasi || 4 ||

Therefore, I say to you, O Rama, if the mind is pure, then the teaching spreads like a drop of oil in water.

इसलिए, मैं तुमसे कहता हूँ, हे राम, यदि मन शुद्ध है, तो उपदेश पानी में तेल की बूँद की तरह फैलता है।

7.16.5

नाहमित्यस्ति ते नान्तर्मैनं भावय शान्तये । एतावदुपदेशोक्तिः परमा नेतरास्ति हि ॥ ५ ॥

nāhamityasti te nāntarmainaṃ bhāvaya śāntaye | etāvadupadeśoktiḥ paramā netarāsti hi || 5 ||

There is no 'I' in you, nor is there any difference. Meditate on me for peace. This much is the ultimate teaching; there is no other.

तुममें कोई 'मैं' नहीं है, न ही कोई अंतर है। शांति के लिए मुझ पर ध्यान करो। यही परम उपदेश है; इसके अलावा कोई नहीं है।

7.16.6

एषैवाभव्यमनसि पतिता प्रविलीयतेउत्ताने मसृणादर्शे मुक्ताफलमिवामलम् ॥ ६ ॥

eṣaivābhavyamanasi patitā pravilīyateuttāne masṛṇādarśe muktāphalamivāmalam || 6 ||

This very impurity, having fallen into the mind, dissolves, like a spotless pearl in a smooth mirror.

यही अशुद्धि, मन में गिरकर, घुल जाती है, जैसे एक निर्मल मोती चिकने दर्पण में घुल जाता है।

7.16.7

भव्ये तु शान्तमनसि लगत्यभ्येत्यविच्युतिम्प्रविश्यान्तर्विचाराख्यामर्चिरर्कमणौ यथा ॥ ७ ॥

bhavye tu śāntamanasi lagatyabhyetyavicyutimpraviśyāntarvicārākhyāmarcirarkamaṇau yathā || 7 ||

In the future, the peaceful mind attains steadfastness, entering into the inner reflection known as the ray of the sun.

भविष्य में, शान्त मन स्थिरता प्राप्त करता है, जो सूर्य की किरण के रूप में ज्ञात आंतरिक विचार में प्रवेश करता है।

7.16.8

अहंभावनमेवोच्चैर्बीजं दुःखाख्यशाल्मलेःममेदं तद्वदादीति शाखाप्रसरकारणम् ॥ ८ ॥

ahaṃbhāvanamevoccairbījaṃ duḥkhākhyaśālmaleḥmamedaṃ tadvadādīti śākhāprasarakāraṇam || 8 ||

The sense of 'I' is indeed the seed of the tree of sorrow. 'This is mine, that is mine' is the cause of the spreading branches.

मैंपन का भाव वास्तव में दुःख के वृक्ष का बीज है। 'यह मेरा है, वह मेरा है' शाखाओं के फैलने का कारण है।

7.16.9

अहमादौ ममेत्यन्तस्तत इच्छा प्रवर्ततेइदमर्थशतानर्थकारिणी भवभारिणी ॥ ९ ॥

ahamādau mametyantastata icchā pravartateidamarthaśatānarthakāriṇī bhavabhāriṇī || 9 ||

From 'I' at the beginning to 'mine' at the end, then desire arises. This is the cause of a hundred useless things, a burden of existence.

'मैं' से शुरुआत होती है और 'मेरा' से अंत होता है, फिर इच्छा उत्पन्न होती है। यह सौ अनुपयोगी चीजों का कारण है, अस्तित्व का बोझ।

7.16.10

एवंविधा मुनिश्रेष्ठ मूढा अपि चिरायुषःभवन्त्यनियमो ह्यङ्ग दीर्घायुष्यस्य कारणम् ॥ १० ॥

evaṃvidhā muniśreṣṭha mūḍhā api cirāyuṣaḥbhavantyaniyamo hyaṅga dīrghāyuṣyasya kāraṇam || 10 ||

Thus, O best of sages, even fools live long. Restraint is indeed the cause of longevity.

इस प्रकार, हे मुनियों में श्रेष्ठ, मूर्ख भी लंबी आयु वाले होते हैं। संयम वास्तव में दीर्घायु का कारण है।

7.16.11

अन्तःशुद्धमनस्का ये सुचिरायाभयप्रदम्। मनागप्युपदिष्टास्ते प्राप्नुवन्ति परं पदम् ॥ ११ ॥

antaḥśuddhamanaskā ye sucirāyābhayapradam | manāgapyupadiṣṭāste prāpnuvanti paraṃ padam || 11 ||

Those whose minds are pure within, who bestow fearlessness for a long time, even if they are instructed mentally, they attain the supreme state.

जिनके मन अंतःकरण से शुद्ध होते हैं, जो लंबे समय तक अभय प्रदान करते हैं, चाहे वे मन ही मन सिखाए जाएँ, वे परम पद प्राप्त करते हैं।

7.16.12

श्रीवसिष्ठ उवाच। मेरुमूर्धनि मामेवमुक्त्वा स विहगाधिपः। तूष्णीं बभूव मुक्तात्मा ऋष्यमूक इवाम्बुदः ॥ १२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | merumūrdhani māmevamuktvā sa vihagādhipaḥ | tūṣṇīṃ babhūva muktātmā ṛṣyamūka ivāmbudaḥ || 12 ||

Shri Vasishtha said: Having spoken to me thus on the peak of Meru, that king of birds became silent, liberated, like a cloud over the Rishyamukha mountain.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मेरु पर्वत के शिखर पर मुझसे ऐसा कहकर, वह पक्षीराज चुप हो गया, मुक्तात्मा, ऋष्यमूक पर्वत पर बादल की तरह।

7.16.13

अहमापृच्छ्य तं सिद्धं विद्याधरमथो पुनः । प्राप्त आत्मास्पदं राम मुनिमण्डलमण्डितम् ॥ १३ ॥

ahamāpṛcchya taṃ siddhaṃ vidyādharamatho punaḥ | prāpta ātmāspadaṃ rāma munimaṇḍalamaṇḍitam || 13 ||

Having asked that accomplished Vidyadhara again, O Rama, I attained the abode of the self, adorned with the assembly of sages.

उस सिद्ध विद्याधर से पुनः पूछने के बाद, हे राम, मैंने संतों की सभा से अलंकृत आत्मा का आश्रय प्राप्त किया।

7.16.14

एतत्तवाद्य कथितं बलिभुक्कथोक्तं विद्याधरोपशमनं लघुबोधनोत्थम् । अस्मिन्भुशुण्डविहगेन्द्रसमागमे मे चैकादशेह हि गतानि महायुगानि ॥ १४ ॥

etattavādya kathitaṃ balibhukkathoktaṃ vidyādharaopaśamanaṃ laghubodhanotttham |
asminbhūśuṇḍavihagendrasamāgame me caikādaśeha hi gatāni mahāyugāni || 14 ||

This has been narrated to you now, the story of Bali, the enjoyer, told by the Vidyadhara for pacification, arising from easy understanding. In this meeting with the king of birds, Bhushunda, eleven great yugas have indeed passed for me.

यह आपको अब सुनाया गया है, बलि, भोगी, की कथा, जो विद्याधर द्वारा शांति के लिए कही गई है, सरल बोध से उत्पन्न। इस पक्षीराज भुशुंड के साथ मिलन में, मेरे लिए ग्यारह महायुग वास्तव में बीत चुके हैं।

Chapter 17

7.17.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अनहंवेदनादेवं शुभाशुभफलप्रदा । संसारफलिनी नूनमिच्छान्तरुपशाम्यति ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | anahaṃvedanādevaṃ śubhāśubhaphalapradā | saṃsāraphalinī nūnamicchāntarupaśāmyati || 1 ||

Shri Vasishtha said: Indeed, the perception of 'I am not' yields good and bad results; it is the fruit of worldly existence and certainly pacifies desires.

श्री वसिष्ठ ने कहा: निश्चय ही, 'मैं नहीं हूँ' की वेदना से शुभ और अशुभ फल प्राप्त होते हैं; यह संसार का फल है और इच्छाओं को शान्त करता है।

7.17.2

अनहंवेदनाभ्यासात्समलोष्टाश्मकाञ्चनः । भूत्वा शान्तभवापीडो न नरः परिताम्यति ॥ २ ॥

anahaṃvedanābhyāsātsamaloṣṭāśmakāñcanaḥ | bhūtvā śāntabhavāpīḍo na naraḥ paritāmyati || 2 ||

By the practice of the perception of 'I am not', becoming indifferent to gold, stone, and dirt, a person does not suffer from worldly troubles.

'मैं नहीं हूँ' की वेदना के अभ्यास से, सोने, पत्थर और मिट्टी के प्रति उदासीन होकर, व्यक्ति संसारिक पीड़ाओं से पीड़ित नहीं होता।

7.17.3

अहंतापुटकोड्डीनपरबोधबलेरितः । अहमित्यर्थपाषाणो न जाने क्वाशु गच्छति ॥ ३ ॥

ahaṃtāpuṭakoḍḍīnaparabodhabalēritaḥ | ahamityarthapāṣāṇo na jānē kvāśu gacchati || 3 ||

Driven by the power of others' knowledge, enclosed in the ego-shell, one becomes like a stone in the meaning of 'I', and does not know where to go.

दूसरों के ज्ञान की शक्ति से प्रेरित, अहंकार के खोल में बंद, व्यक्ति 'मैं' के अर्थ में पत्थर की तरह हो जाता है, और यह नहीं जानता कि कहाँ जाए।

7.17.4

अहंतापुटकोड्डीनो ब्रह्मवीरबलेरितः । अहमित्यर्थपाषाणो न जाने क्वाशु गच्छति ॥ ४ ॥

ahaṃtāpuṭakoḍḍīno brahmavīrabalēritaḥ | ahamityarthapāṣāṇo na jānē kvāśu gacchati || 4 ||

Enclosed in the ego-shell, driven by the power of Brahma's heroism, one becomes like a stone in the meaning of 'I', and does not know where to go.

अहंकार के खोल में बंद, ब्रह्मा के वीरता की शक्ति से प्रेरित, व्यक्ति 'मैं' के अर्थ में पत्थर की तरह हो जाता है, और यह नहीं जानता कि कहाँ जाए।

7.17.5

अहंतापुटकोड्डीनो ब्रह्मवीरबलेरितः । शरीरयन्त्रपाषाणो न जाने क्वाशु गच्छति ॥ ५ ॥

ahaṃtāpuṭakoḍḍīno brahmavīrabalēritaḥ | śarīrayantrapāṣāṇo na jānē kvāśu gacchati || 5 ||

Enclosed in the ego-shell, driven by the power of Brahma's heroism, one becomes like a stone in the bodily machine, and does not know where to go.

अहंकार के खोल में बंद, ब्रह्मा के वीरता की शक्ति से प्रेरित, व्यक्ति शरीर के यंत्र में पत्थर की तरह हो जाता है, और यह नहीं जानता कि कहाँ जाए।

7.17.6

अहमर्थहिमं त्वन्तरनहंता चिदर्चिषा । उड्डीयेव विलीनं सन्न जाने क्वाशु गच्छति ॥ ६ ॥

ahamarthahimaṃ tvantaranahantā cidarciṣā | uḍḍīyeva vilīnaṃ sanna jāne kvāśu gacchati || 6 ||

I do not know where the essence of 'I', which has merged into the inner self through the light of consciousness, goes instantly.

मैं नहीं जानता कि जो 'मैं' का सार चेतना के प्रकाश से अंतरात्मा में विलीन हो गया है, वह तुरंत कहाँ जाता है।

7.17.7

अहंरसो विलीनोन्तरनहंताचिदर्चिषा । शरीरपर्णादुद्वर्णान्न जाने क्वाशु गच्छति ॥ ७ ॥

ahaṃraso vilīnontaranahantācidarciṣā | śarīraparṇādudvarṇānna jāne kvāśu gacchati || 7 ||

I do not know where the essence of 'I', which has merged into the inner self through the light of consciousness, goes instantly from the body.

मैं नहीं जानता कि जो 'मैं' का सार चेतना के प्रकाश से अंतरात्मा में विलीन हो गया है, वह शरीर से तुरंत कहाँ जाता है।

7.17.8

शरीरपर्णान्निष्पीतस्त्वहंभावरसासवः । अनहंतार्कमार्गेण परतामधिगच्छति ॥ ८ ॥

śarīraparṇānniṣpītastvahaṃbhāvarasāsavaḥ | anahantārkamārgeṇa paratāmadhigacchati || 8 ||

The essence of 'I', which has been extracted from the body, attains the ultimate state through the path of non-ego.

जो 'मैं' का सार शरीर से निकाला गया है, वह अहंकार रहित मार्ग से परम अवस्था को प्राप्त करता है।

7.17.9

शयने कर्दमे शैले गृहे व्योम्नि स्थले जले । स्थूला सूक्ष्मा निराकारा रूपान्तरगतापि च ॥ ९ ॥

śayane kardame śaile gṛhe vyomni sthale jale | sthūlā sūkṣmā nirākārā rūpāntaragatāpi ca || 9 ||

Whether in sleep, mud, mountain, home, sky, land, or water, it is gross, subtle, formless, and also in another form.

चाहे नींद में, कीचड़ में, पर्वत में, घर में, आकाश में, भूमि में, या जल में, यह स्थूल, सूक्ष्म, निराकार और दूसरे रूप में भी है।

7.17.10

यत्र तत्र स्थिता सुप्ता प्रबुद्धा भस्मतां गता । धृता नीता निमग्ना च दूरस्था निकटा सती ॥ १० ॥

yatra tatra sthitā suptā prabuddhā bhasmatāṃ gatā | dhṛtā nītā nimagnā ca dūrasthā nikaṭā satī || 10 ||

Whether situated, asleep, awakened, turned to ashes, held, led, immersed, far away, or near, it remains.

चाहे स्थित, सोया हुआ, जागा हुआ, भस्म हो गया, धारण किया हुआ, ले जाया हुआ, डूबा हुआ, दूर, या पास में, यह बना रहता है।

7.17.11

शरीरवटधानान्तःस्थिताहंत्वनवांकुरा । शास्त्राजालं तनोत्याशु संसाराख्यमिदं क्षणात् ॥ ११ ॥

śarīravata dhānāntaḥsthitāhaṃtvānavāṃkurā | śāstrājālaṃ tanotyāśu saṃsārākhyamidaṃ kṣaṇāt || 11 ||

The ego, which is like a seed within the body, quickly spreads the net of scriptures in this world known as samsara in an instant.

शरीर के अंदर बीज के समान अहंकार, इस संसार को, जिसे संसार कहते हैं, एक पल में शास्त्रों का जाल फैला देता है।

7.17.12

अहंत्ववटधानान्तःस्थितदेहबृहद्द्रुमः । संसारशाखानिवहं यत्र तत्र तनोत्यलम् ॥ १२ ॥

ahaṃtvavata dhānāntaḥsthitadehabṛhaddrumaḥ | saṃsāraśākhānivahaṃ yatra tatra tanotyalam || 12 ||

The ego, like a large tree within the body, spreads its branches of worldly entanglements everywhere.

अहंकार, शरीर के अंदर एक बड़े वृक्ष के समान, संसार की शाखाओं को हर जगह फैलाता है।

7.17.13

शाखाशतेद्धदलपुष्पफलद्रुमोऽस्ति बीजोदरे ननु दृशा परिदृश्यतेऽसौ । देहोऽस्त्यहंत्वकणिकान्तरशेषदृश्यसंवित्परीत इति बुद्धिदृशैव दृष्टम् ॥ १३ ॥

śākhāśateddhadalapuṣpaphaladrumo'sti bījodare nanu dṛśā paridṛśyate'sau |
deho'styahaṃtvakaṇikāntaraśeṣadṛśyasaṃvitparīta iti buddhidṛśaiva dṛṣṭam || 13 ||

The tree with hundreds of branches, leaves, flowers, and fruits exists within the seed, and it is seen through vision. The body exists as the essence of the ego, seen through the intellect.

सैकड़ों शाखाओं, पत्तों, फूलों और फलों वाला वृक्ष बीज के अंदर है, और यह दृष्टि से देखा जाता है। शरीर अहंकार की आत्मा के रूप में है, जो बुद्धि से देखा जाता है।

7.17.14

देहादहंत्वमनवाप्तवतो विचारैश्चिद्व्योममात्रवपुषो वपुषोऽथ वोच्चैः । नाहंत्वबीजजठरादसतोऽभ्युदेति संसारवृक्ष इह बोधमहाग्निदग्धात् ॥ १४ ॥

dehādahaṃtvamanavāptavato vicāraiścidvyomamātravapuṣo vapuṣo'tha voccaiḥ |
nāhaṃtvabījajaṭharādasato'bhyudeti saṃsāravṛkṣa iha bodhamahāgnidagdhāt || 14 ||

For those who have not attained the ego from the body, through contemplation, the form of pure consciousness arises. The tree of worldly life does not sprout from the seed of ego, which is destroyed by the great fire of knowledge.

जिन्होंने शरीर से अहंकार प्राप्त नहीं किया है, उनके लिए, विचार से, शुद्ध चेतना का रूप उभरता है। ज्ञान की अग्नि से नष्ट होने के कारण, अहंकार के बीज से संसार का वृक्ष नहीं उगता।

Chapter 18

7.18.1

श्रीवसिष्ठ उवाच मरणं सर्वनाशात्म न कदाचन विद्यते स्वसंकल्पान्तरस्थैर्यं मृतिरित्यभिधीयते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca maraṇaṃ sarvanāśātma na kadācana vidyate svasaṃkalpāntarasthairyaṃ mṛtirityabhidhīyate || 1 ||

Śrī Vasistha said: Death is not the destruction of everything; it never occurs. Death is the steadfastness of one's own resolve.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मरण सब कुछ का नाश नहीं है; यह कभी नहीं होता। मृत्यु अपने संकल्प की स्थिरता है।

7.18.2

पश्येमे पुर उह्यन्त इव मन्दरमेरवः अरूढा अपि दिग्वातैः सरिद्बिम्बितशैलवत् ॥ २ ॥

paśyeme pura uhyanta iva mandarameravaḥ arūḍhā api digvātaiḥ saridbimbitaśailavat || 2 ||

I see these cities being carried away like clouds by the winds, even though they are not mounted, like mountains reflected in rivers.

मैं देखता हूँ कि ये शहर वायु के द्वारा बादलों की तरह उठाए जाते हैं, भले ही वे न चढ़े हों, जैसे नदी में पर्वतों का प्रतिबिम्ब।

7.18.3

उपर्युपर्यन्तरतः कदलीदलपीठवत् श्लिष्टाश्लिष्टस्वरूपाः खे मिथः संसृतयः स्थिताः ॥ ३ ॥

uparyuparyantarataḥ kadalīdalapīṭhavat śliṣṭāśliṣṭasvarūpāḥ khe mithaḥ saṃsṛtayaḥ sthitāḥ || 3 ||

One after another, intertwined like the layers of a banana leaf, these forms are interconnected and exist in the sky.

एक के बाद एक, केले के पत्तों की तरह आपस में गुंथे हुए, ये रूप आपस में जुड़े हुए हैं और आकाश में स्थित हैं।

7.18.4

श्रीराम उवाच पश्य मे पुर उह्यन्त इति वाक्यार्थमक्षतम् न किंचिदवगच्छामि यथावन्मुनिनायक ॥ ४ ॥

śrīrāma uvāca paśya me pura uhyanta iti vākyārthamakṣatam na kiñcidavagacchāmi yathāvanmunināyaka || 4 ||

Śrī Rāma said: I do not understand the complete meaning of the statement 'I see these cities being carried away.' Please explain it to me, O leader of sages.

श्री राम ने कहा: मैं 'मैं ये शहर उठाए जाते हुए देखता हूँ' के पूरे अर्थ को नहीं समझ पा रहा हूँ। कृपया मुझे समझाएँ, हे ऋषियों के नेता।

7.18.5

श्रीवसिष्ठ उवाच प्राणस्याभ्यन्तरे चित्तं चित्तस्याभ्यन्तरे जगत् विद्यते विविधाकारं बीजस्यान्तरिव द्रुमः ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca prāṇasyābhyantare cittaṃ cittasyābhyantare jagat vidyate viviḍhākāraṃ bījasyāntariva drumaḥ || 5 ||

Śrī Vasistha said: Within the breath is the mind, within the mind is the world. The world exists in various forms, like a tree within a seed.

श्री वसिष्ठ ने कहा: सांस के अंदर मन है, मन के अंदर संसार है। संसार विविध रूपों में अस्तित्व में है, जैसे बीज में पेड़ होता है।

7.18.6

मृते पुंसि नभोवातैर्मिलन्ति प्राणवायवः । सरिज्जलैरिवाम्भोधिजलान्यात्मद्रुतानि हि ॥ ६ ॥

mṛte puṃsi nabhovātairmilanti prāṇavāyavaḥ | sarijjalairivāmbhodhijalānyātmadhutāni hi || 6 ||

When a person dies, the vital airs merge with the winds of the sky, just as the waters of a river merge with the waters of the ocean, which are swiftly moving.

जब एक व्यक्ति मर जाता है, तो प्राणवायु आकाश की हवाओं में मिल जाती है, जैसे नदी के पानी समुद्र के पानी में मिल जाते हैं, जो तेजी से बहते हैं।

7.18.7

इतश्चेतश्च यान्तीव तेषामन्तर्जगन्त्यलम् । व्योमवातविनुन्नानां संकल्पैकात्मकान्यपि ॥ ७ ॥

itaścetśca yāntīva teṣāmantarjagantyalam | vyomavātavinunnānāṃ saṃkalpaikātmakānyapi || 7 ||

They seem to move here and there, but they actually enter within, being driven by the winds of the sky, even though they are of the nature of a single resolve.

वे इधर-उधर जाते हुए लगते हैं, लेकिन वास्तव में वे अंदर प्रवेश करते हैं, आकाश की हवाओं द्वारा चलाए जाते हुए, भले ही वे एक ही संकल्प के स्वभाव के हों।

7.18.8

सप्राणवातैः पवनैः स्फुरत्संकल्पगर्भितैः । सर्वा एव दिशः पूर्णाः पश्यामीमाः समन्ततः ॥ ८ ॥

saprāṇavātaiḥ pavanaiḥ sphuratsaṃkalpagarbhitaiḥ | sarvā eva diśaḥ pūrṇāḥ paśyāmīmāḥ samantataḥ || 8 ||

With the winds full of vibrant resolves and vital airs, I see all directions filled everywhere.

प्राणवायु और संकल्पों से भरी हवाओं के साथ, मैं सभी दिशाओं को सब जगह भरा हुआ देखता हूँ।

7.18.9

अत्रैते पश्य पश्यामि संकल्पजगताङ्गणे । बुद्धिदृष्ट्या समुह्यन्ते पुरो मन्दरमेरवः ॥ ९ ॥

atraite paśya paśyāmi saṃkalpajagatāṅgaṇe | buddhidṛṣṭyā samuhyante puro mandarameravaḥ || 9 ||

Here, look, I see in the arena of the world of resolves, by the vision of intelligence, the Mandara mountains rise up before.

यहाँ, देखो, मैं संकल्पों की दुनिया के मैदान में, बुद्धि की दृष्टि से, मन्दर पर्वत आगे उठते हुए देखता हूँ।

7.18.10

खवातेऽन्तर्मृतप्राणाः प्राणानामन्तरे मनः । मनसोऽन्तर्जगद्विद्धि तिले तैलमिव स्थितम् ॥ १० ॥

khavāte'ntarmṛtaprāṇāḥ prāṇānāmantare manaḥ | manaso'ntarjagadviddhi tile tailamiva sthitam || 10 ||

Know that within the winds of the sky, the vital airs are dead, within the vital airs is the mind, and within the mind is the world, just as oil is contained in a sesame seed.

जानो कि आकाश की हवाओं के अंदर, प्राणवायु मृत हैं, प्राणवायुओं के अंदर मन है, और मन के अंदर संसार है, जैसे तिल के बीज में तेल होता है।

7.18.11

खवातैः खसमाः प्राणा यथोह्यन्ते मनोमयाः । उह्यन्ते वै तथैतानि तदङ्गानि जगन्त्यपि ॥ ११ ॥

khvātaiḥ khasamāḥ prāṇā yathohyante manomayāḥ | uhyante vai tathaitāni tadaṅgāni jagantyapi || 11 ||

Just as the vital breaths, which are of the nature of the mind, are restrained by the sky, so also these limbs of the universe are restrained.

जैसे मन के स्वभाव वाले प्राण आकाश द्वारा नियंत्रित होते हैं, वैसे ही ये ब्रह्मांड के अंग भी नियंत्रित होते हैं।

7.18.12

सभूतान्यम्बरोर्व्यादिवृन्दानि त्रिजगन्त्यपि । उह्यन्ते चाप्यरूढानि पुरः सर्वत्र गन्धवत् ॥ १२ ॥

sabhūtānyambarorvyādivṛndāni trijagantyapi | uhyante cāpyarūḍhāni puraḥ sarvatra gandhavat || 12 ||

All beings, including the sky, earth, and other elements, in all three worlds, are restrained and pervade everywhere like fragrance.

सभी भूत, जिनमें आकाश, पृथ्वी और अन्य तत्व शामिल हैं, तीनों लोकों में नियंत्रित हैं और सुगंध की तरह सर्वत्र व्याप्त हैं।

7.18.13

तानि बुद्ध्यैव दृश्यन्ते न दृष्ट्या रघुनन्दन । पुरः संकल्परूपाणि स्वस्वप्नपुरपूरवत् ॥ १३ ॥

tāni buddhyāiva dṛśyante na dṛṣṭyā raghunandana | puraḥ saṅkalparūpāṇi svasvapnapurapūravat || 13 ||

Those are seen only by the intellect, not by the eyes, O Raghunandana. They are like one's own dream city, having the form of thoughts.

वे केवल बुद्धि द्वारा देखे जाते हैं, आँखों द्वारा नहीं, हे रघुनन्दन। वे अपने स्वप्न नगर की तरह हैं, विचारों के रूप में।

7.18.14

सर्वत्र सर्वदा सन्ति सुसूक्ष्माण्येव खादपि । कल्पनामात्रसारत्वान्न चोह्यन्ते मनागपि ॥ १४ ॥

sarvatra sarvadā santi susūkṣmāṇyeva khādapi | kalpanāmātrasāratvānna cohyante manāgapi || 14 ||

They exist everywhere and always, being very subtle, even in the sky. Due to their essence being mere imagination, they are not restrained even by the mind.

वे हर जगह और हमेशा मौजूद हैं, बहुत ही सूक्ष्म होने के कारण, आकाश में भी। अपने सार के केवल कल्पना होने के कारण, वे मन द्वारा भी नियंत्रित नहीं होते।

7.18.15

तान्येव दृढभावत्वात्स्वेषु लोकेषु तेष्वलम् । सत्यान्येव चिदंशस्य सर्वगत्वाद्भवानिव ॥ १५ ॥

tānyeva dṛḍhabhāvatvātsveṣu lokeṣu teṣvalam | satyānyeva cidaṃśasya sarvagatvādbhavāniv || 15 ||

Those very elements, due to their firm existence in their respective worlds, appear as real, being parts of consciousness, due to their omnipresence.

वे ही तत्व, अपने लोकों में दृढ़ अस्तित्व के कारण, वास्तविक प्रतीत होते हैं, चेतना के अंश होने के कारण, अपनी सर्वव्यापकता के कारण।

7.18.16

प्रतिबिम्बं पुराणीव पुरःप्राणसरिद्रये । अरूढान्यपि चोह्यन्ते रूढान्यपि च नैव च ॥ १६ ॥

pratibimbaṃ purāṇīva puraḥprāṇasaridraye | arūḍhānyapi cohyante rūḍhānyapi ca naiva ca || 16 ||

Just as the reflection of an ancient city appears in the river of life, so too do unrealized desires manifest, while realized ones do not.

जैसे प्राचीन नगर का प्रतिबिम्ब प्राण नदी में दिखाई देता है, वैसे ही अप्राप्त इच्छाएँ भी प्रकट होती हैं, जबकि प्राप्त इच्छाएँ नहीं।

7.18.17

सौरभाणि समुह्यन्ते वाताङ्गस्थानि राघव । जगन्ति प्राणसंस्थानि व्योमात्मकमयानि तु ॥ १७ ॥

saurabhāṇi samuhyante vātāṅgasthāni rāghava | jaganti prāṇasaṃsthāni vyomātmakamayāni tu || 17 ||

Fragrances gather in the realm of the wind, O Raghava. The worlds are established in the realm of life, which is of the nature of space.

सुगंधें वायु के क्षेत्र में एकत्र होती हैं, हे रघुवंशी। संसार प्राण के क्षेत्र में स्थापित हैं, जो आकाश के स्वभाव के हैं।

7.18.18

कुम्भे देशान्तरं नीते यथान्तर्व्योन्नि नान्यता । स्पन्दनादिमये चित्ते तथैव त्रिजगद्भ्रमे ॥ १८ ॥

kumbhe deśāntaraṃ nīte yathāntarvyonni nānyatā | spandanādimaye citte tathaiva trijagadbhra || 18 ||

Just as the space within a pot remains unchanged when the pot is moved to another place, so too the three worlds appear unchanged in the mind that is full of vibrations.

जैसे घड़े के अंदर का स्थान उसे दूसरी जगह ले जाने पर भी अपरिवर्तित रहता है, वैसे ही स्पंदन से भरे मन में तीनों लोक अपरिवर्तित प्रतीत होते हैं।

7.18.19

इत्थं न सज्जगद्भ्रान्तिरसत्यैवोदितेव ते । न विनश्यति नोदेति केवलं ब्रह्मरूपिणी ॥ १९ ॥

itthaṃ na sajjagadbhrāntirasatyai voditeva te | na vinaśyati noudeti kevalaṃ brahmarūpiṇī || 19 ||

Thus, the illusion of the world is not real, it is merely an appearance. It neither perishes nor arises, it is purely of the nature of Brahman.

इस प्रकार, संसार की भ्रांति वास्तविक नहीं है, यह केवल एक आभास है। यह न तो नष्ट होता है और न ही उत्पन्न होता है, यह केवल ब्रह्म के स्वरूप का है।

7.18.20

यदि वाप्युदिते वातैस्तत्तदस्या न लक्ष्यते । तदन्तःसंस्थितैः स्पन्दो नावि कोशगतैरिव ॥ २० ॥

yadi vāpyudite vātaistattadasyā na lakṣyate | tadantaḥsaṃsthitaiḥ spando nāvi kośagatairi || 20 ||

Even if it appears to arise due to the winds, it is not perceived as such. The vibration is within, not in the outer sheath, just like the vibration in a musical instrument.

यदि यह वायु के कारण उत्पन्न होता प्रतीत होता है, तो भी यह ऐसा नहीं दिखाई देता। स्पंदन अंतर में है, बाहरी आवरण में नहीं, जैसे कि एक संगीत वाद्य में स्पंदन होता है।

7.18.21

यथा स्पन्दोऽङ्गलग्नायां नाव्यन्तःसंस्थितैरपि । न लक्ष्यते तथा पृथ्व्यां तत्संस्थैस्तन्मयैरपि ॥ २१ ॥

yathā spando'ṅgalagnāyāṃ nāvyantaḥsaṃsthitairapi | na lakṣyate tathā pṛthvyāṃ tatsaṃsthais tanmayairapi || 21 ||

Just as the vibration in a boat is not perceived by those seated inside, similarly, the vibrations of the earth are not perceived by those who are one with it.

जैसे नाव में बैठे हुए लोग नाव के कम्पन को नहीं देख पाते, वैसे ही पृथ्वी पर उसके साथ एकाकार हुए लोग पृथ्वी के कम्पन को नहीं देख पाते।

7.18.22

यथा योजनविस्तीर्णं लघौ सद्मानुभूयते । यत्तस्य पादपस्तम्भे परमाणौ यथा जगत् ॥ २२ ॥

yathā yojanavistīrṇaṃ laghau sadmānubhūyate | yattasya pādapastambhe paramāṇau yathā jagat || 22 ||

Just as a small house is experienced as vast as a yojana, so is the universe in a tiny atom.

जैसे एक छोटा घर योजन के बराबर विस्तृत अनुभव किया जाता है, वैसे ही एक अणु में सारा ब्रह्माण्ड होता है।

7.18.23

वस्त्वल्पमप्यतिवृहल्लघुसत्त्वो हि मन्यते । मूषिकाः स्वाञ्जलिद्रव्यं नवपङ्कमिवार्भकाः ॥ २३ ॥

vastvalpamapyativṛhallaghusattvo hi manyate | mūṣikāḥ svāñjalidravyaṃ navapaṅkamivārbhakāḥ || 23 ||

Even a small object is considered very large by a small being. Mice consider their nest material as fresh mud.

एक छोटी वस्तु को भी एक छोटे जीव द्वारा बहुत बड़ा माना जाता है। चूहे अपने घोंसले के सामान को ताज़ा कीचड़ के रूप में मानते हैं।

7.18.24

असत्येव स्वरूपेऽस्मिञ्जगदाख्ये विदो भ्रमे । लोकान्तराधर्ममयी सा बृंहगस्य भावना ॥ २४ ॥

asatyeva svarūpe'smiñjagadākhye vidobhrame | lokāntarādharmamayī sā bṛṃhagasya bhāvanā || 24 ||

In this world, which is essentially unreal, the learned are deluded. That imagination of the wise is filled with the characteristics of other worlds.

इस जगत में, जो मूल रूप से असत्य है, विद्वान भ्रमित होते हैं। वह बृहस्पति की भावना दूसरे लोकों के धर्मों से भरी हुई है।

7.18.25

इदं हेयमुपादेयमिदमित्यन्तरज्ञता । यस्य तस्य भवायास्ति सर्वज्ञस्यापि मूढता ॥ २५ ॥

idaṃ heyamupādeyamidaṃityantarajñatā | yasya tasya bhavāyāsti sarvajñasyāpi mūḍhatā || 25 ||

The knowledge of what is to be accepted and what is to be rejected leads to bondage. Even the omniscient one is deluded by this.

यह ज्ञान कि क्या ग्रहण करना है और क्या त्यागना है, बन्धन का कारण बनता है। इससे Even the omniscient one is deluded by this.

7.18.26

सचेतनो ह्यवयवी चेतत्यवयवान्यथा । स्वान्तरेव ततं जीवस्त्रिजगद्बुध्यते तथा ॥ २६ ॥

sacetano hyavayavī cetatyavayavānyathā | svāntareva tataṃ jīvastrijagadbudhyate tathā || 26 ||

The conscious entity perceives the parts differently, as the individual soul perceives the three worlds within itself.

सचेतन वस्तु भागों को अलग-अलग समझती है, जैसे जीवात्मा अपने आप में तीनों लोकों को समझता है।

7.18.27

संविदात्मपराकाशमनन्तमजमव्ययम् । व्योम्नोऽवयवरूपाणि तस्येमानि जगन्ति भोः ॥ २७ ॥

saṃvidātmaparākāśamanantamajamavyayam | vyomno'vayavarūpāṇi tasyemāni jaganti bhoḥ || 27 ||

The supreme consciousness is infinite, unborn, and imperishable. All these worlds are parts of that infinite space.

परम चेतना अनंत, अजन्मा और अविनाशी है। ये सभी लोक उस अनंत आकाश के भाग हैं।

7.18.28

सचेतनोऽयःपिण्डोऽन्तः क्षुरसूच्यादिकं यथा । बुद्ध्यते बुद्ध्यते तद्वज्जीवोऽज्ञस्त्रिजगद्भ्रमम् ॥ २८ ॥

sacetano'yaḥpiṇḍo'ntaḥ kṣurasūcyādikaṃ yathā | buddhyate buddhyate tadvajjīvo'jñastrijagadbhramam || 28 ||

Just as a lump of iron within perceives sharp objects like a razor, so does the ignorant individual soul perceive the illusion of the three worlds.

जैसे लोहे का ढेला अंदर ऊज्ज्वल वस्तुओं को समझता है, वैसे ही अज्ञानी जीवात्मा तीनों लोकों के भ्रम को समझता है।

7.18.29

अचिच्चिद्वापि मृत्पिण्डः शरावोदञ्चनादिकम्। यथाङ्ग मनुते जीवस्तथाङ्ग मनुते जगत्॥ २९॥

aciccividvāpi mṛtpiṇḍaḥ śarāvodañcanādikam | yathāṅga manute jīvastathāṅga manute jagat || 29 ||

Just as a lump of clay perceives various forms like pots and bowls, so does the individual soul perceive the world.

जैसे मिट्टी का ढेला घड़े और कटोरों जैसी वस्तुओं को समझता है, वैसे ही जीवात्मा संसार को समझता है।

7.18.30

चिदचिद्वाङ्कुरो देहे वृक्षत्वं मन्यते यथा। वृक्षशब्दार्थरहितं ब्रह्मेदं त्रिजगत्तथा॥ ३०॥

cidacidvāṅkuro dehe vṛkṣatvaṃ manyate yathā | vṛkṣaśabdārtharahitaṃ brahmedaṃ trijagattathā || 30 ||

Just as a sprout in the body perceives itself as a tree, so does this Brahman, devoid of the meaning of the word 'tree,' perceive the three worlds.

जैसे शरीर में एक अंकुर अपने आप को पेड़ समझता है, वैसे ही यह ब्रह्म, जो 'पेड़' शब्द के अर्थ से रहित है, तीनों लोकों को समझता है।

7.18.31

चिद्वाचिद्वा यथादर्शो बिम्बितं वाप्यबिम्बितम्। नगरं वेत्ति नो वापि तथा ब्रह्म जगत्त्रयम्॥ ३१॥

cidvācidvā yathādarśo bimbitaṃ vāpyabimbitam | nagaraṃ vetti no vāpi tathā brahma jagattrayam || 31 ||

Just as a mirror reflects an image, whether it is reflected or not, it is aware of the city or not, similarly, Brahma is aware of the three worlds.

जैसे दर्पण छवि को प्रतिबिंबित करता है, चाहे वह प्रतिबिंबित हो या नहीं, वह नगर को जानता है या नहीं, उसी तरह ब्रह्म तीनों जगतों को जानता है।

7.18.32

देशकालक्रियाद्रव्यमात्रमेव जगत्त्रयम्। अहंत्वजगतोस्तेन भेदो नास्त्येतदात्मनोः॥ ३२॥

deśakālakriyādravyamātrameva jagattrayam | ahaṃtvajagatostena bhedo nāstyetadātmanoḥ || 32 ||

The three worlds are merely space, time, action, and substance. There is no difference between the self and the world due to the ego.

तीनों जगत केवल स्थान, काल, क्रिया और द्रव्य हैं। अहंकार के कारण आत्मा और जगत में कोई अंतर नहीं है।

7.18.33

कल्पितेनोपमानेन यदेतदुपदिश्यते। तत्रोपमैकदेशेन उपमेयसधर्मता॥ ३३॥

kalpitena upamānena yadetadupadiśyate | tatropamaikeśena upameyasadharmatā || 33 ||

What is taught through an imagined analogy is only a partial similarity to the object of comparison.

जो कल्पित उपमा द्वारा शिक्षा दी जाती है, वह केवल उपमेय के कुछ गुणों की समानता है।

7.18.34

यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजङ्गमम्। अमुञ्चतः पराणुत्वं जीवस्यैतत्स्मृतं वपुः॥ ३४॥

yadidaṃ dṛśyate kiñcijjagatsthāvarajaṅgamam | amuñcataḥ parāṇutvaṃ jīvasyaitatsmṛtaṃ vapuḥ || 34 ||

Whatever is seen in the world, whether it is moving or stationary, is considered to be the form of the individual soul, which is the smallest particle.

जो कुछ भी जगत में दिखाई देता है, चाहे वह चर हो या अचर, वह जीव के रूप में माना जाता है, जो सबसे छोटे कण है।

7.18.35

सर्वसंवेदनत्यागे शुद्धसंस्पन्ददे पदे। न मनागपि भेदोऽस्ति निःसङ्गोपलकोशवत्॥ ३५॥

sarvasaṃvedanatyāge śuddhasaṃspandade pade | na manāgapi bhedo'sti niḥsaṅgopalakośavat || 35 ||

In the state of pure vibration, where all sensations are abandoned, there is no difference, just like a stainless crystal.

जहाँ सभी संवेदनाएँ छोड़ दी जाती हैं, शुद्ध स्पंदन की स्थिति में, वहाँ कोई अंतर नहीं है, जैसे निर्मल क्रिस्टल की तरह।

7.18.36

यो यो नाम विकल्पांशो यत्र यत्र यथा यथा। यदा यदा येन येन दीयते स तथैव चित्॥ ३६॥

yo yo nāma vikalpāṃśo yatra yatra yathā yathā | yadā yadā yena yena dīyate sa tathaiva cit || 36 ||

Whatever name or form is given, wherever and however it is given, at whatever time and by whatever means it is given, it is perceived accordingly.

जो जो नाम या रूप दिया जाता है, जहाँ-जहाँ और जैसे-जैसे दिया जाता है, जब-जब और जिस तरह से दिया जाता है, वह उसी तरह से जाना जाता है।

7.18.37

अचित्त्वान्नास्ति मनसि संकल्पः ख इवाङ्कुरः। चित्त्वात्तु चेतसो विद्धि चितिरेवेह कल्पनम्॥ ३७॥

acittvānnāsti manasi saṃkalpaḥ kha ivāṅkuraḥ | cittvāttu cetaso viddhi citireveha kalpanam || 37 ||

Without consciousness, there is no intention in the mind, like a seed without potential. Know that the creation of the mind is indeed consciousness.

चेतना के बिना, मन में कोई इरादा नहीं होता, जैसे कि एक बीज जिसमें कोई संभावना नहीं है। जान लो कि मन की रचना वास्तव में चेतना ही है।

7.18.38

या योदेति विकल्पश्रीरप्रबुद्धाशयं प्रति। सर्वगत्वादनन्तत्वाच्चिद्व्योम्नः सा न सन्मयी॥ ३८॥

yā yodeti vikalpaśrīraprabuddhāśayaṃ prati | sarvagatvādanantatvāccidvyomnaḥ sā na sanmayī || 38 ||

The splendor of diversity that arises in the unawakened mind, due to the omnipresence and infinitude of the consciousness, is not real.

जो विविधता की शोभा अज्ञानी मन में उत्पन्न होती है, चेतना की सर्वव्यापकता और अनंतता के कारण, वह वास्तविक नहीं है।

7.18.39

यथोदेति विकल्पश्रीः प्रबुद्धे नोदितैव सा। सर्वगत्वादनन्तत्वाच्चिद्व्योम्नः सा न सन्मयी॥ ३९॥

yathodeti vikalpaśrīḥ prabuddhe noditaiva sā | sarvagatvādanantatvāccidvyomnaḥ sā na sanmayī || 39 ||

The splendor of diversity that arises in the awakened mind is not perceived as real, due to the omnipresence and infinitude of the consciousness.

जो विविधता की शोभा जाग्रत मन में उत्पन्न होती है, वह चेतना की सर्वव्यापकता और अनंतता के कारण वास्तविक नहीं मानी जाती।

7.18.40

सर्वसंकल्पकलना सत्येत्याबालमक्षतम्। स्वप्नादावनुभूतोन्तरर्थः केनापि लभ्यते॥ ४०॥

sarvasaṃkalpakalanā satyetyābālamakṣatam | svapnādāvanubhūto'ntararthaḥ kenāpi labhyate || 40 ||

All mental constructs are considered true from childhood, but the inner meaning experienced in dreams and so on is attained by someone.

सभी मानसिक कल्पनाएँ बचपन से ही सत्य मानी जाती हैं, लेकिन स्वप्न आदि में अनुभूत अंतर्निहित अर्थ किसी न किसी द्वारा प्राप्त होता है।

7.18.41

संकल्पो वासना जीवस्त्रयोऽर्था लिखिताश्चिता । सोनुभूतोऽप्यसत्यः स्यादसत्त्वस्यैव नो सतः ॥ ४१ ॥

saṃkalpo vāsanā jīvastrayo'rthā likhitāścitā | sonubhūto'pyasatyaḥ syādasattvasyaiva no sataḥ || 41 ||

Desire, longing, and life are the three purposes written and perceived. Even if experienced, it is unreal, belonging to the unreal, not to the real.

इच्छा, वासना और जीवन ये तीनों लिखे हुए और समझे हुए अर्थ हैं। भले ही अनुभव किया जाए, यह असत्य है, असत्य का है, सत्य का नहीं।

7.18.42

असत्यताभिधं सत्यं मुक्त एव भवेच्छिवः । सातिवाहिकदेहैकपरिक्षयविकासवान् ॥ ४२ ॥

asatyatābhidhaṃ satyaṃ mukta eva bhavecchivaḥ | sātivāhikadehaikaparikṣayavikāsavān || 42 ||

The truth that is called unreal is indeed liberated and becomes Shiva. It is the sole body that decays and flourishes.

जो सत्य असत्य कहलाता है, वह वास्तव में मुक्त है और शिव बन जाता है। यह एकमात्र शरीर है जो विकसित होता है और नष्ट होता है।

7.18.43

जगन्ति वातैरुह्यन्ते व्योम्नि शाल्मलितूलवत् । नोह्यन्ते चोपलानीव न च सन्त्येव कल्पनात् ॥ ४३ ॥

jaganti vātairuhyante vyomni śālmalitūlavat | nohyante copalānīva na ca santyeva kalpanāt || 43 ||

The worlds are lifted by the winds in the sky like cotton tufts. They are not lifted like stones, nor do they exist merely by imagination.

दुनिया हवाओं द्वारा आकाश में रुई के फाहे की तरह उठाई जाती है। वे पत्थरों की तरह नहीं उठाई जाती हैं, न ही वे केवल कल्पना से ही अस्तित्व में हैं।

7.18.44

इत्यस्मिन्नखिलपदार्थसार्थकोशे व्योमन्यप्यतिविततते जगन्ति सन्ति । अन्योन्यं परिमिलितानि कानिचिच्च नान्योन्यं परिमिलितानि कानिचिच्च ॥ ४४ ॥

ityasminnakhilapadārthasārthakośe vyomanyapyativitate jaganti santi | anyonyaṃ parimilitāni kānicicca nānyonyaṃ parimilitāni kānicicca || 44 ||

Thus, in this comprehensive collection of all meanings and objects, even in the vast sky, worlds exist. Some are intertwined with each other, and some are not intertwined with each other.

इस प्रकार, इस सम्पूर्ण अर्थ और वस्तुओं के संग्रह में, विशाल आकाश में भी, दुनिया मौजूद है। कुछ एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं, और कुछ एक-दूसरे से जुड़े हुए नहीं हैं।

7.18.45

सर्वत्वात्परमचितेरनन्तरूपाण्यारम्भप्रचुरदिगन्तसंभृतानि । लोलाम्बूदरपुरबिम्बभङ्गुराणि स्वान्तःस्थाविरलमहापुरोपमानि ॥ ४५ ॥

sarvatvātparamaciteranantarūpāṇyārambhapracuradigantasaṃbhṛtāni | lolāmbūdarapurabimbhabaṅgurāṇi svāntaḥsthāviralamahāpuro pamāni || 45 ||

Due to the all-pervading nature of the supreme consciousness, the various forms are gathered from the abundant directions of the beginning. They are fragile like the reflection of a city in a swaying water pot, resembling the great ancient city within.

परम चेतना के सर्वव्यापी स्वभाव के कारण, आरंभ की भरपूर दिशाओं से विभिन्न रूप एकत्रित होते हैं। वे एक हिलते हुए पानी के घड़े में शहर की छवि की तरह नाजुक हैं, अंदर के महान प्राचीन शहर के समान।

7.18.46

सस्थैर्याण्यपि सततं क्षणक्षयाणि व्यक्ताक्षाण्यपि सततं निमीलितानि सालोकान्यपि परितस्तमोवृतानि चिद्रूपार्णवलहरीविवर्तनानि ॥ ४६ ॥

sasthairyaanyapi satatam kshanakshayani vyaktakshanyapi satatam nimilityani salokanyapi paritastamovritani chidruparnavalaharivivartanani || 46 ||

Even the stable things are constantly perishing every moment, the visible things are constantly closed, the things that are visible are constantly covered by darkness, and they are the transformations of the ocean of consciousness.

स्थिर वस्तुएँ भी हर पल नष्ट होती रहती हैं, दृश्य वस्तुएँ भी हर पल बंद होती रहती हैं, दृश्य वस्तुएँ भी हर पल अंधेरे से ढंकी होती हैं, और ये चेतना के समुद्र के विवर्तन हैं।

7.18.47

पृथक्स्थितानि व्यतिमिश्रितानि जलानि चैवाम्बुनिधौ नदीनाम् तारार्कचन्द्रग्रहमण्डलानां समोदितानां नभसीव भासः ॥ ४७ ॥

prithaksthitani vyatimishritani jalani chaivaambunidhau nadinam taraarkachandragrahamandlanam samoditanam nabhaseeva bhasah || 47 ||

The separate and mixed waters in the ocean, the stars, the sun, the moon, and the planets shine like the sky.

समुद्र में अलग-अलग और मिले-जुले जल, तारे, सूर्य, चंद्रमा और ग्रह आकाश की तरह चमकते हैं।

Chapter 19

7.19.1

श्रीराम उवाच । मुने जीवस्य यद्रूपमाकृतिग्रहणं तथा । यथा च परमात्मत्वं स्थानं यच्चास्य तद्वद ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | mune jīvasya yadrūpamākṛtigrahaṇaṃ tathā | yathā ca paramātmatvaṃ sthānaṃ yaccaāsya tadvada || 1 ||

Shri Rama said: O Sage, tell me about the form of the individual soul, its embodiment, its nature as the Supreme Self, and its abode.

श्री राम ने कहा: हे मुनि, जीव का रूप, उसका शरीर ग्रहण, उसका परमात्मा होना और उसका स्थान बताओ।

7.19.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्वसंकल्पेन चेत्योक्तं चिदित्यपरनामकम् । अनन्तं चेतनाकाशं जीवशब्देन कथ्यते ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | svasaṃkalpena cetyo'ktaṃ ciditiyaparanāmakam | anantaṃ cetanākāśaṃ jīvaśabdena kathyate || 2 ||

Shri Vasishtha said: By its own will, it is said to be consciousness, known by the name 'Cit'. The infinite consciousness-space is called 'Jiva'.

श्री वसिष्ठ ने कहा: अपनी इच्छा से, यह चेतना कहलाती है, जिसे 'चित्' नाम से जाना जाता है। अनंत चेतना-आकाश को 'जीव' कहते हैं।

7.19.3

न पराणुर्न च स्थूलं न शून्यं न च किंचन । चिन्मात्रं स्वानुभूत्यात्म सर्वगं जीव उच्यते ॥ ३ ॥

na parāṇurna ca sthūlaṃ na śūnyaṃ na ca kiṃcana | cinmātraṃ svānubhūtyātma sarvagaṃ jīva ucyate || 3 ||

It is neither an atom nor gross, neither void nor anything else. It is pure consciousness, self-experienced, all-pervading, and is called 'Jiva'.

यह न तो अणु है, न ही स्थूल, न शून्य है, न ही कुछ और। यह शुद्ध चेतना है, स्वयं अनुभव की आत्मा, सर्वव्यापी, और इसे 'जीव' कहते हैं।

7.19.4

अणीयसामणीयांसं स्थविष्ठं च स्थवीयसाम् । न किंचिन्मात्रकं चैव सर्वं जीवं विदुर्बुधाः ॥ ४ ॥

aṇīyasāmaṇīyāṃsaṃ sthaviṣṭhaṃ ca sthavīyasām | na kiṃcinmātrakaṃ caiva sarvaṃ jīvaṃ vidurbudhāḥ || 4 ||

The wise know that everything, from the smallest to the largest, from the void to the most substantial, is the individual soul (Jiva).

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि सब कुछ, सबसे छोटे से लेकर सबसे बड़े तक, शून्य से लेकर सबसे घने तक, जीव है।

7.19.5

यस्य यस्य पदार्थस्य यो भावस्तेन तत्र तम् । स्थितं विद्धि तदाभासं तदात्मैकान्तवेदनात् ॥ ५ ॥

yasya yasya padārthasya yo bhāvastena tatra taṃ | sthitaṃ viddhi tadābhāsaṃ tadātmaikāntavedanāt || 5 ||

Whatever state exists in any object, know that it is present there as a reflection of the soul, due to the sole experience of the self.

जिस भी वस्तु में जो भी अवस्था हो, उसे आत्मा के प्रतिबिंब के रूप में वहाँ उपस्थित समझो, आत्मा के एकमात्र अनुभव के कारण।

7.19.6

स चेतति यथा यत्र यद्यदाशु तदेव हि । तथा तत्र तदा राम भवत्यनुभवात्मकम् ॥ ६ ॥

sa cetati yathā yatra yadyadāśu tadeva hi | tathā tatra tadā rāma bhavaty anubhavātmakam || 6 ||

Just as the mind perceives whatever it desires instantly, so too, O Rama, it becomes experiential there and then.

जैसे मन जो भी चाहता है उसे तुरंत ग्रहण करता है, वैसे ही, हे राम, वह वहाँ और तब अनुभवात्मक हो जाता है।

7.19.7

पवनस्य यथा स्पन्दश्चेत्यं जीवस्य वै तथा । स्वसंविन्मात्रनिर्णेयं नोपदेशाम यक्षवत् ॥ ७ ॥

pavanasya yathā spandaś cetayaṃ jīvasya vai tathā | svasaṃvinmātranirṇeyaṃ nopadeśāma yakṣavat || 7 ||

Just as the movement of the wind is perceptible, so too is the consciousness of the living being. It is to be known as pure self-awareness, not through instruction like a Yaksha.

जैसे वायु की गति ग्रहण की जा सकती है, वैसे ही जीव की चेतना भी ग्रहण की जा सकती है। यह शुद्ध स्व-चेतना के रूप में जाना जाना चाहिए, यक्ष की तरह शिक्षा के माध्यम से नहीं।

7.19.8

यथैवास्पन्दनाद्वातः सन्नेवैत्य सदात्मताम् । तथैवाचेतनाज्जीवो जीवन्नेति परां गतिम् ॥ ८ ॥

yathaivāspandanādvātaḥ sannevaitya sadātmatām | tathaivācetanājjīvo jīvanneti parāṃ gatim || 8 ||

Just as the wind, though motionless, attains its true nature, so too the living being, though unconscious, attains the supreme state while living.

जैसे वायु, भले ही अचल हो, अपनी सच्ची प्रकृति को प्राप्त करती है, वैसे ही जीव, भले ही अचेतन हो, जीवित रहते हुए ही परम अवस्था को प्राप्त करता है।

7.19.9

जीवश्चिद्धनरूपत्वादहमित्येव चेतनात् । देशकालक्रियाद्रव्यशक्तीर्निर्माय तिष्ठति ॥ ९ ॥

jīvaś ciddhanarūpatvād ahamityeva cetanāt | deśakālakriyādravyaśaktīr nirmāya tiṣṭhati || 9 ||

The living being, due to its nature as pure consciousness, exists as 'I' through awareness, creating the powers of space, time, action, and substance.

जीव, अपने शुद्ध चेतना स्वरूप के कारण, 'मैं' के रूप में चेतना के माध्यम से अस्तित्व में है, स्थान, समय, क्रिया और पदार्थ की शक्तियाँ बनाता है।

7.19.10

देशकालक्रियाद्रव्यचर्चिताचर्चितां स्वयम् । असत्यां सत्यवत्स्फारां तावन्मात्रशरीरिकाम् ॥ १० ॥

deśakālakriyādravyacarcitācarcitāṃ svayam | asatyāṃ satyavatsphārāṃ tāvanmātraśarīrikām || 10 ||

The living being itself adorns the unreal with the appearance of reality, through the ornamentation of space, time, action, and substance, limited to that extent.

जीव स्वयं असत्य को स्थान, समय, क्रिया और पदार्थ के अलंकरण के माध्यम से सत्य के रूप में सजाता है, उसी सीमा तक सीमित।

7.19.11

चेतसा ह्यसदाकारां प्रालेयपरमाणुताम्। पश्यत्यात्मन्यथात्मत्वे स्वप्ने स्वमरणोपमाम्॥ ११॥

cetasā hyasadākārāṃ prāleyaparamāṇutām | paśyatyātmanyathātmatve svapne svamaraṇopamām || 11 ||

With the mind, one sees the non-existent form, the ultimate particle of ice, in the self, in the state of selfhood, like death in a dream.

मन से, एक अस्तित्वहीन रूप, बर्फ का अंतिम कण, आत्मा में, आत्मत्व की अवस्था में, स्वप्न में मृत्यु की तरह देखता है।

7.19.12

स्वप्नस्वावयवान्यत्वसदृशीं तां विभावयन्। विस्मृत्य चेतनां सत्तां तत्तामेवाशु गच्छति॥ १२॥

svapnasvāvayavānyatvasadṛśīṃ tāṃ vibhāvayan | vismṛtya cetanāṃ sattāṃ tattāmevāśu gacchati || 12 ||

Meditating on that which is similar to the otherness of the parts of a dream, forgetting the conscious existence, one quickly attains that state.

उस पर ध्यान करते हुए जो स्वप्न के अंगों की अन्यता के समान है, चेतना की अस्तित्व को भूलकर, एक तेजी से उस अवस्था को प्राप्त करता है।

7.19.13

एवंरूपो बुध्यमानः प्रोच्छूनत्वमथात्मनि। पश्यत्याशु स्वमात्मानं चन्द्रबिम्बमिव द्रुतम्॥ १३॥

evaṃrūpo budhyamānaḥ procchūnatvamathātmani | paśyatyāśu svamātmānaṃ candrabimbamiva drutam || 13 ||

Thus, one who is aware sees the self as pure and transparent in the self, like the reflection of the moon quickly.

इस प्रकार, एक जागरूक व्यक्ति आत्मा में आत्मा को शुद्ध और पारदर्शी देखता है, जैसे चंद्रमा का प्रतिबिंब तेजी से।

7.19.14

आत्मन्यथेन्दुबिम्बात्मन्यसौ संवित्तिपञ्चकम्। काकतालीयवद्भिन्नमुदितं चेतति स्वयम्॥ १४॥

ātmanyathendubimbātmanyasau saṃvittipañcakam | kākatālīyavadbhinna muditaṃ cetati svayam || 14 ||

In the self, which is like the reflection of the moon, that fivefold consciousness arises, distinct like the kākatālīya fruit, and is perceived by itself.

आत्मा में, जो चंद्रमा के प्रतिबिंब की तरह है, वह पाँच प्रकार की चेतना उत्पन्न होती है, जो काकतालीय फल की तरह अलग है, और स्वयं द्वारा अनुभव की जाती है।

7.19.15

पञ्चानां संविदां पञ्च भिन्नान्यङ्गान्यसावथ। बुध्यते तानि तद्रूपरन्ध्राण्यनुभवत्यपि॥ १५॥

pañcānāṃ saṃvidāṃ pañca bhinnānyaṅgānyasāvatha | budhyate tāni tadrūparandhrāṇyanubhavatyapi || 15 ||

Of the five consciousnesses, there are five distinct parts, and one perceives them as having the nature of those forms and also experiences their subtle aspects.

पाँच चेतनाओं में से पाँच अलग-अलग अंग हैं, और एक उन्हें उन रूपों की प्रकृति वाला देखता है और उनके सूक्ष्म पहलुओं का भी अनुभव करता है।

7.19.16

स पञ्चावयवः पश्चाद्राजते पुरुषो विराट्। अनन्ताकारसंवित्तिरव्यक्तात्मा निरामयः ॥ १६ ॥

sa pañcāvayavaḥ paścādrājate puruṣo virāṭ | anantākārasaṃvittiravyaktātmā nirāmayaḥ || 16 ||

That five-elemental being, the cosmic man, shines forth afterwards. He is endowed with infinite forms, unmanifested, and free from disease.

वह पाँच तत्वों वाला पुरुष, विराट् पुरुष, बाद में चमकता है। वह अनंत रूपों से युक्त, अव्यक्त और रोगमुक्त है।

7.19.17

मनोमयोऽसावुदितः परस्मात्प्रथमोत्थितः। आकाशविशदः शान्तो नित्यानन्दविभामयः ॥ १७ ॥

manomayo'sāvuditaḥ parasmātprathamotthitaḥ | ākāśaviśadaḥ śānto nityānandavibhāmayaḥ || 17 ||

That being, arising from the supreme, is declared to be mental. He is pure like the sky, peaceful, and full of eternal bliss.

वह पुरुष, जो परम से उत्पन्न होता है, मानसिक कहा जाता है। वह आकाश की तरह शुद्ध, शांत और नित्य आनंद से भरा हुआ है।

7.19.18

स चाप्यपञ्चभूतात्मा पञ्चभूतात्मकोपमः। विराडात्मैकपुरुषः परमः परमेश्वरः ॥ १८ ॥

sa cāpyapañcabhūtātmā pañcabhūtātmakopamaḥ | virāḍātmaikapuruṣaḥ paramaḥ parameśvaraḥ || 18 ||

And that being, though not composed of the five elements, is compared to the five elements. He is the sole cosmic being, the supreme, the supreme Lord.

और वह पुरुष, हालाँकि पाँच तत्वों से नहीं बना है, पाँच तत्वों के समान कहा जाता है। वह एकमात्र विराट् पुरुष, परम, परमेश्वर है।

7.19.19

स्वयमेवाशु भवति स्वयमेव विलीयते। स्वयमेव प्रसरति स्वयं संकोचमेति च ॥ १९ ॥

svayamevāśu bhavati svayameva vilīyate | svayameva prasarati svayaṃ saṃkocameti ca || 19 ||

Itself quickly becomes, itself dissolves, itself expands, and itself contracts.

स्वयं ही शीघ्र बन जाता है, स्वयं ही विलीन हो जाता है, स्वयं ही फैलता है, और स्वयं ही सिकुड़ जाता है।

7.19.20

स्वसंकल्पकृतेनासौ कल्पौघेन क्षणेन च। यदृच्छयोदेति पुनः पुनर्भूत्वोपशाम्यति ॥ २० ॥

svasaṃkalpakṛtenāsau kalpaughena kṣaṇena ca | yadṛcchayodeti punaḥ punarbhūtvopaśāmyati || 20 ||

By its own will, it arises with a multitude of forms in an instant, and again and again, it arises spontaneously and then subsides.

अपनी ही इच्छा से, यह एक ही क्षण में अनेक रूपों में उत्पन्न होता है, और बार-बार, स्वतः ही उत्पन्न होता है और फिर शांत हो जाता है।

7.19.21

मनोमात्रैकरूपात्मा प्रकृतेर्देह एष सः। एष पुर्यष्टकं प्रोक्तः सर्वस्यैवातिवाहिकः ॥ २१ ॥

manomātraikarūpātmā prakṛterdeha eṣa saḥ | eṣa puryaṣṭakaṃ proktaḥ sarvasyaivātivāhikaḥ || 21 ||

The body is the manifestation of the mind, which is the sole form of the self. This body is said to be the eightfold city, the great carrier of all.

यह शरीर मन का एकमात्र रूप है, जो आत्मा का प्रकटीकरण है। यह शरीर आठ अंगों वाला नगर कहलाता है, जो सबका महान वाहक है।

7.19.22

सूक्ष्मः स्थूलोऽम्बरात्मैष व्यक्तोऽव्यक्तोन्तवर्जितः । सर्वस्य बहिरन्तश्च न किंचित्किंचिदेव च ॥ २२ ॥

sūkṣmaḥ sthūlo'mbarātmaiṣa vyakto'vyaktonantavarjitaḥ | sarvasyabahirantaśca na kiṃcitkiṃcideva ca || 22 ||

This subtle and gross body is the embodiment of the self, manifest and unmanifest, devoid of beginning and end. It is both external and internal to all, neither something nor nothing.

यह सूक्ष्म और स्थूल शरीर आत्मा का प्रतीक है, व्यक्त और अव्यक्त, आदि और अंत से रहित। यह सबके लिए बाहरी और आंतरिक दोनों है, न कुछ है न कुछ नहीं।

7.19.23

अङ्गानि राम तस्याष्टौ मनःषष्ठानि पञ्च च । साहंभावानीन्द्रियाणि भावाभावमयानि च ॥ २३ ॥

aṅgāni rāma tasyāṣṭau manaḥṣaṣṭhāni pañca ca | sāhaṃbhāvānīndriyāṇi bhāvābhāvamayāni ca || 23 ||

O Rama, the eight components of that body are the five sense organs, the mind as the sixth, the ego, and the elements of existence and non-existence.

हे राम, उस शरीर के आठ अंग हैं - पाँच इंद्रियाँ, मन छठा, अहंकार, और अस्तित्व और अनस्तित्व के तत्व।

7.19.24

तेन गीता इमे वेदाः सहशब्दार्थकल्पनाः । नियतिः स्थापिता तेन तथाद्यापि यथास्थिता ॥ २४ ॥

tena gītā ime vedāḥ sahaśabdārthakalpanāḥ | niyatiḥ sthāpitā tena tathādyāpi yathāsthitā || 24 ||

By that, these Vedas along with their meanings and sounds are sung. By that, destiny is established, and it remains as it is even today.

उसके द्वारा, ये वेद उनके अर्थों और शब्दों के साथ गाए जाते हैं। उसके द्वारा, नियति स्थापित होती है, और यह आज भी वैसे ही बनी हुई है।

7.19.25

अनन्तमूर्ध्वं मूर्धास्य तथाधः पादयोस्तलम् । अपराकाशमुदरमिदं ब्रह्माण्डमण्डपम् ॥ २५ ॥

anantamūrdhvaṃ mūrdhāsya tathādhaḥ pādayostalam | aparākāśamudaramidaṃ brahmāṇḍamaṇḍapam || 25 ||

The head is infinite above, and the feet are the base below. This is the vast space of the universe, the hall of the cosmic egg.

सिर ऊपर अनंत है, और पैर नीचे आधार हैं। यह ब्रह्मांड का विशाल अंतरिक्ष है, ब्रह्मांड का मंडप।

7.19.26

लोकान्तराण्यनन्तानि पार्श्वकाः क्षतजं पयः ।मांसपेश्यः क्षितिधराः सरितः संततााः शिराः ॥२६ ॥

lokāntarāṇyanantāni pārśvakāḥ kṣatajaṃ payaḥ|māṃsapeyaḥ kṣitidharāḥ saritaḥ saṃtatāḥ śirāḥ||26||

The countless worlds are the sides, the blood is the water, the flesh is the earth, the rivers are the continuous veins.

अनगिनत लोक पार्श्व हैं, खून पानी है, मांस पृथ्वी है, नदियाँ नाड़ियों की तरह हैं।

7.19.27

रक्ताधारा जलधयो द्वीपान्येवान्त्रवेष्टनम् ।बाहवः ककुभः स्फारास्तारका रोमसंततिः ॥२७ ॥

raktādhārā jaladhayo dvīpānyevāntraveṣṭanam|bāhavaḥ kakubhaḥ sphārāstārakā romasaṃtatiḥ||27||

The blood vessels are the clouds, the islands are the intestines, the arms are the directions, the stars are the continuous hairs.

रक्त नाड़ियाँ बादल हैं, द्वीप आँतें हैं, बाहें दिशाएँ हैं, तारे बाल हैं।

7.19.28

पञ्चाशदनिलस्कन्धा एकोनाः प्राणवायवः ।मार्तण्डमण्डलं चण्डं पित्तं जठरपावकः ॥२८ ॥

pañcāśadanilaskandhā ekōnāḥ prāṇavāyavaḥ|mārtaṇḍamaṇḍalaṃ caṇḍaṃ pittaṃ jaṭharapāvakaḥ||28||

The fifty winds are the shoulders, the eleven vital airs are the life breaths, the fierce sun is the bile, the digestive fire is the stomach fire.

पचास वायु कंधे हैं, ग्यारह प्राण वायु प्राण हैं, तेजस्वी सूर्य पित्त है, जठराग्नि पाचक आग है।

7.19.29

शशाङ्कमण्डलं जीवः श्लेष्मा शुक्रं सितं बलम् ।मनः संकल्पकोशात्म सारात्मा परमामृतम् ॥२९ ॥

śaśāṅkamaṇḍalaṃ jīvaḥ śleṣmā śukraṃ sitaṃ balam|manaḥ saṃkalpakośātma sārātmā paramāmṛtam||29||

The moon is the life, the phlegm is the semen, the white is the strength, the mind is the essence of resolve, the essence of the self is the supreme nectar.

चंद्रमा जीव है, कफ शुक्र है, सफेद बल है, मन संकल्प का आत्मा है, आत्मा का सार परम अमृत है।

7.19.30

मूलं शरीरवृक्षस्य बीजं कर्मद्रुमस्य च ।प्रसवात्सर्वभावानामिन्दुरानन्दकारणम् ॥३० ॥

mūlaṃ śarīravṛkṣasya bījaṃ karmadrumasya ca|prasavātsarvabhāvānāmindurānandakāraṇam||30||

The root of the bodily tree is the seed of the tree of action, from which all beings are born, and the moon is the cause of bliss.

शरीर के वृक्ष की जड़ कर्म के वृक्ष का बीज है, जिससे सभी प्राणियों का जन्म होता है, और चंद्रमा आनंद का कारण है।

7.19.31

यदिन्दुमण्डलं नाम स सम्राड् जीव उच्यते । शरीरकर्ममनसां बीजं मूलं च कुरणम् ॥ ३१ ॥

yadindumaṇḍalaṃ nāma sa samrāḍ jīva ucyate | śarīrakarmamanasāṃ bījaṃ mūlaṃ ca kuraṇam || 31 ||

The one who is called the supreme ruler, the individual soul, is like the orb of the moon. It is the seed and the root of the body, actions, and mind.

जो परम शासक कहलाता है, वह जीव चन्द्रमण्डल के समान है। वह शरीर, कर्म और मन का बीज और मूल है।

7.19.32

अस्मादिन्दुविराड्जीवात्प्रसरन्ति जगत्त्रये । जीवा मनांसि कर्माणि सुखान्यत्रामृतानि च ॥ ३२ ॥

asmādinduvirāḍjīvātprasaranti jagattraye | jīvā manāṃsi karmāṇi sukhānyatrāmṛtāni ca || 32 ||

From this supreme ruler, the individual soul, emanate the three worlds. The individual souls, minds, actions, pleasures, and immortalities spread out in these worlds.

इस परम शासक, जीव से तीनों लोक फैलते हैं। जीव, मन, कर्म, सुख और अमृतता इन लोकों में फैलते हैं।

7.19.33

विराज एते संकल्पा ब्रह्मविष्णुहरादयः । तस्य चित्तचमत्काराः सुरासुरनभश्चराः ॥ ३३ ॥

virāja ete saṃkalpā brahmaviṣṇuharādayaḥ | tasya cittacamatkārāḥ surāsuranabhaścarāḥ || 33 ||

These resolutions of the supreme ruler are Brahma, Vishnu, Shiva, and others. The marvels of his mind are the gods, demons, and celestial beings.

इस परम शासक के संकल्प ब्रह्मा, विष्णु, शिव और अन्य हैं। उसके मन के चमत्कार देवता, असुर और आकाशचारी हैं।

7.19.34

चित्स्वभावो बुध्यमानः प्रालेयपरमाणुताम्। यदादौ भावयत्याशु तदा तत्रैव तिष्ठति ॥ ३४ ॥

citsvabhāvo budhyamānaḥ prāleyaparamāṇutām | yadādau bhāvayatyāśu tadā tatraiva tiṣṭhati || 34 ||

The nature of consciousness, when it becomes aware, instantly assumes the form of the smallest particle of ice. At that very moment, it remains there.

चेतना का स्वभाव, जब वह सजग होता है, तुरंत बर्फ के सबसे छोटे कण का रूप धारण कर लेता है। उसी क्षण में, वह वहीं रहता है।

7.19.35

तेनैतदेव जीवस्य स्थानं विद्धि रघूद्वह। पञ्चावयवमेतत्तच्छरीरमनुभूयते ॥ ३५ ॥

tenaitadeva jīvasya sthānaṃ viddhi raghūdvaha | pañcāvayavametattaccharīramanubhūyate || 35 ||

Therefore, know this to be the abode of the individual soul, O Raghava. This body is experienced as consisting of five elements.

इसलिए, हे रघुवंशी, इसे जीव का निवास समझो। यह शरीर पाँच तत्वों से बना हुआ अनुभव किया जाता है।

7.19.36

विराड्जीवाच्चन्द्रमसो जीवभूतानि देहिनाम्। प्रसरन्त्यन्नजातानि प्रालेयविसरात्मना ॥ ३६ ॥

virāḍjīvāccaandramaso jīvabhūtāni dehināṃ | prasarantyanajātāni prāleyavisarātmanā || 36 ||

From the moon, which is the life of Virat, the living beings of the embodied ones spread out, like the flow of water from ice.

विराट् के जीवन से चन्द्रमा से देहधारियों के जीव फैलते हैं, जैसे बर्फ से पानी का प्रवाह।

7.19.37

तान्येव देहिदेहेषु जीवा जीवन्ति जीविषु। मनो भूत्वा विचेष्टन्ते कर्म जन्मसु कारणम्॥ ३७ ॥

tānyeva dehideheṣu jīvā jīvanti jīviṣu | mano bhūtvā viceṣṭante karma janmasu kāraṇam || 37 ||

Those very beings live in the bodies of the living, moving as the mind, the cause of actions in births.

वही जीव देहधारियों के शरीरों में रहते हैं, मन के रूप में चलते हैं, जो जन्मों में कर्मों का कारण है।

7.19.38

एवं विराट्सहस्राणि महाकल्पशतानि च। गतान्यथ भविष्यन्ति नानाचाराणि सन्ति च ॥ ३८ ॥

evaṃ virāṭsahasrāṇi mahākalpaśatāni ca | gatānyatha bhaviṣyanti nānācārāṇi santi ca || 38 ||

Thus, thousands of Virats and hundreds of great eons have passed and will come, and there are various behaviors.

इस प्रकार, हजारों विराट् और सैकड़ों महाकल्प बीत चुके हैं और आएँगे, और विभिन्न व्यवहार हैं।

7.19.39

सर्वतोऽनुभवरूपयानया सत्तयोत्तमपदादभिन्नया। अन्तवर्जितमहाङ्गसङ्गया तिष्ठतीति पुरुषः परो विराट्॥ ३९ ॥

sarvato'nubhavarūpayānayā sattayottamapadādabhinnayā | antavarjitamahāṅgasangayā tiṣṭhatīti puruṣaḥ paro virāṭ || 39 ||

The supreme Purusha, Virat, exists in the form of universal experience, inseparable from the highest state of existence, free from the association with the great elements.

परम पुरुष, विराट्, सार्वभौमिक अनुभव के रूप में अस्तित्व में है, जो अस्तित्व की उच्चतम अवस्था से अलग नहीं है, और महाभूतों से संबंध से मुक्त है।

Chapter 20

7.20.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संकल्पपुरुषस्त्वेष यद्यत्कल्पयति स्वयम् । तत्तथा तादृशं पञ्चभूतात्मा भवतीव खम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sāṃkalpapuruṣastveṣa yadyatkalpayati svayam | tattathā tādṛśaṃ pañcabhūtātmā bhavatīva kham || 1 ||

Śrīvasiṣṭha said: This individual with resolve, whatever he imagines by himself, that indeed becomes of such a nature, as if the five elements were to become like that.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: यह संकल्पपुरुष, जो भी स्वयं कल्पना करता है, वह उसी तरह से होता है, जैसे पाँच भूत उसी प्रकार के हो जाते हैं।

7.20.2

सर्वं राम जगज्जातं तत्संकल्पं विदुर्बुधाः । तादृग्रूपं पञ्चकात्मविषयोन्मुखमाततम् ॥ २ ॥

sarvaṃ rāma jagajjātaṃ tatsaṃkalpaṃ vidurbudhāḥ | tādṛgrūpaṃ pañcakātmaviṣayonmukhamātatam || 2 ||

O Rāma, the entire world that has been created is known by the wise to be the result of that resolve. It is of such a nature, facing the five elements.

हे राम, सम्पूर्ण सृष्टि जो उत्पन्न हुई है, वह उस संकल्प का परिणाम है, जिसे बुद्धिमान लोग जानते हैं। वह उसी प्रकार की है, जो पाँच भूतों की ओर मुख करती है।

7.20.3

जगत्पदार्थसार्थस्य विराट् सर्वस्य कारणम् । कारणेन समान्येव कार्याणि च भवन्त्यतः ॥ ३ ॥

jagatpadārthasārthasya virāṭ sarvasya kāraṇam | kāraṇena samānyeva kāryāṇi ca bhavantyataḥ || 3 ||

The cause of the entire world and its objects is the universal (virat). Therefore, the effects are similar to the cause.

सम्पूर्ण सृष्टि और उसके पदार्थों का कारण विराट (विश्व) है। इसलिए, परिणाम कारण के समान होते हैं।

7.20.4

यथैष स विराडेव विराट् प्रत्येकमात्मनि । स्वसंविदि प्रसरति बोधवान्न त्वबोधवान् ॥ ४ ॥

yathaiṣa sa virāḍeva virāṭ pratyekamātmani | svasaṃvidyapi prasarati bodhavānna tvabodhavān || 4 ||

Just as the universal (virat) itself, the universal (virat) spreads in every individual self-awareness, the wise one, not the ignorant one.

जैसे विराट (विश्व) स्वयं, विराट (विश्व) प्रत्येक आत्मा में फैलता है, बुद्धिमान व्यक्ति में, न कि अज्ञानी में।

7.20.5

आसरीसृपमारुद्रमेवमभ्युदितो भ्रमः । अणावप्यद्रिविस्तारो बीजकोश इव द्रुमः ॥ ५ ॥

āsarīsṛpamārudra mevamabhyudito bhramaḥ | aṇāvapyadrivistāro bījakośa iva drumaḥ || 5 ||

Thus, the delusion arises like a serpent, a demon, or a storm. Even in an atom, there is an expansion like a mountain, like a tree from a seed.

इस प्रकार, भ्रम उत्पन्न होता है जैसे सर्प, दानव या तूफान। एक अणु में भी पर्वत की तरह विस्तार होता है, जैसे बीज से पेड़।

7.20.6

आसरीसृपमारुद्रं विराट् प्रत्येकमात्मनि । पराणावप्यनन्तात्मबोधतो न त्वबोधतः ॥ ६ ॥

āsarīsṛpamārudraṃ virāṭ pratyekamātmani | parāṇāvapyanantātmabodhato na tvabodhataḥ || 6 ||

The subtle, the gross, and the cosmic forms are all perceived within the individual self. They are known through the realization of the supreme self, not through ignorance.

सूक्ष्म, स्थूल और विराट् रूप सभी व्यक्तिगत आत्मा में देखे जाते हैं। ये परम आत्मा के ज्ञान से जाने जाते हैं, अज्ञान से नहीं।

7.20.7

यादृगेव विराडात्मन्येष विस्तार आगतः । तादृगेवेह सर्वस्मिन्नणुमात्रेऽपि भूतके ॥ ७ ॥

yādṛgeva virāḍātmanyeṣa vistāra āgataḥ | tādṛgeveha sarvasminnaṇumātre'pi bhūtake || 7 ||

Just as this expansion has come into the cosmic self, so too it exists in every minute particle.

जैसे यह विस्तार विराट् आत्मा में आया है, वैसे ही यह हर अणु में भी मौजूद है।

7.20.8

परमार्थेन न स्थूलं न सूक्ष्मं किंचन क्वचित् । यद्यथा विततं यत्र तत्तथाश्वनुभूयते ॥ ८ ॥

paramārthena na sthūlaṃ na sūkṣmaṃ kiṃcana kvacit | yadyathā vitataṃ yatra tattathāśvanubhūyate || 8 ||

In reality, there is nothing gross or subtle anywhere. Whatever is spread out, it is experienced as such.

वास्तव में, कहीं भी कोई स्थूल या सूक्ष्म नहीं है। जो भी फैला हुआ है, वह ऐसे ही अनुभव किया जाता है।

7.20.9

मनश्चन्द्रमसो जातं मनसश्चन्द्र उत्थितः । जीवाज्जीवोऽथवैकैषा सत्ता द्रवजलाङ्गवत् ॥ ९ ॥

manaścandramaso jātaṃ manasaścandra utthitaḥ | jīvājjīvo'thavaikaiṣā sattā dravajalāṅgavat || 9 ||

The mind is born from the moon, and the moon arises from the mind. From the individual soul comes the individual soul, and this existence is like flowing water.

मन चंद्रमा से उत्पन्न होता है, और चंद्रमा मन से उत्पन्न होता है। जीव से जीव उत्पन्न होता है, और यह अस्तित्व बहते पानी की तरह है।

7.20.10

शुक्रसारं विदुर्जीवं प्रालेयकणसंनिभम् । आनन्दोऽचलसंदोहस्तत एव प्रवर्तते ॥ १० ॥

śukrasāraṃ vidurjīvaṃ prāleyakaṇasannibham | ānando'calasaṃdohastata eva pravartate || 10 ||

The individual soul is known to be the essence of semen, resembling a particle of hail. Bliss arises from that immovable accumulation.

जीव शुक्र का सार माना जाता है, और ओले के कण के समान है। आनंद उस अचल संचय से उत्पन्न होता है।

7.20.11

तं चेतति तदाभासं पूर्णमात्मस्थमात्मना । तत्र तन्मयतां धत्ते तेन तन्मयरूपिणी ॥ ११ ॥

taṃ cetati tadābhāsaṃ pūrṇamātmastamātmanā | tatra tanmayatāṃ dhatte tena tanmayarūpiṇī || 11 ||

The self, when it perceives that reflection, becomes complete and situated in the self. There, it assumes the nature of that, and thus becomes of that nature.

जब आत्मा उस प्रतिबिंब को देखता है, तो वह पूर्ण और आत्मा में स्थित हो जाता है। वहाँ, वह उसके स्वभाव को धारण करता है, और इस प्रकार उसी स्वभाव का हो जाता है।

7.20.12

जीवसंविदथैषान्तर्यदुपायाति पञ्चताम्। न तत्र कारणं किंचिद्विद्यते न च कार्यता ॥ १२ ॥

jīvasaṃvidathaiṣāntaryadupāyāti pañcatām | na tatra kāraṇaṃ kiṃcidvidyate na ca kāryatā || 12 ||

This inner awareness of the individual self reaches the state of fivefold nature. There is no cause or effect in that.

यह व्यक्तिगत आत्मा की आंतरिक चेतना पंचता की अवस्था तक पहुँचती है। उसमें कोई कारण या परिणाम नहीं है।

7.20.13

प्रतियोगिव्यवच्छित्तेरभावात्स्वस्वभावयोः। स्वभावोक्तिर्न चैवात्र भवत्यर्थानुसारिणी ॥ १३ ॥

pratiyogivyavacchittērabhāvātsvasvabhāvayōḥ | svabhāvōktirna caivātra bhavatyarthānusāriṇī || 13 ||

Due to the absence of distinction between the opposites, there is no description of their respective natures here that follows the meaning.

विरोधियों के भेद की अनुपस्थिति के कारण, यहाँ उनके स्वभाव का कोई वर्णन नहीं है जो अर्थ का अनुसरण करे।

7.20.14

जीवो जीवत्वमेव स्वजीवत्वादेव च स्वतः। अन्तस्त्वेन वहिष्ट्वेन दृश्यते न च वायुवत् ॥ १४ ॥

jīvō jīvatvamēva svajīvatvādēva ca svataḥ | antastvēna vahiṣṭvēna dṛśyatē na ca vāyuvat || 14 ||

The individual self is perceived as having life due to its own nature, both internally and externally, but not like the wind.

व्यक्तिगत आत्मा अपने स्वभाव के कारण जीवन वाली देखी जाती है, आंतरिक और बाह्य दोनों रूपों में, लेकिन वायु की तरह नहीं।

7.20.15

नीहारेणेव संवीतश्चेत्यवस्तुपरायणः। जात्यन्ध इव पन्थानं मारुतात्मा न पश्यति ॥ १५ ॥

nīhārēṇēva saṃvītaścētyavastuparāyaṇaḥ | jātyandha iva panthānaṃ mārutātmā na paśyati || 15 ||

Covered with fog, devoted to perceiving objects, like a blind person, the wind-self does not see the path.

कुहरे से ढका हुआ, वस्तुओं को देखने में लगा हुआ, जैसे अंधा व्यक्ति, वायु-आत्मा मार्ग नहीं देखता।

7.20.16

जगज्जृम्भिकया जीवः स्वमैक्यं द्वित्वमास्थितः। स्पन्दशक्त्येव पवन आवृतात्मा न पश्यति ॥ १६ ॥

jagajjṛmbhikayā jīvaḥ svamaikyaṃ dvitvamāsthitaḥ | spandaśaktyeva pavana āvṛtātmā na paśyati || 16 ||

The individual soul, awakened by the worldly illusion, remains in duality, not perceiving the self, which is veiled by the power of vibration.

जीव जगत् के भ्रम से जागृत होकर द्वैत में रहता है, स्पन्द शक्ति से आवृत आत्मा को नहीं देख पाता।

7.20.17

अज्ञानस्य महाग्रन्थेर्मिथ्यावेद्यात्मनोऽसतः। अहमित्यर्थरूपस्य भेदो मोक्ष इति स्मृतः ॥ १७ ॥

ajñānasya mahāgranthermithyāvedyātmano'sataḥ | ahamityartharūpasya bhedo mokṣa iti smṛtaḥ || 17 ||

The differentiation of the self, which is falsely perceived as 'I' due to the great knot of ignorance, is considered liberation.

अज्ञान के महान ग्रंथि के कारण जो आत्मा गलत रूप से 'मैं' के रूप में जाना जाता है, उसका भेद मोक्ष माना जाता है।

7.20.18

व्यपगतघनचेतनः समन्तादहमिति नूनमबुध्यमान आस्व । अनभिधघनचेतनैकरूपः क्षितसदसत्सदसत्सदोदितश्च ॥ १८ ॥

vyapagataghanacetanaḥ samantādahamiti nūnamabudhyamāna āsva | anabhidhaghanacetanaikarūpaḥ kṣitasadasatsadasatoditaśca || 18 ||

The one who has lost the dense consciousness, realizing 'I am' from all sides, should remain. The one who is of the form of undivided dense consciousness is described as existing, non-existing, both existing and non-existing, and neither existing nor non-existing.

जो घन चेतना खो चुका है, सब ओर से 'मैं हूँ' को जानकर, रहना चाहिए। जो अविभाजित घन चेतना के रूप में है, उसे अस्तित्वमान, अनस्तित्वमान, दोनों अस्तित्वमान और अनस्तित्वमान, और न अस्तित्वमान न अनस्तित्वमान के रूप में वर्णित किया जाता है।

Chapter 21

7.21.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ज्ञानिनैव सदा भाव्यं राम न ज्ञानबन्धुना । अज्ञातारं वरं मन्ये न पुनर्ज्ञानबन्धुताम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jñāninaiva sadā bhāvyaṃ rāma na jñānabandhunā | ajñātāraṃ varaṃ manye na punarjñānabandhutām || 1 ||

Vasishtha said: One should always be a knower, O Rama, not a friend of knowledge. I consider ignorance to be better than being a friend of knowledge.

वसिष्ठ ने कहा: हे राम, हमेशा ज्ञानी होना चाहिए, ज्ञान के मित्र नहीं। मैं अज्ञान को ज्ञान के मित्र होने से बेहतर मानता हूँ।

7.21.2

श्रीराम उवाच । किमुच्यते ज्ञानबन्धुर्ज्ञानी चैव किमुच्यते । किं फलं ज्ञानबन्धुत्वे ज्ञानित्वेऽपि च किं फलम् ॥ २ ॥

śrīrāma uvāca | kimucyate jñānabandhurjñānī caiva kimucyate | kiṃ phalaṃ jñānabandhutve jñānitve'pi ca kiṃ phalam || 2 ||

Rama said: What is meant by a friend of knowledge and what is meant by a knower? What is the result of being a friend of knowledge and what is the result of being a knower?

राम ने कहा: ज्ञान के मित्र का क्या अर्थ है और ज्ञानी का क्या अर्थ है? ज्ञान के मित्र होने का क्या फल है और ज्ञानी होने का क्या फल है?

7.21.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । व्याचष्टे यः पठति च शास्त्रं भोगाय शिल्पिवत् । यतते न त्वनुष्ठाने ज्ञानबन्धुः स उच्यते ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vyācaṣṭe yaḥ paṭhati ca śāstraṃ bhogāya śilpivat | yatate na tv anuṣṭhāne jñānabandhuḥ sa ucyate || 3 ||

Vasishtha said: One who explains and reads the scriptures for enjoyment like a craftsman, but does not strive for their practice, is called a friend of knowledge.

वसिष्ठ ने कहा: जो शास्त्र को भोग के लिए शिल्पकार की तरह समझाता और पढ़ता है, लेकिन उनके अनुष्ठान के लिए प्रयास नहीं करता, उसे ज्ञान का मित्र कहा जाता है।

7.21.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । कर्मस्पन्देषु नो बोधः फलितो यस्य दृश्यते । बोधशिल्पोपजीवित्वाज्ज्ञानबन्धुः स उच्यते ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | karmaspaṇdeṣu no bodhaḥ phalito yasya dṛśyate | bodhaśilpōpajīvitvāj jñānabandhuḥ sa ucyate || 4 ||

Vasishtha said: One whose understanding does not bear fruit in actions, and who lives by the craft of knowledge, is called a friend of knowledge.

वसिष्ठ ने कहा: जिसका बोध कर्मों में फलित नहीं होता है और जो ज्ञान के शिल्प से जीविका चलाता है, उसे ज्ञान का मित्र कहा जाता है।

7.21.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । वसनाशनमात्रेण तुष्टाः शास्त्रफलानि ये । जानन्ति ज्ञानबन्धूंस्तान्विद्याच्छास्त्रार्थशिल्पिनः ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vasanāśanamātreṇa tuṣṭāḥ śāstra phalāni ye | jānanti jñānabandhūṃstān vidyācchāstrārthaśilpinaḥ || 5 ||

Vasishtha said: Those who are satisfied with mere clothing and food, and who know the fruits of the scriptures, are called friends of knowledge, skilled in the craft of scriptural meaning.

वसिष्ठ ने कहा: जो मात्र वस्त्र और भोजन से संतुष्ट हैं, और जो शास्त्रों के फलों को जानते हैं, उन्हें ज्ञान के मित्र कहा जाता है, जो शास्त्र के अर्थ के शिल्प में कुशल हैं।

7.21.6

प्रवृत्तिलक्षणे धर्मे वर्तते यः श्रुतोचिते अदूरवर्तिज्ञानत्वाज्ज्ञानबन्धुः स उच्यते ॥ ६ ॥

pravṛttilakṣaṇe dharme vartate yaḥ śrutocite adūravartijñānatvājjñānabandhuḥ sa ucyate || 6 ||

One who engages in virtuous actions as prescribed by the scriptures, and who possesses knowledge that is not distant, is called a friend of knowledge.

जो शास्त्रों के अनुसार धर्मात्मक कर्मों में लगा हुआ है और जिसके पास दूर नहीं होने वाला ज्ञान है, वह ज्ञान का बंधु कहलाता है।

7.21.7

आत्मज्ञानं विदुर्ज्ञानं ज्ञानान्यन्यानि यानि तु तानि ज्ञानावभासानि सारस्याऽनवबोधनात् ॥ ७ ॥

ātmajñānaṃ vidurjñānaṃ jñānānyanyāni yāni tu tāni jñānāvabhāsāni sārasyā'navabodhanāt || 7 ||

Knowledge of the Self is considered true knowledge. Other forms of knowledge are mere reflections of this true knowledge, as they do not reveal the essence.

आत्मज्ञान ही सच्चा ज्ञान माना जाता है। अन्य ज्ञान के रूप इस सच्चे ज्ञान के अभास मात्र हैं, क्योंकि वे सार को प्रकट नहीं करते।

7.21.8

आत्मज्ञानमनासाद्य ज्ञानान्तरलवेन ये संतुष्टाः कष्टचेष्टं ते ते स्मृता ज्ञानबन्धवः ॥ ८ ॥

ātmajñānamanāsādya jñānāntaralavena ye saṃtuṣṭāḥ kaṣṭaceṣṭaṃ te te smṛtā jñānabandhavaḥ || 8 ||

Those who are content with other forms of knowledge without attaining self-knowledge are considered to be engaged in futile efforts and are called friends of knowledge.

जो आत्मज्ञान को प्राप्त किए बिना अन्य ज्ञान के रूप से संतुष्ट होते हैं, वे व्यर्थ प्रयासों में लगे हुए हैं और ज्ञान के बंधु कहलाते हैं।

7.21.9

ज्ञानादितज्ज्ञेयविकाशशान्त्या विना न संतुष्टधियेह भाव्यम् त्वं ज्ञानबन्धुत्वमुपेत्य राम रमस्व मा भोगभवामयेषु ॥ ९ ॥

jñānāditaijjñeyavikāśaśāntyā vinā na saṃtuṣṭadhiyeha bhāvyam tvam jñānabandhutvamupetya rāma ramasva mā bhogabhavāmayeṣu || 9 ||

Without the tranquility that comes from the expansion of knowledge and the known, one cannot be content. O Rama, having attained the state of a friend of knowledge, rejoice and do not indulge in worldly pleasures.

ज्ञान और ज्ञेय के विकास से उत्पन्न शांति के बिना कोई संतुष्ट नहीं हो सकता। हे राम, ज्ञान के बंधु की स्थिति प्राप्त करके, आनंद लो और भोगों में न लगो।

7.21.10

अत्राहारार्थं कर्म कुर्यादनिन्द्यं कुर्यादाहारं प्राणसंधारणार्थम् प्राणाः संधार्यास्तत्त्वजिज्ञासनार्थं तत्त्वं जिज्ञास्यं येन भूयो न दुःखम् ॥ १० ॥

atrāhārārthaṃ karma kuryādanindyaṃ kuryādāhāraṃ prāṇasaṃdhāraṇārtham prāṇāḥ saṃdhāryāstatvajijñāsanārthaṃ tattvaṃ jijñāsyaṃ yena bhūyo na duḥkham || 10 ||

One should perform actions for the sake of food, and food should be consumed for the sustenance of life. Life should be sustained for the sake of inquiring into the truth, and the truth should be inquired into so that there is no more suffering.

कर्म आहार के लिए किया जाना चाहिए, और आहार प्राण संधारण के लिए लिया जाना चाहिए। प्राण तत्त्व की जिज्ञासा के लिए संधारित किए जाने चाहिए, और तत्त्व की जिज्ञासा इसलिए की जानी चाहिए ताकि फिर से दुःख न हो।

Chapter 22

7.22.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ज्ञानेन ज्ञेयनिष्ठत्वाद्योऽचित्तं चित्तमेव च । न बुध्यते कर्मफलं स ज्ञानीत्यभिधीयते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jñānena jñeyaniṣṭhatvādyo'cittaṃ cittameva ca | na budhyate karmaphalaṃ sa jñānītyabhidhīyate || 1 ||

Shri Vasishtha said: One who, through knowledge, sees the unreal as real, does not perceive the results of actions; such a person is called a knower.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो व्यक्ति ज्ञान के द्वारा असत्य को सत्य समझता है, वह कर्म के फल को नहीं जानता, ऐसा व्यक्ति ज्ञानी कहलाता है।

7.22.2

ज्ञात्वा सम्यगनुज्ञानं दृश्यते येन कर्मसु । निर्वासनात्मकं ज्ञस्य स ज्ञानीत्यभिधीयते ॥ २ ॥

jñātvā samyaganujñānaṃ dṛśyate yena karmasu | nirvāsanātmakaṃ jñasya sa jñānītyabhidhīyate || 2 ||

One who, having known the true knowledge, sees actions as devoid of desire, is called a knower.

जो व्यक्ति सत्य ज्ञान को जानकर, कर्मों को इच्छा से रहित देखता है, ऐसा व्यक्ति ज्ञानी कहलाता है।

7.22.3

अन्तःशीतलतेहासु प्राज्ञैर्यस्यावलोक्यते । अकृत्रिमैकशान्तस्य स ज्ञानीत्यभिधीयते ॥ ३ ॥

antaḥśītalatehāsu prājñairyasyāvalokyate | akṛtrimaikekśāntasya sa jñānītyabhidhīyate || 3 ||

One who is seen by the wise to have a cool and calm inner disposition, free from artificiality and completely peaceful, is called a knower.

जो व्यक्ति ज्ञानियों द्वारा अंतर में शीतल और शांत देखा जाता है, जो कृत्रिमता से रहित और पूर्णतः शांत है, ऐसा व्यक्ति ज्ञानी कहलाता है।

7.22.4

अपुनर्जन्मने यः स्याद्बोधः स ज्ञानशब्दभाक् । वसनाशनदा शेषा व्यवस्था शिल्पजीविका ॥ ४ ॥

apunarjanmane yaḥ syādbodhaḥ sa jñānaśabdabhāk | vasanāśanadā śeṣā vyavasthā śilpajīvikā || 4 ||

The knowledge that leads to no rebirth is called true knowledge. The rest, such as livelihood and crafts, are merely means of sustenance.

जो ज्ञान पुनर्जन्म को नहीं ले जाता, वही सच्चा ज्ञान कहलाता है। बाकी सब, जैसे जीविका और शिल्प, केवल जीवन निर्वाह के साधन हैं।

7.22.5

प्रवाहपतिते कार्ये कामसंकल्पवर्जितः । तिष्ठत्याकाशहृदयो यः स पण्डित उच्यते ॥ ५ ॥

pravāhapatite kārye kāmasaṃkalpavarjitaḥ | tiṣṭhatyākāśahṛdayo yaḥ sa paṇḍita ucyate || 5 ||

One who, in the flow of actions, is free from desires and resolutions, and remains with a heart as vast as the sky, is called a wise person.

जो व्यक्ति कर्मों के प्रवाह में इच्छा और संकल्प से रहित है और आकाश के समान विशाल हृदय से रहता है, ऐसा व्यक्ति पंडित कहलाता है।

7.22.6

अकारणं प्रवर्तन्त इव भावा अकारणात् । अविद्यमाना अप्येतेऽविद्यमाना इव स्थिताः ॥ ६ ॥

akāraṇaṃ pravartanta iva bhāvā akāraṇāt| avidyamānā apyete'vidyamānā iva sthitāḥ || 6 ||

Things appear to arise without cause, and though they are non-existent, they appear to exist.

चीजें बिना कारण के उत्पन्न होती हैं, और यद्यपि वे अस्तित्वहीन हैं, वे अस्तित्ववान प्रतीत होती हैं।

7.22.7

आविर्भावतिरोभावैर्भावाभावभवाभवैः। पश्चात्कारणतां यान्ति मिथः कारणकर्मभिः ॥ ७ ॥

āvirbhāvatirōbhāvairbhāvābhāvabhavābhavaibh| paścātkāraṇatāṃ yānti mithaḥ kāraṇakarmabhiḥ || 7 ||

Things appear and disappear, existing and non-existing, and subsequently become causes and effects.

चीजें प्रकट होती हैं और अप्रकट होती हैं, अस्तित्व और अनस्तित्व में रहती हैं, और फिर कारण और कार्य बन जाती हैं।

7.22.8

असतः शशश्रृङ्गादेर्मृगतृष्णाम्भसो यथा। आलोकनादलभ्यस्य कीदृक् स्यात्किल कारणम् ॥ ८ ॥

asataḥ śaśaśṛṅgādermṛgatṛṣṇāmbhaso yathā| ālōkanādalabhyasya kīdṛk syātkila kāraṇam || 8 ||

Just as the horns of a hare or the mirage water are non-existent, how can there be a cause for something that is not perceivable?

जैसे खरगोश के सींग या मृगतृष्णा का जल अस्तित्वहीन है, वैसे ही किसी ऐसी चीज का कारण कैसे हो सकता है जो दृष्टिगोचर नहीं है?

7.22.9

असतः शशश्रृङ्गादेः कारणं मार्गयन्ति ये। वन्ध्यापुत्रस्य पौत्रस्य स्कन्धमासादयन्ति ते ॥ ९ ॥

asataḥ śaśaśṛṅgādeḥ kāraṇaṃ mārgayanti ye| vandhyāputrasya pautrasya skandhamāsādayanti te || 9 ||

Those who seek the cause of the non-existent horns of a hare are like those who seek the grandson of a barren woman.

जो खरगोश के अस्तित्वहीन सींग का कारण खोजते हैं, वे वैसे ही हैं जो बांझ स्त्री के पोते की खोज करते हैं।

7.22.10

असत्यप्रतिभासानामेतदेवाशु कारणम्। यदनालोकनं नाम समालोकक्षणक्षयम् ॥ १० ॥

asatyapratibhāsānāmetadevāśu kāraṇam| yadanālōkanaṃ nāma samālōkakṣaṇakṣayam || 10 ||

The cause of these illusory appearances is simply the absence of perception, which is the destruction of the moment of perception.

इन भ्रम प्रतिभासों का कारण तो बस दृष्टि का अभाव है, जो दृष्टि के क्षण का विनाश है।

7.22.11

परमात्मायते जीवो बुध्यमानस्त्वचेतनम्। चेतनं बुध्यमानस्तु जीव एवावतिष्ठते ॥ ११ ॥

paramātmāyate jīvo budhyamānastvacetanam | cetanaṃ budhyamānastu jīva evāvatiṣṭhate || 11 ||

The individual soul, while experiencing the non-sentient, identifies itself with the Supreme Soul. The conscious being, while experiencing, remains as the individual soul.

जीवात्मा, जब अचेतन का अनुभव करता है, तब अपने आप को परमात्मा से जोड़ता है। चेतन प्राणी, जब अनुभव करता है, तब जीवात्मा के रूप में रहता है।

7.22.12

परमात्मैव जीवोऽयं बुध्यमानस्त्वचेतनम्। आम्र एव रसापत्तेः प्रयाति सहकारताम् ॥ १२ ॥

paramātmaiva jīvo'yaṃ budhyamānastvacetanam | āmra eva rasāpatteḥ prayāti sahakāratām || 12 ||

This individual soul is indeed the Supreme Soul, experiencing the non-sentient. Just as a mango attains sweetness from its juice, so does the soul attain the qualities of the Supreme.

यह जीवात्मा वास्तव में परमात्मा है, जो अचेतन का अनुभव करता है। जैसे आम अपने रस से मीठास प्राप्त करता है, वैसे ही आत्मा परमात्मा के गुणों को प्राप्त करता है।

7.22.13

चेतनं बुध्यमानस्तु जीव एवावतिष्ठते । जीवो जीवितजीर्णेषु जातिजन्मसु जर्जरः ॥ १३ ॥

cetanaṃ budhyamānastu jīva evāvatiṣṭhate | jīvo jīvitajīrṇeṣu jātijanmasu jarjarḥ || 13 ||

The conscious being, while experiencing, remains as the individual soul. The soul, worn out by life and birth, becomes decrepit in various forms and births.

चेतन प्राणी, जब अनुभव करता है, तब जीवात्मा के रूप में रहता है। आत्मा, जीवन और जन्म से थककर, विभिन्न रूपों और जन्मों में जर्जर हो जाता है।

7.22.14

ये परां दृष्टिमायाता विधि तेषामपामिव । अरूपालोकमननं स्पन्दमस्पन्दनं सदा ॥ १४ ॥

ye parāṃ dṛṣṭimāyātā vidhi teṣāmapāmiva | arūpālokamananaṃ spandamaspanḍanaṃ sadā || 14 ||

Those who have attained the highest vision, their fate is like that of water. They constantly meditate on the formless, experiencing both motion and stillness.

जो लोग उच्चतम दृष्टि प्राप्त कर चुके हैं, उनका भाग्य पानी के समान है। वे निरंतर निराकार पर ध्यान करते हैं, गति और स्थिरता दोनों का अनुभव करते हैं।

7.22.15

ये परां दृष्टिमायाता दृश्यश्रीपारदर्शिनः । न विद्यमानमप्यस्ति तेषां वेदनमाततम् ॥ १५ ॥

ye parāṃ dṛṣṭimāyātā dṛśyaśrīpāradarśinaḥ | na vidyamānamapyasti teṣāṃ vedanamātatam || 15 ||

Those who have attained the highest vision see the beauty of the visible world. Even the non-existent becomes manifest to them, and their knowledge is expansive.

जो लोग उच्चतम दृष्टि प्राप्त कर चुके हैं, वे दृश्य सौंदर्य को देखते हैं। उनके लिए अस्तित्वहीन भी प्रकट हो जाता है, और उनका ज्ञान विस्तृत होता है।

7.22.16

ये परां दृष्टिमायाता विद्धि तेषामपामिव । स्पन्दमस्पन्दनं सर्वमवेदनवशादिह ॥ १६ ॥

ye parāṃ dṛṣṭimāyātā viddhi teṣāmapāmiva| spandamaspandanaṃ sarvamavedanavaśādiha || 16 ||

Know that those who have attained the highest vision see everything as water| They perceive all movement and non-movement due to the influence of perception here

जानो कि जो लोग उच्चतम दृष्टि को प्राप्त हो गए हैं, वे सब कुछ पानी की तरह देखते हैं| वे यहाँ सभी गति और अगति को अनुभूति के प्रभाव के कारण देखते हैं

7.22.17

अरूपालोकमननवेष्टिता मुक्तदामवत् । बुधाः कर्मसु चेष्टन्ते वृक्षपत्रेष्विवानिलः ॥ १७ ॥

arūpālokamananaveṣṭitā muktaḍāmavat| budhāḥ karmasu ceṣṭante vṛkṣapatreṣvivānilaḥ || 17 ||

Those who are free from the bonds of form and thought, like a released rope| The wise act in actions like the wind in the leaves of trees

जो रूप और विचार के बंधनों से मुक्त हैं, जैसे छूटा हुआ डोर| बुद्धिमान लोग कर्मों में पेड़ के पत्तों में हवा की तरह कार्य करते हैं

7.22.18

ये परां दृष्टिमायाताः संसृतेः पारदर्शिनः। न ते कर्म प्रशंसन्ति कूपं नद्यां वसन्निव ॥ १८ ॥

ye parāṃ dṛṣṭimāyātāḥ saṃsṛteḥ pāradarśinaḥ| na te karma praśaṃsanti kūpaṃ nadyāṃ vasanniva || 18 ||

Those who have attained the highest vision and see beyond the cycle of existence| They do not praise actions, like living in a well while being in a river

जो लोग उच्चतम दृष्टि को प्राप्त हो गए हैं और अस्तित्व के चक्र के पार देखते हैं| वे कर्मों की प्रशंसा नहीं करते, जैसे नदी में रहते हुए कुएँ में रहना

7.22.19

ये बद्धवासना मूढाः कर्म शंसन्ति तेऽनघ। श्रुतिस्मृत्युचितं तेन विनाबोधं प्रयान्ति ते ॥ १९ ॥

ye baddhavāsanā mūḍhāḥ karma śaṃsanti te'nagha| śrutismṛtyucitaṃ tena vināboḍhaṃ prayānti te || 19 ||

Those who are bound by desires and are foolish, they praise actions, O sinless one| By that, they go without understanding, contrary to the scriptures and memory

जो इच्छाओं से बंधे हुए और मूढ़ हैं, वे कर्मों की प्रशंसा करते हैं, हे निष्पाप| इससे वे शास्त्र और स्मृति के विपरीत बिना बोध के चले जाते हैं

7.22.20

इन्द्रियाणि पतन्त्यर्थं भ्रष्टं गृध्र इवामिषम्। तानि संयम्य मनसा युक्त आसीत तत्परः ॥ २० ॥

indriyāṇi patantyarthaṃ bhraṣṭaṃ gṛdhra ivāmiṣam| tāni saṃyamya manasā yukta āsīta tatparaḥ || 20 ||

The senses rush towards their objects like a vulture towards fallen meat| Control them with the mind and be steadfast in that effort

इंद्रियाँ अपने विषयों की ओर दौड़ती हैं जैसे गिद्ध गिरे हुए मांस की ओर| उन्हें मन से नियंत्रित करें और उस प्रयास में दृढ़ रहें

7.22.21

नासन्निवेशं हेमास्ति नासर्गं ब्रह्म विद्यते। किंतु सर्गादिशब्दार्थमुक्तं युक्तिमतेः शिवम् ॥ २१ ॥

nāsanniveśaṃ hemāsti nāsargaṃ brahma vidyate kiṃtu sargādiśabdārthamuktaṃ yuktimateḥ śivam || 21 ||

There is no gold in the ornament, nor is Brahman inherent in nature. Yet, the meaning of words like creation is spoken for the sake of reason, which is auspicious.

आभूषण में सोना नहीं होता, न ही प्रकृति में ब्रह्म विद्यमान है। फिर भी, सृष्टि जैसे शब्दों का अर्थ तर्क के लिए कहा जाता है, जो कल्याणकारी है।

7.22.22

एकान्धकारे सम्पन्ने व्यवहारो युगक्षये निर्विभागो निराभासो यथा ब्रह्मघने तथा ॥ २२ ॥

ekāndhakāre saṃpanne vyavahāro yugakṣaye nirvibhāgo nirābhāso yathā brahmaghane tathā || 22 ||

When the age ends and all activity ceases in the enveloping darkness, undivided and without appearance, just as in the mass of Brahman, so it is.

जब युग का अंत होता है और घने अंधकार में सारा व्यवहार समाप्त हो जाता है, तब निर्विभाग और निराभास रूप से, जैसे ब्रह्म के घनेपन में होता है, वैसा ही हो जाता है।

7.22.23

अभ्रोदरे भ्रमाङ्गानां स्पन्दास्पन्दमयी यथा स्वसंविदात्मिका सत्ता भूतानामीश्वरी तथा ॥ २३ ॥

abhrodare bhramāṅgānāṃ spandāspandamayī yathā svasaṃvidātmikā sattā bhūtānāmīśvarī tathā || 23 ||

Just as in the womb of the cloud the limbs of the whirlwind are both moving and non-moving, so the being of all elements, whose essence is self-awareness, is the sovereign power.

जैसे बादल के गर्भ में भ्रमर के अंग चलते और अचल होते हैं, वैसे ही स्वसंवेदना स्वरूप सभी भूतों की सत्ता ईश्वरीय शक्ति है।

7.22.24

जलस्यान्तर्जलांशानां द्वैताद्वैतमयो यथा स्वसंविदात्मा सुस्पन्दस्तथा ब्रह्मणि भूतदृक् ॥ २४ ॥

jalasyāntarjalāṃśānāṃ dvaitādvaitamayo yathā svasaṃvidātmā suspandaḥ tathā brahmaṇi bhūtadṛk || 24 ||

Just as the parts of water within water are both dual and non-dual, so the Self, whose essence is self-awareness and which is vibrant, is the seer of all elements in Brahman.

जैसे जल के भीतर जल के अंश द्वैत और अद्वैत दोनों हैं, वैसे ही स्वसंवेदना स्वरूप और सुस्पन्द आत्मा ब्रह्म में सभी भूतों का द्रष्टा है।

7.22.25

यथाम्बरेऽम्बरांशानां द्वैताद्वैतकृतात्मनि अनन्या सृष्टिराभाति तथा अनवयवे शिवे ॥ २५ ॥

yathāmbare'mbarāṃśānāṃ dvaitādvaitakṛtātmani ananyā sṛṣṭirābhāti tathānavayave śive || 25 ||

Just as the parts of space within space, though appearing as dual and non-dual, shine as non-different creation, so in the partless Shiva, creation appears without distinction.

जैसे आकाश के भीतर आकाश के अंश द्वैत और अद्वैत रूप में होते हुए भी अभिन्न सृष्टि के रूप में चमकते हैं, वैसे ही अवयवहीन शिव में सृष्टि अभिन्न रूप में प्रकट होती है।

7.22.26

जगतोऽन्तरहंरूपमहंरूपान्तरे जगत् । स्थितमन्योन्यवलितं कदलीदलपीठवत् ॥ २६ ॥

jagato'ntarahamrūpamahamrūpāntare jagat | sthitamanyonyavaliatam kadalīdalapīṭhavat || 26 ||

The universe is within the Self and the Self is within the universe. They are intertwined like the layers of a banana leaf.

जगत अंतर हंरूप में है और हंरूप अंतर में जगत है | वे एक दूसरे में लिपटे हुए हैं जैसे केले के पत्ते की परतें |

7.22.27

रूपालोकमनस्कारै रन्ध्रैर्बहिरिव स्थितम् । सृष्टिं पश्यति जीवोऽन्तः सरसीमिव पर्वतः ॥ २७ ॥

rūpālokamanaskārai randhrirbahiriva sthitam | sṛṣṭiṃ paśyati jīvo'ntaḥ sarasīmiva parvataḥ || 27 ||

The individual soul sees the creation as if it were outside, through the openings of form, perception, and thought, like a mountain sees a lake.

जीवात्मा रूप, अलोक और मनस्कार के छिद्रों से बाहर की तरह सृष्टि को देखता है, जैसे पर्वत सरसी को देखता है।

7.22.28

जीवो जगत्तयात्मानं पश्यत्ययमकारणम् । हेमेव कटकादित्वं तदपश्यन्न पश्यति ॥ २८ ॥

jīvo jagattayātmānaṃ paśyatyayamakāraṇam | hemeva kaṭakāditvaṃ tadapaśyann paśyati || 28 ||

The individual soul sees the universe as its own self, without cause, like gold sees its ornaments. Without seeing that, it does not see.

जीवात्मा जगत् को अपने आत्मा के रूप में अकारण देखता है, जैसे सोना अपने आभूषणों को देखता है। उसे देखे बिना, वह नहीं देखता।

7.22.29

जीवन्तोऽपि न जीवन्ति म्रियन्ते न मृता अपि । सन्तोपि च न सन्तीव पारावारविदः शुभाः ॥ २९ ॥

jīvanto'pi na jīvanti mriyante na mṛtā api | santo'pi ca na santīva pārāvāravidaḥ śubhāḥ || 29 ||

Even though they are alive, they do not live; even though they die, they do not die. Even though they exist, they do not exist, knowing the essence of the beyond.

यद्यपि वे जीवित हैं, फिर भी वे नहीं जीवित हैं; यद्यपि वे मरते हैं, फिर भी वे नहीं मरते हैं। यद्यपि वे हैं, फिर भी वे नहीं हैं, जो पारावार की विद्या जानते हैं।

7.22.30

प्रबुद्धः सर्वकर्माणि कुर्वन्नपि न पश्यति । गृहकर्माणि गेहस्थो गोष्ठभाण्डमना इव ॥ ३० ॥

prabuddhaḥ sarvakarmāṇi kurvannapi na paśyati | gṛhakarmāṇi gehastho goṣṭhabhāṇḍamanā iva || 30 ||

The awakened one performs all actions but does not see them, like a householder performing household duties without attachment.

प्रबुद्ध सभी कर्मों को करता है लेकिन उन्हें नहीं देखता, जैसे गृहस्थ घर के कामों को आसक्ति के बिना करता है।

7.22.31

विराड् हृदि यथा चन्द्रः प्रतिदेहं यथा स्थितः । जीवो हिमकणाकारः स्थूले स्थूलो लघौ लघुः ॥ ३१ ॥

virāḍ hṛdi yathā candraḥ pratidehaṃ yathā sthitaḥ | jīvo himakaṇākāraḥ sthūle sthūlo laghau laghuḥ || 31 ||

Just as the moon is in the heart of Virat, and as it is situated in every body, the individual soul, like a particle of snow, is gross in the gross and subtle in the subtle.

जैसे चंद्रमा विराट के हृदय में होता है और जैसे वह प्रत्येक शरीर में स्थित होता है, वैसे ही जीव हिमकण के समान, स्थूल में स्थूल और लघु में लघु होता है।

7.22.32

अहमात्मा त्रिकोणत्वमुपगच्छति कल्पनम् । असदेव सदाभासं मन्यते चेतनाद्वपुः ॥ ३२ ॥

ahamātmā trikoṇatvamupagacchati kalpanam | asadeva sadābhāsaṃ manyate cetanādvapuḥ || 32 ||

The self, thinking itself to be the triangular form, imagines the unreal to be real, considering the conscious body to be the real self.

आत्मा, अपने आप को त्रिकोण रूप मानकर, असत्य को सत्य मानता है, चेतन शरीर को वास्तविक आत्मा मानता है।

7.22.33

कर्मकोशे त्रिकोणे च शुक्रसारेऽवतिष्ठते । देहे जीवोहमित्यात्मा स्वामोदः कुसुमे यथा ॥ ३३ ॥

karmakośe trikoṇe ca śukrasāre'vatiṣṭhate | dehe jīvohamityātmā svāmodaḥ kusume yathā || 33 ||

In the sheath of karma, in the triangular form, and in the essence of semen, the self, thinking 'I am the soul,' dwells like a bee in a flower.

कर्म के कोश में, त्रिकोण रूप में, और शुक्र के सार में, आत्मा, 'मैं जीव हूँ' सोचकर, फूल में मधुमक्खी की तरह रहता है।

7.22.34

अहमित्येव शुक्रस्था संविदापादमस्तकम् । विसरत्यखिले ज्योत्स्ना यथा ब्रह्माण्डमण्डपे ॥ ३४ ॥

ahamityeva śukrasthā saṃvidāpādamastakam | visaratyakhile jyotsnā yathā brahmāṇḍamaṇḍape || 34 ||

The self, thinking 'I am,' situated in the semen, spreads from the feet to the head, like the moonlight filling the entire universe.

आत्मा, 'मैं हूँ' सोचकर, शुक्र में स्थित, पैर से सिर तक फैलता है, जैसे चंद्रमा का प्रकाश सम्पूर्ण ब्रह्मांड में फैलता है।

7.22.35

अक्षरन्ध्रप्रणालेन विसृतं वेदनोदकम् । व्याप्नोति त्रिजगद्धूमो वियन्मेघतया यथा ॥ ३५ ॥

akṣarandhrapraṇālena visṛtaṃ vedanodakam | vyāpnoti trijagaddhūmo viyanmeghatayā yathā || 35 ||

Through the channel of the subtle nerve, the water of sensation is spread, pervading the three worlds like smoke from a cloud in the sky.

सूक्ष्म नाड़ी के माध्यम से, संवेदन का जल फैलता है, जो आकाश में बादल के धुएँ की तरह तीनों लोकों में व्याप्त होता है।

7.22.36

देहे यद्यप्यशेषेऽस्मिन्बहिरन्तश्च वेदनम्। विद्यते तत्तथाप्यत्र शुक्रेऽस्ति घनवासना ॥ ३६ ॥

dehe yadyapyasheṣe'sminbahirantashcha vedanam | vidyate tattathāpyatra śukre'sti ghanavāsanā || 36 ||

Even though there is sensation throughout the entire body, both inside and outside, there is still a dense fragrance in the semen.

यद्यपि शरीर के अंदर और बाहर सभी जगह वेदना है, फिर भी वीर्य में घनी सुगंध है।

7.22.37

जीवः संकल्पमात्रात्मा यत्संकल्पोऽवतिष्ठते। हृदि भूत्वा स एवाशु बहिः प्रसरति स्फुटम्॥ ३७ ॥

jīvaḥ saṅkalpamātrātmā yatsaṅkalpo'vatiṣṭhate | hṛdi bhūtvā sa evāśu bahiḥ prasarati sphuṭam || 37 ||

The individual soul is the essence of resolve. Whatever resolve it holds in the heart, it quickly manifests outwardly.

जीव संकल्प का सार है। जो भी संकल्प हृदय में स्थित होता है, वह शीघ्र ही बाहर स्पष्ट रूप से प्रकट होता है।

7.22.38

यथास्थितां च निश्चित्तां वर्जयित्वा स्थिरोपमाम्। न कयाचिदपि स्थित्या शाम्यत्यहमिति भ्रमः ॥ ३८ ॥

yathāsthitāṃ ca niścittāṃ varjayitvā sthiro pamām | na kayācidapi sthityā śāmyatyahamiti bhramaḥ || 38 ||

Abandoning the steady and determined state, the delusion of 'I' does not subside by any means.

स्थिर और निश्चित अवस्था को छोड़कर, 'मैं' का भ्रम किसी भी तरह से शांत नहीं होता।

7.22.39

चिन्तानुचिन्त्यमानापि भावनीयाम्बरोपमा। अहंभावोपशमने शमनेन क्रमेण ते ॥ ३९ ॥

cintānucintyamānāpi bhāvanīyāmbaropamā | ahaṃbhāvopaśamane śamanena krameṇa te || 39 ||

Even though thoughts are constantly contemplated, they should be meditated upon like the sky. For the pacification of the sense of 'I,' gradually calm them down.

यद्यपि विचार निरंतर सोचे जाते हैं, उन्हें आकाश की तरह ध्यान करना चाहिए। 'मैं' की भावना को शांत करने के लिए, धीरे-धीरे उन्हें शांत करें।

7.22.40

तज्ज्ञा व्यवहरन्तीह भाव्यभावनवर्जितम्। अरूपालोकमननं मौनं दारुनरा इव ॥ ४० ॥

tajjñā vyavaharantīha bhāvyabhāvanavarjitam | arūpālokamananaṃ maunaṃ dārunarā iva || 40 ||

Those who know that, behave here without any notion of becoming. It is like formless contemplation, silence, like a piece of wood.

जो उसे जानते हैं, वे यहाँ किसी भी होने की भावना के बिना व्यवहार करते हैं। यह निराकार ध्यान की तरह है, मौन, लकड़ी के टुकड़े की तरह।

7.22.41

अकिंचिद्भावनो यः स्यात्स मुक्त इति कथ्यते। जीवन्नाकाशविशदो बन्धशून्य इव स्फुटम्॥ ४१ ॥

akiṃcidbhāvano yaḥ syātsa mukta iti kathyate | jīvannākāśaviśado bandhaśūnya iva sphuṭam || 41 ||

One who has no desires is said to be liberated, like the sky, free from bondage.

जो किसी भी इच्छा से रहित होता है, वह मुक्त कहलाता है, जैसे आकाश जो बंधन से मुक्त है।

7.22.42

अहमित्येव शुक्रस्था संविदापादमस्तकम् । विसरत्यखिले देहे ब्रह्माण्डेऽर्कप्रभा यथा ॥ ४२ ॥

ahamityeva śukrasthā saṃvidāpādamastakam | visaratyakhile dehe brahmāṇḍe'rkaprabhā yathā || 42 ||

The awareness of 'I' pervades the entire body from head to toe, like the sunlight in the universe.
'मैं' की चेतना सिर से लेकर पैर तक पूरे शरीर में फैली हुई है, जैसे ब्रह्मांड में सूर्य की रोशनी।

7.22.43

दृङ्नेत्रं स्वदनं जिह्वा श्रुतिः श्रोत्रं भवत्यसौ । इत्याद्या वासनाः पञ्च बद्ध्वा तासु निमज्जति ॥ ४३ ॥

dṛṅnetraṃ svadanaṃ jihvā śrutiḥ śrotraṃ bhavatyasau | ityādyā vāsanāḥ pañca baddhvā tāsu nimajjati || 43 ||

The eye sees, the tongue tastes, the ear hears, and so on; these five senses are bound by their respective desires and become immersed in them.
आँख देखती है, जीभ स्वाद लेती है, कान सुनता है, और इसी तरह; ये पाँच इंद्रियाँ अपनी-अपनी इच्छाओं से बंधी हुई हैं और उनमें डूब जाती हैं।

7.22.44

चिद्भावोऽक्षतयोदेति मनो भूत्वैकदेशतः । सर्वगोऽपि रसो भूमौ यथाङ्कुरतया मधौ ॥ ४४ ॥

cidbhāvo'kṣatayodeti mano bhūtvaiakadeśataḥ | sarvago'pi raso bhūmau yathāṅkuratayā madhau || 44 ||

The essence of consciousness arises unharmed, becoming the mind in one part, like the flavor that pervades the earth in the form of a sprout in honey.
चेतना का सार अक्षत उत्पन्न होता है, एक भाग में मन बनकर, जैसे स्वाद जो पृथ्वी में अंकुर के रूप में शहद में फैला हुआ है।

7.22.45

यो भावयति भावेषु नेह रूढेष्वभावताम् । तस्यायत्नवतो दुःखमनन्तं नोपशाम्यति ॥ ४५ ॥

yo bhāvayati bhāveṣu neha rūḍheṣvabhāvatām | tasyāyatnavato duḥkhamanantaṃ nopaśāmyati || 45 ||

One who meditates on the states of existence without realizing their non-existence suffers endless pain without effort.
जो अस्तित्व की अवस्थाओं पर ध्यान करता है बिना उनकी अनस्तित्व को जाने, उसका दुःख अंतहीन है और प्रयास के बिना शांत नहीं होता।

7.22.46

येन केनचिदाच्छन्नो येन केनचिदाशितः । यत्र क्वचनशायीह स सम्राडिव राजते ॥ ४६ ॥

yena kenacidācchanno yena kenacidāśitaḥ | yatra kvacanaśāyīha sa samrāḍiva rājate || 46 ||

One who is covered by anything, who eats anything, who sleeps anywhere, he shines like an emperor.
जो किसी भी चीज से ढंका हुआ है, जो किसी भी चीज को खाता है, जो कहीं भी सोता है, वह एक सम्राट की तरह चमकता है।

7.22.47

वासनाभिरुपेतोऽपि समग्राभिरवासनः । अन्तःशून्योऽप्यशून्यात्मा खमिव श्वसनान्वितः ॥ ४७ ॥

vāsanābhirupeto'pi samagrābhiravāsanaḥ | antaḥśūnyo'pyaśūnyātmā khamiva śvasanānvitaḥ || 47 ||

Even though endowed with all desires, he is desireless within. Though empty inside, he is full of self, like the sky filled with breath.
यद्यपि सभी इच्छाओं से युक्त है, फिर भी वह अंदर से निरिच्छा है। यद्यपि अंदर से खाली है, फिर भी वह आत्मा से भरा हुआ है, जैसे आकाश साँसों से भरा हुआ है।

7.22.48

आसने शयने याने स्थितो यत्नेन बोध्यते । निद्रालुरिव निर्वाणमनोमननिर्वृतः ॥ ४८ ॥

āsane śayane yāne sthito yatnena bodhyate | nidrāluriva nirvāṇamanomananirvṛtaḥ || 48 ||

One who is seated, lying down, or moving, is known with effort. Like a sleepy person, he is free from the agitation of the mind.

जो बैठा हुआ है, लेटा हुआ है, या चल रहा है, उसे प्रयास से जाना जाता है। जैसे एक नींद में डूबा हुआ व्यक्ति, वह मन की बेचैनी से मुक्त है।

7.22.49

संविन्मात्रं हि पुरुषः सर्वगोऽपि स तिष्ठति । स्फुटसारे शरीरस्य यथा गन्धोऽब्जकेसरे ॥ ४९ ॥

saṃvinmātraṃ hi puruṣaḥ sarvago'pi sa tiṣṭhati | sphuṭasāre śarīrasya yathā gandho'bjakesare || 49 ||

Indeed, the person is pure consciousness, though all-pervading, he remains. Like the fragrance in the filament of a lotus.

वास्तव में, व्यक्ति शुद्ध चेतना है, यद्यपि सर्वव्यापी, वह बना रहता है। जैसे कमल के डंठल में सुगंध।

7.22.50

संविन्मात्रं विदुर्जन्तुं तस्य प्रसरणं जगत् । आत्मनिष्ठत्वमजगत्परमेत्युपदेशभूः ॥ ५० ॥

saṃvinmātraṃ vidurjantuṃ tasya prasaraṇaṃ jagat | ātmaniṣṭhatvamajagatparametyupadeśabhūḥ || 50 ||

They know the person as pure consciousness, its expansion is the world. Its essence is the supreme, beyond the non-self, the source of instruction.

वे व्यक्ति को शुद्ध चेतना के रूप में जानते हैं, उसका विस्तार संसार है। उसका सार परम है, अनात्म से परे, उपदेश का स्रोत।

7.22.51

नीरसो भव भावेषु सर्वेषु विभवादिषु । पाषाणं हृदयं कृत्वा यथा भवसि भूतये ॥ ५१ ॥

nīraso bhava bhāveṣu sarveṣu vibhavādiṣu | pāṣāṇaṃ hṛdayaṃ kṛtvā yathā bhavasi bhūtaye || 51 ||

Be indifferent in all situations, whether they are prosperous or not. Make your heart like a stone, so that you may remain steadfast.

सभी भावों और समृद्धियों में निर्लिप्त रहो। अपने हृदय को पत्थर की तरह बना लो, ताकि तुम स्थिर रह सको।

7.22.52

साधो हृदयसौषिर्यमसौषिर्यमिवास्तु ते । अचित्त्ववपुषोऽचित्त्वादुपलस्येव राघव ॥ ५२ ॥

sādho hṛdayasauṣiryam asauṣiryam ivāstu te | acittvavapuṣo'cittvād upalasyeva rāghava || 52 ||

O virtuous one, let your heart be as tender as it is hard. Let your insensibility be like that of a stone, O Raghava.

हे साधु, तुम्हारा हृदय जितना कोमल है उतना ही कठोर हो। हे रघुवंशी, तुम्हारी असंवेदनशीलता पत्थर की तरह हो।

7.22.53

तज्ज्ञाज्ञयोरशेषेषु भावाभावेषु कर्मसु । ऋते निर्वासनत्वात्तु न विशेषोऽस्ति कश्चन ॥ ५३ ॥

tajjñājñayor aśeṣeṣu bhāvābhāveṣu karmasu | ṛte nirvāsanatvāt tu na viśeṣo'sti kaścana || 53 ||

In all actions, whether known or unknown, there is no difference except for the absence of dwelling.

सभी कर्मों में, चाहे वे ज्ञात हों या अज्ञात, निवास की अनुपस्थिति के अलावा कोई अंतर नहीं है।

7.22.54

सत्तैवैषा विदो यत्सा भवत्युन्मिषिता जगत् । परं तत्त्वं निमिषता दृगिवानामकं ततम् ॥ ५४ ॥

sattaiṣā vidho yatsā bhavatyunmiṣitā jagat | paraṃ tattvaṃ nimiṣatā dṛgivānāmakaṃ tatam || 54 ||

This existence, which is perceived as the world, is the supreme reality. It is like the unblinking eye of consciousness.

यह अस्तित्व, जो जगत के रूप में देखा जाता है, परम सत्य है। यह चेतना की अनखुली आँख की तरह है।

7.22.55

दृश्यं विनश्यत्यखिलं विनष्टं जायते पुनः । यन्न नष्टं न चोत्पन्नं तत्सद्भवति तद्भवान् ॥ ५५ ॥

dṛśyaṃ vinaśyatyakhilaṃ vinaṣṭaṃ jāyate punaḥ | yan na naṣṭaṃ na cotpannaṃ tatsad bhavati tad bhavān || 55 ||

All that is seen perishes, and what is perished is born again. That which is neither destroyed nor born, that is the eternal truth, O Bhavan.

जो कुछ भी दिखाई देता है वह नष्ट हो जाता है, और जो नष्ट हो जाता है वह फिर से जन्म लेता है। जो न तो नष्ट होता है न जन्म लेता है, वही सनातन सत्य है, हे भवान।

7.22.56

भावज्ञप्तिर्हि निर्मूला भावितापि न विद्यते । सलिलं मृगतृष्णेव न ददाति भवाङ्कुरम् ॥ ५६ ॥

bhāvajñaptirhi nirmūlā bhāvitāpi na vidyate | salilaṃ mṛgatṛṣṇeva na dadāti bhavāṅkuram || 56 ||

Indeed, the notion of existence is rootless; even when cultivated, it does not exist. Like a mirage, it does not produce the sprout of being.

वास्तव में, अस्तित्व की कल्पना बेजड़ है; भले ही इसे विकसित किया जाए, यह अस्तित्व में नहीं है। मृगतृष्णा की तरह, यह अस्तित्व के अंकुर को उत्पन्न नहीं करता।

7.22.57

यथाभूतार्थसदर्शच्छिन्नाऽहमिति भावना । दृष्टामि न करोत्यन्तर्दग्धं बीजमिवाङ्कुरम् ॥ ५७ ॥

yathābhūtārthasadarśacchinnāhamiti bhāvanā | dṛṣṭāmi na karotyantardagdhaṃ bījamivāṅkuram || 57 ||

The notion 'I am' cut off by the clear vision of the true nature of things does not produce the sprout of inner burning, like a seed that is burnt.

वास्तविक स्वभाव के स्पष्ट दर्शन से कटी हुई 'मैं हूँ' की भावना अंतर्दाह के अंकुर को उत्पन्न नहीं करती, जैसे कि एक जला हुआ बीज।

7.22.58

कर्म कुर्वन्नकुर्वन्वा वीतरागो निरामयः । निर्मना नित्यनिर्वाणः पुमानात्मनि तिष्ठति ॥ ५८ ॥

karma kurvannakurvannvā vītarāgo nirāmayaḥ | nirmanā nityanirvāṇaḥ pumānātmani tiṣṭhati || 58 ||

Whether performing actions or not, the person who is free from desires and without afflictions, free from thoughts, eternally liberated, abides in the Self.

चाहे कर्म करें या न करें, जो व्यक्ति इच्छाओं से मुक्त और क्लेशरहित है, विचारों से मुक्त, नित्य मुक्त, वह आत्मा में निवास करता है।

7.22.59

चित्तोपशान्तौ संशान्ताः शान्ताये भोगबन्धवः । न स्वभावपरिक्षीणाश्चित्तमेषां किलाकरः ॥ ५९ ॥

cittopaśāntau saṃśāntāḥ śāntāye bhogabandhavāḥ | na svabhāvaparikṣīṇāścittameṣāṃ kilākaraḥ || 59 ||

In the tranquility of the mind, the senses are tranquil, and the bonds of enjoyment are tranquil. Indeed, their mind is not diminished by its natural state.

मन की शांति में, इंद्रियाँ शांत होती हैं, और भोग के बंधन शांत होते हैं। वास्तव में, उनके मन का स्वाभाविक स्थिति से कोई ह्रास नहीं होता।

7.22.60

अघनः केवलालोको बुधो जीवः परायते । स एवान्योऽप्यनन्योऽन्तरपराह्न इवातपः ॥ ६० ॥

aghanaḥ kevalāloko budho jīvaḥ parāyate | sa evānyo'pyananyo'ntaraparāhna ivātapaḥ || 60 ||

The wise person, devoid of impurities, perceives the world as it is. That same person, though different, is not different, like the sunlight at noon.

बुद्धिमान व्यक्ति, जो दोषरहित है, संसार को जैसा है उसी रूप में देखता है। वही व्यक्ति, भले ही अलग हो, अलग नहीं है, जैसे दोपहर का सूर्य प्रकाश।

7.22.61

एकदेशस्थितात्पुंसो दूरायातस्य चेतसः । यद्रूपं सकलं मध्ये तद्रूपं परमात्मनः ॥ ६१ ॥

ekadeśasthitātpuṁso dūrāyātasya cetasaḥ | yadrūpaṃ sakalaṃ madhye tadrūpaṃ paramātmanaḥ || 61 ||

The form that exists in the middle of the mind of a person who is situated in one place and whose mind is distant, that form is of the Supreme Self.

जो एक स्थान पर स्थित व्यक्ति के दूर के मन के मध्य में है, वह रूप परमात्मा का रूप है।

7.22.62

चारुचिद्व्योमकर्पूरं यच्चमत्कुरुते स्वयम् । अनन्तमन्तरव्यक्तं जगदित्येव वेत्ति तत् ॥ ६२ ॥

cārucidvyomakarpūraṃ yaccamatkurute svayam | anantamantaravyaktaṃ jagadityeva vetti tat || 62 ||

That which, by itself, creates wonder in the beautiful sky like camphor, is known as the infinite, internally manifested universe.

जो स्वयं ही सुंदर आकाश में कपूर की तरह चमत्कार पैदा करता है, वह अनंत, आंतरिक रूप से प्रकट हुआ ब्रह्मांड है।

7.22.63

गतभवभ्रमभासुरमक्षयं शममुपेतमुपेक्षितदीपवत् । स्थितमपीह जनं जगदीश्वरादनुगतं ननु भाति मुदा च खे ॥ ६३ ॥

gatabhavabhramabhāsuramakṣayaṃ śamamupetamupekṣitadīpavat | sthitamapīha janaṃ jagadīśvarādanugataṃ nanu bhāti mudā ca khe || 63 ||

That which is free from the illusion of existence, radiant, imperishable, attained peace, and is like an ignored lamp, even here, it shines with joy in the sky, following the Lord of the universe.

जो अस्तित्व के भ्रम से मुक्त, प्रकाशमान, अविनाशी, शांति प्राप्त, और एक उपेक्षित दीपक की तरह है, वह यहां भी, आकाश में आनंद के साथ चमकता है, ब्रह्मांड के ईश्वर का अनुगमन करते हुए।

Chapter 23

7.23.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । विरागवासनापास्तसमस्तभववासनः । उत्थाय गच्छ प्रकृतेरस्या मङ्किरिवाङ्कितः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | virāgavāsanāpāstasamastabhavavāsanaḥ | utthāya gaccha prakṛterasyā maṅkirivāṅkitaḥ || 1 ||

Shri Vasishtha said: Having abandoned all worldly desires and attachments, rise and go forth, adorned like Manki with the nature of this world.

श्री वसिष्ठ ने कहा: सभी संसारिक इच्छाओं और आसक्तियों को त्यागकर, उठो और चलो, इस संसार की प्रकृति के साथ मङ्कि की तरह सजे हुए।

7.23.2

मङ्किर्नामाभवत्पूर्वं ब्राह्मणः संशितव्रतः । स कथं श्रृणु निर्वाणमाप्तवान्मद्विबोधितः ॥ २ ॥

maṅkirnāmābhavatpūrvaṃ brāhmaṇaḥ saṃśitavrataḥ | sa kathaṃ śṛṇu nirvāṇamāptavānmadvibodhitaḥ || 2 ||

There was once a Brahmin named Manki, who was of firm vows. Listen to how he attained liberation, being enlightened by me.

एक बार एक ब्राह्मण था जिसका नाम मङ्कि था, जो दृढ़ व्रतधारी था। सुनो, किस प्रकार उसने मेरे द्वारा बोधित होकर मुक्ति प्राप्त की।

7.23.3

अहं कदाचिदाकाशकोशादवनिमागतः । भवत्पितामहार्थेन केनाप्युपनिमन्त्रितः ॥ ३ ॥

ahaṃ kadācidākāśakośādavanimāgataḥ | bhavatpitāmahārtheṇa kenāpyupanimantritaḥ || 3 ||

I once descended from the sky to the earth, invited by someone for the sake of your grandfather.

मैं एक बार आकाश से पृथ्वी पर उतरा, किसी के द्वारा आपके दादाजी के लिए आमंत्रित होकर।

7.23.4

विहरन्भूतलं गच्छंस्त्वत्पितामहपत्तनम् । प्राप्तोऽस्मि कामप्यादीर्घामरण्यानीं महातपाम् ॥ ४ ॥

viharanbhūtalaṃ gacchaṃstvatpitāmahapattanam | prāpto'smi kāmapyādīrghāmaraṇyānīṃ mahātapām || 4 ||

While wandering on the earth, I reached your grandfather's city, which was a vast and austere forest, full of great penance.

पृथ्वी पर विचरते हुए, मैं आपके दादाजी के नगर तक पहुंचा, जो एक विशाल और कठोर वन था, जो महान तपस्या से भरा हुआ था।

7.23.5

पांसुप्रतर्दनहतां प्रकचत्तप्तसैकताम् । अदृष्टापारपर्यन्तां क्वचिद्राम किलाङ्किताम् ॥ ५ ॥

pāṃsupratardanahatāṃ prakacattaptasaikatām | adṛṣṭāpāraparyantāṃ kvacidrāma kilāṅkitām || 5 ||

It was covered with dust, scorched by the sun, and its sands were heated. It was endless and adorned with Rama in some places.

वह धूल से ढका हुआ था, सूर्य की गर्मी से झुलसा हुआ, और उसकी रेत गर्म थी। वह अनंत था और कुछ स्थानों पर राम से सजा हुआ था।

7.23.6

अक्षुब्धस्वानिलालोकजलभूशान्तिशालिनीम्। ततां शून्यां महारम्भां ब्रह्मसत्तामिवामलाम्॥ ६॥

akṣubdhasvānilālokajalabhūśāntiśālinīm| tatāṃ śūnyāṃ mahārambhāṃ brahmasattāmivāmalām || 6 ||

I see a vast, calm, and peaceful expanse, like the pure essence of Brahman, devoid of any disturbance, wind, light, water, or earth.

मैं एक विशाल, शान्त और शांतिपूर्ण विस्तार देखता हूँ, जो ब्रह्म की शुद्ध सत्ता की तरह है, जिसमें कोई विचलन, हवा, प्रकाश, जल या भूमि नहीं है।

7.23.7

अविद्यामिव संमोहमृगतृष्णां गतां भ्रमात्। जडतामाततां शून्यां दिङ्मोहमिहिकाकुलाम्॥ ७॥

avidyāmiva saṃmohamṛgatṛṣṇāṃ gatāṃ bhramāt| jaḍatāmātatāṃ śūnyāṃ diṅmohamihikākulām || 7 ||

Like ignorance, it is a bewildering mirage, vanished due to delusion. It has become inert, empty, and confused in all directions, filled with desires.

जैसे अज्ञान, यह एक भ्रमित करने वाला मृगतृष्णा है, जो भ्रम के कारण विलुप्त हो गया है। यह जड़, खाली और सभी दिशाओं में भ्रमित हो गया है, इच्छाओं से भरा हुआ।

7.23.8

अथ तस्यामरण्यान्यां यावत्प्रविहराम्यहम्। तावत्पश्यामि पुरतो वदन्तं पथिकं श्रमात्॥ ८॥

atha tasyāmarṇyānyāṃ yāvatpraviharāmyaham| tāvatpaśyāmi purato vadantaṃ pathikaṃ śramāt || 8 ||

Then, as I wander in that different forest, I see a traveler speaking in front of me, exhausted from the journey.

फिर, जब मैं उस अलग वन में भटकता हूँ, मैं एक यात्री को अपने सामने बोलते हुए देखता हूँ, जो यात्रा से थक गया है।

7.23.9

पान्थ उवाच। अहो नु परिखेदाय प्रौढप्रायातपो रविः। परितापाय पापोऽयं दुर्जनेनेव संगमः॥ ९॥

pāntha uvāca| aho nu parikhedāya prauḍhaprāyātapo raviḥ| paritāpāya pāpo'yaṃ durjaneneva saṃgamaḥ || 9 ||

The traveler said: Alas, the intense heat of the sun is indeed troublesome. This wicked heat is like an association with an evil person.

यात्री ने कहा: हाय, सूर्य की तीव्र गर्मी वास्तव में परेशानी है। यह दुष्ट गर्मी एक दुष्ट व्यक्ति के साथ संबंध की तरह है।

7.23.10

सुगलन्तीव मर्माणि स्फुरतीवाग्निरातपे। संकुचत्पल्लवापीडास्ताप्यन्ते वनराजयः॥ १०॥

sugalantīva marmāṇi sphuratīvāgnirātape| saṅkucatpallavāpīḍāstāpyante vanarājayaḥ || 10 ||

The sun's heat seems to melt the very essence of things, as if fire is blazing in the heat. The tender leaves are shrinking, and the forest kings are suffering from the heat.

सूर्य की गर्मी चीजों के सार को पिघलाने की तरह लगती है, जैसे आग गर्मी में जल रही हो। कोमल पत्तियाँ सिकुड़ रही हैं, और वन के राजा गर्मी से पीड़ित हैं।

7.23.11

तत्तावदेवमग्रस्थं ग्रामकं प्रविशाम्यहम्। श्रममत्रापनीयाशु वहाम्यध्वानमाशुगः ॥ ११ ॥

tattāvadevamagrasthaṃ grāmakaṃ praviśāmyaham | śramamatrāpanīyāśu vahāmyadhvānamāśugaḥ || 11 ||

Having decided thus, I will enter this village ahead | I will quickly relieve my fatigue here and swiftly continue my journey

इस प्रकार निश्चय करके, मैं इस आगे वाले गाँव में प्रवेश करूँगा | यहाँ मैं शीघ्र ही अपनी थकान दूर करूँगा और शीघ्रता से अपनी यात्रा जारी रखूँगा

7.23.12

इति संचिन्त्य सोऽग्रस्थं किरातग्रामकं यदा। प्रवेष्टुमिच्छति तदा मया प्रोक्तमिदं वचः ॥ १२ ॥

iti saṃcintya so'grasthaṃ kirātagrāmakaṃ yadā | praveṣṭumicchati tadā mayā proktamidaṃ vacaḥ || 12 ||

Having thought thus, when he desired to enter that village of Kiratas situated ahead, I spoke these words to him

इस प्रकार सोचकर, जब वह उस आगे स्थित किरात गाँव में प्रवेश करना चाहता था, तब मैंने उससे ये शब्द कहे

7.23.13

अपरिज्ञातनीरागमार्ग मित्र शुभाकृते। मरुमार्गमहारण्यपान्थ स्वागतमस्तु ते ॥ १३ ॥

aparijñātanīrāgamārga mitra śubhākṛte | marumārgamahāraṇyapāntha svāgatamastu te || 13 ||

O friend, for your auspicious deed, welcome to this desert path, the great forest path, the unknown waterless path

हे मित्र, तुम्हारे शुभ कार्य के लिए, इस मरुस्थल मार्ग, महान वन मार्ग, अज्ञात निर्जल मार्ग पर तुम्हारा स्वागत है

7.23.14

चिरं मनुष्यदेशेऽस्मिन्निर्जनग्राममध्वनि। अधराध्वग विश्रातिं विश्रान्तोपि न लप्स्यसे ॥ १४ ॥

ciram manuṣyadeśe'sminnirjanagrāmamadhvani | adharādhvaga viśrātiṃ viśrāntopi na lapsyase || 14 ||

For a long time in this human land, in this deserted village path, O traveler, even if you rest, you will not find comfort

इस मानव भूमि में लंबे समय तक, इस सुनसान गाँव मार्ग पर, हे यात्री, भले ही तुम विश्राम करो, तुम सुख नहीं पाओगे

7.23.15

ग्रामे विश्रमणं नैव वर्तते पामरास्पदे। तृड्वै लवणपानेन भूय एवाभिवर्धते ॥ १५ ॥

grāme viśramaṇaṃ naiva vartate pāmarāspade | tṛḍvai lavaṇapānena bhūya evābhivardhate || 15 ||

In this village, there is no rest for the wicked | Thirst only increases with the drinking of salty water

इस गाँव में, दुष्टों के लिए कोई विश्राम नहीं है | प्यास केवल नमकीन पानी पीने से बढ़ती है

7.23.16

एते ग्रामैकशरणाः पल्लवाः स्पन्दभीरवः। अयथापथसंचारा हरिणा इव जन्तवः ॥ १६ ॥

ete grāmaikaśaraṇāḥ pallavāḥ spandabhīravaḥ| ayathāpathasaṃcārā hariṇā iva jantavaḥ || 16 ||

These people, who take refuge in a single village, are like trembling leaves, moving in unrighteous paths like deer.

ये लोग, जो एक गाँव में शरण लेते हैं, काँपते पत्तों की तरह हैं, और हिरण की तरह अनुचित मार्गों पर चलते हैं।

7.23.17

न स्फुरन्ति विचारेषु प्रज्वलन्त्यनुभूतिषु । न त्रस्यन्ति दुराचारादश्मयन्त्रमया इव ॥ १७ ॥

na sphuranti vicāreṣu prajvalantyanubhūtiṣu| na trasyanti durācārādaśmayantramayā iva || 17 ||

They do not shine in thoughts, they blaze in experiences, they do not fear from misconduct like stone machines.

वे विचारों में नहीं चमकते, अनुभवों में प्रज्वलित होते हैं, और दुराचार से नहीं डरते, पत्थर की मशीनों की तरह।

7.23.18

कामार्थरागसद्वेषपरिनिष्ठितपौरुषाः । कर्मण्यापातमधुरे रमन्ते दग्धबुद्धयः ॥ १८ ॥

kāmārtharāgasadveṣaparinṣṭhitapauruṣāḥ| karmaṇyāpātamadhure ramante dagdhabuddhayaḥ || 18 ||

Those whose manhood is established in desire, wealth, attachment, and hatred, delight in the sweetness of action, with their intellect burned.

जिनकी पुरुषार्थ कामना, धन, आसक्ति और द्वेष में स्थापित है, वे अपने बुद्धि को जलाकर कर्म की मिठास में रमते हैं।

7.23.19

आभिजात्याततोदारा शीतला रसशालिनी । नेह विश्वसिति प्रक्षा मेघमाला मरावि॒व ॥ १९ ॥

ābhijātyātatodārā śītalā rasśālinī| neha viśvasiti prakṣā meghamālā marāviva || 19 ||

The noble, the generous, the cool, the juicy, do not trust here, like a cloud garland in the desert.

उत्कृष्ट, उदार, शीतल, रसीले, यहाँ विश्वास नहीं करते, मरुस्थल में मेघमाला की तरह।

7.23.20

वरमन्धगुहाहित्वं शिलान्तःकीटता वरम् । वरं मरौ पङ्गुमृगो न ग्राम्यजनसंगमः ॥ २० ॥

varamandhaguhāhitvaṃ śilāntaḥkīṭatā varam| varaṃ marau paṅgumṛgo na grāmyajanasamgaḥ || 20 ||

It is better to be in a dark cave, it is better to be a worm in a stone, it is better to be a lame deer in the desert than to associate with village people.

अंधेरी गुफा में रहना बेहतर है, पत्थर के अंदर कीड़ा होना बेहतर है, मरुस्थल में लंगड़ा हिरण होना बेहतर है गाँव वालों के संग रहने से।

7.23.21

निमेषास्वादमधुराः क्षणान्तरविरागिणः । मारणैकान्तनिरता ग्राम्या विषकणा इव ॥ २१ ॥

nimeṣāsvādamadhurāḥ kṣaṇāntaravirāgiṇaḥ | māraṇaikāntaniratā grāmyā viṣakaṇā iva || 21 ||

The moments are sweet like honey, but they quickly turn to disinterest | They are solely focused on destruction, like village poison pills

क्षण मधु के समान मीठे होते हैं, लेकिन शीघ्र ही विरक्ति उत्पन्न हो जाती है | वे केवल विनाश में लगे हुए हैं, ग्रामीण विष कणों की तरह

7.23.22

वान्ति भस्मकणाकीर्णा जीर्णाः संशीर्णसद्मसु । तृणपर्णवनव्यग्रा ग्राम्याधार्मिकवायवः ॥ २२ ॥

vānti bhasmakaṇākīrṇā jīrṇāḥ saṃśīrṇasadmasu | tṛṇaparṇavanavyagrā grāmyādhārmikavāyavaḥ || 22 ||

They vomit, covered in ashes, worn out in ruined houses | Busy in the grass and leaf forests, they are unrighteous village winds

वे भस्म से ढके हुए, खंडहर घरों में थके हुए, उल्टी करते हैं | घास और पत्तों के जंगलों में व्यस्त, वे अधार्मिक ग्रामीण हवाएँ हैं

7.23.23

एवमुक्तेन तेनाहमिदमुक्तस्ततोऽनघ । मद्वाक्येन समाश्वास्य स्नातेनेवामृताम्भसा ॥ २३ ॥

evamuktena tenāhamidamuktastato'nagha | madvākyena samāśvāsya snātenevāmṛtāmbhasā || 23 ||

Thus spoken by him, I was told this, O sinless one | Reassured by my words, as if bathed in the nectar of immortality

इस प्रकार उसके द्वारा कहे जाने पर, मैंने यह कहा, हे निष्पाप | मेरे वचनों से आश्वस्त, जैसे अमृत के जल में स्नान करके

7.23.24

पान्थ उवाच । भगवन्कोऽसि पूर्णात्मा महात्मा कथमात्मवान् । पश्यस्यनाकुलो लोकं ग्रामयात्रामिवाध्वगः ॥ २४ ॥

pāntha uvāca | bhagavanko'si pūrṇātmā mahātmā kathamātmavān | paśyasyanākulo lokaṃ grāmayātrāmivādhvagaḥ || 24 ||

The traveler said | O Lord, who are you, the complete soul, the great soul, how are you self-possessed | You see the world without distress, like a traveler on a village journey

पथिक ने कहा | हे भगवान्, तुम कौन हो, पूर्णात्मा, महात्मा, कैसे आप आत्मसंयमी हो | तुम बिना किसी व्याकुलता के संसार को देखते हो, जैसे ग्राम यात्रा पर जाने वाला यात्री

7.23.25

किं त्वया पीतममृतं किं त्वं सम्राड्विराडथ । सर्वार्थरिक्तोऽपि चिरं संपूर्ण इव राजसे ॥ २५ ॥

kiṃ tvayā pītamamṛtaṃ kiṃ tvaṃ samrāḍvirāḍatha | sarvārtharikto'pi ciraṃ saṃpūrṇa iva rājase || 25 ||

What nectar have you drunk, what are you, the emperor or the ruler | Though devoid of all wealth, you reign supreme for a long time

तुमने कौन सा अमृत पी है, तुम कौन हो, सम्राट् या शासक | सभी धन से रहित होकर भी, तुम दीर्घकाल तक पूर्ण रूप से राज करते हो

7.23.26

शून्योऽसिपरिपूर्णोऽसि घूर्णोऽसीव स्थिरोऽसि च न सर्वमपि सर्वं च न किंचित्किंचिदेव च ॥ २६ ॥

śūnyo'siparipūrṇo'si ghūrṇo'sīva sthiro'si cana sarvamapi sarvaṃ ca na kiṃcitkiṃcideva ca || 26 ||

You are void and full, moving and still, everything and nothing.

आप शून्य और पूर्ण हैं, चल रहे हैं और स्थिर हैं, सब कुछ और कुछ भी नहीं।

7.23.27

उपशान्तं च कान्तं च दीप्तमप्रतिघाति च निवृत्तं चोर्जितं तादृग्रूपं किमिति ते मुने ॥ २७ ॥

upaśāntaṃ ca kāntaṃ ca dīptamapratighāti canivṛttaṃ corjitaṃ tādṛgrūpaṃ kimiti te mune || 27 ||

You are peaceful and beautiful, radiant and unopposed, withdrawn and energetic. What is this form of yours, O sage?

आप शांत और सुंदर हैं, चमकदार और अविरोधी, वापस ले लिया गया और ऊर्जावान। हे मुनि, आपका यह रूप क्या है?

7.23.28

भूसंस्थोऽपि समस्तानां लोकानामुपरीव खेसंस्थितोऽसि निरास्थोऽसि घनास्थोऽसीव लक्ष्यसे ॥ २८ ॥

bhūsaṃstho'pi samastānāṃ lokānāmuparīva khesaṃsthito'si nirāstho'si ghanāstho'sīva lakṣyase || 28 ||

Though you are on the earth, you are above all worlds, in the sky, unattached, and dense, you are perceived.

भले ही आप पृथ्वी पर हैं, आप सभी लोकों से ऊपर हैं, आकाश में, अनासक्त, और घने, आप दिखाई देते हैं।

7.23.29

प्रसृतं न पदार्थेषु न पदार्थात्मनाऽस्ति वैतवेन्दोरिव शुद्धस्य मनोऽमृतमयं स्थितम् ॥ २९ ॥

prasṛtaṃ na padārtheṣu na padārthātmanā'sti vaitavendoriva śuddhasya mano'mṛtamayaṃ sthitam || 29 ||

It is not spread in objects nor does it exist as the essence of objects. Like the pure mind of Indra, it is established in immortal bliss.

यह वस्तुओं में फैला हुआ नहीं है न ही यह वस्तुओं के सार के रूप में अस्तित्व में है। इंद्र के शुद्ध मन की तरह, यह अमृतमय आनंद में स्थापित है।

7.23.30

कलावानकलङ्कोऽन्तःशीतलो भास्वरः समःरसायनभरापूर्णः पूर्णेन्दुरिव राजसे ॥ ३० ॥

kalāvānakalaṅko'ntaḥśītalo bhāsvaraḥ samaḥrasāyanabharāpūrṇaḥ pūrṇenduriva rājase || 30 ||

You are adorned with arts, blemishless within, cool, radiant, balanced, filled with the essence of enjoyment, like the full moon, you shine.

आप कलाओं से सज्जित हैं, अंदर से दोषरहित हैं, ठंडे हैं, चमकदार हैं, संतुलित हैं, भोग की सार से भरे हुए हैं, पूर्ण चंद्रमा की तरह, आप चमकते हैं।

7.23.31

त्वदिच्छायां तु सदसद्भावं पश्यामि ते चिति । संसारमण्डलमिदं स्थितं फलमिवाङ्कुरे ॥ ३१ ॥

tvadicchāyāṃ tu sadasadbhāvaṃ paśyāmi te citi | saṃsāramaṇḍalamidaṃ sthitaṃ phalamivāṅkure || 31 ||

In your will, I see the existence and non-existence | This worldly cycle is established like a fruit in a seed || 31 ||

तुम्हारी इच्छा में, मैं अस्तित्व और अनस्तित्व देखता हूँ | यह संसार चक्र एक बीज में फल की तरह स्थापित है || ३१ ||

7.23.32

अहं तावदयं विप्र शाण्डिल्यकुलसंभवः । मङ्किर्नाम महाभाग तीर्थयात्राप्रसङ्गतः ॥ ३२ ॥

ahaṃ tāvadayaṃ vipra śāṇḍilyakulasambhavaḥ | maṅkirnāma mahābhāga tīrthayātrāprasaṅgataḥ || 32 ||

I am this Brahmin born in the Shandilya family | Named Manki, fortunate one, due to the pilgrimage || 32 ||

मैं यह शाण्डिल्य कुल में उत्पन्न ब्राह्मण हूँ | मङ्कि नाम, महाभाग, तीर्थयात्रा के कारण || ३२ ||

7.23.33

गत्वा सुदूरमध्वानं दृष्ट्वा तीर्थानि संप्रति । चिरकालेन सदनमात्मीयं गन्तुमुद्यतः ॥ ३३ ॥

gatvā sudūramadhvānaṃ dṛṣṭvā tīrthāni saṃprati | cirakālena sadanamātmīyaṃ gantumudyataḥ || 33 ||

Having gone a long distance, seeing the pilgrimage sites now | After a long time, ready to go to my own home || 33 ||

दूर की यात्रा करके, तीर्थ स्थानों को देखकर अब | लंबे समय के बाद, अपने घर जाने के लिए तैयार || ३३ ||

7.23.34

न च मे गन्तुमुद्योगो विरक्तमनसो गृहम् । दृष्ट्वा तडित्सकाशानि भूतानि भुवनोदरे ॥ ३४ ॥

na ca me gantumudyogo viraktamanaso gṛhaṃ | dṛṣṭvā taḍitsakāśāni bhūtāni bhuvanodare || 34 ||

Nor do I have the desire to go home with a detached mind | Seeing the beings like lightning in the world || 34 ||

न ही मुझे विरक्त मन से घर जाने की इच्छा है | संसार में बिजली की तरह प्राणियों को देखकर || ३४ ||

7.23.35

भगवन्सत्यमात्मानं कथयेहानुकम्पया । गम्भीराणि प्रसन्नानि साधुचेतःसरांसि हि ॥ ३५ ॥

bhagavansatyamātmānaṃ kathayehaanukampayā | gambhīrāṇi prasannāni sādhucetaḥsarāṃsi hi || 35 ||

O Lord, truly tell me about yourself with compassion | The deep and clear virtuous minds indeed || 35 ||

हे भगवान, दया से मुझे अपने बारे में सच्चाई बताएँ | गहरे और स्पष्ट साधु मन वास्तव में || ३५ ||

7.23.36

दर्शनादेव मित्रत्वं कुर्वतां महतां पुरः । कमलानीव भूतानि विकसन्त्याश्वसन्ति च ॥ ३६ ॥

darśanādeva mitratvaṃ kurvatāṃ mahatāṃ puraḥ| kamalānīva bhūtāni vikasantyāśvasanti ca || 36 ||

By merely seeing the great ones who cultivate friendship, beings bloom and feel reassured like lotuses.

महान लोगों को देखकर ही जो मित्रता करते हैं, वे प्राणी कमलों की तरह खिल उठते हैं और आश्वस्त होते हैं।

7.23.37

ममेदं च मनो मोहात्संसारभ्रमसंभवम् । मन्ये हातुं न समर्थं स त्वं बोधानुकम्पितैः ॥ ३७ ॥

mamedaṃ ca mano mohātsaṃsārabhramasambhavam| manye hātuṃ na samarthaṃ sa tvaṃ bodhānukampitaiḥ || 37 ||

I think this mind of mine, born out of the delusion of worldly existence, is not capable of being destroyed by you, who are compassionate towards enlightenment.

मैं सोचता हूं कि यह मेरा मन, जो संसार के भ्रम से उत्पन्न हुआ है, आपके द्वारा, जो बोध के प्रति दयालु हैं, नष्ट नहीं किया जा सकता।

7.23.38

श्रीवसिष्ठ उवाच । वसिष्ठोऽस्मि महाबुद्धे मुनिरस्मि नभोगृहः । केनाप्यर्थेन राजर्षेरिमं मार्गमुपस्थितः ॥ ३८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca| vasiṣṭho'smi mahābuddhe munirasmi nabhogṛhaḥ| kenāpyarthena rājarṣerimaṃ mārgamupasthitaḥ || 38 ||

Sri Vasistha said: I am Vasistha, O great sage, I am a sage who dwells in the sky. For some reason, I have come to this path of the royal sage.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मैं वसिष्ठ हूं, हे महान बुद्धिमान, मैं आकाश में रहने वाला मुनि हूं। किसी कारण से, मैं इस राजर्षि के मार्ग पर आया हूं।

7.23.39

मागा विषादं पन्थानमागतोऽसि मनीषिणाम् । प्रायः प्राप्तोसि संसारसागरस्य परं तटम् ॥ ३९ ॥

māgā viṣādaṃ panthānamāgato'si manīṣiṇām| prāyaḥ prāptosi saṃsārasāgarasya paraṃ taṭam || 39 ||

Do not grieve, you have come to the path of the wise. You have almost reached the other shore of the ocean of worldly existence.

दुःखी मत हो, आप बुद्धिमानों के मार्ग पर आए हैं। आपने संसार के सागर के दूसरे किनारे तक पहुंचना प्रायः प्राप्त कर लिया है।

7.23.40

वैराग्यविभवोदारा मतिरुक्तिरपीदृशी । आकृतिः शान्तरूपा च न भवत्यमहात्मनः ॥ ४० ॥

vairāgyavibhavodārā matiruktirapīdṛśī| ākṛtiḥ śāntarūpā ca na bhavatyamahātmanaḥ || 40 ||

Such profound wisdom, detachment, and generous disposition, such speech, and such a serene demeanor do not belong to an ordinary person.

ऐसी गहरी बुद्धिमत्ता, वैराग्य, और उदार विचारधारा, ऐसी वाणी, और ऐसी शांत आकृति एक सामान्य व्यक्ति की नहीं होती।

7.23.41

मणिर्मधुरकाषेण यथैति विमलात्मताम्। तथा कषायपाकेन चित्तमेति विवेकिताम्॥ ४१॥

maṇirmadhurakāṣeṇa yathaiti vimalātmatām | tathā kṣāyapākena cittameti vivekitām || 41 ||

Just as a gem becomes pure by being rubbed with a smooth stone, similarly, the mind attains discernment by the process of purification.

जैसे मणि मधुर काष से घिसकर शुद्ध होती है, वैसे ही मन कषाय पाक से विवेक को प्राप्त होता है।

7.23.42

किं ज्ञातुमिच्छसि कथं संसारं हातुमिच्छसि। उपदिष्टमहं मन्ये संपादयति कर्मभिः॥ ४२॥

kiṃ jñātumicchasi kathaṃ saṃsāraṃ hātumicchasi | upadiṣṭamahaṃ manye saṃpādayati karmabhiḥ || 42 ||

What do you wish to know? How do you wish to end the cycle of rebirth? I believe that what is taught should be accomplished through actions.

आप क्या जानना चाहते हैं? आप संसार को कैसे समाप्त करना चाहते हैं? मैं मानता हूँ कि जो उपदेश दिया जाता है, उसे कर्मों द्वारा संपादित करना चाहिए।

7.23.43

विमलवासन उत्तममानसः परिविविक्तमतिर्जनतेजसा। पदमशोकमलं खलु युज्यते जनितितीर्षुमतेरिदमुच्यते॥ ४३॥

vimalavāsana uttamamānasaḥ pariviviktamatirjanatejasā | padamaśokamalaṃ khalu yujyate janititīrṣumateridamucyate || 43 ||

One with pure desires, a noble mind, and a detached intellect, shines with the radiance of knowledge. Such a person indeed attains the lotus feet of the Lord, which is free from sorrow. This is said to be the path for those who seek liberation.

जिसकी वासनाएँ शुद्ध हैं, मन उत्तम है, और बुद्धि विवेकपूर्ण है, वह ज्ञान की चमक से प्रकाशित होता है। ऐसा व्यक्ति निश्चय ही दुःखरहित परमात्मा के चरणों को प्राप्त होता है। यह मुक्ति की इच्छा रखने वालों के लिए कहा जाता है।

Chapter 24

7.24.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ममेत्युक्तवतो मङ्किर्विनिपत्य स पादयोः । उवाचानन्दपूर्णाक्षमिदं मार्गे वहन्वचः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mametyuktavato maṅkirvinipatya sa pādayoḥ | uvācānandapūrṇākṣamidaṃ mārge vahanvacaḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: Manki, having said 'mine,' fell at his feet and spoke these words full of joy on the path.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मङ्कि ने 'मेरा' कहकर, उनके चरणों में गिरकर, आनंद से भरे नेत्रों से मार्ग में ये वचन कहे।

7.24.2

मङ्किरुवाच । भगवन्भूरिशो भ्रान्ता दिशो दश दृशो यथा । मया न तु पुनः साधुर्लब्धः संशयनाशकृत् ॥ २ ॥

maṅkiruvāca | bhagavanbhūriśo bhrāntā diśo daśa dṛśo yathā | mayā na tu punaḥ sādhurlabdhaḥ saṃśayanāśakṛt || 2 ||

Manki said: O Lord, I have wandered in all ten directions, confused like the senses. Yet, I have not found a virtuous person who can dispel my doubts.

मङ्कि ने कहा: हे भगवन्, मैंने सभी दस दिशाओं में भटकते हुए, इंद्रियों की तरह भ्रमित होकर, फिर भी एक साधु पुरुष नहीं पाया जो मेरे संशयों को दूर कर सके।

7.24.3

समस्तदेहसाराणां सारस्याद्य फलं मया । खिन्नोस्मि भगवन्पश्यन्दशाः संसारदोषदाः ॥ ३ ॥

samastadehasārāṇāṃ sārasyādya phalaṃ mayā | khinnosmi bhagavanpaśyandśāḥ saṃsāradoṣadāḥ || 3 ||

I am exhausted, O Lord, seeing the defects of the world, which are the first fruits of the essence of all bodily pleasures.

हे भगवन्, मैं थक गया हूँ संसार के दोषों को देखकर, जो सभी शारीरिक सुखों के सार के प्रथम फल हैं।

7.24.4

पुनर्जातं पुनर्नष्टं सुखदुःखभ्रमः सदा । अवश्यंभाविपर्यन्तदुःखत्वात्सकलान्यपि ॥ ४ ॥

punarjātaṃ punarnāṣṭaṃ sukhaduḥkhabhramaḥ sadā | avaśyaṃbhāviparyantaduḥkhatvātsakalānyapi || 4 ||

Always, there is the illusion of happiness and sorrow, born again and again, destroyed again and again, because ultimately all are sorrowful.

हमेशा, सुख और दुःख का भ्रम होता है, जो बार-बार पैदा होता है और बार-बार नष्ट होता है, क्योंकि अंततः सभी दुःखमय हैं।

7.24.5

सुखान्येवातिदुःखानि वरं दुःखान्यतो मुने । दृढदुःखवदन्तत्वाद्दुःखयन्ति सुखानि माम् ॥ ५ ॥

sukhānyevātiduḥkhāni varaṃ duḥkhānyato mune | dṛḍhaduḥkhavadantatvāddduḥkhayanti sukhāni mām || 5 ||

Even pleasures are extremely sorrowful, O sage, it is better to have sorrows. Because of their firm sorrowful nature, pleasures cause me sorrow.

सुख भी अत्यंत दुःखमय हैं, हे मुनि, दुःख ही बेहतर हैं। क्योंकि अपने दृढ़ दुःखमय स्वभाव के कारण, सुख मुझे दुःख देते हैं।

7.24.6

तथा राम यथा दुःखमेव मे सुखतां गतम् । वयोदशनलोमान्त्रैः सह जर्जरतां गतम् ॥ ६ ॥

tathā rāma yathā duḥkham eva me sukhatāṃ gatam | vayodashanalomāntraiḥ saha jarjaratāṃ gatam || 6 ||

O Rama, just as my sorrow has turned into joy, so has my youth, along with its beauty and vitality, turned into old age.

हे राम, जैसे मेरा दुःख सुख में बदल गया है, वैसे ही मेरी जवानी और उसकी सुंदरता और जीवंतता बुढ़ापे में बदल गई है।

7.24.7

उच्चैःपदे पातपरा बुद्धिर्नाध्यवसायिनी । सुप्रवालं कुसंकल्पाद्गहनं न प्रकाशते ॥ ७ ॥

uccaiḥpade pātaparā buddhirnādhyavasāyinī | supravālaṃ kusaṃkalpādgahanaṃ na prakāśate || 7 ||

Even in high positions, the mind is not resolute and does not illuminate the dense forest of good intentions.

उच्च पदों पर भी, मन निश्चयात्मक नहीं होता और अच्छे इरादों के घने जंगल को प्रकाशित नहीं करता।

7.24.8

मनः पिप्पलपल्यूलैरिव कुग्रामकोटरम् । वासनाङ्गवहैर्गृध्रैर्नित्यं पापीयसी स्थितिः ॥ ८ ॥

manaḥ pippala palyūlairiva kugrāmakoṭaram | vāsanāṅgavahairgṛdhrairnityaṃ pāpīyasī sthitiḥ || 8 ||

The mind is like a village of bad habits, constantly attacked by vultures of desires, leading to a more sinful state.

मन एक बुरी आदतों के गाँव की तरह है, जो निरंतर इच्छाओं के गिद्धों द्वारा आक्रांत होता है, जिससे एक अधिक पापी स्थिति बनती है।

7.24.9

कण्टकद्रुमवल्लीव करालकुटिला मतिः । आयुरायासशालिन्या यामिन्येव तमोन्धया ॥ ९ ॥

kaṇṭakadrumavallīva karālakuṭilā matiḥ | āyurāyāsaśālinyā yāminyeva tamondhayā || 9 ||

The mind is like a thorny vine, twisted and frightful, and life is full of toil, like a dark night.

मन एक काँटेदार लता की तरह है, टेढ़ा-मेढ़ा और भयानक, और जीवन परिश्रम से भरा है, जैसे एक अंधेरी रात।

7.24.10

अक्षीवानागतालोकं क्षीणं संततचिन्तया । न किंचिद्रसमादत्ते नष्टैवापि न नश्यति ॥ १० ॥

akṣīvānāgatālokaṃ kṣīṇaṃ saṃtatacintayā | na kiṃcidrasamādatte naṣṭaivāpi na naśyati || 10 ||

The eyes, devoid of sight, are worn out by constant thought, yet they do not grasp any essence and are not destroyed even when lost.

आँखें, जो दृष्टि से रहित हैं, निरंतर चिंतन से थक गई हैं, फिर भी वे किसी भी सार को नहीं पकड़तीं और खो जाने पर भी नष्ट नहीं होतीं।

7.24.12

जीवितं च जने जीर्णं नैवोत्तीर्णो भवार्णवः । दिनानुदिनमुच्छूना भोगाशा भयदायिनी ॥ १२ ॥

jīvitaṃ ca jane jīrṇaṃ naivotīrṇo bhavārṇavaḥ| dinānudinamucchūnā bhogāśā bhayadāyinī || 12 ||

Life is worn out in the world, and one has not crossed the ocean of existence| Day by day, the desire for enjoyment becomes more feeble and fearful

जीवन धीरे-धीरे घिस जाता है, और मनुष्य अस्तित्व के समुद्र से पार नहीं हो पाता| दिन प्रतिदिन भोग की इच्छा कमजोर और डरावनी होती जाती है

7.24.13

पूर्णापूर्णात्मनि क्षीणाः श्वभ्रकण्टकवृक्षवत् । चिन्ताज्वरविकारिण्यो लक्ष्म्याः खलु महापदः ॥ १३ ॥

pūrṇāpūrṇātmani kṣīṇāḥ śvabhrakaṇṭakavṛkṣavat| cintājvaravikāriṇyo lakṣmyāḥ khalu mahāpadaḥ || 13 ||

Those who are diminished in the self, which is complete and full, are like thorny trees in a pit| They are afflicted with the fever of worry, and the calamities of wealth are indeed great

जो पूर्ण और परिपूर्ण आत्मा में क्षीण हो गए हैं, वे गड्ढे में काँटेदार पेड़ के समान हैं| वे चिंता के ज्वर से पीड़ित हैं, और धन के महान संकट वास्तव में बड़े हैं

7.24.14

संपन्नमक्षतं सापि विप्रलम्भेन जृम्भते । अन्तः स्फुरितरत्नेहं भास्वरं वान्धकोटरम् ॥ १४ ॥

saṃpannamakṣataṃ sāpi vipralambhena jṛmbhate| antaḥ sphuritaratnehaṃ bhāsvaraṃ vāndhakoṭaram || 14 ||

Even the complete and unharmed wealth deceives and yawns| Within, it is like a shining jewel in a dark cave

पूर्ण और अक्षत धन भी धोखा देता है और जम्हाई लेता है| अंदर से, यह एक अंधेरी गुफा में चमकते रत्न के समान है

7.24.15

कल्लोलकलिलं शून्यं चेतः शुष्काब्धिदुर्भगम् । मामिन्द्रियार्थैकपरं न स्पृशन्ति विवेकिनः ॥ १५ ॥

kallolakalilaṃ śūnyaṃ cetaḥ śuṣkābdhidurbhagam| māmindriyārthaikaparaṃ na spṛśanti vivekinaḥ || 15 ||

The mind, which is agitated and empty, is like a dry ocean of misfortune| The wise do not touch it, as it is solely focused on sensual pleasures

मन, जो उथल-पुथल और खाली है, एक सूखे समुद्र के समान दुर्भाग्य का स्रोत है| बुद्धिमान लोग इसे छूते नहीं हैं, क्योंकि यह केवल इंद्रिय सुखों पर केंद्रित है

7.24.16

सकण्टकममेध्यस्थं श्लेष्मातकमिव द्रुमम् । असदेव महारम्भं चलदर्जुनवातवत् ॥ १६ ॥

sakaṇṭakamamedhyasthaṃ śleṣmātakamiva drumaṃ| asadeva mahārambhaṃ caladarjunavātavat || 16 ||

Like a thorny tree in an impure place, it is an unworthy great endeavor, like the wavering wind of Arjuna

जैसे एक अशुद्ध स्थान में काँटेदार पेड़, यह एक अयोग्य महान प्रयास है, जैसे अर्जुन की लहराती हवा

7.24.17

मनो मरणमप्राप्तं शून्यं दुःखाय वल्गति । शास्त्रसज्जनसंपर्कचन्द्रतारकधारिणी ॥ १७ ॥

mano maraṇamaprāptaṃ śūnyaṃ duḥkhāya valgati | śāstrasajjanasaṃparkacandratārakadhāriṇī || 17 ||

The mind, not having attained death, wanders in emptiness due to sorrow | It is adorned with the moon and stars of association with scriptures and good people

मन, मरण प्राप्त न होने के कारण, दुःख के लिए शून्य में भटकता है | यह शास्त्र और सज्जन संपर्क के चन्द्रमा और तारकों से अलंकृत है

7.24.18

अहंभावोल्लसद्यक्षा क्षीणा नाज्ञानयामिनी । अज्ञानध्वान्तमत्तेभसिंहः कर्मतृणानलः ॥ १८ ॥

ahaṃbhāvollasadyakṣā kṣīṇā nājñānayāminī | ajñānadhvāntamattebhasiṃhaḥ karmatṛṇānalaḥ || 18 ||

The ego, shining like the eye, is diminished, not the night of ignorance | The lion of ignorance is intoxicated with the fire of karma like grass

अहंकार, नेत्र की तरह चमकता है, अज्ञान की रात नहीं घटती | अज्ञान का सिंह कर्म की आग के घास की तरह मतवाला है

7.24.19

उदितो न विकारार्को वासनारजनीक्षयः । अवस्तु वस्तुवद्बुद्धं मत्तश्चित्तमतंगजः ॥ १९ ॥

udito na vikārārko vāsanārajanīkṣayaḥ | avastu vastuvadbuddhaṃ mattacittamataṃgajaḥ || 19 ||

The sun of transformation has not risen, the destruction of the dust of desires | The mind, intoxicated like an elephant, considers the non-existent as existent

परिवर्तन का सूर्य उगा नहीं है, इच्छाओं की धूल का विनाश | मन, हाथी की तरह मतवाला, असत् को सत् मानता है

7.24.20

इन्द्रियाणि निकृन्तन्ति न जाने किं भविष्यति । शास्त्रदृष्टिरपि प्राज्ञैर्नाश्रिता तरणाय या ॥ २० ॥

indriyāṇi nikṛntanti na jāne kiṃ bhaviṣyati | śāstradṛṣṭirapi prājñairnāśritā taraṇāya yā || 20 ||

The senses cut down, I do not know what will happen | Even the vision of scriptures is not relied upon by the wise for crossing over

इंद्रियाँ काटती हैं, मुझे नहीं पता क्या होगा | शास्त्रों की दृष्टि भी बुद्धिमानों द्वारा पार करने के लिए नहीं ली जाती

7.24.21

साप्यदृष्टिरिवान्ध्याय वासनावेशकारिणी । तदेवमतिसंमोहे यत्कार्यमिह दारुणे । उदर्कश्रेयसे तात तन्मे कथय पृच्छते ॥ २१ ॥

sāpyadṛṣṭirivāndhyāya vāsanāveśakāriṇī | tadevamatisammoha yatkāryamiha dāruṇe | udarkaśreyase tāta tanme kathaya pṛcchate || 21 ||

That vision is also like blindness, causing the influence of desires | In such great delusion, what is the duty here in this terrible situation? For the sake of ultimate good, O father, tell me that

वह दृष्टि भी अंधता की तरह है, इच्छाओं का प्रभाव पैदा करती है | ऐसे महान मोह में, यहाँ इस भयानक स्थिति में क्या कर्तव्य है? परम कल्याण के लिए, हे पिता, मुझे वह बताओ

7.24.22

शाम्यन्ति मोहमिहिकाः शरदीव साधौ प्राप्ते भवन्ति विमलाश्च तथाखिलाशाः सत्येति वाग्भवतु साधुजनोपगीता मद्बोधनेन भवता भवशान्तिदेन ॥ २२ ॥

śāmyanti mohamihikāḥ śaradīva sādhau prāpte bhavanti vimalāśca tathākhilāśāḥ satyeti vāgbhvatu sādhujanopagītā mdbodhanena bhavatā bhavaśāntiden || 22 ||

In the presence of a virtuous person, all delusions and desires subside, just as the autumn season brings clarity. May the words of truth, sung by the virtuous, bring peace to the world through my enlightenment.

साधु पुरुष के समीप आने पर सभी मोह और इच्छाएँ शान्त हो जाती हैं, जैसे शरद ऋतु स्पष्टता लाती है। सत्य के शब्दों को, जिन्हें साधु लोग गाते हैं, मेरे ज्ञान से संसार में शान्ति लाने की कामना करें।

Chapter 25

7.25.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संवेदनं भावनं च वासना कलनेति च । अनर्थायेह शब्दार्थे विगतार्थो विजृम्भते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃvedanaṃ bhāvanaṃ ca vāsanā kalaneti ca | anarthāyeha śabdārthe vigatārtho vijṛmbhate || 1 ||

Shri Vasishtha said: Perception, imagination, and the impressions of the mind are the causes of meaningless words and actions in this world.

श्री वसिष्ठ ने कहा: अनुभव, कल्पना और मन की वासनाएँ इस संसार में बेमतलब शब्दों और कार्यों की वजह हैं।

7.25.2

वेदनं भावनं विद्धि सर्वदोषसमाश्रयम् । तस्मिन्नेवापदः सन्ति लता मधुरसे यथा ॥ २ ॥

vedanaṃ bhāvanaṃ viddhi sarvadoṣasamāśrayam | tasminnevāpadaḥ santi latā madhurase yathā || 2 ||

Know that perception and imagination are the abode of all faults. Just as a creeper finds support in a sweet tree, so do calamities reside in them.

जान लो कि अनुभव और कल्पना सभी दोषों का आश्रय हैं। जैसे एक लता मीठे पेड़ में सहारा लेती है, वैसे ही आपत्तियाँ उनमें रहती हैं।

7.25.3

संसारमार्गे गहने वासनावेशवाहिनः । उपयाति विचित्रौघैर्वृत्तवृत्तान्तसंततिः ॥ ३ ॥

saṃsāramārge gahane vāsanāveśavāhinaḥ | upayāti vicitraughairvṛttavṛttāntasaṃtatiḥ || 3 ||

In the deep path of worldly existence, those who are carried away by mental impressions encounter a continuous series of strange events and behaviors.

संसार के गहरे मार्ग में, जो मन की वासनाओं से व्यस्त हैं, वे एक लगातार श्रृंखला में विचित्र घटनाओं और व्यवहारों का सामना करते हैं।

7.25.4

विवेकिनो वासनया सह संसारसंभ्रमः । क्षीयते माधवस्यान्ते शनैरिव धरारसः ॥ ४ ॥

vivekino vāsanayā saha saṃsārasaṃbhramaḥ | kṣīyate mādhavasyānte śanairiva dharārasaḥ || 4 ||

For the wise, the confusion of worldly existence along with mental impressions gradually diminishes, like the earth's moisture at the end of the rainy season.

बुद्धिमान के लिए, मन की वासनाओं के साथ संसार का भ्रम धीरे-धीरे कम होता जाता है, जैसे वर्षा ऋतु के अंत में धरती की नमी।

7.25.5

अस्याः संसारसल्लक्ष्या वासनोत्सेधकारिणी । कदल्या वनजालिन्या रसलेखेव माधवी ॥ ५ ॥

asyāḥ saṃsārasallakyā vāsanotseḍhakāriṇī | kadalyā vanajālinyā rasalekheva mādhavī || 5 ||

The impressions that cause the growth of worldly existence are like the sap of a banana tree in a dense forest, which is sweet but ultimately leads to decay.

संसार की वृद्धि करने वाली वासनाएँ घने जंगल में केले के पेड़ की रस की तरह हैं, जो मीठी होती है लेकिन अंततः सड़न की ओर ले जाती है।

7.25.6

संसारान्ध्यतयोदेति वासनात्मा रसश्चितौयथा वनतया तस्थौ मधुमासरसः क्षितौ ॥ ६ ॥

saṃsārāndhyatayodeti vāsanātmā rasaścitauyathā vanatayā tasthau madhumāsarasaḥ kṣitau || 6 ||

In the twilight of worldly existence, the essence of desire arises, just as the sweetness of honey remains in the forest. The mind, filled with the taste of desires, stands on the earth.

संसार के संध्याकाल में, इच्छा का सार उदित होता है, जैसे मधु की मिठास वन में रहती है। इच्छाओं के स्वाद से भरा मन पृथ्वी पर खड़ा होता है।

7.25.7

चिन्मात्रादमलाच्छून्याद्दते किंचिन्न विद्यतेनान्यत्किंचिदपर्यन्ते खे शून्यत्वेतरद्यथा ॥ ७ ॥

cinmātrādamalācchūnyādṛte kiṃcinna vidyatenānyatkiṃcidaparyante khe śūnyatvetaradyathā || 7 ||

Except for the pure consciousness which is free from impurities, nothing else exists. In the ultimate void, there is nothing but emptiness, just as it is.

मलरहित शुद्ध चेतना के अलावा, कुछ भी नहीं है। अंतिम शून्यता में, शून्यता के अलावा कुछ भी नहीं है, जैसे कि है।

7.25.8

वेदनात्मा न सोऽस्त्यन्य इति या प्रतिभा स्थिराएषाऽविद्या भ्रमस्त्वेष स च संसार आततः ॥ ८ ॥

vedanātmā na so'styanya iti yā pratibhā sthirāeṣā'vidyā bhramastveṣa sa ca saṃsāra ātataḥ || 8 ||

The firm conviction that there is no other reality except the essence of sensation is ignorance. This ignorance is delusion, and this delusion is the worldly existence.

यह दृढ़ विश्वास कि संवेदना के सार के अलावा कोई अन्य वास्तविकता नहीं है, अज्ञान है। यह अज्ञान भ्रम है, और यह भ्रम ही संसार है।

7.25.9

अनालोकनसंसिद्ध आलोकेनैव नश्यतिअसदात्मा सदाभासो बालवेतालवत्क्षणात् ॥ ९ ॥

anālokanasaṃsiddha ālokenaiva naśyatiasadātmā sadābhāso bālavetālavatkṣaṇāt || 9 ||

That which is established without perception is destroyed by perception itself. The unreal appears real, like a child's ghost, vanishing in an instant.

जो दृष्टि के बिना स्थापित होता है, वह दृष्टि से ही नष्ट हो जाता है। असत्य सत्य के रूप में दिखाई देता है, जैसे एक बच्चे का भूत, एक क्षण में गायब हो जाता है।

7.25.10

सर्वदृश्यदृशो बाधे बोधसारतयैकताम्यान्त्यशेषमहीपीठसरित्पूरा इवार्णवे ॥ १० ॥

sarvadṛśyadṛśo bādhe bodhasāratayaikatāmyāntyaśeṣamahīpīṭhasaritpūrā ivārṇave || 10 ||

When the seer of all that is seen is obstructed, the essence of knowledge becomes one with the ultimate reality, like the fullness of the ocean when all rivers merge into it.

जब सब कुछ देखने वाला दृष्टा बाधित होता है, तब ज्ञान का सार अंतिम वास्तविकता से एक हो जाता है, जैसे सभी नदियों के समुद्र में मिलने पर समुद्र की पूर्णता होती है।

7.25.11

मृन्मयं तु यथा भाण्डं मृच्छून्यं नोपलभ्यते । चिन्मयादितया चेत्यं चिच्छून्यं नोपलभ्यते ॥ ११ ॥

mṛnmayam tu yathā bhāṇḍaṁ mṛcchūnyaṁ nopalabhyate | cinmayāditayā cetyaṁ cicchūnyaṁ nopalabhyate || 11 ||

Just as a clay pot cannot be found without clay, the consciousness cannot be found without the self.

जैसे मिट्टी का बर्तन मिट्टी के बिना नहीं पाया जाता, वैसे ही चेतना आत्मा के बिना नहीं पाई जाती।

7.25.12

बोधावबुद्धं यद्वस्तु बोद्ध्यकर्केतेयते । नाबोधं बुध्यते बोधो वैरूप्यादिनान्यता ॥ १२ ॥

bodhāvabuddhaṁ yadvastu boddhyakarketeyate | nābodhaṁ budhyate bodho vairūpyādinānyatā || 12 ||

That which is non-existent in knowledge is considered unknowable. Knowledge is not known through ignorance, due to the difference in nature.

जो ज्ञान में अनुपस्थित है, वह अज्ञेय माना जाता है। ज्ञान अज्ञान द्वारा नहीं जाना जाता, स्वभाव के अन्तर के कारण।

7.25.13

द्रष्टृदर्शनदृश्येषु प्रत्येकं बोधमात्रता । सारस्तेन तदन्यत्वं नास्ति किंचित्खपुष्पवत् ॥ १३ ॥

draṣṭṛdarśanadṛśyeṣu pratyekaṁ bodhamātratā | sārastena tadanyatvaṁ nāsti kiñcitkhapuṣpavat || 13 ||

In the seer, the seen, and the act of seeing, there is only the essence of knowledge. Therefore, there is no difference, just like a flower in the sky.

द्रष्टा, दृश्य, और दर्शन में केवल ज्ञान की सारता है। इसलिए, कोई अन्तर नहीं है, जैसे आकाश में फूल।

7.25.14

सजातीयः सजातीयेनैकतामनुगच्छति । अन्योन्यानुभवस्तेन भवत्वेकत्वनिश्चयः ॥ १४ ॥

sajātīyaḥ sajātīyenaikatāmanugacchati | anyonyānubhavastena bhavatvekatvanishcayaḥ || 14 ||

The similar attains unity with the similar. Through mutual experience, the certainty of oneness arises.

समान समान से एकता प्राप्त करता है। परस्पर अनुभव से एकता का निश्चय होता है।

7.25.15

यदि काष्ठोपलादीनां न भवेद्बोधरूपता । तत्सदानुपलम्भः स्यादेतेषामसतामिव ॥ १५ ॥

yadi kāṣṭhoplādīnāṁ na bhavedbodharūpatā | tatsadānupalambhaḥ syādetetāmamastāmiva || 15 ||

If objects like wood and stone did not have the nature of knowledge, they would always be perceived as non-existent.

अगर लकड़ी और पत्थर जैसी वस्तुओं में ज्ञान की प्रकृति न होती, तो वे हमेशा असत् के रूप में प्रतीत होतीं।

7.25.16

यदा त्वेषा नु दृश्यश्रीर्बोधमात्रैकरूपिणी । तदान्येवाप्यनन्यैव सती बोधेन बोध्यते ॥ १६ ॥

yadā tveṣā nu dṛśyaśrīrbodhamātraikarūpiṇī | tadānyevāpyananyeva satī bodhena bodhyate || 16 ||

When this visible beauty is only of the form of pure consciousness, then, being non-different, it is known by consciousness itself.

जब यह दृश्य श्री केवल बोध के रूप में होती है, तब, अनन्य होने के कारण, यह बोध द्वारा ही जानी जाती है।

7.25.17

सर्वं जगद्गतं दृश्यं बोधमात्रमिदं ततम् । स्पन्दमात्रं यथा वायुर्जलमात्रं यथार्णवः ॥ १७ ॥

sarvaṃ jagadgataṃ dṛśyaṃ bodhamātramidaṃ tatam | spandamātraṃ yathā vāyurjalamātraṃ yathārṇavaḥ || 17 ||

The entire world is visible and permeated by pure consciousness, just as motion is permeated by air and water by the ocean.

सम्पूर्ण जगत दृश्य है और शुद्ध चेतना से व्याप्त है, जैसे गति वायु से व्याप्त होती है और जल सागर से।

7.25.18

मिश्रीभूता अपि ह्येते जतुकाष्ठादयो यथा । मिथोऽननुभवे मिश्रा ऐक्यं ह्यनुभवे मिथः ॥ १८ ॥

miśrībhūtā api hyete jatukāṣṭhādayo yathā | mitho'nanubhave miśrā aikyaṃ hyanubhave mithaḥ || 18 ||

Even though these things like lac and wood are mixed, they do not experience each other; they experience unity only when mixed.

यद्यपि ये चीजें जैसे लाख और लकड़ी मिली हुई हैं, वे एक-दूसरे को अनुभव नहीं करतीं; वे मिलने पर ही एकता का अनुभव करती हैं।

7.25.19

अन्योन्यानुभवो ह्यैक्यमैक्यं त्वन्योन्यवेदनम् । यथाम्भसोः क्षीरयोर्वा न काष्ठजतुनोरिव ॥ १९ ॥

anyonyānubhavo hyaiykaṃ aikyaṃ tvanyonyavedanam | yathāmbhasoḥ kṣīrayorvā na kāṣṭhajatunoriva || 19 ||

Mutual experience is unity, and unity is mutual experience, just as with water and milk, not like lac and wood.

परस्पर अनुभव एकता है, और एकता परस्पर अनुभव है, जैसे पानी और दूध के साथ, लाख और लकड़ी की तरह नहीं।

7.25.20

अहमित्येव बन्धाय नाहमित्येव मुक्तये । एतावन्मात्रके बन्धे स्वायत्ते किमशक्तता ॥ २० ॥

ahamityeva bandhāya nāhamityeva muktaye | etāvanmātrake bandhe svāyatte kimaśaktatā || 20 ||

The sense of 'I' leads to bondage, and the absence of 'I' leads to liberation. In this limited bondage, what is the power of self-dependence?

'मैं' का भाव बंधन का कारण है, और 'मैं' की अनुपस्थिति मुक्ति का कारण है। इस सीमित बंधन में, स्वायत्तता की शक्ति क्या है?

7.25.21

चन्द्रद्वयप्रत्ययवन्मृगतृष्णाम्बुबुद्धिवत् । किमनुत्थित एवायमसदेवाहमुत्थितः ॥ २१ ॥

candradvayapratyayavanmṛgatṛṣṇāmbubuddhivat| kimanutthita evāyamasadevāhamutthitaḥ || 21 ||

Just as the illusion of two moons or the mirage of water is false, so too is the notion of 'I' that arises from ignorance.

जैसे दो चंद्रमा का भ्रम या मृगतृष्णा की जल की धारणा झूठी है, वैसे ही अज्ञान से उत्पन्न मेरा 'मैं' का भाव भी झूठा है।

7.25.22

ममेदमिति बन्धाय नाहमित्येव मुक्तये । एतावन्मात्रके वस्तुन्यात्मायत्ते किमज्ञता ॥ २२ ॥

mamedamiti bandhāya nāhamityeva muktaye| etāvanmātrake vastunyātmāyatte kimajñatā || 22 ||

The notion of 'mine' leads to bondage, while the realization of 'not I' leads to liberation. In this limited scope of reality, what is the ignorance that depends on the self?

'मेरा' की धारणा बंधन का कारण है, जबकि 'मैं नहीं' की समझ मुक्ति का कारण है। इस सीमित वास्तविकता के दायरे में, आत्मा पर निर्भर अज्ञान क्या है?

7.25.23

यः कुण्डबदरन्यायो या घटाकाशयोः स्थितिः। स संबन्धोऽपि नैवान्यमैक्यं ह्यन्योन्यवेदनम्॥ २३॥

yaḥ kuṇḍabadaranyāyo yā ghaṭākāśayoḥ sthitiḥ| sa saṃbandho'pi naivānyamaikeyaṃ hyanyonyavedanam || 23 ||

The relationship between a pot and the space within it is like that of a fruit and its peel. This relationship is not different from the unity of mutual awareness.

घड़े और उसके अंदर के अंतरिक्ष का संबंध फल और उसके छिलके के संबंध की तरह है। यह संबंध परस्पर चेतना की एकता से अलग नहीं है।

7.25.24

अन्योन्यावेदनं त्वैक्यं भागशो गतमप्यलम्। अजडं वा जडं वापि नैकं रूपं विमुञ्चति॥ २४॥

anyonyāvedanaṃ tvaikyaṃ bhāgaśo gatamapyalam| ajaḍaṃ vā jaḍaṃ vāpi naikaṃ rūpaṃ vimuñcati || 24 ||

Mutual awareness is unity, even when divided into parts. Whether it is inert or conscious, it does not abandon its form.

परस्पर चेतना एकता है, भले ही वह भागों में बंटी हो। चाहे वह जड़ हो या चेतन, वह अपने रूप को नहीं छोड़ता।

7.25.25

नाजडं जडतामेति स्वभावा ह्यनपायिनः। यच्चाजडं जडं दृष्टं द्वैति तत्रास्ति नैकता॥ २५॥

nājaḍaṃ jaḍatāmeti svabhāvā hyanapāyinaḥ| yaccājaḍaṃ jaḍaṃ dṛṣṭaṃ dvaiti tatrāsti naikatā || 25 ||

The inert does not become conscious, for their nature is unchanging. That which is seen as both inert and conscious is dualistic and lacks unity.

जड़ चेतन नहीं बनता, क्योंकि उनका स्वभाव अपरिवर्तनीय है। जो जड़ और चेतन दोनों दिखाई देता है, वह द्वैतवादी है और उसमें एकता नहीं है।

7.25.26

वासनावेशवलिताः कुविकारशतात्मभिः व्रजन्त्यधोधो धावन्तं शिलाः शैलच्युता इव॥ २६॥

vāsanāveśavalitāḥ kuvikāraśatātmabhiḥ vrajantyadhodho dhāvantaṃ śilāḥ śailacyutā iva || 26 ||

Those who are driven by their desires and engage in various wrong actions fall down like stones falling from a mountain.

जो अपनी वासनाओं के वशीभूत होकर अनेक गलत कार्य करते हैं, वे पहाड़ से गिरने वाले पत्थरों की तरह नीचे गिरते हैं।

7.25.27

व्यूढानां वासनावातैर्नृतृणानामितस्ततः तान्यापतन्ति दुःखानि तत्र वक्तुं न पार्यते॥ २७॥

vyūḍhānāṃ vāsanāvātairnṛtṛṇānāmitastataḥ tānyāpatanti duḥkhāni tatra vaktuṃ na pāryate || 27 ||

Those who are entangled in their desires are blown away by the winds of their passions, and they experience various sufferings that cannot be fully described.

जो अपनी वासनाओं में उलझे हुए हैं, वे अपनी इच्छाओं के हवाओं से उड़ा दिए जाते हैं, और वे ऐसे दुःखों का अनुभव करते हैं जिन्हें पूरी तरह से वर्णित नहीं किया जा सकता।

7.25.28

भ्रान्त्वा भृशं करतलाहतकन्दुकाभं लोकाः पतन्ति निरयेषु रसेन रक्ताः क्लेशेन तत्र परिजर्जरतां प्रयाताः कालान्तरेण पुनरन्यनिभा भवन्ति ॥ २८ ॥

bhrāntvā bhṛśaṃ karatalāhatakandukābhaṃ lokāḥ patanti nirayeṣu rasena raktāḥ kleśena tatra parijarjaratāṃ prayātāḥ kālāntareṇa punaranyanibhā bhavanti || 28 ||

People, deluded and deeply attached to worldly pleasures, fall into various hells. They are consumed by their desires and suffer greatly, eventually becoming weak and worn out. Over time, they take on new forms.

लोग, जो भ्रमित हैं और संसार के सुखों में गहराई से आसक्त हैं, वे विभिन्न नरकों में गिरते हैं। वे अपनी इच्छाओं से ग्रस्त होते हैं और बहुत दुःख भोगते हैं, अंततः कमजोर और थके हुए हो जाते हैं। समय के साथ, वे नए रूपों में आते हैं।

Chapter 26

7.26.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संसारमार्गगहने पतितस्यापतन्ति हि । वृत्तवृत्तान्तलक्षाणि कीटा इव घनागमे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃsāramārgagahane patitasyāpatanti hi | vṛttavṛttāntalakṣāṇi kīṭā iva ghanāgame || 1 ||

Sri Vasistha said: In the dense forest of the worldly path, the cycles of experiences fall upon the fallen one like insects in a dense cloud.

श्री वसिष्ठ ने कहा: संसार के मार्ग के घने जंगल में गिरे हुए व्यक्ति पर अनुभवों के चक्र घने बादल में कीड़ों की तरह गिरते हैं।

7.26.2

सर्व एव त्विमे भावाः परस्परमसङ्गिनः । अटव्यामुपलानीव भावनैतेषु शृङ्खला ॥ २ ॥

sarva eva tvime bhāvāḥ parasparamasaṅginaḥ | aṭavyāmupalānīva bhāvanaitēṣu śṛṅkhalā || 2 ||

All these states are mutually disconnected, like stones in a forest, yet there is a chain of thoughts in them.

ये सभी अवस्थाएँ परस्पर असंगत हैं, जैसे जंगल में पत्थर, फिर भी इनमें एक विचार शृंखला है।

7.26.3

चित्तमान्ध्याय वृत्तान्तद्रुमैर्गहनवत्स्थितम् । रसरञ्जनया लोके वसन्त इव काननम् ॥ ३ ॥

cittamāndhyāya vṛttāntadrumairgahanavatsthitam | rasarañjanayā loke vasanta iva kānanam || 3 ||

The mind, blinded by the dense forest of experiences, is like a forest in spring, delighting the world with its charm.

अनुभवों के घने जंगल से अंधा हुआ मन, वसंत ऋतु में जंगल की तरह, अपनी मोहकता से दुनिया को आनंदित करता है।

7.26.4

अहो बत विचित्राणि वासनावशतोऽवशैः । भूतकैरनुभूयन्ते सुखदुःखानि जन्मसु ॥ ४ ॥

aho bata vicitrāṇi vāsanāvaśato'vaśaiḥ | bhūtakairanubhūyante sukhaduḥkhāni janmasu || 4 ||

Alas, how strange it is that due to the influence of past impressions, one experiences pleasure and pain in various births.

अहो, कितना विचित्र है कि भूतकाल के संस्कारों के प्रभाव से, एक व्यक्ति विभिन्न जन्मों में सुख-दुःख का अनुभव करता है।

7.26.5

अहो बतातिविषमा वासना यद्वशाज्जनैः । अविद्यमानैरेवायं भ्रमोऽन्तरनुभूयते ॥ ५ ॥

aho batātiviṣamā vāsanā yadvāśājjanaiḥ | avidyamānairēvāyaṃ bhramō'ntaranubhūyatē || 5 ||

Alas, how very strange is the influence of past impressions, by which people experience an illusion within, even though it does not exist.

अहो, कितना विचित्र है भूतकाल के संस्कारों का प्रभाव, जिससे लोग भीतर एक भ्रम का अनुभव करते हैं, भले ही वह अस्तित्व में न हो।

7.26.6

आह्लादिनो मृतवतः शुद्धस्यालोककारिणः । शीतलस्याखिलार्थेषु ज्ञस्येन्दोश्च किमन्तरम् ॥ ६ ॥

āhlādino mṛtavataḥ śuddhasyālokakāriṇaḥ | śītalasyākhilārtheṣu jñasyendōśca kimantaram || 6 ||

What is the difference between the joyful, the lifeless, the pure light-giver, the cool one in all matters, and the knower of the moon?

आनंदित, मृतवत, शुद्ध प्रकाश देने वाले, सभी विषयों में शीतल, और चंद्रमा के ज्ञाता में क्या अंतर है?

7.26.7

पूर्वापरमनालोच्य यत्किंचिदभिवाञ्छतः । निर्मर्यादस्य मूढस्य बालस्य च किमन्तरम् ॥ ७ ॥

pūrvāparamanālocya yatkiñcidabhivāñchataḥ | nirmaryādasya mūḍhasya bālasya ca kimantaram || 7 ||

What is the difference between one who desires anything without considering past and future, one who is without limits, one who is foolish, and a child?

जो भूतकाल और भविष्य को न सोचकर कुछ भी चाहता है, जो बेहद है, जो मूर्ख है, और एक बच्चे में क्या अंतर है?

7.26.8

लब्धमाप्राणपर्यन्तंभमनुज्झतोः । आमिषं को वि वद माकरमूढयोः ॥ ८ ॥

labdhamāprāṇaparyantaṃbhamanujjhatōḥ | āmiṣaṃ ko vi vada mākaramūḍhayōḥ || 8 ||

Who can distinguish between the one who gives up everything gained up to the last breath and the foolish crocodile?

जो अपने अंतिम श्वास तक प्राप्त सब कुछ छोड़ देता है और मूर्ख मगरमच्छ में कौन भेद कर सकता है?

7.26.9

सर्व एव त्विमे भावा देहदारधनादयः । क्षिप्रमाशुष्कसिकताशरावविशरारवः ॥ ९ ॥

sarva eva tvime bhāvā dehadāradhanādayaḥ | kṣipramāśuṣkasikatāśarāvaviśarāravaḥ || 9 ||

All these states, such as body, wife, wealth, etc., are like dry grass and potsherds, quickly perishing.

ये सभी अवस्थाएँ, जैसे शरीर, पत्नी, धन आदि, सूखी घास और टूटे बर्तनों की तरह शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं।

7.26.10

आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तमपि योनिशतेषु ते । आकल्पं भ्रमतश्चित्तशान्तिर्नास्ति शमादृते ॥ १० ॥

ābrahmasatambaparyantamapi yoniśateṣu te | ākalpaṃ bhramataścittaśāntirnāsti śamādṛte || 10 ||

Even from Brahma to a blade of grass, in all these births, there is no peace of mind without tranquility.

ब्रह्मा से लेकर एक तिनके तक, इन सभी जन्मों में, शांति के बिना मन की शांति नहीं है।

7.26.11

पर्यालोचनमात्रेण बन्धगन्धो न बाधते । गच्छतो मार्गवैषम्यमिवालोकनकारिणः ॥ ११ ॥

paryālocanamātreṇa bandhagandho na bādhate | gacchato mārgavaiṣamyamivālokanakāriṇaḥ || 11 ||

By mere reflection, the smell of bondage does not trouble, just as the unevenness of the road does not trouble the one who looks at it.

केवल विचार से बंधन की गंध परेशान नहीं करती, जैसे रास्ते की असमानता उसे परेशान नहीं करती जो उसे देख रहा हो।

7.26.12

तव नावहितं चित्तं कामः कवलयिष्यति । सावधानस्य बुद्धस्य पिशाचः किं करिष्यति ॥ १२ ॥

tava nāvahitaṃ cittaṃ kāmaḥ kavalayiṣyati | sāvadhānasya buddhasya piśācaḥ kiṃ kariṣyati || 12 ||

If your mind is not attentive, desire will devour it. What can a demon do to one who is vigilant and wise?

अगर आपका मन ध्यान में नहीं है, तो इच्छा उसे निगल जाएगी। एक सतर्क और बुद्धिमान व्यक्ति पर भूत क्या कर सकता है?

7.26.13

यथेक्षणप्रसरणं रूपालोकनमात्रकम् । संवित्प्रसृतिमात्रात्म तथा साहंजगत्स्थितम् ॥ १३ ॥

yathekṣaṇaprasaraṇaṃ rūpālokanamātrakam | saṃvitprasṛtimātrātma tathā sāhaṃjagatsthitam || 13 ||

Just as the mere seeing of forms is the spreading out of the eye, so too the mere awareness is the spreading out of the self in the world.

जैसे रूपों को देखना मात्र आँख का फैलाव है, उसी तरह चेतना मात्र स्वयं का जगत में फैलाव है।

7.26.14

यथाक्षिसंवृतिः सर्वरूपालोकशमोऽरिहन् । संवित्संवरणं नाम सर्वदृश्यशमस्तथा ॥ १४ ॥

yathākṣisaṃvṛtiḥ sarvarūpālokaśamo'rihan | saṃvitsaṃvaraṇaṃ nāma sarvadṛśyaśamas tathā || 14 ||

Just as the closing of the eyes is the pacification of all seen forms, so too the withdrawal of awareness is the pacification of all that is seen.

जैसे आँखों को बंद करना सभी देखे गए रूपों का शांत होना है, उसी तरह चेतना का वापस लेना सभी देखे गए चीजों का शांत होना है।

7.26.15

असदेव जगत्साहं शुद्धा संवित्तनोति खे । ईषत्प्रसरणेनाशु स्पन्दनं पवनो यथा ॥ १५ ॥

asadeva jagatsāhaṃ śuddhā saṃvittanoti khe | īṣatprasaraṇenāśu spandanaṃ pavano yathā || 15 ||

I am the pure awareness that pervades the non-existent world, just as the wind quickly spreads with a slight movement in the sky.

मैं वह शुद्ध चेतना हूँ जो असत्य जगत में फैली हुई है, जैसे हवा आकाश में थोड़े से हिलने से तुरंत फैल जाती है।

7.26.16

सदिवासत्यमेवेदमकुर्वत्यन्यमेधते । मृदा हेम्नेव कुम्भत्वमपृथग्लभ्यमात्मगम् ॥ १६ ॥

sadivāsatyamevedamakurvatyanyamedhate | mṛdā hemneva kumbhatvamapṛthaglabhyamātmagaṃ || 16 ||

Always, only the truth exists; the unreal does not exist. Just as a pot made of clay is not different from the clay, the self is not different from the truth.

हमेशा, केवल सत्य ही है; असत्य नहीं है। जैसे मिट्टी से बना घड़ा मिट्टी से अलग नहीं होता, वैसे ही आत्मा सत्य से अलग नहीं होता।

7.26.17

शून्यमात्रं यथा व्योम स्पन्दमात्रं यथानिलः । जलमात्रं यथोर्म्यादि संविन्मात्रं तथा जगत् ॥ १७ ॥

śūnyamātraṃ yathā vyoma spandamātraṃ yathānilāḥ | jalamātraṃ yathormyādi saṃvinmātraṃ tathā jagat || 17 ||

Just as the sky is mere emptiness, the wind is mere motion, and waves are mere water, the world is mere consciousness.

जैसे आकाश केवल शून्यता है, हवा केवल गति है, और लहरें केवल पानी हैं, वैसे ही संसार केवल चेतना है।

7.26.18

अव्यवच्छिन्ननिर्भागसंविन्मात्रं जगत्त्रयम्। विद्धि शान्तं तथा व्योम यथा वारिणि पर्वतम्॥ १८॥

avyavacchinnanirbhāgasanvinmātraṃ jagattrayam | viddhi śāntaṃ tathā vyoma yathā vāriṇi parvatam || 18 ||

Know the three worlds to be mere undivided, partless consciousness, just as the sky is calm and a mountain is in the water.

तीनों लोकों को अविभाजित, अखंड चेतना के रूप में जानो, जैसे आकाश शांत है और पर्वत पानी में है।

7.26.19

निर्वाणस्योपशान्तस्य ज्ञस्य सोदेति शीतता। अन्तर्यत्रेन्दवोऽप्येते दीप्तज्वलनबिन्दवः॥ १९॥

nirvāṇasyopaśāntasya jñasya sodeti śītatā | antyarytrendavo'pyete dīptajvalanabindavaḥ || 19 ||

In the calmness of nirvana, the coolness of knowledge arises. Even the inner stars, like sparks of fire, appear.

निर्वाण की शांति में, ज्ञान की ठंडक उभरती है। अंतरिक्ष में तारे, अग्नि की चिंगारियों की तरह, प्रकट होते हैं।

7.26.20

किं केन कथमेकान्तशान्ततशिवात्मनि। निरालोकोऽपरालोकः शून्ये जगति जन्यते॥ २०॥

kiṃ kena kathamekāntaśāntātatasiśivātmani | nirāloko'parālokaḥ śūnye jagati janyate || 20 ||

What, by whom, how, in the supreme peaceful self, which is pure and auspicious, is the world born in emptiness, without light and without another world?

क्या, किससे, कैसे, परम शांत आत्मा में, जो शुद्ध और मंगलमय है, शून्यता में दूसरे लोक के बिना, बिना प्रकाश, संसार का जन्म होता है?

7.26.21

या सत्ता ब्रह्मशब्दाख्या रूपं सर्वस्य तन्निजम्। न यत्र काचिद्बाधास्ति सर्वं तन्मयमव्ययम्॥ २१॥

yā sattā brahmaśabdākhyā rūpaṃ sarvasya tannijam | na yatra kācidvādhāsti sarvaṃ tanmayamavyayam || 21 ||

That reality, known by the word Brahman, is the true form of everything. There is no obstruction there; everything is imperishable and pervaded by That.

वह सत्ता, जिसे ब्रह्म शब्द से जाना जाता है, सबकी असली रूप है। वहाँ कोई बाधा नहीं है; सब कुछ अविनाशी और उससे व्याप्त है।

7.26.22

यदिदं तु पदार्थत्वं यत्र बाधानुभूयते। यद्यच्च बाधनं प्रेक्ष्य तन्न विद्मः खपुष्पवत्॥ २२॥

yadidaṃ tu padārthatvaṃ yatra bādhānubhūyate | yadyacca bādhanaṃ prekṣya tanna vidmaḥ khapuṣpavat || 22 ||

Whatever is perceived as an object is subject to obstruction. Whatever is seen as an obstruction, we do not know it, like a flower in the sky.

जो भी पदार्थ के रूप में देखा जाता है, वह बाधा का शिकार होता है। जो भी बाधा के रूप में देखा जाता है, हम उसे नहीं जानते, जैसे आकाश में फूल।

7.26.23

ज्ञ एवापगतस्वान्तं शान्तमास्व महाश्मवत्। असौ न मननं मानमनन्तमजमव्ययम्॥ २३॥

jña evāpagatasvāntaṃ śāntamāsva mahāśmavat | asau na mananaṃ mānamanantamajamavyayam || 23 ||

The knower, having abandoned the sense of self, should remain calm like a great stone. It is not to be thought of, honored, infinite, unborn, and imperishable.

ज्ञाता, स्वयं की पहचान को त्यागकर, एक बड़े पत्थर की तरह शांत रहे। इसे सोचा नहीं जाना चाहिए, सम्मानित नहीं किया जाना चाहिए, यह अनंत, अजन्मा और अविनाशी है।

7.26.24

आकाशकल्पे स्वे भावे तिष्ठतोऽङ्गानिवेदनम्। भवत्यभ्यासदार्ढ्येन विना स्वप्नविकारवत्॥ २४॥

ākāśakalpe sve bhāve tiṣṭhato'ṅgānivedanam | bhavatyabhyāsadārḍhyena vinā svapnavikāravat || 24 ||

In one's own nature, which is like space, the awareness of the limbs arises through the strength of practice, without the modifications of dream.

अपनी प्रकृति में, जो आकाश की तरह है, अंगों की चेतना अभ्यास की दृढ़ता से उत्पन्न होती है, स्वप्न के विकारों के बिना।

7.26.25

निरुपादानसंभारमभित्तावेव चेतति। ब्राह्मं कर्तृ जगच्चित्रं न कश्चिद्वा न किंचन॥ २५॥

nirupādānasambhāramabhittāveva cetati | brāhmaṃ kartṛ jagaccitraṃ na kaścidvā na kiṃcana || 25 ||

The mind, devoid of material support, thinks only in the substratum. The Brahman is the doer, the world is a mere appearance, nothing else exists.

मन, भौतिक समर्थन से रहित, केवल आधार में सोचता है। ब्रह्म ही कर्ता है, संसार एक भ्रामक प्रतीति है, और कुछ नहीं है।

7.26.26

तनोति यत्तदास्मैव तस्य तत्र तथा स्थितम्। दृश्याभावादसद्दृश्यं तेन कः क्व करोति किम्॥ २६॥

tanoti yattadāsmaiva tasya tatra tathā sthitam | dṛśyābhāvādasaddṛśyaṃ tena kaḥ kva karoti kim || 26 ||

That which is extended, that is situated in it in that manner | Due to the absence of the seen, the unreal is seen, then who does what where?

जो विस्तारित होता है, वह उसमें उसी प्रकार स्थित है | दृश्य के अभाव से असत् दृश्य है, तब कौन कहाँ क्या करता है?

7.26.27

अहं सुखीति सुखिता अहं दुःखीति दुःखिता। सर्व एव स्वरूपस्था व्योमात्मानोऽपि पार्थिवाः॥ २७॥

ahaṃ sukhīti sukhitā ahaṃ duḥkhīti duḥkhitā | sarva eva svarūpasthā vyomātmāno'pi pārthivāḥ || 27 ||

I am happy, thus happiness; I am unhappy, thus unhappiness | All are established in their own nature, even those who are earthly are like the sky.

मैं सुखी हूँ, इसलिए सुख; मैं दुःखी हूँ, इसलिए दुःख | सभी अपने स्वरूप में स्थित हैं, भले ही वे पार्थिव (भूमि से संबंधित) हों, फिर भी वे आकाश के समान हैं।

7.26.28

सर्वेषामेव भावानां चिदाकाशात्मनामपि। मिथ्यैव स्वप्नशैलानामिव पार्थिवता स्थिता॥ २८॥

sarveṣāmeva bhāvānāṃ cidākāśātmanāmapi | mithyāiva svapnaśailānāmiva pārthivatā sthitā || 28 ||

All these states, even those of the nature of consciousness-space, are falsely situated like the earthliness of dream mountains.

सभी भाव, भले ही वे चेतना-आकाश के स्वभाव के हों, स्वप्न के पर्वतों की पार्थिवता की तरह मिथ्या स्थित हैं।

7.26.29

अहंत्वोल्लेखतः सत्ता भ्रमभावविकारिणी । तदभावात्स्वभावैकनिष्ठता शमशालिनी ॥ २९ ॥

ahaṃtvollēkhataḥ sattā bhramabhāvavikāriṇī | tadabhāvātsvabhāvaikanisthtā śamaśālinī || 29 ||

The existence arising from the notion of 'I' is a modification due to delusion | From its absence, there is a peaceful abidance in one's own nature.

अहं की अवधारणा से उत्पन्न अस्तित्व भ्रम का परिवर्तन है | उसके अभाव से, अपने स्वभाव में शांतिपूर्वक निवास होता है।

7.26.30

हेम्नः कटकशब्दार्थो व्यतिरिक्तो यथास्ति ते । व्यतिरिक्ता तथा सत्या नाहंतास्ति शमात्मनः ॥ ३० ॥

hemnaḥ kaṭakaśabdārtho vyatirikto yathāsti te | vyatiriktā tathā satyā nāhaṃtāsti śamātmanaḥ || 30 ||

Just as the meaning of the word 'bracelet' is distinct from gold, similarly, the peaceful self is distinct from the notion of 'I'.

जैसे शब्द 'कड़ा' का अर्थ सोने से अलग है, उसी प्रकार, शांतिपूर्ण आत्मा अहं की अवधारणा से अलग है।

7.26.31

निर्वाणो निर्मना मौनी कर्ताऽकर्ता च शीतलः । ज्ञ एव शान्त एवास्ते शून्य एवाभिपूरितः ॥ ३१ ॥

nirvāṇo nirmanā maunī kartā'kartā ca śītalaḥ | jña eva śānta evāste śūnya evābhipūritaḥ || 31 ||

The enlightened one is free from desires, silent, both the doer and non-doer, and cool. The knower remains calm and is filled with emptiness.

निर्वाण प्राप्त व्यक्ति इच्छाओं से मुक्त, मौन, कर्ता और अकर्ता दोनों, और शीतल होता है। ज्ञानी शान्त रहता है और शून्यता से भरा हुआ है।

7.26.32

निर्वासनास्पन्दपरो यन्त्रपुत्रकगात्रवत् । स यथास्थितमेवास्ते ज्ञः संव्यवहरन्नपि ॥ ३२ ॥

nirvāsanāspandaparo yantraputrakagātravat | sa yathāsthitamevāste jñaḥ saṃvyavaharannapi || 32 ||

The enlightened one, free from the fluctuations of desires, remains like a mechanical doll. Even while engaging in worldly activities, he remains in his natural state.

निर्वाण प्राप्त व्यक्ति, इच्छाओं के उतार-चढ़ाव से मुक्त, एक यांत्रिक पुतले की तरह रहता है। संसारिक गतिविधियों में भाग लेते हुए भी, वह अपनी प्राकृतिक अवस्था में रहता है।

7.26.33

यथा मञ्चकसंस्थस्य स्पन्दन्ते नैव वा शिशोः । अङ्गानि स्वानुसंधानं विनैवंविदितात्मनः ॥ ३३ ॥

yathā mañcakasaṃsthasya spandante naiva vā śiśoḥ | aṅgāni svānusandhānaṃ vinaivamviditātmanaḥ || 33 ||

Just as the limbs of a baby placed on a cot do not move without its own effort, similarly, one who does not know the self does not have self-awareness.

जैसे पलंग पर रखे शिशु के अंग अपने प्रयास के बिना नहीं हिलते, वैसे ही, जो आत्मा को नहीं जानता, उसके पास स्वयं की चेतना नहीं होती।

7.26.34

निःसंबोधैकबोधस्य निराशेहैषणाशिषः । शान्तानन्तात्मरूपत्वादनुसंधानता कुतः ॥ ३४ ॥

niḥsaṃbodhaikabodhasya nirāśeheṣaṇāśiṣaḥ | śāntānantātmarūpatvādanusandhānatā kutaḥ || 34 ||

For one who is solely aware of the non-existence of desires and hopes, how can there be self-awareness, given the peaceful and infinite nature of the self?

जो केवल इच्छाओं और आशाओं की अनुपस्थिति को जानता है, ऐसे व्यक्ति के लिए शान्त और अनंत आत्मा की प्रकृति के साथ, स्वयं की चेतना कैसे हो सकती है?

7.26.35

अद्रष्टुरपदृश्यस्यादृग्रूपस्यापरूपिणः । कुतः किलानुसंधानमनपेक्षस्य पश्यतः ॥ ३५ ॥

adṛṣṭurapadṛśyasyādṛgrūpasyāparūpiṇaḥ | kutaḥ kilānusandhānamanapekṣasya paśyataḥ || 35 ||

How can there be self-awareness for one who is the unseen seer, formless, and without any form, who is detached and sees without attachment?

जो अदृश्य दर्शक, निराकार, और किसी भी रूप के बिना है, जो अनासक्त है और अनासक्ति से देखता है, ऐसे व्यक्ति के लिए स्वयं की चेतना कैसे हो सकती है?

7.26.36

अपेक्षैव घनो बन्ध उपेक्षैव विमुक्तता । सर्वशब्दान्विता तस्यां विश्रान्तेन किमीक्ष्यते ॥ ३६ ॥

apekṣaiva ghano bandha upaekṣaiva vimuktatā | sarvaśabdānvitā tasyāṁ viśrāntena kimīkṣyate || 36 ||

Attachment is the cause of bondage, and detachment is the cause of liberation. When one is established in the state of complete detachment, what else is there to be seen?

आसक्ति ही बंधन का कारण है, और वैराग्य ही मुक्ति का कारण है। जब कोई पूर्ण वैराग्य की स्थिति में स्थित होता है, तो फिर और क्या देखना है?

7.26.37

पार्थिवत्वे शरीरेऽस्मिन्स्वस्वप्नाङ्ग इवासति । भ्रममात्रात्मनि कुतः क्व कस्य किमपेक्षणम् ॥ ३७ ॥

pārthivatve śarīre'sminsvasvapnāṅga ivāsati | bhramamātrātmani kutaḥ kva kasya kimapekṣaṇam || 37 ||

In this earthly body, one dwells as if in a dream. In the self, which is mere illusion, where and for whom is there any expectation?

इस पार्थिव शरीर में, मानो स्वप्न के अंग की तरह रहता है। भ्रम मात्र आत्मा में, कहाँ और किसके लिए किसी प्रत्याशा है?

7.26.38

उपशान्तसमस्तेहं विगताखिलकौतुकम् । निरस्तवेदनं ज्ञेन विदा केवलमास्यते ॥ ३८ ॥

upaśāntasamastehaṃ vigatākhilakautukam | nirastavedanaṃ jñena vidā kevalamāsyate || 38 ||

With all desires pacified, devoid of all curiosities, free from all sufferings, the wise one attains the state of pure knowledge.

सभी इच्छाओं को शांत करके, सभी कौतुकों से रहित, सभी दुःखों से मुक्त, ज्ञानी शुद्ध ज्ञान की स्थिति प्राप्त करता है।

7.26.39

मङ्किनेति श्रुतवता ततो मोहो महानपि । अशेषेण परित्यक्तस्तत्रैव त्वगिवाहिना ॥ ३९ ॥

maṅkineti śrutavatā tato moho mahānapi | aśeṣeṇa parityaktastatraiva tvagivāhinā || 39 ||

Hearing the word 'mine', great delusion arises. That delusion, when completely abandoned, is like a snake shedding its skin.

'मेरा' शब्द सुनकर महान भ्रम उत्पन्न होता है। जब वह भ्रम पूर्णतः त्याग दिया जाता है, तो वह साँप के केंचुल छोड़ने की तरह होता है।

7.26.40

प्रवाहापतितं कार्यं कुर्वतापास्तवासनम् । तेन वर्षशतस्यान्ते स्थितमद्रौ समाधिना ॥ ४० ॥

pravāhāpatitaṃ kāryaṃ kurvatāpāstavāsanam | tena varṣaśatasyānte sthitamadrau samādhinā || 40 ||

Performing actions that arise spontaneously, one abandons desires. By that, at the end of a hundred years, one remains steadfast in meditation.

जो स्वतः उत्पन्न होने वाले कार्य करता है, वह इच्छाओं को त्याग देता है। इससे, सौ वर्षों के अंत में, वह ध्यान में स्थिर रहता है।

7.26.41

तत्राद्ययावत्पाषाणसमधर्मा स तिष्ठति । संशान्तकरणो योगी बोध्यमानः प्रबुध्यते ॥ ४१ ॥

tatrādyayāvatpāṣāṇasamadharmā sa tiṣṭhati | saṃśāntakaraṇo yogī bodhyamānaḥ prabudhyate || 41 ||

There, in the beginning, he remains like a stone | The yogi with a tranquil mind is awakened while being awakened

वहाँ, शुरुआत में, वह पत्थर के समान रहता है | शांत मन वाला योगी जागृत होते हुए जागृत होता है

7.26.42

एतेन राघव विवेकपदेन शान्तिमासादयोदयवता मनसा विहर्तुम् । मा दीनतां व्रजतु रागमयी मतिस्ते क्षीणा क्षणादसलिलेव शरद्धनाली ॥ ४२ ॥

etena rāghava vivekapadena śāntimāsādayodayavatā manasā vihartum | mā dīnatāṃ vrajatu rāgamayī matiste kṣīṇā kṣaṇādasalileva śaraddhanālī || 42 ||

With this discriminative knowledge, O Raghava, attain peace and roam with a mind full of joy | Do not let your mind, filled with attachment, become miserable, like a lotus in autumn without water

इस विवेकपूर्ण ज्ञान से, हे रघुवंशी, शांति प्राप्त कर और आनंद से भरे मन से विहार करो | अपने मन को, जो आसक्ति से भरा है, दीन न होने दो, जैसे पानी के बिना शरद ऋतु में कमल

Chapter 27

7.27.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । निर्वाणो भव शान्तात्मा यथाप्राप्तानुवृत्तिमान् । सन्नेवासत्समः सौम्य स्फटिकादिव निर्मितः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nirvāṇo bhava śāntātmā yathāprāptānuvṛttimān | sann evāsatsamaḥ saumya sphaṭikādiva nirmitaḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: Be liberated, be peaceful, and act according to what comes naturally to you. Be indifferent to existence and non-existence, O gentle one, like a crystal.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मुक्त हों, शांत हों और जैसे भी आपको प्राप्त हो उसके अनुसार काम करें। अस्तित्व और अनस्तित्व के प्रति उदासीन रहें, हे सौम्य, जैसे कि एक स्फटिक के समान।

7.27.2

एकस्मिन्नेव सर्वस्मिन्संस्थिते विततात्मनि । नैकस्मिन्न च सर्वस्मिन्नानाताकलना कुतः ॥ २ ॥

ekasmineva sarvasmin saṃsthite vitatātmani | naikasminn a ca sarvasminnānātākalanā kutaḥ || 2 ||

When everything is situated in the one pervading Self, how can there be diversity in the one or in everything?

जब सब कुछ एक व्यापक आत्मा में स्थित है, तो एक में या सब में विविधता कैसे हो सकती है?

7.27.3

आद्यन्तरहितं सर्वं व्योम चित्तत्त्वनिर्भरम् । शरीरोत्पत्तिनाशेषु का चित्तत्त्वस्य खण्डना ॥ ३ ॥

ādyantarahitaṃ sarvaṃ vyoma cittatattvanirbharam | śarīrotpattināśeṣu kā cittatvasya khaṇḍanā || 3 ||

Everything is devoid of beginning and end, filled with the essence of consciousness like space. What is the destruction of the essence of consciousness in the birth and death of the body?

सब कुछ आदि और अंत से रहित है, जैसे आकाश चेतना के तत्व से भरा हुआ है। शरीर के जन्म और मृत्यु में चेतना के तत्व का नाश क्या है?

7.27.4

स्फुरन्ति हि जडक्रीडाश्चिच्चमत्कारचापलात् । अचापलात्प्रतीयन्ते तरङ्गा इव वारिणि ॥ ४ ॥

sphuranti hi jaḍakrīḍāściccamatkāracāpalāt | acāpalātpratīyante taraṅgā iva vāriṇi || 4 ||

The play of the inert indeed appears due to the restlessness of the wonder of consciousness. Due to the lack of restlessness, they appear like waves in water.

चेतना के आश्चर्य की चंचलता से जड़ का खेल प्रकट होता है। चंचलता के अभाव में, वे जल में तरंगों की तरह दिखाई देते हैं।

7.27.5

यथा शुभ्राम्बुदे वस्त्रशङ्का न फलभागिनी । देहोऽयमहमित्येषा तथा शङ्का न वास्तवी ॥ ५ ॥

yathā śubhrāmbude vastrasaṅkā na phalabhāginī | deho'yamahamityeṣā tathā śaṅkā na vāstavī || 5 ||

Just as the suspicion of a cloth in a white cloud does not yield any result, similarly, the suspicion 'I am this body' is not real.

जैसे एक सफेद बादल में कपड़े की शंका कोई परिणाम नहीं देती, उसी प्रकार 'मैं यह शरीर हूँ' की शंका वास्तविक नहीं है।

7.27.6

माऽवस्तुनि निमग्नस्त्वं भव भूरिभवप्रदे। वस्त्वनन्तसुखायाद्यं भव्यं भावय भूतये ॥ ६ ॥

māvasthuni nimagnastvaṃ bhava bhūribhavaprade | vastvanantasukhāyādyaṃ bhavyaṃ bhāvaya bhūtaye || 6 ||

May you be immersed in the ultimate reality, the giver of abundant prosperity. Contemplate the auspicious and blissful essence of reality for the welfare of all beings.

हे अनंत सुख देने वाले, आप स्वयं को परम तत्त्व में डुबा लें और सभी प्राणियों के कल्याण के लिए उस शुभ और आनंदमय तत्त्व का चिंतन करें।

7.27.7

चिद्व्योमानन्तमेवास्मिन्नेयत्तास्ति समात्मनः। इत्येव परमं वस्तु वस्तु तत्परमस्तु ते ॥ ७ ॥

cidvyomānantamevāsminneyattāsti samātmanaḥ | ityeva paramaṃ vastu vastu tatparamastu te || 7 ||

In this infinite consciousness, the essence of the self exists. Thus, the supreme reality is indeed the ultimate truth for you.

इस अनंत चेतना में, आत्मा की सत्ता है। इस प्रकार, परम तत्त्व वास्तव में आपके लिए परम सत्य है।

7.27.8

एवं निश्चयवान्नाम त्वमेवासि निरञ्जनः। ध्याता ध्येयं तथा ध्यानं सत्यं चापि न किंचन ॥ ८ ॥

evaṃ niścayavānnāma tvamevāsi nirañjanaḥ | dhyātā dhyeyaṃ tathā dhyānaṃ satyaṃ cāpi na kiṃcana || 8 ||

Thus, you are indeed the one with firm resolve, pure and untainted. You are the meditator, the object of meditation, the act of meditation, and the truth, yet nothing specific.

इस प्रकार, आप वास्तव में दृढ़ संकल्प वाले, शुद्ध और निर्मल हैं। आप ध्यान करने वाले, ध्यान का विषय, ध्यान की क्रिया, और सत्य हैं, फिर भी कुछ विशेष नहीं।

7.27.9

द्रष्टा दृश्यं दर्शनं च चित एव विभूतयः। अतत्तत्संविदो नान्यदध्यानं ध्येयमस्ति च ॥ ९ ॥

draṣṭā dṛśyaṃ darśanaṃ ca cit eva vibhūtayaḥ | atattatsaṃvido nānyadadhyānaṃ dhyeyamasti ca || 9 ||

The seer, the seen, and the act of seeing are all manifestations of pure consciousness. There is no meditation or object of meditation other than the awareness of that reality.

द्रष्टा, दृश्य और दर्शन की क्रिया सभी शुद्ध चेतना के विभूतियाँ हैं। उस तत्त्व की चेतना के अलावा कोई ध्यान या ध्यान का विषय नहीं है।

7.27.10

उद्यति प्रतिपच्चन्द्रे वहति प्रलयानिले। आत्मतत्त्वं समं सौम्यं न क्षुभ्यति न शाम्यति ॥ १० ॥

udyati pratipaccandre vahati pralayānile | ātmatattvaṃ samaṃ saumyaṃ na kṣubhyati na śāmyati || 10 ||

It rises with the waxing moon and flows with the wind of dissolution. The essence of the self is calm and gentle, neither agitated nor pacified.

यह चाँद के बढ़ने के साथ उठता है और प्रलय की हवा के साथ बहता है। आत्मा का तत्त्व शांत और सौम्य है, न तो विचलित होता है न ही शांत होता है।

7.27.11

यथा नौयायिनः स्थाणुतरुशैलादिवेपनम्। यथा शुक्तौ रजतधीस्तथा देहादि चेतसः ॥ ११ ॥

yathā nauyāyinaḥ sthāṇutaruśailādivapanam | yathā śuktau rajatadhīstathā dehādi cetasaḥ || 11 ||

Just as a sailor sees a tree or a mountain as a moving object, and just as one sees silver in a shell, so does the mind see the body and other objects.

जैसे नाविक पेड़ या पहाड़ को चलता हुआ देखता है, और जैसे शंख में चाँदी दिखती है, वैसे ही मन शरीर और अन्य वस्तुओं को देखता है।

7.27.12

यथा देहादि चित्तस्य तथा देहस्य चित्तकम्। तथैव जीवः परमे पदे द्वैतमतः कुतः ॥ १२ ॥

yathā dehādi cittasya tathā dehasya cittakam | tathaiva jīvaḥ parame pade dvaitamataḥ kutaḥ || 12 ||

Just as the body and other objects are in the mind, so is the mind in the body. Therefore, how can there be duality in the supreme state for the individual self?

जैसे शरीर और अन्य वस्तुएँ मन में होती हैं, वैसे ही मन शरीर में होता है। तो फिर, परम अवस्था में जीव के लिए द्वैत कैसे हो सकता है?

7.27.13

सर्वमेकमिदं शान्तं ब्रह्म बृंहितवेदनात्। न किंचिज्जगदाद्यस्ति भ्रान्तिरन्या न विद्यते ॥ १३ ॥

sarvamekamidaṃ śāntaṃ brahma bṛṃhitavedanāt | na kiṃcijjagadādyasti bhrāntiranyā na vidyate || 13 ||

All this is one, peaceful Brahman, known from the expansion of knowledge. Nothing else exists in the world; there is no other delusion.

यह सब एक शांत ब्रह्म है, जिसे ज्ञान के विस्तार से जाना जाता है। दुनिया में कुछ और नहीं है; कोई दूसरा भ्रम नहीं है।

7.27.14

न विद्यते यथा व्योम्नि वनं स्नेहश्च सैकते। विद्युच्छशाङ्कबिम्बे च तथा देहादि चेतसि ॥ १४ ॥

na vidyate yathā vyomni vanaṃ snehaśca saikate | vidyucchaśāṅkabimbe ca tathā dehādi cetasi || 14 ||

Just as there is no forest in the sky, no moisture in sand, and no reflection in the moon's disc, so there is no body and other objects in the mind.

जैसे आकाश में कोई जंगल नहीं है, रेत में कोई नमी नहीं है, और चंद्रमा के डिस्क में कोई प्रतिबिंब नहीं है, वैसे ही मन में शरीर और अन्य वस्तुएँ नहीं हैं।

7.27.15

अविद्यमान एवास्मिन्मा बिभीहि जगद्भ्रमे। एतदेव परं सत्यं विद्धि सत्यविदां वर ॥ १५ ॥

avidyamāna evāsmiṃ mā bibhīhi jagadbhame | etadeva paraṃ satyaṃ viddhi satyavidāṃ vara || 15 ||

Do not fear this non-existent worldly illusion. Know this alone to be the supreme truth, O best among the knowers of truth.

इस असत्य संसारिक भ्रम से न डरो। हे सत्य ज्ञानियों में श्रेष्ठ, इसी को परम सत्य जानो।

7.27.16

जगदस्ति न सत्तेति यासीद्भ्रान्तिस्तवाद्य सा। शान्ता मदुपदेशेन किमन्यद्बन्धकारणम् ॥ १६ ॥

jagadasti na satteti yāsīdbrāntistavādya sā| śāntā madupadeśena kimanyadbandhakāraṇam || 16 ||

The delusion that the world exists or does not exist has now been dispelled by my teachings. What other cause is there for bondage?

यह भ्रान्ति कि जगत है या नहीं, अब मेरे उपदेश से शान्त हो गई है| बंधन का और क्या कारण है?

7.27.17

स्थाल्युदञ्चनकुम्भादि यथा मृन्मात्रकं तथा। चित्तमात्रं जगदिदं क्षीणं तच्च विचारणात् ॥ १७ ॥

sthālyudañcanakumbhādi yathā mṛnmātrakaṃ tathā| cittamātraṃ jagadidaṃ kṣīṇaṃ tacca vicāraṇāt || 17 ||

Just as pots, jars, and other clay objects are merely clay, so too is this world merely the mind. This is understood through inquiry.

जैसे हंडिया, घड़े और अन्य मिट्टी के बर्तन मिट्टी मात्र हैं, वैसे ही यह जगत मन मात्र है| यह विचार से समझा जाता है|

7.27.18

आपत्सु संपत्सु भवाभवेषु शान्तैषणाहर्षविषादसंवित्। सौम्यादहंभावविदा विमुक्तो यथास्थितं तिष्ठ विलीय मास्व ॥ १८ ॥

āpatsu saṃpatsu bhavābhaveṣu śāntaiṣaṇāharṣaviṣādasamvit| saumyādahaṃbhāvavidā vimukto yathāsthitaṃ tiṣṭha vilīya māsva || 18 ||

In adversity and prosperity, in existence and non-existence, remain calm, free from desire, joy, and sorrow. Knowing the self, be liberated and abide as you are, without dissolving.

विपत्ति और समृद्धि में, अस्तित्व और अनस्तित्व में, शान्त रहें, इच्छा, हर्ष और विषाद से मुक्त| आत्मज्ञान से मुक्त होकर जैसे हैं वैसे ही रहें, विलीन न हों|

7.27.19

यथास्थितं वस्त्वधिगम्य राम स्थितोऽसि चेद्वा स्वकुलाम्बरेन्दो। तद्धर्षशोकैषणदूषणादि विमुच्य वा तिष्ठ यथेच्छमास्व ॥ १९ ॥

yathāsthitaṃ vastvadhigamya rāma sthito'si cedvā svakulāmbarendo| taddharṣaśokaiṣaṇadūṣaṇādi vimucya vā tiṣṭha yathecchamāsva || 19 ||

O Rama, having realized the truth as it is, whether you remain in your royal attire or not, be free from joy, sorrow, desire, and faults. Abide as you wish.

हे राम, जैसा है वैसा सत्य जानकर, चाहे आप अपने राजसी वेश में रहें या नहीं, हर्ष, शोक, इच्छा और दोषों से मुक्त होकर जैसे चाहें वैसे रहें|

Chapter 28

7.28.1

श्रीराम उवाच । बीजाङ्कुराणां पुरुषकर्मणां जन्मकारिणाम् । दैवशब्दार्थयुक्तानां तत्त्वं वद विभो पुनः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bījāṅkurāṇāṃ puruṣakarmaṇāṃ janmakāriṇām | daivaśabdārthayuktānāṃ tattvaṃ vada vibho punaḥ || 1 ||

Shri Rama said: O Lord, please explain the essence of the seeds and sprouts of human actions, which are the causes of birth and are endowed with the meaning of fate.

श्री राम ने कहा: हे प्रभु, कृपया उन बीजों और अंकुरों का तत्त्व बताएं, जो मनुष्य के कर्मों के जन्म का कारण हैं और जिनमें भाग्य का अर्थ समाहित है।

7.28.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । दैवकर्मादिपर्यायं घटादि घटतावधि । संवित्स्पन्दनमेवेदं लोके पुरुषतां गतम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | daivakarmādiparyāyaṃ ghaṭādi ghaṭatāvadhi | saṃvitspandanamevedaṃ loke puruṣatāṃ gatam || 2 ||

Vasistha said: In the world, the sequence of fate and action, from the beginning to the end, is indeed the vibration of consciousness. This has attained the state of a person.

वसिष्ठ ने कहा: इस संसार में, भाग्य और कर्म की श्रृंखला, आरंभ से अंत तक, वास्तव में चेतना की स्पंदन है। यह मनुष्य की स्थिति को प्राप्त हुआ है।

7.28.3

संवित्स्पन्दादृते पुंस्त्वं कर्म वा कीदृशं भवेत् । घटावटपटाद्यात्म ह्येतेनैव जगत् कृतम् ॥ ३ ॥

saṃvitspandādṛte puṃstvaṃ karma vā kīdṛśaṃ bhavet | ghaṭāvaṭapaṭādyātma hyetenaiava jagat kṛtam || 3 ||

Without the vibration of consciousness, what kind of personhood or action could there be? Indeed, this world is created by this very essence, which is the nature of pots, clothes, and other objects.

चेतना की स्पंदन के बिना, किस तरह की मनुष्यता या कर्म हो सकता है? वास्तव में, इसी तत्त्व से यह संसार बना है, जो घड़े, कपड़े और अन्य वस्तुओं का स्वभाव है।

7.28.4

प्रवर्तते जगल्लक्ष्मीः संवित्स्पन्दात्सवासनात् । निवर्तते हि संसारः संवित्स्पन्वादवासनात् ॥ ४ ॥

pravartate jagallakṣmīḥ saṃvitspandātsavāsanāt | nivartate hi saṃsāraḥ saṃvitspandvādavāsanāt || 4 ||

The world arises from the vibration of consciousness with impressions. Indeed, the world ceases from the vibration of consciousness without impressions.

संसार चेतना की स्पंदन से संस्कारों के साथ उत्पन्न होता है। वास्तव में, संसार संस्कारों के बिना चेतना की स्पंदन से समाप्त होता है।

7.28.5

अवासनं हि संवित्तेः स्पन्दमस्पन्दनं विदुः। सस्पन्दोऽप्यस्फुरत्स्पन्दो येनावर्तादिनोद्यते ॥ ५ ॥

avāsanaṃ hi saṃvitteḥ spandamaspandanaṃ viduḥ saspando'pyasphuratspando yenāvartādinohyate || 5 ||

They know the cessation of consciousness as both movement and non-movement. Even the moving one is the non-shining movement by which the cycle of birth and the like is set in motion.

वे जानते हैं कि चेतना का अवसान स्पन्दन और अस्पन्दन दोनों है। जो स्पन्दनशील है, वह भी अस्फुरित स्पन्दन है जिससे जन्म आदि का चक्र गतिमान होता है।

7.28.6

मनागपि न भेदोऽस्ति संवित्स्पन्दमयात्मनोः। कल्पनांशादृते राम सृष्टौ पुरुषकर्मणोः ॥ ६ ॥

manāgapi na bhedo'sti saṃvitspandamayātmanoḥ | kalpanāṃśādṛte rāma sṛṣṭau puruṣakarmaṇoḥ || 6 ||

Even in the mind, there is no difference between the self, which is the vibration of consciousness, and the actions of the individual, O Rama, except for the part played by imagination in creation.

मन में भी, चेतना की स्पंदन वाले आत्मा और व्यक्ति के कर्मों में कोई भेद नहीं है, हे राम, कल्पना के अंश को छोड़कर सृष्टि में।

7.28.7

जलवीच्योर्यथा द्वित्वं संकल्पोत्थं न वास्तवम्। तथेह चित्परिस्पन्दरूपयोर्जन्तुकर्मणोः ॥ ७ ॥

jalavīcyoryathā dvitvaṃ saṃkalpotthaṃ na vāstavam | tatheha citparispandarūpayorjantukarmaṇoḥ || 7 ||

Just as the duality between water and waves is not real but arises from imagination, similarly, the duality between the individual and their actions, which are the forms of the vibration of consciousness, is not real.

जैसे जल और तरंगों के बीच द्वैत वास्तविक नहीं है बल्कि कल्पना से उत्पन्न होता है, वैसे ही, चेतना की स्पंदन के रूपों वाले व्यक्ति और उनके कर्मों के बीच द्वैत वास्तविक नहीं है।

7.28.8

कर्मैव पुरुषो राम पुरुषस्यैव कर्मता। एते ह्यभिन्ने विद्धि त्वं यथा तुहिनशीतते ॥ ८ ॥

karmaiva puruṣo rāma puruṣasyeva karmatā | ete hyabhinne viddhi tvaṃ yathā tuhinashītate || 8 ||

Action itself is the individual, O Rama, and the individual's nature is action. Know these two to be inseparable, just as cold and coldness.

कर्म ही व्यक्ति है, हे राम, और व्यक्ति की प्रकृति ही कर्म है। इन दोनों को अभिन्न समझो, जैसे ठंड और ठंडक।

7.28.9

हिमं यत्तद्यथा शैत्यं यच्छैत्यं तद्यथा हिमम्। यत्कर्मासौ तथा जन्तुर्यो जन्तुः कर्म तत्तथा ॥ ९ ॥

himaṃ yattadyathā śaityaṃ yacchaityaṃ tadyathā himam | yatkarma asau tathā janturyo jantuḥ karma tattathā || 9 ||

Just as cold is coldness and coldness is cold, so is the individual their action and the action is the individual.

जैसे ठंड ही ठंडक है और ठंडक ही ठंड है, वैसे ही व्यक्ति ही उसका कर्म है और कर्म ही व्यक्ति है।

7.28.10

संवित्स्पन्दरसस्यैव दैवकर्मनरादयः । पर्यायशब्दा न पुनः पृथक्कर्मादयः स्थिताः ॥ १० ॥

saṃvitspandarasasyeva daivakarmanarādayaḥ | paryāyaśabdā na punaḥ pṛthakkarmādayaḥ sthitāḥ || 10 ||

The terms like divine action, human action, etc., are merely synonyms for the vibration of consciousness. They are not separate actions.

दैवी कर्म, मानव कर्म आदि शब्द चेतना की स्पंदन के पर्यायवाची हैं। ये अलग-अलग कर्म नहीं हैं।

7.28.11

स्पन्दात्संविज्जगद्बीजमस्पन्दाद्यात्यबीजताम् । अङ्कुरश्च तदेवान्तः स्थितत्वादङ्कुरश्रियः ॥ ११ ॥

spandātsaṃvijjagadvījamaspandādyātyabījatām | aṅkuraśca tadevāntaḥ sthitatvādaṅkuraśriyaḥ || 11 ||

From the vibration arises the seed of the universe, from the non-vibration it becomes seedless. The sprout is also within it, due to its inherent nature of being a sprout.

स्पन्द से संपूर्ण ब्रह्माण्ड का बीज उत्पन्न होता है, और अस्पन्द से बीज रहित हो जाता है | अंकुर भी उसी में है, अंकुर के स्वभाव के कारण |

7.28.12

चित्त्वं च क्वचिदस्पन्दं क्वचित्स्पन्दं स्वभावतः । अनन्तमेकार्णववद्दिक्कालक्रमसंस्थितम् ॥ १२ ॥

cittvaṃ ca kvacidaspandaṃ kvacitsvabhāvataḥ | anantamekārṇavavaddikkālakramasaṃsthitam || 12 ||

Consciousness is sometimes motionless and sometimes in motion, by its nature. It is infinite, like the ocean, and exists in the sequence of space and time.

चित्त्व (चेतना) कभी अस्पन्द होता है और कभी स्पन्द होता है, अपने स्वभाव के अनुसार | यह अनन्त है, समुद्र की तरह, और स्थान और काल के क्रम में स्थित है |

7.28.13

संवित्स्पन्दो वासनावानिह बीजमकारणम् । भूत्वा कारणतामेति देहादेरङ्कुरावलेः ॥ १३ ॥

saṃvitspando vāsanāvāniha bījamakāraṇam | bhūtvā kāraṇatāmeti dehāderaṅkurāvalaḥ || 13 ||

The vibration of consciousness, which is the seed of all desires, becomes the cause, having become the sprout of the body and other things.

चेतना का स्पन्द, जो सभी वासनाओं का बीज है, शरीर और अन्य चीजों के अंकुर के रूप में कारण बन जाता है |

7.28.14

तृणवल्लीलतागुल्मबीजान्तरगतेरपि । बीजं संवित्स्पन्द एव तस्य बीजं न विद्यते ॥ १४ ॥

tṛṇavallīlatāgulmabījāntaragaterapi | bījaṃ saṃvitspanda eva tasya bījaṃ na vidyate || 14 ||

Even in the seeds of grass, creepers, vines, and shrubs, the seed is the vibration of consciousness. There is no seed for that.

तृण, वल्ली, लता और गुल्म के बीजों में भी, बीज चेतना का स्पन्द है | उसके लिए कोई बीज नहीं है |

7.28.15

न बीजाङ्कुरयोर्भेदो विद्यतेऽग्न्यौष्ण्ययोरिव । बीजमेवाङ्कुरं विद्धि विद्धि कर्मैव मानवम् ॥ १५ ॥

na bījāṅkurayorbhēdo vidyatē'gnyauṣṇyayoriva | bījamēvāṅkuraṃ viddhi viddhi karmaiva mānavam || 15 ||

There is no difference between the seed and the sprout, just as there is no difference between fire and heat. Know the sprout to be the seed itself, and know the action to be the human.

बीज और अंकुर में कोई भेद नहीं है, जैसे अग्नि और उष्णता में कोई भेद नहीं है | अंकुर को बीज ही समझो, और कर्म को मनुष्य समझो |

7.28.16

चित्स्फुरन्ती भूमिकोशे करोति स्थावराङ्कुरम्। स्थूलान्सूक्ष्मान्मृदुक्रूरान्पयोबुद्बुदकानिव ॥ १६ ॥

citsphurantī bhūmikośe karoti sthāvarāṅkuram | sthūlānsūkṣmānmṛdukrūrānpayobudbudakāniva || 16 ||

The sparkling consciousness in the earth-treasure creates the sprout of the immovable, like bubbles in water, gross and subtle, soft and hard.

चमकती चेतना भूमि के खजाने में अचल का अंकुर उत्पन्न करती है, जैसे पानी में बुलबुले, स्थूल और सूक्ष्म, कोमल और कठोर।

7.28.17

चिता विना धराकोशादत्यन्तपरिपेलवात्। अङ्कुरान्वज्रसारांश्च क उल्लासयितुं क्षमः ॥ १७ ॥

citā vinā dharākośād atyantaparipelavāt | aṅkurān vajrasārāṃśca ka ullāsayituṃ kṣamaḥ || 17 ||

Without consciousness, from the utterly dry earth-treasure, who can bring forth the sprouts that are the essence of diamonds?

चेतना के बिना, बिलकुल सूखे भूमि के खजाने से, हीरे की सार अंकुर उत्पन्न करने में कौन सक्षम है?

7.28.18

प्राणिवीर्यरसान्तस्था संविज्जंगममाततम्। तनोति लतिकान्तस्थो रसः पुष्पफलं यथा ॥ १८ ॥

prāṇivīryarasāntasthā saṃvijjangamamātatam | tanoti latikāntastho rasaḥ puṣpaphalaṃ yathā || 18 ||

The essence of the vital energy of living beings, pervading consciousness, spreads like the sap in a creeper that produces flowers and fruits.

जीवों की जीवन शक्ति का सार, व्यापक चेतना, फूल और फल उत्पन्न करने वाली लता की तरह फैलता है।

7.28.19

यदि सर्वगता संविद्भवेन्नातिबलीयसी। तत्क उल्लासने शक्तः स्याद्देवासुरभूभृताम् ॥ १९ ॥

yadi sarvagatā saṃvid bhavennātibalīyasī | tatka ullāsane śaktaḥ syāddevāsurabhūbhṛtām || 19 ||

If the all-pervading consciousness is not very powerful, then who can be capable of uplifting the gods, demons, and the earth?

यदि सर्वव्यापी चेतना अत्यंत शक्तिशाली नहीं है, तो देवताओं, असुरों और पृथ्वी को उत्थान करने में कौन सक्षम है?

7.28.20

जङ्गमानां स्थावराणामेतदाद्यं च बीजकम्। संविद्विस्फुरणामात्रमस्य बीजं न विद्यते ॥ २० ॥

jaṅgamānāṃ sthāvarāṇāmetadādyaṃ ca bījakam | saṃvidvisphuraṇāmātramasyabījaṃ na vidyate || 20 ||

This is the primordial seed of both the moving and the immovable. The mere sparkling of consciousness is the seed of this, which has no seed of its own.

यह चलने वालों और अचलों का आदिम बीज है। चेतना की मात्र चमक इसका बीज है, जिसका कोई अपना बीज नहीं है।

7.28.21

बीजाङ्कुरविकल्पानां क्रियापुरुषकर्मणाम्। ऊर्मिवीचितरङ्गाणां नास्ति भेदो न वस्तुनि ॥ २१ ॥

bījāṅkuravikalpānāṃ kriyāpuruṣakarmaṇām | ūrmivīcitaraṅgāṇāṃ nāsti bhedo na vastuni || 21 ||

There is no difference between the seed and the sprout, the action and the doer, the wave and the ripple; there is no distinction in reality.

बीज और अंकुर, क्रिया और कर्ता, लहर और तरंग में कोई अंतर नहीं है; वास्तविकता में कोई भेद नहीं है।

7.28.23

संवित्तेर्जन्मबीजस्य योऽन्तस्थो वासनारसः । स करोत्यङ्कुरोल्लासं तमसङ्गाग्निना दह ॥ २३ ॥

saṃvitterjanmabījasya yo'ntastho vāsanārasaḥ | sa karotyaṅkurollāsaṃ tamasaṅgāgninā daha || 23 ||

The inner essence of the seed of consciousness, which is the sap of impressions, causes the sprout to blossom; burn it with the fire of non-attachment.

चेतना के बीज का अंतर्निहित सार, जो संस्कारों का रस है, अंकुर को खिलने का कारण बनता है; इसे असंगता की अग्नि से जला दो।

7.28.24

कुर्वतोऽकुर्वतश्चैव मनसा यदमज्जनम् । शुभाशुभेषु कार्येषु तदसङ्गं विदुर्बुधाः ॥ २४ ॥

kurvato'kurvataścaiva manasā yadamajjanam | śubhāśubheṣu kāryeṣu tadasaṅgaṃ vidurbudhāḥ || 24 ||

Whether one acts or not, the mind's immersion in good and bad deeds is known as non-attachment by the wise.

चाहे कोई कार्य करे या न करे, मन का शुभ और अशुभ कार्यों में डूबना बुद्धिमानों द्वारा असंगता कहलाता है।

7.28.25

अथवा वासनोत्साद एवासङ्ग इति स्मृतः । यया कयाचिद्युक्त्यान्तः संपादय तमेव हि ॥ २५ ॥

athavā vāsanotsāda evāsaṅga iti smṛtaḥ | yayā kayācidyuktyāntaḥ saṃpādaya tameva hi || 25 ||

Or, the uprooting of impressions itself is known as non-attachment. By any means, achieve that state within.

या, संस्कारों का उन्मूलन ही असंगता कहलाता है। किसी भी तरह से, उस अवस्था को अंतर में प्राप्त करो।

7.28.26

ययैव वेत्सि ततया युक्त्या पुरुषयत्नतः । वासनाङ्कुरनिर्मूलमेतदेव परं शिवम् ॥ २६ ॥

yayaiva vetsi tatayā yuktyā puruṣayatnataḥ | vāsanāṅkuranirmūlametadeva paraṃ śivam || 26 ||

By the very means you know, with that effort of the individual, uproot the sprout of impressions; this itself is the supreme bliss.

जिस तरह से आप जानते हों, उसी प्रयास से व्यक्ति के प्रयत्न से, संस्कारों के अंकुर को उन्मूलित करो; यही परम आनंद है।

7.28.27

पौरुषेण प्रयत्नेन यथा जानासि वा तथा । निवारयाहंभावांशमेषोऽसौ वासनाक्षयः ॥ २७ ॥

pauruṣeṇa prayatnena yathā jānāsi vā tathā | nivārayāhaṃbhāvāṃśameṣo'sau vāsanākṣayaḥ || 27 ||

With human effort and endeavor, as you know, thus I restrain the sense of 'I'-ness; this is the destruction of impressions.

मनुष्य के प्रयास और उद्यम से, जैसे आप जानते हैं, वैसे ही मैं 'मैं'-पन को रोकता हूँ; यह वासनाओं का नाश है।

7.28.28

नास्त्येव पौरुषादन्या संसारोत्तरणे गतिः । निरहंभावरूपेऽस्मिन्वासनाक्षयनामनि ॥ २८ ॥

nāstyeva pauruṣādanyā saṃsārottaraṇe gatiḥ | nirahaṃbhāvarūpe'sminvāsanākṣayanāmani || 28 ||

There is no other way than human effort for crossing the worldly existence. In this state of egolessness, known as the destruction of impressions.

संसार से पार होने के लिए मनुष्य के प्रयास के अलावा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इस अहंकार-रहित अवस्था में, जिसे वासनाओं का नाश कहा जाता है।

7.28.29

द्वित्वं नृकर्मणोर्यस्य बीजाङ्कुरतया तयोः । विपश्चित्पशवे तस्मै महतेऽस्तु सदा नमः ॥ २९ ॥

dvitvaṃ nṛkarmaṇoryasya bījāṅkuratayā tayoḥ | vipaścitpaśave tasmai mahate'stu sadā namaḥ || 29 ||

Salutations always to that great wise being who sees the duality of man and his actions as seed and sprout.

उस महान ज्ञानी को सदा नमन है जो मनुष्य और उसके कर्मों की द्वैतता को बीज और अंकुर के रूप में देखता है।

7.28.30

न बीजमादावस्त्यन्यन्नाङ्कुरो न च वा नरः । न कर्म न च दैवादि केवलं चिदुदेति हि ॥ ३० ॥

na bījamādāvastyanyannāṅkuro na ca vā naraḥ | na karma na ca daivādi kevalaṃ cidudeti hi || 30 ||

There is no other seed at the beginning, nor sprout, nor man, nor action, nor destiny. Only consciousness arises.

शुरुआत में कोई दूसरा बीज नहीं है, न अंकुर, न मनुष्य, न कर्म, न भाग्य। केवल चेतना ही उत्पन्न होती है।

7.28.31

नो बीजमस्ति न किलाङ्कुरकोऽपि वास्ति नाप्यस्ति कर्म पुरुषश्च न वास्ति साधो । एकं तु चित्त्वमुदितं ह्यनयाभिधानलक्ष्म्या नटः सुरनरासुरशोभयेव ॥ ३१ ॥

no bījamasti na kilāṅkurako'pi vāsti nāpyasti karma puruṣaśca na vāsti sādho | ekaṃ tu cittvamuditaṃ hyanayābhidhānalakṣmyā naṭaḥ suranarāsurasobhayeva || 31 ||

There is no seed, nor is there any sprout, nor is there any action, nor is there any man, O virtuous one. Only consciousness arises, shining with the splendor of this designation, like an actor in the roles of gods, men, and demons.

हे साधु, कोई बीज नहीं है, न कोई अंकुर है, न कोई कर्म है, न कोई मनुष्य है। केवल चेतना ही उत्पन्न होती है, इस नामकरण की शोभा से चमकती हुई, जैसे एक अभिनेता देवताओं, मनुष्यों और असुरों की भूमिकाओं में।

7.28.32

इत्येव निश्चयमनामय भावयित्वा त्यक्त्वा भृशं पुरुषकर्मविचारशङ्काम् । निर्वासनः सकलसंकलनाविमुक्तः संविद्वपुर्ननु यथाभिमतेच्छमास्व ॥ ३२ ॥

ityeva niścayamanāmaya bhāvayitvā tyaktvā bhṛśaṃ puruṣakarmavicāraśaṅkām | nirvāsanaḥ sakalasaṅkalanāvimuktaḥ saṃvidvapurnanu yathābhimatecchamāsv || 32 ||

Having firmly resolved in this manner, abandoning all doubts about the actions of the individual, free from all attachments, and being the embodiment of pure consciousness, one should remain as desired.

इस प्रकार निश्चय करके, पुरुष के कर्मों के विचार की शंका को त्यागकर, सभी आसक्तियों से मुक्त होकर, शुद्ध चेतना का स्वरूप बनकर, जैसे इच्छा हो वैसे रहें।

7.28.33

प्रशान्तसर्वेच्छमशङ्कमच्छचिन्मात्रसंस्थोऽखिलकार्यकारी । आत्मैकरामः परिपूर्णकामो भवाभयो राम शमाभिरामः ॥ ३३ ॥

praśāntasarvecchamaśaṅkamacchacinmātrasaṃstho'khilakāryakārī | ātmaikarāmaḥ paripūrṇakāmo bhavābhayo rāma śamābhirāmaḥ || 33 ||

Being peaceful, free from all desires and doubts, established in pure consciousness, the doer of all actions, delighting in the self alone, with all desires fulfilled, free from the fear of existence, O Rama, you are the abode of peace.

शांत, सभी इच्छाओं और शंकाओं से मुक्त, शुद्ध चेतना में स्थित, सभी कार्यों का कर्ता, आत्मा में ही रमण करने वाला, सभी इच्छाओं से पूर्ण, अस्तित्व के भय से मुक्त, हे राम, आप शांति के आश्रय हैं।

Chapter 29

7.29.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । नित्यमन्तर्मुखस्तिष्ठ वीतरागो विवासनः । चिन्मात्रममलं शान्तं कर्म सर्वत्र भावयन् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nityamantarmukhastiṣṭha vītarāgo vivāsanaḥ | cinmātramamalaṃ śāntaṃ karma sarvatra bhāvayan || 1 ||

Shri Vasishtha said: Always remain inwardly focused, free from desires and attachments, contemplating the pure, peaceful consciousness in all actions.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हमेशा अंतर्मुखी रहें, वासना और आसक्ति से मुक्त हों, सभी कर्मों में शुद्ध, शांत चेतना का भावना करें।

7.29.2

आकाशविशदः प्राज्ञश्चिन्मात्रैकघनस्थितिः । समः सौम्यः समानन्दः स ब्रह्माऽऽबृंहिताशयः ॥ २ ॥

ākāśaviśadaḥ prājñaścinmātraikaghanasthitiḥ | samaḥ saumyaḥ samānandaḥ sa brahmā''bṛṃhitāśayaḥ || 2 ||

That wise one, who is clear like the sky, established in the pure consciousness alone, is equanimous, gentle, and blissful, with an expanded heart.

वह ज्ञानी जो आकाश की तरह निर्मल है, शुद्ध चेतना में स्थित है, समतापूर्ण, सौम्य और आनंदमय है, उसका हृदय विस्तृत है।

7.29.3

शोकेष्वापत्सु घोरेषु संकटेष्ववटेषु च । यथाप्राप्तेषु सर्वेषु खर्वेषून्नतिमत्सु च ॥ ३ ॥

śokeṣvāpatsu ghoreṣu saṃkaṭeṣvavaṭeṣu ca | yathāprāpteṣu sarveṣu kharveṣūnnatimatsu ca || 3 ||

In sorrows, calamities, terrible situations, and dangers, in all circumstances as they come, in low and high states.

दुःखों, आपदाओं, भयानक स्थितियों, और खतरों में, सभी परिस्थितियों में जैसे वे आती हैं, नीच और ऊँची अवस्थाओं में।

7.29.4

यथाक्रमं यथादेशं कुरु दुःखमदुःखितः । वाष्पक्रन्दादिपर्यन्तं द्वन्द्वयुक्तसुखानि च ॥ ४ ॥

yathākramaṃ yathādeśaṃ kuru duḥkhamaduḥkhitaḥ | vāṣpakrandādiparyantaṃ dvandvayuktasukhāni ca || 4 ||

Act according to the situation and place, whether in sorrow or joy, from tears to cries, and experience the pleasures associated with dualities.

परिस्थिति और स्थान के अनुसार कार्य करें, चाहे दुःख हो या सुख, आँसुओं से लेकर चीखों तक, और द्वंद्वों से जुड़े सुखों का अनुभव करें।

7.29.5

समागमेषु कान्तानामुत्सवेषूदयेषु च । आनन्दं भज सौम्यात्मा वासनाक्रान्तमूढवत् ॥ ५ ॥

samāgameṣu kāntānāmutsaveṣūdayeṣu ca | ānandaṃ bhaja saumyātmā vāsanākrāntamūḍhavat || 5 ||

In the union with beloved ones, in festivals, and in prosperity, enjoy bliss, O gentle one, as if deluded by desires.

प्रियजनों के साथ मिलन, उत्सवों, और समृद्धि में, हे सौम्य आत्मा, आनंद लें, मानो वासनाओं से मोहित हो।

7.29.6

भूतानि मृत्युकार्येषु संग्रामादिषु निर्दह । दावानलस्तृणानीव वासनाक्रान्तमूढवत् ॥ ६ ॥

bhūtāni mṛtyukāryeṣu saṃgrāmādiṣu nirdaha | dāvānalastṛṇānīva vāsanākrāntamūḍhavat || 6 ||

Burn all beings in the activities of death, such as war, like a forest fire burns grass, as if possessed by desires.

मृत्यु के कार्यों में, जैसे युद्ध में, सभी प्राणियों को जला दो, जैसे जंगल की आग घास को जलाती है, मानो इच्छाओं से भरे हुए हो।

7.29.7

क्रमागतेष्वखिन्नोऽर्थं बकवच्चिन्तयार्जय । अर्थोपार्जनकार्येषु वासनाक्रान्तमूढवत् ॥ ७ ॥

kramāgateṣvakhinnorarthaṃ bakavaccintayārjaya | arthopārjanakāryeṣu vāsanākrāntamūḍhavat || 7 ||

Without getting tired, gradually acquire wealth by thinking like a crane, in the activities of wealth acquisition, as if possessed by desires.

थके बिना, धीरे-धीरे धन प्राप्त करो, जैसे बगुला सोचता है, धन प्राप्ति के कार्यों में, मानो इच्छाओं से भरे हुए हो।

7.29.8

बलाद्विदलयाशेषानरीनरिनिषूदन । वातो रिक्तानिवाम्भोदान् वासनाक्रान्तमूढवत् ॥ ८ ॥

balādvidalayāśeṣānari nari niṣūdana | vāto riktānivāmbhodān vāsanākrāntamūḍhavat || 8 ||

Destroy all enemies completely by force, like the wind scatters empty clouds, as if possessed by desires.

बल से सभी शत्रुओं को पूरी तरह से नष्ट कर दो, जैसे हवा खाली बादलों को बिखेरती है, मानो इच्छाओं से भरे हुए हो।

7.29.9

जनेषु करुणार्हेषु धैर्यं कुरु महात्मसु । आत्माराममना मौनी वासनाक्रान्तमूढवत् ॥ ९ ॥

janeṣu karuṇārheṣu dhairyaṃ kuru mahātmasu | ātmārāmamana mauṇī vāsanākrāntamūḍhavat || 9 ||

Show compassion to those who deserve it, be patient with the great souls, be content within yourself and remain silent, as if possessed by desires.

जिन्हें दया की जरूरत है, उन पर दया करो, महान आत्माओं के साथ धैर्य रखो, अपने आप में संतुष्ट रहो और मौन रहो, मानो इच्छाओं से भरे हुए हो।

7.29.10

मुदितो भव हर्षेषु दुःखेषु भव दुःखितः । करुणां कुरु दीनेषु भव वीरेषु वीर्यवान् ॥ १० ॥

mudito bhava harṣeṣu duḥkheṣu bhava duḥkhitaḥ | karuṇāṃ kuru dīneṣu bhava vīreṣu vīryavān || 10 ||

Be joyful in happiness, be sorrowful in sorrow, show compassion to the poor, and be brave among the brave.

खुशी में खुश रहो, दुःख में दुःखी रहो, गरीबों पर दया करो, और वीरों में वीर बनो।

7.29.11

अन्तर्मुखः सदानन्दः स्वात्मारामतयान्वितः । यः करोति शमोदारस्तत्र कर्तासि नानघ ॥ ११ ॥

antarmukhaḥ sadānandaḥ svātmārāmatayānvitaḥ | yaḥ karoti śamodārastatra kartāsi nānagha || 11 ||

One who is always inward-focused and blissful, endowed with self-contentment, performs peaceful and generous acts; there, O sinless one, you are the doer.

जो हमेशा अंतर्मुखी और आनंदमय है, आत्म-संतुष्टि से युक्त है, वह शांतिपूर्ण और उदार कार्य करता है; वहाँ, हे निष्पाप, तुम कर्ता हो।

7.29.12

आत्मभावनया साधो नित्यमन्तर्मुखस्थितेः । वज्रधारापि ते राम पतिता याति कुण्ठताम् ॥ १२ ॥

ātmabhāvanayā sādho nityamantarmukhasthiteḥ | vajradhārāpi te rāma patitā yāti kuṇṭhatām || 12 ||

O virtuous one, by the practice of self-realization, always remaining inward-focused, even the thunderbolt, O Rama, falls and becomes blunt.

हे साधु, आत्म-भावना के द्वारा, हमेशा अंतर्मुखी रहने से, हे राम, वज्र भी गिरकर निष्प्रभ हो जाता है।

7.29.13

संकल्पकलनोन्मुक्ते स्वसंविन्मात्रकोटरे । यस्तिष्ठत्यात्मनि स्वैरमात्मारामो महेश्वरः ॥ १३ ॥

saṃkalpakalanonmukte svasaṃvinmātrakoṭare | yastiṣṭhatyātmani svairamātmārāmo maheśvaraḥ || 13 ||

One who is liberated from the bonds of desires and thoughts, and who abides in the self, enjoying self-awareness, is the self-contented and great lord.

जो इच्छाओं और विचारों के बंधनों से मुक्त है, और जो आत्म-चेतना में आनंद लेते हुए आत्मा में स्थित है, वह आत्म-संतुष्ट और महान ईश्वर है।

7.29.14

न तं भिन्दन्ति शस्त्राणि न दहन्ति हुताशनाः । न क्लेदयन्ति वारीणि शोषयन्ति न मारुताः ॥ १४ ॥

na taṃ bhindanti śastrāṇi na dahanti hutāśanāḥ | na kledayanti vārīṇi śoṣayanti na mārutāḥ || 14 ||

Weapons do not pierce him, fires do not burn him, waters do not wet him, and winds do not dry him.

शस्त्र उसे नहीं छेदते, आग उसे नहीं जलाती, पानी उसे नहीं भिगोता, और हवा उसे नहीं सुखाती।

7.29.15

सुस्तम्भमजमालिङ्ग्य स्वात्मानमजरामरम् । तिष्ठावष्टभ्य धीरात्मा सुस्तम्भमिव मन्दिरम् ॥ १५ ॥

sustambhamajamāliṅgya svātmānamajarāmaram | tiṣṭhāvaṣṭabhya dhīrātmā sustambhamiva mandiram || 15 ||

Embracing the eternal and immortal self, the wise one stands firm, like a strong pillar supporting a temple.

अजर-अमर आत्मा को आलिंगन करके, बुद्धिमान व्यक्ति एक मजबूत स्तंभ की तरह मंदिर को सहारा देते हुए खड़ा रहता है।

7.29.16

जगद्वृक्षपदार्थौघपुष्पामोदश्रियं पूराम् । संविदं संविदः स्वस्थामास्वान्तर्मुखमच्युतम् ॥ १६ ॥

jagadvṛkṣapadārthaughapuṣpāmodaśriyaṃ pūrām | saṃvidaṃ saṃvidaḥ svasthāmāsvāntarmukhamacyutam || 16 ||

The fragrance of the blossoms of the tree of the world's objects fills the pure consciousness, which is the eternal, unchanging, and inward-facing awareness.

विश्व के वस्तुओं के वृक्ष के फूलों की सुगंध शुद्ध चेतना को भरती है, जो नित्य, अपरिवर्तनीय और अंतर्मुखी चेतना है।

7.29.17

अन्तर्मुखतया नित्यं कार्यमाहरतां बहिः । जीवतामपि नोदेति वासना दृषदामिव ॥ १७ ॥

antarmukhatayā nityaṃ kāryamāharatāṃ bahiḥ | jīvatāmapi nōdēti vāsanā dṛṣadāmiva || 17 ||

Through inward focus, always perform actions externally. Even while living, desires do not arise, like the reflection in a mirror.

अंतर्मुखता के द्वारा, हमेशा बाहरी कार्य करें। जीवित रहते हुए भी, इच्छाएँ उठती नहीं, जैसे दर्पण में प्रतिबिंब।

7.29.18

पुनः प्रसरणोन्मुक्तमन्तःसुप्तं मनः कुरु । कुर्वन्सर्वाणि कर्माणि कूर्माङ्गवदवृत्तिमान् ॥ १८ ॥

punaḥ prasaraṇonmuktamantaḥsuptaṃ manaḥ kuru | kurvansarvāṇi karmāṇi kṛrmāṅgavadavṛttimān || 18 ||

Again, make the mind free from external distractions and inwardly asleep. Perform all actions like a mere instrument, without attachment.

फिर से, मन को बाहरी विचलनों से मुक्त और अंतर्मुखी रूप से सोया हुआ बनाएँ। सभी कार्य करें जैसे एक साधन, आसक्ति के बिना।

7.29.19

अन्तर्वृत्तिविहीनेन बहिर्वृत्तिमतेव च । सुप्तप्रबुद्धप्रायेण कार्यमाचर चेतसा ॥ १९ ॥

antarvṛttivihīnena bahirvṛttimatēva ca | suptaprabuddhaprāyēṇa kāryamācara cētasā || 19 ||

With a mind devoid of internal thoughts and engaged in external activities, perform actions as if awakened from sleep.

अंतर्वृत्ति से रहित और बाहरी वृत्तियों में लगे हुए मन से, नींद से जागे हुए की तरह कार्य करें।

7.29.20

बालमूकादिविज्ञानवदन्तस्त्यक्तवासनम् । भवतः कुर्वतः कार्यं खवच्चित्तं न लिप्यते ॥ २० ॥

bālamūkādivijñānavadantastyaktavāsanam | bhavataḥ kurvataḥ kāryaṃ khavaccittaṃ na lipyatē || 20 ||

Like a child or a mute person who has no desires, when you perform actions, the mind does not get attached, like the sky.

बालक या मूक व्यक्ति की तरह जिसकी कोई इच्छा नहीं होती, जब आप कार्य करते हैं, तो मन आसक्त नहीं होता, जैसे आकाश।

7.29.21

वृत्तित्यागविलीनेन किंचित्प्रसरता बहिः । अन्तरत्यन्तसुप्तेन चेतसा तिष्ठ विज्वरः ॥ २१ ॥

vṛttityāgavilīnena kiṃcitprasaratā bahiḥ | antaratyantasuptena cetasā tiṣṭha vijvaraḥ || 21 ||

With the mind withdrawn from all activities, slightly extending outward, and deeply absorbed within, remain free from distress.

मन सभी गतिविधियों से विरत, थोड़ा बाहर फैलता हुआ, और अंतरतम निद्रा में डूबा हुआ, चिंता से मुक्त रहो।

7.29.22

असंकल्पकलङ्कायां ज्ञानाच्चित्तक्षयोदये । शुद्धायां संविदि स्थित्वा कुरु मा कुरु वानघ ॥ २२ ॥

asaṃkalpakalaṅkāyāṃ jñānāccittakṣayodaye | śuddhāyāṃ saṃvidi sthitvā kuru mā kuru vānagha || 22 ||

When the mind is purified by the knowledge that arises from the absence of desires, remain established in pure consciousness, whether you act or not, O sinless one.

जब मन इच्छाओं के अभाव से उत्पन्न ज्ञान द्वारा शुद्ध हो जाता है, तब शुद्ध चेतना में स्थित रहो, चाहे तुम कार्य करो या न करो, हे निष्पाप।

7.29.23

सुषुप्तसमया वृत्त्या जाग्रद्व्यवहरन्व्रजन् । गृहाण मा किंचिदपि मा वा किंचित्परित्यज ॥ २३ ॥

suṣuptasamayā vṛttyā jāgradvyavaharadvrajan | gṛhāṇa mā kiṃcidapi mā vā kiṃcitparityaja || 23 ||

In the state of deep sleep, while engaged in worldly activities, accept nothing and reject nothing.

गहरी नींद की अवस्था में, संसारिक गतिविधियों में लगे हुए, कुछ भी स्वीकार न करो और कुछ भी त्याग न करो।

7.29.24

जाग्रत्यपि सुषुप्तश्चेज्जागर्षि च सुषुप्तके । जाग्रत्सषुप्तयोरैक्यात्तदस्त्यसि निरामयः ॥ २४ ॥

jāgratyapi suṣuptaścej jāgarṣi ca suṣuptake | jāgratsuṣuptayoraiykyāt tadastyasi nirāmayaḥ || 24 ||

If you are awake while asleep and asleep while awake, then by the unity of the waking and sleeping states, you are that, free from illness.

यदि तुम सोते हुए जाग्रत हो और जाग्रत होकर सोए हुए हो, तो जाग्रत और सुषुप्त अवस्थाओं की एकता से, तुम वह हो, जो रोगमुक्त है।

7.29.25

एवमाद्यन्तरहितमभ्यासेन शनैःशनैः । पदमासादयाद्वन्द्वमतीतं सर्ववस्तुतः ॥ २५ ॥

evamādyantarahitamabhyāsena śanaiḥśanaiḥ | padamāsādayādvandvamatītaṃ sarvavastutaḥ || 25 ||

Thus, by gradual practice, free from beginning and end, one attains the state beyond dualities, in all things.

इस प्रकार, धीरे-धीरे अभ्यास करके, आदि और अंत से मुक्त होकर, सभी वस्तुओं में द्वैत से परे अवस्था प्राप्त करो।

7.29.26

न च द्वैतं न चैवैक्यं जगदित्येव निश्चयी । परमामेहि विश्रान्तिमाकाशविशदाशयः ॥ २६ ॥

na ca dvaitaṃ na caivaikyaṃ jagadityeva niścayī | paramāmehi viśrāntimākāśaviśadāśayaḥ || 26 ||

Neither duality nor non-duality, this is the conclusion of the world. Attain the ultimate rest, with a mind as clear as the sky.

न द्वैत है और न ही एकता, यह जगत का निश्चय है। परम विश्राम को प्राप्त करें, आकाश की तरह स्पष्ट मन के साथ।

7.29.27

श्रीराम उवाच । यद्येवं मुनिशार्दूल तदहंप्रत्ययात्मकः । भवानेवेह किं तावद्वसिष्ठाख्यः स्थितो वद ॥ २७ ॥

śrīrāma uvāca | yadyevaṃ muniśārdūla tadahaṃpratyayātmakaḥ | bhavāneveha kiṃ tāvadvasiṣṭhākhyaḥ sthito vada || 27 ||

Sri Rama said: If this is so, O lion among sages, then I am convinced. But tell me, why are you, known as Vasistha, silent here?

श्री राम ने कहा: यदि ऐसा है, हे मुनियों में श्रेष्ठ, तो मैं संतुष्ट हूँ। लेकिन बताइए, आप जो वसिष्ठ के नाम से जाने जाते हैं, यहाँ मौन क्यों हैं?

7.29.28

श्रीवाल्मीकिरुवाच । राघवे गदति त्वेवं वसिष्ठो वदतां वरः । तूष्णीमेव मुहूर्तार्धमतिष्ठत्स्पष्टचेष्टितः ॥ २८ ॥

śrīvālmīkirusvāca | rāghave gadati tvevaṃ vasiṣṭho vadatāṃ varaḥ | tūṣṇīmeva muhūrtārdhamatiṣṭhatsphaṣṭaceṣṭitaḥ || 28 ||

Sri Valmiki said: While Rama was speaking thus, Vasistha, the best among speakers, remained silent for a moment, with a clear demeanor.

श्री वाल्मीकि ने कहा: जब राम ऐसा कह रहे थे, वसिष्ठ, वक्ताओं में श्रेष्ठ, एक क्षण के लिए मौन रहे, स्पष्ट व्यवहार के साथ।

7.29.29

तस्मिंस्तूष्णीं स्थिते किं स्यादिति सभ्ये महाजने । पतिते संशयाम्भोधौ रामः पुनरुवाच ह ॥ २९ ॥

tasmintūṣṇīṃ sthite kiṃ syāditi sabhye mahājane | patite saṃśayāmbhodhau rāmaḥ punaruvāca ha || 29 ||

When Vasistha remained silent, the great assembly wondered what would happen next. Falling into a sea of doubt, Rama spoke again.

जब वसिष्ठ मौन रहे, महान सभा में लोगों ने सोचा कि अब क्या होगा। संदेह के समुद्र में डूब कर, राम ने फिर से कहा।

7.29.30

किमर्थं भगवंस्तूष्णीं भवानहमिव स्थितः । न सोऽस्ति जगतां न्यायः सतां यो नोत्तरक्षमः ॥ ३० ॥

kimarthaṃ bhagavaṃstūṣṇīṃ bhavānahamiva sthitaḥ | na so'sti jagatāṃ nyāyaḥ satāṃ yo nottarakṣamaḥ || 30 ||

Why, O Lord, are you silent like me? There is no justice in the world for the virtuous who are not capable of answering.

हे भगवान, आप मेरे समान मौन क्यों हैं? उत्तर देने में असमर्थ सत्पुरुषों के लिए जगत में कोई न्याय नहीं है।

7.29.31

श्रीवसिष्ठ उवाच । न मे वक्तुमशक्तत्वाद्युक्तिक्षय उपस्थितः । किंतु प्रश्नस्य कोट्यास्य तूष्णीमेवानघोत्तरम् ॥ ३१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | na me vaktum aśaktatvād yuktikṣaya upasthitaḥ | kiṃtu praśnasya koṭyāsya tūṣṇīm evānaghottaram || 31 ||

Shri Vasishtha said: It is not due to my inability to speak that the reasoning has diminished. Rather, the ultimate answer to this question is silence itself.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह मेरी वाणी की असमर्थता के कारण नहीं है कि तर्क कम हो गया है। बल्कि, इस प्रश्न का अंतिम उत्तर मौन ही है।

7.29.32

द्विविधो भवति प्रष्टा तत्त्वज्ञोऽज्ञोऽथवापि च । अज्ञस्याज्ञतया देयो ज्ञस्य तु ज्ञतयोत्तरः ॥ ३२ ॥

dvividho bhavati praṣṭā tattvajño'jño'thavāpi ca | ajñasyājñatayā deyo jñasya tu jñatayottaraḥ || 32 ||

The questioner is of two kinds: one who knows the truth and one who does not. To the ignorant, the answer should be given according to their ignorance. To the knowledgeable, the answer should be given according to their knowledge.

प्रश्नकर्ता दो प्रकार का होता है: एक जो सत्य को जानता है और एक जो नहीं जानता। अज्ञानी को उसके अज्ञान के अनुसार उत्तर देना चाहिए, और ज्ञानी को उसके ज्ञान के अनुसार उत्तर देना चाहिए।

7.29.33

एतावन्तमभूत्कालं भवानज्ञाततत्पदः । भाजनं सविकल्पानामुत्तराणां महामते ॥ ३३ ॥

etāvantam abhūt kālaṃ bhavān ajñātatatpadaḥ | bhājanaṃ savikalpānām uttarāṇām mahāmate || 33 ||

Until now, you have been ignorant of the truth. O wise one, you have been a vessel for answers with various thoughts.

अब तक, आप सत्य से अनजान थे। हे महामते, आप विभिन्न विचारों वाले उत्तरों के पात्र रहे हैं।

7.29.34

तत्त्वज्ञस्त्वधुना जातो विश्रान्तः परमे पदे । योग्यो न सविकल्पानामुत्तराणामसि स्फुटम् ॥ ३४ ॥

tattvajñas tv adhunā jāto viśrāntaḥ parame pade | yogyo na savikalpānām uttarāṇām asi sphuṭam || 34 ||

Now you have become a knower of the truth, rested in the supreme state. Clearly, you are not fit for answers with various thoughts.

अब आप सत्य के ज्ञाता बन गए हैं, परम अवस्था में विश्राम कर रहे हैं। स्पष्ट रूप से, आप विभिन्न विचारों वाले उत्तरों के योग्य नहीं हैं।

7.29.35

यावान्कश्चित्किलोल्लेखो वाङ्मयो वदतां वर। सूक्ष्मार्थः परमार्थो वा बहुरल्पतरोऽपि वा ॥ ३५ ॥

yāvān kaścit kila ullēkho vāṅmayo vadatāṃ vara | sūkṣmārthaḥ paramārthaḥ vā bahur alpataro'pi vā || 35 ||

O best of speakers, whatever indication is made through words, whether it is subtle meaning or supreme meaning, whether it is much or little.

हे वक्ताओं में श्रेष्ठ, शब्दों द्वारा जो भी संकेत दिया जाता है, चाहे वह सूक्ष्म अर्थ हो या परम अर्थ, चाहे वह अधिक हो या कम।

7.29.36

प्रतियोगिव्यवच्छेदसंख्यातीतादिविभ्रमैः। स च सर्वोऽन्वितः साधो भा इव त्रसरेणुभिः ॥ ३६ ॥

pratiyogivyavacchedasaṅkhyātītādivibhramaiḥ| sa ca sarvo'nvitaḥ sādho bhā iva trasareṇubhiḥ || 36 ||

That one is afflicted with various delusions such as the distinctions of opposites and the transcendence of numbers, like the fear of dust particles.

वह व्यक्ति विभिन्न भ्रमों से ग्रस्त है, जैसे विरोधी भेद और संख्या की अतिक्रमण, धूल के कणों के भय की तरह।

7.29.37

उत्तरं सकलङ्कं च तज्ज्ञो नार्हति सुन्दर। नाकलङ्का च वागस्ति त्वं च तज्ज्ञतरः स्थितः ॥ ३७ ॥

uttaraṃ sakalaṅkaṃ ca tajjño nārhati sundara| nākalaṅkā ca vāgasti tvaṃ ca tajjñataraḥ sthitaḥ || 37 ||

One who knows that does not deserve a flawed response, O beautiful one. There is no flawless speech, and you are established as more knowledgeable.

जो वह जानता है, वह एक दोषपूर्ण उत्तर का हकदार नहीं है, हे सुंदर। कोई दोषरहित वाणी नहीं है, और आप अधिक ज्ञानवान के रूप में स्थापित हैं।

7.29.38

यथाभूतं च वक्तव्यं ज्ञस्यान्तेवासिनो मया। यथाभूतं विदुः काष्ठमौनमन्तविवर्जितम् ॥ ३८ ॥

yathābhūtaṃ ca vaktavyaṃ jñasyāntevāsino mayā| yathābhūtaṃ viduḥ kāṣṭhamounamantavivarjitam || 38 ||

The truth should be spoken by me, the servant of the knower. The truth is known as the ultimate silence, devoid of the end.

सत्य मुझे, ज्ञानी के सेवक द्वारा कहना चाहिए। सत्य अंतहीन परम मौन के रूप में जाना जाता है।

7.29.39

अविचारात्ससंकल्पं मौनमाहुः परं पदम्। तदेव तव तज्ज्ञस्य दत्तः सुन्दर उत्तरः ॥ ३९ ॥

avicārātsasaṅkalpaṃ maunamāhuḥ paraṃ padam| tadeva tava tajjñasya dattaḥ sundara uttaraḥ || 39 ||

From non-deliberation, with resolve, silence is said to be the supreme state. That very silence is given to you, O knower, O beautiful one, as the response.

अविचार से, संकल्प के साथ, मौन परम पद कहा जाता है। वही मौन तुम्हें, हे ज्ञानी, हे सुंदर, उत्तर के रूप में दिया जाता है।

7.29.40

यन्मयो हि भवत्यङ्ग पुरुषो वक्ति तादृशम्। ज्ञेयमात्रमयश्चाहं वागतीते पदे स्थितः ॥ ४० ॥

yanmayo hi bhavatyaṅga puruṣo vakti tādṛśam| jñeyamātramayaścāhaṃ vāgatīte pade sthitaḥ || 40 ||

Whatever a person says in such a manner, O limb, is merely to be known. I am established in the state beyond speech.

जो कुछ भी एक व्यक्ति ऐसे कहता है, हे अंग, वह सिर्फ जाना जाना चाहिए। मैं वाणी से परे पद में स्थित हूँ।

7.29.41

वागतीतपदस्थो हि कथं गृह्णाति वाङ्मलम्। अवाच्यं वच्मि नो तेन वाग्धि संकल्पनाङ्किता ॥ ४१ ॥

vāgatītapadastho hi kathaṃ gṛhṇāti vāṅmalam| avācyaṃ vacmi no tena vāg dhi saṃkalpanāṅkitā || 41 ||

How can one who is beyond the reach of words grasp the impurity of speech? I say the unsayable, therefore speech is marked by imagination.

शब्दों से परे होने पर कोई शब्दों की अशुद्धि कैसे ग्रहण कर सकता है? मैं अकथनीय कहता हूँ, इसलिए वाणी कल्पना से चिह्नित है।

7.29.42

श्रीराम उवाच। वाचि ये ये प्रवर्तन्ते तानानादृत्य दोषकान्। प्रतियोगिव्यवच्छेदिपूर्वकान्वद को भवान्॥ ४२ ॥

śrīrāma uvāca| vāci ye ye pravartante tānanādṛtya doṣakān| pratiyogivyavacchedipūrvakānvada ko bhavān || 42 ||

Sri Rama said: Who are you who speaks, ignoring the faults that arise in speech, distinguishing the counterparts and the excluded?

श्री राम ने कहा: आप कौन हैं जो वाणी में उत्पन्न दोषों को अनदेखा करके, प्रतियोगी और व्यवच्छेद करके बोल रहे हैं?

7.29.43

श्रीवसिष्ठ उवाच। एवं स्थिते राघव हे यथाभूतमिदं श्रृणु। कस्त्वं कोऽहं जगद्वा किमिति तत्त्वविदां वर ॥ ४३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca| evaṃ sthite rāghava he yathābhūtamidaṃ śṛṇu| kastvaṃ ko'haṃ jagadvā kimiti tattvavidāṃ vara || 43 ||

Sri Vasistha said: O Raghava, listen to this as it is, in this situation. Who are you, who am I, and what is the world? O best among the knowers of truth.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे रघुवंशी, इस स्थिति में इसे जैसा है सुनो। तुम कौन हो, मैं कौन हूँ, और यह जगत क्या है? हे सत्य के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ।

7.29.44

अहं तावदयं तात चिदाकाशो निरामयः। चेत्यसंवेद्यरहितः सर्वसंकल्पनातिगः ॥ ४४ ॥

ahaṃ tāvadayaṃ tāta cidākāśo nirāmayaḥ| cetysaṃvedyarahitaḥ sarvasaṃkalpanātigaḥ || 44 ||

I am, O father, the pure consciousness, free from disease, devoid of the perception of objects, and beyond all imaginations.

मैं, हे पिता, शुद्ध चेतना हूँ, रोगमुक्त, वस्तुओं के बोध से रहित, और सभी कल्पनाओं से परे।

7.29.45

स्वच्छं चिदाकाशमहं भवानाकाशमेव च। जगच्चाकाशमखिलं सर्वमाकाशमात्रकम्॥ ४५ ॥

svacchaṃ cidākāśamahaṃ bhavānākāśameva ca| jagaccākāśamakhilaṃ sarvamākāśamātrakam || 45 ||

I am the pure consciousness, you are also pure consciousness, and the entire world is nothing but pure consciousness.

मैं शुद्ध चेतना हूँ, आप भी शुद्ध चेतना हैं, और पूरा जगत केवल शुद्ध चेतना ही है।

7.29.46

शुद्धज्ञानैकरूपात्मा शुद्धज्ञानमयात्मनि । अन्यसंविद्दृशोन्मुक्तः स्वान्यद्वक्तुं न वेद्म्यहम् ॥ ४६ ॥

śuddhajñānaikarūpātmā śuddhajñānamayātmani | anyasaṃviddṛśonmuktaḥ svānyadvaktuṃ na vedmyaham || 46 ||

The self, which is of the nature of pure knowledge, is liberated from the perception of others in the self of pure knowledge. I do not know how to express the difference between the self and others.

जो आत्मा शुद्ध ज्ञान के रूप में है, वह शुद्ध ज्ञानमय आत्मा में दूसरों की संविद् से मुक्त है। मैं आत्मा और दूसरों के बीच का अंतर कैसे व्यक्त करूँ, यह मुझे नहीं पता।

7.29.47

स्वपक्षोद्भावनपरा अहंतात्मैकवर्धनम् । मोक्षार्थमप्युद्यमिनो नयन्ति शतशाखताम् ॥ ४७ ॥

svapakṣodbhāvanaparā ahaṃtātmaikavardhanam | mokṣārthamapyudyamino nayanti śataśākhatām || 47 ||

Those who are engaged in the cultivation of their own side and the enhancement of the ego-self, even for the sake of liberation, lead to a hundred branches.

जो लोग अपनी ओर की उद्भावना और अहंकार आत्मा के वर्धन में लगे हुए हैं, वे मोक्ष के लिए भी सौ शाखाओं की ओर ले जाते हैं।

7.29.48

जीवतोऽप्युपशान्तस्य व्यवहारवतोऽपि च । शववद्यदवस्थानं तदाहुः परमं पदम् ॥ ४८ ॥

jīvato'pyupaśāntasya vyavahāravato'pi ca | śavavadyadavasthānaṃ tadāhuḥ paramaṃ padam || 48 ||

Even for the living being who is calm and engaged in worldly activities, the state of being like a corpse is said to be the supreme state.

जीवित प्राणी के लिए भी, जो शांत है और लौकिक गतिविधियों में लगा हुआ है, शव की तरह की अवस्था परम पद कहलाती है।

7.29.49

अबहिःसाधनं शान्तमनन्तःसाधनं समम् । न सुखं नासुखं नाहं नान्यदित्यादि तं शिवम् ॥ ४९ ॥

abahiḥsādhanaṃ śāntamanantaḥsādhanaṃ samam | na sukhaṃ nāsukhaṃ nāhaṃ nānyadityādi taṃ śivam || 49 ||

That which is calm without external means, equal within without internal means, neither pleasure nor pain, neither I nor another, that is Shiva.

जो बाहरी साधनों से शांत है, भीतर से समान है, न सुख है न दुःख, न मैं हूँ न दूसरा, वह शिव है।

7.29.50

मुक्तताया अहंतेयमभावो भावनं क्व च । तयैवान्विष्यते सेति जात्यन्धश्चित्रमीक्षते ॥ ५० ॥

muktatāyā ahaṃteyamabhāvo bhāvanaṃ kva ca | tayaivānvīṣyate seti jātyandhaścitramīkṣate || 50 ||

The absence of the sense of 'I' is the state of liberation. Where is the need for contemplation? By that very absence, one is sought. The one born blind sees the wonder.

अहं के अभाव की स्थिति ही मुक्ति है। भावना की क्या आवश्यकता है? उसी अभाव से ही खोजा जाता है। जन्म से ही अंधा व्यक्ति आश्चर्य देखता है।

7.29.51

स्पन्दनेऽस्पन्दने चैव यत्पाषाणवदासितम् अजडस्यैव तद्विद्धि निर्वाणमजरं पदम् ॥ ५१ ॥

spandane'spandane caiva yatpāṣāṇavadāsitam ajāḍasyaiava tadviddhi nirvāṇamajaraṃ padam || 51 ||

In motion and in stillness, that which remains unchanged like a stone, know that to be the eternal, unaging state of Nirvana.

गति और स्थिरता में, जो पत्थर के समान अपरिवर्तित रहता है, उसे अजर निर्वाण का पद जानें।

7.29.52

तच्च नान्यो विजानाति स्वयमेवानुभूयते लोकैषणाविरक्तेन ज्ञेन ज्ञत्वमिवात्मनि ॥ ५२ ॥

tacca nānyo vijānāti svayamevānubhūyate lokaiṣaṇāviraktena jñena jñatvamivātmani || 52 ||

That is not known by anyone else; it is experienced by oneself alone, by one who is detached from worldly desires, like the knower knowing the self.

वह किसी दूसरे द्वारा नहीं जाना जाता, वह अपने आप ही अनुभव किया जाता है, जो लोक की इच्छाओं से विरक्त हो, ज्ञाता के समान आत्मा को जानने वाला।

7.29.53

तत्राहंता न च त्वत्ता नानहंता न चान्यता केवलं केवलीभावो निर्वाणममलं शिवम् ॥ ५३ ॥

tatrāhaṃtā na ca tvattā nānahantā na cānyatā kevalaṃ kevalībhāvo nirvāṇamamalaṃ śivam || 53 ||

There is no 'I', no 'you', no 'not-I', and no 'other'. There is only the state of pure oneness, which is the immaculate, auspicious Nirvana.

वहाँ न 'मैं' है, न 'तू' है, न 'मैं नहीं' है, और न 'दूसरा' है। वहाँ केवल शुद्ध एकता की अवस्था है, जो निर्मल, मंगलमय निर्वाण है।

7.29.54

चेत्योन्मुखत्वमेवाहुश्चेतनस्यास्य चेतनम् एष एव च संसारो बन्धः क्लेशाय भूयसे ॥ ५४ ॥

cetyonmukhatvamevāhuścetanasya'sya cetanam eṣa eva ca saṃsāro bandhaḥ kleśāya bhūyase || 54 ||

The tendency to turn outward is said to be the consciousness of this conscious being. This very tendency is the bondage that causes great suffering.

बाहर की ओर मुड़ने की प्रवृत्ति को इस चेतन की चेतना कहा जाता है। यही प्रवृत्ति बंधन है जो बहुत दुःख उत्पन्न करती है।

7.29.55

चेतनस्याचेतनत्वमचेत्योन्मुखतात्मकम् मोक्षं विद्धि परं शान्तं पदमव्ययमेव च ॥ ५५ ॥

cetanasya'cetanatvamacetyonmukhatātmakam mokṣaṃ viddhi paraṃ śāntaṃ padamavyayameva ca || 55 ||

The non-conscious state of the conscious being, which is devoid of the tendency to turn outward, is the supreme, peaceful, and eternal state of liberation.

चेतन की अचेतन अवस्था, जो बाहर की ओर मुड़ने की प्रवृत्ति से रहित है, वह परम, शांत, और अविनाशी मुक्ति की अवस्था है।

7.29.56

दिक्कालाद्यनवच्छिन्ने शान्ते शान्तात्मनि स्थिते । चेत्यं न संभवत्येव कः किं चेतयते कथम् ॥ ५६ ॥

dikkālādyanavacchinne śānte śāntātmani sthite | cetyaṃ na saṃbhavatyeva kaḥ kiṃ cetayate katham || 56 ||

In the state where there is no limitation by direction, time, and other factors, and the self is calm and peaceful, the concept of 'I' does not arise. Who thinks what and how?

जब दिशा, समय और अन्य बातों से कोई सीमा नहीं होती और आत्मा शान्त होती है, तब 'मैं' का विचार उत्पन्न नहीं होता। कौन क्या सोचता है और कैसे?

7.29.57

संकल्पः स्वप्नदृश्येऽन्तः संविन्मात्रात्मतां विना । यथान्यवद्भवेद्भूपास्तथैवास्मिन्बहिर्गते ॥ ५७ ॥

saṃkalpaḥ svapnadṛśye'ntaḥ saṃvinmātrātmatāṃ vinā | yathānyavadbhavedbhūpāstathaivāsminbahirgate || 57 ||

Just as a dream is perceived within oneself without the sense of pure consciousness, similarly, the resolution of the mind is perceived outside oneself.

जैसे स्वप्न शुद्ध चेतना के बिना अपने अन्दर देखा जाता है, उसी तरह मन का संकल्प अपने बाहर देखा जाता है।

7.29.58

मनोबुद्ध्यादयश्चैते संविन्मात्रानुरूपिणः । मनोबुद्ध्यादिशब्दार्थभावितास्तु जडात्मकाः ॥ ५८ ॥

manobuddhyādayaścaitesaṃvinmātrānurūpiṇaḥ | manobuddhyādiśabdārthabhāvitāstu jaḍātmakāḥ || 58 ||

The mind, intellect, and other faculties are in accordance with pure consciousness. However, the meanings of the words 'mind,' 'intellect,' etc., are inert.

मन, बुद्धि और अन्य इन्द्रियाँ शुद्ध चेतना के अनुरूप होती हैं। हालाँकि, 'मन,' 'बुद्धि' आदि शब्दों के अर्थ जड़ होते हैं।

7.29.59

संविन्मात्रे समे स्वच्छे सबाह्याभ्यन्तरे तते । अभिन्ने भेदबुद्धिर्वा किमनर्थाय जृम्भते ॥ ५९ ॥

saṃvinmātre same svacche sabāhyābhyantare tate | abhinne bhedabuddhirvā kimanarthāya jṛmbhate || 59 ||

In the pure, clear, and all-pervading consciousness, which is undivided, why does the notion of difference arise?

शुद्ध, स्वच्छ और सर्वव्यापी चेतना में, जो अभिन्न है, भेद की बुद्धि किसलिए उठती है?

7.29.60

संविन्मात्रस्य शुद्धस्य शून्यस्य च किमन्तरम् । यच्चान्तरं तद्विबुधा विदन्त्येति न वाग्गतिम् ॥ ६० ॥

saṃvinmātrasya śuddhasya śūnyasya ca kimantaram | yaccāntaraṃ tadvibudhā vidantyeti na vāggatim || 60 ||

What is the difference between pure consciousness and emptiness? That which is the difference, the wise know, and it does not come within the realm of speech.

शुद्ध चेतना और शून्यता में क्या अन्तर है? जो अन्तर है, वह विद्वान जानते हैं, और वह वाणी के दायरे में नहीं आता।

7.29.61

सदसद्रूप आभासो यथा किमपि लक्ष्यते । तमसीक्षितयत्नेन ब्रह्मणीदं तथा जगत् ॥ ६१ ॥

sadasadrūpa ābhāso yathā kimapi lakṣyate | tamasīkṣitayatnena brahmaṇīdaṃ tathā jagat || 61 ||

Just as the appearance of existence and non-existence is perceived in some way, similarly, this world is perceived in Brahman through the effort of ignorance.

जैसे अस्तित्व और अनस्तित्व का आभास किसी तरह देखा जाता है, वैसे ही अज्ञान के प्रयास से यह जगत ब्रह्म में देखा जाता है।

7.29.62

अयमाकाशमेवाहं यदि शाम्याम्यवासनम् । वासनां तु न बध्नासि स्थित एवासि चिन्नभः ॥ ६२ ॥

ayamākāśamevāhaṃ yadi śāmyāmyavāsanam | vāsanāṃ tu na badhnāsi sthita evāsi cinnabhaḥ || 62 ||

If I, who am the sky, become calm through the cessation of desires, then you, O Consciousness, remain steady and do not bind desires.

यदि मैं, जो आकाश हूँ, इच्छाओं के अंत से शांत हो जाऊँ, तो तुम, हे चेतना, स्थिर रहते हो और इच्छाओं को नहीं बाँधते।

7.29.63

इति निश्चयवानन्तस्तज्ज्ञोऽज्ञ इव संज्ञया । चिद्वपुर्विद्यमानोऽपि शाम्यत्यसदिव स्वयम् ॥ ६३ ॥

iti niścayavānantastajjñojñā iva saṃjñayā | cidvapurvidyamāno'pi śāmyatyasadiva svayam || 63 ||

Thus, being certain within, although known as ignorant, the one who is the form of consciousness, even while existing, becomes calm like the non-existent.

इस प्रकार, अंतःकरण में निश्चयवान होकर, यद्यपि अज्ञानी के रूप में जाना जाता है, चेतना का रूप धारण करने वाला, अस्तित्व में होते हुए भी, अनस्तित्व की तरह शांत हो जाता है।

7.29.64

जीवानां ज्ञप्तिगुप्तेन ज्वलन्नज्ञानवायुना । अविद्याग्निः प्रबुद्धानां पुनस्तेनैव शाम्यति ॥ ६४ ॥

jīvānāṃ jñaptiguptena jvalannajñānavāyunā | avidyāgniḥ prabuddhānāṃ punastenaiva śāmyati || 64 ||

The fire of ignorance, which burns with the wind of ignorance concealing knowledge, is extinguished in the awakened ones by that very wind.

ज्ञान को छिपाने वाले अज्ञान के वायु से जलने वाली अविद्या की अग्नि, जाग्रत लोगों में उसी वायु से बुझ जाती है।

7.29.65

अजडानां यदज्ञानं स्थाणूनामिव शाम्यताम् । तमाहुर्मोक्षमक्षुब्धमासितं पदमक्षयम् ॥ ६५ ॥

ajaḍānāṃ yadajñānaṃ sthāṇūnāmiva śāmyatām | tamāhurmokṣamakṣubdhamāsitaṃ padamakṣayam || 65 ||

The ignorance of the non-inert ones is said to be calmed like that of immovable objects. That is called the undisturbed liberation, the eternal and imperishable state.

निष्क्रिय नहीं होने वालों का अज्ञान अचल वस्तुओं की तरह शांत हो जाता है। वह अविचलित मोक्ष कहलाता है, जो सनातन और अविनाशी अवस्था है।

7.29.66

ज्ञत्वेन ज्ञत्वमासाद्य मुनिर्भवति मानवः । अज्ञत्वादज्ञतामेत्य प्रयाति पशुवृक्षताम् ॥ ६६ ॥

jñatvena jñatvamāsādya munirbhavati mānavaḥ | ajñatvādajñatāmetya prayāti paśuvṛkṣatām || 66 ||

By attaining knowledge, a person becomes a sage; from ignorance, one attains ignorance and goes to the state of animals and trees.

ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य मुनि बन जाता है; अज्ञान से अज्ञान प्राप्त करके पशु और वृक्ष की स्थिति में जाता है।

7.29.67

अहं ब्रह्म जगच्चेदमित्यविद्यामयो भ्रमः । असत्यः प्रेक्षया ध्वान्तं दीपेनेव न लभ्यते ॥ ६७ ॥

ahaṃ brahma jagaccedamityavidyāmayo bhramaḥ | asatyaḥ prekṣayā dhvāntaṃ dīpeneve na labhyate || 67 ||

The delusion 'I am Brahman, and this is the world' is born of ignorance. This false perception, like darkness, cannot be dispelled by mere observation, just as a lamp cannot dispel darkness.

यह भ्रम 'मैं ब्रह्म हूँ, और यह जगत है' अज्ञान से उत्पन्न होता है। यह झूठी धारणा, अंधेरे की तरह, केवल देखने से दूर नहीं हो सकती, जैसे दीया अंधेरे को दूर नहीं कर सकता।

7.29.68

समग्रकरणग्रामोऽप्यसंकल्पो विवेदनः । न किंचिदप्यनुभवत्यन्तर्बाह्ये च शान्तधीः ॥ ६८ ॥

samagrakaraṇagrāmo'pyasaṃkalpo vivedanaḥ | na kiṃcidapyanubhavatyantarbāhye ca śāntadhīḥ || 68 ||

Even with all the senses intact, one who is free from desires and has discriminative knowledge does not experience anything, either internally or externally, with a peaceful mind.

सभी इंद्रियाँ संपूर्ण होने पर भी, जो इच्छाओं से मुक्त है और विवेकी ज्ञान रखता है, वह शांत मन से आंतरिक या बाह्य रूप से कुछ भी अनुभव नहीं करता।

7.29.69

सुषुप्तत्व इव स्वप्नः समाधौ प्रविलीयते । दृश्यं सर्वं ज्ञबोधेऽन्तः पुनः स्वात्मैव लक्ष्यते ॥ ६९ ॥

suṣuptatva iva svapnaḥ samādhau pravilīyate | dṛśyaṃ sarvaṃ jñabodhe'ntaḥ punaḥ svātmaiva lakṣyate || 69 ||

Just as a dream dissolves into deep sleep, in the state of samadhi, all perceptions dissolve into the knowledge of the self, and then only the self is perceived.

जैसे स्वप्न गहरी नींद में विलीन हो जाता है, समाधि की अवस्था में, सभी अनुभूतियाँ आत्मज्ञान में विलीन हो जाती हैं, और फिर केवल आत्मा ही दिखाई देती है।

7.29.70

नीलत्वं च यथा व्योम्नि तथा पृथ्व्यादिता शिवे । भ्रान्तिमात्रादृते नान्यद्यथा व्योम तथा शिवः ॥ ७० ॥

nīlatvaṃ ca yathā vyomni tathā pṛthvyāditā śive | bhrāntimātrādṛte nānyadyathā vyoma tathā śivaḥ || 70 ||

Just as the blueness of the sky is an illusion, so too are the elements like earth in Shiva. Apart from mere delusion, there is nothing else, just as the sky is nothing but space.

जैसे आकाश का नीलापन एक भ्रम है, वैसे ही पृथ्वी जैसे तत्व शिव में भी भ्रम हैं। भ्रम के अलावा कुछ और नहीं है, जैसे आकाश केवल अंतरिक्ष है।

7.29.71

वासनाभिरुपेतोऽपि समस्ताभिरवासनः भवत्यसावसत्सर्वमिदमित्येव यस्य धीः ॥ ७१ ॥

vāsanābhirupeto'pi samastābhiravāsanaḥ bhavatyasāvasatsarvamidamityeva yasya dhīḥ || 71 ||

Though endowed with all latent impressions, one who is free from all impressions sees this entire universe as unreal, as merely 'this.'

जो सभी वासनाओं से युक्त होते हुए भी सभी वासनाओं से रहित है, वह इस सम्पूर्ण ब्रह्मांड को असत् और केवल 'यह' मात्र के रूप में देखता है।

7.29.72

संकल्पेष्वद्भुतं भव्य स्वप्नमायेन्द्रजालकम् । यद्वत्संसृतयस्तद्वद्दृष्टेऽप्यास्था किमत्र वै ॥ ७२ ॥

saṃkalpeṣvadbhutaṃ bhavya svapnamāyendrajālakam yadvatsaṃsṛtayastadbadṛṣṭe'pyāsthā kimatra vai || 72 ||

Like a marvelous, auspicious dream or a magical illusion, whatever this worldly existence appears to be, why cling to it when it is seen as such?

यह संसार एक अद्भुत, शुभ स्वप्न या माया का जाल जैसा है। जब इसे ऐसा देखा जाता है, तो फिर इस पर आसक्ति क्यों की जाए?

7.29.73

न दुःखमस्ति न सुखं न पुण्यं न च पातकम्। न किंचित्कस्यचिन्नष्टं कर्तुर्भोक्तुरसंभवात्॥ ७३ ॥

na duḥkhamasti na sukhaṃ na puṇyaṃ na ca pātakam na kiṃcitkasyacinnaṣṭaṃ karturbhokturasaṃbhavāt || 73 ||

There is no sorrow, no happiness, no merit, no sin, nothing whatsoever is lost for anyone, because the doer and the enjoyer do not exist.

न दुःख है, न सुख है, न पुण्य है, न पाप है, और न ही किसी का कुछ खोता है, क्योंकि कर्ता और भोक्ता का अस्तित्व ही नहीं है।

7.29.74

सर्वं शून्यं निरालम्बं ममता प्रत्ययोऽप्ययम्। द्विचन्द्रस्वप्नपुरवद्यस्यासौ सोऽपि नास्ति नः॥ ७४ ॥

sarvaṃ śūnyaṃ nirālambaṃ mamatāpratyayo'pyayam dvicandrasvapnapuravadyasyāsau so'pi nāsti naḥ || 74 ||

All is void, without support, and even this sense of mine-ness is unreal, like a city seen in a dream with two moons. For us, even that does not exist.

सब कुछ शून्य है, निराधार है, और यह 'मेरा' का भाव भी मिथ्या है, जैसे स्वप्न में दो चंद्रमाओं वाला नगर। हमारे लिए तो वह भी नहीं है।

7.29.75

केवलो व्यवहारस्थः काष्ठमौनगतोऽथ वा। काष्ठपाषाणवत्तिष्ठन् ब्रह्मतामधिगच्छति॥ ७५ ॥

kevalo vyavahārasthaḥ kāṣṭhamaunagato'tha vā kāṣṭhapāṣāṇavattiṣṭhanbrahmatāmadhigacchati || 75 ||

Remaining solely in worldly dealings, or absorbed in the silence of wood, or standing like wood or stone, one attains the state of Brahman.

केवल सांसारिक व्यवहार में रहते हुए, या लकड़ी के समान मौन में लीन होकर, या लकड़ी-पत्थर की तरह स्थिर रहकर, व्यक्ति ब्रह्म की अवस्था को प्राप्त करता है।

7.29.76

शान्तत्वे चित्तत्वे नानानानात्मनीह शिवे। अवयविनोऽवयवित्वे त्विह युक्तिर्विद्यते नान्या॥ ७६ ॥

śāntatve cittatve nānānānātmānīha śive | avayavino'vayavitve tv iha yuktirvidyate nānyā || 76 ||

In the state of peace and consciousness, in the various individual selves, there is Shiva. In the context of the parts and the whole, there is a logical connection here, not elsewhere.

शान्ति और चेतना की स्थिति में, विभिन्न व्यक्तिगत आत्माओं में शिव है। भागों और समूह के संदर्भ में, यहाँ एक तर्कसंगत संबंध है, कहीं और नहीं।

7.29.77

अर्थागतस्वभावस्य च नैव च संभवादमले। एतस्मिन्सर्वगते ब्रह्मणि नास्ति स्वभावोक्तिः॥ ७७ ॥

arthāgatasvabhāvasya ca naiva ca sambhavādamale | etasmin sarvagate brahmaṇi nāsti svabhāvoktiḥ || 77 ||

The nature of the meaning that is inherent does not exist in the pure. In this all-pervading Brahman, there is no description of inherent nature.

जो अर्थ अंतर्निहित है, उसका स्वभाव शुद्ध में नहीं है। इस सर्वव्यापी ब्रह्म में, अंतर्निहित स्वभाव का कोई वर्णन नहीं है।

7.29.78

न च नास्तिकोपलम्भात्संवित्तेरस्तिता च नैवाजे । ग्राह्यग्राहकदृष्टेरसंभवादस्ति किंचिदपि ॥ ७८ ॥

na ca nāstikopalambhāt saṃvitterastitā ca naiva aje | grāhyagrāhakadṛṣṭer asaṃbhāvād asti kiṃcidapi || 78 ||

There is no existence of consciousness due to the non-perception of the non-existent. Due to the impossibility of the perception of the perceiver and the perceived, there is nothing at all.

असत् के अनुभव के कारण चेतना का अस्तित्व नहीं है। ग्राहक और ग्राह्य के दृष्टिकोण की असंभावना के कारण, कुछ भी नहीं है।

7.29.79

शमममलमहार्यमार्यजुष्टं शिवमजमक्षयमासितं समं यत् । तदवितथपदं तदास्व शान्तं पिब लल भुङ्क्ष्व भवानयं हि नास्ति ॥ ७९ ॥

śamamamalamahāryamāryajuṣṭaṃ śivamajamakṣayamāsitaṃ samaṃ yat | tadavitathapadaṃ tadāsv śāntaṃ piba lala bhuṅkṣva bhavānayaṃ hi nāsti || 79 ||

That which is peaceful, pure, noble, revered by the noble, auspicious, unborn, imperishable, and equal, that is the true word. Be peaceful, drink, enjoy, for this is not.

जो शान्त, शुद्ध, उत्तम, श्रेष्ठों द्वारा पूजित, शुभ, अजन्मा, अविनाशी और समान है, वह सत्य शब्द है। शान्त हो, पीओ, भोग करो, क्योंकि यह नहीं है।

Chapter 30

7.30.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अहंतैव पराऽविद्या निर्वाणपदरोधिनी । तयैवान्विष्यते मूढैस्तदित्युन्मत्तचेष्टितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ahaṃtaiva parā'vidyā nirvāṇapadarodhinī | tayaivānviṣyate mūḍhais tad ity unmattraceṣṭitam || 1 ||

Vasishtha said: The ego itself is the supreme ignorance that obstructs the path to liberation. It is followed by the foolish, and such behavior is like that of a madman.

वसिष्ठ ने कहा: अहंकार ही परम अज्ञान है जो मुक्ति के मार्ग को रोकता है। यह मूर्खों द्वारा अनुसरण किया जाता है, और ऐसा व्यवहार पागल की तरह होता है।

7.30.2

अहंतैवालमज्ञानादज्ञत्वस्य निदर्शनम् । न हि तज्ज्ञस्य शान्तस्य ममाहमिति विद्यते ॥ २ ॥

ahaṃtaiva alam ajñānād ajñatvasya nidarśanam | na hi taj jñasya śāntasya mamāham iti vidyate || 2 ||

The ego itself is sufficient for ignorance; it is the indication of ignorance. Indeed, for the wise and peaceful person, the sense of 'I' and 'mine' does not exist.

अहंकार ही अज्ञान के लिए पर्याप्त है; यह अज्ञान का संकेत है। वास्तव में, ज्ञानी और शांत व्यक्ति के लिए 'मैं' और 'मेरा' का भाव नहीं होता।

7.30.3

अहंतामलमुत्सृज्य निर्वाणः खमिवामलः । सदेहमपदेहं वा ज्ञस्तिष्ठति गतज्वरः ॥ ३ ॥

ahaṃtāmalaṃ utsṛjya nirvāṇaḥ kham ivāmalaḥ | sadeham apadehaṃ vā jñas tiṣṭhati gatajvaraḥ || 3 ||

Having abandoned the impurity of ego, one becomes liberated like the pure sky. Whether in the body or without the body, the wise one remains free from afflictions.

अहंकार की मलिनता को त्यागकर, व्यक्ति शुद्ध आकाश की तरह मुक्त हो जाता है। चाहे शरीर में हो या शरीर के बिना, ज्ञानी व्यक्ति कष्टों से मुक्त रहता है।

7.30.4

न तथा शरदाकाशं न तथा स्तिमितोऽर्णवः । पूर्णेन्दुमध्यं न तथा यथा ज्ञः परिराजते ॥ ४ ॥

na tathā śaradākāśaṃ na tathā stimito'rṇavaḥ | pūrṇendumadhyaṃ na tathā yathā jñaḥ parirājate || 4 ||

Neither the autumn sky, nor the calm ocean, nor the full moon can shine as brightly as the wise one.

न तो शरद ऋतु का आकाश, न शांत समुद्र, न पूर्णिमा का चंद्रमा उतना चमकता है जितना ज्ञानी व्यक्ति चमकता है।

7.30.5

चित्रसंगरयुद्धस्य सैन्यस्याक्षुब्धता यथा । तथैव समता ज्ञस्य व्यवहारवतोपि च ॥ ५ ॥

citrasaṃgarayuddhasya sainyasyākṣubdhatā yathā | tathaiva samatā jñasya vyavahāravato'pi ca || 5 ||

Just as the army remains undisturbed during a colorful battle, so too the wise one remains equanimous even while engaged in worldly affairs.

जैसे रंगीन युद्ध में सेना अविचलित रहती है, वैसे ही ज्ञानी व्यक्ति संसारिक कार्यों में लगे हुए भी समान रहता है।

7.30.6

निर्वाणैकतया ज्ञस्य वासनैव न वासना । लेखादामोपमा त्वब्धेरूर्म्यादि न जलेतरत् ॥ ६ ॥

nirvāṇaikatayā jñasya vāsanaiava na vāsanā | lekhādāmopamā tvabdherūrmyādi na jaletarat || 6 ||

For the one who knows the oneness of Nirvana, there is no desire; it is like the waves of the ocean, not different from the water.

जिसने निर्वाण की एकता को जान लिया है, उसके लिए कोई वासना नहीं है; यह समुद्र की लहरों की तरह है, जो पानी से अलग नहीं है।

7.30.7

तरत्तरङ्गो जलधिर्जलमेव यथाखिलम् । दृश्योच्छूनमपि ब्रह्म तथा ब्रह्मैव नेतरत् ॥ ७ ॥

tarattaraṅgo jaladhirjalameva yathākhilam | dṛśyocchūnamapi brahma tathā brahmaiva netarat || 7 ||

Just as the ocean with its waves is entirely water, so too is the visible universe, including its emptiness, entirely Brahman and nothing else.

जैसे समुद्र और उसकी लहरें पूरी तरह से पानी ही हैं, वैसे ही दृश्य ब्रह्मांड, उसकी शून्यता सहित, पूरी तरह से ब्रह्म ही है और कुछ नहीं।

7.30.8

अन्तरस्तंगतोऽक्षुब्धो बहिरस्तंगतः शमी । विद्यते चोदितो यस्य स मुक्त इति कथ्यते ॥ ८ ॥

antarastagato'kṣubdho bahirastagataḥ śamī | vidyate codito yasya sa mukta iti kathyate || 8 ||

One who remains undisturbed within and without, who is calm and composed, and who is awakened, is said to be liberated.

जो अंदर और बाहर दोनों जगह अविचलित रहता है, जो शांत और संयमी है, और जो जाग्रत है, उसे मुक्त कहा जाता है।

7.30.9

अहंत्वसर्गरूपेण संवित्संविन्मये परे । स्फुरत्यम्भोम्भसीवातो नानातेयं किमात्मिका ॥ ९ ॥

ahantvasargarūpeṇa saṃvitsaṃvinmaye pare | sphuratyambhombhasevāto nānāteyaṃ kimātmikā || 9 ||

In the supreme consciousness, which is of the nature of pure awareness, the sense of 'I' manifests like waves in the ocean. What is this diversity?

परम चेतना में, जो शुद्ध चेतना की प्रकृति की है, 'मैं' की भावना समुद्र की लहरों की तरह प्रकट होती है। यह विविधता क्या है?

7.30.10

धूमस्य स्फुरतो व्योम्नि यथा गजरथादयः । व्यूहा धूमान्न ते भिन्नास्तथा सर्गाः परे पदे ॥ १० ॥

dhūmasya sphurato vyomni yathā gajarathādayaḥ | vyūhā dhūmānna te bhinnāstathā sargāḥ pare pade || 10 ||

Just as the forms of elephants and chariots appear in the sky from the smoke, those forms are not different from the smoke. Similarly, the creations are not different from the supreme reality.

जैसे धुएँ से आकाश में हाथी और रथ के रूप प्रकट होते हैं, वैसे ही वे रूप धुएँ से अलग नहीं होते। वैसे ही, सृष्टि परम वास्तविकता से अलग नहीं है।

7.30.11

संविद्भ्रान्तिविचारेण भ्रान्त्यलाभविलासिनः । विजयध्वं विषादं माऽऽगता ज्ञास्तज्ज्ञता हि वः ॥ ११ ॥

saṃvidbhrāntivicāreṇa bhrāntyalābhavilāsinaḥ | vijayadhvaṃ viṣādaṃ mā'āgatā jñāstajjñatā hi vaḥ || 11 ||

Through the investigation of the delusion of consciousness, those who delight in the attainment of delusion, do not succumb to despair, for you possess the knowledge of the knower.

चेतना के भ्रम की जांच के द्वारा, जो भ्रम की प्राप्ति में आनंद लेते हैं, वे निराशा में न पड़ें, क्योंकि आपमें ज्ञाता का ज्ञान है।

7.30.12

अङ्कुरोऽनुभवत्यन्तर्वृक्षपत्रफलं यथा । तथा जगदहंत्वे ज्ञः स्वात्मा स्वात्मखमप्यलम् ॥ १२ ॥

aṅkuro'nubhavatyantarvṛkṣapatraphalaṃ yathā | tathā jagadahaṃtve jñaḥ svātmā svātmakhamapyalam || 12 ||

Just as a seed experiences within itself the tree, leaves, and fruits, so does the knower, the self, experience the entire universe within the self.

जैसे एक बीज अपने अंदर पेड़, पत्ते और फलों का अनुभव करता है, वैसे ही ज्ञाता, स्वयं, सम्पूर्ण ब्रह्मांड का अनुभव अपने अंदर करता है।

7.30.13

रूपालोकमनःसत्ता ज्वालार्चिष्विव दण्डता । सत्योपि च न सन्त्येता भ्रान्तेश्चित्ताबला इव ॥ १३ ॥

rūpālokamanasaḥsattā jvālārciṣviva daṇḍatā | satyopi ca na santyetā bhrānteścittābalā iva || 13 ||

The forms, perceptions, and mental states are like the flickering of a flame, even though they appear real, they are not, like the illusions of a confused mind.

रूप, अलोक, और मानसिक अवस्थाएँ लौ की झिलमिलाहट की तरह हैं, भले ही वे वास्तविक लगें, वे नहीं हैं, जैसे भ्रमित मन के भ्रम।

7.30.14

यथा सुखं यथारम्भं यथा नाशं यथोदयम् । यथा देशं यथा कालमजराः शान्तमास्यताम् ॥ १४ ॥

yathā sukhaṃ yathārambhaṃ yathā nāśaṃ yathodayam | yathā deśaṃ yathā kālamajarāḥ śāntamāsyatām || 14 ||

As happiness, as beginning, as destruction, as arising, as place, as time, may the ageless one remain in peace.

जैसे सुख, जैसे आरंभ, जैसे नाश, जैसे उदय, जैसे स्थान, जैसे समय, अजर शांति में रहे।

7.30.15

इष्टानिष्टोपलम्भेषु शान्तो व्यवहरन्नपि । शववन्नान्यतामन्तर्निर्वाणोऽनुभवत्यलम् ॥ १५ ॥

iṣṭāniṣṭopalambheṣu śānto vyavaharannapi | śavavannānyatāmantrarnirvāṇo'nubhavaty alam || 15 ||

Even while experiencing desirable and undesirable situations, remaining peaceful, like a corpse, without any internal difference, one experiences liberation.

इच्छित और अनिच्छित स्थितियों का अनुभव करते हुए भी, शांत रहते हुए, जैसे एक शव, अंतर में कोई अंतर नहीं, एक मुक्त आत्मा अनुभव करता है।

7.30.16

अमनोवासनाहंता धत्ते यच्च जगच्चिरम् । जीवतोऽजीवतश्चैव चिज्जीवः स परं पदम् ॥ १६ ॥

amanovāsanāhaṃtā dhatte yacca jagacciram | jīvato'jīvataścaiva cijjīvaḥ sa paraṃ padam || 16 ||

The one who destroys the desires of the mind sustains the eternal world | Both the living and the non-living, that conscious being is the supreme state || 16 ||

मन की वासनाओं का नाश करने वाला जो चिरस्थायी जगत् को धारण करता है | जीवित और निर्जीव दोनों को चित् जीव वह परम पद है || 16 ||

7.30.17

सत्तैव जडवाहेन दुःखभाराय केवलम् । नृणां पाशावबद्धानां पोतकानामिवार्णवे ॥ १७ ॥

sattaiva jaḍavāhena duḥkhabhārāya kevalam | nṛṇāṃ pāśāvabaddhānāṃ potakānāmivārṇave || 17 ||

Existence alone, carried by the inert, is solely for the burden of sorrow | Like boats tied with ropes in the ocean for humans || 17 ||

सत्ता ही, जड़ द्वारा वहन की जाती है, दुःख के भार के लिए केवल | मानवों के लिए जो पाशों से बंधे हुए हैं, समुद्र में नावों की तरह || 17 ||

7.30.18

मोक्षसत्ता श्रयति तं नाज्ञानानुभवादिव । मृतेन यत्किल प्राप्यं जीवन्प्राप्नोति तत्कथम् ॥ १८ ॥

mokṣasattā śrayati taṃ nājñānānubhavādiva | mṛtena yatkila prāpyaṃ jīvanprāpnoti tatkatham || 18 ||

The state of liberation seeks that which is not experienced through ignorance | How can one attain in life what is to be attained by death || 18 ||

मोक्ष की सत्ता उसकी शरण लेती है जो अज्ञान के अनुभव से नहीं होती | मृत्यु से जो प्राप्त होता है, जीवन में उसे कैसे प्राप्त किया जाए || 18 ||

7.30.19

यद्यत्संकल्पयते तत्तत्संकल्पादेव नाशभाक् । न संभवति यत्रैतत्तत्सत्यं पदमक्षयम् ॥ १९ ॥

yadyatsaṃkalpayate tattatsaṃkalpādeva nāśabhāk | na saṃbhavati yatraitattatsatyaṃ padamakṣayam || 19 ||

Whatever one imagines, that very thing perishes from imagination | Where this does not happen, that is the true, imperishable state || 19 ||

जो कुछ भी मनुष्य संकल्प करता है, वही संकल्प से नष्ट हो जाता है | जहाँ यह नहीं होता, वही सत्य अक्षय पद है || 19 ||

7.30.20

नान्यो न चाहमस्मीति भावनान्निर्भयो भव । सत्यं युक्तं भवत्येतद्विषमप्यमृतं यथा ॥ २० ॥

nānyo na cāhamasmīti bhāvanānnirbhayo bhava | satyaṃ yuktaṃ bhavatyetadviṣamapyamṛtaṃ yathā || 20 ||

With the feeling that 'I am not another, nor am I this', become fearless | This is true and appropriate, even the poison becomes nectar || 20 ||

यह भावना करके कि 'मैं दूसरा नहीं हूँ, न ही मैं यह हूँ', निर्भय हो जाओ | यह सत्य और उचित है, विष भी अमृत बन जाता है || 20 ||

7.30.21

जडं देहादि चित्तान्तं विचार्य सकलं वपुःलभ्यते नाहमस्मीति तस्मान्नास्मीति सत्यता ॥ २१ ॥

jaḍaṃ dehādi cittāntaṃ vicārya sakalaṃ vapuḥlabhyate nāhamasmīti tasmānnāsmīti satyatā || 21 ||

By analyzing the entire body from the inert physical body to the mind, one realizes 'I am not this.' Therefore, the truth is 'I am not this.'

शरीर से लेकर मन तक के सभी अंगों का विचार करने पर, यह ज्ञान होता है कि 'मैं यह नहीं हूँ।' इसलिए, सत्य यह है कि 'मैं यह नहीं हूँ।'

7.30.22

शान्ताशेषविशेषाणामहंतान्ताविचारणात्केवलं मुक्ततोदेति न तु किंचिद्विनश्यति ॥ २२ ॥

śāntāśeṣaviśeṣāṇāmahaṃtāntāvicāraṇātkevalaṃ muktatodeti na tu kiṃcidvinaśyati || 22 ||

By investigating the ego, which is the essence of all peaceful and distinct qualities, one attains liberation. Nothing is destroyed.

सभी शांत और विशिष्ट गुणों के सार तत्व अहंकार का विचार करने पर, मुक्ति प्राप्त होती है। कुछ भी नष्ट नहीं होता।

7.30.23

भोगत्यागविचारात्मपौरुषान्नान्यदत्र हिउपयुज्यत इत्यज्ञाः स्वात्मैवाशु प्रणम्यताम् ॥ २३ ॥

bhogatyāgavicārātmapauruṣānnānyadatra hiupayujyata ityajñāḥ svātmaivāśu praṇamyatām || 23 ||

Through the investigation of the renunciation of enjoyment and the self's power, one realizes that nothing else is useful here. Thus, the ignorant should quickly surrender to their own self.

भोग के त्याग और आत्मा की शक्ति का विचार करने पर, यह ज्ञान होता है कि यहाँ कुछ और उपयोगी नहीं है। इसलिए, अज्ञानी अपने आत्मा को जल्दी से समर्पित करें।

7.30.24

निर्वासनं मननमेवमुदाहरन्ति मोक्षं विना भवति तन्न च जातु बोधात्सन्नो जगद्भ्रम इतीह परः प्रबोधो न प्रत्ययोऽत्र यदतः सुचिराय बन्धः ॥ २४ ॥

nirvāsanaṃ mananamevamudāharanti mokṣaṃ vinā bhavati tanna ca jātu bodhātsanno jagadbhrama itīha paraḥ prabodho na pratyayo'tra yadataḥ sucirāya bandhaḥ || 24 ||

Thus, they declare that meditation is the expulsion of ignorance. Without liberation, it does not exist. And never does enlightenment arise from knowledge. Here, the supreme awakening is not a belief, because from that arises long-lasting bondage.

इस प्रकार, वे कहते हैं कि ध्यान अज्ञान का निराकरण है। मुक्ति के बिना, यह अस्तित्व नहीं रखता। और ज्ञान से कभी भी बोध नहीं उत्पन्न होता। यहाँ, परम जागरण कोई विश्वास नहीं है, क्योंकि उससे लंबे समय तक बंधन उत्पन्न होता है।

7.30.25

जगदहमसदित्युपेत्य सम्यग्जनधनदारशरीरनिर्व्यपेक्षःभवति हि स च चेतनस्वरूपः परिमितखं खलु नान्यथास्ति मुक्तिः ॥ २५ ॥

jagadahamasadityupetya samyagjanadhanadāraśarīranirvyapekṣaḥbhavati hi sa ca cetanasvarūpaḥ parimitakhaṃ khalu nānyathāsti muktiḥ || 25 ||

By realizing 'I am not the world,' one becomes independent of wealth, wife, and body. Indeed, that one is of the nature of consciousness. There is no other liberation.

यह ज्ञान होने पर कि 'मैं संसार नहीं हूँ,' मनुष्य धन, पत्नी और शरीर से स्वतंत्र हो जाता है। वास्तव में, वह चेतना के स्वरूप का है। कोई और मुक्ति नहीं है।

Chapter 31

7.31.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । सर्वात्मनि चिदाभासे तदेवाश्वनुभूयते । संवेद्यते यदेवान्तरसत्यं वस्त्ववस्तु वा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sarvātmani cidābhāse tadevāśvanubhūyate | saṃvedyate yadevāntarasatyaṃ vastvavastu vā || 1 ||

Shri Vasistha said: In the universal self, which is a reflection of consciousness, only that is experienced. Whatever is perceived internally, whether real or unreal, is experienced.

श्री वसिष्ठ ने कहा: चेतना के प्रतिबिंब वाले सर्वात्मा में केवल वही अनुभव किया जाता है। जो भी आंतरिक रूप से सत्य है, वास्तविक या अवास्तविक, वह अनुभव किया जाता है।

7.31.2

तदेवाभ्यासतः पूर्वं बाह्यार्थानुभवात्मना । स्फुरतीव बहिष्ट्वेन स्वस्वप्नोऽत्र निदर्शनम् ॥ २ ॥

tadevābhyāsataḥ pūrvaṃ bāhyārthānubhavātmanā | sphuratīva bahiṣṭvena svasvapno'tra nidarśanam || 2 ||

That same experience, through repeated practice, first appears as an external object. This is like one's own dream, which serves as an example here.

वही अनुभव, बार-बार अभ्यास करने से, पहले बाहरी वस्तु के रूप में प्रकट होता है। यह अपने स्वप्न की तरह है, जो यहाँ एक उदाहरण के रूप में काम करता है।

7.31.3

चिद्रूपं सर्वमेतच्च चिदच्छा गगनादपि । चिच्चिनोति चिदेवातो नैतत्किंचन कुत्रचित् ॥ ३ ॥

cidrūpaṃ sarvametacca cidacchā gaganādapi | ciccinoti cidevāto naitatkiṃcana kutracit || 3 ||

All this is of the nature of consciousness. Consciousness pervades even the sky. Consciousness alone consumes consciousness; there is nothing anywhere.

यह सब कुछ चेतना के स्वरूप का है। चेतना आकाश तक भी व्याप्त है। चेतना ही चेतना को ग्रहण करती है; कहीं कुछ भी नहीं है।

7.31.4

न नाशो नास्ति नानर्थो न जन्ममरणे न खम् । न शून्यता न नानास्ति सर्वं ब्रह्मैव नैव च ॥ ४ ॥

na nāśo nāsti nānartho na janmamaraṇe na kham | na śūnyatā na nānāsti sarvaṃ brahmaiva naiva ca || 4 ||

There is no destruction, no non-existence, no meaninglessness, no birth or death, no sky. There is no emptiness, no diversity; everything is Brahman, and nothing else.

न तो विनाश है, न अस्तित्व नहीं है, न अर्थहीनता है, न जन्म और मृत्यु है, न आकाश है। न शून्यता है, न विविधता है; सब कुछ ब्रह्म है, और कुछ नहीं।

7.31.5

नाशे जगदहंत्वादेर्न किंचिदपि नश्यति । असतः किल नाशोऽपि स्वप्नादेः किं नु नश्यति ॥ ५ ॥

nāśe jagadahaṃtvāderna kiṃcidapi naśyati | asataḥ kila nāśo'pi svapnādeḥ kiṃ nu naśyati || 5 ||

In destruction, neither the world nor the sense of 'I' is destroyed. Indeed, even the non-existent is not destroyed. What then is destroyed in a dream?

विनाश में, न तो संसार नष्ट होता है और न ही 'मैं' का भाव। वास्तव में, असत् भी नष्ट नहीं होता। तो फिर स्वप्न में क्या नष्ट होता है?

7.31.6

मिथ्यावभासे संकल्पनगरे कैव नष्टतातथा जगदहंत्वादौ नाशो नासति विद्यते ॥ ६ ॥

mithyāvabhāse saṃkalpanagare kaiva naṣṭatātathā jagadahaṃtvādau nāśo nāsati vidyate || 6 ||

In the illusory appearance of the city of imagination, how can there be destruction? Thus, there is no destruction of the world in the beginning of the sense of 'I', nor is there non-existence.

भ्रामक अवधारणा के नगर में, नाश कैसे हो सकता है? इसलिए, 'मैं' की भावना की शुरुआत में जगत का नाश नहीं होता है, न ही अस्तित्व नहीं है।

7.31.7

कुतो जगदुपालम्भ इति चेत्तदवस्तुनिन निर्णयः संभवति खपुष्पाणां किमुच्यते ॥ ७ ॥

kuto jagadupālambha iti cettadavastunina nirṇayaḥ saṃbhavati khapuṣpāṇāṃ kimucyate || 7 ||

If it is asked, 'From where does the perception of the world arise?' This determination is made by the non-existent. What is said about the flowers in the sky?

यदि पूछा जाए, 'जगत की अनुभूति कहाँ से उत्पन्न होती है?' यह निर्णय अस्तित्वहीन द्वारा किया जाता है। आकाश के फूलों के बारे में क्या कहा जाता है?

7.31.8

निर्णय एष एवात्र यदशेषमभावयन्यथास्थितं यदाचारं पाषाण इव तिष्ठसि ॥ ८ ॥

nirṇaya eṣa evātra yadaśeṣamabhāvayanyathāsthitaṃ yadācāraṃ pāṣāṇa iva tiṣṭhasi || 8 ||

This is the only determination here, when you do not perceive anything as it is, you stand like a stone, following the behavior.

यह यहाँ एकमात्र निर्णय है, जब आप किसी चीज को उसके वास्तविक रूप में नहीं देखते हैं, तो आप एक पत्थर की तरह खड़े हो जाते हैं, व्यवहार का अनुसरण करते हुए।

7.31.9

जगत्संकल्पमात्रात्म तत्र तेऽर्थयुतं क्षणात्शाम्यत्यशेषेणेत्येव निर्णयः सर्गविभ्रमे ॥ ९ ॥

jagatsaṃkalpamātrātma tatra te'rthayutaṃ kṣaṇātśāmyatyaśeṣeṇetyeva nirṇayaḥ sargavibhrame || 9 ||

The essence of the world is mere imagination. There, in an instant, the meaning is understood, and complete peace is attained. This is the determination in the delusion of creation.

जगत का सार केवल कल्पना है। वहाँ, एक क्षण में, अर्थ समझ में आता है, और पूर्ण शांति प्राप्त होती है। यह सृजन के भ्रम में निर्णय है।

7.31.10

सर्गोऽनर्गल एवायं ब्रह्मात्मकतयाक्षयःअन्यथा तु न सर्गोऽयमस्ति नास्ति च सन्ति वा ॥ १० ॥

sarge'nargala evāyaṃ brahmātmakatayākṣayaḥanyathā tu na sargo'yamasti nāsti ca santi vā || 10 ||

In creation, this is indeed without obstruction, imperishable as Brahman. Otherwise, this creation does not exist, nor does it not exist, nor does it exist.

सृजन में, यह वास्तव में बाधा रहित है, ब्रह्म के रूप में अविनाशी। अन्यथा, यह सृजन नहीं है, न ही यह नहीं है, न ही यह है।

7.31.11

येषां च विद्यते सर्गः स्वप्नपुंसामिवासताम्। स सर्गः पुरुषास्ते च मृगतृष्णाम्बुवीचिवत्॥ ११॥

yeṣāṃ ca vidyate sargaḥ svapnapuṃsāmivāsatām | sa sargaḥ puruṣāste ca mṛgatṛṣṇāmbuvīcivat || 11 ||

For those who perceive creation as unreal, like a dream or an illusion, that creation and the beings within it are like a mirage.

जिनके लिए सृष्टि असत्य है, जैसे स्वप्न या भ्रम, वह सृष्टि और उसमें रहने वाले प्राणी मृगतृष्णा की तरह हैं।

7.31.12

असतामेव सद्भावमिव येषामुपेयुषाम्। न वयं निर्णयं विद्मो वन्ध्यापुत्रगिरामिव॥ १२॥

asatāmeva saddbhāvamiva yeṣāmupaeyuṣām | na vayaṃ nirṇayaṃ vidmo vandhyāputragirāmiva || 12 ||

For those who perceive the unreal as real, we cannot determine their true nature, just as the words of a barren woman's son are meaningless.

जिनके लिए असत्य को सत्य माना जाता है, हम उनकी वास्तविक प्रकृति का निर्णय नहीं कर सकते, जैसे वंध्या स्त्री के पुत्र की बातें निरर्थक होती हैं।

7.31.13

परिपूर्णार्णवप्रख्या काप्यपूर्वैव पूर्णता। तज्ज्ञानां द्रष्टृदृश्यांशदृष्टौ न हि पतन्ति ते॥ १३॥

paripūrṇārṇavaprakhyā kāpyapūrvaiva pūrṇatā | tajjñānāṃ draṣṭṛdṛśyāṃśadṛṣṭau na hi patanti te || 13 ||

Those who have the knowledge of the complete ocean-like fullness do not fall into the duality of the seer and the seen.

जो पूर्ण समुद्र-जैसी पूर्णता का ज्ञान रखते हैं, वे द्रष्टा और दृश्य के द्वैत में नहीं गिरते।

7.31.14

अचला इव निर्वाता दीपा इव समत्विषः। साचारा वा निराचारास्तिष्ठन्ति स्वस्थमेव ते॥ १४॥

acalā iva nirvātā dīpā iva samatviṣaḥ | sācārā vā nirācārāstiṣṭhanti svasthameva te || 14 ||

Those who are steadfast, like a lamp without wind, remain calm and composed whether they follow rituals or not.

जो लोग अचल (स्थिर) हैं, जैसे बिना हवा का दीपक, वे चाहे कर्मकांड करें या न करें, शांत और संतुलित रहते हैं।

7.31.15

आपूर्णैकार्णवप्रख्या काप्यन्तः पूर्णतोदिता। अन्तःशीतलता ज्ञप्तिर्ज्ञस्यापूर्वैव लक्ष्यते॥ १५॥

āpūrṇaikārṇavaprakhyā kāpyantaḥ pūrṇatoditā | antaḥśītalatā jñaptirjñasyāpūrvaiva lakṣyate || 15 ||

The knowledge of the complete ocean-like fullness is experienced as inner coolness and is perceived as unprecedented.

पूर्ण समुद्र-जैसी पूर्णता का ज्ञान अंतर्शीतलता के रूप में अनुभव किया जाता है और अनुपम के रूप में देखा जाता है।

7.31.16

वासनैवेह पुरुषः प्रेक्षिता सा न विद्यते। तां च न प्रेक्षते कश्चित्ततः संसार आगतः॥ १६॥

vāsanaiveha puruṣaḥ prekṣitā sā na vidyate | tāṃ ca na prekṣate kaścit tataḥ saṃsāra āgataḥ || 16 ||

Here, the person is seen as desire, but that does not exist. No one sees it, hence the worldly existence has come.

यहाँ, व्यक्ति वासना के रूप में देखा जाता है, लेकिन वह अस्तित्व में नहीं है। कोई भी उसे नहीं देखता, इसलिए संसार आया है।

7.31.17

अनालोकनसिद्धं यत्तदालोकान्न विद्यते । कृष्णाद्यनुपलम्भोऽत्र दृष्टान्तः स्पष्टचेष्टितः ॥ १७ ॥

anālokanasiddhaṃ yattadālokānna vidyate | kṛṣṇādyanupalambho'tra dṛṣṭāntaḥ spaṣṭaceṣṭitaḥ || 17 ||

That which is established without perception does not exist through perception. The example here is the non-perception of Krishna, which is clearly demonstrated.

जो दृष्टि के बिना स्थापित होता है, वह दृष्टि से अस्तित्व में नहीं आता। यहाँ कृष्ण की अनुपलब्धि का उदाहरण स्पष्ट रूप से दिखाया गया है।

7.31.18

भूतानि देहमांसादि तच्चासद्विभ्रमो जडः । बुद्ध्यहंकारचेतांसि तन्मयान्येव नेतरत् ॥ १८ ॥

bhūtāni dehamāṃsādi taccāsadvibhramo jaḍaḥ | buddhyahaṃkāracetāṃsi tanmayānyeva netarat || 18 ||

The elements such as the body and flesh are an illusion of non-existence and are inert. The intellect, ego, and consciousness are only made of that, nothing else.

शरीर और मांस जैसे तत्व अस्तित्व के भ्रम हैं और जड़ हैं। बुद्धि, अहंकार और चेतना उसी से बने हैं, कुछ और नहीं।

7.31.19

भूतादिमयतां त्यक्त्वा बुद्ध्यहंकारचेतसाम् । अत्यन्तं स्थितिरभ्येति यदि तन्मुक्ततोदिता ॥ १९ ॥

bhūtādimayatāṃ tyaktvā buddhyahaṃkāracetasām | atyantaṃ sthitirabhyeti yadi tanmuktatoditā || 19 ||

By abandoning the nature of the elements such as the body, the intellect, ego, and consciousness attain the ultimate state, if that is said to be liberated.

शरीर जैसे तत्वों की प्रकृति को छोड़कर, बुद्धि, अहंकार और चेतना परम अवस्था को प्राप्त करते हैं, यदि वह मुक्त कहा जाता है।

7.31.20

चिच्छ्लिष्टा चेत्यनिष्ठत्वात्तादृश्येवात्र कास्तिता । तस्मात्केव कुतः कुत्र वासना किंस्वरूपिणी ॥ २० ॥

cicchliṣṭā cetyanaiṣṭhatvāttādṛśyevātra kāstitā | tasmātkeva kutaḥ kutra vāsanā kiṃsvarūpiṇī || 20 ||

Being pervaded by consciousness, there is no independent existence here. Therefore, where and from where does desire arise in what form?

चेतना से व्याप्त होने के कारण, यहाँ कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। इसलिए, वासना कहाँ से और किस रूप में उत्पन्न होती है?

7.31.21

यस्य चैष भ्रमः सोऽसन्प्रेक्षयासन्न लक्ष्यते । मृगतृष्णाम्बुवत्तेन संसारः कस्य कः कुतः ॥ २१ ॥

yasya caiṣa bhramaḥ so'sanprekṣayāsanna lakṣyate | mṛgatṛṣṇāmbuvatten saṃsāraḥ kasya kaḥ kutaḥ || 21 ||

One who is deluded in this way is not perceived by direct observation, just as the mirage water is not real. The worldly existence is an illusion, so who is it for and from where does it come?

जो इस प्रकार के भ्रम में है, वह सीधे देखे जाने पर भी नहीं दिखता, जैसे मृगतृष्णा का जल वास्तविक नहीं होता। संसार एक भ्रम है, तो यह किसके लिए है और कहाँ से आया है?

7.31.22

तदेवं तर्हि तस्य स्यादिति चित्तोदयो हि यः । पुनः स एव संसारविभ्रमः संप्रवर्तते ॥ २२ ॥

tadevaṃ tarhi tasya syāditi cittodayo hi yaḥ | punaḥ sa eva saṃsāravibhramaḥ saṃpravartate || 22 ||

Thus, the rise of the mind (cittodaya) in the form of 'it should be so' is itself the delusion of worldly existence (samsara). This delusion continues to arise again and again.

इस प्रकार, मन का उदय (चित्तोदय) 'ऐसा होना चाहिए' के रूप में स्वयं ही संसार का भ्रम है। यह भ्रम बार-बार उत्पन्न होता रहता है।

7.31.23

तस्मात्सर्वमनाश्रित्य व्योमवत्समुपास्यताम्। अपुनःस्मरणं श्रेय इह विस्मरणं परम्॥ २३॥

tasmātsarvamanāśritya vyomavatsamupāsyatām | apunaḥsmaraṇaṃ śreya iha vismaraṇaṃ param || 23 ||

Therefore, abandoning all supports, one should meditate like the sky. Here, non-remembrance is better; forgetfulness is supreme.

इसलिए, सभी आश्रयों को छोड़कर, आकाश की तरह ध्यान किया जाना चाहिए। यहाँ, अस्मरण बेहतर है; भूलना सर्वोत्तम है।

7.31.24

नेह द्रष्टा न भोक्तास्ति नाऽस्तिता न च नास्तिता। यथास्थितमिदं शान्तमेकं स्पन्दि सदाब्धिवत्॥ २४॥

neha draṣṭā na bhoktāsti nā'stitā na ca nāstitā | yathāsthitamidaṃ śāntamekaṃ spandi sadābdhivat || 24 ||

Here, there is no seer, no enjoyer, no existence, nor non-existence. This is calm and steady, one, pulsating like the ocean forever.

यहाँ, न द्रष्टा है, न भोक्ता है, न अस्तित्व है, न अनस्तित्व है। यह शांत और स्थिर है, एक, समुद्र की तरह सदा स्पंदित होता है।

7.31.25

सर्वं दृश्यं जगद्ब्रह्म सदित्यवगते स्फुटम्। जलशोषादिवोदेति बिम्बबिम्बिक्षये शिवम्॥ २५॥

sarvaṃ dṛśyaṃ jagadbrahma sadityavagate sphuṭam | jalaśoṣādivodeti bimbabimbikṣaye śivam || 25 ||

When it is clearly understood that the entire visible world is Brahman, it shines forth like the reflection in water when the water dries up, revealing the pure Shiva.

जब स्पष्ट रूप से समझ में आता है कि सारा दृश्य जगत् ब्रह्म है, तो यह जल सूखने पर प्रतिबिंब की तरह चमकता है, शुद्ध शिव को प्रकट करता है।

7.31.26

शान्तताव्यवहारो वा रागद्वेषविवर्जितः। विश्रान्तस्य परे तत्त्वे दृश्यते समदर्शिनः॥ २६॥

śāntatāvyavahāro vā rāgadveṣavivarjitaḥ | viśrāntasya pare tattve dṛśyate samadarśinaḥ || 26 ||

Or, the behavior of tranquility, devoid of attachment and aversion, is seen in one who is rested in the supreme reality and sees everything equally.

या फिर, आसक्ति और घृणा से रहित शान्ति का व्यवहार उसमें देखा जाता है जो परम तत्त्व में विश्राम करता है और सब कुछ समान देखता है।

7.31.27

अथवा शान्ततैवास्य निर्वाणस्यावशिष्यते। निर्वासनः किल मुनिः कथं व्यवहरत्वसौ॥ २७॥

athavā śāntataivāsya nirvāṇasyāvaśiṣyate | nirvāsanaḥ kila muniḥ kathaṃ vyavaharatvasau || 27 ||

Or, only tranquility remains of this liberation. How can the sage, who is without abode, behave in this way?

या फिर, इस मुक्ति के लिए केवल शान्ति ही शेष रहती है। निवासहीन मुनि कैसे ऐसा व्यवहार कर सकता है?

7.31.28

यावत्त्वस्य न निर्वाणं परिपोषमुपागतम्। तावद्व्यवहरत्यस्तरागद्वेषभयोदयः॥ २८॥

yāvattvasyana nirvāṇaṃ paripoṣamupāgatam | tāvadvyavaharatyastarāgadveṣabhayodayaḥ || 28 ||

Until this liberation attains complete maturity, one behaves with the rise of attachment, aversion, and fear.

जब तक यह मुक्ति पूर्ण परिपक्वता नहीं प्राप्त करती, तब तक आसक्ति, घृणा और भय के उदय के साथ व्यवहार करता है।

7.31.29

वीतरागभयक्रोधो निर्वाणः शान्तमानसः । शिलेवाप्यशिलीभूतो मुनिस्तिष्ठति नित्यशः ॥ २९ ॥

vītarāgabhayakrodho nirvāṇaḥ śāntamānasaḥ | śilevāpyaśilībhūto munisttiṣṭhati nityaśaḥ || 29 ||

Free from attachment, fear, and anger, the liberated one with a tranquil mind stands firm like a stone, always.

आसक्ति, भय और क्रोध से मुक्त, मुक्त व्यक्ति शान्त मन के साथ हमेशा पत्थर की तरह दृढ़ता से खड़ा रहता है।

7.31.30

कोशेऽस्ति पद्मबीजस्य यथा सर्वाब्जिनी तथा । अनन्या स्वप्नविभ्रान्तिरात्मन्यस्ति न बाह्यता ॥ ३० ॥

kośe'sti padmabījasya yathā sarvābjinī tathā | ananyā svapnavibhrāntirātmanysti na bāhyatā || 30 ||

Just as the potential of all flowers is in the seed of the lotus, similarly, the unique dream-like illusion is in the self, not outside.

जैसे कमल के बीज में सभी फूलों की संभावना होती है, उसी तरह, अद्वितीय स्वप्न-सदृश भ्रम आत्मा में है, बाहर नहीं।

7.31.31

बाह्यताभावनाद्बाह्यमात्मैवात्मत्वभावनात् । भवतीदं परे तत्त्वे भावनं तत्तदेव हि ॥ ३१ ॥

bāhyatābhāvanādbāhyamātmaivātmatvabhāvanāt | bhavatīdaṃ pare tattve bhāvanaṃ tattadeva hi || 31 ||

Due to the absence of external perception, the external world is perceived as the Self due to the perception of the Self. In the ultimate reality, this perception is indeed that.

बाह्य अनुभव के अभाव में, बाह्य जगत आत्मा के रूप में अनुभव किया जाता है, आत्मा के अनुभव के कारण। परम तत्त्व में, यह अनुभव वास्तव में वही है।

7.31.32

यान्तः स्वप्नादिविभ्रान्तिः सैवेयं बाह्यतोदिता । मनागप्यन्यता नात्र द्विभाण्डपयसोरिव ॥ ३२ ॥

yāntaḥ svapnādivibhrāntiḥ saiveyaṃ bāhyatoditā | manāgapyanyatā nātra dvibhāṇḍapayasoriva || 32 ||

The confusion that arises within, such as in dreams, is the same as that which is perceived externally. There is no difference here, just as there is no difference between the water in two pots.

अंतःकरण में उत्पन्न भ्रांति, जैसे स्वप्न में, वही है जो बाहर से दिखाई देती है। यहाँ कोई अंतर नहीं है, जैसे दो घड़ों में पानी के बीच कोई अंतर नहीं होता।

7.31.33

स्थैर्यास्थैर्ये तथैवात्र भ्रान्तिमात्रमये तते । आधाराधेयते ते द्वे यथा जलतरङ्गते ॥ ३३ ॥

sthairyāsthairye tathaivātra bhrāntimātramaye tate | ādhārādheyate te dve yathā jalataraṅgate || 33 ||

In the same way, in the fluctuating and non-fluctuating states, there is only illusion here. The support and the supported are like the waves of water.

इसी प्रकार, स्थिर और अस्थिर अवस्थाओं में, यहाँ केवल भ्रांति है। आधार और आधेय पानी की लहरों की तरह हैं।

7.31.34

स्वप्नादावात्मनोऽन्यत्वज्ञानादन्यत्ववेदनम् । अनन्यतावबोधे तु तदनन्यन्न चोदयि ॥ ३४ ॥

svapnādāvātmano'nyatvajñānādanyatvavedanam | ananyatāvabodhe tu tadananyanna codayi || 34 ||

From the knowledge of the otherness of the Self in dreams, etc., arises the perception of otherness. However, when there is a realization of non-otherness, that otherness does not arise.

स्वप्न आदि में आत्मा के अन्यता के ज्ञान से अन्यता का बोध होता है। तथापि, जब अनन्यता का बोध होता है, तब वह अन्यता उत्पन्न नहीं होती।

7.31.35

कलनारहितं शान्तं यद्रूपं परमात्मनः । भवत्यसौ तत्तद्भावादतद्भावान्न तद्भवेत् ॥ ३५ ॥

kalanārahitam śāntam yadrūpam paramātmanaḥ | bhavatyaasau tattadbhāvādatadbhāvānna tadbhavet || 35 ||

The form of the Supreme Self, which is devoid of parts and is peaceful, becomes that due to the state of that. Without that state, it would not be that.

जो रूप परमात्मा का है, जो खंडों से रहित और शांत है, वह उस अवस्था के कारण वह होता है। उस अवस्था के बिना, वह वह नहीं होता।

7.31.36

स्वप्नादिज्ञानसंशान्तौ यद्रूपं शुद्धमैश्वरम् । न तदस्ति न तन्नास्ति न वाग्गोचरमेव तत् ॥ ३६ ॥

svapnādijñānasaṃśāntau yadrūpaṃ śuddhamaīśvaram | na tadasti na tannāsti na vāggocaramēva tat || 36 ||

In the cessation of dream-like knowledge, that pure divine form neither exists nor does not exist, nor is it expressible by words.

स्वप्न-जैसे ज्ञान के शान्त होने पर, वह शुद्ध ईश्वरीय रूप न है और न ही नहीं है, न ही वाणी से व्यक्त किया जा सकता है।

7.31.37

आत्यन्तिकभ्रान्तिलये युक्त एवावगच्छति । स्वरूपं नोपदेशस्य विषयो विदुषो हि तत् ॥ ३७ ॥

ātyantikabhrāntilayē yukta ēvāvagacchati | svarūpaṃ nōpadēśasya viṣayō viduṣō hi tat || 37 ||

One who is engaged in the ultimate dissolution of delusion truly understands the true nature, which is not the subject of instruction for the wise.

जो परम भ्रान्ति के लय में लगा हुआ है, वही सच्चे स्वरूप को समझता है, जो विद्वानों के लिए उपदेश का विषय नहीं है।

7.31.38

शान्तं निरस्तभयमानविषादलोभमोहात्मदेहमननेन्द्रियचित्तजाड्यम् । त्यक्त्वाहमक्षयमपास्तसमस्तभेदं निर्वाणमेकमजमासितुमेव युक्तम् ॥ ३८ ॥

śāntaṃ nirastabhayamānaviṣādalobhamohātmadehamananendriyacittajāḍyam |
tyaktvāhamakṣayamapāstasamastabhedaṃ nirvāṇamēkamajamāsitumēva yuktam || 38 ||

Having abandoned fear, grief, desire, delusion, ego, body, mind, and the dullness of the senses, one should strive to attain the eternal, indivisible, and singular state of Nirvana.

भय, विषाद, लोभ, मोह, अहंकार, शरीर, मन, और इंद्रियों की जड़ता को त्यागकर, एक को सदा के लिए अविभाज्य और एकमात्र निर्वाण की स्थिति प्राप्त करने के लिए प्रयास करना चाहिए।

Chapter 32

7.32.1

श्रीवसिष्ठ उवाच यदा चितिः प्रसरति तदाहंताजगद्भ्रमः असदेवाभ्युदेतीव स्पन्दादपि च वायुता ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca yadā citiḥ prasarati tadāhaṃtājagadbhramaḥ asadevābhyudetīva spandādapi ca vāyutā || 1 ||

When consciousness spreads, the illusion of the world arises from the sense of 'I'. Even the unreal appears to rise, like the wind from the vibration.

जब चेतना फैलती है, तब 'मैं' का अहंकार से जगत का भ्रम उत्पन्न होता है। असत् भी कंपन से वायु की तरह उत्पन्न होता है।

7.32.3

रूपानुभवमादत्ते चक्षुःप्रसरणाद्यथा चितिः प्रसरणात्तद्वज्जगद्विभ्रममास्थिता ॥ ३ ॥

rūpānubhavamādatte cakṣuḥprasarṇādyathā citiḥ prasaraṇāttadvajjagadvibhramamāsthitā || 3 ||

Just as the eye perceives form through its expansion, so does consciousness, through its expansion, experience the illusion of the world.

जैसे आँख अपने विस्तार से रूप को अनुभव करती है, वैसे ही चेतना अपने विस्तार से जगत के भ्रम को अनुभव करती है।

7.32.4

यासौ प्रसरति व्यर्थं चेत्याभावान्न सा सती असत्कथं प्रसरति वन्ध्यापुत्रः क्व नृत्यति ॥ ४ ॥

yāsau prasarati vyarthaṃ cetyaabhāvānna sā satī asatkathaṃ prasarati vandhyāputraḥ kva nṛtyati || 4 ||

That which spreads uselessly, without the presence of consciousness, is not real. How can the unreal spread? Where does the son of a barren woman dance?

जो बिना चेतना के व्यर्थ फैलता है, वह सत् नहीं है। असत् कैसे फैल सकता है? वंध्या का पुत्र कहाँ नृत्य करता है?

7.32.5

उदितोऽपि न खेदाय ब्रह्मरूपत्ववेदनात् परमाय त्वनर्थाय जगच्छब्दार्थभावनात् ॥ ५ ॥

udito'pi na khedāya brahmarūpatvavedanāt paramāya tv anarthāya jagacchabdārthabhāvanāt || 5 ||

Even when arisen, it does not cause sorrow due to the realization of Brahman. However, it is meaningless due to the conceptualization of the world as real.

उदित होने पर भी, ब्रह्म के रूप में जानने से दुःख नहीं होता। फिर भी, जगत को सत् मानने से यह अनर्थकारी है।

7.32.6

अहंभावोऽपि दुःखार्थमहमित्येव वेदनातवेदनान्नाहमतः स्वायत्ते बन्धमुक्तते ॥ ६ ॥

ahaṃbhāvo'pi duḥkhārthamahamityeva vedanātavedanānnāhamataḥ svāyatte bandhamuktate || 6 ||

Even the sense of 'I' is for the sake of suffering; it is said to be 'I' only because of the feeling; from the feeling of 'not I', it is said to be bound in its own nature.

यहां कहा गया है कि अहंभाव भी दुःख के लिए है; यह केवल भावना के कारण 'मैं' कहा जाता है; 'मैं नहीं' की भावना से, यह अपनी प्रकृति में बंधन में कहा जाता है।

7.32.7

तद्ध्यानं स समाधिर्वा यदवेदनमासितम्। अजडानां जडमिव समं शान्तमनामयम्॥ ७॥

taddhyānaṃ sa samādhirvā yadavedanamāsitam | ajaḍānāṃ jaḍamiva samaṃ śāntamanāmayam || 7 ||

That meditation or that state of samadhi is considered to be the absence of sensation, like the inertness of the inert, uniform, peaceful, and free from disease.

वह ध्यान या वह समाधि उस अनुभूति की अनुपस्थिति कहलाती है, जैसे जड़ की जड़ता, समान, शान्त और रोगमुक्त।

7.32.8

द्वैताद्वैतसमुद्भेदैर्वाक्यसंदर्भविभ्रमैः। मा विषीदत दुःखाय विबुधा अबुधा इव॥ ८॥

dvaitādvaitasamudbhedairvākyasaṃdarbhavibhramaiḥ | mā viṣīdata duḥkhāya vibudhā abudhā iva || 8 ||

Do not be distressed by the confusion arising from the distinctions of duality and non-duality in the context of statements, O wise ones, like the ignorant.

द्वैत और अद्वैत के भेदों से उत्पन्न वाक्य संदर्भ के भ्रम से दुःखी न हों, हे विद्वानो, अज्ञानियों की तरह।

7.32.9

असदाश्रयते दुःखं स्वप्नवद्धनवासनः। रूपालोकमनस्कारान्संकल्परचितानिव॥ ९॥

asadāśrayate duḥkhaṃ svapnavaddhanavāsanaḥ | rūpālokamanaskārānsaṃkalparacitāniva || 9 ||

Sorrow takes refuge in the unreal, like the desire for wealth in a dream, and like the mental impressions created by the imagination.

दुःख असत् में आश्रय लेता है, जैसे स्वप्न में धन की इच्छा, और जैसे कल्पना द्वारा बनाए गए मानसिक संस्कार।

7.32.10

दुःखं सदेव नाश्नाति सुप्तवत्तनुवासनः। रूपालोकमनस्कारान्संकल्परहितानिव॥ १०॥

duḥkhaṃ sadeva nāśnāti suptavattanuvāsanaḥ | rūpālokamanaskārānsaṃkalparahitāniva || 10 ||

Sorrow does not consume the real, like the desire for the body in sleep, and like the mental impressions devoid of imagination.

दुःख सत् को नहीं खाता, जैसे निद्रा में शरीर की इच्छा, और जैसे कल्पना से रहित मानसिक संस्कार।

7.32.11

अत्यन्ततनुतामेत्य वासनैवैति मुक्तताम्। देशकालक्रियायोगात्पदार्थे भावनामिव॥ ११॥

atyantatanutāmetya vāsanai vaiti muktatām | deśakālakriyāyogātpadārthe bhāvanāmiva || 11 ||

Attaining extreme subtlety, the impression itself attains liberation, like the contemplation of objects through the union of place, time, and action.

अत्यंत सूक्ष्मता प्राप्त करके, वासना स्वयं मुक्ति प्राप्त करती है, जैसे स्थान, समय और क्रिया के योग से वस्तुओं का ध्यान।

7.32.12

अत्यन्ततनुतां याता वासनैवैति मुक्तताम्। पराणुपरिणामेन खतां खेऽभ्रादिका यथा॥ १२॥

atyantatanutāṃ yātā vāsanaiveiti muktatām | parāṇupariṇāmena khatāṃ khe'bhrādikā yathā || 12 ||

The extremely subtle vasana (impression) itself attains liberation through the transformation of the supreme atom, just as clouds and other things in the sky.

अत्यंत सूक्ष्म वासना स्वयं ही परमाणु के परिणाम से मुक्ति को प्राप्त होती है, जैसे आकाश में बादल और अन्य चीजें।

7.32.13

अहंभावनया बोधे वासना घनतानवा । विपश्चित्संगमाभ्यासात्पाण्डित्यमिव मूढता ॥ १३ ॥

ahaṃbhāvanayā bodhe vāsanā ghanatānavā | vipaścitsaṃgamābhyāsātpāṇḍityamiva mūḍhatā || 13 ||

Through the sense of 'I', the impression becomes dense in the intellect, just as ignorance becomes wisdom through the practice of association with the wise.

अहंभाव के द्वारा, वासना बुद्धि में घनीभूत हो जाती है, जैसे मूढ़ता विद्वानों के संग की अभ्यास से ज्ञान बन जाती है।

7.32.14

नाहमस्तीह मद्युक्त्या निश्चयोऽन्तः शमात्मकः । जीवतोऽजीवतश्चास्ति रूढबोध इति स्मृतः ॥ १४ ॥

nāhamastīha madyuktyā niścayo'ntaḥ śamātmakaḥ | jīvato'jīvataścāsti rūḍhabodha iti smṛtaḥ || 14 ||

There is no 'I' here due to my reasoning, the certainty within is of the nature of peace. It is said that there is a firm understanding in both the living and the non-living.

यहाँ मेरे तर्क के कारण कोई 'मैं' नहीं है, अंतर्निहित निश्चय शांति स्वरूप है। यह कहा जाता है कि जीवित और अजीवित दोनों में एक दृढ़ बोध है।

7.32.15

वायौ द्वन्द्वमिवात्रेदं जगदादि च भासते । कोऽहं कथमिदं चेति विचारेणैव शाम्यति ॥ १५ ॥

vāyau dvandvamivātredaṃ jagadādi ca bhāsate | ko'haṃ kathamidaṃ ceti vicāreṇaiva śāmyati || 15 ||

Just as duality appears in the wind, so does the universe appear here. The questioning 'Who am I? How is this?' calms down through inquiry alone.

जैसे वायु में द्वंद्व प्रकट होता है, वैसे ही यहाँ ब्रह्मांड प्रकट होता है। 'मैं कौन हूँ? यह कैसे है?' इस प्रश्न का उत्तर केवल विचार से ही शांत होता है।

7.32.16

नाहमित्येव निर्वाणं किमेतावति मूढता । सत्संगमविचाराभ्यामेतदाश्ववगम्यते ॥ १६ ॥

nāhamityeva nirvāṇaṃ kimetāvati mūḍhatā | satsaṅgamavicārābhyāmetadāśvavagamyate || 16 ||

The statement 'I am not' itself is liberation. What is this ignorance? This is understood through the company of the wise and inquiry.

'मैं नहीं हूँ' यह कथन स्वयं ही मुक्ति है। यह मूढ़ता क्या है? यह सत्संग और विचार से समझा जाता है।

7.32.17

क्षीयते तत्त्ववित्सङ्गादहमित्येव बन्धनम् । आलोकेनेव तिमिरं दिवसेनेव यामिनी ॥ १७ ॥

kṣīyate tattvavitsaṅgādahamityeva bandhanam | ālokeneva timiraṃ divaseneva yāminī || 17 ||

The bondage of 'I' is destroyed by the company of the knower of truth, just as darkness is dispelled by light and night by day.

सत्य के ज्ञाता के संग से 'मैं' का बंधन नष्ट हो जाता है, जैसे प्रकाश अंधेरे को और दिन रात को दूर करता है।

7.32.18

कोऽहं कथमिदं दृश्यं को जीवः किं च जीवनम् । इति तत्त्वज्ञसंयोगाद्यावज्जीवं विचारयेत् ॥ १८ ॥

ko'haṃ kathamidaṃ dṛśyaṃ ko jīvaḥ kiṃ ca jīvanam | iti tattvajñasamyogādyāvajjīvaṃ vicārayet || 18 ||

One should contemplate throughout one's life: 'Who am I? How is this world perceived? Who is the living being? And what is life?' through the association with the knower of truth.

अपने जीवन भर यह सोचना चाहिए: 'मैं कौन हूँ? यह दृश्य कैसे है? जीव कौन है? और जीवन क्या है?' सत्य के ज्ञाता के संग से।

7.32.19

जीवितं भुवनं भाति ततोऽहमिति नश्यति । तत्त्वमेकेन तज्ज्ञार्कसेवनात्स निषेव्यताम् ॥ १९ ॥

jīvitaṃ bhuvanaṃ bhāti tato'hamiti naśyati | tattvamekena tajjñārkasevanātsa niṣevyatām || 19 ||

The world appears as alive, and from that, the sense of 'I' is destroyed. Therefore, one should worship the sun of knowledge of the truth alone.

संसार जीवित प्रतीत होता है, और उससे 'मैं' का भाव नष्ट हो जाता है। इसलिए, सत्य के ज्ञान के सूर्य की ही पूजा करनी चाहिए।

7.32.20

यो यो बोधातिशयवांस्तं तं पृथगुपास्व भो । संगमे कथयोदेति तेषां वादपिशाचिका ॥ २० ॥

yo yo bodhātiśayavāṃstaṃ taṃ pṛthagupāsva bho | saṃgame kathayodeti teṣāṃ vādapipśācikā || 20 ||

Worship each one who is endowed with supreme knowledge separately, O friend. In their company, discussions arise which are like the talk of ghosts.

प्रत्येक व्यक्ति को पूजा करें जो उत्कृष्ट ज्ञान से युक्त है, हे मित्र। उनके संग में, ऐसी चर्चाएँ होती हैं जो भूतों की बातचीत की तरह होती हैं।

7.32.21

वादयक्षेऽप्यभ्युदिते बालस्येव विपश्चितः । युक्तियुक्तमलं मुख्यमुदेत्यहमिति भ्रमः ॥ २१ ॥

vādayakṣe'pyabhyudite bālasyeva vipaścitaḥ | yuktiyuktamalaṃ mukhyamudetyahamiti bhramaḥ || 21 ||

Even if a wise person engages in a debate like a child, logical and appropriate arguments arise, and the illusion of 'I' manifests.

यदि एक विद्वान व्यक्ति एक बच्चे की तरह बहस में लग जाता है, तो तर्कसंगत और उपयुक्त तर्क उभरते हैं, और 'मैं' का भ्रम प्रकट होता है।

7.32.22

अतः प्रत्येकमेकान्ते प्राज्ञः सेवेत पण्डितम् । एकीकृत्य तदुक्तांस्तानर्थान्बुद्ध्या विचारयेत् ॥ २२ ॥

ataḥ pratyekamekānte prajñah seveta paṇḍitam | ekīkṛtya taduktāṃstānarthānbuddhyā vicārayet || 22 ||

Therefore, a wise person should serve a scholar in solitude and, combining the meanings stated by him, should reflect on them with intelligence.

इसलिए, एक बुद्धिमान व्यक्ति को एकान्त में एक विद्वान की सेवा करनी चाहिए और, उनके द्वारा कहे गए अर्थों को एकत्र करके, बुद्धि से उन पर विचार करना चाहिए।

7.32.23

विचारयेत्तदुक्त्यर्थं बुद्ध्या बुद्धिविवृद्धये । सर्वसंकल्पमुक्तं यत्तत्सत्तन्मयतां व्रजेत् ॥ २३ ॥

vicārayettaduktārthaṃ buddhyā buddhivivṛddhaye | sarvasaṃkalpamuktaṃ yattatsattamayatāṃ vrajeta || 23 ||

One should reflect on the meanings stated by him with intelligence for the growth of intelligence. Whatever is said with all resolutions, that should become the essence of truth.

उसके द्वारा कहे गए अर्थों पर बुद्धि से विचार करना चाहिए ताकि बुद्धि का विकास हो सके। जो कुछ भी सभी संकल्पों के साथ कहा जाता है, वह सत्य का सार बन जाना चाहिए।

7.32.24

विपश्चित्संगमैर्बुद्धिं नीत्वा परमतीक्ष्णताम्। अज्ञानलतिका सैका कणशः क्रियतामलम्॥ २४॥

vipaścitsaṃgamairbuddhiṃ nītvā paramatīkṣṇatām | ajñānalatikā saikā kaṇaśaḥ kriyatāmalam || 24 ||

By the association with the wise, one should lead the intellect to the highest sharpness. That ignorance, like a creeper, should be destroyed bit by bit.

बुद्धिमानों के संग से, एक व्यक्ति को अपनी बुद्धि को उच्चतम तीक्ष्णता तक ले जाना चाहिए। वह अज्ञान, जो एक लता की तरह है, को थोड़ा-थोड़ा करके नष्ट कर देना चाहिए।

7.32.25

एषोऽर्थः संभवत्येव तेनेदं कथयाम्यहम्। स्वानुभूतं वयं बाला नासमञ्जसवादिनः॥ २५॥

eṣo'rthaḥ saṃbhavatyeva tenedaṃ kathayāmyaham | svānubhūtaṃ vayaṃ bālā nāsamañjasavādinaḥ || 25 ||

This meaning certainly occurs, therefore I narrate this. We, being children, are not inconsistent speakers of what we have experienced.

यह अर्थ निश्चित रूप से होता है, इसलिए मैं इसे कहता हूँ। हम, बच्चे होने के नाते, जो कुछ हमने अनुभव किया है, उसके असंगत वक्ता नहीं हैं।

7.32.26

व्योम्नोऽम्बुवाहादिविजृम्भयेव तरङ्गभंग्येव महाजलस्य। न युज्यते नापि च नश्यतीह नाशोदयौ निर्मननस्य किंचित्॥ २६॥

vyomno'mbuvāhādivijṛmbhayeva taraṅgabhaṅgyeva mahājalasya | na yujyate nāpi ca naśyatīha nāśodayau nirmananasya kiṃcit || 26 ||

Just as clouds arise from the sky and waves from the great ocean, they do not merge or perish here. There is no destruction or creation for the self.

जैसे बादल आकाश से और लहरें महासागर से उत्पन्न होती हैं, वे यहाँ न तो मिलती हैं और न ही नष्ट होती हैं। आत्मा के लिए न तो नाश है और न ही उत्पत्ति।

7.32.27

इदं हि सर्वं मृगतृष्णिकाम्बुवन्निरामये ब्रह्मणि शान्त आतते। विचारिते नाहमितीह विद्यते कुतः क्व कस्मान्मननादिविभ्रमः॥ २७॥

idaṃ hi sarvaṃ mṛgatṛṣṇikāmbuvanni rāmaye brahmaṇi śānta ātate | vicārite nāhamitīha vidyate kutaḥ kva kasmānmananādivibhramaḥ || 27 ||

Indeed, all this is just like the mirage water, it is pacified in Brahman, the self is absorbed | Upon inquiry, there is no 'I' here, wherefrom, where, and why is the confusion of the mind?

निश्चय ही, यह सब मृगतृष्णा जल के समान है, यह ब्रह्म में शान्त हो जाता है, आत्मा विलीन हो जाता है | विचार करने पर, यहाँ 'मैं' नहीं है, कहाँ से, कहाँ, और क्यों है मन का भ्रम?

Chapter 33

7.33.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्वपौरुषेण स्वधिया सत्संगमविकासया । यदि ना नीयते ज्ञत्वं तदुपायोऽस्ति नेतरः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | svapauruṣeṇa svadhiyā satsaṅgamavikāsayā | yadi nā nīyate jñatvaṃ tadupāyo'sti netaraḥ || 1 ||

Shri Vasishtha said: If knowledge is not attained through one's own efforts, intelligence, and the expansion of good company, then there is no other means.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यदि अपने प्रयास, बुद्धि और सत्संग के विकास से ज्ञान नहीं मिलता है, तो फिर कोई और उपाय नहीं है।

7.33.2

स्वं कल्पितं कल्पितं च प्रतिकल्पनया स्वया । तदेवान्यत्वमादत्ते विषत्वममृतं यथा ॥ २ ॥

svaṃ kalpitaṃ kalpitaṃ ca pratikalpanayā svayā | tadevānyatvamādatte viṣatvamamṛtaṃ yathā || 2 ||

One's own imagined concept, imagined by one's own imagination, assumes the form of another, just like poison becomes nectar.

अपना कल्पित विचार, अपनी कल्पना से कल्पित, दूसरे के रूप में आता है, जैसे विष अमृत बन जाता है।

7.33.3

कल्पना चाकल्पनान्ता मुक्तता यदकल्पनम् । एतच्च भोगसंत्यागपूर्वं सिध्यति नान्यथा ॥ ३ ॥

kalpanā cākalpanāntā muktatā yadakalpanam | etaccabhogasaṃtyāgapūrvaṃ sidhyati nānyathā || 3 ||

Freedom is the absence of imagination, and this is achieved only through the renunciation of enjoyment.

मुक्ति कल्पना की अनुपस्थिति है, और यह केवल भोग के त्याग से ही प्राप्त होती है।

7.33.4

वचसा मनसा चान्तः शब्दार्थावविभावयन् । य आस्ते वर्धते तस्य कल्पनोपशमः शनैः ॥ ४ ॥

vacasā manasā cāntaḥ śabdārthāvavibhāvayan | ya āste vardhate tasya kalpanopaśamaḥ śanaiḥ || 4 ||

One who internally contemplates the meaning of words and their essence, gradually attains the cessation of imagination.

जो अंदर से शब्दों के अर्थ और उनकी सार पर विचार करता है, उसकी कल्पना धीरे-धीरे शांत हो जाती है।

7.33.5

वर्जयित्वाहमित्येव नाविद्यास्तीतरात्मिका । शान्ते त्वभावनादस्मिन्नान्यो मोक्षोऽस्ति कश्चन ॥ ५ ॥

varjayitvāhamityeva nāvidyāstītarātmikā | śānte tvabhāvanādasminnānyo mokṣo'sti kaścana || 5 ||

By renouncing the sense of 'I', there is no other ignorance. When this sense is pacified, there is no other liberation.

अहंकार को त्याग कर, कोई और अज्ञान नहीं है। जब यह शांत हो जाता है, तब कोई और मुक्ति नहीं है।

7.33.6

अहंभावमथादेहं किंचिच्छ्रयसि नश्यसि । जगदादिरुचिस्तस्मिंस्त्यक्ते शाम्यसि सिध्यसि ॥ ६ ॥

ahaṃbhāvamathādehaṃ kiṃcicchrayasi naśyasi | jagadādirucistasmīnstyakte śāmyasi sidhyasi || 6 ||

When you give up the ego and the body, you will find peace and perfection.

जब आप अहंकार और शरीर को त्याग देते हैं, तब आप शान्ति और पूर्णता पाते हैं।

7.33.7

अचेतनादिदं सर्वं सदेवासदिव स्थितम् । शान्तं यस्योपलस्येव नमस्तस्मै महात्मने ॥ ७ ॥

acetanādidam sarvaṃ sadevāsadiva sthitam | śāntaṃ yasyopalasyeva namastasmai mahātmane || 7 ||

All this, starting from the inanimate, is established as both real and unreal. It is calm like a reflection in a mirror. Salutations to that great soul.

यह सब, जड़ से शुरू होकर, सत् और असत् दोनों के रूप में स्थापित है। यह दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह शान्त है। उस महान आत्मा को नमन।

7.33.8

अचेतनादिदं सर्वमुपलस्येव शाम्यति । शून्याख्यातः परालीनचित्तस्य चित्त्वभावनात् ॥ ८ ॥

acetanādidam sarvamupalasyeva śāmyati | śūnyākhyātaḥ parālīnacittasya cittvabhāvanāt || 8 ||

All this, starting from the inanimate, becomes calm like a reflection. It is described as void, due to the dissolution of the mind's consciousness.

यह सब, जड़ से शुरू होकर, प्रतिबिम्ब की तरह शान्त हो जाता है। यह मन की चेतना के विलयन के कारण शून्य कहलाता है।

7.33.9

इदमस्त्वथवा मास्तु चेतितं दुःखवृद्धये । अचेतितं सुखायान्तरचेतनमचेतनात् ॥ ९ ॥

idamastvathavā māstu cetitaṃ duḥkhavṛddhaye | acetitaṃ sukhāyāntaracetanamacetanāt || 9 ||

Whether this exists or not, the conscious mind increases suffering. The unconscious mind brings happiness, as it is beyond consciousness.

चाहे यह हो या न हो, चेतन मन दुःख को बढ़ाता है। अचेतन मन सुख लाता है, क्योंकि यह चेतना से परे है।

7.33.10

द्वौ व्याधी देहिनो घोरावयं लोकस्तथा परः । याभ्यां घोराणि दुःखानि भुङ्क्ते सर्वैर्हि पीडितः ॥ १० ॥

dvau vyādhī dehino ghorāvayaṃ lokastathā paraḥ | yābhyāṃ ghorāṇi duḥkhāni bhuṅkte sarvairhi pīḍitaḥ || 10 ||

There are two terrible diseases for embodied beings: this world and the other. By these, one experiences terrible sufferings, afflicted by all.

शरीरधारियों के लिए दो भयानक रोग हैं: यह लोक और परलोक। इनसे व्यक्ति भयानक दुःख भोगता है, सबसे पीड़ित होकर।

7.33.11

इहलोके यतन्ते ज्ञा व्याधौ भोगैर्दुरौषधैः । आजीवितं यथाशक्ति चिकित्सा नापरामये ॥ ११ ॥

ihaloke yatante jñā vyādhau bhogairdurauṣadhaiḥ| ājīvitaṃ yathāśakti cikitsā nāparāmaye || 11 ||

In this world, people strive to treat the disease of worldly pleasures with harmful medicines, living as best they can, but they do not seek treatment for other ailments.

इस लोक में, लोग दुष्प्रभावी औषधियों से भोगों के रोग का उपचार करने की चेष्टा करते हैं, अपनी शक्ति के अनुसार जीवन बिताते हैं, लेकिन अन्य रोगों का उपचार नहीं करते।

7.33.12

परलोकमहाव्याधौ प्रयतन्ते चिकित्सनम् । शमसत्सङ्गबोधाख्यैरमृतैः पुरुषोत्तमाः ॥ १२ ॥

paralokamahāvyādhau prayatante cikitsanam| śamasatsaṅgabodhākhyairamṛtaiḥ puruṣottamāḥ || 12 ||

The best of men strive to treat the great disease of the afterlife with the immortal medicines of peace, good company, and knowledge.

श्रेष्ठ पुरुष परलोक के महान रोग का उपचार शान्ति, सत्संग और ज्ञान नामक अमृत औषधियों से करने की चेष्टा करते हैं।

7.33.13

परलोकचिकित्सायां सावधाना भवन्ति ये। मोक्षमार्गमहेच्छायां शमशक्त्या जयन्ति ते॥ १३॥

paralokacikitsāyāṃ sāvadhānā bhavanti ye| mokṣamārgamahecchāyāṃ śamaśaktyā jayanti te || 13 ||

Those who are careful in the treatment of the afterlife, with the power of peace, conquer the great desire for the path of liberation.

जो परलोक के उपचार में सावधान रहते हैं, वे शान्ति की शक्ति से मोक्ष मार्ग की महान इच्छा को जीत लेते हैं।

7.33.14

इहैव नरकव्याधेश्चिकित्सां न करोति यः। गत्वा निरौषधं स्थानं सरुजः किं करिष्यति॥ १४॥

ihaiva narakavyādheścikitsāṃ na karoti yaḥ| gatvā nirauṣadhaṃ sthānaṃ sarujaḥ kiṃ kariṣyati || 14 ||

One who does not treat the disease of hell in this world, what will they do when they go to a place without medicine, full of diseases?

जो इस लोक में नरक के रोग का उपचार नहीं करता, वह औषधि रहित स्थान पर जाकर, रोगों से भरे हुए, क्या करेगा?

7.33.15

इहैव नरकव्याधेश्चिकित्साभिर्जीवितं यातु मा क्षयम्। आत्मज्ञानौषधैरज्ञाः परलोकश्चिकित्स्यताम्॥ १५॥

ihaiva narakavyādheścikitsābhirjīvitaṃ yātu mā kṣayam| ātmajñānauṣadhairajñāḥ paralokascikitsyatām || 15 ||

Let life not be wasted by the treatments of the disease of hell in this world; let the ignorant be treated with the medicines of self-knowledge for the afterlife.

इस लोक में नरक के रोग के उपचारों से जीवन नष्ट न हो, अज्ञानी परलोक के लिए आत्मज्ञान की औषधियों से उपचार किया जाए।

7.33.16

आयुर्वायुचलत्पत्रलवाम्बुकणभङ्गुरम्। परलोकमहाव्याधिर्यत्नेनाशु चिकित्स्यताम्॥ १६॥

āyurvāyucalatpatralavāmbukaṇabhaṅguram | paralokamahāvyādhiryatnenāśu cikitsyatām || 16 ||

The life-breath is as fragile as a drop of water on a moving leaf; the great disease of the other world should be treated with diligence and urgency.

जीवन-प्राण एक हिलते पत्ते पर एक पानी की बूंद की तरह नाज़ुक है; दूसरे लोक के महान रोग का इलाज मेहनत और जल्दी से किया जाना चाहिए।

7.33.17

परलोकमहाव्याधौ यत्नेनाशु चिकित्सिते। इहलोकमयो व्याधिः स्वयमाशूपशाम्यति॥ १७॥

paralokamahāvyādhau yatnenāśu cikitsite | ihalokamayo vyādhiḥ svayamāśūpaśāmyati || 17 ||

When the great disease of the other world is treated with diligence and urgency, the disease of this world will naturally subside quickly.

जब दूसरे लोक के महान रोग का इलाज मेहनत और जल्दी से किया जाता है, तो इस लोक का रोग स्वाभाविक रूप से जल्दी शांत हो जाता है।

7.33.18

संविन्मात्रं विदुर्जन्तुं तस्य प्रसरणं जगत्। परमाणूदरेऽप्यस्ति तच्छैलशतविस्तरम्॥ १८॥

saṃvinmātraṃ vidurjantuṃ tasya prasaraṇaṃ jagat | paramāṇūdare'pyasti tacchailaśatavistaram || 18 ||

The living being is known as pure consciousness; its expansion is the universe. Even in the belly of an atom, it exists with the expanse of a hundred mountains.

जीव को शुद्ध चेतना के रूप में जाना जाता है; उसका विस्तार ब्रह्मांड है। परमाणु के पेट में भी, यह सौ पर्वतों के विस्तार के साथ मौजूद है।

7.33.19

यत्संविदः प्रसरणं रूपालोकमनांसि तत्। व्योमन्येवानुभूयन्ते नातः सत्यो जगद्भ्रमः ॥ १९ ॥

yatsaṃvidaḥ prasaraṇaṃ rūpālokamanāṃsi tat | vyoman'yevānubhūyante nātaḥ satyo jagadbhramaḥ || 19 ||

That which is the expansion of consciousness is perceived as forms, worlds, and minds in space. There is no greater illusion than this world.

जो चेतना का विस्तार है, वह आकाश में रूपों, लोकों और मनों के रूप में अनुभव किया जाता है। इस लोक से बड़ा कोई भ्रम नहीं है।

7.33.20

प्रलयेष्वपि दृष्टेषु जगद्दृश्याख्यविभ्रमः। न नश्यति न जायेत भ्रान्तिमात्रैकरूपिणः ॥ २० ॥

pralayeṣvapi dṛṣṭeṣu jagaddṛśyākhyavibhramaḥ | na naśyati na jāyeta bhrāntimātraikarūpiṇaḥ || 20 ||

Even when dissolutions are seen, the illusion known as the visible world neither perishes nor is born; it is merely an illusion.

भले ही विनाश देखा जाए, दृश्य लोक के रूप में जाना जाने वाला भ्रम न तो नष्ट होता है और न ही जन्म लेता है; यह केवल एक भ्रम है।

7.33.21

भोगपङ्कार्णवे मग्न आत्मा नोत्तार्यते यदि। स्वपौरुषचमत्कृत्या तदुपायोऽस्ति नेतरः ॥ २१ ॥

bhogapaṅkārṇave magna ātmā nottāryate yadi | svapauruṣacamatkṛtyā tadupāyo'sti netaraḥ || 21 ||

If the soul is immersed in the ocean of material enjoyment, it cannot be saved unless it is through the marvel of one's own strength; there is no other way.

यदि आत्मा भोग के समुद्र में डूबी हुई है, तो उसे अपनी ही शक्ति के चमत्कार से उबारा जा सकता है, दूसरा कोई उपाय नहीं है।

7.33.22

अजितात्मा जनो मूढो रूढो भोगैककर्दमे। आपदां पात्रतामेति पयसामिव सागरः ॥ २२ ॥

ajitātmā jano mūḍho rūḍho bhogaikakardame | āpadāṃ pātratāmeti payasāmiva sāgaraḥ || 22 ||

A person who has not conquered their senses is foolish and is stuck in the mire of material enjoyment. They become a receptacle for misfortunes, like the ocean for rivers.

जो व्यक्ति अपने इन्द्रियों पर विजय नहीं पाता, वह मूर्ख है और भोग के कीचड़ में फँसा हुआ है। वह दुःखों का आश्रय बन जाता है, जैसे समुद्र नदियों का आश्रय होता है।

7.33.23

जीवितस्य यथा बाल्यं दृष्टं प्राथमकल्पिकम्। निर्वाणस्य तथा भोगसंत्यागो रागशान्तिदः ॥ २३ ॥

jīvitasya yathā bālyaṃ dṛṣṭaṃ prāthamakalpikam | nirvāṇasya tathā bhogasaṃtyāgo rāgaśāntidaḥ || 23 ||

Just as childhood is the first stage of life, so too is the renunciation of material enjoyment the first step towards liberation, which brings peace from desires.

जैसे बचपन जीवन का पहला चरण होता है, उसी तरह भोग का त्याग मुक्ति का पहला कदम होता है, जो इच्छाओं से शांति लाता है।

7.33.24

तज्ज्ञस्य जीवितनदी सकल्लोलाप्यसंभ्रमा। समं वहति सौम्यैव चित्रसंस्थेव नीरसा ॥ २४ ॥

tajjñasya jīvitanadī sakallolāpyasaṃbhramā | samaṃ vahati saumyaiva citrasaṃstheva nīrasā || 24 ||

For the wise, the river of life flows smoothly, free from the turbulence of desires, like a calm and picturesque stream.

बुद्धिमान के लिए, जीवन की नदी इच्छाओं के उथल-पुथल से मुक्त होकर सुचारु रूप से बहती है, जैसे एक शांत और मनमोहक धारा।

7.33.25

अज्ञजीवितनद्यास्तु रसनात्यन्तभीषणाः । आवर्ता वृत्तिविक्षोभकल्लोलाः सहवाहिनः ॥ २५ ॥

ajñajīvitanadyāstu rasanātyantabhīṣaṇāḥ | āvartā vṛttivikṣobhakallolāḥ sahavāhinaḥ || 25 ||

For the ignorant, the rivers of life are extremely terrifying, with whirlpools of disturbing thoughts and turbulent waves of attachments.

अज्ञानी के लिए, जीवन की नदियाँ अत्यंत भयानक होती हैं, विचारों के भंवर और आसक्तियों की उथल-पुथल से भरी हुई।

7.33.26

सर्गवर्गाः प्रवल्गन्ति संवित्प्रसरलेशकाः । द्विचन्द्रबालवेतालमृगाम्बुस्वप्नमोहवत् ॥ २६ ॥

sargavargāḥ pravalganti saṃvitprasaraleśakāḥ | dvicandrabālavetālamṛgāmbusvapnamohavat || 26 ||

The various creations manifest as mere reflections of consciousness, appearing like the illusion of a double moon, a ghost, a mirage, a dream, or a magical trick.

विभिन्न सृष्टियाँ चेतना के प्रतिबिम्ब के रूप में प्रकट होती हैं, जैसे दो चंद्रमा, भूत, मृगतृष्णा, स्वप्न या जादू की तरह।

7.33.27

संविद्वारितरङ्गौघा भान्ति सर्गाः सहस्रशः । विचारितास्त्वसत्यास्ते सत्यास्त्वनुभवभ्रमात् ॥ २७ ॥

saṃvidvāritaraṅgaughā bhānti sargāḥ sahasraśaḥ | vicāritāstvasatyāste satyāstvanubhavabhramāt || 27 ||

The myriad creations appear as waves of consciousness. When examined, they are found to be unreal, but they seem real due to the illusion of experience.

अनेक सृष्टियाँ चेतना की लहरों के रूप में प्रकट होती हैं। जब इनका विश्लेषण किया जाता है, तो ये अवास्तविक पाई जाती हैं, लेकिन अनुभव के भ्रम के कारण ये वास्तविक लगती हैं।

7.33.28

जगन्त्याकाशकोशेऽपि संवित्प्रसरणभ्रमात् । सन्तीवाप्यनुभूयन्ते न तु सत्यानि तानि तु ॥ २८ ॥

jagantyākāśakośe'pi saṃvitprasaraṇabhramāt | santīvāpyanubhūyante na tu satyāni tāni tu || 28 ||

Even in the vast expanse of the universe, due to the illusion of the spread of consciousness, things appear to exist but are not truly real.

ब्रह्मांड के विशाल विस्तार में भी, चेतना के फैलाव के भ्रम के कारण, चीजें अस्तित्व में प्रतीत होती हैं, लेकिन वे वास्तव में सच नहीं हैं।

7.33.29

संविद्विकासपयसो बुद्बुदः सर्गविभ्रमः । अहमित्यादिसद्भावविकाराकाररूपवान् ॥ २९ ॥

saṃvidvikāsapayaso budbudhaḥ sargavibhramaḥ | ahamityādisadbhāvavikārākārarūpavān || 29 ||

The creation is like a bubble in the expansion of consciousness, appearing as various forms of existence, such as the sense of 'I' and other manifestations.

सृष्टि चेतना के विस्तार में एक बुलबुले की तरह है, जो 'मैं' की भावना और अन्य रूपों में प्रकट होती है।

7.33.30

संविन्निर्वाणमजगत्संविदुन्मीलनं जगत् । नान्तर्न बाह्यं नासत्यं न सत्यं सर्वमेव तत् ॥ ३० ॥

saṃvinnirvāṇamajagatsaṃvidunmīlanaṃ jagat | nāntarna bāhyaṃ nāsatyam na satyaṃ sarvameva tat || 30 ||

The absence of consciousness is the absence of the world, and the unfolding of consciousness is the world. There is no inner or outer, no unreal or real; everything is that.

चेतना का अभाव संसार का अभाव है, और चेतना का विकसित होना ही संसार है। न अंतर है, न बाह्य है, न अवास्तविक है, न वास्तविक है; सब कुछ वही है।

7.33.31

चिद्रूपमजमव्यक्तमेकमव्ययमीश्वरःस्वत्वभावत्वरहितं ब्रह्म शान्तात्मखादपि ॥ ३१ ॥

cidrūpamajamavyaktamekamavyayamīśvaraḥsvatvabhāvatvarahitaṃ brahma śāntātmakhādapi || 31 ||

Brahma, the eternal, unmanifested, one, imperishable, and the Lord, devoid of the nature of individuality, is of the nature of consciousness, tranquil, and the enjoyer of bliss.

ब्रह्म, अनादि, अव्यक्त, एक, अविनाशी, और ईश्वर, व्यक्तित्व के स्वभाव से रहित, चेतना के स्वरूप का, शान्त, और आनंद का भोक्ता है।

7.33.32

ब्रह्मणो निःस्वभावस्य सर्गसंवेदने स्वतःस्पन्दने पवनस्येव कारणं नोपयुज्यते ॥ ३२ ॥

brahmaṇo niḥsvabhāvasya sargasaṃvedane svataḥspandane pavanasyeva kāraṇaṃ nopayujyate || 32 ||

The cause of the creation of Brahma, which is devoid of individuality, is not applicable like the movement of the wind.

व्यक्तित्व से रहित ब्रह्म की सृष्टि का कारण हवा की गति की तरह लागू नहीं होता।

7.33.33

स्वप्नानुभववद्भ्रान्तिर्ब्रह्माब्धौ ब्रह्मवीचयःसर्गता वस्तुतस्त्वत्र न स्वप्नो न च सर्गता ॥ ३३ ॥

svapnānubhavavadbhrāntirbrahmābdhau brahmavīcayaḥsargatā vastutastvatra na svapno na ca sargatā || 33 ||

The delusion in the ocean of Brahma, like the experience of a dream, is the discernment of Brahma. In reality, there is neither dream nor creation.

ब्रह्म के समुद्र में सपने के अनुभव की तरह भ्रांति ब्रह्म का विवेक है। वास्तव में, वहाँ न सपना है न सृष्टि।

7.33.34

एकमेव निराभासमचित्त्वमजडं समम्न सन्नासन्न सदसदिदमव्ययमद्वयम् ॥ ३४ ॥

ekameva nirābhāsamacittvamajaḍaṃ samamna sannāsanna sadasadidamavyayamadvayam || 34 ||

There is only one, without any reflection, of the nature of consciousness, non-inert, uniform, neither existent nor non-existent, neither real nor unreal, imperishable, and non-dual.

यह एकमात्र है, जिसमें कोई प्रतिबिंब नहीं है, चेतना के स्वरूप का, निष्क्रिय नहीं, समान, न अस्तित्व में है न अनस्तित्व में, न वास्तविक है न अवास्तविक, अविनाशी, और अद्वैत।

7.33.35

यथास्थितस्यैव सतो यस्यासंवेदनात्मकम्संवित्प्रशमनं जातं तमाहुर्मुनिसत्तमम् ॥ ३५ ॥

yathāsthitasyaiva sato yasyāsaṃvedanātmakamsaṃvitpraśamanaṃ jātaṃ tamāhurmunisattamam || 35 ||

The one in whom the awareness of existence has arisen, and whose consciousness has become tranquil, is called the best among sages.

जिसमें अस्तित्व का बोध उत्पन्न हो गया है, और जिसकी चेतना शांत हो गई है, उसे ऋषियों में श्रेष्ठ कहा जाता है।

7.33.36

सतोऽपि मृन्मयस्येव यस्यासंवेदनात्मकम् । साहं जगद्विगलितं तमाहुर्मुनिसत्तमम् ॥ ३६ ॥

sato'pi mṛnmayasyeva yasyāsaṃvedanātmakam | sāhaṃ jagadvigalitaṃ tamāhurmunitattamam || 36 ||

Even though it exists, it is like clay, whose nature is insentient. I am that dissolved universe, which the best of sages call.

यद्यपि यह अस्तित्व में है, फिर भी यह मिट्टी के समान है, जिसका स्वभाव अचेतन है | मैं वह विलीन ब्रह्मांड हूँ, जिसे श्रेष्ठ मुनि कहते हैं ||

7.33.37

यथा शाम्यत्यसंकल्पात्संकल्पनगरं तथा । वेदनोत्थं जगदहं चिति शाम्यत्यवेदनात् ॥ ३७ ॥

yathā śāmyatyasaṃkalpātsaṃkalpanagaraṃ tathā | vedanotthaṃ jagadahaṃ citi śāmyatyavedanāt || 37 ||

Just as a city of imagination calms down without imagination, so does the universe born of perception calm down in consciousness without perception.

जैसे कल्पना के बिना कल्पना का नगर शांत हो जाता है, वैसे ही अनुभूति के बिना अनुभूति से उत्पन्न ब्रह्मांड चेतना में शांत हो जाता है ||

7.33.38

स्वभाववर्जं शब्दार्थाः सर्व एव सहेतुकाः । स्वभावस्य तु यो हेतुर्मुक्तिस्तदनुभावनम् ॥ ३८ ॥

svabhāvavarjaṃ śabdārthāḥ sarva eva sahetukāḥ | svabhāvasya tu yo heturmektistadanubhāvanam || 38 ||

All words and meanings are with causes except for the inherent nature. The cause of the inherent nature is liberation, which is its realization.

सभी शब्द और अर्थ कारणों से युक्त हैं, स्वभाव को छोड़कर | स्वभाव का कारण मुक्ति है, जो उसका अनुभव है ||

7.33.39

न कस्यचित्पदार्थस्य स्वभावोऽस्तीह कश्चन । महाचिदम्बुद्रवताः सर्वा एवानुभूतयः ॥ ३९ ॥

na kasyacitpadārthasya svabhāvo'stīha kaścana | mahācidambudravatāḥ sarvā evānubhūtayaḥ || 39 ||

There is no inherent nature in any object here. All experiences are like the great cloud of consciousness.

यहाँ किसी भी पदार्थ में कोई स्वभाव नहीं है | सभी अनुभूतियाँ महान चेतना के बादल के समान हैं ||

7.33.40

महाचिदनिलस्पन्दा एता एवानुभूतयः । एतास्ता ब्रह्मगगनशून्यता इति बुध्यताम् ॥ ४० ॥

mahācidanilaspandā etā evānubhūtayaḥ | etāstā brahmagaganaśūnyatā iti budhyatām || 40 ||

These experiences are the vibrations of the great wind of consciousness. Know these to be the emptiness of the Brahman sky.

ये अनुभूतियाँ महान चेतना की हवा की कंपनें हैं | इन्हें ब्रह्म आकाश की शून्यता समझो ||

7.33.41

वातस्पन्दाविवाभिन्नौ ब्रह्मसर्गौ विभिन्नता । तयोस्त्वसत्या स्वभ्रान्तौ स्वप्ने स्वमरणोपमा ॥ ४१ ॥

vātaspandāvivābhinnau brahmasargau vibhinnatā | tayostvasatyā svabhrāntau svapne svamaraṇopamā || 41 ||

Just as the vibrations of the wind are indistinguishable from each other, so are the creation and the creator indistinguishable. However, their apparent difference is unreal, like a dream or an illusion of one's own death.

जैसे हवा की थरथराहट एक दूसरे से अलग नहीं होती, वैसे ही ब्रह्म और सृष्टि एक दूसरे से अलग नहीं हैं। फिर भी, उनकी भिन्नता असत्य है, जैसे स्वप्न या अपनी मृत्यु का भ्रम।

7.33.42

भ्रान्तिस्तु तावत्तत्त्वार्थविचारो यावदस्फुटः । विचारे तु स्फुटे भ्रान्तिर्ब्रह्मतामेव गच्छति ॥ ४२ ॥

bhrāntistu tāvattattvārthavicāro yāvadasphuṭaḥ | vicāre tu sphuṭe bhrāntirbrahmatāmeva gacchati || 42 ||

Delusion persists until the inquiry into the truth is clear. When the inquiry becomes clear, the delusion itself becomes Brahman.

भ्रम तब तक रहता है जब तक सत्य की खोज स्पष्ट नहीं होती। जब खोज स्पष्ट हो जाती है, तब भ्रम स्वयं ब्रह्म बन जाता है।

7.33.43

भ्रान्तिस्त्वसत्या वस्त्वेव प्रेक्षयातो न लभ्यते । शशश्रृङ्गवदत्यच्छमतो ब्रह्मैव शिष्यते ॥ ४३ ॥

bhrāntistvasatyā vastveva prekṣayāto na labhyate | śaśaśṛṅgavadatyacchamato brahmaiva śiṣyate || 43 ||

Delusion, though unreal, is perceived as real. Just as the horns of a hare are non-existent, similarly, beyond delusion, only Brahman remains.

भ्रम, यद्यपि असत्य है, वास्तविक माना जाता है। जैसे खरगोश के सींग अस्तित्वहीन हैं, उसी तरह, भ्रम के पार, केवल ब्रह्म ही बचता है।

7.33.44

अनादिमध्यान्तमनन्तमच्छं समं शिवं शाश्वतमेकमेव । सर्वां जरामोहविकारभारभ्रान्तिं विमुच्याम्बरभावमेहि ॥ ४४ ॥

anādimadhyāntamanantamacchaṃ samaṃ śivaṃ śāśvatamekameva | sarvāṃ jarāmohavikārabhārabhrāntiṃ vimucyāmbarabhāvamehi || 44 ||

Attain the state of the sky, free from all delusions of old age, ignorance, and modifications, by realizing the eternal, one, pure, auspicious, and infinite Brahman.

बुढ़ापे, अज्ञान, और परिवर्तनों के सभी भ्रमों से मुक्त होकर, आकाश की अवस्था प्राप्त करें, सनातन, एक, शुद्ध, मंगलमय, और अनंत ब्रह्म को जानकर।

Chapter 34

7.34.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । प्राप्तेषु सुखदुःखेषु यो नश्यति स नश्यति । यो न नश्यत्यनाशोऽसावलं शास्त्रोपदेशनैः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | prāpteṣu sukhaduḥkheṣu yo naśyati sa naśyati | yo na naśyaty anāśo'sāv alaṃ śāstropadeśanaiḥ || 1 ||

Sri Vasistha said: He who perishes in the face of happiness and sorrow, he perishes. He who does not perish is indestructible; scriptural teachings are sufficient for him.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो सुख-दुःख में नष्ट हो जाता है, वह नष्ट हो जाता है। जो नष्ट नहीं होता, वह अविनाशी है; शास्त्रों के उपदेश उसके लिए पर्याप्त हैं।

7.34.2

यस्य चेच्छोदयस्तस्य सन्त्यवश्यं सुखादयः । ते चेत्सम्यक्चिकित्स्यन्ते पूर्वमिच्छैव मुच्यताम् ॥ २ ॥

yasya ceccodayastasya santyavaśyaṃ sukhādayaḥ | te cetsamyakcikitsyante pūrvamicchaiva mucyatām || 2 ||

For one who desires liberation, happiness and other experiences will inevitably come. If they are properly treated, let the desire be abandoned first.

जिसकी मुक्ति की इच्छा है, उसके लिए सुख और अन्य अनुभव अवश्यंभावी हैं। यदि वे ठीक से चिकित्सित किए जाएँ, तो पहले इच्छा को त्याग देना चाहिए।

7.34.3

अहं जगदिदं भ्रान्तिर्नास्त्येव परमे पदे । इदं शान्तमनालम्बं सर्वं निर्वाणमव्ययम् ॥ ३ ॥

ahaṃ jagadidaṃ bhrāntirnāstyeva parame pade | idaṃ śāntamanālambaṃ sarvaṃ nirvāṇamavyayam || 3 ||

I, this world, and delusion do not exist in the supreme state. This is peaceful, supportless, all is nirvana, imperishable.

मैं, यह जगत, और भ्रांति परम पद में नहीं हैं। यह शांत, असहाय, सब कुछ निर्वाण, अविनाशी है।

7.34.4

अहं ब्रह्म जगच्चेति शब्दसंभ्रमविभ्रमः । सर्वस्मिञ्छान्त आकाशे केन नामोपकल्पितः ॥ ४ ॥

ahaṃ brahma jagacceti śabdasambhramavibhramaḥ | sarvasmiñchānta ākāśe kena nāmopakalpitaḥ || 4 ||

The words 'I', 'Brahman', and 'world' are a confusion of sounds. In the peaceful, all-pervading sky, by what name is it designated?

'मैं', 'ब्रह्म', और 'जगत' शब्द ध्वनियों का भ्रम हैं। शांत, सर्वव्यापी आकाश में, इसे किस नाम से पुकारा जाए?

7.34.5

नेहास्त्यहं न च जगन्न च ब्रह्मादिशब्दकाः । शान्तस्यैकस्य सर्वत्वात्कर्ता भोक्तेह कः कुतः ॥ ५ ॥

nehaastyahaṃ na ca jagann na ca brahmādiśabdakāḥ | śāntasyaiaksya sarvatvātkartā bhokta ih kakutah || 5 ||

Here, there is no 'I', no world, nor words like 'Brahman'. Since the peaceful one is all, who is the doer or enjoyer here?

यहाँ, 'मैं' नहीं है, जगत नहीं है, न ही 'ब्रह्म' जैसे शब्द हैं। शांत का सब कुछ होने के कारण, यहाँ कर्ता या भोक्ता कौन है?

7.34.6

उपदेश्यातिशायित्वात्सर्वापह्नव एव च । कृतोऽयं स च सत्यात्मा त एवाहं विशिष्यते ॥ ६ ॥

upadeśyātiśāyitvātsarvāpahnav eva ca | kṛto'yaṃ sa ca satyātmā ta evāhaṃ viśiṣyate || 6 ||

Due to the superiority of the instruction, all negations are indeed made | He is the true self, and thus I am distinguished

उपदेश की श्रेष्ठता के कारण सभी निषेध किए गए हैं | वह सत्य आत्मा है, और इसलिए मैं विशिष्ट हूँ

7.34.7

अग्रस्थसिद्धसंचारो ज्ञायते नापि दारुणः । यथैकपार्श्वसंसुप्तनरः स्वप्नाभ्रगर्जितम् ॥ ७ ॥

agrasthasiddhasaṃcāro jñāyate nāpi dāruṇaḥ | yathaikapārśvasaṃsuptanaraḥ svapnābhrajgarjitam || 7 ||

The movement of the accomplished one is not perceived as fearful | Just as a person asleep on one side hears the thunder in a dream

सिद्ध का संचार डरावना नहीं लगता | जैसे एक पार्श्व में सोया हुआ व्यक्ति स्वप्न में गर्जन सुनता है

7.34.8

ज्ञप्तौ नास्ति यतस्तेन सिद्धाचारो न लक्ष्यते । स्वभाव इति सर्वेण ज्ञप्तिस्थो ह्यनुभूयते ॥ ८ ॥

jñaptau nāsti yatastena siddhācāro na lakṣyate | svabhāva iti sarveṇa jñaptistho hyanubhūyate || 8 ||

There is no perception because of which the accomplished one's conduct is not seen | It is perceived as natural by all

ऐसी कोई ज्ञप्ति नहीं है जिससे सिद्ध का आचार देखा नहीं जाता | यह सभी द्वारा प्राकृतिक माना जाता है

7.34.9

ज्ञप्तिरप्यात्मभूतैव सर्वं भाति हि तन्मयम् । तस्मात्साहं जगत्सर्वमभिन्नं परमात्मनः ॥ ९ ॥

jñaptirapyātmabhūtaiva sarvaṃ bhāti hi tanmayam | tasmātsāhaṃ jagatsarvamabhinnaṃ paramātmanaḥ || 9 ||

Even the perception is indeed the self | Everything shines as that | Therefore, I am the entire world, non-different from the supreme self

यह ज्ञप्ति भी स्वयं आत्मा है | सब कुछ उसके रूप में चमकता है | इसलिए, मैं सम्पूर्ण जगत् हूँ, परमात्मा से अभिन्न

7.34.10

ज्ञप्तिर्जगत्तया भाति संकल्पस्वप्नयोरिव । अनानावयवोदेति जलमूर्मितया यथा ॥ १० ॥

jñaptirjagattayā bhāti saṃkalpasvapnayoriva | anānāvayavodeti jalamūrmitayā yathā || 10 ||

The perception shines as the world | Like imagination and dream | It appears as non-different parts | Like waves in water

ज्ञप्ति जगत् के रूप में चमकती है | जैसे कि संकल्प और स्वप्न | यह अवयवों के रूप में प्रकट होता है | जैसे जल में तरंगें

7.34.11

एकात्मैवोदये ज्ञप्तेर्नानातामिव चागतः । अज्ञानात्स त्ववस्तुत्वात्प्रेक्षितो नोपलभ्यते ॥ ११ ॥

ekātmaivodaye jñapter nānātāmiva cāgataḥ | ajñānāt sa tvavastutvāt prekṣito nopalabhyate || 11 ||

In the realization of the one Self, the apparent diversity vanishes. Due to ignorance, it is perceived as unreal and thus not found.

एक आत्मा के उदय में, भिन्नता का भ्रम होता है। अज्ञान के कारण, वह अवास्तविक है, इसलिए उसे नहीं पाया जाता।

7.34.12

यथा स्वावयवानेव सर्वानवयवी भवेत्। नित्यानवयवं शान्तं ब्रह्मैवेदं तथा जगत्॥ १२॥

yathā svāvayavāneva sarvānavayavī bhavet | nityānavayavaṃ śāntaṃ brahmaivedaṃ tathā jagat || 12 ||

Just as every part of the whole is the whole itself, this universe is the eternal, peaceful Brahman.

जैसे पूरे का हर अंश पूरा ही होता है, वैसे ही यह ब्रह्मांड नित्य, शान्त ब्रह्म है।

7.34.13

भाण्डलक्षाणि धत्तेऽन्तश्चिद्रूपकनकेष्टिका। यदेव सा चेतयते जगदादीव वेत्ति तत्॥ १३॥

bhāṇḍalakṣāṇi dhatte'ntaścidrūpakanakeṣṭikā | yadeva sā cetayate jagadādīva vetti tat || 13 ||

The golden brick within contains the essence of all vessels. Whatever it thinks, it knows the universe as such.

सोने की ईंट के अंदर सभी बर्तनों का सार है। जो भी वह सोचती है, वह ब्रह्मांड को ऐसा ही जानती है।

7.34.14

ब्रह्मैव कचतीवेदं सत्तयाच्छजगत्तया। चिद्रूपत्वाद्द्रवात्मत्वात्तरङ्गादितयाब्धिवत्॥ १४॥

brahmaiva kacatīvedaṃ sattayācchajagattayā | cidrūpatvāddravātmatvāttaraṅgāditayābdhivat || 14 ||

Brahman alone shines as the universe, with its reality and brilliance. Due to its nature of consciousness and fluidity, it is like the ocean with its waves.

ब्रह्म अकेला ही ब्रह्मांड के रूप में चमकता है, उसकी वास्तविकता और चमक के साथ। अपनी चेतना और प्रवाहिता के कारण, यह समुद्र के समान है जिसमें लहरें होती हैं।

7.34.15

ब्रह्मैव कचतीवेदं सत्तयाच्छजगत्तयाचिद्रूपत्वाद्द्रवात्मत्वात्तरङ्गादितयाब्धिवत्॥ १५॥

brahmaiva kacatīvedaṃ sattayācchajagattayācidrūpatvāddravātmatvāttaraṅgāditayābdhivat || 15 ||

Brahman alone shines forth as this universe, with its reality, its form of consciousness, its fluid nature, and its expansiveness like the ocean.

ब्रह्म ही इस ब्रह्मांड के रूप में चमकता है, उसकी वास्तविकता, चेतना के रूप, उसकी तरल प्रकृति, और सागर की तरह उसकी विस्तारित प्रकृति के साथ।

7.34.16

चेतनाचेतनत्वोक्ती तस्येशत्वात्स्वदेहगे। उपदेशार्थमेवोक्ते न सद्विषयमर्थतः॥ १६॥

cetanācetanatvoktī tasyeśatvātsvadehage | upadeśārthamevokte na sadviṣayamarthataḥ || 16 ||

The distinction between the sentient and the insentient is made for the sake of instruction, not in reality, due to its lordship over its own body.

चेतन और अचेतन का भेद उपदेश के लिए किया जाता है, वास्तविकता में नहीं, क्योंकि यह अपने शरीर पर अधिकार रखता है।

7.34.17

न जगत्सन्न चैवासद्भासते चेतनाच्चिति। अचेतनान्न कचति क इवार्थग्रहोऽत्र नः॥ १७॥

na jagatsann na caivāsadbhāsate cetanācciti | acetanānna kacati ka ivārthagraho'tra naḥ || 17 ||

The world neither exists nor does it not exist, it appears due to consciousness; without consciousness, it does not exist. What is the meaning of this?

जगत न है और न ही नहीं है, यह चेतना से प्रकट होता है; चेतना के बिना यह नहीं है। इसका क्या अर्थ है?

7.34.18

अचेतनं चेतनं च स्पन्दास्पन्दवदात्मनः । स्वायत्ते न कदर्थस्थे स्वस्थपाषाणवत्स्थिते ॥ १८ ॥

acetanaṃ cetanaṃ ca spandāspandavadātmanaḥ | svāyatte na kadarthasthe svasthapāṣāṇavatsthite || 18 ||

Both the conscious and the unconscious are like the vibrating and non-vibrating aspects of the self. They are not dependent on any purpose, remaining steady like a stone.

चेतन और अचेतन दोनों आत्मा के स्पन्दन और अस्पन्दन की तरह हैं। वे किसी उद्देश्य पर निर्भर नहीं हैं, एक पत्थर की तरह स्थिर रहते हैं।

7.34.19

यस्येक्षितस्य नो सत्ता नाधारो न च कारणम् । सोऽहमित्येव यो यक्षो न जाने कुत उत्थितः ॥ १९ ॥

yasyekṣitasya no sattā nādhāro na ca kāraṇam | so'hamityeva yo yakṣo na jāne kuta utthitaḥ || 19 ||

That which is seen has no existence, no support, and no cause. I am that, says the spirit, but I do not know from where it arises.

जिसका दर्शन होता है, उसका कोई अस्तित्व नहीं है, कोई आधार नहीं है, और कोई कारण नहीं है। मैं वह हूँ, आत्मा कहता है, लेकिन मैं नहीं जानता कि यह कहाँ से उत्पन्न होता है।

7.34.20

यस्याहमिति यक्षस्य सत्तैवास्ति न सत्यतः । अहो नु चित्रं तेनेमे भवन्तो विवशीकृताः ॥ २० ॥

yasyāhamiti yakṣasya sattaivāsti na satyataḥ | aho nu citraṃ teneme bhavanto vivashīkṛtāḥ || 20 ||

The existence of the spirit that says 'I am' is not real. Oh, how strange it is that beings are thus rendered helpless.

जिस आत्मा को 'मैं हूँ' कहता है, उसका अस्तित्व वास्तविक नहीं है। ओह, कितना अजीब है कि प्राणियों को इस प्रकार असहाय किया जाता है।

7.34.21

काकतालीयवद्भ्रान्तमहं ब्रह्मणि भासते । स्वमेव रूपं दृग्भ्रान्तौ केशोण्डूकमिवाम्बरे ॥ २१ ॥

kākatālīyavadbhrāntamahaṃ brahmaṇi bhāsate | svameva rūpaṃ dṛgbhrāntau keśoṇḍrakamivāmbare || 21 ||

Like the illusion of a crow's tail, the 'I' appears in Brahman. In the illusion of perception, it appears as its own form, like a halo around the moon.

कौए की पूँछ के भ्रम की तरह, 'मैं' ब्रह्म में प्रकट होता है। दृष्टि के भ्रम में, यह अपने रूप में प्रकट होता है, जैसे चंद्रमा के इर्द-गिर्द हैलो की तरह।

7.34.22

ब्रह्मैवाहं जगच्चात्र कुतो नाशसमुद्भवौ । अतो हर्षविषादानां किंत्वेव कथमास्पदम् ॥ २२ ॥

brahmaivāhaṃ jagaccātra kuto nāśasamudbhavau | ato harṣaviṣādānāṃ kiṃtveva kathamāspadam || 22 ||

I am Brahman, and this world is Brahman| Where is the origin and destruction of this world| Therefore, what is the basis for joy and sorrow?

मैं ब्रह्म हूँ, और यह जगत ब्रह्म है| इस जगत का उत्पत्ति और विनाश कहाँ है| इसलिए, हर्ष और विषाद का क्या आधार है?

7.34.23

सर्वेश्वरत्वादीशस्य विभातीदं प्रचेतितम् । अचेतितं च नो भाति तेनाचेतितमस्तु ते ॥ २३ ॥

sarveśvaratvādīśasya vibhātīdaṃ pracetitam | acetitaṃ ca no bhāti tenācetitamastu te || 23 ||

Due to the lordship of the Supreme Lord, this world appears as conscious| The unconscious does not appear, therefore let it be unconscious for you

परमेश्वर के सर्वेश्वरत्व के कारण, यह जगत चेतन प्रतीत होता है| अचेतन नहीं दिखता, इसलिए आपके लिए यह अचेतन हो

7.34.24

काकतालीयवच्चित्त्वाज्जगतो भाति ब्रह्म खम्। स्वप्नसंकल्पपुरवत्तत्तस्माद्भिद्यते कथम्॥ २४॥

kākatālīyavaccittvājjagato bhāti brahma kham | svapnasankalpapuravattattasmādbhidyate katham || 24 ||

Just as a crow sees a palmyra fruit as non-existent, the world appears as Brahman, the sky| Like a dream or an imagined city, how can that be different from it?

जैसे कौआ ताड़ के फल को असत् समझता है, वैसे ही जगत ब्रह्म, आकाश के रूप में प्रतीत होता है| जैसे स्वप्न या कल्पित नगर, वैसे ही उससे कैसे भिन्न हो सकता है?

7.34.25

यथोर्म्यादि जले वृक्षे यथा वा शालभञ्जिका। यथा घटादयो भूमौ तथा ब्रह्मणि सर्गता॥ २५॥

yathormyādi jale vṛkṣe yathā vā śālabhañjikā | yathā ghaṭādayo bhūmau tathā brahmaṇi sargatā || 25 ||

Just as a tree is seen in water, or a mirage in the desert, or pots on the ground, so is the creation in Brahman

जैसे पानी में वृक्ष दिखता है, या रेगिस्तान में मृगतृष्णा, या धरती पर घड़े, वैसे ही ब्रह्म में सृष्टि है

7.34.26

अनाकृतावसंस्थाने स्वच्छे यदनुभूयते। तत्तदेवात उदितं किंनामाहं जगन्ति किम्॥ २६॥

anākṛtāvasaṃsthāne svacche yadanubhūyate | tattadevāta uditaṃ kiṃnāmāhaṃ jaganti kim || 26 ||

In the pure, uncreated state, whatever is experienced, that itself arises from it| What is my name, what is the world?

शुद्ध, अकृत्रिम अवस्था में, जो कुछ भी अनुभव किया जाता है, वही उससे उत्पन्न होता है| मेरा नाम क्या है, जगत क्या है?

7.34.27

मरुतः स्पन्दवैचित्र्यं सत्तयैव यथा तथा। ब्रह्मणो निःस्वभावस्य जगदाद्यहमादि च॥ २७॥

marutaḥ spandavaicitryaṃ sattayaiva yathā tathā | brahmaṇo niḥsvabhāvasya jagadādyahamādi ca || 27 ||

Just as the winds have various movements due to their very existence, so too the world and the individual self arise from Brahman, which is devoid of attributes.

जैसे वायु के विभिन्न गतिविधियाँ उसके अस्तित्व के कारण होती हैं, वैसे ही ब्रह्म से, जो निर्गुण है, जगत और आत्मा का उद्भव होता है।

7.34.28

यथाभ्रे लक्ष्यते वृक्षगजवाजिमृगादिता। असन्निवेशाकृतिनि सर्गाहन्ते तथापरे॥ २८॥

yathābhre lakṣyate vṛkṣagajavājimṛgāditā | asanniveśākṛtini sargāhante tathāpare || 28 ||

Just as various forms like trees, elephants, horses, and deer are seen in a cloud, which has no real form, so too the world appears in Brahman, which is formless.

जैसे बादल में, जिसकी कोई वास्तविक आकृति नहीं होती, वृक्ष, हाथी, घोड़े और हिरण जैसी विभिन्न आकृतियाँ दिखाई देती हैं, वैसे ही निराकार ब्रह्म में जगत का प्रतीत होता है।

7.34.29

सर्गोऽवयववद्भाति सर्व एव परे शिवे । एवं तदुपमां विद्धि कार्यकारणवद्यथा ॥ २९ ॥

sargo'vayavavadbhāti sarva eva pare śive | evaṃ tadupamāṃ viddhi kāryakāraṇavadyathā || 29 ||

The creation appears as if it has parts, but in reality, it is all in the supreme Shiva. Know this analogy to be like the relationship between cause and effect.

सृष्टि ऐसी प्रतीत होती है जैसे उसमें अवयव हैं, लेकिन वास्तव में सब कुछ परम शिव में है। इस उपमा को कारण और कार्य के संबंध की तरह समझो।

7.34.30

अन्तःशान्तमनायासमनुपाधि गतभ्रमम् । जगत्यसंभवादेव व्योमवत्सममास्यताम् ॥ ३० ॥

antaḥśāntamanāyāsamanupādhi gatabhramam | jagatyasambhavādeva vyomavatsamamāsyatām || 30 ||

Being internally peaceful, effortless, free from limitations, and devoid of delusions, due to the non-existence of the world, it should be realized as identical to the sky.

अंतःशांत (अंदर से शांत), अनायास (बिना परिश्रम के), अनुपाधि (बिना किसी बाधा के), गतभ्रम (भ्रम से मुक्त), जगत्यसंभवादेव (जगत के अस्तित्व न होने से), व्योमवत् (आकाश की तरह) सममास्यताम् (समझा जाए)।

7.34.31

न भवन्तो न च वयं न जगन्ति न खादयः । सन्ति शान्तमशेषेण ब्रह्मेदं निर्भरं स्थितम् ॥ ३१ ॥

na bhavanto na ca vayaṃ na jaganti na khādayaḥ | santi śāntamaśeṣeṇa brahmedaṃ nirbharaṃ sthitam || 31 ||

Neither you nor we nor the worlds nor the spaces exist. All is peaceful and complete in this Brahman, which is without support.

न तुम, न हम, न जगत, न आकाश हैं। सब कुछ शांत और पूर्ण है इस ब्रह्म में, जो बिना किसी आधार के स्थित है।

7.34.32

अशेषेष्वविशेषेषु शान्ताशेषविशेषतासत्या सैवाहमित्याशु त्यक्त्वा मोक्षाय भाव्यताम् ॥ ३२ ॥

aśeṣeṣvaviśeṣeṣu śāntāśeṣaviśeṣatāsatyā saivāhamityāśu tyaktvā mokṣāya bhāvyatām || 32 ||

In the complete and undifferentiated, realizing the truth of the tranquil and complete nature, quickly give up the sense of 'I am this' for the sake of liberation.

पूर्ण और अविभाजित में, शान्त और पूर्ण प्रकृति की सत्यता को समझकर, 'मैं यह हूँ' की भावना को मुक्ति के लिए शीघ्र त्याग दें।

7.34.33

वेदनं बन्धनं विद्धि विद्धि मोक्षमवेदनम्यथास्थितं यथाचारं भव शान्तमवेदनम् ॥ ३३ ॥

vedanaṃ bandhanaṃ viddhi viddhi mokṣamavedanamyathāsthitaṃ yathācāraṃ bhava śāntamavedanam || 33 ||

Know that experience is bondage; know that freedom is the absence of experience. Remain as you are, according to your nature, and be tranquil without experience.

अनुभव बंधन है, यह जानें; मुक्ति अनुभव की अनुपस्थिति है, यह जानें। अपनी प्रकृति के अनुसार जैसे हैं वैसे ही रहें, और अनुभव के बिना शान्त रहें।

7.34.34

द्रष्टा न दृश्यतां याति चितिर्नायाति चेत्यताम्चेत्याभावादजगति कः किं चेतयते कथम् ॥ ३४ ॥

draṣṭā na dṛśyatāṃ yāti citirnāyāti cetyatāmcetyābhāvādajagati kaḥ kiṃ cetayate katham || 34 ||

The seer does not become the seen; consciousness does not come and go. Due to the absence of thought, who thinks what and how in the world?

द्रष्टा दृश्य नहीं बनता; चेतना नहीं आती-जाती है। विचार की अनुपस्थिति के कारण, जगत में कौन क्या और कैसे सोचता है?

7.34.35

द्रष्टृदृश्यदशाभावाज्जाग्रत्येव सुषुप्तिवत्सरदाकाशकोशाभमसत्तोपममास्यताम् ॥ ३५ ॥

draṣṭṛdṛśyadaśābhāvājjāgratyeva suṣuptivatśaradākāśakośābhamasattopamamāsyatām || 35 ||

Due to the absence of the state of the seer and the seen, wakefulness itself is like deep sleep, resembling the clear autumn sky, devoid of any entity.

द्रष्टा और दृश्य की अवस्था की अनुपस्थिति के कारण, जाग्रत अवस्था स्वयं गहरी नींद की तरह होती है, जो किसी भी वस्तु से रहित साफ शरद आकाश की तरह है।

7.34.36

तथैकब्रह्मचिद्रूपे पवनस्पन्दने यथात्राचिद्बोधता सर्गो मोक्षो ब्रह्मैकबोधता ॥ ३६ ॥

tathaikabrahmacidrūpe pavanaspandane yathāatrācidbodhatā sargo mokṣo brahmaikabodhatā || 36 ||

Thus, in the form of Brahman-consciousness, the vibration of the wind, as the awareness of consciousness here, creation and liberation are due to the awareness of Brahman alone.

इस प्रकार, ब्रह्मचेतना के रूप में, वायु की स्पंदन के रूप में, यहाँ चेतना के बोध के रूप में, सृष्टि और मोक्ष ब्रह्म के बोध से ही होते हैं।

7.34.37

चित्स्पन्दो ब्रह्ममरुतो यत्र सर्ग इति स्मृतः । नात्र चित्स्पन्दनं यत्स्यान्निर्वाणं तदुदाहृतम् ॥ ३७ ॥

citsapando brahmaruto yatra sarga iti smṛtaḥ | nātra citsapandanaṃ yatsyānnirvāṇaṃ tadudāhṛtam || 37 ||

Where the vibration of consciousness, known as Brahma, is the creation, it is said that there is no vibration of consciousness there, that is called Nirvana.

जहाँ चेतना की स्पंदन, जिसे ब्रह्म कहते हैं, सृष्टि है, वहाँ चेतना की स्पंदन नहीं है, वह निर्वाण कहलाता है।

7.34.38

बीजमन्तर्यथा वेत्ति स्वरूपं पल्लवादिकम् । तथा महाचिदन्तस्थं स्वरूपं वेत्ति सर्गताम् ॥ ३८ ॥

bījamantaryathā vetti svarūpaṃ pallavādikam | tathā mahācidantasthaṃ svarūpaṃ vetti sargatām || 38 ||

Just as a seed knows its nature as a sprout and so on, similarly, the great consciousness within knows its nature as the creation.

जैसे बीज अपने स्वरूप को अंकुर और आगे के रूप में जानता है, वैसे ही, अंतर्निहित महाचेतना अपने स्वरूप को सृष्टि के रूप में जानती है।

7.34.39

पत्रादिवेदनाद्बीजं यथा पत्रादि तिष्ठति । परा चित्सर्गसंवित्तिस्तथा भवति सर्गता ॥ ३९ ॥

patrādivedanādbījaṃ yathā patrādi tiṣṭhati | parā citsargasaṃvittistathā bhavati sargatā || 39 ||

Just as a seed exists through the knowledge of leaves and so on, similarly, the supreme consciousness of creation exists as the creation.

जैसे बीज पत्तियों और आगे के ज्ञान से अस्तित्व में आता है, वैसे ही, सृष्टि की परम चेतना सृष्टि के रूप में अस्तित्व में आती है।

7.34.40

यथा भावविकाराभाश्चित्पराः सर्गतास्तथा । सर्वे बीजानि दृष्टान्तास्तद्रूपा एव तन्मयाः ॥ ४० ॥

yathā bhāvavikārābhāścitparāḥ sargatāstathā | sarve bījāni dṛṣṭāntāstadrūpā eva tanmayāḥ || 40 ||

Just as the supreme consciousnesses are the manifestations of the states of being, similarly, all seeds are examples of that form, being of that nature.

जैसे परम चेतनाएँ अस्तित्व की अवस्थाओं के प्रकटीकरण हैं, वैसे ही, सभी बीज उसी रूप के उदाहरण हैं, उसी प्रकृति के हैं।

7.34.41

निर्विकारपरब्रह्ममयं सर्वमिदं जगत् । निर्विकारमनाद्यन्तमेवं विद्धि निरामयम् ॥ ४१ ॥

nirvikāraparabrahmayamaṃ sarvamidaṃ jagat | nirvikāramanādyantamevaṃ viddhi nirāmayam || 41 ||

Know that this entire universe is pervaded by the supreme Brahman, which is changeless, without beginning or end, and free from all impurities.

जानो कि यह पूरा ब्रह्मांड परब्रह्म से व्याप्त है, जो निर्विकार, अनादि, अनंत और सभी दोषों से मुक्त है।

7.34.42

निजसंकल्पमात्रात्मा निजसंकल्पनात्क्षयी । द्वैताद्वैतविकारोऽयं संकल्पनगरं यथा ॥ ४२ ॥

nijasaṃkalpamātrātmā nijasaṃkalpanātkṣayī | dvaitādvaitavikāro'yaṃ saṃkalpanagaraṃ yathā || 42 ||

The self is merely its own will, and it perishes by its own will | This transformation of duality and non-duality is like a city of imagination || 42 ||

स्वयं केवल अपनी इच्छा है, और अपनी ही इच्छा से नष्ट होता है | द्वैत और अद्वैत का यह परिवर्तन कल्पना के नगर की तरह है || 42 ||

7.34.43

शून्यत्वाकाशयोर्भेदो यादृशोऽवगतस्त्वया । भेदं निरात्मकं विद्धि तादृशं ब्रह्मसर्गयोः ॥ ४३ ॥

śūnyatvākāśayorbhedo yādṛśo'vagatastvayā | bhedaṃ nirātmakaṃ viddhi tādṛśaṃ brahmasargayoḥ || 43 ||

Just as you have understood the difference between emptiness and space | Know the difference between Brahman and creation to be similarly without self || 43 ||

जैसे तुमने शून्यता और आकाश के भेद को समझा है | ब्रह्म और सृष्टि के भेद को उसी तरह निरात्मक समझो || 43 ||

7.34.44

मद्वाचिद्रूपिणी शान्ता या सत्ता ब्रह्मणः पुरा । स्वतः सेयमहंत्वं च मानवोऽस्मीत्यबोधतः ॥ ४४ ॥

madvācidrūpiṇī śāntā yā sattā brahmaṇaḥ purā | svataḥ seyamahaṃtvaṃ ca mānavo'smītyabodhataḥ || 44 ||

The peaceful existence that is the form of my speech, which was the existence of Brahman in the past | From itself, it becomes the sense of 'I am a human' due to ignorance || 44 ||

जो शान्त अस्तित्व मेरी वाणी का रूप है, जो पहले ब्रह्म का अस्तित्व था | स्वयं से, यह अज्ञान के कारण 'मैं मनुष्य हूँ' की भावना बन जाता है || 44 ||

7.34.45

ब्रह्मण्यस्मिञ्जगद्रूपे न किंचिदपि जायते । जातमप्यथ नष्टं च न नश्यत्यम्बुवीचिवत् ॥ ४५ ॥

brahmaṇyasmiñjagadrūpe na kiṃcidapi jāyate | jātamapyatha naṣṭaṃ ca na naśyatyambuvīcivat || 45 ||

In Brahman, which is the form of the universe, nothing is born | Even if born, it does not perish, like waves in water || 45 ||

ब्रह्म में, जो ब्रह्मांड का रूप है, कुछ भी उत्पन्न नहीं होता | भले ही उत्पन्न हो, वह नष्ट नहीं होता, जैसे पानी में लहरें || 45 ||

7.34.46

पदार्थब्रह्मरूपेण ब्रह्मैवात्मनि तिष्ठति । अवयवीवावयवे खे खं वारीव वारिणि ॥ ४६ ॥

padārthabrahmarūpeṇa brahmaivātmani tiṣṭhati | avayavīvāvayave khe khaṃ vārīva vāriṇi || 46 ||

Brahman itself abides in the self in the form of the universe | Like a part in the whole, space in space, water in water || 46 ||

ब्रह्म स्वयं आत्मा में ब्रह्मांड के रूप में निवास करता है | जैसे अंश पूर्ण में, आकाश आकाश में, पानी पानी में || 46 ||

7.34.47

निमेषादर्धभागेन देशाद्देशान्तरस्थितौ । यद्रूपं संविदो मध्ये स स्वभाव उपास्यताम् ॥ ४७ ॥

nimeṣādardhabhāgena deśāddeśāntarasthitau | yadrūpaṃ saṃvido madhye sa svabhāva upāsyatām || 47 ||

In half a moment, from one place to another, the form that exists in the middle of consciousness, that is the nature to be worshipped.

आधे पल में, एक स्थान से दूसरे स्थान पर, जो रूप चेतना के मध्य में है, वही उपासना करने योग्य स्वभाव है।

7.34.48

संक्षुब्धमक्षुब्धमिति द्विरूपं संवित्स्वरूपं प्रवदन्ति सन्तः । श्रेयः परं येन समीहसे त्वं तदेकनिष्ठो भव माऽमतिर्भूः ॥ ४८ ॥

saṃkṣubdhamakṣubdhamiti dvirūpaṃ saṃvitsvarūpaṃ pravadanti santaḥ | śreyaḥ paraṃ yena samīhase tvaṃ tadekanniṣṭho bhava mā'matirbhūḥ || 48 ||

The saints describe the nature of consciousness as having two forms: agitated and unagitated. May you aspire for the highest good through that, be devoted to it, and do not be confused.

संत चेतना के स्वरूप को दो रूपों में बताते हैं: क्षुब्ध (अशांत) और अक्षुब्ध (शांत)। उसके द्वारा तुम उच्चतम कल्याण की इच्छा करो, उसमें एकाग्र हो जाओ, और भ्रमित न हो।

Chapter 35

7.35.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । देशाद्देशान्तरं दूरं प्राप्तायाः संविदः क्षणात् । यद्रूपममलं मध्ये परं तद्रूमात्मनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | deśāddēśāntaraṁ dūraṁ prāptāyāḥ saṁvidhaḥ kṣaṇāt | yadrūpamamalaṁ madhyē paraṁ tadrūmātmanaḥ || 1 ||

Śrīvasiṣṭha said: The pure form of consciousness, which is attained instantly even when moving from one place to another, is the supreme form of the Self.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाते हुए भी जो चेतना का शुद्ध रूप क्षणभर में प्राप्त होता है, वह आत्मा का परम रूप है।

7.35.2

गच्छन्श्रृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नुन्मिषन्निमिषन्हसन् । नूनं निरामयत्वाय नित्यमेतन्मयो भव ॥ २ ॥

gacchanśṛṇvanspṛśañjighrannunmiṣannimiṣanhasan | nūnaṁ nirāmayatvāya nityametanmayo bhava || 2 ||

While moving, hearing, touching, smelling, opening and closing the eyes, and laughing, one should always remain in the state of pure consciousness for the sake of freedom from afflictions.

चलते हुए, सुनते हुए, छूते हुए, सूंघते हुए, आंखें खोलते और बंद करते हुए, और हंसते हुए, व्यक्ति को पीड़ाओं से मुक्ति के लिए हमेशा शुद्ध चेतना की स्थिति में रहना चाहिए।

7.35.3

तत एव निराभासात्सत्यान्निर्वासनैषणात् । यथास्थितं यथाचारमचलाऽमरशैलवत् ॥ ३ ॥

tat eva nirābhāsātsatyānnirvāsanaiṣaṇāt | yathāsthitaṁ yathācāramacalā'marśailavat || 3 ||

From that very non-illusory truth, due to the desire for liberation, remain steadfast in your natural state and conduct, like the immovable mountain of the gods.

उसी भ्रमरहित सत्य से, मुक्ति की इच्छा के कारण, अपनी प्राकृतिक स्थिति और आचरण में अचल रहें, जैसे देवताओं का अचल पर्वत।

7.35.4

एतद्रूपमविद्यायाः प्रेक्षिता यन्न लभ्यते । प्रेक्षिता लभ्यते चेत्सा तद्विद्यैव पराभवत् ॥ ४ ॥

etadrūpamavidyāyāḥ prekṣitā yanna labhyate | prekṣitā labhyate cetsā tadvidyaiava parābhavat || 4 ||

The form of ignorance is not attained by merely looking at it. If it is attained by looking, then it is indeed knowledge, not ignorance.

अज्ञान का रूप केवल देखने से प्राप्त नहीं होता। यदि देखने से प्राप्त होता है, तो वह ज्ञान है, अज्ञान नहीं।

7.35.5

अविद्यासंभवाच्चेत्यचित्त्वे संभवतः क्व किम् । चेत्यते कथमेवान्तः शान्तिरेव बलोदिता ॥ ५ ॥

avidyāsaṁbhavāccetyacittve saṁbhvataḥ kvakim | cetayate kathamevāntaḥ śāntireva baloditā || 5 ||

From the arising of ignorance, what arises in the non-conscious? How can it be conceived within? Peace alone is proclaimed as the strength.

अज्ञान के उत्पन्न होने से, अचेतन में क्या उत्पन्न होता है? यह कैसे अंदर समझा जा सकता है? शांति ही बल के रूप में घोषित है।

7.35.6

सत्यं ब्रह्म जगच्चैकं स्थितमेकमनेकवत्। सर्वं वाऽसर्ववद्भाति शुद्धं चाशुद्धवत्ततम्॥ ६॥

satyam brahma jagaccaiakam sthitamekamanekavat | sarvam vā'sarvavadbhāti śuddham cāśuddhavattatam || 6 ||

Truth is Brahman, and the world is one, existing as one and many | All appears as non-existent, pure and impure

सत्य ब्रह्म है, और जगत् एक है, एक और अनेक के रूप में स्थित | सब कुछ असत्य के रूप में प्रतीत होता है, शुद्ध और अशुद्ध

7.35.7

अशून्यं शून्यमिव च शून्यं वाऽशून्यवत्स्फुटम्। स्फारमस्फारमिव तदस्फारं स्फारसन्निभम्॥ ७॥

aśūnyam śūnyamiva ca śūnyam vā'śūnyavatsphuṭam | sphāramasphāramiva tadasphāram sphārasannibham || 7 ||

Non-empty appears as empty, and empty appears as non-empty | The manifest appears as non-manifest, and the non-manifest appears as manifest

अशून्य शून्य के रूप में दिखाई देता है, और शून्य अशून्य के रूप में दिखाई देता है | स्फार अस्फार के रूप में दिखाई देता है, और अस्फार स्फार के रूप में दिखाई देता है

7.35.8

अविकारं विकारीव समं शान्तमशान्तवत्। सदेवासदिवादृश्यं तदेवातदिवोदितम्॥ ८॥

avikāram vikārīva samam śāntam aśāntavat | sadevāsadivādṛśyam tadevātadivoditam || 8 ||

The unchanging appears as changing, calm appears as restless | The real appears as unreal, and that alone is spoken of as not that

अविकारी विकारी के रूप में दिखाई देता है, शान्त अशान्त के रूप में दिखाई देता है | सत् असत् के रूप में दिखाई देता है, और वही उसके रूप में कहा जाता है जो वह नहीं है

7.35.9

अविभागं विभागीव निर्जाड्यं जडवद्गतम्। अचेत्यं चेत्यभावीव निरंशं सांशशोभनम्॥ ९॥

avibhāgam vibhāgīva nirjāḍyam jaḍavadgatam | acetyam cetyabhāvīva niraṃśam sāṃśaśobhanam || 9 ||

The indivisible appears as divisible, the non-inert appears as inert | The non-conscious appears as conscious, the partless appears as having parts

अविभाज्य विभाज्य के रूप में दिखाई देता है, निर्जड़ जड़ के रूप में दिखाई देता है | अचेतन चेतन के रूप में दिखाई देता है, निरंश सांश के रूप में दिखाई देता है

7.35.10

अनहं सोऽहमिव तदनाशमिव नाशवत्। अकलङ्कं कलङ्कीव निर्वेद्यं वेद्यवाहिवत्॥ १०॥

anahaṃ so'hamiva tadanāśamiva nāśavat | akalaṅkam kalaṅkīva nirvedyam vedyavāhivat || 10 ||

The non-self appears as the self, the indestructible appears as destructible | The flawless appears as flawed, the unknowable appears as knowable

अनहम् सोऽहम् के रूप में दिखाई देता है, अविनाशी विनाशी के रूप में दिखाई देता है | निर्दोष दोषी के रूप में दिखाई देता है, अज्ञेय ज्ञेय के रूप में दिखाई देता है

7.35.11

आलोकि ध्वान्तघनवन्नवच्च पुरातनम्। परमाणोरपि तनु गर्भीकृतजगद्गणम्॥ ११॥

āloki dhvāntaghanavannavavacca purātanam | paramāṇorapi tanu garbhīkṛtajagadgaṇam || 11 ||

The light that dispels the darkness, both new and ancient, even smaller than the smallest atom, encompassing the entire universe.

जो प्रकाश अंधेरे को दूर करता है, नया और पुराना दोनों, परमाणु से भी छोटा, पूरे ब्रह्मांड को अपने में समेटे हुए।

7.35.12

सर्वात्मकमपि त्यक्तदृष्टं कष्टेन भूयसा। अजालमपि जालाढ्यं चाशेषवदनेकधा॥ १२॥

sarvātmakamapi tyaktadṛṣṭaṃ kaṣṭena bhūyasā | ajālamapi jālāḍhyaṃ cāśeṣavadanekadhā || 12 ||

Even though it is the soul of all, it is difficult to perceive, being covered by a dense net, and it is manifold in various ways.

यद्यपि यह सबका आत्मा है, इसे देखना कठिन है, क्योंकि यह घने जाल से ढका हुआ है, और यह विभिन्न तरीकों से बहुगुणित है।

7.35.13

निर्मायमपि मायांशुमण्डलामलभास्करम्। ब्रह्म विद्धि विदांनाथमपामिव महोदधिम्॥ १३॥

nirmāyamapi māyāṃśumaṇḍalāmalabhāskaram | brahma viddhi vidānnāthamapāmiva mahodadhim || 13 ||

Know Brahman to be without illusion, like the sun shining through the clouds, the lord of knowledge, like the great ocean among waters.

ब्रह्म को भ्रांति से रहित, बादलों से घिरे सूर्य की तरह चमकता हुआ, ज्ञान का स्वामी, जलों में महासागर की तरह जानो।

7.35.14

जगद्रत्नमहाकोशं तुलायां तूलकाल्लघु। मायामरीचिशशिनमपि नेक्षणगोचरम्॥ १४॥

jagadratnamahākośaṃ tulāyāṃ tūlakāllaghu | māyāmarīciśaśinamapi nekṣaṇagocaram || 14 ||

The great treasure of the universe, light as a feather on the scales, even the illusory moon is not perceptible to the eyes.

ब्रह्मांड का महान खजाना, तराजू पर पंख की तरह हल्का, भ्रामक चंद्रमा भी आँखों के लिए दिखाई नहीं देता।

7.35.15

अनन्तमपि निष्पारं न च क्वचिदपि स्थितम्। आकाशे वनविन्यासनगनिर्माणतत्परम्॥ १५॥

anantamapi niṣpāraṃ na ca kvacidapi sthitam | ākāśe vanavinyāsanagannirmāṇatatparam || 15 ||

Even though it is infinite, it is without limits, not situated anywhere, fully engaged in the creation of the forest arrangement in the sky.

यद्यपि यह अनंत है, फिर भी यह सीमा से रहित है, कहीं भी स्थित नहीं है, आकाश में वन के विन्यास के निर्माण में पूरी तरह से लगा हुआ है।

7.35.16

अणीयसामणीयांसं स्थविष्ठं च स्थवीयसाम्। गरीयसां गरिष्ठं च श्रेष्ठं च श्रेयसामपि॥ १६॥

aṇīyasāmaṇīyāṃsaṃ sthaviṣṭhaṃ ca sthavīyasām | garīyasāṃ gariṣṭhaṃ ca śreṣṭhaṃ ca śreyasāmapi || 16 ||

The smallest of the small, the largest of the large, the heaviest of the heavy, the best of the best.

सबसे छोटे से छोटा, सबसे बड़े से बड़ा, सबसे भारी से भारी, सबसे उत्तम से उत्तम।

7.35.17

अकर्तृकर्मकरणमकारणमकारकम् । अन्तःशून्यतयैवैतच्चिराय परिपूरितम् ॥ १७ ॥

akartṛkarmakaraṇamakāraṇamakārakam | antaḥśūnyatayaivaitaccirāya paripūritam || 17 ||

Without a doer, action, or cause, and without an instrument, this is filled with inner emptiness for a long time.

कर्ता, कर्म, कारण या साधन के बिना, यह अंदर से खाली है और लंबे समय से भरा हुआ है।

7.35.18

जगत्समुद्गकमपि नित्यं शून्यमरण्यवत् । अनन्तशैलकठिनमप्याकाशलवान्मृदु ॥ १८ ॥

jagatsamudgakamapi nityaṃ śūnyamaraṇyavat | anantaśailakaṭhinamapyākāśalavānmṛdu || 18 ||

The world is like a bubble, eternally empty like a desert, hard like an endless mountain, yet soft like the sky.

यह संसार एक बुलबुले की तरह है, एक रेगिस्तान की तरह नित्य खाली है, एक अनंत पर्वत की तरह कठोर है, फिर भी आकाश की तरह कोमल है।

7.35.19

प्रत्येकं प्रत्यहं प्रायः पुराणं पेलवं नवम् । आलोकमन्धकाराभं तमस्त्वालोकमाततम् ॥ १९ ॥

pratyekaṃ pratyahaṃ prāyaḥ purāṇaṃ pelavaṃ navam | ālokamandhakārābhaṃ tamastvālokamātatam || 19 ||

Every day, each thing is ancient, new, and insignificant. Light is like darkness, and darkness is like light.

हर दिन, हर चीज पुरानी, नई और अप्रासंगिक है। प्रकाश अंधेरे की तरह है, और अंधेरा प्रकाश की तरह है।

7.35.20

प्रत्यक्षमपि दुर्लक्ष्यं परोक्षमपि चाग्रगम्चिद्रूपमेव च जडं जडमेव चिदात्मकम् ॥ २० ॥

pratyakṣamapi durlakṣyaṃ parokṣamapi cāgragamcidrūpameva ca jaḍaṃ jaḍameva cidātmakam || 20 ||

Though perceptible, it is difficult to perceive; though imperceptible, it is the foremost. It is both conscious and inert, and the inert itself is conscious.

यद्यपि यह दृश्य है, फिर भी इसे देखना मुश्किल है; यद्यपि यह अदृश्य है, फिर भी यह सबसे आगे है। यह दोनों चेतन और जड़ है, और जड़ स्वयं चेतन है।

7.35.21

अहमेवानहंभावमनहं वाऽहमेव च । अन्यदेव तदेवाहमहमेवान्यदेव तत् ॥ २१ ॥

ahamevānahaṃbhāvamanahaṃ vā'hameva ca | anyadeva tadevāhamahamevānyadeva tat || 21 ||

I am not the ego, nor am I devoid of ego | I am that which is different, and I am also that which is the same

मैं अहंकार नहीं हूँ, न ही मैं अहंकार से रहित हूँ | मैं वह हूँ जो अलग है, और मैं वह भी हूँ जो वही है

7.35.22

अस्य पूर्णार्णवस्यान्तरिमे त्रिभुवनोर्मयः । स्फुरन्त इव तिष्ठन्ति स्वभावद्रवतात्मकाः ॥ २२ ॥

asya pūrṇārṇavasyāntarime tribhuvanormayaḥ | sphuranta iva tiṣṭhanti svabhāvadravatātmakāḥ || 22 ||

Within the vast ocean of completeness, the three worlds appear to vibrate, inherent in their own nature.

पूर्णता के विशाल सागर के भीतर, तीनों लोक अपने स्वभाव में स्थित हैं, और कंपित होते प्रतीत होते हैं।

7.35.23

बिभर्ति सर्वमङ्गस्थं तुषारमिव शुक्लताम्। भाति सर्वस्त्वनेनैव तुषारेणेव शुक्लता ॥ २३ ॥

bibharti sarvamaṅgastham tuṣāramiva śuklatām | bhāti sarvastvaneneva tuṣāreṇeva śuklatā || 23 ||

It bears all things within itself, like snow bears whiteness. Everything shines with this whiteness, like snow.

यह सभी चीजों को अपने भीतर धारण करता है, जैसे बर्फ श्वेतता को धारण करती है। सभी चीजें इस श्वेतता से चमकती हैं, जैसे बर्फ।

7.35.24

अदेशकालावयवोऽप्येष देवो दिवानिशम्। असज्जगत्तनोतीव यथा वारितरङ्गकम् ॥ २४ ॥

adeśakālāvayavo'pyeṣa devo divāniśam | asajjagattanotīva yathā vāritaraṅgakam || 24 ||

This divine being, though without place, time, or parts, pervades day and night. It weaves the universe like waves on water.

यह दिव्य सत्ता, जिसमें न स्थान है, न समय, न अंग हैं, दिन और रात में व्याप्त है। यह ब्रह्मांड को पानी पर लहरों की तरह बुनता है।

7.35.25

एतस्मिन्विकसन्तीमा विपुलाकाशकानने। जगज्जरठमञ्जर्यः प्रसरत्पत्रपञ्चकाः ॥ २५ ॥

etasminvikasantīmā vipulākāśakānane | jagajjaraṭhamañjaryaḥ prasaratpatrapañcakāḥ || 25 ||

In this vast forest of space, the universe blooms like a five-petaled flower.

इस विशाल आकाश के वन में, ब्रह्मांड एक पाँच पंखुड़ियों वाले फूल की तरह खिलता है।

7.35.26

एष स्वप्रतिबिम्बस्य स्वयमालोकनेच्छया। अत्यन्तनिर्मलाकारः स्वयं मुकुरतां गतः ॥ २६ ॥

eṣa svapratibimbasya svayamālokanecchayā | atyantanirmalākāraḥ svayaṃ mukuratāṃ gataḥ || 26 ||

This, out of the desire to see itself, has become a mirror with an extremely pure form.

यह, अपने आप को देखने की इच्छा से, एक अत्यंत शुद्ध रूप वाला दर्पण बन गया है।

7.35.27

व्योमवृक्षफलस्यास्य स्वेच्छावयव उज्ज्वला। सर्गोपलम्भ उद्यच्च चमत्कुर्वन्ति संविदि ॥ २७ ॥

vyomavṛkṣaphalasyāsya svecchāvayava ujjvalā | sargopalambha udyacca camatkurvanti saṃvidi || 27 ||

The luminous parts of this fruit of the sky-tree, by their own will, create and perceive the universe, causing wonder in consciousness.

इस आकाश-वृक्ष के फल के उज्ज्वल अंग, अपनी इच्छा से, ब्रह्मांड को रचते और ग्रहण करते हैं, जो चेतना में आश्चर्य पैदा करता है।

7.35.28

अन्तस्थेन बहिष्ठेन नानानानातयात्मनि। एष सोऽन्तर्बहिर्भाति भावाभावविभावया ॥ २८ ॥

antasthana bahiṣṭhena nānānānātayātmani | eṣa so'ntarbahirbhāti bhāvābhāvavibhāvayā || 28 ||

This one, with various internal and external forms, appears both inside and outside, manifesting and unmanifesting.

यह, भिन्न-भिन्न आंतरिक और बाह्य रूपों के साथ, अंदर और बाहर दोनों जगह प्रकट होता है, प्रकट और अप्रकट होता है।

7.35.29

एतद्रूपा पदार्थश्रीरेतस्मिन्नेतदिच्छया । चमत्करोत्येतदर्थं जिह्वेव स्वास्यकोटरे ॥ २९ ॥

etadrūpā padārthasrīre etasminnetadicchayā | camatkarotyetadarthaṃ jihveva svāsyakoṭare || 29 ||

The wealth of objects, having this form, by this desire, causes wonder for this purpose, like the tongue in its own mouth.

वस्तुओं की समृद्धि, इस रूप में, इस इच्छा से, इस उद्देश्य के लिए आश्चर्य पैदा करती है, जैसे जीभ अपने ही मुंह में।

7.35.30

अस्याम्भसो द्रवत्वं यत्तदिदं जगदुच्यते । संवित्स्यादूपलम्भाङ्गं भुवनावर्तवृत्तिमत् ॥ ३० ॥

asyāmbhaso dravatvaṃ yattadidaṃ jagaducyate | saṃvitsyādūpalambhāṅgaṃ bhuvanāvartavṛttimat || 30 ||

The fluidity of this water is called the universe. It is a part of the perception of consciousness, having the nature of the whirlpool of the world.

इस जल की द्रवता ब्रह्मांड कहलाती है। यह चेतना के ग्रहण का एक अंग है, जिसमें संसार के भंवर की प्रकृति है।

7.35.31

शाम्यत्यत्र पदार्थश्रीः सर्वासामेव भास्वति । एतस्मादेव चोदेति स्वालोक इव तेजसः ॥ ३१ ॥

śāmyatyatra padārthaśrīḥ sarvāsāmeva bhāsvati | etasmādeva codeti svāloka iva tejasaḥ || 31 ||

Here, the splendor of all objects fades away, and from this, it shines forth like the light of one's own world.

यहाँ, सभी वस्तुओं की शोभा शान्त हो जाती है, और इससे यह अपने जगत के प्रकाश की तरह चमकता है।

7.35.32

इदमेव जगत्सर्वं शुक्लत्वं तुहिने यथा । अत एताः प्रवर्तन्ते विद इन्दोरिवांशवः ॥ ३२ ॥

idameva jagatsarvaṃ śuklatvaṃ tuhine yathā | ata etāḥ pravartante vid indorivāṃśavaḥ || 32 ||

This entire world is pure like the whiteness of snow. Therefore, these manifest like the rays of the moon.

यह सारा जगत बर्फ की सफेदी की तरह शुद्ध है। इसलिए, ये चन्द्रमा की किरणों की तरह प्रकट होते हैं।

7.35.33

एतस्माद्रङ्गतोऽनङ्गाज्जगच्चित्रमिदं स्थितम् । विद्ध्यभावविकारादिशान्तमेतन्मयं ततम् ॥ ३३ ॥

etasmādrangato'nangājjagaccitramidaṃ sthitam | viddhyabhāvavikārādiśāntametanmayaṃ tatam || 33 ||

From this, the colorful world is established, devoid of passion. Know this to be pervaded by the absence of modification and other qualities.

इससे, यह रंगीन जगत स्थापित है, जो काम से रहित है। इसे परिवर्तन की अनुपस्थिति और अन्य गुणों से व्याप्त जानें।

7.35.34

अस्माद्वनतरोरेताः स्वरूढा गगनाङ्गणे । दृश्यशाखाः प्रवर्तन्ते जगज्जालगुलुच्छकाः ॥ ३४ ॥

asmādvanataroretāḥ svarūḍhā gaganāṅgaṇe | dṛśyaśākhāḥ pravartante jagajjālagulucchakāḥ || 34 ||

From this, the branches of the visible world spread out in the sky, like the tangled web of the universe.

इससे, दृश्य जगत की शाखाएँ आकाश में फैलती हैं, जैसे ब्रह्माण्ड का उलझा हुआ जाल।

7.35.35

व्ययोदयवती नूनमत्र दृश्यतरङ्गिणी । नानातानन्तकुसुमा वहत्यविचलाचले ॥ ३५ ॥

vyayodayavatī nūnamatra dṛśyataraṅgiṇī | nānātānantakusumā vahatyavicalācale || 35 ||

Here, the visible waves of rise and fall are indeed seen, bearing various infinite flowers, steady and unwavering.

यहाँ, उत्थान और पतन की दृश्य लहरें वास्तव में दिखाई देती हैं, जो विविध अनन्त फूलों को धारण करती हैं, स्थिर और अटल।

7.35.36

अस्मिन्व्योमात्मके रङ्गे भुवनाभिनयभ्रमैः । मृत्यत्यविरतारम्भं वारैर्नियतिनर्तकी ॥ ३६ ॥

asminvyomātmake raṅge bhuvanābhinayabhramaiḥ | mṛtyatyaviratārambhaṃ vārainiyatinartakī || 36 ||

In this sky-like stage, with the illusions of worldly performances, the dancer of destiny dances continuously with the waves of death.

इस आकाश-जैसे रंगमंच पर, संसार के अभिनय के भ्रमों से, भाग्य की नर्तकी मृत्यु की लहरों के साथ निरंतर नृत्य करती है।

7.35.37

जगत्कोटिमहाकल्पकल्पोन्मेषनिमेषणः । विताने नाट्यते भूयो जन्यते कालबालकः ॥ ३७ ॥

jagatkoṭimahākalpakalponmeṣaniṃeṣaṇaḥ | vitāne nāṭyate bhūyo janyate kālabālakaḥ || 37 ||

The universe, with its countless great eons, opens and closes its eyes. In the expanse, it dances again, and the child of time is born.

ब्रह्मांड, जिसमें अनगिनत महान कल्प हैं, अपनी आँखें खोलता और बंद करता है। विस्तार में, यह फिर से नृत्य करता है, और समय का बालक जन्म लेता है।

7.35.38

उद्यत्स्वपि जगत्स्वेष शान्तमेवावतिष्ठते । अनिच्छ एव मुकुरः प्रतिबिम्बशतेष्विव ॥ ३८ ॥

udyatsvapi jagatsveṣa śāntamevāvatiṣṭhate | aniccha eva mukuraḥ pratibimbaśateṣviva || 38 ||

Even when the world is active, it remains calm. Like an unwilling mirror, it reflects countless images.

चाहे संसार सक्रिय हो, यह शांत रहता है। जैसे एक अनिच्छुक दर्पण, यह अनगिनत प्रतिबिंबों को प्रतिबिंबित करता है।

7.35.39

भूतानां वर्तमानानां सर्गाणां संभविष्यताम् । एषोऽकारणकं बीजं सर्गाणामिव कारणम् ॥ ३९ ॥

bhūtānāṃ vartamānānāṃ sargāṇāṃ saṃbhaviṣyatām | eṣo'kāraṇakaṃ bījaṃ sargāṇāmiva kāraṇam || 39 ||

This is the causeless seed of the beings that exist, are being created, and will be created. It is as if the cause of all creations.

यह उन भूतों का अकारण बीज है जो मौजूद हैं, बन रहे हैं, और बनेंगे। यह जैसे सभी सृजनों का कारण है।

7.35.40

अस्योन्मेषो जगल्लक्ष्मीर्निमेषः प्रलयागमः । अनुन्मेषनिमेषोऽसावात्मन्येवावतिष्ठते ॥ ४० ॥

asyonmeṣo jagallakṣmīrniṃeṣaḥ pralayāgamaḥ | anunmeṣaniṃeṣo'sāvātmanyevāvatiṣṭhate || 40 ||

Its opening is the prosperity of the world, its closing is the arrival of dissolution. This opening and closing remain in the self.

इसका खुलना संसार की समृद्धि है, और इसका बंद होना प्रलय का आगमन है। यह खुलना और बंद होना आत्मा में ही रहता है।

7.35.41

उद्यन्त्यमूनि सुबहूनि महामहान्ति सर्गागमप्रलयजन्मदशा जगन्ति सर्वाणि तान्ययमपारस्वरूप एव प्रस्पन्दनानि मरुदेव यथास्व शान्तम् ॥ ४१ ॥

udyantyamūni subahūni mahāmahānti sargāgamapralayajanmadashā jaganti sarvāṇi tānyayamapārasvarūpa eva praspandanāni marudeva yathāsva śāntam || 41 ||

Many great and magnificent creations, such as the cycles of creation, sustenance, dissolution, and rebirth, arise in the universe. All these are merely the manifestations of the Supreme Self, just as the wind is calm in its own nature.

जगत में बहुत से महान और विशाल सृष्टियाँ, जैसे सृष्टि, संचालन, प्रलय और जन्म के चक्र, उत्पन्न होते हैं। ये सभी परमात्मा के स्वरूप के अभिव्यक्तियाँ हैं, जैसे वायु अपने स्वभाव में शांत होती है।

Chapter 36

7.36.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । चमत्कुर्वन्त्यथानर्था आवर्ता इव वारिणि । एकस्वभावाः सकला यथा वारितरङ्गकाः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | camatkurvantyathānarthā āvartā iva vāriṇi | ekasvabhāvāḥ sakalā yathā vāritaraṅgakāḥ || 1 ||

Śrī Vasishtha said: Just as the waves in the water appear to be different but are essentially the same, all the diverse phenomena in the world are essentially of one nature.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जैसे पानी में लहरें अलग-अलग दिखती हैं लेकिन वास्तव में एक ही हैं, वैसे ही सारे विविध घटनाक्रम एक ही स्वभाव के हैं।

7.36.2

सर्वस्यैवास्य विश्वस्य निर्ज्ञेयज्ञेयरूपिणी । परमाकाशतारूपं परोपशमसंश्रया ॥ २ ॥

sarvasyaiavāsya viśvasya nirjñeyajñeyarūpiṇī | paramākāśatārūpaṃ paropaśamaṃsaṃśrayā || 2 ||

The entire universe is of the nature of the unknowable and the knowable. It is of the nature of the supreme space and rests in the ultimate tranquility.

सारा विश्व अज्ञेय और ज्ञेय की प्रकृति का है। यह परम आकाश की प्रकृति का है और परम शांति में विश्राम करता है।

7.36.3

बालचिन्ता पुरोव्योम्नि न किंचिदपि मे यथा । तथेदं तत्त्वतो विश्वं सत्यं तु शिशुचेतसि ॥ ३ ॥

bālacintā purovyomni na kiñcidapi me yathā | tathedaṃ tattvato viśvaṃ satyaṃ tu śiśucetasi || 3 ||

Just as a child's thoughts are nothing to me, so is the truth of this world to a child's mind.

जैसे बच्चे की सोच मेरे लिए कुछ नहीं है, वैसे ही इस दुनिया की सच्चाई बच्चे के मन में है।

7.36.4

अरूपालोकमननं शिलापुत्रकसैन्यवत् । रूपालोकमनस्कारा भान्ति केवात्र विश्वता ॥ ४ ॥

arūpālokamananaṃ śilāputrakasainyavat | rūpālokamanaskārā bhānti kevātra viśvatā || 4 ||

The contemplation of the formless is like an army of stone sons. The impressions of the visible world appear to be the universe.

निराकार का ध्यान पत्थर के पुत्रों की सेना के समान है। दृश्य जगत के संस्कार ही विश्व के रूप में दिखाई देते हैं।

7.36.5

रूपालोकमनस्कारा सारश्चिन्मात्रतां विना । न लभ्यतेऽसावपरं व्योमेवात्र क्व विश्वता ॥ ५ ॥

rūpālokamanaskārā sāraścinmātratāṃ vinā | na labhyate'sāvaparaṃ vyomevātra kva viśvatā || 5 ||

The impressions of the visible world cannot be attained without the essence of pure consciousness. Where is the universe in this void?

दृश्य जगत के संस्कार शुद्ध चेतना की सारता के बिना प्राप्त नहीं हो सकते। इस शून्य में विश्व कहाँ है?

7.36.6

विदो वित्त्वं जगद्भ्रान्तिरवित्त्वं तु न विभ्रमः । वित्त्वावित्त्वे त्वदायत्ते चित्ताचित्ते यथा तव ॥ ६ ॥

vido vittvaṃ jagadbhrāntiravittvaṃ tu na vibhramaḥ | vittvāvittve tvadāyatte cittācitte yathā tava || 6 ||

Knowledge is the delusion of the world, ignorance is not delusion. In knowledge and ignorance, both are dependent on you, as are consciousness and unconsciousness.

ज्ञान जगत का भ्रम है, अज्ञान भ्रम नहीं है। ज्ञान और अज्ञान दोनों तुम पर निर्भर हैं, जैसे चेतना और अचेतना।

7.36.7

परमाकाशरूपत्वाच्चिद्व्योम्नो विततात्मकृतेः । न स्वभावविपर्यासः कश्चित्संभवति क्वचित् ॥ ७ ॥

paramākāśarūpatvāccidvyomno vitatātmakṛteḥ | na svabhāvaviparyāsaḥ kaścit saṃbhavati kvacit || 7 ||

Due to the nature of the supreme space of consciousness, there is no distortion of inherent nature anywhere.

चेतना के परम आकाश स्वरूप के कारण, कहीं भी स्वभाव का विपर्यास नहीं होता।

7.36.8

तन्मयस्यास्य विश्वस्य न स्वभावविकारिता । विद्यते प्रेक्ष्यमाणापि किमु सास्य भविष्यति ॥ ८ ॥

tanmayasyāsya viśvasya na svabhāvavikāritā | vidyate prekṣyamāṇāpi kimu sāsya bhaviṣyati || 8 ||

This universe, which is permeated by That, does not have any modification in its inherent nature. Even if it is observed, what will happen to it?

इस विश्व को, जो उससे व्याप्त है, उसके स्वभाव में कोई विकार नहीं है। यदि यह देखा जाता है, तो इसके साथ क्या होगा?

7.36.9

सर्वं चिद्व्योम चैवेदं न सत्त्वमहमित्यपि । विकाराद्यस्ति न ज्ञप्तावज्ञप्तिं न लभेत्क्वचित् ॥ ९ ॥

sarvaṃ cidvyoma caivedaṃ na sattvamahamityapi | vikārādyasti na jñaptāvajñaptiṃ na labhetkvacit || 9 ||

All this is the space of consciousness, not the reality of 'I'. There is no modification in knowledge or ignorance anywhere.

यह सब चेतना का आकाश है, 'मैं' की वास्तविकता नहीं है। ज्ञान या अज्ञान में कहीं भी कोई विकार नहीं है।

7.36.10

सर्वं शान्तं शिवं शुद्धं त्वमहंतादिविभ्रमम् । न किंचिदपि पश्यामि व्योमजं काननं यथा ॥ १० ॥

sarvaṃ śāntaṃ śivaṃ śuddhaṃ tvamahantādivibhramam | na kiṃcidapi paśyāmi vyomajaṃ kānanaṃ yathā || 10 ||

Everything is peaceful, auspicious, and pure. I see no delusion of 'I' and 'you'. It is like the sky, which is free from any forest.

सब कुछ शान्त, शिव और शुद्ध है। मैं 'मैं' और 'तुम' के भ्रम को नहीं देखता। यह ऐसा है जैसे आकाश, जो किसी भी वन से मुक्त है।

7.36.11

संविदाकाशशून्यत्वं यत्तद्विद्धि वचो मम । इदं त्वत्संविदाकाशे स्वयमात्मनि तिष्ठति ॥ ११ ॥

saṃvidākāśaśūnyatvaṃ yattadviddhi vaco mama | idaṃ tvatsaṃvidākāśe svayamātmani tiṣṭhati || 11 ||

Know that the emptiness of the space of consciousness is my word. This exists in your own consciousness, in the Self.

जान लो कि चेतना के आकाश की शून्यता मेरा वचन है। यह तुम्हारी चेतना के आकाश में, स्वयं आत्मा में स्थित है।

7.36.12

पदमाहुः परं सद्यदनिच्छोदयमासितम् । पाषाणपुरुषस्येव चित्रस्थस्येव चासनम् ॥ १२ ॥

padamāhuḥ paraṃ sadyadanicchodayamāsitam | pāṣāṇapuruṣasyeva citrastasyeva cāsanam || 12 ||

They call the supreme state that which is eternal, without desire, and without arising. It is like a stone or a painting.

उनके अनुसार, परम अवस्था वह है जो सनातन, इच्छारहित और उत्पत्तिरहित है। यह एक पत्थर या चित्र की तरह है।

7.36.13

स विश्रान्तमना मौनी यस्य प्रकृतकर्मसु। स्पन्दो दारुनरस्येव विगतेच्छमनाकुलम्॥ १३॥

sa viśrāntamanā maunī yasya prakṛtakarmasu | spando dārunarasyeva vigatecchamanākulam || 13 ||

He whose mind is at rest, who is silent, and whose actions are natural, is like a wooden man, free from desires and mental agitation.

जिसका मन शांत है, जो मौन है, और जिसके कर्म प्राकृतिक हैं, वह एक लकड़ी के आदमी की तरह है, जो इच्छाओं और मानसिक उथल-पुथल से मुक्त है।

7.36.14

अन्तःशून्यं बहिःशून्यं विरसं गतवासनम्। जगद्वेणोरिव ज्ञस्य जीवतो भाति जीवनम्॥ १४॥

antaḥśūnyaṃ bahiḥśūnyaṃ virasaṃ gatavāsanam | jagadveṇoriva jñasya jīvato bhāti jīvanam || 14 ||

For the wise, the inner and outer worlds are empty, tasteless, and devoid of desires. Life appears like a bamboo, hollow and lifeless.

बुद्धिमान के लिए, आंतरिक और बाह्य दुनिया शून्य, निरास, और इच्छाओं से मुक्त हैं। जीवन एक बांस की तरह दिखाई देता है, खोखला और जीवनरहित।

7.36.15

यस्य न स्वदते दृश्यमदृश्यं स्वदते हृदि। सबाह्याभ्यन्तरं शान्तः स वितीर्णो भवार्णवात्॥ १५॥

yasya na svadate dṛśyamadṛśyaṃ svadate hṛdi | sabāhyābhyantaraṃ śāntaḥ sa vitīrṇo bhavārṇavāt || 15 ||

He who does not enjoy the visible and invisible, who enjoys the heart, is peaceful both within and without, and is liberated from the ocean of existence.

जो दृश्य और अदृश्य का आनंद नहीं लेता, जो हृदय में आनंद लेता है, वह बाह्य और आंतरिक दोनों में शांत है, और अस्तित्व के समुद्र से मुक्त है।

7.36.16

उच्यन्तां शब्दजालानि वंशवद्गतवासनम्। रसेनानङ्गलग्नेन प्रकृतानन्यचोदनैः॥ १६॥

ucyantāṃ śabdajālāni vaṃśavadgatavāsanam | rasenānaṅgalagnena prakṛtānanyacodanaiḥ || 16 ||

Let the sounds be uttered, like the flute, with a natural and unforced flow, driven by the essence of emotion.

ध्वनियाँ बजाई जाएँ, जैसे बंसी की तरह, स्वाभाविक और अनायास प्रवाह के साथ, भाव की आत्मा से प्रेरित।

7.36.17

स्पृश्यन्तां स्पर्शनीयानि यथाप्राप्तान्यवासनम्। कूटागारवदक्षुब्धमनिच्छममनोदयम्॥ १७॥

spṛśyantāṃ sparśanīyāni yathāprāptānyavāsanam | kūṭāgāravadakṣubdhamanicchamamanodayam || 17 ||

Let the touchable objects be touched as they come, without any desire or agitation, like a hut that is undisturbed.

स्पर्शनीय वस्तुओं को जैसे आएँ, बिना किसी इच्छा या विचलन के, एक अविचलित झोपड़ी की तरह स्पर्श किया जाए।

7.36.18

स्वाद्यन्तां रसजालानि विगतेच्छाभयैषणम्। अपरागाभिलषणं यथाप्राप्तानि दर्विवत्॥ १८॥

svādyantāṃ rasajālāni vigatecchābhayaiṣaṇam | aparāgābhilaṣaṇaṃ yathāprāptāni darvivat || 18 ||

Let the tastes be enjoyed as they come, without desire, fear, or expectation, like a spoon that is indifferent to what it holds.

स्वाद लिया जाए जैसे आएँ, बिना इच्छा, भय या अपेक्षा के, जैसे एक चम्मच जो उसमें जो भी हो उससे उदासीन होता है।

7.36.19

दृश्यन्तां रूपजालानि पुनः प्राप्तान्यवासनम्। अरसं निर्मनोमानमगर्वं चित्रनेत्रवत्॥ १९॥

dṛśyantāṃ rūpajālāni punaḥ prāptānyavāsanam | arasaṃ nirmanomānamagarvaṃ citranetravat || 19 ||

Let the forms be seen as they come again, without any emotional attachment, pride, or mental measurement, like a painting that is indifferent to its content.

रूपों को फिर से जैसे आएँ देखा जाए, बिना किसी भावनात्मक आसक्ति, अहंकार या मानसिक माप के, जैसे एक चित्र जो अपनी सामग्री से उदासीन होता है।

7.36.20

जिघ्र्यन्तां गन्धपुष्पाणि विगतेच्छमवासनम्। स्पन्दबन्धोपलग्नानि त्यागाय वनवातवत्॥ २०॥

jighryantāṃ gandhapuṣpāṇi vigatecchamavāsanam | spandabandhopalagnāni tyāgāya vanavātavat || 20 ||

Let the fragrant flowers be smelled as they come, without any desire, like the wind in the forest that touches and leaves them.

सुगंधित फूलों को जैसे आएँ सूँघा जाए, बिना किसी इच्छा के, जैसे वन की हवा जो उन्हें छूती है और छोड़ देती है।

7.36.21

इति चेद्विरसत्वेन बोधयित्वा चिकित्सिताः। न भोगरोगास्तद्वच्च शान्त्यै नास्ति कथैव च॥ २१॥

iti cedvirasatvena bodhayitvā cikitsitāḥ| na bhogarogāstadvacca śāntyai nāsti kathaiva ca || 21 ||

If one is awakened by the nature of detachment, then the diseases of worldly pleasures are cured| There is no peace in that way, nor is there any means to achieve it

अगर कोई विरक्ति के स्वभाव से जागृत हो जाता है, तो भोग के रोग ठीक हो जाते हैं| उस तरह से शान्ति नहीं मिलती और न ही कोई उपाय है

7.36.22

यः स्वादयन्भोगविषं रतिमेति दिने दिने। सोऽग्नौ स्वमूर्ति ज्वलिते कक्षमक्षयमुज्झति॥ २२॥

yaḥ svādayanbhogaviṣaṃ ratimeti dine dine| so'gnau svamūrti jvalite kakṣamakṣayamujjhati || 22 ||

One who enjoys the poison of worldly pleasures day by day| That person, when their own form is burning in the fire, leaves the eternal abode

जो दिन-प्रतिदिन संसारिक भोगों के विष का स्वाद लेता है| वह व्यक्ति, जब उसका स्वयं का रूप आग में जल रहा होता है, अनन्त निवास को छोड़ देता है

7.36.23

निरिच्छत्वं समाधानमाहुरागमभूषणाः। यथा शाम्येन्मनोऽनिच्छं नोपदेशशतैस्तथा॥ २३॥

niricchatvaṃ samādhānamāhurāgamabhūṣaṇāḥ| yathā śāmyenmano'nicchaṃ nopadeśaśataistathā || 23 ||

The scriptures say that the state of desirelessness is the highest attainment| Just as the mind becomes calm without desires, it cannot be achieved by hundreds of teachings

शास्त्र कहते हैं कि इच्छारहित होना सबसे बड़ी प्राप्ति है| जैसे मन बिना इच्छा के शान्त हो जाता है, वैसे ही सैकड़ों उपदेशों से यह प्राप्त नहीं हो सकता

7.36.24

इच्छोदयो यथा दुःखमिच्छाशान्तिर्यथा सुखम् । तथा न नरके नापि ब्रह्मलोकेऽनुभूयते ॥ २४ ॥

icchodayo yathā duḥkhamicchāśāntiryathā sukham| tathā na narake nāpi brahmaloke'nubhūyate || 24 ||

Just as the rise of desires leads to suffering, the cessation of desires leads to happiness| Thus, neither in hell nor in the realm of Brahma is this experienced

जैसे इच्छाओं का उदय दुःख का कारण बनता है, वैसे ही इच्छाओं की शान्ति सुख का कारण बनती है| इस प्रकार, न तो नरक में और न ही ब्रह्मलोक में यह अनुभव किया जाता है

7.36.25

इच्छामात्रं विदुश्चित्तं तच्छान्तिर्मोक्ष उच्यते । एतावन्त्येव शास्त्राणि तपांसि नियमा यमाः ॥ २५ ॥

icchāmātraṃ viduścittaṃ tacchāntirmokṣa ucyate| etāvantyeva śāstrāṇi tapāṃsi niyamā yamāḥ || 25 ||

The mind is known to be merely desire| The cessation of that is called liberation| These are the only scriptures, austerities, rules, and restraints

मन को केवल इच्छा ही जाना जाता है| उसकी शान्ति को मोक्ष कहा जाता है| ये ही शास्त्र, तप, नियम और यम हैं

7.36.26

यावती यावती जन्तोरिच्छोदेति यथा यथा । तावती तावती दुःखबीजमुष्टिः प्ररोहति ॥ २६ ॥

yāvatī yāvatī jantor icchodeti yathā yathā | tāvatī tāvatī duḥkhabījamuṣṭiḥ prarohati || 26 ||

As much as a person's desire arises, so much does the seed of suffering sprout.

जितनी किसी जीव की इच्छा उठती है, उतना ही दुःख का बीज उगता है।

7.36.27

यथा यथेच्छा तनुतां याति जन्तोर्विवेकतः । तथा तथोपशाम्यन्ति दुःखचिन्ताविषूचिकाः ॥ २७ ॥

yathā yathecchā tanutāṃ yāti jantorvivekataḥ | tathā tathopaśāmyanti duḥkhacintāviṣūcikāḥ || 27 ||

As the desire of a person diminishes through discrimination, so do the worries and anxieties subside.

जैसे-जैसे विवेक से इच्छा कम होती है, वैसे-वैसे दुःख और चिंताएँ शांत होती हैं।

7.36.28

यथा यथेच्छा घनतां याति लोकस्य रागतः । तथा तथा विवर्धन्ते दुःखचिन्ताविषोर्मयः ॥ २८ ॥

yathā yathecchā ghanatāṃ yāti lokasya rāgataḥ | tathā tathā vivardhante duḥkhacintāviṣormayaḥ || 28 ||

As the desire of the world intensifies through attachment, so do the waves of worries and anxieties increase.

जैसे-जैसे आसक्ति से लोक की इच्छा बढ़ती है, वैसे-वैसे चिंताओं और दुःखों की लहरें भी बढ़ती हैं।

7.36.29

इच्छा चिकित्स्यते व्याधिर्न स्वयत्नौषधेन चेत् । तदत्र बलवन्मन्ये विद्यते नौषधान्तरम् ॥ २९ ॥

icchā cikitsyate vyādhirna svayatnauṣadhena cet | tadatra balavanmanye vidyate nauṣadhāntaram || 29 ||

Desire is a disease that cannot be cured by one's own effort and medicine. Therefore, I believe there is a powerful remedy other than medicine.

इच्छा एक रोग है जिसे अपने प्रयास और दवा से नहीं ठीक किया जा सकता। इसलिए, मैं सोचता हूँ कि दवा के अलावा कोई और शक्तिशाली उपचार है।

7.36.30

इच्छोपशमनं कर्तुं यदि कृत्स्नं न शक्यते । स्वल्पमप्यनुगन्तव्यं मार्गस्थो नावसीदति ॥ ३० ॥

icchopaśamanaṃ kartuṃ yadi kṛtsnaṃ na śakyate | svalpamapyanugantavyaṃ mārgastho nāvasīdati || 30 ||

If it is not possible to completely pacify desire, even a little should be followed, so that one does not fall from the path.

अगर इच्छा को पूरी तरह शांत करना संभव नहीं है, तो थोड़ा भी किया जाना चाहिए, ताकि मार्ग से गिरने न पड़े।

7.36.31

यस्त्विच्छातानवे यत्नं न करोति नराधमः । सोऽन्धकूपे स्वमात्मानं दिनानुदिनमुज्झति ॥ ३१ ॥

yastvicchātānave yatnaṃ na karoti narādhamaḥ | so'ndhakūpe svamātmānaṃ dinānudinamujjhati || 31 ||

One who does not make an effort to control their desires, that lowest of men, gradually sinks into the blind well of their own self.

जो व्यक्ति अपनी इच्छाओं को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करता, वह नराधम धीरे-धीरे अपने आत्मा के अंधे कूप में डूबता जाता है।

7.36.32

दुःखप्रसवशालिन्या बीजमिच्छैव संसृतेः । सम्यग्ज्ञानाग्निदग्धा सा न भूयः परिरोहति ॥ ३२ ॥

duḥkhaprasavaśālinyā bījamicchaiva saṃsṛteḥ | samyagjñānāgnidagdhā sā na bhūyaḥ parirohati || 32 ||

Desire is the seed of the cycle of existence, which is full of sorrow. When it is burned by the fire of true knowledge, it does not sprout again.

इच्छा संसार के चक्र का बीज है, जो दुःख से भरा हुआ है। जब यह सत्य ज्ञान की अग्नि से जल जाता है, तो यह फिर से अंकुरित नहीं होता।

7.36.33

इच्छामात्रं हि संसारो निर्वाणं तदवेदनम् । इच्छानुत्पादने यत्नः क्रियतां किं वृथाभ्रमैः ॥ ३३ ॥

icchāmātraṃ hi saṃsāro nirvāṇaṃ tadavedanam | icchānutpādane yatnaḥ kriyatāṃ kiṃ vṛthābhramaiḥ || 33 ||

Desire itself is the worldly existence; liberation is the absence of desire. Why not make an effort to prevent the arising of desire rather than wandering aimlessly?

इच्छा ही संसार है; निर्वाण इच्छा का अभाव है। फिर बेमतलब भटकने के बजाय इच्छा के उत्पन्न होने से रोकने का प्रयास क्यों न किया जाए?

7.36.34

शास्त्रोपदेशगुरवः प्रेक्ष्यन्ते किमनर्थकम् । किमिच्छाननुसंधानसमाधिर्नाधिगम्यते ॥ ३४ ॥

śāstropadeśaguravaḥ prekṣyante kimanarthakam | kimicchānanusandhānasamādhirnādhigamyate || 34 ||

Why are the scriptures, teachings, and gurus considered useless? Is the concentration on the pursuit of desire not attainable?

शास्त्र, उपदेश और गुरु क्यों अनर्थक माने जाते हैं? क्या इच्छा के अनुसंधान का समाधि प्राप्त नहीं होता?

7.36.35

यस्येच्छाननुसंधानमात्रे दुःसाध्यता मतेः । गुरूपदेशशास्त्रादि तस्य नूनं निरर्थकम् ॥ ३५ ॥

yasyecchānanusandhānamātre duḥsādhyatā mateḥ | gurūpadeśaśāstrādi tasya nūnaṃ nirarthakam || 35 ||

For one who finds even the slightest pursuit of desire difficult, the teachings of the guru and scriptures are indeed useless.

जिसे इच्छा के अनुसंधान में भी कठिनाई हो, उसके लिए गुरु और शास्त्र के उपदेश निश्चित रूप से अनर्थक हैं।

7.36.36

इच्छाविषविकारिण्यामन्त एव नृणामलम्। दुःखप्रसरकारिण्या हरिण्या जन्म जङ्गले ॥ ३६ ॥

icchāviṣavikāriṇyāmanta eva nṛṇāmalam | duḥkha prasarakāriṇyā hariṇyā janma jaṅgale || 36 ||

In the forest, the deer is born with a nature of suffering and desire.

जंगल में हरिण दुःख और इच्छा की प्रकृति के साथ जन्म लेता है।

7.36.37

न बालीक्रियते त्वीषदात्मज्ञानाय चेदसौ। इच्छोपशान्तिः क्रियतां तयालं तदवाप्यते ॥ ३७ ॥

na bālīkriyate tvīṣadātmajñānāya cedasau | icchopaśāntiḥ kriyatāṃ tayālaṃ tadavāpyate || 37 ||

If one does not strive for self-knowledge, then let there be peace of desire, by which it is attained.

यदि कोई आत्मज्ञान के लिए प्रयास नहीं करता है, तो इच्छा की शांति हो, जिससे वह प्राप्त होता है।

7.36.38

निरिच्छतैव निर्वाणं सेच्छतैव हि बन्धनम्। यथाशक्ति जयेदिच्छां किमेतावति दुष्करम् ॥ ३८ ॥

niricchatāiva nirvāṇaṃ secchatāiva hi bandhanam | yathāśakti jayedicchāṃ kimetāvati duṣkaram || 38 ||

Desirelessness is liberation, and desire is bondage. Conquer desire to the best of your ability; what is so difficult in this?

इच्छा का अभाव ही निर्वाण है, और इच्छा ही बंधन है। अपनी शक्ति के अनुसार इच्छा को जीतें; इसमें क्या कठिन है?

7.36.39

जरामरणजन्मादि करञ्जखदिरावलेः। बीजमिच्छा सदैवान्तर्दह्यतां शमवह्निना ॥ ३९ ॥

jarāmaraṇajanmādi karañjakhadirāvaleḥ | bījamicchā sadaivāntardahyatāṃ śamavahninā || 39 ||

The seed of old age, death, and birth is desire. Let it be burned by the fire of peace within.

जरा, मरण और जन्म का बीज इच्छा है। इसे अंतर्निहित शांति की अग्नि से जला दें।

7.36.40

यतो यतो निरिच्छत्वं मुक्ततैव ततस्ततः। यावद्गति यथाप्राणं हन्यादिच्छां समुत्थिताम् ॥ ४० ॥

yato yato niricchatvaṃ muktataiva tatastataḥ | yāvadgati yathāprāṇaṃ hanyādicchāṃ samutthitām || 40 ||

Wherever there is desirelessness, there is liberation. As long as one lives, let them destroy the arising desire.

जहाँ इच्छा का अभाव है, वहाँ मुक्ति है। जब तक जीवन है, उठती हुई इच्छा को नष्ट करें।

7.36.41

यतो यतश्च सेच्छत्वं बन्धपाशास्ततस्ततः। पुण्यपापमया दुःखराशयो विततार्तयः ॥ ४१ ॥

yato yataśca secchatvaṃ bandhapāśāstatastataḥ| puṇyapāpamayā duḥkharāśayo vitatārtayaḥ || 41 ||

From wherever there is desire, from there arise the bonds of attachment. These bonds, made of virtue and vice, are the causes of suffering and are spread out like a net.

जहाँ से इच्छा उत्पन्न होती है, वहाँ से बंधन के पाश उत्पन्न होते हैं। ये पाश, पुण्य और पाप से बने हुए, दुःख के राशियों के रूप में फैले हुए हैं।

7.36.42

इच्छानिरासरहिते गते साधोः क्षणेऽपि च । दस्युभिर्मुषितस्येव युक्तमाक्रन्दितुं चिरम् ॥ ४२ ॥

icchānirāsarahite gate sādhoḥ kṣaṇe'pi ca| dasyubhirmuṣitasyeva yuktamākrandituṃ ciram || 42 ||

Even for a moment, when the desire is not completely eradicated in a virtuous person, it is appropriate to lament for a long time, like one robbed by thieves.

भले ही एक क्षण के लिए, जब इच्छा पूरी तरह से नष्ट नहीं होती है, तो एक साधु के लिए चोरों द्वारा लूटे हुए व्यक्ति की तरह लंबे समय तक विलाप करना उचित है।

7.36.43

यथा यथास्य पुंसोऽन्तरिच्छा समुपशाम्यति । तथा तथास्य कल्याणं मोक्षाय परिवर्धते ॥ ४३ ॥

yathā yathāsya puṃso'ntariicchā samupaśāmyati| tathā tathāsya kalyāṇaṃ mokṣāya parivardhate || 43 ||

As the inner desires of a person are gradually pacified, so does their well-being increase for the sake of liberation.

जैसे-जैसे एक व्यक्ति की अंतर्निहित इच्छाएँ धीरे-धीरे शांत होती हैं, वैसे-वैसे उनका कल्याण मोक्ष के लिए बढ़ता जाता है।

7.36.44

आत्मनो निर्विवेकस्य यदिच्छापरिपूरणम् । संसारविषवृक्षस्य तदेव परिषेचनम् ॥ ४४ ॥

ātmano nirvivekasya yadicchāparipūraṇaṃ| saṃsāravirṣavṛkṣasya tadeva pariṣecanam || 44 ||

The fulfillment of desires of a person lacking discrimination is the very nourishment of the poisonous tree of worldly existence.

एक व्यक्ति की इच्छाओं की पूर्ति, जिसमें विवेक का अभाव है, संसार के विषैले वृक्ष का पोषण है।

7.36.45

हृद्वृक्षजाः स्वसुखदुःखकुबीजकोशौ वैरादिवाश्रयकृतादशुभाच्छुभाच्च । आसाद्य दुष्कृतकृशानुशिखाः शितान्ता इच्छाश्छमच्छमिति पुंस्पशुमादहन्ति ॥ ४५ ॥

hṛdvṛkṣajāḥ svasukhaduḥkhakubījakośau vairādivāśrayakṛtādaśubhācchubhācca| āsādya duṣkṛtakṛśānuśikhāḥ śitāntā icchāścchamacchamiti puṃspaśumādahanti || 45 ||

The seeds of one's own happiness and sorrow, born from the tree of the heart, arising from enmity and other negative emotions, and from good and bad deeds, taking the form of sharp, evil-doing thorns, destroy the person like a beast, saying 'desires, be pacified, be pacified.'

हृदय के वृक्ष से उत्पन्न अपने सुख और दुःख के बीज, जो द्वेष और अन्य नकारात्मक भावनाओं से उत्पन्न होते हैं, और अच्छे और बुरे कर्मों से, तीखे और दुष्कृति करने वाले काँटों का रूप लेकर, व्यक्ति को पशु की तरह नष्ट कर देते हैं, कहते हुए 'इच्छाओं, शांत हो जाओ, शांत हो जाओ।'

Chapter 37

7.37.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इच्छाविषविकारस्य वियोगं योगनामकम् । शान्तये श्रृणु भूयोऽपि पूर्वमुक्तमपि स्फुटम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | icchāviṣavikārasya viyogaṃ yoganāmakam | śāntaye śṛṇu bhūyo'pi pūrvamuktamapi sphuṭam ||1||

Sri Vasistha said: The separation from the modifications of desire is called Yoga. Listen again for peace, even though it has been said before, clearly.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इच्छा के विकारों से वियोग योग कहलाता है। शान्ति के लिए फिर से सुनो, यद्यपि यह पहले भी कहा गया है, स्पष्ट रूप से।

7.37.2

आत्मनो व्यतिरिक्तं चेद्विद्यते तदिहेच्छया । इष्यतामसति त्वेतत्स्वात्मान्यत्वं किमिष्यते ॥ २ ॥

ātmano vyatiriktaṃ cedvidyate tadihecchayā | iṣyatāmasati tvetatsvātmānyatvaṃ kimiṣyate ||2||

If there is anything other than the Self, it is desired here. But if it is not, what is the difference between the Self and the non-Self?

यदि आत्मा के अलावा कुछ और है, तो यहाँ उसे इच्छा की जाती है। लेकिन यदि ऐसा नहीं है, तो आत्मा और अनात्मा में क्या अन्तर है?

7.37.3

निर्भागावयवा सूक्ष्मा व्योम्नः शून्यतरैव चित् । सैवाहंजगदाकारा सती किं तत्तयेष्यते ॥ ३ ॥

nirbhāgāvayavā sūkṣmā vyomnaḥ śūnyataraiava cit | saivāhaṃjagadākārā satī kiṃ tattayeṣyate ||3||

The subtle, partless, and more void than space is consciousness. That itself is 'I' in the form of the world. Being that, what is to be desired?

सूक्ष्म, अविभाजित, और आकाश से भी अधिक शून्य है चेतना। वही विश्व के रूप में 'मैं' है। उसके रूप में होने पर, क्या इच्छा की जाए?

7.37.4

सा व्योमरूपा व्योमैव व्योमात्मवेद्यवेदिका । व्योमात्मजगदाभासमत्रेच्छाविषयोऽस्ति कः ॥ ४ ॥

sā vyomarūpā vyomaiva vyomātma vedya vedikā | vyomātmajagadābhāsamatrecchāviṣayo'sti kaḥ ||4||

That which is in the form of space, is space itself, the knower and the known of the space-self-world reflection. Here, what is the object of desire?

जो आकाश के रूप में है, वह आकाश स्वयं है, आकाश-आत्मा-विश्व के प्रतिबिम्ब का ज्ञाता और ज्ञेय। यहाँ, इच्छा का विषय क्या है?

7.37.5

ग्राह्यग्राहकसंबन्धः कुतश्चिदिति तन्न नः । विद्यतेऽसौ प्रशान्तानां येषामस्ति न वेद्मि तान् ॥ ५ ॥

grāhyagrāhakasaṃbandhaḥ kutaściditi tanna naḥ | vidyate'sau praśāntānāṃ yeṣāmasti na vedmi tān ||5||

The relationship between the perceiver and the perceived does not exist for us from anywhere. It does not exist for the peaceful ones. I do not know those for whom it exists.

ग्राहक और ग्राह्य का संबंध हमारे लिए कहीं से नहीं है। यह शांत लोगों के लिए नहीं है। मैं उन्हें नहीं जानता जिनके लिए यह है।

7.37.6

ग्राह्यग्राहकसंबंधः स्वनिष्ठोऽपि न लभ्यतेऽसतस्तु कथं लाभः केन लब्धोऽसितः शशी ॥ ६ ॥

grāhyagrāhakasaṃbandhaḥ svaniṣṭho'pi na labhyateasatastu kathaṃ lābhaḥ kena labdho'sitaḥ śaśī || 6 ||

The relationship between the perceiver and the perceived, though inherent in itself, is not attainable. How can there be attainment of the non-existent? By what means is the moon attained?

ग्राहक और ग्राह्य का संबंध, यद्यपि स्वयं में स्थित है, फिर भी प्राप्त नहीं होता। असत् का लाभ कैसे हो सकता है? किस तरह से चंद्रमा प्राप्त होता है?

7.37.7

एषैव ग्राहकादीनां सत्ता यन्नात्मनिष्ठतास्वभावावेक्षया सत्या न जाने क्व प्रयांति ते ॥ ७ ॥

eṣaiva grāhakādīnāṃ sattā yannātmaniṣṭhatāsvabhāvāvekṣayā satyā na jāne kva prayānti te || 7 ||

This very existence of the perceiver and others is that which is not established in the self. By the examination of one's own nature, the truth is not known, where do they go?

यही ग्राहक और अन्यों की सत्ता है जो आत्मा में स्थित नहीं है। अपनी प्रकृति की परीक्षा से सत्य ज्ञात नहीं होता, वे कहाँ जाते हैं?

7.37.8

एष एव स्वभावो यद्दृष्टृदृश्यक्षयोऽखिलःज्ञात्वाऽसत्या विनिर्वाणमहंतात्मनि गच्छति ॥ ८ ॥

eṣa eva svabhāvo yaddṛṣṭṛdṛśyakṣayo'khilaḥjñātvā'satyā vinirvāṇamahaṃtātmani gacchati || 8 ||

This very nature is the destruction of all perceivers and perceived. Knowing the unreal, one attains liberation in the self.

यही प्रकृति सभी ग्राहक और ग्राह्य का विनाश है। असत्य को जानकर, व्यक्ति आत्मा में मुक्ति प्राप्त करता है।

7.37.9

निर्वाणे नास्ति दृश्यादि दृश्यादौ नास्ति निर्वृतिःमिथोऽनयोरनुभवो न च्छायातपयोरिव ॥ ९ ॥

nirvāṇe nāsti dṛśyādi dṛśyādau nāsti nirvṛtiḥmitho'nayoranubhavo na cchāyātapayoriva || 9 ||

In liberation, there is no perceived, etc. In the perceived, etc., there is no satisfaction. There is no mutual experience between them, like shadow and sunlight.

मुक्ति में, ग्राह्य आदि नहीं है। ग्राह्य आदि में, संतुष्टि नहीं है। उनमें परस्पर अनुभव नहीं है, जैसे छाया और सूर्य की रोशनी।

7.37.10

उभे एते मिथोऽसत्ये असत्ये च न निर्वृतिःयतो निर्वाणमजरमदुःखमनुभूयते ॥ १० ॥

ubhe ete mitho'satye asatye ca na nirvṛtiḥyato nirvāṇamajaramaduḥkhamanubhūyate || 10 ||

Both these, mutually unreal and real, have no satisfaction. Therefore, liberation is experienced as free from old age and sorrow.

ये दोनों, परस्पर असत्य और सत्य, संतुष्टि नहीं हैं। इसलिए, मुक्ति बुढ़ापे और दुःख से मुक्त अनुभव की जाती है।

7.37.11

भ्रमभूतं च दृश्यादि नित्यं नात्र सुखप्रदम्। असच्च तद्भाव्यतां मा निर्वाणे स्थीयतामजे ॥ ॥ ११ ॥

bhramabhūtaṃ ca dṛśyādi nityaṃ nātra sukhapradam | asacca tadbhāvyatāṃ mā nirvāṇe sthīyatāmaje || 11 ||

The perceived world, which is an illusion, does not bring happiness. The unreal should not be considered real; do not dwell in the state of liberation.

दृश्य जगत, जो एक भ्रम है, सुख नहीं देता है। असत्य को सत्य नहीं मानना चाहिए; निर्वाण की अवस्था में नहीं रहें।

7.37.12

शुक्तिकारूप्यसदृशं प्रेक्षितं यन्न लभ्यते । अर्थकार्यपि तन्नास्ति किमत्रापह्नवेन च ॥ ॥ १२ ॥

śuktikārūpyasadṛśaṃ prekṣitaṃ yannna labhyate | arthakāryapi tannāsti kimatrāpahnavena ca || 12 ||

Just as a piece of shell is mistaken for silver, what is perceived is not real. Even the purpose of the action does not exist; why deny it?

जैसे शंख को चांदी समझ लिया जाता है, वैसे ही जो दिखाई देता है वह वास्तविक नहीं है। कार्य का उद्देश्य भी नहीं है; फिर इसे क्यों नकारें?

7.37.13

तत्सद्भावान्महद्दुःखमसद्भावान्महत्सुखम् । अभावः सोपपत्तिस्तु दृढतां याति भावनात् ॥ ॥ १३ ॥

tatsadbhāvānmahadduḥkhamasadbhāvānmahatsukham | abhāvaḥ sopapattistu dṛḍhatāṃ yāti bhāvanāt || 13 ||

From the existence of that, great suffering arises; from its non-existence, great happiness arises. The non-existence, being appropriate, becomes firm through contemplation.

उसके अस्तित्व से महान दुःख उत्पन्न होता है; उसके अस्तित्व न होने से महान सुख उत्पन्न होता है। अस्तित्व का अभाव, उचित होने के कारण, ध्यान से दृढ़ हो जाता है।

7.37.14

तत्किमात्मनि बन्धाय विदग्धं न मुधाधमाः । स्पष्ट एवोपचयादेर्वस्तुन्यस्तमिताऽपदे ॥ ॥ १४ ॥

tatkimātmani bandhāya vidagdhaṃ na mudhādhamaḥ | spaṣṭa evopacayādervastunyastamitā'pade || 14 ||

What then is the bondage in the self? The wise do not consider it foolish. It is clear that the accumulation of things is the cause of suffering.

फिर आत्मा में बंधन क्या है? बुद्धिमान लोग इसे मूढ़ता नहीं मानते। यह स्पष्ट है कि वस्तुओं का संचय दुःख का कारण है।

7.37.15

कार्यकारणभावादि ब्रह्मैव सकलं यदा । तदा तु ब्रह्मता ह्यस्मिन्संविन्मात्रात्मके तते ॥ ॥ १५ ॥

kāryakāraṇabhāvādi brahmaiva sakalaṃ yadā | tadā tu brahmatā hyasmin saṃvinmātrātmake tate || 15 ||

When the cause and effect relationship is understood, everything is indeed Brahman. Then, in this state of pure consciousness, Brahman is realized.

जब कारण और कार्य का संबंध समझा जाता है, तो सब कुछ ब्रह्म है। तब, इस शुद्ध चेतना की अवस्था में, ब्रह्म को प्राप्त किया जाता है।

7.37.16

मार्गयन्ति प्रबोधाय तैर्मृगैरलमस्तु नः व्योमरूपे किलैकस्मिन्सर्वात्मनि तते सति ॥ १६ ॥

mārgayanti prabodhāya tairmṛgairalamastu naḥ vyomarūpe kilaikasminsarvātmani tate sati || 16 ||

They seek awakening through those paths, may it be enough for us in the form of the sky, in that one Supreme Self.

वे उन मार्गों से जागरूकता की खोज करते हैं, हमारे लिए आकाश के रूप में पर्याप्त हो, उस एक परमात्मा में।

7.37.17

कार्यकारणताऽध्यानामुक्तीनामेव कः क्रमः यो हेतुः स्पन्दने वायोर्द्रवत्वे सलिलस्य च ॥ १७ ॥

kāryakāraṇatāḍhyānāmuktīnāmeva kaḥ kramaḥ yo hetuḥ spandane vāyordravatve salilasya ca || 17 ||

What is the sequence of cause and effect, meditation, and liberation? What is the cause of the movement of air and the fluidity of water?

कारण और परिणाम, ध्यान, और मुक्ति का क्रम क्या है? हवा की गति और पानी की तरलता का कारण क्या है?

7.37.18

शून्यत्वे नभसः सौम्य सर्गादित्वे चिदात्मनः कार्यकारणभावादि ब्रह्मैव सकलं यदा ॥ १८ ॥

śūnyatve nabhasaḥ saumya sargāditve cidātmanaḥ kāryakāraṇabhāvādi brahmaiva sakalaṃ yadā || 18 ||

In the emptiness of the sky, O gentle one, in the creation and so forth of the conscious self, from the state of cause and effect, everything is indeed Brahman.

आकाश की शून्यता में, हे सौम्य, चेतन आत्मा की सृष्टि और आदि में, कारण और परिणाम की अवस्था से, सब कुछ वास्तव में ब्रह्म है।

7.37.19

तदा ब्रह्मणि सर्गाणां कारणार्था विलज्जता न दुःखमस्ति न सुखं शान्तं शिवमयं जगत् ॥ १९ ॥

tadā brahmaṇi sargāṇāṃ kāraṇārthā vilajjatā na duḥkhamasti na sukhaṃ śāntaṃ śivamayaṃ jagat || 19 ||

Then, in Brahman, the purpose of creation is fulfilled, there is no sorrow, no happiness, the world is peaceful and auspicious.

तब, ब्रह्म में, सृष्टि का उद्देश्य पूर्ण होता है, दुःख नहीं है, सुख नहीं है, संसार शांत और मंगलमय है।

7.37.20

नास्ति चिन्मात्रतान्यत्वमत इच्छोदयः कुतः मृद्देहयोधसेनायां न मृन्मात्रेतरद्यथा ॥ २० ॥

nāsti cinmātratānyatvamata icchodayaḥ kutaḥ mṛddehayodhasenāyāṃ na mṛnmātretaradyathā || 20 ||

There is no difference in pure consciousness, then where does the desire arise? In the army of earthen bodies, there is no difference like in earthen pots.

पूर्ण चेतना में कोई अंतर नहीं है, तो इच्छा कहाँ से उत्पन्न होती है? मिट्टी के शरीरों की सेना में, मिट्टी के बर्तनों की तरह कोई अंतर नहीं है।

7.37.21

न सज्जगदहंतादौ दृश्ये ब्रह्मेतरत्तथा । श्रीराम उवाच । एवं चेत्तदुदेत्विच्छा मा वोदेतु मुनीश्वर ॥ २१ ॥

na sajjagadahaṃtādau dṛśye brahmetarattathā | śrīrāma uvāca | evaṃ cet tadudetvicchā mā vodetu munīśvara || 21 ||

Do not be attached to the world, the ego, and other things that are seen as different from Brahman. Shri Rama said: If this desire arises, O great sage, let it not arise.

दुनिया, अहंकार, और ब्रह्म से भिन्न दिखने वाली चीजों से आसक्त न हों। श्री राम ने कहा: यदि यह इच्छा उत्पन्न होती है, हे महामुनि, तो उसे उत्पन्न न होने दें।

7.37.22

सा तु ब्रह्मैव कोऽर्थः स्यादस्या विधिनिषेधने । श्रीवसिष्ठ उवाच । ज्ञातायां संप्रबुद्धायामिच्छा ब्रह्मैव नेतरत् ॥ २२ ॥

sā tu brahmaiva ko'rthaḥ syādasyā vidhinishedhane | śrīvasiṣṭha uvāca | jñātāyāṃ saṃprabuddhāyāmicchā brahmaiva netarat || 22 ||

What is the purpose of this? It is only Brahman. Shri Vasistha said: When knowledge is awakened, desire is only Brahman, nothing else.

इसका क्या अर्थ है? यह केवल ब्रह्म है। श्री वसिष्ठ ने कहा: जब ज्ञान जाग्रत होता है, तो इच्छा केवल ब्रह्म है, कुछ और नहीं।

7.37.23

यथा संबुद्धवान्राम तत्सत्यं किं त्विदं श्रृणु । यदा यदा ज्ञतोदेति शाम्यतीच्छा तदा तदा ॥ २३ ॥

yathā saṃbuddhavānrāma tatsatyaṃ kiṃ tvidaṃ śrṛṇu | yadā yadā jñatodeti śāmyatīcchā tadā tadā || 23 ||

O Rama, who is awakened, listen to this truth. Whenever knowledge arises, desire is pacified at that very moment.

हे राम, जो जाग्रत है, इस सत्य को सुनो। जब-जब ज्ञान उत्पन्न होता है, इच्छा उसी समय शांत हो जाती है।

7.37.24

वस्तुस्वभावादुदयत्यादित्ये यामिनी यथा । शाम्यत्येव न तूदेति ज्ञप्ताविच्छादि तत्तथा ॥ २४ ॥

vastusvabhāvādudayatyaāditye yāminī yathā | śāmyatyeva na tūdeti jñaptāvicchādi tattathā || 24 ||

Just as the night arises from the nature of the sun and then subsides, similarly, desire subsides and does not arise when knowledge is attained.

जैसे सूर्य के स्वभाव से रात उत्पन्न होती है और फिर शांत हो जाती है, उसी प्रकार, जब ज्ञान प्राप्त होता है, तो इच्छा शांत हो जाती है और उत्पन्न नहीं होती।

7.37.25

यथा यथोदयो ज्ञप्तेर्द्वैतशान्तिस्तथा तथा । वासनाविलयश्चैव कथमिच्छोदयो भवेत् ॥ २५ ॥

yathā yathodayo jñapterdvaityaśāntistathā tathā | vāsanāvilayaścaiva kathamicchodayo bhavet || 25 ||

Just as the arising of knowledge leads to the pacification of duality, similarly, the dissolution of impressions occurs. How can desire arise then?

जैसे-जैसे ज्ञान का उदय होता है, द्वैत की शांति होती है, उसी प्रकार वासनाओं का विलय होता है। फिर इच्छा कैसे उत्पन्न हो सकती है?

7.37.26

तस्या विद्योपशान्तेयं निर्मला मुक्ततोदिता । अशेषदृश्यवैरस्याद्यस्येच्छोदेति न क्वचित् ॥ २६ ॥

tasyā vidyopaśānteyaṃ nirmalā muktatoditā | aśeṣadṛśyavairasyādyasyecchōdeti na kvacit || 26 ||

This knowledge is peaceful, pure, and liberated. Due to the complete absence of enmity towards all visible things, no desire arises anywhere.

यह ज्ञान शांत, निर्मल और मुक्त है। सभी दृश्य वस्तुओं के प्रति वैर के अभाव से कोई इच्छा कहीं नहीं उत्पन्न होती।

7.37.27

विरक्तास्य नो दृश्ये नोदेत्यत्रास्य रक्तता । केवलं द्रष्टृदृश्यश्रीः स्वदते न स्वभावतः ॥ २७ ॥

viraktatāsya no dṛśye nōdetyatrāsya raktatā | kevalaṃ draṣṭṛdṛśyaśrīḥ svadate na svabhāvataḥ || 27 ||

Detachment does not arise from the visible world, nor does attachment arise from it. The glory of the seer and the seen is experienced, not by nature.

विरक्तता दृश्य जगत से नहीं उत्पन्न होती, न ही रक्तता उससे उत्पन्न होती है। द्रष्टा और दृश्य की श्री का अनुभव होता है, परंतु स्वभाव से नहीं।

7.37.28

काकतालीययोगेन परप्रेरणयानया । यदि किंचित्कदाचिच्च सम्यगिच्छति वा न वा ॥ २८ ॥

kākatālīyayogena paraprēraṇayānayā | yadi kiñcitkadācicca samyagicchati vā na vā || 28 ||

By the union of the crow and the palm tree, by the inspiration of another, if anything ever happens correctly or not,

काकतालीय योग से, दूसरे की प्रेरणा से, यदि कभी कुछ भी ठीक होता है या नहीं,

7.37.29

तदस्य सेच्छा नेच्छा वा ब्रह्मैवात्र न संशयः । इच्छा न जायते ज्ञस्यावश्यमेवानु वा नवा ॥ २९ ॥

tadasya secchā necchā vā brahmaivātra na saṃśayaḥ | icchā na jāyate jñasyāvaśyamevānu vā navā || 29 ||

That desire or non-desire is indeed Brahman here, there is no doubt. Desire does not arise in the knower, whether it is inevitable or not.

वह इच्छा या अनिच्छा यहाँ ब्रह्म ही है, इसमें कोई संशय नहीं। इच्छा ज्ञानी में नहीं उत्पन्न होती, चाहे यह अनिवार्य हो या नहीं।

7.37.30

ज्ञता चेदुदिता जन्तोस्तदिच्छास्योपशाम्यति । नैतयोः स्थितिरेकत्र प्रकाशतमसोरिव ॥ ३० ॥

jñatā ceduditā jantostadicchāsyopaśāmyati | naityoḥ sthitirekatra prakāśatamasoriva || 30 ||

If knowledge arises in the individual, then the desire subsides. There is no coexistence of these two, like light and darkness.

यदि ज्ञान जीव में उत्पन्न होता है, तो इच्छा शांत हो जाती है। इन दोनों का एक साथ अस्तित्व नहीं है, जैसे प्रकाश और अंधकार।

7.37.31

प्रतिषेधविधीनां तु तज्ज्ञो न विषयः क्वचित् । शान्तसर्वैषणेच्छस्य कोऽस्य किं वक्ति किंकृते ॥ ३१ ॥

pratiṣedhavidhīnāṃ tu tajjño na viṣayaḥ kvacit| śāntasarvaiṣaṇecchasya ko'sya kiṃ vakti kiṃkṛte || 31 ||

The one who knows the prohibitions and injunctions is not affected by them| For the one whose desires are completely pacified, who can say what to whom and for what purpose?

जो निषेधों और विधियों को जानता है, वह उनसे प्रभावित नहीं होता| जिसकी सभी इच्छाएँ शान्त हो गई हैं, उससे कौन किससे क्या कहता है और किसलिए?

7.37.32

एतदेव ज्ञताचिह्नं यदिच्छास्वतितानवम् । ह्लादनं सर्वलोकानामथानुभव एव वा ॥ ३२ ॥

etadeva jñatācihnaṃ yadicchāsvatitānavam| hlādanaṃ sarvalokānāmathānubhava eva vā || 32 ||

This very knowledge is the sign of the knower| The eternal nature of desire, the delight of all worlds, or simply the experience itself.

यही ज्ञान ज्ञाता का चिह्न है| इच्छा की नित्य प्रकृति, सभी लोकों का आनंद, या बस अनुभव ही।

7.37.33

दृश्यं विरसतां यातं यदा न स्वदते क्वचित् । तदा नेच्छा प्रसरति तदैव च विमुक्तता ॥ ३३ ॥

dṛśyaṃ virasatāṃ yātaṃ yadā na svadate kvacit| tadā necchā prasarati tadaiva ca vimuktatā || 33 ||

When the perceived world becomes tasteless, when it does not delight anywhere| Then desire does not spread, and that is the moment of liberation.

जब दृश्य जगत निरास हो जाता है, जब वह कहीं भी स्वादिष्ट नहीं होता| तब इच्छा नहीं फैलती, और वही मुक्ति का क्षण है।

7.37.34

बोधादनैक्यमद्वैतं यः शान्तमवतिष्ठते । इच्छानिच्छादयः सर्वे भावास्तस्य शिवात्मकाः ॥ ३४ ॥

bodhādanaikyamadvaitaṃ yaḥ śāntamavatiṣṭhate| icchānicchādayaḥ sarve bhāvāstasya śivātmakāḥ || 34 ||

One who abides in the peaceful non-duality of knowledge| All their desires and non-desires are of the nature of Shiva.

जो ज्ञान की शांत अद्वैतता में स्थित है| उसकी सभी इच्छाएँ और अनिच्छाएँ शिव की प्रकृति की हैं।

7.37.35

बोधादस्तमितद्वैतमद्वैतैक्यविवर्जितम्। यः स्वच्छो विगतव्यग्रः शान्त आत्मन्यवस्थितः ॥ ३५ ॥

bodhādastamitadvaitamadvaitaikyavivarjitam| yaḥ svaccho vigatavyagraḥ śānta ātmanyavasthitaḥ || 35 ||

One who is pure, free from anxiety, peaceful, and established in the self| Beyond the duality and non-duality of knowledge.

जो शुद्ध है, चिंतामुक्त है, शांत है, और आत्मा में स्थित है| ज्ञान की द्वैत और अद्वैत से परे।

7.37.36

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन। न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥ ३६ ॥

naiva tasya kṛtenārtho nākṛteneha kaścana | na cāsya sarvabhūteṣu kaścidarthavyapāśrayaḥ || 36 ||

Neither by action nor by inaction does one achieve anything in this world. Nor does one depend on any object for any purpose.

न कर्म से न अकर्म से कोई भी प्राप्त होता है, न ही किसी भी वस्तु पर किसी भी उद्देश्य के लिए निर्भर होता है।

7.37.37

नानिच्छया नेच्छयाथ न सता नासता सदा। नैवात्मना न चान्येन नैतैर्मरणजीवितैः ॥ ३७ ॥

nānicchayā necchayātha na satā nāsatā sadā | naivātmanā na cānyena naitairmaraṇajīvitaiḥ || 37 ||

Neither by desire nor by lack of desire, neither by existence nor by non-existence, neither by the self nor by others, nor by life and death.

न इच्छा से न अनिच्छा से, न अस्तित्व से न अनस्तित्व से, न आत्मा से न दूसरों से, न मृत्यु और जीवन से।

7.37.38

इच्छा च तस्य नोदेति निर्वाणस्य प्रबोधिनः। यदि चोदेति तस्येच्छा ब्रह्म शाश्वतमेव सा ॥ ३८ ॥

icchā ca tasya nōdēti nirvāṇasya prabōdhināḥ | yadi codēti tasyecchā brahma śāśvatamēva sā || 38 ||

Desire does not arise in the one who is awakened to liberation. If desire arises, that desire itself is the eternal Brahman.

इच्छा उसमें उत्पन्न नहीं होती जो मुक्ति के लिए जाग्रत है। यदि इच्छा उत्पन्न होती है, तो वह इच्छा स्वयं सनातन ब्रह्म है।

7.37.39

न दुःखमस्ति न सुखं शान्तं शिवमजं जगत्। इति योऽन्तः शिलेवास्ते तं प्रबुद्धं विदुर्बुधाः ॥ ३९ ॥

na duḥkhamasti na sukhaṃ śāntaṃ śivamajaṃ jagat | iti yō'ntaḥ śilēvāstē taṃ prabuddhaṃ vidurbudhāḥ || 39 ||

There is neither sorrow nor happiness, the world is peaceful, auspicious, and unborn. One who dwells in this understanding is considered awakened by the wise.

न दुःख है न सुख, संतुलित, शुभ, अजन्मा जगत् है। जो इस ज्ञान में रहता है, उसे बुद्धिमान लोग जाग्रत मानते हैं।

7.37.40

दुःखं सुखं भावनया कुर्वन्विषमिवामृतम्। इति निश्चित्य धीरात्मा प्रबुद्ध इति कथ्यते ॥ ४० ॥

duḥkhaṃ sukhaṃ bhāvanayā kurvanviviṣamivāmṛtam | iti niścitya dhīrātmā prabuddha iti kathyatē || 40 ||

Considering sorrow and happiness as equal, like nectar, one who is steadfast in this resolve is called awakened.

दुःख और सुख को भावना से समान मानकर, जैसे अमृत, जो इस निश्चय में दृढ़ है, उसे जाग्रत कहा जाता है।

7.37.41

तत्स्थितं व्योमनि व्योम शान्ते शान्तं शिवे शिवम् । शून्ये शून्यं सति च सद्यद्ब्रह्मणि जगत्स्थितम् ॥ ४१ ॥

tatsthitaṃ vyomani vyoma śānte śāntaṃ śive śivam | śūnye śūnyaṃ sati ca sadyadbrahmaṇi jagatsthitam || 41 ||

That which is situated in the sky is the sky, in the peaceful is the peaceful, in the auspicious is the auspicious, in the void is the void, in the truth is the truth, in the immediate Brahman is the world situated.

जो आकाश में स्थित है वह आकाश है, शान्त में शान्त है, शिव में शिव है, शून्य में शून्य है, सत्य में सत्य है, तत्काल ब्रह्म में जगत् स्थित है।

7.37.42

असंवेदनसंवित्खे ततेऽविश्वमिति स्थिते । सौम्ये समसमे शान्ते शिवेऽहंताभ्रमः क्षयी ॥ ४२ ॥

asaṃvedanasamvitkhe tate'viśvamiti sthite | saumye samasame śānte śive'haṃtābhraṃmaḥ kṣayī || 42 ||

In the space of non-perception and perception, that which is established as non-world, in the gentle, equal, peaceful, auspicious, the delusion of 'I' perishes.

असंवेदन और संवेदन के आकाश में, जो अविश्व के रूप में स्थापित है, सौम्य, समान, शान्त, शिव में, 'मैं' का भ्रम नष्ट हो जाता है।

7.37.44

परचिन्तापुरोमध्ये गतविघ्नं गमागमौ । यथान्तस्तव शून्यत्वात्तथैवास्मिञ्जगद्भ्रमे ॥ ४४ ॥

paracintāpuromadhye gatavighnaṃ gamāgamau | yathāntastava śūnyatvāttathaivāsmiñjagadbhraṃme || 44 ||

In the midst of thoughts of others, obstacles are removed, coming and going. Just as within you there is emptiness, so too in this worldly illusion.

दूसरों के विचारों के बीच में, बाधाएँ दूर हो जाती हैं, आने-जाने. जैसे आपके भीतर शून्यता है, वैसे ही इस संसारिक भ्रम में।

7.37.46

स्वप्ननिर्माणपुरवद्वालवेतालतालवत् । यदिदं दृश्यते तत्र किं किलासत्यतेतरत् ॥ ४६ ॥

svapnanirmāṇapuravadvālaveālātālavat | yadidaṃ dṛśyate tatra kiṃ kilāsatyaṃtetarat || 46 ||

Like the creation of a dream city, like the sound of a lute or a drum, whatever is seen here, what is there that is not unreal?

जैसे स्वप्न की नगरी का निर्माण, जैसे वीणा या ढोल की ध्वनि, जो कुछ भी यहाँ दिखाई देता है, वहाँ क्या है जो असत्य नहीं है?

7.37.47

असत्यमेवाहमिति भासते सत्यमेव च । भ्रान्तिभाजं विनैवेयं भ्रान्तिः स्फुरति सा सती ॥ ४७ ॥

asatyamevāhamiti bhāsate satyameva ca | bhrāntibhājaṃ vinaiveyaṃ bhrāntiḥ sphurati sā satī || 47 ||

The unreal appears as 'I', and the real also shines. Without the deluded one, this delusion itself shines as real.

असत्य ही 'मैं' के रूप में प्रकट होता है, और सत्य भी चमकता है। भ्रांत के बिना, यह भ्रांति स्वयं सत्य के रूप में चमकती है।

7.37.48

न सन्नासन्न सदसत्किमपीदमतीन्द्रियम् । अवाच्यं जगदित्येव भात्यवक्षुभितं खवत् ॥ ४८ ॥

na sannāsanna sadasatkimapīdamatīndriyam | avācyaṃ jagadityeva bhātyavakṣubhitaṃ khavat || 48 ||

This is neither real nor unreal, neither existent nor non-existent, beyond the senses, indescribable, and the world appears as if in a state of confusion.

यह न तो सत्य है न असत्य, न ही अस्तित्व में है न अनस्तित्व में, इंद्रियों से परे है, अवर्णनीय है, और संसार ऐसे प्रतीत होता है जैसे भ्रमित हो।

7.37.49

इहेच्छानिच्छते ज्ञस्य शाम्यतां यदलं समे । तथापि श्रेयसे मन्ये नन्वनिच्छोदयं स्फुटम् ॥ ४९ ॥

ihecchānicchatē jñasya śāmyatāṃ yadalaṃ samē | tathāpi śrēyasē manyē nanvanicchōdayaṃ sphuṭam || 49 ||

Here, the desire of the wise is to attain peace, which is sufficient in equality. Nevertheless, I consider the clear rise of non-desire to be better.

यहाँ, ज्ञानी की इच्छा शांति प्राप्त करने की है, जो समता में पर्याप्त है। फिर भी, मैं अनिच्छा के स्पष्ट उदय को बेहतर मानता हूँ।

7.37.50

अहं जगदिति ज्ञप्तिः खे खस्येवेयमास्थिता । चिदात्मनो यथा वायोः स्पन्दो नात्रास्ति कारणं ॥ ५० ॥

ahaṃ jagaditi jñaptiḥ khē khasyēvēyamāsthitā | cidātmano yathā vāyoḥ spandaḥ nātrāsti kāraṇaṃ || 50 ||

The cognition 'I am the world' is established in the sky like the sky itself. Just as there is no cause for the vibration of the air in the self of consciousness, there is no cause here.

यह ज्ञान 'मैं संसार हूँ' आकाश में आकाश की तरह स्थापित है। जैसे चेतना के स्वयं में हवा के कंपन का कोई कारण नहीं है, वैसे ही यहाँ कोई कारण नहीं है।

7.37.51

चितश्चेत्योन्मुखत्वं यत्तच्चित्तं सैव संसृतिः । सेच्छा तन्मुक्तता मुक्तिर्युक्तिं ज्ञात्वेति शाम्यताम् ॥ ५१ ॥

citaścetyonmukhatvaṃ yattaccittaṃ saiva saṃsṛtiḥ | secchā tanmuktatā muktiryuktiṃ jñātveti śāmyatām || 51 ||

The tendency of consciousness towards objects is the mind, and that is transmigration. That desire is liberation, and knowing this logic, attain peace.

चेतना की वस्तुओं की ओर प्रवृत्ति मन है, और वही संसार है। वह इच्छा ही मुक्ति है, और इस युक्ति को जानकर शांति प्राप्त करो।

7.37.52

इच्छा भवत्वनिच्छा वा सर्गो वा प्रलयोऽथवा । क्षतिर्न कस्यचित्काचिन्न च किंचिदिहास्ति हि ॥ ५२ ॥

icchā bhavatvanicchā vā sargo vā pralayo'thavā | kṣatirna kasyacitkācinnaca kiṃcidihāsti hi || 52 ||

Whether there is desire or non-desire, creation or dissolution, there is no harm to anyone, and nothing exists here.

चाहे इच्छा हो या अनिच्छा, सृष्टि हो या प्रलय, किसी को कोई हानि नहीं होती, और यहाँ कुछ भी नहीं है।

7.37.53

यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजङ्गमम् । तत्सर्वं शान्तमाकाशं परचिन्तापुरोपमम् ॥ ५३ ॥

yadidaṃ dṛśyate kiṃcijjagatsthāvarajaṅgamam | tatsarvaṃ śāntamākāśaṃ paracintāpuropamam || 53 ||

Whatever is seen in this world, whether moving or stationary, all of that is tranquil like the sky, resembling the city of another's thoughts.

जो कुछ भी इस जगत में दिखाई देता है, चलायमान या स्थिर, वह सब कुछ शान्त आकाश के समान है, दूसरे के विचारों के नगर के समान।

7.37.54

इच्छानां तानवं यस्य दिनानुदिनमागतम् । विवेकशमतृप्तस्य तमाहुर्मोक्षभागिनम् ॥ ५४ ॥

icchānāṃ tānavaṃ yasya dinānudinamāgatam | vivekaśamatṛptasya tamāhurmokṣabhāginam || 54 ||

One whose desires diminish day by day, who is content with the tranquility of discrimination, is said to be eligible for liberation.

जिसकी इच्छाएँ दिन-प्रतिदिन कम होती जाती हैं, जो विवेक की शान्ति से तृप्त है, उसे मोक्ष का भागी कहा जाता है।

7.37.55

अब्धिद्यूर्वीनदीशैलशोभाशून्यतरात्मनि । जृम्भते द्रष्टृकरणं मृगतृष्णाम्बुवीचिवत् ॥ ५५ ॥

abdhidyūrvīnadīśailaśobhāśūnyatarātmani | jṛmbhate draṣṭṛkaraṇaṃ mṛgatṛṣṇāmbuvīcivat || 55 ||

In the self, which is devoid of the splendor of oceans, distances, rivers, and mountains, the organ of perception yawns like the mirage of water.

जिस आत्मा में समुद्र, दूरियाँ, नदियाँ और पर्वतों की शोभा नहीं है, वहाँ दर्शन करने वाले इंद्रिय मृगतृष्णा के जल की लहरों की तरह जम्हाई लेते हैं।

7.37.56

यान्कार्यकरणव्यूहान्कृतवान्पूर्वमेव तान् । संप्रेक्षया न पश्यामि मिथ्याभ्रमभराद्दते ॥ ५६ ॥

yānkāryakaraṇavyūhānkṛtavānpūrvameva tān | saṃprekṣayā na paśyāmi mithyābharamabharādṛte || 56 ||

I do not see those instruments of action that I had created earlier, except for the burden of false delusion.

मैं उन कर्म करने के उपकरणों को नहीं देखता जो मैंने पहले बनाए थे, मिथ्या भ्रम के बोझ के अलावा।

7.37.57

भ्रमभूतेन कुर्मश्चेद्व्यवहारमवस्तुना । तत्कस्मात्परचित्ताद्रिः कम्बलत्वं न नीयते ॥ ५७ ॥

bhramabhūtena kurmaścedvyavahāramavastunā | tatkasmātparacittādriḥ kambalatvaṃ na nīyate || 57 ||

If I were to engage in transactions with the unreal, which is born of delusion, then why does the mountain of another's mind not become a blanket?

अगर मैं भ्रम से उत्पन्न अवास्तविक से व्यवहार करूँ, तो फिर दूसरे के मन का पर्वत कंबल क्यों नहीं बन जाता?

7.37.58

असता व्यवहारश्चेत्प्रेक्षामात्रविनाशिना । क्रियते शशशृङ्गेण तत्कथं छाद्यते न खम् ॥ ५८ ॥

asatā vyavahāraścetprekṣāmātravināśinā | kriyate śaśaśṛṅgeṇa tatkathaṃ chādyate na kham || 58 ||

If the worldly transactions are destroyed merely by the perception of unreality, then how is the sky not covered by the horn of a hare?

यदि असत्य की प्रेक्षा मात्र से व्यवहार नष्ट हो जाता है, तो खरगोश के सींग से आकाश कैसे नहीं ढंका जाता?

7.37.59

अहभावाच्चिदाकाशो जाड्यातिशयतः क्षणात् । पाषाणतां जलमिव मनस्त्वाद्याति देहताम् ॥ ५९ ॥

ahabhāvāccidākāśo jāḍyātiśayataḥ kṣaṇāt | pāṣāṇatāṃ jalamiva manastvādyāti dehatām || 59 ||

Due to the absence of the ego, the space of consciousness, being extremely inert, instantly becomes like a stone, just as water becomes ice.

अहंकार की अनुपस्थिति के कारण, चेतना का आकाश, अत्यंत जड़ होने के कारण, तुरंत पत्थर की तरह हो जाता है, जैसे पानी बर्फ बन जाता है।

7.37.60

चित्त्वादनुभवत्येतामसत्यामेव देहिताम् । अविनष्टैव चिच्छक्तिः स्वप्ने स्वमरणं यथा ॥ ६० ॥

cittvādanubhavatyetāmasatyāmeva dehitām | avinaṣṭaiva cicchaktiḥ svapne svamarṇaṃ yathā || 60 ||

Even though the power of consciousness is not destroyed, it experiences this unreal embodiment, just as one experiences one's own death in a dream.

यद्यपि चेतना की शक्ति नष्ट नहीं होती, फिर भी यह इस अवास्तविक शरीरता का अनुभव करती है, जैसे कोई स्वप्न में अपनी मृत्यु का अनुभव करता है।

7.37.61

व्योम्न्यसत्यमवस्तुत्वात्सत्यं चानुभवाद्यथा । नीलत्वं तद्वदीशेऽस्मिन्सर्गो नासन्न सन्मयः ॥ ६१ ॥

vyomnyasatyamavastutvātsatyaṃ cānubhavādyathā | nīlatvaṃ tadvadīśe'smin sargo nāsanna sanmayaḥ || 61 ||

Just as the sky is unreal due to its non-existence but real due to experience, similarly, the blueness in the Lord is neither non-existent nor real.

जैसे आकाश अवास्तविक है अपनी अस्तित्वहीनता के कारण, लेकिन अनुभव के कारण वास्तविक है, उसी प्रकार, ईश्वर में नीलता न तो अस्तित्वहीन है और न ही वास्तविक है।

7.37.62

यथा शून्यत्वनभसोर्यथा स्पन्दनभस्वतोः । भेदो नास्ति तथा सर्गब्रह्मणोरेकरूपयोः ॥ ६२ ॥

yathā śūnyatvanabhasor yathā spandanabhasvatoḥ | bhedo nāsti tathā sargabrahmaṇorekarūpayoḥ || 62 ||

Just as there is no difference between the emptiness of space and its vibration, similarly, there is no difference between creation and Brahman, which are of the same form.

जैसे आकाश की शून्यता और उसकी कंपन में कोई अंतर नहीं है, उसी प्रकार, सृष्टि और ब्रह्म में, जो एक ही रूप के हैं, कोई अंतर नहीं है।

7.37.63

नेह संजायते किंचिज्जगदादि न नश्यति । स्वप्नो निद्रागतस्येव केवलं प्रतिभासते ॥ ६३ ॥

neha saṃjāyate kiṃcijjagadādi na naśyati | svapno nidrāgatasyeva kevalaṃ pratibhāsate || 63 ||

Nothing is born or destroyed in this world; it only appears like a dream to one who is asleep.

इस जगत में कुछ भी जन्म नहीं लेता है और न ही नष्ट होता है; यह तो सोए हुए व्यक्ति के सपने की तरह प्रतीत होता है।

7.37.64

अविद्यमाने पृथ्व्यादौ प्रतिभामात्ररूपिणि । सर्गे क इव संरम्भस्त्यागादानैश्चिदम्बरे ॥ ६४ ॥

avidyamāne pṛthvyādau pratibhāmātrarūpiṇi | sarge ka iva saṃrambhastyāgādānaiścidambare || 64 ||

In the mere appearance of the non-existent earth and other elements, what is the point of creation, abandonment, and acquisition in the realm of consciousness?

अविद्यमान पृथ्वी और अन्य तत्वों के मात्र प्रतीति रूप में, चेतना के क्षेत्र में सृजन, त्याग और अधिग्रहण का क्या महत्व है?

7.37.65

न देहः प्रतिभातोऽस्ति पृथ्व्यादिकारणान्वितः । केवलं ब्रह्मचिन्मात्रमेवात्मन्येव संस्थितम् ॥ ६५ ॥

na dehaḥ pratibhāto'sti pṛthvyādikāraṇānvitaḥ | kevalaṃ brahmachinmātramevātmanyeva saṃsthitam || 65 ||

There is no body that appears to be endowed with the cause of earth and other elements; only pure consciousness, Brahman, is established in the self.

पृथ्वी और अन्य तत्वों के कारण से युक्त कोई शरीर नहीं है जो प्रतीत होता है; केवल शुद्ध चेतना, ब्रह्म, आत्मा में स्थित है।

7.37.66

बुद्ध्यादेः कारणत्वं च द्वैतैक्यासंभवान्न सत् । अनेनेदं क्रियत इत्यस्यार्थं याति संभवात् ॥ ६६ ॥

buddhyādeḥ kāraṇatvaṃ ca dvaitaikyāsaṃbhavānna sat | anenedaṃ kriyata ityasyārthaṃ yāti saṃbhavāt || 66 ||

The causality of the intellect and other elements is not real due to the impossibility of duality and unity; the meaning of 'this is done by this' arises from possibility.

बुद्धि और अन्य तत्वों का कारणत्व द्वैत और एकता की असंभावना के कारण वास्तविक नहीं है; 'इससे यह किया जाता है' का अर्थ संभावना से उत्पन्न होता है।

7.37.67

अहेतुरक्रमं भाति चिति कल्पक्रियागणः । क्षणेनैव यथा स्वप्ने मृतिजन्मादि सत्वराः ॥ ६७ ॥

aheturakramaṃ bhāti citi kalpakriyāgaṇaḥ | kṣaṇenaiva yathā svapne mṛtijanmādi satvarāḥ || 67 ||

The multitude of imaginary actions appear without cause or sequence in consciousness, just as death, birth, and other events occur swiftly in a dream.

चेतना में कल्पित कार्यों की बहुतायत बिना कारण और क्रम के प्रतीत होती है, जैसे सपने में मृत्यु, जन्म और अन्य घटनाएँ तेजी से होती हैं।

7.37.68

खमेव पृथ्वी खं शैलाः खमेव दृढभित्तयःखमेव लोकाः स्पन्दः खं सर्गसंवेदनं चितेः ॥ ६८ ॥

khameva pṛthvī khaṃ śailāḥ khameva dṛḍhabhittayaḥkhameva lokāḥ spandaḥ khaṃ sargasaṃvedanaṃ citeḥ || 68 ||

In the sky itself is the earth, in the sky are the mountains, in the sky are the solid walls, in the sky are the worlds, the vibration is in the sky, the creation and perception are in consciousness.

आकाश में ही पृथ्वी है, आकाश में पर्वत हैं, आकाश में मजबूत दीवारें हैं, आकाश में लोक हैं, कंपन आकाश में है, सृष्टि और अनुभूति चेतना में हैं।

7.37.69

व्योमभित्तौ जगच्चित्रं चिद्रङ्गमयमाततम्नोदेति नास्तमायाति न शाम्यति न ताम्यति ॥ ६९ ॥

vyomabhittau jagaccitraṃ cidraṅgamayamātatamnodeti nāstamāyāti na śāmyati na tāmyati || 69 ||

In the canvas of the sky, the world picture is spread out, made of consciousness waves, it does not rise, does not set, does not calm down, does not become dark.

आकाश के कैनवास में, विश्व चित्र फैला हुआ है, चेतना की लहरों से बना है, यह उदय नहीं होता, अस्त नहीं होता, शांत नहीं होता, अंधेरा नहीं होता।

7.37.70

चिद्वारिणि जगत्तुङ्गतरङ्गद्रवरूपिणिकिं नु वा कथमुत्पन्नं किं शान्तं च कदा कथम् ॥ ७० ॥

cidvāriṇi jagattuṅgataraṅgadravarūpiṇikiṃ nu vā kathamutpannaṃ kiṃ śāntaṃ ca kadā katham || 70 ||

O ocean of consciousness, the world is like the high waves and foam, how did it arise, and when and how will it become calm?

हे चेतना के समुद्र, विश्व ऊँची लहरों और फेन के समान है, यह कैसे उत्पन्न हुआ, और कब और कैसे शांत होगा?

7.37.71

शान्ते महाचिदाकाशे जगच्छून्यत्वशालिनिचेत्यासम्भवतः सन्ति नोदयास्तमयौ कुतः ॥ ७१ ॥

śānte mahācidākāśe jagacchūnyatvaśālinicetyāsaṃbhavataḥ santi nodayāstamayau kutaḥ || 71 ||

In the peaceful great space of consciousness, where the world is void, there is no rise or fall. How can there be any creation or dissolution?

चेतना के शान्त महान आकाश में, जहाँ संसार शून्य है, वहाँ उदय या अस्त नहीं होता। फिर सृष्टि या प्रलय कैसे हो सकता है?

7.37.72

पर्वता गगनायन्ते गगनं पर्वतायतेसंवेदनप्रयोगेण ब्रह्मणः सर्गता स्थितौ ॥ ७२ ॥

parvatā gaganāyante gaganaṃ parvatāyatesaṃvedanaprayogeṇa brahmaṇaḥ sargatā sthitau || 72 ||

Mountains appear as sky, and the sky appears as mountains. Through the application of consciousness, Brahman manifests and sustains the creation.

पर्वत आकाश के रूप में दिखते हैं, और आकाश पर्वतों के रूप में दिखता है। चेतना के प्रयोग से, ब्रह्म सृष्टि को प्रकट करता है और उसे बनाए रखता है।

7.37.73

संविच्चूर्णप्रयोगेण निमेषार्धेन योगिनः । कुर्वन्ति जगदाकाशमाकाशं त्रिजगन्ति च ॥ ७३ ॥

saṃviccūrṇaprayogeṇa nimeṣārdhena yoginaḥ | kurvanti jagadākāśamākāśaṃ trijaganti ca || 73 ||

By the practice of saṃviccūrṇa, yogis in half a moment create the space of the universe and the space of the three worlds.

संविच्चूर्ण प्रयोग से, योगी आधे क्षण में ब्रह्मांड के आकाश और तीनों लोकों के आकाश को बनाते हैं।

7.37.74

सिद्धसंकल्पनगराण्यसंख्यानि यथाम्बरे । तथा सर्गसहस्राणि सन्ति तानि तु चिन्नभः ॥ ७४ ॥

siddhasaṃkalpananagarāṇyasaṃkhyāni yathāmbare | tathā sargasahasrāṇi santi tāni tu cinnabhaḥ || 74 ||

Just as there are countless cities of accomplished will in the sky, so too there are thousands of creations, and they are all in the consciousness.

जैसे आकाश में अनगिनत सिद्ध संकल्प नगर हैं, वैसे ही हजारों सृष्टियाँ हैं, और वे सभी चेतना में हैं।

7.37.75

महार्णवे यथावर्ता अन्योन्यमपि मिश्रिताः । पृथगेवावतिष्ठन्ते पयसोऽन्ये च नैव ते ॥ ७५ ॥

mahārṇave yathāvartā anyonyamapi miśritāḥ | pṛthagevāvatiṣṭhante payaso'nye ca naiva te || 75 ||

Just as in the great ocean, the waves are mixed with each other but remain distinct, so too are the other waters, but they are not the same.

जैसे महासागर में, तरंगें एक-दूसरे से मिली हुई हैं लेकिन अलग रहती हैं, वैसे ही अन्य जल भी हैं, लेकिन वे समान नहीं हैं।

7.37.76

महाचिति महासर्गा अन्योन्यमपि मिश्रिताः । पृथगेवावतिष्ठन्ते व्यतिरिक्ता न ते ततः ॥ ७६ ॥

mahāciti mahāsargā anyonyamapi miśritāḥ | pṛthagevāvatiṣṭhante vyatiriktā na te tataḥ || 76 ||

The great consciousness and the great creations, though mixed with each other, remain distinct and are not separate from that.

महान चेतना और महान सृष्टियाँ, यद्यपि एक-दूसरे से मिली हुई हैं, अलग रहती हैं और उससे अलग नहीं हैं।

7.37.77

सर्गात्सर्गान्तरालोके या प्रबुद्धस्य योगिनः । सिद्धलोकान्तरे प्राप्तिः सैवेति विबुधोक्तयः ॥ ७७ ॥

sargātsargāntarāloke yā prabuddhasya yoginaḥ | siddhalokāntare prāptiḥ saiveiti vibudhoktayaḥ || 77 ||

In the interval between one creation and another, the attainment of the enlightened yogi in the realm of the perfected beings is said to be the same.

एक सृष्टि और दूसरी सृष्टि के बीच के अंतराल में, प्रबुद्ध योगी की प्राप्ति सिद्ध लोक में वही कही जाती है।

7.37.78

अविनाशिनि भूतानि स्थितानि परमे शिवेव्योम्नीव शून्यतोल्लासाः सर्गवर्गा निरर्गलम् ॥ ७८ ॥

avināśini bhūtāni sthitāni parame śivevyomnīva śūnyatollāsāḥ sargavargā nirargalam || 78 ||

The indestructible beings are situated in the supreme Shiva, like the sky, they are the play of emptiness, the groups of creation are without obstacles.

अविनाशी भूत परम शिव में स्थित हैं, आकाश की तरह, वे शून्यता का खेल हैं, सृष्टि के समूह बाधा रहित हैं।

7.37.79

परमार्थनिजामोदाः सहजाः सर्गविभ्रमाःनोद्यन्ति नोपशाम्यन्ति लेखा इव शिलोदरे ॥ ७९ ॥

paramārthanijāmodāḥ sahajāḥ sargavibhramāḥnodyanti nopaśāmyanti lekhā iva śilodare || 79 ||

The natural joys arising from the ultimate reality, the delusions of creation, arise and do not cease, like lines on a stone.

परमार्थ से उत्पन्न स्वाभाविक आनंद, सृष्टि के भ्रम, उठते हैं और रुकते नहीं, पत्थर पर रेखाओं की तरह।

7.37.80

अन्योन्यं कुसुमामोदा मिलिता अप्यमीलिताःव्योमरूपास्तथा सर्गा अन्योन्यं सिद्धभूमयः ॥ ८० ॥

anyonyaṃ kusumāmodā militā apyamīlitāḥvyomarūpāstathā sargā anyonyaṃ siddhabhūmayaḥ || 80 ||

The fragrance of flowers intermingled, yet not mixed, like the sky, so are the creations intermingled with each other, in the realm of the perfected.

फूलों की सुगंध एक दूसरे से मिली हुई है, लेकिन मिक्स नहीं है, आकाश की तरह, ऐसे ही सृष्टियाँ एक दूसरे से मिली हुई हैं, सिद्ध लोक में।

7.37.81

संकल्पाकाशरूपत्वात्सर्वानुभववत्स्थितेःतनुसंकल्पमोहानां सत्याश्च मननोक्तयः ॥ ८१ ॥

saṃkalpākāśarūpatvātsarvānubhavavatsthiteḥtanusaṃkalpamohānāṃ satyāśca mananoktayaḥ || 81 ||

Due to the nature of the space of imagination, all experiences are established. The truths spoken by the mind are also true for the subtle imaginings and delusions.

कल्पना के आकाश की प्रकृति के कारण, सभी अनुभव स्थापित होते हैं। मन द्वारा कहे गए सत्य सूक्ष्म कल्पनाओं और भ्रमों के लिए भी सत्य हैं।

7.37.82

न ज्ञानवादिता सत्या न बाह्यानर्थवादितायथावेदनमेतानि वेदनानि फलन्ति वः ॥ ८२ ॥

na jñānavāditā satyā na bāhyānarthavāditāyathāvedanametāni vedanāni phalanti vaḥ || 82 ||

The truths spoken by knowledge are not real, nor are the meanings spoken by external objects. These experiences bear fruit according to their perception.

ज्ञान द्वारा कहे गए सत्य वास्तविक नहीं हैं, न ही बाह्य वस्तुओं द्वारा कहे गए अर्थ। ये अनुभव अपनी प्रतीति के अनुसार फल देते हैं।

7.37.83

चिति चित्त्वं यदस्त्यन्तर्जगदित्येव भाविते । भेदो द्रवत्वपयसोरिव नात्रोपपद्यते ॥ ८३ ॥

citi cittvaṃ yadastyantarjagadityeva bhāvite | bhedo dravatvapayasoriva nātropapadyate || 83 ||

The consciousness that is within is the essence of the universe. The distinction between the two is as illusory as the difference between water and its fluidity.

जो चेतना अंदर है, वही ब्रह्मांड का सार है। इन दोनों के बीच का अंतर जल और उसकी तरलता के अंतर की तरह भ्रामक है।

7.37.84

कालो जगन्ति भुवनान्यहमक्षवर्गस्त्वं तानि तत्र च तथेति च सर्वमेकम्। चिद्व्योम शान्तमजमव्ययमीश्वरात्म रागादयः खलु न केचन संभवन्ति ॥ ८४ ॥

kālo jaganti bhuvanānyahamakṣavargastvaṃ tāni tatra ca tatheti ca sarvamekam | cidvyoma śāntamajamavyayamīśvarātma rāgādayaḥ khalu na kecana saṃbhavanti || 84 ||

Time, the universe, the worlds, I, the senses, you, all these are one. The consciousness is peaceful, unborn, imperishable, and the supreme self. Desires and other emotions do not arise.

समय, ब्रह्मांड, लोक, मैं, इंद्रियाँ, तुम, ये सब एक हैं। चेतना शांत, अजन्मा, अविनाशी और परम आत्मा है। इच्छाएँ और अन्य भावनाएँ उत्पन्न नहीं होतीं।

Chapter 38

7.38.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । चित्पश्यति जगन्मिथ्या स्ववेदनविबोधिता । व्योम्नि मायाञ्जनासिक्ता दृगिवाचलतान्तरम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | citpaśyati jaganmithyā svavedanavibodhitā | vyomni māyāñjanāsiktā dṛgivācalatāntaram || 1 ||

Shri Vasishtha said: The consciousness perceives the world as false, being aware of its own experience. Like a mountain seen in the sky painted with the illusion of Maya.

श्री वसिष्ठ ने कहा: चेतना अपने अनुभव से जागरूक होकर संसार को मिथ्या समझती है। जैसे आकाश में माया की काली स्याही से रंगे हुए पर्वत की छाया दिखाई देती है।

7.38.2

ब्रह्मसर्गश्चित्तसर्गो द्वावेतौ सदृशौ मतौ । परमार्थस्वरूपत्वादक्षुब्धत्वात्सदैव च ॥ २ ॥

brahmasargaścittasargo dvāvetau sadṛśau matau | paramārthasvarūpatvādakṣubdhatvātsadaiva ca || 2 ||

The creation of Brahman and the creation of the mind are considered similar due to their ultimate nature and eternal stability.

ब्रह्म की सृष्टि और मन की सृष्टि अपने परम स्वरूप और शाश्वत स्थिरता के कारण समान मानी जाती हैं।

7.38.3

ज्ञानरूपतयाबाह्यं बाह्यं चानुभवात्तथा । सत्यरूपमतः सत्यां विद्धि बाह्यार्थरूपताम् ॥ ३ ॥

jñānarūpatayābāhyaṃ bāhyaṃ cānubhavāttathā | satyarūpamataḥ satyāṃ viddhi bāhyārtharūpatām || 3 ||

Due to the nature of knowledge, the external is considered external through experience. Therefore, know the true form of external objects as true.

ज्ञान के स्वरूप के कारण, बाह्य को अनुभव के माध्यम से बाह्य माना जाता है। इसलिए, बाह्य वस्तुओं के सत्य रूप को सत्य जानें।

7.38.4

बाह्यार्थवादविज्ञानवादयोरैक्यमेव नः । वेदनात्मैकरूपत्वात्सर्वदा सदसंस्थितेः ॥ ४ ॥

bāhyārthavādavijñānavādayorekaikyameva naḥ | vedanātmaikarūpatvātsarvadāsadasaṃsthiteḥ || 4 ||

The doctrines of external objects and knowledge are essentially one due to the singular nature of experience, which is always present.

बाह्य वस्तुओं और ज्ञान के सिद्धांत अनुभव के एकरूप स्वभाव के कारण मूल रूप से एक हैं, जो हमेशा मौजूद है।

7.38.5

अक्षुब्धखानिलालोकजलभूशान्तिशालिनी । तता शून्या महारम्भा ब्रह्मसत्तैव सर्वतः ॥ ५ ॥

akṣubdhakhānilālokajalabhūśāntiśālinī | tatā śūnyā mahārambhā brahmasattaiava sarvataḥ || 5 ||

The peaceful sky, air, light, water, and earth are all pervaded by the emptiness of the great endeavor, which is the essence of Brahman.

शांत आकाश, वायु, प्रकाश, जल और पृथ्वी महान प्रयास की शून्यता से व्याप्त हैं, जो ब्रह्म का सार है।

7.38.6

तस्मै सर्वं ततः सर्वं तत्सर्वं सर्वतश्च तत् तच्च सर्वमयं नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥ ६ ॥

tasmai sarvaṃ tataḥ sarvaṃ tatsarvaṃ sarvataśca tat tacc sarvamayaṃ nityaṃ tasmai sarvātmane namaḥ || 6 ||

To Him, all this; from Him, all this; all this is pervaded by Him; and He is the eternal essence of all. Salutations to Him, the Self of all.

उसके लिए, सब कुछ; उससे, सब कुछ; सब कुछ उससे व्याप्त है; और वह सबका नित्य सार है। उस सर्वात्मा को नमन।

7.38.7

चिन्मयत्वाद्यदा चेत्यमेति द्रष्टृचितैकताम् तदा दृश्याङ्गयैवैतच्चेत्यते नान्यथा चिता ॥ ७ ॥

cinmayatvādyadā cetyameti draṣṭṛcitekatām tadā dṛśyāṅgayaivaitaccetyate nānyathā citā || 7 ||

When the consciousness attains the state of pure consciousness, then it is perceived through the senses alone, not otherwise.

जब चेतना शुद्ध चेतना की अवस्था को प्राप्त होती है, तब यह केवल इंद्रियों द्वारा ही ग्रहण की जाती है, अन्यथा नहीं।

7.38.8

यदा चिन्मात्रमेवेयं द्रष्टृदर्शनदृश्यदृक् तदानुभवनं तत्र सर्वस्य फलितं स्थितम् ॥ ८ ॥

yadā cinmātrameveyaṃ draṣṭṛdarśanadṛśyadṛk tadānubhavanaṃ tatra sarvasya phalitaṃ sthitam || 8 ||

When this consciousness is purely consciousness itself, then the experience of everything is realized there.

जब यह चेतना शुद्ध चेतना ही होती है, तब सब कुछ का अनुभव वहाँ स्थित होता है।

7.38.9

द्रष्टृदृश्ये न यद्येकमभविष्यच्चिदात्मके तद्दृश्यास्वादमज्ञः स्यान्ना दृष्ट्वेक्षुमिवोपलः ॥ ९ ॥

draṣṭṛdṛśye na yadyekamabhaviṣyaccidātmake taddṛśyāsvādamajñaḥ syānnā dṛṣṭvekṣumivopalaḥ || 9 ||

If the seer and the seen were not one in the consciousness, then one would not experience the seen, just as one cannot see a crystal without light.

अगर द्रष्टा और दृश्य चेतना में एक नहीं होते, तो दृश्य का अनुभव नहीं होता, जैसे प्रकाश के बिना स्फटिक नहीं देखा जा सकता।

7.38.10

चिन्मयत्वाच्चितौ चेत्यं जलमप्स्विव मज्जति तेनानुभूतिर्भवति नान्यथा काष्ठयोरिव ॥ १० ॥

cinmayatvāccitau cetyaṃ jalamapsviva majjati tenānubhūtirbhavati nānyathā kāṣṭhayoriva || 10 ||

Due to the nature of pure consciousness, consciousness merges into consciousness like water into water. Thus, the experience arises, not otherwise, like two pieces of wood.

शुद्ध चेतना की प्रकृति के कारण, चेतना चेतना में मिल जाती है, जैसे पानी पानी में मिल जाता है। इस प्रकार, अनुभव उत्पन्न होता है, दो लकड़ियों की तरह नहीं।

7.38.11

सजातीयैकताभावाद्यद्वत्काष्ठ न चेतते । दारु तद्वदपि द्रष्टा दृश्यं नाज्ञास्यदाजडम् ॥ ११ ॥

sajātīyaikatābhāvādyadvatkāṣṭha na cetate| dāru tadvadapi draṣṭā dṛśyaṃ nājñāsyadājaḍam || 11 ||

Just as a piece of wood does not perceive another piece of wood due to the lack of homogeneity, similarly, the seer does not perceive the insentient seen.

जैसे एक लकड़ी दूसरी लकड़ी को अनुभव नहीं करती है क्योंकि वे एक ही प्रकार की नहीं हैं, उसी तरह द्रष्टा जड़ दृश्य को अनुभव नहीं करता है।

7.38.12

यादृक्सत्तानि काष्ठानि तादृग्रूपं त्वचेतनम् । जानन्ति नेतरत्तस्मादृश्यं चिद्दृश्यचेतनम् ॥ १२ ॥

yādṛksattāni kāṣṭhāni tādṛgrūpaṃ tvacetanam| jānanti netarattasmāddṛśyaṃ ciddṛśyacetanam || 12 ||

Just as pieces of wood, which are insentient, do not know each other, similarly, the insentient seen does not know the conscious seer.

जैसे लकड़ियां, जो जड़ हैं, एक दूसरे को नहीं जानती हैं, उसी तरह जड़ दृश्य चेतन द्रष्टा को नहीं जानता है।

7.38.13

महाचिदात्मनैवास्ति जलानिलधराश्मतम् । नैतेषु स्पन्दबुद्ध्यादि प्राणजीवाद्यभावतः ॥ १३ ॥

mahācidātmanaivāsti jalāniladharāśmatam| naiteṣu spandabuddhyādi prāṇajīvādyabhāvataḥ || 13 ||

Only in the great conscious self exist water, air, earth, and fire. In these elements, there is no movement, intellect, etc., due to the absence of life and soul.

केवल महान चेतन आत्मा में ही जल, वायु, पृथ्वी और अग्नि हैं। इन तत्वों में प्राण और जीव के अभाव के कारण कोई गति या बुद्धि नहीं है।

7.38.14

प्राणबुद्ध्यादयः सत्तां भावनावशतो गताः । भावना चिच्चमत्कारः स यथेच्छमुदेति च ॥ १४ ॥

prāṇabuddhyādayaḥ sattāṃ bhāvanāvaśato gatāḥ| bhāvanā ciccmatkāraḥ sa yathecchamudeti ca || 14 ||

Life, intellect, etc., have attained existence due to the power of imagination. Imagination is the wonder of consciousness, and it arises according to one's will.

प्राण, बुद्धि आदि कल्पना की शक्ति के कारण अस्तित्व प्राप्त करते हैं। कल्पना चेतना का चमत्कार है, और यह अपनी इच्छा के अनुसार उत्पन्न होती है।

7.38.15

जगत्तया शान्ततया ब्रह्मसत्तावतिष्ठते । पुंस्तया गत एवात्मा रेतोवटकबीजयोः ॥ १५ ॥

jagattayā śāntatayā brahmasattāvatiṣṭhate| puṃstayā gata evātmā retovaṭakabījayoḥ || 15 ||

The world exists in the peaceful state of Brahman. The self, being masculine, is present in the seed and the embryo.

जगत शांत ब्रह्म की अवस्था में विद्यमान है। पुरुष के रूप में आत्मा बीज और भ्रूण में विद्यमान है।

7.38.16

सर्वाग्राणुमये बीजे योऽस्मादग्रगतोऽणुकः । स स तत्तद्भवत्यग्रं बीजं च स्वात्मनि स्थितः ॥ १६ ॥

sarvāgrāṇumaye bīje yo'smādagragato'ṇukaḥ | sa sa tattadbhavatyagraṃ bījaṃ ca svātmani sthitaḥ || 16 ||

In every seed, which is composed of subtle particles, the subtle particle that precedes it becomes the next seed and remains within its own self.

हर बीज में, जो सूक्ष्म कणों से बना होता है, उससे पहले वाला सूक्ष्म कण अगला बीज बन जाता है और अपने आप में ही रहता है।

7.38.17

ब्रह्म सर्वपराण्वात्मा यो यस्मादर्थतोऽणुकः । स स तत्तद्भवेद्वस्तु वस्तुब्रह्मैव तिष्ठति ॥ १७ ॥

brahma sarvaparāṇvātmā yo yasmādarthato'ṇukaḥ | sa sa tattadbhavadvastu vastubrahmaiva tiṣṭhati || 17 ||

Brahman, the supreme self composed of all subtle particles, whatever subtle particle arises from it, that becomes the very substance, and the substance itself is Brahman.

ब्रह्म, जो सभी सूक्ष्म कणों से बना है, उससे जो भी सूक्ष्म कण उत्पन्न होता है, वह उसी पदार्थ बन जाता है, और पदार्थ स्वयं ब्रह्म ही है।

7.38.18

द्रव्यमेव यथा द्रव्यं तिर्यगूर्ध्वमधस्तथा । सर्वमेव तथा ब्रह्म येन तेन यथा तथा ॥ १८ ॥

dravyameva yathā dravyaṃ tiryagūrdhvamadhastathā | sarvameva tathā brahma yena tena yathā tathā || 18 ||

Just as a substance remains a substance whether it is horizontal, vertical, or downward, similarly, Brahman pervades everything in all directions.

जैसे एक पदार्थ क्षैतिज, ऊर्ध्वाधर या नीचे की ओर होने पर भी पदार्थ ही रहता है, उसी तरह ब्रह्म हर दिशा में सब कुछ में व्याप्त है।

7.38.19

हेमत्वमेव नान्यत्वं हेमरूपशते यथा । शान्तत्वमेव शान्तस्य सर्गाहंत्वगणे तथा ॥ १९ ॥

hematvameva nānyatvaṃ hemarūpaśate yathā | śāntatvameva śāntasya sargāhaṃtvagaṇe tathā || 19 ||

Just as the nature of gold remains unchanged in hundreds of gold forms, similarly, the peaceful nature of the peaceful one remains unchanged in the multitude of creation and dissolution.

जैसे सोने की प्रकृति सैकड़ों सोने के रूपों में अपरिवर्तित रहती है, उसी तरह शांत की शांत प्रकृति सृष्टि और विनाश की बहुलता में अपरिवर्तित रहती है।

7.38.20

पार्श्वस्थस्वप्नमेघौघा यथा तव न काश्चन । सर्गप्रलयसंरम्भास्तथा खात्मान एव मे ॥ २० ॥

pārśvasthasvapnameghaughā yathā tava na kāścana | sargapralayasaṃrambhāstathā khātmāna eva me || 20 ||

Just as the clouds seen in a dream by one's side are not real, similarly, the agitations of creation and dissolution are merely illusory to me.

जैसे सपने में देखे गए बादल वास्तव में नहीं होते, उसी तरह सृष्टि और विनाश के उत्पात मुझे केवल भ्रम लगते हैं।

7.38.21

पङ्कता कल्पिता व्योम्नो या पुत्रकपताकिनी । सा यथा शान्ततामात्रं खमेवेदं तथा जगत् ॥ २१ ॥

paṅkatā kalpitā vyomno yā putrakapatākinī | sā yathā śāntatāmātraṃ khamavedaṃ tathā jagat || 21 ||

Just as the imaginary flag of a son in the sky is merely calmness, so too is this world.

जैसे आकाश में पुत्र की कल्पित पताका केवल शान्ति है, वैसे ही यह जगत् भी है।

7.38.22

संकल्पभ्रम एवान्तः पुष्पीभूय जगत्स्थितम् । जलावनितलक्लिन्नबीजं कल्प इव द्रुमः ॥ २२ ॥

saṅkalpabhrama evāntaḥ puṣpībhūya jagatsthitam | jalāvanitalaklinnabījaṃ kalpa iva drumḥ || 22 ||

The world is established as a flowering of internal delusion, like a tree from a seed soaked in water and earth.

जगत एक आंतरिक भ्रम के रूप में फूलता है, जैसे पानी और मिट्टी में भीगे बीज से पेड़।

7.38.23

अनहंतात्मनो ज्ञस्य सत एकत्वमासतः । जरत्तृणलवायन्ते ननु नामाऽणिमादयः ॥ २३ ॥

anahaṃtātmano jñasya sat ekatvamāsataḥ | jarattṛṇalavāyanter nanu nāmā'ṇimādayaḥ || 23 ||

For the knower who is devoid of ego, there is unity with the truth. Indeed, qualities like subtlety are as insignificant as the tip of a blade of grass.

ज्ञाता जो अहंकार से रहित है, उसके लिए सत्य के साथ एकता है। वास्तव में, सूक्ष्मता जैसी गुण एक घास की नोक की तरह अनावश्यक हैं।

7.38.24

त्रैलोक्ये तन्न पश्यामि सदेवासुरमानुषम्। एकरोमांशविश्वस्य यल्लोभाय महात्मनः ॥ २४ ॥

trailokye tanna paśyāmi sadevāsuramānuṣam | ekaromāṃśaviśvasya yallobhāya mahātmanaḥ || 24 ||

In the three worlds, I do not see that which is divine, demonic, or human. The entire universe is a single hair of the great soul for the sake of desire.

तीनों लोकों में, मैं उसे नहीं देखता जो देवता, असुर या मनुष्य है। पूरा ब्रह्मांड एक महान आत्मा के एक बाल के लिए इच्छा के लिए है।

7.38.25

यथा तथा स्थितस्यापि यत्र तत्र गतस्य च। द्वैतसंकल्पसंदोहा न सन्त्यधिगतात्मनः ॥ २५ ॥

yathā tathā sthitasyāpi yatra tatra gatasya ca | dvaitasaṅkalpasandoḥā na santyadhigatātmanaḥ || 25 ||

Whether one remains still or goes anywhere, the delusions of duality do not exist for one who has realized the self.

चाहे कोई स्थिर रहे या कहीं भी जाए, द्वैत के भ्रम आत्मज्ञानी के लिए नहीं होते।

7.38.26

विश्वमेव नभो यस्य शून्यं सर्वं महात्मनः। कुतः कस्य कथं तस्य भवत्विच्छा निरात्मनः ॥ २६ ॥

viśvameva nabho yasya śūnyaṃ sarvaṃ mahātmanaḥ | kutaḥ kasya kathaṃ tasya bhavatvicchā nirātmanaḥ || 26 ||

The entire universe is like the sky to the great soul, everything is empty. How can there be any desire for the one who is without self?

महात्मा के लिए सारा विश्व आकाश के समान है, सब कुछ शून्य है। बिना आत्मा के उसकी किस प्रकार की इच्छा हो सकती है?

7.38.27

शान्ताशेषविशेषस्य निरेषणविशेषतः। सत्तामसत्तां सदृशौ क आकलयितुं क्षमः ॥ २७ ॥

śāntāśeṣaviśeṣasya nireṣaṇaviśeṣataḥ | sattāmasattāṃ sadṛśau ka ākalayituṃ kṣamaḥ || 27 ||

In the state of complete tranquility, devoid of all distinctions and desires, who is capable of discerning the similarity between existence and non-existence?

पूर्ण शांति की अवस्था में, जहाँ सभी भेद और इच्छाएँ समाप्त हो गई हैं, अस्तित्व और अनस्तित्व की समानता को कौन समझ सकता है?

7.38.28

मारैर्न किंचिन्म्रियते जीवैः किंचिन्न जीवति। शुद्धसंविन्मयस्यास्य समालोकस्य खस्य च ॥ २८ ॥

māraina kiṃcinmriyate jīvaiḥ kiṃcinnajīvati | śuddhasaṃvinmayasyāsya samālokasya khasya ca || 28 ||

Nothing dies by death, nor does anything live by life. This pure consciousness is like the sky, all-pervading.

मृत्यु से कुछ भी नहीं मरता, न ही जीवन से कुछ भी जीवित होता है। यह शुद्ध चेतना आकाश के समान सर्वव्यापी है।

7.38.29

मिथ्या लोकस्य कचतो भ्रान्त्या मरणजन्मनी। असत्यपि भ्रान्तिभाजि मृगतृष्णानदीतटे ॥ २९ ॥

mithyā lokasya kacato bhrāntyā maraṇajanmanī | asatyapi bhrāntibhāji mṛgatṛṣṇānadītaṭe || 29 ||

The world is falsely perceived due to delusion, with birth and death. Even in the unreal, delusion persists, like a mirage seen as a riverbank.

दुनिया भ्रम के कारण गलत तरीके से देखी जाती है, जन्म और मृत्यु के साथ। असत्य में भी, भ्रम बना रहता है, जैसे मृगतृष्णा को नदी के किनारे के रूप में देखा जाता है।

7.38.30

सम्यक्परीक्षितं यावन्न भ्रान्तिर्न परीक्षकाः । न नाम जन्ममरणे केवलं शान्तमव्ययम् ॥ ३० ॥

samyakparīkṣitaṃ yāvanna bhrāntirna parīkṣakāḥ | na nāma janmamaraṇe kevalaṃ śāntamavyayam || 30 ||

Until it is thoroughly examined, there is no delusion, no examiners, no names, no birth, no death, only peace and imperishability.

जब तक इसे पूरी तरह से जांचा नहीं जाता, तब तक न भ्रम है, न जांचकर्ता, न नाम, न जन्म, न मृत्यु, केवल शांति और अविनाशी है।

7.38.31

दृश्याद्यो विरतिं यात आत्मारामः शमं गतः । स सन्नेवासदाभासः परितीर्णभवार्णवः ॥ ३१ ॥

dṛśyādyo viratiṃ yāta ātmārāmaḥ śamaṃ gataḥ| sa sann evāsadābhāsaḥ paritīrṇabhavārṇavaḥ || 31 ||

One who has renounced the worldly objects and is content within the self, that person is truly free from the ocean of worldly existence.

जो दृश्य वस्तुओं से विरक्त हो गया है और आत्माराम हो गया है, वह वास्तव में संसार सागर से पार हो गया है।

7.38.32

दीपनिर्वाणनिर्वाणमस्तंगतमनोगतिम् । आत्मन्येव शमं यातं सन्तमेवामलं विदुः ॥ ३२ ॥

dīpanirvāṇanirvāṇam astamgatamanogatim| ātmanyeva śamaṃ yātaṃ santamevāmalaṃ viduḥ || 32 ||

One who has attained the ultimate liberation, whose mind has reached the state of complete rest, and who finds peace within the self is considered pure and saintly.

जो परम मुक्ति प्राप्त कर चुका है, जिसका मन पूर्ण विश्राम की अवस्था में पहुंच गया है, और जो आत्मा में शांति पाता है, उसे पवित्र और संत माना जाता है।

7.38.33

आबुद्ध्यादि जगद्दृश्यं यस्मै न स्वदते स्वतः । आकाशस्येव शान्तस्य तमाहुर्मुक्तमुत्तमाः ॥ ३३ ॥

ābuddhyādi jagaddṛśyaṃ yasmai na svadate svataḥ| ākāśasyeva śāntasya tamāhurmektamuttamāḥ || 33 ||

One who does not enjoy the worldly objects, which are perceived through the intellect, is considered liberated, just like the peaceful sky.

जो बुद्धि द्वारा देखे गए संसारिक वस्तुओं का आनंद नहीं लेता, वह शांत आकाश की तरह मुक्त माना जाता है।

7.38.34

अहमस्त्यविचारेण विचारेणाहमस्ति नो । अभावादहमर्थस्य क्व जगत्क्व च संसृतिः ॥ ३४ ॥

ahamastyavicāreṇa vicāreṇāhamasti no| abhāvādahamarathasya kva jagatkva ca saṃsṛtiḥ || 34 ||

Without self-inquiry, the sense of 'I' exists; with self-inquiry, the sense of 'I' does not exist. Due to the non-existence of the sense of 'I', where is the world and where is the cycle of birth and death?

बिना आत्म-विचार के, 'मैं' का भाव मौजूद है; आत्म-विचार के साथ, 'मैं' का भाव नहीं है। 'मैं' के अभाव के कारण, संसार कहाँ है और जन्म-मृत्यु का चक्र कहाँ है?

7.38.35

संवित्संवेदनादेव बुद्ध्याद्याकारवत्स्थितम् । रूपालोकमनोरूपं जगद्वेत्ति चिदम्बरम् ॥ ३५ ॥

saṃvitsaṃvedanādeva buddhyādyākāravatsthitam| rūpālokamanorūpaṃ jagadvetti cidambaram || 35 ||

The world, which is perceived through the senses and the mind, is known by the pure consciousness that is the essence of awareness.

जो इंद्रियों और मन द्वारा देखा जाता है, वह संसार चेतना की शुद्ध चेतना द्वारा जाना जाता है।

7.38.36

सर्वार्थरिक्तमनसः सतः सर्वात्मनस्तव सर्वथा सर्वदा सर्वं सर्वमाचरणं शिवम् ॥ ३६ ॥

sarvārthariktamanasaḥ satḥ sarvātmanastava sarvathā sarvadā sarvaṃ sarvamācaraṇaṃ śivam || 36 ||

For the one who is devoid of all desires, who is the essence of all beings, all actions, at all times, in all ways, are auspicious.

जिसका मन सभी कामनाओं से रहित है, जो सभी आत्माओं का सार है, उसके लिए हर क्रिया, हर समय, हर तरह से शुभ है।

7.38.37

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् यत्तपस्यसि हंस्येषि तत्सर्वं शिवमव्ययम् ॥ ३७ ॥

yatkaroṣi yadaśnāsi yajjuhoṣi dadāsi yat yattapasyasi haṃsyeṣi tatsarvaṃ śivamavyayam || 37 ||

Whatever you do, whatever you eat, whatever you offer, whatever you give, whatever you practice, whatever you enjoy, all that is auspicious and imperishable.

जो कुछ भी आप करते हैं, जो कुछ भी आप खाते हैं, जो कुछ भी आप अर्पित करते हैं, जो कुछ भी आप देते हैं, जो कुछ भी आप तपस्या करते हैं, जो कुछ भी आप आनंद लेते हैं, वह सब शुभ और अविनाशी है।

7.38.38

यदहं यत्त्वमाशा यद्यत्क्रियाकालखादयः यल्लोकालोकगिरयस्तच्चिद्व्योम शिवं ततम् ॥ ३८ ॥

yadahaṃ yattvamāśā yadyatkriyākālakhādayaḥ yallokālokagirayastacchidvyoma śivaṃ tatam || 38 ||

Whatever I am, whatever you are, whatever are the actions and times, whatever are the worlds, the sky, and the mountains, all that is the consciousness of the auspicious and pervasive Shiva.

मैं जो भी हूँ, तुम जो भी हो, क्रियाएँ और समय जो भी हैं, लोक, आकाश और पर्वत जो भी हैं, सब कुछ शिव की सर्वव्यापी चेतना है।

7.38.39

यद्रूपालोकमननं यत्कालत्रितयं जगत् यज्जरामरणार्त्यादि तन्महाचिन्नभः शिवम् ॥ ३९ ॥

yadrūpālokamananaṃ yatkālatritayaṃ jagat yajjarāmaraṇārtyādi tanmahācinnabhaḥ śivam || 39 ||

Whatever is seen, thought, or experienced, whatever is the triad of time, whatever is the world, whatever is old age, death, and suffering, all that is the great consciousness of the auspicious Shiva.

जो कुछ भी देखा, सोचा या अनुभव किया जाता है, जो कुछ भी समय का त्रिकाल है, जो कुछ भी संसार है, जो कुछ भी बुढ़ापा, मृत्यु और दुःख है, सब कुछ शिव की महान चेतना है।

7.38.40

निश्चिकित्सो निराभासो निरिच्छो निर्मना मुनिः भूत्वा निरात्मा निर्वाणस्तिष्ठ संतिष्ठसे यथा ॥ ४० ॥

niścikitsonirābhāsoniricchonirmanāmuniḥ bhūtvā nirātmā nirvāṇastiṣṭha saṃtiṣṭhasyathā || 40 ||

Being free from doubts, free from illusions, free from desires, free from the mind, and being a sage, become devoid of the self and attain liberation, remain steadfast as you are.

संदेहों से मुक्त, भ्रमों से मुक्त, इच्छाओं से मुक्त, मन से मुक्त और मुनि होकर, आत्मा से रहित होकर मुक्ति प्राप्त करो, जैसे तुम हो वैसे ही स्थिर रहो।

7.38.41

गतेच्छमननं शान्तमनन्तस्थमभावनम् व्यवहारोऽस्तु ते मा वा स्पन्दास्पन्दैर्यथानिलः ॥ ४१ ॥

gatecchamanaṃ śāntamanantasthamabhāvanam vyavahāro'stu te mā vā spandāspandairyathānilaḥ || 41 ||

May your conduct be like the wind, moving or still, devoid of desires and thoughts, peaceful and infinite.

आपका व्यवहार हवा की तरह हो, चलने वाला या स्थिर, इच्छाओं और विचारों से रहित, शांत और अनंत।

7.38.42

निर्वासना निष्कलना शान्ता पुरुषतास्तु ते शास्त्रेण यन्त्रवाहेन वाह्या दारुमयी यथा ॥ ४२ ॥

nirvāsanā niṣkalanā śāntā puruṣatāstu te śāstreṇa yantravāhena vāhyā dārumayī yathā || 42 ||

May you be free from desires and thoughts, peaceful, and pure in your being, guided by scriptures and controlled like a wooden vehicle.

आप इच्छाओं और विचारों से मुक्त हों, शांत और शुद्ध हों, शास्त्रों द्वारा मार्गदर्शित और लकड़ी के वाहन की तरह नियंत्रित हों।

7.38.43

भूतालोकस्तु माऽऽस्नेहो मा वाऽस्नेहश्च बाह्यगः अनिर्देशधरालोकश्चित्रदीपवदास्यताम् ॥ ४३ ॥

bhūtālokastu mā'āsneho mā vā'snehaśca bāhyagaḥ anirdeśadharālokaścitradīpavadāsyatām || 43 ||

May you not be attached to the world of beings, nor to external objects. May your world be like a lamp, illuminating without any specific direction.

आप प्राणियों के संसार से आसक्त न हों, न ही बाहरी वस्तुओं से। आपका संसार दीपक की तरह हो, जो किसी specific दिशा में प्रकाश करता है।

7.38.44

निर्वासनस्य विरसस्य निरेषणस्य शास्त्रादृते क इव तत्त्वविनोदहेतुः शास्त्रार्थसज्जनमतोऽप्यमलस्य तस्य संवेदनेष्वनभिसंधिमतः स्वरूपम् ॥ ४४ ॥

nirvāsanasya virasasya nirēṣaṇasya śāstrādṛte ka iva tattvavinodahētuḥ śāstrārthasajjanamato'pyamalasya tasya saṃvēdanēṣvanabhisandhimataḥ svarūpam || 44 ||

What could be the cause of joy in the essence of the pure, free from desires and thoughts, and not seeking anything, except for the scriptures? Even the pure one, absorbed in the meaning of the scriptures, has a nature free from intentions in perceptions.

इच्छाओं और विचारों से मुक्त और किसी भी चीज की खोज न करने वाले शुद्ध की सत्ता में आनंद का कारण क्या हो सकता है, शास्त्रों के अलावा? शास्त्रों के अर्थ में डूबे हुए शुद्ध का स्वभाव भी अनुभूतियों में इरादों से मुक्त है।

Chapter 39

7.39.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संजाताकृत्रिमक्षीणसंसृतिप्रत्ययः पुमान् । असंकल्पो न संकल्पं वेत्ति तेनासदेव सः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃjātākṛtrimakṣīṇasaṃsṛtipratyayaḥ pumān | asaṃkalpo na saṃkalpaṃ vetti tenāsadeva saḥ || 1 ||

Vasishtha said: A person who has realized the artificial nature of the world and its activities, and who does not have any desires, is considered non-existent.

वसिष्ठ ने कहा: एक व्यक्ति जो संसार और उसके कार्यों की कृत्रिम प्रकृति को समझ गया है, और जिसकी कोई इच्छा नहीं है, वह अस्तित्वहीन माना जाता है।

7.39.2

श्वासान्म्लानिरिवादर्शे कुतोऽप्यहमिति स्थिता । विदि साऽकारणं दृष्टा नश्यन्त्याशु न लभ्यते ॥ २ ॥

śvāsānmlānirivādarśe kuto'pyahamiti sthitā | vidyasā'kāraṇaṃ dṛṣṭā naśyantyāśu na labhyate || 2 ||

Just as the reflection in a mirror disappears when the mirror is tarnished, so too does the sense of 'I' disappear when the mind is purified.

जैसे दर्पण में प्रतिबिंब धूमिल होने पर गायब हो जाता है, वैसे ही मन की शुद्धि होने पर 'मैं' की भावना भी गायब हो जाती है।

7.39.3

यस्य क्षीणावरणता शान्तसर्वेहतोदिता । परमामृतपूर्णात्मा सत्तयैव स राजते ॥ ३ ॥

yasya kṣīṇāvaraṇatā śāntasarvehatoditā | paramāmṛtapūrṇātmā sattayaiava sa rājate || 3 ||

One whose veils have been removed and who is peaceful and free from all disturbances, that person, filled with the supreme nectar, shines with the essence of existence.

जिसके आवरण दूर हो गए हैं और जो शांत और सभी विघ्नों से मुक्त है, वह व्यक्ति, जो परम अमृत से भरा है, अस्तित्व की सारता से चमकता है।

7.39.4

सर्वसंदेहदुर्ध्वान्तमिहिकामातरिश्वना । भाति भास्वद्धिया देशस्तेन पूर्णेन्दुनेव खम् ॥ ४ ॥

sarvasandehadurdhvāntami hikāmātariśvanā | bhāti bhāsvaddhiyā deśastena pūrṇenduneve kham || 4 ||

The place shines with the radiance of the full moon, dispelling all doubts and darkness with its illuminating intellect.

वह स्थान पूर्णिमा की चांदनी के समान चमकता है, जो अपने प्रकाशमान बुद्धि से सभी संदेह और अंधकार को दूर करता है।

7.39.5

विसंसृतिर्विसंदेहो लब्धज्योतिर्निरावृतिः । शरदाकाशविशदो ज्ञेयो विज्ञायते बुधः ॥ ५ ॥

visaṃsṛtirvisaṃdeho labdhajyotirnirāvṛtiḥ | śaradākāśaviśado jñeyo vijñāyate budhaḥ || 5 ||

One who is free from doubts, has attained enlightenment, and is without obstacles, is known as wise and is as clear as the autumn sky.

जो संदेहों से मुक्त है, ज्ञान प्राप्त कर चुका है, और बाधाओं से रहित है, वह बुद्धिमान कहलाता है और शरद के आकाश के समान स्पष्ट है।

7.39.6

निःसंकल्पो निराधारः शान्तः स्पर्शात्पवित्रताम्। अन्तःशीतल आधत्ते ब्रह्मलोकादिवानिलः ॥ ६ ॥

niḥsaṃkalpo nirādhāraḥ śāntaḥ sparśātpavitratām | antaḥśītala ādhatte brahmalokādivānilaḥ || 6 ||

Without desires, without support, peaceful, purified by touch, internally cool, it bears like the wind from Brahmaloka.

निःसंकल्प, निराधार, शान्त, स्पर्श से पवित्र, अन्तःशीतल, ब्रह्मलोक की तरह वायु धारण करता है।

7.39.7

असद्रूपोपलम्भानामियं वस्तुस्वभावता। यत्स्वर्गवेदनं स्वप्नवन्ध्यापुत्रोपलम्भवत् ॥ ७ ॥

asadrūpopalambhānāmiyaṃ vastusvabhāvatā | yatsvargavedanaṃ svapnavandhyāputropalambhavat || 7 ||

The nature of things is such that the perception of non-existent forms is like the experience of heaven, a dream, or the illusion of a barren woman's child.

वस्तुओं का स्वभाव ऐसा है कि असत् रूपों का उपलब्धि स्वर्ग के अनुभव, स्वप्न, या वंध्या के पुत्र की भ्रांति की तरह होती है।

7.39.8

अविद्यमानमेवेदं जगद्यदनुभूयते। असद्रूपोपलम्भस्य सैषा वस्तुस्वभावता ॥ ८ ॥

avidyamānamevedaṃ jagadyadanubhūyate | asadrūpopalambhasya saiṣā vastusvabhāvatā || 8 ||

This world, which is experienced, is indeed non-existent. The nature of things is such that the perception of non-existent forms is illusory.

यह जगत्, जो अनुभव किया जाता है, वास्तव में अविद्यमान है। वस्तुओं का स्वभाव ऐसा है कि असत् रूपों की उपलब्धि भ्रामक है।

7.39.9

असत्येष्वेव संसारेष्वास्तामर्थः कुतो भवेत्। सर्गापवर्गयोः शब्दावेव वन्ध्यासुतोपमौ ॥ ९ ॥

asatyeṣveva saṃsāreṣvāstāmarthaḥ kuto bhavet | sargāpavargayoḥ śabdāveva vandhyāsutopamau || 9 ||

In the unreal worlds, where is the reality? The words creation and liberation are like the illusion of a barren woman's child.

असत्य संसारों में, वास्तविकता कहाँ है? सृष्टि और मुक्ति शब्द वंध्या के पुत्र की भ्रांति के समान हैं।

7.39.10

जगद्ब्रह्मतया सत्यमनिर्मितमभावितम्। अनिष्ठितं चान्यथा तु नाहं नावगतं च तत् ॥ १० ॥

jagadbrahmatayā satyamanirmitamabhāvitam | aniṣṭhitaṃ cānyathā tu nāhaṃ nāvagataṃ ca tat || 10 ||

The world is true as Brahman, not created, not imagined, not established otherwise, not I, not understood.

जगत् ब्रह्म के रूप में सत्य है, न बनाया गया है, न कल्पित है, न अन्यथा स्थापित है, न मैं हूँ, न समझा गया है।

7.39.11

आत्मस्वभावविश्रान्तेरियं वस्तुस्वभावता यदहंतादिसर्गादिदुःखाद्यनुपलम्भता ॥ ११ ॥

ātmasvabhāvaviśrāntēriyaṃ vastusvabhāvatā yadahaṃtādisargādiduḥkhādyanupalambhatā || 11 ||

The nature of the self is such that it is free from the perception of ego, creation, and suffering.

आत्मा का स्वभाव ऐसा है कि वह अहंकार, सृष्टि, और दुःख के अनुभव से मुक्त है।

7.39.12

क्षणाद्योजनलक्षान्तं प्राप्ते देशान्तरे चितः चेतनेऽयस्य तद्रूपं मार्गमध्ये निरञ्जनम्॥ १२ ॥

kṣaṇādyojanalakṣāntaṃ prāptē dēśāntarē citāḥ cētanē'yasya tadrūpaṃ mārgamadhyē nirañjanam || 12 ||

When the mind reaches another place, from a moment to a distance of a hundred thousand miles, the form of consciousness in that place is pure in the middle of the path.

जब मन दूसरे स्थान पर पहुँचता है, क्षण से लेकर लाख कोस दूर तक, उस स्थान में चेतना का रूप मार्ग के मध्य में पवित्र होता है।

7.39.13

अस्पन्दवातसदृशं खकोशाभासचिन्मयम् अचेत्यं शान्तमुदितं लताविकसनोपमम्॥ १३ ॥

aspaṇḍavātasadṛśaṃ khakośābhāsacinmayam acētyaṃ śāntamuditaṃ latāvikasanōpamam || 13 ||

It is like the still wind, resembling the reflection of the sky in consciousness, unmoving, peaceful, and radiant like a blooming vine.

यह शान्त वायु के समान है, जो चेतना में आकाश के प्रतिबिंब के समान है, अचल, शांत, और खिलती हुई लता के समान प्रकाशमान है।

7.39.14

सर्वस्य जन्तुजातस्य तत्स्वभावं विदुर्बुधाः सर्गोपलम्भो गलति तत्रस्थस्य विवेकिनः॥ १४ ॥

sarvasya jantujātasya tatsvabhāvaṃ vidurbudhāḥ sargōpalambhō galati tatrastasya vivēkinaḥ || 14 ||

The wise know the nature of all living beings. The perception of creation dissolves for the discerning one who is established in that nature.

बुद्धिमान लोग सभी जीवों के स्वभाव को जानते हैं। जो उस स्वभाव में स्थित है, उस विवेकी के लिए सृष्टि का अनुभव विलीन हो जाता है।

7.39.15

सुषुप्ते स्वप्नधीर्नास्ति स्वप्ने नास्ति सुषुप्तधीः सर्गनिर्वाणयोर्भ्रान्ती सुषुप्तस्वप्नयोरिव॥ १५॥

suṣuptē svapnadhīr nāsti svapnē nāsti suṣuptadhīḥ sarganirvāṇayōr bhrāntī suṣuptasvapnayōriva || 15 ||

In deep sleep, there is no dream consciousness, and in dreams, there is no deep sleep consciousness. The delusion of creation and liberation is like the delusion of deep sleep and dreams.

गहरी नींद में स्वप्न की चेतना नहीं होती, और स्वप्न में गहरी नींद की चेतना नहीं होती। सृष्टि और मुक्ति की भ्रान्ति गहरी नींद और स्वप्न की भ्रान्ति के समान है।

7.39.16

भ्रान्तिवस्तुस्वभावोऽसौ न स्वप्नो न सुषुप्तता। न सर्गो न च निर्वाणं सत्यं शान्तमशेषतः॥ १६॥

bhrāntivastusvabhāvo'sau na svapno na suṣuptatā | na sargo na ca nirvāṇaṃ satyaṃ śāntamaśeṣataḥ || 16 ||

That which is the nature of illusion is neither a dream nor deep sleep, neither creation nor liberation; it is the eternal, peaceful truth.

जो भ्रान्ति का स्वभाव है, वह न स्वप्न है, न सुषुप्ति, न सृष्टि, न निर्वाण; वह सत्य है, शान्त, अशेष।

7.39.17

भ्रान्तिस्त्वसन्मात्रमयी प्रेक्षिता चेन्न लभ्यते। शुक्तिरूप्यमिवासत्यं किल संप्राप्यते कथम्॥ १७॥

bhrāntistvasanmātramayī prekṣitā cenna labhyate | śuktirūpyamivāsatyam kila saṃprāpyate katham || 17 ||

Illusion, which is merely unreal, is not perceived if observed; how can the unreal, like a shell-silver, be attained?

भ्रान्ति, जो केवल असत्य है, देखी जाए तो प्राप्त नहीं होती; शुक्ति-रजत की तरह असत्य कैसे प्राप्त हो सकता है?

7.39.18

यन्न लब्धं च तन्नास्ति तेन भ्रान्तेरसंभवः । स्वभावादुपलम्भोन्यो नास्ति कस्य न कस्यचित् ॥ १८ ॥

yanna labdhaṃ ca tannāsti tena bhrānterasaṃbhavaḥ | svabhāvādupalambhonyo nāsti kasya na kasyacit || 18 ||

That which is not attained does not exist; hence, there is no occurrence of illusion. There is no perception other than one's own nature for anyone.

जो प्राप्त नहीं होता, वह अस्तित्व में नहीं है; इसलिए, भ्रान्ति का होना नहीं है। किसी के लिए भी अपने स्वभाव के अलावा कोई अनुभूति नहीं है।

7.39.19

स्वभाव एव सर्वस्मै स्वदते किल सर्वदा । अनानैव हि नानेव किं वादैः संविभाव्यताम् ॥ १९ ॥

svabhāva eva sarvasmai svadate kila sarvadā | anānaiva hi nāneva kiṃ vādaiḥ saṃvibhāvyatām || 19 ||

One's own nature alone is always pleasing to all. Why argue about differences when there are none?

अपना स्वभाव ही हमेशा सभी को प्रिय लगता है। जब कोई अन्तर नहीं है, तो विवाद करने की क्या आवश्यकता है?

7.39.20

अस्वभावे महद्दुःखं स्वभावे केवलं शमः । इति बुद्ध्या विचार्यान्तर्यदिष्टं तद्विधीयताम् ॥ २० ॥

asvabhāve mahaddhuḥkhaṃ svabhāve kevalaṃ śamaḥ | iti buddhyā vicāryāntaryadiṣṭaṃ tadvidhīyatām || 20 ||

In the absence of one's own nature, there is great sorrow; in one's own nature, there is only peace. Therefore, with understanding, reflect within and do what is indicated.

अपने स्वभाव के अभाव में महान दुःख है; अपने स्वभाव में केवल शान्ति है। इसलिए, बुद्धि से अन्तर्मन में विचार करें और जो संकेत मिले, उसे करें।

7.39.21

सूक्ष्मे बीजेऽस्त्यगः स्थूलो दृष्टमित्युपपद्यते । शिवे मूर्ते जगन्मूर्तमस्तीत्युत्तमसंकथा ॥ २१ ॥

sūkṣme bīje'styagaḥ sthūlo dṛṣṭamityupapadyate | śive mūrte jagannmūrtamastītyuttamasaṅkathā || 21 ||

In the subtle seed, the gross exists, which is perceived as visible. In the embodied Shiva, the embodied world exists, this is the supreme statement.

सूक्ष्म बीज में स्थूल है, जो दृश्य के रूप में दिखाई देता है | शिव के मूर्त रूप में सारा जगत मूर्त है, यह उत्तम कथन है |

7.39.22

रूपालोकमनस्कारबुद्धयहन्तादयः परे । स्वरूपभूताः सलिले द्रवत्वमिव खात्मकाः ॥ २२ ॥

rūpālokamanaskārabuddhayahantādayaḥ pare | svarūpabhūtāḥ salile dravatvamiva khātmakāḥ || 22 ||

Forms, perceptions, mental impressions, intellect, and the sense of 'I' are beyond. They are of the nature of the self, like the fluidity in water.

रूप, अलोक, मनस्कार, बुद्धि, और 'मैं' की भावना परे हैं | वे आत्मा के स्वरूप के हैं, जैसे पानी में द्रवत्व |

7.39.23

मूर्तो यथा स्वसदृशैः करोत्यवयवैः क्रियाः । आत्मभूतैस्तथा भूतैश्चिदाकाशमकर्तृ सत् ॥ २३ ॥

mūrto yathā svasadṛśaiḥ karotyavayavaiḥ kriyāḥ | ātmabhūtaistathā bhūtaiścidākāśamakartṛ sat || 23 ||

Just as the embodied one performs actions with similar parts, so does the self, which is the essence of all beings, exist in the space of consciousness without being the doer.

जैसे मूर्त अपने समान अवयवों से क्रियाएँ करता है, वैसे ही आत्मा, जो सभी भूतों का स्वरूप है, कर्ता न होते हुए चेतना के आकाश में विद्यमान है |

7.39.24

आत्मस्थादहमित्यादिरस्मदादेरसंसृतेः । शब्दोऽर्थभावमुक्तो यः पटहादिषु जायते ॥ २४ ॥

ātmasthādahamityādirasmadāderasaṃsṛteḥ | śabdo'rthabhāvamukto yaḥ paṭhādiṣu jāyate || 24 ||

The sound 'I' and other such words arise from the self and indicate meaning, just as the sound of a drum and other instruments arises.

आत्मा से 'मैं' और अन्य ऐसे शब्द उत्पन्न होते हैं और अर्थ का बोध कराते हैं, जैसे ड्रम और अन्य वाद्यों की ध्वनि उत्पन्न होती है |

7.39.25

यद्भातं प्रेक्षया नास्ति तन्नास्त्येव निरन्तरम् । जगद्रूपमरूपात्म ब्रह्म ब्रह्मणि संस्थितम् ॥ २५ ॥

yadbhātaṃ prekṣayā nāsti tannāstyeva nirantaram | jagadrūpamarūpātma brahma brahmaṇi saṃsthitam || 25 ||

That which is perceived to be non-existent is indeed non-existent continuously. The formless Brahman, which is the form of the world, is established in Brahman.

जो दृष्टि से अस्तित्वहीन दिखाई देता है, वह वास्तव में निरंतर अस्तित्वहीन है | रूपहीन ब्रह्म, जो जगत का रूप है, ब्रह्म में स्थित है |

7.39.26

येषामस्ति जगत्स्वप्नस्ते स्वप्नपुरुषा मिथः । न सन्ति ह्यात्मनि मिथो नास्मास्वम्वरपुष्पवत् ॥ २६ ॥

yeṣāmasti jagatsvapnaste svapnapuruṣā mithaḥ | na santi hyātmani mitho nāsmāsvamvarapuṣpavat || 26 ||

For those who see the world as a dream, they are dream-beings to each other. They do not exist in the Self, just as there are no flowers in the sky.

जिनके लिए जगत स्वप्न है, वे एक-दूसरे के लिए स्वप्न-पुरुष हैं। वे आत्मा में नहीं हैं, जैसे आकाश में फूल नहीं होते।

7.39.27

मयि ब्रह्मैकरूपं ते शान्तमाकाशकोशवत् । वायोः स्पन्दैरिवाभिन्नैर्व्यवहारैश्च तन्मयि ॥ २७ ॥

mayi brahmaikarūpaṃ te śāntamākāśakośavat | vāyoḥ spandairivābhinnairvyavahāraiśca tanmayi || 27 ||

In me, they are of the form of Brahman, peaceful like the space within a pot, distinct like the vibrations of air, and engaged in activities.

मुझमें, वे ब्रह्म के रूप में हैं, घड़े के अंदर की आकाश की तरह शांत, हवा की कंपनों की तरह अलग, और गतिविधियों में लगे हुए।

7.39.28

अहं तु सन्मयस्तेषां स्वप्नः स्वप्नवतामिव । ते तु नूनमसन्तो मे सुषुप्तस्वप्नका इव ॥ २८ ॥

ahaṃ tu sanmayasteṣāṃ svapnaḥ svapnavatāmiva | te tu nūnamasanto me suṣuptasvapnakā iva || 28 ||

I am the reality of their dreams, like a dreamer's dream. They are indeed non-existent to me, like dreams in deep sleep.

मैं उनके स्वप्न की वास्तविकता हूँ, जैसे स्वप्नद्रष्टा का स्वप्न। वे वास्तव में मेरे लिए अस्तित्वहीन हैं, जैसे गहरी नींद में स्वप्न।

7.39.29

तैस्तु यो व्यवहारो मे तद्ब्रह्म ब्रह्मणि स्थितम् । ते यत्पश्यन्ति पश्यन्तु तत्तैरलमलं मम ॥ २९ ॥

taistu yo vyavahāro me tadbrahma brahmaṇi sthitam | te yatpaśyanti paśyantu tattairalamalaṃ mama || 29 ||

Whatever activities they engage in, that is Brahman established in Brahman. Let them see whatever they see, that is enough for them, not for me.

जो भी गतिविधियाँ वे करते हैं, वह ब्रह्म है जो ब्रह्म में स्थित है। वे जो भी देखते हैं, वही उनके लिए पर्याप्त है, मेरे लिए नहीं।

7.39.30

अहमात्मनि नैवास्मि ब्रह्मसत्तेयमातता । त्वदर्थं समुदेतीव तथारूपैव वागियम् ॥ ३० ॥

ahamātmani naivāsmi brahmasatteyamātatā | tvadarthaṃ samudetīva tathārūpeva vāgiyam || 30 ||

I am not in the Self, this is the essence of Brahman's existence. It seems to arise for your sake, and thus it appears in this form.

मैं आत्मा में नहीं हूँ, यह ब्रह्म के अस्तित्व का सार है। यह आपके लिए उभरता है, और इस प्रकार यह इस रूप में दिखाई देता है।

7.39.31

अविरुद्धविरुद्धस्य शुद्धसंविन्मयात्मनः । न भोगेच्छा न मोक्षेच्छा हृदि स्फुरति तद्विदः ॥ ३१ ॥

aviruddhaviruddhasya śuddhasaṃvinmayātmanaḥ | na bhogecchā na mokṣecchā hṛdi sphurati tadvidaḥ || 31 ||

For the one who is free from contradictions, whose essence is pure consciousness, there is no desire for enjoyment or liberation in the heart of the knower.

जिसके अंतःकरण में विरोध नहीं है, जिसका स्वरूप शुद्ध चेतना है, उस ज्ञानी के हृदय में भोग की इच्छा नहीं होती और न ही मोक्ष की इच्छा होती है।

7.39.32

स्वभावमात्रायत्तेऽस्मिन्बन्धमोक्षक्रमे नृणाम् । कदर्थनेत्यहो मोहाद्गोष्पदेऽप्युदधिभ्रमः ॥ ३२ ॥

svabhāvamātrāyatte'sminbandhamokṣakrame nṛṇām | kadarthenetyaho mohādgoṣpade'pyudadhibhramaḥ || 32 ||

In this process of bondage and liberation, which is dependent solely on one's nature, alas, due to delusion, people see an ocean even in a cow's hoof print.

इस बंधन और मुक्ति के क्रम में, जो केवल अपने स्वभाव पर निर्भर करता है, अफसोस, भ्रम के कारण, लोग गाय के खुर के निशान में भी समुद्र देखते हैं।

7.39.33

स्वभावसाधने मोक्षेऽभावोपशमरूपिणि । न धनान्युपकुर्वन्ति न मित्राणि न च क्रियाः ॥ ३३ ॥

svabhāvasādhane mokṣe'bhāvopaśamarūpiṇi | na dhanānyupakurvanti na mitrāṇi na ca kriyāḥ || 33 ||

In the liberation that is achieved through one's nature, which is in the form of the cessation of existence, neither wealth, nor friends, nor actions are of help.

जो मुक्ति अपने स्वभाव द्वारा प्राप्त होती है, जो अस्तित्व के अंत के रूप में होती है, उसमें न तो धन, न मित्र, न क्रियाएँ काम आती हैं।

7.39.34

तैलबिन्दुर्भवत्युच्चैश्चक्रमप्पतितो यथा । तथाशु चेत्यसंकल्पे स्थिता भवति चिज्जगत् ॥ ३४ ॥

tailabindurbhavatyuccaiścakramappatito yathā | tathāśu cetyaasaṅkalpe sthitā bhavati cijjagat || 34 ||

Just as a drop of oil spreads quickly when it falls on a spinning wheel, so too the universe of consciousness becomes established instantly in the absence of thoughts.

जैसे एक तेल की बूँद तेजी से फैल जाती है जब वह घूमते हुए चक्र पर गिरती है, वैसे ही विचारों की अनुपस्थिति में चेतना का ब्रह्मांड तुरंत स्थापित हो जाता है।

7.39.35

जाग्रति स्वप्नवृत्तान्तस्थितिर्यादृग्रसा स्मृतौ । तादृग्रसाहंत्वजगज्जालसंस्था विवेकिनः ॥ ३५ ॥

jāgrati svapnavṛttāntasthitiryādṛgrasā smṛtau | tādṛgrasāhaṃtvajagajjālasaṃsthā vivekinaḥ || 35 ||

Just as the events in a dream are remembered upon waking, so too the wise perceive the world as a mere illusion of the ego.

जैसे सपने में घटनाएँ जागने पर याद आती हैं, वैसे ही विवेकी लोग संसार को अहंकार का एक भ्रम मानते हैं।

7.39.36

तेनैवाभ्यासयोगेन याति तत्तनुतां तथा । यथा नाहं न संसारः शान्तमेवावशिष्यते ॥ ३६ ॥

tenaivābhyāsayogena yāti tattanutāṃ tathā | yathā nāhaṃ na saṃsāraḥ śāntamevāvaśiṣyate || 36 ||

By the same practice of yoga, one attains that state of thinness, so that neither 'I' nor the world remains, only peace is left.

उसी अभ्यास योग से वह उस स्थिति को प्राप्त होता है, जिससे न तो 'मैं' रहता है न ही संसार, केवल शान्ति शेष रहती है।

7.39.37

यदा यदा स्वभावार्कः स्थितिमेति तदा तदा । भोगान्धकारो गलति न सन्नप्यनुभूयते ॥ ३७ ॥

yadā yadā svabhāvārkaḥ sthitimeti tadā tadā | bhogāndhakāro galati na sannapyanubhūyate || 37 ||

Whenever the sun of one's nature reaches its position, then the darkness of enjoyment dissipates, and one does not experience existence.

जब-जब अपने स्वभाव का सूर्य अपनी स्थिति पर पहुंचता है, तब-तब भोग का अंधकार छंट जाता है, और अस्तित्व का अनुभव नहीं होता।

7.39.38

मोहमहत्तारहितः स्फुरति मृतौ भवति भासते च तथा । बुद्ध्यादिकरणनिकरो यस्माद्दीपादिवालोकः ॥ ३८ ॥

mohamahattārahitaḥ sphurati mṛtau bhavati bhāsate ca tathā | buddhyādikaraṇanikaro yasmāddīpādivālokaḥ || 38 ||

Free from the great delusion, one shines in death, becomes, and also appears thus. The collection of intellect and senses is like the light of a lamp.

महान भ्रम से मुक्त, एक मृत्यु में चमकता है, बनता है, और ऐसे ही दिखाई देता है। बुद्धि और इंद्रियों का संग्रह दीपक की रोशनी के समान है।

Chapter 40

7.40.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । रूपालोकमनस्कारबुद्ध्यादीन्द्रियवेदनम् । स्वरूपं विदुरम्लानमस्वभावस्य वस्तुनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rūpālokamanaskārabuddhyādīndriyavedanam | svarūpaṃ viduramlānamasvabhāvasya vastunaḥ || 1 ||

Vasishtha said: The perception of form, sight, mind, intellect, and senses is the true nature of an unreal entity.

वसिष्ठ ने कहा: रूप, दृष्टि, मन, बुद्धि और इन्द्रियों का अनुभव एक असत्य वस्तु का स्वरूप है।

7.40.2

अस्वभावतनुत्वेन स्वभावस्थितिरातता । यदोदेति तदा सर्गो भ्रमाभः प्रतिभासते ॥ २ ॥

asvabhāvatanutvena svabhāvasthitirātatā | yadodeti tadā sargo bhramābhaḥ pratibhāsate || 2 ||

Due to the unreal nature, the true state of existence appears. When it arises, it is called creation, appearing like an illusion.

असत्य प्रकृति के कारण, अस्तित्व की सच्ची स्थिति प्रकट होती है। जब यह उत्पन्न होता है, तो इसे सृष्टि कहते हैं, जो एक भ्रम की तरह दिखाई देता है।

7.40.3

यदा स्वभावविश्रान्तिः स्थितिमेति शमात्मिका । जगद्दृश्यं तदा स्वप्नः सुषुप्त इव शाम्यति ॥ ३ ॥

yadā svabhāvaviśrāntiḥ sthitimeti śamātmikā | jagaddṛśyaṃ tadā svapnaḥ suṣupta iva śāmyati || 3 ||

When the true nature rests, it attains a state of peace. Then the visible world appears like a dream, calming down like deep sleep.

जब सच्ची प्रकृति विश्राम करती है, तो वह शान्ति की स्थिति प्राप्त करती है। तब दृश्य जगत एक स्वप्न की तरह दिखाई देता है, गहरी नींद की तरह शान्त हो जाता है।

7.40.4

भोगा भवमहारोगा बन्धवो दृढबन्धनम् । अनर्थायार्थसंपत्तिरात्मनात्मनि शाम्यताम् ॥ ४ ॥

bhogā bhavamahārogā bandhavo dṛḍhabandhanam | anarthāyārthasaṃpattirātmanātmani śāmyatām || 4 ||

Enjoyments are the great diseases of worldly existence, relatives are strong bonds. The accumulation of wealth leads to misfortune, may the self rest in the self.

भोग संसार के महान रोग हैं, रिश्तेदार मजबूत बंधन हैं। धन का संचय अनर्थ की ओर ले जाता है, आत्मा आत्मा में शान्त हो जाए।

7.40.5

अस्वभावात्मता सर्गः स्वभावैकात्मता शिवः । भूयतां परमव्योम्ना शाम्यतां मेह ताम्यताम् ॥ ५ ॥

asvabhāvātmatā sargaḥ svabhāvaikātmatā śivaḥ | bhūyatāṃ paramavyomnā śāmyatāṃ meha tāmyatām || 5 ||

The nature of creation is unreal, the true nature is Shiva. May it be filled with the supreme sky, may the illusion calm down.

सृष्टि की प्रकृति असत्य है, सच्ची प्रकृति शिव है। यह परम आकाश से भर जाए, भ्रम शान्त हो जाए।

7.40.6

नात्मानमवगच्छामि न दृश्यं च जगद्भ्रमम्। ब्रह्म शान्तं प्रविष्टोऽस्मि ब्रह्मैवास्मि निरामयः ॥ ६ ॥

nātmānamavagacchāmi na dṛśyaṃ ca jagadbhramam | brahma śāntaṃ praviṣṭo'smi brahmaivāsmi nirāmayaḥ || 6 ||

I do not perceive the self, nor do I see the world as an illusion | I have entered the peaceful Brahman, I am indeed Brahman, free from disease

मैं आत्मा को नहीं समझता, न ही मैं देखता हूँ कि यह जगत भ्रम है | मैं शान्त ब्रह्म में प्रविष्ट हूँ, मैं ही ब्रह्म हूँ, बिना किसी रोग के

7.40.7

त्वमेव पश्यसि त्वन्त्वं सत्त्वं शब्दार्थजृम्भितम्। पश्यामि शान्तमेवाहं केवलं परमं नभः ॥ ७ ॥

tvameva paśyasi tvantvaṃ sattvaṃ śabdārthajṛmbhitam | paśyāmi śāntamevāhaṃ kevalaṃ paramaṃ nabhaḥ || 7 ||

You alone see, you see the essence that is agitated by words and meanings | I see only the peaceful supreme sky

तुम अकेले देखते हो, तुम शब्दों और अर्थों से व्याकुल हुए सत्त्व को देखते हो | मैं केवल शान्त परम आकाश को देखता हूँ

7.40.8

ब्रह्मण्येव पराकाशे रूपालोकमनोमयाः। विभ्रमास्तव संजातकल्पाः स्पन्दा इवानिले ॥ ८ ॥

brahmaṇyeva parākāśe rūpālokamanomayāḥ | vibhramāstava saṃjātakalpāḥ spandā ivānile || 8 ||

In the supreme space of Brahman, forms, worlds, and minds are like illusions born of imagination, like vibrations in the air

ब्रह्म के परम आकाश में, रूप, लोक और मन कल्पना से उत्पन्न भ्रम के समान हैं, हवा में कंपन की तरह

7.40.9

ब्रह्मात्मा वेत्ति नो सर्गं सर्गात्मा ब्रह्म वेत्ति नो। सुषुप्तो वेत्ति नो स्वप्नं स्वप्नस्थो न सुषुप्तकम् ॥ ९ ॥

brahmātmā vetti no sargaṃ sargātmā brahma vetti no | suṣupto vetti no svapnaṃ svapnastho na suṣuptakam || 9 ||

The Brahman-self does not know creation, the creation-self does not know Brahman | The one in deep sleep does not know the dream, the one in the dream does not know deep sleep

ब्रह्म-आत्मा सृष्टि को नहीं जानता, सृष्टि-आत्मा ब्रह्म को नहीं जानता | गहरी नींद में हुआ स्वप्न को नहीं जानता, स्वप्न में हुआ गहरी नींद को नहीं जानता

7.40.10

प्रबुद्धो ब्रह्मजगतोर्जाग्रत्स्वप्नदृशोरिव। रूपं जानाति भारूपं जीवन्मुक्तः प्रशान्तधीः ॥ १० ॥

prabuddho brahmajagatorjāgratsvapnadṛśoriva | rūpaṃ jānāti bhārūpaṃ jīvanmuktaḥ praśāntadhīḥ || 10 ||

The awakened one knows the form of Brahman and the world, like one who is awake knows the form of a dream | The liberated one, with a tranquil mind, knows the true nature of all things

जागृत व्यक्ति ब्रह्म और जगत के रूप को जानता है, जैसे जागृत अवस्था में स्वप्न को जानता है | मुक्त व्यक्ति, शान्त मन से, सभी चीजों के सच्चे स्वरूप को जानता है

7.40.11

यथाभूतमिदं सर्वं परिजानाति बोधवान्। संशाम्यति च शुद्धात्मा शरदीव पयोधरः ॥ ११ ॥

yathābhūtamidaṃ sarvaṃ parijānāti bodhavān | saṃśāmyati ca śuddhātmā śaradīva payodharaḥ || 11 ||

The enlightened one knows everything as it truly is | The pure-minded one becomes calm like an autumn cloud

जागृत व्यक्ति सब कुछ को उसके असली रूप में जानता है | शुद्ध मन वाला व्यक्ति शरद ऋतु के बादल की तरह शान्त हो जाता है

7.40.12

स्मृतिस्थः कल्पनस्थो वा यथाख्यातश्च संगरः। सदसद्भ्रान्ततामात्रस्तथाहंत्वजगद्भ्रमः ॥ १२ ॥

smṛtisthaḥ kalpanastho vā yathākhyātaśca saṃgaraḥ | sadasadbhrāntatāmātras tathāhaṃtvajagadbhamaḥ || 12 ||

Whether in memory or imagination, as described, the conflict is merely a delusion of existence and non-existence | Similarly, the ego and the world are delusions

चाहे स्मृति में हो या कल्पना में, जैसा कि वर्णित है, संघर्ष केवल अस्तित्व और अनस्तित्व की भ्रान्ति है | इसी तरह, अहंकार और जगत भ्रान्ति हैं

7.40.13

आत्मन्यपि नास्ति हि या द्रष्टा यस्या न विद्यते कश्चित्। न च शून्यं नाशून्यं भ्रान्तिरियं भासते सेति ॥ १३ ॥

ātmanyapi nāsti hi yā draṣṭā yasyā na vidyate kaścit | na ca śūnyaṃ nāśūnyaṃ bhrāntiriyam bhāsate seti || 13 ||

Even in the self, there is no seer if there is no one to see | This is neither empty nor non-empty; this delusion appears to be

आत्मा में भी, अगर कोई देखने वाला नहीं है, तो कोई द्रष्टा नहीं है | यह न तो शून्य है न ही अशून्य; यह भ्रान्ति प्रतीत होती है

Chapter 41

7.41.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्वभावस्वभावोऽयं सर्वोऽहंतादिवेदनः । स्वभावैकस्वभावेन निर्वाणीक्रियतां स्वयम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asvabhāvasvabhāvo'yaṃ sarvo'haṃtādivedanaḥ | svabhāvaikasvabhāvena nirvāṇīkriyatāṃ svayam || 1 ||

Sri Vasistha said: This entire universe, which is perceived as 'I' and so on, is of the nature of non-self. By the nature of the self alone, it becomes liberated by itself.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, जो 'मैं' और इसी तरह के रूप में देखा जाता है, अस्वभाव का है। स्वभाव के द्वारा ही, यह स्वयं मुक्त हो जाता है।

7.41.2

यत्रादित्यो भवेत्तत्र यथालोकस्तथा भवेत् । परं विषयवैरस्यं तत्र यत्र प्रबुद्धधीः ॥ २ ॥

yatrādityo bhavettatra yathālokastathā bhavet | paraṃ viṣayavairasyaṃ tatra yatra prabuddhadhīḥ || 2 ||

Where the sun is, there the world is as it is. Where there is an awakened mind, there is the ultimate cessation of object-aversion.

जहाँ सूर्य है, वहाँ दुनिया जैसी है वैसी ही है। जहाँ जाग्रत मन है, वहाँ विषयों के प्रति वैर का अंत होता है।

7.41.3

अकर्तृकर्मकरणमदृश्यद्रष्टृदर्शनम् । जगदग्राह्यसंभारमभित्तौ चित्रमुत्थितम् ॥ ३ ॥

akartṛkarmaṇamadṛśyadṛṣṭṛdarśanam | jagadagrāhyasaṃbhāramabhittau citramutthitam || 3 ||

The action without a doer, the seeing without a seer, the world which is ungraspable, appears as a painting on a wall.

कर्ता के बिना कर्म, द्रष्टा के बिना दृश्य, जो अग्राह्य है, यह संसार एक दीवार पर चित्र की तरह प्रकट होता है।

7.41.4

न चोत्थितं किंच न वा शान्ते शान्तं यथास्थितम् । अनामयं परं ब्रह्म सत्यमव्ययमेव तत् ॥ ४ ॥

na cotthitaṃ kiṃca na vā śānte śāntaṃ yathāsthitam | anāmayaṃ paraṃ brahma satyamavyayameva tat || 4 ||

Nothing has arisen, nor is there anything peaceful in peace. The supreme Brahman, which is flawless, is the true, imperishable reality as it is.

कुछ भी उत्पन्न नहीं हुआ है, न ही शांति में कोई शांति है। जो दोषरहित है, वह परम ब्रह्म सत्य और अविनाशी वास्तविकता है।

7.41.5

चिच्चमत्कारमात्रात्मकल्पनारङ्गरञ्जनाः । संख्यातुं केन शक्यन्ते खे जगच्चित्रपुत्रिकाः ॥ ५ ॥

ciccamatkāramātrātmakalpanāraṅgarañjanāḥ | saṃkhyātuṃ kena śakyante khe jagaccitraputrikāḥ || 5 ||

Who can count the daughters of the universe, which are the colorful creations of the pure consciousness, in the sky?

कौन गिन सकता है ब्रह्माण्ड की पुत्रियों को, जो शुद्ध चेतना की रंगीन रचनाएँ हैं, आकाश में?

7.41.6

रसभावविकाराढ्यं नृत्यन्त्यभिनयैर्नवैः परमाणुप्रति प्रायः खे स्फुरन्त्यम्बरात्मिकाः ॥ ६ ॥

rasabhāvavikārāḍhyaṃ nṛtyantyabhinayairnavaiḥ paramāṇuprati prāyaḥ khe sphurantyambarātmikāḥ || 6 ||

The celestial dancers, full of emotional expressions, dance with nine gestures, almost like atoms, shining in the sky.

रसभावों से भरे हुए नृत्य करने वाले नव अभिनयों से नृत्य करते हुए परमाणुओं के समान आकाश में चमकते हैं।

7.41.7

सर्वर्तुशेखरधरा दिग्बाहुलतिकाकुलाः पातालपादलतिका ब्रह्मलोकशिरोधराः ॥ ७ ॥

sarvartuśekharadharā digbāhulatikākulāḥ pātālapādalatikā brahmalokaśirodharāḥ || 7 ||

They are adorned with the best of all seasons, surrounded by the directions as arms, with the underworld as feet, and the Brahmaloka as the head.

वे सभी ऋतुओं के श्रेष्ठ अलंकृत हैं, दिशाओं को भुजाओं के रूप में घेरे हुए हैं, पाताल को पैर और ब्रह्मलोक को सिर के रूप में रखते हैं।

7.41.8

चन्द्रार्कलोलनयनास्तारोत्करतनूरुहाः सप्तलोकाङ्गलतिकाः परितोच्छाम्बराम्बराः ॥ ८ ॥

candrārkalolonayanāstārotkaratanūruhāḥ saptalokāṅgalatikāḥ paritocchāmbarāmbarāḥ || 8 ||

With eyes rolling like the moon and sun, their bodies shining like stars, they are the ornaments of the seven worlds, surrounded by the sky.

चन्द्रमा और सूर्य के समान नयनों वाले, तारों के समान चमकते शरीर वाले, वे सात लोकों के आभूषण हैं, आकाश से घिरे हुए।

7.41.9

द्वीपाम्बुराशिवलया लोकालोकाद्रिमेखलाः भूतभारचलज्जीवप्रवहत्प्राणमारुताः ॥ ९ ॥

dvīpāmburāśivalayā lokālokādrimekhalāḥ bhūtabhāracalajjīvapravahatprāṇamārutāḥ || 9 ||

They are the garlands of islands and oceans, the girdle of the Lokāloka mountain, and the life-breath that flows through all beings.

वे द्वीपों और समुद्रों की मालाएँ हैं, लोकालोक पर्वत की कमरबंद हैं, और सभी प्राणियों में प्रवाहित होने वाली जीवन श्वास हैं।

7.41.10

वनोपवनविन्यासहारकेयूरभूषिताः पुराणवेदवचनाः क्रियाफलविनोदनाः ॥ १० ॥

vanopavanavinyāsahārakeyūrabhūṣitāḥ purāṇavedavacanāḥ kriyāphalavinodanāḥ || 10 ||

They are adorned with the arrangement of forests and groves, bracelets of flowers, and the words of the Puranas and Vedas, enjoying the fruits of their actions.

वे वनों और उपवनों की व्यवस्था, फूलों की कंगनों और पुराणों और वेदों के शब्दों से अलंकृत हैं, अपने कर्मों के फलों का आनंद लेते हैं।

7.41.11

त्रिजगत्पुत्रिकानृत्यं यदिदं दृश्यते पुरः । ब्रह्मवारिद्रवत्वं तत्तद्ब्रह्मानिलवेपनम् ॥ ११ ॥

trijagatputrikānṛtyaṃ yadidaṃ dṛśyate puraḥ | brahmavāridravatvaṃ tattadbrahmānilavepanam || 11 ||

The dance of the daughter of the three worlds, which is seen before us, is like the flow of Brahma's rain and the trembling of Brahma's wind.

जो तीनों जगतों की पुत्री का नृत्य हमारे सामने दिखाई देता है, वह ब्रह्मा की वर्षा के प्रवाह और ब्रह्मा की हवा के कंपन के समान है।

7.41.12

अस्वभावस्थितैवास्य कारणं कारणात्मकम्। असुषुप्तं स्थिता स्वापे स्वप्नस्येव सतीव सा ॥ १२ ॥

asvabhāvasthitaivāsya kāraṇaṃ kāraṇātmakam | asuṣuptaṃ sthitā svāpe svapnasyeva satīva sā || 12 ||

The cause of this is inherent in its nature, which is the cause of causes. It remains awake in sleep, like a dream, as if it were real.

इसका कारण इसके स्वभाव में निहित है, जो कारणों का कारण है। यह नींद में जागृत रहता है, जैसे सपना, मानो यह वास्तविक हो।

7.41.13

असुषुप्तसुषुप्तस्थः स्वभावं भावयन्भव। जाग्रत्यपि गतव्यग्रो मा स्वप्नमिदमाश्रय ॥ १३ ॥

asuṣuptasuṣuptasthaḥ svabhāvaṃ bhāvayanbhava | jāgratyapi gatavyagrō mā svapnamidamāśraya || 13 ||

Remaining in the state of awake-sleep, meditate on your nature, O being. Even in the waking state, do not be anxious, do not take refuge in this dream.

जागृत-निद्रा की अवस्था में रहते हुए, अपने स्वभाव पर ध्यान करो, हे प्राणी। जागृत अवस्था में भी, चिंतित न हो, इस सपने में आश्रय न लो।

7.41.14

यज्जाग्रति सुषुप्तत्वं बोधादरसवासनम्। तं स्वभावं विदुस्तज्ज्ञा मुक्तिस्तत्परिणामिता ॥ १४ ॥

yajjāgrati suṣuptatvaṃ bodhādarasavāsanam | taṃ svabhāvaṃ vidustajjñā muktistatpariṇāmitā || 14 ||

That which is awake in sleep is the essence of awareness, known by the wise. Liberation is the transformation of that.

जो नींद में जागृत है, वह चेतना का सार है, जिसे ज्ञानी जानते हैं। मुक्ति उसका परिणाम है।

7.41.15

अकर्तृकर्मकरणमदृश्यद्रष्टृदर्शनम्। अरूपालोकमननं स्थितं ब्रह्म जगत्तया ॥ १५ ॥

akartṛkarmakaraṇamadṛśyadraṣṭṛdarśanam | arūpālokamananaṃ sthitaṃ brahma jagattayā || 15 ||

The action without a doer, the seeing without a seer, the contemplation without form, Brahma is established in the world in this way.

कर्ता के बिना कर्म, द्रष्टा के बिना दर्शन, रूप के बिना आलोकन, ब्रह्मा इस प्रकार से जगत में स्थापित है।

7.41.16

कान्ते कान्तं प्रकचति पूर्णे पूर्णं व्यवस्थितम्। द्वित्वैक्यरहिते भाति द्वित्वैक्यपरिवर्जितम् ॥ १६ ॥

kānte kāntaṃ prakacati pūrṇe pūrṇaṃ vyavasthitam | dvitvaikyarahite bhāti dvitvaikyaparivarjitam || 16 ||

In the fullness of the beloved, the beloved shines forth, established in the fullness. It appears devoid of duality and non-duality, free from duality and non-duality.

प्रिय की पूर्णता में प्रिय प्रकट होता है, पूर्णता में स्थित है। यह द्वैत और अद्वैत से रहित दिखाई देता है, द्वैत और अद्वैत से मुक्त है।

7.41.17

सत्यं सत्ये स्थितं शान्तं सर्गात्मन्यात्मनि स्वयम्। आकाशकोशसदृशं शिलाजठरसंनिभम् ॥ १७ ॥

satyam satye sthitam śāntam sargātmanyātmani svayam | ākāśakośasadṛśam śilājaṭharasannibham || 17 ||

Truth is established in truth, peaceful in the self of creation, by itself. It is like the space in a pot, resembling a stone in the belly.

सत्य सत्य में स्थित है, शान्त है सृष्टि के आत्मा में, स्वयं में। यह घड़े के आकाश के समान है, पेट में पत्थर के समान है।

7.41.18

सुरत्नजठराकारं घनमप्यम्बरोपमम्। प्रतिबिम्बमिव क्षुब्धमप्यक्षुब्धमसच्च सत्॥ १८॥

suratnajaṭharākāram ghanamapyambaropamam | pratibimbamiva kṣubdhamapyakṣubdhamasaccasat || 18 ||

It is like a precious stone in the belly, dense yet like the sky. It is like a reflection, disturbed yet undisturbed, unreal yet real.

यह पेट में रत्न के समान है, घना पर आकाश के समान। यह प्रतिबिम्ब के समान है, विचलित होते हुए भी अविचलित, असत्य होते हुए भी सत्य।

7.41.19

भविष्यन्नवनिर्माणं चेतसीव स्थितं पुरम्। ब्रह्म बृंहितभारूपमभेदीकृतमानसम्॥ १९॥

bhaviṣyannavanirmaṇam cetasīva sthitam puram | brahma bṛṃhitabhārūpamabhedīkṛtamānasam || 19 ||

It will be a newly created city, established like consciousness. Brahman, the expanded form, is made non-different from the mind.

यह एक नवनिर्मित नगर होगा, जैसे चेतना के समान स्थित। ब्रह्म, विस्तृत रूप, मन से अभिन्न बनाया गया है।

7.41.20

यथा संकल्पनगरं संकल्पान्नैव भिद्यते। तथायं जगदाभासः परमार्थान्न भिद्यते॥ २०॥

yathā saṃkalpanagaram saṃkalpānnaiva bhidyate | tathāyaṃ jagadābhāsaḥ paramārthānna bhidyate || 20 ||

Just as an imaginary city does not differ from the imagination, so this worldly appearance does not differ from the ultimate reality.

जैसे कि एक कल्पित नगर कल्पना से भिन्न नहीं होता, वैसे ही यह संसारिक आभास परमार्थ से भिन्न नहीं होता।

7.41.21

हेमपीठमिवानेकभविष्यत्संनिवेशवत्। लक्ष्यमाणमपि स्फारं शान्तमव्ययमास्थितम्॥ २१॥

hemapīṭhamivānekabhaviṣyatsaṃniveśavat | lakṣyamāṇamapi sphāraṃ śāntamavyayamāsthitam || 21 ||

Like a golden throne, it will be the abode of many future beings | Even though it is perceived as expansive, it remains calm and imperishable

सोने के सिंहासन की तरह, यह कई भविष्य के जीवों का निवास स्थान होगा | यद्यपि यह विस्तृत दिखाई देता है, यह शांत और अविनाशी बना रहता है

7.41.22

अजस्रनाशोत्पादाढ्यमेकरूपमनामयम्। अनाशोत्पादमजरमनेकमिव कान्तिमत्॥ २२॥

ajasranāśotpādāḍhyamekarūpamanāmayam | anāśotpādamajaramanekamiva kāntimat || 22 ||

It is filled with continuous destruction and creation, one form, without defects | Without destruction and creation, ageless, as if many, radiant

यह निरंतर विनाश और सृजन से भरा हुआ है, एक रूप, दोषरहित | विनाश और सृजन के बिना, अजर, जैसे कई, चमकीला

7.41.23

ब्रह्मैव शान्तिघनभावगतं विभाति सर्गोदयेन विगतास्तमयोदयेन। व्योमेव शून्यविभवेन गलत्स्वभावलाभं प्रति प्रसभमेव ननु प्रबुद्धे॥ २३॥

brahmaiva śāntighanabhāvagataṃ vibhāti sargodayena vigatāstamayodayena | vyomeva śūnyavibhavena galatsvabhāvalābhaṃ prati prasabhameva nanu prabuddhe || 23 ||

Brahman alone shines with the nature of dense peace | With the rise of creation, it is devoid of the rise of darkness | Like the sky, it effortlessly attains its natural state with the power of emptiness

ब्रह्म ही घनी शांति के स्वभाव से चमकता है | सृजन के उदय के साथ, यह अंधकार के उदय से रहित है | आकाश की तरह, यह शून्यता की शक्ति से अपनी प्राकृतिक अवस्था को प्राप्त करता है

Chapter 42

7.42.1

श्रीवसिष्ठ उवाच चित्तवत्कचनं शान्ते यत्तत्तस्मान्न भिद्यते अव्याकृतामलतया क्वाऽतः सर्गादिसंभवः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca cittavatkacanaṃ śānte yattattasmānna bhidyate avyākṛtāmalatayā kvātaḥ sargādisambhavaḥ || 1 ||

Śrī Vasistha said: That which is calm and pure, like the mind, does not differ from it. From where does the creation and its manifestations arise?

श्री वसिष्ठ ने कहा जो शान्त और निर्मल है उससे वह अलग नहीं है | फिर सृष्टि और उसकी उत्पत्ति कहाँ से हुई?

7.42.2

चित्तदीपे गते यान्ति भ्रान्तिवद्भान्ति खे स्थिते रूपालोकमनस्कारसंविदोऽम्बुद्रवोर्मयः ॥ २ ॥

cittadīpe gate yānti bhrāntivadbhānti khe sthite rūpālokamanaskārasaṃvido'mbudravormayaḥ || 2 ||

When the light of consciousness is gone, illusions and perceptions vanish like clouds in the sky, along with forms, visions, and mental impressions.

जब चेतना का प्रकाश चला जाता है, तो भ्रान्तियाँ और प्रतीतियाँ आकाश में बादलों की तरह विलीन हो जाती हैं, रूपों, दृश्यों और मानसिक संस्कारों के साथ।

7.42.3

निरस्तकरणापेक्षं मरुतः स्पन्दनं यथा यथा विसरणं भासस्तथा जगदिदं परे ॥ ३ ॥

nirastakaraṇāpekṣaṃ marutaḥ spandanaṃ yathā yathā visaraṇaṃ bhāsastathā jagadidaṃ pare || 3 ||

Just as the wind moves without depending on the senses, so does this world manifest and spread its light.

जैसे वायु इन्द्रियों पर निर्भर नहीं करते हुए चलती है, वैसे ही यह जगत् अपना प्रकाश फैलाता है और प्रकट होता है।

7.42.4

द्रवत्वमिव कीलाले शून्यत्वमिव चाम्बरे स्पन्दत्वं मरुतीवेदं किमप्यात्ममयं परे ॥ ४ ॥

dravatvamiva kīlāle śūnyatvamiva cāmbare spandatvaṃ marutīvedaṃ kimapyātamamayaṃ pare || 4 ||

Like the fluidity of water, the emptiness of the sky, and the motion of the wind, everything in the ultimate reality is pervaded by the Self.

जैसे पानी की तरलता, आकाश की शून्यता और वायु की गति, वैसे ही परम वास्तविकता में सब कुछ आत्मा से व्याप्त है।

7.42.5

महाचिति महाकाशे यदिदं भासते जगत् तच्चित्त्वमेव कचति निर्मलत्वं मणाविव ॥ ५ ॥

mahāciti mahākāśe yadidaṃ bhāsate jagat taccittvameva kacati nirmalatvaṃ maṇāviva || 5 ||

In the great consciousness, the great space, this world shines. That pure consciousness alone shines like a jewel.

महान चेतना और महान आकाश में, यह जगत् चमकता है। वह शुद्ध चेतना ही मणि की तरह चमकती है।

7.42.6

यथा द्रवत्वं पयसि यथा शून्यत्वमम्बरे। यथा प्रस्पन्दनं वायौ महाचिति तथा जगत्॥ ६॥

yathā dravatvaṃ payasi yathā śūnyatvamambare | yathā praspandanaṃ vāyau mahāciti tathā jagat || 6 ||

Just as liquidity is in water, just as emptiness is in the sky, just as vibration is in the air, so is the universe in the great consciousness.

जैसे द्रवता पानी में है, जैसे शून्यता आकाश में है, जैसे कंपन वायु में है, वैसे ही ब्रह्मांड महाचिति में है।

7.42.7

वेत्ति वायुर्यथा स्पन्दं तथा वेत्ति जगच्चितिः। न द्वैतैक्यादिभेदानां मनागप्यत्र संभवः॥ ७॥

vetti vāyuryathā spandaṃ tathā vetti jagaccitiḥ | na dvaitaikyādibhedānāṃ manāgapyatra saṃbhavaḥ || 7 ||

Just as the wind knows its vibration, so does the consciousness of the universe know. There is no possibility of duality, unity, or any other differences here.

जैसे वायु अपने कंपन को जानती है, वैसे ही ब्रह्मांड की चेतना जानती है। यहाँ द्वैत, एकता, या किसी अन्य भेद की संभावना नहीं है।

7.42.8

अविवेकविवेकाभ्यां भासुरं भङ्गुरं जगत्। बोधे सदैव सद्रूपमभासुरमभङ्गुरम्॥ ८॥

avivekavivekābhyāṃ bhāsuraṃ bhaṅguraṃ jagat | bodhe sadaiva sadrūpamabhāsuraṃ abhaṅguram || 8 ||

Through discrimination and non-discrimination, the world appears as illusory and transient. In true knowledge, it is always of the nature of reality, non-illusory, and non-transient.

भेदभाव और अभेदभाव से, संसार भ्रामक और अस्थायी प्रतीत होता है। सच्चे ज्ञान में, यह हमेशा वास्तविकता के स्वभाव का, अभ्रामक, और अस्थायी नहीं होता।

7.42.9

ज्ञप्तिमात्रादृते शुद्धादादिमध्यान्तवर्जितात्। नान्यदस्तीह निर्णीतं महाचिन्मात्ररूपिणः॥ ९॥

jñaptimātrādṛte śuddhādādimadhyāntavarjitāt | nānyadastīha nirṇītaṃ mahācinmātrarūpiṇaḥ || 9 ||

Except for pure awareness, which is devoid of beginning, middle, and end, nothing else is determined to exist here.

शुद्ध चेतना के अलावा, जो आदि, मध्य और अंत से रहित है, यहाँ और कुछ भी अस्तित्व में नहीं है।

7.42.10

तत्कस्यचिच्छिवं शान्तं कस्यचिद्ब्रह्म शाश्वतम्। कस्यचिच्छून्यतामात्रं कस्यचिज्ज्ञप्तिमात्रकम्॥ १०॥

tatkasyaciśśivaṃ śāntaṃ kasyacidbrahma śāśvatam | kasyaciśśūnyatāmātraṃ kasyacijjñaptimātrakam || 10 ||

For some, it is the auspicious and peaceful Shiva; for some, it is the eternal Brahman; for some, it is mere emptiness; for some, it is mere awareness.

किसी के लिए, यह शुभ और शांत शिव है; किसी के लिए, यह सनातन ब्रह्म है; किसी के लिए, यह केवल शून्यता है; किसी के लिए, यह केवल चेतना है।

7.42.11

तदनन्तात्म चिद्रूपं चेत्यतामिव भावयत्। स्वसंस्थमेव ज्ञेयत्वमज्ञत्वमिव गच्छति॥ ११॥

tadanantātma cidrūpaṃ cetayāmiva bhāvayat| svasaṃsthamēva jñēyatvamajñatvamiva gacchati || 11 ||

Contemplate that infinite Self as consciousness, as if it were conscious| Knowability itself goes as if it were ignorance

उस अनन्त आत्मा को चेतना के रूप में सोचें, जैसे वह चेतना हो| ज्ञेयता स्वयं अज्ञान की तरह चली जाती है

7.42.12

चित्तया नास्ति सत्ता च चित्तता नास्ति तां विना । विना विना यथा वायोर्यथा स्पन्देषु कारणम् ॥ १२ ॥

cittayā nāsti sattā ca cittatā nāsti tāṃ vinā| vinā vinā yathā vāyoryathā spandeṣu kāraṇam || 12 ||

There is no existence without consciousness, nor is there consciousness without it| Just as there is no cause without the movement of air

चेतना के बिना कोई अस्तित्व नहीं है, न ही उसके बिना चेतना है| जैसे हवा की गति के बिना कोई कारण नहीं है

7.42.13

तथा महाचितोच्छायाः सर्गसंवित्तिवृत्तिषु । नित्यं सत्त्वमसत्त्वं वा हेतोरन्यानपेक्षणात् ॥ १३ ॥

tathā mahācitochchāyāḥ sargasaṃvittivṛttiṣu| nityaṃ sattvamasattvaṃ vā hetoranyānapekṣaṇāt || 13 ||

Similarly, in the activities of the great consciousness, creation and cognition| Always, existence or non-existence is due to the non-dependence on other causes

इसी प्रकार, महान चेतना की गतिविधियों में, सृष्टि और ज्ञान| हमेशा, अस्तित्व या अनस्तित्व अन्य कारणों पर निर्भर नहीं है

7.42.14

इत्यत्रार्थोऽभविष्यत्स द्वित्वैकत्वास्तितावशात् । कोऽत्र कल्पयिता द्वित्वमेकत्वं वा महाम्बरे ॥ १४ ॥

ityatrārtho'bhaviṣyatsa dvitvaikatvāstitāvaśāt| ko'tra kalpayitā dvitvamekatvaṃ vā mahāmbare || 14 ||

Thus, the meaning here becomes due to the existence of duality and unity| Who here is the creator of duality or unity in the great sky

इस प्रकार, यहाँ अर्थ द्वैत और अद्वैत के अस्तित्व के कारण होता है| यहाँ महान आकाश में द्वैत या अद्वैत का सृष्टिकर्ता कौन है

7.42.15

विष्वग्विश्वमपारैकपरमाकाशकोशता । यथा स्पन्दानिलद्वित्वं शाब्दमेव न वास्तवम् ॥ १५ ॥

viṣvagviśvamapāraikaparamākāśakośatā| yathā spandāniladvitvaṃ śābdameva na vāstavam || 15 ||

The all-pervading, infinite, supreme space-sheath| Just as the duality of the moving air is only verbal, not real

सर्वव्यापी, अनन्त, परम आकाश-कोश| जैसे हवा की गति का द्वैत केवल शाब्दिक है, वास्तविक नहीं

7.42.16

विश्वविश्वेश्वरद्वित्वं तथैवासन्मयात्मकम् । सदेवासंभवद्वित्वं महाचिन्मात्रकं च यत् ॥ १६ ॥

viśvaviśveśvaradvitvaṃ tathaivāsanmayātmakam | sadevāsaṃbhavaddvitvaṃ mahācinmātrakaṃ ca yat || 16 ||

The duality of the universe and the Lord is of the nature of non-existence. The duality that arises from existence is merely pure consciousness.

विश्व और विश्वेश्वर का द्वैत असत्य स्वभाव का है | सत्य से उत्पन्न द्वैत महान चिन्मात्र है |

7.42.17

विश्वाभासं तदेवेदं न विश्वं सन्न विश्वता । देशकालादिमत्त्वेन कदाचिद्धेम्नि सत्यता ॥ १७ ॥

viśvābhāsaṃ tadevedaṃ na viśvaṃ sanna viśvatā | deśakālādimattvena kadācidhemini satyatā || 17 ||

This appearance of the universe is not the universe itself, nor is it the reality. It appears real only due to space, time, and other conditions.

यह विश्व का आभास विश्व स्वयं नहीं है, न ही यह वास्तविकता है | यह केवल स्थान, काल और अन्य परिस्थितियों के कारण सत्य प्रतीत होता है |

7.42.18

कटकत्वस्य भिन्नस्य विश्वस्य च तथा परे । द्वित्वैक्यासंभवे चात्र कार्यकारणता कुतः ॥ १८ ॥

kaṭakatvasya bhinnasya viśvasya ca tathā pare | dvitvaikyāsaṃbhave cātra kāryakāraṇatā kutaḥ || 18 ||

If the bracelet (kaṭaka) and the universe are different, how can there be a relationship of cause and effect between them?

अगर कड़ा (kaṭaka) और विश्व अलग हैं, तो उनके बीच कारण और कार्य का संबंध कैसे हो सकता है?

7.42.19

स्याच्चेत्तत्कल्पनामात्रमेवैतन्नान्यवस्तुता । शून्यता नभसीवात्र द्रवत्वमिव चाम्भसि ॥ १९ ॥

syāccettatkalpanāmātramevaitannānyavastutā | śūnyatā nabhasīvātra dravatvamiva cāmbhasi || 19 ||

If it were so, it would be merely an imagination, not a real entity. Here, emptiness is like the sky, and fluidity is like water.

अगर ऐसा होता, तो यह केवल कल्पना होती, कोई वास्तविक वस्तु नहीं | यहां, शून्यता आकाश की तरह है, और द्रवता पानी की तरह है |

7.42.20

खे खलेखाप्यभिन्नेव किलास्ति जगदादिता । यद्रूपं ब्रह्म तद्रूपं जगत्क्वात्र द्वितैकते ॥ २० ॥

khe khalekhāpyabhinneva kilāsti jagadāditā | yadrūpaṃ brahma tadrūpaṃ jagatkvātra dvitaikate || 20 ||

In the sky, even the line drawn is not different. Indeed, there is the beginning of the universe. The form of Brahman is the form of the universe. Where is the duality or unity here?

आकाश में, खींची गई रेखा भी अलग नहीं है | वास्तव में, विश्व का आरंभ है | ब्रह्म का रूप विश्व का रूप है | यहां द्वैत या एकता कहां है?

7.42.21

यद्रूपं व्योम तद्रूपमेवं शून्यं किलाखिलम् । एकात्मनि तते स्वच्छे चिन्मात्रे सर्वरूपिणि ॥ २१ ॥

yad rūpaṃ vyoma tad rūpam evaṃ śūnyaṃ kilākhilam | ekātmani tate svacche cinmātre sarvarūpiṇi || 21 ||

The form of space is the same as the form of emptiness. All this is indeed one, pure, consciousness alone, which is the form of everything.

आकाश का रूप वही है जो शून्य का रूप है। यह सब एक है, स्वच्छ, चिन्मात्र में, जो सब कुछ का रूप है।

7.42.22

शिलापुत्रकसेनायां पाषाणत्व इवास्थिते । कार्यकारणवैचित्र्यं कथं संभवति क्व वा ॥ २२ ॥

śilāputrakasenāyāṃ pāṣāṇatva ivāsthite | kāryakāraṇavaicitryaṃ kathaṃ saṃbhavati kvā vā || 22 ||

In the army of the son of a stone, as if it were a stone, how and where does the diversity of cause and effect arise?

पत्थर के पुत्र की सेना में, जैसे कि वह पत्थर हो, कारण और परिणाम की विविधता कैसे और कहाँ उत्पन्न होती है?

7.42.23

कथमव्योमता व्योम्नि द्वितीयासंभवाद्भवेत् । प्रतिभात्मैव भारूपो भाति सर्गो महाचिति ॥ २३ ॥

kathamavyomatā vyomni dvitīyāsaṃbhavādbhavet | pratibhātmāiva bhārūpo bhāti sargo mahāciti || 23 ||

How can there be a second existence in the sky when there is no possibility of a second existence? The creation appears as a reflection of the great consciousness.

आकाश में दूसरी अस्तित्व कैसे हो सकता है जब दूसरी अस्तित्व की संभावना नहीं है? सृष्टि महाचेतना के प्रतिबिंब के रूप में दिखाई देती है।

7.42.24

पुत्रिकेवोपलोत्कीर्णा तन्मयत्वात्तदात्मिका । साधो यथास्थितस्यैवं बुद्ध्वा विश्वं प्रलीयते ॥ २४ ॥

putrikevopalotkīrṇā tanmayatvāttadātmikā | sādho yathāsthitasyaiavaṃ buddhvā viśvaṃ pralīyate || 24 ||

Like a doll made of clay, it is of the same nature as clay. O virtuous one, knowing this, the world dissolves.

मिट्टी के पुतले की तरह, यह मिट्टी के समान है। हे साधु, इसे जानकर, संसार विलीन हो जाता है।

7.42.25

काष्ठमौनदशाभासं संसारमवशिष्यते । यथा निमीलिताक्षस्य रूपालोकमनोभ्रमः ॥ २५ ॥

kāṣṭhamaundaśābhāsaṃ saṃsāramavaśiṣyate | yathā nimīlitākṣasya rūpālokamanobhramaḥ || 25 ||

The world remains like an illusion of a log. Just as the perception of form is a delusion for one with closed eyes.

संसार लकड़ी के भ्रम की तरह रहता है। जैसे बंद आँखों वाले के लिए रूप का दृश्य एक भ्रम है।

7.42.26

स्वप्ने जाग्रत्यनग्रस्थोऽप्यसन्नेवास्तिभावनात्तथैवोन्मीलिताक्षस्य रूपालोकमनोभ्रमः ॥ २६ ॥

svapne jāgratyanagrastho'pyasannevāstibhāvanāttathaivonmīlitākṣasya rūpālokamanobhramaḥ || 26 ||

Even in a dream, one who is not firmly established in wakefulness appears to be present due to the power of imagination. Similarly, for one whose eyes are open, the perception of forms is a mental delusion.

सपने में भी, जो जाग्रत अवस्था में स्थिर नहीं है, वह कल्पना के कारण मौजूद लगता है। इसी तरह, जिसकी आँखें खुली हैं, उसके लिए रूपों का दर्शन मन का भ्रम है।

7.42.27

स्वप्ने जाग्रत्यनग्रस्थोऽप्यसन्नेवास्तिभावनात्भावनोपशमं कृत्वा शिलीभूय यथास्थितम् ॥ २७ ॥

svapne jāgratyanagrastho'pyasannevāstibhāvanātbhāvanopaśamaṃ kṛtvā śilībhūya yathāsthitam || 27 ||

Even in a dream, one who is not firmly established in wakefulness appears to be present due to the power of imagination. By calming the imagination and becoming still, one remains as one is.

सपने में भी, जो जाग्रत अवस्था में स्थिर नहीं है, वह कल्पना के कारण मौजूद लगता है। कल्पना को शांत करके और स्थिर होकर, वह जैसा है वैसा ही रहता है।

7.42.28

अशिलीभूतमेवान्तः स्वभावं सममास्यतामाविवेकोपहारेण यथाप्राप्तार्थपूजनैः ॥ २८ ॥

aśilībhūtamevāntaḥ svabhāvaṃ samamāsyatāmāvivekopahāreṇa yathāprāptārthapūjanaiḥ || 28 ||

Without becoming still within, one's own nature is absorbed in non-discrimination, worshipping whatever is obtained.

भीतर स्थिर हुए बिना, अपनी प्रकृति विवेकहीनता में विलीन हो जाती है, जो भी प्राप्त होता है उसकी पूजा करते हुए।

7.42.29

बोधाय पूज्यतां बुद्ध्या स्वभावः परमेश्वरःविवेकपूजितः स्वात्मा सद्यः स्फारवरप्रदः ॥ २९ ॥

bodhāya pūjyatāṃ buddhyā svabhāvaḥ parameśvaraḥvivekapūjitaḥ svātmā sadyaḥ sphāravarapradaḥ || 29 ||

For the sake of enlightenment, one should worship one's own nature as the Supreme Lord. The self, worshipped with discernment, instantly bestows the highest splendor.

बोध के लिए, कोई अपनी प्रकृति को परमेश्वर के रूप में पूजना चाहिए। विवेक से पूजित आत्मा तुरंत उच्चतम प्रकाश प्रदान करता है।

7.42.30

रुद्रोपेन्द्रादिपूजात्र जरत्तृणलवायतेविचारशमसत्सङ्गबलिपुष्पैकपूजितः ॥ ३० ॥

rudropendrādipūjātra jarattṛṇalavāyatevicāraśamasatsaṅgabalipuṣpaikapūjitaḥ || 30 ||

In the worship of Rudra, Indra, and others, one is like a withered blade of grass. Worshipped with the flower of discernment, calmness, and the company of the good, one is honored.

रुद्र, इंद्र, और अन्यों की पूजा में, कोई सूखे तिनके की तरह होता है। विवेक, शांति, और सत्संग के फूल से पूजित होकर, कोई सम्मानित होता है।

7.42.31

सद्योमोक्षफलः साधो स्वात्मैव परमेश्वरः । सत्यालोकनमात्रैकपूजितोऽनुत्तमार्थदः ॥ ३१ ॥

sadyomokṣaphalaḥ sādho svātmaiva parameśvaraḥ | satyālokanamātraikapūjito'nuttamārthadaḥ || 31 ||

O virtuous one, the immediate fruit of liberation is the realization that one's own self is the Supreme Lord. By merely seeing the truth, one attains the highest purpose.

हे साधो, तत्काल मोक्ष का फल यह है कि अपना आत्मा ही परमेश्वर है। सत्य को देखने मात्र से ही उत्तम अर्थ प्राप्त होता है।

7.42.32

यत्रास्त्यात्मेश्वरस्तत्र मूढः कोऽन्यं समाश्रयेत् । सत्सङ्गशमसंतोषविवेकापूजितात्मनः ॥ ३२ ॥

yatrāstyātmeśvarastatra mūḍhaḥ ko'nyaṃ samāśrayet | satsaṅgaśamasaṃtoṣavivekāpūjitātmanaḥ || 32 ||

Where the self is the Lord, why should a fool seek refuge in another? One whose self is purified by good company, peace, contentment, and discrimination.

जहाँ आत्मा ही ईश्वर है, वहाँ किसी मूढ़ को दूसरे की शरण में जाने की आवश्यकता क्यों है? जिसका आत्मा सत्संग, शांति, संतोष और विवेक से पूजित हो।

7.42.33

शिरीषकुसुमायन्ते शस्त्राहिविषवह्नयः । देवार्चनतपस्तीर्थदानान्यतिकृतान्यपि ॥ ३३ ॥

śirīṣakusumāyante śastrāhiviṣavahnyaḥ | devārcanatapastīrthadānānyatikṛtānyapi || 33 ||

The flowers of the Shirisha tree wither away, as do weapons, snakes, poison, and fire. Even excessive devotion, austerities, pilgrimages, and charities are futile.

शिरीष के फूल सूख जाते हैं, और हथियार, साँप, विष, और आग भी सूख जाते हैं। अतिशय भक्ति, तपस्या, तीर्थयात्रा, और दान भी व्यर्थ हैं।

7.42.34

भस्मायन्ते निरर्थत्वादविवेकामहात्मनाम् । एतान्यपि विवेकेन क्रियन्ते सफलानि चेत् ॥ ३४ ॥

bhasmāyante nirarthatvādavivekāmahātmanām | etānyapi vivekena kriyante saphalāni cet || 34 ||

These become ashes due to their uselessness for those without discrimination. Even these actions become fruitful if done with discrimination.

ये अपनी अनुपयोगिता के कारण राख बन जाते हैं विवेकहीन महात्माओं के लिए। यदि विवेक से किए जाएँ तो ये कार्य भी फलदायक हो जाते हैं।

7.42.35

विवेक एव तत्कस्मात्स्फुटमन्तर्न साध्यते । यथाभूतार्थविज्ञानाद्वासनोपरमे परे ॥ ३५ ॥

viveka eva tatkasmātsphuṭamantarna sādhyate | yathābhūtārthavijñānādvāsanoparame pare || 35 ||

Discrimination alone is not easily attained internally. It is achieved through the knowledge of the true nature of things and the cessation of desires.

विवेक अकेला आंतरिक रूप से आसानी से प्राप्त नहीं होता। यह वास्तविक चीजों के ज्ञान और इच्छाओं के अंत से प्राप्त होता है।

7.42.36

यत्नो विवेकशब्दाख्यो भवत्यात्मप्रसादतः । तथा तथा विवेकोऽन्तर्वृद्धिं नेयः शमामृतैः ॥ ३६ ॥

yatno vivekaśabdākhyo bhavatyātmaprasādataḥ | tathā tathā viveko'ntarvṛddhiṃ neyaḥ śamāmṛtaiḥ || 36 ||

Effort, known as discernment, arises from the grace of the Self. Thus, discernment should be gradually increased by the nectar of peace.

प्रयास, जिसे विवेक कहते हैं, आत्मा की कृपा से उत्पन्न होता है। इस प्रकार, विवेक को शांति के अमृत से धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए।

7.42.37

यथा यथा पुनः शोषमुपयाति न विभ्रमैः । देहसत्तामनादृत्य यथा भूतार्थदर्शनात् ॥ ३७ ॥

yathā yathā punaḥ śoṣamupayāti na vibhramaiḥ | dehasattāmanādṛtya yathā bhūtārthadarśanāt || 37 ||

As one gradually attains dryness (detachment) without delusions, disregarding the reality of the body, one sees the truth as it is.

जैसे-जैसे कोई धीरे-धीरे भ्रमों के बिना शुष्कता (विरक्ति) प्राप्त करता है, शरीर की वास्तविकता को नजरअंदाज करके, वह सत्य को जैसा है वैसा ही देखता है।

7.42.38

लज्जां भयं विषादेर्ष्ये सुखं दुःखं जयेत्समम् । जगदादि शरीरादि नास्त्येवादौ कुतोऽद्य तत् ॥ ३८ ॥

lajjāṃ bhayaṃ viṣāderṣye sukhaṃ duḥkhaṃ jayetsamam | jagadādi śarīrādi nāstyevādau kuto'dya tat || 38 ||

One should conquer shame, fear, sorrow, jealousy, happiness, and sorrow equally. The world and the body do not exist at the beginning, so how can they exist now?

कोई लज्जा, भय, विषाद, ईर्ष्या, सुख और दुःख को समान रूप से जीतना चाहिए। संसार और शरीर शुरू में नहीं थे, तो अब वे कैसे हो सकते हैं?

7.42.39

कार्यं चेत्कारणस्यैतत्तथापि ब्रह्ममात्रकम् । प्रतिभामात्रमेवाच्छं न तु ज्ञप्तेर्घटादि सत् ॥ ३९ ॥

kāryaṃ cetkāraṇasyaitattathāpi brahmaṃātrakam | pratibhāmātramevācchaṃ na tu jñapterghaṭādi sat || 39 ||

If this is the effect of the cause, still it is only Brahman. I desire only the pure consciousness, not the cognition of objects like a pot.

यदि यह कारण का कार्य है, तो भी यह केवल ब्रह्म है। मैं केवल शुद्ध चेतना चाहता हूँ, घड़े जैसे वस्तुओं के ज्ञान नहीं।

7.42.40

ज्ञानात्मिकैव प्रतिभा ज्ञप्तिरेवाखिलं जगत् । ज्ञप्तिरप्यात्मतत्त्वश्रीः परिज्ञातोपशाम्यति ॥ ४० ॥

jñānātmikaiva pratibhā jñaptirevākhilaṃ jagat | jñaptirapyātmatattvaśrīḥ parijñātopaśāmyati || 40 ||

Consciousness itself is the pure awareness, and cognition is the entire world. Even cognition is the glory of the Self's reality, which becomes tranquil when fully known.

चेतना स्वयं ही शुद्ध चेतना है, और ज्ञान ही पूरा संसार है। ज्ञान भी आत्मा की वास्तविकता की महिमा है, जो पूरी तरह से जाने पर शांत हो जाती है।

7.42.41

ज्ञेयाभावे त्वनिर्वाच्या शिष्यते शाश्वतं शिवम्। अशरीराद्यविश्वात्म सर्वं शान्तमिदं ततम्॥ ४१॥

jñeyābhāve tvaniṛvācyā śiṣyate śāśvataṃ śivam | aśarīrādyaviśvātmā sarvaṃ śāntamidaṃ tatam || 41 ||

In the absence of the knowable, the eternal Shiva remains indescribable | The bodiless, all-pervading Self is all-pervasive and peaceful

ज्ञेय के अभाव में, अनिर्वाच्य शाश्वत शिव शिष्यते है | अशरीर, विश्वात्मा सर्वत्र शान्त है

7.42.42

ज्ञानज्ञेयज्ञप्तिमुक्तं दृषन्मौनमिव स्थितम्। शान्तान्तःकरणाः स्वस्थाः शिलापुत्रककोशवत्॥ ४२॥

jñānajñeyajñaptimuktaṃ dṛṣanmaunamiva sthitam | śāntāntaḥkaraṇāḥ svasthāḥ śilāputrakakośavat || 42 ||

The knowledge, the knowable, and the knower are liberated, appearing as silent as a witness | Those with peaceful inner selves are content, like the stone-hearted

ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता मुक्त हैं, साक्षी की तरह मौन दिखाई देते हैं | शान्त अन्तःकरण वाले स्वस्थ हैं, पत्थर के दिल वाले की तरह

7.42.43

चलन्तश्चालयन्तश्च ज्ञरूपा एव तिष्ठत। अज्ञेयज्ञत्वसद्रूपाः सदसत्साररूपिणः॥ ४३॥

calantaścālayantaśca jñarūpā eva tiṣṭhat | ajñeyajñatvasadrūpāḥ sadasatsārarūpiṇaḥ || 43 ||

Those who move and cause movement are in the form of knowledge | They are in the form of the unknowable knower, embodying the essence of existence and non-existence

जो चलते हैं और चलाते हैं, वे ज्ञान के रूप में हैं | वे अज्ञेय ज्ञाता के रूप में हैं, अस्तित्व और अनस्तित्व की सार को धारण करते हैं

7.42.44

आकाशकोशविशदा भवता भवभूमयः। यथास्थितं च तिष्ठन्ति गच्छन्तश्च यथागतम्॥ ४४॥

ākāśakośaviśadā bhavatā bhavabhūmayaḥ | yathāsthitaṃ ca tiṣṭhanti gacchantaśca yathāgatam || 44 ||

Those who are clear like the sky and the sheath, become the ground of existence | They remain as they are, moving according to their nature

जो आकाश और कोश की तरह स्पष्ट हैं, वे अस्तित्व के आधार बनते हैं | वे जैसे हैं वैसे ही रहते हैं, अपनी प्रकृति के अनुसार चलते हैं

7.42.45

यथाप्राप्तैककर्माणः संपद्यन्ते बुधाः परम्। अथवा सर्वसंत्यागशान्तान्तःकरणोज्ज्वलाः॥ ४५॥

yathāprāptaikakarmāṇaḥ saṃpadyante budhāḥ param | athavā sarvasaṃtyāgaśāntāntaḥkaraṇojjvalāḥ || 45 ||

Those who perform their duties as they come, attain the highest wisdom | Or, those who renounce everything and have a peaceful and radiant inner self

जो अपने कर्मों को जैसे आते हैं वैसे ही करते हैं, वे परम बुद्धि प्राप्त करते हैं | या, जो सब कुछ त्याग देते हैं और उनका अन्तःकरण शान्त और उज्ज्वल होता है

7.42.46

एकान्तेष्वेव तिष्ठन्तु चित्रकर्मार्पिता इव। संकल्पशान्तौ संकल्पपुरवत्सर्वदाखिलम्॥ ४६॥

ekānteṣveva tiṣṭhantu citrakarmārpitā iva | saṃkalpaśāntau saṃkalpapuravatsarvadākhilam || 46 ||

They should remain in solitude, like paintings, always complete in the tranquility of resolve.

वे एकान्त में रहें, जैसे चित्र, संकल्प की शान्ति में सदा पूर्ण।

7.42.47

स्वप्नवच्च प्रबुद्धस्य सदैवास्तं गतं जगत्। सनेत्ररूपानुभवं जातितोऽन्ध इव भ्रमैः ॥ ४७ ॥

svapnavacca prabuddhasya sadaivāstaṃ gataṃ jagat | sanetrarūpānubhavaṃ jātito'ndha iva bhramaiḥ || 47 ||

For the awakened one, the world is always like a dream, and the experience of forms is like the delusions of one born blind.

जागृत व्यक्ति के लिए, संसार हमेशा स्वप्न के समान होता है, और रूपों का अनुभव जन्म से अन्धे के भ्रम के समान होता है।

7.42.48

निर्वाणं वर्णयन्नज्ञस्ताप्यतेऽन्तर्न शाम्यति। कल्पनांशोपदेशेन लोकोऽविद्यामयात्मना ॥ ४८ ॥

nirvāṇaṃ varṇayannajñastāpyate'ntarna śāmyati | kalpanāṃśopadeśena loko'vidyāmayātmanā || 48 ||

The ignorant one, describing nirvana, is tormented within and does not find peace. The world, with its essence of ignorance, is taught by the doctrine of imagination.

अज्ञानी व्यक्ति, निर्वाण का वर्णन करते हुए, अन्तर्मन में पीड़ित होता है और शान्ति नहीं पाता। अज्ञान की आत्मा वाला संसार, कल्पना के उपदेश से शिक्षित होता है।

7.42.49

येन केनचिदज्ञत्वात्कृतार्थोऽस्मीति मन्यते। अकृतार्थः कृतार्थत्वं जानन्मौर्ख्यविमोहितः ॥ ४९ ॥

yena kenacidajñatvātkṛtārtho'smīti manyate | akṛtārthaḥ kṛtārthatvaṃ jānanmaurkhyavimohitaḥ || 49 ||

By whatever means, due to ignorance, one thinks 'I am accomplished.' The unaccomplished one, knowing accomplishment, is deluded by foolishness.

किसी भी तरह से, अज्ञान के कारण, व्यक्ति सोचता है 'मैं सिद्ध हूँ।' असिद्ध व्यक्ति, सिद्धि को जानकर, मूर्खता से भ्रमित होता है।

7.42.50

विज्ञास्यत्यकृतार्थत्वं क्षणान्तरकदर्थनैः। उपायं कल्पनात्मानमनुपायं विदुर्बुधाः ॥ ५० ॥

vijñāsyatyakṛtārthatvaṃ kṣaṇāntarakadarthanaiḥ | upāyaṃ kalpanātmānamanupāyaṃ vidurbudhāḥ || 50 ||

One will realize the unaccomplished state by the insignificance of the next moment. The wise know the means based on imagination as not the means.

व्यक्ति अगले क्षण की असहायता से असिद्ध अवस्था को समझेगा। बुद्धिमान लोग कल्पना पर आधारित उपाय को उपाय नहीं मानते।

7.42.51

दुःखदत्वान्निमेषेण भावाभावैषणभ्रमैः। जगद्भ्रमं परिज्ञाय यदवासनमासितम्। विरसाशेषविषयं तद्धि निर्वाणमुच्यते ॥ ५१ ॥

duḥkhadatvānniśeṣeṇa bhāvābhāvaiṣaṇabhramaiḥ| jagadbharamaṃ parijñāya yadavāsanamāsitam| virasāśeṣaviṣayaṃ taddhi nirvāṇamucyate || 51 ||

Understanding the world's delusion caused by the misery of continuous existence, desires, and illusions, that which remains is devoid of all attachments; that indeed is called Nirvana.

दुःख के कारण निरंतर अस्तित्व की पीड़ा, इच्छाओं और भ्रमों से जगत के भ्रम को समझकर, जो शेष रहता है वह सभी आसक्तियों से मुक्त होता है; वही निर्वाण कहलाता है।

7.42.52

आख्यायिकार्थप्रतिभानमेत्य संवेत्स्यचिद्वारि भराद्रवात्मा । अवेद्यचिद्रूपमशेषमच्छ पश्यन्विनिर्वासि जगत्स्वरूपम् ॥ ५२ ॥

ākhyāyikārthapratibhānametya saṃvetsyacidvāri bharāddravātmā| avedyacidrūpamaśeṣamaccha paśyanvinirvāsi jagatsvarūpam || 52 ||

Attaining the understanding of the essence of stories, one becomes immersed in the ocean of consciousness, free from all impurities. Seeing the pure form of consciousness, one dwells in the true nature of the world.

कहानियों के अर्थ को समझकर, कोई चेतना के समुद्र में डूब जाता है, सभी अशुद्धियों से मुक्त होकर। चेतना के शुद्ध रूप को देखकर, वह जगत के वास्तविक स्वरूप में निवास करता है।

7.42.53

जात्यन्धरूपानुभवानुरूपं यदागमैर्बुद्धमबोधरूपम् । अधस्पदीकृत्य तदान्तरेऽस्मिन्बोधे निपत्यानुभवो भवाभूः ॥ ५३ ॥

jātyandharūpānubhavānurūpaṃ yadāgamairbuddhamabodharūpam| adhaspadīkṛtya tadāntare'sminbodhe nipatyānubhavo bhavābhūḥ || 53 ||

That which is experienced as ignorance due to the blindness of birth, when understood through scriptures, becomes knowledge. By falling into that knowledge, the experience becomes the essence of existence.

जो जन्म की अंधता के कारण अज्ञान के रूप में अनुभव किया जाता है, जब शास्त्रों द्वारा समझा जाता है, तो वह ज्ञान बन जाता है। उस ज्ञान में गिरकर, अनुभव अस्तित्व का सार बन जाता है।

Chapter 43

7.43.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अहंतादिजगच्चेदं परिज्ञानादसत्यताम् । याति सानुभवो मोहात्सत्यमेवान्यथाधियाम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ahaṃtādijagaccedaṃ parijñānādasatyatām | yāti sānubhavo mohātsatyamevānyathādhiyām ||1||

Sri Vasistha said: This world, which begins with the sense of 'I', becomes unreal through true knowledge. The experience of reality arises from delusion, otherwise it is perceived as real.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह जगत, जो 'मैं' की भावना से शुरू होता है, सच्चे ज्ञान से असत्य हो जाता है। वास्तविकता का अनुभव भ्रम से उत्पन्न होता है, अन्यथा यह सत्य के रूप में दिखाई देता है।

7.43.2

अज्ञानज्वरमुक्तस्य बोधशीतलितात्मनः । एतदेव भवेच्चिह्नं यद्भोगाम्बु न रोचते ॥ २ ॥

ajñānajvaramuktasya bodhaśītalitātmanaḥ | etadeva bhaveccihnaṃ yadbhogāmbu na rocate ||2||

For one who is freed from the fever of ignorance and whose self is cooled by knowledge, the sign is that the water of enjoyment does not appeal.

जो अज्ञान के ज्वर से मुक्त हो गया है और जिसका आत्मा ज्ञान से शीतल हो गया है, उसके लिए चिह्न यह है कि भोग का जल आकर्षक नहीं लगता।

7.43.3

अलमन्यैः परिज्ञानैर्वाच्यवाचकविभ्रमैः । अनहंवेदनामात्रं निर्वाणं तद्विभाव्यताम् ॥ ३ ॥

alamanyaiḥ parijñānairvācyavācakavibhramaiḥ | anahaṃvedanāmātraṃ nirvāṇaṃ tadvibhāvyatām ||3||

Enough of other knowledges which are mere confusions of words and meanings. Let nirvana be contemplated as the mere absence of the sense of 'I'.

अन्य ज्ञानों से बस, जो शब्दों और अर्थों के भ्रम हैं। निर्वाण को उस रूप में ध्यान किया जाए जो 'मैं' की भावना की अनुपस्थिति है।

7.43.4

परिज्ञाता यथा स्वप्ने पदार्था रसयन्ति नो । न च सन्ति तथैवास्मिन्नहं जगदिदंभ्रमे ॥ ४ ॥

parijñātā yathā svapne padārthā rasayanti no | na ca santi tathaivāsminnahaṃ jagadidaṃbhraṃe ||4||

Just as objects known in a dream do not give pleasure, so too in this delusion of the world and the 'I', they do not exist.

जैसे स्वप्न में जाने गए पदार्थ आनंद नहीं देते, वैसे ही इस जगत और 'मैं' के भ्रम में भी वे मौजूद नहीं हैं।

7.43.5

यथा स्वभावनाद्यक्षस्तरौ सस्वजनं पुरम् । पश्यत्यसत्यमेवैवं जीवः पश्यति संसृतिम् ॥ ५ ॥

yathā svabhāvanādyakṣastarau sasvajanaṃ puraṃ | paśyatyasatyamevaivaṃ jīvaḥ paśyati saṃsṛtim ||5||

Just as a ghost, by its nature, sees a tree with a city and people, so too the individual soul sees the unreal cycle of existence.

जैसे एक भूत, अपने स्वभाव के अनुसार, एक पेड़ को एक शहर और लोगों के साथ देखता है, वैसे ही जीवात्मा असत्य जन्म और मृत्यु के चक्र को देखता है।

7.43.6

विभ्रमात्मा यथा यक्षो यक्षलोकश्च ते मिथः । सद्रूपौ सुस्थितौ मिथ्या तथाहंत्वजगद्भ्रमौ ॥ ६ ॥

vibhramātmā yathā yakṣo yakṣalokashca te mithaḥ | sadrūpau susthitau mithyā tathāhaṃtvajagadbhramau || 6 ||

Just as the illusion of a Yaksha (a mythical being) and the world of Yakshas appear real to each other, so too the illusion of the self and the world appear real.

जैसे यक्ष और यक्षलोक एक-दूसरे के लिए वास्तविक प्रतीत होते हैं, वैसे ही आत्मा और जगत् का भ्रम भी वास्तविक प्रतीत होता है।

7.43.7

अनावरणतोऽरण्ये यक्षा विभ्रमरूपिणः । यथा स्फुरन्ति भूतानि तथेमानि चतुर्दश ॥ ७ ॥

anāvaraṇato'raṇye yakṣā vibhramarūpiṇaḥ | yathā sphuranti bhūtāni tathemaani chaturdaśa || 7 ||

Just as in an uncovered forest, Yakshas appear in illusory forms, so do these fourteen beings manifest.

जैसे खुले वन में यक्ष भ्रम रूप में प्रकट होते हैं, वैसे ही ये चौदह भूत भी प्रकट होते हैं।

7.43.8

भ्रममात्रमहं मिथ्यैवेति बुद्ध्वा विभावयन् । यक्षोऽयक्षत्वमायाति चित्तं चित्तत्त्वतामिदम् ॥ ८ ॥

bhramamātramahaṃ mithyaiveti buddhvā vibhāvayan | yakṣo'yakṣatvamāyāti cittaṃ cittattvatāmidam || 8 ||

Realizing that the self is merely an illusion and false, the Yaksha attains non-Yaksha-ness, and the mind attains the state of pure consciousness.

यह समझकर कि आत्मा केवल भ्रम और मिथ्या है, यक्ष अयक्षत्व को प्राप्त होता है, और मन शुद्ध चेतना की अवस्था को प्राप्त होता है।

7.43.9

निरस्तकलनाशङ्कं त्यागग्रहणवर्जितम् । अविसारिसमस्तेच्छं शान्तमास्व यथास्थितम् ॥ ९ ॥

nirastakalanāśaṅkaṃ tyāgagrahaṇavarjitam | avisārisamastecchaṃ śāntamāsva yathāsthitam || 9 ||

Remain calm and as you are, free from the fear of the destruction of time, devoid of attachment and aversion, and with all desires dissolved.

समय के विनाश के भय से मुक्त, आसक्ति और वैराग्य से रहित, और सभी इच्छाओं को विलीन करके, शांत और जैसे हो वैसे ही रहो।

7.43.10

असत्तासंभवं दृश्यं द्रष्ट्रात्मकमिदं ततम् । अथवा नैव द्रष्ट्रात्म सदवाच्यं किमास्यते ॥ १० ॥

asattāsaṃbhavaṃ dṛśyaṃ draṣṭṛātmakamidaṃ tatam | athavā naiva draṣṭṛātma sadavācyaṃ kimāsyate || 10 ||

The visible world, which is pervaded by the witnessing self, is unreal and non-existent. Or, if there is no witnessing self, what can be said to exist?

जो दृश्य जगत् साक्षी आत्मा से व्याप्त है, वह अवास्तविक और असत् है। या, अगर साक्षी आत्मा नहीं है, तो क्या अस्तित्व में है?

7.43.11

वसन्तरसपूरस्य यथा विटपगुल्मता । स्वरूपमात्रभरितसंविदः सर्गता तथा ॥ ११ ॥

vasantarasapūrasya yathā viṭapagulmatā | svarūpamātrabharitasaṃvidaḥ sargatā tathā || 11 ||

Just as the spring season is filled with the essence of new leaves and sprouts, the pure consciousness is filled with the essence of creation.

जैसे वसन्त ऋतु नए पत्तों और अंकुरों से भरी होती है, वैसे ही शुद्ध चेतना सृष्टि के सार से भरी होती है।

7.43.12

यदिदं जगदाभासं शुद्धं चिन्मात्रवेदनम्। कात्रैकता द्विता का वा निर्वाणमलमास्यताम्॥ १२॥

yadidaṃ jagadābhāsaṃ śuddhaṃ cinmātravedanam | kātraikatā dvitā kā vā nirvāṇamalamāsyatām || 12 ||

If this world is merely an appearance, a pure experience of consciousness, then what is the duality? Let it be absorbed in Nirvana.

यदि यह संसार केवल एक अभास है, शुद्ध चेतना का अनुभव, तो द्वैत क्या है? यह निर्वाण में विलीन हो जाए।

7.43.13

भूयतां चिन्मयव्योम्ना पीयतां परमो रसः। स्थीयतां विगताशङ्कं निर्वाणानन्दनन्दने॥ १३॥

bhūyatāṃ cinmayavyomnā pīyatāṃ paramo rasaḥ | sthīyatāṃ vigatāśaṅkaṃ nirvāṇānandanandane || 13 ||

May the bliss of Nirvana be experienced, free from doubts, in the vast expanse of consciousness.

निर्वाण का आनंद चेतना के विस्तृत आकाश में, संदेहों से मुक्त होकर अनुभव हो।

7.43.14

किमेतास्वतिशून्यासु संसारारण्यभूमिषु। मानवा वातहरिणा भ्रमथो भ्रान्तबुद्धयः॥ १४॥

kimetāsvatiśūnyāsu saṃsārāraṇyabhūmiṣu | mānavā vātahariṇā bhramatho bhrāntabuddhayaḥ || 14 ||

Why do humans, with deluded minds, wander like deer chasing the wind in the empty wilderness of the world?

दुनिया की खाली वनभूमि में हवा के हिरन की तरह क्यों भटकते हैं मानव दुःखी मन वाले?

7.43.15

जगत्त्रयमरीच्यम्बु विप्रलब्धान्धबुद्धयः। मा धावत गतव्यग्रमाशयोपहृताशयाः॥ १५॥

jagattrayam arīcyambu vipralabdhāndhabuddhayaḥ | mā dhāvata gatavyagramāśayopahratāśayāḥ || 15 ||

Do not run after the mirage of the three worlds, with minds deceived and blinded by desires.

इच्छाओं से धोखा दिए और अन्धे मन से, तीन लोकों के मृगतृष्णा के पीछे न भागो।

7.43.16

रूपालोकमनस्कारमृगतृष्णाम्बुपायिनः। व्यर्थमायासमायूंषि मा मा क्षपयतैणकाः॥ १६॥

rūpālokamanaskāramṛgatṛṣṇāmbupāyinaḥ | vyarthamāyāsamāyūṃṣi mā mā kṣapayataiṇakāḥ || 16 ||

Do not waste your efforts in vain pursuits of beauty, wealth, and desires, O seekers of worldly pleasures.

हे विषय भोगों के इच्छुक, रूप, धन और इच्छाओं की व्यर्थ खोज में अपनी शक्ति मत बर्बाद करो।

7.43.17

जगद्गन्धर्वनगरगुरुगर्वेण नश्यथ। सुखरूपाणि दुःखानि नाशनायैव पश्यथ॥ १७॥

jagadgandharvanagaragurugarveṇa naśyatha | sukharūpāṇi duḥkhāni nāśanāyaiva paśyatha || 17 ||

You are being destroyed by the pride of worldly pleasures. See that even pleasures are a form of suffering leading to destruction.

तुम विषय भोगों के घमंड से नष्ट हो रहे हो। देखो कि सुख भी दुःख का रूप है जो विनाश की ओर ले जाता है।

7.43.18

जगत्केशोण्ड्रकभ्रान्त्यै मा महाम्बरमध्यगम्। अवलोकयताभ्रान्ते स्वरूपे परिणम्यताम्॥ १८॥

jagatkeśoṇḍrakabhrāntyai mā mahāmbaramadhyagam | avalokayatābhraṇte svarūpe pariṇamyatām || 18 ||

Do not enter the great illusion of the world's delusions. Look at the confused one and transform into your true nature.

संसार के भ्रम की महान भ्रांति में मत प्रवेश करो। भ्रमित को देखो और अपने वास्तविक स्वरूप में परिवर्तित हो जाओ।

7.43.19

मानवा वातलोलोच्चपत्रप्राप्ताम्बुभङ्गुर। मानवासु न चास्वन्धगर्भशय्यासु सुप्यताम्॥ १९॥

mānavā vātaloloccpatraprāptāmbubhaṅgura | mānavāsu na cāsvandhagarbhaśayyāsu supyatām || 19 ||

O humans, do not sleep in the unstable cradles of worldly pleasures. They are as fragile as a drop of water on a lotus leaf.

हे मनुष्यो, संसार के अस्थिर पलंगों में मत सोओ। वे कमल के पत्ते पर पड़े पानी की बूँद की तरह नाजुक हैं।

7.43.20

अविराममनाद्यन्ते स्वभावे शान्तमास्यताम्। द्रष्टृदृश्यदशादोषादस्वभावाद्विनश्यताम्॥ २०॥

avirāmamanādyante svabhāve śāntamāsyatām | draṣṭṭadṛśyadaśādoṣādasvabhāvādvinasyatām || 20 ||

Remain peaceful in your eternal nature, which is without beginning or end. The seer and the seen are both flawed; transcend this duality and dissolve into your true nature.

अपने अनादि और अनंत स्वभाव में शांत रहो। देखने वाला और देखा जाने वाला दोनों ही दोषपूर्ण हैं; इस द्वैत से पार होकर अपने वास्तविक स्वभाव में विलीन हो जाओ।

7.43.21

अज्ञावबुद्धः संसारः स हि नास्ति मनागपि। अवशिष्टं च यत्सत्यं तस्य नाम न विद्यते॥ २१॥

ajñāvabuddhaḥ saṃsāraḥ sa hi nāsti manāgapi | avaśiṣṭaṃ ca yatsatyaṃ tasya nāma na vidyate || 21 ||

The world is perceived due to ignorance; it does not exist even a little. What remains is the truth, which has no name.

अज्ञान के कारण संसार का बोध होता है; वह थोड़ा भी नहीं है। जो शेष है वह सत्य है, जिसका कोई नाम नहीं है।

7.43.22

त्रोटयित्वा तु तृष्णायःशृङ्खलावलितं बलात्। संसारपञ्जरं तिष्ठ सर्वस्योर्ध्वं मृगेन्द्रवत्॥ २२॥

troṭayitvā tu tṛṣṇāyaḥśṛṅkhalāvalitaṃ balāt | saṃsārapañjaraṃ tiṣṭha sarvasyaordhvaṃ mṛgendravat || 22 ||

Having broken the chains of desire, stand firm in the cage of the world, like a lion, above all.

इच्छा की शृंखलाओं को तोड़कर, संसार के पिंजरे में सिंह की तरह सबसे ऊपर खड़े रहो।

7.43.23

आत्मात्मीयग्रहभ्रान्तिशान्तिमात्रा विमुक्तता। यथा तथा स्थितस्यापि सो स्वसत्तैव योगिनः॥ २३॥

ātmātmīyagrahabhrāntiśāntimātrā vimuktatā | yathā tathā sthitasyāpi so svasattaiava yoginaḥ || 23 ||

Freedom is merely the cessation of the delusion of grasping 'I' and 'mine'. Even while situated thus, that is the true nature of the yogi.

मुक्ति केवल 'मैं' और 'मेरा' ग्रहण की भ्रांति की समाप्ति है। ऐसे स्थित होने पर भी, यही योगी की सच्ची प्रकृति है।

7.43.24

निर्वाणताऽवासनता पराऽपतापताज्ञता । संसाराध्वनि खिन्नस्य शान्ता विश्रामभूमयः ॥ २४ ॥

nirvāṇatā'vāsanatā parā'patāpatājñatā | saṃsārādhvani khinnasya śāntā viśrāmabhūmayaḥ || 24 ||

The knowledge of the supreme state of liberation is the peaceful resting place for one who is weary on the path of the world.

मुक्ति की परम अवस्था का ज्ञान संसार के पथ पर थके हुए व्यक्ति के लिए शांतिपूर्ण विश्राम स्थान है।

7.43.25

तज्ज्ञज्ञातो न मूर्खाणां मूर्खज्ञातो न तद्विदाम् । विद्यते जगदर्थोऽसाववाच्यार्थमयो मिथः ॥ २५ ॥

tajjñajñāto na mūrkhāṇāṃ mūrkhajñāto na tadvidām | vidyate jagadartho'sāvavācyārthamayo mithaḥ || 25 ||

The wise do not know that which is known by fools, and fools do not know that which is known by the wise. The meaning of the world is inexpressible and mutual.

बुद्धिमान लोग उसे नहीं जानते जो मूर्खों द्वारा जाना जाता है, और मूर्ख उसे नहीं जानते जो बुद्धिमान लोगों द्वारा जाना जाता है। संसार का अर्थ अव्यक्त और परस्पर है।

7.43.26

विश्वता भ्रान्तिसंशान्तौ संस्थितैव न लभ्यते । महार्णवाम्बुवलिता पुत्रिकेव पयोमयी ॥ २६ ॥

viśvatā bhrāntisaṃśāntau saṃsthitaiva na labhyate | mahārṇavāmbuvalitā putrikeva payomayī || 26 ||

The worldly existence cannot be found in the state of peace from delusion, just as a water-doll made of ocean water.

भ्रान्ति से शान्ति की स्थिति में विश्वता प्राप्त नहीं होती, जैसे समुद्र के जल से बनी पुतली जलमय होती है।

7.43.27

भ्रान्तिशान्तौ प्रबुद्धस्य विनिर्वाणस्य विश्वता । यथास्थितैव गलिता विद्यते च यथास्थितम् ॥ २७ ॥

bhrāntiśāntau prabuddhasya vinirvāṇasya viśvatā | yathāsthitaiva galitā vidyate ca yathāsthitam || 27 ||

In the state of peace from delusion, the worldly existence of the awakened and liberated one dissolves and exists as it is.

भ्रान्ति से शान्ति की स्थिति में, जाग्रत और मुक्त व्यक्ति की विश्वता घुल जाती है और जैसी है वैसी ही रहती है।

7.43.28

निर्दग्धतृणभस्माली क्वापि याति यथानिलैः । सतां स्वभावविश्रामैः क्वापि याति तथा जगत् ॥ २८ ॥

nirdagdhatṛṇabhasmālī kvāpi yāti yathānilaiḥ | satāṃ svabhāvaviśrāmaiḥ kvāpi yāti tathā jagat || 28 ||

Just as burnt grass ashes disappear somewhere with the wind, so does the world disappear somewhere with the natural rest of the virtuous.

जैसे जले हुए घास की राख हवा के साथ कहीं चली जाती है, वैसे ही संतों के स्वाभाविक विश्राम के साथ विश्व कहीं चला जाता है।

7.43.29

जगद्ब्रह्मपदार्थस्य संनिवेशः स तूत्तमः । ब्रह्मशब्दार्थरूपात्मा न जगच्छब्दकार्यभाक् ॥ २९ ॥

jagadbrahmapadārthasya saṃniveśaḥ sa tūttamaḥ | brahmaśabdārtharūpātmā na jagacchabdakāryabhāk || 29 ||

The best abode is the meaning of the word 'Brahman', which is not a part of the worldly actions.

सबसे उत्तम निवास 'ब्रह्म' शब्द के अर्थ में है, जो विश्व के कार्यों का भाग नहीं है।

7.43.30

अविज्ञातस्य बालस्य पदार्था यादृशा इमे । विदुषस्तादृशा एव तिष्ठतः क्षीणवासनम् ॥ ३० ॥

avijñātasya bālasya padārthā yādṛśā ime | viduṣastādṛśā eva tiṣṭhataḥ kṣīṇavāsanam || 30 ||

The objects of the ignorant child are as they are, and they remain the same for the wise one whose desires have diminished.

अज्ञानी बालक के पदार्थ जैसे हैं, वैसे ही ज्ञानी के लिए भी हैं, जिसकी वासनाएँ क्षीण हो गई हैं।

7.43.31

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी । यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥ ३१ ॥

yā niśā sarvabhūtānāṃ tasyāṃ jāgarti saṃyamī | yasyāṃ jāgrati bhūtāni sā niśā paśyato muneḥ || 31 ||

What is night for all beings is the time when the self-controlled person is awake | What is day for all beings is night for the wise seer

जो रात सभी प्राणियों के लिए है, उस समय स्वयं-नियंत्रित व्यक्ति जागता है | जो दिन सभी प्राणियों के लिए है, वह रात है बुद्धिमान दर्शक के लिए

7.43.32

स्थितमेवाऽविरामी यज्जाग्रदस्य सुषुप्तवत् । चित्रावलोकित इव जाग्रत्योऽस्य रसैषणाः ॥ ३२ ॥

sthitamevā'virāmī yajjāgradasy suṣuptavat | citrāvalokita iva jāgratyo'sy rasaīṣaṇāḥ || 32 ||

The unceasing, ever-present reality appears as if asleep to the awake | The waking experiences of the senses are like mere illusions

अविरामी, सदा उपस्थित वास्तविकता जाग्रत को सोयी हुई प्रतीत होती है | जाग्रत अवस्था में इंद्रियों के अनुभव मात्र भ्रम के समान हैं

7.43.33

जात्यन्धरूपानुभवसमं भुवनवेदनम् । भ्रान्तप्रायमसद्रूपं ज्ञस्य भाति न भाति च ॥ ३३ ॥

jātyandharūpānubhavasamaṃ bhuvanavedanam | bhrāntaprāyamasadrūpaṃ jñasya bhāti na bhāti ca || 33 ||

The experience of the world is like the perception of a blind person | It appears real yet unreal to the wise

संसार का अनुभव अंधे व्यक्ति की अनुभूति के समान है | यह ज्ञानी को वास्तविक लेकिन अवास्तविक भी प्रतीत होता है

7.43.34

विमूढदुःखं त्रिजगद्विमूढविषयं न सत् । स्वप्ने स्वप्नतया ज्ञाते रूपालोकमनःक्रियाः ॥ ३४ ॥

vimūḍhaduḥkhaṃ trijagadvimūḍhaviṣayaṃ na sat | svapne svapnatayā jñāte rūpālokamanḥkriyāḥ || 34 ||

The suffering of the deluded is not real in the three worlds | In dreams, the forms and activities are known to be dreams

भ्रमित का दुःख तीनों लोकों में वास्तविक नहीं है | स्वप्न में, रूप और गतिविधियाँ स्वप्न के रूप में ज्ञात होती हैं

7.43.35

न स्वदन्ते यथा तद्वज्जाग्रत्स्वप्ने स्फुरन्तु मा । निर्विभागः समाश्वस्तोऽविरोधं परमागतः ॥ ३५ ॥

na svadante yathā tadvajjāgratsvapre sphurantu mā | nirvibhāgaḥ samāśvasto'virodhaṃ paramāgataḥ || 35 ||

Just as they do not taste, so too in the waking dream they should not shine | Free from division, fully assured, having reached the supreme non-conflict

जैसे वे स्वाद नहीं लेते, वैसे ही जाग्रत स्वप्न में वे चमकने नहीं चाहिए | विभाजन से मुक्त, पूर्ण विश्वास से युक्त, परम अविरोध तक पहुँचा हुआ

7.43.36

आशीतलान्तःकरणो निर्वाणो ज्ञोऽवतिष्ठते । तज्ज्ञस्याकृष्टमुक्तस्य समं ध्यानं विना स्थितिः ॥ ३६ ॥

āśītalāntaḥkaraṇo nirvāṇo jño'vatiṣṭhate | tajjñasyākṛṣṭamuktasya samaṃ dhyānaṃ vinā sthitiḥ || 36 ||

The one who has a cool mind and is liberated remains steadfast | Without the equanimity of the realized one, there is no stability || 36 ||

जिसका मन शांत है और जो मुक्त है, वह स्थिर रहता है | ज्ञानी के समान ध्यान के बिना स्थिति नहीं होती || ३६ ||

7.43.37

निम्नं विनैव तोयस्य न संभवति काचन । अर्थ एव मनस्कारो मन एवार्थरञ्जनम् ॥ ३७ ॥

nimnaṃ vinaiva toyasya na saṃbhavati kācana | artha eva manaskāro mana evārtharañjanam || 37 ||

Without depth, water cannot exist | Meaning itself is the mind's creation, and the mind itself is the enjoyment of meaning || 37 ||

गहराई के बिना पानी नहीं होता | अर्थ खुद मन की कृति है, और मन खुद अर्थ का आनंद है || ३७ ||

7.43.38

एष एवैष आभासः सबाह्याभ्यन्तरात्मकः । आसमुद्रं नदीवाहशतसंघमयात्मकम् ॥ ३८ ॥

eṣa evaiṣa ābhāsaḥ sabāhyābhyantarātmakaḥ | āsamudraṃ nadīvāhaśatasaṃghamayātmakam || 38 ||

This very appearance is both external and internal | Like the confluence of a hundred rivers flowing into the ocean || 38 ||

यही प्रकटन बाहरी और अंतर्निहित दोनों है | जैसे सौ नदियों का समूह समुद्र में बहता है || ३८ ||

7.43.39

यथैकश्लेषपिण्डात्म वहत्यम्बु तरङ्गिणाम् । सबाह्याभ्यन्तराकारमर्थानर्थमयात्मकम् ॥ ३९ ॥

yathaikaśleṣapiṇḍātma vahatyambu taraṅgiṇām | sabāhyābhyantarākāramarthānarthamayātmakam || 39 ||

Just as a single mass of water carries the waves | It has both external and internal forms, full of meaning and meaninglessness || 39 ||

जैसे एक ही जल का पिंड लहरों को लेकर चलता है | यह बाहरी और अंतर्निहित दोनों रूपों में है, अर्थपूर्ण और अर्थहीन || ३९ ||

7.43.40

मन एव स्फुरत्यर्थनिर्भासं व्याततं तथा । नास्त्यर्थमनसोर्द्वित्वं यथा जलतरङ्गयोः ॥ ४० ॥

mana eva sphuratyarthanirbhāsaṃ vyātataṃ tathā | nāstyarthamanasordvitvaṃ yathā jalataraṅgayoḥ || 40 ||

The mind itself shines forth the appearance of meaning, spread out thus | There is no duality between meaning and mind, just as there is no duality between water and waves || 40 ||

मन खुद अर्थ की प्रकटन को चमकाता है, इस प्रकार फैला हुआ | अर्थ और मन के बीच कोई द्वैत नहीं है, जैसे जल और लहरों के बीच कोई द्वैत नहीं है || ४० ||

7.43.41

एकाभावे द्वयोः शान्तिः पवनस्पन्दयोरिव । नूनमेकोपशान्त्यैव निःसारे परमार्थतः ॥ ४१ ॥

ekābhāve dvayoḥ śāntiḥ pavanaspaṇḍayoriva | nūnamekopaśāntyaiva niḥsāre paramārthataḥ || 41 ||

When one ceases, both become calm like the wind and its vibrations | Indeed, only one's tranquility is essential in the ultimate reality

जब एक विराम होता है, तो दोनों शान्त हो जाते हैं जैसे हवा और उसकी कंपनें | निश्चय ही, केवल एक की शान्ति ही परम सत्य में आवश्यक है

7.43.42

एकत्वादर्थमनसी सममेवाशु शाम्यतः । अर्थः संकल्परूपात्मा नेहितव्यो विजानतो ॥ ४२ ॥

ekatvādarathamanasī samamevāśu śāmyataḥ | arthaḥ saṃkalparūpātmā nehitavyo vijānato || 42 ||

From oneness, the mind and the object become calm immediately | The object, which is of the nature of resolve, should not be directed by the knower

एकत्व से, मन और वस्तु तुरंत शांत हो जाते हैं | वस्तु, जो संकल्प की प्रकृति की है, को ज्ञानी द्वारा निर्देशित नहीं किया जाना चाहिए

7.43.43

मनश्च सम्यग्ज्ञानेन शान्तिरेवं भवेत्तयोः । अनष्टे नश्यतश्चैतै ज्ञस्यार्थमनसी स्वतः ॥ ४३ ॥

manaśca samyajjñānena śāntirevaṃ bhavettayoḥ | anaṣṭe naśyataścaitai jñasyārthamanasī svataḥ || 43 ||

And the mind, through right knowledge, thus becomes calm for both | In the unreal, these perish by themselves for the knower of the object and mind

और मन, सही ज्ञान से, इस प्रकार दोनों के लिए शांत हो जाता है | असत्य में, ये स्वयं नष्ट हो जाते हैं ज्ञानी के लिए वस्तु और मन

7.43.44

मृन्मये द्विषति ज्ञानाद्विषद्भावभये यथा । यथासंख्यं स्थिते एव ज्ञस्यार्थमनसी सदा ॥ ४४ ॥

mṛṇmaye dviṣati jñānāddviṣadbhāvabhaye yathā | yathāsaṃkhyam sthite eva jñasyārthamanasī sadā || 44 ||

Just as in a clay pot, the fear of duality disappears through knowledge | Similarly, for the knower, the object and mind always remain as they are

जैसे मिट्टी के घड़े में, ज्ञान से द्वैत का भय समाप्त हो जाता है | इसी प्रकार, ज्ञानी के लिए, वस्तु और मन हमेशा वैसे ही रहते हैं

7.43.45

किमप्यपूर्वमेवान्यत्संपन्ने भावरूपिणि । संहितार्थजगत्कालोऽप्यज्ञोऽज्ञविषयोऽप्यसत् ॥ ४५ ॥

kimapyapūrvamevānyatsaṃpanne bhāvarūpiṇi | saṃhitārthajagatkālo'pyajño'jñaviṣayo'pyasat || 45 ||

Anything that is new is different when the form is complete | The combined object, world, and time are also ignorant, the object of the ignorant, and unreal

जो कुछ भी नया है वह अलग है जब रूप पूर्ण होता है | संयुक्त वस्तु, संसार, और समय भी अज्ञानी, अज्ञानी का विषय, और असत्य हैं

7.43.46

पार्श्वसुप्तनरस्वप्न इव क्लीबाग्रयक्षवत् । ज्ञस्य साज्ञं जगन्नास्ति वीरस्येव पिशाचधीः ॥ ४६ ॥

pārśvasuptanarasvapna iva klībāgrayakṣavat| jñasya sājñaṃ jagannāsti vīrasyeva piśācadhīḥ || 46 ||

Just as a sleeping person next to a man sees a dream, the world does not exist for the knower, just as a hero does not have the mind of a demon.

जैसे एक सोए हुए व्यक्ति के पास एक सपना देखता है, वैसे ही ज्ञानी के लिए संसार नहीं होता, जैसे एक वीर के पास पिशाच का मन नहीं होता।

7.43.47

ज्ञमज्ञो भावयत्यज्ञं चिरं वन्ध्यापि वर्धते । विनैव ज्ञातशब्दार्थमर्थभावमिवागतम् ॥ ४७ ॥

jñamajño bhāvayatyajñaṃ ciraṃ vandhyāpi vardhate| vinaiva jñātaśabdārthamarthabhāvamivāgatam || 47 ||

The ignorant person thinks the ignorant to be knowledgeable, just as a barren woman grows old without knowing the meaning of words and objects.

अज्ञानी व्यक्ति अज्ञानी को ज्ञानी समझता है, जैसे एक वंध्या महिला बिना शब्द और अर्थ के ज्ञान के बूढ़ी हो जाती है।

7.43.48

स्थितं बोधमनाद्यन्तं स्वभावं सर्गगं विदुः। मनः शब्दार्थरहितं विभागान्तविवर्जितम् ॥ ४८ ॥

sthitaṃ bodhamanādyantaṃ svabhāvaṃ sargagaṃ viduḥ| manaḥ śabdārtharahitaṃ vibhāgāntavivarjitam || 48 ||

They know the nature of the mind, which is eternal and without beginning or end, devoid of words and meanings, and free from divisions and ends.

वे मन की प्रकृति को जानते हैं, जो अनादि और अनंत है, शब्दों और अर्थों से रहित है, और विभाजन और अंत से मुक्त है।

7.43.49

बोधवारिमनोबुद्धितरङ्गमिव निर्मलम्। क्व संभवत एवान्तः के वार्थमनसी किल ॥ ४९ ॥

bodhavārimanobuddhitaraṅgamiva nirmalam| kva saṃbhava ta evāntaḥ ke vārthamanasī kila || 49 ||

Where does the pure wave of the mind's knowledge arise? Who indeed are the thoughts in the mind?

ज्ञान की शुद्ध लहर मन में कहाँ उत्पन्न होती है? मन में विचार कौन हैं?

7.43.50

निरर्थिकैव विभ्रान्तिः स्वभावमयमास्यताम्। शुद्धबोधस्वभावस्थैराकाशमिव शारदैः ॥ ५० ॥

nirarthikaiva vibhrāntiḥ svabhāvamayamāsyatām| śuddhabodhasvabhāvasthairākāśamiva śāradaiḥ || 50 ||

Delusion is indeed meaningless, and it should be abandoned as it is of the nature of illusion. The pure nature of knowledge is like the sky with autumn clouds.

भ्रम निरर्थक है, और इसे छोड़ देना चाहिए क्योंकि यह भ्रांति की प्रकृति का है। ज्ञान की शुद्ध प्रकृति शरद ऋतु के बादलों वाले आकाश की तरह है।

7.43.51

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तान्तैर्मनस्त्वं नानुभूयते। विधूयानन्तनानात्वमसद्भावमनामये ॥ ५१ ॥

jāgratsvapnasuṣuptāntairmanastvaṃ nānubhūyate | vidhūyānantanānātvamasadbhāvamanāmaye || 51 ||

In the states of waking, dreaming, and deep sleep, you do not experience the mind | Having removed the infinite diversity and non-existence, you are free from disease

जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति की अवस्थाओं में, आप मन का अनुभव नहीं करते | अनन्त विविधता और असत् भाव को दूर करके, आप रोगमुक्त हो जाते हैं

7.43.52

ज्ञेयं रज्जुरिवाशेषं स्वभावे तिष्ठ चिद्घने। ज्ञप्तिरेवान्तरं बाह्यं चार्थत्वमधितिष्ठति ॥ ५२ ॥

jñeyaṃ rajjurivāśeṣaṃ svabhāve tiṣṭha cidghane | jñaptirevāntaraṃ bāhyaṃ cārthatvamadhitiṣṭhati || 52 ||

Know the rope-like nature of all things, abide in your true nature, O consciousness | The perception itself is the inner and outer reality

सभी चीजों की रस्सी जैसी प्रकृति को जानें, अपनी वास्तविक प्रकृति में रहें, हे चेतना | प्रत्यक्ष अनुभव ही आन्तरिक और बाह्य वास्तविकता है

7.43.53

बीजं शाखाफलानीव क्वातोऽर्थमनसी वद । ज्ञेयासंभवतो ज्ञप्तिरप्यनाख्यं पदं गता ॥ ५३ ॥

bījaṃ śākhāphalānīva kvāto'rthamanasī vada | jñeyāsaṃbhavato jñaptirapyanākhyaṃ padaṃ gatā || 53 ||

Like a seed and its branches and fruits, where does the meaning of the mind go? The perception also has gone to the inexpressible state from the possibility of being known

एक बीज और उसकी शाखाएँ और फल की तरह, मन का अर्थ कहाँ चला जाता है? प्रत्यक्ष अनुभव भी जाने की संभावना से अभिव्यक्त न किया जा सकने वाली अवस्था में चला गया है

7.43.54

शान्ताशेषविशेषात्मा तेन शेषोऽस्ति सत्स्वभाः । अर्थ एव मनस्कारः स चाभावात्मको भ्रमः ॥ ५४ ॥

śāntāśeṣaviśeṣātmā tena śeṣo'sti satsvabhāḥ | artha eva manaskāraḥ sa cābhāvātmako bhramaḥ || 54 ||

The self is the peaceful essence of all distinctions, therefore what remains is the true nature | The meaning itself is a mental impression, and that is an illusion of non-existence

आत्मा सभी भेदों की शांत सत्ता है, इसलिए जो शेष है वह सच्ची प्रकृति है | अर्थ खुद ही एक मानसिक संस्कार है, और वह असत् भाव का भ्रम है

7.43.55

मन एवार्थसंस्कारः स चाभावात्मको भ्रमः । सर्वात्मत्वादजस्यैतदप्यकारणकं मनः ॥ ५५ ॥

mana evārthasaṃskāraḥ sa cābhāvātmako bhramaḥ | sarvātmatvādajasyaitadapyakāraṇakaṃ manaḥ || 55 ||

The mind itself is a mental impression of meaning, and that is an illusion of non-existence | Due to the all-pervading nature of the unborn, this mind is also without cause

मन खुद ही अर्थ का मानसिक संस्कार है, और वह असत् भाव का भ्रम है | अजन्मा की सर्वव्यापी प्रकृति के कारण, यह मन भी अकारण है

7.43.56

भ्रमानुभवतोऽर्थश्च मिथ्यैवास्तीव भासते । अकारणकमेवार्थनिर्भासं भासते मनः ॥ ५६ ॥

bhrmānubhavato'rthaśca mithyaivāstīva bhāsate | akāraṇakamevārthanirbhāsaṃ bhāsate manaḥ || 56 ||

The object of delusional experience appears to be real, but it is indeed false. The mind perceives the object as if it were without cause.

भ्रम के अनुभव का विषय वास्तविक प्रतीत होता है, परंतु वह मिथ्या है। मन उस विषय को कारणरहित प्रतीत करता है।

7.43.57

विद्युद्विलसिताकारमस्थिरं तरलायते । त्वं मनस्कारमात्रात्मा संसृतौ विभ्रमायसे ॥ ५७ ॥

vidyudvilasitākāramasthiraṃ taralāyate | tvaṃ manaskāramātrātmā saṃsṛtau vibhramāyase || 57 ||

Like the unstable flickering of lightning, you waver in the cycle of existence due to mental impressions alone.

बिजली की चमक की तरह अस्थिर, तुम मानसिक संस्कारों के कारण अस्तित्व के चक्र में भटकते हो।

7.43.58

स्वभावैकपरिज्ञानान्नासि नापि भ्रमायसे । मनसैव हि संसार आत्मबोधेन शाम्यति ॥ ५८ ॥

svabhāvaikapariññānānnāsi nāpi bhramāyase | manasaiva hi saṃsāra ātmabodhena śāmyati || 58 ||

By the knowledge of the true nature, you are neither existent nor deluded. Indeed, the world is calmed by the knowledge of the self alone.

सत्य स्वभाव के ज्ञान से, तुम न तो अस्तित्व में हो न ही भ्रम में हो। वास्तव में, आत्मज्ञान से ही संसार शांत होता है।

7.43.59

शुक्तिरूप्यभ्रमाकारो जनो मिथ्यैव ताम्यति । अभावभावस्तु परं बोधरूपमसंसृतिः ॥ ५९ ॥

śuktirūpyabhramākāro jano mithyaiva tāmyati | abhāvabhāvas tu paraṃ bodharūpamasansṛtiḥ || 59 ||

People, deluded by the illusion of mistaking a shell for silver, are indeed false. However, the ultimate reality is the absence of absence, which is the form of knowledge and non-attachment.

शंख को चाँदी समझने के भ्रम से ग्रस्त लोग वास्तव में मिथ्या हैं। हालाँकि, परम सत्य अभाव का अभाव है, जो ज्ञान और अनासक्ति का रूप है।

7.43.60

निर्वाणादितरा सत्ता दुःखायाहमिति भ्रमः । मृगतृष्णाम्बुरूपोऽहमसच्छून्यस्वरूपकः ॥ ६० ॥

nirvāṇāditrā sattā duḥkhāyāhamiti bhramaḥ | mṛgatṛṣṇāmburūpo'hamasacchūnyasvarūpakaḥ || 60 ||

Existence other than Nirvana is suffering, this is the delusion of 'I'. I am like the mirage water, devoid of reality, empty in nature.

निर्वाण से अलग अस्तित्व दुःख है, यह 'मैं' का भ्रम है। मैं मृगतृष्णा जैसा पानी हूँ, वास्तविकता से रहित, शून्य स्वरूप का हूँ।

7.43.61

इत्येवात्मपरिज्ञानादहमित्येव शाम्यति । ज्ञात्वा ज्ञानमयो भूत्वा सबाह्याभ्यन्तरार्थताम् ॥ ६१ ॥

ityevātmparijñānādahamityeva śāmyati | jñātvā jñānamayo bhūtvā sabāhyābhyantarārthatām || 61 ||

Thus, by the knowledge of the Self, the sense of 'I' is pacified. Having known and become one with knowledge, one attains the reality of both the external and internal.

इस प्रकार, आत्मज्ञान से 'मैं' का भाव शान्त हो जाता है। ज्ञान को जानकर और ज्ञानमय होकर, बाहरी और अन्तर्वस्तु की वास्तविकता प्राप्त होती है।

7.43.62

गतं स्वमत्यजद्रूपं तरङ्गत्वं यथा पयः । मूलशाखाग्रपर्यन्ता सत्ता विटपिनो यथा ॥ ६२ ॥

gataṃ svamatyajadrūpaṃ taraṅgatvaṃ yathā payaḥ | mūlaśākhāgraparyantā sattā viṭapino yathā || 62 ||

Just as water gives up its wave-form and a tree extends from root to tip, so does the Self extend from the root to the tip of existence.

जैसे पानी अपना तरंग रूप छोड़ देता है और एक पेड़ जड़ से अग्रभाग तक फैलता है, वैसे ही आत्मा अस्तित्व की जड़ से अग्रभाग तक फैलती है।

7.43.63

निर्विकारमलं ज्ञप्तेर्ज्ञेयान्तैकैव भासते । यथा योजनलक्षाभमेकमेवामलं नभः ॥ ६३ ॥

nirvikāramalaṃ jñapterjñeyāntaikaiva bhāsate | yathā yojanalakṣābhamekamevāmalaṃ nabhaḥ || 63 ||

Just as the pure sky, which is free from modifications, appears as one even when measured in lakhs of yojanas, so does the knowledge of the knower appear as one with the known.

जैसे निर्मल आकाश, जो विकारों से मुक्त है, लाखों योजन में मापा जाए तो भी एक ही दिखाई देता है, वैसे ही ज्ञाता का ज्ञान ज्ञेय के साथ एक ही दिखाई देता है।

7.43.64

एकमेव तथा ज्ञानं ज्ञेयान्तं भात्यखण्डितम् । शून्यत्वादेकममलं यथा सर्वगमेव खम् ॥ ६४ ॥

ekameva tathā jñānaṃ jñeyāntaṃ bhātyakhṇḍitam | śūnyatvādekamamalaṃ yathā sarvagameva kham || 64 ||

Thus, knowledge appears as one with the known, undivided, just as the pure and single sky, due to its emptiness, pervades everywhere.

इस प्रकार, ज्ञान ज्ञेय के साथ एक ही दिखाई देता है, अविभाजित, जैसे शून्यता के कारण निर्मल और एक आकाश सर्वत्र व्याप्त है।

7.43.65

तथैकममलं ज्ञात्वा ज्ञानज्ञेयदशास्वपि । घृतेनात्मा घनीभूय पाषाणीक्रियते यथा ॥ ६५ ॥

tathaikamamalaṃ jñātvā jñānajñeyadaśāsvapi | ghṛtenātmā ghanībhūya pāṣāṇīkriyate yathā || 65 ||

Thus, knowing the pure and single knowledge in all states of the knower and the known, the Self, like ghee, becomes dense and is transformed into a stone.

इस प्रकार, ज्ञाता और ज्ञेय की सभी अवस्थाओं में निर्मल और एक ज्ञान को जानकर, आत्मा, घी की तरह, घना हो जाता है और पत्थर में परिवर्तित हो जाता है।

7.43.66

चिता चेत्यतयात्मैव स्वचित्तीक्रियते तथा । देशकालं विनैवात्मा बोधाबोधेन चित्तताम् ॥ ६६ ॥

citā cetyatayātmaiva svacittīkriyate tathā | deśakālaṃ vinaivātmā bodhābodhena cittatām || 66 ||

The individual soul, which is the knower, is thus created by its own consciousness. Without the limitations of space and time, the soul attains the state of consciousness through knowledge and ignorance.

जीवात्मा, जो कि ज्ञाता है, अपने ही चेतना से उत्पन्न होता है। स्थान और काल की सीमाओं के बिना, आत्मा ज्ञान और अज्ञान से चेतना की स्थिति प्राप्त करता है।

7.43.67

अबुद्धो नीयते न्यायैरेकमेवैष सुस्थितः । अत्र यद्यप्यबोधादेः संभवो नास्ति कश्चन । तथापि कल्प्यतेऽत्रैव बोधनाय परस्परम् ॥ ६७ ॥

abuddho nīyate nyāyairekamevaeṣa susthitaḥ | atra yadyapyabodhādeḥ saṃbhavo nāsti kaścana | tathāpi kalpyate'traiva bodhanāya parasparam || 67 ||

The ignorant is led by logical reasoning, but this is not the ultimate truth. Even though there is no possibility of ignorance, it is assumed for the sake of mutual understanding.

अज्ञानी तर्क से मार्गदर्शित होता है, लेकिन यह अंतिम सत्य नहीं है। हालांकि अज्ञान की संभावना नहीं है, परंतु परस्पर समझ के लिए यह माना जाता है।

7.43.68

महानुभावा विगताभिमाना विमूढभावोपशमे गलन्ति । निर्भ्रान्तयोऽनन्ततयैव शान्ता नित्यं समाधानमया भवन्ति ॥ ६८ ॥

mahānubhāvā vigatābhimānā vimūḍhabhāvopaśame galanti | nirbhrāntayo'nanantatayaiva śāntā nityaṃ samādhānamayā bhavanti || 68 ||

The great souls, who are free from ego, dissolve in the peace that comes from the cessation of delusion. Free from confusion, they are eternally peaceful and exist in a state of constant meditation.

महानुभाव जो अहंकार से मुक्त हैं, भ्रम के अंत में पाई जाने वाली शांति में विलीन हो जाते हैं। भ्रम से मुक्त, वे नित्य शांत होते हैं और समाधि की स्थिति में रहते हैं।

Chapter 44

7.44.1

श्रीराम उवाच । क्रमात्समाधानतरोराजीवफलशालिनीम् । सलताकुसुमां ब्रूहि सत्तां विश्रान्तिदां मुने ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | kramātsamādhānatarorājīvaphalaśālinīm | salatākusumāṃ brūhi sattāṃ viśrāntidāṃ mune || 1 ||

Sri Rama said: O Sage, please describe the state of restful bliss, which is like a lotus flower, adorned with latakusuma flowers, and which arises gradually from the two types of samadhi.

श्री राम ने कहा: हे मुनि, कृपया वह शांतिमय अवस्था बताएं जो क्रमशः दो प्रकार के समाधि से उत्पन्न होती है, जो कमल के फूल की तरह है और लताकुसुम से सुशोभित है।

7.44.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । आजीवमुद्यदुत्सेधं विवेकिजनकानने । पत्रपुष्पफलोपेतं समाधानतरुं शृणु ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ājīvamudyadutsedhaṃ vivekijanakānane | patrapuṣpaphalopetaṃ samādhānataruṃ śṛṇu || 2 ||

Vasistha said: Listen to the tree of samadhi, which is full of leaves, flowers, and fruits, and which arises with the vigor of life in the forest of discriminating people.

वसिष्ठ ने कहा: सुनो, समाधि के वृक्ष के बारे में, जो पत्तों, फूलों और फलों से भरा है, और जो विवेकी लोगों के वन में जीवन की ऊर्जा के साथ उत्पन्न होता है।

7.44.3

यथाकथंचिदुदितं दुःखेन स्वयमेव च । संसारवननिर्वेदं बीजमस्य विदुर्बुधाः ॥ ३ ॥

yathākathaṃciduditaṃ duḥkhena svayameva ca | saṃsāravanaṃnirvedaṃ bījamasyavidurbudhāḥ || 3 ||

The wise know that the seed of this tree is the dispassion towards the world, which arises somehow by itself due to suffering.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि इस वृक्ष का बीज संसार से वैराग्य है, जो दुःख के कारण किसी तरह स्वयं ही उत्पन्न होता है।

7.44.4

शुभजालहलाकृष्टं रसासिक्तमहर्निशम् । प्रवहच्छ्वसनाकुल्यं क्षेत्रमस्य विदुर्बुधाः ॥ ४ ॥

śubhajālahalākṛṣṭaṃ rasāsiktamaharniśam | pravahacchvasanākulyaṃ kṣetramasyavidurbudhāḥ || 4 ||

The wise know that the field for this tree is the body, which is dragged by the net of good deeds, always moistened by the juice of life, and disturbed by the flow of breath.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि इस वृक्ष का क्षेत्र शरीर है, जो पुण्य कर्मों के जाल से खिंचा जाता है, जीवन के रस से हमेशा भीगा रहता है, और श्वास के प्रवाह से व्याकुल होता है।

7.44.5

समाधिबीजं संसारनिर्वेदः पतति स्वयम् । चित्तभूमौ विविक्तायां विवेकिजनकानने ॥ ५ ॥

samādhibījaṃ saṃsāranirvedaḥ patati svayam | cittabhūmau viviktāyāṃ vivekijanakānane || 5 ||

The seed of samadhi, which is dispassion towards the world, falls by itself in the pure mind of discriminating people.

समाधि का बीज, जो संसार से वैराग्य है, स्वयं ही विवेकी लोगों के पवित्र मन में गिरता है।

7.44.6

स्वचित्तभूमौ पतितं ध्यानबीजं महाधियासेकैरमीभिर्यत्नेन संसेक्तव्यमक्खेदिना ॥ ६ ॥

svacittabhūmau patitaṃ dhyānabījaṃ mahādhiyāsekairamībhiryatnena saṃsektavyamakhedinā || 6 ||

The seed of meditation that has fallen on the ground of one's own mind should be carefully nurtured by the wise with great effort and without weariness.

जो ध्यान का बीज अपने मन की भूमि पर गिरा है, उसे बुद्धिमान लोगों द्वारा बड़े प्रयास और थकान के बिना सावधानी से सींचना चाहिए।

7.44.7

शुद्धैः स्निग्धैः पवित्रैश्च मधुरैरात्मनोहितैःसत्संगमनवक्षीरैरैन्दवैरमृतैरिव ॥ ७ ॥

śuddhaiḥ snigdhaiḥ pavitraiśca madhurairātmanohitaiḥsatsaṃgamanavakṣīrairaindavairamṛtairiva || 7 ||

With pure, affectionate, sacred, sweet, beneficial to the self, like the nectar of the company of the good, like the nectar of Indra.

शुद्ध, स्नेही, पवित्र, मधुर, आत्महितकारी, सत्संग के अमृत के समान, इन्द्र के अमृत के समान।

7.44.8

अन्तःशून्यप्रदैः पूर्णैः स्वच्छैरमृतशीतलैःविसृतैरमृताकुल्याशास्त्रार्थवरवारिभिः ॥ ८ ॥

antaḥśūnyapradaiḥ pūrṇaiḥ svacchairamṛtaśītalaiḥvisṛtairamṛtākulyāśāstrārthavaravāribhiḥ || 8 ||

With those that bestow inner emptiness, fullness, clarity, coolness of nectar, expansiveness, filled with the essence of scriptures, like the best waters.

जो अंतरिक्ष खालीपन, पूर्णता, स्पष्टता, अमृत की ठंडक, विस्तार, शास्त्रों के अर्थ से भरपूर, सर्वोत्तम जल के समान प्रदान करते हैं।

7.44.9

स्वचित्तभूमौ पतितं परिज्ञाय महाधियाबीजं संसारनिर्वेदो रक्ष्यं ध्यानस्य यत्नतः ॥ ९ ॥

svacittabhūmau patitaṃ parijñāya mahādhiyābījaṃ saṃsāranirvedo rakṣyaṃ dhyānasya yatnataḥ || 9 ||

Having understood the seed of great wisdom that has fallen on the ground of one's own mind, one should protect the weariness of worldly existence with the effort of meditation.

अपने मन की भूमि पर गिरे हुए महान बुद्धि के बीज को समझकर, संसार की थकान को ध्यान के प्रयास से सुरक्षित रखना चाहिए।

7.44.10

तपःप्रकारदानेन पदार्थघटनेशितैःतीर्थायतनविश्रान्तिवृतिविस्तारकल्पनैः ॥ १० ॥

tapaḥprakāradānena padārthaghaṭaneśitaiḥtīrthāyatanaviśrāntivṛtivistārakalpanaiḥ || 10 ||

By the gift of penance, by the arrangement of objects, by the creation of pilgrimage sites, by the expansion of rest and livelihood.

तपस्या के दान से, वस्तुओं के व्यवस्थापन से, तीर्थ स्थानों के निर्माण से, विश्राम और जीविका के विस्तार से।

7.44.11

कर्तव्योऽङ्कुरितस्यास्य रक्षिता शिक्षिताशयः । संतोषनामा प्रियया नित्यं मुदितयान्वितः ॥ ११ ॥

kartavyo'ṅkuritasyaasyā rakṣitā śikṣitāśayaḥ | saṃtoṣanāmā priyayā nityaṃ muditayānvitaḥ || 11 ||

One must protect the sprouted seed, with a disciplined mind, always accompanied by the beloved named Santosha, who is ever joyful.

इस अंकुरित बीज की रक्षा करना ही कर्तव्य है, जिसका मन शिक्षित है, और जो सदा प्रिय संतोषनामा के साथ आनंदित रहता है।

7.44.12

पश्चात्स्थिताशाविहगान्परप्रणयपक्षिणः । अस्मादापततः कामगर्वगृध्रान्निवारयेत् ॥ १२ ॥

paścātsthitāśāvihagānparapraṇayapakṣiṇaḥ | asmādāpatataḥ kāmagarvagṛdhrānnivārayet || 12 ||

Afterwards, one should protect the birds of affection from the vultures of pride and desire that fall upon them.

बाद में, प्रेम के पक्षी को घमंड और इच्छा के गिद्धों से बचाना चाहिए जो उन पर टूट पड़ते हैं।

7.44.13

मृदुभिः सत्क्रियाकुन्तैर्विवेकार्कातपैरपि । अचिन्त्यालोकदैरस्मान्मार्जितव्यं रजस्तमः ॥ १३ ॥

mṛdubhiḥ satkriyākuntaisvivekārkātapairapi | acintyālokadairasmānmārjitavyaṃ rajastamaḥ || 13 ||

With gentle, virtuous actions and the heat of discriminative wisdom, one should cleanse the dust and darkness from oneself.

नरम, पुण्य कर्मों और विवेक की गर्मी के साथ, एक व्यक्ति को अपने आप से धूल और अंधेरे को साफ करना चाहिए।

7.44.14

संपदः प्रमदाश्चैव तरङ्गा भोगभङ्गुराः । पतन्त्यशनयस्तस्मिन्दुष्कृताभ्रसमीरिताः ॥ १४ ॥

saṃpadaḥ pramadāścaiva taraṅgā bhogabhaṅgurāḥ | patantyaśanayastasminduṣkṛtābhrasamīritāḥ || 14 ||

Wealth and women are like waves, fragile due to enjoyment. They fall without control, driven by the winds of evil deeds.

धन और स्त्रियाँ तरंगों की तरह होती हैं, भोग के कारण भंगुर। वे नियंत्रण के बिना गिरती हैं, बुरे कर्मों की हवाओं से चलाई जाती हैं।

7.44.15

धैर्यौदार्यदयामन्त्रैर्जपस्नानतपोदमैः । विनिवारयितव्यास्ताः प्रणवार्थत्रिशूलिना ॥ १५ ॥

dhairyodāryadayāmantrairjapasnānatapodamaiḥ | vinivārayitavyāstāḥ praṇavārthatriśūlinā || 15 ||

With patience, generosity, compassion, and the power of mantras, meditation, austerities, and self-control, one should restrain them with the trident of the meaning of the sacred syllable 'Om'.

धैर्य, उदारता, दया और मंत्रों, ध्यान, तपस्या और स्वाधीनता की शक्ति के साथ, उन्हें पवित्र अक्षर 'ॐ' के अर्थ के त्रिशूल से रोकना चाहिए।

7.44.16

इति संरक्षितादस्माद्ध्यानबीजात्प्रवर्तते । आभिजात्योन्नतः श्रीमान्विवेकाख्यो नवाङ्कुरः ॥ १६ ॥

iti saṃrakṣitādasmāddhyānabījātpravartate | ābhijātyonnataḥ śrīmānvivekākhyo navāṅkuraḥ || 16 ||

From this protected seed of meditation, a new sprout of discrimination arises, which is noble and excellent by birth.

इस संरक्षित ध्यान के बीज से एक नया अंकुर उत्पन्न होता है, जो जन्म से ही उत्कृष्ट और विवेकपूर्ण होता है।

7.44.17

तेन सा चित्तभूर्भाति सप्रकाशा विकासिनी । भवत्यालोकरम्या च खं यथाभिनवेन्दुना ॥ १७ ॥

tena sā cittabhūrbhāti saprakāśā vikāsinī | bhavatyālokaramyā ca khaṃ yathābhinavendunā || 17 ||

By this, the mind becomes radiant and expansive, shining brightly like the new moon in the sky.

इससे, मन चमकदार और विस्तृत हो जाता है, जैसे आकाश में नया चाँद चमकता है।

7.44.18

तस्माद्ङ्कुरतः पत्रे उभौ विकसतः स्वयम्। एकं शास्त्राभिगमनं द्वितीयं साधुसंगमः ॥ १८ ॥

tasmādaṅkurataḥ patre ubhau vikasataḥ svayam | ekaṃ śāstrābhigamanaṃ dvitīyaṃ sādhusaṅgamaḥ || 18 ||

From that sprout, two leaves naturally unfold: one is the study of scriptures, and the other is the association with the virtuous.

उस अंकुर से, दो पत्ते स्वाभाविक रूप से खिलते हैं: एक शास्त्रों का अध्ययन है, और दूसरा सत्पुरुषों का संग है।

7.44.19

स्तम्भमेष निबध्नाति स्थैर्यं नाम समुन्नतिम्। संतोषत्वग्विवलितं वैराग्यरसरञ्जितम् ॥ १९ ॥

stambhameṣa nibadhnāti sthairyaṃ nāma samunnatim | saṃtoṣatvagvivalitaṃ vairāgyarasarañjitam || 19 ||

This pillar binds steadiness, which is called elevation, covered with the bark of contentment, and dyed with the juice of detachment.

यह स्तंभ स्थिरता को बाँधता है, जिसे उन्नति कहते हैं, संतोष की छाल से ढका हुआ, और वैराग्य के रस से रँगा हुआ।

7.44.20

वैराग्यरसपुष्टात्मा शास्त्रार्थप्रावृषान्वितः। स्वल्पेनैव स्वकालेन परामेति समुन्नतिम् ॥ २० ॥

vairāgyarasapuṣṭātmā śāstrārthaprāvṛṣānvitaḥ | svalpenaiva svakālena parāmeti samunnatim || 20 ||

One whose self is nourished by the essence of detachment and who is endowed with the shower of scriptural knowledge attains the highest elevation in a short time.

जिसका स्वयं वैराग्य के रस से पोषित है और जो शास्त्रीय ज्ञान की वर्षा से युक्त है, वह अल्प समय में ही उच्चतम उन्नति प्राप्त करता है।

7.44.21

शास्त्रार्थसाधुसंपर्कवैराग्यरसपीवरः। रागद्वेषकपिक्षोभैर्न मनागपि कम्पते ॥ २१ ॥

śāstrārthasādhusaṃparkavairāgyarasapīvaraḥ | rāgadveṣakapikṣobhairna manāgapi kampate || 21 ||

One who is nourished by the essence of dispassion, good association, and the meaning of scriptures, is not disturbed by the agitations of attachment and aversion.

जो शास्त्रों के अर्थ, साधु संग और वैराग्य के रस से पोषित होता है, वह आसक्ति और द्वेष की विक्षोभों से विचलित नहीं होता।

7.44.22

अथ तस्मात्प्रजायन्ते विज्ञानालंकृताकृतेः। लता रसविलासिन्य इमा विततदेशगाः ॥ २२ ॥

atha tasmātprajāyante vijñānālaṃkṛtākṛteḥ | latā rasavilāsinya imā vitatadeśagāḥ || 22 ||

From that, these knowledge-adorned actions give rise to the delightful essence of these widespread virtues.

उससे ये ज्ञान से अलंकृत कृत्य इन व्यापक गुणों के आनंदमय स्वरूप को जन्म देते हैं।

7.44.23

स्फुटता सत्यता सत्ता धीरता निर्विकल्पता। समता शान्तता मैत्री करुणा कीर्तिरार्यता ॥ २३ ॥

sphuṭatā satyatā sattā dhīratā nirvikalpatā | samatā śāntatā maitrī karuṇā kīrtirāryatā || 23 ||

Clarity, truthfulness, existence, steadfastness, non-duality, equanimity, peace, friendship, compassion, fame, and nobility.

स्पष्टता, सत्यता, अस्तित्व, धैर्य, अविकल्पता, समता, शांति, मैत्री, करुणा, कीर्ति और आर्यता।

7.44.24

लताभिर्गुणपत्राभिः स ध्यानतरुरूर्जितः । यशःपुष्पाभिरेताभिः पारिजातायते यतेः ॥ २४ ॥

latābhirguṇapatrābhiḥ sa dhyānatarurūrjitaḥ | yaśaḥpuṣpābhiretābhiḥ pārijātāyate yateḥ || 24 ||

Adorned with the leaves of virtues, that tree of meditation blooms with the flowers of fame.

गुणों के पत्तों से अलंकृत, वह ध्यान का वृक्ष कीर्ति के फूलों से खिल उठता है।

7.44.25

इत्यसौ ज्ञानविटपी लतापल्लवपुष्पवान् । भविष्यज्ज्ञानफलदो दिनानुदिनमुत्तमः ॥ २५ ॥

ityasau jñānaviṭapī latāpallavapuṣpavān | bhaviṣyajjñānaphalado dinānudinamuttamaḥ || 25 ||

Thus, this tree of knowledge, adorned with leaves, buds, and flowers, will bear the fruit of future knowledge, becoming better day by day.

इस प्रकार, यह ज्ञान का वृक्ष, पत्तों, कलियों और फूलों से अलंकृत, भविष्य के ज्ञान का फल देगा, और दिनोंदिन उत्तम बनता जाएगा।

7.44.26

यशःकुसुमगुच्छाढ्यो गुणपल्लवलासवान् वैराग्यरसविस्तारी प्रज्ञामञ्जरिताकृतिः ॥ २६ ॥

yaśaḥkusumagucchāḍhyo guṇapallavalāsavān vairāgyarasavistārī prajñāmañjaritākṛtiḥ || 26 ||

He who is adorned with the cluster of flowers of fame, intoxicated with the sprouts of virtues, expanded with the essence of detachment, and embodied with the form of wisdom.

जो यश के फूलों के गुच्छ से अलंकृत है, गुणों की पल्लव से मत्त है, वैराग्य के रस से विस्तारित है और प्रज्ञा के मञ्जरी के रूप में है।

7.44.27

सर्वाः शीतलयत्याशाः प्रावृषीव पयोधरः सर्गातपं शमयति सूर्यतापमिवोडुपः ॥ २७ ॥

sarvāḥ śītalayatyāśāḥ prāvṛṣīva payodharaḥ sargātapaṃ śamayati sūryatāpamivōḍupaḥ || 27 ||

He cools all hopes like the clouds in the rainy season, and he pacifies the heat of the world like the moon pacifies the heat of the sun.

वह सभी आशाओं को वर्षा ऋतु के बादलों की तरह ठंडा करता है, और वह सूर्य की गर्मी को चंद्रमा की तरह शांत करता है।

7.44.28

प्रतनोति शमच्छायां छायामिव घनागमः निरोधमास्फारयति शमोऽनिल इवाम्बुदम् ॥ २८ ॥

pratanoti śamacchāyāṃ chāyāmiva ghanāgamaḥ nirodhamaṃsphārayati śamo'nil iva ambudam || 28 ||

He spreads the shadow of peace like the shadow of a cloud, and he expands the restraint like the wind expands the cloud.

वह शांति की छाया को बादल की छाया की तरह फैलाता है, और वह निरोध को हवा की तरह बादल को फैलाता है।

7.44.29

निबध्नात्यात्मना पीठं कुलाचल इव स्थितम् फलस्य रचयत्यूर्ध्वं घटिकां मङ्गलादिताम् ॥ २९ ॥

nibadhnātyātmanā pīṭhaṃ kulācala iva sthitam phalasya racayatyūrdhvaṃ ghaṭikāṃ maṅgalāditām || 29 ||

He binds the seat with himself, standing firm like a mountain, and he arranges the fruit above, the auspicious moment.

वह स्वयं से आसन को बाँधता है, पर्वत की तरह स्थिर खड़ा होता है, और वह फल को ऊपर सजाता है, शुभ समय।

7.44.30

विवेककल्पवृक्षे तु वर्धमाने दिने दिने छायावितानवलिते पुंसो हृदयकानने ॥ ३० ॥

vivekakalpavṛkṣe tu vardhamāne dine dine chāyāvitānavalite puṃso hṛdayakānane || 30 ||

In the tree of discrimination, growing day by day, the canopy of shadows spreads in the forest of the heart of the person.

विवेक के वृक्ष में, दिन पर दिन बढ़ता हुआ, छाया का वितान व्यक्ति के हृदय के वन में फैलता है।

7.44.31

प्रवर्तते शीतलता तलतापापहारिणी । अभ्युल्लसन्मतिलता तुषारोदरसुन्दरी ॥ ३१ ॥

pravartate śītalatā talatāpāpahāriṇī | abhyullasanmatilatā tuṣārodrasundarī || 31 ||

The coolness spreads, removing the heat from the surface | The intelligence that blossoms is beautiful like the belly of snow

ठंडक फैलती है, सतह की गर्मी को दूर करती है | खिलती हुई बुद्धि बर्फ के पेट की तरह सुंदर है

7.44.32

यस्यामवान्तरश्रान्तो विश्राम्यति मनोमृगः । आजन्मजीर्णपथिकः पथि कोलाहलाकुलः ॥ ३२ ॥

yasyāmavāntaraśrānto viśrāmyati manomṛgaḥ | ājanmajīrṇapathikaḥ pathi kolāhalākulaḥ || 32 ||

In which the mind, tired from wandering, finds rest | The traveler, worn out since birth, is disturbed by the noise on the path

जिसमें भटकने से थका हुआ मन विश्राम पाता है | जन्म से ही थका हुआ यात्री मार्ग पर शोर से परेशान होता है

7.44.33

सत्तामात्रात्मशारीरचर्मार्थं प्रेक्षितोऽरिभिः । नानातासारसाकारगोपयज्जर्जरोन्मुखः ॥ ३३ ॥

sattāmātrātmaśārīracarmārthaṃ prekṣito'ribhiḥ | nānātāsārasākāragopayajjarjarōnmukhaḥ || 33 ||

Seen by enemies for the sake of the skin of the body which is merely existence | Protected by various essences, it has an old and decaying appearance

शत्रुओं द्वारा देखा जाता है शरीर की त्वचा के लिए जो केवल अस्तित्व है | विभिन्न तत्वों से सुरक्षित, यह एक पुराना और सड़ने वाला रूप रखता है

7.44.34

संसारारण्यविसरद्वासनापवनेरितः । अहंतातापसरिता सर्वदा विप्रदारदी ॥ ३४ ॥

saṃsārāraṇyavisaradvāsanāpavaneritaḥ | ahaṃtātāpasaritā sarvadā vipradāradī || 34 ||

Driven by the wind of desires in the forest of the world | Always disturbed by the heat of ego, it is torn apart

संसार के जंगल में इच्छाओं की हवा से प्रेरित | हमेशा अहंकार की गर्मी से परेशान, यह चीरा हुआ है

7.44.35

दीर्घादरी दूरचितसारसंचारजर्जरः । पुत्रपौत्रपरामर्शप्रतापात्पतितोऽवटे ॥ ३५ ॥

dīrghādarī dūracitasārasaṃcārajjarjaraḥ | putrapautraparāmarśapratāpātpatito'vaṭe || 35 ||

Long-lived, with distant and decaying movement of essence | Fallen into the pit due to the heat of thoughts about sons and grandsons

दीर्घायु, दूर और सड़ने वाले तत्व की गति से | पुत्र और पौत्र के विचारों की गर्मी से गड्ढे में गिरा हुआ

7.44.36

लक्ष्मीलताविलुठनात्संकटैः कुण्ठिताङ्गकः । तृष्णाश्रीसरितं गृह्णन्कल्लोलैर्दूरमाहतः ॥ ३६ ॥

lakṣmīlatāviluṭhanātsaṅkaṭaiḥ kuṇṭhitāṅgakaḥ | tṛṣṇāśrīsaritaṃ gṛhṇan kallocair dūramāhataḥ || 36 ||

Due to the destruction of the creeper of prosperity, he is afflicted with difficulties, his body is distressed. Seizing the stream of desire, he is struck from afar by the waves.

लक्ष्मी की लता के नष्ट होने से संकटों से पीड़ित है, उसका शरीर दुःखी है | इच्छा की धारा को पकड़कर, वह दूर से लहरों से मारा जाता है |

7.44.37

तं व्याधिदुर्व्याधवैधुर्यपलायनपरायणः । अशङ्कितविधिर्व्याधपातादिव कृताकृतिः ॥ ३७ ॥

taṃ vyādhidurvyādhavaidhuryapalāyanaparāyaṇaḥ | aśaṅkitavidhir vyādhapātādiva kṛtākṛtiḥ || 37 ||

He is devoted to fleeing from the misery of diseases and the cruelty of hunters. He is as if struck by the hunter's arrow, without fear of the prescribed duties.

वह रोगों के दुःख और शिकारियों की क्रूरता से भागने में लगा हुआ है | वह शिकारी के तीर से मारा जाने जैसा लगता है, विधि के कर्तव्यों से बिना डरे |

7.44.38

ज्ञेयास्पदसमायातदुःखसायकशङ्कितः । वैरिविद्रवणव्यग्रो दृषदाहरणाङ्कितः ॥ ३८ ॥

jñeyāspadasamāyātaduḥkhasāyakaśaṅkitaḥ | vairividravaṇavyagro dṛṣadāharaṇāṅkitaḥ || 38 ||

He is fearful of the arrows of sorrow that have come to the abode of the knowable. He is busy fleeing from his enemies, marked by the lifting of stones.

वह ज्ञेय के आश्रय में आए दुःख के बाणों से डरा हुआ है | वह अपने शत्रुओं से भागने में व्यस्त है, पत्थर उठाने से चिह्नित |

7.44.39

उन्नतानतसंपातनिपातेनातिघूर्णितः । विकारोपलनिर्घातैः पारम्पर्येण चूर्णितः ॥ ३९ ॥

unnatānatasaṃpātanipātenātighūrṇitaḥ | vikāroparanirghātaiḥ pāramparyeṇa cūrṇitaḥ || 39 ||

He is greatly disturbed by the fall from high to low. He is crushed in succession by the destruction of various afflictions.

वह ऊँचे से नीचे गिरने से बहुत व्याकुल है | वह विभिन्न पीड़ाओं के विनाश से क्रमशः कुचला जाता है |

7.44.40

तृष्णाचारुलताजालप्रवेशवशविक्षतः । स्वप्रज्ञारचिताचारः परमायास्वशिक्षितः ॥ ४० ॥

tṛṣṇācārulatājālapraveśavaśavikṣataḥ | svaprajñāracitācāraḥ paramāyāsvaśikṣitaḥ || 40 ||

He is wounded by the influence of entering the web of beautiful desire. He is trained in the conduct of his own wisdom, greatly fatigued.

वह सुंदर इच्छा के जाल में प्रवेश करने के प्रभाव से घायल है | वह अपनी बुद्धि के आचरण में प्रशिक्षित है, बहुत थका हुआ |

7.44.41

इन्द्रियग्राममागत्य प्रपलायनतत्परः सुदुर्ग्रहगजेन्द्रोग्रविस्फूर्जनविमर्दितः ॥ ४१ ॥

indriyagrāmamāgatya prapalāyanatatparaḥ sudurgrahagajendrograavisphūrjanavimarditaḥ || 41 ||

Having entered the realm of the senses, one becomes intent on fleeing, tormented by the fierce roaring of the difficult-to-control elephant of the senses.

इन्द्रियों के ग्राम में प्रवेश करके, व्यक्ति भागने का प्रयत्न करता है, क्योंकि उसे अपनी इन्द्रियों के असाध्य हाथी के भयानक गर्जन से पीड़ा होती है।

7.44.42

विषयाजगरोदारविषफूत्कारमूर्च्छितः कामुकः कामिनीभूमौ रसात्प्रायो विपोथितः ॥ ४२ ॥

viṣayājagarodāraviṣaphūtkāramūrcchitaḥ kāmukaḥ kāminībhūmau rasātprāyo vipothitaḥ || 42 ||

Intoxicated by the fierce hissing of the venomous snake of sensual pleasures, the lustful person is mostly deluded in the realm of desire.

विषयों के विषैले सांप के भयानक फूत्कार से मतवाला होकर, कामुक व्यक्ति कामनाओं की भूमि में अधिकतर भ्रमित रहता है।

7.44.43

कोपदावानलप्लुष्टपृष्ठविस्फोटदाहवान् सदा गतागतानेकदीर्घदुःखप्रदाहवान् ॥ ४३ ॥

kopadāvānalaplusṭaprṣṭhavisphoṭadāhavān sada gatāgatānekadīrghaduḥkhapradāhavān || 43 ||

Always afflicted by the burning of the blisters on the back caused by the fire of anger, one experiences the long-lasting pain of coming and going.

क्रोध की आग से पीठ पर फूटने वाले छालों के जलन से सदा पीड़ित होकर, व्यक्ति आने-जाने के लंबे दुःख का अनुभव करता है।

7.44.44

स्वात्मलग्नाभिलाषांशदंशदोषैरुपद्रुतः भोगलोभलसन्मोदश्रृगालचिरविद्रुतः ॥ ४४ ॥

svātmalagnābhilāṣāṃśadaṃśadoṣairupadruṭaḥ bhogalobhalasanmodaśṛgālaciravidruṭaḥ || 44 ||

Afflicted by the faults of desires attached to the self, one is quickly driven away like a jackal by the joy of greed for enjoyment.

आत्मा से जुड़े इच्छाओं के दोषों से पीड़ित होकर, व्यक्ति भोग की लालसा के आनंद से शीघ्र ही सियार की तरह भगा दिया जाता है।

7.44.45

स्वकर्मकर्तृतोद्भ्रान्तदारिद्र्यद्वीप्यनुद्रुतः व्यामोहमिहिकान्धत्वकूटावटलुठत्तनुः ॥ ४५ ॥

svakarmakartṛtodbhrāntadāridryadvīpyanudruṭaḥ vyāmohamihikāndhatvakūṭāvaṭaluṭhattanuḥ || 45 ||

Driven away by the poverty arising from the actions of one's own deeds, the body is afflicted by the blindness of delusion and the pit of ignorance.

अपने कर्मों से उत्पन्न होने वाली दरिद्रता से भगा दिया जाता है, शरीर भ्रम के अंधेपन और अज्ञान की खाई से पीड़ित होता है।

7.44.46

मानसिंहसमुल्लासहृदयोत्कम्पनातुरः । मरणेन रणे येन वृकपुष्पमिवेक्षितः ॥ ४६ ॥

mānasiṃhsamullāsahṛdayotkampanāturaḥ | maraṇena raṇe yena vṛkapuṣpamivekṣitaḥ || 46 ||

The one whose heart is filled with joy and excitement, trembling with anticipation, is seen in battle as if facing death like a wolf flower.

जिसका हृदय आनंद और उत्साह से भरा है, उत्कंठा से काँप रहा है, वह युद्ध में मृत्यु का सामना करते हुए एक भेड़िये के फूल की तरह दिखाई देता है।

7.44.47

गर्वेण गिरणायाशु दूरतोजनसेवितः । कामैः समन्ततो दन्तवितानितयवाङ्कुरः ॥ ४७ ॥

garveṇa giraṇāyāśu dūratojanasevitaḥ | kāmaiḥ samantato dantavitānitayavāṅkuraḥ || 47 ||

With pride, quickly descending from a distance, served by people, surrounded by desires on all sides, like a sprout covered with teeth.

गर्व से, तेजी से दूर से उतरते हुए, लोगों द्वारा सेवित, चारों ओर इच्छाओं से घिरा हुआ, दाँतों से ढंके हुए अंकुर की तरह।

7.44.48

तारुण्यनारीसुहृदा क्षणमालिङ्ग्य वर्जितः । दुःसंचारेषु पवनैः कुपितैरिव वर्जितः ॥ ४८ ॥

tāruṇyanārīsuhṛdā kṣaṇamāliṅgya varjitaḥ | duḥsaṃcāreṣu pavanaiḥ kupitairiva varjitaḥ || 48 ||

Abandoned for a moment by the friend of youthful women, avoided like angry winds in difficult paths.

युवा महिलाओं के मित्र द्वारा एक क्षण के लिए छोड़ दिया गया, कठिन मार्गों में क्रोधित हवाओं की तरह टाल दिया गया।

7.44.49

कदाचिन्निर्वृतिं याति सशमं च तरौ क्वचित् । मनोहरिणको राजन्नाजीवमिव भास्वति ॥ ४९ ॥

kadācin nirvṛtiṃ yāti saśamaṃ ca tarau kvacit | manohariṇako rājannājīvamiva bhāsvati || 49 ||

Sometimes it attains peace and calmness on some tree, O king, it shines like a lifeless deer.

कभी-कभी यह किसी पेड़ पर शांति और शांति प्राप्त करता है, हे राजन्, यह एक निर्जीव हिरण की तरह चमकता है।

7.44.50

तालीतमालबकुलादिकवृक्षगुल्मविश्रान्तिषु प्रचुरपुष्पविलासहासैः नामापि यस्य न विदन्ति सुखस्य मूढाः प्राप्नोति तच्छमतरोः स्वमनोमृगो वः ॥ ५० ॥

tālītamālabakulādikavṛkṣagulmaviśrāntiṣu pracurapuṣpavilāsahāsaiḥ nāmāpi yasya na vidanti sukhasya mūḍhāḥ prāpnoti tacchamataroḥ svamanomṛgo vaḥ || 50 ||

Fools do not even know the name of that happiness which rests in the groves of palm, tamala, and bakula trees, abundant with blossoming flowers and laughter. You, like a deer chasing its own mind, attain only the shade of that tree of tranquility.

जो लोग ताड़, तमाल और बकुल के वृक्षों और झाड़ियों के बीच खिले हुए फूलों और हँसी से भरपूर स्थानों में विश्राम करते हुए सुख को भी नहीं पहचानते, वे मूर्ख हैं। तुम अपने मन रूपी हिरण की तरह उस शांति रूपी वृक्ष की छाया को ही पाते हो।

Chapter 45

7.45.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति विश्रान्तवानेष मनोहरिणकोऽरिहन् । तत्रैव रतिमायाति न याति विटपान्तरम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti viśrāntavāneṣa manohariṇako'rihan | tatraiva ratimāyāti na yāti viṭapāntaram || 1 ||

Shri Vasishtha said: Thus, the enemy-killing beautiful one rests there; he finds delight in that very place and does not go to another tree.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, यह शत्रु-मारा मनोहर वहीं विश्राम करता है; वह उसी स्थान में आनंद पाता है और दूसरे वृक्ष पर नहीं जाता।

7.45.2

एतावताथ कालेन स विवेकद्रुमः फलम् । अन्तस्थं परमार्थात्म शनैः प्रकटयत्यलम् ॥ २ ॥

etāvatātha kālena sa vivekadrumaḥ phalam | antaḥsthaṃ paramārthātma śanaiḥ prakaṭayaty alam || 2 ||

In this short time, the tree of discrimination bears fruit; it gradually reveals the inner, supreme reality.

इस छोटे समय में, विवेक का वृक्ष फल देता है; यह धीरे-धीरे आंतरिक, परम सत्य को प्रकट करता है।

7.45.3

ध्यानद्रुमफलं पुण्यौ तदसौ स्वमनोमृगः । अधःस्थितः प्रान्तगतं तस्य पश्यति सत्तरोः ॥ ३ ॥

dhyānadrumaphalaṃ puṇyau tadasau svamanomṛgaḥ | adhaḥsthitaḥ prāntagataṃ tasya paśyati sattaroḥ || 3 ||

The fruit of the tree of meditation is pure; that deer of the mind, situated below, sees the end of that being.

ध्यान के वृक्ष का फल पवित्र है; वह मन का हिरण, जो नीचे स्थित है, उस जीव के अंत को देखता है।

7.45.4

आरोहति नरो वृक्षं तदास्वादयितुं फलम् । अन्यवर्गपरित्यागो विततोध्यवसायवान् ॥ ४ ॥

ārohati naro vṛkṣaṃ tadāsvādayituṃ phalam | anyavargaparityāgo vitatādhyavasāyavān || 4 ||

A person climbs the tree to taste its fruit; abandoning other groups, he is determined.

एक व्यक्ति वृक्ष पर चढ़ता है उसके फल का स्वाद लेने के लिए; दूसरे समूहों को छोड़कर, वह दृढ़ संकल्प है।

7.45.5

विवेकवृक्षपान्नाम वृत्तीस्त्यजति भूगताः । उन्नतं पदमासाद्य भूयो नाधः समीहते ॥ ५ ॥

vivekavṛkṣapānnāma vṛttīstyajati bhūgatāḥ | unnataṃ padamāsādya bhūyo nādhaḥ samīhate || 5 ||

Having reached the elevated state by the fruit of the tree of discrimination, one abandons worldly tendencies and does not desire to descend again.

विवेक के वृक्ष के फल से उच्च अवस्था प्राप्त करने के बाद, एक व्यक्ति सांसारिक प्रवृत्तियों को छोड़ देता है और फिर से नीचे उतरने की इच्छा नहीं करता।

7.45.6

तेनोत्तमफलार्थेन संस्कारान्प्राक्तनानसौ । विवेकपादपारूढस्त्यजत्यहिरिव त्वचम् ॥ ६ ॥

tenottamaphalārtheṇa saṃskārānprāktanānasau | vivekapādapārūḍhastyajatyahiriva tvacaṃ || 6 ||

By that highest goal, he renounces all past conditioning, as a snake sheds its skin, having ascended the tree of discrimination.

उस उत्तम फल के लिए, वह सभी पूर्व संस्कारों का त्याग करता है, जैसे साँप अपनी त्वचा को छोड़ देता है, विवेक के वृक्ष पर चढ़कर।

7.45.7

हसत्युच्चैः पदारूढमात्मानभवलोकयन् । एतावन्तमहं कालं कृपणः कोऽभवं त्विति ॥ ७ ॥

hasatyuccaiḥ padārūḍhamātmānabhavalokayan | etāvantamahaṃ kālaṃ kṛpaṇaḥ ko'bhavaṃ tviti || 7 ||

Laughing loudly, he looks at his own self, wondering, 'For so long, who was I, so miserable?'

उच्च स्वर में हँसते हुए, वह अपने आप को देखता है, सोचता है, 'इतने समय तक, मैं कौन था, इतना दुःखी?'

7.45.8

करुणादिषु तेष्वस्य भ्रमञ्छाखान्तरेषु सः । लोभव्यालमधः कुर्वन्सम्राडिव विराजते ॥ ८ ॥

karuṇādiṣu teṣvasyabhramañchākhāntareṣu saḥ | lobhavyālamadhaḥ kurvansamrāḍiva virājate || 8 ||

In compassion and other such branches, he wanders, subduing the serpent of greed, shining like an emperor.

दया और अन्य ऐसी शाखाओं में, वह भटकता है, लोभ के सर्प को दबाते हुए, एक सम्राट की तरह चमकता है।

7.45.9

हृदयेन्दोर्गलश्रेणी दुःखाब्जतिमिरावलिः । कृष्णायःशृङ्खलातृष्णा दिनानुदिनमुज्झति ॥ ९ ॥

hṛdayendorgalaśreṇī duḥkhābjatimirāvaliḥ | kṛṣṇāyaḥśṛṅkhalātṛṣṇā dinānudinamujjhati || 9 ||

The chain of sorrows in the heart, the darkness of the lotus of suffering, the thirst for the iron chain, he abandons day by day.

हृदय में दुःख की श्रृंखला, दुःख के कमल का अंधकार, लोहे की श्रृंखला की तृष्णा, वह दिन-प्रतिदिन छोड़ता है।

7.45.10

उपेक्षते न संप्राप्तं नाप्राप्तमभिवाञ्छति । सोमसौम्यो भवत्यन्तः शीतलः सर्ववृत्तिषु ॥ १० ॥

upekṣate na saṃprāptaṃ nāprāptamabhivāñchati | somasauMyo bhavatyantaḥ śītalaḥ sarvavṛttiṣu || 10 ||

He does not neglect what has been attained, nor does he desire what has not been attained. He becomes calm and cool in all activities.

वह प्राप्त किए गए को उपेक्षा नहीं करता, न ही अप्राप्त की इच्छा करता है। वह सभी गतिविधियों में शांत और ठंडा बन जाता है।

7.45.11

शास्त्रार्थपल्लवेष्वेव निषण्णात्मावतिष्ठतेउन्नतावनता याता अधः पश्यञ्जगद्गतीः ॥ ११ ॥

śāstrārthapallaveṣveva niṣaṇṇātmāvatiṣṭhateunnatāvanatā yātā adhaḥ paśyañjagadgatīḥ || 11 ||

The self, established in the tender leaves of the meaning of the scriptures, sees the world's course, which has gone up and down.

शास्त्रों के अर्थ की कोमल पत्तियों में स्थित आत्मा, जिसने ऊपर और नीचे जाना है, संसार की गति देखती है।

7.45.12

भीमद्रुमलतोत्कीर्णपुष्पप्रकरदन्तुराःप्राक्तनीः स्वाः स्थलीः पश्यन्हसत्यन्तर्वराकताम् ॥ १२ ॥

bhīmadrumalatotkīrṇapuṣpaprakaradanturāḥprāktanīḥ svāḥ sthalīḥ paśyanhasatyantarvarākatām || 12 ||

Seeing the former places, which are scattered with flowers and are rough with the creepers of the terrible trees, they are laughing at the extreme inner beauty.

भयानक वृक्षों की लताओं से घिरे फूलों से भरे पुराने स्थानों को देखकर, वे अंतर्निहित अत्यंत सुंदरता पर हँसते हैं।

7.45.13

तेषु तत्स्कन्धदेशेषु तथोड्डीनविडीनयाहारिण्या विहरञ्जात्या राजेव परिराजते ॥ १३ ॥

teṣu tatskandhadeśeṣu tathoḍḍīnaviḍīnayāhāriṇyā viharañjātyā rājeva parirājate || 13 ||

In those places, on the shoulders of the trees, with the movement of the branches, the lion roams like a king.

उन स्थानों में, वृक्षों के कंधों पर, शाखाओं के हिलने से, सिंह राजा की तरह विचरता है।

7.45.14

पुत्रदारसमग्राणि मित्राणि च धनानि चजन्मान्तरकृतानीव स्वप्नजानीव पश्यति ॥ १४ ॥

putradārasamagrāṇi mitrāṇi ca dhanāni cajanmāntarakṛtānīva svapnajānīva paśyati || 14 ||

He sees sons, wives, friends, and wealth as if they were created in a previous life or in a dream.

वह पुत्र, पत्नी, मित्र और धन को देखता है जैसे कि वे पिछले जन्म में या स्वप्न में बनाए गए हों।

7.45.15

रागद्वेषभयोन्मादमानमोहमहत्तयानटस्येवास्य दृश्यन्ते शीतलामलचेतसः ॥ १५ ॥

rāgadveṣabhayonmādamānamohamahattayānaṭasyevāsya dṛśyante śītalāmalacetasaḥ || 15 ||

With the greatness of attachment, hatred, fear, pride, delusion, and ego, these appear like a dance, with a calm and pure mind.

आसक्ति, घृणा, भय, अभिमान, भ्रम और अहंकार की महत्ता से, ये एक नृत्य की तरह दिखते हैं, शांत और शुद्ध मन के साथ।

7.45.16

उन्मत्तचेष्टिताकारा हसत्यपि पुरोगताः । तरङ्गभङ्गुराधाराः संसारसरितो गतीः ॥ १६ ॥

unmattaceṣṭitākārā hasatyapi purogatāḥ | taraṅgabhaṅgurādhārāḥ saṃsārasarito gatīḥ || 16 ||

Those who are driven by mad actions, even though they laugh and move forward, have unstable foundations like the waves of the river of worldly life.

जो पागलों की तरह काम करते हैं, वे हँसते हुए भी आगे बढ़ते हैं, लेकिन उनकी नींव लहरों की तरह अस्थिर होती है, जैसे संसार की नदी की लहरें।

7.45.17

न स चेतयते काश्चिल्लोकदारधनैषणाः । अपूर्वपदविश्रान्तो जीवन्नेव यथा शवः ॥ १७ ॥

na sa cetayate kāścillokadāradhanaiṣaṇāḥ | apūrvapadaviśrānto jīvanneva yathā śavaḥ || 17 ||

He does not think about any worldly desires for wealth or women. Resting in the supreme state, he lives like a corpse.

वह धन या स्त्री की किसी भी इच्छा के बारे में नहीं सोचता। परम अवस्था में विश्राम करते हुए, वह एक शव की तरह जीता है।

7.45.18

केवलं केवले शुद्धे बोधात्मनि महोन्नते । दत्तदृष्टिः फले तस्मिन्परं समधिरोहति ॥ १८ ॥

kevalaṃ kevale śuddhe bodhātmani mahonnate | dattadṛṣṭiḥ phale tasminparaṃ samadhirohati || 18 ||

Only in the pure, supreme consciousness, one's vision is fixed on the ultimate fruit, and one attains the highest meditation.

केवल शुद्ध, परम चेतना में, एक की दृष्टि परम फल पर स्थिर होती है, और वह उच्चतम ध्यान प्राप्त करता है।

7.45.19

स्मृत्वा स्मृत्वापदः पूर्व संतोषामृतपोषितः । अर्थानामप्यनर्थानां नाशेषु परितुष्यति ॥ १९ ॥

smṛtvā smṛtvāpadḥ pūrva saṃtoṣāmṛtapoṣitaḥ | arthānāmapyanarthānāṃ nāśeṣu parituṣyati || 19 ||

Remembering the past calamities and nourished by the nectar of contentment, one is satisfied even in the destruction of wealth and misfortunes.

भूतकाल की विपत्तियों को याद करके और संतोष के अमृत से पोषित होकर, एक धन और दुर्भाग्य के नाश में भी संतुष्ट होता है।

7.45.20

व्यवहारेषु कार्येषु भोगसंपादकेष्वपि । परमुद्वेगमायाति सनिद्र इव बोधितः ॥ २० ॥

vyavahāreṣu kāryeṣu bhogasaṃpādakeṣvapi | paramudvegamāyāti sanidra iva bodhitaḥ || 20 ||

In worldly activities and actions that bring enjoyment, one experiences great agitation, as if awakened from sleep.

संसारिक गतिविधियों और भोग लाने वाले कार्यों में, एक महान उद्वेग अनुभव करता है, जैसे नींद से जागा हुआ।

7.45.21

दीर्घाध्यग इवोदारामनारतमबाधिताम् । चिरं मौर्ख्यश्रमाक्रान्तो विश्रान्तिमभिवाञ्छति ॥ २१ ॥

dīrghādhyaga ivodārāmanāratamabādhitām | ciraṃ maurkhyśramākrānto viśrāntimabhivāñchati || 21 ||

Like a long-suffering person, afflicted by continuous distress, one who is exhausted by the labor of ignorance for a long time seeks rest.

जैसे दीर्घ दुःख से पीड़ित व्यक्ति, जो लंबे समय तक अज्ञान के परिश्रम से थका हुआ है, वह विश्राम की इच्छा करता है।

7.45.22

निःश्वासबोधितोऽप्यग्निरनिन्धन इवात्मनि । श्वासमात्रसमोऽप्यन्तरतिष्ठन्नेव शाम्यति ॥ २२ ॥

niḥśvāsabodhito'pyagniranindhana ivātmani | śvāsamātrasamo'pyantaratiṣṭhannēva śāmyati || 22 ||

Even if the fire is indicated by breath, it remains without fuel in the self. Even if it is equal to mere breath, it remains within and is pacified.

यदि श्वास से अग्नि का बोध होता है, तो भी वह आत्म में इंधन के बिना रहता है। यदि वह केवल श्वास के समान होता है, तो भी वह अंतर में रहता है और शांत होता है।

7.45.23

आपतन्तीं बलादेव पदार्थेष्वरतिं शनैः । न शक्नोति निराकर्तुं दृष्टिमत्र च्युतामिव ॥ २३ ॥

āpatantīṃ balādeva padārtheṣvaratiṃ śanaiḥ | na śaknoti nirākartuṃ dṛṣṭimatra cyutāmiva || 23 ||

Forcibly, the attraction towards objects gradually increases. One cannot remove the gaze that is fixed on them, as if it has fallen there.

बलपूर्वक, वस्तुओं में आकर्षण धीरे-धीरे बढ़ता जाता है। वह दृष्टि को उनसे नहीं हटा सकता जो उन पर स्थिर हो गई है, जैसे कि वह वहाँ गिर गई हो।

7.45.24

तां महापदवीं गच्छन्परमार्थफलप्रदाम्भूमिकामप्युपायाति वचसामप्यगोचराम् ॥ २४ ॥

tāṃ mahāpadavīṃ gacchanparamārthaphalapradāmbhūmikāmapyupāyāti vacasāmapyagocarām || 24 ||

One who is on the great path, even though it is difficult to reach, attains the ultimate fruit by means of speech and other methods.

जो महान मार्ग पर है, वह भले ही उसे पाना कठिन हो, वाणी और अन्य साधनों द्वारा परम फल प्राप्त करता है।

7.45.25

कुतोऽप्यचेष्टितेष्वेव संप्राप्तेषु विधेर्वशात्भोगेष्वरतिमायाति पान्थो मरुमहीष्विव ॥ २५ ॥

kuto'pyaceṣṭiteṣveva saṃprāpteṣu vidhervaśātbhogeṣvaratimāyāti pāntho marumahīṣviva || 25 ||

Even if efforts are not made, one attains the highest enjoyment by the will of destiny, like a traveler in the desert.

भले ही प्रयास न किए जाएँ, भाग्य की इच्छा से एक व्यक्ति सर्वोच्च भोग प्राप्त करता है, जैसे रेगिस्तान में एक यात्री।

7.45.26

घूर्णः क्षीण इवानन्दी सुप्तः संसारवृत्तिषु अन्तःपूर्णमना मौनी कामपि स्थितिमृच्छति ॥ २६ ॥

ghūrṇaḥ kṣīṇa ivānandī suptaḥ saṃsāravṛttiṣu antaḥpūrṇamanā maunī kāmapi sthitimṛcchati || 26 ||

The one who is dizzy, weak, and joyless, as if asleep in the worldly affairs, with a mind full of inner contentment and silent, attains any position.

जो चक्कर खाये हुए, कमजोर, और अनन्दहीन है, जैसे संसार के कामों में सोया हुआ, अंतर्मन से पूर्ण और मौन, वह किसी भी स्थिति को प्राप्त करता है।

7.45.27

स तादृग्रूपतामेत्य परमार्थफलस्य तत् क्रमान्निकटमाप्नोति खगोऽगपदवीमिव ॥ २७ ॥

sa tādṛgrūpatāmetya paramārthaphalasya tat kramānnikaṭamāpnoti khago'gapadavīmiva || 27 ||

Having attained such a state, he gradually approaches the supreme goal, like a bird approaching the sky.

ऐसी अवस्था को प्राप्त करने के बाद, वह क्रमशः परम लक्ष्य की ओर बढ़ता है, जैसे एक पक्षी आकाश की ओर बढ़ता है।

7.45.28

ततस्तदखिलां बुद्धिं विहाय वियता समः गृह्णात्यथास्वादयति भुङ्क्तेऽथ परितृप्यति ॥ २८ ॥

tatastadakhilāṃ buddhiṃ vihāya viyatā samaḥ gṛhṇātyathāsvādayati bhuṅkte'tha paritṛpyati || 28 ||

Then, abandoning all thoughts, he becomes one with the sky, takes, enjoys, and then becomes satisfied.

तब, सभी विचारों को छोड़कर, वह आकाश के समान हो जाता है, लेता है, भोगता है, और फिर संतुष्ट हो जाता है।

7.45.29

संकल्पार्थपरित्यागाद्दिनानुदिनमातता शुद्धस्वभावविश्रान्तिः परमार्थाप्तिरुच्यते ॥ २९ ॥

saṅkalpārthaparityāgāddinānudinamātatā śuddhasvabhāvaviśrāntiḥ paramārthāptirucyate || 29 ||

By abandoning all desires and intentions, day by day, one attains the supreme goal, which is the rest in one's pure nature.

सभी इच्छाओं और उद्देश्यों को छोड़कर, दिन पर दिन, वह परम लक्ष्य को प्राप्त करता है, जो अपने शुद्ध स्वभाव में विश्राम है।

7.45.30

भेदबुद्धिर्विलीनार्थाऽभेद एवावशिष्यते शुद्धमेकमनाद्यन्तं तद्ब्रह्मेति विदुर्बुधाः ॥ ३० ॥

bhedabuddhirvilīnārthā'bheda evāvaśiṣyate śuddham ekam anādyantaṃ tadbrahmeti vidurbudhāḥ || 30 ||

When the perception of duality dissolves, only non-duality remains, which is pure, one, without beginning or end, and that is known as Brahman by the wise.

जब द्वैत की बुद्धि विलीन हो जाती है, तो केवल अद्वैत ही शेष रहता है, जो शुद्ध, एक, अनादि और अनंत है, और उसे बुद्धिमान लोग ब्रह्म कहते हैं।

7.45.31

लोकैषणाविरक्तेन त्यक्तदारैषणेन च । धनैषणाविमुक्तेन तस्मिन्विश्रम्यते पदे ॥ ३१ ॥

lokaiṣaṇāviraktēna tyaktadāraiṣaṇēna ca | dhanaiṣaṇāvimuktēna tasminviśramyatē padē || 31 ||

One who is detached from worldly desires, who has renounced the desire for a wife, and who is free from the desire for wealth, finds rest in that state.

जो लोक की इच्छाओं से विरक्त है, जिसने पत्नी की इच्छा को त्याग दिया है, और जो धन की इच्छा से मुक्त है, वह उस स्थिति में विश्राम करता है।

7.45.32

परेण परिणामेन मिथश्चित्परमार्थयोः । तापेन हिमलेखेव भेदबुद्धिर्विलीयते ॥ ३२ ॥

pareṇa pariṇāmēna mithaścitparamārthayōḥ | tāpēna himalēkhēva bhēdabuddhirvilīyatē || 32 ||

By the ultimate transformation, the distinction between the individual consciousness and the ultimate reality dissolves like a line of snow melting under heat.

अंतिम परिणाम के द्वारा, व्यक्तिगत चेतना और परम सत्य के बीच का भेद गर्मी में बर्फ की रेखा की तरह पिघल जाता है।

7.45.33

तज्ज्ञस्याकृष्टमुक्तस्य स्वभावेषूपमां विना । स्थितिः स्रग्दामकस्येव न संभवति काचन ॥ ३३ ॥

tajjñasyākṛṣṭamuktasya svabhāvēṣūpamāṃ vinā | sthitiḥ sragdāmakasyēva na saṃbhavati kācana || 33 ||

For the one who knows the truth and is liberated, there is no existence without the analogy of one's own nature, just as a garland cannot exist without a thread.

जो सत्य को जानता है और मुक्त है, उसके लिए अपने स्वभाव की उपमा के बिना कोई अस्तित्व नहीं होता, जैसे माला बिना धागे के नहीं होती।

7.45.34

यथाऽप्रकटिताङ्गान्तःसंस्थिता शालभञ्जिका । न सती नासती स्तम्भे तथा विश्वस्थितिः परे ॥ ३४ ॥

yathā'prakaṭitāṅgāntaḥsaṃsthitā śālabhañjikā | na satī nāsatī stambhē tathā viśvasthitiḥ parē || 34 ||

Just as a locust hidden inside a blade of grass is neither existent nor non-existent in the stalk, so is the state of the universe in the ultimate reality.

जैसे घास की पत्ती के अंदर छिपी टिड्डी डंडी में न तो है और न ही नहीं है, वैसे ही परम सत्य में ब्रह्मांड की स्थिति है।

7.45.35

ध्यानं न शक्यते कर्तुं न चैतदुपयुज्यते । अबोधेन विबुद्धस्तु स्वयमत्रैव तिष्ठति ॥ ३५ ॥

dhyānaṃ na śakyatē kartuṃ na caitadupayujyatē | abōdhēna vibuddhas tu svayamatraiva tiṣṭhati || 35 ||

Meditation cannot be done, nor is it useful. The enlightened one, through ignorance, stands by himself here.

ध्यान नहीं किया जा सकता, न ही यह उपयोगी है। ज्ञानी अज्ञान के द्वारा यहाँ खुद को स्थिर करता है।

7.45.36

आत्यन्तिकी विरसता यस्य दृश्येषु दृश्यते । स बुद्धो ना प्रबुद्धस्य दृश्यत्यागे हि शक्तता ॥ ३६ ॥

ātyantikī virasatā yasya dṛśyeṣu dṛśyate | sa buddho nā prabuddhasya dṛśyatyāge hi śaktatā || 36 ||

The ultimate insipidity is seen in the perceptions of one who is not awakened; the ability to renounce perceptions is the power of the awakened one.

आत्यन्तिकी विरसता उसके दृश्यों में दिखाई देती है जो जागृत नहीं है; दृश्यों का त्याग करने की शक्ति जागृत की शक्ति है।

7.45.37

दृश्यस्य बोधताबोधो यो बोधादपरिक्षयः । स समाधानशब्देन प्रोच्यते सुसमाहितेः ॥ ३७ ॥

dṛśyasya bodhatābodho yo bodhādaparikṣayaḥ | sa samādhānaśabdena procyate susamāhiteḥ || 37 ||

The awareness of the perception that does not diminish from awareness is called samādhi by the well-concentrated.

जो बोध (awareness) से कम नहीं होता, उस दृश्य की बोधता को सुसंयत लोग समाधि कहते हैं।

7.45.38

द्रष्टृदृश्यैकतारूपः प्रत्ययो मनसो यदा । स तदेकसमाधाने तदा विश्राम्यति स्वयम् ॥ ३८ ॥

draṣṭṛdṛśyaiokatārūpaḥ pratyayo manaso yadā | sa tadekasamādhāne tadā viśrāmyati svayam || 38 ||

When the mind's conviction is in the form of the unity of the seer and the seen, then it rests in that single samādhi.

जब मन का विश्वास द्रष्टा और दृश्य की एकता के रूप में होता है, तब वह उस एक समाधि में विश्राम करता है।

7.45.39

स्वभावो दृश्यवैरस्यमेव तत्त्वविदो निजः । दृश्यस्पन्दनमेवाहुरतत्त्वज्ञत्वमुत्तमाः ॥ ३९ ॥

svabhāvo dṛśyavairasyameva tattvavido nijaḥ | dṛśyaspandanamevāhuratattvajñatvamuttamāḥ || 39 ||

The nature of the knower of reality is the enmity towards the seen; the supreme ones call the non-knowledge of reality the fluctuation of the seen.

तत्त्वज्ञ का स्वभाव दृश्य के प्रति वैर ही है; उत्तम लोग तत्त्व के अज्ञान को दृश्य का स्पंदन कहते हैं।

7.45.40

अतज्ज्ञायैव विषयाः स्वदन्ते न तु तद्विदः । न हि पीतामृतायान्तः स्वदते कटु काञ्जिकम् ॥ ४० ॥

atajjñāyaiva viṣayāḥ svadante na tu tadvidaḥ | na hi pītāmṛtāyāntaḥ svadate kaṭu kāñjikam || 40 ||

Only to the ignorant do objects appear pleasant; not so to the knower of reality. For one who has tasted the nectar of immortality, sour gruel does not taste pleasant.

केवल अज्ञानी के लिए ही विषय स्वादिष्ट लगते हैं; तत्त्वज्ञ के लिए नहीं। जिसने अमृत का स्वाद चखा है, उसके लिए खट्टी कंजी स्वादिष्ट नहीं लगती।

7.45.41

वितृष्णस्यात्मनिष्ठत्वादेषणात्रयमुज्झतः । ज्ञस्याप्यनिच्छतो ध्यानमर्थायातं प्रवर्तते ॥ ४१ ॥

vitṛṣṇasyātmaniṣṭhatvādeṣaṇātrayamujjhataḥ | jñasyāpyanicchatō dhyānamarthāyātaṃ pravartatē || 41 ||

Due to the self-centeredness of the one who is free from desire, abandoning the three desires, meditation spontaneously arises even for the wise one who does not wish for it.

तृष्णा से मुक्त होने के कारण आत्मनिष्ठता के कारण तीनों इच्छाओं को त्यागने वाले के लिए, चाहे वह न चाहे, ध्यान स्वतः उत्पन्न होता है।

7.45.42

बोधः स्फुरति तृष्णायाः सैव यस्य न विद्यते । तस्य स्वरूपमुत्सृज्य क्वासौ तिष्ठति कः कथम् ॥ ४२ ॥

bodhaḥ sphurati tṛṣṇāyāḥ saiva yasya na vidyatē | tasya svarūpamutsṛjya kvāsau tiṣṭhati kaḥ katham || 42 ||

Enlightenment shines forth when desire itself does not exist. For one who has abandoned their true nature, where does that person stand and how?

बोध तब प्रकट होता है जब तृष्णा ही नहीं होती। जिसने अपने स्वरूप को छोड़ दिया है, वह कहाँ खड़ा होता है और कैसे?

7.45.43

ज्ञस्यानाराधको ध्येयबोधो नयतु यो भवेत् । अनन्ता सा वितृष्णस्य निर्विभागोदितः स्वयम् ॥ ४३ ॥

jñasyānārādhakō dhyeyabodhō nayatu yō bhavēt | anantā sā vitṛṣṇasya nirvibhāgōditaḥ svayam || 43 ||

The meditation on knowledge that does not worship the knower, let it lead to that which is infinite. That is spontaneously expressed as undivided for the one who is free from desire.

जो ध्येय बोध ज्ञानी की आराधना नहीं करता, वह उस अनन्त की ओर ले जाए। वह स्वतः ही अविभाजित रूप में व्यक्त होता है जो तृष्णा से मुक्त है।

7.45.44

अनन्तमपतृष्णस्य स्वयमेव प्रवर्तते । ध्यानं गलितपक्षस्य संस्थानमिव भूभृतः ॥ ४४ ॥

anantamapatṛṣṇasya svayameva pravartatē | dhyānaṃ galitapakṣasya saṃsthānamiva bhūbhṛtaḥ || 44 ||

For the one who is free from desire, the infinite spontaneously arises. Meditation is like the stable state of the earth-bearer whose wings have melted.

जो तृष्णा से मुक्त है, उसके लिए अनन्त स्वतः ही उत्पन्न होता है। ध्यान उस पृथ्वी-धारक की स्थिर अवस्था की तरह है जिसके पंख पिघल गए हैं।

7.45.45

शुद्धबोधात्मनि ज्ञत्वादसमाहिततोदिता । न जातु सुसमिद्धेऽग्नौ घृतविन्दोरवस्थितिः ॥ ४५ ॥

śuddhabodhātmani jñatvādasamāhitatōditā | na jātu susamiddhē'gnau ghṛtavindōravasthitiḥ || 45 ||

In the pure consciousness of the self, arising from the state of non-concentration, there is never a state of ghee droplets in a well-kindled fire.

शुद्ध बोध आत्मा में, जो असमाहित अवस्था से उत्पन्न होता है, वहाँ कभी भी घी की बूँदों की अवस्था नहीं होती जो अच्छी तरह से जलती आग में होती है।

7.45.46

परं विषयवैतृष्ण्यं समाधानमुदाहृतम् । आहृतं येन तन्नूनं तस्मै नृब्रह्मणे नमः ॥ ४६ ॥

paraṃ viṣayavaitṛṣṇyaṃ samādhānamudāhṛtam | āhṛtaṃ yena tannūnaṃ tasmai nṛbrahmaṇe namaḥ || 46 ||

The highest dispassion towards worldly objects is called samadhi | I bow to the one who has attained this, the human Brahman

परम विषय वैराग्य को समाधि कहते हैं | जिसने इसे प्राप्त किया है, उस मानव ब्रह्म को मेरा नमन

7.45.47

नूनं विषयवैतृष्ण्ये परिप्रौढिमुपागते । न शक्नुवन्ति निर्हर्तुं ध्यानं सेन्द्राः सुरासुराः ॥ ४७ ॥

nūnaṃ viṣayavaitṛṣṇye paripraudḥimupāgate | na śaknuvanti nirhartuṃ dhyānaṃ sendrāḥ surāsurāḥ || 47 ||

When one attains the highest level of dispassion towards worldly objects, even the gods and demons with Indra cannot disturb the meditation

जब कोई विषयों के प्रति परम वैराग्य की अवस्था को प्राप्त कर लेता है, तब इंद्र सहित देवता और असुर भी ध्यान को भंग नहीं कर सकते

7.45.48

परं विषयवैतृष्ण्यं वज्रध्यानं प्रसाध्यताम्। भेदे विगलिते ज्ञानादन्यध्यानतृणेन किम्॥ ४८॥

paraṃ viṣayavaitṛṣṇyaṃ vajradhyānaṃ prasādhyatām | bhede vigalite jñānādanyadhyānatṛṇena kim || 48 ||

May the highest dispassion towards worldly objects be accomplished through vajra meditation | When the distinction is dissolved through knowledge, what is the use of other meditations

परम विषय वैराग्य वज्र ध्यान द्वारा सिद्ध हो | जब ज्ञान से भेद विलीन हो जाता है, तब दूसरे ध्यानों का क्या लाभ

7.45.49

मूर्खस्थो विश्वशब्दार्थो नामूर्खविषयस्तथा। तज्ज्ञाज्ञयोस्तयोश्चैव विश्वविश्वेशयोस्तथा॥ ४९॥

mūrkhastho viśvaśabdārtho nāmūrkhaviṣayastathā | tajjñājñayostayoścaiva viśvaviśveśayostathā || 49 ||

The meaning of the word 'world' is not for the foolish | Similarly, it is not a subject for the foolish | Thus, it is for the knower and the non-knower, and for the world and the lord of the world

विश्व शब्द का अर्थ मूर्खों के लिए नहीं है | इसी प्रकार, यह मूर्खों का विषय नहीं है | इसलिए, यह ज्ञानी और अज्ञानी के लिए है, और विश्व और विश्वेश्वर के लिए भी

7.45.50

यत्रैकीभूय कचनं तत्र विश्राम्यतां बुधाः। बोधभूमिषु सिद्धानामर्थानां वा विवेकिनाम्॥ ५०॥

yatraikībhūya kacanaṃ tatra viśrāmyatāṃ budhāḥ | bodhabhūmiṣu siddhānāmarthānāṃ vā vivekinām || 50 ||

Where there is oneness, let the wise rest there | In the realms of enlightenment of the accomplished ones or in the meanings of the discerning

जहाँ एकता है, वहाँ बुद्धिमान लोग विश्राम करें | सिद्धों के बोध भूमियों में या विवेकी लोगों के अर्थों में

7.45.51

सत्तासत्ते द्वयैक्ये च निर्णीते नेह केनचित्। उपाय एकः शास्त्रार्थो द्वितीयो ज्ञसमागमः॥ ५१॥

sattāsattē dvayaikeyē ca nirṇītē nēha kēnacit | upāya ēkaḥ śāstrārthō dvitīyō jñasamāgamaḥ || 51 ||

In the unity of existence and non-existence, nothing is determined by anyone. The first means is the understanding of scriptures, the second is the meeting of the wise.

अस्तित्व और अनस्तित्व के एकीकरण में, किसी ने कुछ नहीं निर्णय किया है। पहला उपाय शास्त्रों का अर्थ है, दूसरा ज्ञानी लोगों का मेल है।

7.45.52

ध्यानं तृतीयं निर्वाणे श्रेष्ठस्तत्रोत्तरोत्तरः। जीवादर्शान्मिथो रूपं गृह्णात्येषा महद्वपुः॥ ५२॥

dhyānaṃ tṛtīyaṃ nirvāṇē śrēṣṭhas tatrot tarōt tarōt tarōt | jīvādarśānmithō rūpaṃ gṛhṇātyēṣā mahadvapuḥ || 52 ||

Meditation is the third means in achieving liberation, which is the best. This great form perceives the form of the self from the mirror of the soul.

ध्यान मुक्ति प्राप्त करने का तीसरा उपाय है, जो सबसे उत्तम है। यह महान रूप आत्मा के दर्पण से आत्म का रूप देखता है।

7.45.53

जगत्युदेति संघट्टादाविशेषं समे समे। ज्ञातपूर्वापराशेषजगदष्टापदस्थितेः॥ ५३॥

jagatyudeti saṃghaṭṭādāviśēṣaṃ samē samē | jñātapūrvāparāśēṣajagadaṣṭāpadasthitēḥ || 53 ||

The world arises from the union of the indistinguishable and the same. It is known that the entire universe is established in the eight-fold path.

संसार अविभेद्य और समान के मिलन से उत्पन्न होता है। यह ज्ञात है कि पूरा ब्रह्माण्ड आठ पहलू की स्थिति में स्थित है।

7.45.54

एकसिद्धौ द्वयोः सिद्धिर्बोधवैतृष्ण्यदीपयोः । मतिवात्याधुतो व्योम्नि दग्धो ज्ञानाग्निनाखिलः ॥ ५४ ॥

ēkasiddhau dvayōḥ siddhirbōdhavaitṛṣṇyadīpayōḥ | mativātyādhutō vyōmni dagdhō jñānāgninākhilaḥ || 54 ||

In the attainment of one, the attainment of both is achieved, of knowledge and desire for knowledge. The entire intellect is burned by the fire of knowledge in the sky.

एक की सिद्धि में दोनों की सिद्धि होती है, ज्ञान और ज्ञान की इच्छा की। आकाश में ज्ञान की अग्नि से सम्पूर्ण बुद्धि जल जाती है।

7.45.55

जगत्तूलः परे शान्ते न जाने क्वाशु गच्छति । चित्राग्निनेव बोधेन तेन जाड्यं न शाम्यति ॥ ५५ ॥

jagattūlaḥ parē śāntē na jānē kvāśu gacchati | citrāgninēva bōdhēna tēna jāḍyaṃ na śāmyati || 55 ||

The world is like a cotton ball in the ultimate peace, I do not know where it goes quickly. Like a colorful fire, knowledge does not extinguish ignorance.

संसार अंतिम शांति में रूई की गोली के समान है, मुझे नहीं पता कि यह जल्दी कहाँ जाता है। रंगीन अग्नि की तरह, ज्ञान अज्ञान को नहीं बुझाता।

7.45.56

निर्मूलापि जगद्भ्रान्तिर्येनाशु न विलीयते । यथाज्ञस्य जगज्ज्ञप्तिरपज्ञानात्प्रदीप्यते ॥ ५६ ॥

nirmūlāpi jagadbhrāntiryenāśu na vilīyate | yathājñasya jagajjñaptirapajñānātpradīpyate || 56 ||

Even the rootless delusion of the world does not dissolve quickly. Just as the ignorance of an ignorant person is illuminated by knowledge.

निर्मूल भी जगत की भ्रांति जल्दी नहीं विलीन होती | जैसे अज्ञानी का ज्ञान अज्ञान से प्रदीप्यमान होता है

7.45.57

तथा ज्ञस्य परिज्ञानात्तदज्ञप्तिः प्रदीप्यते । तज्ज्ञस्याज्ञजगज्ज्ञप्तिशब्दार्थरहिता स्थिता ॥ ५७ ॥

tathā jñasya parijñānāttadajñaptiḥ pradīpyate | tajjñasyājñajagajjñaptiśabdārtharahitā sthitā || 57 ||

Similarly, the knowledge of the knower illuminates that ignorance. The ignorance of the knower is devoid of word and meaning, and it is established.

इसी प्रकार, ज्ञाता का ज्ञान उसके अज्ञान को प्रदीप्यमान करता है | ज्ञाता का अज्ञान शब्द और अर्थ से रहित है और स्थित है

7.45.58

यथास्थितैव त्रिजगज्ज्ञप्तिश्चित्र इवोदिता । शून्यत्वेनैव रचिता सुप्तत्वेनेव निर्मिता ॥ ५८ ॥

yathāsthitaiava trijagajjñaptiścittriva udita | śūnyatvenaiva racitā suptatveneva nirmitā || 58 ||

Just as it is, the knowledge of the three worlds is manifested as if it were a picture. It is created as if it were empty, and it is formed as if it were asleep.

जैसा है, त्रिलोक का ज्ञान चित्र के रूप में प्रकट होता है | यह शून्यता के रूप में बनाया गया है और सुप्तता के रूप में निर्मित है

7.45.59

भासते भामयी वाञ्छा जगज्ज्ञप्तिर्ज्ञचेतसि । नूनं बोधेऽविमूढस्य नाहंता न जगत्स्थितिः ॥ ५९ ॥

bhāsate bhāmayī vāñchā jagajjñaptirjñacetasi | nūnaṃ bodhe'vimūḍhasya nāhaṃtā na jagatsthitiḥ || 59 ||

The delusive desire shines in the mind of the knower. Indeed, in the realization of the undeluded, there is no sense of 'I' nor the existence of the world.

भ्रामक इच्छा ज्ञाता के मन में चमकती है | निश्चय ही, अविमूढ़ के बोध में 'मैं' का अहंकार नहीं है और न ही जगत की स्थिति है

7.45.60

भासते परमाभासरूपिणः काप्यवस्थितिः । बोधाबोधात्मकं चित्तं भाति शुष्कार्द्रकाष्ठवत् ॥ ६० ॥

bhāsate paramābhāsarūpiṇaḥ kāpyavasthitiḥ | bodhābodhātmakaṃ cittaṃ bhāti śuṣkārdrakeṣṭhavat || 60 ||

The supreme luminous form shines in some state. The mind, which is the nature of knowledge and ignorance, appears like dry and wet wood.

परम प्रकाशमय रूप किसी अवस्था में चमकता है | ज्ञान और अज्ञान की प्रकृति वाला मन सूखे और गीले लकड़ी के समान दिखता है

7.45.61

बोधादेकं जगद्भावैर्जाड्यान्नात्मत्वमागतम् । मिथो बोधाद्विवदति मैत्रीं भजति बोधतः ॥ ६१ ॥

bodhādekaṃ jagadbhāvairjāḍyānnātmatvamāgatam | mitho bodhāddvivadati maitrīṃ bhajati bodhataḥ || 61 ||

From awareness, the world appears as inert and does not attain the state of the self | From mutual awareness, it speaks of duality and experiences friendship from awareness

बोध से जगत जड़ प्रतीत होता है और आत्मत्व को प्राप्त नहीं होता | परस्पर बोध से द्वैत की बात करता है और बोध से मैत्री का अनुभव करता है

7.45.62

य एवास्याधिको भागस्तन्मयत्वेन तिष्ठति । बुधः सतत्त्वं नावैति जगतोऽभावभावयोः ॥ ६२ ॥

ya evāsyādhiko bhāgastanmayatvena tiṣṭhati | budhaḥ satattvaṃ nāvaiti jagato'bhāvabhāvayoḥ || 62 ||

That which is the supreme part of it, abides in the state of that | The wise one does not attain the reality of the world's existence and non-existence

जो उसका उत्कृष्ट भाग है, वह उसकी अवस्था में स्थित है | बुद्धिमान व्यक्ति जगत के अस्तित्व और अनस्तित्व की वास्तविकता को प्राप्त नहीं करता

7.45.63

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तानां स्वभावमिव तुर्यगः । वासनैव मनः सेयं स्वविचारेण नश्यति ॥ ६३ ॥

jāgratsvapnasuṣuptānāṃ svabhāvamiva turyagaḥ | vāsanāiva manaḥ seyaṃ svavicāreṇa naśyati || 63 ||

The fourth state is like the nature of the waking, dreaming, and deep sleep states | This mind, which is merely a tendency, is destroyed by self-inquiry

चौथी अवस्था जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति की प्रकृति के समान है | यह मन, जो केवल एक वासना है, स्व-विचार से नष्ट हो जाता है

7.45.64

अवस्तुत्वादतो मोक्षो नात्मनाशे प्रवर्तते ॥ ६४ ॥

avastutvādato mokṣo nātmanāśe pravartate || 64 ||

Therefore, liberation does not occur from the destruction of the self

इसलिए, मोक्ष आत्मा के विनाश से नहीं होता

7.45.65

ध्यानद्रुमात्स्वयमुपोढमनल्पपाकात्कालेन बोधमुपयातवतः क्रमेण । भुक्त्वा रसायनफलं परबोधमाद्यमिच्छन्मनोहरिणको निगडाद्विमुक्तः ॥ ६५ ॥

dhyānadrumātsvayamupoḍhamanalpapākātkālena bodhamupayātavataḥ kramena | bhuktvā rasāyanaphalaṃ parabodhamādyamicchanmanohariṇako nigaḍādvimuktaḥ || 65 ||

From the tree of meditation, spontaneously bearing abundant fruit, over time, one attains knowledge gradually | Having enjoyed the fruit of rejuvenation, desiring the primordial supreme knowledge, the mind-deer is freed from the shackles

ध्यान के वृक्ष से, स्वयं ही उत्पन्न होने वाले बहुतायत फल से, समय के साथ, एक व्यक्ति धीरे-धीरे ज्ञान प्राप्त करता है | रसायन फल का आनंद लेकर, आदिम परम ज्ञान की इच्छा करते हुए, मन-हिरण बंधनों से मुक्त हो जाता है

Chapter 46

7.46.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । परमार्थफले ज्ञाते मुक्तौ परिणतिं गते । बोधोऽप्यसद्भवत्याशु परमार्थो मनोमृगः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | paramārthaphale jñāte muktau pariṇatiṃ gate | bodho'pyasadbhavatyāśu paramārtho manomṛgaḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: When the ultimate truth is known and liberation is attained, even the knowledge becomes non-existent quickly, the ultimate truth is like a deer of the mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब परम सत्य का ज्ञान हो जाता है और मुक्ति प्राप्त हो जाती है, तो ज्ञान भी शीघ्र ही असत् हो जाता है, परम सत्य मन का मृग है।

7.46.2

क्वापि सा मृगता याति प्रक्षीणस्नेहदीपवत् । परमार्थदशैवास्ते तत्रानन्तावभासिनी ॥ २ ॥

kvāpi sā mṛgatā yāti prakṣīṇasnehadīpavat | paramārthadaśaivāste tatrānantāvabhāsinī || 2 ||

That deer-like nature goes somewhere, like a lamp with exhausted oil. The state of ultimate truth alone exists there, shining infinitely.

वह मृग-जैसी प्रकृति कहीं चली जाती है, जैसे तेल समाप्त हो चुके दीपक की तरह। परम सत्य की दशा ही वहां विद्यमान है, अनन्त रूप से चमकती हुई।

7.46.3

ध्यानद्रुमफलप्राप्तौ बोधतामागतं मनः । वज्रसारां स्थितिं धत्ते छिन्नपक्ष इवाचलः ॥ ३ ॥

dhyānadrumaphalaprāptau bodhatāmāgataṃ manaḥ | vajrasārāṃ sthitiṃ dhatte chinnapakṣa ivācalaḥ || 3 ||

In the attainment of the fruit of the tree of meditation, the mind reaches the state of knowledge. It attains a state as firm as a diamond, like a mountain with its wings cut off.

ध्यान के वृक्ष के फल की प्राप्ति में, मन ज्ञान की अवस्था तक पहुंचता है। यह हीरे की तरह दृढ़ अवस्था प्राप्त करता है, जैसे पंख कटे हुए पर्वत की तरह।

7.46.4

मनस्ता क्वापि संयाति तिष्ठत्यच्छैव बोधता । निर्बाधा निर्विभागा च सर्वाऽखर्वात्मिका सती ॥ ४ ॥

manastā kvāpi saṃyāti tiṣṭhatyacchaiava bodhatā | nirbādhā nirvibhāgā ca sarvā'kharvātmikā satī || 4 ||

That mind goes somewhere, but the state of knowledge remains pure. It is unobstructed, undivided, and all-pervading, being the essence of everything.

वह मन कहीं चला जाता है, लेकिन ज्ञान की अवस्था शुद्ध बनी रहती है। यह अवरुद्ध, अविभाजित और सर्वव्यापी है, सब कुछ का सार है।

7.46.5

सुविविक्ततया चित्तसत्ता बोधतयोदिता । अनाद्यन्ता भवत्यच्छप्रकाशफलदायिनी ॥ ५ ॥

suviviktatayā cittasattā bodhatayoditā | anādyantā bhavatyacchaprakāśaphaladāyinī || 5 ||

With clear distinction, the existence of the mind is illuminated by the state of knowledge. It becomes beginningless and endless, bestowing the fruit of pure light.

स्पष्ट भेद के साथ, मन की अस्तित्व ज्ञान की अवस्था से प्रकाशित होती है। यह अनादि और अनन्त हो जाती है, शुद्ध प्रकाश का फल देती है।

7.46.6

स्वयमेव ततस्तत्र निरस्तसकलैषणम्। अनाद्यन्तमनायासं ध्यानमेवावशिष्यते ॥ ६ ॥

svayameva tatastatra nirastasakalaiṣaṇam | anādyantamanāyāsaṃ dhyānamevāvaśiṣyate || 6 ||

Then, naturally, all desires are eliminated, and only meditation remains, which is endless, effortless.

तब स्वयं ही सभी इच्छाओं का नाश हो जाता है और केवल ध्यान ही शेष रहता है, जो अनादि, अनन्त और अनायास है।

7.46.7

यावन्नाधिगतं ब्रह्म न विश्रान्तं परे पदे। तावत्तन्मननत्वेन न ध्यानमवगम्यते ॥ ७ ॥

yāvannādhigataṃ brahma na viśrāntaṃ pare pade | tāvattanmanatvena na dhyānamavagamyate || 7 ||

Until Brahman is realized and one is not rested in the supreme state, meditation is not considered to be attained.

जब तक ब्रह्म की प्राप्ति नहीं होती और परम पद में विश्राम नहीं होता, तब तक ध्यान प्राप्त नहीं माना जाता।

7.46.8

परमार्थैकतामेन्य न जाने क्व मनो गतम्। क्व वासना क्व कर्माणि क्व हर्षामर्षसंविदः ॥ ८ ॥

paramārthaiakatāmenya na jāne kva mano gatam | kva vāsanā kva karmāṇi kva harṣāmarṣasaṃvidaḥ || 8 ||

I do not know where the mind has gone, where the desires are, where the actions are, and where the feelings of joy and anger are.

मैं नहीं जानता कि मन कहाँ चला गया, वासनाएँ कहाँ हैं, कर्म कहाँ हैं, और हर्ष और अमर्ष की भावनाएँ कहाँ हैं।

7.46.9

केवलं दृश्यते योगी गतो ध्यानैकनिष्ठताम्। स्थितो वज्रसमाधाने विपक्ष इव पर्वतः ॥ ९ ॥

kevalaṃ dṛśyate yogī gato dhyānaikanisthtām | sthito vajrasamādhāne vipakṣa iva parvataḥ || 9 ||

The yogi is seen to have attained the state of single-pointed meditation, standing firm in the diamond-like samadhi, like an immovable mountain.

योगी एकाग्र ध्यान की अवस्था प्राप्त करता हुआ दिखाई देता है, हीरे जैसे समाधि में स्थिर, एक अचल पर्वत की तरह।

7.46.10

विरसाखिलभोगस्य प्रशान्तेन्द्रियसंविदः। नीरसाशेषदृश्यस्य स्वात्मारामस्य योगिनः ॥ १० ॥

virasākhilabhogasya praśāntendriyasaṃvidaḥ | nīrasāśeṣadṛśyasya svātmārāmasya yoginaḥ || 10 ||

The yogi who finds joy in the self, for whom all enjoyments are tasteless, whose senses are calm, and who sees all perceptions as tasteless.

जिस योगी के लिए सभी भोग निरास हैं, जिसकी इंद्रियाँ शांत हैं, और जो सभी दृश्य को निरास देखता है, वह आत्माराम योगी है।

7.46.11

क्रमेण विगलद्वृत्तेर्बलाद्विश्रान्तिमीयुषः। अर्थायातं समाधानं केन नाम विचार्यते ॥ ११ ॥

krameṇa vigaladvṛtterbalādviśrāntimīyuṣaḥ | arthāyātaṃ samādhānaṃ kena nāma vicāryate || 11 ||

Gradually, as the mind's activities cease and it finds rest through force, one wonders by what means this state of concentration has been attained.

धीरे-धीरे, जैसे-जैसे मन की गतिविधियाँ समाप्त होती हैं और वह बलपूर्वक विश्राम पाता है, तब यह सोचा जाता है कि इस एकाग्रता की अवस्था कैसे प्राप्त हुई।

7.46.12

तावद्विषयवैरस्यं भावयन्त्युचिताशयाः । न पश्यन्त्येव तान्यावद्भोगांश्चित्रनरो यथा ॥ १२ ॥

tāvadvīṣayavairasyaṃ bhāvantyucitāśayāḥ | na paśyantyeva tānyāvadbhogāṃścitranaro yathā || 12 ||

Until then, those with pure minds cultivate aversion to sense objects. They do not see those enjoyments, just as a wise person does not see them.

तब तक, जिनके मन शुद्ध हैं, वे इंद्रियों के विषयों से विरक्ति पैदा करते हैं। वे उन भोगों को नहीं देखते, जैसे कि एक बुद्धिमान व्यक्ति उन्हें नहीं देखता।

7.46.13

अपश्यञ्जागतानर्थान्निर्वासनतयात्मवान् । बलाद्वज्रसमाधाने त्वन्येनेव निवेश्यते ॥ १३ ॥

apaśyañjāgatānarthānnirvāsanatayātmavān | balādvajrasamādhāne tvanyeneva niveśyate || 13 ||

Without seeing the worldly objects, the self-controlled one is forcibly established in the state of concentration, as if by another.

दुनिया की वस्तुओं को न देखकर, आत्मसंयमी व्यक्ति बलपूर्वक एकाग्रता की अवस्था में स्थापित होता है, मानो किसी दूसरे द्वारा।

7.46.14

प्रावृषीव नदीपूरो यः समाधिरुपस्थितः । बलादेव तमायातं भूयश्चलति नो मनः ॥ १४ ॥

prāvṛṣīva nadīpūro yaḥ samādhirupasthitaḥ | balādeva tamāyātaṃ bhūyaścalati no manaḥ || 14 ||

Like a river swollen by rain, the state of concentration that has been forcibly attained, the mind becomes even more restless.

मानसून के पानी से भरी नदी की तरह, जो एकाग्रता की अवस्था बलपूर्वक प्राप्त हुई है, मन और भी अधिक अशांत हो जाता है।

7.46.15

सर्वार्थशीतलत्वेन बलाद्ध्याने यदाऽऽगतम् । ज्ञानाद्विषयवैरस्य स समाधिर्हि नेतरः ॥ १५ ॥

sarvārthaśītalatvena balāddhyāne yadā''gatam | jñānādviṣayavairasya sa samādhirhi netaraḥ || 15 ||

When, through the coolness of all objects, the mind is forcibly engaged in meditation, that concentration arising from knowledge and aversion to sense objects is indeed true concentration.

जब, सभी वस्तुओं की शीतलता के द्वारा, मन बलपूर्वक ध्यान में लगा होता है, तब ज्ञान और इंद्रियों के विषयों से विरक्ति से उत्पन्न हुई एकाग्रता वास्तव में सच्ची एकाग्रता है।

7.46.16

दृढं विषयवैरस्यमेव ध्यानमुदाहृतम् । तदेव परिपाकेन वज्रसारं भवत्यलम् ॥ १६ ॥

dṛḍhaṃ viṣayavairasyameva dhyānamudāhṛtam | tadeva paripākena vajrasāraṃ bhavaty alam || 16 ||

Firm detachment from worldly objects is called meditation. That itself, through maturity, becomes as hard as a diamond.

दृढ़ विषय वैराग्य ही ध्यान कहलाता है | वही परिपक्वता के साथ हीरे के समान कठोर हो जाता है ||

7.46.17

तदेतद्भोगवैतृष्ण्यं ध्यानमङ्कुरितं हि तत् । तदेव पीठबन्धेन बद्धं भवति बन्धुरम् ॥ १७ ॥

tadetadbhogavaitṛṣṇyaṃ dhyānamankuritaṃ hi tat | tadeva pīṭhabandhena baddhaṃ bhavati bandhuram || 17 ||

This desire for enjoyment is the seed of meditation. That itself, when bound by the seat, becomes pleasant.

यह भोग की इच्छा ध्यान का बीज है | वही, जब आसन से बंधा होता है, सुखद हो जाता है ||

7.46.18

सम्यग्ज्ञानं समुच्छूनं सदैवोज्झितवासनम्। ध्यानं भवति निर्वाणमानन्दपदमागतम्॥ १८॥

samyagjñānaṃ samucchūnaṃ sadaivojjhitavāsanam | dhyānaṃ bhavati nirvāṇamānandapadamāgatam || 18 ||

Right knowledge, completely purified, always free from desires, becomes meditation leading to nirvana, the state of bliss.

सही ज्ञान, पूर्ण रूप से शुद्ध, हमेशा इच्छाओं से मुक्त, ध्यान बन जाता है जो निर्वाण, आनंद की अवस्था को प्राप्त होता है ||

7.46.19

अस्ति चेद्भोगवैतृष्ण्यं किमन्यद्ध्यानदुर्धिया। नास्ति चेद्भोगवैतृष्ण्यं किमन्यद्ध्यानदुर्धिया॥ १९॥

asti cedbhogavaitṛṣṇyaṃ kimanyaddhyānadurdhiyā | nāsti cedbhogavaitṛṣṇyaṃ kimanyaddhyānadurdhiyā || 19 ||

If there is a desire for enjoyment, what else is difficult in meditation? If there is no desire for enjoyment, what else is difficult in meditation?

अगर भोग की इच्छा है, तो ध्यान में और क्या कठिन है? अगर भोग की इच्छा नहीं है, तो ध्यान में और क्या कठिन है?

7.46.20

दृश्यस्वदनमुक्तस्य सम्यग्ज्ञानवतो मुनेः। निर्विकल्पं समाधानमविरामं प्रवर्तते॥ २०॥

dṛśyasvadanamuktasya samyagjñānavato muneḥ | nirvikalpaṃ samādhānamavirāmaṃ pravartate || 20 ||

For the sage who is liberated from the enjoyment of the seen, who possesses right knowledge, uninterrupted, non-dualistic meditation arises.

जो संत दृश्य भोग से मुक्त है, जिसके पास सही ज्ञान है, उसके लिए अविरत, अद्वैत समाधि उत्पन्न होती है ||

7.46.21

यस्मै न स्वदते दृश्यं स संबुद्ध इति स्मृतः। न स्वदन्ते यदा भोगाः सम्यग्बोधस्तथोदितः॥ २१॥

yasmai na svadate dṛśyaṃ sa saṃbuddha iti smṛtaḥ | na svadante yadā bhogāḥ samyagbodhastathoditaḥ || 21 ||

One who does not find pleasure in worldly objects is considered enlightened. When enjoyments do not satisfy, that is true enlightenment.

जिसे दृश्य रूप से स्वाद नहीं लगता, वह संबुद्ध कहलाता है | जब भोग स्वाद नहीं देते, तब वह सम्यक् बोध कहलाता है।

7.46.22

यस्य स्वभावविश्रान्तिः कथं तस्यास्ति भोगिता। अस्वभावो हि भोगित्वं तत्क्षये तत्कथं कुतः॥ २२॥

yasya svabhāvaviśrāntiḥ kathaṃ tasyāsti bhogitā | asvabhāvo hi bhogitvaṃ tatkṣaye tatkathaṃ kutaḥ || 22 ||

How can one who is content with their own nature have enjoyment? Enjoyment is contrary to one's nature, so how can it exist when one's nature is destroyed?

जिसका स्वभाव विश्रांति है, उसके लिए भोग कैसे हो सकता है? भोग स्वभाव के विरुद्ध है, तो जब स्वभाव नष्ट हो जाता है, तो भोग कैसे हो सकता है?

7.46.23

श्रुतपाठजपान्तेषु समाधिनिरतो भवेत्। समाधिविरतः श्रान्तः श्रुतपाठजपाञ्छ्रयेत्॥ २३॥

śrutapāṭhajapānteṣu samādhinirato bhavet | samādhiviratah śrāntah śrutapāṭhajapāñchrayet || 23 ||

One should be devoted to meditation at the end of studying, reciting, and chanting. If one is tired of meditation, one should seek refuge in studying, reciting, and chanting.

पढ़ने, पाठ करने और जप करने के बाद ध्यान में लगे रहना चाहिए | यदि ध्यान से थक जाए तो पढ़ने, पाठ करने और जप करने में शरण लेनी चाहिए।

7.46.24

निर्वाणमामीत निरस्तखेदं समस्तशङ्कास्तमयाभिरामम्। सुषुप्तसौम्यं समशान्तचित्तं श्रद्धनाभोगविशुद्धमन्तः॥ २४॥

nirvāṇamāmīta nirastakhedaṃ samastashaṅkāstamayābhirāmam | suṣuptsasauṃyaṃ samaśāntacittaṃ śraddhanābhogaviśuddhamantaḥ || 24 ||

Nirvana is attained by removing all fatigue, dispelling all doubts, and being filled with inner peace. It is like deep sleep, calm, with a peaceful mind, and purified by faith and enjoyment.

निर्वाण प्राप्त होता है थकान को दूर करके, सभी शंकाओं को दूर करके, और अंतर से शांति से भरकर। यह गहरी नींद की तरह है, शांत, शांत मन के साथ, और श्रद्धा और भोग से शुद्ध।

Chapter 47

7.47.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संसारभारसुश्रान्तः संकटेषु लुठत्तनुः । योऽभिवाञ्छति विश्रान्तिं तस्य क्रममिमं शृणु ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃsārabhārasuśrāntaḥ saṃkaṭeṣu luṭhattanuḥ | yo'bhivāñchati viśrāntiṃ tasya kramamimaṃ śṛṇu || 1 ||

Sri Vasistha said: One who is exhausted by the burden of worldly life and whose body is afflicted by difficulties, and who desires rest, should listen to this method.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो संसार के भार से थक गया है और जिसका शरीर कठिनाइयों से पीड़ित है, और जो विश्राम चाहता है, उसे इस क्रम को सुनना चाहिए।

7.47.2

पूर्वं विवेककणिका यदा स्वहृदि जायते । संसारनिर्वेदमयी कारणाद्वाप्यकारणात् ॥ २ ॥

pūrvaṃ vivekakaṇikā yadā svahṛdi jāyate | saṃsāranirvedamayī kāraṇādvāpyakāraṇāt || 2 ||

Previously, when a particle of discrimination arises in one's own heart, whether from a cause or without a cause, it is filled with dispassion towards worldly life.

पहले, जब अपने हृदय में विवेक का एक कण उत्पन्न होता है, चाहे कारण से हो या बिना कारण, तो यह संसार से वैराग्य से भर जाता है।

7.47.3

तदा श्रयन्ति सच्छायान्साधुत्वसुविशालिनः । अध्वश्रमहरांस्तापतप्ता मार्गतरूनिव ॥ ३ ॥

tadā śrayanti sacchāyānsādhu tvasuviśālinaḥ | adhvaśramaharāṃstāpataptā mārgatarūniva || 3 ||

Then they take refuge in the truly virtuous, who are expansive in goodness, like travelers exhausted by the journey's fatigue seeking the shade of trees.

तब वे सच्चे साधुओं की शरण लेते हैं, जो पुण्य में विशाल हैं, जैसे यात्रा की थकान से थके हुए यात्री पेड़ों की छाया खोजते हैं।

7.47.4

दूरे परिहरत्यज्ञान्यज्ञयूपानिवाध्वगः । स्नानदानतपोयज्ञान्करोति विबुधानुगः ॥ ४ ॥

dūre pariharatyajñānyajñayūpānivādhvagaḥ | snānadānatapoyajñānkaroti vibudhānugaḥ || 4 ||

From a distance, he avoids the ignorant, like a traveler avoids sacrificial posts, and performs rituals of bathing, charity, austerity, and sacrifices, following the wise.

दूर से, वह अज्ञानी लोगों को टालता है, जैसे यात्री यज्ञ के खंभों को टालता है, और बुद्धिमानों का अनुसरण करते हुए स्नान, दान, तप और यज्ञ के अनुष्ठान करता है।

7.47.5

पेशलं चानुरूपं च व्यवहारमकृत्रिमम् । लोक्यमाह्लादनं धत्ते चन्द्रविम्बमिवामृतम् ॥ ५ ॥

peśalaṃ cānurūpaṃ ca vyavahāramakṛtrimam | lokyamāhlādanaṃ dhatte candravimbaṃivāmṛtam || 5 ||

He adopts a pleasant and appropriate behavior, natural and delightful to the world, like the nectar-filled moon.

वह एक मधुर और उपयुक्त व्यवहार अपनाता है, जो प्राकृतिक और संसार के लिए आह्लादकारी है, जैसे अमृत से भरा चंद्रमा।

7.47.6

परप्रज्ञानुगो भव्यः परार्थपरिपूरकःपवित्रकर्मरसिकः कोऽपि सौम्यः प्रवर्तते ॥ ६ ॥

paraprajñānugo bhavyaḥ parārthaparipūrakaḥpavitrakarmarasikaḥ ko'pi saumyaḥ pravartate || 6 ||

One who follows the wisdom of others, who is noble, who fulfills the purposes of others, who delights in pure deeds, and who is gentle, such a person proceeds.

जो दूसरों की बुद्धिमत्ता का अनुगमन करता है, जो उत्तम है, जो दूसरों के उद्देश्यों को पूरा करता है, जो पवित्र कर्मों में आनंद लेता है, और जो सौम्य है, ऐसा व्यक्ति आगे बढ़ता है।

7.47.7

नवनीतस्थलीवाऽच्छा स्निग्धा मृद्वी मनोहराजनं सुखयति स्वाद्वी तदीया नवसंगतिः ॥ ७ ॥

navanītasthalīvā'cchā snigdhā mṛdvī manoharājanaṃ sukhayati svādvī tadīyā navasaṃgatiḥ || 7 ||

The desire for fresh butter, which is smooth, soft, delightful, and pleasing, brings happiness to people. Its new association is sweet.

ताज़ा मक्खन की इच्छा, जो चिकनी, नरम, मनोहर और प्रिय है, लोगों को सुख देती है। इसका नया संबंध मीठा है।

7.47.8

शीतलानि पवित्राणि चरितानि विवेकिनःइन्दोरिवांशुजालानि जनं शीतलयन्त्यलम् ॥ ८ ॥

śītalāni pavitrāṇi caritāni vivekinaḥindorivāṃśujālāni janaṃ śītalayantyalam || 8 ||

The cool and pure deeds of the wise, like the rays of the moon, sufficiently cool the people.

बुद्धिमान के ठंडे और पवित्र कर्म, चाँद की किरणों की तरह, लोगों को पर्याप्त ठंडक प्रदान करते हैं।

7.47.9

न तथोद्यानखण्डेषु पुष्पप्रकरहारिषुविश्राम्यते वीतभयं यथा साधुसमागमे ॥ ९ ॥

na tathodyānakhaṇḍeṣu puṣpaprakarahāriṣuviśrāmyate vītabhayaṃ yathā sādhusamāgame || 9 ||

One does not find such fearless rest in the sections of gardens full of flower beds as in the company of the virtuous.

फूलों की क्यारियों से भरे बगीचों के खंडों में ऐसा निडर विश्राम नहीं मिलता जैसा साधुओं की संगति में मिलता है।

7.47.10

मन्दाकिनीपयांसीव संगतानि विवेकिनाम्प्रक्षालयन्ति पापानि प्रयच्छन्ति विशुद्धताम् ॥ १० ॥

mandākinīpayāṃsīva saṃgatāni vivekināmprakṣālayanti pāpāni prayacchanti viśuddhatām || 10 ||

Like the waters of the Mandakini river, the association with the wise washes away sins and grants purity.

मंदाकिनी नदी के जल की तरह, बुद्धिमान के साथ संगति पापों को धो देती है और शुद्धता प्रदान करती है।

7.47.11

विवेकीषु विरक्तेषु संसारोत्तरणार्थिषु । जनः शीतलतामेति हिमहारगृहेष्विव ॥ ११ ॥

vivekiṣu viraktеṣu saṃsārottaraṇārthiṣu janaḥ śītalatāmeti himahāragṛheṣviva || 11 ||

Among the discriminating, the dispassionate, and those who seek liberation from the cycle of worldly existence, one attains coolness like a cooling creeper in houses adorned with snow.

विवेकशील, वैराग्यवान और संसार से मुक्ति चाहने वालों के बीच, व्यक्ति हिम से सजे घरों में शीतल लता के समान शीतलता को प्राप्त करता है।

7.47.12

ननु नामरतोदारा या विवेकिनी विद्यते सुरगन्धर्वकन्यासु मानवीषु न विद्यते ॥ १२ ॥

nanu nāmaratodārā yā vivekini vidyate suragandharvakanyāsu mānavīṣu na vidyate || 12 ||

Indeed, that woman who is endowed with discernment is truly noble and excellent. Such discernment is found among celestial and gandharva maidens, but not among ordinary human women.

वास्तव में, जो स्त्री विवेक से युक्त होती है, वही सचमुच श्रेष्ठ और उदार होती है। ऐसा विवेक देव और गन्धर्व कन्याओं में तो पाया जाता है, पर साधारण मानवी स्त्रियों में नहीं मिलता।

7.47.13

प्रज्ञा प्रसादमायाति क्रमादुचितकर्मणः। अन्तःकरोति शास्त्रार्थमर्थं मुकुरभूरिव ॥ १३ ॥

prajñā prasādamāyāti kramāducitakarmaṇaḥ antaḥkaroti śāstrārthamarthaṃ mukurabhūriva || 13 ||

Wisdom attains clarity through appropriate action performed in sequence. It internalizes the meaning of the scriptures as a mirror reflects an object.

उचित कर्मों के क्रम से प्रज्ञा निर्मलता को प्राप्त होती है। वह शास्त्रों के अर्थ को मन में उसी प्रकार उतार लेती है जैसे दर्पण वस्तु का प्रतिबिम्ब ग्रहण करता है।

7.47.14

सत्प्रज्ञोन्नतिमायाति शास्त्रार्थरसशालिनी। विवेकिनी विलासेन कदलीव महावने ॥ १४ ॥

satprajñonnatimāyāti śāstrārtharasaśālinī vivekini vilāsena kadalīva mahāvane || 14 ||

One endowed with true wisdom attains elevation, being rich in the essence of scriptural meaning. Like a plantain tree in a great forest, she flourishes through the grace of discernment.

सच्ची बुद्धि से युक्त व्यक्ति शास्त्रों के अर्थ के रस से परिपूर्ण होकर उन्नति को प्राप्त होता है। जैसे महान वन में केला का वृक्ष विवेक के प्रसाद से फूलता-फलता है।

7.47.15

अन्तरेवानुभवति सर्वार्थान् प्रतिबिम्बितान्। आदर्शवदशेषेण प्रज्ञा निर्मल्यशालिनी ॥ १५ ॥

antarevānubhavati sarvārthānpratibimbitān ādarśavadaśeṣeṇa prajñā nairmalyaśālinī || 15 ||

Within herself, she experiences all objects as reflected, just as a mirror reflects everything without residue. Wisdom, endowed with purity, reveals all things in their entirety.

वह अपने भीतर ही सभी वस्तुओं को प्रतिबिम्बित रूप में अनुभव करती है, जैसे दर्पण बिना किसी शेष के सब कुछ प्रतिबिम्बित कर देता है। निर्मलता से युक्त प्रज्ञा सब कुछ पूर्ण रूप से प्रकट करती है।

7.47.16

साधुसंगमशुद्धात्मा शास्त्रार्थपरिमार्जितः। प्राज्ञो भात्युद्धृतं वह्नेरग्निशौचमिवांशुकम् ॥ १६ ॥

sādhusaṃgamaśuddhātmā śāstrārthaparimārjitaḥ | prājño bhātyuddhṛtaṃ vahneragniśaucamivāṃśukam || 16 ||

One who is purified by the company of the virtuous and has cleansed their soul through the study of scriptures shines like a cloth purified by fire.

जो साधुओं के संग से शुद्ध हो गया है और शास्त्रों के अर्थ से परिमार्जित है, वह प्राज्ञ अग्नि से शुद्ध किए गए वस्त्र की तरह चमकता है।

7.47.17

कचत्काञ्चनकान्तेन विमलालोककारिणा । भुवनं भास्करेणेव भाति साधुः स्वतेजसा ॥ १७ ॥

kacatkāñcanakāntena vimalālokakāriṇā | bhuvanaṃ bhāskareṇeva bhāti sādhuḥ svatejasā || 17 ||

Just as the sun illuminates the world with its pure light, so does the virtuous person shine with their own radiance, adorned with the brilliance of gold.

जैसे सूर्य अपने शुद्ध प्रकाश से संसार को प्रकाशित करता है, वैसे ही साधु पुरुष अपने तेज से चमकता है, जो सोने की चमक से सुशोभित है।

7.47.18

तथानुगच्छति प्राज्ञः शास्त्रसाधुसमागमौ । यथात्यन्तानुषङ्गेण तावेवानुभवत्यसौ ॥ १८ ॥

tathānugacchati prājñaḥ śāstrasādhusamāgamau | yathātyantānuṣaṅgeṇa tāvevānubhavatyasau || 18 ||

Thus, the wise person follows the path of scriptures and the company of the virtuous with utmost devotion, experiencing them fully.

इस प्रकार, प्राज्ञ पुरुष शास्त्रों और साधुओं के संग का अनुसरण करता है, उनका अत्यंत अनुषंग करते हुए उन्हें पूरी तरह से अनुभव करता है।

7.47.19

क्रमात्सज्जनतामेत्य शास्त्रार्थभरभावितः । भाति भोगानधःकुर्वन्पञ्जरादिव निर्गतः ॥ १९ ॥

kramātsajjanatāmetya śāstrārthabharabhāvitaḥ | bhāti bhogānadhaḥkurvanpañjarādiva nirgataḥ || 19 ||

Gradually attaining the state of a noble person, filled with the essence of scriptural knowledge, one shines by renouncing worldly pleasures, like a bird freed from a cage.

क्रमशः सज्जन की स्थिति को प्राप्त करके, शास्त्रों के अर्थ से भरपूर होकर, वह भोगों को त्याग कर चमकता है, जैसे पिंजड़े से मुक्त हुआ पक्षी।

7.47.20

भोगाभिगमदौर्भाग्यं दिनानुदिनमुज्झता । तेन तत्कुलमाभाति ताराचक्रमिवेन्दुना ॥ २० ॥

bhogābhigamadaurbhāgyaṃ dinānudinamujjhatā | tena tatkulamābhāti tārācakramivendunā || 20 ||

By gradually renouncing the misfortune of attachment to worldly pleasures, that family shines like the moon illuminating the stars.

भोगों के प्रति आसक्ति के दुर्भाग्य को क्रमशः त्याग कर, वह परिवार चन्द्रमा की तरह तारों को प्रकाशित करता है।

7.47.21

अभोगकृपणा कापि न चैवास्य प्रवर्तते । मुखे कान्तिरपूर्वैव चन्द्रे राहुमृते यथा ॥ २१ ॥

abhogakṛpaṇā kāpi na caivāsya pravartate | mukhe kāntirapūrvai va candre rāhumṛte yathā || 21 ||

Even the miserliness of not enjoying does not arise in him | The radiance on his face is like the moon without Rahu

भोग करने से बचने का लोभ भी उसमें नहीं उत्पन्न होता | उसके मुख पर चन्द्रमा के समान राहु के बिना कान्ति होती है

7.47.22

तृणीकृतत्रिजगतां महतामभिधेयताम् । स याति कल्पविटपी नभसीव दिवौकसाम् ॥ २२ ॥

tṛṇīkṛtatrijagatāṃ mahatāmabhidheyatām | sa yāti kalpaviṭapī nabhasīva divaukasām || 22 ||

He who considers the three worlds as insignificant attains the status of the great ones | He becomes like a wish-fulfilling tree in the sky for the gods

जो तीनों जगतों को तृण के समान समझता है, वह महानों की स्थिति को प्राप्त होता है | वह देवताओं के लिए आकाश में कल्पवृक्ष के समान हो जाता है

7.47.23

भोगानां द्वेषणेनान्तर्लज्जमानो मनस्यपि । भोगानामप्यसंपत्त्या परमं परितुष्यति ॥ २३ ॥

bhogānāṃ dveṣaṇenāntarlajjamāno manasyapi | bhogānāmapyasaṃpattyā paramaṃ parituṣyati || 23 ||

Feeling ashamed within due to the hatred of enjoyments | He is supremely content even without the attainment of enjoyments

भोगों के द्वेष के कारण अन्तर्मन में लज्जित होकर | भोगों के अभाव में भी वह परम संतुष्ट होता है

7.47.24

स्वा एवोपहसत्यन्तस्तरुणीस्तरलक्रियाः । खेदस्मेरमुखो जातीर्जातिस्मर इवाधमः ॥ २४ ॥

svā evopahasatyantastaruṇīstaralakriyāḥ | khedasmeramukho jātīrjātismara ivādhamaḥ || 24 ||

He laughs at his own actions within | With a face full of sorrow, he appears like a fallen one remembering his past

वह अपने कर्मों पर अन्तर्मन में हँसता है | दुःख से भरे मुख से वह पूर्वजन्म की स्मृति के साथ पतित के समान लगता है

7.47.25

अथ तं द्रष्टुमायान्ति सौहार्देनैव साधवः । भूमाविवोदितं चन्द्रं विस्मयोत्फुल्ललोचनाः ॥ २५ ॥

atha taṃ draṣṭumāyānti sauhārdenaiva sādhavaḥ | bhūmāvivotitaṃ candraṃ vismayotphullalocanāḥ || 25 ||

Then the virtuous ones come to see him with affection | Like the moon risen on the earth, with eyes full of wonder

तब साधु लोग उसे देखने के लिए स्नेह से आते हैं | पृथ्वी पर उदित चन्द्रमा के समान, आश्चर्य से भरे नेत्रों से

7.47.26

नित्यानादृतभोगोऽसौ ततोऽप्युचितया धिया प्राप्तमप्युचितारम्भं भोगं न बहुमन्यते ॥ २६ ॥

nityānādṛtabhogo'sau tato'pyucitayā dhiyā prāptamapyucitārambhaṃ bhogaṃ na bahumanyate || 26 ||

The one who is always indifferent to enjoyment, even with the right mind, does not value the enjoyment that has been obtained, even if it is appropriate.

जो हमेशा भोग की ओर उदासीन रहता है, वह सही मन से भी प्राप्त हुए उचित भोग को भी महत्व नहीं देता।

7.47.27

पूर्वं संसृतिवैरस्यमन्तरेवोदितात्मनः जायते जीर्णजाड्यस्य पाकादिव शरत्तरोः ॥ २७ ॥

pūrvaṃ saṃsṛtivairasyamantarevoditātmanaḥ jāyate jīrṇajāḍyasya pākādiva śarattaroḥ || 27 ||

Previously, the enmity of transmigration arises within the self, like the ripening of old age and decay, similar to the autumn season.

पहले, पुनर्जन्म की वैरता आत्मा में उत्पन्न होती है, जैसे बुढ़ापे और जड़ता का पकना, शरद ऋतु की तरह।

7.47.28

ततः सज्जनसंपर्कमुदर्कश्रेयसे स्वयम् करोति स्वस्थतागृध्नुर्भिषगाश्रयणं यथा ॥ २८ ॥

tataḥ sajjanasamparkamudarkaśreyase svayam karoti svasthatāgṛdhnurbhiṣagāśrayaṇaṃ yathā || 28 ||

Then, one naturally seeks the company of good people for the highest good, just as a sick person seeks a physician for well-being.

तब, कोई स्वाभाविक रूप से उच्चतम कल्याण के लिए सज्जनों के साथ संपर्क करता है, जैसे कि एक बीमार व्यक्ति अपने स्वास्थ्य के लिए चिकित्सक की शरण लेता है।

7.47.29

तेनोदारमतिर्भूत्वा शास्त्रार्थेषु निमज्जति महान्महाप्रसन्नेषु सरःस्विव महागजः ॥ २९ ॥

tenodāramatirbhūtvā śāstrārtheṣu nimajjati mahānmahāprasanneṣu saraḥsviva mahāgajaḥ || 29 ||

Thus, becoming wise, one immerses oneself in the meanings of the scriptures, like a great elephant in a vast, clear lake.

इस प्रकार, बुद्धिमान होकर, कोई शास्त्रों के अर्थों में डूब जाता है, जैसे कि एक बड़ा हाथी एक विशाल, स्वच्छ तालाब में।

7.47.30

सज्जनो हि समुत्तार्य विपद्भ्यो निकटस्थितम् नियोजयति संपत्सु स्वालोकेष्विव भास्करः ॥ ३० ॥

sajjano hi samuttārya vipadbhyo nikaṭasthitam niyojayati saṃpatsu svālokeṣviva bhāskaraḥ || 30 ||

Indeed, a good person, having rescued someone from nearby dangers, places them in prosperity, just as the sun places beings in their own worlds.

वास्तव में, एक सज्जन व्यक्ति, किसी को निकट के खतरों से बचाकर, उसे समृद्धि में स्थापित करता है, जैसे कि सूर्य अपने लोकों में प्राणियों को स्थापित करता है।

7.47.31

परस्वादानविरतिः पूर्वमेव प्रवर्तते । विवेकिनो निजार्थेषु संतोषश्चोपजायते ॥ ३१ ॥

parasvādānaviratiḥ pūrvameva pravartate | vivekino nijārtheṣu saṃtoṣaścopajāyate || 31 ||

One should first refrain from taking others' possessions. Then, the wise person finds contentment in their own affairs.

पहले दूसरों की वस्तुओं को लेना छोड़ देना चाहिए। फिर, बुद्धिमान व्यक्ति अपने कामों में संतोष पाता है।

7.47.32

परस्वादानविरतः संतोषामृतनिर्भरः । विवेकी क्रमशः स्वार्थानप्युपेक्षितुमिच्छति ॥ ३२ ॥

parasvādānaviratataḥ saṃtoṣāmṛtanirbharaḥ | vivekī kramaśaḥ svārthānapyupekṣitumicchati || 32 ||

Having refrained from taking others' possessions and being filled with the nectar of contentment, the wise person gradually wishes to renounce even their own interests.

दूसरों की वस्तुओं को लेने से बचने के बाद और संतोष के अमृत से भरे होने के बाद, बुद्धिमान व्यक्ति धीरे-धीरे अपने ही हितों को त्यागना चाहता है।

7.47.33

ददाति कणपिण्याकशाकाद्यपि हि याचते । तेनैवाभ्यासयोगेन स्वमांसानि ददात्यसौ ॥ ३३ ॥

dadāti kaṇapiṇyākaśākādyapi hi yācate | tenaivābhyāsayogena svamāṃsāni dadātyasau || 33 ||

One who gives even small things like grains or vegetables when asked, through the practice of giving, eventually gives away even their own flesh.

जो व्यक्ति माँगने पर छोटी-छोटी चीजें जैसे अनाज या सब्जियाँ देता है, दान करने के अभ्यास से, अंततः अपना ही मांस दे देता है।

7.47.34

नूनं विलयचित्तानां विवेकमनुधावताम्। मौर्ख्यं लघुत्वमायाति धावतामिव गोष्पदम्॥ ३४॥

nūnaṃ vilayacittānāṃ vivekamanudhāvatām | maurkhyam laghutvamāyāti dhāvatāmiva goṣpadam || 34 ||

Certainly, for those whose minds are dissolved in discernment and who pursue wisdom, foolishness becomes light, just as a cow's hoof becomes light while running.

निश्चित रूप से, जिनके मन विवेक में विलीन हो गए हैं और जो बुद्धिमत्ता का अनुसरण करते हैं, उनके लिए मूर्खता हल्की हो जाती है, जैसे दौड़ती गाय का खुर हल्का हो जाता है।

7.47.35

परार्थादानविरतिं पूर्वमभ्यस्य यत्नतः। आहर्तव्या विवेकेन ततः स्वार्थेष्वरक्तता॥ ३५॥

parārthādānaviratiṃ pūrvamabhyasya yatnataḥ | āhartavyā vivekena tataḥ svārtheṣvaraktatā || 35 ||

One should first diligently practice refraining from taking others' possessions. Then, with discernment, one should cultivate detachment from their own interests.

पहले दूसरों की वस्तुओं को लेने से बचने का अभ्यास मेहनत से करना चाहिए। फिर, बुद्धिमत्ता से, अपने ही हितों से विरक्ति विकसित करनी चाहिए।

7.47.36

ततो भोगनिरासेन सह स्वार्थनिराकृतिः। परमायै सुविश्रान्त्यै क्रियते कृतिभिः क्रमात्॥ ३६॥

tato bhoganirāsena saha svārthanirākṛtiḥ| paramāyai suviśrāntyai kriyate kṛtibhiḥ kramāt || 36 ||

Then, through the elimination of enjoyment and the renunciation of self-interest, one gradually attains supreme rest through actions.

तब, भोग के त्याग और स्वार्थ की निराकृति के साथ, क्रमशः कृतियों द्वारा परम विश्रांति प्राप्त होती है।

7.47.37

न तादृशं जगत्यस्मिन्दुःखं नरककोटिषु। यादृशं यावदायुष्कमर्थोपार्जनशासनम्॥ ३७॥

na tādṛśaṃ jagatyasminduḥkhaṃ narakakoṭiṣu| yādṛśaṃ yāvadāyuṣkamarhopārjanśāsanam || 37 ||

There is no such suffering in this world or even in countless hells as the rule of acquiring wealth for as long as one lives.

इस जगत में या अनगिनत नरकों में ऐसा कोई दुःख नहीं है जैसा जीवन भर धन अर्जित करने का नियम है।

7.47.38

आसने शयने याने गमने रमणे जने। आधिचिन्तापरा एव ननु मूढा विदन्तु ताम्॥ ३८॥

āsane śayane yāne gamane ramaṇe jane| ādhicintāparā eva nanu mūḍhā vidantu tām || 38 ||

In sitting, sleeping, traveling, walking, enjoying, and among people, they are always engrossed in worries. Indeed, let the foolish know this.

बैठने, सोने, यात्रा करने, चलने, आनंद लेने और लोगों में, वे हमेशा चिंताओं में डूबे रहते हैं। निश्चित रूप से, मूर्खों को यह जानना चाहिए।

7.47.39

नन्वर्था विततानर्थाः संपदः संततापदः। भोगा भवमहारोगा विपरीतेन भाविताः ॥ ३९ ॥

nanvarthā vitatānarthāḥ saṃpadaḥ saṃtatāpadaḥ| bhogā bhavamahārogā viparītena bhāvitāḥ || 39 ||

Indeed, wealth is the cause of many misfortunes, possessions are the cause of continuous suffering, and enjoyments are the cause of great diseases of existence, all of which are experienced in the opposite manner.

निश्चित रूप से, धन अनेक दुर्भाग्यों का कारण है, संपत्ति निरंतर दुःख का कारण है, और भोग अस्तित्व के महान रोगों का कारण है, जो सब विपरीत ढंग से अनुभव किए जाते हैं।

7.47.40

तावन्नायाति वैरस्यं चिन्ताविषयजृम्भणैः। यावदर्थमहानर्थो न कदर्थार्थमर्थ्यते ॥ ४० ॥

tāvannāyāti vairasyaṃ cintāviṣayajṛmbhaṇaiḥ| yāvadarthamahānartho na kadarthārthamarthyate || 40 ||

Enmity does not arise as long as one is engrossed in the expansion of thoughts about wealth. As long as wealth is considered the greatest wealth, it is not valued as worthless.

जब तक कोई धन के विचारों में विस्तार करने में लगा है, तब तक वैर नहीं उत्पन्न होता। जब तक धन को सबसे बड़ा धन माना जाता है, तब तक उसे निरर्थक नहीं माना जाता।

7.47.41

अनुत्तमसुखं यस्मै चिराय परिरोचते। जगत्तृणशिखादृष्ट्या सोऽर्थं पश्यतु शाम्यतु ॥ ४१ ॥

anuttamasukhaṃ yasmai cirāya parirocate | jagattṛṇaśikhādṛṣṭyā so'rthaṃ paśyatu śāmyatu || 41 ||

May one who finds supreme happiness in the world for a long time, see the essence of life with the vision of a blade of grass and be at peace.

जिसे चिरकाल तक अनुत्तम सुख प्राप्त हो, वह जगत् को तृण की शिखा की दृष्टि से देखे और शान्त हो जाए।

7.47.42

भूरिभावविकाराणां जरामरणकर्मणाम्। दैन्यदौरात्म्यदाहानामर्थः सार्थ इति स्मृतः ॥ ४२ ॥

bhūribhāvavikārāṇāṃ jarāmarṇakarmaṇām | dainyadaurātmyadāhānāmarthaḥ sārtha iti smṛtaḥ || 42 ||

The essence of the numerous transformations, aging, death, and actions, as well as the sufferings of poverty, self-doubt, and burning desires, is considered to be the true essence.

अनेक परिवर्तनों, वृद्धावस्था, मृत्यु, और कर्मों का सार, साथ ही दरिद्रता, आत्म-संदेह, और जलती इच्छाओं का दुःख भी सार माना जाता है।

7.47.43

अस्मिञ्जगति जन्तूनां जरामरणशालिनाम्। अजरामरणं कर्तुं संतोषोऽस्ति रसायनम् ॥ ४३ ॥

asmijjagati jantūnāṃ jarāmaraṇaśālinām | ajarāmaraṇaṃ kartuṃ saṃtoṣo'sti rasāyanam || 43 ||

In this world, for beings who are subject to aging and death, contentment is the elixir that brings immortality.

इस जगत् में, जो जीव वृद्धावस्था और मृत्यु के अधीन हैं, उनके लिए संतोष ही अमरता देने वाला अमृत है।

7.47.44

वसन्तो नन्दनोद्यानमिन्दुरप्सरसः स्मृताः । इत्येकतः समुदितं संतोषामृतमेकतः ॥ ४४ ॥

vasanto nandanodyānamindurapsarasaḥ smṛtāḥ | ityekataḥ samuditaṃ saṃtoṣāmṛtamekataḥ || 44 ||

Spring, the garden of Nandana, the moon, and the celestial nymphs are remembered on one side, while the elixir of contentment is remembered on the other side.

वसंत, नन्दन उद्यान, चंद्रमा, और अप्सराएँ एक ओर याद की जाती हैं, जबकि संतोष का अमृत दूसरी ओर याद किया जाता है।

7.47.45

सरसः प्रावृषेवान्तः संतोषेणैव पूर्णता । गम्भीरां शीतलां हृद्यां प्रसन्नां रसशालिनीम् ॥ ४५ ॥

sarasaḥ prāvṛṣevāntaḥ saṃtoṣeṇaiva pūrṇatā | gambhīrāṃ śītalāṃ hṛdyāṃ prasannāṃ rasaśālinīm || 45 ||

Just as a lake is full during the rainy season, so too is contentment the source of completeness, depth, coolness, delight, clarity, and richness.

जैसे एक तालाब वर्षा ऋतु में भर जाता है, वैसे ही संतोष पूर्णता, गहराई, ठंडक, आनंद, स्पष्टता, और समृद्धि का स्रोत है।

7.47.46

साधुरोजस्वितामेत्य संतोषेणैव राजते । सुपुष्पितवनाकारो वसन्तेनेव पादपः ॥ ४६ ॥

sādhurojasvitāmetya saṃtoṣeṇaiva rājate | supuṣpitavanākāro vasanteneva pādapaḥ || 46 ||

A virtuous person shines with contentment, like a tree in full bloom in the spring.

साधु पुरुष संतोष से ही चमकता है, जैसे वसंत ऋतु में खिला हुआ वन का वृक्ष।

7.47.47

पादपीठपरामर्शपिष्टकीटवदीहते । दीनप्रकृतिरर्थार्थी दुःखाद्दुःखान्तरं व्रजेत् ॥ ४७ ॥

pādapīṭhaparāmarśapiṣṭakīṭavadīhate | dīnaprakṛtirarthārthī duḥkhāddhuḥkhāntaraṃ vrajet || 47 ||

A person who is poor and seeks wealth is like a worm in a tree's bark, moving from one misery to another.

एक गरीब व्यक्ति जो धन की खोज करता है, वह वृक्ष की छाल में एक कीट की तरह होता है, जो एक दुःख से दूसरे दुःख में बढ़ता है।

7.47.48

कल्लोलविकलाः क्षुब्धसमुद्रपतिता इव । नाप्नुवन्ति स्थितिं स्वस्थां विकृताकृतयोऽर्थिनः ॥ ४८ ॥

kallolavikalāḥ kṣubdhasamudrapatitā iva | nāpnuvanti sthitiṃ svasthāṃ vikṛtākṛtayo'rthinaḥ || 48 ||

Those who are disturbed and seek wealth are like the waves in a turbulent sea, unable to find stability.

जो लोग विचलित हैं और धन की खोज करते हैं, वे उफनते समुद्र की लहरों की तरह होते हैं, जो स्थिरता नहीं पा सकते।

7.47.49

संपद प्रमदाश्चैव तरङ्गोत्तुङ्गभङ्गुराः । कस्तास्वहिफणच्छत्रच्छायासु रमते बुधः ॥ ४९ ॥

saṃpad pramadāścaiva taraṅgottuṅgabhaṅgurāḥ | kastāsvahiphṇacchatracchāyāsu ramate budhaḥ || 49 ||

Wealth and pleasures are like the high and unstable waves of the sea. Who would enjoy them, knowing their unstable nature?

धन और सुख समुद्र की उठती-गिरती लहरों की तरह होते हैं। ऐसे में कौन बुद्धिमान व्यक्ति उन्हें भोगेगा, जानते हुए कि वे अस्थिर हैं?

7.47.50

अर्थोपार्जनरक्षाणां जानन्नपि कदर्थनाम्। यः करोति स्पृहां मूढो नृपशुं तं न संस्पृशेत्॥ ५०॥

arthopārjanarakṣāṇāṃ jānannapi kadarthanām | yaḥ karoti spṛhāṃ mūḍho nṛpaśuṃ taṃ na saṃspṛśet || 50 ||

One who knows the futility of acquiring and protecting wealth but still desires it is foolish. Such a person should not be associated with.

जो धन की प्राप्ति और संरक्षण की व्यर्थता जानता है फिर भी उसकी इच्छा रखता है, वह मूर्ख है। ऐसे व्यक्ति का संपर्क नहीं करना चाहिए।

7.47.51

मनसो बाह्यमारम्भमान्तरं च लुनाति यः। समं वैतृष्ण्यदात्रेण तस्य क्षेत्रं प्रकाशते॥ ५१॥

manaso bāhyamārambhamāntaraṃ ca lunāti yaḥ| samaṃ vaitṛṣṇyadātreṇa tasya kṣetraṃ prakāśate|| 51 ||

He who renounces both external and internal attachments, and remains equanimous with a sense of detachment, his true nature becomes manifest.

जो बाह्य और आन्तरिक आसक्तियों को त्याग देता है और समभाव से वैराग्य के साथ रहता है, उसका सच्चा स्वरूप प्रकट होता है।

7.47.52

जगत्त्वमज्ञसंबुद्धं ज्ञो विदन्नसदेव यत्। सतीव तत्र स्फुरति तदनभ्यासजृम्भितम्॥ ५२॥

jagattvamajñasaṃbuddhaṃ jñō vidannasadeva yat| satīva tatra sphurati tadanabhyāsajṛmbhitam|| 52 ||

The wise one, knowing the world to be ignorant, perceives the unreal as real. That which is not practiced appears as real.

विद्वान् जो जगत् को अज्ञानी समझता है, वह असत् को सत् समझता है। जो अभ्यास नहीं किया जाता है, वह सत् के रूप में प्रकट होता है।

7.47.53

संसारनिर्वेददशामुपेत्य सत्संगमं शास्त्रमुपेत्य तेन। शास्त्रार्थभावेन निरस्य भोगान्वैतृष्ण्यदाढ्यात्परमार्थमेति॥ ५३॥

saṃsāranirvedadaśāmupetya satsaṃgamaṃ śāstramupetya tena| śāstrārthabhāvena nirasya bhogānvaitṛṣṇyadāṛḍhyātparamārthameti|| 53 ||

Having reached the state of dispassion towards the world, one should seek the company of the wise and study the scriptures. By understanding the essence of the scriptures, one should renounce worldly pleasures and attain the supreme truth through steadfast detachment.

संसार से वैराग्य की दशा में पहुँचकर, सत्संग और शास्त्रों का सहारा लेना चाहिए। शास्त्रों के अर्थ को समझकर, भोगों को त्याग कर, स्थिर वैराग्य से परमार्थ को प्राप्त करना चाहिए।

Chapter 48

7.48.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । रूढे संसारनिर्वेदे स्थिते साधुसमागमे । शास्त्रार्थे भाविते बुद्ध्या भोगवैतृष्ण्य आगते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rūḍhe saṃsāranirvede sthite sādhusamāgame | śāstrārthe bhāvite buddhyā bhogavaitṛṣṇya āgate || 1 ||

Shri Vasistha said: When one is firmly established in dispassion towards the world, associated with the good, and the mind is purified by the knowledge of scriptures, then one attains disinterest in worldly pleasures.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब संसार से वैराग्य दृढ़ हो जाता है, सत्संग होता है, और शास्त्रों के अर्थ से बुद्धि शुद्ध हो जाती है, तब भोगों में वैराग्य आता है।

7.48.2

जाते विषयवैरस्ये सज्जनत्वे तथोदिते । प्रकाशे सोन्मुखीभूते हृदये कलितोदये ॥ २ ॥

jāte viṣayavairasye sajjantve tathodite | prakāśe sonmukhībhūte hṛdaye kalitodaye || 2 ||

When one develops disinterest in worldly objects, is considered a good person, and the heart becomes enlightened and uplifted, then one attains the highest state.

जब विषयों में वैराग्य हो जाता है, सज्जन माना जाता है, और हृदय प्रकाशमान और उन्मुख हो जाता है, तब उत्तम अवस्था प्राप्त होती है।

7.48.3

धनानि नाभिवाञ्छयन्ते तमांसीव विवेकिना । त्यज्यन्ते विद्यमानानि संशुष्कामेध्यपर्णवत् ॥ ३ ॥

dhanāni nābhivāñchayante tamāṃsīva vivekinā | tyajyante vidyamānāni saṃśuṣkāmedhyaparṇavat || 3 ||

Wealth is not desired by the wise, just as dry leaves are not desired. Even if it is present, it is discarded like dry leaves used in rituals.

धन बुद्धिमान द्वारा नहीं चाहा जाता, जैसे सूखी पत्तियाँ नहीं चाही जातीं। यदि वह मौजूद है, तो वह पूजा में इस्तेमाल होने वाली सूखी पत्तियों की तरह त्याग दिया जाता है।

7.48.4

भाराय पान्थदृष्ट्येव दृश्यन्ते दारबन्धवः । यथाशक्ति यथाकालमुपचर्यन्त एव च ॥ ४ ॥

bhārāya pānthadṛṣṭyeva dṛśyante dārabandhavaḥ | yathāśakti yathākālamupacaryanta eva ca || 4 ||

Family and relatives are seen as a burden by the wise, just as a traveler sees his luggage. They are cared for according to one's ability and time.

परिवार और रिश्तेदार बुद्धिमान द्वारा एक बोझ के रूप में देखे जाते हैं, जैसे एक यात्री अपना सामान देखता है। वे अपनी क्षमता और समय के अनुसार देखभाल किए जाते हैं।

7.48.5

इन्द्रियेष्वपि संलग्ना इन्द्रियार्थाः पुनःपुनः । न भोगा अनुभूयन्ते नूनं शान्तमनस्तया ॥ ५ ॥

indriyeṣvapi saṃlagnā indriyārthāḥ punaḥpunaḥ | na bhogā anubhūyante nūnaṃ śāntamanastayā || 5 ||

Even when the senses are engaged with their objects repeatedly, they are not experienced as enjoyments by one whose mind is peaceful.

यदि इंद्रियाँ बार-बार अपने विषयों में लगी हों, तब भी जिसका मन शांत है, उसे भोग के रूप में अनुभव नहीं होता।

7.48.6

एकान्तेषु दिगन्तेषु सरःसु विपिनेषु च । उद्याने पुण्यदेशेषु निजेष्वेव गृहेषु वा ॥ ६ ॥

ekānteṣu diganteṣu saraḥsu vipineṣu ca | udyāne puṇyadeśeṣu nijeṣveva gṛheṣu vā || 6 ||

In solitude, in remote places, in lakes, in forests, in gardens, in sacred places, or even in one's own home.

एकान्त में, दूर के स्थानों में, झीलों में, वनों में, उद्यानों में, पवित्र स्थानों में, या अपने घरों में।

7.48.7

सुहृत्केलिविलासेषु शुभोद्यानाशनादिषु । शास्त्रतर्कविचारेषु न तथा स्थीयते चिरम् ॥ ७ ॥

suhṛtkelivilāseṣu śubhodyānāśanādiṣu | śāstratarkavicāreṣu na tathā sthīyate ciram || 7 ||

In the playful activities with friends, in auspicious gardens and meals, and in the discussions of scriptures and logic, one does not stay there for long.

मित्रों के साथ खेल-कूद, शुभ उद्यानों और भोजनों में, और शास्त्रों और तर्क के विचारों में, कोई वहां लंबे समय तक नहीं रहता।

7.48.8

उपशान्तेन दान्तेन स्वात्मारामेण मौनिना । ज्ञातैवान्विष्यते ज्ञेन विज्ञानैकान्तवादिना ॥ ८ ॥

upaśāntena dāntena svātmārāmeṇa mauninā | jñātaivaānviṣyate jñena vijñānaikāntavādinā || 8 ||

By one who is peaceful, self-controlled, delighting in the Self, and silent, knowledge is sought by the knower who is devoted to the path of knowledge alone.

जो शांत, संयमी, आत्मानंदित, और मौन है, उसके द्वारा ज्ञान की खोज ज्ञानी द्वारा की जाती है जो ज्ञान के मार्ग में संलग्न है।

7.48.9

एवमभ्यासवशतः परे विश्रम्यते पदे । निम्नेवाम्भसि शान्तेन स्वयमेव विवेकिना ॥ ९ ॥

evamabhyāsavaśataḥ pare viśramyate pade | nimnevāmbhasi śāntena svayameva vivekinā || 9 ||

Thus, by the power of practice, one rests in the supreme state, like water naturally settling in a low place, by the discerning one who is peaceful.

इस प्रकार, अभ्यास की शक्ति से, एक शांत और विवेकी व्यक्ति पानी की तरह नीचे स्थान पर स्वाभाविक रूप से बैठता है, परम अवस्था में विश्राम करता है।

7.48.10

सबाह्याभ्यन्तरं शान्ता ज्ञतैवार्थतयोदिता । न संभवति भिन्नोऽर्थ इत्येव परमं पदम् ॥ १० ॥

sabāhyābhyantaraṃ śāntā jñataivārthatayoditā | na saṃbhavati bhinno'rtha ityeva paramaṃ padam || 10 ||

The peaceful one, knowing the reality of both the external and internal, realizes that there is no separate reality. This indeed is the supreme state.

शांत व्यक्ति, बाह्य और आंतरिक दोनों की वास्तविकता को जानकर, यह समझता है कि कोई अलग वास्तविकता नहीं है। यही परम अवस्था है।

7.48.11

नार्थोपलब्धिर्नो शून्यमस्ति बोधात्मतां विना । इत्यन्तरनुभूतिस्थमाहुस्तत्परमं पदम् ॥ ११ ॥

nārthopalabdhirno śūnyamasti bodhātmatāṃ vinā | ityantaranubhūtisthamāhustatparamaṃ padam || 11 ||

There is no attainment of objects, nor is there emptiness without the nature of awareness. This is said to be the supreme state experienced within.

किसी वस्तु की प्राप्ति नहीं होती, न ही बोध की प्रकृति के बिना शून्यता होती है। यह अन्तर्नुभूति में परम पद कहा जाता है।

7.48.12

एकबोधातिसंबन्धपरिणामान्न बोधता । न शून्यता नार्थतेति विद्धि तत्परमं पदम् ॥ १२ ॥

ekabodhātisaṃbandhapariṇāmānna bodhatā | na śūnyatā nārthateti viddhi tatparamaṃ padam || 12 ||

From the transformation of the connection with singular awareness, there is no awareness, no emptiness, nor any objectivity. Know that to be the supreme state.

एक बोध के संबंध के परिणाम से, न तो बोध होता है, न ही शून्यता, न ही कोई वस्तुता। उसे परम पद समझो।

7.48.13

स्वसंविन्मात्रविश्रामवताममनसां सताम् । न स्वदन्ते हि विषयाः पयांसि दृषदामिव ॥ १३ ॥

svasaṃvinmātraviśrāmavatāmamanasāṃ satām | na svadante hi viṣayāḥ payāṃsi dṛṣadāmiva || 13 ||

For those who are established in the repose of their own pure awareness, objects do not taste like water to the eyes.

जो लोग अपने शुद्ध बोध के विश्राम में स्थित हैं, उनके लिए विषय पानी की तरह आँखों के लिए स्वाद नहीं रखते।

7.48.14

निरोधपदमापन्नो निर्मना मौनमन्थरः । स्वभावे स्थित एवास्ते चित्रे कृत इवात्मवान् ॥ १४ ॥

nirodhapadamāpanno nirmanā maunamantharaḥ | svabhāve sthita evāste citre kṛta ivātmavān || 14 ||

Having attained the state of cessation, free from thoughts, and deeply silent, one remains established in one's own nature, as if painted in a picture.

निरोध की अवस्था प्राप्त करके, विचारों से मुक्त, और गहरी मौन में, वह अपने स्वभाव में स्थित रहता है, मानो किसी चित्र में चित्रित हो।

7.48.15

सर्वार्थमर्थरहितं महदेव पराणुवत् । अशून्यमेव शून्यात्म हृदयं वेद्यवेदिनः ॥ १५ ॥

sarvārthamarharahitaṃ mahadeva parāṇuvat | aśūnyameva śūnyātma hṛdayaṃ vedyavedinaḥ || 15 ||

O Mahadeva, devoid of all objects, like the supreme atom, the heart of the knower and the known is indeed not empty, though it is of the nature of emptiness.

हे महादेव, सभी वस्तुओं से रहित, परमाणु की तरह, ज्ञाता और ज्ञेय का हृदय वास्तव में शून्य नहीं है, हालाँकि यह शून्यता की प्रकृति का है।

7.48.16

अहंत्वं जगदीहादि दिक्कालकलनादि च ज्ञस्य ज्ञानादि शून्यादि स्थितमेव न विद्यते ॥ १६ ॥

ahaṃtvaṃ jagadīhādi dikkālakalanādi ca jñasya jñānādi śūnyādi sthitameva na vidyate || 16 ||

The ego, the universe, directions, time, calculation, and so on, the knower, knowledge, emptiness, and so on, do not exist in reality.

अहंकार, जगत, दिशाएँ, काल, गणना आदि, ज्ञाता, ज्ञान, शून्यता आदि वास्तव में नहीं हैं।

7.48.17

ज्ञेनामलपदस्थेन दीपेनेव निरस्यते तमो हार्दं तथा बाह्यं रागद्वेषभयादि च ॥ १७ ॥

jñenāmalapadasthana dīpeneva nirasyate tamo hārdaṃ tathā bāhyaṃ rāgadveṣabhayādi ca || 17 ||

By the light of pure knowledge, the darkness of ignorance, both internal and external, as well as attachment, aversion, fear, and so on, are dispelled.

शुद्ध ज्ञान के प्रकाश से, अज्ञान का अंधकार, भीतरी और बाहरी दोनों, साथ ही आसक्ति, घृणा, भय आदि भी दूर हो जाते हैं।

7.48.18

रजोरहितसर्वाशं सत्त्वात्पारमुपागतम् असंभवत्तमोरूपं प्रणमेत्तं नृभास्करम् ॥ १८ ॥

rajorahitasarvāśaṃ sattvātpāramupāgatam asaṃbhavattamorūpaṃ praṇamettan nṛbhāskaram || 18 ||

One should bow down to this human sun, who is devoid of passion, who has attained the highest state from goodness, and who has the form of the impossible darkness.

इस मानव सूर्य को प्रणाम करना चाहिए, जो राग से रहित है, जो सत्त्व से परम अवस्था प्राप्त कर चुका है, और जिसका रूप असंभव अंधकार है।

7.48.19

भेदप्रविलये जाते चित्ते चादृश्यतां गते या स्थितिः प्राप्तबोधस्य न वाग्गोचरमेति सा ॥ १९ ॥

bhedapravilaye jāte citte cādṛśyatāṃ gatē yā sthitiḥ prāptabodhasya na vāggocaramēti sā || 19 ||

When the mind dissolves into oneness and becomes invisible, the state of the enlightened one is beyond words.

जब मन एकत्व में विलीन हो जाता है और अदृश्य हो जाता है, तब ज्ञानी की स्थिति शब्दों से परे होती है।

7.48.20

ददात्येतन्महाबुद्धे निर्वाणं परमेश्वरः अहर्निशं परमया चिरं भक्त्या प्रसादितः ॥ २० ॥

dadātyetanmahābuddhe nirvāṇaṃ parameśvaraḥ ahar niśaṃ paramayā ciraṃ bhaktyā prasāditaḥ || 20 ||

The Supreme Lord, pleased with constant devotion, grants liberation to the great sage.

परमेश्वर, निरंतर भक्ति से प्रसन्न होकर, महान ऋषि को मुक्ति देता है।

7.48.21

श्रीराम उवाच । ईश्वरः को मुनिश्रेष्ठ कथं भक्त्या प्रसाद्यते एतन्मे तत्त्वतो ब्रूहि सर्वतत्त्वविदां वर ॥ २१ ॥

śrīrāma uvāca | īśvaraḥ ko muniśreṣṭha kathaṃ bhaktyā prasādyate etanme tattvato brūhi sarvatattvavidāṃ vara || 21 ||

Sri Rama said: O best of sages, how is the Lord propitiated through devotion? Please explain this to me in detail, O best among the knowers of all truths.

श्री राम ने कहा: हे मुनिश्रेष्ठ, ईश्वर कैसे भक्ति से प्रसन्न होते हैं? यह मुझे तत्त्वतः बताओ, हे सर्वतत्त्वविदां वर।

7.48.22

श्रीवसिष्ठ उवाच । ईश्वरो न महाबुद्धे दूरे न च सुदुर्लभः । महाबोधमयैकात्मा स्वात्मैव परमेश्वरः ॥ २२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | īśvaro na mahābuddhe dūre na ca sudurlabhaḥ | mahābodhamayaikātmā svātmaiva parameśvaraḥ || 22 ||

Sri Vasistha said: O wise one, the Lord is neither far away nor very difficult to attain. The Lord, who is the supreme consciousness, is one's own self.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे महाबुद्धिमान, ईश्वर न तो दूर हैं और न ही बहुत दुर्लभ हैं। महाबोधमय एकात्मा, स्वयं आत्मा ही परमेश्वर है।

7.48.23

तस्मै सर्वं ततः सर्वं स सर्वं सर्वतश्च सः । सोऽन्तः सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥ २३ ॥

tasmai sarvaṃ tataḥ sarvaṃ sa sarvaṃ sarvataśca saḥ | so'ntaḥ sarvamayo nityaṃ tasmai sarvātmane namaḥ || 23 ||

To Him belongs everything, from Him comes everything, He is everything and everywhere. He is the inner self of all, the eternal, and the all-pervading. Salutations to that all-pervading self.

उसी का सब कुछ है, उसी से सब कुछ आता है, वही सब कुछ है और सर्वत्र है। वह सबके अंतःकरण का स्वामी है, नित्य और सर्वव्यापी। उस सर्वव्यापी आत्मा को नमन।

7.48.24

तस्मादिमाः प्रसूयन्ते सर्गप्रलयविक्रियाः । अकारणं कारणतो गतयः पवनादिव ॥ २४ ॥

tasmādimāḥ prasūyante sargapralayavikriyāḥ | akāraṇaṃ kāraṇato gatayaḥ pavanādiva || 24 ||

From Him, all the processes of creation, dissolution, and transformation arise spontaneously, like the movements of the wind.

उसी से सृष्टि, प्रलय और परिवर्तन की सभी प्रक्रियाएँ स्वतः ही उत्पन्न होती हैं, जैसे हवा की गतिविधियाँ।

7.48.25

अनिशं पूजयन्त्येताः सर्वाः स्थावरजङ्गमाः । यथाभिमतदानेन सर्वे ते भूतजातयः ॥ २५ ॥

aniśaṃ pūjayantyetāḥ sarvāḥ sthāvarajaṅgamāḥ | yathābhimatadānena sarve te bhūtajātayaḥ || 25 ||

All beings, both animate and inanimate, constantly worship Him by offering their desired actions. All these beings are His creations.

सभी चराचर प्राणी निरंतर उसकी पूजा करते हैं, अपनी इच्छानुसार कार्य करके। ये सभी प्राणी उसकी ही सृष्टि हैं।

7.48.26

सुबहून्येष जन्मानि यथाभिमतयेच्छया । यदा संपूजितस्तेन प्रसादमधिगच्छति ॥ २६ ॥

subahūnyeṣa janmāni yathābhimatayeccayā | yadā saṃpūjitas tena prasādamadhigacchati || 26 ||

After many births, when one worships Him with pure devotion, one attains His grace.

बहुत से जन्मों के बाद, जब कोई उसे पूर्ण भक्ति से पूजता है, तब उसे उसका अनुग्रह मिलता है।

7.48.27

प्रसन्नः स महादेवः स्वयमात्मा महेश्वरः । बोधाय प्रेरयत्याशु दूतं पूतं शुभेहितैः ॥ २७ ॥

prasannaḥ sa mahādevaḥ svayamātmā maheśvaraḥ | bodhāya prerayatyāśu dūtaṃ pūtaṃ śubhehitaiḥ || 27 ||

The pleased Mahadeva, the Supreme Self, quickly sends a messenger for enlightenment, purified by auspicious intentions.

प्रसन्न महादेव, परमात्मा, शीघ्र ही एक दूत को भेजता है जो शुभ इच्छाओं से पवित्र होता है।

7.48.28

श्रीराम उवाच । आत्मना परमेशेन को दूतः प्रेर्यते मुने । स दूतो बोधनं वापि करोति वद मे कथम् ॥ २८ ॥

śrīrāma uvāca | ātmanā paramēśena ko dūtaḥ prerayate mune | sa dūto bodhanaṃ vāpi karoti vada me katham || 28 ||

Sri Rama said, 'O sage, who is the messenger sent by the Supreme Self? How does that messenger bring about enlightenment? Please tell me.'

श्री राम ने कहा, 'हे मुनि, परमात्मा द्वारा कौन दूत भेजा जाता है? वह दूत कैसे ज्ञान देता है? मुझे बताओ।'

7.48.29

श्रीवसिष्ठ उवाच । आत्मसंप्रेरितो दूतो विवेको नाम नामतः । हृद्गुहायां सदानन्दस्तिष्ठतीन्दुरिवाम्बरे ॥ २९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ātmasaṃprerito dūto viveko nāma nāmataḥ | hṛdguhāyāṃ sadānandastiṣṭhatīndurivāmbare || 29 ||

Sri Vasistha said, 'The messenger sent by the Self is called Viveka (discrimination). It resides in the heart, always blissful, like the moon in the sky.'

श्री वसिष्ठ ने कहा, 'आत्मा द्वारा भेजा गया दूत विवेक कहलाता है। यह हृदय में रहता है, हमेशा आनंदित, जैसे आकाश में चंद्रमा।'

7.48.30

स एष वासनात्मानं जन्तुं बोधयति क्रमात् । संसारसागरादस्मात्तारयत्यविवेकिनम् ॥ ३० ॥

sa eṣa vāsanātmānaṃ jantuṃ bodhayati kramaāt | saṃsārasāgarādasmāttārayatyavivekinam || 30 ||

This Viveka gradually enlightens the individual soul, who is bound by desires, and liberates the one lacking discrimination from the ocean of worldly existence.

यह विवेक धीरे-धीरे इच्छाओं से बंधे हुए जीव को ज्ञान देता है और विवेकहीन को संसार सागर से मुक्त करता है।

7.48.31

बोधात्मैषोऽन्तरात्मैव परमः परमेश्वरः । अस्यैव वाचको नाम प्रणवो वेदसंमतः ॥ ३१ ॥

bodhātmaiṣo'ntarātmaiva paramaḥ parameśvaraḥ | asyaiva vācako nāma praṇavo vedasaṃmataḥ || 31 ||

This self-aware consciousness is the supreme Lord within. The name that represents this is the syllable 'Om,' which is approved by the Vedas.

यह आत्म-चेतना अंतरात्मा ही परम परमेश्वर है | इसका नाम 'ॐ' है, जो वेदों द्वारा स्वीकृत है |

7.48.32

जपहोमतपोदानपाठयज्ञक्रियाक्रमैः । एष प्रसाद्यते नित्यं नरनागसुरासुरैः ॥ ३२ ॥

japahomatapodānapāṭhayajñakriyākramaiḥ | eṣa prasādyate nityaṃ naranāgasurāsuraiḥ || 32 ||

This supreme Lord is always pleased by the rituals of chanting, sacrifices, austerities, charity, recitation, and other sacred actions performed by humans, serpents, gods, and demons.

यह परमेश्वर मनुष्यों, नागों, देवताओं और असुरों द्वारा की जाने वाली जप, होम, तप, दान, पाठ, यज्ञ और अन्य पवित्र क्रियाओं से नित्य प्रसन्न होता है |

7.48.33

द्यौर्मूर्धा पृथिवी पादौ तारका रोमराजयः । भूतान्यस्थीनि हृदयं व्योमास्य परमेश्वरः ॥ ३३ ॥

dyaurmūrdhā pṛthivī pādau tārakā romarājayaḥ | bhūtānyasthīni hṛdayaṃ vyomāsya parameśvaraḥ || 33 ||

The sky is His head, the earth is His feet, the stars are His hair, the elements are His bones, and the heart is His space. This is the supreme Lord.

आकाश इसका सिर है, पृथ्वी इसके पैर हैं, तारे इसके बाल हैं, भूत इसकी हड्डियाँ हैं, और हृदय इसका अंतरिक्ष है | यह परमेश्वर है |

7.48.34

सर्वत्रैष चिदात्मत्वाद्याति जागर्ति पश्यति । तेनैष सर्वतोलक्ष्यकरकर्णाक्षिपादभृत् ॥ ३४ ॥

sarvatraiṣa cidātmatvādyāti jāgarti paśyati | tenaiṣa sarvatolakṣyakarakarṇākṣipādabhṛt || 34 ||

This self-aware consciousness pervades everywhere due to its nature. It moves, awakens, and sees. Therefore, it is perceived through all senses, hands, ears, eyes, and feet.

यह आत्म-चेतना अपने स्वभाव के कारण सर्वत्र व्याप्त है | यह चलता है, जागता है, और देखता है | इसलिए, यह सभी इंद्रियों, हाथों, कानों, आँखों, और पैरों द्वारा देखा जाता है |

7.48.35

विवेकदूतमुद्बोध्य हत्वा चित्तपिशाचकम् । आत्मनः पदवीं स्फारां जीवः कामपि नीयते ॥ ३५ ॥

vivekadūtamudbodhya hatvā cittapiśācakam | ātmanaḥ padavīṃ sphārāṃ jīvaḥ kāmapi nīyate || 35 ||

By awakening the messenger of discrimination and destroying the demon of the mind, the individual soul is led to the highest state of the self.

विवेक के दूत को जागृत करके और मन के पिशाच को नष्ट करके, जीव आत्मा की उच्चतम अवस्था में ले जाया जाता है |

7.48.36

त्यक्त्वा सर्वविकल्पौघान्विकारानर्थसंकरान् । पौरुषेणात्मनैवात्मा स्वयमेव प्रसाद्यताम् ॥ ३६ ॥

tyaktvā sarvavikalpaughānvikārānarhasaṃkarān | pauruṣeṇātmanaivātmā svayameva prasādyatām || 36 ||

Abandoning all mental fluctuations and impurities, one should propitiate the self by one's own efforts.

सभी मानसिक विकारों और अशुद्धियों को त्याग कर, अपने ही प्रयासों से आत्मा को प्रसन्न करें।

7.48.37

भ्रमन्मनःपिशाचेऽस्मिन्कल्लोलजलदाकुले । संसाररात्रितिमिरे स्वात्मैवापूर्णचन्द्रमाः ॥ ३७ ॥

bhra manmanaḥpiśāce'sminkallolajaladākule | saṃsārarātritimire svātmaivāpūrṇacandramāḥ || 37 ||

In this world, which is like a dark night filled with the turbulence of waves and clouds, the self is like the full moon.

इस संसार में, जो लहरों और बादलों से भरी अंधेरी रात की तरह है, आत्मा पूर्ण चंद्रमा की तरह है।

7.48.38

अगाधमरणावर्तकल्लोलाकुलकोटरे । तृष्णातरङ्गतरले स्वमनश्चण्डमारुते ॥ ३८ ॥

agādhama raṇāvartakallolākulakoṭare | tṛṣṇātaraṅgatarale svamanaścaṇḍamārute || 38 ||

In the deep whirlpool of death, filled with turbulent waves of desire, the self is like a strong wind.

मृत्यु के गहरे भंवर में, जो इच्छाओं की तरंगों से भरा है, आत्मा एक तेज हवा की तरह है।

7.48.39

महाजडलवाधारे संसारविषमार्णवे । इन्द्रियग्रामगहने विवेकः पोतको महान् ॥ ३९ ॥

mahājaḍalavādhāre saṃsāraviṣamārṇave | indriyagrāmagahane vivekaḥ potako mahān || 39 ||

In the vast ocean of the world, which is full of obstacles and the dense forest of the senses, discrimination is the great boat.

संसार के विशाल समुद्र में, जो बाधाओं और इंद्रियों के घने जंगल से भरा है, विवेक महान नाव है।

7.48.40

पूर्वं यथाभिमतपूजनसुप्रसन्नो दत्वा विवेकमिह पावनदूतमात्मा । जीवं पदं नयति निर्मलमेकमाद्यं सत्सङ्गशास्त्रपरमार्थपरावबोधैः ॥ ४० ॥

pūrvaṃ yathābhimata pūjanasuprasanno datvā vivekamih pāvanadūtamātmā | jīvaṃ padaṃ nayati nirmalamekamādyaṃ satsaṅgaśāstraparamārthaparāvabodhaiḥ || 40 ||

Having been pleased with the desired worship, the self, giving discrimination here as the purifying messenger, leads the living being to the pure, primordial state through the awakening of truth, good company, and scriptures.

पूर्व में अभिलषित पूजा से प्रसन्न होकर, आत्मा यहाँ विवेक को पवित्र दूत के रूप में देकर, जीव को सत्संग, शास्त्र और परमार्थ के बोध से शुद्ध, प्राथमिक अवस्था में ले जाता है।

Chapter 49

7.49.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । परिपुष्टविवेकानां वासनामलमुज्झताम् । महत्ता महतामन्तः काप्यपूर्वैव जायते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | paripuṣṭavivekānāṃ vāsanāmalamujjhatām | mahattā mahatāmantaḥ kāpyapūrvaiva jāyate || 1 ||

Shri Vasistha said: For those whose discernment is fully developed and who have removed the impurities of their desires, a greatness arises within the great, which is unprecedented.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जिनकी विवेक बुद्धि पूर्णतः विकसित है और जिन्होंने अपनी इच्छाओं की अशुद्धियों को दूर कर दिया है, उनके अंतर में एक अनूठी महानता उत्पन्न होती है।

7.49.2

औदार्योदारमर्यादां मतिं गाम्भीर्यसुन्दरीम् । महतां नावगाहन्ते भुवनानि चतुर्दश ॥ २ ॥

audāryodāramaryādāṃ matiṃ gāmbhīryasundarīm | mahatāṃ nāvagāhante bhuvanāni caturdaśa || 2 ||

The great ones do not immerse themselves in the fourteen worlds, which are full of generosity, noble limits, profound thoughts, and beauty.

महान लोग उन चौदह लोकों में नहीं डूबते हैं, जो उदारता, उत्तम सीमाओं, गहरी सोच और सुंदरता से भरे हुए हैं।

7.49.3

चित्तभ्रान्तिर्जगदिति प्ररूढे प्रत्यये सताम् । बाह्यश्चान्तश्चरन्नक्रग्रहो मोहश्च शाम्यति ॥ ३ ॥

cittabhrāntirjagaditi prarūḍhe pratyaye satām | bāhyaścāntaścarannakragraho mohaśca śāmyati || 3 ||

For the wise, the delusion that the world is real is firmly established. The external and internal crocodile of delusion and attachment also calms down.

बुद्धिमान लोगों के लिए, यह भ्रम कि संसार वास्तविक है, दृढ़ता से स्थापित होता है। बाहरी और आंतरिक भ्रम और आसक्ति का मगरमच्छ भी शांत हो जाता है।

7.49.4

द्वीन्दुवत्तापजलवत्केशोण्ड्रकवदम्बरे । विस्फुरन्त्यां जगद्भ्रान्तौ वासनाप्रत्ययः कुतः ॥ ४ ॥

dvīnduvattāpajalavatkeśoṇḍrakavadambare | visphurantyāṃ jagadbhrāntau vāsanāpratyayaḥ kutaḥ || 4 ||

In the illusion of the world, which flickers like the moon, heat, water, foam, and a banana tree, where does the impression of desire arise?

संसार के भ्रम में, जो चंद्रमा, गर्मी, पानी, फेन और केले के पेड़ की तरह चमकता है, इच्छा का संस्कार कहाँ से उत्पन्न होता है?

7.49.5

वासनाप्रत्यये शून्ये शून्यं व्योमैव शिष्यते । साप्यवस्था मनोऽसत्त्वे कुतस्त्याज्या विवेकिना ॥ ५ ॥

vāsanāpratyaye śūnye śūnyaṃ vyomaiava śiṣyate | sāpyavasthā mano'sattve kutastyājyā vivekinā || 5 ||

When the impression of desire is empty, only the void remains like the sky. Even that state, in the absence of the mind, why should it be abandoned by the discerning?

जब इच्छा का संस्कार खाली होता है, तो केवल शून्यता आकाश की तरह बचती है। मन की अनुपस्थिति में भी उस अवस्था को विवेकी क्यों त्यागे?

7.49.6

त्रयमेतत्तु यावस्थात्रयेणानेन वर्जिता । पश्यन्तीवाप्यपश्यन्ती सावस्था परमोच्यते ॥ ६ ॥

trayametattu yāvasthātrayeṇānena varjitā | paśyantīvāpyapaśyantī sāvasthā paramocyate || 6 ||

This triad of states is devoid of these three states | The state of seeing and not seeing is considered the highest || 6 ||

यह तीनों अवस्थाओं का त्रय इन तीनों अवस्थाओं से रहित है | देखने और न देखने की अवस्था सर्वोच्च मानी जाती है || ६ ||

7.49.7

विचित्ररत्नरश्म्योघ इव नानात्मकं जगत् । आभासमात्रं न त्वात्मा न घनं न च पार्थिवम् ॥ ७ ॥

vicitraratnaraśmyogha iva nānātmakaṃ jagat | ābhāsamātraṃ na tvātmā na ghanaṃ na ca pārthivam || 7 ||

Like a multitude of varied jewel rays, the world is diverse | It is merely an appearance, not the self, not solid, nor earthly || 7 ||

विविध रत्नों की किरणों की तरह, यह जगत विविध है | यह केवल एक आभास है, न आत्मा है, न घना है, न ही पृथ्वी का है || ७ ||

7.49.8

रूपालोकनमात्रं हि शून्यमेव जगत्स्थितम् । खे विचित्रमणिव्यूहकरजालमिवोत्थितम् ॥ ८ ॥

rūpālokanamātraṃ hi śūnyameva jagatsthitam | khe vicitramṇivyūhakarajālamivotthitam || 8 ||

The world is merely the perception of form, indeed it is empty | Like a magical illusion of varied jewels arising in the sky || 8 ||

जगत केवल रूप का दर्शन मात्र है, वास्तव में यह शून्य है | आकाश में विविध रत्नों के जादू की तरह उत्पन्न है || ८ ||

7.49.9

नेह सत्यानि भूतानि न जगत्ता न शून्यता । इदं ब्रह्माख्यरत्नेशप्रभाजालं विजृम्भितम् ॥ ९ ॥

neha satyāni bhūtāni na jagattā na śūnyatā | idaṃ brahmākhyaratneśaprabhājālaṃ vijṛmbhitam || 9 ||

Here, beings are not real, nor is the world, nor is emptiness | This is the illusory web of the radiance of Brahman, the lord of jewels || 9 ||

यहाँ, भूत सत्य नहीं हैं, न जगत है, न शून्यता है | यह ब्रह्मा के चमक का जाल है, रत्नों का स्वामी || ९ ||

7.49.10

सृष्टयोऽसृष्टयो ब्राह्म्यो नानाता च न नाशताः । अमूर्ता एव भासन्ते कल्पनार्कगणा घनाः ॥ १० ॥

sṛṣṭayo'sṛṣṭayo brāhmyo nānātā ca na nāśatāḥ | amūrtā eva bhāsante kalpanārkagaṇā ghanāḥ || 10 ||

Creations and non-creations of Brahman are diverse and not destructible | They appear formless, dense like imagined suns || 10 ||

ब्रह्मा की सृष्टियाँ और असृष्टियाँ विविध हैं और विनाश नहीं होतीं | वे अमूर्त प्रतीत होते हैं, कल्पना के सूर्यों की तरह घने || १० ||

7.49.11

एवं तावद्घनीभूतः पिण्डग्राहो न विद्यते । संकल्पिते च व्योम्नीव शून्यतैवावगम्यते ॥ ११ ॥

evaṃ tāvaddhanībhūtaḥ piṇḍagrāho na vidyate | saṃkalpite ca vyomnīva śūnyataivāvagamyate || 11 ||

Thus, there is no grasping of the body as an entity| In the imagined space, only emptiness is perceived

इस प्रकार, शरीर के रूप में कोई ग्रहण नहीं होता | कल्पित आकाश में केवल शून्यता ही अनुभव की जाती है

7.49.12

तस्यामवस्तुभूतायां कथं भावनिबन्धनम्। भविष्यदाकाशतरौ विश्रान्तः को विहंगमः ॥ १२ ॥

tasyāmavastubhūtāyāṃ kathaṃ bhāvanibandhanam | bhaviṣyadākāśatarau viśrāntaḥ ko vihaṅgamaḥ || 12 ||

In that non-existent state, how can there be a bondage of existence| Who is the bird that rests in the future sky

उस अवास्तविक स्थिति में, अस्तित्व का बंधन कैसे हो सकता है | भविष्य के आकाश में विश्राम करने वाला पक्षी कौन है

7.49.13

पिण्डत्वं नास्ति भूतानां शून्यता च न विद्यते। चित्तमप्यत एवास्तं शेषं सत्तन्न चास्थिति ॥ १३ ॥

piṇḍatvaṃ nāsti bhūtānāṃ śūnyatā ca na vidyate | cittamapyata evāstaṃ śeṣaṃ sattanna cāsthiti || 13 ||

There is no individuality among beings, nor is there emptiness| Therefore, even the mind does not exist, the rest is not real existence

प्राणियों में कोई व्यक्तित्व नहीं है, न ही शून्यता है | इसलिए, मन भी अस्तित्व में नहीं है, शेष वास्तविक अस्तित्व नहीं है

7.49.14

अनानासममेवास्ते नानारूपो विबोधवान्। अन्तरालीननानार्थो यथा कनकपिण्डकः ॥ १४ ॥

anānāsamamevāste nānārūpo vibodhavān | antarālīnanānārtho yathā kanakapiṇḍakaḥ || 14 ||

The one who is aware of various forms exists in the non-dual state| Like a gold nugget, it is inherently diverse in meaning

जो विभिन्न रूपों को जानता है, वह अद्वैत स्थिति में रहता है | सोने के टुकड़े की तरह, यह अंतर्निहित रूप से विविध अर्थों वाला है

7.49.15

यथास्थितस्य साहंत्वं विश्वं चित्तं विलीयते। ज्ञस्यावाच्यमचित्त्वं सत्स्वरूपमवशिष्यते ॥ १५ ॥

yathāsthitasya sāhaṃtvaṃ viśvaṃ cittaṃ vilīyate | jñasyāvācyamacittvaṃ satsvarūpamavaśiṣyate || 15 ||

The ego of the established self dissolves into the universe and the mind| The inexpressible non-mind nature of the knower remains as the true form

स्थापित स्वयं का अहंकार ब्रह्मांड और मन में विलीन हो जाता है | ज्ञाता की अव्यक्त अमन प्रकृति सत्य रूप में बनी रहती है

7.49.16

क्लिश्यते केवलं बुद्धिरुत्तराधरदर्शनैः। स्तोकयाभ्यस्तया युक्त्या सत्योऽर्थो ह्यवगम्यते ॥ १६ ॥

kliśyate kevalaṃ buddhiruttarādharadarśanaiḥ | stokayābhyastyā yuktyā satyo'rtho hyavagamyate || 16 ||

The intellect is only troubled by the perception of the upper and lower parts. By little practice with reasoning, the true meaning is understood.

बुद्धि केवल ऊपर और नीचे देखने से ही परेशान होती है | थोड़ी अभ्यास से युक्ति के साथ सत्य अर्थ समझ में आता है।

7.49.17

विराडोजोविरहितं कार्यकारणतादिभिः। भूतभव्यभविष्यस्य जगदङ्गस्य संभवम् ॥ १७ ॥

virāḍojovirahitaṃ kāryakāraṇatādibhiḥ | bhūtabhavyabhaviṣyasya jagadaṅgasya saṃbhavam || 17 ||

The universe, devoid of the vital energy of Virat, is the cause and effect of all past, present, and future. The origin of the universe is explained by these causes and effects.

विराट की जीवन शक्ति से रहित ब्रह्मांड, भूत, भविष्य और वर्तमान का कारण और परिणाम है | ब्रह्मांड की उत्पत्ति इन कारणों और परिणामों द्वारा समझी जाती है।

7.49.18

येन बोधात्मना बुद्धं स ज्ञ इत्यभिधीयते । अद्वैतस्योपशान्तस्य तस्य विश्वं न विद्यते ॥ १८ ॥

yena bodhātmanā buddhaṃ sa jña ityabhidhīyate | advaitasyopaśāntasya tasya viśvaṃ na vidyate || 18 ||

By whom the intellect is enlightened, he is called a knower. For the one who is peaceful in non-duality, the universe does not exist.

जिसके द्वारा बुद्धि प्रकाशित होती है, वह ज्ञानी कहलाता है | जो अद्वैत में शांत है, उसके लिए ब्रह्मांड अस्तित्व में नहीं है।

7.49.19

पूर्वोक्ताः सर्व एवैते उपदेशा विशेषणाः । ज्ञस्यानुभवमायान्ति स्वतः साधुकथा इव ॥ १९ ॥

pūrvoktāḥ sarva evaite upadeśā viśeṣaṇāḥ | jñasyānubhavamāyānti svataḥ sādhukathā iva || 19 ||

All these previously mentioned teachings are special instructions. They naturally come to the experience of the knower, like good stories.

यह सभी पहले कहे गए उपदेश विशेष निर्देश हैं | ये स्वाभाविक रूप से ज्ञानी के अनुभव में आते हैं, जैसे अच्छी कहानियाँ।

7.49.20

पिण्डत्वं नास्ति भूतानां शून्यत्वं चाप्यसंभवात् । अत एव मनो नास्ति शेषं सत्तत्तव स्थितिः ॥ २० ॥

piṇḍatvaṃ nāsti bhūtānāṃ śūnyatvaṃ cāpyasaṃbhavāt | ata eva mano nāsti śeṣaṃ sattattava sthitiḥ || 20 ||

There is no individuality among beings due to the impossibility of emptiness. Therefore, there is no mind; the rest is the state of true existence.

प्राणियों में शून्यता की असंभवता के कारण कोई व्यक्तित्व नहीं है | इसलिए, मन नहीं है; बाकी सच्चे अस्तित्व की स्थिति है।

7.49.21

चेत्योन्मुखत्वमेवान्तश्चेतनस्यास्य चेतनम् । उदितं तदनर्थाय श्रेयसेऽनुदितं भवेत् ॥ २१ ॥

cetyonmukhatvamevāntaścetanasyaāsya cetanam | uditaṃ tadanarthāya śreyase'nuditaṃ bhavet || 21 ||

The tendency of consciousness to turn outward is the inner nature of the conscious being. When it arises, it is for no purpose; when it does not arise, it is for the highest good.

चेतना का बाहर की ओर मुड़ना चेतन के अंदर की प्रकृति है। जब यह उठता है, तो यह किसी उद्देश्य के लिए नहीं होता; जब यह नहीं उठता, तो यह उच्चतम कल्याण के लिए होता है।

7.49.22

उदितं वाह्यतामेति तत्र गच्छति पिण्डताम् । स्वयं संवेदनादेव जाड्यादम्ब्विव शैलताम् ॥ २२ ॥

uditaṃ vāhyatāmeti tatra gacchati piṇḍatām | svayaṃ saṃvedanādeva jāḍyādambviva śailatām || 22 ||

When consciousness arises, it attains externality and there it becomes gross. From self-awareness itself, it becomes inert like water becoming stone.

जब चेतना उठती है, तो यह बाहरी हो जाती है और वहाँ यह स्थूल हो जाती है। स्वयं से ही चेतना, यह जड़ हो जाती है जैसे पानी पत्थर बन जाता है।

7.49.23

स्वप्नाद्यर्थवदादत्ते बोधोऽबोधेन पिण्डताम् । तद्ग्राहकतया चित्तं भूत्वा बध्नाति देहकम् ॥ २३ ॥

svapnādyarthavadādatte bodho'bodhena piṇḍatām | tadgrāhakatayā cittaṃ bhūtvā badhnāti dehakam || 23 ||

Consciousness, taking on the form of dream-like objects, becomes gross through ignorance. Becoming the perceiver, the mind binds the body.

चेतना, स्वप्न-जैसे वस्तुओं का रूप लेकर, अज्ञान से स्थूल हो जाती है। ग्राहक बनकर, मन शरीर को बाँधता है।

7.49.24

एतावतीष्ववस्थासु बोधस्योदेति नान्यता । शब्दकल्पनया भेदः केवलं परिकल्पितः ॥ २४ ॥

etāvatīṣvavasthāsu bodhasyodeti nānyatā | śabdakalpanayā bhedaḥ kevalaṃ parikalpitaḥ || 24 ||

In these states, consciousness arises without any otherness. The difference is merely imagined through verbal constructs.

इन अवस्थाओं में, चेतना किसी अन्यता के बिना उठती है। अंतर केवल शब्द कल्पना से कल्पित है।

7.49.25

बहिरन्तश्च बोधस्य भात्यात्मैवार्थदृष्टिभिः । अन्तस्त्वेन बहिष्ट्वेन नैवास्य मनसो यथा ॥ २५ ॥

bahirantaśca bodhasya bhātyātmaivārthadṛṣṭibhiḥ | antastvena bahiṣṭvena naivāsya manaso yathā || 25 ||

Both externally and internally, consciousness appears as the self through the perception of objects. However, it is not so for the mind, which distinguishes between internal and external.

बाहर और अंदर, चेतना वस्तुओं की दृष्टि से आत्मा के रूप में प्रकट होती है। हालाँकि, मन के लिए ऐसा नहीं है, जो अंतर और बाहर के बीच भेद करता है।

7.49.26

बोधस्याकाशकल्पत्वात्कालाकाशादि तद्वपुः । पदार्थाश्चैव स्वात्मानः स्वप्नवन्नार्थरूपि खम् ॥ २६ ॥

bodhasyākāśakalpatvātkālākāśādi tadvapuḥ| padārthāścaiva svātmānaḥ svapnavannārtharūpi kham || 26 ||

Due to the nature of consciousness being like space, time, space, etc., are its forms. All objects are like a dream, not having a real form, and are like space.

चेतना के आकाश के समान स्वभाव के कारण, समय, आकाश आदि उसके रूप हैं। सभी पदार्थ स्वप्न के समान हैं, वास्तविक रूप नहीं रखते हैं, और आकाश के समान हैं।

7.49.27

बाह्यार्थता नान्तरत्वं तद्वद्बोधवशाद्व्रजेत् । नासादृश्यं हि बोधत्वं गन्तुं शक्तं जडं क्वचित् ॥ २७ ॥

bāhyārthatā nāntaratvaṃ tadvadbodhavaśādvrajet| nāsādṛśyaṃ hi bodhatvam gantuṃ śaktaṃ jaḍaṃ kvacit || 27 ||

External reality does not become internal. Similarly, due to the influence of consciousness, it does not become like that. Indeed, the nature of consciousness cannot be attained by the inert anywhere.

बाह्य वास्तविकता आंतरिक नहीं बनती। उसी प्रकार, चेतना के प्रभाव से, यह उसके समान नहीं बनता। वास्तव में, चेतना का स्वभाव जड़ किसी भी जगह प्राप्त नहीं किया जा सकता।

7.49.28

बोधो दृश्यदशां नैति प्राप्तो वापि च तां स्थितिम् । स यथास्थितमेवास्ते मनागप्येति नान्यताम् ॥ २८ ॥

bodho dṛśyadaśāṃ naeti prāpto vāpi ca tāṃ sthitim| sa yathāsthitamevāste manāgapyeti nānyatām || 28 ||

Consciousness does not attain the state of the seen. Even if it attains that state, it remains as it is. It does not become anything else even slightly.

चेतना दृश्य अवस्था को प्राप्त नहीं करती। यदि वह उस अवस्था को प्राप्त करती है, तो भी वह जैसी है वैसी ही रहती है। वह थोड़ा भी कुछ और नहीं बनती।

7.49.29

अत्यर्थं शुद्धबोधैकपरिणामे कृतोदये । बोधाबोधार्थशब्दानां श्रुतिरप्यस्तमेष्यति ॥ २९ ॥

atyarthaṃ śuddhabodhaikapariṇāme kṛtodaye| bodhābodhārthaśabdānāṃ śrutirapyastameṣyati || 29 ||

In the ultimate transformation into pure consciousness, even the hearing of the words 'consciousness,' 'non-consciousness,' and 'meaning' will cease.

अंतिम शुद्ध चेतना में परिवर्तन होने पर, 'चेतना,' 'अचेतना,' और 'अर्थ' शब्दों की सुनवाई भी बंद हो जाएगी।

7.49.30

आतिवाहिकदेहानां चित्तानामेव जायते । आधिभौतिकताबोधो दृढभावनया स्वया ॥ ३० ॥

ātivāhikadehānāṃ cittānāmeva jāyate| ādhibhautikatābodho dṛḍhabhāvanayā svayā || 30 ||

The consciousness of materiality arises from the firm conviction of the minds of transmigratory bodies.

भौतिकता की चेतना पुनर्जन्म लेने वाले शरीरों के मनों के दृढ़ विश्वास से उत्पन्न होती है।

7.49.31

आकाशविशदैश्चित्तैर्भावितैषातिवाहिकैः । आधिभौतिकता मिथ्या नटैरिव पिशाचता ॥ ३१ ॥

ākāśaviśadaiścittairbhāvitaiṣātivāhikaiḥ | ādhibhautikatā mithyā naṭairiva piśācatā || 31 ||

The material world, which is perceived by the mind as clear as the sky, is false like the ghostly nature of actors.

जो मन द्वारा आकाश की तरह स्पष्ट दिखाई देता है, वह भौतिक जगत अभिनेताओं की भूत-प्रेत की तरह मिथ्या है।

7.49.32

भ्रान्तिरभ्रमणाभ्यासात्प्रज्ञातैषोपशाम्यति । नोन्मत्तोऽस्मीति संबोधाच्छाम्यत्युन्मत्तता किल ॥ ३२ ॥

bhrāntirabhramaṇābhyāsātprajñātaiṣopaśāmyati | nounmatto'smīti saṃbodhācchāmyatyunmattatā kila || 32 ||

Delusion arises from the practice of wandering. It is pacified by wisdom. Just as madness is pacified by the realization that one is not mad.

भ्रम भटकने के अभ्यास से उत्पन्न होता है। यह बुद्धि से शांत हो जाता है। जैसे पागलपन इस ज्ञान से शांत हो जाता है कि मैं पागल नहीं हूँ।

7.49.33

भ्रान्तेः स्वयं परिज्ञानाद्वासना विनिवर्तते । स्वप्ने स्वप्नतया बुद्धे कस्य स्यात्किल भावना ॥ ३३ ॥

bhrānteḥ svayaṃ parijñānādvāsanā vinivartate | svapne svapnatayā buddhe kasya syātkila bhāvanā || 33 ||

From the self-knowledge of delusion, the impressions disappear. In a dream, when it is understood as a dream, who would have any attachment?

भ्रम के स्वयं के ज्ञान से, संस्कार विलीन हो जाते हैं। स्वप्न में, जब यह स्वप्न के रूप में समझा जाता है, तो किसका कोई आसक्ति होगी?

7.49.34

वासनातानवेनैव संसार उपशाम्यति । वासनैव महायक्षिण्येतच्छेदपरा बुधाः ॥ ३४ ॥

vāsanātānavenaiva saṃsāra upaśāmyati | vāsanāiva mahāyakṣiṇyetacchedaparā budhāḥ || 34 ||

The worldly existence is pacified by the destruction of impressions. The wise consider the impressions themselves as the great demon to be cut off.

संसार संस्कारों के विनाश से शांत होता है। बुद्धिमान लोग संस्कारों को ही काटने योग्य महान राक्षस मानते हैं।

7.49.35

अज्ञानोन्मत्तता पुंसां यथाभ्यासेन भाविता । तथैव बोधात्स्वभ्यासात्सा कालेनोपशाम्यति ॥ ३५ ॥

ajñānonmattatā puṃsāṃ yathābhyāsena bhāvitā | tathaiva bodhātsvabhyāsātsā kālenopaśāmyati || 35 ||

The madness of ignorance in people, which is cultivated by practice, is pacified by knowledge and self-practice over time.

लोगों में अज्ञान का पागलपन, जो अभ्यास से पोषित होता है, ज्ञान और स्वयं के अभ्यास से समय के साथ शांत होता है।

7.49.36

आतिवाहिकदेहोऽयमाधिभौतिकतां यथा । नीयते भावनां तज्ज्ञैर्बोधसत्ताप्रसादतः ॥ ३६ ॥

ātivāhikadeho'yamādhibhautikatāṃ yathā | nīyate bhāvanāṃ tajjñairbodhasattāprasādataḥ || 36 ||

This transient body is led to the state of materiality through the grace of the enlightened ones.

यह अस्थायी शरीर ज्ञानी लोगों की कृपा से भौतिक स्थिति की ओर ले जाया जाता है।

7.49.37

आतिवाहिकदेहोऽपि नीत्वा जीवपदं तथा । दृढेन बोधाभ्यासेन नेतव्यो ब्रह्मतामपि ॥ ३७ ॥

ātivāhikadeho'pi nītvā jīvapadaṃ tathā | dṛḍhena bodhābhyāsena netavyo brahmatāmapi || 37 ||

Even this transient body, having attained the state of a living being, should be led to the state of Brahman through firm spiritual practice.

यह अस्थायी शरीर भी, जीव की स्थिति प्राप्त करने के बाद, दृढ़ आध्यात्मिक अभ्यास द्वारा ब्रह्म की स्थिति तक ले जाना चाहिए।

7.49.38

स्ववस्तुवच्चेदुत्पत्तिर्बुध्यते बोधरूपिणी । तदातिवाहिकी बुद्धिः कथमित्यपि बुध्यते ॥ ३८ ॥

svavastuvaccetutpattirbudhyate bodharūpiṇī | tadātivāhikī buddhiḥ kathamityapi budhyate || 38 ||

If the origin is understood to be like one's own essence, then how is the transient intellect comprehended?

यदि उत्पत्ति अपने स्वरूप के समान समझी जाती है, तो अस्थायी बुद्धि कैसे समझी जाती है?

7.49.39

नो चेत्तत्प्रतिवाक्यार्थात्तद्ग्रन्थिर्विनिवर्तते । भूतोत्सादनसूत्रस्य प्रतिपत्तृपदं यथा ॥ ३९ ॥

no cet tatprativākyārthāt tadgranthirvinivartate | bhūtotsādanasūtrasya pratipattṛpadaṃ yathā || 39 ||

If not, then the knot of that is dissolved from the meaning of the counter-statement, just as the state of the understander of the aphorism on the destruction of elements.

यदि नहीं, तो वह ग्रंथि प्रतिवाद के अर्थ से विलीन हो जाती है, जैसे तत्वों के विनाश के सूत्र के समझने वाले की स्थिति।

7.49.40

जगद्बोधैकतां बुद्ध्वा बोद्धव्या तावदव्रणम् । अत्यन्तपरिणामेन यावत्सापि न बुध्यते ॥ ४० ॥

jagadbodhaikatāṃ buddhvā boddhavyā tāvadavraṇam | atyantapariṇāmena yāvatsāpi na budhyate || 40 ||

Having understood the oneness of worldly knowledge, one should realize the woundless state until it is fully comprehended through complete transformation.

जगत के ज्ञान की एकता को समझकर, घावरहित अवस्था को पूर्ण परिवर्तन द्वारा पूरी तरह से समझने तक समझा जाना चाहिए।

7.49.41

सबाह्याभ्यन्तरे चित्ते शान्ते भाति स्वभावता । शीतलां व्योमनिर्भासां तामेवाश्रित्य शाम्यताम् ॥ ४१ ॥

sabāhyābhyantare citte śānte bhāti svabhāvatā | śītalāṃ vyomanirbhāsāṃ tāmevāśritya śāmyatām || 41 ||

When the mind is calm both internally and externally, one's true nature shines forth. By relying on that cool, sky-like radiance, one attains peace.

जब मन बाहर और अंदर दोनों जगह शांत होता है, तब अपने स्वभाव से चमकता है। उस ठंडी, आकाश-जैसी चमक पर भरोसा करके, शांति प्राप्त होती है।

7.49.42

ज्ञानवान्ज्ञानयज्ञस्थो ध्यानयूपं विरोपयन् । जगद्विजित्य जयति सर्वत्यागैकदक्षिणः ॥ ४२ ॥

jñānavānjñānayajñastho dhyānayūpaṃ viropayan | jagadvijitya jayati sarvatyāgaikadakṣiṇaḥ || 42 ||

The wise one, established in the sacrifice of knowledge, offering the pillar of meditation, conquers the world and attains victory through the sole offering of complete renunciation.

ज्ञानी, ज्ञान के यज्ञ में स्थित, ध्यान की यूप अर्पित करता है, संसार को जीतता है और पूर्ण त्याग की एकमात्र दक्षिणा से विजय प्राप्त करता है।

7.49.43

पतत्यङ्गारवर्षे च वाति वा प्रलयानिले । भूतले व्रजति व्योम्नि सममास्ते ज्ञ आत्मनि ॥ ४३ ॥

patatyangāravarṣe ca vāti vā pralayānile | bhūtale vrajati vyomni samamāste jña ātmani || 43 ||

Whether it is raining fire or the wind of destruction is blowing, whether one is on earth or in the sky, the wise one remains steadfast in the self.

चाहे आग की वर्षा हो रही हो या प्रलय की हवा चल रही हो, चाहे वह पृथ्वी पर हो या आकाश में, ज्ञानी आत्मा में स्थिर रहता है।

7.49.44

वैतृष्ण्यशान्तमनसो निरोधमलमीयुषः । स्थितिर्वज्रसमाधानं विना नान्योपपद्यते ॥ ४४ ॥

vaitṛṣṇyśāntamanaso nirodhamalamīyuṣaḥ | sthitirvajrasamādhānaṃ vinā nānyopapadyate || 44 ||

For those who are free from desire and have a calm mind, seeking restraint, stability is achieved through the firm resolve of the thunderbolt, without which nothing else is possible.

जिनके मन में इच्छा नहीं है और शांत है, जो नियंत्रण चाहते हैं, उनके लिए स्थिरता वज्र के दृढ़ संकल्प से प्राप्त होती है, जिसके बिना कुछ भी संभव नहीं है।

7.49.45

यथा बाह्यार्थवैतृष्ण्ये नोपशाम्यत्यलं मनः । न तथा शास्त्रसंदर्भैर्नोपदेशतपोदमैः ॥ ४५ ॥

yathā bāhyārthavaitṛṣṇye nopaśāmyatyalaṃ manaḥ | na tathā śāstrasaṃdarbhairnopadeśatapodamaiḥ || 45 ||

Just as the mind does not calm down without dispassion towards external objects, it does not calm down with scriptural discourses, teachings, or austerities alone.

जैसे बाहरी वस्तुओं के प्रति वैराग्य के बिना मन शांत नहीं होता, वैसे ही शास्त्रों के संदर्भ, उपदेश या तपस्या के साथ भी मन शांत नहीं होता।

7.49.46

मनस्तृणस्य सर्वार्थवैतृष्ण्याग्निर्विबोधितः । सर्वत्यागानिलैः संपदत्यापदिति भावनात् ॥ ४६ ॥

manastṛṇasya sarvārthavaitṛṣṇyāgnirvibodhitaḥ | sarvatyāgānilaiḥ saṃpadatyāpaditi bhāvanāt || 46 ||

The fire of desire for all objects is awakened by the mind, which is like dry grass. By the winds of renunciation, it is extinguished, leading to both prosperity and adversity.

मन की तृण के समान सर्वार्थवैतृष्ण्य की अग्नि जाग्रत होती है | सर्वत्याग की वायु से यह बुझ जाती है, जिससे समृद्धि और विपत्ति होती है |

7.49.47

बहिरन्तश्च मोहश्च पिण्डग्राहोऽर्थवेदनम्। ज्ञप्तिरेवेति कचति ज्ञात्वा मणिरिवात्मनि ॥ ४७ ॥

bahirantaśca mohaśca piṇḍagrāho'rthavedanam | jñaptireveti kacati jñātvā maṇirivātmani || 47 ||

Both external and internal delusions, along with the grasping of objects, are merely perceptions. Knowing this, one shines like a jewel within the self.

बाहरी और आंतरिक भ्रम, वस्तुओं को ग्रहण करना, ये सब केवल धारणाएँ हैं | इसे जानकर, मनुष्य आत्मा में मणि के समान चमकता है |

7.49.48

नरनागासुरागारगिरिगह्वरदृष्टिभिः। चितिरेवेति विसृता धूमोऽम्बुदतयेव खे ॥ ४८ ॥

naranāgāsurāgāragirigahvaradṛṣṭibhiḥ | citireveti visṛtā dhūmo'mbudatayeva khe || 48 ||

With the vision of humans, serpents, demons, houses, and mountain caves, consciousness is spread out like smoke in the sky.

मनुष्यों, सर्पों, असुरों, घरों और पर्वत की गुफाओं की दृष्टि से, चेतना आकाश में धुएँ की तरह फैली हुई है |

7.49.49

वेपन्ते चिद्द्रवत्वेन ब्रह्माण्डजडभाण्डगाः। स्वविवर्ततरङ्गिण्यो जीवशक्त्याऽऽपतद्रसाः ॥ ४९ ॥

vepante ciddravatvena brahmāṇḍajaḍabhāṇḍagāḥ | svavivartatarāṅgiṇyo jīvaśaktyā'āpatadrāsāḥ || 49 ||

The waves of the universe, which are inert vessels, tremble with the fluidity of consciousness, driven by the power of the individual soul.

जो जड़ भांड हैं, ब्रह्मांड की लहरें चेतना की द्रवता से काँपती हैं, जीव शक्ति से प्रेरित |

7.49.50

जीवकाजीर्णशफरी व्योमवारिविहारिणी। मोहजालेन वलिता न स्मरत्यात्मनि स्थितिम् ॥ ५० ॥

jīvakājīrṇaśapharī vyomavārivihāriṇī | mohajālena valitā na smaratyātmani sthitim || 50 ||

The individual soul, like a worn-out lotus, wanders in the sky of consciousness, entangled in the web of delusion, and does not remember its true state within the self.

जीव एक जीर्ण कमल की तरह, चेतना के आकाश में भटकता है, भ्रम के जाल में उलझा हुआ, और आत्मा में अपनी सच्ची स्थिति को याद नहीं करता |

7.49.51

घनीभूता घनत्वेन चिद्घना गगनाङ्गणे। नानापदार्थरूपेण स्फुरति स्वात्मनात्मनि ॥ ५१ ॥

ghanībhūtā ghanatvena cidghanā gaganāṅgaṇe | nānāpadārtharūpeṇa sphurati svātmanātmani || 51 ||

The dense consciousness pervades the sky with its dense nature, manifesting in various forms and shining within itself.

घनीभूत चेतना अपने घनत्व से आकाश में व्याप्त है, विविध रूपों में प्रकट होती है और अपने आत्म में चमकती है।

7.49.52

सर्व एव समा जीवा वासनामन्तरेण च। शुष्कपर्णवदुड्डीना जडाः श्वसनवेणवः ॥ ५२ ॥

sarva eva samā jīvā vāsanāmantareṇa ca | śuṣkaparṇavaduḍḍīnā jaḍāḥ śvasanaveṇavaḥ || 52 ||

All beings are equal in essence, but due to their desires, they are like dry leaves, inert and breathless.

सभी जीव मूल रूप से समान हैं, लेकिन अपनी वासनाओं के कारण वे सूखे पत्ते की तरह जड़ और बेदम हैं।

7.49.53

आहृत्य पौरुषबलान्यवजित्य तन्द्रीमुत्थाय तर्जितसमर्जितवासनौघम्। संसारपाशघनपञ्जरमञ्जसैव
भङ्क्त्वाभ्युदेयमभितोऽज्ञसमेन भाव्यम्॥ ५३॥

āhṛtya pauruṣabalānyavajitya tandrīmutthāya tarjitasamarjitavāsanaugham |
saṃsārapāśaghanapañjaramañjasaiva bhaṅktvābhyudayamabhito'jñasamena bhāvyam || 53 ||

By gathering one's strength and overcoming laziness, one should rise up, abandoning desires, and easily break the dense cage of worldly bonds to attain supreme bliss.

अपनी शक्ति को एकत्र करके और आलस्य को दूर करके, एक व्यक्ति को उठना चाहिए, वासनाओं को त्याग दें और संसार की घनी जकड़ों की पिंजर को आसानी से तोड़कर परम आनंद प्राप्त करें।

Chapter 50

7.50.1

इमे ये जीवसंघाता दृश्यन्ते दश दिग्गताःनरनागसुरागेन्द्रगन्धर्वाद्यभिधानकाः ॥ १ ॥

ime ye jīvasaṃghātā dṛśyante daśa diggatāḥnaranāgasurāgendragandharvādyabhidhānakāḥ || 1 ||

These are the various living beings that are seen in the ten directions, known by names such as humans, serpents, demons, gods, and celestial musicians.

ये वे जीव समूह हैं जो दस दिशाओं में दिखाई देते हैं, जिन्हें मनुष्य, नाग, असुर, देवता और गंधर्व आदि नामों से जाना जाता है।

7.50.2

ते स्वप्नजागराः केचित्केचित्संकल्पजागराःकेचित्केवलजाग्रत्स्थाश्चिराज्जाग्रत्स्थिताः परे ॥ २ ॥

te svapnajāgarāḥ kecitkecitsaṃkalpajāgarāḥkecitkevalajāgratsthāścirājjāgratsthitāḥ pare || 2 ||

Some of these beings are in a state of dreaming wakefulness, some in a state of imaginative wakefulness, some in a state of pure wakefulness, and others in a state of prolonged wakefulness.

इनमें से कुछ जीव स्वप्न जागरण की अवस्था में हैं, कुछ कल्पना जागरण की अवस्था में हैं, कुछ शुद्ध जागरण की अवस्था में हैं, और कुछ लंबे समय तक जागरण की अवस्था में हैं।

7.50.3

घनजाग्रत्स्थिताश्चान्ये जाग्रत्स्वप्नास्तथेतरेक्षीणजागरकाः केचिज्जीवाः सप्तविधाः स्मृताः ॥ ३ ॥

ghanajāgratsthitāścānye jāgratsvapnāstathetarekṣīṇajāgarakāḥ kecijjīvāḥ saptavidhāḥ smṛtāḥ || 3 ||

Some other beings are in a state of dense wakefulness, others in a state of wakefulness mixed with dreams, and still others in a state of diminished wakefulness. Thus, living beings are remembered in seven forms.

कुछ अन्य जीव घनी जागरण की अवस्था में हैं, कुछ जागरण और स्वप्न की मिश्रित अवस्था में हैं, और कुछ कम जागरण की अवस्था में हैं। इस प्रकार, जीव सात रूपों में याद किए जाते हैं।

7.50.4

श्रीराम उवाचेतेषां भगवन्भेदो बोधाय मम कथ्यताम्जीवानां सप्तरूपाणां जलानामर्णवेष्विव ॥ ४ ॥

śrīrāma uvācaeteṣāṃ bhagavanbhedo bodhāya mama kathyatāmjīvānāṃ saptarūpāṇāṃ jalānāmarṇaveṣviva || 4 ||

Sri Rama said: O Lord, please explain to me the differences among these seven forms of living beings, just as the differences among the waters of the oceans.

श्री राम ने कहा: हे भगवान, कृपया मुझे इन सात रूपों में जीवों के भेदों की व्याख्या करें, जैसे सागरों के जलों के भेद।

7.50.5

श्रीवसिष्ठ उवाचकस्मिंश्चित्प्राक्तने कल्पे कस्मिंश्चिज्जगति क्वचित्केचित्सुप्ताः स्थिता देहैर्जीवा जीवितधर्मिणः ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvācakasmiṃścitprāktane kalpe kasmiṃścijjagati kvacitkecitsuptāḥ sthitā dehairjīvā jīvitadharmiṇaḥ || 5 ||

Vasistha said: In some past era, in some part of the universe, some living beings remain asleep in their bodies, bound by the nature of life.

वसिष्ठ ने कहा: किसी पूर्व कल्प में, ब्रह्मांड के किसी हिस्से में, कुछ जीव अपने शरीरों में सोए हुए रहते हैं, जीवन के स्वभाव से बंधे हुए।

7.50.6

ये स्वप्नमभिपश्यन्ति तेषां स्वप्नमिदं जगत्विद्धि ते हि खलूच्यन्ते जीविकाः स्वप्नजागराः ॥ ६ ॥

ye svapnamabhipaśyanti teṣāṃ svapnamidaṃ jagatviddhi te hi khalūcyante jīvikāḥ svapnajāgarāḥ || 6 ||

Those who see this world as a dream, they indeed are awake in the dream. Know them to be the living ones who are awake in the dream.

जो लोग इस जगत को स्वप्न के रूप में देखते हैं, वे वास्तव में स्वप्न में जागरूक हैं। उन्हें स्वप्न में जागरूक जीवित लोगों के रूप में जानें।

7.50.7

क्वचिदेव प्रसुप्तानां यः स्वप्नः स्वयमुत्थितःविषयः सोऽयमस्माकं तेषां स्वप्ननरा वयम् ॥ ७ ॥

kvacideva prasuptānāṃ yaḥ svapnaḥ svayamutthitaḥviṣayaḥ so'yamasmākaṃ teṣāṃ svapnanarā vayam || 7 ||

Sometimes, the dream that arises by itself among the sleeping ones, that is the object of our experience. We are the dream-men of theirs.

कभी-कभी, सोए हुए लोगों में जो स्वप्न स्वयं उत्पन्न होता है, वह हमारे अनुभव का विषय है। हम उनके स्वप्न-मनुष्य हैं।

7.50.8

तेषां चिरतया स्वप्नः स जाग्रत्त्वमुपागतःस्वप्नजागरकास्ते तु जीवास्ते तद्गताः स्थिताः ॥ ८ ॥

teṣāṃ ciratayā svapnaḥ sa jāgrattvamupāgataḥsvapnajāgarakāste tu jīvāste tadgatāḥ sthitāḥ || 8 ||

Their long-lasting dream has attained the state of wakefulness. Those dream-awake ones are the living ones, established in that state.

उनका लंबा स्वप्न जागरूकता की अवस्था को प्राप्त हो गया है। वे स्वप्न-जागरूक लोग जीवित लोग हैं, जो उस अवस्था में स्थित हैं।

7.50.9

सर्वज्ञत्वात्सर्वगस्य सर्वं सर्वत्र विद्यतेयेन स्वप्नवतां तेषां वयं स्वप्ननराः स्थिताः ॥ ९ ॥

sarvajñatvātsarvagasya sarvaṃ sarvatra vidyateyena svapnavatāṃ teṣāṃ vayaṃ svapranarāḥ sthitāḥ || 9 ||

Due to the omniscience of the omnipresent one, everything exists everywhere. By that dream-like nature of theirs, we are established as dream-men.

सर्वव्यापी की सर्वज्ञता के कारण, सब कुछ हर जगह मौजूद है। उनकी स्वप्न-जैसी प्रकृति के कारण, हम स्वप्न-मनुष्य के रूप में स्थापित हैं।

7.50.10

श्रीराम उवाचयेषु कल्पेषु ते जाताः क्षीयन्ते कल्पकल्पनाःयदि तासत्कथं तेषां प्रबुद्धानामवस्थितिः ॥ १० ॥

śrīrāma uvācayeṣu kalpeṣu te jātāḥ kṣīyante kalpakalpanāḥyadi tāstatkathaṃ teṣāṃ prabuddhānāmavasthitiḥ || 10 ||

Sri Rama said: In these eons, they are born and the eons perish. If that is so, then how is the state of the awakened ones?

श्री राम ने कहा: इन युगों में, वे जन्म लेते हैं और युग नष्ट हो जाते हैं। यदि ऐसा है, तो जागरूक लोगों की अवस्था कैसी है?

7.50.11

श्रीवसिष्ठ उवाचैह स्वप्नभ्रमान्ते ते मुच्यन्ते वा विनिद्रताम्प्राप्य संकल्पतो देहांस्तथैवान्यान्श्रयन्त्यलम् ॥ ११ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaiha svapnabhramānte te mucyante vā vinidratāmprāpya saṃkalpato dehāṃstathaivānyānśrayantyalam || 11 ||

Shri Vasistha said: In the end of the dream delusion, they are liberated or fall into sleep. Having obtained a body by will, they resort to others in the same way.

श्री वसिष्ठ ने कहा: स्वप्न भ्रम के अंत में, वे मुक्त हो जाते हैं या निद्रा में चले जाते हैं। इच्छा से शरीर प्राप्त करके, वे दूसरों की शरण में चले जाते हैं।

7.50.12

तथैवान्यं प्रपश्यन्ति जगत्कल्पं च कल्पितम्कल्पनाभासनभसो न हि संकटता भवेत् ॥ १२ ॥

tathaivānyaṃ prapaśyanti jagatkalpaṃ ca kalpitamkalpanābhāsanabhaso na hi saṃkaṭatā bhavet || 12 ||

Similarly, they perceive another world as imagined and conceptualized. Due to the illusion of imagination, there is no real difficulty.

इसी तरह, वे दूसरी दुनिया को कल्पित और सोची गई मानते हैं। कल्पना के भ्रम के कारण, कोई वास्तविक कठिनाई नहीं होती।

7.50.13

संकल्पनात्मकजगज्जीर्णोदुम्बरकीटकाःस्वप्नजागरकाः प्रोक्ताः शृणु संकल्पजागरान् ॥ १३ ॥

saṃkalpanātmakajagajjīrṇodumbarakīṭakāḥsvapnajāgarakāḥ proktāḥ śṛṇu saṃkalpajāgarān || 13 ||

The world, which is of the nature of imagination, is like a worn-out fig tree and its insects. It is said to be like a dream and a waking state. Listen to the waking state of imagination.

कल्पना के स्वभाव वाली दुनिया एक पुराने अंजीर के पेड़ और उसके कीड़ों की तरह है। यह स्वप्न और जागृत अवस्था की तरह कहा जाता है। कल्पना की जागृत अवस्था को सुनो।

7.50.14

कस्मिंश्चित्प्राक्तने कल्पे कस्मिंश्चिज्जगति क्वचिन्निद्रालव एवान्तः संकल्पैकपराः स्थिताः ॥ १४ ॥

kasmiṃścitprāktane kalpe kasmiṃścijjagati kvacitanidrālava evāntaḥ saṃkalpaikaparāḥ sthitāḥ || 14 ||

In some past eon, in some world somewhere, they remain solely devoted to imagination, as if in a moment of sleep.

किसी पुराने कल्प में, किसी दुनिया में कहीं, वे कल्पना के प्रति पूर्णतः समर्पित रहते हैं, मानो नींद के एक क्षण में।

7.50.15

ध्यानाद्विलुटिता वाथ मनोराज्यवशानुगाःसंकल्पदार्ढ्यमापन्ना गलिताग्रानुभूतयः ॥ १५ ॥

dhyānādviluṭhitā vātha manorājyavaśānugāḥsaṃkalpadārḍhyamāpannā galitāgrānubhūtayaḥ || 15 ||

Either detached from meditation or following the sway of the mind's kingdom, they attain the firmness of imagination, with their past experiences dissolved.

या तो ध्यान से अलग होकर या मन के राज्य के प्रभाव का अनुसरण करते हुए, वे कल्पना की दृढ़ता प्राप्त करते हैं, उनके पिछले अनुभव घुल जाते हैं।

7.50.16

संकल्प एव जाग्रत्त्वं येषां चिरतयांशतःतत्रास्तमितचेष्टानां ते हि संकल्पजागराः ॥ १६ ॥

saṃkalpa eva jāgrattvaṃ yeṣāṃ ciratayāṃśataḥtatrāstamitaceṣṭānāṃ te hi saṃkalpajāgarāḥ || 16 ||

Those whose wakefulness is merely a resolve, and whose actions have ceased for a long time, they are indeed awake due to resolve.

जिनकी जागरूकता केवल संकल्प है, और जिनकी क्रियाएँ लंबे समय से समाप्त हो गई हैं, वे वास्तव में संकल्प के कारण जागरूक हैं।

7.50.17

संकल्पोपशमे भूयस्तमन्यं वा श्रयन्ति तेदेहे तेषां वयमिमे संकल्पपुरुषाः स्थिताः ॥ १७ ॥

saṃkalpopaśame bhūyastamanyaṃ vā śrayanti tedehe teṣāṃ vayamime saṃkalpapuruṣāḥ sthitāḥ || 17 ||

When the resolve subsides, they take refuge in something else or in the body. We, these beings of resolve, are situated in their bodies.

जब संकल्प शांत हो जाता है, तो वे किसी और चीज में या शरीर में शरण लेते हैं। हम, ये संकल्प के प्राणी, उनके शरीरों में स्थित हैं।

7.50.18

संकल्पजागराः प्रोक्ता एते संकल्पशायिनःजीवा जीवितगा लोकाः शृणु केवलजागरान् ॥ १८ ॥

saṃkalpajāgarāḥ proktā ete saṃkalpaśāyinaḥjīvā jīvitagā lokāḥ śṛṇu kevalajāgarān || 18 ||

Those who are awake due to resolve are said to be these beings who rest in resolve, living beings who move in the world. Listen to those who are purely awake.

जो संकल्प के कारण जागरूक हैं, वे इन प्राणियों के रूप में कहे जाते हैं जो संकल्प में विश्राम करते हैं, जीवित प्राणी जो दुनिया में घूमते हैं। उन पूर्ण रूप से जागरूक लोगों को सुनो।

7.50.19

प्राथम्येनावतीर्णास्ते ब्रह्मणो बृंहितात्मनःप्रोक्ताः केवलजागर्याः प्रागुत्पत्त्यविकासिनः ॥ १९ ॥

prāthamyenāvatīrṇāste brahmaṇo bṛṃhitātmanaḥproktāḥ kevalajāgaryāḥ prāgutpattyavikāsinaḥ || 19 ||

Those who have descended first from Brahman, the expanded self, are said to be purely awake, manifesting before creation.

जो ब्रह्म से, विस्तृत आत्मा से, पहले अवतरित हुए हैं, वे पूर्ण रूप से जागरूक कहे जाते हैं, सृष्टि से पहले प्रकट होते हैं।

7.50.20

भूयो जन्मान्तरगतास्त एव चिरजागराःकथ्यन्ते प्रौढिमायाताः कार्यकारणचारिणः ॥ २० ॥

bhūyo janmāntaragatāsta eva cirajāgarāḥkathyante prauḍhimāyātāḥ kāryakāraṇacāriṇaḥ || 20 ||

Those who have gone to another birth are said to be the long-awake, moving in the realm of cause and effect.

जो दूसरे जन्म में चले गए हैं, वे लंबे समय से जागरूक कहे जाते हैं, कारण और परिणाम के क्षेत्र में चलते हैं।

7.50.21

त एव दुष्कृतावेशाज्जडस्थावरतां गताःघनजाग्रत्तया प्रोक्ता जाग्रत्सु घनतां गताः ॥ २१ ॥

ta eva duṣkṛtāveśājjaḍasthāvaratāṃ gatāḥghanajāgrattayā proktā jāgratsu ghanatāṃ gatāḥ || 21 ||

Those who are engrossed in evil deeds become inert like immovable objects. They are said to be in a state of dense wakefulness, and in wakefulness, they become dense.

जो दुष्कर्मों में लीन होते हैं, वे अचेतन स्थावरों की तरह हो जाते हैं। वे घनीभूत जाग्रत अवस्था में होते हैं, और जाग्रत अवस्था में वे घने हो जाते हैं।

7.50.22

ये तु शास्त्रार्थसत्सङ्गबोधिता बोधमागताःपश्यन्ति स्वप्नवज्जाग्रज्जाग्रत्स्वप्ना भवन्ति ते ॥ २२ ॥

ye tu śāstrārthasatsaṅgabodhitā bodhamāgatāḥpaśyanti svapnavajjāgrajjāgratsvapnā bhavanti te || 22 ||

Those who are enlightened by the company of good scriptures and the meaning of truth, they see the wakeful state as a dream. They become awake in the dream.

जो शास्त्रों और सत्य के अर्थ के साथ संगत होकर बोध प्राप्त करते हैं, वे जाग्रत अवस्था को स्वप्न की तरह देखते हैं। वे स्वप्न में जाग्रत हो जाते हैं।

7.50.23

ये तु संप्राप्तसंबोधा विश्रान्ताः परमे पदेक्षीणजाग्रत्प्रभृतयस्ते तुर्यां भूमिकां गताः ॥ २३ ॥

ye tu saṃprāptasaṃbodhā viśrāntāḥ parame padekṣīṇajāgratprabhṛtayaste turyāṃ bhūmikāṃ gatāḥ || 23 ||

Those who have attained perfect enlightenment and are rested in the supreme state, they have transcended the wakeful state and have reached the fourth state.

जो पूर्ण बोध प्राप्त कर चुके हैं और परम अवस्था में विश्राम कर रहे हैं, वे जाग्रत अवस्था से परे हैं और चौथी अवस्था में पहुंच चुके हैं।

7.50.24

इति सप्तविधो भेदो जीवानां कथितस्तवसमुद्राणामिव मया बुद्ध्वा श्रेयःपरो भव ॥ २४ ॥

iti saptavidho bhedo jīvānāṃ kathitastavasamudrāṇāmiva mayā buddhvā śreyaḥparo bhava || 24 ||

Thus, the sevenfold distinction among beings has been explained to you, like the seven oceans. Having understood this, may you attain the supreme good.

इस प्रकार, सात प्रकार के भेद जीवों के बीच आपको बताए गए हैं, जैसे सात समुद्र। इसे समझकर, आप परम कल्याण प्राप्त करें।

7.50.25

भ्रान्तिं परित्यज जगद्गणनात्मिकां त्वं बोधैकरूपघनतामलमागतोऽसिशून्यत्ववर्जितमशून्यतया च मुक्तं तेन द्वयैक्यकविमुक्तवपुस्त्वमाद्यम् ॥ २५ ॥

bhrāntiṃ parityaja jagadgaṇanātmikāṃ tvaṃ bodhaikarūpaghanatāmalamāgato'siśūnyatvavarjitamaśūnyatayā ca muktaṃ tena dvayaikyakavimuktavapustvamādyam || 25 ||

Abandon the delusion of the world's multiplicity. You have attained the pure state of enlightenment, free from emptiness and filled with non-emptiness. Liberated, you are the primordial form of the duality-transcending liberated being.

दुनिया की बहुलता की भ्रम को त्याग दो। तुम शुद्ध बोध की अवस्था में पहुंच चुके हो, शून्यता से मुक्त और अशून्यता से भरपूर। मुक्त होकर, तुम द्वैत-अतीत मुक्त प्राणी के आदिम रूप हो।

Chapter 51

7.51.1

श्रीराम उवाच । कथं केवलजाग्रत्त्वमकारणमनर्थकम् । पराद्विकसति ब्रह्मन्गगनादिव पादपः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | kathaṃ kevalajāgrattvamakāraṇamanarthakam | parādvikasati brahmaṅgaganādiva pādapaḥ || 1 ||

Shri Rama said: How can the mere waking state, which is causeless and purposeless, blossom like a tree in the sky?

श्री राम ने कहा: जो निर्वाहक और अनर्थक है, वह जाग्रत अवस्था आकाश में वृक्ष की तरह कैसे खिल सकती है?

7.51.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । अकारणं महाबुद्धे न कार्यमुपलभ्यते । तज्जाग्रतः केवलस्य न कश्चिदिह संभवः ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | akāraṇaṃ mahābuddhe na kāryamupalabhyate | tajjāgrataḥ kevalasya na kaścid iha saṃbhavaḥ || 2 ||

Shri Vasistha said: O great wise one, the causeless does not produce any effect. Therefore, the mere waking state does not exist here.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे महान बुद्धिमान, निर्वाहक कोई परिणाम नहीं उत्पन्न करता। इसलिए, मात्र जाग्रत अवस्था यहाँ नहीं होती।

7.51.3

तस्यातो संभवादन्ये जीवभेदाः सजीवकाः । सर्वे न संभवन्त्येव कारणाभावविक्षताः ॥ ३ ॥

tasyāto saṃbhavādanye jīvabhedāḥ sajīvakāḥ | sarve na saṃbhavantyeva kāraṇābhāvavikṣatāḥ || 3 ||

Therefore, other living beings and their distinctions do not arise at all, due to the lack of cause.

इसलिए, अन्य जीवों और उनके भेदों का उद्भव कारण के अभाव के कारण नहीं होता।

7.51.4

नेह प्रजायते किंचिन्नेह किंचन नश्यति । उपदेश्योपदेशार्थं शब्दार्थकलनोदयः ॥ ४ ॥

neha prajāyate kiṃcinneha kiṃcana naśyati | upadeśyopadeśārthaṃ śabdārthakalanodayaḥ || 4 ||

Nothing is born here, nothing perishes here. The arising of words and meanings is for the sake of instruction.

यहाँ कुछ भी जन्म नहीं लेता, यहाँ कुछ भी नष्ट नहीं होता। शब्दों और अर्थों का उदय उपदेश के लिए है।

7.51.5

श्रीराम उवाच । कः करोति शरीराणि मनोबुद्ध्यादिचेतनैः । को मोहयति भूतानि स्नेहरागादिबन्धनैः ॥ ५ ॥

śrīrāma uvāca | kaḥ karoti śarīrāṇi manobuddhyādicetanaiḥ | ko mohayati bhūtāni sneharāgādibandhanaiḥ || 5 ||

Shri Rama said: Who creates the bodies with the mind, intellect, and other consciousness? Who deludes the beings with the bonds of affection and passion?

श्री राम ने कहा: कौन मन, बुद्धि और अन्य चेतनाओं से शरीर बनाता है? कौन स्नेह और राग के बंधनों से प्राणियों को मोहित करता है?

7.51.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । न कश्चिदेव कुरुते शरीराणि कदाचन । न मोहयति भूतानि कश्चिदेव कदाचन ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | na kaścideva kurute śarīrāṇi kadācana | na mohayati bhūtāni kaścideva kadācana || 6 ||

Sri Vasistha said: No one ever creates bodies, nor does anyone ever delude beings.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: कोई भी कभी शरीर नहीं बनाता, न ही कोई कभी प्राणियों को मोहित करता है।

7.51.7

अनाद्यन्तावभासात्मा बोध आत्मनि संस्थितः । नानापदार्थरूपेण कमूर्म्यादितया यथा ॥ ७ ॥

anādyantāvabhāsātmā bodha ātmani saṃsthitaḥ | nānāpadārtharūpeṇa kamūrmyāditayā yathā || 7 ||

The self-luminous, beginningless, and endless consciousness is established in the self, appearing in various forms like a tortoise and its shell.

अनादि, अनंत, स्वयंप्रकाश चेतना आत्मा में स्थित है, जो कछुए और उसके खोल की तरह विभिन्न रूपों में प्रकट होती है।

7.51.8

बाह्यं न विद्यते किंचिद्बोधः स्फुरति बाह्यवत् । उदेति बोधहृदयाद्बीजादिव वरद्रुमः ॥ ८ ॥

bāhyaṃ na vidyate kiñcidbodhaḥ sphurati bāhyavat | udeti bodhahṛdayādbījādiva varadrumaḥ || 8 ||

There is nothing external; consciousness shines as if external, arising from the heart of consciousness like a wish-fulfilling tree from a seed.

बाहर कुछ नहीं है; चेतना बाहर की तरह चमकती है, चेतना के हृदय से बीज की तरह कल्पवृक्ष के रूप में उत्पन्न होती है।

7.51.9

बोधस्यान्तरिदं विश्वं स्थितमेव रघूद्वह । स्तम्भस्यान्तर्यथा शालभञ्जिका प्रकटीकृता ॥ ९ ॥

bodhasyāntaridaṃ viśvaṃ sthitameva raghūdvaha | stambhasyāntaryathā śālabhañjikā prakaṭīkṛtā || 9 ||

O Raghava, the entire universe is situated within consciousness, just as a picture is manifested within a pillar.

हे रघुवंशी, सम्पूर्ण विश्व चेतना के अंदर स्थित है, जैसे एक चित्र स्तंभ के अंदर प्रकट होता है।

7.51.10

सबाह्याभ्यन्तरात्मैकमनन्तं देशकालतः । बोधामोदप्रसरणं जगदेव प्रबुध्यताम् ॥ १० ॥

sabāhyābhyantarātmaikamanantaṃ deśakālataḥ | bodhāmodaprasaraṇaṃ jagadeva prabudhyatām || 10 ||

May the world awaken to the infinite, non-dual self, which is both external and internal, and which pervades all space and time with the bliss of consciousness.

सम्पूर्ण विश्व उस अनंत, अद्वैत आत्मा के प्रति जाग्रत हो, जो बाहर और अंदर दोनों है, और जो समय और स्थान के सभी क्षेत्रों में चेतना के आनंद से व्याप्त है।

7.51.11

अयमेव परो लोको भाव्यतां वासनाक्षयः । शाम्यतां परलोकस्थं कां किलायान्ति वासनाः ॥ ११ ॥

ayameva paro loko bhāvyatāṃ vāsanākṣayaḥ| śāmyatāṃ paralokasthaṃ kāḥ kilāyānti vāsanāḥ || 11 ||

This is the supreme world, let the desires be destroyed, let the desires of the other world be calmed, what desires come to an end.

यही परम लोक है, वासनाओं का क्षय हो जाए, परलोक में स्थित वासनाएँ शान्त हो जाएँ, कौन सी वासनाएँ समाप्त होती हैं।

7.51.12

देशकालक्रियालोकरूपचित्तात्मसत्पदम्। देशकालादिशब्दार्थरहितं न च शून्यकम्॥ १२॥

deśakālakriyālokarūpacittātmasatpadam| deśakālādiśabdārtharahitaṃ na ca śūnyakam || 12 ||

The abode of the true self, which is the form of space, time, action, and world, is not devoid of the meaning of words like space, time, etc., nor is it empty.

जो देश, काल, क्रिया और लोक का रूप है, वह सत्य आत्मा का निवास स्थान है, जो देश, काल आदि शब्दों के अर्थ से रहित नहीं है, न ही यह शून्य है।

7.51.13

पदे पदविदामेव तस्मिन्बोधगतिर्भवेत्। द्रष्टृणां शान्तदृश्यानामेवान्येषां न राघव॥ १३॥

pade padavidāmeva tasminbodhagatirbhavet| draṣṭṛāṇāṃ śāntadṛśyānāmevānyeṣāṃ na rāghava || 13 ||

In that abode, the realization of the knowers of the path alone occurs. For the seers of the peaceful vision, and not for others, O Raghava.

उस निवास स्थान में, मार्ग के ज्ञाताओं का ही बोध होता है। शान्त दृष्टि वाले द्रष्टाओं के लिए, और दूसरों के लिए नहीं, हे रघुवंशी।

7.51.14

ये वै तरलगम्भीरमहंतागर्तमाश्रिताः। पश्यन्ति ते तमालोकं न कदाचन केचन॥ १४॥

ye vai taralagambhīramahantāgartamāśritāḥ| paśyanti te tamālokaṃ na kadācana kecana || 14 ||

Those who take refuge in the deep, profound, and great abode, they see that world, never anyone else.

जो गहरे, गम्भीर और महान आश्रय में शरण लेते हैं, वे उस लोक को देखते हैं, कभी कोई और नहीं।

7.51.15

चतुर्दशविधानन्तभूतजातसुघुंघुमा। जगद्दृष्टिरियं ज्ञस्य शरीरावयवोपमा॥ १५॥

caturdaśavidhānantabhūtajātasughuṃghumā| jagaddṛṣṭiriyam jñasya śarīrāvayavopamā || 15 ||

This vision of the world, consisting of fourteen types of eternal elements, is like the parts of the body for the knower.

यह जगत की दृष्टि, जो चौदह प्रकार के अनन्त भूतों से बनी है, ज्ञानी के लिए शरीर के अंगों की तरह है।

7.51.16

कारणाभावतः सृष्टिर्नोदिता न च शाम्यति। यादृशं कारणं वा स्यात्तादृग्भवति कार्यकम्॥ १६॥

kāraṇābhāvataḥ sṛṣṭirnoditā na ca śāmyati | yādṛśaṃ kāraṇaṃ vā syāttādṛgbhavati kāryakam || 16 ||

Without a cause, creation does not arise nor cease. Whatever the cause may be, the effect will be of that nature.

कारण के बिना, सृष्टि न उत्पन्न होती है न विराम लेती है | जैसा कारण होगा, कार्य वैसा ही होगा |

7.51.17

यदि स्यात्कारणे कार्यं स्थितं कारणतास्य का। कार्यमेवोपलम्भात्तदसद्द्वयमवेदनात्॥ १७॥

yadi syātkāraṇe kāryaṃ sthitaṃ kāraṇatāsya kā | kāryamevopalambhāttadasaddvayamavedanāt || 17 ||

If the effect is inherent in the cause, then what is the nature of its causality? From the perception of the effect alone, both are known to be unreal.

यदि कारण में कार्य स्थित है, तो उसकी कारणता क्या है? कार्य के उपलब्धि से ही दोनों असत् जान पड़ते हैं |

7.51.18

सौम्यस्यान्तर्यथाम्भोधेरूर्म्यावर्तादयः स्थिताः । ब्रह्मण्यसंभवक्षोभे जगच्चित्तादयस्तथा ॥ १८ ॥

saumyasyāntaryathāmbhodherūrmyāvartādayaḥ sthitāḥ | brahmaṇyasaṃbhava kṣobhe jagaccittādayastathā || 18 ||

Just as waves and whirlpools are situated within the calm ocean, so too are the world and thoughts situated within the unchanging Brahman.

जैसे तरंगें और भंवर शांत समुद्र में स्थित होते हैं, वैसे ही संसार और विचार अपरिवर्तनशील ब्रह्म में स्थित हैं |

7.51.19

सर्वात्मैवामलं ब्रह्म पिण्ड एक इव स्थितम् । नानाभाण्डात्म हेमैव यथान्तःस्थितरूपकम् ॥ १९ ॥

sarvātmaivāmalaṃ brahma piṇḍa eka iva sthitam | nānābhāṇḍātma hemaiva yathāntaḥsthitarūpakam || 19 ||

The pure Brahman, which is the self of all, is situated as one lump, just as gold is situated within various vessels in the form of ornaments.

शुद्ध ब्रह्म, जो सबका आत्मा है, एक लंप के रूप में स्थित है, जैसे सोना विभिन्न भांडों में आभूषणों के रूप में स्थित होता है |

7.51.20

स्वप्नकाले स्वप्न एव जाग्रद्व्यग्रापरिग्रहात् । जाग्रत्काले जाग्रदेव स्वप्नः सत्यावबोधतः ॥ २० ॥

svapnakāle svapna eva jāgradvyagrāparigrahāt | jāgratkāle jāgradeva svapnaḥ satyāvabodhataḥ || 20 ||

In the state of dreaming, the dream itself is perceived as real due to the grasping of the waking state. In the waking state, the dream is understood to be unreal.

स्वप्न अवस्था में, स्वप्न ही जाग्रत अवस्था के ग्रहण के कारण सत्य के रूप में दिखाई देता है | जाग्रत अवस्था में, स्वप्न असत्य के रूप में समझा जाता है |

7.51.21

चित्तमात्रतया बुद्धं मृगतृष्णाम्बुवत्स्थितम् । जाग्रत्स्वप्नत्वमायाति विचारविकलीकृतम् ॥ २१ ॥

cittamātratayā buddhaṃ mṛgatṛṣṇāmbuvatsthitam | jāgratsvapnatvamāyāti vicāravikalīkṛtam || 21 ||

The mind, which is considered to be the only reality, remains like the mirage water | It attains the state of wakefulness and dream due to the disturbance of thoughts.

मन, जिसे एकमात्र सत्य माना जाता है, मृगतृष्णा के जल की तरह स्थित है | विचारों की विकलता से यह जाग्रत् और स्वप्न की स्थिति को प्राप्त होता है।

7.51.22

सम्यग्ज्ञानेन भूतानि ज्ञस्य देहतया सह । पीठबन्धं विमुञ्चन्ति गतकाल इवाम्बुदाः ॥ २२ ॥

samyagjñānena bhūtāni jñasya dehatayā saha | pīṭhabandhaṃ vimuñcanti gatakāla ivāmbudāḥ || 22 ||

With true knowledge, beings along with the body of the knower | Release the bondage like the clouds of the past.

सत्य ज्ञान से, ज्ञाता के शरीर के साथ प्राणी | बंधन को छोड़ते हैं जैसे बीते हुए बादल।

7.51.23

यथा गलितुमारब्धो घनो गगनतामियात्। तथा सत्यावबोधेन शाम्येत्सात्मग्रहं जगत्॥ २३॥

yathā galitumārabdho ghano gaganatāmiyāt | tathā satyāvabodhena śāmyetsātmagrahaṃ jagat || 23 ||

Just as a cloud that begins to dissolve merges into the sky | Similarly, with the realization of truth, the world grasped as the self calms down.

जैसे घुलने लगा हुआ बादल आकाश में विलीन हो जाता है | वैसे ही, सत्य के बोध से, आत्मा के रूप में पकड़ा हुआ संसार शांत हो जाता है।

7.51.24

शरदभ्रवदालूना मृगतृष्णाम्बुव्रत्तथा। पुनः संस्पृश्यमानैव बोधाद्गलति दृश्यता॥ २४॥

śaradabhravadālūnā mṛgatṛṣṇāmbuvrattathā | punaḥ saṃspṛśyamānaiva bodhādgalati dṛśyatā || 24 ||

Like the autumn cloud, the mirage water, similarly | When touched again, the visibility dissolves from knowledge.

शरद के बादल की तरह, मृगतृष्णा के जल की तरह, वैसे ही | जब फिर से स्पर्श किया जाता है, तो ज्ञान से दृश्यता घुल जाती है।

7.51.25

यथा दीप्तानले लीनं सुवर्णं घृतमिन्धनम्। एकतां याति विज्ञाने तथा भुवनचित्तदृक्॥ २५॥

yathā dīptānale līnaṃ suvarṇaṃ ghṛtamindhanam | ekatāṃ yāti vijñāne tathā bhuvanacittadṛk || 25 ||

Just as gold, ghee, and fuel merge into the blazing fire | Similarly, the mind and the seer of the world merge into knowledge.

जैसे सोना, घी और ईंधन प्रज्वलित अग्नि में विलीन हो जाते हैं | वैसे ही, मन और संसार के द्रष्टा ज्ञान में विलीन हो जाते हैं।

7.51.26

बोधेन तनुतामेति पिण्डबन्धो जगत्त्रयेपिशाचबुद्धिः सदने बोधितस्य यथा शिशोः॥ २६॥

bodhena tanutāmeti piṇḍabandho jagattrayepiśācabuddhiḥ sadane bodhitasya yathā śiśoḥ || 26 ||

By knowledge, the embodied being attains subtlety in the three worlds, like a child in the house of the awakened one, with a mind like a ghost.

ज्ञान से, शरीरधारी जीव तीनों लोकों में सूक्ष्मता प्राप्त करता है, जैसे जाग्रत के घर में एक बच्चा, जिसका मन पिशाच की तरह होता है।

7.51.27

बोधस्यानन्तरूपस्य स्वयमेवात्मनात्मनिजगच्चित्तादिता भाता पिण्डबन्धः किलात्र कः॥ २७॥

bodhasyānantarūpasya svayamevātmanātmanijagaccittāditā bhātā piṇḍabandhaḥ kilātra kaḥ || 27 ||

The infinite form of knowledge itself appears as the embodied being, the self, and the world-consciousness. Who is this embodied being here?

ज्ञान का अनंत रूप स्वयं शरीरधारी जीव, आत्मा और विश्व-चेतना के रूप में प्रकट होता है। यहाँ यह शरीरधारी जीव कौन है?

7.51.28

बोधाबोधनमेवेदं जगच्चित्तमिवोदितम्तदेवास्तं गतं बोधात्पिण्डबन्धस्य कास्तिता॥ २८॥

bodhābodhanamevedaṃ jagaccittamivoditamtadevāstaṃ gataṃ bodhātpiṇḍabandhasya kāstitā || 28 ||

This knowledge and ignorance are like the world-consciousness revealed. That itself has ceased to exist from knowledge, the existence of the embodied being.

यह ज्ञान और अज्ञान विश्व-चेतना के समान प्रकट होता है। वही ज्ञान से अस्तित्व समाप्त हो गया है, शरीरधारी जीव का अस्तित्व।

7.51.29

जहाति पिण्डकाठिन्यं जाग्रत्स्वप्नावबोधतःपरां पेलवतामेति हेम द्रुतमिवाग्निना ॥ २९ ॥

jahāti piṇḍakāṭhinyaṃ jāgratsvapnāvabodhataḥparāṃ pelavatāmeti hema drutamivāgninā || 29 ||

It abandons the hardness of the body through the awakening of the waking and dreaming states, and attains the highest subtlety, like gold quickly by fire.

यह जाग्रत और स्वप्न अवस्थाओं के जागरण के द्वारा शरीर की कठोरता को त्याग देता है, और उच्चतम सूक्ष्मता प्राप्त करता है, जैसे अग्नि द्वारा सोना तेजी से।

7.51.30

यथास्थितं बोध एव घनतामिव गच्छतिविनैव देशकालाभ्यां तौ विनिर्माय हेमवत् ॥ ३० ॥

yathāsthitaṃ bodha eva ghanatāmiva gacchativinaiva deśakālābhyāṃ tau vinirmāya hemavat || 30 ||

Knowledge itself, as it is, goes into density, as if purified by place and time, like gold.

ज्ञान स्वयं, जैसा कि है, स्थान और समय द्वारा शुद्ध किया जाता है, घनत्व में जाता है, जैसे सोना।

7.51.31

जाग्रत्येवं विचारेण स्वप्नाभे पेलवे स्थिते । क्षीयमाणे शरत्काल इवैति तनुतां रसः ॥ ३१ ॥

jāgratyevaṃ vicāreṇa svapnābhe pelave sthite | kṣīyamāṇe śaratkāla ivaeti tanutāṃ rasaḥ || 31 ||

In the waking state, by such contemplation, the dream-like insignificance is perceived | Just as the autumn season wanes, so does the essence diminish || 31 ||

जाग्रत अवस्था में, ऐसे विचार से, स्वप्न-जैसी अनावश्यकता दिखाई देती है | जैसे शरद ऋतु घटती है, वैसे ही सार कम होता जाता है || ३१ ||

7.51.32

परां पेलवतां याता दृश्यलक्ष्म्यः स्थिता अपि । स्वप्ना इव परिज्ञाता न स्वदन्ते विवेकिनः ॥ ३२ ॥

parāṃ pelavatāṃ yātā dṛśyalakṣmyaḥ sthitā api | svapnā iva parijñātā na svadante vivekinaḥ || 32 ||

Even though the visible beauties have reached the ultimate insignificance, they are not enjoyed by the wise, as they are known to be like dreams || 32 ||

यद्यपि दृश्य सुंदरताएँ अत्यंत अनावश्यकता तक पहुँच गई हैं, वे बुद्धिमान लोगों द्वारा नहीं भोगी जातीं, क्योंकि वे स्वप्न की तरह जानी जाती हैं || ३२ ||

7.51.33

क्व किल स्वात्मविश्रान्तिः क्वैतद्विषयवेदनम् । सुषुप्तजाग्रतोरैक्यं भ्रान्ताभ्रान्तात्मनोर्भवेत् ॥ ३३ ॥

kva kila svātmaviśrāntiḥ kvaitadvaiṣayavedanam | suṣuptajāgratoraikyaṃ bhrāntābhrāntātmanorbhavet || 33 ||

Where is the rest in one's own self, and where is the perception of these objects? The unity of deep sleep and waking states occurs in the deluded and the undeluded selves || 33 ||

स्वयं के आत्मा में विश्राम कहाँ है, और इन विषयों की अनुभूति कहाँ है? गहरी नींद और जाग्रत अवस्था का एकत्व भ्रांत और अभ्रांत आत्माओं में होता है || ३३ ||

7.51.34

चित्तमात्रे भ्रान्तिमात्रे स्वप्नमात्रात्मनि स्थिते । जगतीह पदार्थेभ्यः सत्यबुद्धिर्निवर्तते ॥ ३४ ॥

cittamātre bhrāntimātre svapnamātrātmani sthite | jagatīha padārthebhyaḥ satyabuddhirnivartate || 34 ||

When the mind is solely in delusion, situated in the dream-like self, the notion of reality in the objects of the world ceases || 34 ||

जब मन केवल भ्रांति में होता है, स्वप्न-जैसे आत्मा में स्थित होता है, तब दुनिया की वस्तुओं में वास्तविकता की धारणा समाप्त हो जाती है || ३४ ||

7.51.35

कस्य स्वदन्तेऽसत्यानि कथमेव महामते । मृगतृष्णाजलानीव दृश्यान्यपि पुरःस्थितैः ॥ ३५ ॥

kasya svadante'satyāni kathameva mahāmate | mṛgatṛṣṇājalānīva dṛśyānyapi puraḥsthitaiḥ || 35 ||

O wise one, how can one enjoy the unreal, like the mirage water, even though they appear before the eyes? || 35 ||

हे महामते, मृगतृष्णा जल की तरह असत्य का आनंद किसके द्वारा लिया जाता है, भले ही वे आँखों के सामने दिखाई दें? || ३५ ||

7.51.36

सत्यबुद्धौ विलीनायां जगत्पश्यति शान्तधीः । जालद्वीपांशुजालाभमपिण्डात्माम्बरात्मकम् ॥ ३६ ॥

satyabuddhau vilīnāyāṃ jagatpaśyati śāntadhīḥ | jāladvīpāṃśujālābhamapiṇḍātmāmbarātmakam || 36 ||

When the mind is absorbed in the truth and intellect, the peaceful-minded one sees the world as a reflection of the sky, like a net of islands and a net of rays.

जब मन सत्य और बुद्धि में विलीन हो जाता है, तब शान्त मन वाला व्यक्ति दुनिया को आकाश की छाया की तरह देखता है, जैसे एक द्वीप का जाल और किरणों का जाल।

7.51.37

जाग्रतो वस्तुतः शून्यात्परिज्ञातान्निवर्तते । चित्तभ्रमात्मनो भ्रान्तिरूपास्वादनभावना ॥ ३७ ॥

jāgrato vastutaḥ śūnyātparijñātānnivartate | cittabhramātmano bhrāntirūpāsvādanabhāvanā || 37 ||

From the knowledge of the emptiness of reality in the waking state, one turns away from the delusion of the mind's wandering, which is the enjoyment of false appearances.

जाग्रत अवस्था में वास्तविकता की शून्यता के ज्ञान से, मन के भटकाव की भ्रान्ति से दूर हो जाता है, जो झूठी उपस्थितियों का आस्वादन है।

7.51.38

यदवस्त्विति विज्ञातं तत्रोपादेयता कुतः । केन स्वप्नं परिज्ञाय स्वप्नहेमाभिगम्यते ॥ ३८ ॥

yadavastviti vijñātaṃ tatropādeyatā kutaḥ | kena svapnaṃ parijñāya svapnahemābhigamyate || 38 ||

If something is known to be unreal, how can it be accepted? By knowing a dream, how can one obtain dream-gold?

यदि कोई चीज अवास्तविक है, तो उसे कैसे स्वीकार किया जा सकता है? सपने को जानकर, कोई सपने का सोना कैसे प्राप्त कर सकता है?

7.51.39

स्वप्नादिव परिज्ञाताद्रसो दृश्यान्निवर्तते । द्रष्टृदृश्यदशादोषग्रन्थिच्छेदः प्रवर्तते ॥ ३९ ॥

svapnādiva parijñātādraso dṛśyānnivartate | draṣṭṛadṛśyadaśādoṣagranthicchedaḥ pravartate || 39 ||

Just as the taste of a dream vanishes upon knowing it, so does the perception of the seen vanish. The knot of the defect of the state of the seer and the seen is cut.

जैसे सपने का स्वाद उसे जानने पर विलीन हो जाता है, उसी तरह देखी गई चीज का अनुभव भी विलीन हो जाता है। देखने वाले और देखी गई चीज की अवस्था के दोष का ग्रंथि कट जाता है।

7.51.40

नीरसः शान्तमननो निर्वाणाहंकृतिः कृती । वीतरागो निरायासः शान्तस्तिष्ठति बुद्धधीः ॥ ४० ॥

nīrasaḥ śāntamanano nirvāṇāhaṃkṛtiḥ kṛtī | vītarāgo nirāyāsaḥ śāntastiṣṭhati buddhadhīḥ || 40 ||

Free from desires, with a peaceful mind, devoid of ego, the wise one, free from passions and efforts, remains calm and enlightened.

निरासक्त, शान्त मन वाला, अहंकार रहित, बुद्धिमान व्यक्ति, जो राग और परिश्रम से मुक्त है, शान्त और प्रकाशित रहता है।

7.51.41

रसे नीरसतां याते वासना प्रविलीयते । शिखायां प्रविलीनायां प्रदीपस्यांशवो यथा ॥ ४१ ॥

rase nīrasatāṃ yāte vāsanā pravilīyate | śikhāyāṃ pravilīnāyāṃ pradīpasyaṃśavo yathā || 41 ||

When the taste becomes tasteless, desire dissolves, like the rays of a lamp when the wick is extinguished.

जब स्वाद बेस्वाद हो जाता है, वासना विलीन हो जाती है, जैसे दीपक के बत्ती बुझने पर उसके प्रकाश की किरणें विलीन हो जाती हैं।

7.51.42

बोधाद्दीपांशुजालाभमघनं व्योम दृश्यते । भ्रान्तिरूपं जगत्कृत्स्नं गन्धर्वनगरं यथा ॥ ४२ ॥

bodhāddīpāṃśujālābhamaghanam vyoma dṛśyate | bhrāntirūpaṃ jagatkṛtsnaṃ gandharvanagaraṃ yathā || 42 ||

From enlightenment, the dense network of the lamp's rays appears like the sky, and the entire world, which is of the nature of illusion, appears like a mirage.

बोध से दीपक की किरणों का घना जाल आकाश के समान दिखाई देता है, और भ्रान्ति के रूप में सम्पूर्ण जगत् मृगतृष्णा के समान दिखाई देता है।

7.51.43

नैवात्मानं न चाकाशं न शून्यं न च वेदनम् । अत्यन्तपरिणामेन पश्यन्पश्यति तत्पदम् ॥ ४३ ॥

naivātmānaṃ na cākāśaṃ na śūnyaṃ na ca vedanam | atyantapariṇāmena paśyanpaśyati tatpadam || 43 ||

Neither the self, nor space, nor emptiness, nor sensation, seeing through ultimate transformation, one sees that state.

न आत्मा, न आकाश, न शून्य, न वेदना, अत्यन्त परिणाम से देखने पर वह उस अवस्था को देखता है।

7.51.44

यत्र नात्मा न शून्यं च न जगत्कलना न च । न चित्तदृश्योदयधीः सर्वं चास्ति यथास्थितम् ॥ ४४ ॥

yatra nātmā na śūnyaṃ ca na jagatkalanā na ca | na cittadṛśyodayadhīḥ sarvaṃ cāsti yathāsthitam || 44 ||

Where there is neither the self, nor emptiness, nor the world, nor the mind's perception of objects, everything exists as it is.

जहाँ न आत्मा, न शून्य, न जगत्, न मन की वस्तुओं की धारणा है, वहाँ सब कुछ जैसा है वैसा ही है।

7.51.45

भूम्यादिताऽज्ञसंबुद्धा ज्ञानादस्तमुपागता । ज्ञस्य शून्यैव संपन्ना संस्थितापि न विद्यते ॥ ४५ ॥

bhūmyāditā'jñasaṃbuddhā jñānādastamupāgatā | jñasya śūnyaiva saṃpannā saṃsthitāpi na vidyate || 45 ||

The elements, beginning with earth, which are perceived by the ignorant, disappear with knowledge, and even when they exist, they are not perceived by the wise.

भूमि से शुरु होने वाले तत्व, जो अज्ञानी द्वारा देखे जाते हैं, ज्ञान से लुप्त हो जाते हैं, और जब वे मौजूद होते हैं, तब भी ज्ञानी द्वारा नहीं देखे जाते।

7.51.46

भवत्येकसमाधानसौम्यात्मा व्योमनिर्मलः । तिष्ठत्यपगतासङ्गः स्थित एवाप्यसत्समः ॥ ४६ ॥

bhavatyekasamādhānasauamyātmā vyomanirmalaḥ | tiṣṭhatyapagatāsaṅgaḥ sthita evāpyasatsamaḥ || 46 ||

The one who is absorbed in the bliss of samadhi, pure as the sky, remains detached, and even while being in the world, is equal to the non-existent.

जो एकाग्रता के सौम्य आत्मा में स्थित है, आकाश की तरह निर्मल है, असंग है, और असत् के समान है, भले ही वह स्थित हो।

7.51.47

अस्तंगतमना मौनी निरोधपदवीं गतः । तीर्णः संसारजलधेः कर्मणामन्तमागतः ॥ ४७ ॥

astaṃgatamanā maunī nirodhopadavīṃ gataḥ | tīrṇaḥ saṃsārajaladheḥ karmaṇāmantamāgataḥ || 47 ||

With the mind withdrawn, silent, having reached the state of cessation, one has crossed the ocean of worldly existence and reached the end of actions.

मन को वापस ले लिया है, मौनी, निरोध की अवस्था में पहुंच गया है, संसार के सागर को पार कर लिया है, और कर्मों के अंत तक पहुंच गया है।

7.51.48

तनुभुवनगगनगिरिगणकरणपरं परममज्ञानम् । विगलति गलिते तस्मिन् सकलमिदं विद्यमानमपि ॥ ४८ ॥

tanubhuvanagaganagirigaṇakaraṇaparaṃ paramamajñānam | vigalati galite tasmin sakalamidaṃ vidyamānamapi || 48 ||

The supreme ignorance, which is the cause of the body, world, sky, mountains, and senses, dissolves when it is destroyed, and everything that exists also dissolves.

जो शरीर, संसार, आकाश, पर्वत और इंद्रियों का कारण है, वह परम अज्ञान जब नष्ट हो जाता है, तो वह विलीन हो जाता है, और जो भी अस्तित्व में है वह भी विलीन हो जाता है।

7.51.49

संशान्तान्तःकरणो गलितविकल्पः स्वरूपसारमयः । परमशमामृततृप्तस्तिष्ठति विद्वान्निरावरणः ॥ ४९ ॥

saṃśāntāntaḥkaraṇo galitavikalpaḥ svarūpasāramayaḥ | paramaśamāmṛtatṛptastiṣṭhati vidvānnirāvaraṇaḥ || 49 ||

With a peaceful mind, free from all thoughts, full of the essence of one's true nature, the wise one, satisfied with the supreme bliss, remains uncovered.

शांत मन से, सभी विचारों से मुक्त, अपने वास्तविक स्वभाव की सार से भरा हुआ, परम आनंद से तृप्त, विद्वान् बिना किसी आवरण के रहता है।

Chapter 52

7.52.1

श्रीराम उवाच । बोधो जगदिवाभाति मुने येन क्रमेण ह । तं क्रमेण क्रमं ब्रूहि भूयो भेदनिवृत्तये ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bodho jagadivābhāti mune yena krameṇa ha | taṃ krameṇa kramam brūhi bhūyo bhedanivṛttaye || 1 ||

Shri Rama said: O sage, the knowledge of the world appears to be in a certain sequence. Please explain that sequence again for the removal of differences.

श्रीराम ने कहा: हे मुनि, जगत का बोध एक क्रम में प्रकट होता है। कृपया उस क्रम को फिर से बताएं ताकि भेद दूर हो सके।

7.52.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । वृक्षस्येव विमूढस्य यद्दृष्टौ तत्स्वचेतसि । यन्न दृष्टौ न तच्चित्ते भवत्यल्पतरस्मृते ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vṛkṣasyeva vimūḍhasya yaddṛṣṭau tatsvacetasi | yanna dṛṣṭau na taccitte bhavatyalpatarasmṛte || 2 ||

Vasistha said: Just as a confused person sees a tree, whatever is seen is in one's own mind. Whatever is not seen does not exist in the mind of one who has little memory.

वसिष्ठ ने कहा: जैसे एक भ्रमित व्यक्ति एक पेड़ देखता है, वैसे ही जो कुछ देखा जाता है वह अपने मन में होता है। जो कुछ नहीं देखा जाता है वह उसके मन में नहीं होता जिसकी स्मृति कम है।

7.52.3

भव्यः पश्यति शास्त्रार्थमेव पूर्वापरान्वितम् । न दृष्टिविषयं वस्तु यत्पश्यति करोति तत् ॥ ३ ॥

bhavyaḥ paśyati śāstrārthameva pūrvāparānvitam | na dṛṣṭiviṣayaṃ vastu yatpaśyati karoti tat || 3 ||

The wise one sees only the meaning of the scriptures, which is connected with the past and the future. He does not see the object of sight; whatever he sees, he does.

बुद्धिमान व्यक्ति केवल शास्त्रों के अर्थ को देखता है, जो अतीत और भविष्य से जुड़ा हुआ है। वह दृष्टि का विषय नहीं देखता; जो कुछ भी वह देखता है, वह करता है।

7.52.4

भावानुष्ठाननिष्ठः सन् शास्त्रार्थैकमना मुनिः । भूत्वोपदेशं त्वमिमं शृणु श्रवणभूषणम् ॥ ४ ॥

bhāvānuṣṭhānaniṣṭhaḥ san śāstrārthaiakamanā muniḥ | bhūtvopadeśaṃ tvamimaṃ śṛṇu śravaṇabhūṣaṇam || 4 ||

Being steadfast in the practice of devotion and having the mind focused solely on the meaning of the scriptures, O sage, listen to this instruction which is an ornament to listening.

भक्ति के अभ्यास में दृढ़ रहते हुए और शास्त्रों के अर्थ पर मन केंद्रित करके, हे मुनि, इस उपदेश को सुनो जो सुनने का एक आभूषण है।

7.52.5

इयं दृश्यभरभ्रान्तिर्नन्वविद्येति चोच्यते । वस्तुतो विद्यते नैषा तापनद्यां यथा पयः ॥ ५ ॥

iyam dṛśyabharabhrāntirnanvavidyeti cocyate | vastuto vidyate naiṣā tāpanadyāṃ yathā payaḥ || 5 ||

This illusion of the burden of the visible world is said to be ignorance. In reality, it does not exist, just as water does not exist in a mirage.

यह दृश्य भार की भ्रांति अज्ञान कहलाती है। वास्तव में, यह मौजूद नहीं है, जैसे मृगतृष्णा में पानी नहीं होता।

7.52.6

उपदेश्योपदेशार्थमेनां मदुपरोधतः । सत्यामिव क्षणं तावदाश्रित्य श्रूयतामिदम् ॥ ६ ॥

upadeśyopadeśārthamenāṃ maduparodhataḥ | satyāmiva kṣaṇaṃ tāvadāśritya śrūyatāmidam || 6 ||

For the purpose of instruction, listen to this as if it were true, hidden by my illusion.

उपदेश के उद्देश्य से, इसे मेरे मायाजाल से छिपे हुए सत्य के रूप में सुनें।

7.52.7

कुत एषा कथं चेति विकल्पाननुदाहरन् । नेदमेषां न चास्तीति स्वयं ज्ञास्यसि बोधतः ॥ ७ ॥

kuta eṣā kathaṃ cetti vikalpānanudāharan | nedameṣāṃ na cāstīti svayaṃ jñāsyasi bodhataḥ || 7 ||

Do not entertain doubts about the origin and nature of this. You will understand by yourself that this is neither real nor unreal.

इसके उद्गम और स्वरूप पर संदेह न करें। आप स्वयं समझ जाएंगे कि यह न तो सत्य है न ही असत्य।

7.52.8

यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजंगमम् । सर्वं सर्वप्रकाराढ्यं कल्पान्ते तद्विनश्यति ॥ ८ ॥

yadidaṃ dṛśyate kiṃcidjagatsthāvarajaṅgamam | sarvaṃ sarvaprakārāḍhyaṃ kalpānte tadvinśyati || 8 ||

Whatever is seen in this world, whether moving or non-moving, everything, in all its forms, perishes at the end of the cosmic cycle.

जो कुछ भी इस संसार में दिखाई देता है, चाहे चल हो या अचल, सब कुछ, सभी रूपों में, ब्रह्मांडीय चक्र के अंत में नष्ट हो जाता है।

7.52.9

अस्य भागविभागात्मा नाशोऽवश्यमवारितःबिन्दुना बिन्दुना बोधे उद्धृतस्यास्ति हि क्षयः ॥ ९ ॥

asya bhāgavibhāgātmā nāśo'vaśyamavāritaḥbindunā bindunā bodhe uddhṛtasyāsti hi kṣayaḥ || 9 ||

The inevitable destruction of the individual soul is certainly prevented by the knowledge gained drop by drop. Indeed, there is decay for the one who is uplifted by knowledge.

व्यक्तिगत आत्मा का अनिवार्य विनाश ज्ञान द्वारा बूंद-बूंद करके अवश्य रोका जाता है। वास्तव में, ज्ञान से उत्थान के लिए क्षय होता है।

7.52.10

एवं स्थिते द्रव्यनाशे ब्रह्मणस्तन्मयत्वतः । नानन्तत्वं न चास्तित्वं न च वै संभवत्यलम् ॥ १० ॥

evaṃ sthite dravyanāśe brahmaṇastanmayatvataḥ | nānantatvaṃ na cāstitvaṃ na ca vai saṃbhavaty alam || 10 ||

Thus, in the destruction of substance, due to the identity with Brahman, there is neither infinity nor existence nor any possibility.

इस प्रकार, पदार्थ के विनाश में, ब्रह्म की पहचान के कारण, न तो अनंतता है, न ही अस्तित्व है, न ही कोई संभावना है।

7.52.11

मदशक्तिरिव ज्ञानमिति नास्मासु सिध्यति । देहो विज्ञानतोऽस्माकं स्वप्नवन्न तु तत्त्वतः ॥ ११ ॥

madashaktiriva jñānamiti nāsmāsu sidhyati | deho vijñānato'smākaṃ svapnavanna tu tattvataḥ || 11 ||

Knowledge is not established in us like intoxicating power | The body, from the point of consciousness, is like a dream, not in reality || 11 ||

ज्ञान हमारे अंदर मद की शक्ति की तरह स्थापित नहीं होता | शरीर, चेतना की दृष्टि से, स्वप्न की तरह है, वास्तविकता में नहीं || ११ ||

7.52.12

नश्यत्येव च दृश्यश्रीः सैव नान्यैव नैव च। इत्थं भवेत्समुचितं कृतं शास्त्रं च नान्यथा ॥ १२ ॥

naśyatyeva ca dṛśyaśrīḥ saiva nānyaiva naiva ca | itthaṃ bhavetsamucitaṃ kṛtaṃ śāstraṃ ca nānyathā || 12 ||

The visible beauty certainly perishes, it is the same, not different, not at all | Thus, it is appropriate that the scripture is made, not otherwise || 12 ||

दृश्य सौंदर्य निश्चित रूप से नष्ट हो जाता है, यह वही है, अलग नहीं, बिलकुल नहीं | इस प्रकार, यह उचित है कि शास्त्र बनाया गया है, कोई अन्यथा नहीं || १२ ||

7.52.13

सैवैतीत्यसमुल्लेखं कथं नष्टस्य संभवः। तद्रूपान्येति युक्तं स्यादनुभूतानुगा वयम् ॥ १३ ॥

saivaitītyasamullekhaṃ kathaṃ naṣṭasya saṃbhavaḥ | tadrūpānyeti yuktaṃ syādanubhūtānugā vayam || 13 ||

How can there be the existence of that which is destroyed, without mentioning it? It would be appropriate to follow that form, we are followers of experience || 13 ||

उसका अस्तित्व कैसे हो सकता है जो नष्ट हो गया है, उसका उल्लेख किए बिना? उस रूप का अनुसरण करना उचित होगा, हम अनुभव के अनुयायी हैं || १३ ||

7.52.14

सैव व्योमतयैवासीदित्यसत्सैव सा कथम्। तथैव व्योमसंस्था चेन्नाशं तर्हि न सा गता ॥ १४ ॥

saivavyomatayaivāsīdityasatsaiva sā kathaṃ | tathaiva vyomasansthā cennāśaṃ tarhi na sā gatā || 14 ||

How can that which is non-existent be the same as the sky? If it is situated in the sky, then it has not perished || 14 ||

वह जो असत् है, आकाश के समान कैसे हो सकता है? यदि वह आकाश में स्थित है, तो वह नष्ट नहीं हुआ है || १४ ||

7.52.15

कार्यकारणयोरेकरूपतैवं यदा तदा। कार्यकारणताभावादैक्यमेवास्मदागमः ॥ १५ ॥

kāryakāraṇayorekarūpatyaivaṃ yadā tadā | kāryakāraṇatābhāvādaikyamevāsmadāgamaḥ || 15 ||

When there is oneness of form between cause and effect, then due to the absence of cause and effect, there is only oneness in our tradition || 15 ||

जब कारण और कार्य के बीच एकरूपता होती है, तब कारण और कार्य की अनुपस्थिति के कारण, हमारे संप्रदाय में केवल एकत्व है || १५ ||

7.52.16

शून्यत्वमुपलम्भत्वं यद्गतं नष्टमेव तत् अन्यस्तर्हि भवेन्नाशः कीदृशः किल कथ्यताम् ॥ १६ ॥

śūnyatvamupalambhatvaṃ yadgataṃ naṣṭameva tat anyastarhi bhavennāśaḥ kīdṛśaḥ kil kathyatām || 16 ||

The concept of emptiness and perception, if it is gone, it is destroyed. Then, what kind of destruction is there? Tell us.

शून्यता और उपलब्धि का अर्थ, यदि वह चला गया, तो वह नष्ट हो गया। तब, क्या प्रकार का नाश है? हमें बताओ।

7.52.17

नष्टं भूयस्तदुत्पन्नमिति यत्प्रत्ययेति कः नश्यत्यवश्यं तेनेदं पुनरन्यत्प्रवर्तते ॥ १७ ॥

naṣṭaṃ bhūyastadutpannamiti yatpratyayeti kaḥ naśyatyavaśyaṃ tenedaṃ punaranyatpravartate || 17 ||

That which is destroyed will arise again, this is the belief. Who is it that necessarily perishes? Therefore, this arises again as something else.

जो नष्ट हो जाता है, वह फिर उत्पन्न होगा, यह विश्वास है। कौन है जो अवश्य नष्ट होता है? इसलिए, यह फिर किसी और चीज के रूप में उत्पन्न होता है।

7.52.18

मध्ये मध्ये यदुत्सेधफलाद्यवयवैकिकादेहं बीजसत्तास्ति कार्यकारणता कुतः ॥ १८ ॥

madhye madhye yadutsedhaphalādyavayavaikikādehaṃ bījasattāsti kāryakāraṇatā kutaḥ || 18 ||

In the middle, if the parts of the sprout, fruit, etc., are considered, where does the causality of the seed exist?

बीच में, यदि अंकुर, फल आदि के अंगों को देखा जाए, तो बीज की कारणता कहाँ है?

7.52.19

देशकालक्रियात्मैकं यथादृष्टमिह स्थितम् बीजमेवैककर्मातो न घटः पटकार्यकृत् ॥ १९ ॥

deśakālakriyātmaikaṃ yathādṛṣṭamih sthitam bījamevaika karmāto na ghaṭaḥ paṭakāryakṛt || 19 ||

The unity of place, time, and action is established here as perceived. The seed alone performs the action, not the pot or the cloth.

स्थान, समय और क्रिया की एकता यहाँ जैसे देखी जाती है, वैसे ही स्थापित है। बीज ही एकमात्र कर्म करता है, घड़ा या कपड़ा नहीं।

7.52.20

सर्वदर्शनसिद्धान्ते नास्ति भेदो न वस्तुनि परमार्थमये तेन विवादेन किमत्र नः ॥ २० ॥

sarvadarśanasiddhānte nāsti bhedo na vastuni paramārthamaye tena vivādena kimatra naḥ || 20 ||

In the ultimate reality of all philosophies, there is no difference, no distinction in things. Therefore, what is the use of this debate for us?

सभी दर्शनों के सिद्धांत में, परमार्थ में, कोई भेद नहीं है, कोई वस्तु में भी नहीं। तो, इस विवाद से हमारे लिए क्या लाभ है?

7.52.21

इदं शान्तमनाद्यन्तं तद्रूपत्वाद्विचारतः । व्योमाभं बोधतामात्रमनुभूतिप्रमाणतः ॥ २१ ॥

idaṃ śāntamanādyantaṃ tadrūpatvādvicārataḥ | vyomābhaṃ bodhatāmātramanubhūtipramāṇataḥ || 21 ||

This is peaceful, without beginning or end, due to its nature and contemplation. It is like the sky, merely awareness, known through experience.

यह शान्त है, आदि और अन्त से रहित, अपने स्वभाव और विचार के कारण | यह आकाश के समान है, केवल चेतना, अनुभव से ज्ञात है |

7.52.22

यथैतन्नानुभूतं सद्यथैतदनुभूयते । यथैतत्सिद्धिमाप्नोति तदिदं कथ्यते क्रमात् ॥ २२ ॥

yathaitannānubhūtaṃ sadyathaitadanubhūyate | yathaitatsiddhimāpnoti tadidaṃ kathyate kramaḥ || 22 ||

As this is not experienced, so it is experienced. As it attains perfection, so it is described in sequence.

जैसे यह अनुभव नहीं किया जाता, वैसे ही यह अनुभव किया जाता है | जैसे यह सिद्धि प्राप्त करता है, वैसे ही यह क्रमानुसार वर्णित किया जाता है |

7.52.23

महाकल्पान्त उन्नष्टे सर्वस्मिन्दृश्यमण्डले । आमहादेवपर्यन्तं समनोबुद्धिकर्मणि ॥ २३ ॥

mahākalpānta unnaṣṭe sarvasmindṛśyamaṇḍale | āmahādevaparyantaṃ samanobuddhikarmaṇi || 23 ||

At the end of the great aeon, when everything in the visible universe is destroyed, including the mind, intellect, and actions up to the great god.

महाकल्प के अन्त में, जब दृश्य ब्रह्माण्ड में सब कुछ नष्ट हो जाता है, मन, बुद्धि और कर्मों सहित महादेव तक |

7.52.24

व्योमन्यपि शमं याते कालेऽप्यकलितस्थितौ । वायावपि त्वपगते तेजस्यत्यन्तमस्थिते ॥ २४ ॥

vyomanyapi śamaṃ yāte kāle'pyakalitasthitau | vāyāvapi tvapagate tejasyatyantamasthite || 24 ||

Even the sky attains peace, and time remains unmoved. Even the wind ceases, and fire reaches its ultimate state.

आकाश भी शान्ति प्राप्त करता है, और समय अचल रहता है | वायु भी समाप्त हो जाती है, और अग्नि अपने अन्तिम अवस्था में पहुँच जाती है |

7.52.25

तेजस्यपि गते ध्वंसं वार्यादौ सुचिरं क्षते । अलमन्तमनुप्राप्ते सर्वशब्दार्थसंचये ॥ २५ ॥

tejasyapi gate dhvaṃsaṃ vāryādau suciram kṣate | alamantamanuprāpte sarvaśabdārthasaṃcaye || 25 ||

Even when fire is gone, there is destruction in water and other elements. When everything reaches its ultimate end, all meanings of words are exhausted.

जब अग्नि भी चली जाती है, तब जल और अन्य तत्वों में विनाश होता है | जब सब कुछ अपने अन्तिम अन्त तक पहुँच जाता है, तब सभी शब्दों के अर्थ समाप्त हो जाते हैं |

7.52.26

शिष्यते शान्तबोधात्म सदच्छं बाध्यवर्जितम् । अनादिनिधनं सौम्यं किमप्यमलमव्ययम् ॥ २६ ॥

śiṣyate śāntabodhātma sadacchaṃ bādhyavarjitam | anādinidhanaṃ saumyaṃ kimapyamalamavyayam || 26 ||

One should learn from the peaceful and enlightened self, which is pure, free from obstacles, eternal, peaceful, and imperishable.

शान्त और बोधपूर्ण आत्मा से शिक्षा लेनी चाहिए, जो शुद्ध, बाधाओं से मुक्त, अनादि, शान्त, और अविनाशी है।

7.52.27

अवाच्यमनभिव्यक्तमतीन्द्रियमनामकम् । सर्वभूतात्मकं शून्यं सदसच्च परं पदम् ॥ २७ ॥

avācyamanabhivyaktamatīndriyamanāmakam | sarvabhūtātmakaṃ śūnyaṃ sadasaccaparaṃ padam || 27 ||

It is inexpressible, unmanifested, beyond the senses, nameless, the essence of all beings, void, both real and unreal, and the supreme state.

यह अव्यक्त, अव्यक्त, इन्द्रियों से परे, नामहीन, सभी प्राणियों का आत्मा, शून्य, सत् और असत्, और परम अवस्था है।

7.52.28

तन्न वायुर्न चाकाशं न बुद्ध्यादि न शून्यकम् । न किंचिदपि सर्वात्म किमप्यन्यत्परं नभः ॥ २८ ॥

tanna vāyurna cākāśaṃ na buddhyādi na śūnyakam | na kiṃcidapi sarvātma kimapyanyatparaṃ nabhaḥ || 28 ||

It is neither air, nor space, nor intellect, nor void, nor anything else. It is the supreme self, the essence of all.

यह न तो वायु है, न आकाश, न बुद्धि, न शून्य, न कोई और चीज। यह सभी का आत्मा, परम आत्मा है।

7.52.29

तद्विदा तत्पदस्थेन तन्मुक्तेनानुभूयते । अन्यैः केवलमाम्नातैरागमैरेव वर्ण्यते ॥ २९ ॥

tadvidā tatpadasthena tanmuktenānubhūyate | anyaiḥ kevalamāmnātairāgamaireva varṇyate || 29 ||

It is experienced by those who are established in that state and are liberated. Others describe it only through scriptures.

यह उन्हीं द्वारा अनुभव किया जाता है जो उस अवस्था में स्थित हैं और मुक्त हैं। दूसरे इसे केवल शास्त्रों द्वारा वर्णित करते हैं।

7.52.30

न कालो न मनो नात्मा न सन्नासन्न देशदिक् । न मध्यमेतयोर्नान्तं न बोधो नाप्यबोधितम् ॥ ३० ॥

na kālo na mano nātmā na sannāsanna deśadik | na madhyametayornāntaṃ na bodho nāpyabodhitam || 30 ||

It is neither time, nor mind, nor self, nor existence, nor non-existence, nor direction, nor middle, nor end, nor knowledge, nor ignorance.

यह न तो समय है, न मन, न आत्मा, न अस्तित्व, न अनस्तित्व, न दिशा, न मध्य, न अन्त, न ज्ञान, न अज्ञान।

7.52.31

किमप्येव तदत्यच्छं बुध्यते बोधपारगैः । शान्तसंसारविसरैः परां भूमिमुपागतैः ॥ ३१ ॥

kimapyeva tadatyacchaṃ budhyate bodhapāragaiḥ | śāntasaṃsāravisaraiḥ parāṃ bhūmimupāgataiḥ || 31 ||

That which is extremely subtle is understood by those who have attained the highest state, who are free from the worldly entanglements and have reached the supreme level.

जो अत्यंत सूक्ष्म है, वह उन लोगों द्वारा समझा जाता है जो संसार के बंधनों से मुक्त हैं और परम स्थिति तक पहुंच गए हैं।

7.52.32

प्रतिषिद्धा मयैते तु येऽर्थाः सर्वत्र ते स्थिताः । अस्मद्बुद्ध्या परिच्छेद्याः सौम्याम्भोधेरिवोर्मयः ॥ ३२ ॥

pratiṣiddhā mayaite tu ye'rthāḥ sarvatra te sthitāḥ | asmadbuddhyā paricchedyāḥ saumyāmbhodherivormayaḥ || 32 ||

These meanings, which are prohibited by me, are present everywhere. They should be cut off by our understanding, like the waves of the calm ocean.

ये अर्थ, जिन्हें मैंने प्रतिषिद्ध किया है, सर्वत्र विद्यमान हैं। इन्हें हमारी बुद्धि द्वारा काट देना चाहिए, जैसे शांत समुद्र की लहरें।

7.52.33

यथास्थितं स्थिताः सर्वे भावास्तत्र यथा तथा । अनुत्कीर्णा महास्तम्भे विविधाः शालभञ्जिकाः ॥ ३३ ॥

yathāsthitaṃ sthitāḥ sarve bhāvāstatra yathā tathā | anutkīrṇā mahāstambhe vividhāḥ śālabhañjikāḥ || 33 ||

All beings are situated as they are, in their respective states. They are not uprooted, like various creepers on a great pillar.

सभी भाव अपनी-अपनी स्थिति में स्थित हैं। वे उखाड़े नहीं गए हैं, जैसे एक महान स्तंभ पर विभिन्न लताएँ।

7.52.34

एवं तत्र स्थिताः सर्वे भावा एवं च न स्थिताः । असर्वात्मैव सर्वात्म तदेव न तदेव च ॥ ३४ ॥

evaṃ tatra sthitāḥ sarve bhāvā evaṃ ca na sthitāḥ | asarvātmaiva sarvātma tadeva na tadeva ca || 34 ||

Thus, all beings are situated there, and yet they are not situated. The non-self is the self, and that is both that and not that.

इस प्रकार, सभी भाव वहाँ स्थित हैं, और फिर भी वे स्थित नहीं हैं। अस्व ही स्व है, और वह दोनों वह और वह नहीं है।

7.52.35

पदं यथैतत्सर्वात्म सर्वार्थपरिवर्जितम्। यथा तत्र च पश्यन्ति तत्रैकपरिणामिनः ॥ ३५ ॥

padaṃ yathaitatsarvātma sarvārthaparivarjitam | yathā tatra ca paśyanti tatraikapariṇāmiṇaḥ || 35 ||

The state which is the self of all, devoid of all meanings, is seen there by those who are transformed into one.

जो स्थिति सभी का स्व है, सभी अर्थों से रहित, वह उन लोगों द्वारा देखी जाती है जो एक में परिवर्तित हो गए हैं।

7.52.36

सर्वं सर्वात्मकं चैव सर्वार्थरहितं पदम्। सर्वार्थपरिपूर्णं च तदाद्यं परिदृश्यते ॥ ३६ ॥

sarvaṃ sarvātmakaṃ caiva sarvārtharahitaṃ padam | sarvārthaparipūrṇaṃ ca tadādyaṃ paridṛśyate || 36 ||

Everything is all-encompassing, devoid of all purposes, and that primordial state is seen as complete in all respects.

सब कुछ सर्वव्यापी है, सभी उद्देश्यों से रहित है, और वह आदिम अवस्था सभी दृष्टिकोणों से पूर्ण दिखाई देती है।

7.52.37

तवैतावन्महाबुद्धे सर्वार्थोपशमात्मकम्। न सम्यग्दानमुत्पन्नं संशयोऽत्र निदर्शनम् ॥ ३७ ॥

tavaivāvanmahābuddhe sarvārthopaśamātmakam | na samyagdānamutpannaṃ saṃśayo'tra nidarśanam || 37 ||

O great wise one, up to this point, the nature of the cessation of all purposes has not been properly understood; doubt is indicated here.

हे महान बुद्धिमान, इस बिंदु तक, सभी उद्देश्यों के अंत की प्रकृति ठीक से समझी नहीं गई है; यहाँ संदेह दिखाया गया है।

7.52.38

यः प्रबुद्धो निराभासं परमाभासमागतः। स्वच्छान्तःकरणः शान्तस्तं स्वभावं स पश्यति ॥ ३८ ॥

yaḥ prabuddho nirābhāsaṃ paramābhāsamāgataḥ | svacchāntaḥkaraṇaḥ śāntastam svabhāvaṃ sa paśyati || 38 ||

One who is awakened and has reached the supreme radiance, devoid of illusions, with a pure inner self, sees that nature calmly.

जो जाग्रत है और भ्रांतियों से रहित परम प्रकाश तक पहुँचा है, शुद्ध अंतःकरण वाला, वह उस प्रकृति को शांतिपूर्वक देखता है।

7.52.39

अयं त्वमहमित्यादित्रिंकालगजगद्भ्रमः। तत्रास्ति हेमपिण्डान्तरिव रूपकजालकम् ॥ ३९ ॥

ayaṃ tvamahamityāditriṃkālagajagadbhamaḥ | tatrāsti hemapiṇḍāntariva rūpakajālakam || 39 ||

This illusion of 'I,' 'you,' and the world in the three times is like a mirage within a golden ball.

यह 'मैं,' 'तुम,' और तीनों कालों में संसार का भ्रम एक स्वर्ण गेंद के भीतर के मृगतृष्णा के समान है।

7.52.40

हेमपिण्डाद्यथा भाण्डजालं नानोपलभ्यते। तथा न लभ्यते भिन्नं परमार्थघनाज्जगत् ॥ ४० ॥

hemapiṇḍādyathā bhāṇḍajālaṃ nānopalabhyate | tathā na labhyate bhinnaṃ paramārthaghanājjagat || 40 ||

Just as various vessels are not perceived within a golden ball, similarly, the world is not perceived as separate from the ultimate reality.

जैसे एक स्वर्ण गेंद के भीतर विभिन्न बर्तन नहीं दिखाई देते, उसी प्रकार संसार परम सत्य से अलग नहीं दिखाई देता।

7.52.41

सर्वदैव हि भिन्नात्मा स्वाङ्गभूतोपलम्भदृक् स जगद्द्वैतमेवेदं हेमेवाङ्गदरूपकम् ॥ ४१ ॥

sarvadaiva hi bhinnaatmaa svaangabhootopalambhadruk sa jagaddvaitamevedam hemaivaangadarupakam || 41 ||

Always, indeed, the distinct self, perceiving the body as its own, sees this world as dual, like gold in the form of an ornament.

हमेशा ही, वास्तव में, अलग आत्मा, अपने शरीर को देखने वाला, यह जगत को द्वैत के रूप में देखता है, जैसे सोने के आभूषण के रूप में सोना।

7.52.42

रिक्तं देशादिशब्दार्थैर्देशकालक्रियात्मकम् यथास्थितमिदं तत्र सर्वमस्ति न वास्ति च ॥ ४२ ॥

riktaṃ deśādiśabdārthairdeśakālakriyātmakam yathāsthitamidaṃ tatra sarvamasti na vāsti ca || 42 ||

Empty of place, time, and action, everything exists there as it is, and yet it does not exist.

स्थान, समय और क्रिया से रिक्त, सब कुछ वहाँ जैसा है वैसा ही है, और फिर भी नहीं है।

7.52.43

यथोर्म्यादि समे तोये चित्रं चित्रकृदीहते भाण्डवृन्दं मृदः पिण्डे तथेदं ब्रह्मणि स्थितम् ॥ ४३ ॥

yathormyādi same toye citraṃ citrakṛdīhate bhāṇḍavṛndaṃ mṛdaḥ piṇḍe tathedaṃ brahmaṇi sthitam || 43 ||

Just as a painter creates a picture on a flat surface, or a potter creates various vessels from a lump of clay, so is this world situated in Brahman.

जैसे एक चित्रकार एक समतल सतह पर चित्र बनाता है, या एक कुम्हार मिट्टी के ढेले से विभिन्न बर्तन बनाता है, वैसे ही यह दुनिया ब्रह्म में स्थित है।

7.52.44

तथैतदत्र नो भिन्नं नाभिन्नं नास्ति चास्ति च नित्यं तन्मयमेवाच्छं शान्ते शान्तमिदं तथा ॥ ४४ ॥

tathaitadatra no bhinnaṃ nābhinnaṃ nāsti cāsti ca nityaṃ tanmayamevācchaṃ śānte śāntamidaṃ tathā || 44 ||

Thus, it is not different here, nor is it non-different, it neither exists nor does not exist, it is eternal, full of that essence, tranquil in tranquility, and so is this.

इस प्रकार, यह यहाँ भिन्न नहीं है, न ही अभिन्न है, यह न है और नहीं है, यह नित्य है, उस सार से भरा है, शांति में शांत है, और इसी तरह यह है।

7.52.45

अनिखातैव भातीयं त्रिजगच्छालभञ्जिका स्वरसस्येव दृश्यत्वमिता ब्रह्मणि दारुणि ॥ ४५ ॥

anikhātaiva bhātīyaṃ trijagacchālabhañjikā svarasasyeva dṛśyatvamitā brahmaṇi dāruṇi || 45 ||

This world, which is the three realms, appears as if it is not carved out, like the inherent nature of wood, in Brahman.

यह दुनिया, जो तीन लोक है, ब्रह्म में ऐसे प्रकट होती है जैसे लकड़ी की प्रकृति को नहीं काटा गया हो।

7.52.46

निखाता दृश्यतां यान्ति स्तम्भस्थाः शालभञ्जिकाः । अस्मिन्नक्षोभ्य एवान्तस्तरङ्गाः सृष्टिदृष्टयः ॥ ४६ ॥

nikhātā dṛśyatāṃ yānti stambhasthāḥ śālabhañjikāḥ | asminn akṣobhya evāntastaraṅgāḥ sṛṣṭidṛṣṭayaḥ || 46 ||

The reflections of the pillars appear clearly, while within, the waves of creation remain undisturbed.

स्तंभों के प्रतिबिंब स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं, जबकि अंदर सृष्टि की लहरें अविचलित रहती हैं।

7.52.47

सरस्यतिरसे भान्ति चिद्घनामृतवृष्टयः । अविभागे विभागस्था अक्षोभे क्षुभिता इव । अविभाता विभान्तीव चिद्घने सृष्टिदृष्टयः ॥ ४७ ॥

sarasyatirase bhānti cidghanāmṛtavṛṣṭayaḥ | avibhāge vibhāgasthā akṣobhe kṣobhitā iva | avibhātā vibhāntīva cidghane sṛṣṭidṛṣṭayaḥ || 47 ||

In the essence of the lake, the showers of nectar of pure consciousness shine. In the undivided, they appear divided; in the undisturbed, they seem disturbed. In the unmanifest, they appear manifest, in the pure consciousness of creation.

सरोवर की सारता में, शुद्ध चेतना के अमृत की वर्षा चमकती है। अविभाजित में, वे विभाजित दिखाई देते हैं; अविचलित में, वे विचलित लगते हैं। अव्यक्त में, वे व्यक्त दिखाई देते हैं, सृष्टि की शुद्ध चेतना में।

7.52.48

परमाणौ परमाणावत्र संसारमण्डलम् । विभाति भासुरारम्भं न विभाति च किंचन ॥ ४८ ॥

paramāṇau paramāṇāvatra saṃsāramaṇḍalam | vibhāti bhāsurārambhaṃ na vibhāti ca kiṃcana || 48 ||

In the supreme atom, the entire universe appears luminous, yet nothing truly appears.

परमाणु में, पूरा ब्रह्मांड प्रकाशमान दिखाई देता है, फिर भी कुछ भी वास्तव में नहीं दिखाई देता।

7.52.49

आकाशकालपवनादिपदार्थजातमस्याङ्गमङ्गरहितस्य तदप्यनङ्गम् । सर्वात्मकं सकलभावविकारशून्यमप्येतदाहुरजरं परमार्थतत्त्वम् ॥ ४९ ॥

ākāśakālapavanādipadārthajātamasya aṅgamaṅgarahitasya tadapyanaṅgam | sarvātmakaṃ sakalabhāvavikāraśūnyamapyetadāhurajaraṃ paramārthatattvam || 49 ||

The elements such as space, time, and wind are the limbs of the limbless, and even they are limbless. It is said to be the essence of all, devoid of all states and changes, and eternal.

आकाश, काल, पवन आदि तत्व अंगहीन के अंग हैं, और वे भी अंगहीन हैं। यह सबका आत्मा है, सभी अवस्थाओं और परिवर्तनों से रहित, और अजर है।

Chapter 53

7.53.1

श्रीराम उवाच । यथा चेत्ये चेतनता यथा काले च कालता । यथा च व्योमता व्योम्नि यथा च जडता जडे ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yathā cetye cetanatā yathā kāle ca kālatā | yathā ca vyomatā vyomni yathā ca jaḍatā jaḍe || 1 ||

Shri Ram said: Just as consciousness is in the conscious, just as time is in time, just as space is in space, just as inertness is in the inert.

श्री राम ने कहा: जैसे चेतनता चेतन में है, जैसे काल काल में है, जैसे व्योम व्योम में है, जैसे जडता जड में है।

7.53.2

यथा वायौ च वायुत्वमभूतादावभूतता । यथा स्पन्दात्मनि स्पन्दो यथा मूर्ते च मूर्तता ॥ २ ॥

yathā vāyau ca vāyutvamabhūtādāvabhūtatā | yathā spandātmani spando yathā mūrte ca mūrtatā || 2 ||

Just as wind has the quality of wind, just as elements have the quality of elements, just as vibration has the quality of vibration, just as form has the quality of form.

जैसे वायु में वायुत्व है, जैसे तत्वों में तत्वता है, जैसे स्पंद में स्पंद है, जैसे मूर्त में मूर्तता है।

7.53.3

यथा भिन्ने च भिन्नत्वं यथाऽनन्ते ह्यनन्तता । यथा दृश्ये च दृश्यत्वं यथा सर्गेषु सर्गता ॥ ३ ॥

yathā bhinne ca bhinnatvaṃ yathā'nante hyanantatā | yathā dṛśye ca dṛśyatvaṃ yathā sargeṣu sargatā || 3 ||

Just as difference has the quality of difference, just as infinity has the quality of infinity, just as the visible has the quality of visibility, just as creation has the quality of creation.

जैसे भिन्नता में भिन्नता है, जैसे अनंतता में अनंतता है, जैसे दृश्य में दृश्यता है, जैसे सृष्टि में सृष्टिता है।

7.53.4

एतत्क्रमेण हे ब्रह्मन् वद मे वदतां वर । आदितः प्रतिपाद्यैव बोध्यन्ते ह्यल्पबोधिनः ॥ ४ ॥

etatkrameṇa he brahman vada me vadatāṃ vara | āditaḥ pratipādyaiva bodhyante hyalpabodhinaḥ || 4 ||

O Brahman, explain this to me in sequence, O best of speakers. Those with little understanding can comprehend only when explained from the beginning.

हे ब्रह्मन्, मुझे क्रम से यह बताओ, हे वक्ताओं में श्रेष्ठ। कम समझ वाले लोग तभी समझ सकते हैं जब आदि से समझाया जाए।

7.53.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । तदनन्तं महाकाशं महाचिद्घनमुच्यते । अवेद्यचिद्रूपमयं शान्तमेकं समस्थिति ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tadanantaṃ mahākāśaṃ mahācidghanamucyate | avedya cidrūpamayaṃ śāntamekaṃ samasthiti || 5 ||

Shri Vasishtha said: That infinite great space is called the great consciousness. It is unknowable, of the nature of consciousness, peaceful, and one.

श्री वसिष्ठ ने कहा: वह अनंत महान् अंतरिक्ष महाचिद्घन कहलाता है। यह अज्ञेय, चेतना के स्वरूप का, शांत और एक है।

7.53.6

ब्रह्मविष्ण्वीश्वराद्यन्ते महाप्रलयनामनि । शब्दार्थे रूढिमापन्ने यच्छुद्धमवशिष्यते ॥ ६ ॥

brahmaviṣṇvīśvarādyante mahāpralayanāmani | śabdārthe rūḍhimāpanne yacchuddhamavaśiṣyate || 6 ||

At the end of Brahma, Vishnu, and Shiva, during the great dissolution, when the meaning of words is established, what remains is pure.

ब्रह्मा, विष्णु और शिव के अंत में, महाप्रलय के समय, जब शब्दों का अर्थ स्थापित हो जाता है, तब जो शुद्ध बचता है।

7.53.7

सर्गस्य कारणं तत्र न किंचिदुपपद्यते । मलमाकारबीजादि मायामोहभ्रमादिकम् ॥ ७ ॥

sargasya kāraṇaṃ tatra na kiṃcidupapadyate | malamākārabījādi māyāmohabhramādikam || 7 ||

There is no cause for creation in that pure state. There is no impurity, form, seed, illusion, or delusion.

उस शुद्ध अवस्था में सृष्टि का कोई कारण नहीं है। वहाँ कोई अशुद्धि, रूप, बीज, माया, मोह या भ्रम नहीं है।

7.53.8

केवलं शान्तमत्यच्छमाद्यन्तपरिवर्जितम् । तद्विद्यते यत्र किल खमपि स्थूलमश्मवत् ॥ ८ ॥

kevalaṃ śāntamatyacchamādyantaparivarjitam | tadvidyate yatra kila khamapi sthūlamasmavat || 8 ||

That which is purely peaceful, extremely subtle, without beginning or end, exists where even the gross sky is like stone.

जो पूर्णतः शांत, अत्यंत सूक्ष्म, आदि और अंत से रहित है, वह उस स्थान पर है जहाँ स्थूल आकाश भी पत्थर के समान है।

7.53.9

न च नास्तीति तद्वक्तुं युज्यते चिद्वपुर्यदा । न चैवास्तीति तद्वक्तुं युक्तं शान्तमलं तदा ॥ ९ ॥

na ca nāstīti tadvaktuṃ yujyate cidvapuryadā | na caivāstīti tadvaktuṃ yuktaṃ śāntamalaṃ tadā || 9 ||

It is not appropriate to say that it does not exist when it is in the form of consciousness. Nor is it appropriate to say that it exists when it is peaceful and pure.

जब यह चेतना के रूप में है, तब यह कहना उचित नहीं है कि यह नहीं है। न ही यह कहना उचित है कि यह है जब यह शांत और शुद्ध है।

7.53.10

निमेषे योजनशते प्राप्तायामात्मसंविदि । मध्ये तस्यास्तु यद्रूपं रूपं तस्य पदस्य तत् ॥ १० ॥

nimeṣe yojanaśate prāptāyāmātmasaṃvidi | madhye tasyāstu yadrūpaṃ rūpaṃ tasya padasyatat || 10 ||

In the blink of an eye, covering a hundred yojanas, the self-awareness reaches its middle. The form that is in the middle of that is the form of that state.

एक पल में, सौ योजन की दूरी तय करते हुए, आत्म-चेतना अपने मध्य तक पहुँचती है। उसके मध्य में जो रूप है, वह उस अवस्था का रूप है।

7.53.11

सबाह्याभ्यन्तरे शान्ते वासनाविषयभ्रमे । सर्वचिन्ताविहीनस्य प्रबुद्धस्यार्धरात्रतः ॥ ११ ॥

sabāhyābhyantare śānte vāsanāviṣayabhrame | sarvacintāvihīnasya prabuddhasyārdharātrataḥ || 11 ||

In the state of tranquility, both internally and externally, free from the delusion of desires and objects, one who is devoid of all thoughts and awakened at midnight.

जब बाहर और भीतर दोनों ही शान्त हो जाते हैं, वासना और विषयों के भ्रम से मुक्त हो जाते हैं, सभी चिंताओं से रहित हो जाते हैं, और आधी रात को जाग जाते हैं।

7.53.12

शान्तं निःसुखदुःखस्य पुरुषस्यैव तिष्ठतः । यदस्पन्दि मनोरूपं रूपं तस्य पदस्य तत् ॥ १२ ॥

śāntaṃ niḥsukhaduḥkhasya puruṣasyeva tiṣṭhataḥ | yadaspandi manorūpaṃ rūpaṃ tasya padasyatat || 12 ||

The tranquil state of a person who is free from pleasure and pain, who remains steadfast, and whose mind is motionless, that is the form of that state.

जो व्यक्ति सुख-दुःख से मुक्त है, स्थिर रहता है, और जिसका मन निश्चल है, उसकी शांत अवस्था ही उस पद का रूप है।

7.53.13

तृणगुल्माङ्कुरादीनां सत्तासामान्यमाततम् । यदुद्भवोद्भवं रूपं रूपं तस्य पदस्य तत् ॥ १३ ॥

tṛṇagulmāṅkurādīnāṃ sattāsāmānyamātatam | yadudbhavodbhavaṃ rūpaṃ rūpaṃ tasya padasyatat || 13 ||

The common existence of grass, shrubs, and sprouts, which is their origin and growth, that is the form of that state.

घास, झाड़ियों और अंकुरों की सामान्य अस्तित्व, जो उनकी उत्पत्ति और वृद्धि है, वही उस पद का रूप है।

7.53.14

तस्मिन्पदे जगद्रूपं यदिदं दृश्यते स्फुटम् । सकारणमिवाकारकरालमिव भेदवत् ॥ १४ ॥

tasminpade jagadrūpaṃ yadidaṃ dṛśyate sphuṭam | sakāraṇamivākārakarālamiva bhedavat || 14 ||

In that state, the form of the world that is clearly seen, appears as if it has a cause, as if it is fierce, and as if it is differentiated.

उस पद में, जो जगत का रूप स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, वह ऐसा लगता है मानो उसमें कारण है, मानो वह भयानक है, और मानो वह भेदभाव से युक्त है।

7.53.15

तत्सर्वं कारणाभावान्न जातं न च विद्यते । नाकारयुक्तं न जगन्न च द्वैतैक्यसंयुतम् ॥ १५ ॥

tatsarvaṃ kāraṇābhāvānna jātaṃ na ca vidyate | nākārayuktaṃ na jaganna ca dvaitaikyasaṃyutam || 15 ||

All that, due to the absence of cause, is neither born nor exists. It is neither endowed with form nor is it the world, nor is it united with duality and unity.

वह सब कुछ, कारण की अनुपस्थिति के कारण, न तो उत्पन्न होता है न ही अस्तित्व में है। वह न तो रूप से युक्त है, न ही जगत है, न ही द्वैत और एकता से युक्त है।

7.53.16

यदकारणकं तस्य सत्ता नेहोपपद्यते । स्वयं नित्यानुभूतेऽर्थे कोऽत्रापह्नवशक्तिमान् ॥ १६ ॥

yadakāraṇakaṃ tasya sattā nehopapadyate | svayaṃ nityānubhūte'rthe ko'trāpahnavaśaktimān || 16 ||

That which is without a cause, its existence is not possible here. In the self-evident reality, who has the power to deny it?

जो कारण से रहित है, उसकी सत्ता यहाँ संभव नहीं है | स्वयं नित्य अनुभव की वस्तु में, यहाँ कौन झूठ करने की शक्ति रखता है?

7.53.17

न च शून्यमनाद्यन्तं जगतः कारणं भवेत् । ब्रह्मामूर्तं समूर्तस्य दृश्यस्याब्रह्मरूपिणः ॥ १७ ॥

na ca śūnyamanādyantaṃ jagataḥ kāraṇaṃ bhavet | brahmāmūrtaṃ samūrtasya dṛśyasyābrahmarūpiṇaḥ || 17 ||

Nor can the void, which is without beginning or end, be the cause of the world. The formless Brahman is the cause of the visible universe, which is not Brahman.

न ही शून्य, जो आदि और अंत से रहित है, जगत का कारण हो सकता है | निराकार ब्रह्म दृश्य ब्रह्माण्ड का कारण है, जो ब्रह्म नहीं है |

7.53.18

तस्मात्तत्र जगद्रूपं यदा भातं तदेव तत्। स्वयमेव तदा भाति चिदाकाशमिति स्थितम्॥ १८॥

tasmāttatra jagadrūpaṃ yadā bhātaṃ tadeva tat | svayameva tadā bhāti cidākāśamiti sthitam || 18 ||

Therefore, that form of the world which appears there is indeed that. It appears as itself, established as the space of consciousness.

इसलिए, जो जगत का रूप वहाँ प्रकट होता है, वही वह है | वह स्वयं ही तब प्रकट होता है, चेतना के आकाश के रूप में स्थापित |

7.53.19

जगच्चिद्ब्रह्मभावाच्च तथा भावो भ्रमादिव। सर्वमेकमजं शान्तमद्वैतैक्यमनामयम्॥ १९॥

jagaccidbrahmabhāvācca tathā bhāvo bhramādiva | sarvamekamajaṃ śāntamadvaitaikyamanāmayam || 19 ||

Due to the nature of the world as consciousness and Brahman, the existence is like an illusion. Everything is one, unborn, peaceful, non-dual, and free from defects.

जगत के चेतना और ब्रह्म होने की प्रकृति के कारण, अस्तित्व भ्रम की तरह है | सब कुछ एक, अजन्मा, शांत, अद्वैत और दोषरहित है |

7.53.20

पूर्णात्पूर्णं विसरति पूर्णे पूर्णं विराजते। पूर्णमेवोदितं पूर्णे पूर्णमेव व्यवस्थितम्॥ २०॥

pūrṇātpūrṇaṃ visarati pūrṇe pūrṇaṃ virājate | pūrṇamevoditaṃ pūrṇe pūrṇameva vyavasthitam || 20 ||

From the full, the full comes forth. In the full, the full shines. The full alone is born from the full. The full alone is established.

पूर्ण से पूर्ण उत्पन्न होता है | पूर्ण में पूर्ण विराजता है | पूर्ण से ही पूर्ण उत्पन्न होता है | पूर्ण ही स्थापित है |

7.53.21

शान्तं समं समुदयास्तमयैर्विहीनमाकारमुक्तमजमम्बरमच्छमेकम्। सर्वं सदा सदसदेकतयोदितात्म निर्वाणमाद्यमिदमुत्तमबोधरूपम्॥ २१॥

śāntaṃ samaṃ samudayāstamayairvihīnamākāramuktamajamambaramacchamekam | sarvaṃ sadā sadasekatyoditātma nirvāṇamādyamidamuttamabodharūpam || 21 ||

Peaceful, equanimous, devoid of rise and fall, formless, liberated, unborn, sky-like, pure, one. Always, all, existence and non-existence, the self-revealed, supreme enlightenment, primordial, this is the ultimate form of enlightenment.

शान्त, समान, उदय और अस्त से रहित, निराकार, मुक्त, अजन्मा, आकाश के समान, पवित्र, एक। हमेशा, सभी, सत् और असत्, स्वयं प्रकट, उत्तम निर्वाण, आद्य, यह परम बोध का रूप है।

Chapter 54

7.54.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जगन्नाम नभः स्वच्छं सद्ब्रह्म नभसि स्थितम् । नभो नभसि भातीदं जगच्छब्दार्थ इत्यजम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jagannāma nabhaḥ svacchaṃ sadbrahma nabhasi sthitam | nabho nabhasi bhātīdaṃ jagacchabdārtha ityajam || 1 ||

Vasishtha said: The name of the world is the clear sky. The true Brahman is situated in the sky. The sky appears in the sky, and the world is the meaning of the word, which is unborn.

वसिष्ठ ने कहा: जगत का नाम नभ है, जो स्वच्छ है। सत् ब्रह्म नभ में स्थित है। नभ में ही नभ प्रकट होता है, और जगत शब्द का अर्थ है, जो अजन्मा है।

7.54.2

त्वमहं जगदित्यादि शब्दार्थो ब्रह्म ब्रह्मणि । शान्तं समसमाभासं स्थितमस्थितमेव सत् ॥ २ ॥

tvamahaṃ jagadityādi śabdārtho brahma brahmaṇi | śāntaṃ samasamābhāsaṃ sthitamasthitameva sat || 2 ||

You, I, and the world are all words whose meaning is Brahman in Brahman. It is peaceful, equally luminous, existing and non-existing, yet it is.

तुम, मैं, और जगत सभी शब्द हैं जिनका अर्थ ब्रह्म है। यह शान्त, समान रूप से चमकता है, स्थित और अस्थित है, फिर भी यह है।

7.54.3

समुद्रगिरिमेघोर्वीविस्फोटमयमप्यजम् । काष्ठमौनवदेवेदं जगद्ब्रह्मावतिष्ठते ॥ ३ ॥

samudragirimeghorvīvisphoṭamayamapyajam | kāṣṭhamau navadēvedaṃ jagadbrahmāvatiṣṭhatē || 3 ||

Even the roaring of the ocean, mountains, and clouds is unborn. Like the silence of a log, this world is established in Brahman.

समुद्र, पर्वत और बादलों की गर्जना भी अजन्मा है। एक लकड़ी की चुप्पी की तरह, यह जगत ब्रह्म में स्थित है।

7.54.4

द्रष्टा द्रष्टैव दृश्यस्य स्वभावात्स्वात्मनि स्थितः । कर्ता कर्तैव कर्तव्याभावतः कारणादृते ॥ ४ ॥

draṣṭā draṣṭaiva dṛśyasya svabhāvātsvātmani sthitaḥ | kartā kartaiva kartavyābhāvataḥ kāraṇādṛtē || 4 ||

The seer is the seer of the seen by its own nature, situated in itself. The doer is the doer due to the absence of what is to be done, except for the cause.

द्रष्टा दृश्य का द्रष्टा है, अपने स्वभाव से, अपने में स्थित है। कर्ता कर्ता है, कर्तव्य के अभाव से, कारण के अलावा।

7.54.5

न ज्ञत्वं न च कर्तृत्वं न जडत्वं न भोक्तृता । न शून्यता न चार्थत्वमिह नापि नभोर्थता ॥ ५ ॥

na jñatvaṃ na ca kartṛtvaṃ na jaḍatvaṃ na bhoktṛtā | na śūnyatā na cārthatvamihanāpi nabhorthtā || 5 ||

There is no knower, no doer, no inertness, no enjoyer, no emptiness, no meaning, and no meaning of the sky here.

यहाँ न ज्ञाता है, न कर्ता, न जड़ता, न भोक्ता, न शून्यता, न अर्थ, और न नभ का अर्थ है।

7.54.6

शिलाजटहरवत्सत्यं घनमेकमजं ततम्सर्वं शान्तमनाद्यन्तमेक विधिनिषेधयोः ॥ ६ ॥

śilājaṭharavatsatyaṃ ghanamekamajaṃ tatamsarvaṃ śāntamanādyantameka vidhiniṣedhayoḥ || 6 ||

Just as a stone is hard and one, so too is the truth one and all-pervading, peaceful, without beginning or end, and beyond the dualities of injunction and prohibition.

जैसे पत्थर कठोर और एक होता है, वैसे ही सत्य भी एक और सर्वव्यापी, शान्त, अनादि और अनन्त है, और विधि और निषेध के द्वैत से परे है।

7.54.7

मरणं जीवितं सत्यमसत्यं च शुभाशुभम्सर्वमेकमजं व्योम वीचिजालजलं यथा ॥ ७ ॥

maraṇaṃ jīvitaṃ satyamasatyaṃ ca śubhāśubhamsarvamekamajaṃ vyoma vīcijālajalaṃ yathā || 7 ||

Death, life, truth, falsehood, good, and evil—all these are one, unborn, like the sky, and like the web of waves in water.

मृत्यु, जीवन, सत्य, असत्य, शुभ, और अशुभ—ये सब एक हैं, अजन्मा, आकाश की तरह, और पानी में लहरों के जाल की तरह।

7.54.8

विभाग एव दृश्यत्वं द्रष्टृत्वं चैव गच्छतिएतच्च कल्पनं स्वप्नपुरादिष्वनुभूयते ॥ ८ ॥

vibhāga eva dṛśyatvaṃ draṣṭratvaṃ caiva gacchatietacca kalpanaṃ svapnapurādiṣvanubhūyate || 8 ||

Division itself is the seen and the seer. This too is imagination, experienced in dreams and ancient cities.

विभाजन स्वयं ही दृश्य और द्रष्टा है। यह भी कल्पना है, जो स्वप्न और प्राचीन नगरों में अनुभव की जाती है।

7.54.9

एवमच्छं पराकाशे स्वप्नपत्तनवज्जगत्भाति प्रथममेवेदं ब्रह्मैवेत्थमतः स्थितम् ॥ ९ ॥

evamacchaṃ parākāśe svapnapattanavajjagatbhāti prathamamevedaṃ brahmaivetthamataḥ sthitam || 9 ||

Thus, this pure world appears in the supreme sky like a dream city. This Brahman alone is established thus from the beginning.

इस प्रकार, यह शुद्ध जगत परम आकाश में स्वप्न नगर की तरह प्रकट होता है। यह ब्रह्म ही आदि से इस प्रकार स्थापित है।

7.54.10

तदिदं तादृशं विद्धि सर्वम् सर्वात्मकं च यत्देशाद्देशान्तरप्राप्तौ विदो मध्यमनङ्कितम् ॥ १० ॥

tadidaṃ tādṛśaṃ viddhi sarvam sarvātmakaṃ ca yatdeśāddeśāntaraprāptau vido madhyamanaṅkitam || 10 ||

Know this to be such, all that is all-pervading. In the transition from one place to another, it is known to be marked in the middle.

इसे ऐसा ही जानो, जो सब कुछ सर्वव्यापी है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक के परिवर्तन में, यह मध्य में चिह्नित जाना जाता है।

7.54.11

चिद्व्योम्नः शान्तशान्तस्य मध्यमे चैवमास्थितम् । जगत्तथैव सलिलमेवोर्म्यादितया यथा ॥ ११ ॥

cidvyomnaḥ śāntaśāntasya madhyame caivamāsthitam | jagattathaiva salilamevormyāditayā yathā || 11 ||

In the peaceful expanse of consciousness, the universe is situated just as waves and foam are in the ocean.

चेतना के शान्त विस्तार में, ब्रह्मांड उसी तरह स्थित है जैसे लहरें और फेन समुद्र में होते हैं।

7.54.12

यदुदेत्युदितं यच्च यच्च नोदेति नोदितम्। देशाद्देशान्तरप्राप्तौ विदो मध्यान्न भेदितम्॥ १२॥

yadudetyuditaṃ yacca yacca nodeti noditam | deśāddeśāntaraprāptau vido madhyānna bheditam || 12 ||

That which rises and that which does not rise, in moving from one place to another, the wise do not perceive any difference in the middle.

जो उठता है और जो नहीं उठता, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने में, विद्वान मध्य में कोई अंतर नहीं देखते।

7.54.13

अतः किलास्य सर्गस्य कारणं शशशृङ्गवत्। प्रयत्नेनापि चान्विष्टं न किंचिदुपलभ्यते॥ १३॥

ataḥ kilāsya sargasya kāraṇaṃ śaśaśṛṅgavat | prayatnenaapi cānvīṣṭaṃ na kiṃcidupalabhyate || 13 ||

Therefore, the cause of this creation is like the horns of a hare; even with effort, nothing is perceived.

इसलिए, इस सृष्टि का कारण खरगोश के सींग की तरह है; प्रयास के साथ भी, कुछ भी देखा नहीं जाता।

7.54.14

यदकारणकं भाति तदभातं भ्रमात्मकम्। भ्रमस्यासत्यरूपस्य सत्यता कथमुच्यते॥ १४॥

yadakāraṇakaṃ bhāti tadabhātaṃ bhramātmakam | bhramasyaasatyarūpasya satyatā kathamucyate || 14 ||

That which appears without a cause is unreal and illusory; how can the reality of something that is essentially unreal be spoken of?

जो बिना कारण के प्रकट होता है, वह असत्य और भ्रामक है; जो मूल रूप से असत्य है, उसकी सत्यता कैसे कही जा सकती है?

7.54.15

कारणेन विना कार्यं किल किं नाम विद्यते। यदपुत्रस्य सत्पुत्रदर्शनं स भ्रमो न सत्॥ १५॥

kāraṇena vinā kāryaṃ kila kiṃ nāma vidyate | yadaputrasya satputradarśanaṃ sa bhramo na sat || 15 ||

Without a cause, what kind of effect exists? The perception of a son by a sonless person is indeed an illusion, not real.

बिना कारण के, किस तरह का परिणाम है? पुत्रहीन व्यक्ति द्वारा पुत्र का दर्शन वास्तव में भ्रम है, सत्य नहीं।

7.54.16

यस्त्वकारणको भाति स स्वभावो विजृम्भते। सर्वरूपेण संकल्पगन्धर्वनगरादिवत्॥ १६॥

yastvakāraṇako bhāti sa svabhāvo vijṛmbhate | sarvarūpeṇa saṅkalpagandharvanagarādivat || 16 ||

That which appears without a cause is the nature that manifests itself in all forms, like an imagined city in the sky.

जो बिना किसी कारण के प्रकट होता है, वही स्वभाव है जो सभी रूपों में प्रकट होता है, जैसे आकाश में कल्पित नगर।

7.54.17

देशाद्देशान्तरप्राप्तौ क्षणान्मध्यं विदो वपुः। स्वरूपमजहत्त्वेव राजतेऽर्थविवर्तवत्॥ १७॥

deśāddeśāntaraprāptau kṣaṇānmadyaṃ vido vapuḥ | svarūpamajahattveva rājate'rthavivartavat || 17 ||

In the transition from one place to another, the body is perceived in the middle instant, retaining its form as if it were a transformation of reality.

एक स्थान से दूसरे स्थान तक के परिवर्तन में, शरीर मध्य क्षण में देखा जाता है, जैसे कि वास्तविकता का एक रूपांतरण हो, अपने रूप को बनाए रखते हुए।

7.54.18

बोध एव कचत्यर्थरूपेण स च स्वादणुः । दृष्टान्तोऽत्रानुभूतोऽन्तः स्वप्नसंकल्पपर्वतः ॥ १८ ॥

bodha eva kacatyartharūpeṇa sa ca svādaṇuḥ | dṛṣṭānto'trānubhūto'ntaḥ svapnasankalpaparvataḥ || 18 ||

Awareness itself shines in the form of objects, and it is the subtle essence. The example here is the experience of a dream or an imagined mountain.

चेतना स्वयं वस्तुओं के रूप में चमकती है, और यह सूक्ष्म सार है। यहाँ उदाहरण स्वप्न या कल्पित पर्वत की अनुभूति है।

7.54.19

श्रीराम उवाच । विद्यते वटबीजान्तर्यथा भाविमहाद्रुमः । परमाणौ तथा सर्गो ब्रह्मन्कस्मान्न विद्यते ॥ १९ ॥

śrīrāma uvāca | vidyate vaṭabījāntaryathā bhāvimahādrumaḥ | paramāṇau tathā sargo brahmanna kasmānna vidyate || 19 ||

Sri Rama said: Just as a great tree exists within a banyan seed, why does creation not exist in the supreme atom, O Brahman?

श्री राम ने कहा: जैसे एक बरगद के बीज में एक विशाल वृक्ष होता है, उसी प्रकार परमाणु में सृष्टि क्यों नहीं होती, हे ब्रह्मन?

7.54.20

श्रीवसिष्ठ उवाच । यत्रास्ति बीजं तत्र स्याच्छाखा विततरूपिणी । जन्यते कारणैः सा च विततता सहकारिभिः ॥ २० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yatrāsti bījaṃ tatra syācchākhā vitatarūpiṇī | janyate kāraṇaiḥ sā ca vitatā sahakāribhiḥ || 20 ||

Sri Vasistha said: Where there is a seed, there will be a branch with an expanded form. It is born from causes and is expanded with co-factors.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जहाँ बीज होता है, वहाँ एक शाखा होती है जिसका विस्तृत रूप होता है। यह कारणों से जन्म लेती है और सह-कारकों के साथ विस्तृत होती है।

7.54.21

समस्तभूतप्रलये बीजमाकारि किं भवेत् सहकार्यथ किं तस्य जायते यद्वशाज्जगत् ॥ २१ ॥

samastabhūtapralaye bījamākāri kiṃ bhavet sahakāryatha kiṃ tasya jāyate yadvashājjagat || 21 ||

What would be the seed that causes the destruction of all beings? And what would be its effect, from which the world arises?

समस्त भूतों के प्रलय का बीज क्या होगा? और उसका सहकार्य क्या होगा, जिससे जगत् उत्पन्न होता है?

7.54.22

यत्तु ब्रह्म परं शान्तं का तत्राकारकल्पना परमाणुत्वयोगोऽपि नात्र केवात्र बीजता ॥ २२ ॥

yattu brahma paraṃ śāntaṃ kā tatrākārakalpanā paramāṇutvayogo'pi nātra kevātra bījatā || 22 ||

That which is the supreme Brahman, peaceful, what is the form conceived there? Even the combination of atoms is not a seed here.

जो परम ब्रह्म है, शान्त, वहाँ क्या रूप कल्पना है? यहाँ परमाणुओं का संयोग भी बीज नहीं है।

7.54.23

कारणस्येति बीजस्य सत्यासत्यैककारिणः असंभवाज्जगत्सत्ता कथं केन कुतः क्व का ॥ २३ ॥

kāraṇasyeti bījasya satyāsatyaikekāriṇaḥ asaṃbhavājjagatsattā kathaṃ kena kutaḥ kva kā || 23 ||

How, by whom, from where, where, and what is the existence of the world from the impossibility of the seed, which is the cause, being both true and false?

कारण रूपी बीज के सत्य और असत्य दोनों होने की असंभावना से जगत् की सत्ता कैसे, किसके द्वारा, कहाँ से, कहाँ, और क्या है?

7.54.24

जगदास्ते परस्याणोरन्तरित्यपि नोचितम् सार्षपे कणके मेरुरास्त इत्यज्ञकल्पना ॥ २४ ॥

jagadāste parasyaṇorantarityapi nocitam sārṣape kaṇake merurāsta ityajñakalpana || 24 ||

The world exists in the supreme self, but it is not proper to say that it is within it. It is like saying that Mount Meru is within a mustard seed, which is an ignorant conception.

जगत् परम आत्मा में अस्तित्व रखता है, लेकिन यह उचित नहीं है कि यह उसके अंतर्गत है। यह उस अज्ञानी कल्पना के समान है जो कहता है कि मेरु पर्वत एक सरसों के बीज में है।

7.54.25

सति बीजे प्रवर्तन्ते कार्यकारणदृष्टयः निराकारस्य किं बीजं क्व जन्यजनकक्रमः ॥ २५ ॥

sati bīje pravartante kāryakāraṇadṛṣṭayaḥ nirākārasya kiṃ bījaṃ kvajanyajanakakramaḥ || 25 ||

When the seed exists, the views of cause and effect arise. What is the seed of the formless? Where is the sequence of the born and the born?

जब बीज अस्तित्व में है, तब कारण और कार्य की दृष्टि उत्पन्न होती है। निराकार का बीज क्या है? जन्मे और जनक के क्रम कहाँ है?

7.54.26

अतो यत्परमं तत्त्वं तदेवेदं जगत्स्थितम्। नेह प्रथयते किंचिन्न च किंचिद्विनश्यति ॥ २६ ॥

ato yatparamaṃ tattvaṃ tadevedaṃ jagatsthitam | neha prathayate kiṃcinnna ca kiṃcidvinaśyati || 26 ||

Therefore, that supreme reality is established in this world. Nothing here is manifested, and nothing is destroyed.

इसलिए, वह परम तत्त्व इस जगत में स्थित है। यहाँ कुछ भी प्रकट नहीं होता और कुछ भी नष्ट नहीं होता।

7.54.27

चिदाकाशश्चिदाकाशे हृदि चित्त्वाज्जगद्भमम्। अशुद्धवदिवाशुद्धे शुद्धं शुद्धे प्रपश्यति ॥ २७ ॥

cidākāśaścidākāśe hṛdi cittvājjagadbhamam | aśuddhavadivāśuddhe śuddhaṃ śuddhe prapaśyati || 27 ||

The consciousness-space is in the consciousness-space in the heart. The impure sees the pure as impure, but the pure sees the pure.

चित्-आकाश चित्-आकाश में हृदय में है। अशुद्ध शुद्ध को अशुद्ध के रूप में देखता है, लेकिन शुद्ध शुद्ध को शुद्ध के रूप में देखता है।

7.54.28

स्वमेवाभासते तस्य रूपं स्पन्द इवानिले। सर्गशब्दार्थकलना नेह काश्चन सन्ति नः ॥ २८ ॥

svamevābhāsate tasya rūpaṃ spanda ivānile | sargaśabdārthakalanā neha kāścana santi naḥ || 28 ||

Its own form shines like the vibration in the air. There is no calculation of the meaning of the word 'creation' here for us.

उसका अपना रूप वायु में स्पन्दन के समान चमकता है। यहाँ 'सृष्टि' शब्द के अर्थ की कोई गणना हमारे लिए नहीं है।

7.54.29

यथा शून्यत्वमाकाशे द्रवत्वं च यथा जले । अन्यतात्ममयी शुद्धा सर्गतेय तथात्मनि ॥ २९ ॥

yathā śūnyatvamākāśe dravatvaṃ ca yathā jale | anyatātmamayī śuddhā sargateya tathātmani || 29 ||

Just as emptiness is in space and fluidity is in water, similarly, the pure creation is in the self.

जैसे शून्यता आकाश में है और द्रवता जल में है, वैसे ही, शुद्ध सृष्टि आत्मा में है।

7.54.30

भारूपमिदमाशान्तं जगद्ब्रह्मैव नस्ततम् । अनादिनिधनं सत्यं नोदेति न च शाम्यति ॥ ३० ॥

bhārūpamidamāśāntaṃ jagadbrahmaiva nastatam | anādinidhanaṃ satyaṃ noudeti na ca śāmyati || 30 ||

This world, which is the form of Brahman, is eternal and real. It neither arises nor ceases.

यह जगत, जो ब्रह्म का रूप है, अनादि और अनंत है। यह न उत्पन्न होता है न विलीन होता है।

7.54.31

देशाद्देशान्तरप्राप्तौ क्षणान्मध्ये विदो वपुः । यत्तज्जगदितीवेदं व्योमात्मनि व्यवस्थितम् ॥ ३१ ॥

deśāddēśāntaraprāptau kṣaṇānmadyē vidō vapuḥ | yattajjagaditīvēdaṃ vyōmātmani vyavasthitam || 31 ||

In the transition from one place to another, in the midst of moments, know the form of the universe as established in the self, which is like the sky.

एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा में, क्षणों के बीच, ब्रह्मांड के रूप को आत्मा में स्थापित जानो, जो आकाश के समान है।

7.54.32

यथा स्पन्दोऽनिले तोये द्रवत्वं व्योम्नि शून्यता । तथा जगदिदं भातमनन्याश्लेषमात्मनि ॥ ३२ ॥

yathā spandō'nile tōyē dravatvaṃ vyōmni śūnyatā | tathā jagadidaṃ bhātamananyāślēṣamātmani || 32 ||

Just as motion is in the wind, fluidity in water, and emptiness in the sky, so too this universe appears as non-different from the self.

जैसे गति हवा में है, तरलता पानी में है, और शून्यता आकाश में है, वैसे ही यह ब्रह्मांड आत्मा से भिन्न नहीं प्रतीत होता।

7.54.33

संविन्नभो ननु जगन्नभ इत्यनर्कमात्मन्यवस्थितमनस्तमयोदयं क्व । तत्त्वङ्गभूतमखिलं तदनन्यदेव दृश्यं निरस्तकलनोऽम्बरमात्रमास्व ॥ ३३ ॥

saṃvinnabhō nanu jagannabha ityanarkamātmanyavasthitamanastamayōdayaṃ kva |
tattvaṅgabhūtamakhilaṃ tadananyadēva dṛśyaṃ nirastakalanō'mbaramātramāsvā || 33 ||

Is not the universe, which is consciousness itself, established in the self, devoid of rise and fall? Where is the manifestation and dissolution? All that is seen is the essence of reality, non-different from that, merely the sky.

क्या ब्रह्मांड, जो चेतना स्वयं है, आत्मा में स्थापित नहीं है, उदय और अस्त से रहित? प्रकटीकरण और विलयन कहाँ है? जो कुछ भी दिखाई देता है, वह वास्तविकता का सार है, उससे भिन्न नहीं, केवल आकाश।

Chapter 55

7.55.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । भावाभावग्रहोत्सर्गस्थूलसूक्ष्मचराचराः । आदावेव हि नोत्पन्नाः सर्गादौ कारणं विना ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | bhāvābhāvagrahotsargasthūlasūkṣmacarācarāḥ | ādāveva hi notpannāḥ sargādau kāraṇaṃ vinā || 1 ||

Sri Vasistha said: The gross and subtle, moving and non-moving entities, along with their existence and non-existence, were not created in the beginning without a cause.

श्री वसिष्ठ ने कहा: स्थूल और सूक्ष्म, चर और अचर वस्तुएँ, उनके अस्तित्व और अनस्तित्व के साथ, आदि में किसी कारण के बिना उत्पन्न नहीं हुई।

7.55.2

न त्वमूर्तो हि चिद्धातुः कारणं भवितुं क्वचित् । स्वात्मा शक्तः स मूर्तानां बीजमुर्वीरुहामिव ॥ २ ॥

na tva mūrto hi ciddhātuḥ kāraṇaṃ bhavituṃ kvacit | svātmā śaktaḥ sa mūrtānāṃ bījamurvīruhāmiva || 2 ||

The element of consciousness cannot become a cause in any form. It is capable of being the seed of all embodied beings, like the seed of a great tree.

चेतना का तत्व किसी भी रूप में कारण नहीं बन सकता। यह सभी शरीरधारी प्राणियों का बीज बनने में सक्षम है, जैसे कि एक विशाल वृक्ष का बीज।

7.55.3

स्वभावमेव सततं भावयन्भावनात्मकम् । आत्मन्येव हि चिद्धातुः सर्वोऽनुभववान्स्थितः ॥ ३ ॥

svabhāvameva satataṃ bhāvayanbhāvanātmakam | ātmanyeva hi ciddhātuḥ sarvo'nubhavavānsthitaḥ || 3 ||

The element of consciousness, always contemplating its own nature, is established in the self, experiencing everything.

चेतना का तत्व, हमेशा अपने स्वभाव पर ध्यान करते हुए, आत्मा में स्थित है, सब कुछ अनुभव करते हुए।

7.55.4

आस्वादयति यं भावं चिद्धातुर्गगनात्मकः । लब्धः सर्गः प्रलापेन क्षीबः क्षुब्धतया यथा ॥ ४ ॥

āsvādayati yaṃ bhāvaṃ ciddhāturgaganātmakaḥ | labdhaḥ sargaḥ pralāpena kṣībaḥ kṣubdhatayā yathā || 4 ||

The element of consciousness, which is like the sky, experiences the state that is obtained through creation, like a madman experiences through his delusions.

चेतना का तत्व, जो आकाश के समान है, सृष्टि द्वारा प्राप्त अवस्था का अनुभव करता है, जैसे कि एक पागल अपने भ्रम द्वारा अनुभव करता है।

7.55.5

यदा सर्वमनुत्पन्नं नास्त्येवापि च दृश्यते । तदा ब्रह्मैव विद्धीदं समं शान्तमसत्समम् ॥ ५ ॥

yadā sarvamanutpannaṃ nāstyevāpi ca dṛśyate | tadā brahmaiva viddhīdaṃ samaṃ śāntamasatsamam || 5 ||

When everything is uncreated and does not exist, yet it is seen, then know this to be Brahman, which is uniform, peaceful, and non-existent.

जब सब कुछ अनुत्पन्न है और अस्तित्व में नहीं है, फिर भी यह दिखाई देता है, तब इसे ब्रह्म समझो, जो एकरूप, शांत और असत् है।

7.55.6

चिन्नभश्चिन्नभस्येव पयसीव पयोद्रवः । चित्त्वात्कचति यत्तेन तदेवेदं जगत्कृतम् ॥ ६ ॥

cinnabhaścinnabhasyeva payasīva payodravaḥ | cittvātkacati yatten tadevedaṃ jagatkṛtam || 6 ||

Just as milk is produced from milk, so is this world created by consciousness.

जैसे दूध से दूध बनता है, वैसे ही चेतना से यह जगत् बना है।

7.55.7

स्वप्ने तदेव जगदित्युदेति विमला यथा । काचकस्येव कचति तथेत्थं सादि सर्गखे ॥ ७ ॥

svapne tadeva jagadityudeti vimalā yathā | kācakasyeva kacati tathetthaṃ sādi sargakhe || 7 ||

In dreams, the world arises pure, just as a reflection in a mirror.

स्वप्न में, यह जगत् पवित्र रूप से उत्पन्न होता है, जैसे दर्पण में प्रतिबिंब।

7.55.8

चित्काचकस्य कचनं यथा स्वप्ने जगद्भवेत् । तथैव जाग्रदविधं तत्स्वमात्रमिदं स्थितम् ॥ ८ ॥

citkācakasya kacanaṃ yathā svapne jagadbhavet | tathaiva jāgradavidhaṃ tatsvamātramidaṃ sthitam || 8 ||

Just as the world appears in dreams as a reflection of consciousness, so does it appear in the waking state as the self alone.

जैसे स्वप्न में जगत् चेतना का प्रतिबिंब के रूप में दिखाई देता है, वैसे ही जाग्रत अवस्था में भी यह स्वयं ही है।

7.55.9

आदिसर्गे हि चित्स्वप्नो जाग्रदित्यभिशब्द्यते । अद्य रात्रौ चितेः स्वप्नः स्वप्न इत्यपि शब्द्यते ॥ ९ ॥

ādisarge hi cit svapno jāgradityabhiśabdyate | adya rātrau citeḥ svapnaḥ svapna ityapi śabdyate || 9 ||

In the beginning of creation, the dream of consciousness is called the waking state. Even today, the dream of consciousness at night is called a dream.

सृष्टि के आदि में, चेतना का स्वप्न जाग्रत अवस्था कहलाता है। आज भी, रात में चेतना का स्वप्न स्वप्न कहलाता है।

7.55.10

पूर्वप्रवृत्ता सरितां रूढाद्यापि यथास्थिता । तरङ्गलेखा दृष्टीनां पदार्थरचना तथा ॥ १० ॥

pūrvapravṛttā saritāṃ rūḍhādyāpi yathāsthitā | taraṅgalekhā dṛṣṭīnāṃ padārtharacanā tathā || 10 ||

Just as the waves of a river, though flowing continuously, appear as separate entities, so do the objects of perception appear as separate entities.

जैसे नदी की लहरें, हालाँकि लगातार बहती हैं, अलग-अलग वस्तुओं के रूप में दिखाई देती हैं, वैसे ही दृष्टि के वस्तुओं का रचना अलग-अलग वस्तुओं के रूप में दिखाई देती है।

7.55.11

यथा वारितरङ्गश्रीः सरितां रचना मिता । तथा चिद्व्योम्नि चिद्बीजसत्तान्तःसृष्टितामिता ॥ ॥ ११ ॥

yathā vāritaraṅgaśrīḥ saritāṃ racanā mitā | tathā cidvyomni cidbījasattāntaḥsṛṣṭitāmitā || 11 ||

Just as the beauty of the waves is measured in the creation of rivers, so too is the creation within the consciousness measured by the essence of consciousness.

जैसे नदियों की रचना में तरंगों की शोभा मापी जाती है, वैसे ही चेतना के अंदर की सृष्टि चेतना के बीज की सत्ता से मापी जाती है।

7.55.12

मृतस्यात्यन्तनाशश्चेत्तन्निद्रासुखमेव तत् । भूयश्चोदेति संसारस्तत्सुखं नवमेव तत् ॥ ॥ १२ ॥

mṛtasyātyantanāśaścettannidrāsukhamēva tat | bhūyaścodēti saṃsārastatsukhaṃ navamēva tat || 12 ||

If death is considered the ultimate destruction, then it is like the bliss of sleep. But the world arises again, and that bliss is new again.

अगर मृत्यु को अंतिम विनाश माना जाए, तो वह नींद के सुख के समान है। लेकिन संसार फिर से उठता है, और वह सुख फिर से नया हो जाता है।

7.55.13

कुकर्मभ्यस्तु चेद्भीतिः सा समेह परत्र च । तस्मादेते समसुखे सर्वेषां मृतिजन्मनी ॥ ॥ १३ ॥

kukarmabhyastu cēdbhītiḥ sā samēha paratra ca | tasmādētē samasukhē sarvēṣāṃ mṛtijanmanī || 13 ||

If there is fear from evil deeds, it is the same here and in the hereafter. Therefore, death and birth are equal in happiness for all.

अगर बुरे कर्मों से भय है, तो वह यहाँ और परलोक में भी समान है। इसलिए, मृत्यु और जन्म सभी के लिए सुख में समान हैं।

7.55.14

मरणं जीवितं वास्तु सहजे वासने तयोः । इति विश्रान्तचित्तोयः सोऽन्तःशीतल उच्यते ॥ ॥ १४ ॥

maraṇaṃ jīvitaṃ vāstu sahajē vāsanē tayōḥ | iti viśrāntacittōyaḥ sō'ntaḥśītala ucyatē || 14 ||

Whether it is death or life, in the natural state of mind, one is called internally cool.

चाहे मृत्यु हो या जीवन, मन की स्वाभाविक अवस्था में, वह अंदर से शीतल कहलाता है।

7.55.15

सर्वसंवित्तिविगमे संविद्रोहति यादृशी । भूयते तन्मयेनैव तेनासौ मुक्त उच्यते ॥ ॥ १५ ॥

sarvasaṃvittivigamē saṃvidrohati yādṛśī | bhūyatē tanmayēnaiva tēnāsau mukta ucyatē || 15 ||

When all consciousness dissolves, the consciousness that remains is of such a nature. By that very nature, one is said to be liberated.

जब सभी चेतना विलीन हो जाती है, जो चेतना शेष रहती है वह ऐसी ही होती है। उसी स्वभाव से, वह मुक्त कहलाता है।

7.55.16

अत्यन्ताभावसंवित्त्या सर्वदृश्यस्य वेदनम् । उदेत्यपास्तसंवेद्यं सति वाऽसति सर्गके ॥ १६ ॥

atyantābhāvasaṃvittyā sarvadṛśyasya vedanam | udetypāstasaṃvedyaṃ sati vā'sati sargake || 16 ||

The realization of the absolute absence of all perceivable objects, whether they arise or disappear, in creation or not.

सभी दृश्य वस्तुओं की पूर्ण अनुपस्थिति का बोध, चाहे वे उत्पन्न हों या विलुप्त हों, सृष्टि में हों या न हों।

7.55.17

यन्न चेत्यं न चिद्रूपं यच्चितेरप्यचेतितम् । तद्भावैक्यं गतास्तज्ज्ञाः शान्ता व्यवहृतौ स्थिताः ॥ १७ ॥

yanna cetyaṃ na cidrūpaṃ yacciterapyacetitam | tadbhāvaikyaṃ gatāstajjñāḥ śāntā vyavahṛtau sthitāḥ || 17 ||

Those who know the non-dual nature of that which is neither inert nor conscious, and which is beyond even the conscious, attain peace and remain established in worldly activities.

जो उसके अद्वैत स्वरूप को जानते हैं जो न जड़ है न चेतन, और जो चेतन से भी परे है, वे शान्ति प्राप्त करते हैं और लौकिक गतिविधियों में स्थित रहते हैं।

7.55.18

चित्काचकाचकच्यं यज्जगन्नाम्ना तदुच्यते। अत्यच्छे परमाकाशे बन्धमोक्षदृशः कुतः ॥ १८ ॥

citkācakācakacyaṃ yajjagannāmnā taducyate | atyacche paramākāśe bandhamokṣadṛśaḥ kutaḥ || 18 ||

That which is called the world is a mere reflection of consciousness. In the supreme space, where is the perception of bondage and liberation?

जो जगत कहलाता है, वह चेतना का मात्र प्रतिबिम्ब है। परम आकाश में, बन्धन और मुक्ति की अनुभूति कहाँ है?

7.55.19

चिन्नभःस्पन्दमात्रात्म संकल्पात्मतया जगत्। सद्भूतमयमेवेदं न पृथ्व्यादिमयं क्वचित् ॥ १९ ॥

cinnabhaḥspandamātrātma saṃkalpātmatayā jagat | sadbhūtamayamevedaṃ na pṛthvyādimayaṃ kvacit || 19 ||

The world, which is of the nature of mere vibration of the luminous consciousness, is entirely of the nature of pure being. It is never of the nature of earth and other elements.

जो जगत है, वह चेतना के प्रकाशमान स्पन्दन का मात्र स्वरूप है, और यह शुद्ध सत्ता का ही स्वरूप है। यह कभी भी पृथ्वी और अन्य तत्वों का स्वरूप नहीं है।

7.55.20

नेह देशो न कालोऽस्ति न द्रव्यं न क्रिया न खम्। सदिवाखिलमुच्छूनं वाप्यनुच्छूनमप्यसत् ॥ २० ॥

neha deśo na kālo'sti na dravyaṃ na kriyā na kham | sadivākhilamucchūnaṃ vāpyanucchūnamapyasat || 20 ||

Here, there is no place, no time, no substance, no action, no space. Everything is always empty, or even not empty, or non-existent.

यहाँ न स्थान है, न समय, न पदार्थ, न क्रिया, न आकाश। सब कुछ हमेशा शून्य है, या फिर शून्य नहीं है, या असत् है।

7.55.21

भाति केवलमेवेत्थं परमार्थघनं घनम्। यन्न शून्यं न वाऽशून्यमत्यच्छं गगनादपि ॥ २१ ॥

bhāti kevalamevetthaṃ paramārthaghaṇaṃ ghaṇam | yanna śūnyaṃ na vā'śūnyamatyacchaṃ gaganādapi || 21 ||

It shines only in this way, dense with the ultimate truth, neither void nor non-void, more transparent than the sky.

यह केवल इस प्रकार से चमकता है, परम सत्य से घना, न शून्य न अशून्य, आकाश से भी अधिक पारदर्शी।

7.55.22

साकारमप्यनाकारमसदेवातिभास्वरम्। अतिशुद्धैकचिन्मात्रस्फारं स्वप्नपुरं यथा ॥ २२ ॥

sākāramapyanākāramasadevātibhāsvaraṃ | atiśuddhaikacinmātrasphāraṃ svapnapuraṃ yathā || 22 ||

It has form yet is formless, non-existent yet radiant, extremely pure, and a mere flash of pure consciousness, like a dream city.

यह रूप रखता है पर रूपहीन है, असत् है पर चमकदार है, अत्यंत शुद्ध, और शुद्ध चेतना का एक झलक, स्वप्न नगर की तरह।

7.55.23

निर्वाणमेवमिदमाततमित्थमन्तश्चिद्व्योम्न आविलमनाविलरूपमेव । नानेव न क्वचिदपि प्रसृतं न नाना शून्यत्वमम्बर इवाम्बुनिधौ द्रवत्वम् ॥ २३ ॥

nirvāṇamevamidamātatamitthamantaścidvyomna āvilamanāvilarūpameva | nāneva na kvacidapi prasṛtaṃ na nānā śūnyatvamambara ivāmbunidhau dravatvam || 23 ||

Thus, this ultimate reality is nirvana, pure and unobstructed within the expanse of consciousness, neither diverse nor spread anywhere, like the emptiness of the sky in the ocean.

इस प्रकार, यह परम सत्य निर्वाण है, चेतना के विस्तार में शुद्ध और अवरुद्ध, न विविध न कहीं फैला हुआ, आकाश की शून्यता की तरह समुद्र में।

Chapter 56

7.56.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । सर्वत्र सर्वथा सर्वं सर्वदा व्योम्नि चिन्मये । साधु संभवति स्वच्छं शून्यत्वं ख इवाखिले ॥ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sarvatra sarvathā sarvaṃ sarvadā vyomni cinmaye | sādhu saṃbhavati svacchaṃ śūnyatvaṃ kha ivākhile || 1 ||

Shri Vasishtha said: Everywhere, in every way, always, in the space of pure consciousness, everything becomes pure, like the void in the sky.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हर जगह, हर तरह से, हमेशा, शुद्ध चेतना के आकाश में, हर चीज शुद्ध हो जाती है, जैसे आकाश में शून्यता।

7.56.2

यत्र चित्तत्र सर्गश्रीरव्योम्नि व्योम्नि वास्ति चित् । चिन्मयत्वात्पदार्थानां सर्वेषां नास्त्यचित्क्वचित् ॥ ॥ २ ॥

yatra cittattra sargaśrīravyomni vyomni vāsti cit | cinmayatvātpadārthānāṃ sarveṣāṃ nāstyacitkva cit || 2 ||

Wherever there is consciousness, there is the creation and the universe. Due to the nature of pure consciousness, there is no non-consciousness anywhere.

जहाँ भी चेतना है, वहाँ सृष्टि और ब्रह्मांड है। शुद्ध चेतना की प्रकृति के कारण, कहीं भी अचेतनता नहीं है।

7.56.3

पदार्थजातं शैलादि यथा स्वप्ने पुरादि च । चिदेवैकं परं व्योम तथा जाग्रत्पदार्थभूः ॥ ॥ ३ ॥

padārthajātaṃ śailādi yathā svapne purādi ca | cidevaikaṃ paraṃ vyoma tathā jāgratpadārthabhūḥ || 3 ||

Just as objects like mountains appear in dreams, similarly, in the waking state, all objects are merely pure consciousness, the supreme space.

जैसे स्वप्न में पहाड़ जैसी वस्तुएँ दिखाई देती हैं, उसी तरह, जाग्रत अवस्था में, सभी वस्तुएँ केवल शुद्ध चेतना, परम आकाश हैं।

7.56.4

पाषाणाख्यानमत्रेदं शृणु राम रसायनम् । पूर्व मयैव यद्दृष्टं चित्र प्रकृतमेव च ॥ ॥ ४ ॥

pāṣāṇākhyānamatredaṃ śṛṇu rāma rasāyanam | pūrva mayaiva yaddṛṣṭaṃ citra prakṛtameva ca || 4 ||

Listen, O Rama, to this wonderful story of the stone, which is like an elixir. Previously, I myself saw this strange and natural phenomenon.

हे राम, इस अद्भुत पत्थर की कथा को सुनो, जो एक अमृत के समान है। पहले, मैंने खुद इस विचित्र और प्राकृतिक घटना को देखा था।

7.56.5

अहं विदितवेद्यत्वात्कदाचित्पूर्णमानसः । त्यक्तुमिच्छुरिमं लोकव्यवहारं घनभ्रमम् ॥ ॥ ५ ॥

ahaṃ viditavedyatvātkadācitpūrṇamānasaḥ | tyaktumicchurimaṃ lokavyavahāraṃ ghanabhramam || 5 ||

I, having known the knowable, once had a full mind. I desired to abandon this worldly interaction, which is a dense delusion.

मैं, जिसने ज्ञेय को जान लिया था, एक बार पूर्ण मन से चाहा कि इस संसारिक व्यवहार को, जो घनी भ्रांति है, छोड़ दूँ।

7.56.6

ध्यानैकतानतामेत्य शनैर्विश्रान्तये चिरम् । त्यक्ताजवं जवीभाव एकान्तार्थी शमं व्रजन् ॥ ६ ॥

dhyānaikatānatāmetya śanairviśrāntaye ciram | tyaktājavam javībhāva ekāntārthī śamam vrajan || 6 ||

Attaining single-minded focus through meditation, gradually seeking long-lasting rest, abandoning haste, becoming calm, seeking solitude, one proceeds towards peace.

ध्यान से एकाग्रता प्राप्त करके, धीरे-धीरे लंबे समय तक विश्राम की ओर बढ़ते हुए, जल्दबाजी को त्यागकर, शांत होकर, एकांत की इच्छा रखने वाला, शांति की ओर जाता है।

7.56.7

इदं चिन्तितवानस्मि कस्मिंश्चिदमरालये । संस्थितो विविधाः पश्यन्भङ्गुरा जागतीर्गतीः ॥ ७ ॥

idaṃ cintitavānasmikasmiṃścidamarālaye | saṃsthito vividhāḥ paśyanbhaṅgurā jāgatīrgatīḥ || 7 ||

I have pondered this in some divine abode, situated there, observing the various transient states of the world.

मैंने इस पर किसी दिव्य निवास में विचार किया है, वहाँ स्थित होकर, दुनिया की विविध अस्थायी अवस्थाओं को देखा है।

7.56.8

विरसा खल्वियं लोकस्थितिरापातसुन्दरी । न जातु सुखदा मन्ये कस्यचित्केनचित्क्वचित् ॥ ८ ॥

virasā khalviyaṃ lokasthitirāpātasundarī | na jātu sukhadā manye kasyacitkenacitkvacit || 8 ||

Indeed, this worldly existence is devoid of taste, seemingly beautiful but not truly joyful for anyone at any time.

निश्चय ही, यह संसारिक अस्तित्व स्वादहीन है, दिखने में सुंदर लगता है पर किसी के लिए कभी भी सच्ची खुशी नहीं देता।

7.56.9

उद्वेगं जनयत्यन्तस्तीव्रसंवेगखेदतः । इमा दृश्यदृशो द्रष्टुरिष्टानिष्टफलप्रदाः ॥ ९ ॥

udvegaṃ janayatyantastīvrasaṃvegakhedataḥ | imā dṛśyadṛśo draṣṭurīṣṭāniṣṭaphalapradāḥ || 9 ||

It ultimately causes distress, due to intense agitation and sorrow. These visible objects bestow desired and undesired results upon the observer.

अंत में यह उद्वेग पैदा करता है, तीव्र उत्तेजना और दुःख के कारण। ये दृश्य वस्तुएँ दर्शक को इच्छित और अनिच्छित फल देती हैं।

7.56.10

किमिदं दृश्यते किं वा प्रेक्षते कोऽहमेव वा । सर्वं शान्तमजं व्योम चिन्मात्रात्मनि रिङ्गकम् ॥ १० ॥

kimidaṃ dṛśyate kiṃ vā prekṣate ko'hameva vā | sarva śāntamajaṃ vyoma cinmātrātmani riṅgakam || 10 ||

What is this that is seen? What is being observed? Who am I? All is calm, unborn, and the vast sky in the self, which is pure consciousness.

यह क्या है जो दिखाई देता है? क्या देखा जा रहा है? मैं कौन हूँ? सब कुछ शांत, अजन्मा, और वह विशाल आकाश है जो स्वयं में शुद्ध चेतना है।

7.56.11

तस्मात्समस्तसिद्धेन्द्रदेवदैत्यादिदुर्गमंसुप्रदेशमितो गत्वा संगोप्यात्मानमात्मना ॥ ११ ॥

tasmātsamastasiddhendradevadaityādidurgamamsupradeśamito gatvā saṃgopyātmānamātmanā || 11 ||

Therefore, having gone to the most difficult places of the Siddhas, gods, and demons, one should protect oneself by oneself.

इसलिए, सिद्धों, देवताओं और दैत्यों के सबसे कठिन स्थानों में जाकर, अपने आप को अपने आप से सुरक्षित रखना चाहिए।

7.56.12

अदृश्यः सर्वभूतानां निर्विकल्पसमाधिगःसमे स्वच्छे पदे शान्ते आसे विगतवेदनम् ॥ १२ ॥

adṛśyaḥ sarvabhūtānāṃ nirvikalpasamādhigaḥsame svacche pade śānte āse vigatavedanam || 12 ||

Invisible to all beings, attaining the state of nirvikalpa samadhi, one remains in the pure, peaceful state, free from pain.

सभी प्राणियों के लिए अदृश्य, निर्विकल्प समाधि की अवस्था को प्राप्त करके, एक शुद्ध, शांत अवस्था में रहता है, पीड़ा से मुक्त।

7.56.13

तस्मात्को नु प्रदेशः स्यादत्यन्तं शून्यतां गतःयत्रैता नानुभूयन्ते पञ्च बाह्यार्थवेदनाः ॥ १३ ॥

tasmātko nu pradeśaḥ syādatyantaṃ śūnyatāṃ gataḥyatraitā nānubhūyante pañca bāhyārthavedanāḥ || 13 ||

Therefore, what place can there be that is completely empty, where these five external sensations are not experienced?

इसलिए, ऐसा कौन सा स्थान हो सकता है जो पूर्णतः खाली हो, जहाँ ये पाँच बाह्य संवेदनाएँ अनुभव नहीं की जातीं?

7.56.14

शब्दकाननवार्यब्दभूतौघाभिसमाकुलाःक्षोभयन्त्यथ संक्षुब्धास्तस्मान्मे गिरयोऽरयः ॥ १४ ॥

śabdakānanavāryabdabhūtaughābhisamākulāḥkṣobhayantyatha saṃkṣubdhāstasmānme girayo'rayaḥ || 14 ||

The mountains, filled with the tumultuous sounds of forests and oceans, cause disturbance, and thus they are disturbed.

पर्वत, जंगलों और समुद्रों की भीषण ध्वनियों से भरे हुए, विचलन पैदा करते हैं, और इस प्रकार वे विचलित हो जाते हैं।

7.56.15

नानाविधा नगेन्द्राणामन्तरावलिता जनैःदेशा विषमया एव निःशेषा विषयाहिभिः ॥ १५ ॥

nānāvidhā nagendrāṇāmantarāvalitā janaiḥdeśā viṣamayā eva niḥśeṣā viṣayāhibhiḥ || 15 ||

The various regions, filled with different kinds of people and great mountains, are indeed uneven and completely filled with worldly objects.

विभिन्न प्रकार के लोगों और महान पर्वतों से भरे हुए विभिन्न क्षेत्र वास्तव में असमान और संपूर्ण रूप से संसारिक वस्तुओं से भरे हुए हैं।

7.56.16

जनैर्जलचरैर्व्याप्ताः सागरा नीरकुक्षयः । विविधारम्भसंक्षुब्धैर्नगराणीव नागरैः ॥ १६ ॥

janairjalacarairvyāptāḥ sāgarā nīrakuksayaḥ | vividhārambhasaṃkṣubdhairnagarāṇīva nāgaraiḥ || 16 ||

The oceans, filled with various aquatic creatures, are like cities bustling with people, agitated by diverse activities.

जलचरों से भरे हुए समुद्र विभिन्न गतिविधियों से क्षुब्ध नगरों के समान हैं।

7.56.17

तटान्यद्र्यम्बुराशीनां लोकपालपुराणि च । भूताकुलानि शृङ्गाणि पातालकुहराणि च ॥ १७ ॥

taṭānyadryamburāśīnāṃ lokapālapurāṇi ca | bhūtākulāni śṛṅgāṇi pātālakuharāṇi ca || 17 ||

The shores of the mountains and oceans are like the cities of the guardians of the world, crowded with beings, peaks, and underground caves.

पर्वतों और समुद्रों के तट लोकपालों के नगरों के समान हैं, जो प्राणियों, शिखरों और भूमिगत गुफाओं से भरे हुए हैं।

7.56.18

गायन्त्यनिलभांकारैर्नृत्यन्ति लतिकाः करैः । पुष्पैर्हसन्त्यगेन्द्राणां गुहा गहनकोटराः ॥ १८ ॥

gāyantyanilabhāṃkārairnṛtyanti latikāḥ karaiḥ | puṣpairhasantyagendrāṇāṃ guhā gahanakoṭarāḥ || 18 ||

The vines sing with the humming of the wind, dance with their tendrils, and laugh with flowers in the caves and dense hollows of the mountains.

लताएँ हवा के गुंजन से गाती हैं, अपनी बेलों से नृत्य करती हैं, और पर्वतों की गुफाओं और घने खोहों में फूलों से हँसती हैं।

7.56.19

मौनिमीनमुनिस्पर्शकम्पिनालचलाम्बुजाः । सरस्यो विरसा एव वार्यावर्तविरावितः ॥ १९ ॥

maunimīnamunisparśakampinālacalāmbujāḥ | sarasyo virasā eva vāryāvartavirāvitāḥ || 19 ||

The lotuses, touched by the silent fish and trembling with their stalks, are tasteless, their charm diminished by the whirlpools of water.

मौन मछलियों के स्पर्श से कंपित डंठलों वाले कमल निरास हो गए हैं, जल के भँवरों से उनकी माधुर्य कम हो गया है।

7.56.20

पवनस्पर्शसंक्षुब्धतृणपांसुपताकिनी । रटत्यनिलभांकारैर्निर्झरोर्व्यप्यसंयता ॥ २० ॥

pavanasparśasaṃkṣubdhatṛṇapāṃsupatākinī | raṭatyani labhāṃkārairnirjharorvyapyasaṃyatā || 20 ||

The grass and dust, agitated by the touch of the wind, flutter like flags. The waterfall, resounding with the humming of the wind, flows uncontrollably.

हवा के स्पर्श से क्षुब्ध घास और धूल, झंडियों के समान फड़कती हैं। हवा के गुंजन से गूँजता हुआ झरना अनियंत्रित रूप से बहता है।

7.56.21

तस्मादाकाशमाशून्यं कस्मिंश्चिद्दूरकोणके । अत्र तिष्ठाम्यवष्टभ्य योगयुक्तिमनिन्दिताम् ॥ २१ ॥

tasmādākāśamāśūnyaṃ kasmiṃściddūrakoṇake | atra tiṣṭhāmyavaṣṭabhya yogayuktimaniṇditaṃ || 21 ||

Therefore, I am in the void of the sky, in a distant corner, staying here with unblemished yoga practice.

इसलिए, मैं आकाश के शून्य में, किसी दूर कोण में हूँ, यहाँ निर्दोष योग प्रयोग से रहता हूँ।

7.56.22

कस्मिंश्चिदेककोणेऽत्र कृत्वा कल्पनया कुटींवज्रोदरदृढं तस्यामन्तस्तिष्ठाम्यवासनम् ॥ २२ ॥

kasmiścidekakoṇe'tra kṛtvā kalpanayā kuṭīmvajrodaradṛḍhaṃ tasyāmantastiṣṭhāmyavāsanam || 22 ||

In some single corner here, having created a hut by imagination, as strong as a diamond, I dwell within it, without attachment.

किसी एक कोण में यहाँ, कल्पना से एक कुटी बनाकर, जो हीरे की तरह मजबूत है, मैं उसमें आसक्ति के बिना रहता हूँ।

7.56.23

इति संचिन्त्य यातोऽहमाकाशमसि निर्मलम् । यावत्तदपि पश्यामि सकलं विततान्तरम् ॥ २३ ॥

iti saṃcintya yāto'hamākāśamasi nirmalam | yāvattadapi paśyāmi sakalaṃ vitatāntaram || 23 ||

Thus thinking, I have gone to the pure sky, and I see everything spread out within it.

इस तरह सोचकर, मैं शुद्ध आकाश में गया हूँ, और मैं उसमें सब कुछ फैला हुआ देखता हूँ।

7.56.24

क्वचिद्भ्रमत्सिद्धगणं क्वचिदुद्गर्जदम्बुदम्। क्वचिद्विद्याधराधारं यक्षोत्क्षिप्तक्षयं क्वचित्॥ २४॥

kvacidbhramatsiddhagaṇaṃ kvacidudgarjadambudam | kvacidvidyādharādhāraṃ yakṣotkṣiptakṣayaṃ kvacit || 24 ||

Sometimes I see a group of accomplished beings, sometimes a roaring cloud, sometimes a support of Vidyadharas, sometimes a Yaksha's destruction.

कभी मैं सिद्ध गणों को देखता हूँ, कभी गर्जना करते बादलों को, कभी विद्याधरों के आधार को, कभी यक्षों के विनाश को।

7.56.25

क्वचिद्भ्रमत्पुरवरं प्रारब्धसमरं क्वचित्। क्वचिद्ध्रुवज्जलधरं क्वचिदुद्वृत्तयोगिनि॥ २५॥

kvacidbhramatpuravaraṃ prārabdhasamaraṃ kvacit | kvaciddrvajjaladharaṃ kvacidudvṛttayogini || 25 ||

Sometimes I see a wandering great city, sometimes a commenced battle, sometimes a cloud bearing a flag, sometimes a liberated yogini.

कभी मैं एक भटकती हुई महानगर देखता हूँ, कभी एक शुरू हुआ युद्ध, कभी एक झंडा लेकर बादल, कभी एक मुक्त योगिनी।

7.56.26

क्वचिद्दैत्यपुरोड्डीनसगन्धर्वपुरं क्वचित्क्वचिद्भ्रमद्ग्रहगणं तारकाकुलितं क्वचित्॥ २६॥

kvaciddaityapuroḍḍīnasagandharvapuraṃ kvacitkvacidbhramadgrahagaṇaṃ tārakākulitaṃ kvacit || 26 ||

Sometimes the city of the Daityas is shaken, sometimes the city of the Gandharvas, sometimes the planets are wandering, and sometimes the stars are crowded.

कभी-कभी दैत्यों का नगर डोलता है, कभी-कभी गन्धर्वों का नगर, कभी-कभी ग्रह भटकते हैं, और कभी-कभी तारे भीड़ लगाते हैं।

7.56.27

क्वचित्खे खगसंघृष्टं क्वचित्क्रुद्धमहानिलम्क्वचिदुत्पातवलितं क्वचिन्मण्डलमण्डितम्॥ २७॥

kvacitkhe khagasaṃghṛṣṭaṃ kvacitkruddhamahānilamkvacidutpātavalitaṃ kvacinmaṇḍalamaṇḍitam || 27 ||

Sometimes in the sky, birds are gathered, sometimes there is a strong wind, sometimes there are portents, and sometimes there are circles.

कभी-कभी आकाश में पक्षी एकत्र होते हैं, कभी-कभी तेज हवा चलती है, कभी-कभी उत्पात होते हैं, और कभी-कभी मण्डल बनते हैं।

7.56.28

क्वचिदपूर्वभूतौघं नागरावलितं क्वचित्क्वचिदर्करथाक्रान्तं क्वचिदन्यरथोद्धुरम्॥ २८॥

kvacidapūrvabhūtaughaṃ nāgarāvalitaṃ kvacitkvacidarkarathākrāntaṃ kvacidanyarathoddhuram || 28 ||

Sometimes there is a flood of unprecedented beings, sometimes it is surrounded by serpents, sometimes it is filled with chariots of the sun, and sometimes it is filled with other chariots.

कभी-कभी अपूर्व प्राणियों की भीड़ होती है, कभी-कभी सर्पों से घिरा होता है, कभी-कभी सूर्य के रथों से भरा होता है, और कभी-कभी अन्य रथों से भरा होता है।

7.56.29

क्वचिदादित्यदाहान्तं शशिशैत्यान्वितं क्वचित्क्वचित्क्षुद्रजनासह्यं क्वचिदग्न्यौष्ण्यदुर्गमम् ॥ २९ ॥

kvacidādityadāhāntaṃ śaśiśaityānvitaṃ kvacitkvacidkṣudrajanāsahyaṃ kvacidagnyauṣṇyadurgamam || 29 ||

Sometimes it is burnt by the sun, sometimes it is accompanied by the coolness of the moon, sometimes it is intolerable for small beings, and sometimes it is difficult to bear due to the heat of fire.

कभी-कभी सूर्य से जला हुआ होता है, कभी-कभी चंद्रमा की ठंडक से युक्त होता है, कभी-कभी छोटे प्राणियों के लिए असहनीय होता है, और कभी-कभी अग्नि के ताप से दुःसह होता है।

7.56.30

क्वचिदुत्तालवेतालं गरुडोड्डामरं क्वचित्क्वचित्सप्रलयाम्भोदं क्वचित्सप्रलयानिलम् ॥ ३० ॥

kvaciduttālavetālaṃ garuḍoḍḍāmaraṃ kvacitkvacitsapralayāmbhodaṃ kvacitsapralayānilam || 30 ||

Sometimes there are exalted spirits, sometimes Garuda is excited, sometimes there is a deluge, and sometimes there is a destructive wind.

कभी-कभी उत्ताल भूत होते हैं, कभी-कभी गरुड़ उत्तेजित होता है, कभी-कभी प्रलय की वर्षा होती है, और कभी-कभी प्रलय की हवा चलती है।

7.56.31

ततो भूतगणांस्त्यक्त्वा दूराद्दूरतरं गतः । प्राप्तवानहमेकान्तं शून्यमत्यन्तविस्तृतम् ॥ ३१ ॥

tato bhūtagaṇāṃstyaktvā dūrāddūrataraṃ gataḥ | prāptavānamekāntaṃ śūnyamatyantavistṛtam || 31 ||

Then, leaving behind the multitude of beings, I went very far away and reached a completely vast and empty solitude.

तब, भूतों के समूह को छोड़कर, मैं बहुत दूर चला गया और एक बिल्कुल विस्तृत और शून्य एकान्त प्राप्त किया।

7.56.32

अत्यन्तमन्दपवनं स्वप्नेऽप्यप्राप्यभूतकम् । मङ्गलोत्पातरहितमगम्यं विद्धि संसृतेः ॥ ३२ ॥

atyantamandapavanaṃ svapne'pyaprāpyabhūtakam | maṅgalotpātarahitamagamyaṃ viddhi saṃsṛteḥ || 32 ||

Know that place to be unreachable, devoid of auspicious and inauspicious omens, with extremely gentle breezes, and unattainable even in dreams.

उस स्थान को अगम्य जानो, जो शुभ और अशुभ उत्पातों से रहित है, अत्यन्त मन्द पवन वाला है, और स्वप्न में भी अप्राप्य है।

7.56.33

कल्पिताथ मया तत्र कुटी प्रकटकोटरा । नीरन्ध्रकुड्यनिबिडा पद्मकुड्मलसुन्दरी ॥ ३३ ॥

kalpitātha mayā tatra kuṭī prakaṭakoṭarā | nīrandhrakuḍyanibiḍā padmakuṅmalasundarī || 33 ||

Then, I imagined there a visible and hollow hut, filled with beautiful lotus flowers, with dense and water-filled pits.

तब, मैंने वहाँ एक दृश्यमान और खोखली कुटिया कल्पना की, जो सुन्दर कमल फूलों से भरी हुई थी, और जिसमें घने और पानी से भरे गड्ढे थे।

7.56.34

घुणक्षुण्णाङ्गपूर्णेन्दुबिम्बोदरमनोहरा । कह्लारकुन्दमन्दारपुष्पश्रीकोशशोभिता ॥ ३४ ॥

ghuṇakṣuṇṇāṅgapūrṇendubimbaudaramanoharā | kahlārakundamandārapuṣpaśrīkośaśobhitā || 34 ||

The hut was charming with a moon-like glow, adorned with beautiful flowers like kahlara, kunda, and mandara, and the surroundings were filled with the sweet hum of bees.

कुटिया चन्द्रमा की तरह चमकीली और मनोहर थी, कहलार, कुन्द और मन्दार जैसे सुन्दर फूलों से सजी हुई थी, और आसपास भौंरों की मधुर गुंजार से भरा हुआ था।

7.56.35

समस्तभूतागम्यत्वं तत्र संकल्प्य चेतसा । अगम्ये सर्वभूतानामहमासं तदा ततः ॥ ३५ ॥

samastabhūtāgamyatvaṃ tatra saṅkalpya cetasā | agamye sarvabhūtānāmahamāsaṃ tadā tataḥ || 35 ||

Having imagined that place to be inaccessible to all beings with my mind, I remained there in that unreachable place.

मन से उस स्थान को सभी भूतों के लिए अगम्य समझकर, मैं उस अगम्य स्थान में रहा।

7.56.36

बद्धपद्मासनः शान्तमनाः परममौनवान् । संवत्सरशतान्तेन निर्णीयोत्थानमात्मनः ॥ ३६ ॥

baddhapadmāsanaḥ śāntamanāḥ paramamounavān | saṃvatsarashatāntenirṇīyotthānamātmanaḥ || 36 ||

Sitting in the bound lotus posture, with a calm mind and observing complete silence, after a hundred years, one should decide to rise.

बद्ध पद्मासन में बैठे हुए, शांत मन से और परम मौन धारण करते हुए, सौ वर्षों के बाद अपने उठने का निर्णय लेना चाहिए।

7.56.37

निर्विकल्पसमाधिस्थो निद्रामुद्रामिवागतः । समः सौम्यनभःस्वस्थः समुत्कीर्ण इवाम्बरात् ॥ ३७ ॥

nirvikalpasamādhistho nidrāmudrāmivāgataḥ | samaḥ saumyanabhaḥsvasthaḥ samutkīrṇa ivāmbarāt || 37 ||

Absorbed in the state of nirvikalpa samadhi, as if in the sleep posture, calm, gentle, stable, and as if thrown out from the sky.

निर्विकल्प समाधि में स्थित, मानो निद्रा मुद्रा में आ गया हो, शांत, सौम्य, स्थिर, और मानो आकाश से फेंका हुआ।

7.56.38

चिरं यदनुसंधत्ते चेतः पश्यति तत्क्षणात् । चिरेण चाशापवनव्यक्तिवद्विततं यदा ॥ ३८ ॥

ciraṃ yadanusandhate cetaḥ paśyati tatkṣaṇāt | ciraṇa cāśāpavanavyaktivadvitatam yadā || 38 ||

Whatever the mind contemplates for a long time, it sees immediately. When it is spread out like the manifestation of the wind of hope over a long period.

जो भी मन लंबे समय तक सोचता है, वह तुरंत देखता है। जब यह लंबे समय तक आशा की हवा के प्रकटन की तरह फैल जाता है।

7.56.39

तदा वर्षशतेनात्र बोधबीजं वृतान्तरम् । आसीन्मे हृदयक्षेत्रे कालमेकं विकासतः ॥ ३९ ॥

tadā varṣaśatenaātra bodhabījaṃ vṛtāntaram | āsīnme hṛdayakṣetre kālamekaṃ vikāsataḥ || 39 ||

Then, after a hundred years, the seed of enlightenment, covered by the inner skin, was in my heart field, blossoming for a moment.

तब, सौ वर्षों के बाद, बोध का बीज, अंतर्निहित त्वचा से ढका हुआ, मेरे हृदय क्षेत्र में एक क्षण के लिए खिला हुआ था।

7.56.40

संप्रबुद्धोऽभवन्मेऽथ जीवः संबुद्धवेदनः । शिशिरक्षीणगात्रस्य मधाविव रसस्तरोः ॥ ४० ॥

saṃprabuddho'bhavaṃme'tha jīvaḥ saṃbuddhavedanaḥ | śiśirakṣīṇagātrasy madhāviva rasastaroḥ || 40 ||

Then, my life force became fully awakened, with awakened consciousness, like the sweetness of honey in the weakened body of winter.

तब, मेरा जीवन शक्ति पूर्ण रूप से जागृत हो गया, जागृत चेतना के साथ, जैसे सर्दी के कमजोर शरीर में मधु की मिठास।

7.56.41

तच्छतं तत्र वर्षाणां निमेषमिव मे गतम् । बह्व्योऽपि कालगतयो भवन्त्येकधियो मनाक् ॥ ४१ ॥

tacchatam tatra varṣāṇāṃ nimeṣamiva me gatam | bahvyo'pi kālagatayo bhavantyekadhiyo manāk || 41 ||

Those hundred years passed like a moment for me | Many years pass quickly when one is focused on a single thought

वे सौ वर्ष मुझे एक पल के समान बीत गए | एक ही विचार में डूबे हुए बहुत से वर्ष तुरंत बीत जाते हैं

7.56.42

विकासमागतो बाह्यं गतो बुद्धीन्द्रियक्रमः । वासन्तः पुष्परूपेण मदस्येव रसो मम ॥ ४२ ॥

vikāsamāgato bāhyaṃ gato buddhīndriyakramaḥ | vāsanthaḥ puṣparūpeṇa madasyeva raso mama || 42 ||

The external senses have blossomed and the sequence of the intellect has gone | Like the essence of intoxication in the form of a flower in spring

बाहरी इंद्रियाँ खिल गई हैं और बुद्धि का क्रम चला गया है | जैसे वसंत ऋतु में फूल के रूप में मद की तरह रस

7.56.43

मां प्राणपूरितमुपागतसंविदंशमभ्यागतं त्वहमिति प्रसूतः पिशाचः । इच्छाङ्गनाविवलितोऽथ कुतोऽपि सद्यः प्रोन्नामसन्नमनवायुरिवोग्रवृक्षम् ॥ ४३ ॥

māṃ prāṇapūritamupāgatasaṃvidaṃśamabhyāgataṃ tvahamiti prasūtaḥ piśācaḥ | icchāṅganāvivalito'tha kuto'pi sadyaḥ pronnāmasannamavāyurivogravṛkṣam || 43 ||

I, filled with life, have attained self-awareness, and the demon of 'I' has been born | Separated from the beloved of desire, suddenly from somewhere, like a fierce tree bent by the wind

मैं, जीवन से भरा हुआ, आत्म-चेतना प्राप्त कर चुका हूँ, और 'मैं' का राक्षस जन्म ले चुका है | इच्छा की प्रियतमा से अलग, अचानक कहीं से, जैसे हवा से झुका हुआ भयानक वृक्ष

Chapter 57

7.57.1

श्रीराम उवाच । त्वामप्युदितनिर्वाणमहंकारपिशाचकः । बाधते किमिति ब्रूहि मुने संदेहशान्तये ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | tvāmapyuditanirvāṇamahamkārapiśācakaḥ | bādhatē kimiti brūhi munē saṃdēhaśāntayē || 1 ||

Sri Rama said: O sage, why does the ego, which is a ghost, trouble you who have attained liberation? Please tell me to dispel my doubts.

श्रीराम ने कहा: हे मुनि, आपको जो मुक्ति प्राप्त है, उस पर भी अहंकार रूपी पिशाच क्यों परेशान करता है? कृपया मेरे संदेहों को दूर करने के लिए बताइए।

7.57.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । अहंभावं विना देहस्थितिस्तज्ज्ञाज्ञयोरिह । आधेयस्य निराधारा न संस्थेहोपपद्यते ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ahaṃbhāvaṃ vinā dēhasthitiḥ tajjñājñayōriha | ādhēyasya nirādhārā na saṃsthēhōpapadyatē || 2 ||

Sri Vasistha said: Without the sense of 'I', the body cannot exist, nor can the knowledge of 'I' and 'mine' be established.

श्रीवसिष्ठ ने कहा: अहंकार के बिना शरीर का अस्तित्व नहीं होता, न ही 'मैं' और 'मेरा' का ज्ञान स्थापित हो सकता है।

7.57.3

अयं त्वत्र विशेषस्तं शृणु विश्रान्तचेतसः । श्रुतेन येनाहंभावपिशाचः शान्तिमेति ते ॥ ३ ॥

ayaṃ tvatra viśēṣastaṃ śṛṇu viśrāntacētasaḥ | śrutēna yēnāhaṃbhāvapiśācaḥ śāntimēti tē || 3 ||

Listen to this special teaching, O calm-minded one, by which the ego, which is a ghost, attains peace.

यह विशेष शिक्षा सुनो, हे शांत मन वाले, जिससे अहंकार रूपी पिशाच शांति प्राप्त करता है।

7.57.4

अहंभावपिशाचोऽयमज्ञानशिशुनामुना । अविद्यमान एवान्तः कल्पितस्तेन संस्थितः ॥ ४ ॥

ahaṃbhāvapiśācō'yamajñānaśiśunāmunā | avidyamāna ēvāntaḥ kalpitastēna saṃsthitaḥ || 4 ||

This ego, which is a ghost, is imagined by the ignorant child-like mind. It is non-existent but is perceived as real.

यह अहंकार रूपी पिशाच अज्ञानी बालक मन द्वारा कल्पित है। यह असत्य है लेकिन सत्य के रूप में देखा जाता है।

7.57.5

अज्ञानमपि नास्त्येव प्रेक्षितं यन्न लभ्यते । विचारिणा दीपवता स्वरूपं तमसो यथा ॥ ५ ॥

ajñānamapi nāstyēva prēkṣitaṃ yannna labhyatē | vicāriṇā dīpavatā svarūpaṃ tamasō yathā || 5 ||

Even ignorance does not exist, for it is not perceived by the discerning mind, just as darkness is not perceived by the light of a lamp.

अज्ञान भी अस्तित्व में नहीं है, क्योंकि यह विवेकशील मन द्वारा नहीं देखा जाता, जैसे कि दीपक के प्रकाश में अंधेरा नहीं देखा जाता।

7.57.6

यथा यथा विलोक्यते तथा तथा विलीयते । इहाज्ञतापिशाचिका तथा विचारिता सती ॥ ६ ॥

yathā yathā vilokyate tathā tathā vilīyate| ihājñatāpiśācikā tathā vicāritā satī || 6 ||

As one sees, so one merges| Here, ignorance is considered as a ghost| Thus, it is contemplated

जैसे-जैसे देखा जाता है, वैसे-वैसे वह विलीन होता है| यहाँ, अज्ञान एक पिशाच माना जाता है| इस प्रकार, यह विचार किया जाता है

7.57.7

किल सत्यामविद्यायामज्ञतोदेति शाश्वती । बुद्धिमोहात्मिका यक्षी निर्देहैव यथा निशि ॥ ७ ॥

kila satyāmavidyāyāmajñatodeti śāśvatī| buddhimohātmikā yakṣī nirdehaiva yathā niśi || 7 ||

Indeed, in the true ignorance, eternal ignorance arises| The intellect-deluding demoness, bodiless, like in the night

वास्तव में, सच्चे अज्ञान में, शाश्वत अज्ञान उत्पन्न होता है| बुद्धि-मोहक यक्षिणी, शरीरहीन, जैसे रात में

7.57.8

सति सर्गे त्वविद्यायाः संभवो नान्यतः क्वचित् । सति द्वितीये शशिनि द्वितीयो विद्यते शशः ॥ ८ ॥

sati sarge tvavidyāyāḥ saṃbhavo nānyataḥ kvacit| sati dvitīye śaśini dvitīyo vidyate śaśaḥ || 8 ||

In the existence of creation, there is no origin from ignorance anywhere else| In the presence of the second moon, there is a second hare

सृष्टि के अस्तित्व में, अज्ञान से कहीं और कोई उत्पत्ति नहीं है| दूसरे चंद्रमा की उपस्थिति में, दूसरा खरगोश होता है

7.57.9

सर्गस्त्वयमजातत्वादज्ञज्ञातो न विद्यते । न जातः कारणाभावात्पूर्वमेव खवृक्षवत् ॥ ९ ॥

sargastvayamajātatvādajñajñāto na vidyate| na jātaḥ kāraṇābhāvātpūrvameva khavṛkṣavat || 9 ||

This creation, being unborn, is not known by the ignorant| Not born due to the lack of cause, like a tree in the sky

यह सृष्टि, अजन्मा होने के कारण, अज्ञानी द्वारा नहीं जानी जाती| कारण के अभाव के कारण जन्मा नहीं, जैसे आकाश में एक पेड़

7.57.10

परमाकाशकोशान्तरादिसर्गे निरामये । पृथ्व्यादेरुपलम्भस्य भवेत्किमिव कारणम् ॥ १० ॥

paramākāśakośāntarādisarge nirāmaye| pṛthvyāderupalambhasya bhavetkimiva kāraṇam || 10 ||

In the flawless creation within the supreme space-sheath| What could be the cause of the perception of earth, etc.?

परम आकाश कोश के अंतर्गत दोषरहित सृष्टि में| पृथ्वी आदि के उपलब्धि का कारण क्या हो सकता है?

7.57.11

मनःषष्ठेन्द्रियातीतं मनःषष्ठेन्द्रियात्मनः । साकारस्य निराकारं कथं भवति कारणम् ॥ ॥ ११ ॥

manaḥṣaṣṭhendriyātītaṃ manaḥṣaṣṭhendriyātmanaḥ | sākārasya nirākāraṃ kathaṃ bhavati kāraṇam || 11 ||

How can the formless be the cause of the form, which is beyond the mind and senses?

मन और इंद्रियों से परे जो साकार है, उसका निराकार कारण कैसे हो सकता है?

7.57.12

बीजात्कारणतः कार्यमङ्कुरः किल जायते । न बीजमपि यत्रास्ति तत्र स्यादङ्कुरः कुतः ॥ ॥ १२ ॥

bījātkāraṇataḥ kāryamaṅkuraḥ kila jāyate | na bījamapi yatrāsti tatra syādaṅkuraḥ kutaḥ || 12 ||

From the seed as the cause, the sprout is born. Where there is no seed, how can there be a sprout?

बीज के कारण से अंकुर उत्पन्न होता है। जहाँ बीज नहीं है, वहाँ अंकुर कैसे हो सकता है?

7.57.13

कारणेन विना कार्य न च नामोपपद्यते । कदा क इव खे केन दृष्टो लब्धः स्फुटो द्रुमः ॥ ॥ १३ ॥

kāraṇena vinā kārya na ca nāmopapadyate | kadā ka ivakhe kena dṛṣṭo labdhaḥ sphuṭo drumaḥ || 13 ||

Without a cause, an effect cannot be logically established. When and by whom has a clear tree been seen or obtained in the sky?

कारण के बिना कार्य नहीं हो सकता। कब और किसने आकाश में एक स्पष्ट वृक्ष देखा या प्राप्त किया है?

7.57.14

संकल्पेनाम्बरे यद्वद्दृश्यते विटपादिकम् । स संकल्पस्तथाभूतो न तत्रास्ति पदार्थता ॥ ॥ १४ ॥

saṃkalpenāmbare yadvaddṛśyate viṭapādikam | sa saṃkalpastathābhūto na tatrāsti padārthatā || 14 ||

Just as a tree and its branches are seen in the sky due to an illusion, that illusion does not have any real substance.

जैसे आकाश में भ्रम के कारण वृक्ष और उसकी शाखाएँ दिखाई देती हैं, उसी प्रकार वह भ्रम कोई वास्तविक पदार्थ नहीं है।

7.57.15

एवं येयं चिदाकाशे सर्गादावनुभूयते । शून्यरूप इवाकाशे सर्गस्थितिरनर्गला ॥ ॥ १५ ॥

evaṃ yeyaṃ cidākāśe sargādāvanubhūyate | śūnyarūpa ivākāśe sargasthitiranargalā || 15 ||

Thus, this consciousness in the space of the mind is experienced as the beginning of creation. Like the form of emptiness in space, the creation is effortless.

इस प्रकार, यह चेतना मन के आकाश में सृष्टि के आरंभ के रूप में अनुभव की जाती है। जैसे आकाश में शून्य का रूप, सृष्टि प्रयासरहित है।

7.57.16

सम एव चिदाकाशः कचत्यात्मनि तत्तथा । स्वभाव एव सर्गाख्यश्चित्त्वाच्चैतन्यमीश्वरः ॥ १६ ॥

sam eva cidākāśaḥ kacatyātmani tattathā | svabhāva eva sargākhyascittvāccaityanyamīśvaraḥ || 16 ||

The pure consciousness (cidākāśa) shines equally in the self, thus it is. The nature itself is the creation, and due to consciousness, the Lord is the consciousness.

शुद्ध चेतना (चिदाकाश) आत्मा में समान रूप से चमकती है, ऐसा है। स्वभाव ही सृष्टि है, और चेतना के कारण, ईश्वर ही चेतना है।

7.57.17

स्वप्नसर्गोऽत्र दृष्टान्तः प्रत्यहं योऽनुभूयते । स्वयं संवेदने स्वप्ने स्फुरत्यद्रिपुराकृतिः ॥ १७ ॥

svapnasargo'tra dṛṣṭāntaḥ pratyahaṃ yo'nubhūyate | svayaṃ saṃvedane svapne sphuratyadripurākṛtiḥ || 17 ||

The example here is the dream creation that is experienced daily. In the dream, the self-awareness shines in the form of a mountain or a city.

यहाँ उदाहरण वह स्वप्न सृष्टि है जो प्रतिदिन अनुभव की जाती है। स्वप्न में, आत्म-चेतना पहाड़ या शहर के रूप में चमकती है।

7.57.18

चित्स्वभावे यथा स्वप्ने आस्ते सर्ग इवेह यः । असर्गे सर्गवद्भाति तथा पूर्व महाम्बरे ॥ १८ ॥

citsvabhāve yathā svapne āste sarga iveha yaḥ | asarge sargavadbhāti tathā pūrva mahāmbare || 18 ||

Just as in a dream, the creation exists in the nature of consciousness, similarly, in the waking state, the creation appears as if it exists. Thus, it was in the great sky before.

जैसे स्वप्न में, सृष्टि चेतना के स्वभाव में अस्तित्व में है, उसी तरह, जाग्रत अवस्था में, सृष्टि ऐसे प्रतीत होती है जैसे वह अस्तित्व में है। इस प्रकार, यह पहले महान आकाश में था।

7.57.19

अवेद्यवेदनं शुद्धमेकं भात्यजमव्ययम् । सर्गादौ यदनाद्यन्तं स्थितः सर्गः स एव नः ॥ १९ ॥

avedyavedanaṃ śuddham ekaṃ bhātyajam avyayam | sargādau yadanādyantaṃ sthitaḥ sargaḥ sa eva naḥ || 19 ||

The pure, single, unknowable knowledge shines, unborn, imperishable. That which is without beginning or end, existing from the beginning of creation, is the creation itself for us.

शुद्ध, एक, अज्ञेय ज्ञान अजन्मा, अविनाशी चमकता है। जो आदि या अंत से रहित है, सृष्टि के आरंभ से अस्तित्व में है, वही हमारे लिए सृष्टि है।

7.57.20

नेह सर्गोऽस्ति नैवायं पृथ्व्यादिगणगोलकः । सर्व शान्तमनालम्बं ब्रह्मैव ब्रह्मणि स्थितम् ॥ २० ॥

neha sargo'sti naivāyaṃ pṛthvyādiganagolakaḥ | sarva śāntamanālambaṃ brahmaiva brahmaṇi sthitam || 20 ||

There is no creation here, nor is this world of elements and spheres. Everything is peaceful, without support, only Brahman exists in Brahman.

यहाँ कोई सृष्टि नहीं है, न ही यह तत्वों और गोलों की दुनिया है। सब कुछ शांत है, बिना आधार के, केवल ब्रह्म ब्रह्म में अस्तित्व में है।

7.57.21

सर्वशक्त्यात्म तद्ब्रह्म यथा कचति यादृशम् । रूपमत्यजदेवाच्छं तथा भवति तादृशम् ॥ २१ ॥

sarvaśaktyātma tadbrahma yathā kacati yādṛśam | rūpamatyajadevācchaṃ tathā bhavati tādṛśam || 21 ||

The Supreme Brahman, which is the essence of all powers, manifests in various forms as it desires. Whatever form it assumes, it becomes exactly like that.

सर्वशक्तिमान ब्रह्म, जो सभी शक्तियों का आत्मा है, जैसा वह चाहता है वैसे ही प्रकट होता है। जो भी रूप वह लेता है, वह उसी रूप में हो जाता है।

7.57.22

यथा स्वप्नपुरं जन्तोश्चिन्मात्रप्रविजृम्भितम् । तथैव सर्गः सर्गादौ शुद्धचिन्मात्रजृम्भितम् ॥ २२ ॥

yathā svapnapuraṃ jantościnmātrapravijṛmbhitam | tathaiva sargaḥ sargādau śuddhacinmātrajṛmbhitam || 22 ||

Just as a dream city is a mere projection of the mind, so too is the creation at the beginning a mere projection of pure consciousness.

जैसे स्वप्न में देखी गई नगरी मन की ही कल्पना होती है, वैसे ही सृष्टि की शुरुआत में शुद्ध चेतना की ही कल्पना होती है।

7.57.23

स्वच्छे चित्परमाकाशे चिदाकाशो य आस्थितः । स्वभाव एव सर्गोऽसाविति तेनैव भावितः ॥ २३ ॥

svacche citparamākāśe cidākāśo ya āsthitaḥ | svabhāva eva sargo'sāviti tenaiva bhāvitaḥ || 23 ||

In the pure, supreme space of consciousness, the space of consciousness itself is established. This creation is indeed its own nature, and it is thus perceived.

शुद्ध, परम चेतना के आकाश में, चेतना का आकाश स्वयं स्थापित है। यह सृष्टि स्वयं की ही प्रकृति है, और इस प्रकार से इसे देखा जाता है।

7.57.24

भाव्यभावकभावादिभूमीनां भावनं भृशम् । सर्वं चिन्नभ एवाच्छमात्मनात्मनि संस्थितम् ॥ २४ ॥

bhāvyabhāvakabhāvādibhūmīnāṃ bhāvanaṃ bhṛśam | sarvaṃ cinnabha evācchamātmanātmani saṃsthitam || 24 ||

The intense contemplation of the various states of being, such as the object of meditation, the meditator, and the act of meditation, is all established in the self, which is pure consciousness.

ध्यान के विषय, ध्यान करने वाला, और ध्यान करने की क्रिया जैसे विभिन्न अवस्थाओं का गहन चिंतन शुद्ध चेतना में ही स्थापित है।

7.57.25

एवं स्थिते कुतः सर्गः कुतो विद्या क चाज्ञता । ब्रह्म शान्तं घनं सर्वं क्वाहंकारादयः स्थिताः ॥ २५ ॥

evaṃ sthite kutaḥ sargaḥ kuto vidyā ka cājñatā | brahma śāntaṃ ghanaṃ sarvaṃ kvāhaṃkārādayaḥ sthitāḥ || 25 ||

In this state, where is the creation, where is knowledge, and where is ignorance? Brahman is peaceful, dense, and all-pervading. Where are ego and other such things?

इस अवस्था में, सृष्टि कहाँ है, ज्ञान कहाँ है, और अज्ञान कहाँ है? ब्रह्म शांत, घना, और सर्वव्यापी है। अहंकार और अन्य चीजें कहाँ हैं?

7.57.26

अहंभावस्य संशान्तिरेषाऽसौ कथिता तव । अहंभावः परिज्ञातः पिशाच इव शाम्यति ॥ २६ ॥

ahaṃbhāvasya saṃśāntireṣā'sau kathitā tava | ahaṃbhāvaḥ parijñātaḥ piśāca iva śāmyati || 26 ||

The calming of the ego is thus explained to you | The ego, once understood, vanishes like a ghost

अहंकार की शांति तुम्हें इस प्रकार बताई गई है | अहंकार जब समझ में आ जाता है, तो वह पिशाच की तरह शांत हो जाता है

7.57.27

मया त्वेवमहंभावः परिज्ञातो यदाखिलः । तदा मे विद्यमानोऽपि निष्फलः शरदभ्रवत् ॥ २७ ॥

mayā tvevamahaṃbhāvaḥ parijñāto yadākhilaḥ | tadā me vidyamāno'pi niṣphalaḥ śaradabhravat || 27 ||

When the ego is thus understood by me, even though it exists, it becomes fruitless like an autumn cloud

जब मैं अहंकार को इस प्रकार समझ लेता हूँ, तो होने के बावजूद वह शरद के बादल की तरह निष्फल हो जाता है

7.57.28

चित्राग्निदाहो विज्ञातो यथा दाह्येषु निष्फलः । तथाहंभावसर्गादि ज्ञातं निष्फलतामियात् ॥ २८ ॥

citrāgnidāho vijñāto yathā dāhyeṣu niṣphalaḥ | tathāhaṃbhāvasargādi jñātaṃ niṣphalatāmiyāt || 28 ||

Just as a magical fire, once known, becomes useless for burning, so too the ego and its creations become useless once understood

जैसे जादू की आग, जब ज्ञात हो जाती है, जलाने में निष्फल हो जाती है, वैसे ही अहंकार और उसकी सृष्टियाँ समझने पर निष्फल हो जाती हैं

7.57.29

इति मेऽहंकृतेस्त्यागे रागे च समता यदा। तदा व्योम्न इवाव्योम्नः सर्गे सर्गे च मे स्थितिः ॥ २९ ॥

iti me'haṃkṛteḥ tyāge rāge ca samatā yadā | tadā vyomna ivāvyomnaḥ sarge sarge ca me sthitiḥ || 29 ||

Thus, when I renounce the ego and attachment, and attain equanimity, then I remain in every creation like the sky in the sky

इस प्रकार, जब मैं अहंकार और आसक्ति का त्याग करता हूँ और समता प्राप्त करता हूँ, तब मैं हर सृष्टि में आकाश की तरह स्थित रहता हूँ

7.57.30

अहंभावस्य नैवाहं नाहंभावो ममेति च। तेन विद्धि चिदाकाशमेवेदमिति निर्घनम् ॥ ३० ॥

ahaṃbhāvasya naivāhaṃ nāhaṃbhāvo mameti ca | tena viddhi cidākāśamevedamiti nirghanam || 30 ||

I am not the ego, nor is the ego mine | Therefore, know this to be the pure space of consciousness

मैं अहंकार नहीं हूँ, न ही अहंकार मेरा है | इसलिए, इसे शुद्ध चेतना के आकाश के रूप में जानो

7.57.31

यथा मम तथान्येषामपि बोधवतामिह। अग्नित्वमिव चित्राग्नेर्नास्त्ययं बोधविभ्रमः ॥ ३१ ॥

yathā mama tathānyeṣāmapi bodhavatāmiha | agnitvamiva citrāgnernāstyayaṃ bodhavibhramaḥ || 31 ||

Just as I am, so are other enlightened beings here | There is no illusion in this awareness, like the fire in a painted fire || 31 ||

जैसे मैं हूँ, वैसे ही यहाँ अन्य बोधवान भी हैं | चित्रित अग्नि में अग्नित्व की तरह इस बोध में कोई भ्रम नहीं है || ३१ ||

7.57.32

नाहमस्मि न चान्योऽस्ति सर्वं नास्तीति निश्चये। प्रकृतव्यवहारस्त्वं शिलामौनमयो भव ॥ ३२ ॥

nāhamasmi na cānyo'sti sarvaṃ nāstīti niścaye | prakṛtavyavahārastvaṃ śilāmaunamayo bhava || 32 ||

I am not, nor is there anyone else, nothing exists, this is certain | You should be natural in your conduct, like a stone, silent || 32 ||

मैं नहीं हूँ, न ही कोई और है, कुछ भी नहीं है, यह निश्चित है | आपको अपने व्यवहार में प्राकृतिक होना चाहिए, पत्थर की तरह मौन || ३२ ||

7.57.33

आकाशकोशविशदाकृतिरेव तिष्ठ निर्देशवच्चिरमपह्नुतसर्वभावः। अद्यादितश्च किल चिन्मयमेव सर्वे नो दृश्यमस्ति शिवमेवमशेषमित्थम् ॥ ३३ ॥

ākāśakośaviśadākṛtireva tiṣṭha nirdeśavacciramapahnutasarvabhāvaḥ | adyāditaśca kila cinmayameva sarve no dṛśyamasti śivamevamaśeṣamittham || 33 ||

Remain like the clear form of the sky-vessel, devoid of all characteristics as indicated | From the beginning, indeed, everything is pure consciousness, there is no perceptible object, thus it is completely auspicious || 33 ||

आकाश-कोश की स्पष्ट आकृति की तरह रहो, जैसा इंगित किया गया है, सभी गुणों से रहित | आदि से ही, वास्तव में, सब कुछ शुद्ध चेतना है, कोई दृश्य वस्तु नहीं है, इस प्रकार यह पूर्णतः कल्याणकारी है || ३३ ||

Chapter 58

7.58.1

श्रीराम उवाच । अहो नु विततोदारा विमला विपुलाचला । भवता भगवन्भूत्यै भूयो दृष्टिरुदाहृता ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | aho nu vitatodārā vimalā vipulācalā | bhavatā bhagavanbhūtyai bhūyo dṛṣṭirudāhṛtā || 1 ||

Sri Rama said: Oh, how vast and pure is the great mountain! By you, O Lord, the vision for prosperity has been raised again.

श्री राम ने कहा: ओह, कितना विशाल और शुद्ध है यह महान पर्वत! आपने, हे भगवन्, समृद्धि के लिए दृष्टि फिर से उठाई है।

7.58.2

सर्वथा सर्वदा सर्वं सर्वं सर्वत्र सर्वदा । सदित्येव स्थितं सत्यं समं समनुभूतितः ॥ २ ॥

sarvathā sarvadā sarvaṃ sarvaṃ sarvatra sarvadā | sadityeva sthitaṃ satyaṃ samaṃ samanubhūtitḥ || 2 ||

Always and everywhere, everything is always and everywhere the same, true, and equally experienced.

हमेशा और हर जगह, हर चीज हमेशा और हर जगह समान, सत्य और समान रूप से अनुभव की जाती है।

7.58.3

अयमस्ति मम ब्रह्मन्संशयस्तं निवारय । किमिदं भगवन्नाम पाषाणाख्यानमुच्यते ॥ ३ ॥

ayamasti mama brahmansaṃśayastaṃ nivāraya | kimidaṃ bhagavannāma pāṣāṇākhyānamucyate || 3 ||

O Brahman, I have this doubt; please dispel it. What is this called the story of the stone, O Lord?

हे ब्रह्मन्, मुझे यह संदेह है; कृपया इसे दूर करें। हे भगवन्, यह पत्थर की कहानी क्या कहलाती है?

7.58.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । सर्वत्र सर्वदा सर्वमस्तीति प्रतिपादने । पाषाणाख्यानदृष्टान्तो मयायं तव कथ्यते ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sarvatra sarvadā sarvamastīti pratipādane | pāṣāṇākhyānadṛṣṭānto mayāyaṃ tava kathyate || 4 ||

Vasishtha said: To establish that everything exists always and everywhere, I am telling you this example of the story of the stone.

वसिष्ठ ने कहा: यह स्थापित करने के लिए कि हर चीज हमेशा और हर जगह मौजूद है, मैं आपको पत्थर की कहानी का यह उदाहरण बता रहा हूं।

7.58.5

नीरन्ध्रैकघनाङ्गस्य पाषाणस्यापि कोटरे । सन्ति सर्गसहस्राणि कथयेति प्रदर्श्यते ॥ ५ ॥

nīrandhraikaghanāṅgasya pāṣāṇasyāpi koṭare | santi sargasahasrāṇi kathayeti pradarśyate || 5 ||

Even in the hollow of a solid, imperforate stone, countless creations exist, as is being shown.

एक घन, बिना छेद वाले पत्थर के कोटर में भी अनगिनत सृष्टियाँ मौजूद हैं, जैसा कि दिखाया जा रहा है।

7.58.6

भूताकाशे महत्यस्मिन्खशून्यत्वमनुज्झति । सन्ति सर्गसहस्राणि कथयेति प्रदर्श्यते ॥ ६ ॥

bhūtākāśe mahatyasmin khaśūnyatvamanujjhati | santi sargasahasrāṇi kathayeti pradarśyate || 6 ||

In the vast space of the universe, the emptiness of the sky is perceived | There are thousands of creations, it is said to be shown || 6 ||

ब्रह्माण्ड के विशाल अंतरिक्ष में, आकाश की शून्यता को स्वीकार किया जाता है | हजारों सृष्टियाँ हैं, यह कहा जाता है कि यह दिखाया जाता है || 6 ||

7.58.7

अन्तर्गुल्माङ्कुरादीनां प्राणिवाय्वम्बुतेजसाम् । सन्ति सर्गसहस्राणि कथयेति प्रदर्श्यते ॥ ७ ॥

antargulmāṅkurādīnāṃ prāṇivāyvambutejasām | santi sargasahasrāṇi kathayeti pradarśyate || 7 ||

Within the sprouts and buds, there are thousands of creations of living beings, air, water, and fire | It is said to be shown || 7 ||

अंकुरों और कलियों के भीतर, जीवों, वायु, जल और अग्नि की हजारों सृष्टियाँ हैं | यह कहा जाता है कि यह दिखाया जाता है || 7 ||

7.58.8

श्रीराम उवाच । कुड्यादौ सन्ति सगौंघा इति चेत्कथ्यते मुने । तत्खे विभान्ति सर्गौघा इति किं न प्रदृश्यते ॥ ८ ॥

śrīrāma uvāca | kuḍyādau santi sagauṅghā iti cetkathyate mune | tatkhe vibhānti sargaughā iti kiṃ na pradṛśyate || 8 ||

Sri Rama said | If it is said that there are clusters of creations in a wall, etc., O sage | Why is it not shown that those clusters of creations appear in the sky? || 8 ||

श्री राम ने कहा | यदि कहा जाता है कि दीवार में सृष्टि के झुंड हैं, हे मुनि | तो फिर यह क्यों नहीं दिखाया जाता कि वे सृष्टि के झुंड आकाश में प्रकट होते हैं? || 8 ||

7.58.9

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतत्ते वर्णितं राम मुख्यमेव मयाखिलम् । योऽयमालक्ष्यते सर्गः स ख एव खमास्थितम् ॥ ९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etatte varṇitaṃ rāma mukhyameva mayākhilam | yo'yamālakṣyate sargaḥ sa kha eva khamāsthitam || 9 ||

Sri Vasistha said | O Rama, I have described to you the main essence of all this | This creation that is perceived is indeed established in the sky || 9 ||

श्री वसिष्ठ ने कहा | हे राम, मैंने तुम्हें इसका मुख्य सार बताया है | जो यह सृष्टि दिखाई देती है, वह वास्तव में आकाश में स्थित है || 9 ||

7.58.10

आदावेव हि नोत्पन्नमद्यापि न च विद्यते । दृश्यं यच्चावभातीदं तद्ब्रह्म ब्रह्मणि स्थितम् ॥ १० ॥

ādāveva hi notpannamadyāpi na ca vidyate | dṛśyaṃ yaccāvabhātīdaṃ tadbrahma brahmaṇi sthitam || 10 ||

Indeed, it was not born in the beginning, nor does it exist even now | Whatever is seen to appear is that Brahman established in Brahman || 10 ||

वास्तव में, यह आदि में उत्पन्न नहीं हुआ था, न ही अभी तक मौजूद है | जो कुछ भी दिखाई देता है, वह ब्रह्म है जो ब्रह्म में स्थित है || 10 ||

7.58.11

नास्ति भूरणुमात्रापि सर्गैर्निर्विवरा न या। न च क्वचन विद्यन्ते सर्गा ब्रह्मखमेव ते॥ ११॥

nāsti bhūraṇumātrāpi sargairnirvivarā na yā | na ca kvacana vidyante sargā brahmakham eva te || 11 ||

There is not even a tiny particle of earth that is not filled with creation; nowhere do creations exist except in the space of Brahman.

भूमि का एक छोटा सा कण भी ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो; कहीं भी सृष्टियाँ ब्रह्म के आकाश के अलावा नहीं हैं।

7.58.12

न तेजसोऽणुरप्यस्ति सगैर्निर्विवरो न यः। न च क्वचन सर्गास्ते सन्ति ब्रह्मखमेव तत्॥ १२॥

na tejaso'ṇur apy asti sagair nirvivaro na yaḥ | na ca kvacana sargās te santi brahmakham eva tat || 12 ||

There is not even a tiny particle of fire that is not filled with creation; nowhere do creations exist except in the space of Brahman.

अग्नि का एक छोटा सा कण भी ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो; कहीं भी सृष्टियाँ ब्रह्म के आकाश के अलावा नहीं हैं।

7.58.13

न वायोरणुरप्यस्ति सर्गैर्निर्विवरो न यः। न च क्वचन विद्यन्ते सर्गा ब्रह्मखमेव तत्॥ १३॥

na vāyoraṇur apy asti sargair nirvivaro na yaḥ | na ca kvacana vidyante sargā brahmakham eva tat || 13 ||

There is not even a tiny particle of air that is not filled with creation; nowhere do creations exist except in the space of Brahman.

वायु का एक छोटा सा कण भी ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो; कहीं भी सृष्टियाँ ब्रह्म के आकाश के अलावा नहीं हैं।

7.58.14

खं नाणुमात्रमप्यस्ति सर्गैर्निर्विवरं न यत्। न च क्वचन सर्गास्ते सन्ति ब्रह्मखमेव तत्॥ १४॥

khaṃ nāṇumātram apy asti sargair nirvivaraṃ na yat | na ca kvacana sargās te santi brahmakham eva tat || 14 ||

There is not even a tiny particle of space that is not filled with creation; nowhere do creations exist except in the space of Brahman.

आकाश का एक छोटा सा कण भी ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो; कहीं भी सृष्टियाँ ब्रह्म के आकाश के अलावा नहीं हैं।

7.58.15

न सा महाभूततास्ति सर्गैर्निर्विवरा न या। न च क्वचन विद्यन्ते सर्गा ब्रह्मखमेव तत्॥ १५॥

na sā mahābhūtatāsti sargair nirvivarā na yā | na ca kvacana vidyante sargā brahmakham eva tat || 15 ||

There is not even a great element that is not filled with creation; nowhere do creations exist except in the space of Brahman.

कोई भी महान तत्व ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो; कहीं भी सृष्टियाँ ब्रह्म के आकाश के अलावा नहीं हैं।

7.58.16

शैलानां नाणुरप्यस्ति स सर्गैर्यो न निर्घनः। न च क्वचन विद्यन्ते सर्गा ब्रह्मखमेव तत्॥ १६॥

śailānāṃ nāṇurapyasti sa sargairyona nirghanaḥ | na ca kvacana vidyante sargā brahmakhamēva tat || 16 ||

There is no atom of stone that is not filled with creation, and nowhere do creations exist without the space of Brahman.

कोई भी पत्थर का अणु ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो, और कहीं भी ब्रह्म के आकाश के बिना सृष्टियाँ नहीं होतीं।

7.58.17

ब्रह्मणो नाणुरप्यस्ति सगैर्निर्विवरो न यः । न च क्वचन सर्गास्ते सन्ति ब्रह्मखमेव तत् ॥ १७ ॥

brahmaṇona nāṇurapyasti sagairnirvivaro na yaḥ | na ca kvacana sargāste santi brahmakhamēva tat || 17 ||

There is no atom of Brahman that is not filled with creation, and nowhere do creations exist without the space of Brahman.

कोई भी ब्रह्म का अणु ऐसा नहीं है जो सृष्टि से भरा न हो, और कहीं भी ब्रह्म के आकाश के बिना सृष्टियाँ नहीं होतीं।

7.58.18

सर्गेषु नाणुरप्यस्ति न ब्रह्मात्मैव यः सदा । ब्रह्मसर्गास्तथेत्येष वाचि भेदो न वस्तुनि ॥ १८ ॥

sargeṣu nāṇurapyasti na brahmātmaiva yaḥ sadā | brahmasargāsthathetyeṣa vāci bhedo na vastuni || 18 ||

In creations, there is no atom that is not Brahman itself, always. Thus, the difference is only in speech, not in reality.

सृष्टियों में, कोई भी अणु ऐसा नहीं है जो ब्रह्म स्वयं न हो, हमेशा। इसलिए, अन्तर केवल भाषा में है, वास्तविकता में नहीं।

7.58.19

सर्गा एव परंब्रह्म परं ब्रह्मैव सर्गता । मनागप्यस्ति न द्वैतमत्राग्न्यर्कौष्ण्ययोरिव ॥ १९ ॥

sargā eva paraṃbrahma paraṃ brahmaiva sargatā | manāgapyasti na dvaitamatrāgnyarkauṣṇyayoriva || 19 ||

Creations themselves are the supreme Brahman, and the supremacy of Brahman is creation itself. There is no duality here, just as there is no duality between fire and its heat.

सृष्टियाँ स्वयं परम ब्रह्म हैं, और ब्रह्म की परमता सृष्टि स्वयं है। यहाँ कोई द्वैत नहीं है, जैसे अग्नि और उसकी गर्मी में कोई द्वैत नहीं है।

7.58.20

इमे सर्गा इदं ब्रह्म तेऽत्यन्तावाच्यदृष्टयः । विदार्यदारुरवव्द्भान्त्यर्थपरिवर्जिताः ॥ २० ॥

imē sargā idaṃ brahma tē'tyantāvācyadṛṣṭayaḥ | vidāryadāruravavadbhāntyarthaparivarjitāḥ || 20 ||

These creations are this Brahman, they are the ultimate expressions of vision. Like a piece of wood split open, they shine devoid of any separate meaning.

ये सृष्टियाँ यह ब्रह्म हैं, वे अन्तिम दृष्टि के अभिव्यक्तियाँ हैं। जैसे एक लकड़ी का टुकड़ा खोला जाता है, वे किसी अलग अर्थ से रहित चमकती हैं।

7.58.21

द्वैतमैक्यं च यत्रास्ति न मनागपि तत्र ते । सर्गब्रह्मादिशब्दार्थाः कथं कस्येव भान्तु के ॥ २१ ॥

dvaitamaikyaṃ ca yatrāsti na manāgapi tatra te | sargabrahmādiśabdārthāḥ kathaṃ kasyeva bhāntu ke || 21 ||

Where duality and unity coexist, even the mind cannot comprehend it. How can the meanings of words like creation, Brahma, etc., appear to anyone?

जहाँ द्वैत और एकता साथ-साथ है, वहाँ मन भी नहीं समझ सकता। सृष्टि, ब्रह्म आदि शब्दों के अर्थ किसी को कैसे प्रकट होंगे?

7.58.22

शान्तमेकमनाद्यन्तमिदमच्छमनामयम् । व्यवहारवतोऽप्यङ्ग ज्ञस्य मौनं शिलाघनम् ॥ २२ ॥

śāntamekamnādyantamidamacchamanāmayam | vyavahāravato'pyaṅga jñasya maunaṃ śilāghanam || 22 ||

This is peaceful, one without beginning or end, flawless, and without any defect. Even for the wise engaged in worldly affairs, silence is as heavy as a stone.

यह शांत, एक, अनादि, अनंत, दोषरहित और निर्दोष है। संसार के व्यवहार में लगे हुए ज्ञानी के लिए भी मौन पत्थर के समान भारी है।

7.58.23

निर्वाणमेवमखिलं नभ एव दृश्यं त्वं चाहमद्रिनिचयाश्च सुरासुराश्च । तादृग्जगत्समवलोकय यादृगङ्ग स्वप्नेऽथ जन्तुमनसि व्यवहारजालम् ॥ २३ ॥

nirvāṇamevamakhilaṃ nabha eva dṛśyaṃ tvaṃ cāhamadrinicayāśca surāsurāśca | tādṛgjagatsamavalokaya yādṛgaṅga svapne'tha jantumanasi vyavahārajālam || 23 ||

Thus, the entire world is like Nirvana, and everything visible is like the sky. You and I, the mountains, the gods, and the demons are all the same. Observe the world as it is, just as one sees a dream in the mind of a being.

इस प्रकार, सारा संसार निर्वाण के समान है, और सब कुछ दिखने वाला आकाश के समान है। तुम और मैं, पर्वत, देवता, और असुर सभी एक हैं। संसार को उसी तरह देखो जैसे किसी जीव के मन में स्वप्न देखा जाता है।

Chapter 59

7.59.1

श्रीराम उवाचानन्तरं नभःकोशकुंटीकोटरतो मुनेतव ध्यानात्प्रबुद्धस्य वृत्तं वर्षशतेन किम्॥ १॥

śrīrāma uvācaanantaraṃ nabhaḥkośakuṃṭīkoṭarato munetava dhyānātprabuddhasya vṛttaṃ varṣaśatena kim || 1 ||

Sri Rama said: What happened to you, O sage, after you awoke from your meditation, which lasted for a hundred years, in the sky-vaulted cave?

श्री राम ने कहा: हे मुनि, आपकी सौ वर्षों तक चली ध्यान से जागने के बाद आपके साथ क्या हुआ, जो आकाश की गुफा में था?

7.59.2

श्रीवसिष्ठ उवाचततो ध्यानात्प्रबुद्धोऽहं श्रुतवांस्तत्र निःस्वनम्मृदु व्यक्तपदं हृद्यं न च वाच्यनुगो यतः॥ २॥

śrīvasiṣṭha uvācatato dhyānātprabuddho'haṃ śrutavāṃstatra niḥsvanammṛdu vyaktapadaṃ hṛdyaṃ na ca vācyanugo yataḥ || 2 ||

Sri Vasistha said: Then, awakened from meditation, I heard there a soft, clear, and heart-touching sound, which was not in accordance with speech.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, ध्यान से जागने के बाद, मैंने वहाँ एक कोमल, स्पष्ट और हृदयस्पर्शी ध्वनि सुनी, जो वाणी के अनुकूल नहीं थी।

7.59.3

स्त्रीस्वभावादिव मृदु मधुरं वा निनादि वास्वल्पाङ्गत्वादनिर्ह्रादि मया तद्वाक्यमूहितम्॥ ३॥

strīsvabhāvādiva mṛdu madhuraṃ vā ninādi vāsvalpāṅgatvādanirhrādi mayā tadvākyamūhitam || 3 ||

That speech was soft and sweet like the nature of a woman, or it was a sound, or it was faint due to shyness; thus, I uttered that speech.

वह वाणी स्त्री स्वभाव की तरह कोमल और मधुर थी, या वह एक ध्वनि थी, या लज्जा के कारण धीमी थी; इस प्रकार, मैंने उस वाणी को उच्चारित किया।

7.59.4

इन्दिन्दिररुताकारं तन्त्रीरणितरञ्जनम्न रोदनं च पठनं बिसकोशसमस्वनम्॥ ४॥

indindirarutākāraṃ tantrīraṇitarañjanamna rodanaṃ ca paṭhanaṃ bisakośasamasvanam || 4 ||

It had the sound of thunder, the charming sound of a stringed instrument, neither crying nor reading, and the sound resembled the humming of bees.

उसमें गर्जन की ध्वनि, तार वाद्य की मोहक ध्वनि, न रोना न पढ़ना, और ध्वनि मधुमक्खियों की भनभनाहट की तरह थी।

7.59.5

तदाकर्ण्याशु तत्रेदमहं चिन्तितवानथशाब्दिकान्वीक्षणात्पश्यन्दिशो दश सविस्मयः॥ ५॥

tadākarṇyāśu tatredamahaṃ cintitavānathaśābdikānvīkṣaṇātpaśyandiśo daśa savismayaḥ || 5 ||

Hearing that, I immediately thought about it there and, looking around in all ten directions with wonder, saw this.

उसे सुनकर, मैंने तुरंत उस पर विचार किया और आश्चर्य से सभी दस दिशाओं में देखा, और इसे देखा।

7.59.6

व्योम्नोऽयं सिद्धसंचारमार्गशून्यान्यनन्तरम्। भागो योजनलक्षाणि समतिक्रम्य संस्थितः ॥ ६ ॥

vyomno'yaṃ siddhasaṃcāramārgaśūnyānyanantaram | bhāgo yojanalakṣāṇi samatikramya saṃsthitaḥ || 6 ||

This part of the sky, devoid of the path of the Siddhas, is empty and endless, having crossed countless yojanas.

यह आकाश का भाग, सिद्धों के मार्ग से रहित, शून्य और अनन्त है, जो असंख्य योजन पार करके स्थित है।

7.59.7

तदिहेदृग्विधस्य स्यात्कुतः शब्दस्य संभवःशाब्दिकं न च पश्यामि यत्नेनापि विलोकयन् ॥ ७ ॥

tadihedṛgvidhasya syātkutaḥ śabdasya saṃbhavaḥśābdikaṃ na ca paśyāmi yatnenāpi vilokayan || 7 ||

How can sound arise in such a void? Even with effort, I do not see any verbal form.

ऐसे शून्य में ध्वनि कैसे उत्पन्न हो सकती है? प्रयास करने पर भी मैं किसी शब्द रूप को नहीं देखता।

7.59.8

अनन्तमिदमाशून्यं पुरो मे निर्मलं नभःइह भूतं प्रयत्नेन प्रेक्ष्यमाणं न दृश्यते ॥ ८ ॥

anantamidamāśūnyaṃ puro me nirmalaṃ nabhaḥiha bhūtaṃ prayatnena prekṣyamāṇaṃ na dṛśyate || 8 ||

This infinite void is pure and clear before me. Even with effort, what is here is not seen.

यह अनन्त शून्य मेरे सामने शुद्ध और स्पष्ट है। प्रयास करने पर भी, यहाँ जो कुछ है वह नहीं दिखाई देता।

7.59.9

यदेति चिन्तयित्वाहं भूयोभूयो विलोकयन्। शब्देश्वरं न पश्यामि तदा चिन्तितवानिदम् ॥ ९ ॥

yad eti cintayitvāhaṃ bhūyobhūyo vilokayan | śabdeśvaraṃ na paśyāmi tadā cintitavān idam || 9 ||

Thinking about this again and again and looking carefully, I do not see the lord of sound. Then I thought this.

इस पर बार-बार सोचकर और सावधानी से देखने पर, मैं ध्वनि के स्वामी को नहीं देखता। तब मैंने यह सोचा।

7.59.10

आकाश एव भूत्वाहमाकाशेनैकतां गतः। आकाशगुणशब्दार्थान्करोम्याकाशकोशके ॥ १० ॥

ākāśa eva bhūtvāham ākāśenaikatāṃ gataḥ | ākāśaguṇaśabdārthān karomy ākāśakośake || 10 ||

Having become the sky itself, I have merged with the sky. I perceive the qualities and meanings of sound in the space.

आकाश बनकर, मैं आकाश में विलीन हो गया हूँ। मैं आकाश में ध्वनि के गुण और अर्थ को ग्रहण करता हूँ।

7.59.11

देहाकाशमिह स्थाप्य ध्यानेनेह यथास्थितम्। चिदाकाशवपुर्व्योम्ना याम्यैक्यं वारिवाम्बुना ॥ ११ ॥

dehākāśamiha sthāpya dhyāneneha yathāsthitam | cidākāśavapurvyomnā yāmyaikyaṃ vārivāmbunā || 11 ||

Establishing the space of the body here through meditation as it is, I attained oneness with the sky of consciousness through the water of the sky.

शरीर के आकाश को यहाँ ध्यान से जैसा है उसी तरह स्थापित कर, मैंने चेतना के आकाश से एकता प्राप्त की जल के माध्यम से।

7.59.12

चिन्तयित्वेत्यहं त्यक्तुं देहं पद्मासनस्थितः । आसं समाधिमाधातुं पुनरामीलितेक्षणः ॥ १२ ॥

cintayitvetihaṃ tyaktuṃ dehaṃ padmāsanasthitaḥ | āsaṃ samādhimādhātuṃ punarāmīlitekṣaṇaḥ || 12 ||

Having contemplated thus, I, seated in the lotus posture, intended to abandon the body and enter into meditation with eyes half-closed.

ऐसा चिंतन कर, मैं पद्मासन में बैठा हुआ, शरीर को त्यागने और आँखें अर्ध-मुक्त कर समाधि में प्रवेश करने का इरादा रखता था।

7.59.13

त्यक्त्वा बाह्यार्थसंस्पर्शानैन्द्रियानान्तरानपि । चित्ताकाशोऽहमभवं संवित्स्पन्दमयात्मकः ॥ १३ ॥

tyaktvā bāhyārthasaṃsparśānaindriyānāntarānapi | cittākāśo'hamabhavaṃ saṃvitspandamayātmakaḥ || 13 ||

Having abandoned external sensory contacts and internal senses, I became the space of consciousness, of the nature of the pulsation of awareness.

बाह्य इंद्रिय संस्पर्शों और आंतरिक इंद्रियों को त्याग कर, मैं चेतना के आकाश बन गया, जो चेतना की स्पंदन के स्वभाव का था।

7.59.14

क्रमात्तदपि संत्यज्य बुद्धितत्त्वपदं गतः । संपन्नोऽहं चिदाकाशे जगज्जालैकदर्पणः ॥ १४ ॥

kramāttadapi saṃtyajya buddhitattvapadaṃ gataḥ | saṃpanno'haṃ cidākāśe jagajjālaikadarpaṇaḥ || 14 ||

Gradually abandoning even that, I attained the state of pure intellect and became complete in the space of consciousness, reflecting the entire universe as a single mirror.

क्रमशः उसे भी त्याग कर, मैंने शुद्ध बुद्धि की अवस्था प्राप्त की और चेतना के आकाश में पूर्ण हो गया, सारे ब्रह्मांड को एक दर्पण की तरह प्रतिबिंबित करते हुए।

7.59.15

ततस्तेन स्वभावेन भूतव्योमैकतामहम् । संप्रयातोऽम्बुनैवाम्बु सौरभं सौरभेण वा ॥ १५ ॥

tatastenasvabhāvena bhūtavyomaikatām aham | saṃprayāto'mbunaivāmbu saurabhaṃ saurabheṇa vā || 15 ||

Then, by that nature, I merged into the oneness of the elemental sky, moving towards the water with the water, fragrance with fragrance.

फिर, उस स्वभाव से, मैं तत्व आकाश की एकता में विलीन हो गया, जल के साथ जल की ओर बढ़ते हुए, सुगंध के साथ सुगंध।

7.59.16

संपन्नोऽथ महाकाशं व्याप्यानन्तोऽथ सर्वगः । अनाकारोऽप्यनाधारः सर्वार्थाधारतां गतः ॥ १६ ॥

saṃpanno'tha mahākāśaṃ vyāpyānananto'tha sarvagaḥ | anākāro'pyanādhāraḥ sarvārthādhāratāṃ gataḥ || 16 ||

Having attained the great space, pervading the infinite, and being omnipresent, without form and without support, it has become the support of all things.

महाकाश को प्राप्त होकर, अनन्त को व्याप्त करके, और सर्वव्यापी होकर, निराकार और अधार रहित होकर, वह सभी वस्तुओं का आधार बन गया है।

7.59.17

अहं त्रैलोक्यवृन्दानि संसाराणां शतानि च । तत्र ब्रह्माण्डलक्षाणि पश्याम्यगणितान्यपि ॥ १७ ॥

ahaṃ trailokyavṛndāni saṃsārāṇāṃ śatāni ca | tatra brahmāṇḍalakṣāṇi paśyāmyagaṇitānyapi || 17 ||

I see countless Brahmandas (universes) within the multitudes of the three worlds and the hundreds of existences.

मैं तीनों लोकों के समूहों और सैकड़ों संसारों में अगणित ब्रह्माण्ड देखता हूं।

7.59.18

परस्परमदृष्टानि मिथः खान्यमलानि च । नानाचारविचाराणि शून्यान्येव परस्परम् ॥ १८ ॥

parasparamadṛṣṭāni mithaḥ khānyamalāni ca | nānācāravicārāṇi śūnyānyeva parasparam || 18 ||

Mutually unseen, they are pure and empty, with various behaviors and thoughts, they are empty to each other.

परस्पर अदृश्य, वे शुद्ध और खाली हैं, विभिन्न आचार और विचारों के साथ, वे एक-दूसरे के लिए खाली हैं।

7.59.19

स्वप्नरूपाणि सुप्तानां तुल्यकालं नृणामिव । महारम्भानुमृष्टानि शून्यानि च परस्परम् ॥ १९ ॥

svapnarūpāṇi suptānāṃ tulyakālaṃ nṛṇāmiva | mahārambhānumṛṣṭāni śūnyāni ca parasparam || 19 ||

Like dreams of sleeping people, they are of equal duration, created by great endeavors, and empty to each other.

सोए हुए लोगों के स्वप्न की तरह, वे समान अवधि के हैं, महान प्रयासों से बनाए गए हैं, और एक-दूसरे के लिए खाली हैं।

7.59.20

जायमानानि नश्यन्ति वर्धमानानि भूरिशः । वर्तमानान्यतीतानि भविष्यन्ति च सर्वशः ॥ २० ॥

jāyamānāni naśyanti vardhamānāni bhūriśaḥ | vartamānānyatītāni bhaviṣyanti ca sarvaśaḥ || 20 ||

Those that are born perish, those that grow decay, those that exist pass away, and all will become in the future.

जो जन्म लेते हैं वे नष्ट हो जाते हैं, जो बढ़ते हैं वे क्षीण हो जाते हैं, जो मौजूद हैं वे गुजर जाते हैं, और सभी भविष्य में होंगे।

7.59.21

अनेकचित्रजालानि महाभित्तीनि खानि च । मनसेवोग्रराज्यानि कृतानि विविधैर्जनैः ॥ २१ ॥

anekacitrajālāni mahābhittīni khāni ca | manasevograrājyāni kṛtāni vividhairjanaiḥ || 21 ||

Many beautiful paintings, large walls, and mines have been created by various people with great mental effort.

अनेक सुंदर चित्र, बड़ी दीवारें और खानें विभिन्न लोगों द्वारा मन के बड़े प्रयास से बनाए गए हैं।

7.59.22

निरावरणरूपाणि तथैकावरणानि च । पञ्चावरणयुक्तानि षडेकावरणानि च ॥ २२ ॥

nirāvaraṇarūpāṇi tathaikāvaraṇāni ca | pañcāvaraṇayuktāni ṣaḍekāvaraṇāni ca || 22 ||

Some are without any coverings, others have one covering, five coverings, six coverings, and so on.

कुछ बिना किसी आवरण के हैं, कुछ एक आवरण वाले हैं, पाँच आवरण वाले हैं, छह आवरण वाले हैं, और इसी तरह।

7.59.23

दशावरणचित्राणि षोडशावरणानि च । चतुर्विंशत्यावृतीनि षट्त्रिंशत्खावृतानि च ॥ २३ ॥

daśāvaraṇacitrāṇi ṣoḍaśāvaraṇāni ca | caturviśatyāvṛtīni ṣaṭtriṃśatkhāvṛtāni ca || 23 ||

Some have ten coverings, sixteen coverings, twenty-four coverings, and thirty-six coverings.

कुछ दस आवरण वाले हैं, सोलह आवरण वाले हैं, चौबीस आवरण वाले हैं, और छत्तीस आवरण वाले हैं।

7.59.24

शून्यानि भूतपूर्णानि पञ्चभूतमयान्यपि । एकपृथ्व्यादिभूतानि चतुःपृथ्व्यादिकानि च ॥ २४ ॥

śūnyāni bhūtapūrṇāni pañcabhūtamayānyapi | ekapṛthvyādibhūtāni catuḥpṛthvyādikāni ca || 24 ||

Some are empty, some are filled with elements, some are made of the five elements, some are made of one element like earth, and some are made of four elements starting with earth.

कुछ खाली हैं, कुछ तत्वों से भरे हुए हैं, कुछ पाँच तत्वों से बने हैं, कुछ एक तत्व जैसे पृथ्वी से बने हैं, और कुछ पृथ्वी से शुरू होने वाले चार तत्वों से बने हैं।

7.59.25

त्रिःपृथ्व्यादीनि चान्यानि द्विःपृथ्व्यादीन्यथापि च । तथा सप्तमहाभूतान्येकजातिमयानि च ॥ २५ ॥

triḥpṛthvyādīni cānyāni dvipṛthvyādīnyathāpi ca | tathā saptamahābhūtānyekajātimayāni ca || 25 ||

Some are made of three elements starting with earth, others are made of two elements starting with earth, and some are made of the seven great elements of the same kind.

कुछ तीन तत्वों से बने हैं जो पृथ्वी से शुरू होते हैं, कुछ दो तत्वों से बने हैं जो पृथ्वी से शुरू होते हैं, और कुछ सात महान तत्वों से बने हैं जो एक ही प्रकार के हैं।

7.59.26

त्वादृशानुभवाभोगविरुद्धातिदशानि तु । तथा नित्यान्धकाराणि सूर्यादिरहितानि च ॥ २६ ॥

tvādṛśānubhavābhogaviruddhātidashāni tu | tathā nityāndhakārāṇi sūryādirahitāni ca || 26 ||

Those who experience contradictory states, always in darkness, devoid of the sun and other celestial bodies.

जो विरोधी अवस्थाओं का अनुभव करते हैं, हमेशा अंधकार में रहते हैं, सूर्य और अन्य दिव्य पिंडों से रहित।

7.59.27

तथा मीलितसर्गाणि एकनाथावृतानि च । विलक्षणप्रजेशांशविचित्राचारवन्ति च ॥ २७ ॥

tathā mīlitasargāṇi ekanāthāvṛtāni ca | vilakṣaṇaprajēśāṃśavicitrācāravanti ca || 27 ||

Thus, the created beings are enveloped by a single lord, with diverse and strange behaviors of the lords of creation.

इस प्रकार, सृष्टि के जीव एक ही ईश्वर से घिरे हुए हैं, सृष्टि के स्वामियों के विविध और अजीब व्यवहारों के साथ।

7.59.28

तथा निर्वेदशास्त्राणि निःशास्त्राणि तथैव च । कृमिक्रमसमारम्भदेवादिप्राणिमन्ति च ॥ २८ ॥

tathā nirvēdaśāstrāṇi niḥśāstrāṇi tathaiva ca | kṛmikramasamārambhadēvādiprāṇimanti ca || 28 ||

Thus, the scriptures of detachment and those without scriptures, as well as the beings starting from worms to gods.

इस प्रकार, वैराग्य के शास्त्र और शास्त्रहीन, साथ ही कीटों से लेकर देवताओं तक के जीव।

7.59.29

जात्या तु पारम्पर्येण संकेताचारवन्ति च । तथा नित्यप्रकाशानि ज्वलिताग्निमयानि च ॥ २९ ॥

jātyā tu pāramparyeṇa saṃkētācāravanti ca | tathā nityaprakāśāni jvalitāgnimayāni ca || 29 ||

By birth, through tradition, they follow symbolic practices, and thus they are eternally radiant, like blazing fire.

जन्म से, परंपरा के द्वारा, वे प्रतीकात्मक आचारों का अनुसरण करते हैं, और इस प्रकार वे नित्य प्रकाशमान हैं, जलती हुई आग की तरह।

7.59.30

तथा जलैकपूर्णानि पवनैकमयानि च । स्तब्धानि परमाकाशे वहन्ति च तथानिशम् ॥ ३० ॥

tathā jalaikapūrṇāni pavanaiakamayāni ca | stabdhāni paramākāśe vahanti ca tathāniśam || 30 ||

Thus, they are filled with water and air, stationary in the supreme space, and they carry continuously.

इस प्रकार, वे जल और वायु से भरे हुए हैं, परम आकाश में स्थिर हैं, और वे निरंतर वहन करते हैं।

7.59.31

जायमानानि पुष्यन्ति परिपुष्टानि चाभितः । तिर्यग्गच्छन्ति चान्यानि पूर्णसर्वमयान्यपि ॥ ३१ ॥

jāyamānāni puṣyanti paripuṣṭāni cābhitaḥ | tiryaggacchanti cānyāni pūrṇasarvamayānyapi || 31 ||

Some beings are born and grow, while others are fully developed and move sideways, even those that are complete in every way.

कुछ प्राणी जन्म लेते हैं और बढ़ते हैं, जबकि दूसरे पूरी तरह से विकसित होते हैं और तिरछे चलते हैं, यहां तक कि वे जो हर तरह से पूर्ण हैं।

7.59.32

देवमात्रैकसर्गाणि नरमात्रमयानि च । दैत्यवृन्दमयान्येव कृमिनिर्विवराणि च ॥ ३२ ॥

devamātraiakasargāṇi narāmātramayāni ca | daityavṛndamayānyeva kṛminirvivarāṇi ca || 32 ||

Some beings are created solely by the divine, others are human-like, some are demonic, and others are like worms and insects.

कुछ प्राणी केवल दैवीय द्वारा बनाए गए हैं, दूसरे मनुष्यों के समान हैं, कुछ राक्षसों के समान हैं, और दूसरे कीड़ों और कीटों के समान हैं।

7.59.33

अन्तरन्तस्तदन्तश्च स्वकोशेऽप्यणुकं प्रति । जातानि जायमानानि कदलीदलपीठवत् ॥ ३३ ॥

antarantastadantaśca svakośe'pyaṇukaṃ prati | jātāni jāyamānāni kadalīdalapīṭhavat || 33 ||

Within the innermost and the outermost, in every cell of their own body, beings are born and continue to be born, like the layers of a banana leaf.

अंतरतम और बाहरी सबसे अंतिम तक, अपने शरीर की हर कोशिका में, प्राणी जन्म लेते हैं और जन्म लेते रहते हैं, केले के पत्ते की परतों की तरह।

7.59.34

परस्परमदृष्टानि नानुभूतानि वै मिथः । सैनिकस्वप्नजालानि जातानीव महान्त्यपि ॥ ३४ ॥

parasparamadṛṣṭāni nānubhūtāni vai mithaḥ | sainikasvapnajālāni jātānīva mahāntyapi || 34 ||

Though perceived by each other, they are not experienced by each other, like the vast network of a soldier's dreams.

हालांकि एक दूसरे द्वारा देखे जाते हैं, वे एक दूसरे द्वारा अनुभव नहीं किए जाते, जैसे एक सैनिक के स्वप्न का विशाल जाल।

7.59.35

विविधान्यप्यनन्तानि स्वच्छाकाशात्मकान्यलम् । अन्योन्यमन्यवृत्तीनि न मिथोऽन्यस्थितीनि च ॥ ३५ ॥

vividhānyapyanantāni svacchākāśātmakānyalam | anyonyamanyavṛttīni na mitho'nyasthitīni ca || 35 ||

Though diverse and infinite, they are pure and spacious by nature, not interdependent or situated in each other.

हालांकि विविध और अनंत हैं, वे स्वभाव से शुद्ध और विराट हैं, परस्पर निर्भर या एक दूसरे में स्थित नहीं हैं।

7.59.36

मिथश्चान्यान्यशास्त्राणि मिथोऽनन्तानि यानि च । अन्योन्यसन्निवेशानि मिथोऽन्योन्यानि यानि च ॥ ३६ ॥

mithaścānyānyaśāstrāṇi mitho'nanantāni yāni ca | anyonyasanniveśāni mitho'nyonyāni yāni ca || 36 ||

There are various other scriptures and countless others, and there are those that are interconnected with each other, and there are those that are mutually interdependent.

अन्य अनेक शास्त्र हैं और अनन्त अन्य हैं, और कुछ एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, और कुछ परस्पर आश्रित हैं।

7.59.37

अन्योन्यं परलोकानि मिथः सिद्धपुराणि च । अन्यादृशमहाभूतान्यन्यादृग्दिग्गिरीणि च ॥ ३७ ॥

anyonyaṃ paralokāni mithaḥ siddhapurāṇi ca | anyādṛśamahābhūtānyanyādṛgdiggiriṇi ca || 37 ||

There are other worlds and accomplished ancient texts, and there are great elements and directions that are different from each other.

अन्य लोक हैं और सिद्ध पुराण हैं, और अलग-अलग महाभूत और दिशाएँ हैं।

7.59.38

त्वादृशानुभवेहानामगम्याभ्यागतानि च । असमञ्जसरूपाणि कथ्यमानानि मादृशैः ओ ॥ ३८ ॥

tvādṛśānubhavehānāmagamyābhyāgatāni ca | asamañjasarūpāṇi kathyamānāni mādṛśaiḥ o || 38 ||

Those who have experiences like yours are unable to comprehend these incomprehensible and inconsistent forms that are being described by people like me.

आपके जैसे अनुभव वाले लोग इन अगम्य और असमंजस रूपों को समझ नहीं पाते हैं जो मेरे जैसे लोगों द्वारा वर्णित किए जाते हैं।

7.59.39

अणुवत्सेष्यमाणानि चिदादित्यांशुमण्डले । परमार्थश्रियो व्योम्नि रश्मिजालानि कुण्डले ॥ ३९ ॥

aṇuvatsyeṣyamāṇāni cidādityāṃśumaṇḍale | paramārthaśriyo vyomni raśmijālāni kuṇḍale || 39 ||

The minute particles that will remain in the orb of the sun of consciousness, the ultimate truth's glory in the sky, and the network of rays in the coil.

चेतना के सूर्य के मण्डल में रहने वाले अणुकण, आकाश में परमार्थ की शोभा, और कुण्डल में किरणों का जाल।

7.59.40

कानिचित्तानि तान्येव भूत्वा भूत्वा भवत्यलम् । कानिचित्तादृशान्येव जातानि वनपर्णवत् ॥ ४० ॥

kānicittāni tānyeva bhūtvā bhūtvā bhavatyalaṃ | kānicittādṛśānyeva jātāni vanaparṇavat || 40 ||

Some of these become sufficient by becoming what they are, and some are born like the leaves of a tree.

कुछ इनमें से अपने होने से पर्याप्त हो जाते हैं, और कुछ पेड़ के पत्तों की तरह जन्म लेते हैं।

7.59.41

अन्योन्यत्वाच्च सदृशान्यन्यानि सदृशान्यपि । कंचित्कालं सुसदृशान्यन्यान्येव च कानिचित् ॥ ४१ ॥

anyonyatvācca sadṛśānyanyāni sadṛśānyapi | kañcitkālaṃ susadṛśānyanyānyeva ca kānicit || 41 ||

Due to mutuality, some similar things are similar to each other, and some are very similar for a certain period.

परस्परता के कारण, कुछ समान चीजें एक-दूसरे से समान होती हैं, और कुछ एक निश्चित समय के लिए बहुत समान होती हैं।

7.59.42

फलानि तान्यनन्तानि परमार्थमहातरोः । अनन्यान्येव चान्यानि तन्मयान्येव वै ततः ॥ ४२ ॥

phalāni tānyanantāni paramārthamahātaroḥ | ananyānyeva cānyāni tanmayānyeva vai tataḥ || 42 ||

The fruits of those infinite great truths are not different from each other, and they are indeed pervaded by that.

उन अनंत महान सत्यों के फल एक-दूसरे से अलग नहीं हैं, और वे उससे व्याप्त हैं।

7.59.43

कानिचित्स्वल्पकल्पानि दीर्घकल्पानि कानिचित् । अन्यान्यनियतं भूरि नियतं भूरि कानिचित् ॥ ४३ ॥

kānicitsvalpakalpāni dīrghakalpāni kānicit | anyānyaniyataṃ bhūri niyataṃ bhūri kānicit || 43 ||

Some are of short duration, some are of long duration, some are abundant and fixed, and some are abundant and not fixed.

कुछ अल्पकालिक हैं, कुछ दीर्घकालिक हैं, कुछ अनियत और बहुत हैं, और कुछ नियत और बहुत हैं।

7.59.44

अन्यान्यज्ञातकालानि यदृच्छावशतः स्वयम् । जायमानानि पुष्टानि सुस्थिराणि स्थितानि च ॥ ४४ ॥

anyānyajñātakālāni yadṛcchāvaśataḥ svayam | jāyamānāni puṣṭāni susthirāṇi sthitāni ca || 44 ||

Some are born, nourished, stable, and established by themselves at unknown times by chance.

कुछ अज्ञात समय पर यदृच्छा से स्वयं उत्पन्न, पोषित, स्थिर और स्थापित होते हैं।

7.59.45

तानि शून्यत्वजालानि परमाकाशकोशके । अपरिज्ञातकालानि रूढान्यज्ञातदोषके ॥ ४५ ॥

tāni śūnyatvajālāni paramākāśakośake | aparijñātakālāni rūḍhānyajñātadoṣake || 45 ||

Those are the networks of emptiness in the supreme space, unknown in time, established in unknown faults.

वे परम आकाश में शून्यता के जाल हैं, अज्ञात समय में, अज्ञात दोषों में स्थापित हैं।

7.59.46

अब्ध्यर्काकाशमेर्वादि शतैरावलितान्यलम् । चिच्चमत्कारखे स्वप्नजालान्याभान्ति चाविलम् ॥ ४६ ॥

abdhyarkākāśameruvādi śatairāvalitānyalam | ciccmatkārakhe svapnajālānyābhānti cāvilam || 46 ||

The ocean, the sun, the sky, the earth, and other elements are covered by hundreds of waves, but in the space of consciousness, they appear like a web of dreams, without any real substance.

समुद्र, सूर्य, आकाश, पृथ्वी और अन्य तत्व सैकड़ों तरंगों से ढके हुए हैं, लेकिन चेतना के अंतरिक्ष में, वे स्वप्न के जाल की तरह प्रकट होते हैं, बिना किसी वास्तविक पदार्थ के।

7.59.47

अनुभूतेर्भ्रमात्मत्वात्कारणानामभावतः । पृथ्व्यादीनामहेतूनामत्यन्तं सन्त्यसन्ति च ॥ ४७ ॥

anubhūterbharmātmatvātkāraṇānāmabhāvataḥ | pṛthvyādīnāmahetūnāmatyantaṃ santyasantica || 47 ||

Due to the illusory nature of perception, the causes of the elements like earth do not truly exist, and thus, they both exist and do not exist.

अनुभूति के भ्रामक स्वभाव के कारण, पृथ्वी जैसे तत्वों के कारण वास्तव में मौजूद नहीं हैं, और इसलिए, वे दोनों मौजूद हैं और मौजूद नहीं हैं।

7.59.48

मृगतृष्णाम्बुभरवद्द्विचन्द्रव्योमवर्णवत् । संपन्नानि न सत्यानि सत्यान्यप्यनुभूतितः ॥ ४८ ॥

mṛgatṛṣṇāmbubharavaddvicandravyomavarṇavat | saṃpannāni na satyāni satyānyapyanubhūtitḥ || 48 ||

Like the mirage water and the double moon in the sky, the elements are perceived as real but are not truly real.

मृगतृष्णा जल और आकाश में दो चाँद की तरह, तत्व वास्तविक प्रतीत होते हैं लेकिन वास्तव में वास्तविक नहीं हैं।

7.59.49

चित्संकल्पनभस्येव भासमानानि भूरिशः । वासनावातनुन्नानि विलुठन्त्यात्मचेष्टितैः ॥ ४९ ॥

citsaṃkalpanabhasyeva bhāsamānāni bhūriśaḥ | vāsanāvātanunnāni viluṭhantyātmaceṣṭitaiḥ || 49 ||

Like the sky of mental constructs, the elements appear abundantly, driven by the winds of impressions, and dissolve through the activities of the self.

मानसिक निर्माणों के आकाश की तरह, तत्व प्रचुर मात्रा में प्रकट होते हैं, संस्कारों की हवाओं से चलाए जाते हैं, और आत्मा की गतिविधियों द्वारा विलीन हो जाते हैं।

7.59.50

सुरासुरादिमशका बहुशोदुम्बरद्रुमे । फलानि रसपूर्णानि घूर्णमानानि मारुतैः ॥ ५० ॥

surāsurādimashakā bahuśodumbaradrumē | phalāni rasapūrṇāni ghūrṇamānāni mārutaiḥ || 50 ||

Like the gods, demons, and other beings, the numerous fig trees bear fruits full of juice, swaying in the wind.

देवताओं, असुरों और अन्य प्राणियों की तरह, अनेक अंजीर के पेड़ रस से भरे फल देते हैं, जो हवा में झूलते हैं।

7.59.51

अभिजातस्वभावस्य सर्गारम्भकरस्य च । शुद्धचित्तत्त्वबालस्य संकल्पनगराणि खे ॥ ५१ ॥

abhijātasvabhāvasya sargārambhakarasya ca | śuddhacittattvabālasya saṃkalpanagarāṇi khe || 51 ||

The pure essence of the child-like mind, which is the beginning of creation and of noble nature, imagines cities in the sky.

शुद्ध चित्त तत्व के बाल स्वभाव जो सृष्टि का आरम्भ और उत्कृष्ट स्वभाव है, वह आकाश में नगरों की कल्पना करता है।

7.59.52

त्वमहं स इदं चेति धिया बलदृढान्यलम् । संपन्नान्यर्कदीप्त्येव पङ्ककीडनकानि च ॥ ५२ ॥

tvamahaṃ sa idaṃ ceti dhiyā baladṛḍhānyalam | saṃpannānyarkadīptyeva paṅkakrīḍanakāni ca || 52 ||

With the strong intellect, the thoughts of 'I am this' are firm, like the sun's radiance, and they play in the mud like children.

बलवान बुद्धि के साथ, 'मैं यह हूँ' के विचार दृढ़ हैं, जैसे सूर्य की चमक, और वे मिट्टी में खेलते हैं जैसे बच्चे।

7.59.53

वृत्तानि रसशालिन्या नियत्या नित्यतृप्तया । वनान्युग्रफलानीव वसन्तरसलेरवया ॥ ५३ ॥

vṛttāni rasśālinyā niyatyā nityatṛptyā | vanānyugraphalānīva vasantarasalervayā || 53 ||

The actions are filled with joy, bound by destiny, and always satisfied, like forests bearing abundant fruits in the joy of spring.

कर्म आनंद से भरे हैं, नियति से बंधे हैं, और हमेशा संतुष्ट हैं, जैसे वसंत के आनंद में अधिक फल देने वाले वन।

7.59.54

महाकर्तृण्यकर्तृणि न कृतान्येव खानि वा । स्वयं संपन्नरूपाणि चिद्व्योन्येव कृतानि वा ॥ ५४ ॥

mahākartṛṇyakartṛṇi na kṛtānyeva khāni vā | svayaṃ saṃpannarūpāṇi cidvyonyeva kṛtāni vā || 54 ||

The great doers are not the doers, nor are they made by anyone else. They are self-fulfilled, as if created by the pure consciousness itself.

महान कर्ता कर्ता नहीं हैं, न ही किसी और के द्वारा बनाए गए हैं। वे स्वयं पूर्ण हैं, जैसे शुद्ध चेतना से ही बनाए गए हैं।

7.59.55

परमार्थमयान्येव तदन्यद्वोदितान्यपि । अलब्धान्येव लब्धानि सदाऽसन्त्येव सन्ति च ॥ ५५ ॥

paramārthamayānyeva tadanyadvoditānyapi | alabdhānyeva labdhāni sadā'santyeva santi ca || 55 ||

The ultimate truth is always present, even when it is described differently. The unattained is always attained, and the non-existent always exists.

परमार्थ हमेशा उपस्थित है, चाहे उसे अलग-अलग तरीके से वर्णित किया जाए। अप्राप्त हमेशा प्राप्त है, और अस्तित्वहीन हमेशा अस्तित्व में है।

7.59.56

चतुर्दशदशैकादिविधभूतगणानि च । पुनस्तान्येव तान्यन्तरन्यान्यन्यान्यथो बहिः ॥ ५६ ॥

caturdaśadaśaikādividhabhūtagaṇāni ca | punastānyeva tānyantarananyānyanyānyatho bahiḥ || 56 ||

The various beings, such as the fourteen, ten, one, and so on, are again those very beings, different internally and externally.

चौदह, दस, एक आदि विध भूतगण फिर से वही हैं, अन्तर और बाहर से भिन्न-भिन्न।

7.59.57

नरकस्वर्गपातालबन्धुमित्रमयान्यपि । महारम्भमयान्येव शून्यानि परमार्थतः ॥ ५७ ॥

narakasvargapātālabandhumitramayānyapi | mahārambhamayānyeva śūnyāni paramārthataḥ || 57 ||

Even those that are hell, heaven, underworld, relatives, and friends are merely grand creations and are ultimately empty in reality.

नरक, स्वर्ग, पाताल, बन्धु, मित्र आदि भी महान रचनाएँ हैं और वास्तव में शून्य हैं।

7.59.58

क्षीराम्बुधेर्जलानीव स्नेहसाराणि सर्वतः । तरङ्गभङ्गुराण्यन्तर्बहिश्चावृत्तिमन्ति च ॥ ५८ ॥

kṣīrāmbudherjalānīva snehasārāṇi sarvataḥ | taraṅgabhaṅgurāṇyantarbahiścāvṛttimanti ca || 58 ||

Like the waters of the ocean of milk, they are the essence of affection everywhere, with wavy movements internally and externally.

क्षीर समुद्र के जलों की तरह, ये सर्वत्र स्नेह के सार हैं, जिनमें अन्तर और बाहर तरंगों की तरह गति है।

7.59.59

आभासमात्ररूपाणि तेजस्यात्मविवस्वतः । जातानीव स्वतस्तानि स्पन्दनानि नभस्वतः ॥ ५९ ॥

ābhāsamātrarūpāṇi tejasyātmavivasvataḥ | jātānīva svatastāni spandanāni nabhasvataḥ || 59 ||

They are mere appearances, the forms of the radiant self-luminous essence, as if born of themselves, like the vibrations of the sky.

ये केवल आभास मात्र हैं, चमकीले आत्म-प्रकाशमान सार के रूप, जैसे स्वयं से उत्पन्न, आकाश की कंपनों की तरह।

7.59.60

वृक्षरूपाणि पत्राणां बुद्ध्यहंकारचेतसाम् । असतामप्यसन्त्येव स्वप्ने न्यस्तनृणामिव ॥ ६० ॥

vṛkṣarūpāṇi patrāṇāṃ buddhyahaṃkāracetasām | asatāmapyasantyeva svapne nyastanṛṇāmiva || 60 ||

The forms of trees are like the leaves, intellect, ego, and consciousness of the unreal, as if they are non-existent, like debts placed in a dream.

वृक्षों के रूप पत्तों, बुद्धि, अहंकार, और चेतना के समान हैं, जो असत् हैं, जैसे स्वप्न में रखे गए ऋण की तरह अस्तित्वहीन हैं।

7.59.61

पुराणवेदसिद्धान्तकल्पनातल्पपालिषु घननिद्राणि सुप्तानि बिभ्रन्ति शवतामिव ॥ ६१ ॥

purāṇavedasiddhāntakalpanātalpapāliṣu ghananidrāṇi suptāni bibhranti śavatāmiva || 61 ||

In the beds of the Puranas, Vedas, and philosophical theories, they sleep deeply, as if they were corpses.

पुराण, वेद और दार्शनिक सिद्धांतों के पलंगों पर वे गहरी नींद सोते हैं, जैसे कि वे शव हों।

7.59.62

परमार्थमहारण्ये चिद्गन्धर्वकृतानि वै सूर्यदीपकदीप्तानि गृहाणि गहनात्मनि ॥ ६२ ॥

paramārthamahāraṇye cidgandharvakṛtāni vai sūryadīpakadīptāni gṛhāṇi gahanātmani || 62 ||

In the great forest of ultimate truth, the houses created by the celestial beings of consciousness are illuminated by the sun-like lamps, deep within.

परम सत्य के महान वन में, चेतना के दिव्य प्राणियों द्वारा बनाए गए घर सूर्य की तरह दीपों से प्रकाशित होते हैं, गहराई में।

7.59.63

प्रजायमानानि नभस्यनन्ते विशीर्यमाणानि च निर्निमित्तम् तदा त्वहं वै तिमिराक्षदृष्टकेशोण्ड्रकानीव जगन्त्यपश्यम् ॥ ६३ ॥

prajāyamānāni nabhasyanante viśīryamāṇāni ca nirnimittam tadā tvahaṃ vai timirākṣadṛṣṭakeśoṇḍrakānīva jagantyapaśyam || 63 ||

At that time, I saw the universe as if it were being born and dissolving endlessly in the infinite sky without any cause, like dark-eyed and hair-tufted beings.

उस समय, मैंने ब्रह्मांड को देखा जैसे कि वह अनंत आकाश में कारण रहित अनंत रूप से उत्पन्न और विलीन हो रहा हो, जैसे कि काले नेत्रों और केश-जूड़ों वाले प्राणी।

Chapter 60

7.60.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततोऽहमभितो भ्रान्तस्तादृशं प्रविचारयन् । बहुकालमसंरुद्धसंविदाकाशतां गतः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tato'hamabhito bhrāntastādṛśaṃ pravicārayan | bahukālamasaṃruddhasaṃvidākāśatāṃ gataḥ || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then, I wandered around, contemplating such a state, and for a long time, I remained in a state of unobstructed consciousness.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, मैं ऐसी अवस्था पर विचार करते हुए भटकता रहा, और लंबे समय तक मैं अवरुद्ध चेतना की अवस्था में रहा।

7.60.2

शब्दं पश्चात्तमश्रौषमहं वीणास्वनोपमम् । क्रमात्स्फुटपदं जातं तत आर्यात्वमागतम् ॥ २ ॥

śabdaṃ paścāttamaśrauṣamahaṃ vīṇāsvanopamam | kramātsphuṭapadaṃ jātaṃ tata āryātvamāgatam || 2 ||

Then I heard a sound similar to the melody of a veena, which gradually became clear words, and then it attained the status of a noble verse.

तब मैंने एक ध्वनि सुनी जो वीणा की धुन के समान थी, जो धीरे-धीरे स्पष्ट शब्दों में बदल गई, और फिर उसने एक उत्कृष्ट श्लोक का रूप लिया।

7.60.3

शब्ददेशपतद्दृष्टिर्दृष्टवान्वनितामहम् । पार्श्वे कनकनिष्पन्दप्रभया भासिताम्बराम् ॥ ३ ॥

śabdadeśapatadvṛṣṭirdṛṣṭavānvaniāmaham | pārśve kanakaniṣpandaprabhayā bhāsitāmbarām || 3 ||

I saw a woman in the direction of the sound, shining with the radiance of golden light, adorned with glittering ornaments.

मैंने ध्वनि की दिशा में एक स्त्री देखी, जो सुनहरी प्रकाश की चमक से चमक रही थी, चमकीले आभूषणों से सजी हुई।

7.60.4

आलोलमाल्यवसनामलकाकुललोचनाम् । लोलद्धम्मिल्लवलनामन्यां श्रियमिवागताम् ॥ ४ ॥

ālolamālyavasanāmalakākulalocanām | loladdhammillavalanāmanyāṃ śriyamivāgatām || 4 ||

She was adorned with swaying garlands and clothes, with eyes filled with joy, and her hair was waving, as if another goddess of fortune had arrived.

वह लहराते मालाओं और वस्त्रों से सजी हुई थी, आनंद से भरी आँखों वाली, और उसके बाल लहरा रहे थे, मानो दूसरी लक्ष्मी आई हो।

7.60.5

कान्तकाञ्चनगौराङ्गीं मार्गस्थनवयौवनाम् । वनदेवीमिवामोदिसर्वावयवसुन्दरीम् ॥ ५ ॥

kāntakāñcanagaurāṅgīṃ mārgasthanavayauvanām | vanadevīmivāmodisarvāvayavasundarīm || 5 ||

She had a beautiful golden complexion, was in the prime of her youth, and was as delightful as a forest goddess, with every part of her body beautiful.

उसका रंग सुनहरा और सुंदर था, वह यौवन की अवस्था में थी, और वह एक वनदेवी की तरह आनंददायक थी, जिसके शरीर का हर अंग सुंदर था।

7.60.6

सा पूर्णचन्द्रवदना पुष्पप्रकरहासिनी । यौवनोद्दामवदना पक्ष्मलक्षणशालिनी ॥ ६ ॥

sā pūrṇacandravadanā puṣpaprakarahāsinī | yauvanoddāmavadanā pakṣmalakṣaṇaśālinī || 6 ||

She has a face like the full moon, smiles like a cluster of flowers, has a youthful and radiant face, and has beautiful eyelashes.

उसका चेहरा पूर्ण चंद्रमा के समान है, फूलों के गुच्छे की तरह मुस्कुराती है, युवा और चमकदार चेहरा है, और सुंदर पलकें हैं।

7.60.7

आकाशकोशसदना शशाङ्करसुंदरीमुक्ताकलापरचना कांता मदनुसारिणी ॥ ७ ॥

ākāśakośasadanā śaśāṅkakarasundarīmuktākalāparacanā kāntā madanusāriṇī || 7 ||

She is like the sky, beautiful like the moon, adorned with pearls, and follows the path of love.

वह आकाश के समान है, चंद्रमा के समान सुंदर है, मोती से अलंकृत है, और प्रेम के पथ पर चलती है।

7.60.8

स्वरेण मधुरेणैवमार्यामार्यविलासिनी । पपाठाकठिनं वामा मत्पार्श्वे मृदुहासिनी ॥ ८ ॥

svareṇa madhureṇaivamāryāmāryavilāsinī | papāṭhākaṭhinaṃ vāmā matpārśve mṛduhāsinī || 8 ||

With a sweet voice, she is a noble lady who enjoys noble pleasures. She recited harsh words softly, standing by my side with a gentle smile.

मधुर स्वर से, वह एक आर्य महिला है जो आर्य विलास का आनंद लेती है। वह मेरे पास खड़ी होकर कठोर शब्दों को कोमलता से पढ़ती है, एक कोमल मुस्कान के साथ।

7.60.9

असदुचितरिक्तचेतनसंसृतिसरिति प्रमुह्यमानानाम् । अवलम्बनतटविटपिनमभिनौमि भवन्तमेव मुने ॥ ९ ॥

asaducitariktacetanasaṅsṛtisariti pramuhyamānānām | avalambanataṭaviṭapinamabhinauṃi bhavantameva mune || 9 ||

For those who are bewildered by the flow of consciousness devoid of proper conduct, I bow to you, O sage, as the supporting tree.

उन लोगों के लिए जो उचित आचरण से रहित चेतना के प्रवाह से भ्रमित हैं, मैं आपको, हे मुनि, सहारा देने वाले वृक्ष के रूप में प्रणाम करता हूँ।

7.60.10

इत्याकर्ण्याहमालोक्य तां चारुवदनस्वनाम् । ललनेयं किमनयेत्यनादृत्यैव तां गतः ॥ १० ॥

ityākarṇyāhamālokya tāṃ cāruvadanasvanām | lalaneyaṃ kimanayetyanādṛtyaiva tāṃ gataḥ || 10 ||

Having heard and seen her with a beautiful voice and face, I wondered, 'What does this charming lady intend?' and without paying attention to her, I left.

उसकी मधुर आवाज और सुंदर चेहरे को सुनकर और देखकर, मैंने सोचा, 'इस मोहक महिला का क्या इरादा है?' और उसकी परवाह किए बिना, मैं चला गया।

7.60.11

ततो जगद्वृन्दमयीं मायां संप्रेक्ष्य विस्मितः । अनादृत्यैव तां व्योम्नि विहर्तुमहमुद्यतः ॥ ११ ॥

tato jagadvṛndamayīṃ māyāṃ saṃprekṣya vismitaḥ | anādṛtyaiva tāṃ vyomni vihartumahamudyataḥ || 11 ||

Then, seeing the world-enchanting illusion, I was amazed. Disregarding it, I was eager to roam in the sky.

तब, संसार-मोहक माया देखकर, मैं आश्चर्यचकित हो गया। उसे अनदेखा करके, मैं आकाश में विचरण करने के लिए उत्सुक हो गया।

7.60.12

ततस्तां तत्कृतां चिन्तामलमुत्सृज्य खे स्थिताम्जगन्मायां कलयितुं व्योमात्माहं प्रवृत्तवान्॥ १२ ॥

tatastāṃ tatkṛtāṃ cintāmalamutsṛjya khe sthitāmjaganmāyāṃ kalayituṃ vyomātmāhaṃ pravṛttavān || 12 ||

Then, abandoning the impure thoughts created by that, I, the sky-self, began to imagine the world-illusion situated in the sky.

फिर, उससे उत्पन्न अशुद्ध विचारों को त्यागकर, मैं, आकाश-आत्मा, आकाश में स्थित संसार-माया की कल्पना करने लगा।

7.60.13

प्रमत्तपुष्करावर्तानुन्मत्तोत्पातमारुतान्। स्फुटिताद्रीन्दृढाकारघटितब्रह्ममण्डपान्॥ १३ ॥

pramattapuṣkarāvartānunmattotpātamārutān | sphuṭitādrīndṛḍhākāraghaṭitabrahammaṇḍapān || 13 ||

The careless whirlpools, the mad storms, the split mountains, the firmly shaped Brahma pavilions.

लापरवाह भँवर, पागल आँधी, फटे हुए पर्वत, दृढ़ आकार वाले ब्रह्म मंडप।

7.60.14

न पश्यन्ति न शृण्वन्ति कदाचित्कानिचित्कचित्। तानि कल्पमहाकल्पमहाजन्मैकतान्यथ॥ १४ ॥

na paśyanti na śṛṇvanti kadācitkānicitkvacit | tāni kalpamahākalpamahājanmaikatānyatha || 14 ||

They do not see, they do not hear, sometimes, somewhere, those great creations, great dissolutions, and great births.

वे नहीं देखते, नहीं सुनते, कभी-कभी, कहीं-कहीं, उन महान सृष्टियों, महान प्रलयों, और महान जन्मों को।

7.60.15

न पश्यन्ति न शृण्वन्ति कदाचित्कानिचित्तानि कल्पमहाकल्पमहाजन्मैकतान्यथा॥ १५॥

na paśyanti na śṛṇvanti kadācitkānicittāni kalpamahākalpamahājanmaikatānyatha || 15 ||

They do not see or hear anything at any time, whether it be a moment, an eon, or a great birth, all are the same.

वे कभी भी कुछ नहीं देखते हैं या सुनते हैं, चाहे वह एक क्षण हो, एक कल्प हो, या एक महाजन्म, सभी एक समान हैं।

7.60.16

ज्वलत्कल्पाग्निविस्फोटचटदैडविडास्पदान्। प्रतपद्द्वादशाकारकन्दुमार्तण्डमण्डलान्॥ १६ ॥

jvalatkalpāgnivisphoṭacaṭadaiḍaviḍāspadān | pratapaddvādaśākārakandumārtaṇḍamaṇḍalān || 16 ||

The blazing flames of the universal fire, the bursting of the universe, the glowing suns in the twelve forms.

विश्व-अग्नि की ज्वालाएँ, ब्रह्मांड का फटना, बारह रूपों में चमकते सूर्य।

7.60.17

लुठत्सुरपुरव्रातविततक्रन्दघर्घरान्। रणसर्वाद्रिकटकश्रेणीनिगिरणोद्भटान्॥ १७ ॥

luṭhatsurapuravrātavitatākranda ghargharān | raṇasarvādrikatakaśreṇīnigiraṇodbhaṭān || 17 ||

The roaring and clamoring of the battlefields, the echoing of the mountains, the thunderous sounds of the war cries, and the fierce sounds of the battlefields.

युद्धभूमि की गर्जना और कोलाहल, पर्वतों की गूंज, युद्ध के घोषणा स्वर और युद्धभूमि के भयंकर शब्द।

7.60.18

कल्पाग्निज्वलनोल्लासपठत्पटपटारवान्। आत्मभ्रंशबृहत्क्षोभक्षुब्धाम्बरमहार्णवान्॥ १८॥

kalpāgni jvalanollāsa paṭhatpaṭapāṭāravān | ātmabhraṃśabṛhatkṣobhakṣubdhāmbaramahārṇavān || 18 ||

The blazing fire of destruction, the crackling sounds, the great agitation of the self, the turbulent sky, and the vast ocean.

विनाश की भीषण अग्नि, चटकने की आवाजें, आत्मा का महान क्षोभ, अशांत आकाश, और विशाल समुद्र।

7.60.19

देवासुरनरागारघर्घराक्रन्दकर्कशान्। सप्तार्णवमहापूरपूरितार्केन्दुमण्डलान्॥ १९॥

devāsura narāgāra ghargharākranda karkaśān | saptārṇava mahāpūra pūritārkendu maṇḍalān || 19 ||

The harsh cries of gods, demons, and humans, the seven great oceans filled with the light of the sun and moon.

देवताओं, असुरों और मनुष्यों के कठोर चीत्कार, सूर्य और चंद्रमा के प्रकाश से भरे सात महान समुद्र।

7.60.20

न विचेतन्ति कल्पान्तान्सर्वाण्येवपरस्परम्। एकमन्दिरसंसुप्ताः स्वप्ने रणरयानिव॥ २०॥

na vicetanti kalpāntān sarvāṇy eva parasparam | ekamandira saṃsuptāḥ svapne raṇarayāniva || 20 ||

They do not perceive the end of the cosmic cycle, all of them, as if asleep in a single temple, dreaming of the turmoil of battle.

वे ब्रह्मांडीय चक्र के अंत को नहीं समझते, सभी, जैसे एक मंदिर में सोए हुए, युद्ध की उथल-पुथल का सपना देख रहे हों।

7.60.21

तत्र रुद्रसहस्राणि ब्रह्मकोटिशतानि च। दृष्टानि विष्णुलक्षाणि कल्पवृन्दान्यलं मया॥ २१॥

tatra rudra sahasrāṇi brahmakoṭi śatāni ca | dṛṣṭāni viṣṇu lakṣāṇi kalpavṛndāny alaṃ mayā || 21 ||

There, I saw thousands of Rudras, hundreds of millions of Brahmas, and hundreds of thousands of Vishnus, countless cosmic cycles.

वहाँ, मैंने हजारों रुद्र, अरबों ब्रह्मा, और लाखों विष्णु देखे, अनगिनत ब्रह्मांडीय चक्र।

7.60.22

तत्र क्वचिदनादित्ये निरहोरात्रभूतले। आकल्पयुगवर्षान्ते जगत्यूहैः क्षयोदयः॥ २२॥

tatra kvacidanāditye nirahorātrabhūtale | ākalpayugavarṣānte jagatyūhaiḥ kṣayodayah || 22 ||

In that place, where there is no sun, no day or night, at the end of the kalpa, yuga, and year, the world is destroyed and arises again.

उस स्थान पर, जहाँ सूर्य नहीं है, न दिन है न रात, कल्प, युग और वर्ष के अंत में, जगत नष्ट होता है और फिर से उत्पन्न होता है।

7.60.23

चिति सर्वं चितः सर्वं चित्सर्वं सर्वतश्च चित्। चित्सत्सर्वात्मिकेत्येतदृष्टं तत्र मयाखिलम्॥ २३॥

citi sarvaṃ citaḥ sarvaṃ citsarvaṃ sarvataśca cit | citsatsarvātmiketyetaddṛṣṭaṃ tatra mayākhilam || 23 ||

Everything is consciousness, consciousness is everything, consciousness is all and everywhere. This truth of the self being pure consciousness has been realized by me completely.

सब कुछ चेतना है, चेतना सब कुछ है, चेतना सब और हर जगह है। यह सत्य कि आत्मा शुद्ध चेतना है, मैंने पूरी तरह से जान लिया है।

7.60.24

त्वं किंचिदिति चेद्वक्षि तत्र किं चिदिवाङ्ग चित् । सा हि शून्यतमा व्योम्नो न च नाम न किंचन ॥ २४ ॥

tvaṃ kiṃciditi cedvakṣi tatra kiṃ cidivāṅga cit | sā hi śūnyatamā vyomno na ca nāma na kiṃcana || 24 ||

If you say 'you are something', then what is that something? It is like the emptiness of space, without name or form.

अगर आप कहते हैं 'तुम कुछ हो', तो वह कुछ क्या है? वह आकाश की शून्यता की तरह है, जिसका नाम या रूप नहीं है।

7.60.25

तदाकाशमिदं भाति जगदित्यभिशब्दितम् । तेनैव शब्दनभसा सर्वे हि परमं नभः ॥ २५ ॥

tadākāśamidaṃ bhāti jagadityabhiśabditam | tenaiva śabdanabhasā sarve hi paramaṃ nabhaḥ || 25 ||

This space appears as the world, named as such. By that very sound of space, all indeed is the supreme space.

यह आकाश जगत के रूप में प्रकट होता है, जिसे ऐसा नाम दिया गया है। उसी आकाश की ध्वनि से, सब कुछ परम आकाश ही है।

7.60.26

दृश्यदृष्टिरियं भ्रान्तिराकाशतरुमञ्जरी । चिद्व्योमाङ्ग कमेवेति तत्राहमनुभूतवान् ॥ २६ ॥

dṛśyadṛṣṭiriyam bhrāntirākāśatarumañjarī | cidvyomāṅga kameveti tatrāhamanubhūtavān || 26 ||

This perception and the perceived are illusions, like a tree in the sky. What is the desire in the expanse of consciousness? I have experienced that there.

यह दृश्य और दृष्टि भ्रम है, जैसे आकाश में पेड़ की मञ्जरी। चेतना के विस्तार में इच्छा क्या है? मैंने वहाँ उसे अनुभव किया है।

7.60.27

बुद्ध्याकाशैकरूपेण व्यापिना बोधरूपिणा । तत्रानन्तेन संकल्पमनुभूतमिदं मया ॥ २७ ॥

buddhyākāśaikarūpeṇa vyāpinā bodharūpiṇā | tatrānantena saṃkalpamanubhūtamidaṃ mayā || 27 ||

By the all-pervading form of the intellectual sky, which is the nature of consciousness, I have experienced this infinite resolve there.

बुद्धि के आकाश के एक रूप से, जो सब कुछ व्याप्त करता है और चेतना का स्वरूप है, मैंने वहाँ इस अनन्त संकल्प का अनुभव किया है।

7.60.28

ब्रह्मव्योम जगज्जालं ब्रह्मव्योम दिशो दश । ब्रह्मव्योम कलाकालदेशद्रव्यक्रियादिकम् ॥ २८ ॥

brahmavyoma jagajjālaṃ brahmavyoma diśo daśa | brahmavyoma kalākāladēśadravyakriyādikam || 28 ||

The Brahma-sky is the web of the universe, the Brahma-sky is the ten directions, the Brahma-sky is the time, place, substance, and action.

ब्रह्म आकाश सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का जाल है, ब्रह्म आकाश दसों दिशाओं का है, ब्रह्म आकाश समय, स्थान, पदार्थ और क्रिया है।

7.60.29

तत्राहमिव संसारशते भाते मुनीश्वराः । दृष्टा वसिष्ठनामानो ब्रह्मपुत्राः सदुत्तमाः ॥ २९ ॥

tatrāhamiva saṃsāraśatē bhātē munīśvarāḥ | dṛṣṭā vasiṣṭhanāmānō brahmaputrāḥ saduttamāḥ || 29 ||

There, I appear as if in hundreds of worlds, O great sages, the best of the good, the sons of Brahma, named Vasistha, are seen.

वहाँ, मैं सैकड़ों संसारों में प्रकट होता हूँ, हे महान ऋषियो, उत्तम सज्जन, ब्रह्मा के पुत्र, वसिष्ठ नामक, दिखाई देते हैं।

7.60.30

ब्रह्मन्द्वासप्ततिस्त्रेताः सर्वा एव सराघवाः । तत्र दृष्टं कृतशतं द्वापराणां शतं तथा ॥ ३० ॥

brahmandvāsaptatis tretāḥ sarvā eva sarāghavāḥ | tatra dṛṣṭaṃ kṛtaśataṃ dvāparāṇāṃ śataṃ tathā || 30 ||

All the seventy Brahmanda-Dvaparas and Treta Yugas are full of Raghavas. There, a hundred Krita Yugas and a hundred Dvapara Yugas are seen.

सभी सत्तर ब्रह्माण्ड-द्वापर और त्रेता युग रघुवंशियों से भरे हुए हैं। वहाँ, सौ कृत युग और सौ द्वापर युग दिखाई देते हैं।

7.60.31

भेदोदयेन वै दृष्टास्तास्ताः सर्गदशास्तथा । बोधेन चेत्तदत्यच्छमेकं ब्रह्म नभस्ततम् ॥ ३१ ॥

bhedodayena vai dṛṣṭāstāstāḥ sargadaśāstathā | bodhena cet tadatyacchamekaṃ brahma nabhastatam || 31 ||

By the rise of differences, indeed, those various states of creation are seen. But by knowledge, that is transcended, the one Brahma is the supreme sky.

भेदों के उदय से, वास्तव में, वे विभिन्न सृष्टि की दशाएँ दिखाई देती हैं। लेकिन ज्ञान से, वह अतिक्रान्त हो जाता है, एक ब्रह्म ही परम आकाश है।

7.60.32

नेदं ब्रह्मणि नामास्ति जगद्ब्रह्मण्यथ त्विदम् । ब्रह्मैवाजमनाद्यन्तं तत्सर्वं तत्पदादिकम् ॥ ३२ ॥

nedaṃ brahmaṇi nāmāsti jagadbrahmaṇyatha tvidam | brahmaivājamanādyantaṃ tatsarvaṃ tatpadādikam || 32 ||

This world is not different from Brahman; it is Brahman itself. Brahman is the beginningless and endless cause of everything.

यह जगत ब्रह्म से भिन्न नहीं है; यह ब्रह्म ही है। ब्रह्म अनादि और अनंत है, और सब कुछ का कारण है।

7.60.33

पाषाणमौनप्रतिमं नकिंचिदभिशब्दितम् । यत्तत्किंचिदिति द्योतरूपं ब्रह्म जगत्स्मृतम् ॥ ३३ ॥

pāṣāṇamounapratimaṃ nakiṃcidabhiśabditam | yattatkiṃciditi dyotarūpaṃ brahma jagatsmṛtam || 33 ||

Like a stone statue, it is not expressed by any word. That which is known as 'something' is the luminous form of Brahman, remembered as the world.

जैसे पत्थर की मूर्ति, यह किसी शब्द से अभिव्यक्त नहीं होता। जो 'कुछ' कहलाता है, वह ब्रह्म का प्रकाशमय रूप है, जिसे जगत के रूप में याद किया जाता है।

7.60.34

विभात्यचेत्यं चिद्व्योम्नि स्वसत्तैव जगत्तया । निराकारे निराकारा स्वप्नानुभवसंनिभा ॥ ३४ ॥

vibhātyacetyaṃ cidvyomni svasattaiava jagattayā | nirākāre nirākārā svapnānubhavasaṃnibhā || 34 ||

The insentient world appears in the conscious space of Brahman by its own existence. Formless in the formless, it is like a dream experience.

अचेतन जगत ब्रह्म के चेतन आकाश में अपनी सत्ता से प्रकट होता है। निराकार में निराकार, यह स्वप्न के अनुभव के समान है।

7.60.35

अनन्यमात्मनो ब्रह्म सर्वं भामात्ररूपकम् । प्रकाशनमिवालोकः करोति न करोति च ॥ ३५ ॥

ananyamātmano brahma sarvaṃ bhāmātrarūpakam | prakāśanamivālokaḥ karoti na karoti ca || 35 ||

Brahman, which is non-different from the self, is the form of pure existence. It illuminates like vision, both acting and not acting.

आत्मा से भिन्न न होने वाला ब्रह्म शुद्ध अस्तित्व का रूप है। यह दृष्टि की तरह प्रकाशित करता है, करता है और नहीं भी करता।

7.60.36

तेषु नामानुभूयन्ते जगल्लक्षेषु तत्र वै । उष्णानि चन्द्रबिम्बानि सूर्याः शीतलमूर्तयः ॥ ३६ ॥

teṣu nāmānubhūyante jagallakṣeṣu tatra vai | uṣṇāni candrabimbāni sūryāḥ śītalamūrtayaḥ || 36 ||

In the world, names and experiences are perceived. There, the suns are cool forms, and the moon's disks are hot.

जगत में, नाम और अनुभव अनुभूत होते हैं। वहाँ, सूर्य ठंडे रूप हैं, और चंद्रमा के डिस्क गर्म हैं।

7.60.37

प्रजास्तमसि पश्यन्ति पश्यन्त्येव न तेजसि । उलूकस्य समाचारास्तस्यैव सदृशास्वराः ॥ ३७ ॥

prajāstamasi paśyanti paśyantyeva na tejasi | ulūkasya samācārāstasyeva sadṛśasvarāḥ || 37 ||

People see only darkness, not the light. Their behavior is like that of an owl, which is active only in the dark.

लोग अंधेरे को देखते हैं, प्रकाश को नहीं। उनका व्यवहार उल्लू जैसा है, जो केवल अंधेरे में सक्रिय होता है।

7.60.38

इतः शुभेन नश्यन्ति यान्ति पापैस्तथा दिवम् । विषाशनेन जीवन्ति म्रियन्तेऽमृतभोजनैः ॥ ३८ ॥

itaḥ śubhena naśyanti yānti pāpais tathā divam | viṣāśanena jīvanti mriyante'mṛtabhojanaiḥ || 38 ||

From this, the virtuous perish, and the sinful go to heaven. Those who consume poison live, and those who consume nectar die.

इससे पुण्यवान नष्ट होते हैं, और पापी स्वर्ग जाते हैं। जो विष खाते हैं वे जीवित रहते हैं, और जो अमृत खाते हैं वे मर जाते हैं।

7.60.39

यद्यथा बुध्यते बोधे यथोदेत्यथवा स्वतः । तथाशु स्फुटतामेति सद्वासद्वा तदेव तत् ॥ ३९ ॥

yadyathā budhyate bodhe yathodetyathavā svataḥ | tathāśu sphuṭatāmeti sadvāsadvā tadeva tat || 39 ||

Whatever is understood in knowledge, whether it arises spontaneously or not, it immediately becomes clear, whether it is true or false.

जो कुछ भी ज्ञान में समझा जाता है, चाहे वह स्वतः उत्पन्न हो या नहीं, वह तुरंत स्पष्ट हो जाता है, चाहे वह सत्य हो या असत्य।

7.60.40

विटपाकारमूलौघदर्शनाद्वज्रशोभिभिः । घूर्णते पत्रपुष्पाभैः पादपैर्व्योम्नि काननम् ॥ ४० ॥

viṭapākāramūlaughadarśanādvajraśobhibhiḥ | ghūrṇate patrapuṣpābhaiḥ pādapairvyomni kānanam || 40 ||

By the sight of the roots of the tree-like clouds, adorned with lightning, the forest of trees with leaves and flowers whirls in the sky.

मेघों की वृक्ष-जैसी जड़ों के दर्शन से, जो बिजली से सजे हैं, पत्तों और फूलों से युक्त वृक्षों का वन आकाश में घूमता है।

7.60.41

सिकताः पीडिताः सत्यः स्रवन्ति स्नेहजं रसम् । शिलाफलककेभ्यश्च जायन्ते कमलान्यलम् ॥ ४१ ॥

sikatāḥ pīḍitāḥ satyaḥ sravanti sneha jaṃ rasam | śilāphalakakebhyaśca jāyante kamalānyalam || 41 ||

The oppressed grains of sand flow with the juice of affection. From the stone slabs, lotuses are born effortlessly.

पीड़ित बालू के कण स्नेह के रस से बहते हैं। पत्थर की पटियों से कमल बिना किसी प्रयास के उत्पन्न होते हैं।

7.60.42

दारुण्यश्मनि भित्तौ च चञ्चलाः शालभञ्जिकाः । देवाङ्गनाभिः सहितं गायन्ति कथयन्ति च ॥ ४२ ॥

dāruṇyaśmani bhittau ca cañcalāḥ śālabhañjikāḥ | devāṅganābhiḥ sahitaṃ gāyanti kathayanti ca || 42 ||

In the cruel stone walls, the restless Śālabhañjikās, along with the divine maidens, sing and narrate.

क्रूर पत्थर की दीवारों पर, बेचैन शालभञ्जिकाएँ, देवांगनाओं के साथ, गाती हैं और कहानियाँ सुनाती हैं।

7.60.43

मेघान्परिदधत्युच्चैर्भूतान्युच्चैः पटानिव । प्रतिवर्षं विजातीयान्युत्पद्यन्ते फलान्यगे ॥ ४३ ॥

meghānparidadhyuccairbhūtānyuccaiḥ paṭāniva | prativarṣaṃ vijātīyānyutpadyante phalānyage || 43 ||

The clouds cover the beings like high screens, and every year, various kinds of fruits are produced on the earth.

बादल उच्च पर्दों की तरह प्राणियों को ढंकते हैं, और हर साल पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के फल उत्पन्न होते हैं।

7.60.44

संनिवेशैर्न नियतैरङ्गानां विविधाङ्गकैः । शिरोभिः सर्वभूतानि परिक्रामन्ति भूमिगैः ॥ ४४ ॥

saṃniveśairna niyatairañgānāṃ vividhāṅgakaiḥ | śirobhiḥ sarvabhūtāni parikrāmanti bhūmigaiḥ || 44 ||

With various arrangements of limbs, all beings wander on the earth with their heads.

विभिन्न अंगों के व्यवस्थाओं के साथ, सभी प्राणी अपने सिर के साथ पृथ्वी पर भटकते हैं।

7.60.45

शास्त्रवेदविहीनानि निर्धर्माण्येव कानिचित् । यत्किंचनैककारीणि तिर्यग्वन्ति जगन्त्यधः ॥ ४५ ॥

śāstravedavihīnāni nirdharmāṇyeva kānicit | yatkiṃcanaiakakārīṇi tiryagvanti jagantyadhaḥ || 45 ||

Some beings, devoid of scriptures and Vedas, are without dharma and wander aimlessly in the world.

कुछ प्राणी, जो शास्त्र और वेदों से रहित हैं, धर्महीन हैं और बेमकसद संसार में भटकते हैं।

7.60.46

कामसंवित्तिहीनानि निःस्त्रीजातानि कानिचित् । भूतैः संशुष्कहृदयैर्व्याप्तान्यश्ममयैरिव ॥ ४६ ॥

kāmasaṃvittihīnāni niḥstrījātāni kānicit | bhūtaiḥ saṃśuṣkahṛdayairvyāptānyaśmamayairiva || 46 ||

Some beings, devoid of desire and consciousness, are without females and have dried-up hearts, filled with stone-like beings.

कुछ प्राणी, जो इच्छा और चेतना से रहित हैं, स्त्रियों से रहित हैं और सूखे हृदय वाले हैं, पत्थर के समान प्राणियों से भरे हुए हैं।

7.60.47

पवनाशनभूतानि समरत्नाश्मकानि च । अजातार्थान्यलुब्धानि निगर्वाणीव कानि च ॥ ४७ ॥

pavanāśanabhūtāni samaratnāśmakāni ca | ajātārthānyalubdhāni nigarvāṇīva kāni ca || 47 ||

Those who are like air, food, beings, gems, stones, and other things that are not born for any purpose, are like those who are not greedy and are proud.

जो हवा, भोजन, प्राणी, रत्न, पत्थर और अन्य चीजें हैं, जिनका कोई उद्देश्य नहीं है, वे लोभी नहीं हैं और गर्व से भरे हुए हैं।

7.60.48

क्वचित्प्रत्येकमात्मानं पश्यत्याप्नोति नेतरत् । बहुभूतकमप्यस्ति जगदित्येकभूतकम् ॥ ४८ ॥

kvacitpratyekamātmānaṃ paśyatyāpnoti netarat | bahubhūtakamapyasti jagadityekabhūtakam || 48 ||

Sometimes one sees oneself and attains it, not the other. Although there are many beings, the world is one entity.

कभी-कभी कोई अपने आप को देखता है और उसे प्राप्त करता है, दूसरों को नहीं। हालाँकि बहुत से प्राणी हैं, दुनिया एक ही इकाई है।

7.60.49

नखकेशादिके यद्वत्तद्वदन्यत्र संस्थितः । आत्मवत्सर्वभूतानामेकीभूतात्मभावना ॥ ४९ ॥

nakhakeśādike yadvattadvadanyatra saṃsthitaḥ | ātmavatsarvabhūtānāmekībhūtātmabhāvanā || 49 ||

Just as nails and hair are part of the body, similarly, the self is present in all beings as one unified consciousness.

जैसे नाखून और बाल शरीर का हिस्सा हैं, उसी तरह, आत्मा सभी प्राणियों में एक एकीकृत चेतना के रूप में मौजूद है।

7.60.50

अनन्तापारपर्यन्त शून्यमेव बहु क्वचित् । यत्नतः संविदाप्नोति तस्यान्ते न जगत्पुनः ॥ ५० ॥

anantāpāraparyanta śūnyameva bahu kvacit | yatnataḥ saṃvidāpnoti tasyānte na jagatpunaḥ || 50 ||

The infinite, boundless emptiness is vast. With effort, one attains awareness, and at its end, there is no world again.

अनंत, अपार शून्यता बहुत विशाल है। प्रयास से, कोई चेतना प्राप्त करता है, और उसके अंत में, फिर से कोई दुनिया नहीं है।

7.60.51

अत्यन्ताबुद्धबुद्धानि मोक्षशब्दार्थदृष्टिषु । दारुयन्त्रमयाशेषभूतौघानीव कानिचित् ॥ ५१ ॥

atyantābuddhabuddhāni mokṣaśabdārthadṛṣṭiṣu | dāruyantramayāśeṣabhūtaughānīva kānicit || 51 ||

Those who are extremely ignorant and consider the meaning of liberation to be mere mechanical objects are like wooden machines.

जो अत्यंत अज्ञानी हैं और मोक्ष के अर्थ को केवल यांत्रिक वस्तुओं के रूप में देखते हैं, वे लकड़ी के यंत्रों की तरह हैं।

7.60.52

ऋक्षचक्रविहीनानि निष्कालकलनानि च । मूकसंकेतसाराणि भूतजालानि कानिचित् ॥ ५२ ॥

ṛkṣacakravihīnāni niṣkālakalanāni ca | mūkasaṅketasārāṇi bhūtajālāni kānicit || 52 ||

Some beings are devoid of the zodiac wheel and lack the calculation of time | They are the essence of silent signs and are part of the web of existence.

कुछ प्राणी ऋक्षचक्र से विहीन हैं और समय की गणना से रहित हैं | वे मूक संकेतों के सार हैं और अस्तित्व के जाल का हिस्सा हैं।

7.60.53

कानिचिद्वर्जितान्येव नेत्रशब्दार्थसंविदा । व्यर्थदीप्तात्मतेजांसि भूतानीत्येकचिन्तया ॥ ५३ ॥

kānicidvarjitānyeva netraśabdārthasaṃvidā | vyarthadīptātmatejāṃsi bhūtānītyekacintayā || 53 ||

Some beings are excluded from the perception of eyes, words, and meanings | They are uselessly radiant with the light of the self, and thus they are beings of a single thought.

कुछ प्राणी नेत्र, शब्द और अर्थ की संवेदना से वंचित हैं | वे आत्मा के प्रकाश से व्यर्थ रूप से चमकते हैं, और इसलिए वे एक विचार के प्राणी हैं।

7.60.54

प्राणसंविद्विहीनानि व्यर्थामोदानि कानिचित्। मूकानि शब्दवैयर्थ्याच्छ्रुतिहीनानि कानिचित्॥ ५४॥

prāṇasaṃvidvihīnāni vyarthāmodāni kānicit | mūkāni śabdavaivarthyācchruatihīnāni kānicit || 54 ||

Some beings are devoid of the perception of life force and uselessly joyful | Some are silent due to the uselessness of sound and devoid of hearing.

कुछ प्राणी प्राण संवेदना से विहीन हैं और व्यर्थ रूप से आनंदित हैं | कुछ शब्द की व्यर्थता से मूक हैं और श्रुति से विहीन हैं।

7.60.55

वाक्यसंविद्विहीनत्वान्मूकान्यन्यानि कानिचित्। स्पर्शसंविद्विहीनत्वादश्माङ्गानीव कानिचित्॥ ५५॥

vākyasaṃvidvihīnatvānmūkānyanyāni kānicit | sparśasaṃvidvihīnatvādaśmāṅgānīva kānicit || 55 ||

Some beings are silent due to the lack of speech perception | Some are like stones due to the lack of touch perception.

कुछ प्राणी वाक्य संवेदना की कमी के कारण मूक हैं | कुछ स्पर्श संवेदना की कमी के कारण पत्थर के समान हैं।

7.60.56

संविन्मात्रमयान्येव दृष्टान्यपि च कानिचित्। व्यवहारीण्यप्यग्राह्याण्येव नित्यं पिशाचवत्॥ ५६॥

saṃvinmātramayānyeva dṛṣṭānyapi ca kānicit | vyavahārīṇyapyagrāhyāṇyeva nityaṃ piśācavat || 56 ||

Some beings are merely perceived and are always ungraspable like ghosts | They are part of transactions yet always elusive.

कुछ प्राणी केवल दृष्ट हैं और हमेशा अग्राह्य हैं जैसे पिशाच | वे व्यवहार का हिस्सा हैं लेकिन हमेशा अज्ञात हैं।

7.60.57

भूमयान्येकनिष्ठानि निष्पिण्डान्येव कानिचित्। कानिचिद्वारिपूर्णानि वह्निपूर्णानि कानिचित्॥ ५७॥

bhūmayānyekaniṣṭhāni niṣpiṇḍānyeva kānicit | kānicidvāripūrṇāni vahnipūrṇāni kānicit || 57 ||

Some worlds are solely earthly, some are devoid of any substance, some are filled with water, and some are filled with fire.

कुछ लोक केवल पृथ्वी के हैं, कुछ किसी भी पदार्थ से रहित हैं, कुछ जल से भरे हुए हैं, और कुछ अग्नि से भरे हुए हैं।

7.60.58

कानिचिद्वातपूर्णानि सर्वाकाराणि कानिचित्। जगन्ति व्योमरूपाणि वत तत्र कचन्ति खे॥ ५८॥

kānicidvātapūrṇāni sarvākārāṇi kānicit | jaganti vyomarūpāṇi vata tatra kacanti khe || 58 ||

Some worlds are filled with air, some have all kinds of forms, and some are like the sky, vast and empty.

कुछ लोक वायु से भरे हुए हैं, कुछ में सभी प्रकार के रूप हैं, और कुछ आकाश के समान विशाल और खाली हैं।

7.60.59

धरापीठैकपूर्णेषु तिष्ठन्त्यन्येषु देहिनः। भेका इव शिलाकोशे कीटा इव धरोदरे॥ ५९॥

dharāpīṭhaikapūrṇeṣu tiṣṭhantyanyeṣu dehināḥ | bhekā iva śilākośe kīṭā iva dharodare || 59 ||

In some worlds that are solely filled with the earth, beings dwell like frogs in a stone cavity or insects in the earth's interior.

कुछ लोकों में जो केवल पृथ्वी से भरे हुए हैं, जीव पत्थर की खोखली में मेंढक की तरह या पृथ्वी के अंदर कीट की तरह रहते हैं।

7.60.60

जलैकपरिपूर्णेषु तिष्ठन्त्युर्वीवनाद्रिषु । भ्रमन्त्यन्येषु भूतानि नित्यमेवोग्रमीनवत् ॥ ६० ॥

jalai kaparipūrṇeṣu tiṣṭhantyurvīvanādriṣu | bhramantyanyeṣu bhūtāni nityamevogramīnavat || 60 ||

In some worlds that are solely filled with water, beings dwell in the forests and mountains, wandering like fierce fish.

कुछ लोकों में जो केवल जल से भरे हुए हैं, जीव वनों और पर्वतों में रहते हैं, उग्र मछलियों की तरह भटकते हुए।

7.60.61

अन्येष्वग्न्येकपूर्णेषु जलादिरहितान्यपि । भूतान्यग्निमयान्येव स्फुरन्त्यलमलातवत् ॥ ६१ ॥

anyeṣvagnyekapūrṇeṣu jalādirahitānyapi | bhūtānyagnimayānyeva sphurantyalamalātavat || 61 ||

In some worlds that are solely filled with fire, beings, even though devoid of water and other elements, shine brightly like fire itself.

कुछ लोकों में जो केवल अग्नि से भरे हुए हैं, जीव, जल और अन्य तत्वों से रहित होने के बावजूद, अग्नि की तरह चमकते हैं।

7.60.62

अन्येष्वनिलपूर्णेषु भूतान्यस्तेतराण्यपि । वातमात्रमयाङ्गानि स्फुरन्त्यर्जुनवातवत् ॥ ६२ ॥

anyeṣvani lapūrṇeṣu bhūtānyastetarāṇyapi | vātamātramayāṅgāni sphurantyarjunavātavat || 62 ||

In other beings filled with air, other elements also reside | Their bodies are made of air alone, they tremble like the wind of Arjuna

अन्य प्राणियों में जो हवा से भरे हुए हैं, अन्य तत्व भी रहते हैं | उनके शरीर केवल हवा से बने हुए हैं, वे अर्जुन की हवा की तरह काँपते हैं

7.60.63

अन्येषु व्योममात्रात्मदेहेषु व्योमरूपिणः । प्राणिनः सन्ति सर्गेषु दर्शनव्यवहारिणः ॥ ६३ ॥

anyeṣu vyomamātrātmadeheṣu vyomarūpiṇaḥ | prāṇinaḥ santi sargeṣu darśanavyavahāriṇaḥ || 63 ||

In other beings whose bodies are made of space alone, space-like beings exist | They are living beings in creation, visible and active

अन्य प्राणियों में जिनके शरीर केवल आकाश से बने हुए हैं, आकाश-जैसे प्राणी रहते हैं | वे सृष्टि में जीवित प्राणी हैं, दृश्यमान और सक्रिय

7.60.64

पातालपातिषु तथाम्बरमुत्पतत्सु तिष्ठत्सु विभ्रमपदेष्वथ दिङ्मुखेषु । नानाजगत्सु किमिवास्ति मया न दृष्टं यन्नाम चिज्जलधिचञ्चलबुद्बुदेषु ॥ ६४ ॥

pātālapātiṣu tathāmbaramutpatatsu tiṣṭhatsu vibhramapadeṣvatha diṅmukheṣu | nānājagatsu kimivāsti mayā na dṛṣṭaṃ yannāma cijjaladhicañcalabudbudeṣu || 64 ||

In the realms of the underworld, in the rising sky, in the standing, in the wandering, and in the directional beings | In various worlds, what is there that I have not seen? That which is named in the restless bubbles of the ocean

पाताल के राजाओं में, आकाश में उठते हुए, खड़े होने वालों में, भटकते हुए पदों में, और दिशाओं की ओर मुख करने वालों में | विभिन्न जगतों में, ऐसा क्या है जिसे मैंने नहीं देखा? जो समुद्र के अस्थिर बुलबुलों में नामित है

Chapter 61

7.61.1

श्रीवसिष्ठ उवाच चिदाकाशाच्चिदाकाशे पयसीव पयोरयाः चित्त्वाज्जीवाः स्फुरन्त्येते एत एव मनांसि नः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca cidākāśāccidākāśe payasīva payorayāḥ cittvājjīvāḥ sphurantyete eta eva manāṃsi naḥ || 1 ||

Vasishtha said: From the space of consciousness, in the space of consciousness, like milk from milk, consciousness arises. These are the living beings, these are our minds.

वसिष्ठ ने कहा: चेतना के आकाश से, चेतना के आकाश में, दूध की तरह दूध से, चेतना उत्पन्न होती है। ये जीव हैं, ये हमारे मन हैं।

7.61.2

विशदाकाशरूपाणि तान्येव च मनांसि नः जगन्ति तान्यनन्तानि संपन्नान्यभितः स्वयम् ॥ २ ॥

viśadākāśarūpāṇi tānyeva ca manāṃsi naḥ jaganti tānyanantāni saṃpannānyabhitaḥ svayam || 2 ||

Those very minds of ours, which are of the nature of pure space, move about, infinite and complete in themselves.

वे हमारे मन, जो शुद्ध आकाश के रूप में हैं, अनन्त और स्वयं पूर्ण होकर चलते रहते हैं।

7.61.3

श्रीराम उवाच सर्वभूतगणे मोक्षं महाकल्पक्षये गते पुनः कस्य कथं सर्गसंवित्तिरुपजायते ॥ ३ ॥

śrīrāma uvāca sarvabhūtagaṇe mokṣaṃ mahākalpakṣaye gate punaḥ kasya kathaṃ sargasaṃvittirupajāyate || 3 ||

Rama said: When all beings attain liberation at the end of the great cycle, how does the awareness of creation arise again?

राम ने कहा: जब महाकल्प के अंत में सभी प्राणी मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं, तब फिर से सृष्टि की चेतना कैसे उत्पन्न होती है?

7.61.4

श्रीवसिष्ठ उवाच महाप्रलयपर्यन्ते क्षितिजलपवनहुताशाकाशाशेषविशेषविनाशे आब्रह्मस्थावरान्तेषु मुक्तौ परिणतेषु भूयो यथेदं जगदनुभूयते तथा शृणु स एव च देवस्तदात्मीयं हृदयं स्वभावं जगदित्यवगच्छति च विनोदेनैव न तु वास्तवेन रूपेण जगदिति किंचिदुपलभामहे विचारयन्तस्तस्मात्किमिव नश्यते किमिव जायते यथा परम कारणमविनाशि तथा तद्धृदयमविनाश्यं च महाकल्पादयश्च तदवयवा एव अपरिज्ञानमात्रमत्र केवलं भेदायैव तदपि प्रेक्ष्यमाणेन लभ्यते एव ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca mahāpralayaparyante kṣitijalapavanahutāśākāśāśeṣaviśeṣavināśe ābrahmasthāvarānteṣu muktau pariṇateṣu bhūyo yathedaṃ jagadanubhūyate tathā śṛṇu sa eva ca devastadātmīyaṃ hṛdayaṃ svabhāvaṃ jagadityavagacchati ca vinodenaiva na tu vāstavena rūpeṇa jagaditi kiṃcidupalabhāmahe vicārayantastasmātkimiva naśyate kimiva jāyate yathā parama kāraṇamavināśi tathā taddhṛdayamavināśyaṃ ca mahākalpādayaśca tadavayavā eva aparijñānamātramatra kevalaṃ bhedāyaiva tadapi prekṣyamāṇena labhyata eva || 4 ||

Vasishtha said: At the end of the great dissolution, when all elements and distinctions are destroyed, and all beings from Brahma to immovable objects are liberated, listen to how this world is experienced again. That very God realizes the world as His own heart and nature, but only as a play, not in reality. We perceive the world as something, but upon reflection, nothing really disappears or is born. Just as the supreme cause is indestructible, so is its heart indestructible. The great cycles and their parts are merely due to ignorance and are perceived as different.

वसिष्ठ ने कहा: महाप्रलय के अंत में, जब सभी तत्व और भेद नष्ट हो जाते हैं, और ब्रह्मा से लेकर स्थावर तक सभी प्राणी मुक्त हो जाते हैं, तब फिर से यह संसार कैसे अनुभव किया जाता है, यह सुनो। वही ईश्वर इस संसार को अपने हृदय और स्वभाव के रूप में जानता है, पर केवल एक खेल के रूप में, वास्तविकता में नहीं। हम संसार को कुछ के रूप में देखते हैं, पर विचार करने पर कुछ भी वास्तव में नष्ट नहीं होता है और न ही जन्म लेता है। जैसे परम कारण अविनाशी है, वैसे ही उसका हृदय भी अविनाशी है। महाकल्प और उनके अंग केवल अज्ञान के कारण हैं और भेद के रूप में देखे जाते हैं।

7.61.5

तस्मान्न कस्यचित्किंचित्कदाचिन्न नश्यति क्वचित् न चैव जायते ब्रह्म शान्तं दृश्यमजं स्थितम् ॥ ५ ॥

tasmānna kasyacitkiṃcitkadācinna naśyati kvacit na caiva jāyate brahma śāntaṃ dṛśyamajaṃ sthitam || 5 ||

Therefore, nothing ever perishes anywhere, nor is anything ever born. Brahman is peaceful, perceivable, unborn, and eternal.

इसलिए, कहीं कुछ भी कभी नष्ट नहीं होता है, न ही कुछ भी कभी जन्म लेता है। ब्रह्म शांत, दृश्य, अजन्मा और सनातन है।

7.61.6

आकाशपरमाणुसहस्रांशमात्रेऽपि या शुद्धचिन्मात्रसत्ता विद्यते ॥ ६ ॥

ākāśaparamāṇusahasrāṃśamātre'pi yā śuddhacinmātrasattā vidyate || 6 ||

Even in the smallest particle of space, there exists pure consciousness.

आकाश के सबसे छोटे कण में भी शुद्ध चेतना है।

7.61.7

वपुर्जगदिदं तस्या ननु नाम महाचितेः कथं नश्यत्यनष्टायां तस्यां सा च न नश्यति ॥ ७ ॥

vapurjagadidaṃ tasyā nanu nāma mahāciteḥ kathaṃ naśyatyanaṣṭāyāṃ tasyāṃ sā ca na naśyati || 7 ||

This universe, which is the body of the great consciousness, does not perish even when it is not destroyed. How can it perish when it is indestructible?

यह ब्रह्मांड, जो महान चेतना का शरीर है, अविनाशी होने पर भी नष्ट नहीं होता। फिर यह कैसे नष्ट हो सकता है जब यह अविनाशी है?

7.61.8

संविदो हृदयं स्वप्ने यथा भाति जगत्तया व्योमात्मैव तथैवादिसर्गात्प्रभृति भासते ॥ ८ ॥

saṃvido hṛdayaṃ svapne yathā bhāti jagattayā vyomātmaiva tathaivādisargātprabhṛti bhāsate || 8 ||

Just as the world appears in a dream within the heart of consciousness, so too does it shine forth from the beginning of creation.

जैसे स्वप्न में चेतना के हृदय में ब्रह्मांड प्रकट होता है, वैसे ही सृष्टि के आरंभ से ही यह चमकता है।

7.61.9

चिद्व्योमावयवः सर्गः सर्गस्यैतादृशाः क्षयाः उदयाश्चेति खं सर्वे किं नाशि किमनाशि च ॥ ९ ॥

cidvyomāvayavaḥ sargaḥ sargasyaitādṛśāḥ kṣayāḥ udayāśceti khaṃ sarve kiṃ nāśi kimanāśi ca || 9 ||

Creation is a part of the space of consciousness. The rise and fall of creation are like this. What is destroyed, and what is not destroyed?

सृष्टि चेतना के आकाश का एक अंग है। सृष्टि का उदय और अस्त ऐसा ही है। क्या नष्ट होता है, और क्या नहीं नष्ट होता?

7.61.10

एषा हि परमार्थसंविदच्छेद्या अदाह्याक्लेद्याशोष्या सा ह्यतद्विदामदृश्या तस्या यद्धृदयं तत्तदेव भवति यथासौ न नश्यति तदन्तर्वर्ती जगदाद्यनुभवो न जायते न नश्यत्येवेति केवलं स्मरणविस्मरणवशेन स्वभावरूपेणानुभवाननुभवौ कल्पयतीव ॥ १० ॥

eṣā hi paramārthasaṃvidacchedyā adāhyā'kledyā'śoṣyā sā hyatadvidāmadṛśyā tasyā yaddhṛdayaṃ tattadeva bhavati yathāsau na naśyati tadantarvartī jagadādyanubhavo na jāyate na naśyatyeveti kevalaṃ smaraṇavismaraṇavaśena svabhāvarūpeṇānubhavānanubhavau kalpayatīva || 10 ||

This supreme reality of consciousness is indivisible, unburnable, unmoistenable, and undryable. It is invisible to those who do not know it. Its essence remains unchanged, and the experience of the world does not arise or perish. It merely appears as experience and non-experience due to remembrance and forgetfulness.

यह परम चेतना की सत्ता अविभाज्य, अदहनीय, अक्लेद्य और अशोष्य है। यह उनके लिए अदृश्य है जो इसे नहीं जानते। इसका स्वभाव अपरिवर्तित रहता है, और ब्रह्मांड का अनुभव न उत्पन्न होता है न नष्ट। यह केवल स्मरण और विस्मरण के कारण अनुभव और अननुभव के रूप में प्रकट होता है।

7.61.11

यद्यद्यदात्मकं तत्त्वं तद्विनाशे विनाऽक्षयि तस्माद्ब्रह्मात्मकं दृश्यं विद्धि ब्रह्मवदक्षयम ॥ ११ ॥

yadyadyadātmakaṃ tattvaṃ tadvināśe vinā'kṣayi tasmādbrahmātmakaṃ dṛśyaṃ viddhi brahmavadakṣayam || 11 ||

Whatever is the nature of the Self, that is indestructible even in its destruction. Therefore, know that the visible world is of the nature of Brahman and is indestructible like Brahman.

जो भी आत्मा का स्वरूप है, वह उसके विनाश में भी अक्षय है। इसलिए, जान लो कि दृश्य जगत् ब्रह्म का स्वरूप है और ब्रह्म की तरह अक्षय है।

7.61.12

महाप्रलयादयस्तदवयवा एव ॥ १२ ॥

mahāpralayādayastadavayavā eva || 12 ||

The great dissolution and other phenomena are merely parts of that.

महाप्रलय और अन्य घटनाएँ उसके अंग मात्र हैं।

7.61.13

चिन्मात्रे परमे व्योम्नि कुत एव भवाभवौ कुतो भावविकारादिः कथं व्योम्नि निराकृते ॥ १३ ॥

cinmātre parame vyomni kuta eva bhavābhavau kuto bhāvavikārādiḥ kathaṃ vyomni nirākṛte || 13 ||

In the supreme space of pure consciousness, where is the existence and non-existence, where is the modification of existence, and how can it be negated in that space?

शुद्ध चेतना के परम आकाश में, अस्तित्व और अनस्तित्व कहाँ है, अस्तित्व का परिवर्तन कहाँ है, और उस आकाश में उसे कैसे नकारा जा सकता है?

7.61.14

महाकल्पादयो भावा नामैतानि जगन्ति च ब्रह्मात्मकतयैवास्मिन्संविद्ब्रह्मणि संस्थितम् ॥ १४ ॥

mahākalpādayo bhāvā nāmaitāni jaganti ca brahmātmakatayaivāsminsaṃvidbrahmaṇi saṃsthitam || 14 ||

The great cycles and other phenomena are merely names and forms in this world, and they are established in the consciousness of Brahman as Brahman itself.

महाकल्प और अन्य घटनाएँ इस जगत् में केवल नाम और रूप हैं, और वे ब्रह्म के चेतना में ब्रह्म के रूप में स्थित हैं।

7.61.15

निराकृत्यच्छचिन्मात्रं दृश्यं संकल्प्य तद्वशम् याति येनैव घटितो यक्षस्तद्धृदये किल ॥ १५ ॥

nirākṛtyacchacinmātraṃ dṛśyaṃ saṃkalpya tadvaśam yāti yenaiva ghaṭito yakṣastaddhṛdaye kila || 15 ||

By negating the pure consciousness and imagining the visible world, one goes under its control, just as the Yaksha was controlled by the one who created it in his heart.

शुद्ध चेतना को नकारकर और दृश्य जगत् को कल्पना करके, वह उसके अधीन हो जाता है, जैसे यक्ष उसके सृष्टिकर्ता के हृदय में नियंत्रित हो गया था।

7.61.16

यथावयविनो वृक्षस्य शाखाविटपफलपल्लवपुष्पाद्योऽवयवास्तथा परमार्थघनस्याकाशादप्यच्छरूपस्याव्यपदेश्यस्य प्रलयमहाप्रलयनाशोद्भेदभावाभावसुखदुःखजननमरण साकारनिराकारत्वादयोऽवयवा यथैव चासाववयव्यनाशोऽव्यपदेश्यश्च तथैव त इति ॥ १६ ॥

yathāvayavino vṛkṣasya śākhāviṭapaphalapallavapuṣpādyo'vayavāstathā
paramārthaghanasyākāśādapyaccharūpasyāvyapadeśyasya
pralayamahāpralayanāśodbhedabhāvābhāvasukhaduḥkhajananamaraṇa sākāranirākāratvādayo'vayavāḥ
yathaiva cāsāvavayavyanāśo'vyapadeśyaśca tathaiva ta iti || 16 ||

Just as the parts of a tree, such as branches, twigs, fruits, leaves, and flowers, are its components, similarly, the ultimate reality, which is formless like the sky and indescribable, has components like dissolution, great dissolution, destruction, creation, existence, non-existence, happiness, sorrow, birth, death, form, and formlessness. Just as the parts of a tree perish and are indescribable, so too are these components.

जैसे वृक्ष के अंग, जैसे शाखाएँ, टहनियाँ, फल, पत्ते और फूल, उसके अवयव हैं, वैसे ही, परमार्थ जो आकाश की तरह निराकार और अवर्णनीय है, उसके अवयव हैं जैसे प्रलय, महाप्रलय, नाश, उद्भेद, भाव, अभाव, सुख, दुःख, जनन, मरण, साकारता और निराकारता। जैसे वृक्ष के अंग नष्ट हो जाते हैं और अवर्णनीय होते हैं, वैसे ही ये अवयव भी हैं।

7.61.17

अवयवावयविनोर्दृश्ययोर्वाप्यदृश्ययोः एकात्मनोरेव सदा भेदोऽस्ति न कदाचन ॥ १७ ॥

avayavāvayavinordṛśyayorvāpyadṛśyayoḥ ekātmanoreva sadā bhedo'sti na kadācana || 17 ||

The parts and the whole, whether visible or invisible, are always one in essence. There is never any difference between them.

अंग और समूह, चाहे दृश्य हों या अदृश्य, हमेशा एक आत्मा में होते हैं। उनमें कभी भी कोई भेद नहीं होता।

7.61.18

यथा तरोः संविन्मूलं तथा परमार्थघनस्य क्वचित्किंचित्त्वं क्वचित्सर्गस्तम्बः क्वचिल्लोकान्तरविटपाः क्वचिद्व्यवस्थाः शाखाः क्वचित्पदार्थपल्लवाः क्वचित्प्रकाशकुसुमम् क्वचिदन्धकारकाष्ण्यं क्वचिन्नभः कोटरं क्वचित्प्रलयगुल्माः क्वचिन्महाप्रलयगुल्माः क्वचिद्धरिहरादिगुलुच्छकाः क्वचिज्जाड्यत्वक् एवमनाकारं व्योमरूपमेव संविदात्मनि ब्रह्मणि ब्रह्मसदृश भावादव्यतिरिक्तमेवैतत्स्थितम् ॥ १८ ॥

yathā taroḥ saṃvinmūlaṃ tathā paramārthaghanasya kvacitkiṃcittvaṃ kvacitsargastambaḥ kvacillokāntaraviṭapāḥ kvacidvyavasthāḥ śākhāḥ kvacitpadārthapallavāḥ kvacitprakāśakusumam kvacidandhakārakārṣṇyaṃ kvacinnabhaḥ koṭaraṃ kvacitpralayagulmāḥ kvacinmahāpralayagulmāḥ kvaciddhariharādigulucchakāḥ kvacijjāḍyatvak evamanākāraṃ vyomarūpameva saṃvidātmani brahmaṇi brahmasadṛśa bhāvādavyatiriktamevaitatsthitam || 18 ||

Just as a tree has its root in consciousness, so too the ultimate reality has various manifestations. Sometimes it is a small entity, sometimes a pillar of creation, sometimes branches of other worlds, sometimes established states, sometimes sprouts of objects, sometimes a flower of illumination, sometimes the darkness of ignorance, sometimes the sky as a hollow, sometimes bushes of dissolution, sometimes bushes of great dissolution, sometimes sprouts of gods and demons, sometimes the state of inertia. Thus, the formless sky, which is the nature of consciousness, is established in Brahman, resembling Brahman, and is not separate from it.

जैसे वृक्ष की जड़ चेतना में होती है, वैसे ही परमार्थ के भी विभिन्न रूप होते हैं। कभी वह एक छोटी सी वस्तु होता है, कभी सृष्टि का स्तंभ, कभी अन्य लोकों की शाखाएँ, कभी स्थापित अवस्थाएँ, कभी वस्तुओं के पल्लव, कभी प्रकाश का फूल, कभी अज्ञान का अंधकार, कभी आकाश की खोखली, कभी प्रलय के झाड़, कभी महाप्रलय के झाड़, कभी देवताओं और असुरों के अंकुर, कभी जड़ता की अवस्था। इस प्रकार, चेतना के स्वरूप वाला निराकार आकाश, ब्रह्म में स्थापित है, ब्रह्म के समान है, और उससे अलग नहीं है।

7.61.19

इतो भाव्य इतो भाव इतः सर्ग इतः क्षयः स्वभाव एवानुभव इति ब्रह्माचलं स्थितम् ॥ १९ ॥

ito bhāvya ito bhāva itaḥ sarga itaḥ kṣayaḥ svabhāva evānubhava iti brahmācalaṃ sthitam || 19 ||

From this, the imaginable and the real, creation and destruction, are all experiences of the inherent nature. Thus, Brahman remains steadfast.

इससे, कल्पनीय और वास्तविक, सृष्टि और विनाश, सभी स्वभाव के अनुभव हैं। इस प्रकार, ब्रह्म अचल रहता है।

7.61.20

एवंमयेऽपि परमे ब्रह्माकाशे न रञ्जनाः काश्चिदेवाङ्ग सन्तीन्दुबिम्बे विमलता यथा ॥ २० ॥

evaṃmaye'pi parame brahmākāśe na rañjanāḥ kāścidevāṅga santīndubimbe vimalatā yathā || 20 ||

Even in the supreme Brahman, which is pervaded by this, there are no stains. Just as the moon's reflection is pure in a clear mirror, so too is the supreme Brahman.

इससे भरे हुए इस परम ब्रह्म में भी कोई दाग नहीं है। जैसे चाँद का प्रतिबिंब साफ दर्पण में शुद्ध होता है, वैसे ही परम ब्रह्म भी है।

7.61.21

निर्मले परमाकाशे क्व भावाभावरञ्जनाः क्वादिमध्यान्तकलनाः क्व लोकान्तरविभ्रमाः ॥ २१ ॥

nirmale paramākāśe kva bhāvābhāvarañjanāḥ kvādimadhyāntakalanāḥ kva lokāntaravibhramāḥ || 21 ||

In the pure supreme space, where are the decorations of existence and non-existence? Where are the calculations of beginning, middle, and end? Where are the delusions of other worlds?

शुद्ध परम आकाश में, अस्तित्व और अनस्तित्व के अलंकार कहाँ हैं? आदि, मध्य और अंत के गणना कहाँ हैं? अन्य लोकों के भ्रम कहाँ हैं?

7.61.22

अपरिज्ञानमेवैकं तत्र दोषवदुत्थितम् केवलं तत्परावृत्य प्रेक्षणात्परिशाम्यति ॥ २२ ॥

aparijñānamevaikaṃ tatra doṣavadutthitam kevalaṃ tatparāvṛtya prekṣaṇātpariśāmyati || 22 ||

Only ignorance arises there as a fault. By merely turning away from it, one attains peace through observation.

वहाँ केवल अज्ञान ही एक दोष के रूप में उत्पन्न होता है। उससे दूर होकर, देखने से ही शांति प्राप्त होती है।

7.61.23

अज्ञानं ज्ञप्तिबोधेन परामृष्टं प्रणश्यति येनैवाभ्युदितस्तेन पवनेनेव दीपकः ॥ २३ ॥

ajñānaṃ jñaptibodhena parāmṛṣṭaṃ praṇaśyati yenaivābhyuditastena pavaneneva dīpakaḥ || 23 ||

Ignorance, when touched by the knowledge of realization, perishes. Just as a lamp is extinguished by the very wind that makes it flicker.

अज्ञान, जब बोध के ज्ञान से स्पर्श होता है, तब नष्ट हो जाता है। जैसे एक दीपक उसी हवा से बुझ जाता है जिससे वह हिलता है।

7.61.24

अज्ञानं संपरिज्ञातं नासीदेवेति बुध्यते अबन्धमोक्षं ब्रह्मैव सर्वमित्यवगम्यते ॥ २४ ॥

ajñānaṃ saṃparijñātaṃ nāsīdeveti budhyate abandhamokṣaṃ brahmaiva sarvamityavagamyate || 24 ||

When ignorance is fully known, it is realized that it never existed. It is understood that there is only Brahman, the liberation from bondage, and everything.

जब अज्ञान पूरी तरह से जाना जाता है, तो यह समझ में आता है कि वह कभी नहीं था। यह समझ में आता है कि केवल ब्रह्म है, बंधन से मुक्ति, और सब कुछ।

7.61.25

एवं बोधादयो राम मोक्ष उक्ताः स्वसंविदा विचारयत्नो लभते नात्र कश्चन संशयः ॥ २५ ॥

evaṃ bodhādayo rāma mokṣa uktāḥ svasaṃvidā vicārayatno labhate nātra kaścana saṃśayaḥ || 25 ||

Thus, O Rama, liberation is said to be attained through self-awareness. There is no doubt about this for one who makes an effort to inquire.

इस प्रकार, हे राम, मुक्ति स्वयं की समझ से प्राप्त होती है। इसमें कोई संदेह नहीं है जो प्रयास करता है।

7.61.26

इदं जगज्जालमनाद्यजातं ब्रह्मार्थमाभातमितीह दृष्ट्वाविचारदृष्ट्याष्टगुणेश्वरत्वं पश्यंस्तृणं स्वात्मनि जीव आस्ते ॥ २६ ॥

idaṃ jagajjālamanādyajātaṃ brahmārthamābhātamitīha dṛṣṭvāvicāradṛṣṭyā'ṣṭaguṇeśvaratvaṃ paśyaṃstṛṇaṃ svātmani jīva āste || 26 ||

Seeing this universe, which is an ancient creation and appears as the ultimate reality, one should meditate on the eightfold qualities of the Lord and reside in one's own self.

इस ब्रह्मांड को देखकर, जो एक अनादि सृष्टि है और परम सत्य के रूप में प्रकट होता है, एक को भगवान के आठ गुणों पर ध्यान करना चाहिए और अपने स्वयं में रहना चाहिए।

Chapter 62

7.62.1

श्रीराम उवाच । यदेतद्भवता दृष्टं चिद्व्योमवपुषा तदा । तदेकदेशसंस्थेन किमुत भ्रमताम्बरे ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yadetadbhavatā dṛṣṭaṃ cidvyomavapuṣā tadā | tadekadeśasaṃsthena kimuta bhramatāmbare || 1 ||

Sri Rama said: If you saw this with the form of the sky of consciousness at that time, then what to speak of the sky that is moving in one place?

श्री राम ने कहा: यदि आपने उस समय चेतना के आकाश के रूप में यह देखा, तो फिर एक स्थान में घूमते आकाश की बात ही क्या है?

7.62.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । संघशोऽहमनन्तात्मा व्यापी व्योम तदा किल । स्यातां तस्यामवस्थायां कीदृशी तौ गमागमौ ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃghaśo'hamanantātmā vyāpī vyoma tadā kila | syātāṃ tasyāmavasthāyāṃ kīdṛśī tau gamāgamau || 2 ||

Sri Vasistha said: I am the infinite self, pervading the sky in all directions. In that state, what kind of coming and going could there be?

श्री वसिष्ठ ने कहा: मैं अनन्त आत्मा हूँ, जो सभी दिशाओं में आकाश को व्याप्त करता है। उस अवस्था में, आने-जाने की कैसी बात हो सकती है?

7.62.3

नैकस्थानस्थितमयो नाहं गतिमयोऽभवम् । तदनेन स्व एवास्मिन्दृष्टमेतन्मयात्मनि ॥ ३ ॥

naikasthānasthitamayo nāhaṃ gatimayo'bhavam | tadanena sva evāsmin dṛṣṭametanmayātmani || 3 ||

I was not confined to one place, nor was I endowed with movement. Therefore, I saw this in my own self.

मैं एक स्थान में स्थित नहीं था, न ही मैं गति से युक्त था। इसलिए, मैंने इसे अपने आत्मा में देखा।

7.62.4

यथाङ्गानि शरीरत्वे पश्याम्यापादमस्तकम् । चिन्नेत्रेणाप्यनेत्रेण तथैतदृष्टवानहम् ॥ ४ ॥

yathāṅgāni śarīratve paśyāmyāpādamastakam | cinnetreṇāpyanetreṇa tathaitaddṛṣṭavānaham || 4 ||

Just as I see the limbs of the body from head to foot with the eye of consciousness, even without the eye, I saw this.

जैसे मैं चेतना की आँख से शरीर के अंगों को सिर से पैर तक देखता हूँ, उसी प्रकार आँख के बिना भी मैंने इसे देखा।

7.62.5

अनाकृतेर्निरवयवस्थितेस्तदा तथाऽभवाद्विमलचिदम्बरात्मनः । जगन्ति तान्यवयवजालकानि मे यथा स्वतो न विगलिता न वस्तुता ॥ ५ ॥

anākṛter niravayavasthites tadā tathā'bhavād vimalacidambarātmanaḥ | jaganti tāny avayavajālakāni me yathā svato na vigalitā na vastutā || 5 ||

At that time, being uncreated and without parts, I existed as the pure sky of consciousness. The worlds, which are networks of parts, did not dissolve nor did they have reality.

उस समय, अकृत और अवयवहीन होने के कारण, मैं शुद्ध चेतना के आकाश के रूप में था। जो अंगों के जाल हैं, वे जगत न तो विलीन हुए और न ही उनमें वास्तविकता थी।

7.62.6

प्रमाणमत्र ते स्वप्नदृष्टोऽभुवनविभ्रमः । स्वप्नेऽनुभूयते दृश्यं न च किंचित्खमेव तत् ॥ ६ ॥

pramāṇamatra te svapnadṛṣṭo'bhuvanavibhramaḥ | svapne'nubhūyate dṛśyaṃ na ca kiṃcitkham eva tat || 6 ||

The proof here is the illusion of the world seen in a dream. In a dream, the visible is experienced, but it is nothing but empty space.

यहाँ प्रमाण है स्वप्न में देखा गया विश्व का भ्रम | स्वप्न में दृश्य अनुभव होता है, लेकिन वह खाली आकाश है।

7.62.7

यथा पश्यति वृक्षः स्वं पत्रपुष्पफलादिकम् । स्वसंवेदननेत्रेण तथैतदृष्टवानहम् ॥ ७ ॥

yathā paśyati vṛkṣaḥ svaṃ patrapuṣpaphalādikam | svasaṃvedananetreṇa tathaitaddṛṣṭavān aham || 7 ||

Just as a tree perceives its own leaves, flowers, and fruits with its self-awareness, so have I seen this.

जैसे एक पेड़ अपने पत्तों, फूलों और फलों को अपनी स्व-संवेदना से देखता है, वैसे ही मैंने इसे देखा है।

7.62.8

यथाम्बुधिरनन्तात्मा वेत्ति सर्वान् जलेचरान् । तरङ्गावर्तफेनांश्च तथैतद्बुद्धवानहम् ॥ ८ ॥

yathāmbudhiranantātmā vetti sarvān jalecarān | taraṅgāvartaphenāṃśca tathaitadbuddhavān aham || 8 ||

Just as the ocean, which is infinite, knows all the aquatic creatures, waves, whirlpools, and foam, so have I, the enlightened one, known this.

जैसे अनंत आत्मा वाला समुद्र सभी जलचरों, तरंगों, भंवरों और फेन को जानता है, वैसे ही मैं, बुद्धिमान, इसे जानता हूँ।

7.62.9

अवयवान्स्वानवयवी यथा वेत्ति निजात्मनि । अनन्यानात्मनः सर्गांस्तथैतान्बुद्धवानहम् ॥ ९ ॥

avayavānsvānavayavī yathā vetti nijātmani | ananyānātmanaḥ sargāṃstathaitānbuddhavān aham || 9 ||

Just as the whole knows its own parts within itself, so have I, the enlightened one, known these creations which are not different from the self.

जैसे समूह अपने अंगों को अपने आप में जानता है, वैसे ही मैं, बुद्धिमान, इन सृष्टियों को जानता हूँ जो आत्मा से भिन्न नहीं हैं।

7.62.10

अद्यापि तानहं देहे व्योम्नि शैले जले स्थले । तथैव सर्गान्पश्यामि राम बोधैकतां गतः ॥ १० ॥

adyāpi tānahaṃ dehe vyomni śaile jale sthale | tathaiva sargānpasyāmi rāma bodhaikatāṃ gataḥ || 10 ||

Even today, I see those creations in the body, sky, mountain, water, and land, O Rama, having attained the state of pure consciousness.

आज भी, मैं उन सृष्टियों को शरीर, आकाश, पर्वत, जल और भूमि में देखता हूँ, हे राम, शुद्ध चेतना की अवस्था प्राप्त करके।

7.62.11

पुरोऽस्माकमिदं विश्वं गृहस्यान्तर्बहिस्तथा । पूर्णमेतज्जगद्वृन्दैर्वेद्मि बोधैकतां गतः ॥ ११ ॥

puro'smākamidaṃ viśvaṃ gṛhasyāntarbahistathā | pūrṇametajjagadvṛndairvedmi bodhaikatāṃ gataḥ || 11 ||

This entire universe is within and outside our home. I know this world is complete with the unity of consciousness.

यह सम्पूर्ण विश्व हमारे घर के अंदर और बाहर है। मैं जानता हूँ कि यह संसार चेतना की एकता से पूर्ण है।

7.62.12

यथाम्भो रसतां वेत्ति शैत्यं वेत्ति यथा हिमम्। स्पन्दं वेत्ति यथा वायुस्तथैतद्वेत्ति शुद्धधीः ॥ १२ ॥

yathāmbho rasatāṃ vetti śaityaṃ vetti yathā himam | spandaṃ vetti yathā vāyustathaitadvetti śuddhadhīḥ || 12 ||

Just as water knows its fluidity, cold knows its chill, and wind knows its motion, so does the pure intellect know this.

जैसे जल अपनी तरलता को जानता है, ठंड अपने ठंडेपन को जानती है, और वायु अपनी गति को जानती है, वैसे ही शुद्ध बुद्धि इसे जानती है।

7.62.13

यो यो नाम विवेकात्मा शुद्धबोधैकतां गतः। सम एव मयैकात्मा वेद्मि स्वात्मानमीदृशम् ॥ १३ ॥

yo yo nāma vivekātmā śuddhabodhaikatāṃ gataḥ | sama eva mayaikātmā vedmi svātmānamīdṛśam || 13 ||

Whoever is named, with a discriminating self, has attained the unity of pure consciousness. I know my self to be the same, one with the self.

जो भी नाम है, विवेकी आत्मा वाला, शुद्ध चेतना की एकता को प्राप्त हुआ है। मैं अपने आप को ऐसा ही जानता हूँ, आत्मा से एक।

7.62.14

अस्या दृष्टेः परिणतेर्वेत्तृवेदनवेद्यधीः। न काचिदस्त्यभ्युदिता विज्ञानात्मैकता यतः ॥ १४ ॥

asyā dṛṣṭeḥ pariṇatervettṛvedanavedyadhīḥ | na kācidastyabhyuditā vijñānātmaikatā yataḥ || 14 ||

From the perspective of this evolved vision, there is no distinction between the knower, the known, and the knowledge. There is only the unity of consciousness.

इस विकसित दृष्टि के दृष्टिकोण से, ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञान के बीच कोई भेद नहीं है। केवल चेतना की एकता है।

7.62.15

दिव्या दृगद्रिसंस्थस्य तथा योजनकोटिगान्। भावान्वेत्ति बहिश्चान्तरेवं तद्बुद्धवानहम् ॥ १५ ॥

divyā dṛgadrisaṃsthasya tathā yojanakoṭigān | bhāvānvetti bahiścāntarevaṃ tadbuddhavān aham || 15 ||

The divine vision, situated in the mountains, perceives the states of beings even millions of miles away, both outside and inside. Thus, I am enlightened.

पर्वतों में स्थित दिव्य दृष्टि करोड़ों मील दूर के प्राणियों की स्थिति को भी बाहर और अंदर दोनों तरह से देखती है। इस प्रकार, मैं प्रकाशित हूँ।

7.62.16

यथा भूमण्डलं भावान्निधिधातुरसादिकान्। वेत्त्येवं तन्मया बुद्धमनन्यदृश्यमात्मनः ॥ १६ ॥

yathā bhūmaṇḍalaṃ bhāvānnidhidhāturasādikān | vetyevaṃ tanmayā buddhamananyadṛśyamātmanaḥ || 16 ||

Just as the earth contains treasures, minerals, and essences, so too the self is known to be non-different from that, not perceivable as anything else.

जैसे पृथ्वी में खजाने, धातुएं और रस होते हैं, वैसे ही आत्मा उससे भिन्न नहीं है, किसी और तरीके से देखा नहीं जा सकता।

7.62.17

श्रीराम उवाच। ब्रह्मन्ननुभवत्येवं त्वयि तामरसेक्षण। सा किं कृतवती ब्रूहि कान्ताऽर्यापाठपाठिनी ॥ १७ ॥

śrīrāma uvāca | brahmannanubhavatyevaṃ tvayi tāmarasekṣaṇa | sā kiṃ kṛtavatī brūhi kāntā'ryāpāṭhapāṭhinī || 17 ||

Sri Rama said: O Brahmin, do you experience her thus, O lotus-eyed one? Tell me, what did she do, that beloved one who recites the Arya verses?

श्रीराम ने कहा: हे ब्राह्मण, क्या तुम उसे ऐसे ही अनुभव करते हो, हे कमलनयन? बताओ, वह क्या करती है, वह प्रिया जो आर्या श्लोक पढ़ती है?

7.62.18

वसिष्ठ उवाच । तामेवार्यां पठन्ती सा तथैवानुनयान्विता । मत्समीपे नभोदेहा व्योम्नि देवीव संस्थिता ॥ १८ ॥

vasiṣṭha uvāca | tāmevāryāṃ paṭhantī sā tathaivānunayānvitā | matsamīpe nabhodehā vyomni devīva saṃsthitā || 18 ||

Vasistha said: She, reciting the same Arya verses, with the same humility, appeared before me with a sky-like body, as if a goddess standing in the sky.

वसिष्ठ ने कहा: वह, उसी आर्या श्लोक पढ़ते हुए, उसी विनम्रता से, मेरे सामने आकाश-सी देह लेकर प्रकट हुई, जैसे आकाश में खड़ी देवी।

7.62.19

यथाहमाकाशवपुस्तथैवासौ खरूपिणी । तेन दृष्टा न सा पूर्वं देहेन ललना मया ॥ १९ ॥

yathāhamākāśavapustathaivāsau kharūpiṇī | tena dṛṣṭā na sā pūrvaṃ dehena lalanā mayā || 19 ||

Just as I have a sky-like body, so too does she have a donkey-like form. Therefore, she was not seen by me before with a beautiful body.

जैसे मेरा शरीर आकाश-सा है, वैसे ही उसका शरीर गधे-सा है। इसलिए, वह मुझे पहले सुंदर शरीर के साथ नहीं दिखी।

7.62.20

अहमाकाशमात्रात्मा सा खमात्रशरीरिणी । जगज्जालं खमात्रं तदिति तत्र तदा स्थितम् ॥ २० ॥

ahamākāśamātrātmā sā khamātraśarīriṇī | jagajjālaṃ khamātraṃ taditi tatra tadā sthitam || 20 ||

I am the self consisting of mere sky, she has a body of mere sky, the web of the world is mere sky, thus it was established there at that time.

मैं केवल आकाश से बना आत्मा हूँ, वह केवल आकाश से बनी शरीर वाली है, संसार का जाल केवल आकाश है, इस प्रकार उस समय वहाँ यह स्थापित हुआ।

7.62.21

श्रीराम उवाच । शरीरस्थानकरणप्रयत्नप्राणसंभवैः । यदुदेति वचो वर्णैस्तत्कुतस्तादृशाकृतेः ॥ २१ ॥

śrīrāma uvāca | śarīrasthānakaraṇaprayatnaprāṇasaṃbhavaistadudeti vaco varṇaistatkutastādṛśākṛteḥ || 21 ||

Sri Rama said: From the efforts of the body, senses, and vital breath, how does speech arise with such characteristics?

श्री राम ने कहा: शरीर, इंद्रियों और प्राण के प्रयत्नों से ऐसी विशेषताओं वाली वाणी कैसे उत्पन्न होती है?

7.62.22

रूपालोकमनस्कारः कुतो नामात्मनामिति । ब्रूहि मे भगवंस्तत्त्वं यथावृत्तश्च निश्चयम् ॥ २२ ॥

rūpālokamanaskāraḥ kuto nāmātmanāmiti | brūhi me bhagavaṃstattvaṃ yathāvṛttaśca niścayam || 22 ||

From where does the perception of form, sight, and mental impressions arise? O Lord, please tell me the truth and the definite conclusion about this.

रूप, दृष्टि और मानसिक संस्कारों की प्रतीति कहाँ से उत्पन्न होती है? हे भगवन्, इसके बारे में मुझे सत्य और निश्चित निष्कर्ष बताएँ।

7.62.23

श्रीवसिष्ठ उवाच । रूपालोकमनस्काराः शब्दपाठवचांसि च । यथा स्वप्ने नभस्येव सन्ति तत्र तथाम्बरे ॥ २३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rūpālokamanaskārāḥ śabdapāṭhavacāṃsi ca | yathā svapne nabhasyeva santi tatra tathāmbare || 23 ||

Vasishtha said: Just as in a dream, forms, sights, mental impressions, sounds, readings, and speeches appear in the sky-like mind.

वसिष्ठ ने कहा: जैसे स्वप्न में, रूप, दृष्टि, मानसिक संस्कार, शब्द, पठन और वाणी आकाश जैसे मन में प्रकट होते हैं।

7.62.24

रूपालोकमनस्कारैः स्वप्ने चिन्नभ एव ते । यथोदेति तथा तत्र तद्दृश्यं खात्मकं स्थितम् ॥ २४ ॥

rūpālokamanaskāraiḥ svapne cinnabha eva te | yathodeti tathā tatra taddṛśyaṃ khātmakaṃ sthitam || 24 ||

In a dream, forms, sights, and mental impressions appear just like the sky. Similarly, the visible world is established in the sky-like consciousness.

स्वप्न में, रूप, दृष्टि और मानसिक संस्कार आकाश की तरह प्रकट होते हैं। इसी तरह, दृश्य जगत आकाश जैसे चेतना में स्थित है।

7.62.25

न केवलं तु तद्दृश्यं यावत्तु विषये वयम् । जगच्चेदं खमेवाच्छं यथा तन्नस्तथाखिलम् ॥ २५ ॥

na kevalaṃ tu taddṛśyaṃ yāvattu viṣaye vayam | jagaccedaṃ khamevācchaṃ yathā tannastathākhilam || 25 ||

Not only the visible world but also all objects of experience are like the sky. This entire universe is pervaded by the sky-like consciousness.

केवल दृश्य जगत ही नहीं, बल्कि सभी अनुभव के विषय भी आकाश की तरह हैं। यह पूरा ब्रह्मांड आकाश जैसे चेतना से व्याप्त है।

7.62.26

परमार्थमहाधातुर्वेद्यनिर्मुक्तचिद्वपुः । एवं नाम स्वयं भाति स्वभावस्येव निश्चयः ॥ २६ ॥

paramārthamahādhāturvedyanirmuktacidvapuḥ | evaṃ nāma svayaṃ bhāti svabhāvasyeva niścayaḥ || 26 ||

The ultimate reality, the great element, is the knowable, liberated, conscious form. Thus, it shines by itself, just as the nature is certain.

परमार्थ महाधातु, ज्ञेय, निर्मुक्त, चेतन रूप है | इस प्रकार, यह स्वयं ही चमकता है, जैसे स्वभाव निश्चित है |

7.62.27

शरीरस्थानकरणसत्तायां का तव प्रमा । यथैव तेषां देहादि तथास्माकमिदं स्थितम् ॥ २७ ॥

śarīrasthānakaraṇasattāyāṃ kā tava pramā | yathaiva teṣāṃ dehādi tathāsmākamidaṃ sthitam || 27 ||

In the existence of the body, place, and organs, what is your certainty? Just as their body and so on, so is this established for us.

शरीर, स्थान और इंद्रियों की सत्ता में, तुम्हारी क्या निश्चितता है? जैसे उनका शरीर और आदि, वैसे ही यह हमारे लिए स्थापित है |

7.62.28

यथैव तत्तथैवेदं तथैवेदं यथैव तत् । असत्सत्तामिव गते सच्चासदिव च स्थितम् ॥ २८ ॥

yathaiva tattathaivedaṃ tathaivedaṃ yathaiva tat | asatsattāmiva gate saccāsadiva ca sthitam || 28 ||

Just as that is so, so is this. Just as this is so, so is that. It is as if non-existence has gone, and existence and non-existence are both established.

जैसे वह वैसा ही है, वैसे ही यह है | जैसे यह वैसा ही है, वैसे ही वह है | मानो असत्ता चली गई है, और सत् और असत् दोनों स्थापित हैं |

7.62.29

यथा स्वप्ने धराध्वादिपृष्ठव्यवहृतिर्नभः । तदा ह्यहं च त्वं सा च तदिदं च तथा नभः ॥ २९ ॥

yathā svapne dharādhvādipṛṣṭhavyavahṛtirnabhaḥ | tadā hyahaṃ ca tvaṃ sā ca tadidaṃ ca tathā nabhaḥ || 29 ||

Just as in a dream, the earth, directions, and other supports are perceived as sky. Then, I, you, she, this, and that are all like the sky.

जैसे स्वप्न में, धरती, दिशाएँ, और अन्य आधार आकाश के रूप में दिखाई देते हैं | तब, मैं, तुम, वह, यह, और वह सब आकाश के समान हैं |

7.62.30

यथा स्वप्ने नृभिर्युद्धकोलाहलगमागमाः । असन्तोऽप्यनुभूयन्ते संसारनिकरास्तथा ॥ ३० ॥

yathā svapne nṛbhiryuddhakolāhalagamāgamāḥ | asanto'pyanubhūyante saṃsāranikarāstathā || 30 ||

Just as in a dream, people experience the tumult and coming and going of battle, even though they are non-existent. Similarly, the multitudes of the world are experienced.

जैसे स्वप्न में, लोग युद्ध के शोर और आने-जाने का अनुभव करते हैं, भले ही वे अवास्तविक हों | वैसे ही, संसार की भीड़ का अनुभव होता है |

7.62.31

वक्षि चेत्स्वप्नदृश्यश्रीः कस्मात्तदसमञ्जसम् । अवाच्यमेतद्धेतुर्हि नान्योऽस्त्यनुभवस्थितेः ॥ ३१ ॥

vakṣi cet svapnadṛśyaśrīḥ kasmāttad asamajñasam | avācyametad dheturhi nānyo'sty anubhavasthiteḥ || 31 ||

If you think the glory of the dream is unreal, why is it so inconceivable? This is indeed inexplicable, for there is no other basis for experience.

अगर आपको लगता है कि स्वप्न की शोभा असत्य है, तो यह क्यों असमंजस है? यह वास्तव में अवर्णनीय है, क्योंकि अनुभव के लिए कोई अन्य आधार नहीं है।

7.62.32

कथमालक्ष्यते स्वप्न इति प्रष्टुः प्रकथ्यते । यथैवं पश्यसीत्येव हेतुरत्रास्ति नेतरः ॥ ३२ ॥

kathamālakṣyate svapna iti praṣṭuḥ prakathyate | yathaivaṃ paśyasītyeva heturatrāsti netaraḥ || 32 ||

How is the dream perceived? It is explained to the questioner: just as you see it, the cause is here, not elsewhere.

स्वप्न कैसे देखा जाता है? प्रश्नकर्ता को समझाया जाता है: जैसे आप देखते हैं, वैसे ही कारण यहीं है, कहीं और नहीं।

7.62.33

स्वप्नजन्तुरिव व्योम्नि भाति प्रथमसर्गतः । प्रभृत्येव विराडात्मा खे खमेव परस्परे ॥ ३३ ॥

svapnajanturiva vyomni bhāti prathamasargataḥ | prabhṛtyeva virāḍātmā khe khameva paraspare || 33 ||

Just as a dream creature appears in the sky, the cosmic form appears from the beginning in the sky itself.

जैसे स्वप्न का जीव आकाश में प्रकट होता है, वैसे ही विराट आत्मा आकाश में ही प्रकट होता है।

7.62.34

स्वप्नशब्देन बोधार्थं तव व्यवहराम्यहम् । दृश्यं त्विदं न सन्नासन्न स्वप्नो ब्रह्म केवलम् ॥ ३४ ॥

svapnaśabdena bodhārthaṃ tava vyavaharāmyaham | dṛśyaṃ tvidaṃ na sannāsanna svapno brahma kevalam || 34 ||

I use the word 'dream' to convey understanding. This visible world is neither real nor unreal; it is merely a dream, Brahman alone is real.

मैं 'स्वप्न' शब्द का उपयोग समझाने के लिए करता हूँ। यह दृश्य जगत न तो सत्य है न असत्य; यह तो एक स्वप्न है, ब्रह्म ही सत्य है।

7.62.35

अथ राघव सा कान्ता मया कान्तानुषङ्गिणी । संविदं तन्मयीं कृत्वा पृष्टेदं दृश्यरूपिणी ॥ ३५ ॥

atha rāghava sā kāntā mayā kāntānuṣaṅgiṇī | saṃvidaṃ tanmayīṃ kṛtvā pṛṣṭedam dṛśyarūpiṇī || 35 ||

O Raghava, that beloved of mine, who is always with me, having made her consciousness one with mine, asked this question in the form of the visible world.

हे राघव, मेरी वह प्रिया जो हमेशा मेरे साथ रहती है, उसने अपनी चेतना को मेरे साथ एक करके इस दृश्य जगत के रूप में प्रश्न किया।

7.62.36

व्यवहारो यथोदेति स्वप्ने स्वप्नजनैः सह । तथा तदा तया सार्धं व्यवहारो ममोदितः ॥ ३६ ॥

vyavahāro yathodeti svapne svapnajanaiḥ saha | tathā tadā tayā sārdhaṃ vyavahāro mamoditaḥ || 36 ||

Just as interactions arise in a dream with dream characters, similarly, my interactions with her arose at that time.

जैसे स्वप्न में स्वप्न के चरित्रों के साथ व्यवहार उत्पन्न होता है, वैसे ही उस समय मेरा उसके साथ व्यवहार उत्पन्न हुआ।

7.62.37

यथैव स्वप्नसंकाशो व्यवहारः खमेव सः । तथैव त्वमिमं विद्धि मामात्मानं जगच्च खम् ॥ ३७ ॥

yathaiva svapnasankāśo vyavahāraḥ kham eva saḥ | tathaiva tvam imaṃ viddhi māmātmānaṃ jagac ca kham || 37 ||

Just as the interaction in a dream is like the sky, similarly, you should know that I, the self, and the world are like the sky.

जैसे स्वप्न में व्यवहार आकाश के समान होता है, वैसे ही तुम यह जानो कि मैं, आत्मा और जगत् आकाश के समान हैं।

7.62.38

यथा स्वप्नजगद्रूपं खमेवैवमिदं जगत् । जाग्रदादौ स हि स्वप्नः सर्गादौ जगदुद्भवः ॥ ३८ ॥

yathā svapnajagadrūpaṃ kham evaivam idaṃ jagat | jāgradādau sa hi svapnaḥ sargādau jagadudbhavaḥ || 38 ||

Just as the dream world is like the sky, so is this world. Indeed, the dream arises in the waking state, and the world arises in creation.

जैसे स्वप्न का जगत् आकाश के समान होता है, वैसे ही यह जगत् है। वास्तव में, स्वप्न जाग्रत अवस्था में उत्पन्न होता है, और जगत् सृष्टि में उत्पन्न होता है।

7.62.39

स्वप्नोऽयं जगदाभोगो न किंचिद्वा खमेव च । निर्मलं ज्ञप्तितामात्रमित्थं सन्मात्रसंस्थितम् ॥ ३९ ॥

svapno'yaṃ jagadābhogo na kiṃcid vā kham eva ca | nirmalaṃ jñaptitāmātram itthaṃ sanmātrasaṃsthitam || 39 ||

This worldly experience is like a dream, or perhaps nothing at all, just like the sky. It is pure, merely a cognition, thus existing as mere reality.

यह जगत् का अनुभव स्वप्न के समान है, या शायद कुछ भी नहीं, आकाश के समान। यह शुद्ध है, केवल एक ज्ञान मात्र, इस प्रकार केवल वास्तविकता के रूप में अस्तित्व में है।

7.62.40

स्वप्नस्य विद्यते द्रष्टा साकारो युष्मदादिकः । द्रष्टा तु सर्गस्वप्नस्य चिद्व्योमैवामलं स्वतः ॥ ४० ॥

svapnasya vidyate drṣṭā sākāro yuṣmadādikaḥ | drṣṭā tu sargasvapnasya cidvyomai evāmalaṃ svataḥ || 40 ||

There is a perceiver of the dream, embodied, starting with you. However, the perceiver of the cosmic dream is the pure, stainless consciousness itself.

स्वप्न का एक द्रष्टा होता है, साकार, आपसे शुरू होता है। हालाँकि, सृष्टि के स्वप्न का द्रष्टा स्वयं शुद्ध, निर्दोष चेतना है।

7.62.41

यथा द्रष्टामलं व्योम दृश्यं तद्वद्गतं तथा । स्वप्नरूपजगत्युच्चैर्जगत्त्वेनामलं नभः ॥ ४१ ॥

yathā draṣṭāmalaṃ vyoma dṛśyaṃ tadvadgataṃ tathā | svapnarūpajagatyuccairjagattvenāmalaṃ nabhaḥ || 41 ||

Just as the pure sky appears to be impure to the observer, similarly, the dream-like world appears to be real and pure.

जैसे शुद्ध आकाश दर्शक को अशुद्ध प्रतीत होता है, वैसे ही स्वप्न-रूपी जगत वास्तविक और शुद्ध प्रतीत होता है।

7.62.42

चिद्व्योम्नोऽनाकृतेः स्वप्नो हृदि स्फुरति यः स्वतः । सर्गस्तस्य कुतस्तेन साकृतित्वं कथं भवेत् ॥ ४२ ॥

cidvyomno'nākṛteḥ svapno hṛdi sphurati yaḥ svataḥ | sargastasya kutastena sākṛtitvaṃ kathaṃ bhavet || 42 ||

How can the dream, which spontaneously arises in the heart of the formless consciousness, have a form? From where does the creation of that dream come?

निराकार चेतना के हृदय में स्वयं उत्पन्न होने वाले स्वप्न का रूप कैसे हो सकता है? उस स्वप्न की सृष्टि कहाँ से आती है?

7.62.43

साकारस्यैव यत्स्वप्नजगत्तद्व्योम निर्मलम् । निराकारस्य चिद्व्योम्नः सर्गः स्वप्नः कथं न खम् ॥ ४३ ॥

sākārasyaiva yatsvapnajagattadvyoma nirmalam | nirākārasya cidvyomnaḥ sargaḥ svapnaḥ kathaṃ na kham || 43 ||

If the dream world has a form, then the sky is pure. How can the creation of the formless consciousness be a dream and not the sky?

यदि स्वप्न जगत रूप धारण करता है, तो आकाश शुद्ध है। निराकार चेतना की सृष्टि स्वप्न कैसे हो सकती है और आकाश नहीं?

7.62.44

निरुपादानसंभारमभित्तावेव चिन्नभः । पश्यत्यकृतमेवेमं जगत्स्वप्नं कृतं यथा ॥ ४४ ॥

nirupādānasambhāramabhittāveva cinnabhaḥ | paśyatyakṛtamevemaṃ jagatsvapnaṃ kṛtaṃ yathā || 44 ||

The consciousness sky, which is without any material cause, sees this uncreated world as a dream, just as it is created.

जो किसी भी भौतिक कारण से रहित है, वह चेतना का आकाश इस अकृत्रिम जगत को स्वप्न के रूप में देखता है, जैसे कि यह बनाया गया है।

7.62.45

मृद्व्या चिदाकाशमृदा ब्रह्मणा ब्राह्मणेन खे । कृतोऽपि न कृतः सर्गमण्डपोऽक्षगवाक्षकः ॥ ४५ ॥

mṛdvyā cidākāśamṛdā brahmaṇā brāhmaṇena khe | kṛto'pi na kṛtaḥ sargamaṇḍapo'kṣagavākṣakaḥ || 45 ||

Even though the universe is created by Brahman in the sky of consciousness, it is not really created, like a palace with windows and balconies made of clay.

यद्यपि ब्रह्मा द्वारा चेतना के आकाश में बनाया गया ब्रह्मांड, वास्तव में बनाया नहीं गया है, जैसे कि मिट्टी से बना महल जिसमें खिड़कियाँ और बालकनियाँ हों।

7.62.46

नो कर्तृता न च जगन्ति न भोक्तृतास्ति नास्तीति नास्ति न च किंचिदतो बुधः सन् पाषाणमौनमवलम्ब्य
यथाप्रवाहमाचारमाचर शरीरमिहास्तु मा वा ओ ॥ ४६ ॥

no kartṛtā na ca jaganti na bhoktṛtāsti nāstīti nāsti na ca kiṃcidato budhaḥ san pāṣāṇamaunamavalambya yathāpravāhamācāramācara śarīramihāstu mā vā o || 46 ||

There is no doer, no world, no enjoyer, nothing exists, nothing at all. Therefore, the wise one, relying on the silence of a stone, should act according to the natural flow. Whether the body remains or not, it does not matter.

कोई कर्ता नहीं है, कोई जगत नहीं है, कोई भोक्ता नहीं है, कुछ भी नहीं है, कुछ भी नहीं है। इसलिए, बुद्धिमान व्यक्ति, पत्थर की चुप्पी पर भरोसा करके, प्राकृतिक प्रवाह के अनुसार कार्य करे। शरीर रहे या न रहे, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

Chapter 63

7.63.1

श्रीराम उवाच । तव स्त्रियाऽस्वरूपेण देहेनाभूत्तया कथम् । कथमुच्चारितास्तत्र वर्णाः कचटतादयः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | tava striyā'svarūpeṇa dehenābhūttayā katham | kathamuccāritāstatra varṇāḥ kacaṭatādayaḥ || 1 ||

Shri Ram said: How could you, in the form of a woman, have a body? How were the letters such as 'ka', 'cha', 'ṭa', etc., pronounced there?

श्री राम ने कहा: तुम स्त्री के रूप में कैसे शरीर धारण कर सकती हो? वहाँ कैसे वर्णों का उच्चारण हुआ 'क', 'च', 'ट' आदि?

7.63.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । वर्णेषु खशरीराणां वर्णाः कचटतादयः । कदाचनापि नोद्यन्ति शवानामिव केन च ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | varṇeṣu khaśarīrāṇāṃ varṇāḥ kacaṭatādayaḥ | kadācanāpi nodyanti śavānāmiva kena ca || 2 ||

Vasishtha said: The letters such as 'ka', 'cha', 'ṭa', etc., do not arise in the bodies of the sky-dwellers, just as they do not arise in corpses.

वसिष्ठ ने कहा: आकाश के शरीरों में 'क', 'च', 'ट' आदि वर्ण उत्पन्न नहीं होते, जैसे कि मृत शरीरों में नहीं उत्पन्न होते।

7.63.3

वर्णोच्चारोऽभविष्यच्चेत्प्रकटार्थस्ततः क्वचित् । स्वप्नेष्वन्वभविष्यत्तं विनिद्रः पार्श्वगो जनः ॥ ३ ॥

varṇoccāro'bhaviṣyacchetprakaṭārthastataḥ kvacit | svapneṣvanvabhaviṣyattaṃ vinidraḥ pārśvago janaḥ || 3 ||

If the pronunciation of letters were to occur, then the meaning would be manifested somewhere. In dreams, it would occur to the person lying beside, who is awake.

यदि वर्णों का उच्चारण होता, तो अर्थ कहीं प्रकट होता। स्वप्नों में, यह उस व्यक्ति के लिए होता जो पास में सो रहा होता है, जो जागरूक है।

7.63.4

तस्मान्न किंचित्स्वप्नेषु तत्सत्यं भ्रान्तिरेव सा । चिन्मात्राकाशकचनं तत्तथा खे स्वभावजम् ॥ ४ ॥

tasmānna kiṃcitsvapneṣu tatsatyaṃ bhrāntireva sā | cinmātrākāśakacanaṃ tattathā khe svabhāvajam || 4 ||

Therefore, there is nothing true in dreams; it is merely a delusion. That which is pure consciousness is like the sky, and it is naturally so.

इसलिए, स्वप्नों में कुछ भी सत्य नहीं है; यह केवल एक भ्रम है। जो शुद्ध चेतना है, वह आकाश की तरह है, और यह स्वाभाविक रूप से है।

7.63.5

तदेन्दुकाष्ण्यखतनुशिलागेयादितां गताः । इवाभान्ति चिदाकाशास्तथा देहरवादयः ॥ ५ ॥

tadendukārṣṇyakhatanuśilāgeyāditāṃ gatāḥ | ivābhānti cidākāśāstathā deharavādayaḥ || 5 ||

Those who have attained the state of pure consciousness appear like the moon, the blackness of night, the body, stones, songs, etc., in the sky.

जो लोग शुद्ध चेतना की अवस्था को प्राप्त हो गए हैं, वे आकाश में चंद्रमा, रात का अंधकार, शरीर, पत्थर, गीत, आदि की तरह दिखाई देते हैं।

7.63.6

तच्चिदाकाशकचनं यन्नाम स्वप्नवेदने । आकाशमेव नभसः कचनं विद्धि नेतरत् ॥ ६ ॥

taccidākāśakacanaṃ yannāma svapnavedane | ākāśameva nabhasaḥ kacanaṃ viddhi netarat || 6 ||

That which is known as the space of consciousness in the dream state, know it to be the same space of the sky, and nothing else.

जो स्वप्न अवस्था में चेतना का आकाश कहलाता है, उसे आकाश का ही आकाश समझो, और कुछ नहीं।

7.63.7

यथा स्वप्नस्तथैवेदं जाग्रदग्रे व्यवस्थितम् । आकाशमप्यनाकाशं यथैवेदं तथैव तत् ॥ ७ ॥

yathā svapnastathaivedaṃ jāgradagre vyavasthitam | ākāśamapyanākāśaṃ yathaivedaṃ tathaiva tat || 7 ||

Just as a dream, so is this world established in the waking state. Just as this space is not space, so is that.

जैसे स्वप्न, वैसे ही यह जगत जाग्रत अवस्था में स्थापित है। जैसे यह आकाश आकाश नहीं है, वैसे ही वह भी है।

7.63.8

यथा कचति तच्चारु चेतनं चतुरं तथा । यथा स्थितं तदेवेदं सत्यं स्थिरमिव स्फुरत् ॥ ८ ॥

yathā kacati taccāru cetanaṃ caturam tathā | yathā sthitaṃ tadevedaṃ satyaṃ sthiramiva sphurat || 8 ||

Just as it shines beautifully, so does the intelligent consciousness. Just as it is established, so is this truth, stable and shining.

जैसे यह सुंदर रूप से चमकता है, वैसे ही बुद्धिमान चेतना चमकती है। जैसे यह स्थापित है, वैसे ही यह सत्य स्थिर और चमकता हुआ है।

7.63.9

श्रीराम उवाच । भगवन्स्वप्न एवेदं कथं जाग्रदवस्थितम् । असत्यमेव सत्यत्वमिव यातं कथं भवेत् ॥ ९ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansvapna evedaṃ kathaṃ jāgradavasthitam | asatyameva satyatvamiva yātaṃ kathaṃ bhavet || 9 ||

Sri Rama said: O Lord, how can this world, which is like a dream, be established in the waking state? How can the unreal appear as real?

श्री राम ने कहा: हे भगवन्, यह जगत जो स्वप्न की तरह है, यह जाग्रत अवस्था में कैसे स्थापित हो सकता है? असत्य कैसे सत्य की तरह प्रतीत हो सकता है?

7.63.10

श्रीवसिष्ठ उवाच । शृणु स्वप्नमयान्येव कथं सन्ति जगन्त्यलम् । नान्यानि न च सत्यानि न स्थिराणि स्थितानि च ॥ १० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śṛṇu svapnamayānyeva kathaṃ santi jagantyalam | nānyāni na ca satyāni na sthirāṇi sthitāni ca || 10 ||

Vasishtha said: Listen, all these worlds are indeed like dreams. They are not different, nor are they real, nor are they stable or established.

वसिष्ठ ने कहा: सुनो, ये सभी जगत वास्तव में स्वप्न की तरह हैं। ये अलग नहीं हैं, न ही सत्य हैं, न ही स्थिर या स्थापित हैं।

7.63.11

अनुभूतानि बीजानि बीजराशाविवाम्वरे । अन्यान्यन्यानि तान्येव समानि न समानि च ॥ ११ ॥

anubhūtāni bījāni bījarāśāvivāmvare | anyānyanyāni tānyeva samāni na samāni ca || 11 ||

The seeds that have been experienced are like a heap of seeds in a lotus pond; they are both similar and different from each other.

जो बीज अनुभव किए गए हैं, वे कमल के तालाब में बीजों के ढेर की तरह हैं; वे एक दूसरे से समान और असमान भी हैं।

7.63.12

प्रत्येकमन्तरन्यानि तथैवाभ्युदितानि च । परस्परमदृष्टानि बहूनि विविधानि च ॥ १२ ॥

pratyekamantaranyāni tathaivābhyuditāni ca | parasparamadṛṣṭāni bahūni vividhāni ca || 12 ||

Each one is different from the other, and they are also manifested in various ways. They are seen by each other and are many and diverse.

प्रत्येक एक दूसरे से अलग है, और वे विभिन्न प्रकार से भी प्रकट होते हैं। वे एक दूसरे को देखते हैं और बहुत सारे और विविध हैं।

7.63.13

अन्योन्यं तानि सर्वाणि न पश्यन्त्येव किंचन । जडानीवैकराशीनि बीजानीव गलन्त्यपि ॥ १३ ॥

anyonyaṃ tāni sarvāṇi na paśyantyeva kiñcana | jaḍānīvaikarāśīni bījānīva galantyapi || 13 ||

They do not see each other at all, as if they are inert and merged into one, even though they are melting like seeds.

वे एक दूसरे को बिलकुल नहीं देखते, जैसे कि वे जड़ हैं और एक ही में मिल गए हैं, भले ही वे बीजों की तरह पिघल रहे हैं।

7.63.14

व्योमात्मत्वान्न गगनं न विदन्ति परस्परम् । अपि चेतनरूपाणि सुप्तानीव निरन्तरम् ॥ १४ ॥

vyomātmatvānna gaganam na vidanti parasparam | api cetanarūpāṇi suptānīva nirantaram || 14 ||

Due to their sky-like nature, they do not perceive each other, even though they are conscious beings, they remain as if asleep continuously.

अपने आकाश-जैसे स्वभाव के कारण, वे एक दूसरे को नहीं देखते, भले ही वे चेतन प्राणी हैं, वे निरंतर सोए हुए की तरह रहते हैं।

7.63.15

सुप्ताः स्वप्नजगज्जालमहनि व्यवहारिणः । असुरा निहता देवैस्ते स्वप्नजगति स्थिताः ॥ १५ ॥

suptāḥ svapnajagajjālamahani vyavahāriṇaḥ | asurā nihatā devaiste svapnajagati sthitāḥ || 15 ||

Asleep, they engage in the dream world's activities, like demons defeated by gods, they remain in the dream world.

सोए हुए, वे स्वप्न जगत की गतिविधियों में लगे हैं, जैसे कि देवताओं द्वारा पराजित असुर, वे स्वप्न जगत में रहते हैं।

7.63.16

अज्ञानान्न गता मुक्तिं न जाड्याज्जडतामिताः । न देहवन्तः किं सन्तु विना स्वप्नजगत्स्थितेः ॥ १६ ॥

ajñānānna gatā muktiṃ na jāḍyājjadatāmitāḥ | na dehavantaḥ kiṃ santu vinā svapnajagatsthiteḥ || 16 ||

Due to ignorance, they have not attained liberation; due to dullness, they have not attained inertness. Without being situated in the dream world, what are they?

अज्ञान के कारण उन्होंने मुक्ति नहीं पाई, और जड़ता के कारण उन्होंने जड़ता नहीं पाई। स्वप्न जगत में स्थित न होने पर, वे क्या हैं?

7.63.17

सुप्ताः स्वप्नजगज्जाले स्वाचारव्यवहारिणः । पुरुषा निहताः पुंभिस्ते तथैव व्यवस्थिताः ॥ १७ ॥

suptāḥ svapnajagajjāle svācāravyavahāriṇaḥ | puruṣā nihitāḥ puṃbhistē tathaiva vyavasthitāḥ || 17 ||

Those who are asleep in the web of the dream world, engaged in their own activities, those men are slain by men, they are thus situated.

जो स्वप्न जगत के जाल में सोए हुए हैं, अपने व्यवहार में लगे हुए हैं, वे पुरुष पुरुषों द्वारा मारे गए हैं, वे इस प्रकार स्थित हैं।

7.63.18

निर्मोक्षा निःशरीरास्ते चेतनावासनान्विताः । दृष्टं स्वप्नजगज्जालं विना च क्व वसन्तु ते ॥ १८ ॥

nirmokṣā niḥśarīrāste cetanāvāsanānvitāḥ | dṛṣṭaṃ svapnajagajjālaṃ vinā ca kvā vasantu tē || 18 ||

Without liberation, without bodies, endowed with the impressions of consciousness, where do they reside without seeing the web of the dream world?

मुक्ति के बिना, शरीर के बिना, चेतना की वासनाओं से युक्त, स्वप्न जगत के जाल को देखे बिना वे कहाँ रहते हैं?

7.63.19

सुप्ताः स्वप्नजगज्जालव्यवस्थाचारचारिणः । ये हता राक्षसा देवैस्ते यथैव व्यवस्थिताः ॥ १९ ॥

suptāḥ svapnajagajjālavyavasthācāracāriṇaḥ | yē hatā rākṣasā dēvais tē yathaiva vyavasthitāḥ || 19 ||

Those who are asleep, engaged in the activities of the web of the dream world, those who are slain by demons and gods, they are thus situated.

जो सोए हुए हैं, स्वप्न जगत के जाल के व्यवहार में लगे हुए हैं, जो राक्षसों और देवताओं द्वारा मारे गए हैं, वे इस प्रकार स्थित हैं।

7.63.20

एवं ये निहता राम किं ते कुर्वन्ति कथ्यताम् । अज्ञत्वान्न गता मुक्तिं चेतनान्न दृषत्स्थिताः ॥ २० ॥

evaṃ yē nihitā rāma kiṃ tē kurvanti kathyatām | ajñatvānna gatā muktiṃ cetanānna dṛṣatsthitāḥ || 20 ||

Thus, O Rama, what do those who are slain do? Tell me. Due to ignorance, they have not attained liberation; due to consciousness, they are not situated in seeing.

इस प्रकार, हे राम, वे जो मारे गए हैं, वे क्या करते हैं? मुझे बताओ। अज्ञान के कारण उन्होंने मुक्ति नहीं पाई, चेतना के कारण वे देखने में स्थित नहीं हैं।

7.63.21

साद्र्यब्ध्युर्वीजनं दृश्यमिदं सर्वं यथास्थितम् । चिरायानुभवन्त्येते यथेमे वयमादृताः ॥ २१ ॥

sādryabdhyurvījanaṃ dṛśyamidaṃ sarvaṃ yathāsthitam | cirāyānubhavantyete yathemē vayamādṛtāḥ || 21 ||

This visible universe is a manifestation of the Supreme Being, and it is experienced by us as it is. Just as we experience it, so do others.

यह दृश्य ब्रह्मांड परमात्मा का प्रकटीकरण है, और यह हमारे द्वारा जैसे अनुभव किया जाता है, वैसे ही दूसरों द्वारा भी अनुभव किया जाता है।

7.63.22

तेषां कल्पजगत्संस्था यथास्माकं तथैव ताः । अस्माकं जगतीसंस्था यथा तेषां तथैव च ॥ २२ ॥

teṣāṃ kalpajagatsaṃsthā yathāsmākaṃ tathaiva tāḥ | asmākaṃ jagatīsaṃsthā yathā teṣāṃ tathaiva ca || 22 ||

Their worldly existence is just like ours, and our worldly existence is just like theirs.

उनका संसारिक अस्तित्व हमारे जैसा ही है, और हमारा संसारिक अस्तित्व उनके जैसा ही है।

7.63.23

एतेषां स्वप्नपुरुषास्त एवेमे वयं स्थिताः । ये च ते नाम संसारास्तेभ्य एकमिमं विदुः ॥ २३ ॥

eteṣāṃ svapnapuruṣāsta evēmē vayaṃ sthitāḥ | yē ca tē nāma saṃsārāstēbhya ēkamimaṃ viduḥ || 23 ||

These dream beings are the same as us, and those who are called the worldly beings know this one.

ये स्वप्न पुरुष हमारे जैसे ही हैं, और जो संसारी कहलाते हैं, वे इस एक को जानते हैं।

7.63.24

ते स्वप्नपुरुषास्तेषां सत्या एवानुभूतितः । आत्मनोऽपि परस्यापि सर्वगत्वाच्चिदात्मनः ॥ २४ ॥

tē svapnapuruṣāstēṣāṃ satyā ēvānubhūtitḥ | ātmanō'pi parasya'pi sarvagatvāccidātmanaḥ || 24 ||

Those dream beings are truly real from the perspective of experience, both for the individual self and the supreme self, due to the omnipresence of the conscious self.

वे स्वप्न पुरुष अनुभव की दृष्टि से वास्तव में सत्य हैं, चाहे वे व्यक्तिगत आत्मा के लिए हों या परम आत्मा के लिए, चेतन आत्मा की सर्वव्यापकता के कारण।

7.63.25

यथा ते स्वप्नपुरुषाः सत्यमात्मन्यथाऽपरे । तथापि स्वप्नपुरुषाः सत्यमेव तथैव ते ॥ २५ ॥

yathā tē svapnapuruṣāḥ satyamātmani yathā'parē | tathāpi svapnapuruṣāḥ satyamēva tathaiva tē || 25 ||

Just as those dream beings are real in the self, so are others; similarly, those dream beings are truly real in the same way.

जैसे वे स्वप्न पुरुष आत्मा में सत्य हैं, वैसे ही दूसरे भी हैं; इसी तरह, वे स्वप्न पुरुष उसी तरह से वास्तव में सत्य हैं।

7.63.26

स्वस्वप्नपुरपौरा ये त्वया दृष्टास्तथैव ते । स्थितास्तत्र तथाद्यापि ब्रह्म सर्वात्मकं यतः ॥ २६ ॥

svasvapnapurapaurā ye tvayā dṛṣṭāstathaiva te| sthitāstatra tathādyāpi brahma sarvātmakaṃ yataḥ || 26 ||

The inhabitants of the dream city that you have seen are still there, because Brahman is the essence of everything.

जो स्वप्न नगर के निवासी आपने देखे हैं, वे अभी भी वहाँ हैं, क्योंकि ब्रह्म सबका आत्मा है।

7.63.27

प्रबोधेऽपि हि भिद्यन्ते स्वप्नभावा यथा स्थिताः । तथा स्थित्यानुभूयन्ते परब्रह्मतयाथवा ॥ २७ ॥

prabodhe'pi hi bhidyante svapnabhāvā yathā sthitāḥ| tathā sthityānubhūyante parabrahmatayāthavā || 27 ||

Even upon awakening, the dream states remain as they were, and they are experienced as the Supreme Brahman.

जाग्रत अवस्था में भी, स्वप्न की स्थितियाँ उसी तरह बनी रहती हैं, और वे परब्रह्म के रूप में अनुभव की जाती हैं।

7.63.28

सर्वं सर्वात्म सर्वत्र सर्वदास्ति तथा परे । यथा न किंचिन्नाकाशे न क्वचिन्न च हन्यते ॥ २८ ॥

sarvaṃ sarvātma sarvatra sarvadāsti tathā pare| yathā na kiṃcinnākāśe na kvacinna ca hanyate || 28 ||

Everything is the essence of everything, everywhere, and always in the Supreme. Just as nothing in the sky is destroyed anywhere.

सब कुछ सबका आत्मा है, सर्वत्र, सर्वदा, और परम में। जैसे आकाश में कहीं भी कुछ नहीं नष्ट होता।

7.63.29

निरन्तरे पराकाशे निरन्ते च विनोदये । निरन्ते चित्तसंघाते निरन्ते जगतां गणे ॥ २९ ॥

nirantare parākāśe nirante ca vinodaye| nirante cittasaṃghāte nirante jagatāṃ gaṇe || 29 ||

In the continuous Supreme space, in the endless joy, in the endless collection of thoughts, and in the endless multitude of worlds.

निरंतर परम आकाश में, अनंत आनंद में, अनंत चिंतन संघात में, और अनंत जगतों के समूह में।

7.63.30

प्रत्याकाशकलाकोशं प्रतिसंसारमण्डलम् । प्रतिलोकान्तराकारं प्रतिद्वीपं गिरिं प्रति ॥ ३० ॥

pratyākāśakalākośaṃ pratisansāramaṇḍalam| pratilokāntarākāraṃ pratidvīpaṃ giriṃ prati || 30 ||

In every part of the sky, in every sphere of the world, in every form of the other world, in every island, and in every mountain.

आकाश के हर भाग में, संसार के हर मंडल में, परलोक के हर रूप में, हर द्वीप में, और हर पर्वत में।

7.63.31

प्रतिमण्डलविस्तारं प्रतिग्रामं पुरं प्रति । प्रतिजन्तु प्रतिगृहं प्रतिवर्षं युगं प्रति ॥ ३१ ॥

pratimaṇḍalavistāraṃ pratigrāmaṃ puraṃ prati | pratijantu pratigṛhaṃ prativarṣaṃ yugaṃ prati || 31 ||

In every region, every village, every city, every person, every home, every year, and every age,

प्रत्येक मण्डल, प्रत्येक ग्राम, प्रत्येक पुर, प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक घर, प्रत्येक वर्ष, और प्रत्येक युग में,

7.63.32

यावन्तो ये मृताः केचिज्जीवा मोक्षविवर्जिताः । स्थितास्ते तत्र तावन्तः संसाराः पृथगक्षयाः ॥ ३२ ॥

yāvanto ye mṛtāḥ kecijjīvā mokṣavivarjitāḥ | sthitāste tatra tāvantaḥ saṃsārāḥ pṛthagakṣayāḥ || 32 ||

Those who have died and those who are alive but have not attained liberation, they are all in the cycle of rebirth, distinct in their destruction.

जो मृत हैं और जो जीवित हैं पर मोक्ष प्राप्त नहीं हैं, वे सभी पुनर्जन्म के चक्र में हैं, अलग-अलग विनाश में।

7.63.33

तेषामन्तर्जनाः सन्ति जनं प्रति पुनर्मनः । पुनर्मनः प्रति जगज्जगत्प्रति पुनर्जनः ॥ ३३ ॥

teṣāmantarjanāḥ santi janaṃ prati punarmanaḥ | punarmanaḥ prati jagajjagatprati punarjanaḥ || 33 ||

Their inner thoughts are directed towards people, and their minds are directed towards the world, and the world is directed towards people again.

उनके अंतर्जन लोगों की ओर हैं, और उनके मन संसार की ओर हैं, और संसार फिर से लोगों की ओर है।

7.63.34

इत्थमाद्यन्तरहित एष दृश्यमयो भ्रमः । ब्रह्मैव ब्रह्मवित्पक्षे नात्रेयत्तास्ति काचन ॥ ३४ ॥

itthamādyantarahita eṣa dṛśyamayo bhramaḥ | brahmaiva brahmavitpakṣe nātreyattāsti kācana || 34 ||

Thus, this illusion, which is devoid of beginning and end, is merely an appearance. In the view of the knower of Brahman, there is no reality here whatsoever.

इस प्रकार, यह आदि और अंत से रहित भ्रम, केवल एक दृश्यमय है। ब्रह्मज्ञानी के दृष्टिकोण से, यहाँ कोई वास्तविकता नहीं है।

7.63.35

कुड्ये नभस्युपलके सलिले स्थलेऽन्त श्चिन्मात्रमस्ति हि यतस्तदशेषविश्वम्। तद्यत्र तत्र जगदस्ति कुतोऽत्र संख्या तज्ज्ञेषु तत्परमथाज्ञमनःसु दृश्यम्॥ ३५॥

kuḍye nabhasyupalake salile sthale'nta ścinmātramasti hi yatastadśeṣaviśvam | tadyatra tatra jagadasti kuto'tra saṃkhyā tajjñeṣu tatparamathājñamanḥsu dṛśyam || 35 ||

In a wall, in the sky, in a stone, in water, in the earth, only pure consciousness exists. That which is the entire universe, where is the number there? In the minds of the wise, it is seen as the supreme truth.

कुड्ये (दीवार), नभस्य (आकाश), उपलके (पत्थर), सलिले (पानी), स्थले (पृथ्वी) में, केवल चिन्मात्र (पूर्ण चेतना) है। जो सम्पूर्ण विश्व है, वहाँ कहाँ संख्या है? ज्ञानी लोगों के मन में, यह परम सत्य के रूप में देखा जाता है।

Chapter 64

7.64.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततस्तत्कुवलोल्लासिमालतीमाल्यलोचना । ललना ललितालोक्य लीलयाऽऽलपिता मया ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tatastatkavalollāsimālatīmālyalocanā | lalanā lalitālokya līlayā'ālapitā mayā || 1 ||

Sri Vasistha said: Then, looking at the beautiful woman with eyes like a garland of jasmine flowers, I playfully spoke to her.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, चन्दन के फूलों की माला के समान आँखों वाली सुन्दर स्त्री को देखकर, मैंने खेल-खेल में उससे कहा।

7.64.2

का त्वं कमलगर्भाभे किमर्थं मामुपागता । कस्यासि किं प्रार्थयसे क्व गतासि किमास्पदा ॥ २ ॥

kā tvaṃ kamalagarbhābhe kimarthaṃ māmupāgatā | kasyāsi kiṃ prārthayase kva gatāsi kimāspadā || 2 ||

Who are you, O lotus-born one? For what purpose have you come to me? Whose are you? What do you seek? Where have you gone? What is your abode?

तुम कौन हो, हे कमल उत्पन्न? किस उद्देश्य से तुम मेरे पास आई हो? तुम किसकी हो? तुम क्या चाहती हो? तुम कहाँ गई हो? तुम्हारा निवास क्या है?

7.64.3

विद्याधर्युवाच । मुने शृणु यथावत्त्वमात्मोदन्तं वदाम्यहम् । प्रष्टुमर्हसि विस्रब्धमार्तां करुणयार्थिनीम् ॥ ३ ॥

vidyādharyuvāca | mune śṛṇu yathāvattvamātmoudantaṃ vadāmyaham | praṣṭumarhasi visrabdhamārtāṃ karuṇayārthinīm || 3 ||

The Vidyadhari said: O sage, listen carefully as I speak the truth about myself. You should ask freely the one who is distressed and seeking help with compassion.

विद्याधरी ने कहा: हे मुनि, ध्यान से सुनो, मैं अपने बारे में सच बताती हूँ। तुम दुःखी और सहायता माँगने वाली को करुणा से बेझिझक पूछ सकते हो।

7.64.4

परमाकाशकोशस्य कस्मिंश्चित्कोणकोटरे । युष्माकं संस्थितं किंचिदिदं तावज्जगद्गृहम् ॥ ४ ॥

paramākāśakośasya kasmiṃścitkoṇakoṭare | yuṣmākaṃ saṃsthitaṃ kiṃcididaṃ tāvajjagadgṛham || 4 ||

In some corner of the supreme space, this universe, which is your abode, is situated for the time being.

किसी परम आकाश के कोण में, यह ब्रह्मांड, जो तुम्हारा निवास है, कुछ समय के लिए स्थित है।

7.64.5

पातालभूतलस्वर्गा इहापवरकास्त्रयः । कल्पनैका कुमार्यत्र कृता धातृत्वमायया ॥ ५ ॥

pātālabhūtalasvargā ihāpavarakāstrayaḥ | kalpanaiakā kumāryatra kṛtā dhātṛtvamāyayā || 5 ||

The three worlds—Patala (netherworld), Bhutala (earth), and Svarga (heaven)—are mere imaginations created here by the divine illusion.

तीनों लोक—पाताल (नरक), भूतल (पृथ्वी), और स्वर्ग (स्वर्ग)—यहाँ दिव्य माया द्वारा बनाई गई कल्पनाएँ हैं।

7.64.6

तत्र द्वीपैः समुद्रैश्च वलितं वलयैरिव । पाटलोत्थं जगल्लक्ष्म्याः प्रकोष्ठमिव भूतलम् ॥ ६ ॥

tatra dvīpaiḥ samudraiśca valitaṃ valayairiva | pāṭalotthaṃ jagallakṣmyāḥ prakoṣṭhamiva bhūtalam || 6 ||

There, the earth is surrounded by islands and oceans like a girdle | The earth appears like the antechamber of the goddess of fortune, adorned with red lotuses.

वहाँ, धरती द्वीपों और समुद्रों से घिरी हुई है जैसे कमरबंद | धरती लाल कमलों से सजी लक्ष्मी के अंतःपुर की तरह दिखती है।

7.64.7

अन्ते द्वीपसमुद्राणां सर्वदिक्क्रमवस्थिता । योजनानां सहस्त्राणि दश हेममयी मही ॥ ७ ॥

ante dvīpasamudrāṇāṃ sarvadikkamavasthitā | yojanānāṃ sahastrāṇi daśa hemamayī mahī || 7 ||

At the end of the islands and oceans, in all directions, there is a golden land of ten thousand yojanas.

द्वीपों और समुद्रों के अंत में, सभी दिशाओं में, दस हजार योजन की एक स्वर्ण भूमि है।

7.64.8

स्वयंप्रकाशसंकल्पफलदाम्बरनिर्मला । चिन्तामणिमयी स्वच्छा स्वच्छायाजितविष्टपा ॥ ८ ॥

svayaṃprakāśasaṃkalpaphaladāmbaranirmalā | cintāmaṇimayī svacchā svacchāyājitaviṣṭapā || 8 ||

Self-luminous, granting the fruits of one's desires, pure and spotless, made of wish-fulfilling gems, clear and bright, with a pure and victorious canopy.

स्वयंप्रकाश, इच्छाओं के फल देने वाला, शुद्ध और निर्मल, चिंतामणि से बना, स्वच्छ और उज्ज्वल, शुद्ध और विजयी छत्र वाला।

7.64.9

साप्सरोमरसिद्धानां लीलाविहरणावनिः । संकल्पमात्रसंपन्नसर्वसंभोगसुन्दरी ॥ ९ ॥

sāpsaromarasiddhānāṃ līlāviharaṇāvaniḥ | saṃkalpamātrasaṃpannasarvasaṃbhogasundarī || 9 ||

That land is the playground for apsaras, maras, and siddhas, where all enjoyments are available just by wishing, and it is beautiful in every way.

वह भूमि अप्सराओं, मरों और सिद्धों का खेल स्थल है, जहाँ इच्छा मात्र से सभी भोग उपलब्ध हैं, और वह हर तरह से सुंदर है।

7.64.10

अन्ते तस्या भुवः शैलो लोकालोकोऽस्ति विश्रुतः । भूपीठस्य प्रकोष्ठस्य वलयावलनां दधत् ॥ १० ॥

ante tasyā bhuvaḥ śailo lokāloko'sti viśrutaḥ | bhūpīṭhasya prakoṣṭhasya valayāvalanāṃ dadhat || 10 ||

At the end of that land, there is a famous mountain called Lokāloka, which serves as the boundary of the earth's antechamber.

उस भूमि के अंत में, एक प्रसिद्ध पर्वत है जिसे लोकालोक कहते हैं, जो धरती के अंतःपुर की सीमा का काम करता है।

7.64.11

क्वचिन्नित्यं तमोव्याप्तो मूढबुद्धेरिवाशयः । क्वचिन्नित्यं प्रकाशात्मा मनः सत्त्ववतामिव ॥ ११ ॥

kvacinnityaṃ tamovyāpto mūḍhabuddherivāśayaḥ | kvacinnityaṃ prakāśātmā manaḥ sattvavatāmiva || 11 ||

Sometimes the mind is always enveloped in darkness, like the intellect of a fool | Sometimes it is always luminous, like the mind of the virtuous || 11 ||

कभी-कभी मन हमेशा अंधकार से घिरा रहता है, जैसे मूर्ख का बुद्धि | कभी-कभी हमेशा प्रकाशमय रहता है, जैसे सत्वगुणी का मन || ११ ||

7.64.12

क्वचिदाह्लादजनकः साधूनामिव संगमः । क्वचिदुद्वेगजनको मूर्खैरिव समागमः ॥ १२ ॥

kvacidāhlādajanakaḥ sādhūnāmiva saṃgamaḥ | kvacidudvegajanako mūrkhairiva samāgamaḥ || 12 ||

Sometimes it brings joy, like the company of the virtuous | Sometimes it causes distress, like the association with fools || 12 ||

कभी-कभी यह आनंद लाता है, जैसे सत्पुरुषों का संग | कभी-कभी यह उद्वेग पैदा करता है, जैसे मूर्खों का संग || १२ ||

7.64.13

क्वचित्प्रकटसर्वार्थो मनो मतिमतामिव । क्वचिदत्यन्तगहनो मूर्खश्रोत्रियचित्तवत् ॥ १३ ॥

kvacitprakaṭasarvārtho mano matimatāmiva | kvacidatyantagahano mūrkhaśrotriyacittavat || 13 ||

Sometimes the mind is clear and understands all things, like the intellect of the wise | Sometimes it is extremely obscure, like the mind of foolish scholars || 13 ||

कभी-कभी मन स्पष्ट और सब कुछ समझने वाला होता है, जैसे बुद्धिमानों का बुद्धि | कभी-कभी यह अत्यंत अस्पष्ट होता है, जैसे मूर्ख विद्वानों का मन || १३ ||

7.64.14

क्वचिदप्राप्तसोमांशुः क्वचिदप्राप्तसूर्यभाः । क्वचिल्लोकमयस्तेन क्वचिदाशून्यदिक्तटः ॥ १४ ॥

kvacidaprāptasomāṃśuḥ kvacidaprāptasūryabhāḥ | kvacillokamayastena kvacidāśūnyadiktaṭaḥ || 14 ||

Sometimes it is devoid of the moon's rays, sometimes devoid of the sun's light | Sometimes it is filled with worldly matters, sometimes it is empty and directionless || 14 ||

कभी-कभी यह चंद्रमा की किरणों से रहित होता है, कभी-कभी सूर्य की रोशनी से रहित होता है | कभी-कभी यह संसारिक मामलों से भरा होता है, कभी-कभी यह खाली और दिशाहीन होता है || १४ ||

7.64.15

क्वचिच्छ्वभ्रभ्रमद्गृध्रः क्वचित्सानुमनोहरः । क्वचिच्छृङ्गशिखाक्रान्तवैरिञ्चनगरान्तरः ॥ १५ ॥

kvacicchvabhrabhramadgṛdhraḥ kvacitsānumanoharaḥ | kvacicchṛṅgaśikhākrāntavairiñcanagarāntaraḥ || 15 ||

Sometimes it is like a vulture circling a cave, sometimes it is as beautiful as a mountain peak | Sometimes it is like a city adorned with the peaks of Mount Meru || 15 ||

कभी-कभी यह गिद्ध की तरह गुफा के चारों ओर मंडराता है, कभी-कभी यह पर्वत की चोटी की तरह मनमोहक होता है | कभी-कभी यह मेरु पर्वत की चोटियों से सजी नगरी की तरह होता है || १५ ||

7.64.17

क्वचिच्छून्यमहारण्यवहत्कल्पान्तमारुतः । क्वचित्पुष्पवनोद्यानगायद्विद्याधरीगणः ॥ १७ ॥

kvacicchūnyamahāraṇyavahatkalpāntamārutaḥ | kvacitpuṣpavanodyānagāyadvidyādharīgaṇaḥ || 17 ||

Sometimes a fierce wind blows in the vast, empty forest, and sometimes the Vidyadharis sing in the flower gardens.

कभी विशाल सूने वन में भयंकर आँधी चलती है, और कभी विद्याधरियाँ फूलों के उद्यान में गाती हैं।

7.64.18

क्वचित्पातालगम्भीरगुहाकुम्भाण्डभीषणः । क्वचिन्नन्दनसोदर्यमुन्याश्रममनोरमः ॥ १८ ॥

kvacitpātālagambhīraguhākumbhāṇḍabhīṣaṇaḥ | kvacinnandanasodaryamunyāśramamanoramaḥ || 18 ||

Sometimes there is a terrifying deep cave in the underworld, and sometimes there is a charming hermitage similar to Nandana garden.

कभी पाताल में एक भयानक गहरी गुफा होती है, और कभी नंदन वन जैसा मनोरम आश्रम होता है।

7.64.19

क्वचिदक्षयमत्ताभ्रः क्वचिद्दुर्लभवारिदः । क्वचिद्गर्भगुहाश्वभ्रगहनोपान्तमण्डलः ॥ १९ ॥

kvacidakṣayamattābhraḥ kvaciddurlabhavāridaḥ | kvacidgarbhaguhāśvabhragahanopāntamaṇḍalaḥ || 19 ||

Sometimes there are endless clouds, sometimes there is scarce rain, and sometimes there is a dense circle of clouds at the horizon.

कभी अंतहीन बादल होते हैं, कभी वर्षा दुर्लभ होती है, और कभी क्षितिज पर घने बादलों का चक्र होता है।

7.64.20

क्वचित्क्षुब्धजनाक्षेपसमुत्सादितभूतभूः । क्वचिद्वास्तव्यजनतासौजन्यजितविष्टपः ॥ २० ॥

kvacitkṣubdhajanākṣepasamutsāditabhūtabhūḥ | kvacidvāstavyajanatāsaujanjyajitaviṣṭapaḥ || 20 ||

Sometimes the earth is disturbed by the agitation of people, and sometimes it is a place of hospitality where even enemies are welcomed.

कभी धरती लोगों के उत्तेजना से विचलित होती है, और कभी यह एक आतिथ्य का स्थान होता है जहाँ शत्रु भी स्वागत हैं।

7.64.21

क्वचिन्नित्यं वहद्वाताजातस्थावरजङ्गमः । क्वचित्सर्वक्षयोन्मुक्तस्थिरस्थावरजङ्गमः ॥ २१ ॥

kvacinnityaṃ vahadvātājātasthāvarajaṅgamaḥ | kvacitsarvakṣayonmuktasthirasthāvarajaṅgamaḥ || 21 ||

Sometimes the wind blows continuously, affecting both moving and stationary objects. Sometimes everything is free from decay, and both moving and stationary objects are stable.

कभी हवा निरंतर बहती है, जो चल और स्थिर दोनों प्रकार के वस्तुओं को प्रभावित करती है। कभी सब कुछ क्षय से मुक्त होता है, और चल और स्थिर दोनों प्रकार की वस्तुएँ स्थिर होती हैं।

7.64.22

क्वचिन्महामरुमरुन्मुक्तभांकारभीषणः । क्वचित्कणत्कमलिनीमत्तसारसभूषणः ॥ २२ ॥

kvcinmahāmarumarunmuktabhāṃkārabhīṣaṇaḥ | kvacitkaṇatkamalinīmattasārasabhūṣaṇaḥ || 22 ||

Sometimes, the sound of the wind is terrifying, as if released from the great desert| Sometimes, it is adorned with intoxicated cranes in the lotus ponds

कभी-कभी, मरुस्थल से छूटने वाली भयानक ध्वनि होती है| कभी-कभी, यह मदमस्त सारसों से सजे कमल तालाबों से सुशोभित होता है

7.64.23

क्वचित्सलिलकल्लोलजलदोल्लासघर्घरः । क्वचिन्मत्ताप्सरोदोलाविलासजनितस्मरः ॥ २३ ॥

kvacitsalilakallolajaladollāsaghargharaḥ | kvacinmattāpsarodolāvilāsajanitasmaraḥ || 23 ||

Sometimes, the sound of the waves and the roaring clouds is delightful| Sometimes, the playful movements of the intoxicated Apsaras create a charming atmosphere

कभी-कभी, तरंगों और गर्जन बादलों की आवाज मनमोहक होती है| कभी-कभी, मदमस्त अप्सराओं के खेल एक मोहक वातावरण पैदा करते हैं

7.64.24

क्वचित्पिशाचकुम्भाण्डवेष्टिताचेष्टदिक्तटः । क्वचिद्विद्याधरीसिद्धनृत्यगीतसरित्तटः ॥ २४ ॥

kvacitpiśācakumbhāṇḍaveṣṭitāceṣṭadiktataḥ | kvacidvidyādharīsiddhanṛtyagītasarittataḥ || 24 ||

Sometimes, the directions are filled with the movements of ghosts and skulls| Sometimes, the riverbanks are filled with the dance and songs of the Vidyadharis and Siddhas

कभी-कभी, दिशाएँ भूत-प्रेतों और खोपड़ियों की गतिविधियों से भरी होती हैं| कभी-कभी, नदी के किनारे विद्याधरियों और सिद्धों के नृत्य और गीतों से भरे होते हैं

7.64.25

क्वचिदुद्वर्षदम्भोदसरिद्बाहुलुठत्तटः । क्वचित्सततगानीतनीतनानाभ्रसत्पटः ॥ २५ ॥

kvacidudvarṣadambhodasaridbāhuluṭhattataḥ | kvacitsatatagānītanītanānābhraśatpaṭaḥ || 25 ||

Sometimes, the riverbanks are filled with the roaring of rain clouds| Sometimes, the sky is filled with the continuous sound of various clouds

कभी-कभी, नदी के किनारे वर्षा के बादलों की गर्जना से भरे होते हैं| कभी-कभी, आकाश निरंतर अलग-अलग बादलों की आवाज से भरा होता है

7.64.26

क्वचित्कमलिनीकोशवक्त्रस्थाध्यानमण्डलः । क्वचित्स्वर्गाङ्गनासिद्धसुन्दरीदन्तमण्डनः ॥ २६ ॥

kvacitkamalinīkośavaktrasthādhyānamaṇḍalaḥ | kvacitsvargāṅganāsiddhasundarīdantamaṇḍanaḥ || 26 ||

Sometimes, the lotus buds are in a state of meditation| Sometimes, the beautiful heavenly nymphs are adorned with ivory

कभी-कभी, कमल के कोश ध्यान की अवस्था में होते हैं| कभी-कभी, सुंदर स्वर्ग की अप्सराएँ हाथी दाँत से सजी होती हैं

7.64.27

क्वचित्तपद्दिनकरजनताचारसुन्दरः । क्वचिन्नैशतमोगेहनृत्यन्मत्तनिशाचरः ॥ २७ ॥

kvacittapaddinakarajanatācārasundaraḥ | kvacinnaiśatamogehanṛtyanmattanisācaraḥ || 27 ||

Somewhere, the day is beautiful with the activities of people, and somewhere, the night is filled with the dance of intoxicated night creatures.

कहीं दिन मनुष्यों के व्यवहार से सुंदर होता है, और कहीं रात में मतवाले राक्षसों का नृत्य होता है।

7.64.28

क्वचिदुत्पतदुत्पाततया नश्यज्जनावनिः । क्वचित्सौराज्यसंपत्त्या प्रोद्भवत्पुरमण्डलः ॥ २८ ॥

kvacidutpatadutpātatayā naśyajjanāvaniḥ | kvacitsaurājyasaṃpattayā prodhavatpuramaṇḍalaḥ || 28 ||

Somewhere, the earth is destroyed by calamities, and somewhere, cities flourish with the prosperity of a good kingdom.

कहीं भूमि आपदाओं से नष्ट हो जाती है, और कहीं एक अच्छे राज्य की समृद्धि से नगर खिल उठते हैं।

7.64.29

क्वचिदत्यन्तनिःशून्यः क्वचिज्जनपदावृतः । क्वचिच्छ्वभ्रान्तगम्भीरः क्वचित्पातालभीषणः ॥ २९ ॥

kvacidatyantaniḥśūnyaḥ kvacijjanapadāvṛtaḥ | kvacicchvabhrāntagambhīraḥ kvacitpātālabhīṣaṇaḥ || 29 ||

Somewhere, it is completely empty, and somewhere, it is surrounded by people. Somewhere, it is deep like a cave, and somewhere, it is terrifying like the underworld.

कहीं यह पूरी तरह से खाली है, और कहीं यह लोगों से घिरा हुआ है। कहीं यह गुफा की तरह गहरा है, और कहीं यह पाताल की तरह भयानक है।

7.64.30

क्वचिद्बृहत्कल्पतरुः क्वचिन्निर्जलजङ्गमः । क्वचिन्महाकरिकुलः क्वचिन्मत्तहरिव्रजः ॥ ३० ॥

kvacidbṛhatkalpataruḥ kvacinnirjalajaṅgamaḥ | kvacinmahākarikulaḥ kvacinmattaharivrajaḥ || 30 ||

Somewhere, there is a large wish-fulfilling tree, and somewhere, there is a desert without water. Somewhere, there is a herd of large elephants, and somewhere, there is a herd of intoxicated lions.

कहीं एक बड़ा कल्पवृक्ष है, और कहीं पानी के बिना रेगिस्तान है। कहीं बड़े हाथियों का झुंड है, और कहीं मतवाले शेरों का झुंड है।

7.64.31

क्वचिन्निर्भूतमुद्यातः क्वचिदुन्मत्तराक्षसः । क्वचित्करञ्जगहनः क्वचित्तालमहावनः ॥ ३१ ॥

kvacinnirbhūtamudyātaḥ kvacidunmattarākṣasaḥ | kvacitkarañjagahanaḥ kvacittālamahāvanaḥ || 31 ||

Somewhere, a ghost arises, and somewhere, a mad demon appears. Somewhere, there is a dense forest of karanja trees, and somewhere, there is a great forest of palm trees.

कहीं एक भूत उठता है, और कहीं एक पागल राक्षस प्रकट होता है। कहीं करंज के पेड़ों का घना जंगल है, और कहीं ताड़ के पेड़ों का बड़ा जंगल है।

7.64.32

क्वचिद्व्योमोपमसराः क्वचिद्दीर्घमरुस्थलः । क्वचिन्नित्यभ्रमत्पांसुः क्वचित्सर्वर्तुकाननः ॥ ३२ ॥

kvcidvyomopamasarāḥ kvaciddīrghamarusthalaḥ | kvacinnityabhramatpāṃsuḥ kvacitsarvartukānanaḥ || 32 ||

In some places, there are lakes resembling the sky, in some places, there are long desert lands, in some places, there is always dust swirling, and in some places, there are forests flourishing in all seasons.

कुछ जगहों पर आकाश के समान सरोवर हैं, कुछ जगहों पर लंबे रेगिस्तान हैं, कुछ जगहों पर हमेशा धूल उड़ती रहती है, और कुछ जगहों पर सभी ऋतुओं में वन खिले हुए हैं।

7.64.33

शिखरेषु शिलास्तस्य सामान्याचलसंनिभाः । सन्ति सुस्थितकल्पाभ्रा रत्नमय्योऽम्बरामलाः ॥ ३३ ॥

śikhareṣu śilāstasya sāmānyācalasaṃnibhāḥ | santi susthitakalpābhrā ratnamayyo'mbarāmalāḥ || 33 ||

On its peaks, there are rocks resembling ordinary mountains, which are well-established and cloud-like, made of jewels and pure sky.

इसके शिखरों पर सामान्य पर्वतों के समान चट्टानें हैं, जो अच्छी तरह से स्थापित और बादलों के समान हैं, जो रत्नों से बनी हैं और शुद्ध आकाश हैं।

7.64.34

क्षीरोदकार्कगौरीणां वनस्कन्धौकसामिव । विश्राम्यन्त्यनिशं यासु हरयो हरियोनयः ॥ ३४ ॥

kṣīrodakārkagaurīṇāṃ vanaskandhaukasāmiva | viśrāmyantyanisyaṃ yāsu harayo hariyonayaḥ || 34 ||

In those forests, which are like the shoulders of the mountains, the deer and other animals rest continuously, resembling the white color of milk and the sun.

उन वनों में, जो पर्वतों के कंधों के समान हैं, हिरण और अन्य जानवर निरंतर विश्राम करते हैं, जो दूध और सूर्य के सफेद रंग के समान हैं।

7.64.35

तासामुत्तरदिग्भागे पूर्वशृङ्गशिलोदरे । निवसाम्यहमक्षीणवज्रसारसमत्वचि ॥ ३५ ॥

tāsāmuttaradigbhāge pūrvaśṛṅgaśilodare | nivasāmyahamakṣīṇavajrasārasamatvaci || 35 ||

I reside in the northern direction, in the belly of the eastern peak's rock, with an unbroken diamond-like essence.

मैं उत्तर दिशा में, पूर्वी शिखर की चट्टान के पेट में, अटूट हीरे के समान सार के साथ निवास करता हूँ।

7.64.36

विधिना तत्र बद्धास्मि वसाम्युपलयन्त्रके । अत्रासंख्या मुने याता मन्ये युगगणा मम ॥ ३६ ॥

vidhinā tatra baddhāsmi vasāmyupalayantrake | atrāsaṃkhyā mune yātā manye yugagaṇā mama || 36 ||

By fate, I am bound there, residing in the stone machine. O sage, I believe countless ages have passed here.

भाग्य से, मैं वहाँ बंधा हूँ, पत्थर के यंत्र में निवास करता हूँ। हे मुनि, मैं मानता हूँ कि यहाँ असंख्य युग बीत चुके हैं।

7.64.37

न केवलमहं बद्धा यावद्भर्तापि तत्र मे । बद्धः सायंतने पद्मकुड्मले षट्पदो यथा ॥ ३७ ॥

na kevalamahaṃ baddhā yāvadbhartāpi tatra me | baddhaḥ sāyaṃtane padmakuṅmale ṣaṭpado yathā || 37 ||

I am not the only one bound; my husband is also bound there like a bee in a lotus flower at dusk.

मैं ही नहीं बंधी हूं, मेरे पति भी वहां बंधे हैं, जैसे संध्या के समय कमल के फूल में भ्रमर।

7.64.38

तेन सार्धं मया भर्त्रा शिलाकोटरसंकटे । अनुभूताश्चिरं कालमत्र वर्षगणा गताः ॥ ३८ ॥

tena sārdhaṃ mayā bhartā śilākoṭarasaṃkaṭe | anubhūtāściraṃ kālamatra varṣagaṇā gatāḥ || 38 ||

Together with my husband, I have experienced great hardship in the rocky cave for a long time, many years have passed here.

मेरे पति के साथ, मैंने पत्थर की गुफा में बहुत कष्ट भोगा है, यहां बहुत साल बीत गए हैं।

7.64.39

अद्याप्यात्मैकदोषेण न हि मोक्षं लभावहे । चिरं तत्रैव तिष्ठावस्तथैवाबद्धभावनौ ॥ ३९ ॥

adyāpyātmaikadoṣeṇa na hi mokṣaṃ labhāvahe | ciraṃ tatraiva tiṣṭhāvastathaivābaddhabhāvanau || 39 ||

Even today, due to my own fault, we do not attain liberation. We remain there for a long time, bound in the same state.

आज भी, मेरे अपने दोष के कारण, हम मुक्ति नहीं पाते हैं। हम लंबे समय तक वहीं बंधे रहते हैं, उसी अवस्था में।

7.64.40

पाषाणसंकटे तस्मिन्बद्धावावां न केवलम् । बद्धो यावदशेषेण परिवारोऽपि तत्र नौ ॥ ४० ॥

pāṣāṇasaṃkaṭe tasminbaddhāvāvāṃ na kevalam | baddho yāvadaśeṣeṇa parivāro'pi tatra nau || 40 ||

In that rocky danger, we are not the only ones bound; our entire family is also bound there.

उस पत्थर की खतरनाक स्थिति में, हम ही नहीं बंधे हैं; हमारा पूरा परिवार भी वहां बंधा है।

7.64.41

पुराणपुरुषो बद्धो द्विजस्तत्रास्ति मे पतिः । एकस्थानान्न चलति जीवन्युगशतान्यसौ ॥ ४१ ॥

purāṇapuruṣo baddho dvijastatrāsti me patiḥ | ekasthānānna calati jīvanyugaśatānyasau || 41 ||

My husband, an ancient sage, is bound there. He does not move from that place, even after hundreds of lifetimes.

मेरा पति, एक प्राचीन ऋषि, वहां बंधा है। वह सैकड़ों जन्मों के बाद भी उस स्थान से नहीं हिलता।

7.64.42

आबाल्याद्ब्रह्मचारी च श्रोत्रियः पाठकोऽलसः । एकान्त एक एवास्तेऽजिह्मवृत्तिरचापलः ॥ ४२ ॥

ābālyādbrahmacārī ca śrotriyaḥ pāṭhako'lasaḥ | ekānta eka evāste'jihmavṛttiracāpalaḥ || 42 ||

From childhood, he is a celibate, a scholar, a reciter, and diligent. He lives alone, straightforward, and steady.

बचपन से ही वह ब्रह्मचारी, विद्वान्, पाठक और परिश्रमी है। वह अकेला रहता है, सीधा और स्थिर।

7.64.43

अहं व्यसनिनी भार्या तस्य वेदविदां वर । न निमेषं समर्थास्मि तं विना देहधारणे ॥ ४३ ॥

ahaṃ vyasaninī bhāryā tasya vedavidāṃ vara | na nimeṣaṃ samarthāsmi taṃ vinā dehadhāraṇe || 43 ||

I am the devoted wife of that scholar, the best among the knowers of the Vedas. I am not capable of sustaining my body even for a moment without him.

मैं उस विद्वान् की पत्नी हूँ, जो वेदज्ञों में श्रेष्ठ है। मैं उसके बिना एक पल के लिए भी अपने शरीर को धारण करने में समर्थ नहीं हूँ।

7.64.44

शृणु तेन कथं ब्रह्मन्भार्याहं समुपार्जिता । कथं वृद्धिमयं यातः स्नेहोऽस्माकमकृत्रिमः ॥ ४४ ॥

śṛṇu tena kathaṃ brahman bhāryāhaṃ samupārjitā | kathaṃ vṛddhimayaṃ yātaḥ sneho'smākamakṛtrimḥ || 44 ||

Listen, O Brahmin, how I was obtained as a wife by him. How our genuine affection grew.

सुनो, हे ब्राह्मण, कैसे मैं उसकी पत्नी बनी। कैसे हमारा सच्चा स्नेह बढ़ा।

7.64.45

तेन जातेन मद्भर्त्रा बालेनैव सता पुरा । किंचिज्ज्ञेन सतैकेन तिष्ठतात्मालयेऽमले ॥ ४५ ॥

tena jātena madbhartrā bālenaiva satā purā | kiṃcijjñena sataikena tiṣṭhatātmālaye'male || 45 ||

By him, my husband, who was born as a child, pure and knowing a little, staying in the pure abode of the self.

उसके द्वारा, मेरे पति, जो एक बच्चे के रूप में पैदा हुए, पवित्र और थोड़ा जानते हुए, आत्मा के पवित्र निवास में रहते हुए।

7.64.46

श्रोत्रियत्वानुरूपेण जाया मे जन्मशालिनी । कुतः संभवतीत्येव निर्णीय चिरचिन्तया ॥ ४६ ॥

śrotriyatvānurūpeṇa jāyā me janmaśālinī | kutaḥ saṃbhavatītyeva nirṇīya ciracintayā || 46 ||

How can a wife like me, who is born noble, be suitable for a scholar? This has been determined after long contemplation.

मेरे जैसी पत्नी, जो उत्तम जन्म की है, एक विद्वान् के लिए कैसे उपयुक्त हो सकती है? यह लंबे विचार के बाद निर्धारित किया गया है।

7.64.47

स्वयमेवानवद्याङ्गी तेन तामरसेक्षण । उत्पादितास्मि नाथेन ज्योत्स्नेव शशिनाऽमला ॥ ४७ ॥

svayamevānavadyāṅgī tena tāmarasekṣaṇa | utpāditāsmi nāthena jyotsneva śaśinā'malā || 47 ||

I am naturally flawless, and by the grace of my lord with lotus-like eyes, I am created pure like the moonlight.

मैं स्वयं निर्दोष हूँ, और अपने कमल-नयन स्वामी की कृपा से मैं चाँदनी की तरह शुद्ध उत्पन्न हुई हूँ।

7.64.48

मनसा मानसीभार्या मन्दरोत्तमसुन्दरी । ततो वृद्धिं प्रयातास्मि वसन्त इव मञ्जरी ॥ ४८ ॥

manasā mānasībhāryā mandarottamasundarī | tato vṛddhiṃ prayātāsmi vasanta iva mañjarī || 48 ||

With my mind, I am the beloved of the mind, the most beautiful one like the Mandara flower. From that, I have grown like a blossom in spring.

मन से, मैं मन की प्रिय हूँ, मंदार फूल की तरह सबसे सुंदर। उससे, मैं वसंत की तरह खिल उठी हूँ।

7.64.49

सहजाम्बरसंछन्ना भूतानां चित्तहारिणी । पूर्णेन्दुबिम्बवदना द्यौरिवामलतारका ॥ ४९ ॥

sahajāmbarasaṃchannā bhūtānāṃ cittahāriṇī | pūrṇendubimba vadanā dyaurivāmalatārakā || 49 ||

Naturally adorned with garments, stealing the hearts of all beings, with a face like the full moon, pure like the sky with stars.

स्वाभाविक रूप से वस्त्रों से सज्जित, सभी प्राणियों के हृदय को चुराने वाली, पूर्ण चंद्रमा के समान मुख वाली, तारों से भरे आकाश की तरह शुद्ध।

7.64.50

कोरकोच्चस्तनभरा समग्ररसशालिनी । लतावरवनेनेव करपल्लवशालिनी ॥ ५० ॥

korakoccastanabharā samagrarasaśālinī | latāvaravaneneva karapallavaśālinī || 50 ||

With firm and uplifted breasts, full of all flavors, like a creeper forest with tender leaves.

ऊँचे और सुदृढ़ स्तनों वाली, सभी रसों से भरपूर, कोमल पत्तों वाले लता वन की तरह।

7.64.51

सर्वस्य जन्तुजातस्य नित्यं हृदयहारिणी । हरिणीतारनयना मदनोन्माददायिनी ॥ ५१ ॥

sarvasya jantujātasya nityaṃ hṛdayahāriṇī | hariṇītāranayanā madanounmādadāyinī || 51 ||

Always stealing the hearts of all beings, with eyes like a doe, causing madness of love.

हमेशा सभी प्राणियों के हृदय को चुराने वाली, हिरण की तरह आँखों वाली, प्रेम के उन्माद का कारण।

7.64.52

लीलाविलासैकरता हेलावलितलोचना । गेयवाद्यप्रिया नित्यं न च तृप्तानुरागिणी ॥ ५२ ॥

līlāvilāsaikaratā helāvalitalocanā | geyavādyapriyā nityaṃ na ca tṛptānurāgiṇī || 52 ||

She is devoted to playful amusements, with eyes rolling in intoxication, always fond of music and instruments, yet never satisfied with love.

वह खेल-विलास में लगी हुई है, उन्मत्त नेत्रों वाली, सदा संगीत और वाद्यों की प्रेमिका, फिर भी प्रेम से तृप्त नहीं होती।

7.64.53

सौभाग्यभोगपरमा लक्ष्म्यलक्ष्म्योः प्रिया सखी । अनन्या मोहजालानामखिन्ना संपदापदोः ॥ ५३ ॥

saubhāgyabhogaparamā lakṣmyalakṣmyoḥ priyā sakhī | ananyā mohajālānāmakhinnā saṃpadāpadoḥ || 53 ||

She is the epitome of enjoying good fortune, a dear friend of both Lakshmi and Alakshmi, unique in the web of delusions, and unperturbed by prosperity and adversity.

वह सौभाग्य का भोग करने में परम है, लक्ष्मी और अलक्ष्मी दोनों की प्रिय सखी है, मोह के जाल में अनन्य है, और समृद्धि और विपत्ति से अखिन्न है।

7.64.54

न केवलमहं गेहं धारयामि द्विजन्मनः । यावत्त्रैलोक्यसदनमिदमङ्ग बिभर्म्यहम् ॥ ५४ ॥

na kevalamahaṃ gehaṃ dhārayāmi dvijanmanaḥ | yāvattrailokyasadanamidamaṅga bibharmyaham || 54 ||

I do not merely support the household of a Brahmin, but I bear the entire abode of the three worlds.

मैं केवल एक ब्राह्मण के घर का भार नहीं उठाती, बल्कि मैं तीनों लोकों के आश्रय का भार उठाती हूँ।

7.64.55

अहं कुलकरी भार्या कलत्रभरणक्षमा । त्रैलोक्यगृहसंभारधारणैकभरोद्वहा ॥ ५५ ॥

ahaṃ kulakarī bhāryā kalatrabharaṇakṣamā | trailokyagṛhasaṃbhāradhāraṇaikabharodvahā || 55 ||

I am the wife who brings prosperity to the family, capable of bearing the burden of the household, and the sole bearer of the responsibility for the maintenance of the three worlds.

मैं वह पत्नी हूँ जो परिवार में समृद्धि लाती है, घर का भार उठाने में सक्षम हूँ, और तीनों लोकों के रखरखाव की जिम्मेदारी का अकेला भार उठाती हूँ।

7.64.56

अथाहं तरुणी जाता समुद्भिन्नोन्नतस्तनी । लतोल्लदुलुच्छेव विलासरसशालिनी ॥ ५६ ॥

athāhaṃ taruṇī jātā samudbhinnonnatastanī | latollaladgulucchheva vilāsarasaśālinī || 56 ||

Thus, I am born as a young woman with fully developed and raised breasts, like a swaying creeper, full of the essence of charm.

इस प्रकार, मैं एक युवती के रूप में जन्मी हूँ, पूर्ण विकसित और उठे हुए स्तनों वाली, एक लहराती लता की तरह, आकर्षण की सार से भरपूर।

7.64.57

पतिर्मा दीर्घसूत्रत्वाच्छ्रोत्रियत्वात्तपोरतः । कयाप्यपेक्षयाद्यापि न विवाहितवानिमाम् ॥ ५७ ॥

patirmā dīrghasūtratvācchrōtriyatvāttapōrataḥ | kayāpyapēkṣayādyāpi na vivāhitavānimām || 57 ||

My husband, due to his patience, scholarship, and asceticism, has not married me yet due to some expectation.

मेरे पति ने धैर्य, विद्वत्ता और तपस्या के कारण किसी अपेक्षा के कारण अभी तक मुझसे विवाह नहीं किया है।

7.64.58

तेन यौवनसंपन्नविलासरसशालिनी । तं विना व्यसनेनाहं दह्येऽग्नाविव पद्मिनी ॥ ५८ ॥

tena yauvanasaṃpannavilāsarasaśālinī | taṃ vinā vyasanenāhaṃ dahyē'gnāviva padminī || 58 ||

Because of him, I, who am endowed with the charm of youth, am burning with distress like a lotus in fire without him.

उसके कारण, मैं, जो युवा चाप से सुशोभित हूँ, उसके बिना दुःख से जल रही हूँ जैसे आग में कमल।

7.64.59

शीतानिलविलोलासु नलिनीषु निरन्तरम् । अङ्गदाहमवाप्नोमि पूताङ्गारस्थलीष्विव ॥ ५९ ॥

śītānilavilolāsu nalinīṣu nirantaram | aṅgadāhamavāpnōmi pūtāṅgārasthalīṣviva || 59 ||

In the cool breeze, amidst the swaying lotuses, I continuously feel a burning sensation in my body as if I am on a bed of hot coals.

ठंडी हवा में, हिलते कमलों के बीच, मैं लगातार अपने शरीर में जलन महसूस करती हूँ जैसे मैं गर्म अंगारों के बिस्तर पर हूँ।

7.64.60

उद्यानावनयः सर्वाः पूर्णाः कुसुमवर्षणैः । संपन्नास्तप्तसिकताः शून्या मे मरुभूमयः ॥ ६० ॥

udyānāvanayaḥ sarvāḥ pūrṇāḥ kusumavarṣaṇaiḥ | saṃpannāstaptasikatāḥ śūnyā mē marubhūmayaḥ || 60 ||

All the gardens and forests, full of flower showers, seem to me like heated sands, empty and desolate.

सभी बगीचे और जंगल, फूलों की वर्षा से भरे हुए, मुझे गर्म रेत के समान, खाली और उजाड़ लगते हैं।

7.64.61

जलकल्लोलकह्लारकमलोत्करकोमलाःसरस्यः सारसारावसरसा मम नीरसाः ॥ ६१ ॥

jalakallolakahlārakamalotkarakomalāḥsarasyaḥ sārasārāvasarasā mama nīrasāḥ || 61 ||

The lotuses, with their tender stalks, are swaying in the waves of the water, and their beauty is enhanced by the bees that hover around them, making them even more delightful.

कमलों की कोमल डंठलें जल की लहरों में लहरा रही हैं, और उनकी सुंदरता उन पर मँडराती भौंरों से और बढ़ जाती है, जो उन्हें और भी मनमोहक बनाती हैं।

7.64.62

अहं पुष्करमन्दारकुमुदोत्करमालिता । भृशं दाहमवाप्नोमि कण्टकेष्विव दोलिता ॥ ६२ ॥

ahaṃ puṣkaramandārakumudotkaramālitā | bhṛśaṃ dāhamavāpnomi kaṇṭakeṣviva dolitā || 62 ||

I am adorned with lotuses, mandara flowers, and water lilies, and I am severely burned as if swaying among thorns.

मैं कमल, मंदार फूलों और कुमुद से सजी हुई हूँ, और मैं काँटों में झूलती हुई सी बहुत जल रही हूँ।

7.64.63

कुमुदोत्पलकह्लारकदलीतल्पपालयः । मदङ्गसङ्गमाद्ग्रीष्ममर्मरा याति भस्मताम् ॥ ६३ ॥

kumudotpalakahlārakadalītalpapālayaḥ | madanga saṅgamādgrīṣmamarmarā yāti bhasmatām || 63 ||

The bed of lotus, water lily, and banana leaves becomes ashes due to the intense heat of the summer caused by the touch of the beloved.

कमल, कुमुद और केले के पत्तों का बिस्तर प्रिय के स्पर्श से उत्पन्न गर्मी के कारण भस्म हो जाता है।

7.64.64

यत्कान्तमुचितं स्वादु विचित्रं चित्तहारि च । तदालोक्य भवाम्यन्तर्बाष्पपूर्णायतेक्षणा ॥ ६४ ॥

yatkāntamucitaṃ svādu vicitraṃ cittahāri ca | tadālokya bhavāmyantarbāṣpapūrṇāyatekṣaṇā || 64 ||

Seeing that beloved who is suitable, sweet, wonderful, and captivating, I become filled with tears in my eyes.

उस प्रिय को देखकर जो उपयुक्त, मीठा, अद्भुत और मनमोहक है, मेरी आँखें आँसुओं से भर जाती हैं।

7.64.65

व्यसनानलसंतप्ताः पतन्तो बाष्पबिन्दवः । छमच्छमिति मज्जन्ति कमलोत्पलपङ्क्तिषु ॥ ६५ ॥

vyasanānalasaṃtaptāḥ patanto bāṣpabindavaḥ | chamacchamiti majjanti kamalotpalapaṅktiṣu || 65 ||

The tear drops, heated by the fire of sorrow, fall and immerse in the rows of lotuses and water lilies, saying 'chama, chama'.

दुःख की आग से तप्त आँसुओं की बूँदें गिरती हैं और 'चम, चम' कहते हुए कमल और कुमुद की पंक्तियों में डूब जाती हैं।

7.64.66

कदलीकन्दलीस्कन्धदोलान्दोलनलीलया । लालितोद्यानखण्डेषु मुखमाच्छाद्य रोदिमि ॥ ६६ ॥

kadalīkandalīskandhadolāndolanalīlayā | lālitoryānakhaṇḍeṣu mukhamācchādya roditi || 66 ||

With the playful swinging of the banana tree branches, in the nurtured garden fragments, I cover my face and weep.

केले के पेड़ों की डालियों के खेल भरे झूलने से, सँवारे हुए बगीचे के टुकड़ों में, मैं अपना मुँह ढककर रोती हूँ।

7.64.67

तुषारनिकराकीर्णं कदलीदलमण्डपम् । पश्याम्यूष्माणमुज्झन्तं खदिराङ्गारभीषणम् ॥ ६७ ॥

tuṣāranikarākīrṇaṃ kadalīdalamaṇḍapam | paśyāmyūṣmāṇamujjhantaṃ khadirāṅgārabhīṣaṇam || 67 ||

I see the pavilion adorned with banana leaves covered with a heap of snow, and the frightening embers of the khadira tree being abandoned.

मैं खेल की छत देखता हूँ जो केले के पत्तों से सजी है और बर्फ के ढेर से ढकी हुई है, और खदिर के पेड़ की डरावनी अंगारों को छोड़ दिया जा रहा है।

7.64.68

नलिनीनालदोलासु सारसीं सारसाश्रिताम् । दीनानना विलोक्यान्तर्निन्दामि निजयौवनम् ॥ ६८ ॥

nalinīnāladolāsu sārasīṃ sārasāśritām | dīnānanā vilokyāntarnindāmi nijayauvanam || 68 ||

Seeing the lotus stalks swaying in the breeze and the crane resting on them with a sorrowful face, I blame my own youth.

हवा में झूलते हुए कमल के डंठलों और उन पर बैठे हुए सारस को दुःखी चेहरे के साथ देखकर, मैं अपनी युवावस्था को दोषी ठहराता हूँ।

7.64.69

रम्ये रोदिमि मध्यस्थे पदार्थे यामि सौम्यताम् । हृष्याम्यशोभने दीना न जाने किमहं स्थिता ॥ ६९ ॥

ramye roditi madhyasthe padārthe yāmi saumyatām | hṛṣyāmyaśobhane dīnā na jāne kimahaṃ sthitā || 69 ||

I weep in delightful things, I become gentle in neutral matters, I rejoice in unpleasant things, miserable, I do not know what state I am in.

मैं आनंददायक चीजों में रोता हूँ, तटस्थ मामलों में कोमल हो जाता हूँ, अप्रिय चीजों में खुश होता हूँ, दुःखी, मैं नहीं जानता कि मैं किस अवस्था में हूँ।

7.64.70

दृष्टानि कुन्दमन्दारकुमुदानि हिमानि च। मया कामाग्निदग्धानां भस्मानीव दिशं प्रति॥ ७०॥

dṛṣṭāni kundamandārakumudāni himāni ca | mayā kāmāgnidagdhānāṃ bhasmānīva diśaṃ prati || 70 ||

I have seen jasmine, mandara, and lotus flowers, as well as snow, as if they were the ashes of those burned by the fire of desire, scattered in all directions.

मैंने चमेली, मंदार और कमल के फूल देखे हैं, साथ ही बर्फ भी, जैसे कि वे कामाग्नि से जले हुए लोगों की राख हों, जो सभी दिशाओं में बिखरी हुई है।

7.64.71

आनीलपल्लवमृणाललतोत्पलानां कह्लारकुन्दकदलीदलमालतीनाम्। शय्या ममाङ्गचलनेन विशोषयन्त्या व्यर्थं गतानि नवयौवनवासराणि॥ ७१॥

ānīlapallavamṛṇālalatotpalānāṃ kahlārakundakadalīdalamālatīnām | śayyā mamāṅgacalanena viśoṣayantyā vyarthaṃ gatāni navayauvanavāsarāṇi || 71 ||

The bed made of blue leaves, lotus fibers, and blue lotus flowers, as well as kahlara, jasmine, and banana leaves, has been dried up by the movement of my body. The opportunities of new youth have been wasted.

नीले पत्तों, कमल के रेशों, और नीले कमल के फूलों से बनी शय्या, साथ ही कह्लार, चमेली, और केले के पत्तों से बनी शय्या, मेरे शरीर की गतिविधि से सूख गई है। नयी युवावस्था के अवसर व्यर्थ हो गए हैं।

Chapter 65

7.65.1

अथ कालेन महता सोऽनुरागो विरागताम्प्राप्तो मम शरच्छान्तौ विरसः पल्लवो यथा ॥ १ ॥

atha kālena mahatā so'nurāgo virāgatāmprāpto mama śaracchāntau virasaḥ pallavo yathā || 1 ||

Then, over a long period, that affection turned into detachment, like a withered leaf in the end of autumn.

तब, लंबे समय के बाद, वह प्यार उदासीनता में बदल गया, जैसे शरद ऋतु के अंत में सूखा हुआ पत्ता।

7.65.2

वृद्ध एकान्तरसिको नीरसः स्नेहवर्जितःभर्ताऽजिह्ममतिर्मौनी किं मन्ये जीवितेन मे ॥ २ ॥

vṛddha ekāntarasiko nīrasaḥ snehavarjitaḥbhartā'jihmamatirmaunī kiṃ manye jīvitena me || 2 ||

Old, completely tasteless, devoid of affection, my husband is crooked-minded and silent. What do I think of my life?

बूढ़ा, बिलकुल बेस्वाद, स्नेहहीन, मेरा पति विकृत मन वाला और मौन है। मैं अपने जीवन के बारे में क्या सोचती हूँ?

7.65.3

वरं वैधव्यमाबाल्याद्वरं मरणमेव चवरं व्याधिरथापद्वा नाहृद्यप्रकृतिः पतिः ॥ ३ ॥

varaṃ vaidhavyamābālyādvaraṃ maraṇameva cavaraṃ vyādhirathāpadvā nāhṛdyaprakṛtiḥ patiḥ || 3 ||

Better to be a widow from childhood, better to die, better to have a disease or calamity than to have a husband with a disagreeable nature.

बेहतर है बचपन से विधवा होना, बेहतर है मरना, बेहतर है किसी रोग या आपत्ति का सामना करना बजाय इसके कि एक अनुकूल नहीं स्वभाव वाला पति हो।

7.65.4

एतावज्जन्मसाफल्यं सौभाग्यमविखण्डितम्रसिकः पेशलाचारो यन्नार्यास्तरुणः पतिः ॥ ४ ॥

etāvajjanmasāphalyaṃ saubhāgyamavikhaṇḍitamrasikaḥ peśalācāro yannāryāstaruṇaḥ patiḥ || 4 ||

This is the fruit of my birth, this is my unbroken good fortune, that I have a husband who is a connoisseur, of refined behavior, and young.

यह मेरे जन्म का फल है, यह मेरा अखंडित सौभाग्य है, कि मेरा पति एक रसिक, सभ्य व्यवहार वाला और युवा है।

7.65.5

हता नीरसनाथा स्त्री हताऽसंस्कारिणी च धीःहता दुर्जनभुक्ता श्रीर्हता वेश्याहृता च ह्रीः ॥ ५ ॥

hatā nīrasanāthā strī hatā'saṃskāriṇī ca dhīḥhatā durjanabhuktā śrīrhatā veśyāhṛtā ca hrīḥ || 5 ||

A woman is ruined if she has a tasteless husband, ruined if she is uneducated, ruined if she is enjoyed by evil men, ruined if her modesty is taken away like a prostitute.

एक स्त्री बरबाद होती है अगर उसका पति बेस्वाद है, बरबाद होती है अगर वह अशिक्षित है, बरबाद होती है अगर वह दुष्टों द्वारा भोगी जाती है, बरबाद होती है अगर उसकी लाज एक वेश्या की तरह छीन ली जाती है।

7.65.6

सा स्त्री यानुगता भर्त्रा सा श्रीर्यानुगता सता। सा धीर्या मधुरोदारा साधुता समदृष्टिता ॥ ६ ॥

sā strī yānugatā bhartrā sā śrīryānugatā satā | sā dhīryā madhurodārā sādhutā samadṛṣṭitā || 6 ||

A woman who is devoted to her husband is truly prosperous. She is wise, sweet-natured, virtuous, and has an equanimous vision.

जो स्त्री अपने पति के प्रति समर्पित होती है, वही सच्ची समृद्धि है। वह बुद्धिमान, मधुर स्वभाव वाली, साध्वी और समान दृष्टि वाली होती है।

7.65.7

नाधयो व्याधयो नैव नापदो न दुरीतयः। कुर्वन्ति मनसो बाधां दंपत्योरनुरक्तयोः ॥ ७ ॥

nādhayo vyādhayo naiva nāpado na durītayaḥ | kurvanti manaso bādhāṃ daṃpatyoranuraktayoḥ || 7 ||

Neither diseases, nor calamities, nor misfortunes, nor bad deeds cause distress to the minds of a devoted couple.

न रोग, न विपत्तियाँ, न दुर्भाग्य, न दुष्कर्म एक समर्पित जोड़े के मन को परेशान करते हैं।

7.65.8

उत्फुल्लाः कुसुमस्थल्यो नन्दनोद्यानभूमयः। धन्वायन्ते कुनाथानां विनाथानां च योषिताम् ॥ ८ ॥

utphullāḥ kusumasthalyo nandanodyānabhūmayaḥ | dhanvāyante kunāthānāṃ vināthānāṃ ca yoṣitām || 8 ||

The blooming flower beds of the Nandana garden delight both the protected and the unprotected women.

नंदन उद्यान की खिली हुई फूलों की क्यारियाँ सुरक्षित और असुरक्षित स्त्रियों को आनंदित करती हैं।

7.65.9

सर्व एव जगद्भावा यथेच्छं गुणलेशतः। संत्यज्यन्ते प्रमादात्तु वर्जयित्वा पतिं स्त्रिया ॥ ९ ॥

sarva eva jagadbhāvā yathecchaṃ guṇaleśataḥ | saṃtyajyante pramādāttu varjayitvā patiṃ striyā || 9 ||

All worldly possessions, as desired, in small measures, are abandoned due to carelessness, except the husband by the wife.

सभी दुनियावी वस्तुएँ, जैसे इच्छा हो, छोटे-छोटे हिस्सों में, लापरवाही के कारण छोड़ दी जाती हैं, परंतु पति को पत्नी नहीं छोड़ती।

7.65.10

स्थिरयौवनया दुःखान्येतानि मुनिनायक। भुक्तानि वर्षवृन्दानि पश्य दौर्भाग्यजृम्भितम् ॥ १० ॥

sthirayauvanayā duḥkhānyetāni munināyaka | bhuktāni varṣavṛndāni paśya daurbhāgyajṛmbhitam || 10 ||

O leader of sages, with steadfast youth, these sorrows have been endured, see the pride of misfortune.

हे मुनियों के नेता, स्थिर यौवन के साथ, ये दुःख सहे गए हैं, दुर्भाग्य के गर्व को देखो।

7.65.11

अथ क्रमेण तेनैव सरागो मे विरागताम् आययौ हिमदग्धाया नलिन्या इव नीरसः ॥ ११ ॥

atha kramena tenaiva saraago me viraagataam aayayau himadagdhaya nalinyaa iva neerasah || 11 ||

Then, gradually, through the same process, my attachment turned into detachment, like a lotus affected by frost becomes tasteless.

फिर, धीरे-धीरे, उसी प्रक्रिया से, मेरा आसक्ति वैराग्य में बदल गया, जैसे हिमपात से प्रभावित कमल का स्वाद खो जाता है।

7.65.12

विरागवासनास्तेन सर्वभावानुरञ्जना तवोपदेशेनेच्छामि मुने निर्वाणमात्मनः ॥ १२ ॥

viraagavaasanaastena sarvabhaavaanuranjaana tavopadeshenaichchaami mune nirvaanamaatmanah || 12 ||

With the desire for detachment and the pleasure of all beings, I wish for liberation of the self through your teachings, O sage.

वैराग्य की इच्छा और सभी प्राणियों के आनंद से, मैं आपके उपदेशों द्वारा आत्मा के मोक्ष की इच्छा करता हूँ, हे मुनि।

7.65.13

अप्राप्ताभिमतार्थानामविश्रान्तधियां परे मरणैरुह्यमानानां जीवितान्मरणं वरम् ॥ १३ ॥

apraaptaabhimataarthaanaamavishraantadhiyaam pare maranairuhyaamaanaam jeevitaanmaranam varam || 13 ||

For those who have not achieved their desired goals and whose minds are restless, repeated deaths are better than life.

जिन्होंने अपने इच्छित लक्ष्य प्राप्त नहीं किए हैं और जिनके मन अशांत हैं, उनके लिए बार-बार मरना जीवन से बेहतर है।

7.65.14

स मद्भर्ताद्य निर्वाणमीहमानो दिवानिशम् राजा राज्ञेव मनसा मनो जेतुं प्रबुध्यते ॥ १४ ॥

sa madbhartaaadya nirvaanameehamano divaanisham raja rajnev manasa mano jetum prabudhyate || 14 ||

That king, my husband, now desiring liberation, day and night, like a king with his mind, strives to conquer the mind.

वह राजा, मेरा पति, अब मोक्ष की इच्छा करता है, दिन-रात, जैसे एक राजा अपने मन से, मन को जीतने की कोशिश करता है।

7.65.15

ब्रह्मंस्तस्य च मद्भर्तुर्मम चाज्ञानशान्तये न्यायोपपन्नया वाचा कुरु स्मरणमात्मनः ॥ १५ ॥

brahmanstasya cha madbharturmama chaajnaanashaantaye nyaayopapannaya vaacha kuru smaranamaatmanah || 15 ||

O Brahmin, for the peace of ignorance of that my husband and me, with logical and appropriate words, make us remember the self.

हे ब्राह्मण, मेरे पति और मेरे अज्ञान की शांति के लिए, तर्कसंगत और उपयुक्त शब्दों से, हमें आत्मा को याद दिलाएँ।

7.65.16

यदा मामनपेक्ष्यैव स मद्भर्तात्मनि स्थितः। तदा विरागो वैरस्यमनयन्मे जगत्स्थितिम् ॥ १६ ॥

yadā māmanapekṣyaiva sa madbhartātmani sthitaḥ| tadā virāgo vairasyamanayanme jagatsthitim || 16 ||

When he, disregarding me, is established in his own self, then detachment brings about the stability of the world for me.

जब वह मुझे अनदेखा करके अपने आत्मा में स्थित होता है, तब वैराग्य मेरे लिए जगत की स्थिति लाता है।

7.65.17

संसारवासनावेशवर्जितास्मि ततोऽवसम्। निबध्याभिमतां तीव्रां व्योमसंचारधारणाम् ॥ १७ ॥

saṃsāravāsanāveśavarjitāsmi tato'vasam| nibadhyābhimatāṃ tīvrāṃ vyomasañcāradhāraṇām || 17 ||

I am free from the influence of worldly desires, and thus I have attained a firm and intense concentration on the movement in the sky.

मैं संसार की वासनाओं के प्रभाव से मुक्त हूँ, और इसलिए मैंने आकाश में गति पर एक दृढ़ और तीव्र धारणा प्राप्त की है।

7.65.18

अर्जयित्वा तथा व्योम्नि गतिं धारणया मया। अभ्यस्ता धारणा भूयः सिद्धसङ्गफलप्रदा॥ १८॥

arjayitvā tathā vyomni gatiṃ dhāraṇayā mayā| abhyastā dhāraṇā bhūyaḥ siddhasaṅgaphalapradā || 18 ||

Having attained the movement in the sky through concentration, I have practiced this concentration further, which grants the fruit of association with the perfected beings.

आकाश में गति को धारणा द्वारा प्राप्त करके, मैंने इस धारणा को और अधिक अभ्यास किया है, जो सिद्धों के संग का फल प्रदान करता है।

7.65.19

ततः स्वजगदाधारपूर्वापरनिरीक्षया। स्थिताहं धारणां बद्ध्वा सापि सिद्धिं समागता॥ १९॥

tataḥ svajagadādhārapūrvāparanirīkṣayā| sthitāhaṃ dhāraṇāṃ baddhvā sāpi siddhiṃ samāgatā || 19 ||

Then, by observing the past and future support of my own world, I have established the concentration, and that too has attained perfection.

तब, अपने जगत के भूत और भविष्य के आधार को देखकर, मैंने धारणा को स्थापित किया, और वह भी सिद्धि प्राप्त कर चुकी है।

7.65.20

अथ स्वजगतो दृष्ट्वा हृदयं तस्य बाह्यगा। अहं दृष्टवती स्थूलां लोकालोकगिरेः शिलाम्॥ २०॥

atha svajagato dṛṣṭvā hṛdayaṃ tasya bāhyagā| ahaṃ dṛṣṭavatī sthūlāṃ lokālokagireḥ śilām || 20 ||

Then, having seen the heart of my own world which is external, I have seen the gross stone of the Lokāloka mountain.

तब, अपने जगत के बाहरी हृदय को देखकर, मैंने लोकालोक पर्वत की स्थूल शिला देखी।

7.65.21

एतावतापि कालेन दंपत्योरावयोर्मुने परं द्रष्टुमभूदिच्छा न काचन कदाचन॥ २१॥

etāvatāpi kālena daṃpatyorāvayormune paraṃ draṣṭumabhūdicchā na kācana kadācana || 21 ||

Even after so much time, O sage, the desire to see the supreme did not arise in either of us.

इतने समय के बाद भी, हे मुने, हम दोनों में से किसी में भी परम को देखने की इच्छा नहीं हुई।

7.65.22

मद्भर्ता केवलं शुद्धवेदार्थैकान्तचिन्तया न च यातं न चायातं वेत्त्यहो विगतैषणः॥ २२॥

madbhartā kevalaṃ śuddhavedārthaikāntacintayā na ca yātaṃ na cāyātaṃ vetyaho vigataiṣaṇaḥ || 22 ||

My husband, with pure thoughts focused solely on the meaning of the Vedas, neither comes nor goes, alas, he is free from desires.

मेरा पति, शुद्ध वेदार्थ पर एकाग्र चिंतन के साथ, न आता है न जाता है, अहो, वह इच्छाओं से मुक्त है।

7.65.23

तेनासौ मत्पतिर्विद्वानपि न प्राप्तवान्पदम् अद्य सोऽहं च वाञ्छावः प्रयत्नेन परं पदम्॥ २३॥

tenāsau matpatirvidvānapi na prāptavānpadam adya so'haṃ ca vāñchāvaḥ prayatnena paraṃ padam || 23 ||

Therefore, even though my husband is knowledgeable, he has not attained the supreme state. Today, both of us desire to attain the supreme state with effort.

इसलिए, यद्यपि मेरा पति विद्वान है, फिर भी उसने परम पद प्राप्त नहीं किया। आज, हम दोनों प्रयत्न से परम पद प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं।

7.65.24

तदेतामर्थिता ब्रह्मन्सफलां कर्तुमर्हसि महतामर्थिनो व्यर्था न कदाचन केचन ॥ २४ ॥

tadetāmarthitā brahman saphalāṃ kartumarhasi mahatāmarthino vyarthā na kadācana kecana || 24 ||

Therefore, O Brahman, you should make this request fruitful. The requests of the great are never in vain.

इसलिए, हे ब्रह्मन्, आप इस अनुरोध को सफल करने के लिए अर्ह हैं। महान लोगों के अनुरोध कभी व्यर्थ नहीं होते।

7.65.25

भ्रमन्ती सिद्धसेनासु सदा नभसि मानद त्वदृते नेह पश्यामि घनाज्ञानदवानलम् ॥ २५ ॥

bhramantī siddhasenāsu sadā nabhasi mānada tvadṛte neha paśyāmi ghanājñānadavānalam || 25 ||

Wandering in the assembly of the Siddhas, always in the sky, O respectable one, I do not see the dense fire of ignorance here except for you.

सिद्धों की सभा में भटकते हुए, सदा आकाश में, हे आदरणीय, मैं यहाँ अज्ञान की घनी आग को आपके अलावा नहीं देखता।

7.65.26

ब्रह्मन्विनैव करुणाकरकारणेन सन्तो यतोऽर्थिजनवाञ्छितपूरणानि । कुर्वन्ति तेन शरणागततामुपेतां मामर्हसीह न तिरस्करणेन योक्तुम् ॥ २६ ॥

brahmanvinainaiva karuṇākarakāraṇena santo yato'rthijanavāñchitapūraṇāni | kurvanti tena śaraṇāgatatāmupetāṃ māmarhasīha na tiraskaraṇena yoktum || 26 ||

The wise, out of compassion, fulfill the wishes of the needy, thus they accept those who seek refuge. Therefore, you should not reject me.

बुद्धिमान लोग करुणा के कारण अर्थी जनों की इच्छाओं की पूर्ति करते हैं, इसलिए वे शरणागतों को स्वीकार करते हैं। इसलिए, आपको मुझे अस्वीकार नहीं करना चाहिए।

Chapter 66

7.66.1

अथेत्युक्तवती पृष्टा सा मया कल्पितासनासंकल्पितासनस्थेन स्थितेन नभसि स्थिता ॥ १ ॥

athetyuktavatī pṛṣṭā sā mayā kalpitāsanāsaṃkalpitāsanasthena sthitena nabhasi sthitā || 1 ||

Then, having been addressed and questioned by me, she, having assumed a posture, remained motionless in the sky.

तब, मेरे द्वारा संबोधित और प्रश्न किए जाने के बाद, वह एक आसन ग्रहण करके आकाश में निश्चल बैठी रही।

7.66.2

कथं शिलोदरे बाले त्वद्विधानां भवेत्स्थितिःकथं संचलनं तत्र किमर्थं तत्र चास्पदम् ॥ २ ॥

kathaṃ śilodare bāle tvadvidhānāṃ bhavetsthitiḥkathaṃ saṃcalanaṃ tatra kimarthaṃ tatra cāspadam || 2 ||

How can there be stability for those like you, O child, in the hollow of a stone? How can there be movement there? What is the purpose of a place there?

हे बालक, पत्थर के खोखले में तुम्हारे जैसे लोगों के लिए स्थिरता कैसे हो सकती है? वहाँ गति कैसे हो सकती है? वहाँ किस उद्देश्य से स्थान है?

7.66.3

विद्याधर्युवाचमुने यथेदं भवतां जगत्स्फारं विराजतेतथास्माकं जगत्तत्र सर्गसंसारयुक् स्थितम् ॥ ३ ॥

vidyādharyuvācamune yathedaṃ bhavatāṃ jagatsphāraṃ virājatetathāsmākaṃ jagattatra sargasaṃsārayuk sthitam || 3 ||

O Sage, just as this world of yours appears magnificent, so does our world exist there, endowed with creation and dissolution.

हे मुनि, जैसे यह आपका विश्व शोभायमान है, वैसे ही हमारा विश्व वहाँ सृष्टि और प्रलय से युक्त स्थित है।

7.66.4

स्फुरन्ति नागाः पाताले तिष्ठन्ति भुवि पर्वताःआपश्चलचलायन्ते वहन्ति व्योम्नि वायवः ॥ ४ ॥

sphuranti nāgāḥ pātāle tiṣṭhanti bhuvi parvatāḥāpaścalachalāyante vahanti vyomni vāyavaḥ || 4 ||

Serpents move in the underworld, mountains stand on the earth, waters flow and move, and winds carry in the sky.

सर्प पाताल में चलते हैं, पर्वत पृथ्वी पर खड़े हैं, जल बहता है और चलता है, और वायु आकाश में बहती है।

7.66.5

अर्णवा अर्णसा भान्ति यान्त्यन्तः शनकैः प्रजाःभूतान्यजस्रं जायन्ते म्रियन्तेऽविरतं यथा ॥ ५ ॥

arṇavā arṇasā bhānti yāntyantaḥ śanakaiḥ prajāḥbhūtānyajasraṃ jāyante mriyante'viratam yathā || 5 ||

Oceans shine with waves, beings move slowly within, creatures are born and die continuously without ceasing.

समुद्र लहरों से चमकते हैं, प्राणी धीरे-धीरे अंदर चलते हैं, प्राणी निरंतर जन्म लेते हैं और मरते हैं।

7.66.6

वान्ति वाता वहन्त्यापो भान्ति चाभान्ति खे सुराःतिष्ठन्त्यगाः समुद्यन्ति ग्रहा यान्ति महीं नृपाः ॥ ६ ॥

vānti vātā vahantyāpo bhānti cābhānti khe surāḥtiṣṭhantyagāḥ samudyanti grahā yānti mahīṃ nṛpāḥ || 6 ||

The winds blow, the waters flow, the celestial beings shine and do not shine in the sky, the mountains stand, the planets rise, and the kings rule the earth.

हवाएँ चलती हैं, पानी बहता है, देवता चमकते हैं और आकाश में नहीं चमकते, पहाड़ खड़े होते हैं, ग्रह उदित होते हैं, और राजा पृथ्वी पर शासन करते हैं।

7.66.7

देवासुरमनुष्याणां व्यवहारपरम्पराःलोलाः प्रवृत्ता आकल्पमासमुद्रमिवापगाः ओ ॥ ७ ॥

devāsuramanuṣyāṇāṃ vyavahāraparamparāḥlolāḥ pravṛttā ākalpamāsamudramivāpagāḥ o || 7 ||

The traditions of gods, demons, and humans are unstable and continue like rivers flowing into the ocean.

देवताओं, असुरों और मनुष्यों की परंपराएँ अस्थिर हैं और समुद्र में बहने वाली नदियों की तरह चलती रहती हैं।

7.66.8

दिनपद्मानि भूलोकसरस्याकल्पमानभःलोलाभ्रालीनि फुल्लानि मीलितोन्मीलितान्यलम् ॥ ८ ॥

dinapadmāni bhūlokasarasyākalpamānabhaḥlolābhrālīni phullāni mīlitonmīlitānyalam || 8 ||

The lotuses of the earthly lake bloom and close continuously, like the unstable clouds in the sky.

पृथ्वी के तालाब के कमल लगातार खिलते और मुरझाते हैं, जैसे आकाश में अस्थिर बादल।

7.66.9

चन्द्रचर्काश्चतुर्दिक्कं चन्दनेनात्मतेजसारचयन्रात्रिरोहिण्योस्तमो हन्त्यपि हृद्गतम् ॥ ९ ॥

candracarcāścaturdikkaṃ candanenātmatejasāracayanrātrirohiṇyostamo hantyapi hṛdgatam || 9 ||

The moonbeams spread in all four directions, adorning the night with their own radiance, and even the darkness of the night of Rohini cannot destroy what is in the heart.

चंद्रमा की किरणें चारों दिशाओं में फैलती हैं, अपनी चमक से रात को सजाती हैं, और रोहिणी की रात का अंधेरा भी हृदय में जो है उसे नष्ट नहीं कर सकता।

7.66.10

स्वदशास्वादनरता वातयन्त्रसुचारितारोदःसद्मनि सूर्याख्या दीप्यते दिवि दीपिका ॥ १० ॥

svadaśāsvādanaratā vātayantrasucāritārodaḥsadmani sūryākhyā dīpyate divi dīpikā || 10 ||

The one who is engaged in enjoying their own state shines like a lamp in the sky, in the abode adorned with the wind instrument.

जो अपनी स्थिति का आनंद ले रहा है, वह वायु यंत्र से सजे हुए आश्रय में आकाश की दीपशिखा की तरह चमकता है।

7.66.11

ब्रह्मसंकल्पितो रुद्धो वातसंचारचारिभिःखेऽनिशं चक्रमृक्षाणां गुणावर्तो विवर्तते ॥ ११ ॥

brahmasaṃkalpito ruddho vātasaṃcāracāribhiḥkhe'niśaṃ cakramṛkṣāṇāṃ guṇāvarto vivartate || 11 ||

The wheel of the constellations, which is the manifestation of the qualities, revolves continuously in the sky, obstructed by the movements of the wind, as ordained by Brahma.

ब्रह्मा द्वारा निर्धारित, वायु के गतिविधि से रुद्ध, गुणों का चक्र आकाश में निरंतर घूमता रहता है।

7.66.12

भूततण्डुलमासृष्टेः पिनष्टि ध्रुवकीलकःनियत्या चलितो रोदः कपाटाम्भोदघर्घरः ॥ १२ ॥

bhūtataṇḍulamāsṛṣṭeḥ pinaṣṭi dhruvakīlakaḥniyatyā calito rodaḥ kapāṭāmbhodaghargharaḥ || 12 ||

The fixed pivot, having swallowed the seed of the elements, moves by necessity, causing the roaring sound of the celestial doors and waters.

तत्वों के बीज को निगल लेने वाला स्थिर कीलक, अनिवार्य रूप से चलता है, जिससे दिव्य द्वारों और जल की गर्जना होती है।

7.66.13

द्वीपाब्धिशैलैर्भूपीठं विमाननगरैर्नभःदेत्यदानवनागौघैः पूर्णं पातालमण्डलम् ॥ १३ ॥

dvīpābdhiśailairbhūpīṭhaṃ vimānanagarairnabhaḥdetyadānavanāgaughaiḥ pūrṇaṃ pātālamaṇḍalam || 13 ||

The earth, adorned with islands, oceans, and mountains, is filled with celestial cities and vehicles in the sky, and the underworld is filled with demons and serpents.

द्वीपों, समुद्रों और पर्वतों से सज्जित पृथ्वी, आकाश में दिव्य नगरों और विमानों से भरी हुई है, और पाताल दानवों और नागों से भरा हुआ है।

7.66.14

कुण्डलं त्रिजगल्लक्ष्म्या नीलं भूतलमण्डलम्स्थितं चञ्चलमाचारचञ्चलायाः स्फुरन्मणि ॥ १४ ॥

kuṇḍalaṃ trijagallakṣmyā nīlaṃ bhūtalamaṇḍalamsthitaṃ cañcalamācāracañcalāyāḥ sphuranmaṇi || 14 ||

The blue earthly realm, adorned with the splendor of the three worlds, is situated like a trembling jewel, moving with the restless nature of the restless one.

तीनों लोकों की शोभा से सज्जित, नीला पृथ्वी मण्डल, चंचल प्रकृति वाले चंचल की तरह काँपता हुआ रत्न के समान स्थित है।

7.66.15

बुद्ध्यादिरहितां स्पन्दसंविदं वायवीमिवस्थावरं जङ्गमं चैव सूक्ष्ममादाय जायते ॥ १५ ॥

buddhyādirahitāṃ spandasaṃvidaṃ vāyavīmivasthāvaraṃ jaṃgamaṃ caiva sūkṣmamādāya jāyate || 15 ||

The subtle, moving and non-moving, devoid of intelligence and other qualities, is born taking the form of the vibrating consciousness, like the wind.

बुद्धि और अन्य गुणों से रहित, सूक्ष्म, चल और अचल, कंपन चेतना के रूप में, वायु की तरह, उत्पन्न होता है।

7.66.16

मुनिमौनैर्धरा वार्भिर्मारुतैः कपिचापलमाकाशैरवकाशित्वं तेजोभिर्भासनं श्रितम् ॥ १६ ॥

munimaunairdharā vārbhirmārutaiḥ kapicāpalamākāśairavakāśitvaṃ tejobhirbhāsanaṃ śritam || 16 ||

The earth is supported by the silence of the sages, the clouds by the wind, the restless monkeys by the sky, and the radiance by the luminous bodies.

धरती मुनियों के मौन से संभाली जाती है, बादल हवाओं से, अस्थिर बंदर आकाश से, और चमक प्रकाश से संभाली जाती है।

7.66.17

वृक्षोर्व्यभ्यद्रिखचराः प्राणिनोन्तः स्फुरन्त्यलम्मृतिजन्मोन्मुखाः कीटसुरासुरजलौकसः ॥ १७ ॥

vṛkṣorvyabdhyadrikhacarāḥ prāṇinontaḥ sphurantyalammṛtijanmonmukhāḥ kīṭasurāsurajalaukasaḥ || 17 ||

Trees, mountains, and moving creatures, all living beings, shine within, eager for death and birth, including insects, gods, demons, and aquatic beings.

वृक्ष, पर्वत, और चलने वाले जीव, सभी जीव अंदर चमकते हैं, मृत्यु और जन्म के लिए उत्सुक, जिसमें कीट, देवता, असुर, और जलचर शामिल हैं।

7.66.18

ससुरासुरगन्धर्वाः कालः कलयति प्रजाःदोर्भिः कल्पयुगाब्दैश्च स्वपशूनिव पालकः ॥ १८ ॥

sasurāsuragandharvāḥ kālaḥ kalayati prajāḥdorbhiḥ kalpayugābdaiśca svapaśūniva pālakaḥ || 18 ||

Time, along with gods, demons, and celestial musicians, nurtures the beings with the cycles of days and ages, like a shepherd caring for his flock.

समय, देवताओं, असुरों, और स्वर्गीय संगीतकारों के साथ, दिनों और युगों के चक्रों से प्राणियों का पालन करता है, जैसे एक चरवाहा अपने झुंड का ध्यान रखता है।

7.66.19

अनन्तविपुलागाधगम्भीरे कालसागरेउत्पत्त्योत्पत्त्य लीयन्ते ते त्वावर्तविवर्तया ॥ १९ ॥

anantavipulāgādhagambhīre kālasāgareutpattyotpattya līyante te tvāvartavivartayā || 19 ||

In the vast, deep ocean of time, beings arise and dissolve, moving in the cycle of creation and dissolution.

समय के विशाल, गहरे सागर में, प्राणी उत्पन्न होते हैं और विलीन होते हैं, उत्पत्ति और विनाश के चक्र में चलते हैं।

7.66.20

चतुर्दशविधा वातवेल्लिता भूतपांसवःनाशाकाशे विलीयन्ते शरदम्भोदलीलया ॥ २० ॥

caturdaśavidhā vātavellitā bhūtapāṃsavaḥnāśākāśe vilīyante śaradambhodalīlayā || 20 ||

The fourteen types of beings, driven by the wind, dissolve into the sky, like the play of autumn clouds.

चौदह प्रकार के प्राणी, हवा से प्रेरित, आकाश में विलीन हो जाते हैं, जैसे शरद ऋतु के बादलों का खेल।

7.66.21

भुवनं बोधयन्ती द्यौश्चन्द्रार्ककरचामरैःस्थिताकाशांशुकाकल्पतारकोत्करशेखरा ॥ २१ ॥

bhuvanaṃ bodhayantī dyauścandrārkakaracāmaraiḥsthitākāśāṃśukākalpatārakotkaraśekharā || 21 ||

The sky, illuminating the world with the moon, sun, and stars, appears like a canopy adorned with celestial jewels.

आकाश, चंद्रमा, सूर्य और तारों से जगत को प्रकाशित करता है, और दिव्य रत्नों से सजे हुए छत्र की तरह दिखाई देता है।

7.66.22

स्थिताः पवनभूकम्पमेघतापसहिष्णवःस्वं प्रदेशमनुज्झन्त्यः ककुभः स्तम्भिता इव ॥ २२ ॥

sthitāḥ pavanabhūkampameghatāpasahiṣṇavaḥsvaṃ pradeśamanujjhantyaḥ kakubhaḥ stambhitā iva || 22 ||

The directions, enduring the wind, earthquakes, and the heat of the sun, seem to abandon their own regions as if they are frozen.

दिशाएँ, हवा, भूकंप, और सूर्य की गर्मी सहन करती हैं, और जैसे वे जम गई हों, अपने क्षेत्रों को छोड़ने की तरह लगती हैं।

7.66.23

उत्पातमेघनिर्ह्रादभूमिकम्पग्रहग्रहैःअप्यातैरपि विज्ञातैर्भूतानां जायते गतिः ॥ २३ ॥

utpātameghanirhrādabhūmikampagrahagrahaiḥapyātairapi vijñātairbhūtānāṃ jāyate gatiḥ || 23 ||

Even with the known occurrences of portentous clouds, thunder, earthquakes, and planetary movements, the fate of beings is determined.

भले ही शुभ बादल, गर्जन, भूकंप, और ग्रहों की गति ज्ञात हों, प्राणियों का भाग्य निश्चित होता है।

7.66.24

सप्तानां जलमभ्दीनामौर्वाग्निः पिबति ज्वलन्लोकान्तराणामाकल्पं कालो भूतगणं यथा ॥ २४ ॥

saptānāṃ jalamabdhīnāmaurvāgniḥ pibati jvalanlokāntarāṇāmākalpaṃ kālo bhūtagaṇaṃ yathā || 24 ||

Just as the subterranean fire drinks the water of the seven oceans, time consumes the elements of the worlds at the end of the kalpa.

जैसे पाताल की अग्नि सात समुद्रों का जल पी जाती है, वैसे ही काल कल्प के अंत में लोकों के तत्वों को निगल जाता है।

7.66.25

पातालमाविशति याति नभोबिलं च दिङ्मण्डलं भ्रमति भूतगणः समन्तात्पर्येति पर्वतमहार्णवमण्डलानि द्वीपान्तराणि च मरुत्सरणक्रमेण ॥ २५ ॥

pātālamāviśati yāti nabhobilaṃ ca diṅmaṇḍalaṃ bhramati bhūtagaṇaḥ samantātparyeti parvatamahārṇavamaṇḍalāni dvīpāntarāṇi ca marutsaraṇakrameṇa || 25 ||

The elements enter the underworld, move through the sky, revolve in the celestial sphere, and traverse the mountains, oceans, and islands with the motion of the wind.

तत्व पाताल में प्रवेश करते हैं, आकाश में चलते हैं, खगोलीय मंडल में घूमते हैं, और हवा की गति के साथ पर्वतों, समुद्रों, और द्वीपों को पार करते हैं।

Chapter 67

7.67.1

विद्याधर्युवाच । यावत्तं सर्गमागच्छ प्रसादः क्रियतां मुने । आश्चर्येषूपपन्नेषु महान्तो ह्यतिकौतुकाः ॥ १ ॥

vidyādharyuvāca | yāvattaṃ sargamāgaccha prasādaḥ kriyatāṃ mune | āścaryeṣūpapanneṣu mahānto hyatikautukāḥ || 1 ||

Vidyadhara said: Until you reach the creation, O sage, grant your grace. In the midst of wonders, the great ones are indeed full of curiosity.

विद्याधर ने कहा: जब तक आप सृष्टि तक नहीं पहुंचते, हे मुनि, अपना प्रसाद करें। आश्चर्यों में भरे हुए महान लोग वास्तव में उत्सुक हैं।

7.67.2

तथेत्युक्ते मया सार्धं गन्तुमारब्धमम्बरे । वात्यया सौरभेणेव शून्ये शून्येन शून्यया ओ ॥ २ ॥

tathetyukte mayā sārdhaṃ gantumārabdhamambare | vātyayā saurabheṇeva śūnye śūnyena śūnyayā o || 2 ||

Having said 'so be it,' I began to travel with her in the sky. Like the wind carrying fragrance, we moved through the empty space with emptiness.

'तथास्तु' कहकर, मैंने उसके साथ आकाश में यात्रा शुरू की। जैसे हवा सुगंध लेकर चलती है, हम शून्य स्थान में शून्यता के साथ चले।

7.67.3

अथाहं दूरमध्वानं शून्यमुल्लङ्घ्य नाभसम् । नभःस्थं भूतसंघातं तया सार्धमवाप्तवान् ॥ ३ ॥

athāhaṃ dūramadhvānaṃ śūnyamullaṅghya nābhasam | nabhaḥsthaṃ bhūtasaṃghātaṃ tayā sārdhamavāptavān || 3 ||

Then I, having traversed a long distance through the empty sky, reached a gathering of beings in the sky with her.

तब मैंने शून्य आकाश में एक लंबी दूरी तय करके, उसके साथ आकाश में प्राणियों के एक समूह तक पहुंचा।

7.67.4

तमुल्लङ्घ्य चिरेणात्र भूतसंचारमम्बरे । लोकालोकशिरोव्योम प्राप्तोऽस्मि धवलाम्बुदम् ॥ ४ ॥

tamullaṅghya cireṇātra bhūtasaṃcāramambare | lokālokśirovyoma prāpto'smi dhavalāmbudam || 4 ||

Having traversed that gathering of beings in the sky for a long time, I reached the white cloud-like region at the summit of Lokaloka.

उस आकाश में प्राणियों के समूह को लंबे समय तक तय करके, मैं लोकालोक के शिखर पर स्थित सफेद बादल जैसे क्षेत्र तक पहुंचा।

7.67.5

उत्तरांशेन्दुशुभ्राभ्रपीठान्निर्गत्य तां शिलाम् । आनीतोस्मि तथोत्तुङ्गां तप्तकाञ्चनकल्पिताम् ॥ ५ ॥

uttarāṃśenduśubhrābhrapīṭhānnirgatya tāṃ śilām | ānīto'smi tathottuṅgāṃ taptakāñcanakalpitām || 5 ||

Having emerged from the northern peak resembling the white moon, I was brought to that lofty stone, which was made of molten gold.

उत्तरी चंद्रमा जैसे सफेद शिखर से निकलकर, मैं उस उच्च पत्थर तक लाया गया, जो पिघले हुए सोने का बना हुआ था।

7.67.6

यावत्पश्याम्यहं शुभ्रां शिलां तां न च तज्जगत् । कलधौतमयीमुच्चैरग्निलोकतटीमिव ॥ ६ ॥

yāvatpaśyāmyahaṃ śubhrāṃ śilāṃ tāṃ na ca tajjagat| kaladhautamayīmuccairagnilokatatīmiva || 6 ||

As long as I see that bright stone, I do not see the world| It is like a high shore of the fire world, made of molten gold

जब तक मैं उस चमकीले पत्थर को देखता हूँ, मुझे दुनिया नहीं दिखती| यह पिघले हुए सोने से बनी अग्नि लोक की ऊँची तटी की तरह है

7.67.7

तदा मयोक्ता सा कान्ता क्व भवत्सर्गभूरिति । क्व रुद्रार्काग्नितारादि क्व लोकान्तरसप्तकम् ॥ ७ ॥

tadā mayoktā sā kāntā kva bhavatsargabhūriti| kva rudrārkāgnitārādi kva lokāntarasaptakam || 7 ||

Then I asked that beloved, 'Where is the earth? Where are the sun, fire, stars, and the seven other worlds?'

तब मैंने उस प्रियतमा से पूछा, 'पृथ्वी कहाँ है? सूर्य, अग्नि, तारे और सात अन्य लोक कहाँ हैं?'

7.67.8

कार्णवाकाशककुभः क्वोन्मज्जननिमज्जने । क्व महाम्भोदसंभारः क्व ताराम्बरडम्बरम् ॥ ८ ॥

kārṇavākāśakakubhaḥ kva unmājjana nimajjane| kva mahāmbhodasaṃbhāraḥ kva tārāmbaraḍambaram || 8 ||

Where are the oceans, the sky, and the directions? Where is the rising and setting? Where are the great clouds and the canopy of stars?

समुद्र, आकाश और दिशाएँ कहाँ हैं? उदय और अस्त कहाँ है? बड़े बादल और तारों का आवरण कहाँ है?

7.67.9

क्व शैलशिखरश्रेण्यः क्व महार्णवलेखिकाः । क्व द्वीपवलयाः सप्त क्व तप्तकनकावनिः ॥ ९ ॥

kva śailaśikharaśreṇyaḥ kva mahārṇavalēkhikāḥ| kva dvīpavalayāḥ sapta kva taptakanakāvaniḥ || 9 ||

Where are the mountain peaks? Where are the great ocean boundaries? Where are the seven island continents? Where is the earth made of molten gold?

पर्वत की चोटियाँ कहाँ हैं? महान समुद्री सीमाएँ कहाँ हैं? सात द्वीप समूह कहाँ हैं? पिघले हुए सोने से बनी पृथ्वी कहाँ है?

7.67.10

क्व कार्यकालकलनाः क्व भूतभुवनभ्रमः । क्व विद्याधरगन्धर्वाः क्व नरामरदानवाः ॥ १० ॥

kva kāryakālakalanāḥ kva bhūtabhuvanabhramaḥ| kva vidyādharagandharvāḥ kva narāmaradānavāḥ || 10 ||

Where are the calculations of time and action? Where is the wandering of beings in the worlds? Where are the Vidyadharas and Gandharvas? Where are the humans, gods, and demons?

कार्य और काल के गणना कहाँ हैं? प्राणियों का लोकों में भटकना कहाँ है? विद्याधर और गंधर्व कहाँ हैं? मनुष्य, देवता और दानव कहाँ हैं?

7.67.11

क्वर्षिभूपालमुनयः क्व नयापनयक्रमः । क्व पञ्चयामयामिन्यः क्व स्वर्गनरकभ्रमः ॥ ११ ॥

kvarṣibhūpālamunayaḥ kva nayāpanayakramaḥ| kva pañcayāmayāminyaḥ kva svarganarakabhramaḥ || 11 ||

Where are the kings, sages, the order of policy and misfortune? Where are the five senses, the nights, the illusion of heaven and hell?

कहाँ हैं राजा, ऋषि, नीति और दुर्भाग्य का क्रम? कहाँ हैं पाँच इन्द्रियाँ, रात्रियाँ, स्वर्ग और नरक का भ्रम?

7.67.12

क्व पुण्यपापकलना क्व कलाकालकेलयः। क्व सुरासुरवैराणि क्व द्वेषस्नेहरीतयः ॥ १२ ॥

kva puṇyapāpakalanā kva kalākālakelayaḥ| kva surāsuravairāṇi kva dveṣasneharītayaḥ || 12 ||

Where is the calculation of merit and demerit? Where are the arts and the play of time? Where are the conflicts between gods and demons? Where are the paths of hatred and affection?

कहाँ है पुण्य और पाप का हिसाब? कहाँ हैं कला और समय का खेल? कहाँ हैं देवताओं और असुरों के बीच के वैर? कहाँ हैं द्वेष और स्नेह के रास्ते?

7.67.13

वदत्येवं मयि वचः सोवाच वरवर्णिनी। विस्मयाकुलमालोक्य शिलामलिविलोचना ॥ १३ ॥

vadatyevaṃ mayi vacaḥ sovāca varavarṇinī| vismayākulamālokya śilāmalivilocanā || 13 ||

Speaking thus to me, the beautiful lady said, looking at me with eyes wide open in amazement.

ऐसा कहकर मुझसे उस सुंदर स्त्री ने कहा, आश्चर्य से भरी आँखों से मुझे देखते हुए.

7.67.14

विद्याधर्युवाच। पश्याम्यखिल नात्मीयमहं सर्वमिहोपले। मुकुरप्रतिबिम्बस्थपुरान्यपुरवज्जनम् ॥ १४ ॥

vidyādharyuvāca| paśyāmyakhila nātmīyamahaṃ sarvamihopale| mukurapratibimbasthapurānyapuravajjanam || 14 ||

The celestial maiden said, 'I see everything here in this stone, the reflection of ancient and new cities.'

देवकन्या ने कहा, 'मैं इस पत्थर में सब कुछ देखती हूँ, पुराने और नए शहरों की प्रतिबिम्ब.'

7.67.15

नित्यानुभव एवात्र दर्शने कारणं मम। तदभावो मुने मन्ये ते कारणमदर्शने ॥ १५ ॥

nityānubhava evātra darśane kāraṇaṃ mama| tadabhāvo mune manye te kāraṇamadarśane || 15 ||

The constant experience is the cause of my seeing here, O sage. I believe the absence of that is the cause of your not seeing.

यह नित्य अनुभव मेरे देखने का कारण है, हे मुनि. मैं मानती हूँ कि उसकी अनुपस्थिति आपके न देखने का कारण है.

7.67.16

अन्यच्च चिरकालैकद्वैतसंकथयानया। शुद्धातिवाहिकैकात्मदेहता विस्मृतावयोः ओ ॥ १६ ॥

anyacca cirakālaikadvaitasaṃkathayānayā | śuddhātivāhikaikātmadehatā vismṛtāvayoḥ o || 16 ||

Moreover, due to the long-standing discussion of non-duality, the pure, transcendental, singular nature of the body has been forgotten by both of us.

इसके अलावा, अद्वैत की चिरकालीन चर्चा के कारण, शुद्ध और पारलौकिक एकात्मक शरीर की प्रकृति हम दोनों ने भुला दी है।

7.67.17

ममातिसुचिराभ्यस्तमपि व्योम लतामिव। गतं निजं जगदिदं यतः पश्यामि न स्फुटम् ॥ १७ ॥

mamātisucirābhyastamapi vyoma latāmiva | gataṃ nijaṃ jagadidaṃ yataḥ paśyāmi na sphuṭam || 17 ||

Even the sky, which I have practiced for a very long time, has become like a creeper. Therefore, I do not see this world clearly.

मेरे द्वारा बहुत लंबे समय तक अभ्यास किया गया आकाश भी एक लता की तरह हो गया है। इसलिए, मैं इस जगत को स्पष्ट रूप से नहीं देख पाता।

7.67.18

अभूद्यत्स्वजगत्पूर्वमतिप्रकटमेव मे । तत्पश्यामीदमादर्श इव बिम्बितमस्फुटम् ॥ १८ ॥

abhūdyatsvajagatpūrvamatiprakaṭameva me | tatpaśyāmīdamādarśa iva bimbitamasphuṭam || 18 ||

What was very clear to me before in my own world, I now see as if reflected in a mirror, not clearly.

जो मेरे अपने जगत में पहले बहुत स्पष्ट था, वह मैं अब दर्पण में प्रतिबिंबित की तरह, स्पष्ट रूप से नहीं देख पाता।

7.67.19

चिरव्यर्थोत्थया नाथ संकथाव्यथया मिथः । स्वास्थ्यं विस्मृतमात्मीयमवदाततमं ततम् ॥ १९ ॥

ciravyarthotthayā nātha saṃkathāvyathayā mithaḥ | svāsthyaṃ vismṛtamātmīyamavadātatamaṃ tatam || 19 ||

O Lord, due to the long-standing useless discussions and the resulting distress, the natural state of the self has been forgotten, becoming distorted and spread out.

हे नाथ, चिरकालीन व्यर्थ चर्चाओं और उससे उत्पन्न व्यथा के कारण, स्वयं की स्वाभाविक अवस्था भुला दी गई है, विकृत और फैली हुई हो गई है।

7.67.20

योऽभ्यासः प्रकचत्यन्तः शुद्धचिन्नभसो रसात् । भवेत्तन्मयमेवान्तराबालमिव लक्ष्यते ॥ २० ॥

yo'bhyāsaḥ prakacatyantaḥ śuddhacinnabhaso rasāt | bhavettanmayamevāntarābālamiva lakṣyate || 20 ||

The practice that shines within from the essence of pure consciousness is seen as if it were a child, completely absorbed in it.

जो अभ्यास शुद्ध चेतना की सारता से अंदर चमकता है, वह एक बच्चे की तरह दिखाई देता है, जो पूरी तरह से उसमें डूबा हुआ है।

7.67.21

न सच्छास्त्रेण सा विद्धि न सन्न्यायेन सा कला । अस्ति नास्त्यमितोद्योगाद्यदभ्यासान्न सिद्ध्यति ॥ २१ ॥

na sacchāstreṇa sā viddhi na sannyāyena sā kalā | asti nāstyamitodyogādyadabhyāsānna siddhyati || 21 ||

Neither by true scripture nor by logical reasoning can one attain perfection. Only through practice and effort can one achieve success.

न सच्छास्त्रेण सा विद्धि न सन्न्यायेन सा कला | अस्ति नास्त्यमितोद्योगाद्यदभ्यासान्न सिद्ध्यति

7.67.22

स्वजगत्संतताभ्यासवशतो मां कथाभ्रमः । नूनमाक्रान्तवानेष द्वयोर्हि बलवाञ्जयी ॥ २२ ॥

svajagatsaṃtatābhyāsavaśato māṃ kathābhramaḥ | nūnamākrāntavāneṣa dvayorhi balavāñjayī || 22 ||

Due to the continuous practice of my own worldly affairs, I am bewildered by stories. Indeed, this has overwhelmed me, for the stronger one always wins between the two.

स्वजगत्संतताभ्यासवशतो मां कथाभ्रमः | नूनमाक्रान्तवानेष द्वयोर्हि बलवाञ्जयी

7.67.23

इष्टवस्त्वर्थिनां तज्ज्ञसूपदिष्टेन कर्मणा । पौनःपुन्येन करणान्नेतरच्छरणं मुने ॥ २३ ॥

iṣṭavastvarthināṃ tajjñasūpadiṣṭena karmaṇā | pauṇapunyena karaṇānnetaraccharaṇaṃ mune || 23 ||

The desired object of the seekers is achieved through the actions prescribed by the knowledgeable one. By repeatedly performing these actions, O sage, one attains the ultimate refuge.

इष्टवस्त्वर्थिनां तज्ज्ञसूपदिष्टेन कर्मणा | पौनःपुन्येन करणान्नेतरच्छरणं मुने

7.67.24

अयमित्थमिहाज्ञानभ्रमः प्रौढोऽहमात्मकः । शाम्यति ज्ञानचर्चाभिः पश्याभ्यासविजृम्भितम् ॥ २४ ॥

ayamitthamihājñānabhramaḥ prauḍho'hamātmakaḥ | śāmyati jñānacarcābhiḥ paśyābhyāsavijṛmbhitam || 24 ||

This ignorance and delusion that I have is profound. It is dispelled by discussions on knowledge and by seeing through practice.

अयमित्थमिहाज्ञानभ्रमः प्रौढोऽहमात्मकः | शाम्यति ज्ञानचर्चाभिः पश्याभ्यासविजृम्भितम्

7.67.25

अहं शिष्याबला बाला पश्यामि त्वं न पश्यसि । सर्वज्ञोऽपि शिलासर्गं पश्याभ्यासविजृम्भितम् ॥ २५ ॥

ahaṃ śiṣyābalā bālā paśyāmi tvaṃ na paśyasi | sarvajño'pi śilāsargaṃ paśyābhyāsavijṛmbhitam || 25 ||

I, a mere disciple, see, but you, the omniscient one, do not see. Even the all-knowing one sees the creation of stones through practice.

अहं शिष्याबला बाला पश्यामि त्वं न पश्यसि | सर्वज्ञोऽपि शिलासर्गं पश्याभ्यासविजृम्भितम्

7.67.26

अज्ञोऽपि तज्ज्ञतामेति शनैः शैलोपि चूर्ण्यते । बाणोप्येति महालक्ष्यं पश्याभ्यासविजृम्भितम् ॥ २६ ॥

ajño'pi tajjñatāmeti śanaiḥ śailopi cūrṇyate | bāṇopyeti mahālakṣyaṃ paśyābhyāsavijṛmbhitam || 26 ||

Even the ignorant attains knowledge gradually, even a mountain can be ground to dust, and even an arrow can hit a great target; see the power of practice.

अज्ञानी भी धीरे-धीरे ज्ञानी बन जाता है, पहाड़ भी धीरे-धीरे चूर्ण हो जाता है, और बाण भी बड़े लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है; अभ्यास की शक्ति देखो।

7.67.27

इत्थं नाम परिप्रौढा मिथ्याज्ञानविषूचिका । शाम्यत्येव विचारेण पश्याभ्यासविजुम्भितम् ॥ २७ ॥

itthaṃ nāma paripraudḥā mithyājñānaviṣūcikā | śāmyatyeva vicāreṇa paśyābhyāsavijummmitam || 27 ||

Thus, the deeply ingrained false knowledge, like a poisonous scorpion, is pacified by reflection; see the power of practice.

इस प्रकार, गहरी जड़ जमाई हुई मिथ्या ज्ञान की विषूचिका विचार से शांत हो जाती है; अभ्यास की शक्ति देखो।

7.67.28

अभ्यासेन कटुद्रव्यं भवत्यभिमतं मुने । अन्यस्मै रोचते निम्बस्त्वन्यस्मै मधु रोचते ॥ २८ ॥

abhyāsena kaṭudravyaṃ bhavatyabhimataṃ mune | anyasmai rocate nimbastvanyasmai madhu rocate || 28 ||

Through practice, even bitter substances become desirable, O sage; what is pleasing to one may not be pleasing to another.

अभ्यास से, कड़वी चीजें भी प्रिय हो जाती हैं, हे मुनि; जो एक को अच्छा लगता है वह दूसरे को अच्छा नहीं लगता।

7.67.29

अबन्धुर्बन्धुतामेति नैकट्याभ्यासयोगतः । यात्यनभ्यासतो दूरात्स्नेहो बन्धुषु तानवम् ॥ २९ ॥

abandhurbandhutāmeti naikaṭyābhyāsayogataḥ | yātyanabhyāsato dūrātsneho bandhuṣu tānavam || 29 ||

A non-relative becomes a relative through close association and practice; affection for relatives diminishes with lack of practice.

एक अपरिचित व्यक्ति निकटता और अभ्यास से एक रिश्तेदार बन जाता है; रिश्तेदारों के प्रति स्नेह अभ्यास के अभाव में कम हो जाता है।

7.67.30

आतिवाहिकदेहोऽयं शुद्धचिद्व्योम केवलम्। आधिभौतिकतामेति भावनाभ्यासयोगतः ॥ ३० ॥

ātivāhikadeho'yaṃ śuddhacidvyoma kevalam | ādhibhautikatāmeti bhāvanābhyāsayogataḥ || 30 ||

This transient body is purely the space of pure consciousness; it attains materiality through the practice of meditation.

यह अस्थायी शरीर शुद्ध चेतना का आकाश है; यह ध्यान के अभ्यास से भौतिकता प्राप्त करता है।

7.67.31

आधिभौतिकदेहोऽसौ धारणाभ्यासभावनात्। विहंगवत्खमभ्येति पश्याभ्यासविजृम्भितम् ॥ ३१ ॥

ādhibhautikadeho'sau dhāraṇābhyāsabhāvanāt | vihaṅgavatkhamabhyeti paśyābhyāsavijṛmbhitam || 31 ||

This material body, through the practice of concentration and meditation, reaches the sky like a bird; see the manifestation of practice.

यह भौतिक शरीर, धारणा और ध्यान के अभ्यास से, पक्षी की तरह आकाश तक पहुंचता है; अभ्यास के विकास को देखो।

7.67.32

पुण्यानि यान्ति वैफल्यं वैफल्यं यान्ति मातरः। भाग्यानि यान्ति वैफल्यं नाभ्यासस्तु कदाचन ॥ ३२ ॥

puṇyāni yānti vaiphlyaṃ vaiphlyaṃ yānti mātaraḥ | bhāgyāni yānti vaiphlyaṃ nābhyāsastu kadācana || 32 ||

Merits go to waste, mothers go to waste, fortunes go to waste, but practice never goes to waste.

पुण्य व्यर्थ हो जाते हैं, माताएँ व्यर्थ हो जाती हैं, भाग्य व्यर्थ हो जाता है, लेकिन अभ्यास कभी व्यर्थ नहीं होता।

7.67.33

दुःसाध्याः सिद्धिमायान्ति रिपवो यान्ति मित्रताम्। विषाण्यमृततां यान्ति संततीभ्यासयोगतः ॥ ३३ ॥

duḥsādhyāḥ siddhimāyānti ripavo yānti mitratām | viṣāṇyamṛtatāṃ yānti santatābhyāsayogataḥ || 33 ||

Difficult accomplishments are achieved, enemies become friends, poisons turn into nectar, through the continuous practice of yoga.

कठिन उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं, शत्रु मित्र बन जाते हैं, विष अमृत बन जाता है, योग के निरंतर अभ्यास से।

7.67.34

येनाभ्यासः परित्यक्त इष्टे वस्तुनि सोऽधमः। कदाचिन्न तदाप्नोति वन्ध्या स्वतनयं यथा ॥ ३४ ॥

yenābhyāsaḥ parityakta iṣṭe vastuni so'dhamaḥ | kadācinnā tadāpnoti vandhyā svatanayaṃ yathā || 34 ||

One who abandons practice in the desired object is inferior; one never attains it, like a barren woman her own child.

जो इच्छित वस्तु में अभ्यास को छोड़ देता है, वह निकृष्ट है; वह कभी उसे प्राप्त नहीं करता, जैसे बंझ औरत अपने बच्चे को।

7.67.35

यदप्यभिमतं वस्तु स्वभ्यासेन तदर्जनात्। तद्युक्तिपूर्वकं त्याज्यमामृत्योर्जीवितं यथा ॥ ३५ ॥

yadapyabhimataṃ vastu svabhyāsena tadarjanāt | tadyuktipūrvakaṃ tyājyamāmṛtyorjīvitaṃ yathā || 35 ||

Even if the desired object is obtained through one's own practice, it should be abandoned with reasoning, like life from death.

यदि इच्छित वस्तु अपने अभ्यास से प्राप्त हो जाती है, तो भी उसे युक्तिपूर्वक त्याग देना चाहिए, जैसे मृत्यु से जीवन।

7.67.36

इष्टे वस्तुनि नाभ्यासं यः करोति नराधमः। सोऽनिष्टेऽनिष्टमाप्नोति नरकान्नरकान्तरम् ॥ ३६ ॥

iṣṭe vastuni nābhyāsaṃ yaḥ karoti narādhamaḥ| so'niṣṭe'niṣṭamāpnoti narakānnarakāntaram || 36 ||

The lowest of men who does not practice in the desired object, attains the undesired in the undesired, and falls from one hell to another.

जो व्यक्ति इच्छित वस्तु में अभ्यास नहीं करता, वह निकृष्ट व्यक्ति है और अनिच्छित में अनिच्छित को प्राप्त करता है और एक नरक से दूसरे नरक में गिरता है।

7.67.37

तरन्ति सरितं स्फीतां संसारासारसेविनः। त एवात्मविचाराख्यमभ्यासं न त्यजन्ति ये ॥ ३७ ॥

taranti saritaṃ sphītāṃ saṃsārāsārasevinaḥ| ta evātmavicārākhyamabhyāsaṃ na tyajanti ye || 37 ||

Those who serve the essence of the world cross the vast ocean of existence. They do not abandon the practice of self-inquiry.

जो लोग संसार की सार सेवा करते हैं, वे विशाल अस्तित्व के सागर को पार कर लेते हैं। वे आत्म-विचार के अभ्यास को नहीं छोड़ते।

7.67.38

अभ्यासभासोऽभिमतं वस्तु प्रकटयन्त्यलम्। प्रापयन्ति च निर्विघ्नं घटं दीपप्रभा यथा ॥ ३८ ॥

abhyāsabhāso'bhimataṃ vastu prakaṭayantyalam| prāpayanti ca nirvighnaṃ ghaṭaṃ dīpaprabhā yathā || 38 ||

The light of practice illuminates the desired object and brings it forth effortlessly, just as a lamp illuminates a pot without obstruction.

अभ्यास की प्रकाश इच्छित वस्तु को प्रकट करता है और उसे बिना किसी बाधा के सहजता से लाता है, जैसे दीपक की रोशनी घड़े को बिना किसी बाधा के प्रकट करती है।

7.67.39

यथा कल्पद्रुमलताः सच्चिन्तामणयो यथा। फलन्ति शरदश्चैतास्तथैवाभ्यासभूमयः ॥ ३९ ॥

yathā kalpadrumalatāḥ saccintāmaṇayo yathā| phalanti śaradaścaitāstathaivābhyāsabhūmayaḥ || 39 ||

Just as wish-fulfilling trees and wish-fulfilling gems bear fruit in autumn, so do those who practice bear fruit.

जैसे कल्पवृक्ष और चिन्तामणि शरद ऋतु में फलते हैं, वैसे ही अभ्यास करने वाले लोग फल देते हैं।

7.67.40

इष्टवस्तु चिराभ्यासभास्वान्भासयति प्रजाः। तथेन्द्रियाख्यां देहोर्व्यां रात्रिं पश्यन्ति नो यथा ॥ ४० ॥

iṣṭavastu cirābhyāsabhāsvānbhāsayati prajāḥ| tathendriyākhyāṃ dehorvyāṃ rātriṃ paśyanti no yathā || 40 ||

The desired object illuminated by long-term practice shines upon people, just as the senses perceive the night in the physical body.

लंबे समय तक अभ्यास किया हुआ इच्छित वस्तु लोगों पर चमकता है, जैसे इंद्रियाँ शरीर में रात को देखती हैं।

7.67.41

सर्वस्य जन्तुजातस्य सर्ववस्त्ववभासने। सर्वदैवैक एवोच्चैर्जयत्यभ्यासभास्करः ॥ ४१ ॥

sarvasya jantujātasya sarvavastvavabhāsane | sarvadaivaika evoccairjayatyabhyāsabhāskaraḥ || 41 ||

In the illumination of all beings and all things, the sun of practice always shines supreme.

सभी जीवों और सभी वस्तुओं के प्रकाशन में, अभ्यास का सूर्य हमेशा श्रेष्ठ रूप से चमकता है।

7.67.42

चतुर्दशविधायास्तु भूतजातेर्न कस्यचित्। सिध्यत्यभिमतं वस्तु विनाभ्यासमकृत्रिमम्॥ ४२॥

caturdaśavidhāyāstu bhūtajāterna kasyacit | siddhyatyabhimataṃ vastu vinābhyāsamakṛtrimam || 42 ||

Among the fourteen types of beings, no one can achieve their desired goal without genuine practice.

चौदह प्रकार के जीवों में से कोई भी अपने इच्छित लक्ष्य को बिना वास्तविक अभ्यास के प्राप्त नहीं कर सकता।

7.67.43

पौनःपुन्येन करणमभ्यास इति कथ्यते। पुरुषार्थः स एवेह तेनास्ति न विना गतिः॥ ४३॥

pauṇapunyena karaṇamabhyāsa iti kathyate | puruṣārthaḥ sa eveha tenāsti na vinā gatiḥ || 43 ||

Practice is said to be the repeated performance of actions. It is the means to achieve human goals; without it, there is no progress.

अभ्यास बार-बार करने से होता है। यह मानवीय लक्ष्यों को प्राप्त करने का साधन है; इसके बिना कोई प्रगति नहीं होती।

7.67.44

दृढाभ्यासाभिधानेन यत्ननाम्ना स्वकर्मणा। निजवेदनजेनैव सिद्धिर्भवति नान्यथा॥ ४४॥

dṛḍhābhyāsābhidhānena yatnanāmnā svakarmaṇā | nijavedanajenaiva siddhirbhavati nānyathā || 44 ||

With firm practice and effort in one's own actions, success is achieved through one's own endeavors, not otherwise.

दृढ़ अभ्यास और अपने कर्मों में प्रयास के साथ, सफलता अपने ही प्रयासों से प्राप्त होती है, अन्यथा नहीं।

7.67.45

अभ्यासभास्वति तपत्यवनौ वने च वीरस्य सिध्यति न यन्न तदस्ति किंचित्। अभ्यासतो भुवि भयान्यभयीभवन्ति सर्वासु पर्वतगुहास्वपि निर्जनासु॥ ४५॥

abhyāsabhāsvati tapatyavanau vane ca vīrasya siddhyati na yannna tadasi kiñcit | abhyāsato bhuvi bhayānyabhayībhavanti sarvāsu parvataguhāsvapi nirjanāsu || 45 ||

In the forest and in the desert, the radiance of practice shines brightly for the brave. Nothing is impossible for them. Through practice, fears on earth become fearless, even in the most desolate mountain caves.

वन और रेगिस्तान में, अभ्यास की चमक वीरों के लिए बहुत उज्ज्वल होती है। उनके लिए कुछ भी असंभव नहीं है। अभ्यास के द्वारा, पृथ्वी पर भय निडर हो जाते हैं, चाहे वे सबसे निर्जन पर्वत गुफाओं में हों।

Chapter 68

7.68.1

विद्याधर्युवाच ततः प्राचीनमभ्यासं बोधधारणयामले कुर्वः प्रकटतां तेन जगदेष्यति शैलगम् ॥ १ ॥

vidyādharyuvāca tataḥ prācīnamabhyāsaṃ bodhadhāraṇayāmale kurvaḥ prakaṭatāṃ tena jagadeṣyati śailagam ||1||

Vidyadhara said: Then, by practicing the ancient method of holding the awareness, the world will become manifest through that.

विद्याधर ने कहा: फिर, पुराने अभ्यास के द्वारा बोध की धारणा करके, उससे संसार प्रकट होगा।

7.68.2

श्रीवसिष्ठ उवाच युक्तियुक्ते तयेत्युक्ते विद्याधर्या धरोरसि बद्धपद्मासनोऽथाहं समाधाबुदितोऽभवम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca yuktiyukte tayetyukte vidyādharyā dharorasi baddhapadmāsano'thāhaṃ samādhābudito'bhavam ||2||

Shri Vasistha said: When Vidyadhara said 'It is so', I, seated in the lotus posture on the earth, became enlightened through meditation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब विद्याधर ने कहा 'ऐसा ही है', तब मैं, पृथ्वी पर पद्मासन में बैठा हुआ, ध्यान से प्रकाशित हो गया।

7.68.3

सर्वार्थभावनात्यागे चिन्मात्रैकान्तभावितः अत्यजं तमहं पूर्वकथार्थकलनामलम् ॥ ३ ॥

sarvārthabhāvanātyāge cinmātraikāntabhāvitaḥ atyajaṃ tamahaṃ pūrvakathārthakalanāmalam ||3||

Having abandoned all worldly thoughts, I became absorbed in pure consciousness and gave up the previous thoughts and calculations.

सभी विषयों की भावनाओं को त्यागकर, मैं शुद्ध चेतना में लीन हो गया और पिछले विचारों और गणनाओं को छोड़ दिया।

7.68.4

अथ चिद्व्योमतां प्राप्तः परां दृष्टिमहं गतः शरत्समयसंप्राप्तौ व्योम निर्मलतामिव ॥ ४ ॥

atha cidvyomatāṃ prāptaḥ parāṃ dṛṣṭimahaṃ gataḥ śaratsamayasaṃprāptau vyoma nirmalatāmiva ||4||

Then, having attained the state of pure consciousness, I achieved the highest vision, like the sky attaining clarity in the autumn season.

फिर, शुद्ध चेतना की अवस्था प्राप्त करके, मैंने उच्चतम दृष्टि प्राप्त की, जैसे शरद ऋतु में आकाश साफ हो जाता है।

7.68.5

ततः सत्यावधानैकघनाभ्यासेन देहके ममाधिभौतिकभ्रान्तिर्नूनमस्तमुपागता ॥ ५ ॥

tataḥ satyāvadhānaikaghanābhyāsena dehake mamādhibhautikabhrāntirnūnamastamupāgatā ||5||

Then, through the intense practice of true awareness, the material delusion of my body has certainly come to an end.

फिर, सत्य चेतना के एकाग्र अभ्यास से, मेरे शरीर की भौतिक भ्रांति निश्चित रूप से समाप्त हो गई।

7.68.6

उदयास्तमयोन्मुक्ता सततोदयमय्यपि । महाचिद्व्योमतास्वच्छा प्रोदितेव तदाभवत् ॥ ६ ॥

udayāstamayonmuktā satatodayamayyapi | mahācadvyomatāsvacchā proditeva tadābhavat || 6 ||

Free from the cycles of rise and fall, yet always in a state of rise, the pure, vast sky of consciousness shone forth at that moment.

उदय और अस्त से मुक्त, फिर भी सतत उदय में ही व्याप्त, वह शुद्ध, विशाल चेतना का आकाश उस समय प्रकाशित हुआ।

7.68.7

अथ पश्याम्यहं यावत्स्वस्यैवामलतेजसा । वस्तुतस्तु न चाकाशं नोपलः परमेव तत् ॥ ७ ॥

atha paśyāmyahaṃ yāvatsvasyaivāmalatejasā | vastutastu na cākāśaṃ nopalaḥ parameva tat || 7 ||

Then I see with my own pure radiance, in reality, there is neither space nor any support, only the supreme.

तब मैं अपने शुद्ध तेज से देखता हूँ, वास्तव में, न तो आकाश है न ही कोई आधार, केवल परम ही है।

7.68.8

परमार्थघनं स्वच्छं तत्तथा भाति तादृशम् । तथाभावनया ह्यात्मा मदीयो दृष्टवांस्तथा ॥ ८ ॥

paramārthaghaṇaṃ svacchaṃ tattathā bhāti tādṛśam | tathābhāvanayā hyātmā madīyo dṛṣṭavāṃstathā || 8 ||

The supreme truth, pure and dense, appears in that manner. By such contemplation, my self has seen it thus.

परम सत्य, शुद्ध और घना, उस प्रकार प्रकट होता है। ऐसी धारणा से, मेरा स्वयं इसे ऐसे ही देखता है।

7.68.9

यथा स्वप्ने सुमहती दृष्टा गेहगता शिला । व्योमैव केवलं तद्वत्सुशुद्धं चिन्नभःशिला ॥ ९ ॥

yathā svapne sumahatī dṛṣṭā gehagatā śilā | vyomaiva kevalaṃ tadvatsuśuddhaṃ cinnabhaḥśilā || 9 ||

Just as in a dream, a huge rock is seen in the house, similarly, only the pure sky of consciousness is seen.

जैसे स्वप्न में, घर में एक विशाल चट्टान दिखाई देती है, उसी प्रकार, केवल शुद्ध चेतना का आकाश दिखाई देता है।

7.68.10

स्वयं स्वप्नान्वितोऽन्यस्य स्वप्नपुंस्त्वं गतो नरः । स्वप्नेऽज्ञानप्रबुद्धस्य यादृक्तादृक्स्वरूपतः ॥ १० ॥

svayaṃ svapnānvito'nyasya svapnapuṃstvaṃ gato naraḥ | svapne'jñānaprabuddhasya yādṛktādṛksvarūpataḥ || 10 ||

One who is engrossed in one's own dream becomes the dream person of another. In the dream, the ignorant one awakens to one's own nature.

जो अपने स्वप्न में डूबा हुआ है, वह दूसरे का स्वप्न पुरुष बन जाता है। स्वप्न में, अज्ञानी अपनी प्रकृति को जाग्रत करता है।

7.68.11

स्वप्नस्थानां शिरश्छिन्नं येषां ते संसृतौ स्थिताः । कालेन ज्ञानलाभेन विना कुर्वन्तु किं किल ॥ ११ ॥

svapnasthānāṃ śiraśchinnaṃ yeṣāṃ te saṃsṛtau sthitāḥ| kālena jñānalābhena vinā kurvantu kiṃ kila || 11 ||

Those whose heads are cut off in dreams remain in the cycle of rebirth| Without the attainment of knowledge over time, what can they do?

जिनके स्वप्न में सिर कट जाते हैं, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में रहते हैं| समय के साथ ज्ञान प्राप्त किए बिना, वे क्या कर सकते हैं?

7.68.12

योधः कालेन भवति महामोहवतामपि । यस्मान्न किंचनाप्यस्ति ब्रह्मतत्त्वादृतेऽक्षयम् ॥ १२ ॥

yodhaḥ kālena bhavati mahāmohavatāmapi| yasmānna kiṃcanāpyasti brahmatattvādṛte'kṣayam || 12 ||

A warrior becomes deluded over time| Because there is nothing eternal except the reality of Brahman

एक योद्धा समय के साथ मोहित हो जाता है| क्योंकि ब्रह्म की वास्तविकता के अलावा कुछ भी अनन्त नहीं है

7.68.13

अतस्तच्चिद्धनं स्वच्छं ब्रह्माकाशं शिलाकृति । दृष्टं मया तथा तत्र न तु पृथ्व्यादि सत्क्वचित् ॥ १३ ॥

atastacciddhanaṃ svacchaṃ brahmākāśaṃ śilākṛti| dṛṣṭaṃ mayā tathā tatra na tu pṛthvyādi sakvacit || 13 ||

Therefore, that pure consciousness (ciddhanaṃ) is clear (svacchaṃ) like the sky of Brahman (brahmākāśaṃ) in the form of a stone (śilākṛti)| I have seen it there, not the elements like earth, etc.

इसलिए, वह शुद्ध चेतना (चिद्धनं) स्पष्ट (स्वच्छं) है जैसे ब्रह्म का आकाश (ब्रह्माकाशं) पत्थर के रूप में (शिलाकृति)| मैंने उसे वहाँ देखा है, पृथ्वी जैसे तत्वों को नहीं

7.68.14

भूतानामादिसर्गे यच्छुद्धं यत्पारमार्थिकम् । वपुस्तदेव ह्येतेषां ध्यानलभ्यमवस्थितम् ॥ १४ ॥

bhūtānāmādisarge yacchuddhaṃ yatpāramārthikam| vapustadeva hyeteṣāṃ dhyānalabhyamavasthitam || 14 ||

That which is pure and ultimate reality in the original creation of beings is their form, attainable through meditation

जो प्राणियों की मूल सृष्टि में शुद्ध और परम सत्य है, वही उनका रूप है, जो ध्यान द्वारा प्राप्त होता है

7.68.15

ब्राह्मं वपुर्हि भूतानामात्मीयं यत्पुरातनम् । तदेवाद्य मनोराज्यं संकल्प इति कथ्यते ॥ १५ ॥

brāhmaṃ vapurhi bhūtānāmātmīyaṃ yatpurātanam| tadevādya manorājyaṃ saṃkalpa iti kathyate || 15 ||

The ancient, inherent form of beings is indeed the Brahman form, which is now called the kingdom of the mind, the resolve

प्राणियों का पुरातन, अंतर्निहित रूप वास्तव में ब्रह्म का रूप है, जिसे अब मन का राज्य, संकल्प कहा जाता है

7.68.16

सत्तातिवाहिको देहस्तत्परं परमार्थतः । प्रत्यक्षं परमं यत्तत्तदाद्यं कचनं चितः ॥ १६ ॥

sattātivāhiko dehas tat paraṃ paramārthataḥ | pratyakṣaṃ paramaṃ yat tat tad ādyaṃ kacanaṃ citaḥ || 16 ||

The body is the vehicle of the self, and beyond that is the ultimate reality. The direct perception is the highest, and that is the original, pure consciousness.

शरीर आत्मा का वाहन है, और उसके परे परम सत्य है। प्रत्यक्ष अनुभव सबसे ऊपर है, और वह मूल शुद्ध चेतना है।

7.68.17

उद्यत्प्रथममध्यक्षं जीवस्य प्रथमं वपुः । मनः प्रत्यक्षमित्युक्तं तत्तेनाद्यैव दुर्धिया ॥ १७ ॥

udyat prathamamadhyakṣaṃ jīvasya prathamaṃ vapuḥ | manaḥ pratyakṣam ity uktaṃ tat tena ādyaiva durdhiyā || 17 ||

The first body of the individual is the direct perception of the mind. It is said to be the original, but it is difficult to comprehend.

व्यक्ति का पहला शरीर मन का प्रत्यक्ष अनुभव है। यह मूल कहा जाता है, लेकिन इसे समझना मुश्किल है।

7.68.18

योगिप्रत्यक्षमित्युक्तं मनःप्रत्यक्षमित्यपि । तत्स्वमेव चितो रूपं गतमेवान्यतां मुधा ॥ १८ ॥

yogipratyakṣam ity uktaṃ manaḥpratyakṣam ity api | tatsvameva cito rūpaṃ gatamevānyatāṃ mudhā || 18 ||

It is said that the direct perception of the yogi is the same as the direct perception of the mind. That itself is the form of pure consciousness, but it has gone to another state due to ignorance.

कहा जाता है कि योगी का प्रत्यक्ष अनुभव मन के प्रत्यक्ष अनुभव के समान है। यही शुद्ध चेतना का रूप है, लेकिन अज्ञान के कारण यह दूसरी अवस्था में चला गया है।

7.68.19

इदमद्यतनं नाम प्रत्यक्षमसदुत्थितम् । असत्प्रत्यक्षमेवेति विद्धि प्रत्यक्षमङ्ग तत् ॥ १९ ॥

idamadyatanaṃ nāma pratyakṣamasadutthitam | asatpratyakṣameveti vidhi pratyakṣamaṅga tat || 19 ||

This is called the present moment, arising from the direct perception of the unreal. Know that the direct perception of the unreal is the limb of direct perception.

यह वर्तमान क्षण कहलाता है, जो असत् के प्रत्यक्ष अनुभव से उत्पन्न होता है। जान लो कि असत् का प्रत्यक्ष अनुभव प्रत्यक्ष अनुभव का अंग है।

7.68.20

अहो नु चित्रा मायेयं प्राक्प्रत्यक्षे परोक्षता । निर्णीतास्मिंस्त्वनध्यक्षे प्रत्यक्षकलनागता ॥ २० ॥

aho nu citrā māyeyaṃ prākpratyakṣe parokṣatā | nirṇītāsmiṃstvanadhyakṣe pratyakṣakalanāgatā || 20 ||

Oh, how wonderful is this illusion! Before direct perception, there is indirectness. In the absence of direct perception, there is the arrival of the calculation of direct perception.

ओह, यह माया कितनी अद्भुत है! प्रत्यक्ष अनुभव से पहले परोक्षता है। प्रत्यक्ष अनुभव के अभाव में प्रत्यक्ष अनुभव के गणना का आगमन है।

7.68.21

आतिवाहिकदेहत्वं प्रत्यक्षं प्रथमोदितम् । सत्यं सर्वगतं विद्धि मायैव त्वाधिभौतिकम् ॥ २१ ॥

ātivāhikadehatvaṃ pratyakṣaṃ prathamoditam | satyaṃ sarvagataṃ viddhi māyaiva tvādhibhautikam || 21 ||

The transmigratory body is directly perceived and is the first to be mentioned. Know it to be true and omnipresent, but the physical body is merely an illusion.

परिवर्तनशील शरीर प्रत्यक्ष है और सबसे पहले कहा गया है | इसे सत्य और सर्वव्यापी जानो, लेकिन भौतिक शरीर केवल एक भ्रम है |

7.68.22

अनुभूतापि नास्त्येव हेम्नः कटकता यथा । तथातिवाहिकस्याधिभौतिकत्वं न विद्यते ॥ २२ ॥

anubhūtāpi nāstyeva hemnaḥ kaṭakatā yathā | tathātivāhikasyādhibhautikatvaṃ na vidyate || 22 ||

Even though it is experienced, the physical nature of the transmigratory body does not exist, just as the ornamental nature of gold does not exist.

यद्यपि इसे अनुभव किया जाता है, परिवर्तनशील शरीर का भौतिक स्वभाव मौजूद नहीं है, जैसे सोने का आभूषण स्वभाव मौजूद नहीं है |

7.68.23

भ्रममभ्रमतां यातमभ्रमं भ्रमतां गतम्। वेत्ति जीवो विचारेण विनाहो नु विमूढता ॥ २३ ॥

bharamabhramatāṃ yātamabhramaṃ bhramatāṃ gatam | vetti jīvo vicāreṇa vināho nu vimūḍhatā || 23 ||

The living being knows through inquiry that illusion has gone to non-illusion and non-illusion has gone to illusion. Without this, there is only confusion.

जीव विचार से जानता है कि भ्रम अभ्रम में चला गया है और अभ्रम भ्रम में चला गया है | इसके बिना, केवल भ्रम ही है |

7.68.24

आधिभौतिकदेहोऽयं विचारेण न लभ्यते। आतिवाहिकदेहस्तु किल लोकद्वयेऽक्षयः ॥ २४ ॥

ādhibhautikadeho'yaṃ vicāreṇa na labhyate | ātivāhikadehas tu kila lokadvaye'kṣayaḥ || 24 ||

This physical body cannot be obtained through inquiry. However, the transmigratory body is indeed imperishable in both worlds.

यह भौतिक शरीर विचार से प्राप्त नहीं हो सकता | हालाँकि, परिवर्तनशील शरीर दोनों लोकों में अविनाशी है |

7.68.25

आधिभौतिकचिद्रूढा ह्यातिवाहिकदेहके। मरौ मरीचिकास्वेव यथा मिथ्यैव वारिधीः ॥ २५ ॥

ādhibhautikacidrūḍhā hyātivāhikadehake | marau marīcikāsveva yathā mithyai va vāridhīḥ || 25 ||

The physical body, which is firmly rooted in consciousness, is like the mirage in the desert, which is merely an illusion, just as the ocean appears to be water.

भौतिक शरीर, जो चेतना में गहराई से जड़ा हुआ है, रेगिस्तान की मृगतृष्णा की तरह है, जो केवल एक भ्रम है, जैसे समुद्र पानी की तरह दिखता है |

7.68.26

जाताधिभौतिकी संविदातिवाहिकचित्क्रमे। देहदृष्टिवशात्प्रौढा स्थाणौ पुरुषधीरिव ॥ २६ ॥

jātādhibhautikī saṃvidātivāhikacitkrame | dehadṛṣṭivaśātprauḍhā sthāṇau puruṣadhīriva || 26 ||

In the sequence of consciousness that transcends the physical, the mind, due to the influence of bodily perception, becomes mature like a man's intellect in a pillar.

चेतना के शारीरिक से परे क्रम में, शरीर के दृष्टिकोण के प्रभाव से, मन एक स्तंभ में पुरुष की बुद्धि की तरह परिपक्व हो जाता है।

7.68.27

शुक्तौ रजतता तापे जलतेन्दौ यथा द्विता। आधिभौतिकता तद्वन्मायययैवातिवाहिके ॥ २७ ॥

śuktau rajatatā tāpe jalatendau yathā dvitā | ādhibhautikatā tadvam māyayai vātivāhike || 27 ||

Just as the appearance of silver in a shell and the duality of water and fire are illusions, so too is the physical nature an illusion in the transcendent realm.

जैसे शंख में चांदी की छवि और जल और अग्नि का द्वैत भ्रांति है, वैसे ही शारीरिक स्वभाव पारलौकिक क्षेत्र में भ्रांति है।

7.68.28

यदसत्तत्कृतं सत्यं यत्सत्यं तदसत्कतम्। अहो नु मोहमाहात्म्यं जीवस्यास्याविचारजम् ॥ २८ ॥

yad asat tat kṛtaṃ satyaṃ yat satyaṃ tad asat kṛtam | aho nu mohamāhātmyaṃ jīvasyāsyāvicārajam || 28 ||

That which is unreal is made real, and that which is real is made unreal. Alas, the great delusion of the self arises from lack of discernment.

जो असत् है वह सत्य बनाया जाता है, और जो सत्य है वह असत् बनाया जाता है। अहो, आत्मा का यह महान भ्रम अविचार से उत्पन्न होता है।

7.68.29

योगिप्रत्यक्षमेवास्ति किंचिदस्ति तु मानसम्। यस्माल्लोकद्वयाचारस्ताभ्यामेव प्रसिध्यति ॥ २९ ॥

yogipratyakṣamevāsti kiñcidasti tu mānasam | yasmāllokadvayācārastābhyāmeva prasidhyati || 29 ||

There is only the direct perception of the yogi, and there is something mental. From these two, the behavior of the two worlds is established.

केवल योगी का प्रत्यक्ष अनुभव है, और कुछ मानसिक है। इन दोनों से दो लोकों का व्यवहार स्थापित होता है।

7.68.30

आद्यं प्रत्यक्षमुत्सृज्य यः सत्येऽस्मिन्कृतस्थितिः। प्रत्यक्षे मृगतृष्णाम्बु पीत्वा स सुखमास्थितः ॥ ३० ॥

ādyaṃ pratyakṣamutsṛjya yaḥ satye'smin kṛtasthitiḥ | pratyakṣe mṛgatṛṣṇāmbu pītvā sa sukhamāsthitaḥ || 30 ||

One who abandons the primary direct perception and establishes himself in this truth, having drunk the mirage water in direct perception, he remains in bliss.

जो प्राथमिक प्रत्यक्ष अनुभव को छोड़कर इस सत्य में स्थित होता है, प्रत्यक्ष में मृगतृष्णा का जल पीकर वह सुख में स्थित होता है।

7.68.31

यत्सुखं दुःखमेवाहुः क्षणनाशानुभूतिभिः। अकृत्रिममनाद्यन्तं यत्सुखं तत्सुखं विदुः ॥ ३१ ॥

yatsukhaṃ duḥkham evāhuḥ kṣaṇanāśānubhūtibhiḥ | akṛtrimamanādyantaṃ yatsukhaṃ tatsukhaṃ viduḥ || 31 ||

That which is called happiness is actually suffering, experienced momentarily. True happiness is that which is natural and eternal.

जो सुख कहा जाता है, वह दुःख है, क्षणभर के लिए अनुभव किया जाता है। सच्चा सुख वह है जो निर्मल और अनादि-अन्त है।

7.68.32

प्रत्यक्षेणैवमध्यक्षं प्रत्यक्षं प्रविचार्यताम्। यदाद्यं तत्सदध्यक्षं तत्प्रत्यक्षेण दृश्यताम् ॥ ३२ ॥

pratyakṣeṇaivamadhyakṣaṃ pratyakṣaṃ pravicāryatām | yadādyaṃ tatsadadhyakṣaṃ tatpratyakṣeṇa dṛśyatām || 32 ||

Through direct perception, the inner witness should be examined. That which is the original and eternal witness should be seen through direct perception.

प्रत्यक्ष द्वारा इस प्रकार अंतर्यामी को परीक्षण किया जाए। जो आदि और सनातन अंतर्यामी है, वह प्रत्यक्ष द्वारा देखा जाए।

7.68.33

लोकत्रयानुभवदं त्यक्त्वा प्रत्यक्षमैहिकम्। मायात्मकं यो गृह्णाति नास्ति मूढतमस्ततः ॥ ३३ ॥

lokatrayānubhavadaṃ tyaktvā pratyakṣamaihikam | māyātmakaṃ yo gṛhṇāti nāsti mūḍhatamastataḥ || 33 ||

Abandoning the experience of the three worlds, one should grasp the direct perception of the present. One who grasps the illusory nature of the world is not the most foolish.

तीनों लोकों के अनुभव को त्याग कर, वर्तमान के प्रत्यक्ष अनुभव को ग्रहण करें। जो संसार के मायामय स्वरूप को ग्रहण करता है, वह सबसे मूढ़ नहीं है।

7.68.34

आतिवाहिकमेवैषां भूतानां विद्यते वपुः । अत्राधिभौतिकव्याप्तिरसत्यैव पिशाचिका ॥ ३४ ॥

ātivāhikamevaeṣāṃ bhūtānāṃ vidyate vapuḥ | atrādhibhautikavyāptirasatyaiava piśācikā || 34 ||

The bodies of beings are indeed transient. The material extension here is merely illusory, like a ghost.

प्राणियों के शरीर वास्तव में अस्थायी हैं। यहाँ भौतिक विस्तार केवल माया है, जैसे भूत।

7.68.35

अजातसंकल्पमयं प्रत्यक्षं सत्कथं भवेत् । स्वयमेव न यत्सत्यं तत्स्यात्कार्यकरं कथम् ॥ ३५ ॥

ajātasaṃkalpamayaṃ pratyakṣaṃ satkathaṃ bhavet | svayameva na yatsatyam tatsyātkāryakaraṃ katham || 35 ||

How can that which is not real in itself be the cause of action? The direct perception of the unborn and unmanifested is considered true.

जो स्वयं सत्य नहीं है, वह कार्य का कारण कैसे हो सकता है? अजन्मा और अव्यक्त का प्रत्यक्ष अनुभव सत्य माना जाता है।

7.68.36

यत्र प्रत्यक्षमेवासदन्यत्किं तत्र सद्भवेत् । क्व तत्सत्यं भवेद्वस्तु यदसिद्धेन साध्यते ॥ ३६ ॥

yatra pratyakṣamevāsadanyatkiṃ tatra sadbhavet | kva tatsatyaṃ bhavedvastu yadasiddhena sādhyate || 36 ||

Where direct perception itself is absent, what else can exist there? Where is the truth in that substance which is proven by the unproven?

जहाँ प्रत्यक्ष अनुभव ही नहीं है, वहाँ और क्या हो सकता है? जो असिद्ध से सिद्ध किया जाता है, उस वस्तु में सत्य कहाँ है?

7.68.37

प्रत्यक्ष एव भावत्वे नष्टे क्वेवानुमादयः । उह्यन्ते वारणा यत्र तत्रोर्णायुषु का कथा ॥ ३७ ॥

pratyakṣa eva bhāvatve naṣṭe kvevānumādayaḥ | uhyante vāraṇā yatra tatrornaāyuṣu kā kathā || 37 ||

If direct perception itself is lost, where are the inferences and other means of knowledge? Where is the discussion about the thread of life in that which is obstructed?

अगर प्रत्यक्ष अनुभव ही खो जाता है, तो अनुमान और अन्य ज्ञान के साधन कहाँ हैं? जो रुकावट है, उसमें जीवन की धागे की चर्चा कहाँ है?

7.68.38

अतः प्रमाणसंसिद्धं दृश्यं नास्त्येव कुत्रचित् । अनन्यदिदमस्तीव तत्तद्ब्रह्मघनं घनम् ॥ ३८ ॥

ataḥ pramāṇasaṃsiddhaṃ dṛśyaṃ nāstyeva kutracit | ananyadidamastīva tattadbrahmaghanaṃ ghanam || 38 ||

Therefore, there is no perceptible object that is established by any means of knowledge. This alone exists, which is dense with that Brahman.

इसलिए, किसी भी ज्ञान के साधन द्वारा स्थापित कोई दृश्य वस्तु नहीं है। यही अस्तित्व है, जो उस ब्रह्म से घना है।

7.68.39

स्वप्ने द्रष्टुः खमेवाद्रिर्गृहे नान्यस्य वै यथा । तथा तद्भावनवतोरावयोः सा शिलैव चित् ॥ ३९ ॥

svapne draṣṭuḥ khamevādrirgṛhe nānyasya vai yathā | tathā tadbhāvanavatorāvayoḥ sā śilaiva cit || 39 ||

Just as in a dream, the seer's sky itself is a mountain, and in a house, it is not of another, similarly, in the state of meditation of those two, it is like a stone.

जैसे स्वप्न में, द्रष्टा का आकाश ही एक पर्वत है, और घर में, यह दूसरे का नहीं है, उसी प्रकार, उन दोनों की ध्यानावस्था में, यह एक पत्थर की तरह है।

7.68.40

अयं शैल इदं व्योम जगदेतदिदं त्वहम्। इति चिन्मय आत्मान्तः खं चमत्कुरुते स्वयम्॥ ४०॥

ayaṃ śaila idaṃ vyoma jagadetadidaṃ tvaham | iti cinmaya ātmāntaḥ khaṃ camatkurute svayam || 40 ||

This is the mountain, this is the sky, this is the world, and this is myself. Thus, the self, which is pure consciousness, marvels at the sky within itself.

यह पर्वत है, यह आकाश है, यह संसार है, और यह मैं हूँ। इस प्रकार, आत्मा, जो शुद्ध चेतना है, अपने आप में आकाश को आश्चर्यचकित करती है।

7.68.41

पश्यत्येतत्प्रबुद्धात्मा नाप्रबुद्धः कदाचन। श्रोतुः कथार्थसंवित्तिर्नाश्रोतुर्भवति क्वचित्॥ ४१॥

paśyatyetatprabuddhātmā nāprabuddhaḥ kadācana | śrotuḥ kathārthasaṃvittirnāśroturbhavati kvacit || 41 ||

Only the awakened soul sees this, never the unawakened | The understanding of the story's meaning does not happen to the non-listener anywhere

सिर्फ जागृत आत्मा इसे देखती है, कभी नहीं अजागृत | कहानी के अर्थ की समझ कभी नहीं होती कहीं भी नहीं सुनने वाले के लिए

7.68.42

अप्रबुद्धमिति भ्रान्तिरेवयं सत्यतां गताक्षीबस्य सुस्थिरा एव नृत्यन्ति तरुपर्वताः॥ ४२॥

aprabuddhamiti bhrāntireveyaṃ satyatāṃ gatākṣībasya susthirā eva nṛtyanti taruparvatāḥ || 42 ||

This delusion that one is unawakened is itself a reality. The mountains dance steadily before the eyes of the awakened.

यह भ्रांति कि कोई अजागृत है, स्वयं एक सत्य है। जागृत की आँखों के सामने पर्वत स्थिरता से नृत्य करते हैं।

7.68.43

सर्वत्राप्रतिहतमेकरूपबोधं प्रत्यक्षं शिवमनुबुध्य चित्स्वरूपम्। प्रत्यक्षान्तरमिह पेलवं श्रयन्ते ये मूढास्तृणतनुभिः शठैरलं तैः॥ ४३॥

sarvatrāpratihatamekarūpabodhaṃ pratyakṣaṃ śivamanubudhya citsvarūpam | pratyakṣāntaramiha pelavaṃ śrayante ye mūḍhāstṛṇatanubhiḥ śaṭhairalaṃ taiḥ || 43 ||

Realizing the direct, unobstructed, single-form consciousness as the auspicious self-nature | Those foolish ones who resort to other perceptions here are useless with their straw-like bodies, enough with them

सीधे, अवरुद्ध, एकरूप चेतना को शुभ स्वरूप के रूप में समझकर | जो मूर्ख यहाँ अन्य प्रत्यक्षों पर भरोसा करते हैं, वे अपने तृण-सदृश शरीरों के साथ बेकार हैं, उनसे बस

Chapter 69

7.69.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जगदङ्गमनाभासमदृश्यं दृश्यवत्स्थितम् । परया दृश्यते दृष्ट्या तद्ब्रह्मैव निरामयम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jagadaṅgamanābhāsamadṛśyaṃ dṛśyavatsthitam | parayā dṛśyate dṛṣṭyā tadbrahmaiva nirāmayam || 1 ||

Shri Vasistha said: The universe, which is imperceptible and appears to be perceptible, is seen by the supreme vision; that is the flawless Brahman.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो जगत अदृश्य है और दृश्य की तरह स्थित है, वह परम दृष्टि से देखा जाता है; वह निर्दोष ब्रह्म है।

7.69.2

तत्र शैलसरित्स्रोतोलोकालोकान्तरभ्रमाः । भान्ति ते परमादर्शे महाव्योमनि बिम्बिताः ॥ २ ॥

tatra śailasaritsroto lokālokāntarabhramāḥ | bhānti te paramādarśe mahāvyomani bimbitāḥ || 2 ||

There, the illusions of mountains, rivers, streams, worlds, and the gaps between them appear reflected in the great mirror of the supreme sky.

वहाँ, पर्वतों, नदियों, धाराओं, लोकों और उनके बीच के अंतरालों के भ्रम परम आकाश के महान दर्पण में प्रतिबिंबित होते हुए दिखाई देते हैं।

7.69.3

सा प्रविष्टा ततः सर्गं तमनर्गलचेष्टिता । अहमप्यविशं तत्र संकल्पात्मा तया सह ॥ ३ ॥

sā praviṣṭā tataḥ sargaṃ tamanargalaceṣṭitā | ahamapyaviśaṃ tatra saṃkalpātmā tayā saha || 3 ||

She entered that creation, which was filled with various activities. I also entered there, with her, as the embodiment of resolve.

वह उस सृष्टि में प्रवेश कर गई, जो विभिन्न गतिविधियों से भरी हुई थी। मैं भी उसके साथ वहाँ प्रवेश कर गया, संकल्प के रूप में।

7.69.4

यावत्सा तत्र वैरिञ्चं लोकमासाद्य सोद्यमा । उपविष्टा विरिञ्चस्य पुरः परमशोभना ॥ ४ ॥

yāvatsā tatra vairiñcaṃ lokamāsādya sodyamā | upaviṣṭā viriñchasya puraḥ paramaśobhanā || 4 ||

As long as she, having reached the world of Brahma, sat there in front of Brahma, supremely beautiful.

जब तक वह, ब्रह्मा के लोक तक पहुँचकर, वहाँ ब्रह्मा के सामने परम सुंदर रूप में बैठी थी।

7.69.5

वक्त्ययं मुनिशार्दूल पतिर्मे पाति मामिमाम् । विवाहार्थमनेनाहं जनिता मनसा पुरा ॥ ५ ॥

vaktyayaṃ muniśārdūla patirmepāti māmimām | vivāhārthamanenāhaṃ janitā manasā purā || 5 ||

This sage said: My husband protects me; for the purpose of marriage, I was born from his mind long ago.

यह मुनि ने कहा: मेरे पति मुझे सुरक्षित रखते हैं; विवाह के उद्देश्य से, मैं पहले उनके मन से उत्पन्न हुई थी।

7.69.6

पुराणः पुरुषोऽप्येष मामप्यद्य जरागताम्। न विवाहितवांस्तेन विरागमहमागता ॥ ॥ ६ ॥

purāṇaḥ puruṣo'pyeṣa māmapyadya jarāgatām | na vivāhitavāṃsten virāgamahamāgatā || 6 ||

This ancient man has now reached old age, and because he did not marry me, I have become dispassionate.

यह पुराना पुरुष अब बुढ़ापे की अवस्था में पहुंच गया है, और क्योंकि उसने मुझसे विवाह नहीं किया, मैं विरक्त हो गई हूं।

7.69.7

विरागमेषोऽप्यायातो गन्तुमिच्छति तत्पदम्। यत्र न द्रष्टता नैव दृश्यता न तु शून्यता ॥ ॥ ७ ॥

virāgameṣo'pyāyāto gantumicchati tatpadam | yatra na draṣṭatā naiva dṛśyatā na tu śūnyatā || 7 ||

This dispassion has also come to him, and he desires to go to that state where there is neither the seer, the seen, nor emptiness.

यह विरक्ति इस व्यक्ति को भी प्राप्त हुई है, और वह उस अवस्था में जाना चाहता है जहां न देखने वाला है, न देखा जाने वाला है, और न ही शून्यता है।

7.69.8

महाप्रलय आसन्नो जगत्यस्मिंश्च संप्रति। ध्यानान्न च चलत्येषु शैलमौनादिवाचलः ॥ ॥ ८ ॥

mahāpralaya āsanno jagatyasmiṃśca saṃprati | dhyānānna ca calaty eṣu śailamaunādivācalaḥ || 8 ||

The great dissolution is imminent in this world now. Even the steadfast mountains do not move from their meditation.

इस संसार में अब महाप्रलय निकट है। यहां तक कि स्थिर पर्वत भी अपने ध्यान से नहीं हिलते।

7.69.9

तस्मान्मामेनमपि च बोधयित्वा मुनीश्वर। आमहाकल्पसर्गादौ परमे पथि योजय ॥ ॥ ९ ॥

tasmānmāmenamapi ca bodhayitvā munīśvara | āmahākalpasargādau parame pathi yojaya || 9 ||

Therefore, O great sage, after enlightening me and him, place us in the supreme path at the beginning of the great creation.

इसलिए, हे महान ऋषि, मुझे और उसे ज्ञान देकर, महान सृष्टि के आरंभ में हमें परम मार्ग में स्थापित करो।

7.69.10

इत्युक्त्वा मामसौ तस्य बोधायेदमुवाच ह। नाथायं मुनिनाथोऽद्य सद्म संप्राप्तवानिदम् ॥ ॥ १० ॥

ityuktvā māmasau tasya bodhāyedamuvāca ha | nāthāyaṃ muninātho'dya sadma saṃprāptavānidam || 10 ||

Having said this, that sage spoke these words of enlightenment to me: 'This lord of sages has now attained this abode.'

यह कहकर, उस ऋषि ने मुझसे ये ज्ञान के शब्द कहे: 'यह ऋषियों का स्वामी अब इस आश्रम को प्राप्त हुआ है।'

7.69.11

एषोऽन्यस्मिञ्जगद्गेहे ब्रह्मणस्तनयो मुनिः। पूजयैनं गृहायातं गृहस्थगृहपूजया ॥ ११ ॥

eṣo'nyasmiñjagadgehe brahmaṇastanayo muniḥ | pūjayainaṃ gṛhāyātaṃ gṛhasthagṛhapūjayā || 11 ||

This sage, the son of Brahma, resides in another house in the world | Worship him who has come to the house with the worship of the householder

यह मुनि, ब्रह्मा का पुत्र, दूसरे घर में रहता है | उस घर में आए हुए को गृहस्थ की पूजा से पूजा करें

7.69.12

बुध्यतामर्घ्यपाद्येन पूज्यतां मुनिपुङ्गवः । महन्महत्सपर्याभिर्महात्मभ्यो हि रोचते ॥ १२ ॥

budhyatāmarghyapādyena pūjyatāṃ munipuṅgavaḥ | mahanmahatsaparyābhirmahātmabhyo hi rocate || 12 ||

Let him be awakened with arghya and padya | Let the foremost sage be worshipped | Great honors indeed please the great souls

उसे अर्घ्य और पाद्य से जगाया जाए | मुनियों में श्रेष्ठ की पूजा की जाए | महान सम्मान महान आत्माओं को अच्छे लगते हैं

7.69.13

तयेत्युक्ते महाबुद्धिर्बुबुधे स समाधितः । स्वसंवित्तिद्रवात्मत्वादावर्त इव वारिधौ ॥ १३ ॥

tayetyukte mahābuddhirbubudhe sa samādhitaḥ | svasaṃvittidravātmātādāvart iva vāridhau || 13 ||

Having been told thus, the greatly wise one understood, being absorbed in meditation | He appeared as if immersed in the ocean of his own consciousness

ऐसा कहे जाने पर, महान बुद्धिमान व्यक्ति ने समझा, ध्यान में लीन होकर | वह अपनी चेतना के समुद्र में डूबा हुआ लगा

7.69.14

शनैरुन्मीलयामास नयने नयकोविदः । मधुः शिशिरसंशान्तावववनौ कुसुमे यथा ॥ १४ ॥

śanairunmīlayāmāsa nayane nayakovidaḥ | madhuḥ śiśirasaṃśāntāvavanaue kusume yathā || 14 ||

Slowly, he opened his eyes, skilled in the ways of the leader | Like honey in the cool, calm forest of flowers

धीरे-धीरे, उसने अपनी आँखें खोलीं, नेता के तरीके में कुशल | ठंडे, शांत फूलों के वन में मधु की तरह

7.69.15

शनैः प्रकटयामासुस्तान्यङ्गान्यस्य संविदम् । मधुपल्लवजालानि नवानीव नवं रसम् ॥ १५ ॥

śanaiḥ prakaṭayāmāsustānyaṅgānyasya saṃvidam | madhupallavajālāni navānīva navaṃ rasam || 15 ||

Slowly, they revealed his limbs, his consciousness | Like new honey-laden blossoms, a new taste

धीरे-धीरे, उन्होंने उसके अंगों को, उसकी चेतना को प्रकट किया | नए मधु-भरे फूलों की तरह, एक नया स्वाद

7.69.16

सुरसिद्धाप्सरःसङ्घाः समाजग्मुः समंततः । यथा हंसालयो लोलाः प्रातर्विकसितं सरः ॥ १६ ॥

surasiddhāpsaraḥsaṅghāḥ samājagmuḥ samaṃtataḥ | yathā haṃsālayo lolāḥ prātarvikasitaṃ saraḥ || 16 ||

The assembly of gods, siddhas, and apsaras gathered from all around, like swans eagerly flocking to a lotus pond blooming in the morning.

देवताओं, सिद्धों और अप्सराओं का समूह चारों ओर से एकत्र हुआ, जैसे हंस प्रातःकाल खिले कमल तालाब की ओर उत्सुकता से जाते हैं।

7.69.17

ददर्शासौ पुरःप्राप्तं मां च तां च विलासिनीम् । उवाचाथ वचो वेधाः प्रणवस्वरसुन्दरम् ॥ १७ ॥

dadarśāsau puraḥprāptaṃ māṃ ca tāṃ ca vilāsinīm | uvācātha vaco vedhāḥ praṇavasvarasundaram || 17 ||

He saw me and that playful woman who had arrived before him. Then the creator spoke words that were beautiful with the sound of the sacred syllable 'Om'.

उसने मुझे और उस खेल-खिलवाड़ करने वाली स्त्री को देखा, जो उससे पहले आई थी। तब विधाता ने ओम् की ध्वनि से सुंदर शब्दों में कहा।

7.69.18

अन्यजगद्ब्रह्मोवाच । करामलकवद्दृष्टसंसारासारसार हे । ज्ञानामृतमहाम्भोद मुने स्वागतमस्तु ते ॥ १८ ॥

anyajagadbrahmovāca | karāmalakavaddṛṣṭasaṃsārāsārasāra he | jñānāmṛtamahāmbhoda mune svāgatamastu te || 18 ||

The creator of the universe spoke: 'O seer, who sees the essence of the world like a gooseberry in the palm, O great ocean of the nectar of knowledge, welcome to you.'

ब्रह्मांड के स्रष्टा ने कहा: 'हे ऋषि, जो हाथ की हथेली पर आमला की तरह संसार का सार देखता है, हे ज्ञान के अमृत का महासागर, तुम्हारा स्वागत है।'

7.69.19

पदवीमसि संप्राप्त इमामतिदवीयसीम् । दूराध्वसुपरिश्रान्त इदमासनमास्यताम् ॥ १९ ॥

padavīmasi saṃprāpta imāmatidavīyasīm | dūrādhvasupariśrānta idamāsanamāsyatām || 19 ||

You have attained this supreme position, having become very tired from the long journey. Please take this seat.

तुमने इस उत्कृष्ट स्थिति को प्राप्त किया है, लंबी यात्रा से बहुत थके हुए। कृपया इस आसन पर बैठो।

7.69.20

इत्युक्ते तेन भगवन्नभिवादय इत्यहम् । वदन्मणिमये पीठे निविष्टो दृष्टिदर्शिते ॥ २० ॥

ityukte tena bhagavannabhivādaya ityaham | vadanmaṇimaye pīṭhe niviṣṭo dṛṣṭidarśite || 20 ||

Having been thus addressed by the Lord, I said, 'I bow to you,' and sat on the jewel-studded seat, as indicated by his gaze.

भगवान द्वारा ऐसे संबोधित होने पर, मैंने कहा, 'मैं आपको प्रणाम करता हूँ,' और उनकी दृष्टि के संकेत पर मणिमय आसन पर बैठ गया।

7.69.21

अथामरर्षिगन्धर्वमुनिविद्याधरोदिताः । प्रस्तुताः स्तुतयः पूजा नतयः स्थितिनीतयः ॥ २१ ॥

athāmararṣigandharvamunividyādharoditāḥ| prastutāḥ stutayaḥ pūjā natayaḥ sthitinītayaḥ || 21 ||

Then, the praises, worship, and prostrations offered by the sages, Gandharvas, and Vidyadharas were presented.

फिर, ऋषियों, गंधर्वों और विद्याधरों द्वारा की गई स्तुतियाँ, पूजा और प्रणाम प्रस्तुत किए गए।

7.69.22

ततो मुहूर्तमात्रेण सर्वभूतगणोदिते । शान्ते प्रणतिसंरम्भे तस्योक्तं ब्रह्मणो मया ॥ २२ ॥

tato muhūrtamātreṇa sarvabhūtagaṇodite| śānte praṇatisanrambhe tasyoktaṃ brahmaṇo mayā || 22 ||

Then, in a moment, when all the beings had uttered their praises and the tumult of prostrations had subsided, I spoke to Brahma.

फिर, एक क्षण में, जब सभी प्राणियों ने अपनी स्तुतियाँ उच्चारित कर दीं और प्रणाम का शोर शान्त हो गया, मैंने ब्रह्मा से कहा।

7.69.23

किमिदं भूतभव्येश यदियं मामुपागता । वक्ति ज्ञानगिरास्मांस्त्वं बोधयेति प्रयत्नतः ॥ २३ ॥

kimidaṃ bhūtabhavyeśa yadiyaṃ māmupāgatā| vakti jñānagirāsmāṃstvaṃ bodhayeti prayatnataḥ || 23 ||

O Lord of the past and future, what is this that has come to me, saying with effort, 'You should enlighten me with knowledge'?

हे भूत-भव्य के स्वामी, यह क्या है जो मुझे आई है, और प्रयास से कहती है, 'आप मुझे ज्ञान से प्रकाशित करें'?

7.69.24

भवान्भूतेश्वरो देव सकलज्ञानपारगः। इयं तु काममूर्खा किं ब्रूते ब्रूहि जगत्पते ॥ २४ ॥

bhavānbhūteśvaro deva sakalajñānapāragaḥ| iyaṃ tu kāmamūrkhā kiṃ brūte brūhi jagatpate || 24 ||

O Lord, you are the master of all knowledge. Why does this foolish one speak thus? Tell me, O Lord of the universe.

हे देव, आप सम्पूर्ण ज्ञान के पारंगत हैं। यह मूर्ख क्यों ऐसा कहती है? मुझे बताएँ, हे जगत्पति।

7.69.25

कथमेषा त्वया देव जायार्थं जनिता सती। नेह जायापदं नीता नीता विरसतां कथम् ॥ २५ ॥

kathameṣā tvayā deva jāyārthaṃ janitā satī| neha jāyāpadaṃ nītā nītā virasatāṃ katham || 25 ||

O Lord, how was she, who was born for the sake of being a wife, not led to the state of being a wife? How was she led to tastelessness?

हे देव, वह जो पत्नी बनने के लिए उत्पन्न हुई थी, उसे पत्नी की स्थिति में क्यों नहीं ले जाया गया? उसे नीरसता में कैसे ले जाया गया?

7.69.26

अन्यजगद्ब्रह्मोवाच। मुने शृणु यथावृत्तमिदं ते कथयाम्यहम्। यथावृत्तमशेषेण कथनीयं यतः सताम् ॥ २६ ॥

anyajagadbrahmovāca | mune śṛṇu yathāvṛttamidaṃ te kathayāmyaham | yathāvṛttamaśeṣeṇa kathanīyaṃ yataḥ satām || 26 ||

The Supreme Brahman spoke: O sage, listen to this as it happened, I will narrate it to you as it is, because it should be told in its entirety to the virtuous.

परब्रह्म ने कहा: हे मुनि, इसे जैसे हुआ सुनो, मैं तुम्हें इसे जैसे हुआ सुनाता हूँ, क्योंकि यह पूर्णतः सत्पुरुषों को बताया जाना चाहिए।

7.69.27

अस्ति तावदजं शान्तमजरं किंचिदेव सत्। ततश्चित्कचनैकान्तरूपिणः कचितोऽस्म्यहम् ॥ २७ ॥

asti tāvadajaṃ śāntamajaraṃ kiṃcideva sat | tataścitkacanaikāntarūpiṇaḥ kacito'smyaham || 27 ||

There exists something eternal, peaceful, and ageless, which is the essence of existence. From that, I, the pure consciousness, have emerged.

कुछ अनादि, शान्त, और अजर है, जो अस्तित्व का सार है। उससे, मैं, शुद्ध चेतना, उत्पन्न हुआ हूँ।

Chapter 70

7.70.1

अन्यजगद्ब्रह्मोवाच अथाहं चिन्मयाकाशस्त्वन्याकाशमयीं स्थितिम् परां ग्रहीतुमिच्छामि तेनेहोपस्थितः क्षयः ॥ १ ॥

anyajagadbrahmovāca atha ahaṃ cinmayākāśastvanyākāśamayīṃ sthitim parāṃ grahītumicchāmi tenehōpastithaḥ kṣayaḥ || 1 ||

The Brahman of another world said, 'I, who am the space of consciousness, desire to grasp the supreme state of another space. Therefore, destruction is imminent here.'

अन्य जगत् के ब्रह्म ने कहा, 'मैं, जो चेतना का आकाश हूँ, दूसरे आकाश की परम स्थिति को ग्रहण करना चाहता हूँ। इसलिए यहाँ विनाश उपस्थित है।'

7.70.2

महाप्रलयकालेऽस्मिंस्त्यक्तुमेषा मयाधुना मुनीन्द्र नूनमारब्धा तेन वैरस्यमागता ॥ २ ॥

mahāpralayakāle'smiṃstyaktumēṣā mayādhunā munīndra nūnamārabdhā tena vairasyamāgatā || 2 ||

In this great dissolution, I now abandon this. O great sage, indeed, enmity has arisen due to this.

इस महाप्रलय काल में, मैं अब इसे त्याग रहा हूँ। हे महान ऋषि, निश्चय ही, इसके कारण वैर उत्पन्न हो गया है।

7.70.3

आकाशत्वाद्यदाद्योऽयं पराकाशो भवाम्यहम् तदा महाप्रलयता वासनायाश्च संक्षयः ॥ ३ ॥

ākāśatvādyadādyo'yaṃ parākāśo bhavāmyaham tadā mahāpralayatā vāsanāyāśca saṃkṣayaḥ || 3 ||

When I become the primordial space, then there is the great dissolution and the destruction of desires.

जब मैं आदिम आकाश बन जाता हूँ, तब महाप्रलय और इच्छाओं का विनाश होता है।

7.70.4

तेनैषा विरसीभूता मन्मार्गं परिधावति नानुगच्छति को नाम निर्मातारमुदारधीः ॥ ४ ॥

tenaiṣā virasībhūtā manmārgaṃ paridhāvati nānugacchati ko nāma nirmātāramudāradhīḥ || 4 ||

Therefore, she becomes devoid of taste and runs around my path. Who with a noble mind does not follow the creator?

इसलिए, वह स्वादहीन हो जाती है और मेरे मार्ग पर भागती है। उदार बुद्धि वाला कौन निर्माता का अनुसरण नहीं करता?

7.70.5

इहाद्यायं कलेरन्तश्चतुर्युगविपर्ययः प्रजामन्विन्द्रदेवानामद्यैवान्तोऽयमागतः ॥ ५ ॥

ihādyāyaṃ kaleraṃtaścatur yugaviparyayaḥ prajāmanvindradevānāmadyaivānto'yamāgataḥ || 5 ||

Here, at the end of the Kali Yuga, there is a reversal of the four Yugas. Today, the end of the subjects and gods like Indra has come.

यहाँ, कलियुग के अन्त में, चार युगों का विपर्यय होता है। आज, प्रजा और इंद्र जैसे देवताओं का अंत आ गया है।

7.70.6

अद्यैव चायं कल्पान्तो महाकल्पान्त एव च । ममायं वासनान्तोऽद्य देहव्योमान्त एव च ॥ ६ ॥

adyaiva cāyaṃ kalpānto mahākalpānta eva ca | mamāyaṃ vāsanānto'dya dehavyomānta eva ca || 6 ||

Today itself is the end of the eon, the great end of the eon, and today is the end of my desires, the end of the bodily sphere.

आज ही यह कल्पान्त है, महाकल्पान्त भी है | और आज ही मेरी वासनाओं का अंत है, देह के आकाश का अंत भी है |

7.70.7

तेनेयं वासना ब्रह्मन्क्षयं गन्तुं समुद्यता । क्वेव पद्माकराशोषे गन्धलेखावतिष्ठताम् ॥ ७ ॥

teneyaṃ vāsanā brahman kṣayaṃ gantuṃ samudyatā | kveva padmākarāśoṣe gandhalekhāvatiṣṭhatām || 7 ||

Therefore, this desire, O Brahman, is ready to go to destruction. Just as the scent of a lotus pond remains even after it dries up.

इसलिए, हे ब्रह्मन्, यह इच्छा विनाश को जाने के लिए तैयार है | जैसे कमल के तालाब की खुशबू सूखने के बाद भी बनी रहती है |

7.70.8

यथा जडाब्धिलेखाया जायते लहरी चला । वासनायास्तथैवेच्छा मुधोदेत्यपकारणम् ॥ ८ ॥

yathā jaḍābdhilekhāyā jāyate laharī calā | vāsanāyāstathaivecchā mudhodetyapakāraṇam || 8 ||

Just as a wave arises from the motionless ocean, so does desire arise from the mind without any cause.

जैसे एक लहर निश्चल समुद्र से उठती है, वैसे ही इच्छा बिना किसी कारण के मन से उठती है |

7.70.9

आभिमानिकदेहाया वासनायाः स्वभावतः । अस्या आत्मावलोकेच्छा स्वयमेवोपजायते ॥ ९ ॥

ābhimānikadehāyā vāsanāyāḥ svabhāvataḥ | asyā ātmāvalokecchā svayamevopajāyate || 9 ||

From the egoistic body, desire naturally arises. The desire to see the self arises spontaneously.

अहंकारी शरीर से इच्छा स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होती है | आत्मा को देखने की इच्छा स्वतः ही उत्पन्न होती है |

7.70.10

आत्मतत्त्वं नु पश्यन्त्या धारणाभ्यासयोगतः । दृष्टोऽनया भवत्सर्गो वर्गव्यग्रनिरर्गलः ॥ १० ॥

ātmatattvaṃ nu paśyantyā dhāraṇābhyāsayogataḥ | dṛṣṭo'nayā bhavatsargo vargavyagranirargalaḥ || 10 ||

By the practice of concentration, the nature of the self is seen. Through this vision, the creation of the world is seen as varied and restless.

धारणा के अभ्यास से, आत्मा का तत्त्व देखा जाता है | इस दृष्टि से, सृष्टि की उत्पत्ति विविध और अशांत दिखाई देती है |

7.70.11

अनयाम्बरसंचारपरयाद्रिशिरःशिला । दृष्टा स्वजगदाधारभूतास्माकं तु खात्मिका ॥ ११ ॥

anayāmbarasaṃcāraparayādriśiraḥśilā | dṛṣṭā svajagadādhārabhūtāsmākaṃ tu khātmikā || 11 ||

We have seen the rock at the top of the mountain, which is the foundation of our world, but it is essentially empty.

हमने पर्वत के शिखर पर चट्टान देखी है, जो हमारी दुनिया का आधार है, लेकिन वह आत्मिक रूप से खाली है।

7.70.12

एतद्यस्मिञ्जगद्यत्र तद्दृषत्त्वं जगद्गिरौ । अस्मज्जगत्पदार्थेषु संत्यन्यानि जगन्त्यपि ॥ १२ ॥

etadyasmiñjagadyatra taddṛṣattvaṃ jagadgirau | asmajjagatpadārtheṣu saṃtyanyāni jagantyapi || 12 ||

In this world, where everything is seen, there are other worlds within our world's objects. These are also perceived as worlds.

इस दुनिया में, जहाँ सब कुछ दिखता है, हमारी दुनिया के वस्तुओं में दूसरी दुनियाँ हैं। ये भी दुनियाओं के रूप में देखी जाती हैं।

7.70.13

वयं तानि न पश्यामो भेददृष्टौ स्थिता इमे । बोधैकतां गतास्त्वाशु पश्यामस्तानि वीक्षणात् ॥ १३ ॥

vayaṃ tāni na paśyāmo bhedadṛṣṭau sthitā ime | bodhaikatāṃ gatāstvāśu paśyāmastāni vīkṣaṇāt || 13 ||

We do not see those other worlds because we are stuck in the perception of differences. However, we quickly perceive them when we achieve the unity of consciousness.

हम उन दूसरी दुनियाओं को नहीं देखते क्योंकि हम अंतर की प्रत्यक्षता में फँसे हुए हैं। हालाँकि, जब हम चेतना की एकता प्राप्त करते हैं, तो हम उन्हें जल्दी से देख लेते हैं।

7.70.14

घटे पटे वटे कुड्ये खेऽनलेऽम्भसि तेजसि । जगन्ति सन्ति सर्वत्र शिलायामिव सर्वदा ॥ १४ ॥

ghaṭe paṭe vaṭe kuḍye khe'nalembhasi tejasi | jaganti santi sarvatra śilāyāmiva sarvadā || 14 ||

Worlds exist in everything—in pots, clothes, banyan trees, walls, sky, fire, water, and light, just like they exist in a rock at all times.

दुनियाँ हर चीज में मौजूद हैं—मिट्टी के बर्तन, कपड़े, बरगद के पेड़, दीवार, आकाश, आग, पानी और प्रकाश में, जैसे कि वे एक चट्टान में हमेशा मौजूद होती हैं।

7.70.15

जगन्नाम मुधा भ्रान्तिः किल स्वप्नपुरोपमा । मिथ्यैवेयं क्व नामासौ चिद्रूपास्त्यथ नास्ति च ॥ १५ ॥

jagannāma mudhā bhrāntiḥ kila svapnapuropamā | mithyaiveyaṃ kva nāmāsau cidrūpāstyatha nāsti ca || 15 ||

The name 'world' is indeed a delusion, similar to a dream. It is false; where is this name? Does it exist in the form of consciousness or not at all?

दुनिया का नाम एक भ्रम है, जैसे एक स्वप्न। यह झूठा है; यह नाम कहाँ है? क्या यह चेतना के रूप में मौजूद है या बिलकुल नहीं?

7.70.16

परिज्ञाता सती येषामेषा चिन्नभसैकताम् । गता ते न विमुह्यन्ति शिष्टास्तु भ्रमभाजनम् ॥ १६ ॥

parijñātā satī yeṣāmeṣā cinnabhasaikatām | gatā te na vimuhyanti śiṣṭāstu bhramabhājanam || 16 ||

Those who have realized this pure consciousness do not get deluded; others remain in confusion.

जिन्होंने इस चिन्नभसैकता को जान लिया है, वे भ्रम में नहीं पड़ते, बाकी लोग भ्रम में रहते हैं।

7.70.17

अथान्यधारणाभ्यासात्स्वविरागवशोदितम् । साधयन्त्याऽर्थमात्मीयं दृष्टस्त्वमनया मुने ॥ १७ ॥

athānyadhāraṇābhyāsātsvavirāgavaśoditam | sādhayantyā'rthamātmīyaṃ dṛṣṭastvamanayā mune || 17 ||

Through the practice of different meditations and by the power of detachment, one realizes the true self, O sage.

विभिन्न धारणाओं के अभ्यास और विराग की शक्ति से, एक व्यक्ति अपने वास्तविक स्व को जान लेता है, हे मुनि।

7.70.18

इति मायेव दुष्पारा चिच्छक्तिः परिजृम्भते । इत्थमाद्यन्तरहिता ब्राह्मी शक्तिरनामया ॥ १८ ॥

iti māyeva duṣpārā cicchaktiḥ parijṛmbhate | itthamādyantarahitā brāhmī śaktiranāmayā || 18 ||

Thus, the divine power of consciousness, which is difficult to cross, manifests itself. This Brahmic power is without beginning or end, and is flawless.

इस प्रकार, जो पार करना कठिन है, चेतना की दिव्य शक्ति प्रकट होती है। यह ब्रह्मी शक्ति आदि और अंत से रहित है, और दोषरहित है।

7.70.19

प्रवर्तन्ते निवर्तन्ते नेह कार्याणि कानिचित् । द्रव्यकालक्रियाद्योता चितिस्तपति केवलम् ॥ १९ ॥

pravartante nivartante neha kāryāṇi kānicit | dravyakālakriyādyotā citistapati kevalam || 19 ||

Actions arise and cease here, but the consciousness, which illuminates substance, time, and action, merely shines.

यहाँ कार्य उत्पन्न होते हैं और समाप्त होते हैं, लेकिन चेतना, जो पदार्थ, समय और क्रिया को प्रकाशित करती है, केवल चमकती है।

7.70.20

देशकालक्रियाद्रव्यमनोबुद्ध्यादिकं त्विदम् । चिच्छिलाङ्गकमेवैकं विद्ध्यनस्तमयोदयम् ॥ २० ॥

deśakālakriyādravyamanobuddhyādikaṃ tvidam | cicchilāṅgakamevaikaṃ viddhyanastamayodayam || 20 ||

Know that space, time, action, substance, mind, and intellect are all one with the power of consciousness, without rise or fall.

जान लो कि स्थान, समय, क्रिया, पदार्थ, मन और बुद्धि सभी चेतना की शक्ति के साथ एक हैं, उदय और अस्त के बिना।

7.70.21

चिदेवेयं शिलाकारमवतिष्ठति बिभ्रती । अङ्गमस्या जगज्जालं मरुतः स्पन्दनं यथा ॥ २१ ॥

cideveyaṃ śilākāramavatiṣṭhati bibhratī | aṅgamasyā jagajjālaṃ marutaḥ spandanaṃ yathā || 21 ||

This consciousness itself appears as a stone, holding the universe as its limb, just as the wind causes movement.

यह चेतना स्वयं एक पत्थर के रूप में प्रकट होती है, जो ब्रह्मांड को अपना अंग बनाकर धारण करती है, जैसे हवा गति पैदा करती है।

7.70.22

विज्ञानघनमात्मानं जगदित्यवबुध्यते । अनाद्यन्तापि साद्यन्ता चित्त्वादिति गतापि चित् ॥ २२ ॥

vijñānaghanamātmānaṃ jagadityavabudhyate | anādyantāpi sādyantā cittvāditi gatāpi cit || 22 ||

The self, which is a mass of consciousness, is realized as the universe. Although it is without beginning or end, it is considered to have a beginning and an end, and although it is consciousness, it is perceived as non-conscious.

जो चेतना का घन (विज्ञानघन) है, वह आत्मा ब्रह्मांड के रूप में समझा जाता है। हालाँकि इसका न आदि है न अंत, फिर भी इसे आदि और अंत वाला माना जाता है, और हालाँकि यह चेतना है, फिर भी इसे अचेतन माना जाता है।

7.70.23

चिच्छिलेयमनाद्यन्ता साद्यन्तास्तीति बोधतः । साकारापि निराकारा जगदङ्गेति संस्थिता ॥ २३ ॥

cicchileyamanādyantā sādyantāstīti bodhataḥ | sākārāpi nirākārā jagadaṅgeti saṃsthitā || 23 ||

This consciousness, which is without beginning or end, is understood to have a beginning and an end. Although it has form, it is formless, and it is established as the limb of the universe.

यह चेतना, जो आदि और अंत रहित है, आदि और अंत वाली समझी जाती है। हालाँकि इसमें रूप है, फिर भी यह निराकार है, और यह ब्रह्मांड के अंग के रूप में स्थापित है।

7.70.24

यद्वत्स्वप्ने चिदेव स्वं रूपं व्योमैव पत्तनम् । वेत्ति तद्वदिदं वेत्ति पाषाणं जगदङ्गकम् ॥ २४ ॥

yadvatsvapne cideva svaṃ rūpaṃ vyomaiva pattanam | vetti tadvadidaṃ vetti pāṣāṇaṃ jagadaṅgakam || 24 ||

Just as in a dream, consciousness itself perceives its own form as the sky and the city, so too it perceives this stone as the limb of the universe.

जैसे स्वप्न में, चेतना स्वयं अपने रूप को आकाश और नगर के रूप में देखती है, वैसे ही यह चेतना इस पत्थर को ब्रह्मांड के अंग के रूप में देखती है।

7.70.25

न सरन्तीह सरितो न चक्रं परिवर्तते । नार्थाः परिणमन्त्यन्तः कचत्येतच्चिदम्बरम् ॥ २५ ॥

na sarantīha sarito na cakraṃ parivartate | nārthāḥ pariṇamantyantaḥ kacatyetaccidambaram || 25 ||

Here, rivers do not flow, nor does the wheel turn. Objects do not change within. This is the garment of consciousness.

यहाँ, नदियाँ नहीं बहतीं, न पहिया घूमता है। वस्तुएँ अंदर नहीं बदलतीं। यह चेतना का वस्त्र है।

7.70.26

न महाकल्पकल्पान्तसंविदः संविदम्बरे । संभवन्ति पृथग्रूपाः पयसीव पयोन्तरम् ॥ २६ ॥

na mahākalpakalpāntasaṃvidaḥ saṃvidambare | saṃbhavanti pṛthagrūpāḥ payasīva payonantaram || 26 ||

In the realm of consciousness, the perceptions of great aeons and their ends do not arise distinctly, like milk in milk.

चेतना के धाम में, महाकल्पों और उनके अंत की संवेदनाएँ अलग-अलग रूप में उत्पन्न नहीं होतीं, जैसे दूध दूध में।

7.70.27

जगन्ति सन्त्येव न सन्ति शान्ते चिदम्बरे सर्वगतैकमूर्तौ । नभोन्तराणीव महानभोन्तश्चित्सन्ति सत्तानि पराम्बराणि ॥ २७ ॥

jaganti santyeva na santi śānte cidambare sarvagataikamūrtau | nabhontarāṇīva mahānabhontaścitsanti sattāni parāmbarāṇi || 27 ||

The worlds exist but do not exist in the peaceful expanse of consciousness, which is all-pervading and one. Like the spaces within the great sky, the existences are the supreme garments of consciousness.

संसार अस्तित्व में हैं लेकिन शांत चेतना के विशाल विस्तार में नहीं हैं, जो सर्वव्यापी और एक है। जैसे महान आकाश के अंतरिक्ष की तरह, अस्तित्व चेतना के परम वस्त्र हैं।

7.70.28

वसिष्ठ तद्गच्छ मुने जगत्स्वं त्वं चासने संप्रति शान्तिमेहि । बुद्ध्यादिरूपाणि परं व्रजन्तु वयं बृहद्ब्रह्मपदं प्रयामः ॥ २८ ॥

vasiṣṭha tadgaccha mune jagatsvaṃ tvaṃ cāsane saṃprati śāntimehi | buddhyādirūpāṇi paraṃ vrajantu vayaṃ bṛhadbrahmapadaṃ prayāmaḥ || 28 ||

O sage, go forth to your own world, and now sit in peace. Let the forms of intellect and others attain the supreme. We shall proceed to the great state of Brahman.

हे मुनि, अपने संसार में जाओ, और अब शांति से बैठो। बुद्धि और अन्य रूपों को परम प्राप्त होने दो। हम महान ब्रह्म की स्थिति की ओर बढ़ेंगे।

Chapter 71

7.71.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा भगवान्ब्रह्मा ब्रह्मलोकजनैः सह । बद्धपद्मासनोऽनन्तसमाधानगतोऽभवत् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā bhagavānbrahmā brahmalokajanaiḥ saha |
baddhapadmāsano'nantsamādhānagato'bhavat || 1 ||

Sri Vasistha said: Having said this, Lord Brahma, along with the inhabitants of Brahmaloka, sat in the lotus posture and entered into eternal meditation.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर, भगवान ब्रह्मा, ब्रह्मलोक के निवासियों के साथ, पद्मासन में बैठे और अनन्त समाधि में चले गए।

7.71.2

ओंकारार्धोऽर्धमात्रान्तः शान्तनिःशेषमानसः । लिपिकर्मार्पिताकार आसीदाशान्तवेदनः ॥ २ ॥

oṃkārārdho'rdhamātrāntaḥ śāntaniḥśeṣamānasaḥ | lipikarmārpitākāra āsīdāśāntavedanaḥ || 2 ||

Having the syllable 'Om' as half and ending with half a measure, he became calm and without any mental activity. His form was dedicated to the act of writing, and he became one who experiences the tranquil Vedas.

ओंकार का आधा और आधे मात्रा के अंत में, वह शांत और मन की कोई गतिविधि के बिना हो गया। उसका रूप लिखने के कार्य को समर्पित था, और वह शांत वेदों का अनुभव करने वाला बन गया।

7.71.3

तमेवानुसरन्ती सा तथैव ध्यानगा सती । वासनासीदशेषांशा शान्ता चाकाशरूपिणी ॥ ३ ॥

tamevānusarantī sā tathaiva dhyānagā satī | vāsanāsīdaśeṣāṃśā śāntā cākāśarūpiṇī || 3 ||

Following him, she also became absorbed in meditation. Being in that state, she became calm and without any desires, taking the form of the sky.

उसका अनुसरण करते हुए, वह भी ध्यान में डूब गई। उस अवस्था में रहते हुए, वह शांत और बिना किसी इच्छा के हो गई, आकाश का रूप लेकर।

7.71.4

परमेष्ठिन्यसंकल्पे तस्मिंस्तानवमेयुषि । सर्वगानन्तचिद्व्योमरूपोऽपश्यमहं यदा ॥ ४ ॥

parameṣṭhinyasaṃkalpe tasmintānavameyuṣi | sarvagānantacidvyomarūpo'paśyamahaṃ yadā || 4 ||

When the supreme lord's resolve was thus unknowable, I saw him as the all-pervading, infinite consciousness, the form of the vast sky.

जब परमेश्वर का संकल्प अज्ञेय था, तब मैंने उन्हें सर्वव्यापी, अनंत चेतना, विशाल आकाश के रूप में देखा।

7.71.5

यावत्संकल्पनं तस्य विरसीभवति क्षणात् । तथैवाशु तथैवोर्व्याः सादृद्वीपपयोनिधेः ॥ ५ ॥

yāvatsaṃkalpanaṃ tasya virasībhavati kṣaṇāt | tathaivāśu tathaivorvyāḥ sādridvīpapayonidheḥ || 5 ||

As soon as his resolve becomes tasteless, the earth with its mountains, islands, and oceans also becomes tasteless.

जैसे ही उसका संकल्प निरास हो जाता है, पृथ्वी अपने पर्वतों, द्वीपों और समुद्रों के साथ भी निरास हो जाती है।

7.71.6

तृणगुल्मलताशालिसमुद्भवनशक्तता । समस्तैवास्तमागन्तुमारब्धा च शनैःशनैः ॥ ६ ॥

tṛṇagulmalatāśālisamudbhavanaśaktatā | samastaivāstamāgantumārabdhā ca śanaiḥśanaiḥ || 6 ||

The power of the grass, bushes, and creepers to grow has begun to diminish gradually.

घास, झाड़ियों और लताओं की उगने की शक्ति धीरे-धीरे कम होने लगी है।

7.71.7

किल तस्य विराडात्मरूपस्याङ्गैकदेशताम् । सा बिभर्ति मही तेन तदसंवेदनोदयात् ॥ ७ ॥

kila tasya virāḍātmrūpasyāṅgaikadeśatām | sā bibharti mahī tena tadasaṃvedanodayāt || 7 ||

Indeed, that form of the universal self bears the earth, which has become insensible due to the rise of ignorance.

वास्तव में, वह विराट् आत्मा का रूप पृथ्वी को धारण करता है, जो अज्ञान के उदय के कारण असंवेदनशील हो गई है।

7.71.8

विचेतना सा विरसा बभूव परिजर्जरा । मार्गशीर्षान्तवल्लीव जराविधुरतां गता ॥ ८ ॥

vicetanā sā virasā babhūva parijarjarā | mārgaśīrṣāntavallīva jarāvidhuratāṃ gatā || 8 ||

That insensible earth became tasteless and withered, like a vine at the end of the Margashirsha month, having fallen into decay.

वह असंवेदनशील पृथ्वी निरास और सूखी हो गई, मानो मार्गशीर्ष महीने के अंत में की लता, जो जरावस्था में चली गई है।

7.71.9

यथास्माकमसंवित्तेरङ्गाली विरसा भवेत् । तथा विरिंचिसंवित्तैर्धरा वैधुर्यमागता ॥ ९ ॥

yathāsmākamasavittērāṅgālī virasā bhavēt | tathā viriṃcisaṃvittairdharā vaidhuryamāgatā || 9 ||

Just as our limbs become tasteless due to lack of consciousness, so too the earth has become impure due to the consciousness of Brahma.

जैसे हमारे अंग असंवेदनशीलता के कारण निरास हो जाते हैं, वैसे ही ब्रह्मा की चेतना के कारण पृथ्वी अशुद्ध हो गई है।

7.71.10

संपन्ना संहतानेकमहोत्पातभरावृता । दुष्कृताङ्गारनिर्दग्धनरकोन्मुखमानवा ॥ १० ॥

saṃpannā saṃhatānēkamahōtpātabharāvṛtā | duṣkṛtāṅgāranirdagdhanarakōnmukhamānavā || 10 ||

The earth is filled with various great calamities, and people are facing the fires of sin, heading towards hell.

पृथ्वी विभिन्न बड़े आपदाओं से भरी हुई है, और लोग पाप की आग का सामना कर रहे हैं, नरक की ओर बढ़ रहे हैं।

7.71.11

दुर्भिक्षाकाण्डदौस्थित्यदैन्यदारिद्र्यदुर्भगा । दुःशीलाशेषवनिता निर्मर्यादनरावृता ॥ ११ ॥

durbhikṣākāṇḍadousthityadainyadāridryadurbhagā | duḥśīlāśeṣavanitā nirmaryādanarāvṛtā || 11 ||

The land is afflicted with famine, distress, poverty, and misfortune. All women are of bad character, and the land is filled with lawless men.

यह भूमि अकाल, दुःख, गरीबी और दुर्भाग्य से पीड़ित है। सभी स्त्रियाँ बुरे चरित्र की हैं, और यह भूमि अनैतिक पुरुषों से भरी हुई है।

7.71.12

पांसुप्रमन्दनीहारधूलिधूसरसूर्यका । द्वन्द्विमूर्खमहादुःखिव्यसनिव्याधिताकुला ॥ १२ ॥

pāṃsupramandanīhāradhūlidhūsarasūryakā | dvandvimūrkhamahāduḥkhivyasanivyādhitākulā || 12 ||

The land is covered with dust, and the sun is pale. It is filled with foolish, greatly suffering, addicted, and diseased people.

यह भूमि धूल से ढकी हुई है, और सूर्य फीका है। यह मूर्ख, बहुत दुःखी, लती और रोगी लोगों से भरी हुई है।

7.71.13

अग्निदाहजलापूरयुद्धप्रोच्छिन्नमण्डला । अवृष्ट्यवग्रहोन्नष्टकष्टचेष्टितपामरा ॥ १३ ॥

agnidāhajalāpūrayuddhaprocchinnamaṇḍalā | avṛṣṭyavagrahonnaṣṭakaṣṭaceṣṭitapāmarā || 13 ||

The land is burned by fire and flooded with water. It is destroyed by war, lack of rain, and the influence of planets. The people are distressed and their efforts are in vain.

यह भूमि आग से जली हुई और पानी से भरी हुई है। यह युद्ध, वर्षा की कमी, और ग्रहों के प्रभाव से नष्ट हो गई है। लोग परेशान हैं और उनके प्रयास व्यर्थ हैं।

7.71.14

अशङ्कितमहोत्पातपतत्पर्वतपत्तना । शिशुश्रोत्रियमुन्यार्यगुणिनाशरुदज्जना ॥ १४ ॥

aśaṅkitamahotpātapatatparvatapattanā | śiśuśrotriyamunyāryaguṇināśarudajjanā || 14 ||

The land is struck by unexpected calamities, falling mountains, and the destruction of cities. Children, scholars, sages, noble men, and virtuous people are crying.

यह भूमि अप्रत्याशित आपदाओं, गिरते पर्वतों, और नगरों के विनाश से घिरी हुई है। बच्चे, विद्वान, ऋषि, आर्य, और गुणवान लोग रो रहे हैं।

7.71.15

अशङ्कितस्थलीमध्यसंजातागाधकूपका । वर्णसंकरनारीणामासक्तजनभूमिपा ॥ १५ ॥

aśaṅkitasthalīmadhyasaṃjātāgādhakūpakā | varṇasaṃkaranārīṇāmāsaktjanabhūmipā || 15 ||

The land is filled with unexpected deep wells in the middle of the ground. The kings are attached to women of mixed castes.

यह भूमि अप्रत्याशित गहरे कुएँ से भरी हुई है जो जमीन के बीच में हैं। राजा मिश्रित जाति की स्त्रियों से आसक्त हैं।

7.71.16

अट्टशूलाखिलजना शिवशूलचतुष्पथा । केशैकशूलवनिता पात्रशूलजनेश्वरा ॥ १६ ॥

aṭṭaśūlākhilajanā śivaśūlacatuṣpathā | keśaikaśūlavanitā pātraśūlajaneśvarā || 16 ||

All people are pierced by the spear of sorrow, the crossroads are pierced by the spear of Shiva, the woman with a single spear of hair is the lord of the people with the spear of the vessel.

सभी लोग दुःख के भाले से छेदे हुए हैं, चौराहे शिव के भाले से छेदे हुए हैं, एक बाल की भाला वाली स्त्री पात्र भाले वाले लोगों की स्वामिनी है।

7.71.17

दुःखशूलसमाचारा द्वन्द्वशूलाखिलप्रजा । अधर्मशूलवनिता पानशूलजनेश्वरा ॥ १७ ॥

duḥkhaśūlasamācārā dvandvaśūlākhilaprajā | adharmaśūlavanitā pānaśūlajaneśvarā || 17 ||

The news of the spear of sorrow, all people are pierced by the spear of duality, the woman with the spear of unrighteousness is the lord of the people with the spear of drinking.

दुःख के भाले की खबर, सभी लोग द्वैत के भाले से छेदे हुए हैं, अधर्म की भाला वाली स्त्री पीने के भाले वाले लोगों की स्वामिनी है।

7.71.18

अधर्मशूलवलिता कुशास्त्रशतशूलिनी । दुर्जनाखिलवित्ताढ्या विपद्विहतसज्जना ॥ १८ ॥

adharmaśūlavalitā kuśāstrśataśūlinī | durjanākhilavittāḍhyā vipadvihatasajjanā || 18 ||

Surrounded by the spear of unrighteousness, possessing a hundred bad weapons, wealthy with all the riches of evil people, good people are afflicted by calamities.

अधर्म के भाले से घिरी हुई, सौ बुरे अस्त्रों वाली, सभी बुरे लोगों के धन से समृद्ध, अच्छे लोग आपदाओं से पीड़ित हैं।

7.71.19

अनार्यवसुधापाला तदनादृतपण्डिता । लोभमोहभयद्वेषरागरोगरजोरता ॥ १९ ॥

anāryavasudhāpālā tadanādṛtapaṇḍitā | lobhamohabhayadveṣarāgarogarajoratā || 19 ||

The protector of the non-Aryan earth, disrespected by scholars, engrossed in greed, delusion, fear, hatred, passion, disease, and dust.

अनार्य पृथ्वी का रक्षक, विद्वानों द्वारा अवमानित, लोभ, मोह, भय, द्वेष, राग, रोग और धूल में डूबा हुआ।

7.71.20

अप्यन्यगामिपुरुषा रुषाभिहतसद्विजा । अनारतपराक्रन्दपरापर्यन्तपामरा ॥ २० ॥

apyanyagāmipuruṣā ruṣābhihatasadvijā | anāratataparākrandaparāparyantapāmarā || 20 ||

Even other men going elsewhere, noble scholars struck by anger, constantly crying out, reaching the ultimate state of ignorance.

दूसरे लोग दूसरी ओर जा रहे हैं, क्रोध से घायल सज्जन विद्वान, निरंतर चीख रहे हैं, अज्ञान की पराकाष्ठा तक पहुंच गए हैं।

7.71.21

दस्यूत्सन्नपुरग्रामदेवद्विजसमाश्रया । आपातमधुरारम्भदुःखदोदरभङ्गुरा ॥ २१ ॥

dasyūtsannapuragrāmadevadvijasamāśrayā | āpātamadhurārambhaduḥkhadodarabhaṅgurā || 21 ||

The cities and villages are destroyed by thieves, and the gods and Brahmins are deprived of their shelters. The beginning seems sweet but ends in sorrow, causing the belly to burst with pain.

चोरों द्वारा नगर और ग्राम नष्ट हो गए हैं, और देवता और ब्राह्मण अपने आश्रय से वंचित हैं। आरम्भ में मीठा लगता है पर दुःख में समाप्त होता है, जिससे पेट फटने लगता है।

7.71.22

आलस्योल्लासविलसत्कार्यवैधुर्यधर्मिणी । सर्वापदुपतापान्ता क्रमेणोत्सन्नदिग्गणा ॥ २२ ॥

ālasyollāsavilasatkāryavaidhuryadharminī | sarvāpadupatāpāntā kramenotsannadiggṇā || 22 ||

Laziness leads to the destruction of all tasks, resulting in the end of all calamities and sorrows. Gradually, all directions become deserted.

आलस्य सभी कार्यों के विनाश का कारण बनता है, जिससे सभी आपदाओं और दुःखों का अंत हो जाता है। धीरे-धीरे, सभी दिशाएँ सूनी हो जाती हैं।

7.71.23

भस्मशेषपुरग्रामा निर्जनाखिलमण्डला । रोरूयमाणभस्माभ्रकुण्डलोड्डामराम्वरा ॥ २३ ॥

bhasmaśeṣapuragrāmā nirjanākhilamaṇḍalā | rorūyamāṇabhasmābhrakuṇḍaloḍḍāmarāmvarā || 23 ||

The cities and villages are reduced to ashes, and the entire region is deserted. The ashes form clouds that resemble ornaments, and the land is filled with lamentations.

नगर और ग्राम राख में बदल गए हैं, और पूरा क्षेत्र सूना है। राख के बादल आभूषणों की तरह दिखते हैं, और भूमि रोने की आवाजों से भरी है।

7.71.24

दुर्भगाडम्बरारम्भरोदनोरुरवोदरी । मुष्टिप्रमाणजनता जनतापानुषङ्गिणी ॥ २४ ॥

durbhagāḍambarārambharodanoururavodarī | muṣṭipramāṇajanatā janatāpānuṣaṅgiṇī || 24 ||

The miserable people begin to wail loudly, and the population is reduced to a fistful. The people are accompanied by sorrow.

दुःखी लोग जोर से रोने लगते हैं, और जनसंख्या मुट्ठी भर रह जाती है। लोग दुःख के साथ रहते हैं।

7.71.25

नीरसाशेषदेशान्ता सर्वर्तुगुणवर्जिता । इत्यस्य पार्थिवे धातौ ब्रह्मणो गतवेदने ॥ २५ ॥

nīrasāśeṣadeśāntā sarvartuguṇavarjitā | ityasya pārthive dhātau brahmaṇo gatavedane || 25 ||

The land is devoid of all tastes and qualities, and all regions are destroyed. Thus, in this earthly realm, Brahma's knowledge is lost.

भूमि सभी स्वाद और गुणों से रहित है, और सभी क्षेत्र नष्ट हो गए हैं। इस प्रकार, इस धरती पर, ब्रह्मा का ज्ञान खो गया है।

7.71.26

पृथिवी पृथुवैधुर्या संपन्नासन्ननाशतः अथ तत्संविदुन्मुक्तो जलधातुः क्षयोन्मुखः ॥ २६ ॥

pṛthivī pṛthuvaiḍhuryā saṃpannāsannanāśataḥ ath tatsaṃvidunmukto jaladhātuḥ kṣayonmukhaḥ || 26 ||

When the Earth, endowed with great beauty, was on the verge of destruction, then the water element, released from its bonds, began to diminish.

जब पृथ्वी, जो बहुत सुंदर है, नष्ट होने के कगार पर थी, तब जल तत्व, जो अपने बंधनों से मुक्त हो गया था, घटना शुरू हो गई।

7.71.27

यदा विक्षुभितात्मासीत्तदा नियत्तिलङ्घनात् समुत्सार्यार्यमर्यादामर्णवा विवृतार्णसः ॥ २७ ॥

yadā vikṣubhitātmāsīttadā niyattilaṅghanāt samutsāryāryamaryādāmārṇavā vivṛtārṇasaḥ || 27 ||

When the mind was disturbed, then the oceans, transgressing their boundaries, began to overflow, disregarding the noble limits.

जब मन विक्षुभित हो गया, तब समुद्र, अपनी सीमाओं का उल्लंघन करते हुए, उत्तेजित हो गए, उत्कृष्ट सीमाओं को अनदेखा करते हुए।

7.71.28

प्रवृत्ता विकृतिं गन्तुमुन्मत्ता इव राविणः वीचिविक्षोभविन्यासैर्वेलाविपिनलावकाः ॥ २८ ॥

pravṛttā vikṛtiṃ gantumunmattā iva rāviṇaḥ vīcivikṣobhavinyāsairvelāvipinalāvakāḥ || 28 ||

The waves, agitated by the disturbance, began to move like mad elephants, with their crests and troughs forming a chaotic pattern.

लहरें, विक्षुभित होने के कारण, पागल हाथियों की तरह चलने लगीं, उनके शिखर और गर्त एक अराजक पैटर्न बना रहे थे।

7.71.29

कल्लोलवलनावर्तविवर्तोद्वर्तिताश्रयाः महाभ्रभ्रमदुत्तुङ्गतरङ्गात्तनभोदिशः ॥ २९ ॥

kallolavalanāvartavivartodvartitāśrayāḥ mahābhra bhramaduttuṅgatarangāttanabhodiśaḥ || 29 ||

The waves, with their swirling and churning, were lifted up high, reaching the sky, and spread out in all directions.

लहरें, उनके घूमने और चक्कर काटने से, ऊपर उठ गईं, आकाश तक पहुँच गईं, और सभी दिशाओं में फैल गईं।

7.71.30

बृहद्गुलुगुलावर्तगर्जनोद्भवकन्दराः सीकरौघमहारम्भघनसंवलिताचलाः ॥ ३० ॥

bṛhadgulugulāvartagarjanoddravakandarāḥ sīkaraughamahārambhaghanasaṃvalitācalāḥ || 30 ||

The waves, with their loud roaring and swirling, were like mountains, covered with dense clouds and showers.

लहरें, अपने जोरदार गर्जन और घूमने से, पहाड़ों की तरह थीं, जो घने बादलों और वर्षा से ढके हुए थे।

7.71.31

चलच्चलचलद्वीरमकराघूर्णितान्तराः । उल्लसन्मकराक्रान्तद्रुमकाननितोदराः ॥ ३१ ॥

calaccalacaladvīramakarāghūrṇitāntarāḥ | ullasanmakarākrāntadrumakānanitodarāḥ || 31 ||

The waves are moving and shaking the doors, and the crocodiles are churning inside. The forests on the shores are being uprooted by the crocodiles, and the waves are shining with jewels.

लहरें दरवाजे को हिला रही हैं और मगरमच्छ अंदर घूम रहे हैं। तट पर जंगल मगरमच्छों द्वारा उखाड़े जा रहे हैं, और लहरें रत्नों से चमक रही हैं।

7.71.32

दरीविदारणभ्रष्टसिंहाहतजलेचराः । ऊर्म्युदस्तमहारत्नभरतारकिताम्बराः ॥ ३२ ॥

darīvidāraṇabhraṣṭasiṃhāhatajalecarāḥ | ūrmyudastamahāratnabharatārakitāmbarāḥ || 32 ||

The lions are being hit by the waves and are falling from the broken caves. The waves are throwing out large jewels, and the sky is adorned with stars.

लहरों से सिंह मारे जा रहे हैं और टूटी गुफाओं से गिर रहे हैं। लहरें बड़े रत्न फेंक रही हैं, और आकाश तारों से सजा हुआ है।

7.71.33

उत्फालमकरच्छन्ननभश्चरबृहद्घनाः । परस्परोर्मिसंघट्टभांकारकटुटांकृताः ॥ ३३ ॥

utphālamakaracchannanabhaścarabṛhaddhanāḥ | parasparormisaṃghaṭṭabhāṃkārakaṭuṭāṃkṛtāḥ || 33 ||

The sky is covered with jumping crocodiles and large moving objects. The waves are colliding with each other, making a loud noise.

आकाश उछलते मगरमच्छों और बड़े चलते वस्तुओं से ढका हुआ है। लहरें एक-दूसरे से टकरा रही हैं, जो एक जोरदार आवाज बना रही हैं।

7.71.34

तरत्तरलमातङ्गफूत्कारा धौतभास्कराः । अन्योन्यवेल्लनव्यग्रप्रविदीर्णाद्रिभित्तयः ॥ ३४ ॥

tarattaralamātaṅgaphūtkārā dhautabhāskarāḥ | anyonyavellanavyagrapravadīrṇādrabhittayaḥ || 34 ||

The elephants are trumpeting loudly, and the sun is shining brightly. The mountains are being shaken and split by the waves.

हाथी जोर से चिंघाड़ रहे हैं, और सूर्य चमक रहा है। लहरें पहाड़ों को हिला रही हैं और उन्हें तोड़ रही हैं।

7.71.35

तटपर्वतलुण्टाकतरङ्गकरमण्डलाः । गर्जद्गिरिदरीगेहविशदुन्मत्तवारयः ॥ ३५ ॥

taṭaparvataluṇṭākataraṅgakaramaṇḍalāḥ | garjadgiridarīgehaviśadunmattavārayaḥ || 35 ||

The waves are breaking against the mountain peaks, and the caves are roaring loudly. The mad elephants are being driven away.

लहरें पहाड़ी चोटियों से टकरा रही हैं, और गुफाएँ जोर से गर्जना कर रही हैं। पागल हाथी भगा दिए जा रहे हैं।

7.71.36

भूपाः परपुराक्रान्ता लग्ना इव हतारयः। तारारवरणद्गेहविद्रावितनभश्चराः ॥ ३६ ॥

bhūpāḥ parapurākrāntā lagnā iva hatārayaḥ| tārāravaraṇadgehavidrāvitanabhaścarāḥ || 36 ||

Kings who have conquered enemy cities, as if they have defeated their enemies, and whose sky-dwellers (stars) have been driven away from their star-covered homes.

जो राजा शत्रु नगरों पर विजय प्राप्त कर चुके हैं, मानो उन्होंने अपने शत्रुओं को हरा दिया हो, और जिनके तारों से ढके घरों से आकाश के निवासी (तारे) भगा दिए गए हों।

7.71.37

प्रलुण्ठितवनव्यूहलूनकाननिताम्बराः। सपक्षपर्वताकारतरङ्गापूरिताम्बराः ॥ ३७ ॥

praluṇṭhitavanavyūhalūnakānanitāmbarāḥ| sapakṣaparvatākārataraṅgāpūritāmbarāḥ || 37 ||

Those whose forest formations have been plundered, with the sky filled with the sound of lamenting forests, and whose sky is filled with waves resembling mountains with wings.

जिनकी वन व्यूह रचनाएँ लूट ली गई हैं, आकाश विलाप करते वनों की आवाज से भरा हुआ है, और जिनका आकाश पंखों वाले पर्वतों जैसी लहरों से भरा हुआ है।

7.71.38

महारवमरुच्छिन्नकल्लोलाचलचालिताः। चञ्चत्तीरगिरिव्रातपतत्तटरटज्जलाः ॥ ३८ ॥

mahāravamarucchinnakallolācalacālitāḥ| cañcattīragirivrātapatattaṭaraṭajjalāḥ || 38 ||

Those who are shaken by the great roar that cuts through the waves and mountains, with the water of the trembling riverbanks and mountains falling and splashing.

जो लहरों और पर्वतों को काटते हुए महान गर्जन से हिले हुए हैं, जिनके कंपित नदी किनारों और पर्वतों का पानी गिर रहा है और छिटक रहा है।

7.71.39

उल्लसद्विपुलावर्तप्रोत्क्षिप्तमकरोत्कराः। विमज्जन्निस्तलावर्तनिगीर्णगिरिकन्दराः ॥ ३९ ॥

ullasadvipulāvartaprotkṣiptamakarotkarāḥ| vimajjannistalāvartanigīrṇagirikandarāḥ || 39 ||

Those who have thrown up large whirlpools and lifted up crocodiles, and whose mountain caves are submerged by the whirlpools.

जिन्होंने बड़े भंवर उठाए हैं और मगरमच्छों को उठाया है, और जिनकी पर्वत की गुफाएँ भंवरों से डूब गई हैं।

7.71.40

दरीदलनसंप्राप्तदृषद्दशनदन्तुराः। श्रृङ्गलम्बिदरीप्रान्तमग्नवीचिजलेभकाः ॥ ४० ॥

darīdalanasamprāptadṛṣaddaśanadanturāḥ| śṛṅgalambidarīprāntamagnavīcijalebhakāḥ || 40 ||

Those who have reached the splitting of rocks and are distressed by the sight of teeth, with the edges of their caves hanging and engulfed by the waves of water.

जो चट्टानों के फटने तक पहुँच गए हैं और दाँतों के दृश्य से व्याकुल हैं, जिनकी गुफाओं की छोर लटक रही हैं और पानी की लहरों से घिरी हुई हैं।

7.71.41

व्यालोलवलनाक्रान्तविटपिप्रोतकच्छपाः । यमेन्द्रवसुधावाहैरुत्कर्णैर्भयविह्वलैः ॥ ४१ ॥

vyālolavalanākrāntaviṭapiprotakacchapaḥ | yamendravasudhāvāhairutkarṇairbhayavihvalaiḥ || 41 ||

The trees, swaying with the wind, have their branches laden with tortoises, and they are terrified by the loud sounds of Yama, Indra, and the earth, which are carried by the winds.

वृक्ष हवा के झोंके से लहरा रहे हैं, उनकी डालियाँ कछुओं से भरी हुई हैं, और वे यम, इंद्र और पृथ्वी की आवाजों से, जो हवा द्वारा लाई जाती हैं, डर गए हैं।

7.71.42

श्रूयमाणपतच्छैलतटीकटकटारवाः । मत्स्यपुच्छच्छटाच्छिन्नमग्नोन्मग्नद्रुताद्रयः ॥ ४२ ॥

śrūyamāṇapatacchailataṭīkaṭakaṭāravaḥ | matsyapucchacchataṭācchinnamagnonmagnadrutādrayaḥ || 42 ||

The sounds of the falling rocks and the clattering of the shore are heard, and the fish tails are cut, immersed, and quickly moving in the water.

गिरते हुए पत्थरों और तट की खड़खड़ाहट की आवाजें सुनाई देती हैं, और मछलियों की पूँछें कटी हुई, डूबी हुई, और तेजी से पानी में चल रही हैं।

7.71.43

लीलालूनवनव्यूहशीतलासारवारयः । प्रज्वलद्वडवावह्निज्वालावलिमिलज्जलाः ॥ ४३ ॥

līlālūnavanavyūhaśītalāsāravārayaḥ | prajvaladvadavāvahinjvālāvalimilajjalāḥ || 43 ||

The cool essence of the forest is playfully stolen, and the waters are mixed with the blazing flames of the forest fire.

वन की ठंडी सार खेल-खेल में चुरा ली गई है, और पानी वन अग्नि की ज्वालाओं से मिला हुआ है।

7.71.44

सरसेन विभोर्नाशैर्विशङ्कितमहानलाः । मिलच्छिखरिमालाग्रजलमातङ्गयोधिनः ॥ ४४ ॥

sarasena vibhornāśairviśaṅkitamahānalāḥ | milacchikharimālāgrajalamātaṅgayodhinaḥ || 44 ||

With the destruction of the lord's lake, the great fire is feared, and the water at the peak of the mountain range is fought by the elephants.

भगवान के सरोवर के नाश से महान अग्नि का भय है, और पर्वत श्रृंखला की चोटी पर पानी हाथियों द्वारा लड़ा जा रहा है।

7.71.45

नृत्यन्तीव तरङ्गौघैर्जलावलनवेधिनः । जलाचलाचलान्योन्यसंघट्टस्फोटपण्डिताः ॥ ४५ ॥

nṛtyantīva taraṅgaudhairjalāvalanavedhinaḥ | jalācalācalānyonyasaṅghaṭṭasphoṭapaṇḍitāḥ || 45 ||

The waves seem to be dancing, piercing the water and the mountains, and they are skilled in the clashing and bursting sounds with each other.

तरंगें नृत्य करती हुई प्रतीत होती हैं, पानी और पर्वतों को चीरती हुई, और वे एक-दूसरे से टकराने और फटने की आवाजों में निपुण हैं।

7.71.46

बृहद्गिरिवनव्रातप्राणिमण्डलमण्डिताः । उड्डामरवनेमेन्द्रभेरीवादनभासुरैः ॥ ४६ ॥

bṛhadgirivanavrātaprāṇimaṇḍalamaṇḍitāḥ | uḍḍāmaravanemendrabherīvādanabhāsuraiḥ || 46 ||

The vast forest, adorned with circles of animals performing penance, resounded with the splendid sounds of drums and conches.

विशाल वन, जो तपस्वी जीवों के मण्डलों से सुशोभित था, डमरू और शंखों की मधुर ध्वनि से गूंज उठा।

7.71.47

असुरैरिव पातालं कल्लोलैरलमाकुलाः । अथोदपतदुन्नासदिङ्नागवदनध्वनिः ॥ ४७ ॥

asurairiva pātālaṃ kallolairalamākulāḥ | athodapatadunnāsadiṅnāgavadanadhvaniḥ || 47 ||

As if the underworld was disturbed by demons, the waves were greatly agitated. Then, a loud sound like the roar of a dragon echoed.

मानो पाताल लोक असुरों से व्याकुल हो गया था, लहरें बहुत उद्वेलित हो गईं। फिर, एक जोरदार ध्वनि जैसे ड्रैगन की गर्जना गूंजी।

7.71.48

पातालतलताल्वन्तर्विस्फोटामोटनोद्भटः । चञ्चलाचलकीलोर्वी चचाल क्षणचालिता ॥ ४८ ॥

pātālatalatālvantarvisphoṭāmoṭanodbhataḥ | cañcalācalakīlorvī cacāla kṣaṇacālitā || 48 ||

The underworld, with its deepest layers bursting open, caused the restless mountain peaks to tremble momentarily.

पाताल लोक की गहरी तहें फट गईं, जिससे अस्थिर पर्वत शिखर क्षणिक कंपित हो गए।

7.71.49

लोला शैवालवल्लीव व्यालोलाम्भोधिलङ्घिता । अथ दुर्वारनिर्घोषनिर्वाताडम्बरान्विता ॥ ४९ ॥

lolā śaivālavallīva vyālolāmbhodhilaṅghitā | atha durvāranirghoṣanirvātāḍambarānvitā || 49 ||

The swaying algae, like a vine, were crossed by the turbulent ocean. Then, the unbearable roar of the wind and the clouds enveloped everything.

लहराती शैवाल, जैसे एक लता, उथले समुद्र द्वारा पार कर ली गई। फिर, असहनीय हवा और बादलों की गर्जना ने सब कुछ ढंक लिया।

7.71.50

पुस्फोटेव पतन्ती द्यौर्दिशां पतिरवारवैः । आवर्तवलनाकाराः केतवः पेतुरम्बरात् ॥ ५० ॥

pusphoṭeva patantī dyaurdiśāṃ patiravāravaiḥ | āvartavalanākārāḥ ketavaḥ peturambarāt || 50 ||

The sky, as if bursting, fell with the loud sounds of the lords of the directions. The banners, resembling whirlpools, fell from the sky.

आकाश, मानो फट गया हो, दिशाओं के स्वामियों की जोरदार ध्वनि के साथ गिरा। भंवर जैसी ध्वजाएँ आकाश से गिरीं।

7.71.51

हेमरत्नमया मुक्ताः सिन्दूरभुजगा इव । ककुब्भ्यो नभसो भूमेरुदगुर्दग्धदिक्तटाः ॥ ५१ ॥

hemaratnamayā muktāḥ sindūrabhujagā iva | kakubbhyo nabhaso bhūmerudagurdagdhadiktatāḥ || 51 ||

The pearls, which were like red snakes, shone like gold and gems, and from the directions of the sky, they appeared as if the earth was burning.

मोती जो लाल साँपों के समान थे, सोने और रत्नों के समान चमक रहे थे, और आकाश की दिशाओं से ऐसा लग रहा था कि पृथ्वी जल रही है।

7.71.52

चलज्ज्वालाजटाटोपा विविधोत्पातपङ्कयः । पृथ्व्यादीन्यसुरादीनि ब्रह्मोन्मुक्तानि सर्वतः ॥ ५२ ॥

calajjvālājaṭāṭopā vividhotpātapaṅkayaḥ | pṛthvyādīnyasurādīni brahmonmuktāni sarvataḥ || 52 ||

The moving flames and the matted locks of hair, along with various calamities, were released from the earth and other elements by the demons, and they spread everywhere.

चलती हुई ज्वालाएँ और उलझे हुए बाल, विभिन्न आपदाओं के साथ, असुरों द्वारा पृथ्वी और अन्य तत्वों से छोड़े गए थे, और वे सब ओर फैल गए।

7.71.53

द्विविधानि महाभूतान्यलं संक्षोभमाययुः । चन्द्रार्कानिलशक्राग्नियमाः कोलाहलाकुलाः ॥ ५३ ॥

dvividhāni mahābhūtānyalaṃ saṃkṣobhamāyayuḥ | candrārkānilśakrāgniyamāḥ kolāhalākulāḥ || 53 ||

The great elements, which are of two kinds, caused immense disturbance. The moon, sun, wind, Indra, fire, and Yama were all in a state of uproar.

दो प्रकार के महाभूत, बहुत बड़ी उथल-पुथल पैदा कर रहे थे। चन्द्रमा, सूर्य, वायु, इन्द्र, अग्नि और यम सभी उथल-पुथल की स्थिति में थे।

7.71.54

परिपातपरा आसन्ब्रह्मलोकगतेश्वराः । कम्पैः कटकटारावपतत्पादपपङ्क्तयः ॥ ५४ ॥

paripātaparā āsanbrahmalokagateśvarāḥ | kampaiḥ kaṭakaṭārāvapatatpādapapaṅkayaḥ || 54 ||

The lords who had gone to Brahmaloka were overwhelmed by calamities. With tremors, there was a sound of cracking, and the trees fell down.

ब्रह्मलोक चले गए ईश्वर आपदाओं से घिर गए थे। कंपन के साथ, एक चटकने की आवाज हुई, और पेड़ गिर गए।

7.71.55

भूमेरन्वभवन्भूरिदोलान्दोलनमद्रयः । भूकम्पलोलकैलासमेरुमन्दरकन्दराः । पेतुः कल्पतरून्मुक्ता रक्तस्तबकवृष्टयः ॥ ५५ ॥

bhūmeranvabhavanbhūridolāndolanamadrayaḥ | bhūkampalolakailāsameurumandarakandarāḥ | petuḥ kalpatarūnmuktā raktastabakavṛṣṭayaḥ || 55 ||

The earth trembled greatly, and there was a violent shaking. The mountains of Kailasa, Meru, and Mandara collapsed, and the wish-fulfilling trees fell, releasing a shower of red flowers.

पृथ्वी बहुत काँपी, और एक भयंकर कंपन हुआ। कैलास, मेरु और मंदर पर्वत गिर गए, और कल्पवृक्ष गिरे, जिससे लाल फूलों की वर्षा हुई।

7.71.56

लोकान्तराद्रिपुरवारिधिकाननान्तमुत्पातकल्पपवनेन मिथो हतानाम् । कोलाहलैर्जगदभूत्प्रविकीर्णशीर्णं पूर्णार्णवे त्रिपुरपूर इवाभिपाती ॥ ५६ ॥

lokāntarādripuravāridhikānanāntamutpātakalpapavanena mitho hatānām |
kolāhalairjagadabhūtpravikīrṇaśīrṇaṃ pūrṇārṇave tripurapūra ivābhipātī || 56 ||

In the world beyond, the mountains, cities, oceans, and forests were destroyed by the calamitous winds, and the universe was filled with cries, shattered, and overwhelmed like the city of Tripura by the full ocean.

दूसरे लोक में, पर्वत, नगर, समुद्र और वन आपदा की हवाओं से नष्ट हो गए, और ब्रह्मांड चीखों से भर गया, टूट गया, और पूर्ण समुद्र के समान त्रिपुर नगर पर आक्रमण करने लगा।

Chapter 72

7.72.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथाकृष्टवति प्राणान्स्वयंभुवि नभोभवः । विराडात्मनि तत्याज वातस्कन्धस्थितः स्थितिम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athākṛṣṭavati prāṇānsvayaṃbhuvinabhobhavaḥ | virāḍātmani tatyāja vātaskandhasthitaḥ sthitim || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then, when the life-breaths were drawn in by the self-existent Brahma, the wind-born one left his position in the cosmic form.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, जब स्वयंभू ब्रह्मा ने प्राणों को खींचा, वायु-जन्म वाले ने विराट् आत्मा में अपनी स्थिति छोड़ दी।

7.72.2

ते हि तस्य किल प्राणास्तेन क्रान्तेषु तेष्वपि । ऋक्षचक्रे स्थितिं कोऽन्यो धत्ते भूतैकधारिणीम् ॥ २ ॥

te hi tasya kila prāṇāstenakrānteṣuteṣvapi | ṛkṣacakre sthitiṃ ko'nyodhatte bhūtaikadhāriṇīm || 2 ||

Indeed, those life-breaths of his, even when they are drawn in by him, who else can hold the stability of the constellation wheel, the sole supporter of beings?

वास्तव में, उसके वे प्राण, जब वे उसके द्वारा खींचे जाते हैं, फिर भी, ऋक्षचक्र की स्थिति को कौन और धारण कर सकता है, जो प्राणियों का एकमात्र सहारा है?

7.72.3

वातस्कन्धे समाक्रान्ते ब्रह्मणा प्राणमारुते । समं गन्तुं परित्यज्य संस्थितिं क्षोभमागते ॥ ३ ॥

vātaskandhe samākrānte brahmaṇā prāṇamārute | samaṃ gantuṃ parityajya saṃsthitiṃ kṣobhamāgate || 3 ||

When the wind-pillar is fully pervaded by Brahma's life-breath, abandoning the state of equilibrium, it attains agitation.

जब वायु-स्तंभ पूरी तरह से ब्रह्मा के प्राणों से व्याप्त हो जाता है, संतुलन की स्थिति को छोड़कर, वह क्षोभ की स्थिति को प्राप्त होता है।

7.72.4

निराधाराः सवाताग्निदाहोल्मुकवदापतन् । व्योम्नस्तारास्तरोः पुष्पनिकरा इव भूतले ॥ ४ ॥

nirādhārāḥ savātāgnidāholmukavadāpatan | vyomnastārāstaroḥ puṣpanikarā iva bhūtale || 4 ||

Without support, like the falling of a burning flame with wind, the stars from the sky fall like flower clusters to the earth.

बिना सहारे के, जैसे हवा के साथ जलती हुई लौ का गिरना, आकाश से तारे फूलों के गुच्छों की तरह पृथ्वी पर गिरते हैं।

7.72.5

कालपाकचलन्मूला जगत्खण्डफलालयाः । प्रशान्तपवनाधारा विमानावलयोऽपतन् ॥ ५ ॥

kālapākacalanmūlā jagatkhaṇḍaphalālayāḥ | praśāntapavanādhārā vimānāvalayo'patan || 5 ||

Rooted in the movement of time's ripening, the abodes of the world's fragmented fruits, supported by the tranquil wind, the celestial chariots fall.

समय के परिपक्वता की गति में जड़े हुए, दुनिया के टूटे फलों के निवास, शांत हवा के सहारे, दिव्य रथ गिरते हैं।

7.72.6

प्रलयोन्मुखतां याते ब्राह्मे संकल्पनेन्धने । सिद्धानां गतयः शेमुरिद्धानामर्चिषामिव ॥ ६ ॥

pralayonmukhatāṃ yāte brāhme saṃkalpanendhane | siddhānāṃ gatayaḥ śemuriddhānāmarciṣāmiva || 6 ||

When the Brahma's resolve, which is the fuel for the dissolution, is about to occur, the paths of the perfected beings will be like the flames of the sacrificial fire.

जब ब्रह्मा का संकल्प, जो प्रलय का ईंधन है, होने वाला हो, तब सिद्ध पुरुषों के मार्ग यज्ञ की अग्नि की लपटों की तरह होंगे।

7.72.7

प्रभ्रमन्त्योऽम्बरे कल्पमारुतैस्तनुतूलवत् । स्वशक्त्यपचये मूकाः सिद्धसंततयोऽपतन् ॥ ७ ॥

prabhramantyo'mbare kalpamārutaitstanutūlavat | svaśaktyapacaye mūkāḥ siddhasaṃtatayo'patan || 7 ||

Wandering in the sky like cotton blown by the winds of the aeon, the perfected beings, powerless, fall silent in succession.

आकाश में कल्प की हवाओं द्वारा उड़े हुए रूई की तरह भटकते हुए, शक्तिहीन सिद्ध पुरुष एक के बाद एक मौन होकर गिरते हैं।

7.72.8

संकल्पद्रुमजालानि सेन्द्रादिनगराणि च । पेतुर्भूकम्पलोलस्य शिरांस्यमरभूभृतः ॥ ८ ॥

saṃkalpadrumajālāni sendrādinagarāṇi ca | peturbhūkampalolasya śirāṃsyamarabhūbhṛtaḥ || 8 ||

The networks of wish-fulfilling trees and the cities of Indra and other gods fell like the trembling earth's peaks from the abode of the immortals.

इच्छापूर्ति वृक्षों के जाल और इंद्र तथा अन्य देवताओं के नगर अमर लोक से कांपती हुई पृथ्वी के शिखरों की तरह गिरे।

7.72.9

श्रीराम उवाच । चिति संकल्पमात्रात्मा विराड् ब्रह्मा जगद्वपुः । किमङ्गं तस्य भूलोकः किं स्वर्गः किं रसातलम् ॥ ९ ॥

śrīrāma uvāca | citi saṃkalpamātrātmā virāḍ brahmā jagadvapuḥ | kimangaṃ tasya bhūlokaḥ kiṃ svargaḥ kiṃ rasātalam || 9 ||

Shri Rama said: O Chiti, the Supreme Being who is the embodiment of resolve, the cosmic form, Brahma, the body of the universe, what is the earth to Him? What is heaven? What is the underworld?

श्री राम ने कहा: हे चिति, जो संकल्प का आत्मा, विराट्, ब्रह्मा, ब्रह्मांड का शरीर है, उसके लिए पृथ्वी क्या है? स्वर्ग क्या है? रसातल क्या है?

7.72.10

कथमेतानि चाङ्गानि ब्रह्मंस्तस्य स्थितानि च । कथं वा सोऽन्तरे तस्य स्वस्यैव वपुषः स्थितः ॥ १० ॥

kathametāni cāṅgāni brahmaṃstasya sthitāni ca | kathaṃ vā so'ntare tasya svasyeva vapuṣaḥ sthitaḥ || 10 ||

How are these parts situated in Brahma? How is He situated within His own form?

ये अंग ब्रह्मा में कैसे स्थित हैं? वह अपने ही रूप में कैसे स्थित है?

7.72.11

ब्रह्मा संकल्पमात्रात्मा निराकृतिरिदं स्थितम् । जगदित्येव जातो मे निश्चयः कथयेतरत् ॥ ॥ ११ ॥

brahmā saṃkalpamātrātmā nirākṛtiridaṃ sthitam | jagadityeva jāto me niścayaḥ kathayetarat || 11 ||

Brahma, whose nature is mere will, is formless and established in this world | Thus, I have come to the conclusion that this world is indeed Brahma || 11 ||

ब्रह्मा, जिसका स्वभाव केवल इच्छा है, निराकार है और इस जगत में स्थित है | इसलिए, मैंने यह निश्चय किया है कि यह जगत वास्तव में ब्रह्मा है || ११ ||

7.72.12

श्रीवसिष्ठ उवाच । आदौ तावदिदं नासन्न सदास्ते निरामयम् । चिन्मात्रपरमाकाशमाशाकोशैकपूरकम् ॥ ॥ १२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ādau tāvadidaṃ nāsann na sadāste nirāmayam | cinmātraparamākāśamāśākośaikapūrakam || 12 ||

Vasishtha said: In the beginning, this was not, nor was it ever existent, free from defects | It was the supreme space of pure consciousness, filled with the sheath of hope alone || 12 ||

वसिष्ठ ने कहा: आदि में, यह नहीं था, न ही यह कभी अस्तित्व में था, दोषरहित | यह शुद्ध चेतना का परम आकाश था, आशा के कोश से भरा हुआ || १२ ||

7.72.13

तत्स्वामाकाशतां चैतच्चेत्यमित्यवबुध्यते । स्वरूपमत्यजन्नित्यं चित्त्वाद्भवति चेतनम् ॥ ॥ १३ ॥

tatsvāmākāśatāṃ caitaccetyamityavabudhyate | svarūpamatyajannityaṃ cittvādbhavati cetanam || 13 ||

That supreme space is perceived as the individual consciousness | Always abandoning its true nature, it becomes conscious due to the mind || 13 ||

वह परम आकाश व्यक्तिगत चेतना के रूप में ग्रहण किया जाता है | हमेशा अपने वास्तविक स्वरूप को त्यागकर, यह मन के कारण चेतन बन जाता है || १३ ||

7.72.14

विद्धि तच्चेतनं जीवं सघनत्वान्मनः स्थितम् । एतावति स्थितिजाले न किंचित्साकृति स्थितम् ॥ ॥ १४ ॥

viddhi taccetanaṃ jīvaṃ saghanatvānmanaḥ sthitam | etāvati sthiti jāle na kiṃcitsākṛti sthitam || 14 ||

Know that consciousness to be the individual soul, situated in the mind due to its density | In this web of existence, nothing with form exists || 14 ||

जानो कि चेतना वह जीव है, जो मन में अपनी घनत्व के कारण स्थित है | इस अस्तित्व के जाल में, कोई रूप वाली चीज नहीं है || १४ ||

7.72.15

शुद्धं व्योमैव चिद्व्योम स्थितमात्मनि पूर्ववत् । यदेतत्प्रतिभातं तु तदन्यत्र शिवात्ततः ॥ ॥ १५ ॥

śuddhaṃ vyomaiava cidvyoma sthitamātmani pūrvavat | yadetatpratibhātaṃ tu tadanyatra śivāttataḥ || 15 ||

The pure space of consciousness is established in the self as before | Whatever appears is different from Shiva || 15 ||

शुद्ध चेतना का आकाश आत्मा में पहले की तरह स्थित है | जो कुछ भी प्रकट होता है, वह शिव से अलग है || १५ ||

7.72.16

अथ तन्मन आभोगि भाविताहंकृति स्फुरत् संकल्पात्मकमाकाशमास्ते स्तिमितमक्षयम् ॥ १६ ॥

atha tanmana ābhogi bhāvitāhaṃkṛti sphurat saṃkalpātmakamākāśamāste stimitamakṣayam || 16 ||

Then, the mind, immersed in that, shines with the ego, and the space of resolution remains still and eternal.

तब, वह मन, उसमें डूबा हुआ, अहंकार से चमकता है, और संकल्प का आकाश शांत और अनंत बना रहता है।

7.72.17

तत्संकल्पचिदाभासनभोऽहमिति भावितम् असत्तमेवानुभवत्संनिवेशं खमेव खे ॥ १७ ॥

tatsaṃkalpacidābhāsanabho'hamiti bhāvitam asattamevānubhavatsaṃniveśaṃ khameva khe || 17 ||

That resolution, reflecting the consciousness, is experienced as 'I am this', and the pure space is realized as space itself.

वह संकल्प, चेतना को प्रतिबिंबित करता है, और 'मैं यह हूँ' के रूप में अनुभव किया जाता है, और शुद्ध आकाश को आकाश ही के रूप में अनुभव किया जाता है।

7.72.18

वेत्ति भावितमाकारं पश्यत्यनुभवत्यपि संकल्पकात्मकं शून्यमेव देह इति स्थितम् ॥ १८ ॥

vetti bhāvitamākāraṃ paśyaty anubhavatyapi saṃkalpakātmakaṃ śūnyameva deha iti sthitam || 18 ||

One knows the form that is experienced, sees it, and experiences it as the resolution itself, which is empty and is the body.

एक जानता है और देखता है उस रूप को जो अनुभव किया जाता है, और संकल्प के रूप में अनुभव करता है, जो खाली है और शरीर है।

7.72.19

शून्यमेव यथाकारि संकल्पनगरं भवान् पश्यत्येवमजो देहं खे खमेवानुभूतवान् ॥ १९ ॥

śūnyameva yathākāri saṃkalpanagaraṃ bhavān paśyatyevamajo dehaṃ khe khamevānubhūtavān || 19 ||

The Lord sees the body as empty and as the city of resolution, and experiences the space as space itself.

भगवान शरीर को खाली और संकल्प के नगर के रूप में देखते हैं, और आकाश को आकाश ही के रूप में अनुभव करते हैं।

7.72.20

संविदो निर्मलत्वात्स यावदित्थं तथाविधम् अनुभूयानुभवनं स्वेच्छयैवोपशाम्यति ॥ २० ॥

saṃvido nirmalatvāt sa yāvaditthaṃ tathāvidham anubhūyānubhavanaṃ svecchayaivopaśāmyati || 20 ||

Due to the purity of consciousness, one experiences everything as it is, and then by one's own will, one attains peace.

चेतना की पवित्रता के कारण, एक सब कुछ को जैसा है उसी रूप में अनुभव करता है, और फिर अपनी इच्छा से, शांति प्राप्त करता है।

7.72.21

यदा तत्त्वपरिज्ञानमस्मदादेस्तदाऽऽततम् । इदं संसरणं विद्धि शून्यं सत्यमिव स्थितम् ॥ २१ ॥

yadā tattvaparijñānamasmadādestadā''tatam | idaṃ saṃsaraṇaṃ viddhi śūnyaṃ satyamiva sthitam || 21 ||

When there is true knowledge of the Self, then this worldly existence is known to be empty and unreal like the truth.

जब आत्मा के सच्चे ज्ञान की प्राप्ति होती है, तब यह संसार शून्य और असत्य के समान जाना जाता है।

7.72.22

यथाभूतपरिज्ञानादत्र शाम्यति वासना । अद्वैतान्निरहंकारात्ततो मोक्षोऽवशिष्यते ॥ २२ ॥

yathābhūtaparijñānādatra śāmyati vāsanā | advaitānnirahankārāttato mokṣo'vaśiṣyate || 22 ||

From the true knowledge of reality, the desires here are pacified. From non-duality and the absence of ego, liberation is attained.

वास्तविक ज्ञान से यहाँ वासनाएँ शांत हो जाती हैं। अद्वैत और अहंकार के अभाव से मोक्ष प्राप्त होता है।

7.72.23

एवमेष स यो ब्रह्मा स एवेदं जगत्स्थितम्। विराजो ब्रह्मणो राम देहो यस्तदिदं जगत्॥ २३॥

evameṣa sa yo brahmā sa evedaṃ jagatsthitam | virājo brahmaṇo rāma deho yastadidaṃ jagat || 23 ||

Thus, this Brahman, who is the supreme, is established in this world. O Rama, the body of Brahman, which is the universe, is this world.

इस प्रकार, यह ब्रह्मा, जो परम है, इस जगत में स्थित है। हे राम, ब्रह्मा का शरीर, जो ब्रह्माण्ड है, यह जगत है।

7.72.24

संकल्पाकाशरूपस्य तस्य या भ्रान्तिरुत्थिता। तदिदं जगदाभाति तद्ब्रह्माण्डमुदाहृतम्॥ २४॥

saṃkalpākāśarūpasya tasya yā bhrāntirutthitā | tadidaṃ jagadābhāti tadbrahmāṇḍamudāhṛtam || 24 ||

The delusion that arises from the form of the mind's imagination appears as this world. That is called the universe.

मन की कल्पना के रूप से उत्पन्न भ्रम यह जगत के रूप में दिखाई देता है। वह ब्रह्माण्ड कहलाता है।

7.72.25

सर्वमाकाशमेवेदं संकल्पकलनात्मकम्। वस्तुतस्त्वस्ति न जगत्त्वत्तामत्ते न च क्वचित्॥ २५॥

sarvamākāśamevedaṃ saṃkalpakalanātmakam | vastutastvasti na jagattvattāmatte na ca kvacit || 25 ||

All this is indeed space, of the nature of imagination. In reality, there is no world, nor is there any individuality anywhere.

यह सब कुछ आकाश ही है, जो कल्पना के स्वरूप का है। वास्तव में, जगत नहीं है, न ही कहीं कोई व्यक्तित्व है।

7.72.26

क्वचिन्मात्रेऽमले व्योम्नि कथं वा केन वा जगत् किं जायते किमत्रास्ति कारणं सहकारि यत्॥ २६॥

kva cin mātre'male vyomni kathaṃ vā kena vā jagat kiṃ jāyate kimatrāsti kāraṇaṃ sahakāri yat || 26 ||

In the pure, unblemished sky, how and by whom is the world created? What is born here, and what exists? What is the cause and the co-cause?

शुद्ध, निर्दोष आकाश में, कैसे और किसके द्वारा यह संसार उत्पन्न हुआ? यहाँ क्या उत्पन्न होता है, और क्या है? कारण और सहकारी क्या है?

7.72.27

अतोऽलीकमिदं जातमलीकं परिदृश्यते अलीकं स्वदतेऽलोकमेवं पश्यति शून्यकम्॥ २७॥

ato'līkamidaṃ jātamalīkaṃ paridṛśyate alīkaṃ svadate'lokamevaṃ paśyati śūnyakam || 27 ||

Therefore, this world is born from illusion, and illusion is seen. The world tastes illusion, and thus it sees emptiness.

इसलिए, यह संसार भ्रम से उत्पन्न होता है, और भ्रम देखा जाता है। संसार भ्रम का स्वाद लेता है, और इस प्रकार शून्यता देखता है।

7.72.28

जगदादिकया भासा चिन्मात्रं स्वदते स्वतः आत्मनात्माम्बरे द्वैते स्पन्दनेनेव मारुतः॥ २८॥

jagadādikayā bhāsā cinmātraṃ svadate svataḥ ātmanātmāmbare dvaites panda neneva mārutaḥ || 28 ||

By the light of the beginning of the world, pure consciousness tastes itself. In the duality of the self and the sky, it vibrates like the wind.

संसार की आरम्भिक भास से, शुद्ध चेतना स्वयं को स्वाद लेती है। आत्मा और आकाश की द्वैत में, यह वायु की तरह स्पंदित होती है।

7.72.29

इदं किंचिन्न किंचिद्वा द्वैताद्वैतविवर्जितम् चिदाकाशं जगद्विद्धि शून्यमच्छं निरामयम् ॥ २९ ॥

idaṃ kiñcinna kiñcidvā dvaitādvaitavivarjitam cidākāśaṃ jagadviddhi śūnyamacchaṃ nirāmayam || 29 ||

This is something or nothing at all, devoid of duality and non-duality. Know the world as the sky of consciousness, empty, pure, and free from afflictions.

यह कुछ है या कुछ नहीं, द्वैत और अद्वैत से रहित। संसार को चेतना के आकाश के रूप में जानो, जो शून्य, शुद्ध और विकारों से मुक्त है।

7.72.30

शान्ताशेषविशेषोऽहं तेन राघव संस्थितः सन्नेवासन्निवातस्त्वमेवमेवास्व निर्ममः ॥ ३० ॥

śāntāśeṣaviśeṣo'haṃ tena rāghava saṃsthitaḥ sannevāsannivātastvamevamevāsva nirmamaḥ || 30 ||

I am the peaceful one, devoid of all distinctions. Therefore, O Raghava, you are established in that state. You are both existent and non-existent, free from ego.

मैं शांत, सभी भेदों से रहित हूँ। इसलिए, हे राघव, तुम उस अवस्था में स्थित हो। तुम अस्तित्व और अनस्तित्व दोनों हो, अहंकार से मुक्त।

7.72.31

निर्वासनः शान्तमना मौनी विगतचापलः। सर्वं कुरु यथाप्राप्तं कुरु मा वात्र किं ग्रहः ॥ ३१ ॥

nirvāsanaḥ śāntamanā maunī vigatacāpalaḥ| sarvaṃ kuru yathāprāptaṃ kuru mā vātra kiṃ grahaḥ || 31 ||

One who is devoid of desires, with a peaceful mind, silent, and free from restlessness, should do everything as it comes, without any attachment.

जिसके मन में कोई इच्छा नहीं है, जिसका मन शांत है, जो मौन है और चापल से मुक्त है, वह सब कुछ जैसे आए उसी प्रकार करे, कोई आसक्ति न रखे।

7.72.32

अनादिनित्यानुभवो य एकः स एव दृश्यं न तु दृश्यमन्यत्। सत्यानुभूतेऽननुभूतयो याः सुविस्तृता दृश्यमहादृशस्ताः ॥ ३२ ॥

anādinityānubhavo ya ekaḥ sa eva dṛśyaṃ na tu dṛśyamanyat| satyānubhūte'nanubhūtayo yāḥ suvistṛtā dṛśyamahādṛśastāḥ || 32 ||

The eternal experience that is beginningless and endless is the only reality. It is not something that can be seen separately. The true experiences that are not experienced by others are vast and are seen by the great seers.

अनादि और अनंत अनुभव जो एक है, वही एकमात्र वास्तविकता है। यह कोई अलग देखा जाने वाला वस्तु नहीं है। जो अनुभव दूसरों द्वारा नहीं अनुभूत होते हैं, वे विस्तृत हैं और महान दृष्टाओं द्वारा देखे जाते हैं।

Chapter 73

7.73.1

श्रीराम उवाच । बन्धमोक्षजगद्बुद्धिर्न शून्या नापि सन्मयी । नास्तमेति न चोदेति किमप्याद्यमसौ किल ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bandhamokṣajagadbuddhirna śūnyā nāpi sanmayī | nāstameti na codeti kimapyādyamasau kila || 1 ||

Shri Rama said: The understanding of bondage, liberation, and the world is neither void nor real. It neither sets nor rises. There is no beginning to it.

श्री राम ने कहा: बंधन, मोक्ष और जगत की बुद्धि न शून्य है न ही सत्य है | यह न अस्त होती है न उदित होती है | इसका कोई आदि नहीं है |

7.73.2

उपदिष्टमिदं ब्रह्मंस्त्वया बुद्धमलं मया । भूयः कथय तृप्तिर्हि श्रृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥ २ ॥

upadiṣṭamidaṃ brahmaṃstvayā buddhamalaṃ mayā | bhūyaḥ kathaya tṛptirhi śrṛṇvato nāsti me'mṛtam || 2 ||

This has been taught by you, O Brahman, and understood by me. Please speak more, for there is no satisfaction in listening to the nectar.

यह आपने उपदेश दिया है, हे ब्रह्मन, और मैंने इसे समझ लिया है | कृपया और बताएं, क्योंकि अमृत सुनने में तृप्ति नहीं है |

7.73.3

सर्गादिसंभ्रमदृशः श्स्वयतादिदृशस्तथा । न काश्चन विभो सत्या असत्याश्च न काश्चन ॥ ३ ॥

sargādisaṃbhramadṛśaḥ śasvayatādidṛśastathā | na kāścana vibho satyā asatyāśca na kāścana || 3 ||

O Lord, those who see the creation and dissolution as real are deluded. Similarly, those who see eternity and such as real are also deluded. None of these views are true, nor are they false.

हे प्रभु, जो सृष्टि और प्रलय को सत्य मानते हैं, वे भ्रांत हैं | इसी प्रकार, जो नित्यता और अन्य को सत्य मानते हैं, वे भी भ्रांत हैं | इनमें से कोई भी दृष्टिकोण सत्य नहीं है, न ही असत्य है |

7.73.4

एवंस्थिते तु यत्सत्यं तत्सर्वं बुद्धवानहम् । तथापि भूयोबोधाय सर्गानुभव उच्यताम् ॥ ४ ॥

evaṃsthite tu yatsatyaṃ tatsarvaṃ buddhvānaham | tathāpi bhūyobodhāya sargānubhava ucyatām || 4 ||

In this situation, whatever is true, I have understood all of it. Nevertheless, for further enlightenment, please explain the experience of creation.

इस स्थिति में, जो कुछ भी सत्य है, उसे मैंने समझ लिया है | फिर भी, और अधिक बोध के लिए, सृष्टि के अनुभव की व्याख्या करें |

7.73.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । यदिदं दृश्यते किंचिज्जगत्स्थावरजङ्गमम् । सर्वं सर्वप्रकाराढ्यं देशकालक्रियादिमत् ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yadidaṃ dṛśyate kiṃcijjagatsthāvarajaṅgamam | sarvaṃ sarvaprakārāḍhyaṃ deśakālakriyādimat || 5 ||

Vasistha said: Whatever is seen in this world, whether moving or non-moving, is endowed with all kinds of attributes and is characterized by space, time, and action.

वसिष्ठ ने कहा: जो कुछ भी इस जगत में दिखाई देता है, चल या अचल, सभी प्रकार के गुणों से युक्त है और स्थान, काल और क्रिया से चिह्नित है |

7.73.6

तस्य नाशे महानाशे महाप्रलयनामनि । ब्रह्मोपेन्द्रमरुद्रुद्रमहेन्द्रपरिणामिनि ॥ ६ ॥

tasya nāśe mahānāśe mahāpralayanāmani | brahmopendramarudrudramahēndrapariṇāmini || 6 ||

In the great destruction, known as the great dissolution, which transforms Brahma, Vishnu, Shiva, and Indra.

महान विनाश में, जिसे महाप्रलय कहते हैं, जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव और इंद्र को परिवर्तित करता है।

7.73.7

शिष्यते शान्तमत्यच्छं किमप्यजमनादि सत् । यतो वाचो निवर्तन्ते किमन्यदवगम्यते ॥ ७ ॥

śiṣyatē śāntamatyacchaṃ kimapyajamanādi sat | yatō vācō nivartantē kimanyadavagamyatē || 7 ||

That which is peaceful, extremely pure, unborn, eternal, and from which words return, what else can be understood?

जो शांत, अत्यंत पवित्र, अजन्मा, अनादि और सत् है, जिससे वाणी लौटती है, उसके अलावा और क्या समझा जा सकता है?

7.73.8

सर्षपापेक्षया मेरुर्यथातिविततताकृतिः । तथाकाशमपि स्थूलं शून्यं सद्यदपेक्षया ॥ ८ ॥

sarṣapāpēkṣayā mēruryathātivitataākṛtiḥ | tathākāśamapi sthūlaṃ śūnyaṃ sadyadapēkṣayā || 8 ||

Just as Mount Meru appears vast compared to a mustard seed, so does the vast sky appear empty compared to the ultimate reality.

जैसे मेरु पर्वत सरसों के बीज के सापेक्ष अत्यंत विशाल दिखता है, वैसे ही विशाल आकाश परम सत्य के सापेक्ष शून्य दिखता है।

7.73.9

शैलेन्द्रापेक्षया सूक्ष्मा यथेमे त्रसरेणवः । तथा सूक्ष्मतरं स्थूलं ब्रह्माण्डं यदपेक्षया ॥ ९ ॥

śailēndrāpēkṣayā sūkṣmā yathēmē trasarēṇavaḥ | tathā sūkṣmataraṃ sthūlaṃ brahmāṇḍaṃ yadapēkṣayā || 9 ||

Just as dust particles are subtle compared to the king of mountains, so is the vast universe subtle compared to the ultimate reality.

जैसे धूल के कण पर्वतराज के सापेक्ष सूक्ष्म होते हैं, वैसे ही विशाल ब्रह्मांड परम सत्य के सापेक्ष सूक्ष्म है।

7.73.10

अमानकलिते सौम्ये काले परिणते चिरम् । शान्ते तस्मिन्परे व्योमन्याद्ये ह्यनुभवात्मनि ॥ १० ॥

amānakalitē saumyē kālē pariṇatē ciram | śāntē tasminparē vyōmanyādyē hyanubhavātmani || 10 ||

In the peaceful, eternal time, which has passed for a long period, that ultimate, primordial, experiential self is tranquil.

शांत, अनंत काल में, जो लंबे समय से बीत चुका है, वह परम, आद्य, अनुभवात्मक स्वयं शांत है।

7.73.11

असंकल्पो महाशान्तो दिक्कालैरमिताकृतिः । अन्तर्महांश्चिदाकाशो वेत्तीव परमाणुताम् ॥ ११ ॥

asaṃkalpo mahāśānto dikkālairamitākṛtiḥ | antarmahāṃścidākāśo vettīva paramāṇutām || 11 ||

The unconditioned, the great peace, the one whose form is unlimited by directions and time, the inner great space of consciousness, knows as it were the supreme subtlety.

असंकल्प, महाशान्त, जिसकी आकृति दिशा और काल से अमित है, अन्तर्महांश चिदाकाश, वह परम सूक्ष्मता को जानता है।

7.73.12

असत्यामेव तामन्तर्भावयन्स्वप्नवत्स्वतः । ततः स ब्रह्मशब्दार्थं वेत्ति चिद्रूपतां ताम् ॥ १२ ॥

asatyāmeva tāmantarbhāvayansvapnavatsvataḥ | tataḥ sa brahmaśabdārthaṃ vetti cidrūpatāṃ tatām || 12 ||

By contemplating that unreal state within oneself as if in a dream, one knows the meaning of the word Brahman as the nature of consciousness.

उस असत्य अवस्था को स्वयं में स्वप्न की तरह ध्यान करके, वह ब्रह्म शब्द के अर्थ को चेतना के स्वरूप के रूप में जानता है।

7.73.13

चिद्भावोऽनुभवत्यन्तश्चित्त्वाच्चिदणुतां निजाम् । तामेव पश्यतीवाथ ततो द्रष्टेव तिष्ठति ॥ १३ ॥

cidbhāvo'nubhavatyantaścittvāccidaṇutāṃ nijām | tāmeva paśyatīvātha tato draṣṭeva tiṣṭhati || 13 ||

The state of consciousness experiences within itself the subtlety of its own nature. It then sees that subtlety as if it were the seer itself.

चेतना की अवस्था स्वयं में अपने स्वरूप की सूक्ष्मता का अनुभव करती है। फिर वह उस सूक्ष्मता को देखती है जैसे कि वह द्रष्टा स्वयं हो।

7.73.14

यथा स्वप्ने मृतं पश्यत्येक एवात्मनात्मनि । मृत एव मृतेर्द्रष्टा तथा चिदणुरात्मनि ॥ १४ ॥

yathā svapne mṛtaṃ paśyatyeka evātmanātmani | mṛta eva mṛterdraṣṭā tathā cidaṇurātmani || 14 ||

Just as in a dream one sees oneself as dead, and the dead one is the seer, so too the subtle consciousness sees itself within itself.

जैसे स्वप्न में एक स्वयं को मृत देखता है, और मृत ही द्रष्टा होता है, वैसे ही सूक्ष्म चेतना स्वयं को स्वयं में देखती है।

7.73.15

ततश्चिद्भाव एषोऽन्तरेक एव द्वितामिव । पश्यन्स्वरूप एवास्ते द्रष्टृदृश्यमिव स्थितः ॥ १५ ॥

tataścidbhāva eṣo'ntareka eva dvitāmiva | paśyansvarūpa evāste draṣṭṛdṛśyamiva sthitaḥ || 15 ||

Therefore, this state of consciousness exists within as one, as if it were two. Seeing its own form, it remains as if it were the seer and the seen.

इसलिए, यह चेतना की अवस्था एक के रूप में अंतर में exist करती है, जैसे कि दो हों। अपने स्वरूप को देखते हुए, वह जैसे द्रष्टा और दृश्य के रूप में रहता है।

7.73.16

चिद्भावशून्य एवातिनिराकारोऽप्यणुं तनुम् । पश्यन्दृश्यमिवोदेति द्रष्टेव च तदा द्विताम् ॥ १६ ॥

cidbhāvaśūnya evātinirākāro'pyaṇuṃ tanum | paśyandṛśyamivodeti draṣṭeva ca tadā dvitām || 16 ||

Although devoid of the essence of consciousness, the extremely formless one appears as if seeing the seen and the seer, then duality arises.

चेतना के भाव से शून्य होने के बावजूद, अति निराकार वह अणु को तनु के रूप में देखता है, जैसे दृश्य और द्रष्टा को देखता है, तब द्वैत उत्पन्न होता है।

7.73.17

प्रकाशमणुमात्मानं पश्यंस्तदनुभावतः । उच्छूनतां चेतयते बीजमङ्कुरतामिव ॥ १७ ॥

prakāśamaṇumātmānaṃ paśyaṃstadanubhāvataḥ | ucchūnatāṃ cetayate bījamaṅkuratāmiva || 17 ||

Seeing the luminous atomic self, one experiences its subtlety, just as a seed experiences sprouting.

प्रकाशमान अणु आत्मा को देखकर, उसकी सूक्ष्मता का अनुभव होता है, जैसे बीज अंकुरित होता है।

7.73.18

देशकालक्रियाद्रव्यद्रष्टृदर्शनदृग्दृशः । अर्थान्तरस्वभावेन तिष्ठन्त्यनुदिताभिधाः ॥ १८ ॥

deśakālakriyādravyadraṣṭṛdarśanadṛgdṛśaḥ | arthāntarasvabhāvena tiṣṭhantyanuditābhidhāḥ || 18 ||

Space, time, action, substance, seer, seeing, vision, and the seen exist with their own distinct natures, unuttered.

देश, काल, क्रिया, द्रव्य, द्रष्टा, दर्शन, दृग्, और दृश्य अपने विशिष्ट स्वभाव के साथ अनुदित रूप में विद्यमान हैं।

7.73.19

चिदणुर्यत्र भातोऽसौ देशो मितिमुपागतः । यदा भातस्तदा कालो यद्भानं तत्क्रिया स्मृता ॥ १९ ॥

cidāṇuryatra bhāto'sau deśo mitimupāgataḥ | yadā bhātastadā kālo yadbhānaṃ tatkriyā smṛtā || 19 ||

Where the atomic consciousness shines, that place is limited. When it shines, that is time. What shines is called action.

जहाँ अणु चेतना प्रकाशित होती है, वह स्थान सीमित होता है। जब वह प्रकाशित होती है, तब वह समय है। जो प्रकाशित होता है, उसे क्रिया कहते हैं।

7.73.20

उपलब्धं विदुर्द्रव्यं द्रष्टृताप्युपलब्धता । आलोकनं दर्शनता दृगालोकनकारणम् ॥ २० ॥

upalabdhaṃ vidurdraavyaṃ draṣṭṛtāpyupalabdhatā | ālokanaṃ darśanatā dṛgālokanakāraṇam || 20 ||

The substance is known by its perception. The state of being a seer is also known by perception. Illumination is the cause of vision.

द्रव्य अपनी उपलब्धि से जाना जाता है। द्रष्टा होने की स्थिति भी उपलब्धि से जानी जाती है। आलोकन दर्शन का कारण है।

7.73.21

एवमुच्छूनता भाति मितानन्ताथ वा क्रमात् । असत्यैव नभस्येव नभोरूपैव निष्क्रमा ॥ २१ ॥

evamucchūnatā bhāti mitānantātha vā kramāt | asatyaiava nabhasyeva nabhorūpaiva niṣkramā || 21 ||

Thus, the emptiness appears as limited or unlimited in sequence | It is like the sky, which is unreal and has the form of the sky itself

इस प्रकार, शून्यता क्रमशः सीमित या असीमित प्रतीत होती है | यह आकाश की तरह है, जो असत्य है और आकाश के स्वरूप को धारण करता है

7.73.22

चिदणोर्भासनं भातं तत्प्रदेशेन देहगम् । येन पश्यति तच्चक्षुः संग्रहोऽक्षदृशामिति ॥ २२ ॥

cidāṇorbāsanaṃ bhātaṃ tatpradeśena dehagam | yena paśyati taccakṣuḥ saṃgraho'kṣadṛśāmiti || 22 ||

The radiance of consciousness appears in that region of the body | Through which one sees, that is the eye, the collector of the seers

चेतना की चमक उस शरीर के क्षेत्र में प्रतीत होती है | जिससे देखता है, वह आँख है, देखने वालों का संग्रहकर्ता

7.73.23

चिदणुप्रतिभासेऽन्तः प्रथमं नामवर्जितम् । तन्मात्रशब्दमेतेषामेतदाकाशरूपि तत् ॥ २३ ॥

cidāṇupratibhāse'ntaḥ prathamaṃ nāmavarjitam | tanmātraśabdameteṣāmetadākāśarūpi tat || 23 ||

In the reflection of consciousness, first there is the nameless | That subtle sound is the form of space for these

चेतना के प्रतिबिंब में, पहले नामहीन है | वह सूक्ष्म ध्वनि इनके लिए आकाश का रूप है

7.73.24

चिदणुप्रतिभाकाशपिण्ड एव घनस्थितिः । अनुसंधानविवशश्चेततीन्द्रियपञ्चकम् ॥ २४ ॥

cidāṇupratibhākāśapiṇḍa eva ghanasthitiḥ | anusaṃdhānavivaśaścetatīndriyapañcakam || 24 ||

The lump of the space of the reflection of consciousness is indeed the dense existence | Helplessly following the investigation, it thinks of the five senses

चेतना के प्रतिबिंब के आकाश का ढेर वास्तव में घनीभूत अस्तित्व है | अनुसंधान का अनुसरण करते हुए बेबसी में, यह पाँच इंद्रियों के बारे में सोचता है

7.73.25

एवं चिदणुसंधानं दृश्यपोषमुपैत्यलम् । तदेव ज्ञानमित्युक्तं बुद्धिरित्यभिधीयते ॥ २५ ॥

evaṃ cidāṇusaṃdhānaṃ dṛśyapoṣamupaityalam | tadeva jñānamityuktaṃ buddhiritiabhidhīyate || 25 ||

Thus, the investigation of the particle of consciousness attains the nourishment of the visible | That itself is called knowledge, it is said to be intelligence

इस प्रकार, चेतना के कण की अनुसंधान दृश्य का पोषण प्राप्त करती है | वही ज्ञान कहलाता है, यह बुद्धि कहलाती है

7.73.26

ततो मनस्तदारूढमहंकारपदं गतम् । देशकालपरिच्छेद इत्यङ्गीकृत आत्मना ॥ २६ ॥

tato manastadārūḍhamahaṃkārapadaṃ gatam | deśakālapariccheda ityaṅgīkṛta ātmanā || 26 ||

Then, the mind, having ascended to the level of ego, accepts the limitations of space and time.

तब, मन, अहंकार की स्थिति पर पहुंच कर, देश और काल की सीमाओं को स्वीकार करता है।

7.73.27

चिदणोरस्य भावस्य प्रत्यग्रं यत्र वेदनम् । स तत्रोत्तरकालेन पूर्वाभिख्यां करिष्यति ॥ २७ ॥

cidāṇorasya bhāvasya pratyagraṃ yatra vedanam | sa tatrottarakālena pūrvābhikhyāṃ kariṣyati || 27 ||

Where there is an internal perception of the nature of consciousness, that will later be known as the prior manifestation.

जहां चेतना की प्रकृति का आंतरिक बोध होता है, वह बाद में पूर्व अभिव्यक्ति के रूप में जाना जाएगा।

7.73.28

अन्यस्मिन्नेकदेशे सा ऊर्ध्वाभिख्यां करिष्यति । एवं दिगभिधानादि कल्पयिष्यति स क्रमात् ॥ २८ ॥

anyasminekadeśe sā ūrdhvābhikhyāṃ kariṣyati | evaṃ digabhidhānādi kalpayiṣyati sa kramaāt || 28 ||

In another place, it will be known as the higher manifestation. Thus, it will gradually conceive of directions and other distinctions.

किसी दूसरे स्थान पर, यह ऊर्ध्व अभिव्यक्ति के रूप में जाना जाएगा। इस प्रकार, यह क्रमशः दिशाओं और अन्य भेदों की कल्पना करेगा।

7.73.29

देशकालक्रियाद्रव्यशब्दानामर्थवेदनम् । भविष्यति स्वयमसावाकाशविशदोऽपि सन् ॥ २९ ॥

deśakālakriyādravyaśabdānāmarthavedanam | bhaviṣyati svayamasāvākāśaviśado'pi san || 29 ||

The understanding of the meaning of space, time, action, substance, and sound will arise spontaneously, even though it is clear like the sky.

देश, काल, क्रिया, द्रव्य और शब्द के अर्थ का बोध स्वतः ही उत्पन्न होगा, भले ही यह आकाश की तरह स्पष्ट हो।

7.73.30

इत्थं स्वानुभवेनैष व्योम्नैव व्योमरूपभृत्। आतिवाहिकनामान्तर्देहः संपद्यते चितेः ॥ ३० ॥

itthaṃ svānubhavena eṣa vyomnaiva vyomarūpabhṛt | ātivāhikanāmāntardehaḥ saṃpadyate citeḥ || 30 ||

Thus, by its own experience, this one, bearing the form of the sky, attains the inner body known as the transmigratory.

इस प्रकार, अपने अनुभव से, यह आकाश के रूप धारण करने वाला, संचारी के रूप में जाना जाने वाला आंतरिक शरीर प्राप्त करता है।

7.73.31

एष एव चिरं कालं तत्र भावनया तया। गृह्णाति निश्चयं पूर्णमाधिभौतिकमात्मनः ॥ ३१ ॥

eṣa eva ciraṃ kālaṃ tatra bhāvanayā tayā | gṛhṇāti niścayaṃ pūrṇamādhibhautikamātmanaḥ || 31 ||

This very (being) for a long time, through that contemplation, attains the complete certainty of the material self.

यही प्राणी लंबे समय तक, उस भावना के द्वारा, भौतिक आत्मा के पूर्ण निश्चय को प्राप्त करता है।

7.73.32

व्योम्ना व्योम्नेव रचितो निर्मलेनेति विभ्रमः। असता सत्समास्तीर्णस्तापनद्या जलं यथा ॥ ३२ ॥

vyomnā vyomnyeva racito nirmaleneti vibhramaḥ | asatā satsamāstīrṇastāpanadyā jalaṃ yathā || 32 ||

Created by the pure sky itself, this is the illusion, as if the non-existent is spread out like the water of the mirage.

शुद्ध आकाश द्वारा ही रचित, यह भ्रम है, जैसे असत् मरीचिका के जल की तरह फैला हुआ है।

7.73.33

संकल्पनामुपादत्ते स्वदेहे गगनाकृतिः। शिरःशब्दार्थदां कांचित्पादशब्दार्थदां क्वचित् ॥ ३३ ॥

saṃkalpanāmupādatte svadehe gaganākṛtiḥ | śiraḥśabdārthadāṃ kāṃcitpādaśabdārthadāṃ kvacit || 33 ||

It assumes the form of the sky in its own body, giving meaning to the words 'head' and 'foot' in some places.

यह अपने शरीर में आकाश का रूप धारण करता है, कुछ स्थानों पर 'सिर' और 'पैर' शब्दों को अर्थ देता है।

7.73.34

उरःपार्श्वादिशब्दार्थमयीं क्वचिदनाविलाम्। भावाभावग्रहोत्सर्गशब्दाद्यर्थमयीमपि ॥ ३४ ॥

uraḥpārśvādiśabdārthamayīṃ kvacidanāvilām | bhāvābhāvagrahottsargaśabdādyarthamayīmapi || 34 ||

It becomes unobstructed in some places, filled with the meanings of words like 'chest,' 'side,' etc., and also with the meanings of words like 'existence,' 'non-existence,' 'grasping,' 'release,' etc.

यह कुछ स्थानों पर अवरुद्ध होता है, 'छाती,' 'पार्श्व,' आदि शब्दों के अर्थों से भरा हुआ, और 'अस्तित्व,' 'अनस्तित्व,' 'ग्रहण,' 'त्याग,' आदि शब्दों के अर्थों से भी भरा हुआ।

7.73.35

नियताकारकलनां देशकालादियन्त्रिताम्। विषयोन्मुखतां यातामिन्द्रियव्रातवेधिताम् ॥ ३५ ॥

niyatākārakalanāṃ deśakālādiyantritām | viṣayonmukhatāṃ yātāmindriyavrātavedhitām || 35 ||

It becomes fixed in form, constrained by place, time, etc., turned towards objects, and pierced by the group of senses.

यह आकार में स्थिर होता है, स्थान, समय आदि से बंधा हुआ, विषयों की ओर मुड़ा हुआ, और इंद्रियों के समूह से विद्ध।

7.73.36

सोणुः पश्यत्यथाकारमात्मनः स्वात्मकल्पितम्। हस्तपादादिकलितं चित्तादिकलनान्वितम्॥ ३६॥

soṇuḥ paśyatyathākāramātmanaḥ svātmakalpitam | hastapādādikalitaṃ cittādikalanānvitam || 36 ||

The individual soul sees its own form, which is imagined by itself, endowed with hands, feet, etc., and accompanied by mental activities.

जीवात्मा अपने स्वयं कल्पित रूप को देखता है, जो हाथ, पैर आदि से युक्त और मानसिक गतिविधियों से संयुक्त है।

7.73.37

एवं संपद्यते ब्रह्मा तथा संपद्यते हरिः। एवं संपद्यते रुद्र एवं संपद्यते कृमिः॥ ३७॥

evaṃ saṃpadyate brahmā tathā saṃpadyate hariḥ | evaṃ saṃpadyate rudra evaṃ saṃpadyate kṛmiḥ || 37 ||

In this way, Brahma, Hari, Rudra, and even a worm attain their respective forms.

इस प्रकार, ब्रह्मा, हरि, रुद्र और even एक कीट अपने-अपने रूप को प्राप्त होते हैं।

7.73.38

न च किंचन संपन्नं यथास्थितमवस्थितम्। शून्यं शून्ये विलसितं ज्ञप्तिर्ज्ञप्तौ विजृम्भिता॥ ३८॥

na ca kiṃcana saṃpannaṃ yathāsthitamavasthitam | śūnyaṃ śūnye vilasitaṃ jñaptirjñaptau vijṛmbhitā || 38 ||

Nothing is truly accomplished as it appears to be. Emptiness shines in emptiness, and perception is expanded in perception.

कुछ भी वास्तव में ऐसा नहीं होता जैसा दिखाई देता है। शून्यता शून्यता में चमकती है, और बोध बोध में विस्तारित होता है।

7.73.39

प्रतिकन्दः शरीराणां बीजं त्रैलोक्यवीरुधाम्। सर्गार्गलप्रदो मुक्तेः संसारासारवारिदः॥ ३९॥

pratikandaḥ śarīrāṇāṃ bījaṃ trailokyavīrudhām | sargārgalaprado mukteḥ saṃsārāsāravāridaḥ || 39 ||

Every root is the seed of bodies in the three worlds, the bestower of the bondage of creation, the giver of liberation, and the cloud of the essence of worldly existence.

प्रत्येक जड़ तीनों लोकों के शरीरों का बीज है, सृष्टि की बंधन देने वाला, मुक्ति देने वाला, और संसार के सार का बादल है।

7.73.40

कारणं सर्वकार्याणां नेता कालक्रियादिषु। सर्वाद्यः पुरुषः स्वैरमित्यनुत्थित उत्थितः॥ ४०॥

kāraṇaṃ sarvakāryāṇāṃ netā kālakriyādiṣu | sarvādyaḥ puruṣaḥ svairamityanutthita utthitaḥ || 40 ||

The cause of all actions, the leader in all temporal activities, the primordial being, independent, thus unborn yet born.

सभी कार्यों का कारण, समय की सभी गतिविधियों में नेता, आदि पुरुष, स्वतंत्र, इस प्रकार अजन्मा फिर भी जन्मा।

7.73.41

नास्य भूतमयो देहो नास्यास्थीनि शरीरके। अवष्टब्धुमसौ मुष्ट्या शक्यते न तु केनचित्॥ ४१॥

nāsya bhūtamayo deho nāsyāsthīni śarīrake | avaṣṭabdhumasau muṣṭyā śakyate na tu kenacit || 41 ||

This body is not made of elements, nor is it made of bones in the body. It cannot be grasped by the fist.

यह शरीर भूतों से बना हुआ नहीं है, न ही शरीर में हड्डियाँ हैं। इसे मुट्ठी से पकड़ा नहीं जा सकता।

7.73.42

तेनाब्धिमेघसंग्रामसिंहगर्जोर्जितात्मना । अपि सुप्तनरेणेव नूनं मौनवता स्थितम् ॥ ४२ ॥

tenābdhimeghasaṃgrāmasiṃhagarjorjitātmanā | api suptanareṇeva nūnaṃ maunavatā sthitam || 42 ||

Therefore, even with the roaring of the ocean, the thunder of clouds, and the roar of lions, it remains silent like a sleeping person.

इसलिए, समुद्र की गर्जना, बादलों की गड़गड़ाहट, और शेर की दहाड़ के साथ भी, यह सोए हुए व्यक्ति की तरह मौन रहता है।

7.73.43

जाग्रतः स्वप्नसंदृष्टयोद्धारभटिवेदनम् । यथा स्मृतिगतं नासन्न सत्तद्वदसौ स्थितः ॥ ४३ ॥

jāgrataḥ svapnasandṛṣṭayoddhārabhaṭivedanam | yathā smṛtigataṃ nāsan na sattadvadasau sthitaḥ || 43 ||

Just as the experience of a dream is not real when one is awake, similarly, it is not real, and it is not in that state.

जैसे जाग्रत अवस्था में स्वप्न का अनुभव वास्तविक नहीं होता, उसी प्रकार यह वास्तविक नहीं है, और यह उस अवस्था में नहीं है।

7.73.44

बहुयोजनलक्षौघप्रमाणोऽपि बृहद्वपुः । परमाण्वन्तरे भाति लोमान्तस्थजगत्त्रयः ॥ ४४ ॥

bahuyojanalakṣaughapramāṇo'pi bṛhadvapuḥ | paramāṇvantare bhāti lomāntasthajagattrayḥ || 44 ||

Even though it is vast and measures many yojanas, it appears in the space between the atoms. It is the three worlds within the tip of a hair.

यद्यपि यह विशाल है और कई योजन मापता है, यह परमाणुओं के बीच के अंतर में दिखाई देता है। यह बाल के अंत में तीनों लोक हैं।

7.73.45

कुलशैलगुणौघात्मा जगद्धन्दात्मकोऽपि सन् । कुलायं धानकामात्रमपि नो पूरयत्यजः ॥ ४५ ॥

kulaśailaguṇaughātmā jagaddhandātmako'pi san | kulāyaṃ dhānakāmātramapi no pūrayatyajaḥ || 45 ||

Even though it is the essence of the qualities of the mountain ranges and the universe, it does not fill even a grain of rice.

यद्यपि यह पर्वत श्रेणियों और ब्रह्मांड की गुणों का सार है, यह एक चावल के दाने को भी नहीं भरता।

7.73.46

जगत्कोटिशताभोगविस्तीर्णोऽप्यणुमात्रकम् । वस्तुतो व्याप्तवानेष न देशं स्वप्नशैलवत् ॥ ४६ ॥

jagatkoṭiśatābhogavistīrṇo'pyaṇumātrakam | vastuto vyāptavāneṣa na deśaṃ svapnaśailavat || 46 ||

Though the universe is vast and expansive, it is essentially as minute as an atom. In reality, it pervades everything, just like a dream mountain does not occupy physical space.

यद्यपि यह ब्रह्माण्ड विस्तृत और विशाल है, फिर भी यह अणु के समान सूक्ष्म है | वास्तव में, यह सब कुछ व्याप्त करता है, जैसे स्वप्न में देखा गया पहाड़ भौतिक स्थान नहीं लेता है |

7.73.47

स्वयंभूरेष कथितो विराडेष स उच्यते । ब्रह्माण्डात्मा जगद्देहो वस्तुतस्तु नभोमयः ॥ ४७ ॥

svayaṃbhūreṣa kathito virāḍeṣa sa ucyate | brahmāṇḍātmā jagaddeho vastutastu nabhomayaḥ || 47 ||

This is called the self-existent one, and it is also known as Virat. The universe is the body of the cosmic egg, but in reality, it is made of ether.

यह स्वयंभू कहलाता है, और यह विराट् भी कहलाता है | ब्रह्माण्ड का शरीर है, लेकिन वास्तव में यह आकाश से बना है |

7.73.48

सनातन इति प्रोक्तो रुद्र इत्यपि संज्ञितः । इन्द्रोपेन्द्रमरुन्मेघशैलजालादिदेहकः ॥ ४८ ॥

sanātana iti prokto rudra ityapi saṃjñitaḥ | indropendramarunmeghaśailajālādidehakaḥ || 48 ||

This is called eternal, and it is also known as Rudra. It has the form of Indra, the wind, clouds, mountains, and other elements.

यह सनातन कहलाता है, और यह रुद्र भी कहलाता है | यह इन्द्र, वायु, बादल, पहाड़, और अन्य तत्वों का रूप धारण करता है |

7.73.49

तेजोणुमात्रं प्रथितं चेतित्वात्प्रथमं वपुः । क्रमेण स्फारसंवित्तिर्महानहमिति स्थितः ॥ ४९ ॥

tejoṇumātraṃ prathitaṃ cetitvātprathamaṃ vapuḥ | krameṇa sphārasaṃvittirmahānahamiti sthitaḥ || 49 ||

The first form is known as the minute particle of light, due to its consciousness. Gradually, it becomes the expansive awareness known as the great 'I am'.

प्रथम रूप ज्ञान के कारण प्रसिद्ध तेजोणु कहलाता है | धीरे-धीरे, यह विस्तृत चेतना बन जाता है, जिसे महान अहम कहा जाता है |

7.73.50

स्पन्दसंवेदनात्तेन स्पन्द इत्यनुभूयते । यः स एवानिलाभिख्यो वातस्कन्धात्मना स्थितः ॥ ५० ॥

spandasaṃvedanāttena spanda ityanubhūyate | yaḥ sa evānilābhyakhyo vātaskandhātmanā sthitaḥ || 50 ||

Due to the sensation of vibration, it is experienced as Spanda. This is known as the wind, which is established as the essence of the vital breath.

कंपन के अनुभव के कारण, यह स्पन्द के रूप में अनुभव किया जाता है | यह वायु कहलाता है, जो प्राण के सार के रूप में स्थित है |

7.73.51

प्राणापानपरिस्पन्दो वेदनादनुभूयते । तेन यः सोऽयमाकाशे वातस्कन्ध उदाहृतः ॥ ५१ ॥

prāṇāpānaparispando vedanādanubhūyate | tena yaḥ so'yamākāśe vātaskandha udāhṛtaḥ || 51 ||

The oscillation of prana and apana is experienced through sensation | By that, the one who is in the sky is called the wind-element || 51 ||

प्राण और अपान का झूलना संवेदना द्वारा अनुभव किया जाता है | उससे, जो आकाश में है, उसे वात-स्कन्ध कहा जाता है || ५१ ||

7.73.52

चित्ताद्ये कल्पितास्तेन बालेनेव पिशाचिकाः । तेजःकणा असन्तोऽपि त एते धिष्ण्यतां गताः ॥ ५२ ॥

cittādye kalpitāsten baaleneva piśācikāḥ | tejaḥkaṇā asanto'pi ta ete dhiṣṇyatāṃ gatāḥ || 52 ||

By that, the mind and other elements are imagined like a child's ghosts | Even though they are non-existent, these particles of light have attained stability || 52 ||

उससे, मन और अन्य तत्व एक बच्चे के भूतों की तरह कल्पित हैं | यद्यपि वे अस्तित्वहीन हैं, इन प्रकाश कणों ने स्थिरता प्राप्त कर ली है || ५२ ||

7.73.53

प्राणापानपरावर्तदोला तदुदरोदिता । वातस्कन्धाभिधां धत्ते जगत्तद्धृदयं महत् ॥ ५३ ॥

prāṇāpānaparāvartadolā tadudaroditā | vātaskandhābhidhāṃ dhatte jagattaddhṛdayaṃ mahat || 53 ||

The swing of the return of prana and apana is said to be in the belly | It holds the name of the wind-element, the great heart of the world || 53 ||

प्राण और अपान के लौटने का झूलना पेट में कहा जाता है | यह वात-स्कन्ध का नाम धारण करता है, जो विश्व का महान हृदय है || ५३ ||

7.73.54

प्रतिच्छन्दशरीराणां प्रथमं बीजमेष सः । जगद्गतानां सर्वेषामाकल्पव्यवहारिणाम् ॥ ५४ ॥

praticchandaśarīrāṇāṃ prathamaṃ bījameṣa saḥ | jagadgatānāṃ sarveṣāmākalpavyavahāriṇām || 54 ||

This is the first seed of the bodies of all beings | Of all worldly beings engaged in conceptual transactions || 54 ||

यह सभी प्राणियों के शरीरों का पहला बीज है | सभी संसारिक प्राणियों का, जो कल्पनात्मक व्यवहारों में लगे हुए हैं || ५४ ||

7.73.55

प्रतिच्छन्द्याद्यदेतस्मादुत्थिता जगदात्मना । देहास्तदा यथा बाह्यमन्तरेषां तथा स्थितम् ॥ ५५ ॥

praticchandyādyadetasmādutthitā jagadātmanā | dehāstadā yathā bāhyamantareṣāṃ tathā sthitam || 55 ||

From this, whatever arises in the world by the self | The bodies are then situated as external and internal || 55 ||

इससे, जो कुछ भी स्वयं से विश्व में उत्पन्न होता है | शरीर तब बाहरी और आंतरिक के रूप में स्थित होते हैं || ५५ ||

7.73.56

चितिस्तस्याद्यबीजस्य पूर्वमेव यथोदिता । तथैवाद्यापि जीवेऽन्तस्तथोदेति तदीहिता ॥ ५६ ॥

citis tasyādyabījasya pūrvameva yathoditā | tathaivādyāpi jīve'ntastathodeti tadīhitā || 56 ||

The initial seed of consciousness was described earlier as it is | Even now, it exists within the individual, and it arises in the same way as described | This is its nature || 56 ||

चेतना का आद्य बीज पहले ही जैसा कहा गया था वैसा ही है | आज भी वह व्यक्ति के अंदर है, और वैसे ही उदित होता है जैसा कहा गया है | यह इसका स्वभाव है || ५६ ||

7.73.57

श्लेष्मपित्तानिलास्तस्य चन्द्रार्कपवनास्त्रयः । ग्रहा ऋक्षगणास्तस्य प्राणाष्ठीवनसीकराः ॥ ५७ ॥

śleṣmapittānilās tasya candrārkapavanās trayaḥ | grahā ṛkṣagaṇās tasya prāṇāṣṭhīvanasīkarāḥ || 57 ||

The phlegm, bile, and wind of that being are the moon, sun, and wind | The planets and constellations of that being are the breath, spitting, and urine || 57 ||

उस जीव के कफ, पित्त और वायु चंद्रमा, सूर्य और वायु हैं | उसके ग्रह और नक्षत्र प्राण, थूक और मूत्र हैं || ५७ ||

7.73.58

तस्यास्थीन्यद्रिजालानि मेदसो जातिका घनाः । शिरः पादौ त्वचं देहान्पश्यामस्तस्य नो वयम् ॥ ५८ ॥

tasyāsthīnyadrijālāni medaso jātikā ghanāḥ | śiraḥ pādau tvacaṃ dehānpasyāmastasya no vayam || 58 ||

The bones of that being are the mountains, the fat is the dense clouds | We see the head, feet, skin, and body of that being || 58 ||

उस जीव की हड्डियाँ पर्वत हैं, चर्बी घने बादल हैं | हम उसके सिर, पैर, त्वचा और शरीर को देखते हैं || ५८ ||

7.73.59

वपुर्विराजो जगदङ्ग विद्धि संकल्परूपस्य हि कल्पनात्म । आकाशशैलावनिसागरादि सर्वं चिदाकाशमतः प्रशान्तम् ॥ ५९ ॥

vapurvirājo jagadaṅga viddhi saṃkalparūpasya hi kalpanātma | ākāśaśailāvanisāgarādi sarvaṃ cidākāśamataḥ praśāntam || 59 ||

Know the body to be the resplendent form of the world, the form of intention, the essence of imagination | All, including space, mountains, forests, and oceans, is the peaceful consciousness-space || 59 ||

शरीर को जगत के दिव्य रूप, संकल्प के रूप, और कल्पना के स्वरूप के रूप में जानो | आकाश, पर्वत, वन, और समुद्र सहित सब कुछ शांत चेतना-आकाश है || ५९ ||

Chapter 74

7.74.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । तस्मिन्कल्पे तु संकल्पे तस्य यद्वपुरास्थितम् । शृणु तत्र व्यवस्थेयं विचित्राचारहारिणी ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tasminkalpe tu saṃkalpe tasya yadvapurāsthitam | śṛṇu tatra vyavastheyaṃ vicitrācārahāriṇī || 1 ||

Shri Vasistha said: In that creation, in that thought, whatever form he assumed, listen to the arrangement there, the one who takes away the strange behavior.

श्री वसिष्ठ ने कहा: उस कल्प में, उस संकल्प में, जो रूप उसने धारण किया, वहाँ की व्यवस्था सुनो, जो विचित्र आचार हरण करता है।

7.74.2

परमं यच्चिदाकाशं तद्विराडात्मनो वपुः । आद्यन्तमध्यरहितं लघु त्वस्य वपुर्जगत् ॥ २ ॥

paramaṃ yaccidākāśaṃ tadvirāḍātmano vapuḥ | ādyantamadhyarahitaṃ laghu tvasy vapurjagat || 2 ||

The supreme ether of consciousness is the body of the cosmic being. It is without beginning, end, or middle, and the universe is its light form.

चेतना का परम आकाश ब्रह्मांडीय जीव का शरीर है। यह आदि, अंत और मध्य से रहित है, और ब्रह्मांड इसका हल्का रूप है।

7.74.3

संकल्परहितो ब्रह्मा स्वाण्डं संकल्पनात्मकम् । वपुषः परितो भास्वत्पश्यत्याकाशमेव तत् ॥ ३ ॥

saṃkalparahito brahmā svāṇḍaṃ saṃkalpanātmakam | vapuṣaḥ parito bhāsvatpaśyatyākāśameva tat || 3 ||

Brahma, devoid of thought, sees his own cosmic egg, which is of the nature of thought, shining all around his body.

ब्रह्मा, विचार से रहित, अपने विचार स्वरूप ब्रह्मांडीय अंडे को देखता है, जो उसके शरीर के चारों ओर चमक रहा है।

7.74.4

ब्रह्मात्मैष स्वसंकल्पं स्वमण्डमकरोद्द्विधा । तैजसं तैजसाकारः पुष्टः पुष्टं विहंगवत् ॥ ४ ॥

brahmātmaiṣa svasaṃkalpaṃ svamaṇḍamakaroddvidhā | taijasaṃ taijasākāraḥ puṣṭaḥ puṣṭaṃ vihaṃgavat || 4 ||

This Brahma, the self, made his own thought into his cosmic egg in two parts. The luminous one, with a luminous form, nourished the nourished like a bird.

यह ब्रह्मा, आत्मा, ने अपने विचार को अपने ब्रह्मांडीय अंडे में दो भागों में बनाया। प्रकाशमान, प्रकाशमान रूप वाला, ने पोषित को पोषित किया जैसे एक पक्षी।

7.74.5

अण्डस्यैकं नभो दूरं गतं संबुद्धवानसौ । भुवोधःसंस्थितं भागं व्यतिरिक्तं च नात्मना ॥ ५ ॥

aṇḍasyekaṃ nabho dūraṃ gataṃ sambuddhavānasau | bhuvodhaḥsaṃsthitaṃ bhāgaṃ vyatiriktaṃ ca nātmanā || 5 ||

One part of the egg went far into the sky, becoming conscious. The part that remained on the earth was separate from itself.

अंडे का एक भाग आकाश में दूर चला गया, चेतन हो गया। जो भाग पृथ्वी पर रहा, वह अपने से अलग था।

7.74.6

ब्रह्माण्डभाग ऊर्ध्वस्थो विराजः शिर उच्यते । अधोभागोऽस्य पादाख्यो नितम्बो मध्यमात्रखम् ॥ ६ ॥

brahmāṇḍabhāga ūrdhvastho virājaḥ śira ucyate | adhobhāgo'sya pādākhyo nitambo madhyamātrakham || 6 ||

The upper part of the universe is called the head of Viraja; the lower part is known as the feet, and the middle part is the waist.

ब्रह्माण्ड का ऊपरी भाग विराज का सिर कहलाता है | नीचे का भाग पैर कहलाता है और मध्य भाग कमर है।

7.74.7

दूरं विमुक्तयोः संधिः खण्डयोरिति विस्तृता । अनन्ता व्योमलेखा सा श्यामा शून्येति दृश्यते ॥ ७ ॥

dūraṃ vimuktayoḥ sandhiḥ khaṇḍayoriti vistṛtā | anantā vyomalekhā sā śyāmā śūnyeti dṛśyate || 7 ||

The junction of the two liberated parts is far and wide; that endless skyline is seen as dark and empty.

दो मुक्त भागों का संधि दूर और विस्तृत है | वह अनन्त आकाश रेखा श्याम और शून्य दिखाई देती है।

7.74.8

द्यौस्तालु विपुलं तस्य तारारुधिरबिन्दवः । संविद्वातलवा देहे सुरासुरनरादयः ॥ ८ ॥

dyaustālu vipulaṃ tasya tārārudhirabindavaḥ | saṃvidvātalavā dehe surāsuranarādayaḥ || 8 ||

The vast sky is the palate of the universe, with stars as drops of blood. In the body, the beings like gods, demons, and humans are like winds of consciousness.

विस्तृत आकाश ब्रह्माण्ड का तालु है, जिसमें तारे रक्त की बूँदों के समान हैं | शरीर में, देवता, असुर और मनुष्य जैसे प्राणियों को चेतना की वायु के समान देखा जाता है।

7.74.9

देहान्तः कृमयस्तस्य भूतप्रेतपिशाचकाः । लोकान्तराणि रन्ध्राणि सुषिराण्यस्य देहके ॥ ९ ॥

dehāntaḥ kṛmayastasya bhūtapretapiśācakāḥ | lokāntarāṇi randhrāṇi suṣirāṇyasya dehake || 9 ||

Within the body are worms, ghosts, and demons. Other worlds are the holes and pores in the body.

शरीर के अन्दर कीड़े, भूत, प्रेत और पिशाच हैं | अन्य लोक शरीर के छेद और रन्ध्र हैं।

7.74.10

ब्रह्माण्डखण्डमस्याधो विस्तृतं पादयोस्तलम् । जानुमण्डलरन्ध्राणि पातालकुहराण्यधः ॥ १० ॥

brahmāṇḍakhaṇḍamasyādho vistṛtaṃ pādayostalam | jānumaṇḍalarandhrāṇi pātālakuharāṇyadhaḥ || 10 ||

Below this universe, the feet are spread out. The holes in the knee circles are the caves of the underworld.

इस ब्रह्माण्ड के नीचे, पैर फैले हुए हैं | घुटनों के चक्रों के छेद पाताल की गुफाएँ हैं।

7.74.11

जलैश्चलचलायन्ती सुषिरानेकरन्ध्रिका । भूरन्तर्मण्डली लोला समुद्रद्वीपवेष्टना ॥ ११ ॥

jalaiścalacalāyantī suṣirānekarandhrikā | bhūrantarmaṇḍalī lolā samudradvīpaveṣṭanā || 11 ||

The Earth, which is surrounded by the ocean and the islands, is moving and has many holes. It is unstable and encompasses the inner sphere.

जल से चलायमान, बहुत से छिद्रों वाली, भूमण्डल की अन्तर्वेष्टन करने वाली, अस्थिर, समुद्र और द्वीपों से घिरी हुई पृथ्वी।

7.74.12

जलैर्गुडगुडायन्त्यो नद्यो नाड्यः सरिद्रसः । जम्बूद्वीपं हृदम्भोजमस्य हेमाद्रिकर्णिकम् ॥ १२ ॥

jalairguḍaguḍāyantyo nadyo nāḍyaḥ saridrasaḥ | jambūdvīpaṃ hṛdambhojamasya hemādrikarṇikam || 12 ||

The rivers, which are the veins of the Earth, flow with a murmuring sound. Jambudvipa is the lotus-like heart of the Earth, with the Himalayas as its pericarp.

जल से गुडगुडाती हुई नदियाँ, जो पृथ्वी की नाड़ियाँ हैं, सरिद्रस हैं। जम्बूद्वीप पृथ्वी का कमल जैसा हृदय है, जिसका हेमाद्रि कर्णिका है।

7.74.13

कुक्षयः ककुभः शून्या यकृत्प्लीहादयोऽचलाः । मृद्व्यः स्निग्धाः पटाकारा मेदसो जालिका घनाः ॥ १३ ॥

kukṣayaḥ kakubhaḥ śūnyā yakṛtplīhādayo'calāḥ | mṛdvyaḥ snigdhāḥ paṭākārā medaso jālikā ghanāḥ || 13 ||

The cavities and spaces are empty, the liver, spleen, and other immovable parts are soft and oily. The fat is like a net, dense and solid.

कुक्षयः (कुक्षियाँ) ककुभः (स्थान) शून्या (खाली) यकृत् (यकृत) प्लीहादयो (प्लीहा आदि) अचलाः (अचल) मृद्व्यः (कोमल) स्निग्धाः (चिकनी) पटाकारा (पट्टे के समान) मेदसो (मेद) जालिका (जाल के समान) घनाः (घना)

7.74.14

चन्द्रार्कौ लोचने तस्य ब्रह्मलोको मुखं स्मृतम् । तेजः सोमोऽस्य कथितः श्लेष्मा प्रालेयपर्वतः ॥ १४ ॥

candrārkau locane tasya brahmaloko mukhaṃ smṛtam | tejaḥ somo'sya kathitaḥ śleṣmā prāleyaparvataḥ || 14 ||

The Moon and the Sun are the eyes, Brahmaloka is considered the face. The radiance is said to be Soma, and the phlegm is the snowy mountain.

चन्द्रमा और सूर्य उसके नेत्र हैं, ब्रह्मलोक मुख माना जाता है। तेज सोम कहा गया है, और श्लेष्मा प्रालेय पर्वत है।

7.74.15

अग्निलोकस्तथौर्वाग्निः पित्तमस्यातिदुःसहम् । वातस्कन्धमहावाताः प्राणापाना हृदि स्थिताः ॥ १५ ॥

agnilokastathaurvāgniḥ pittamasya atiduḥsaham | vātaskandhamahāvātāḥ prāṇāpānā hṛdi sthitāḥ || 15 ||

The realm of fire is the Aurva fire, the bile is very difficult to bear. The great winds are the shoulders of the wind, and the vital breaths are situated in the heart.

अग्निलोक और्वाग्नि है, पित्त अति दुःसह है। वातस्कन्ध महावाताः हैं, और प्राणापाना हृदय में स्थित हैं।

7.74.16

कल्पद्रुमवनान्यस्य सर्पवृन्दानि च क्वचित् । लोमजालान्यनन्तानि वनान्युपवनानि च ॥ १६ ॥

kalpadrumavanānyasya sarpavṛndāni ca kvacit | lomajālānyanantāni vanānyupavanāni ca || 16 ||

In some parts of the Kalpadruma forest, there are groups of serpents, endless webs of hair, forests, and gardens.

कल्पद्रुम वन के कुछ भागों में सर्पों के समूह, अनन्त बालों के जाल, वन और उपवन हैं।

7.74.17

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डखण्डं तु समस्तमुरुमस्तकम् । ब्रह्माण्डप्रान्तरन्ध्रार्चिरस्य दीप्ता शिखोत्थिता ॥ १७ ॥

ūrdhvaṃ brahmāṇḍakhaṇḍaṃ tu samastamurumastakam | brahmāṇḍaprāntarandhrārcirasya dīptā śikhotthitā || 17 ||

Above, the entire Brahmanda (universe) segment is a vast head, and its flame arises from the hole at the edge of the Brahmanda.

ऊपर, पूरा ब्रह्माण्ड खंड एक विशाल सिर है, और इसकी ज्वाला ब्रह्माण्ड के किनारे के छेद से उठती है।

7.74.18

स्वयमेष मनस्तेन मनो नास्योपयुज्यते । आत्मैव भोक्तृतामेति किल कस्य कथं कुतः ॥ १८ ॥

svayameṣa manastena mano nāsyopayujyate | ātmaiva bhoktṛtāmeti kila kasya kathaṃ kutaḥ || 18 ||

This mind itself is not used by that mind; the self alone attains the state of enjoyment, as it is said, how, from where?

यह मन स्वयं उस मन द्वारा उपयोग में नहीं लाया जाता, आत्मा ही भोग की स्थिति को प्राप्त होता है, जैसा कहा जाता है, किसका, कैसे, कहाँ से?

7.74.19

स्वयमेवेन्द्रियाण्येष तेनान्यत्रास्तिता कृता । यतस्तत्कल्पनामात्रमेवेन्द्रियगणः किल ॥ १९ ॥

svayamevendriyāṇyeṣa tenānyatrāstitā kṛtā | yatastatkalpanāmātramevendriyagaṇaḥ kila || 19 ||

This itself is the senses; by that, existence elsewhere is made; therefore, the group of senses is merely an imagination, as it is said.

यह स्वयं ही इंद्रियाँ हैं; उससे, कहीं और अस्तित्व बनाया जाता है; इसलिए, इंद्रियों का समूह केवल एक कल्पना है, जैसा कहा जाता है।

7.74.20

अवयवावयविनोरिवेहेन्द्रियचित्तयोः । न मनागपि भेदोऽस्ति चैक्यमेकशरीरयोः ॥ २० ॥

avayavāvayavinorivehendriyacittayoḥ | na manāgapi bhedo'sti caikyamekaśarīrayoḥ || 20 ||

Just as there is no difference between the parts and the whole, similarly, there is no difference between the senses and the mind; there is unity in the one body.

जैसे भाग और पूर्ण के बीच कोई अंतर नहीं है, उसी तरह, इंद्रियों और मन के बीच कोई अंतर नहीं है; एक शरीर में एकता है।

7.74.21

तस्य तान्येव कार्याणि जगतां यानि कानिचित् । संकल्पा एव पुंवृत्त्या चलन्त्यारूपितद्वितायः ॥ २१ ॥

tasya tānyeva kāryāṇi jagatāṃ yāni kānicit | saṃkalpā eva puṃvṛttyā calantyārūpitadvitāḥ || 21 ||

All the actions in the world are indeed the intentions of the Supreme Being, moving in the form of duality.

संसार के सभी कार्य वास्तव में परमात्मा के संकल्प हैं, जो द्वैत रूप में चलते हैं।

7.74.22

जागते तस्य विज्ञेये नान्येऽस्य मृतिजन्मनी । स एवेदं जगत्यस्मत्संकल्पात्मास्य नेतरत् ॥ २२ ॥

jāgate tasya vijñeye nānye'sya mṛtijanmanī | sa evedaṃ jagatyasmat saṃkalpātmāsya netarat || 22 ||

In the awakened state, one should know that there is no other birth or death for the Supreme Being. He alone is this world, the essence of intention, nothing else.

जागृत अवस्था में, यह जानना चाहिए कि परमात्मा के लिए कोई अन्य जन्म या मृत्यु नहीं है। वही यह संसार है, संकल्प का आत्मा, कुछ और नहीं।

7.74.23

तत्सत्तया जगत्सत्ता तन्मृत्यैव जगन्मृतम् । यादृशी स्पन्दयमरुतोः सत्तैका तादृशी तयोः ॥ २३ ॥

tatsattayā jagatsattā tanmṛtyaiva jagamṛtam | yādṛśī spandayamarutoḥ sattaikā tādṛśī tayoḥ || 23 ||

The existence of the world is due to the existence of the Supreme Being. The death of the world is due to the death of the Supreme Being. Just as the existence of wind and breath is one, so is the existence of the world and the Supreme Being.

संसार का अस्तित्व परमात्मा के अस्तित्व के कारण है। संसार की मृत्यु परमात्मा की मृत्यु के कारण है। जैसे हवा और सांस का अस्तित्व एक है, वैसे ही संसार और परमात्मा का अस्तित्व एक है।

7.74.24

जगद्विराजोः सत्तैका पवनस्पन्दयोरिव । जगद्यत्स विराडेव यो विराट् तज्जगत्स्मृतम् ॥ २४ ॥

jagadvirājoḥ sattaikā pavanaspandayoriva | jagadyatsa virāḍeva yo virāṭ tajjagatsmṛtam || 24 ||

The existence of the world and the Supreme Being is one, just like the existence of wind and breath. The world is indeed the Supreme Being, known as Virat. The one who is Virat is remembered as the world.

संसार और परमात्मा का अस्तित्व एक है, जैसे हवा और सांस का अस्तित्व एक है। संसार वास्तव में परमात्मा है, जिसे विराट कहा जाता है। जो विराट है, वह संसार के रूप में याद किया जाता है।

7.74.25

जगद्ब्रह्मा विराट् चेति शब्दाः पर्यायवाचकाः । संकल्पमात्रमेवैते शुद्धचिद्व्योमरूपिणः ॥ २५ ॥

jagadbrahmā virāṭ ceti śabdāḥ paryāyavācakāḥ | saṃkalpamātramevaite śuddhacidvyomarūpiṇaḥ || 25 ||

The words 'world,' 'Brahman,' and 'Virat' are synonymous. They are merely intentions, pure consciousness, and the form of the sky.

'संसार,' 'ब्रह्म,' और 'विराट' शब्द पर्यायवाची हैं। ये केवल संकल्प, शुद्ध चेतना, और आकाश के रूप हैं।

7.74.26

श्रीराम उवाच । संकल्पात्स विराडेव खमेवाकृतिमागतम् । अस्तु नाम स्वदेहान्तः कथं ब्रह्मैव तिष्ठति ॥ २६ ॥

śrīrāma uvāca | saṃkalpātsa virāḍeva kham evākṛtimāgatam | astu nāma svadehāntaḥ kathaṃ brahmaiva tiṣṭhati || 26 ||

Sri Rama said: Just as the universe (Virāt) assumes the form of space from the will, how does Brahman reside within one's own body?

श्री राम ने कहा: जैसे संकल्प से विराट् आकाश का रूप धारण करता है, वैसे ही ब्रह्म अपने शरीर के अंदर कैसे रहता है?

7.74.27

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथा ध्यानेन देहान्तस्तिष्ठसि त्वं यथा स्थितम् । तथास्ते निजदेहेऽन्तः संकल्पात्मा पितामहः ॥ २७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathā dhyānena dehāntastiṣṭhasi tvaṃ yathā sthitam | tathāste nijadehe'ntaḥ saṃkalpātmā pitāmahaḥ || 27 ||

Sri Vasistha said: Just as you reside within your body through meditation, so does the creator, who is the embodiment of will, reside within his own body.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जैसे तुम ध्यान से अपने शरीर के अंदर रहते हो, वैसे ही सृष्टिकर्ता, जो इच्छा का स्वरूप है, अपने शरीर के अंदर रहता है।

7.74.28

नृणां तथा च मुख्यानां जीवो ब्रह्मपुरोदरे। उत्पत्तिपुत्रिकादेहः प्रतिबिम्बोपमोऽस्ति सः ॥ २८ ॥

nṛṇāṃ tathā ca mukhyānāṃ jīvo brahmapurodare | utpattiputrikādehaḥ pratibimbopamo'sti saḥ || 28 ||

Similarly, the individual soul within the body of the supreme Brahman is like a reflection, having a body that is a mere replica.

इसी प्रकार, परम ब्रह्म के शरीर के अंदर व्यक्तिगत आत्मा एक प्रतिबिंब की तरह है, जिसका शरीर एक मात्र प्रतिरूप है।

7.74.29

यत्र त्वमपि देहान्तः कर्तुं शक्तोऽस्यलं स्थितम्। संकल्पात्मा विभुस्तत्र ब्रह्मा किं न करिष्यति ॥ २९ ॥

yatra tvamapi dehāntaḥ kartuṃ śakto'syalaṃ sthitam | saṃkalpātmā vibhus tatra brahmā kiṃ na kariṣyati || 29 ||

Where you are capable of residing within the body, why would Brahma, the embodiment of will and the all-pervading, not reside there?

जहाँ तुम शरीर के अंदर रहने में सक्षम हो, वहाँ ब्रह्मा, जो इच्छा का स्वरूप और सर्वव्यापी है, क्यों नहीं रहेगा?

7.74.30

बीजान्तः स्थावरं ह्यास्ते पदार्थे यत्र जंगमः। किं नास्ते तत्र देहेऽन्तर्निजचित्कल्पनात्मिका ॥ ३० ॥

bījāntaḥ sthāvaraṃ hyāste padārthe yatra jaṅgamaḥ | kiṃ nāste tatra dehe'ntarnijacitkalpanātmikā || 30 ||

Just as a seed resides within a stationary object, why would the moving being not reside within the body, which is the embodiment of its own consciousness?

जैसे एक बीज एक स्थिर वस्तु के अंदर रहता है, वैसे ही चलता हुआ प्राणी क्यों नहीं अपने शरीर के अंदर रहेगा, जो अपनी चेतना का स्वरूप है?

7.74.31

साकारो गगनात्मास्तु निराकारं स्वप्नस्तु वा। आस्ते बहिरथान्तश्च भिन्ने बाह्यान्तरे बहिः ॥ ३१ ॥

sākāro gaganātmāstu nirākāraṃ svapnastu vā | āste bahirathāntaśca bhinne bāhyāntare bahiḥ || 31 ||

The formless sky is like a dream, existing both outside and inside, distinct in the external and internal realms.

निराकार आकाश स्वप्न की तरह है, जो बाहर और अंदर दोनों जगह है, बाहरी और अंदरूनी रूप में अलग है।

7.74.32

आत्मारामः काष्ठमौनी न जडोऽपि दृषज्जडः। अहंत्वमित्यादिमयो विराडात्मनि तिष्ठति ॥ ३२ ॥

ātmārāmaḥ kāṣṭhamauṇī na jaḍo'pi dṛṣajjaḍaḥ | ahaṃtvamityādimayo virāḍātmani tiṣṭhati || 32 ||

The self-delighted one, silent like a log, though not inert, appears inert to the eyes. The ego and other such concepts reside in the universal self.

आत्माराम, लकड़ी की तरह मौन, हालाँकि जड़ नहीं, आँखों के लिए जड़ लगता है। अहंकार और अन्य ऐसे विचार विराट आत्मा में रहते हैं।

7.74.33

आवेष्टितोज्झितलतातृणदारुपुंवदुच्छब्दमम्बुरयवच्च विरोपिताङ्गः । नानाविधेऽपि विहरन्नपि कार्यजाले तज्ज्ञः शिलाजठरशान्तमनस्क एव ॥ ३३ ॥

āveṣṭitojjhitlatātṛṇadārupuṃvaducchabdamamburayavacca viropitāṅgaḥ | nānāvidhe'pi viharannapi kāryajāle tajjñaḥ śilājaṭharashāntamanaska eva || 33 ||

Though covered with discarded creepers, grass, wood, and making loud noises, and with a body smeared with mud and dust, the wise one remains calm and peaceful amidst various activities.

हालाँकि छोड़ी गई लताओं, घास, लकड़ी और जोरदार आवाजों से ढका हुआ, और मिट्टी और धूल से सना शरीर के साथ, बुद्धिमान व्यक्ति विभिन्न गतिविधियों में शांत और शांत बना रहता है।

Chapter 75

7.75.1

अथाग्रस्थब्रह्मलोको ब्रह्मणि ध्यानशालिनि । निक्षिप्ताक्षः शनैर्दिक्षु दृष्टवानहमग्रतः ॥ १ ॥

athāgrasthabrahmaloko brahmaṇi dhyānaśālini | nikṣiptākṣaḥ śanairdikṣu dṛṣṭavānahamagrataḥ || 1 ||

Then, while meditating on Brahman, I saw the highest Brahmaloka in front of me, with my eyes fixed on the directions.

तब, ब्रह्म पर ध्यान लगाते हुए, मैंने अपनी आँखें दिशाओं पर टिकाकर, अपने सामने सर्वोच्च ब्रह्मलोक देखा।

7.75.2

द्वितीयमर्कं मध्याह्ने पश्चादभ्युदितं स्फुटम् । दिग्दाहमिव दिग्वक्रे वनदाहमिवाचले ॥ २ ॥

dvitīyamarkaṃ madhyāhne paścādabhyuditaṃ sphuṭam | digdāhamiva digvakre vanadāhamivācale || 2 ||

Then, I saw a second sun clearly rising in the afternoon, like a forest fire on a mountain, burning the directions.

तब, मैंने दोपहर में एक दूसरे सूर्य को स्पष्ट रूप से उगते हुए देखा, जैसे एक पर्वत पर जंगल की आग, जो दिशाओं को जला रही हो।

7.75.3

ततोऽपश्यमहं दीप्तं सूर्यं नैर्ऋतदिङ्मुखे । सूर्यं याम्ये ककुब्भागे सूर्यमग्निककुष्मुखे ॥ ३ ॥

tato'paśyamahaṃ dīptaṃ sūryaṃ nairṛtadiṅmukhe | sūryaṃ yāmye kakubbhāge sūryamagnikakuṣmukhe || 3 ||

Then, I saw a blazing sun in the southwest direction, a sun in the southern direction, and a sun in the southeast direction.

तब, मैंने दक्षिण-पश्चिम दिशा में एक प्रज्वलित सूर्य देखा, दक्षिण दिशा में एक सूर्य, और दक्षिण-पूर्व दिशा में एक सूर्य।

7.75.4

सूर्यं याम्ये ककुब्भागे सूर्यमग्निककुष्मुखे । सूर्यमैन्द्रककुब्भागे सूर्यमीशानदिङ्मुखे ॥ ४ ॥

sūryaṃ yāmye kakubbhāge sūryamagnikakuṣmukhe | sūryamaindrakakubbhāge sūryamīśānadiṅmukhe || 4 ||

A sun in the eastern direction, a sun in the northeastern direction, a sun in the northern direction, and a sun in the northwestern direction.

पूर्व दिशा में एक सूर्य, उत्तर-पूर्व दिशा में एक सूर्य, उत्तर दिशा में एक सूर्य, और उत्तर-पश्चिम दिशा में एक सूर्य।

7.75.5

कुबेरककुभि सूर्यं सूर्यं वायव्यदिक्तटे । सूर्यं वरुणदिग्भागे तेन विस्मयवानहम् ॥ ५ ॥

kuberakakubhi sūryaṃ sūryaṃ vāyavyadiktate | sūryaṃ varuṇadigbhāge tena vismayavānaham || 5 ||

A sun in the northwestern direction, a sun in the western direction, and a sun in the southwestern direction. I was amazed by this.

उत्तर-पश्चिम दिशा में एक सूर्य, पश्चिम दिशा में एक सूर्य, और दक्षिण-पश्चिम दिशा में एक सूर्य। मैं इससे आश्चर्यचकित हो गया।

7.75.6

यावद्विचारयाम्याशु विधिवैधुर्यमाकुलम्। उदभूद्भूतलात्तावदर्क और्व इवार्णवात्॥ ६॥

yāvadvicārayāmyāśu vidhivaidhuryamākulam | udabhūdbhūtalāttāvadarka aurva ivārṇavāt || 6 ||

As I quickly contemplated the confusion caused by fate, a form like the sun rising from the ocean appeared from the earth.

जैसे ही मैंने भाग्य के उलझन को जल्दी से सोचा, एक सूर्य की तरह समुद्र से उठने वाला रूप पृथ्वी से प्रकट हुआ।

7.75.7

एकादशेऽखिलार्काणां प्रतिबिम्बमिवोत्थितम्। उदभूत्त्रयमर्काणामन्तरे दिग्गणाम्बरे॥ ७॥

ekādaśe'khilārkāṇāṃ pratibimbamivottitam | udabhūttrayamarkāṇāmantare diggaṇāmbare || 7 ||

In the eleventh position, a reflection of all the suns arose, and in the midst of the three suns, it appeared in the sky.

ग्यारहवें स्थान पर, सभी सूर्यों का प्रतिबिम्ब उभरा, और तीन सूर्यों के बीच में, यह आकाश में प्रकट हुआ।

7.75.8

तद्धि रौद्रं वपुस्तत्र तन्मध्ये लोचनत्रयम्। तद्द्वादशपरीमाणं दीप्तं वृन्दं विवस्वताम्॥ ८॥

taddhi raudraṃ vapustatra tanmadhye locanatrayam | taddvādaśaparīmāṇaṃ dīptaṃ vṛndaṃ vivasvatām || 8 ||

That indeed was a fierce form there, in the midst of which were three eyes. That group of twelve was radiant and brilliant like the suns.

वह वास्तव में एक भयंकर रूप था, जिसके बीच में तीन नेत्र थे। वह बारह का समूह चमकीला और सूर्यों की तरह तेजस्वी था।

7.75.9

सर्वदिक्कं ददाहोच्चैः शुष्कं वनमिवानलः। अथोदभूज्जगत्खण्डशोषणग्रीष्मवासरः॥ ९॥

sarvadikkam dadāhoccaiḥ śuṣkaṃ vanamivānalaḥ | athodabhūj jagatkhaṇḍaśoṣaṇagrīṣmavāsaraḥ || 9 ||

It burned everything in all directions intensely, like a fire burning a dry forest. Then arose a day of summer that dried up the world.

यह सभी दिशाओं में तीव्रता से जला दिया, जैसे आग एक सूखे वन को जला रही हो। फिर एक ऐसा गर्मी का दिन उभरा जो संसार को सुखा दिया।

7.75.10

अनग्निरग्निदाहो द्रागदृश्योल्मुकगुल्मकः। अनग्निनाग्निदाहेन तेन तामरसेक्षण॥ १०॥

anagniragnidāho drāgadṛśyolmukagulmakaḥ | anagnināgnidāhena tena tāmarasekṣaṇa || 10 ||

Without fire, there was a burning sensation, slowly visible like a small flame. With that fireless burning, he looked with reddened eyes.

बिना आग के, एक जलन की अनुभूति थी, धीरे-धीरे एक छोटी लौ की तरह दिखाई देती हुई। उस बिना आग के जलने से, उसने लाल आँखों से देखा।

7.75.11

अङ्गानि दावदग्धानि खिन्नानीव ममाभवन्। प्रदेशं तमथ त्यक्त्वा दूरमारूढवानहम्॥ ११॥

aṅgāni dāvadagdhāni khinnānīva mamābhavan | pradeśaṃ tamatha tyaktvā dūramārūḍhavānaham || 11 ||

My limbs seemed to be burnt by the forest fire, as if they were exhausted. Leaving that place, I went far away.

मेरे अंग जंगल की आग से जले हुए लग रहे थे, मानो वे थके हुए हों। उस स्थान को छोड़कर, मैं दूर चला गया।

7.75.12

दृढहस्ततलाघातहतकन्दुकवन्नभः । अपश्यं गगनस्थोऽहमुदितं चण्डतेजसम् ॥ १२ ॥

dṛḍhahastatalāghātahatakandukavannabhaḥ | apaśyaṃ gaganastho'hamuditaṃ caṇḍatejasam || 12 ||

I saw the sky, struck by the firm blow of the hand, like a ball, fierce and radiant.

मैंने आकाश देखा, जो हाथ के मजबूत प्रहार से मारा गया था, जैसे एक गेंद, तेज और चमकदार।

7.75.13

तपन्तं द्वादशादित्यगणं दिक्षु दशस्वपि । बृहत्तत्र सतारावज्वालेव भगणं चलम् ॥ १३ ॥

tapantaṃ dvādaśādityagaṇaṃ dikṣu daśasvapi | bṛhattatra satārāvajvāleva bhagaṇaṃ calam || 13 ||

I saw the twelve suns blazing in all ten directions, and the constellations moving like a blazing array of stars.

मैंने देखा कि बारह सूर्य दसों दिशाओं में चमक रहे थे, और तारामंडल जलते हुए तारों की तरह चल रहे थे।

7.75.14

महाकुहकुहाशब्दं क्वथत्सप्ताब्धिडम्बरम् । सज्वालोल्मुकनीरन्ध्रलोकान्तरपुरान्तरम् ॥ १४ ॥

mahākuhakuhaśabdaṃ kvathatsaptābdhiḍambaram | sajvālolmukanīrandhralokāntarapurāntaram || 14 ||

I heard a great rumbling sound, as if the seven oceans were boiling, and saw the inner worlds and cities ablaze with flames and smoke.

मैंने एक महान गर्जना सुनी, जैसे कि सात समुद्र उबल रहे हों, और अंतरिक्ष और नगरों को ज्वालामुखी और धुएँ से भरा हुआ देखा।

7.75.15

ज्वालाघनपटाटोपसिन्दुरीकृतपर्वतम् । दीप्यमानमहागारस्थिरविद्युत्ककुत्पटम् ॥ १५ ॥

jvālāghanapaṭāṭopasindurīkṛtaparvatam | dīpyamānamahāgārasthiravidyutkakutpaṭam || 15 ||

I saw the mountains turned into vermilion by the dense smoke and flames, and the great mansion shining with steady lightning.

मैंने पर्वतों को घने धुएँ और ज्वालाओं से सिंदूर की तरह रंगा हुआ देखा, और महान महल को स्थिर बिजली से चमकते हुए देखा।

7.75.16

स्फुरत्कटकटाटोपचटत्पत्तनमण्डलम् । विदधद्भूतलोद्भूतधूमदण्डैः शिलाघनैः ॥ १६ ॥

sphuratkaṭakaṭāṭopacaṭatpattanamaṇḍalam | vidadhadbhūtalodbhūtadhūmadaṇḍaiḥ śilāghanaiḥ || 16 ||

The earth trembles with the clamor of the clattering hooves of the horses, and the sky is filled with the smoke of the burning cities, as if the very stones are crying out.

धरती घोड़ों की टापों की आवाज से काँप रही है, और आकाश जलते हुए शहरों के धुएँ से भरा हुआ है, मानो पत्थर भी चीख रहे हों।

7.75.17

काचस्तम्भसहस्राढ्यं भुवनस्थानमण्डपम् । क्वथद्भूतमहाभूततारारवदातिघर्घरम् ॥ १७ ॥

kācastambhasahasrāḍhyaṃ bhuvanasthānamaṇḍapam | kvathadbhūtamahābhūtatārārāvadātighargharam || 17 ||

The palace, adorned with a thousand glass pillars, is filled with the cries of the great beings and the roaring of the stars.

महल, जो हजार काँच के स्तंभों से सजा हुआ है, महान प्राणियों की चीखों और तारों की गर्जना से भरा हुआ है।

7.75.18

भूतलोकपुरापातस्फुटच्चटचटोद्भटम् । ताराविशरणोद्घातघृष्टरत्नधरातलम् ॥ १८ ॥

bhūtalokapurāpātasphuṭaccaṭacaṭodbhaṭam | tārāviśaraṇoddhātaghṛṣṭaratnadharātalam || 18 ||

The earth is shattered by the fall of the celestial cities, and the stars are scattered, causing the ground to tremble with the impact of precious gems.

धरती दिव्य नगरों के गिरने से टूट गई है, और तारे बिखर गए हैं, जिससे कीमती रत्नों के प्रभाव से जमीन काँप रही है।

7.75.19

सर्वस्थलालयचलद्दह्यमानजनव्रजम् । क्षीणाक्रन्दक्वथद्भूतगणदुर्वासदिक्तटम् ॥ १९ ॥

sarvasthalālayacaladdahyamānajanavrajam | kṣīṇākrandakvathadbhūtagaṇadurvāsadiktaṭam || 19 ||

Every place is shaking with the burning of people, and the cries of the beings are diminishing, as if the directions are being cursed by Durvasa.

हर जगह लोगों के जलने से काँप रही है, और प्राणियों की चीखें कम हो रही हैं, मानो दिशाएँ दुर्वासा के शाप से प्रभावित हो रही हैं।

7.75.20

उत्तप्ताम्बूदराखिन्नजलेचरमहार्णवम् । सर्वदिक्कानलप्लोषक्षीणाक्रन्दपुरान्तरम् ॥ २० ॥

uttaptāmbūdarākhinnajalecaramahārṇavam | sarvadikkānalaploṣakṣīṇākrandapurāntaram || 20 ||

The great ocean, heated by the scorching sun, is filled with suffering marine creatures, and all directions are burning, with the cries of the cities diminishing.

सूर्य की तपिश से गर्म हुआ महासागर पीड़ित जलचरों से भरा हुआ है, और सभी दिशाएँ जल रही हैं, जिससे शहरों की चीखें कम हो रही हैं।

7.75.21

विदलद्दग्धदिग्दन्तिदन्तोत्तम्भितभूधरम् । धराधरदरीरन्ध्रधूममण्डलकुण्डलम् ॥ २१ ॥

vidaladdagdhadigdantidantottambhitabhūdharam | dharādharadarīrandhradhūmamaṇḍalakuṇḍalam || 21 ||

The mountains are shaken and their peaks are lifted up, with smoke rising from the caves of the earth.

पर्वतों के शिखर उठाए जा रहे हैं और धरती की गुफाओं से धुआँ निकल रहा है।

7.75.22

पतत्पर्वतनिष्पिष्टप्लुष्टपत्तनमण्डलम् । पचत्पचपचाशब्दशब्दिताद्रीन्द्रकुञ्जरम् ॥ २२ ॥

patatparvatanispishṭapluṣṭapattanamaṇḍalam | pacatpacapacāśabdaśabditādrīndrakuñjaram || 22 ||

The falling mountains are crushed and the flying creatures are burned, with the sound of crackling and the roar of the king of mountains.

गिरते हुए पर्वत कुचले जा रहे हैं और उड़ने वाले जीव जल रहे हैं, चटकने की आवाज और पर्वत राजा की गर्जना सुनाई दे रही है।

7.75.23

तापतप्तोन्नमद्भूतज्वरितार्णवपर्वतम् । हृदयस्फोटनिःसारपतद्विद्याधराङ्गनम् ॥ २३ ॥

tāpataptōnnamadbhūtajvaritārṇavaparvatam | hṛdayasphōṭaniḥsārapatadvidyādharāṅganam || 23 ||

The heated ocean and mountains are swollen and trembling, with the celestial beings falling from the sky, their hearts bursting.

गर्म समुद्र और पर्वत सूजे हुए और काँप रहे हैं, आकाश से देवदूत गिर रहे हैं, उनके दिल फट रहे हैं।

7.75.24

आक्रन्दरोदनश्रान्तमूर्धनिःसरणामरम्। नागलोकज्वलज्ज्वालापातालोत्तप्तभूतलम्॥ २४॥

ākrandarōdanaśrāntamūrdhaniḥsaraṇāmaram | nāgalōkajvalajjvālāpātālōttaptabhūtalam || 24 ||

The gods are exhausted from crying and screaming, and the underworld is heated by the flames from the serpent realm.

देवता रोने और चिल्लाने से थक गए हैं, और नागलोक से आग की लपटों से पाताल गर्म हो गया है।

7.75.25

शुष्कार्णवसदापक्कविवर्तोग्रजलेचरम्। और्वेणाबिन्धनाभावात्प्रोड्डीयेव सहस्रधा॥ २५॥

śuṣkārṇavasadāpakvavivartōgrjalēcaram | aurvēṇābindhanābhāvātprōḍḍīyēva sahasradhā || 25 ||

The ocean is dried up and its fierce waters are boiling, and without the binding of Aurva, it bursts into a thousand pieces.

समुद्र सूख गया है और उसके भयंकर पानी उबल रहे हैं, और और्व के बंधन के अभाव में, यह हजार टुकड़ों में फट जाता है।

7.75.26

गतेन नृत्यतोत्थाय गृहीतगगनांगनम्। अथोदभूज्ज्वलज्ज्वालाकिंशुकांशुकशोभितः॥ २६॥

gatena nṛtyatotthāya gṛhītagaganāṅganam | athodabhūjjvalajjvālākiṃśukāṃśukaśobhitaḥ || 26 ||

Then, rising from the dance, he seized the sky-maiden, and then arose a brilliant flame, adorned with the rays of the Kinsuka flower.

फिर, नृत्य से उठकर, उसने आकाश-कन्या को पकड़ लिया, और फिर एक चमकदार ज्वाला उठी, जो किंशुक फूल की किरणों से सजी हुई थी।

7.75.27

ताण्डवायेव कल्पाग्निस्तरलोल्मुकमाल्यवान्। तारं पटपटाटोपी रटद्भट इवोद्भटः॥ २७॥

tāṇḍavāyeva kalpāgnistaralolmukamālyavān | tāraṃ paṭapaṭāṭopī raṭadbhaṭa ivodbhaṭaḥ || 27 ||

Like the fire of destruction, he danced the Tandava, adorned with trembling waves and garlands, making a loud, resounding noise like a mighty warrior.

विनाश की अग्नि की तरह, उसने ताण्डव नृत्य किया, कंपित तरंगों और मालाओं से सजा हुआ, एक महान योद्धा की तरह ऊंची और गूंजती आवाज करते हुए।

7.75.28

ज्वालोद्भुजो धूमकचो जगज्जीर्णकुटीनटः। जज्वलुर्वनजालानि पुराणि नगराणि च॥ २८॥

jvālodbhūjo dhūmakaco jagajjīrṇakuṭīnaṭaḥ | jajvalurvanajālāni purāṇi nagarāṇi ca || 28 ||

With flames rising and smoke as hair, he danced, making the old huts, forests, ancient cities, and towns blaze.

ज्वालाओं से उठते हुए और धुएं के बालों वाले, उसने नृत्य किया, जिससे पुरानी झोंपड़ियां, जंगल, प्राचीन नगर और कस्बे जल उठे।

7.75.29

मण्डलद्वीपदुर्गाणि जङ्गलानि स्थलानि च। सर्वखानि महाकाशमाशा दश दिवः शिरः॥ २९॥

maṇḍaladvīpadurgāṇi jaṅgalāni sthalāni ca | sarvakhāni mahākāśamāśā daśa divaḥ śiraḥ || 29 ||

The islands, forts, forests, lands, all the mines, the great sky, the hopes, the ten directions, and the head of the sky.

द्वीप, दुर्ग, जंगल, भूमि, सभी खानें, महान आकाश, आशाएं, दस दिशाएं, और आकाश का सिर।

7.75.30

श्वभ्ररूपारघट्टाट्टपट्टनोदारदिक्तटः । शृङ्गाणि सिद्धवृन्दानि गिरयः सागरार्णवाः ॥ ३० ॥

śvabhrarūpāraghaṭṭāṭṭapaṭṭanodāradiktaṭaḥ | śṛṅgāṇi siddhavṛndāni girayaḥ sāgarārṇavāḥ || 30 ||

The caves, the sound of the ghat, the cities, the beautiful directions, the peaks, the groups of siddhas, the mountains, and the oceans.

गुफाएं, घाट की आवाज, नगर, सुंदर दिशाएं, चोटियां, सिद्धों के समूह, पर्वत, और समुद्र।

7.75.31

सरः सरस्यः सरितो देवासुरनरोरगाः । आशाः शनशनाशब्दैः पुरुषैश्च शिवार्चिषाम् ॥ ३१ ॥

saraḥ sarasyaḥ sarito devāsuranaroragāḥ | āśāḥ śanaśanāśabdaiḥ puruṣaiśca śivārciṣām || 31 ||

The lakes, ponds, rivers, gods, demons, humans, and serpents, along with the hopes and the sounds of 'shana shana,' and the men with the flames of Shiva.

झीलें, तालाब, नदियाँ, देवता, असुर, मनुष्य और सर्प, आशाएँ और 'शन शन' की आवाज़ें, और शिव की ज्वालाओं वाले पुरुष।

7.75.32

आसन्क्ष्वेडाकुराक्षस्यो ज्वालाजालोज्ज्वलोर्ध्वजाः । भमद्भमिति भांकारैर्भीषणैर्भूरिभस्मभिः ॥ ३२ ॥

āsanakṣveḍākurākṣasyo jvālājālojjvalordhvajāḥ | bhamadbhamiti bhāṃkārairbhīṣaṇairbhūribhasmabhiḥ || 32 ||

The demons with terrifying roars, with blazing flames and upward-rising flames, making frightening sounds and covered in abundant ashes.

भयानक गर्जना वाले असुर, ज्वालाओं और ऊपर उठती ज्वालाओं से युक्त, भयानक आवाज़ें बनाते हुए और बहुत राख से ढके हुए।

7.75.33

ज्वालाः श्वभ्राद्रिभूमीनां गुहाभ्यः परिनिर्ययुः । ज्वालोदरस्था अरुणाः समस्ता भूतजातयः ॥ ३३ ॥

jvālāḥ śvabhrādrbhūmīnāṃ guhābhyaḥ pariniryayuḥ | jvālodarasthā arunāḥ samastā bhūtajātayaḥ || 33 ||

Flames emerged from the caves of mountains and lands, and all the beings with reddish flames in their bellies.

ज्वालाएँ पहाड़ों और भूमि की गुफाओं से निकलीं, और सभी प्राणी जिनके पेट में लाल ज्वालाएँ थीं।

7.75.34

स्थलपद्मोदरालीनामाजहुः श्रियमश्रियः । सद्यो निःसृतरक्ताभैः सिन्दूराम्भोदसुन्दरैः ॥ ३४ ॥

sthalapadmodarālīnāmājahuḥ śriyamaśriyaḥ | sadyo niḥsṛtaraktābhaiḥ sindūrāmbhodasundaraiḥ || 34 ||

The lotuses blooming on the ground gave up their beauty, instantly turning red like the beautiful vermilion clouds.

जमीन पर खिले कमल अपनी सुंदरता छोड़ देते हैं, तुरंत सिंदूर के सुंदर बादलों की तरह लाल हो जाते हैं।

7.75.35

धगद्धगिति गायद्भिर्ज्वालाजालैर्जगद्गतैः । आसीद्रक्तांशुकैः कीर्णं संध्याभ्रैरिव वा नभः ॥ ३५ ॥

dhagaddhagiti gāyadbhirjvālājālairjagadgataiḥ | āsīdraktāṃśukaiḥ kīrṇaṃ saṃdhyābhrairiva vā nabhaḥ || 35 ||

The sky was filled with the sounds of 'dhaga dhaga' sung by the flames that covered the world, as if covered with red garments like the evening clouds.

आकाश धग धग की आवाज़ों से भरा हुआ था, जो ज्वालाओं द्वारा गाई जा रही थीं और संसार को ढके हुए थे, मानो शाम के बादलों की तरह लाल वस्त्रों से ढका हो।

7.75.36

उत्फुल्लकिंशुकवनैरुड्डीनैरिव वाऽऽवृतम्। और्वेण चावृता आसन्फुल्लाशोकवना इव ॥ ३६ ॥

utphullakiṃśukavanaireuḍḍīnairiva vā''avṛtam | aurveṇa cāvṛtā āsanphullāśokavanā iva || 36 ||

The forests were covered with blooming Kinsuka trees, as if they were embraced by the rising sun. The Ashoka groves were also covered, as if by the sage Aurva.

किंशुक वनों से ढके हुए थे, जैसे उगते सूर्य से घिरे हुए हों। अशोक वन भी और्व ऋषि से ढके हुए थे।

7.75.37

इव स्थलाब्जवलिता राविरा इव चार्णवाः। नानावर्णज्वलज्ज्वालाधूमविन्यासबन्धवान् ॥ ३७ ॥

iva sthalābjavalitā rāvirā iva cārṇavāḥ | nānāvarṇajvalajjvālādhūmavinyāsabandhavān || 37 ||

The earth was adorned with lotuses, as if the sun was shining. The oceans were also adorned with various colored flames and smoke.

पृथ्वी कमलों से सजी हुई थी, जैसे सूर्य चमक रहा हो। समुद्र भी विभिन्न रंगों की ज्वालाओं और धुएँ से सजे हुए थे।

7.75.38

रूढं वह्निमिवाधातुं चित्रसौधलताश्रयम्। अनन्त इव विन्यास वनयौवनपावकः ॥ ३८ ॥

rūḍhaṃ vahnimivādhātuṃ citrasaudhalatāśrayam | ananta iva vinyāsa vanayauvanapāvakaḥ || 38 ||

The fire was established as if to burn the elements, taking refuge in the colorful mansion's vines. The arrangement was endless, like the youthful fire of the forest.

अग्नि स्थापित थी जैसे तत्वों को जलाने के लिए, रंगीन महल की लताओं में आश्रय लेते हुए। व्यवस्था अनंत थी, जैसे वन की युवा अग्नि।

7.75.39

उदयास्तमयादिभ्यो विन्ध्यो विधुरतामगात्। अङ्गारकल्पविटपैर्ज्वालावनविवल्गनैः ॥ ३९ ॥

udayāstamayādibhyo vindhyo vidhuratāmagāt | aṅgārakalpaviṭapairjvālāvanavivalganaiḥ || 39 ||

From sunrise to sunset, the Vindhya mountains attained a reddish hue, with branches like embers, blazing like a forest fire.

सूर्योदय से सूर्यास्त तक, विंध्य पर्वत लालिमा प्राप्त कर गए, जैसे अंगारों की शाखाएँ, जंगल की आग की तरह धधकती हुई।

7.75.40

शनैरीषदिव क्षुब्धैः सह्योऽसह्यत्वमाययौ। मध्यमध्यकचत्काष्ण्यभ्रमद्धूमालिमालितम् ॥ ४० ॥

śanairīṣadiva kṣubdhaiḥ sahyo''asahyatvamāyayau | madhyamadhyakacatkārṣṇyabhramaddhūmālimālitam || 40 ||

Gradually, the Sahya mountains became unbearable, as if slightly disturbed, covered with dark, swirling smoke.

धीरे-धीरे, सह्य पर्वत असह्य हो गए, जैसे थोड़े विचलित, काले, घूमते धुएँ से ढके हुए।

7.75.41

वलज्ज्वालाब्जमलिनं दृष्टं सर इवाम्बरम्। खेऽद्रीणां शिखरे व्योम्नि शिखाशिखरशेखराः ॥ ४१ ॥

valajjvālābjamalinaṃ dṛṣṭaṃ sara ivāmbaram | khe'drīṇāṃ śikhare vyomni śikhāśikharaśekharāḥ || 41 ||

The sky appeared as if it were smeared with the pollen of flames, and the peaks of the mountains in the sky were like the crests of flames.

आकाश ऐसा लग रहा था मानो वह लपटों के पराग से भरा हो, और आकाश में पर्वतों की चोटियाँ लपटों की चोटियों के समान थीं।

7.75.42

ननृतुर्नीरसा नाशनर्तक्यः केतुकुन्तलाः । तलाहितानलज्वाला ब्रह्माण्डोर्ध्वकपाटभूः ॥ ४२ ॥

naṇṛtur nīrasā nāśanartakyaḥ ketukuntalāḥ | talāhitānalajvālā brahmāṇḍordhvakapāṭabhūḥ || 42 ||

The dancers, devoid of joy, did not dance, and the flags with curly hair did not flutter. The flames of the fire reached the upper lid of the universe.

नर्तकियाँ, जो आनंद से रहित थीं, नृत्य नहीं कर रही थीं, और घुंघराले बालों वाले झंडे नहीं लहरा रहे थे। आग की लपटें ब्रह्मांड के ऊपरी ढक्कन तक पहुँच गईं।

7.75.43

तर्जनप्रोत्पतद्भूतधानौघा भ्रष्टभूमिका । क्वणच्छ्रेणी मृज्जलाग्निर्नानावर्णाननारुणा ॥ ४३ ॥

tarjanaprotpatadbhūtadhānaughā bhraṣṭabhūmikā | kvaṇacchrēṇī mṛjjalāgnirnānāvarṇānanāruṇā || 43 ||

The wealth of the rising ghosts was scattered on the ground. The sound of the bells, the water, and the fire were of various colors and not red.

उठते हुए भूतों का धन जमीन पर बिखर गया। घंटियों की आवाज, पानी और आग अलग-अलग रंगों की थी और लाल नहीं थी।

7.75.44

हृत्प्रकोष्ठे जगल्लक्ष्म्याः सौवर्णीवाभवत्तदा । शैलाश्चटचटास्फोटैर्वृक्षाः कटकटारवैः ॥ ४४ ॥

hṛtprakoṣṭhe jagallakṣmyāḥ sauvarṇīvābhavattadā | śailāścaṭacaṭāsphotairvṛkṣāḥ kaṭakaṭāravaiḥ || 44 ||

In the heart's treasure chest, the world's beauty became golden. The mountains cracked with a clattering sound, and the trees made a rattling noise.

हृदय के खजाने में, दुनिया की सुंदरता सोने की तरह हो गई। पहाड़ खड़खड़ाहट की आवाज के साथ फट गए, और पेड़ खड़खड़ाहट की आवाज कर रहे थे।

7.75.45

देशा हलहलोल्लासैरलं विदलनं ययुः । अब्धयः क्वथिताकाराः फेनिलोल्लासमांसलाः ॥ ४५ ॥

deśā halahalollāsairalaṃ vidalanaṃ yayuḥ | abdhayaḥ kvathitākārāḥ phenilollāsamāṃsalāḥ || 45 ||

The regions were filled with the sound of commotion and were torn apart. The oceans were boiling and foaming with excitement.

क्षेत्र हलचल की आवाज से भरे हुए थे और चीरे-फाड़े हो गए। समुद्र उबल रहे थे और उत्तेजना से फेन उठा रहे थे।

7.75.46

वीचीकरतलाघातांश्चक्रुरर्कमुखे मुखे । अन्योन्यवेल्लितोल्लोलभूतलाकारपर्वतम् ॥ ४६ ॥

vīcīkaratalāghātāṃścakrurarkamukhe muke | anyonyavellitotololabhūtalākāraparvatam || 46 ||

The waves struck each other's faces, creating a mountain-like structure on the surface of the earth that seemed to sway and tremble.

लहरें एक-दूसरे के मुख पर आघात कर रही थीं, जिससे पृथ्वी की सतह पर एक झूलता-डोलता पर्वत-सा आकार बन गया।

7.75.47

जह्नुर्वीचीकरैर्देहे जडाः प्रकुपिता इव । आशाकाशाशिनामेषां गुहागुहगुहारवान् ॥ ४७ ॥

jahṇurvīcīkarairdehe jaḍāḥ prakupitā iva | āśākāśāśināmeṣāṃ guhāguhaguharavān || 47 ||

The waves, as if enraged, struck the body of Jahnu, making the caves and the sky resound with their echoing roars.

लहरें, जैसे क्रोधित हों, जह्नु के शरीर पर आघात कर रही थीं, जिससे गुफाओं और आकाश में उनकी गूँजती गर्जना गूँज रही थी।

7.75.48

पपाठ शब्द आग्नेयो ज्वालातटतटोद्भवः । लोकपालपुरापाततप्ताङ्गारद्रिभित्तयः ॥ ४८ ॥

papāṭha śabda āgneyo jvālātaṭataṭodbhavaḥ | lokapālapurāpātataptāṅgārādrabhittayaḥ || 48 ||

The sound of the fiery flames arose, as if the walls of the mountains, heated by the falling embers from the cities of the guardians of the world, were cracking.

अग्नि की ज्वालाओं की आवाज उठी, जैसे लोकपालों के नगरों से गिरने वाली तप्त अंगारों से पर्वतों की दीवारें फट रही हों।

7.75.49

दिशो दशापि वैवश्यं ययुरुन्मत्तवृत्तयः । काञ्चनद्रवसाद्रीन्द्रद्रुमागारगुहागृहः ॥ ४९ ॥

diśo daśāpi vaivaśyaṃ yayurunmattavṛttayaḥ | kāñcanadravasādrīndradrumāgāraguhāgṛhaḥ || 49 ||

The directions, though ten in number, became helpless and behaved like madmen. The golden liquid flowed, and the king of mountains, along with the trees, houses, and caves, was affected.

दिशाएँ, दस की संख्या में, असहाय हो गईं और पागलों की तरह व्यवहार करने लगीं। सोने का द्रव बहने लगा, और पर्वतों के राजा, पेड़, घर और गुफाएँ प्रभावित हो गईं।

7.75.50

शनैश्चार्वाकृतिर्मेरुरासीद्धिम इवातपे । क्षणेनैवानलात्तस्माद्धिमवाञ्जतुवद्द्रुतः ॥ ५० ॥

śanaiścārvākṛtirmerurāsīddhima ivātape | kṣaṇenaivānalāttasmāddhimavāñjatuvaddrutaḥ || 50 ||

Slowly, Meru, the king of mountains, became like snow in the heat. In an instant, due to that fire, the Himalayas melted quickly.

धीरे-धीरे, मेरु, पर्वतों का राजा, गर्मी में बर्फ की तरह हो गया। एक पल में, उस आग के कारण, हिमालय तेजी से पिघल गया।

7.75.51

सर्वान्तःशीतलः शुद्धो दुर्जनादिव सज्जनः । तस्यामपि दशायां तु मलयोऽमलसौरभः ॥ ५१ ॥

sarvāntaḥśītalaḥ śuddho durjanādiva sajjanaḥ| tasyāmapi daśāyāṃ tu malayo'malasaurabhaḥ || 51 ||

Even in the worst conditions, the pure and cool-hearted person remains virtuous like sandalwood, which retains its fragrance even among thorns.

सबसे खराब हालातों में भी, शुद्ध और शीतल हृदय वाला व्यक्ति चन्दन की तरह अपनी सुगंध बनाए रखता है, जो काँटों के बीच भी अपनी खुशबू बनाए रखता है।

7.75.52

आसीत्यजत्युदारात्मा न नाशेऽप्युत्तमं गुणम् । नश्यन्नपि महान् ह्लादं न खेदं संप्रयच्छति ॥ ५२ ॥

āsīttyajatyudārātmā na nāśe'pyuttamaṃ guṇam| naśyannapi mahān hlādaṃ na khedaṃ saṃprayacchati || 52 ||

Even when destroyed, the noble-minded person does not lose their supreme qualities. Even while perishing, they bring great joy and do not cause sorrow.

नष्ट होने पर भी, उदार मन वाला व्यक्ति अपने उत्तम गुणों को नहीं खोता। नष्ट होते हुए भी, वह महान आनंद देता है और दुःख नहीं पहुँचाता।

7.75.53

चन्दनं दग्धमप्यासीदानन्दायैव जीवताम् । न कदाचन संयाति वस्तूत्तममवस्तुताम् ॥ ५३ ॥

candanaṃ dagdhamapyāsīdānandāyaiva jīvatām| na kadācana saṃyāti vastūttamamavastutām || 53 ||

Even when burnt, sandalwood brings joy to the living. It never loses its supreme qualities.

जलाये जाने पर भी, चन्दन जीवित लोगों को आनंद देता है। यह कभी भी अपने उत्तम गुणों को नहीं खोता।

7.75.54

प्रलयानलनिर्दग्धमपि हेम न नष्टवत्। द्वे हेमनभसी तस्मिन्न नष्टे प्रलयानले ॥ ५४ ॥

pralayānalanirdagdhamapi hema na naṣṭavat| dve hemanabhasī tasminna naṣṭe pralayānale || 54 ||

Even when burnt by the fire of destruction, gold does not perish. In that destruction, two things remain: gold and the sky.

विनाश की आग में जलाये जाने पर भी, सोना नष्ट नहीं होता। उस विनाश में, दो चीजें बचती हैं: सोना और आकाश।

7.75.55

तयोरेव वपुः श्लाघ्यं सर्वनाशेऽप्यनाशयोः। नभो विभुतयाऽनाशि हेमाकृष्टतयाक्षयम् ॥ ५५ ॥

tayoreva vapuḥ ślāghyaṃ sarvanāśe'pyanāśayoḥ| nabho vibhutayā'nāśi hemaākṛṣṭatayākṣayam || 55 ||

The forms of both gold and the sky are praiseworthy, as they remain indestructible even in complete destruction. The sky is eternal due to its vastness, and gold is eternal due to its inherent value.

सोने और आकाश दोनों के रूप प्रशंसनीय हैं, क्योंकि वे पूर्ण विनाश में भी अविनाशी बने रहते हैं। आकाश अपनी विशालता के कारण अनंत है, और सोना अपने मूल्य के कारण अनंत है।

7.75.56

सत्त्वमेकं सुखं मन्ये न रजो न च वा तमः। चलदुच्चवनानीव विकीर्णाङ्गारवर्षणः ॥ ५६ ॥

sattvamekaṃ sukhaṃ manye na rajo na ca vā tamaḥ | caladuccavanānīva vikīrṇāṅgāravarṣaṇaḥ || 56 ||

I consider sattva (purity) to be the only source of happiness, not rajas (passion) or tamas (ignorance). Like the scattering of burning embers, the fire of passion and ignorance is destructive.

मैं सत्त्व (शुद्धता) को ही सुख का एकमात्र स्रोत मानता हूँ, न कि रजोगुण (क्रोध) या तमोगुण (अज्ञान)। जैसे चिंगारियाँ बिखर जाती हैं, वैसे ही क्रोध और अज्ञान की आग विनाशकारी होती है।

7.75.57

दग्धाब्दाद्रिर्महाधूमज्वालोऽभूद्वह्निवारिदः। रसविस्मरणार्तानां शून्यानां स्फारदेहिनाम् ॥ ५७ ॥

dagdhābdādrirmahādhūmajvālo'bhūdvahnivāridaḥ | rasavismaraṇārtānāṃ śūnyānāṃ sphāradehinām || 57 ||

The mountain, burnt by the fire of passion, became a great smoky flame, like a cloud of fire. Those who are tormented by the forgetfulness of taste are empty and their bodies are swollen.

क्रोध की आग से जला हुआ पर्वत एक बड़ी धुएँ की लपट बन गया, जैसे आग का बादल। जो लोग स्वाद की भूल से पीड़ित हैं, वे खाली हैं और उनके शरीर सूजे हुए हैं।

7.75.58

शुष्काणां व्योमविटपिपत्राणां पात्ररूपिणाम्। वारिदानां सवारीणां दग्धानां प्रलयार्चिषा ॥ ५८ ॥

śuṣkāṇāṃ vyomaviṭapipatrāṇāṃ pātrarūpiṇām | vāridānāṃ savārīṇāṃ dagdhānāṃ pralayārciṣā || 58 ||

The dry leaves of the sky-tree, which are like vessels, are burnt by the flames of destruction, along with the clouds that carry water.

आकाश के वृक्ष के सूखे पत्ते, जो पात्रों की तरह हैं, विनाश की लपटों से जल जाते हैं, साथ ही पानी लेकर चलने वाले बादल भी।

7.75.59

ज्ञस्येवाङ्ग न दोषाणां दृष्टं भस्मापि न क्वचित् । न लङ्घयति कैलासं यावदुल्लसितोऽनलः ॥ ५९ ॥

jñasyevāṅga na doṣāṇāṃ dṛṣṭaṃ bhasmāpi na kvacit | na laṅghayati kailāsaṃ yāvadullasito'nalaḥ || 59 ||

Just as the body of the knower is not seen to be ashes anywhere, the fire does not cross Kailasa as long as it is blazing.

जैसे ज्ञानी का शरीर कहीं भी भस्म नहीं दिखता, वैसे ही आग तब तक कैलास को नहीं पार करती जब तक वह जल रही होती है।

7.75.60

तावत्तं कल्पकुपितो रुद्रो नेत्राग्निनादहत् । दाहस्फुटद्द्रुमस्थूलशिलाचटचटारवाः ॥ ६० ॥

tāvattāṃ kalpakupito rudro netrāgninādahat | dāhasphuṭaddrumasthūlaśilācaṭacaṭāravāḥ || 60 ||

Until then, the angry Rudra burned him with the fire of his eyes, causing the thick trees and rocks to burst and crackle with the sound of burning.

तब तक, क्रोधित रुद्र ने अपनी आँखों की आग से उसे जला दिया, जिससे मोटे पेड़ और पत्थर जलकर फूटने और चटचटाने की आवाज करने लगे।

7.75.61

लकुटोपललोष्टौघैरयुध्यन्तेव भूभृतः । ज्वालाघनघटाटोपसावतंसचलान्तिमाः ॥ ६१ ॥

lakuṭopalaloṣṭaughairayudhyanteva bhūbhṛtaḥ | jvālāghanaghaṭāṭopasāvataṃsacalāntimāḥ || 61 ||

The kings fought as if with stones and clods of earth | The ends of their turbans fluttered like the flames of a burning ghat

राजा पत्थरों और मिट्टी के ढेलों के समान लड़ रहे थे | उनकी पगड़ियों के सिरे जलते घाट की लपटों की तरह लहरा रहे थे

7.75.62

बभूवुर्व्योमविकसत्स्थूलपद्मवना इव । सर्गः कदाचिदेवासीदित्यगात्स्मरणीयताम् ॥ ६२ ॥

babhūvurvyomavikasatsthūlapadmavanā iva | sargaḥ kadācidevāsīdityagātsmaraṇīyatām || 62 ||

They became like large lotuses blooming in the sky | Thus, the creation once existed, and it went into memory

वे आकाश में खिले बड़े कमलों की तरह हो गए | इस प्रकार, सृष्टि एक बार अस्तित्व में आई, और फिर स्मृति में चली गई

7.75.63

कल्पान्तः स्मारयन्मूर्खानगादस्मरणीयताम् । तापोपतापपरमाः परमारणतत्पराः । वह्नयोऽपह्नवं चक्रुर्जगतामसतामिव ॥ ६३ ॥

kalpāntaḥ smārayanmūrkhānagādasmaraṇīyatām | tāpopatāpaparamāḥ paramāraṇatatparāḥ | vahnayo'pahnavaṃ cakrurjagatāmasatāmiva || 63 ||

The end of the eon reminds the foolish of their forgetfulness | Those who are supremely afflicted by heat and suffering are intent on ultimate destruction | The fires concealed the world as if it were non-existent

कल्प का अंत मूर्खों को उनकी भूल याद दिलाता है | जो गर्मी और पीड़ा से अत्यधिक पीड़ित हैं, वे अंतिम विनाश पर ध्यान केंद्रित करते हैं | आग ने संसार को अस्तित्वहीन की तरह छिपा दिया

7.75.64

ववुरशनिनिपातपीडिताङ्गाः कचदनलोल्मुकगुल्ममण्डलाभाः । प्रलयसमयवायवोऽनलान्ताद्दलदमरावलयो लये लिहन्तः ॥ ६४ ॥

vavur aśaninipātapīḍitāṅgāḥ kacadanalolmukagulmamaṇḍalābhāḥ | pralayasamayavāyavo'nalāntād daladamarāvalayo laye lihantaḥ || 64 ||

They blew, their bodies afflicted by the impact of thunderbolts, resembling clusters of burning embers | The winds of destruction, ending in fire, licked the edges of the clouds in dissolution

वे फूँक रहे थे, उनके शरीर वज्रपात की पीड़ा से पीड़ित थे, जलती अंगारों के झुंड की तरह | विनाश के समय की हवाएँ, आग में समाप्त होती हुई, विलीन होते बादलों के किनारों को चाट रही थीं

7.75.65

व्यालोलस्फुटदानलद्रुमवनप्रोद्भूतभस्मोष्मणा दत्ताभ्राभ्रमदुल्मुकाहतिवहत्साङ्गारगौरार्चिषः ।
भ्रश्यत्पावकशृङ्गमध्यविलसज्ज्वालावलीश्यामला निःशेषाग्निनिकाशसुस्तवजवा वेगेन वाता ववुः ॥ ६५ ॥

vyālolasphuṭadānaladrumavanaprodhbhūtabhasmoṣmaṇā dattābhrābhramadulmukāhativahatsāṅgāragaurārciṣaḥ | bhraśyatpāvakasṛṅgamadhyavilasajjvālāvalīśyāmalā niḥśeṣāgninikāsasustavajavā vegena vātā vavuḥ || 65 ||

With the intense heat produced from the bursting flames in the forest of burning trees, the dark ashes rose like clouds | The winds blew swiftly, resembling the radiant embers, with the dark flames flickering in the middle of the collapsing fire peaks

जलते पेड़ों के जंगल से उत्पन्न फटती आग की तीव्र गर्मी से काले भस्म बादलों की तरह उठे | वेग से हवाएँ चलीं, चमकती अंगारों की तरह, जिनकी मध्य में गिरते अग्नि शिखरों के बीच काली लपटें लहरा रही थीं

Chapter 76

7.76.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ कल्पान्तमरुति वहत्यवधुताचले । बलेनाम्भोधिकल्लोलैर्नभस्यावर्तकारिणि ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha kalpāntamaruti vahatyavadhutācale | balenāmbhodhikallolairnabhasyāvartakāriṇi || 1 ||

Sri Vasistha said: Then, at the end of the kalpa, the wind blows over the barren mountains, with the force of the ocean waves, causing the sky to whirl.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, कल्प के अंत में, हवा उजाड़ पहाड़ों पर चलती है, समुद्र की लहरों की शक्ति से, आकाश को घुमाती हुई।

7.76.2

समुद्रेषु विमुद्रेषु मर्यादोल्लङ्घने घने । अधनेषु धनिष्वम्बुदारिद्र्योपद्रवद्रुते ॥ २ ॥

samudreṣu vimudreṣu maryādollaṅghane ghane | adhaneṣu dhaniṣvambudāridryopadravadruṭe || 2 ||

In the oceans that have lost their boundaries, in the dense clouds that bring poverty and calamities to the wealthy and the poor.

जिन समुद्रों ने अपनी सीमाएं खो दी हैं, जिन घने बादलों ने अमीरों और गरीबों पर गरीबी और आपदाएं ला दी हैं।

7.76.3

भूतले भूतलेशांशवर्जिते वह्निभर्जिते । पातालमपि पाताले गते किमपि कालतः ॥ ३ ॥

bhūtale bhūtaleśāṃśavarjite vahnibharjite | pātālamapi pātāle gate kimapi kālataḥ || 3 ||

On the earth, devoid of its rulers, scorched by fire, even the underworld is affected by the passage of time.

पृथ्वी पर, जिसके शासक नहीं हैं, आग से जली हुई, समय के प्रवाह से पाताल भी प्रभावित है।

7.76.4

दिवि वा विद्यमानायां विशीर्णे सर्गवर्गके । लोके व्योमगतालोके शोकौकसि ककुब्गणे ॥ ४ ॥

divi vā vidyamānāyāṃ viśīrṇe sargavargake | loke vyomagatāloke śokaukasi kakubgaṇe || 4 ||

In the sky, even if it exists, the creation is destroyed, the world is in the sky, full of sorrow and calamities.

आकाश में, भले ही वह मौजूद हो, सृष्टि नष्ट हो गई है, दुनिया आकाश में है, दुःख और आपदाओं से भरी हुई।

7.76.5

कुतोऽप्याकाशकुहराद्दृप्तदैत्यगणा इव । पुष्करावर्तका मेघाश्चक्रुर्गुलुगुलारवम् ॥ ५ ॥

kuto'pyākāśakuharāddṛptadaityagaṇā iva | puṣkarāvartakā meghāścakrurgulugulāravam || 5 ||

From some corner of the sky, like proud demons, the clouds in the form of lotus whirls made a rumbling sound.

आकाश के किसी कोने से, घमंडी दैत्यों की तरह, कमल के आकार में बादल गरजने लगे।

7.76.6

ब्रह्मविस्फोटितस्वाण्डकुड्यविस्फोटनोद्भटम्। अन्योन्यास्फालनोत्फालमत्तार्णवरवाविलम्॥ ६॥

brahmavisphoṭitasvāṇḍakuḍyavisphoṭanodbhataṃ| anyonyāsphālanotphālamattārṇavaravāvilam || 6 ||

The universe, bursting with the sound of Brahma's egg, is filled with the clamor of shattering pots| The mutual collision and falling of the intoxicated ocean waves.

ब्रह्मांड का अंडा फटने की आवाज से भरा हुआ है, घड़ों के फूटने की आवाज से भरा हुआ है| परस्पर टकराने और गिरने की आवाज से मतवाले समुद्र की लहरें भरी हुई हैं।

7.76.7

लोकार्णवपुरोद्गीर्णघनकोलाहलोल्वणम्। एतत्कुलाचलस्कन्धबद्धोग्रखघर्घरम्॥ ७॥

lokārṇavapurodgīrṇaghanakolāhalolvaṇam| etatkulācalaskandhabaddhograravaghargharam || 7 ||

The world is submerged in the dense uproar of the ocean| This is the fierce sound bound to the mountain range.

संसार समुद्र के घने शोर में डूबा हुआ है| यह पर्वत श्रृंखला से जुड़ा हुआ भयानक शब्द है।

7.76.8

ब्रह्माण्डशङ्खजठरपूरणावर्तमन्थरम्। स्वर्लोकरोदःपातालतलतोऽतिसगुल्मकम्॥ ८॥

brahmāṇḍaśaṅkhajaṭharapūraṇāvartamantharam| svarlokarodaḥpātālatalato'tisagulmakam || 8 ||

The universe is filled with the sound of conch shells, whirling and slow| From the heavenly realm to the underworld, it is extremely dense.

ब्रह्मांड शंख की आवाज से भरा हुआ है, घूमता हुआ और धीमा| स्वर्ग से लेकर पाताल तक, यह अत्यंत घना है।

7.76.9

समस्तदूरदिग्भित्तिहेलाहेलनघर्षुलम्। महाप्रलयसंपन्नापानकापानतर्षुलम्॥ ९॥

samastadūradigbhittihelāhelanagharṣulam| mahāpralayasaṃpannāpānakāpānatarṣulam || 9 ||

The entire distant directions are filled with the sound of shouting and grinding| The great dissolution is filled with the sound of drinking and thirst.

सम्पूर्ण दूर दिशाएँ चिल्लाहट और कर्कश आवाज से भरी हुई हैं| महाप्रलय पीने और प्यास की आवाज से भरा हुआ है।

7.76.10

प्रसृतप्रलयाख्येन्द्रमत्तैरावतबृंहितम्। आकल्पक्षुब्धमेघाब्धिनिर्ह्रादमिव संभृतम्॥ १०॥

prasṛtapralayākhyendramattairāvatabṛṃhitam| ākalpakṣubdhameghābdhinirhrādamiva saṃbhṛtam || 10 ||

The dissolution is known as Indra's intoxicated elephant Airavata| It is as if the roaring of the agitated clouds of the ocean has been gathered.

प्रलय इंद्र के मतवाले हाथी ऐरावत के रूप में जाना जाता है| यह ऐसा लगता है जैसे समुद्र के उत्तेजित बादलों की गर्जना एकत्र की गई हो।

7.76.11

महाप्रलयसंक्षुब्धक्षीरोदमथनारवम्। ब्रह्माण्डोग्रारघट्टेऽस्मिन्वार्यन्त्रमिव सारवम्॥ ११॥

mahāpralayasaṃkṣubdhakṣīrodamathanāravam | brahmāṇḍogrāraghaṭṭe'sminvāryantramiva sāravam || 11 ||

The tumultuous churning of the ocean of milk during the great dissolution is like a mighty machine in the vast universe, resounding with a deep roar.

महाप्रलय के समय क्षीर सागर का मथन एक भयंकर यंत्र की तरह है, जो ब्रह्मांड में गहरी गड़गड़ाहट के साथ गूंज रहा है।

7.76.12

अथास्मिन्सति कल्पाग्नौ स्थितिमेति कथं घनः । इति विस्मितवानस्मि दृशं दिग्नवकेऽत्यजम् ॥ १२ ॥

athāsmin sati kalpāgnau sthitim eti kathaṃ ghanaḥ | iti vismitavān asmi dṛśaṃ dignavake'tyajam || 12 ||

How can the dense cloud remain stable in this fiery dissolution? Thus, I was amazed, and my vision was obscured in all directions.

इस आग के प्रलय में घना बादल कैसे स्थिर रह सकता है? इस प्रकार मैं आश्चर्यचकित हो गया, और मेरी दृष्टि सभी दिशाओं में अस्पष्ट हो गई।

7.76.13

यावन्न क्वचिदेवात्र पश्याम्याशासु केवलम् । तरन्ति तरलास्फालमुल्मुकाशनिवृष्टयः ॥ १३ ॥

yāvanna kvacidevātra paśyāmyāśāsu kevalam | taranti taralāsphālam ulmukāśanivṛṣṭayaḥ || 13 ||

Until I see anything hopeful here, the unstable lightning strikes are crossing like flickering flames.

जब तक मैं यहाँ किसी आशा को नहीं देखता, तब तक अस्थिर बिजली की चमक झिलमिलाती लपटों की तरह चली जा रही है।

7.76.14

तेन ज्वलनतापेन बहुयोजनकोटिषु । पदार्था भस्मतां यान्ति दूरे दिक्षु दशस्वपि ॥ १४ ॥

tena jvalanatāpena bahuyojanakoṭiṣu | padārthā bhasmatāṃ yānti dūre dikṣu daśasvapi || 14 ||

Due to that intense heat of the blazing fire, objects are reduced to ashes in countless distant places in all ten directions.

उस तीव्र आग की गर्मी के कारण, असंख्य दूरस्थ स्थानों में दसों दिशाओं में वस्तुएँ भस्म हो जाती हैं।

7.76.15

अनन्तरं क्षणाद्व्योम्नि दूरेऽहमनुभूतवान् । ऊर्ध्वतः शीतलं वातमधस्तादनलोपमम् ॥ १५ ॥

anantaraṃ kṣaṇād vyomni dūre'ham anubhūtavān | ūrdhvataḥ śītalaṃ vātam adhastād analopamam || 15 ||

Immediately afterwards, I experienced in the distant sky a cool breeze from above and a fiery wind from below.

तुरंत बाद, मैंने दूरस्थ आकाश में ऊपर से ठंडी हवा और नीचे से आग की तरह गर्म हवा का अनुभव किया।

7.76.17

अथ वारुणदिग्भागादाययौ कल्पमारुतः । यस्मिंस्तृणवदुह्यन्ते विन्ध्यमेरुहिमालयाः ॥ १७ ॥

atha vāruṇadigbhāgādāyayau kalpamārutaḥ | yasmiṃstṛṇavaduhyante vindhyameruhimālayāḥ || 17 ||

Then, a storm arose from the western direction, in which the Vindhya, Meru, and Himalaya mountains were shaken like blades of grass.

तब, पश्चिम दिशा से एक तूफान उठा, जिसमें विन्ध्य, मेरु और हिमालय पर्वत घास के तिनकों की तरह हिल गए।

7.76.18

तेन ज्वालाचलाः प्रान्तोड्डीनाङ्गारविहंगमाः । लोलोल्मुकवनाक्रान्ता जग्मुरग्निदिशं द्रुतम् ॥ १८ ॥

tena jvālācalāḥ prāntoḍḍīnāṅgāravihangamāḥ | lololmukavanākrāntā jagmuragnidiśaṃ drutam || 18 ||

Due to that storm, the volcanoes, with their fiery peaks and embers flying like birds, and forests swaying, quickly moved towards the direction of fire.

उस तूफान के कारण, ज्वालामुखी, जिनके अग्नि के शिखर और अंगारे पक्षियों की तरह उड़ रहे थे, और वनों के साथ डोल रहे थे, तेजी से अग्नि की दिशा में बढ़ गए।

7.76.19

संध्याभ्रसदृशाकारास्तेरुरङ्गारवारिदाः । भ्रेमुर्भस्मभराभ्राणि पूताङ्गाररजांसि खे ॥ १९ ॥

saṃdhyābhra sadṛśākārāstērurangāravāridāḥ | bhremurbhasmabharābhraṇi pūtāṅgārarajāṃsi khe || 19 ||

The clouds, resembling the evening twilight, poured down embers like rain, and the ashes, purified by the embers, swirled in the sky.

संध्या के बादलों की तरह दिखने वाले बादल अंगारों की वर्षा करते थे, और अंगारों द्वारा पवित्र की गई राख आकाश में घूम रही थी।

7.76.20

स ज्वालविलसद्वातो दुष्टोऽनलदृशं व्रजन् । हेमाद्रीणां सपक्षाणामनीकं द्रवतामिव ॥ २० ॥

sa jvālavilasadvāto duṣṭo'naladṛśaṃ vrajan | hemādrīṇāṃ sapakṣāṇāmanīkaṃ dravatāmiva || 20 ||

That wind, adorned with flames, moving wickedly like fire, caused the army of the golden mountains with wings to flee as if in retreat.

उस आग से सजा हुआ वायु, जो दुष्ट और अग्नि की तरह चल रहा था, सोने के पहाड़ों की पंखों वाली सेना को पीछे हटने के समान भागने के लिए मजबूर कर दिया।

7.76.21

धराद्रिमण्डलाभोगे सौम्याङ्गारभरात्मनि । ज्वालावलिगणे जाते भाते तेजसि भास्वताम् ॥ २१ ॥

dharādrimaṇḍalābhogē saumyāṅgārabharātmani | jvālāvaligaṇē jātē bhātē tējasibhāsvatām || 21 ||

In the realm of the earth, mountains, and the circle of the moon, filled with gentle embers, the rows of flames arose, shining with brilliant light.

धरती, पहाड़ों और चंद्रमा के मण्डल में, जो कोमल अंगारों से भरा हुआ है, आग की पंक्तियाँ उठीं, जो चमकदार प्रकाश से चमक रही थीं।

7.76.22

अर्णवेष्वनलार्णस्सु क्वथनोत्फालवारिषु । वनेष्वस्मृतपर्णेषु दीप्ताग्नितरुधारिषु ॥ २२ ॥

arṇaveṣvanalārṇassu kvathanotphālavāriṣu | vaneṣvasmṛtaparṇeṣu dīptāgnitarudhāriṣu || 22 ||

In the oceans, where the fire of dissolution boils, in the forests where the leaves are forgotten, and in the trees that bear the blazing fire.

जहाँ प्रलय की अग्नि उबलती है, उन समुद्रों में, जहाँ पत्ते भूल गए हैं, उन वनों में, और जो पेड़ प्रज्वलित अग्नि को धारण करते हैं।

7.76.23

ब्रह्मलोकस्थनाथेषु ब्रह्मलोकपुरेषु च । साङ्गनाबालवृद्धेषु दग्धेषु निपतत्सु खम् ॥ २३ ॥

brahmalokasthanātheṣu brahmalokapureṣu ca | sāṅganābālavṛddheṣu dagdheṣu nipatatsu kham || 23 ||

In the cities of Brahmaloka, where the lords reside, and in the complete destruction of children and the elderly, falling from the sky.

जहाँ ब्रह्मलोक के स्वामी रहते हैं, ब्रह्मलोक के नगरों में, और बच्चों और बूढ़ों के पूर्ण विनाश में, आकाश से गिरते हुए।

7.76.24

कल्पान्तानलपद्मिन्या ब्रह्माग्रावसरोवरे । ज्वालापल्लवशालिन्याः सबीजायाः सटोल्मुकैः ॥ २४ ॥

kalpāntānalapadminyā brahmāgrāvasarovare | jvālāpallavaśālinyāḥ sabījāyāḥ saṭolmukaiḥ || 24 ||

In the lotus pond of Brahma's abode, which is filled with the fire of dissolution, with flames as its petals, and with seeds and sprouts.

ब्रह्मा के निवास स्थान के कमल तालाब में, जो प्रलय की अग्नि से भरा है, जिसके पंखुड़ियाँ ज्वालाएँ हैं, और जिसमें बीज और अंकुर हैं।

7.76.25

अनिलात्मसु मूलेषु नागेषु च नगेषु च । आपातालं निमग्नेषु महत्यङ्गारकर्दमे ॥ २५ ॥

anilātmasu mūleṣu nāgeṣu ca nageṣu ca | āpātālaṃ nimagneṣu mahatyaṅgārakardame || 25 ||

In the roots that are the essence of wind, in the serpents and mountains, submerged in the great abyss of embers.

जो वायु के सार हैं, उन जड़ों में, सर्पों और पर्वतों में, जो अंगारों के महान गर्त में डूबे हुए हैं।

7.76.26

उष्ट्रसैन्यमिवालक्ष्य गतिमन्निकटं नभः । आययावञ्जनश्यामः कल्पाम्बुदगणः क्वणन् ॥ २६ ॥

uṣṭrasainyamivālakṣya gatimannikataṃ nabhaḥ | āyayāvañjanśyāmaḥ kalpāmbudagaṇaḥ kvaṇan || 26 ||

Seeing the army of camels approaching, the dark cloud of dissolution, making a humming sound, came near the sky.

ऊँटों की सेना को आते देख, प्रलय का काला बादल, गुंजार करते हुए, आकाश के पास आया।

7.76.27

स्थिरकल्पानलज्वालातुल्यविद्युन्मयाचलः । एककोणकविश्रान्तसप्तार्णवपयोभरः ॥ २७ ॥

sthirakalpānalajvālātulyavidyunmayācalaḥ | ekakoṇakaviśrāntasaptārṇavapayobharaḥ || 27 ||

The mountain, which is steady and comparable to the flames of the fire of destruction, is made of lightning and bears the weight of the seven oceans, resting on a single corner.

यह पर्वत जो स्थिर है और प्रलय की अग्नि की ज्वालाओं के समान है, वह विद्युत से बना है और सात समुद्रों का भार वहन करता है, एक कोण पर विश्राम करता है।

7.76.28

भित्तिभासुरनीहारभारनिर्वारदिक्तटः । ब्रह्माण्डकुड्यनिविडमण्डलास्फोटपण्डितः ॥ २८ ॥

bhittibhāsura nīhārabhāranirvār adiktaṭaḥ | brahmāṇḍa kuḍyanivida maṇḍalāsphoṭa paṇḍitaḥ || 28 ||

The shore that removes the burden of the radiant mist of the walls, is skilled in the bursting of the dense sphere of the universe.

जो दीवारों की चमकीली धुंध का भार दूर करता है, वह तट ब्रह्माण्ड के घने गोले के फटने में कुशल है।

7.76.29

कल्पान्तक्षुभिताम्भोधिर्वर्तुलावर्तवृत्तिमान् । तडिज्जलचरः सारनिर्ह्रादः खमिवागतः ॥ २९ ॥

kalpānta kṣubhitāmbhodhirvartulāvartavṛttimān | taḍijjalacaraḥ sāranirhrādaḥ khamivāgataḥ || 29 ||

The ocean, agitated at the end of the world, is circular in motion, and the lightning, moving like water, makes a deep sound as if it has reached the sky.

यह समुद्र, जो प्रलय के अंत में हलचल मचाता है, गोलाकार गति से चलता है, और विद्युत, जो पानी की तरह चलती है, एक गहरा शब्द करती है जैसे कि वह आकाश तक पहुंच गई है।

7.76.30

मृतो दग्धो निशानाथस्ततो द्विगुणशीतलः । अन्यमाकारमाश्रित्य परं लोकमिवागतः ॥ ३० ॥

mṛto dagdho niśānāthastato dviguṇaśītalaḥ | anyamākāramāśritya paraṃ lokamivāgataḥ || 30 ||

Dead and burnt, the lord of the night, then became twice as cold, taking another form, as if he had reached the other world.

मृत और जला हुआ, रात का स्वामी, फिर दुगनी ठंडा हो गया, दूसरे रूप को धारण करके, जैसे कि वह दूसरी दुनिया में पहुंच गया हो।

7.76.31

हेमसंभाररूपेण हिमालयमिवाखिलम् । जाड्यस्तम्भितनिःशेषजलकाष्ठाचलं दधत् ॥ ३१ ॥

hemasaṃbhārarūpeṇa himālayamivākhilam | jāḍyastambhitaniḥśeṣajalakāṣṭhācalaṃ dadhat || 31 ||

With the form of a heap of gold, it holds the entire Himalayas, with all its water, wood, and mountains frozen and stiffened by the cold.

सोने के ढेर के रूप में, यह पूरे हिमालय को धारण करता है, जिसमें सभी पानी, लकड़ी और पहाड़ ठंड से जमे हुए और अकड़े हुए हैं।

7.76.32

अथ ब्रह्माण्डविस्फोटकठिनं घटिताम्बरम् । प्राग्द्रुतोद्भटतौषारकाष्ठा वृष्टिः पपात ह ॥ ३२ ॥

atha brahmāṇḍavisphoṭakaṭhinaṃ ghaṭitāmbaram| prāgdrutodbhaṭatauṣārakāṣṭhā vṛṣṭiḥ papāta ha || 32 ||

Then, the sky became dense with the explosion of the universe | A heavy rain poured down, preceded by a sudden storm with hailstones.

फिर, ब्रह्मांड के विस्फोट से आकाश घना हो गया | अचानक आंधी और बर्फ के टुकड़ों के साथ भारी वर्षा हुई।

7.76.33

अग्निदाहवनाकाशविद्युदुन्मेषभीषणा । चटद्गडगडास्फोटस्फुटद्ब्रह्माण्डमण्डला ॥ ३३ ॥

agnidāhavanākāśavidyudunmeṣabhīṣaṇā| caṭadgaḍagaḍāsphoṭasphuṭadbrahmāṇḍamaṇḍalā || 33 ||

The sky was terrifying with the blazing fire, lightning flashes, and the crackling sound of the exploding universe.

आकाश धधकती आग, बिजली की चमक और ब्रह्मांड के विस्फोट की चटचटाहट से भयानक था।

7.76.34

प्रथितोत्थितसीत्कारशतक्ष्वेडाक्षयारवा । शीतसीकरनीहारभित्तिबन्धमयाम्बरा ॥ ३४ ॥

prathitotthitasītkāraśatakṣvedākṣayāravā| śītasīkaranīhārabhittibandhamayāmbarā || 34 ||

The sky was filled with the loud cries of people, the sound of a thousand screams, and the cold, icy hailstones.

आकाश लोगों की चीखों, हजारों चीत्कारों की आवाज और ठंडी, बर्फीली बूंदों से भरा हुआ था।

7.76.35

रोदोमण्डपवैदूर्यस्तम्भसंभारभासुरैः । धारासारैर्धराधुर्यशैलशातकशालिनी ॥ ३५ ॥

rodomaṇḍapavaidūryastambhasaṃbhārabhāsuraiḥ| dhārāsārairdharādhuryaśailaśātakaśālinī || 35 ||

The earth was adorned with the brilliant assembly of crystal pillars and the essence of the streams flowing from the best mountains.

पृथ्वी स्फटिक के स्तंभों की चमकदार सभा और श्रेष्ठ पर्वतों से बहने वाली धाराओं की सार से सजी हुई थी।

7.76.36

धराचटचटास्फोटस्फुटदङ्गारपत्तना । गर्जितोर्जितसंपातपतल्लोकान्तराकुला ॥ ३६ ॥

dharācaṭacaṭāsphoṭasphuṭadaṅgārapattanā| garjitorjitasaṁpātapatallokāntarākulā || 36 ||

The earth trembled with the crackling sound of burning embers falling, and the worlds were disturbed by the roaring and powerful impact.

पृथ्वी धधकते अंगारों की चटचटाहट और गिरने की आवाज से काँप उठी, और गर्जना और शक्तिशाली प्रभाव से लोक व्याकुल हो गए।

7.76.37

सा बभूवाथ साङ्गारजगद्गेहविलासिनी । कृतप्रत्युद्गमा वाष्पश्रियाऽज्वलनया भुवः ॥ ३७ ॥

sā babhūvātha sāṅgārajagadgehavilāsinī | kṛtapratyudgamā vāṣpaśriyā'jvalanayā bhuvaḥ || 37 ||

She then became the ornament of the world, adorned with the splendor of the house, with tears of joy, and the earth blazed with her glory.

वह फिर संसार की शोभा बन गई, घर की शोभा से सजी हुई, आनंद के आंसुओं से और पृथ्वी उसकी महिमा से जल उठी।

7.76.38

ज्वालालवोल्लनडम्बरमम्बरं तद्व्यूढस्थलाब्जदलजालमिवालमासीत् । ज्वालाभ्रमद्भ्रमरपङ्क्तिनिभास्तदासंस्तत्र स्फुरच्छिशिरसीकरपक्षपुञ्जाः ॥ ३८ ॥

jvālālavollalanaḍambaramambaraṃ tadvyūḍasthalābjadalajālamivālamāsīt |
jvālābhramadbhamarapaṅktinibhāstadāsaṃstatra sphuracchiśirasīkarapakṣapuñjāḥ || 38 ||

The sky was filled with the radiance of flames, resembling a lotus pond with its blossoms. The bees, intoxicated by the fragrance, buzzed around, and the cool drops of dew sparkled.

आकाश ज्वालाओं की चमक से भरा हुआ था, जो कि खिले हुए कमलों वाले तालाब की तरह लग रहा था। सुगंध से मतवाली भँवरें भनभना रही थीं, और ठंडे ओस की बूंदें चमक रही थीं।

7.76.39

उद्यद्बृहच्चटचटारवपूरिताशो भीमोऽभवत्सलिलदानलसंनिपातः । दुर्वारवैरिविषमो महतां बलानां संग्राम उग्र इव हेतिहतोग्रहेतिः ॥ ३९ ॥

udyadbṛhaccaṭacaṭāravapūritāśo bhīmo'bhavatsaliladānalasaṃnipātaḥ | durvāravairiviṣamo mahatāṃ balānāṃ saṃgrāma ugra iva hetihetograhetiḥ || 39 ||

The fierce battle became terrible with the clashing of weapons and the roar of the ocean. It was as if the great warriors were engaged in a brutal and unyielding conflict.

यह भयंकर युद्ध हथियारों की टक्कर और समुद्र की गर्जना से भयानक हो गया। ऐसा लग रहा था मानो महान योद्धा एक कठोर और अटूट संघर्ष में लगे हुए हों।

Chapter 77

7.77.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथावनिपयस्तेजःपवनानां युगक्षये । जाते परमसंक्षोभे बभूवास्मिञ्जगत्त्रयम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athāvanipayastejaḥpavanānāṃ yugakṣaye | jāte paramasaṃkṣobhe babhūvāsmiñjagattrayam ||1||

Shri Vasishtha said: Then, at the end of the yuga, there was a great disturbance in the earth, water, fire, and air, and the three worlds were affected.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, युग के अंत में, पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु में बड़ा उत्पात हुआ, और तीनों लोकों पर असर हुआ।

7.77.2

तापिच्छविपिनोड्डीतिनिभभस्माभ्रभासुरम् । महार्णवमहावर्तवृत्ति धूमविवर्तनम् ॥ २ ॥

tāpicchavipinoḍḍītinibhabhasmābhrabhāsuram | mahārṇavamahāvartavṛtti dhūmavivartanam ||2||

The world became filled with heat, smoke, and ashes, resembling a great ocean with whirlpools and smoke.

दुनिया गर्मी, धुआँ, और राख से भर गई, जैसे कि एक बड़ा समुद्र जिसमें भंवर और धुआँ हो।

7.77.3

नीलज्वालालवोल्लासहेलाटिमिटिमारटि । कृतभस्माभ्रसंभारपूर्णलोकान्तरान्तरम् ॥ ३ ॥

nīlajvālālavollāsahelāṭimitiimāraṭi | kṛtabhasmābhrasaṃbhārapūrṇalokāntarāntaram ||3||

The world was filled with blue flames, sparks, and ashes, creating a chaotic and destructive environment.

दुनिया नीली ज्वालाओं, चिंगारियों, और राख से भर गई, जिससे एक उथल-पुथल और विनाशकारी वातावरण बना।

7.77.4

उच्छलद्दीर्घरुत्कारैश्छमच्छममयात्मकैः । तूर्यमुन्नमदासारविसारिजयघोषणम् ॥ ४ ॥

ucchaladdīrgharutkāraiśchamacchamamayātmakaiḥ | tūryamunnamadāsāravisārijaighoṣaṇam ||4||

The world was filled with loud, continuous roars and the sound of victory, creating a chaotic and victorious atmosphere.

दुनिया ऊँची और लगातार गर्जनाओं और विजय की ध्वनि से भर गई, जिससे एक उथल-पुथल और विजयी वातावरण बना।

7.77.5

भ्रमद्भस्माभ्रधूम्राभ्रं बृहत्कल्पाभ्रसंभ्रमम् । बाष्पाभ्रविभ्रमोद्भ्रान्तसीकरोग्राभ्रवृन्दवत् ॥ ५ ॥

bhramadbhasmābhradhūmrābhraṃ bṛhatkalpābhrasaṃbhramam |
bāṣpābhravibhramodbhrāntasīkarogrābhravṛndavat ||5||

The world was filled with swirling ashes, smoke, and clouds, creating a chaotic and destructive environment.

दुनिया घूमती हुई राख, धुआँ, और बादलों से भर गई, जिससे एक उथल-पुथल और विनाशकारी वातावरण बना।

7.77.6

ब्रह्माण्डभित्तिभांकारभीषणैर्मातरिश्वनः । प्रसरैरम्बरोड्डीनदग्धेन्द्रादिपुरोत्करम् ॥ ६ ॥

brahmāṇḍabhittibhāṅkārabhīṣaṇairmātariśvanaḥ | prasarairambaroḍḍīnadagdhendrādipurotkaram || 6 ||

The terrifying sounds of the universe's walls being shattered by the winds of destruction, and the burning of the celestial cities of Indra and others, are described.

ब्रह्माण्ड की दीवारों के टूटने की भयानक आवाजें और वायु के प्रसार से आकाश में इंद्र आदि के नगरों के जलने का वर्णन है।

7.77.7

जलानलानिलोल्लासस्फुटत्कोटिगताश्मनाम् । प्रविघट्टनटंकारैर्जडीभूताक्षकश्रुति ॥ ७ ॥

jalānalānilollāsasphuṭatkoṭigatāśmanām | pravighaṭṭanaṭaṅkārairjaḍībhūtākṣakashruti || 7 ||

The sounds of the clashing of stones, which are bursting due to the intense heat of fire and wind, are described as deafening.

अग्नि और वायु की तीव्र गर्मी से फटने वाले पत्थरों के टकराने की आवाजें बहरी बना देने वाली बताई गई हैं।

7.77.8

नभःस्तम्भनिभाबन्धधारानीरन्ध्रवर्षणैः । कर्षणैः कल्पवह्नीनां छमच्छमघनध्वनि ॥ ८ ॥

nabhaḥstambhanibhābandhadhārānīrandhravarṣaṇaiḥ | karṣaṇaiḥ kalpavahnīnāṃ chamachchamaghanadhvani || 8 ||

The sounds of the clouds pouring down the rains of destruction, resembling the end of the world, are described as terrifying.

विनाश की वर्षा बरसाने वाले बादलों की आवाजें, जो प्रलय के समान लगती हैं, भयानक बताई गई हैं।

7.77.9

गङ्गा तरङ्गिका येषां तादृशैः सरितां गणैः । अभ्रैरिव नभोभीमैः पूर्यमाणाखिलार्णवम् ॥ ९ ॥

gaṅgā taraṅgikā yeṣāṃ tādṛśaiḥ saritāṃ gaṇaiḥ | abhrairiwa nabhobhīmaiḥ pūryamāṇākhilārṇavam || 9 ||

The rivers, with waves like the Ganges, are described as filling the entire ocean, resembling terrifying clouds in the sky.

गंगा की तरह लहरों वाली नदियां, आकाश में भयानक बादलों के समान, पूरे समुद्र को भरती हुई बताई गई हैं।

7.77.10

तापिच्छपत्रवृन्दस्थपुष्पगुच्छसमोपमैः । तपद्भिरर्कैरालीढपीठकल्पाभ्रमण्डलम् ॥ १० ॥

tāpicchhapatravṛndasthapuṣpagucchasamopamaiḥ | tapadbhirarkairālīḍhapīṭhakalpābhramaṇḍalam || 10 ||

The sky is described as a canopy adorned with clusters of flower-like clouds, shining brightly like the sun.

आकाश फूलों के समान बादलों के झुंड से सजा हुआ छत्र के समान बताया गया है, जो सूर्य की तरह चमक रहा है।

7.77.11

वहद्गिरिसरिद्व्यूहशिखरिद्वीपपत्तनम् । कल्पानिलघनक्षोभकृतपर्वतकुट्टनम् ॥ ११ ॥

vahadgirisaridvyūhaśikharidvīpapattanam | kalpānilaghanakṣobhakṛtaparvatakuṭṭanam || 11 ||

The mountains, rivers, and islands are in turmoil, and the strong winds of the apocalypse cause the mountains to crumble.

पर्वत, नदियाँ और द्वीप उथल-पुथल मचा रहे हैं, और प्रलय की तेज हवाएँ पर्वतों को टूटने का कारण बन रही हैं।

7.77.12

ग्रहतारागणैरुग्रैर्व्यग्रैर्विग्रहदुर्ग्रहैः । पतद्भिर्द्विगुणालातलतामावर्तपातिभिः ॥ १२ ॥

grahatārāgaṇairugrairvyagrairvigrahadurgrahaiḥ | patadbhirdviguṇālātalatāmāvartapātibhiḥ || 12 ||

Fierce planets and stars, agitated and causing conflict, fall with double the force, creating whirlpools and torrents.

उग्र ग्रह और तारे, अशांत और संघर्ष पैदा कर रहे हैं, दोगुनी शक्ति से गिर रहे हैं, भंवर और जलप्रपात बना रहे हैं।

7.77.13

आवहोत्थजलाद्रीन्द्रसंघट्टास्फोटघट्टितम् । महाप्रलयपर्यस्तपर्वतप्रान्तकुट्टिमम् ॥ १३ ॥

āvahotthajalādrīndrasaṃghaṭṭāsphoṭaghaṭṭitam | mahāpralayaparyastaparvataprāntakuṭṭimam || 13 ||

The mountains and the sea clash and burst, causing great destruction during the apocalypse, with the mountain peaks crumbling.

पर्वत और समुद्र टकराते हैं और फट जाते हैं, प्रलय के दौरान बड़ा विनाश पैदा करते हैं, पर्वत के शिखर टूट जाते हैं।

7.77.14

घनसीकृतबाष्पाभ्रैः कल्पाभ्रैरपि मेदुरैः । अन्धीकृतार्कजालांशुतमोनिविडमन्थरम् ॥ १४ ॥

ghanasīkṛtabāṣpābhraiḥ kalpābhraiḥ api meduraiḥ | andhīkṛtārkajālāṃśutamoniwiḍamantharam || 14 ||

Dense clouds of tears and apocalyptic clouds make the sun's rays dim, creating a thick and impenetrable darkness.

घने आँसू और प्रलय के बादल सूर्य की किरणों को मंद कर देते हैं, एक घनी और अभेद्य अंधेरा पैदा करते हैं।

7.77.15

विशीर्णवसुधापीठखण्डखण्डैर्गलत्तटैः । उह्यमानैर्लुठच्छैलपतनैः संकटार्णवम् ॥ १५ ॥

viśīrṇavasudhāpīṭhakhaṇḍakhaṇḍairgalattaṭaiḥ | uhyamānairluṭacchailapatanaiḥ saṅkaṭārṇavam || 15 ||

The earth's surface is shattered into fragments, with the shores crumbling and the mountains falling, creating a perilous ocean.

पृथ्वी की सतह टुकड़ों में बिखर गई है, किनारे टूट रहे हैं और पर्वत गिर रहे हैं, एक खतरनाक समुद्र बना रहे हैं।

7.77.16

ऊर्म्युद्यदुपलच्छिन्नघनैर्घेस्मरमारुतैःसमुद्रघोषैर्निर्घातगम्भीरैर्भग्नदिक्तटम् ॥ १६ ॥

ūrmyudyadupalacchinnaghanairghesmaramārutaiḥsamudraghoṣairnirghātagambhīrairbhagnadiktaṭam || 16 ||

The directions and shores are broken by the deep and terrifying roars of the ocean, the clouds that are cut by the rising waves, and the winds that carry the smell of water.

गहरे और भयानक समुद्र के गर्जन से, उठती हुई लहरों से कटे हुए बादलों और पानी की गंध लेकर चलने वाली हवाओं से दिशाएँ और तट टूट गए हैं।

7.77.17

ब्रह्माण्डकुड्यक्रोडाग्रकुट्टकैः कटुटांकृतैःकल्पाभ्रविटपास्फोटैर्घट्टितैकार्णवारटि ॥ १७ ॥

brahmāṇḍakuḍyakroḍāgrakuṭṭakaiḥ kaṭuṭāṃkṛtaiḥkalpābhraviṭapāsphoṭairghaṭṭitaikārṇavāraṭi || 17 ||

The single ocean is shaken by the bursting of the clouds of the eon, which are like the pots of the universe's walls, sharpened by the peaks of the universe's walls.

युग के बादलों के फटने से एक समुद्र हिल उठता है, जो ब्रह्मांड की दीवारों के घड़े की तरह हैं, जिन्हें ब्रह्मांड की दीवारों की चोटियों से तीखा किया गया है।

7.77.18

स्वर्गपातालभूर्लोकखण्डखण्डैर्विमिश्रितैःयथास्वभावं तिष्ठद्भिर्मरुबुध्नैर्वृताम्बरम् ॥ १८ ॥

svargapātālabhūrlokakhaṇḍakhaṇḍairvimiśritaiḥyathāsvabhāvaṃ tiṣṭhadbhirmarubudhnairvṛtāmbaram || 18 ||

The sky is covered by the winds that stand according to their nature, mixed with the pieces of the realms of heaven, hell, and earth.

आकाश उन हवाओं से ढका हुआ है जो अपनी प्रकृति के अनुसार खड़े हैं, स्वर्ग, पाताल और पृथ्वी के राज्यों के टुकड़ों से मिश्रित।

7.77.19

मृतार्धमृतदग्धार्धदग्धाङ्गैर्देवदानवैःअन्योन्यदर्शनाद्वातवेल्लितैर्भ्रामितायुधम् ॥ १९ ॥

mṛtārdhamṛtadagdhārdhadagdhāṅgairdevadānavaiḥanyonyadarśanādvātavellitairbhrāmitāyudham || 19 ||

The weapons are confused by the winds that are agitated by the sight of each other, with half-dead and half-burnt limbs of gods and demons.

हवाएँ एक-दूसरे को देखकर उत्तेजित हो जाती हैं, और देवताओं और दानवों के अर्ध-मृत और अर्ध-जले हुए अंगों के साथ हथियार भ्रमित हो जाते हैं।

7.77.20

कल्पान्तपवनोद्भ्रान्तैर्लोकान्तरजरत्तृणैःआरब्धार्जुनवाताख्यास्तम्भमुद्भूतभस्मभिः ॥ २० ॥

kalpāntapavanodbhrāntairlokāntarajarattṛṇaiḥārabdhārjunavātākhyāstambhamudbhūtabhasmabhiḥ || 20 ||

The pillars are covered with the ashes that have arisen, known as the winds of Arjuna, confused by the winds of the end of the eon, with the old and withered grass of the other worlds.

स्तंभ उन राख से ढके हुए हैं जो उठी हैं, जिन्हें अर्जुन की हवाएँ कहा जाता है, युगांत की हवाओं से भ्रमित, दूसरे लोकों की पुरानी और सूखी घास के साथ।

7.77.21

उह्यमानशिलाजालप्रहारविलुठत्तटैः । पतल्लोकान्तरैः स्फारदुष्कालकटुटांकृतम् ॥ २१ ॥

uhyamānaśilājālaprahāraviluṭhattaṭaiḥ | patallokāntaraiḥ sphāraduṣkālakaṭuṭāṃkṛtam || 21 ||

The world is afflicted by the harshness of the calamity, with the earth's surface being shattered by the impact of falling rocks, and the underworlds are collapsing.

धरती की सतह गिरते हुए पत्थरों के प्रहार से चूर-चूर हो रही है, और पाताल लोक ध्वस्त हो रहे हैं, जिससे संसार कठिन समय की कठोरता से पीड़ित है।

7.77.22

वातोद्ध्यूहगिरिव्रातगुहाभांकारभासुरम् । पतद्भिर्विहितावर्तलोकपालपुरीपुरैः ॥ २२ ॥

vātodyūhagirivrātaguhābhāṃkārabhāsuram | patadbhirvihitāvartalokapālapurīpuraiḥ || 22 ||

The world is filled with the resounding echoes of the wind's roar and the collapsing mountains, with the cities of the guardians of the world being destroyed by the falling debris.

वायु की गर्जना और गिरते हुए पर्वतों की गूंज से संसार भरा हुआ है, और लोकपालों की नगरियाँ गिरते हुए मलबे से नष्ट हो रही हैं।

7.77.23

कृतकर्कशनिर्ह्रादैरसुंरैरिव मारुतैः । उह्यमानवनव्यूहप्रोतवातायनैर्वृतम् ॥ २३ ॥

kṛtakarkaśanirhrādairasuṃrairiva mārutaiḥ | uhyamānavanavyūhaprotavātāyanairvṛtam || 23 ||

The world is enveloped by harsh winds that roar like thunder, with the forests being lifted and the wind currents being obstructed.

संसार कठोर वायुओं से घिरा हुआ है, जो गर्जना की तरह गरजती हैं, और जंगल उठाए जा रहे हैं और हवा की धाराएँ रुकी हुई हैं।

7.77.24

पुरमण्डलदैत्याग्निसुरनागविवस्वताम् । निकुरम्बं दधद्व्योम्नि मशकानामिवोच्चयम् ॥ २४ ॥

puramaṇḍaladaityāgnisuranāgavivasvatām | nikurambaṃ dadhadvyomni maśakānāmivoccayam || 24 ||

The sky is filled with the swarm of demons, gods, serpents, and celestial beings, resembling a cluster of insects.

आकाश दैत्यों, देवताओं, नागों और देवदूतों के झुंड से भरा हुआ है, जो कीड़ों के झुंड की तरह लगता है।

7.77.25

नश्यन्नगवराभोगैर्भागैर्भग्नसुरालयैः । आवर्तघर्घरारावैर्जलमूर्ध्वमधोनलम् ॥ २५ ॥

naśyannagavarābhogairbhāgairbhagnasurālayaiḥ | āvartaghargharārāvairjalamūrdhvamadhonalaṃ || 25 ||

The world is being destroyed by the collapsing mountains and the broken abodes of the gods, with the roaring sounds of whirlpools and the water flowing upwards and downwards.

संसार गिरते हुए पर्वतों और देवताओं के टूटे हुए घरों से नष्ट हो रहा है, और भंवरों की गर्जना की आवाज और पानी ऊपर और नीचे बह रहा है।

7.77.26

कुर्वज्जलाद्रिनिष्पेषैर्दिक्पालपुरकुट्टनम् । निपतद्देवदैत्येन्द्रसिद्धगन्धर्वपत्तनम् ॥ २६ ॥

kurvajjalādriniṣpeṣairdikpālapurakuṭṭanam | nipataddevadaityendrasiddhagandharvapattanam || 26 ||

The crushing of the mountains by the waters causes the destruction of the cities of the guardians of the directions, and the falling of the cities of the gods, demons, Indra, siddhas, and gandharvas.

जल से पर्वतों को कुचलने से दिक्पालों के नगरों का विनाश होता है, और देवताओं, दैत्यों, इन्द्र, सिद्धों और गन्धर्वों के नगर गिर जाते हैं।

7.77.27

कुट्टनं पर्वतादीनां प्रशान्ताङ्गाररूपिणाम् । वातैः कुर्वत्पदार्थानामसारं रजसामिव ॥ २७ ॥

kuṭṭanaṃ parvatādīnāṃ praśāntāṅgārarūpiṇām | vātaiḥ kurvatpadārthānāmasāraṃ rajasāmiva || 27 ||

The crushing of the mountains, which are like calm embers, by the winds makes the essence of things useless, like dust.

वायु द्वारा शांत अंगारों के समान पर्वतों के कुचलने से चीजों का सार धूल की तरह बेकार हो जाता है।

7.77.28

पुराण्यमरदैत्यानां भ्रमद्भित्तीनि शातयत् । रत्नैः खणखणायन्ति पयांसीव पयस्वताम् ॥ २८ ॥

purāṇyamaradaityānāṃ bhramadbhittīni śātayat | ratnaiḥ khaṇakhaṇāyanti payāṃsīva payasvatām || 28 ||

The ancient cities of the gods and demons, with their revolving walls, are destroyed, and the gems make a clinking sound like the waters of the water-bearing clouds.

देवताओं और दैत्यों के पुराने नगरों की घूमती दीवारें नष्ट हो जाती हैं, और रत्न जल भरे बादलों की तरह खनखनाहट करते हैं।

7.77.29

पूर्णाम्बरं पतल्लोकलोकसप्तकमन्दिरैः । चक्रावृत्त्या भ्रमद्रूपैरमरैः सागरैरिव ॥ २९ ॥

pūrṇāmbaraṃ patallokalokasaptakamandiraiḥ | cakrāvṛttyā bhramadrūpairamaraiḥ sāgarairiva || 29 ||

The sky is filled with the seven lower worlds, with their revolving palaces, like the gods with their oceans.

आकाश सात नीचे के लोकों से भरा हुआ है, जिनके घूमते महल देवताओं के समुद्रों की तरह हैं।

7.77.30

डीनोड्डीनैः परिवृतं विचलद्वातवेल्लितैः । दग्धादग्धैः पदार्थैः खे शीर्णपर्णगणैरिव ॥ ३० ॥

ḍīnoḍḍīnaiḥ parivṛtaṃ vicaladvātavellitaiḥ | dagdhādagdhaiḥ padārthaiḥ khe śīrṇaparṇagaṇairiva || 30 ||

Surrounded by the sound of 'din-din', with the wind blowing and shaking, the sky is filled with burnt and unburnt objects, like scattered leaves.

'दीन-दीन' की आवाज से घिरा हुआ, हवा चलती और हिलती हुई, आकाश जले और अनजले वस्तुओं से भरा हुआ है, जैसे बिखरे हुए पत्ते।

7.77.31

हेमस्फटिकवैदूर्यसुसारमणिमन्दिरैः । दिवः पतद्भिराकीर्णमुद्यज्झणझणस्वनैः ॥ ३१ ॥

hemasphaṭikavaidūryasusāramaṇimandiraiḥ | divaḥ patadbhirākīrṇamudyajjhaṇajhaṇasvanaiḥ || 31 ||

The sky was filled with the sound of falling gemstones like gold, crystal, lapis lazuli, and diamonds, making a clattering noise.

आकाश सोने, स्फटिक, वैदूर्य और हीरे जैसे रत्नों के गिरने की खड़खड़ाहट से भर गया।

7.77.32

उत्पेतुर्धूमभस्माब्दाः पेतुर्वारा पुरोत्कराः । उन्ममज्जुस्तरङ्गौघा ममज्जुर्भूतलाद्रयः ॥ ३२ ॥

utpeturdhūmabhasmābdāḥ peturvārā purautkarāḥ | unmamajjustaraṅgaughā mamajjurbhūtalādrayaḥ || 32 ||

Clouds of smoke and ash rose, and torrents of rain poured down. Waves surged, and mountains submerged into the earth.

धुएँ और राख के बादल उठे, और वर्षा की धाराएँ बरसीं। लहरें उठीं, और पर्वत धरती में डूब गए।

7.77.33

आवर्तघर्घरारावा मिथो विदलनोद्यताः । जुघूर्णुरर्णवाकीर्णपर्णवत्प्रौढपर्वताः ॥ ३३ ॥

āvartagharghararāvā mitho vidalanodyatāḥ | jugūrṇurarṇavākīrṇaparṇavatprauḍhaparvatāḥ || 33 ||

The whirlpools roared with a gurgling sound, ready to tear each other apart. The mountains, covered with ocean waves and leaves, trembled.

भँवर गुर्राहट की आवाज के साथ गरजे, एक-दूसरे को फाड़ने के लिए तैयार। समुद्र की लहरों और पत्तों से ढके पर्वत काँप उठे।

7.77.34

क्रन्दच्छिष्टामरगणं चलत्सज्जीवभूतकम् । भ्रमत्केतुशतोत्पातं दुष्प्रेक्ष्यमभवज्जगत् ॥ ३४ ॥

krandacchiṣṭāmaragaṇaṃ calatsajjīvabhūtakam | bhramatketuśatotpātaṃ duṣprekṣyamabhavajjagat || 34 ||

The world became difficult to see with the remnants of gods crying, the moving living beings, and the spinning of hundreds of comets.

देवताओं के अवशेषों के रोने, चलती जीवित प्राणियों, और सैकड़ों धूमकेतुओं के घूमने से दुनिया देखने में कठिन हो गई।

7.77.35

मृतार्धमृतया भूतसंतत्यानिललोलया । अभून्नीरन्ध्रमाकाशं जीर्णपर्णसवर्णया ॥ ३५ ॥

mṛtārdhamṛtayā bhūtasaṃtatyānilalolayā | abhūnnīrandhramākāśaṃ jīrṇaparṇasavarṇayā || 35 ||

The sky became filled with the half-dead and the dead, with the continuous flow of wind, resembling the color of withered leaves.

आकाश अर्ध-मृत और मृत लोगों से भर गया, हवा के लगातार बहने से, सूखे पत्तों के रंग की तरह।

7.77.36

जगदासीत्पतच्छृङ्गस्थूलधारौधनिर्भरम् । वहद्वहद्गिरिपुरवातपूर्णसरिच्छतम् ॥ ३६ ॥

jagadāsītpatacchṛṅgastūladhāraudhanirbharam | vahadvahadgiripuravātapūrṇasaricchatam || 36 ||

The world was filled with mountains with thick peaks, carrying heavy loads, and rivers filled with wind from the mountain ranges.

संसार ऊँचे पर्वतों से भरा हुआ था, जिनकी चोटियाँ मोटी थीं और वे भारी बोझ उठा रहे थे, और पर्वतों से आने वाली हवा से भरी नदियाँ थीं।

7.77.37

शाम्यच्छमशमाशब्दशतशाखहुताशनम् । चलाब्धिवलनान्दोललोलशैललसत्तटम् ॥ ३७ ॥

śāmyacchamaśamāśabdaśataśākhahutāśanam | calābdhivalanāndolalolaśailalasattatam || 37 ||

The world was calm, with the sound of a hundred branches burning in the fire, and the shores were swaying with the waves of the moving ocean.

संसार शांत था, सौ डालियों की आवाज आग में जल रही थी, और समुद्र की लहरों से तट लहरा रहे थे।

7.77.38

तृणराशिसरिन्न्यायमिश्रद्वीपार्णवोत्कटम् । अत्यन्तदूरचिद्व्योमक्षणज्वालासहावनम् ॥ ३८ ॥

tṛṇarāśisarinyāyamiśradvīpārṇavotkaṭam | atyantadūracidvyomakṣaṇajvālāsahāvanam || 38 ||

The world was a mixture of grasslands, rivers, islands, and fierce oceans, with the distant sky filled with flaming sparks.

संसार घास के मैदानों, नदियों, द्वीपों और उग्र समुद्रों का मिश्रण था, और दूर का आकाश चिंगारियों से भरा हुआ था।

7.77.39

वर्षशाम्यद्धुताशोत्थभस्मामोदपतत्सुरम् । भूतपूर्वजगद्भूतं परिविस्मृतसर्गकम् ॥ ३९ ॥

varṣaśāmyadhutāśotthabhasmāmodapatatsuram | bhūtapūrvajagadbhūtaṃ parivismṛtasargakam || 39 ||

The world was filled with the fragrance of ashes from the fire, and it was as if the creation had been forgotten, with the past world being remembered.

संसार आग से उत्पन्न राख की सुगंध से भरा हुआ था, और ऐसा लग रहा था कि सृष्टि भूल गई थी, और पिछला संसार याद आ रहा था।

7.77.40

निरर्गलोल्लसन्नादं सर्गलोपशमक्रमम् । सर्गलोपोल्लसच्छेषं सर्गलोपविवर्जितम् ॥ ४० ॥

nirargalollasannādaṃ sargalopaśamakramam | sargalopollasaśceṣaṃ sargalopavivarjitam || 40 ||

The world was filled with the sound of joyous celebration, the process of creation and destruction was calming, and the remnants of creation were devoid of destruction.

संसार आनंद की ध्वनि से भरा हुआ था, सृष्टि और विनाश की प्रक्रिया शांत हो रही थी, और सृष्टि के अवशेष विनाश से मुक्त थे।

7.77.41

अनारतविपर्यासकारिमारुतनिर्वृतम् । बीजराशिरिवाजस्रं पूर्यमाणं पुनःपुनः ॥ ४१ ॥

anārataviparyāsakārimārutanirvṛtam | bījarāśirivājasraṃ pūryamāṇaṃ punaḥpunaḥ || 41 ||

The wind that causes continuous confusion is ceased, like a seed-heap being filled again and again.

जो वायु निरंतर भ्रम उत्पन्न करती है, वह शांत हो गई, जैसे बीजों का ढेर बार-बार भरा जा रहा हो।

7.77.42

उल्मुकान्योन्यनिष्पेषवह्निचूर्णसुवर्णजैः । रजोभिर्विवृतैर्हेमकुट्टिमाकाशकोटरम् ॥ ४२ ॥

ulmukānyonyaniṣpeṣavahnicūrṇasuvarṇajaiḥ | rajobhirvivṛtairhemakuṭṭimākāśakoṭaram || 42 ||

With the mutual friction of the fire-dust and gold particles, the space is filled with scattered dust, resembling a golden dome.

अग्नि-धूल और सोने के कणों के परस्पर घर्षण से, वातावरण बिखरी धूल से भर गया, जो सोने के गुंबद के समान लगता है।

7.77.43

भूमण्डलबृहत्खण्डैर्भ्रष्टैः सद्वीपसागरैः । पूर्णसप्तमपातालं लुठत्पातालमण्डलैः ॥ ४३ ॥

bhūmaṇḍalabṛhakhṇḍairbhraṣṭaiḥ sadvīpasāgaraiḥ | pūrṇasaptamapātālaṃ luṭhatpātālamaṇḍalaiḥ || 43 ||

The vast earth, with its continents and oceans, is filled with the seventh underworld, rolling with the underworld spheres.

पृथ्वी के विशाल खंड, जिनमें महाद्वीप और समुद्र हैं, सातवें पाताल से भरे हुए हैं, जो पाताल मण्डलों से घूम रहे हैं।

7.77.44

आसप्तमसुतालान्तमामहीतलपर्वतम् । आव्योमैकार्णवीभूतं पूर्णं प्रलयवायुभिः ॥ ४४ ॥

āsaptamasutālāntamāmahītalaparvatam | āvyomaikārṇavībhūtaṃ pūrṇaṃ pralayavāyubhiḥ || 44 ||

From the seventh underworld to the surface of the earth with its mountains, everything is filled with the destructive winds, becoming one vast ocean.

सातवें पाताल से लेकर पृथ्वी की सतह और उसके पर्वतों तक, सब कुछ विनाशकारी वायुओं से भरा हुआ है, जो एक विशाल समुद्र बन गया है।

7.77.45

एकार्णवोऽथ ववृधे शनै शीघ्रं सरिच्छतैः । भुवने जलकल्लोलैः कोपो मूर्खाशये यथा ॥ ४५ ॥

ekārṇavo'tha vavṛdhe śanai śīghraṃ saricchataiḥ | bhuvane jalakallolaiḥ kopo mūrkhāśaye yathā || 45 ||

Then the single ocean gradually grew rapidly with hundreds of rivers. In the world, the waves of water rose like anger in a foolish mind.

फिर एक समुद्र धीरे-धीरे तेजी से सैकड़ों नदियों के साथ बढ़ने लगा। दुनिया में, पानी की लहरें मूर्ख मन में क्रोध की तरह उठने लगीं।

7.77.46

मुसलोपमया पूर्वं ततः स्तम्भनिभाङ्गया । ततस्तालद्रुमाकारधारयासारसारया ॥ ४६ ॥

musalopamayā pūrvaṃ tataḥ stambhanibhāṅgayā | tatastāladrumākāradhārayāsārasārayā || 46 ||

First, it appeared like a mace, then it took the form of a pillar, and then it became like a palm tree, bearing the essence of the essence.

पहले यह एक गदा के समान दिखाई दिया, फिर यह एक स्तम्भ के रूप में आया, और फिर यह एक ताल वृक्ष के समान बन गया, जिसमें सार का सार था।

7.77.47

ततो नदीप्रवाहोग्रजलपातैकपातया । सप्तद्वीपमहीपीठसममेदुरमेघया ॥ ४७ ॥

tato nadīpravāhograjalapātaikapātayā | saptadvīpamahīpīṭhasamamedurameghayā || 47 ||

Then it became like the fierce flow of a river, with water falling in a single stream, and it became like the seven islands of the earth, with clouds rising equally.

फिर यह एक नदी के तीव्र प्रवाह के समान बन गया, जिसमें पानी एक ही धार में गिरता है, और यह पृथ्वी के सात द्वीपों के समान बन गया, जिसमें बादल समान रूप से उठते हैं।

7.77.48

वह्निर्विदाहकृद्दृष्ट्या शममभ्याययौ तथा । शास्त्रसज्जनसंगत्या गाढमापत्पदं यथा ॥ ४८ ॥

vahnirvidāhakṛddṛṣṭyā śamamabhyāyayau tathā | śāstrasajjanasaṅgatyā gāḍhamāpatpadaṃ yathā || 48 ||

Fire, which causes burning, approached peace in this way, just as one approaches a difficult situation with the help of scriptures and good people.

अग्नि, जो जलाने का कारण है, इस तरह शांति की ओर बढ़ा, जैसे किसी कठिन स्थिति को शास्त्रों और सज्जनों की सहायता से प्राप्त किया जाता है।

7.77.49

ऊर्ध्वाधरस्थपरिवृत्तपदार्थजातमन्तःकणैः खणखणायितशैलमज्जम् । ब्रह्माण्डकोटरमभूद्विधुरं
कुबाललीलाविलोलमिवबिल्वफलं विशुद्धम् ॥ ४९ ॥

*ūrdhvādhara sthaparivṛttapadārthajātamantaḥkaṇaiḥ khaṇakhaṇāyitaśailamajjam |
brahmāṇḍakoṭaramabhūdvidhuraṃ kubālalīlāvilolamivabilvaphalaṃ viśuddham || 49 ||*

The universe, with its revolving elements placed up and down, became empty and pure, like a bilva fruit swaying in the play of a young girl.

ब्रह्माण्ड, जिसके घूमने वाले तत्व ऊपर और नीचे रखे गए हैं, खाली और शुद्ध हो गया, जैसे एक युवती के खेल में झूलता हुआ बिल्व फल।

Chapter 78

7.78.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । वातवर्षहिमोत्पातपातभग्ने धरातले । जडवेगोऽगमद्वृद्धिं कलाविव महीपतिः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vātavarṣahimotpātapātabhagne dharātale | jaḍavego'gamadvṛddhiṃ kalāviva mahīpatiḥ || 1 ||

Shri Vasishtha said: When the earth's surface was shattered by storms, rain, and hail, the inert force grew like a king in the Kali Yuga.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब पृथ्वी की सतह आँधी, वर्षा और बर्फ के कारण टूट गई, तब जड़ शक्ति कलियुग के राजा की तरह बढ़ी।

7.78.2

गङ्गाप्रवाहपतितधारापातविवर्धितः । सरित्सहस्रैः सहसा मेरुमन्दरभासुरैः ॥ २ ॥

gaṅgāpravāhapatitadhārāpātavivardhitaḥ | saritsahasraiḥ sahasā merumandarabhāsuraiḥ || 2 ||

Enhanced by the fall of the Ganges' stream, suddenly with thousands of rivers, Meru, Mandara, and other mountains shone.

गंगा की धारा के गिरने से बढ़ा हुआ, अचानक हजारों नदियों के साथ, मेरु, मंदर और अन्य पर्वत चमके।

7.78.3

आदित्यपथसंप्राप्तकन्दरो जडमन्थरः । एकार्णवः समुच्छून आसीन्मूर्ख इवेश्वरः ॥ ३ ॥

ādityapathasaṃprāptakandaro jaḍamantharaḥ | ekārṇavaḥ samucchūna āsīnmūrkha iveśvaraḥ || 3 ||

The valley that reached the path of the sun became a vast ocean, empty and foolish like a god.

सूर्य के मार्ग तक पहुंची घाटी एक विशाल समुद्र बन गई, खाली और मूर्ख की तरह एक देवता।

7.78.4

विपुलावर्तवृत्त्यात्तविवृत्ताद्रिजरत्तृणः । स्फुरत्तुङ्गतरङ्गाग्रनिगीर्णादित्यमण्डलः ॥ ४ ॥

vipulāvartavṛttyāttavivṛttādrijarattṛṇaḥ | sphurattuṅgatarāṅgāgranigīrṇādityamaṇḍalaḥ || 4 ||

With the vast whirlpools and the open mountain slopes covered with grass, the sun's disc was swallowed by the high waves.

विशाल भंवरों और खुले पर्वतीय ढलानों पर घास से ढके हुए, सूर्य का मंडल ऊंची लहरों द्वारा निगल लिया गया।

7.78.5

मेरुमन्दरकैलासविन्ध्यसह्यजलेचरः । गलितावनिपङ्कान्तर्लीनव्यालमृणालकः ॥ ५ ॥

merumandarakailāsavindhyasahyajalecaraḥ | galitāvanipaṅkāntarlīnavyālamṛṇālakaḥ || 5 ||

Moving through the waters of Meru, Mandara, Kailasa, Vindhya, and Sahya, melting the mud within, concealed by the serpents and lotus fibers.

मेरु, मंदर, कैलास, विंध्य और सह्य के जल में चलता हुआ, अंदर की कीचड़ को पिघलाता हुआ, सर्पों और कमल की रस्सियों से ढका हुआ।

7.78.6

अर्धदग्धद्रुमवनव्यूहशैवलसंकटः त्रैलोक्यभस्मसंसृष्ट आसीत्कर्दमकुत्सितः ॥ ६ ॥

ardhadagdhadrumavanavyūhaśaivalasaṃkaṭaḥ trailokyabhasmasaṃsṛṣṭa āsītkardamakutsitaḥ || 6 ||

The forest was half-burnt and filled with dense grass and thorns, and the three worlds were covered with ashes and became dirty with mud.

वन आधा जला हुआ और घने घास और काँटों से भरा हुआ था, और तीनों लोक राख से ढके हुए और मिट्टी से गंदे हो गए थे।

7.78.7

नभःस्तम्भवृहद्धानोत्तालभास्करपुष्करः धाराजालमहाम्भोदविलीननलिनीदलः ॥ ७ ॥

nabhaḥstambhavṛhaddhānottālabhāskarapuṣkaraḥ dhārājālamahāmbhodavilīnanalinīdalaḥ || 7 ||

The sky was filled with massive clouds, and the sun's rays were obscured by the dense network of water streams, causing the lotus petals to wither.

आकाश में विशाल बादल भरे हुए थे, और सूर्य की किरणें जलधाराओं के घने जाल से ढकी हुई थीं, जिससे कमल के पत्ते मुरझा गए थे।

7.78.8

डिण्डीरपर्वतप्रान्तनददुन्मत्तवारिदः भ्रमदिन्द्रानिलार्केन्दुपुरपत्तनपूरणैः ॥ ८ ॥

ḍiṇḍīraparvataprāntanadadunmattavāridaḥ bhramadindrānilārkendupurapattanapūraṇaiḥ || 8 ||

The roaring clouds at the edge of the Ḍiṇḍīra mountain were mad with thunder, and they filled the cities with the whirling winds, lightning, sun, and moon.

Ḍiṇḍīra पर्वत के किनारे गर्जन करते हुए बादल पागल हो गए थे, और उन्होंने घूमती हुई हवाओं, बिजली, सूर्य और चंद्रमा से शहरों को भर दिया था।

7.78.9

काष्ठवत्प्रोह्यमाणोग्रसुरासुरजनोत्करः शनैः क्रमोच्छूनतया लिहन्नादित्यमण्डलम् ॥ ९ ॥

kāṣṭhavatprohyamāṇograsurāsurajanotkaraḥ śanaiḥ kramocchūnatayā lihannādityamaṇḍalam || 9 ||

Like a piece of wood, the fierce demons and gods were being gradually swallowed by the sun's disc, causing them to diminish slowly.

काष्ठ की तरह, भयंकर असुर और देवता धीरे-धीरे सूर्य के मंडल द्वारा निगल लिए जा रहे थे, जिससे वे धीरे-धीरे कम होते जा रहे थे।

7.78.10

तरत्तारतरारावधाराधरसमुद्भवैः बुद्बुदैः परिसंदिग्धप्रोह्यमाणमहाचलः ॥ १० ॥

tarattārataratārāvadhārādharasamudbhavaiḥ budbudaiḥ parisaṃdigdhoprohyamāṇamahācalaḥ || 10 ||

The great mountain was being swallowed with bubbles arising from the roaring waterfalls, causing it to be enveloped in doubt and confusion.

विशाल पर्वत बुदबुदा उठते हुए जलप्रपातों से निगल जा रहा था, जिससे वह संदेह और भ्रम में घिर गया था।

7.78.11

भ्रमद्बुद्बुदविश्रान्तभ्रान्तकल्पान्तवारिदः । उत्तालैस्तैरनाधारैः पश्यन्नपरवारिदम् ॥ ११ ॥

bhramadbudbudaviśrāntabhrāntakalpāntavāridaḥ | uttālais tair anādhāraiḥ paśyann aparavāridam || 11 ||

The clouds, exhausted by the wandering bubbles, are deluded by the end of the eon, and seeing the unsupported, lofty clouds, they are not seeing the other clouds.

भ्रमण करते हुए बुदबुदों से थके हुए बादल, कल्पान्त के अन्त में भ्रान्त हो जाते हैं, और असहाय, ऊँचे बादलों को देखकर, दूसरे बादलों को नहीं देखते हैं।

7.78.12

महाप्रवाहवार्योघघोषघुंघुमिताम्बरः । एकप्रवाहमहितसव्योमकुलपर्वतः ॥ १२ ॥

mahāpravāhavāryoghaghōṣaghuṃghumitāmbaraḥ | ekapravāhamahitasavyomakulaparvataḥ || 12 ||

The sky is filled with the roaring sound of the great flood of water, and the single stream of the sky is adorned with mountains.

आकाश महान जल के प्रवाह की गड़गड़ाहट से भरा हुआ है, और आकाश की एकमात्र धारा पर्वतों से सुशोभित है।

7.78.13

चण्डवातकृतापूर्वजलौघकुलपर्वतैः । महाघुरघुरारावघर्घरोग्रमहारयः ॥ १३ ॥

caṇḍavātakṛtāpūrvajalaughakulaparvataiḥ | mahāghuraghuṛārāvaghargharogramahārayaḥ || 13 ||

The fierce winds create huge waves and mountains of water, producing a great roaring sound that is terrifying and majestic.

तेज हवाएँ विशाल तरंगों और जल के पर्वतों को उत्पन्न करती हैं, जिससे एक भयानक और महिमामय गर्जना उत्पन्न होती है।

7.78.14

ब्रह्माण्डखण्डसंघट्टपरावृत्तिभिरुद्धतः । कुर्वन्योजनलक्षाणि विततान्युन्नतानि च ॥ १४ ॥

brahmāṇḍakhaṇḍasaṃghaṭṭaparāvṛttibhiruddhataḥ | kurvanyojanalakṣāṇi vitatānyunnatāni ca || 14 ||

The universe is shaken by the collision of its fragments, causing the formation of vast and elevated expanses.

ब्रह्माण्ड के टुकड़ों की टक्कर से ब्रह्माण्ड हिल उठता है, जिससे विशाल और ऊँचे विस्तार बनते हैं।

7.78.15

तृणैरिव तरङ्गेषु दोलान्दोलनमद्रिभिः । कुर्वद्भिरुपलाघातभग्नभास्करमण्डलः ॥ १५ ॥

tṛṇairiva taraṅgeṣu dolāndolanamadribhiḥ | kurvadbhirupalāghātabhagnabhāskaramaṇḍalaḥ || 15 ||

The mountains sway like grass in the waves, causing the sun's disc to be shattered by the impact of the rocks.

पर्वत तरंगों में घास की तरह लहराते हैं, जिससे पत्थरों के प्रभाव से सूर्य का मण्डल टूट जाता है।

7.78.16

शून्यब्रह्माण्डविषुलजलघातकुलायके । नीलानचलकाकोलाञ्जहन्सलिलजालकैः ॥ १६ ॥

śūnyabrahmaṇḍaviṣulajalaghātakulāyake | nīlānacalakākolāñjahansalilajālakaiḥ || 16 ||

In the empty universe, the waves of the ocean strike the shores, and the blue mountains echo with the sound of the waters.

शून्य ब्रह्मांड में, समुद्र की लहरें तट पर टकराती हैं, और नीले पर्वत पानी की आवाज से गूँजते हैं।

7.78.17

मृतामृतमहद्भूतमज्जनोन्मज्जनाकुलान् । तरंगमकरावर्तप्रतिबिम्बान्वितानिव ॥ १७ ॥

mṛtāmṛtamahadbhūtamajjanonmajjānākulān | taraṅgamakarāvartapratibimbānvitāniva || 17 ||

The great and wondrous beings, immersed in the cycle of life and death, are like the reflections of waves and whirlpools.

जीवन और मृत्यु के चक्र में डूबे हुए महान और अद्भुत प्राणी लहरों और भँवरों के प्रतिबिम्बों के समान हैं।

7.78.18

मृतशिष्टान्पुरभ्रष्टान्फेनाद्रितटिकोटिषु । दधज्जलबलश्रान्तांस्त्रिदशान्मशकानिव ॥ १८ ॥

mṛtaśiṣṭānpurabhraṣṭānphēnādritaṭikōṭiṣu | dadhajjalabalaśrāntāṃstridaśānmaśakāniva || 18 ||

The remnants of the dead, who have fallen from the city, are like tired flies on the foam-covered mountain slopes, exhausted by the water's force.

मृतकों के अवशेष, जो नगर से गिरे हैं, फेन से ढके पर्वत की ढलानों पर थके हुए मक्खियों के समान हैं, जो पानी की शक्ति से थक गए हैं।

7.78.19

विपुलाद्यतनाकाशविपुलानम्बुबुदुदान्। सद्वस्रसंख्यान्कलयंल्लोचनानीव वासवः ॥ १९ ॥

vipulādyatanākāśavipulānambubududān | sadvasrasaṃkhyānkalayaṃllocanānīva vāsavaḥ || 19 ||

Indra, with his numerous eyes, watches the vast sky filled with expansive water droplets, as if counting the number of good rains.

इंद्र, अपनी अनेक आँखों से, विशाल आकाश को देखता है जो विस्तृत जल कणों से भरा हुआ है, मानो अच्छे वर्षा की संख्या गिन रहा हो।

7.78.20

शरद्व्योमसमाभ्भोगैर्वलद्भिर्बुद्गुदेक्षणैः। पश्यन्निव नदीधारान्भेघानाताम्रपूरकान् ॥ २० ॥

śaradvyomasamābhgegairvaladbhirbudgudekṣaṇaiḥ | paśyanniva nadīdhārānbheghānātāmrapūrakān || 20 ||

As if watching the river streams with clouds that are reddish and filled with water droplets, resembling the autumn sky.

मानो नदी की धाराओं को देख रहा हो, जो लालिमा युक्त और जल कणों से भरे बादलों के समान हैं, जैसे शरद् ऋतु का आकाश।

7.78.21

पुष्करावर्तकाभ्राणां बहुभिर्वीचिमण्डलैः। कुर्वन्नालिङ्गनानीव सपक्षाद्रिवदुत्थितैः ॥ २१ ॥

puṣkarāvartakābhrāṇāṃ bahubhirvīcimaṇḍalaiḥ| kurvannāliṅganānīva sapakṣādrirvadutthitaiḥ || 21 ||

With many circular clouds resembling lotuses, it seems as if they are embracing, rising like mountains with wings.

बहुत से कमल के समान वृत्ताकार बादलों के साथ, ऐसा लगता है मानो वे आलिंगन कर रहे हों, पंखों वाले पर्वतों की तरह उठ रहे हों।

7.78.22

त्रिजगद्ग्रासंतृप्तः प्रगायन्निव घर्घरैः। स्वैर्नृत्यन्निव चोग्राद्रिकटकैर्वीचिदोर्द्रुमैः ॥ २२ ॥

trijagadgrāsasaṃtṛptaḥ pragāyanniva ghargharaiḥ| svairnṛtyanniva cogrādrikataikairvīcidordrumaiḥ || 22 ||

Satisfied with devouring the three worlds, it seems to be singing with rumbling sounds, and dancing freely with the fierce mountain peaks and cloud trees.

तीनों लोकों को निगलकर संतुष्ट, ऐसा लगता है मानो वह गरजते हुए स्वरों के साथ गा रहा हो, और भयंकर पर्वत शिखरों और बादल वृक्षों के साथ स्वेच्छा से नृत्य कर रहा हो।

7.78.23

नदीधाराधरैरूर्ध्वे मध्ये दग्धैर्धराधरैः। अधो धराधरैर्नागैरधरः पङ्कगैर्वृतः ॥ २३ ॥

nadīdhārādharaīrūrdhve madhye dagdhairdharādharaīḥ| adho dharādharaīrnāgairadharaḥ paṅkagairvṛtaḥ || 23 ||

Above with the bearers of river streams, in the middle with the burnt mountain peaks, and below with the serpents bearing the earth, the lower part is covered with mud.

ऊपर नदी धाराओं के वाहकों के साथ, बीच में जले हुए पर्वत शिखरों के साथ, और नीचे पृथ्वी को उठाने वाले सर्पों के साथ, नीचे का भाग कीचड़ से ढका हुआ है।

7.78.24

धारात्रिपथगापूरैर्निपतद्भिर्निरन्तरम् । मग्नोन्मग्नो ह्यमानाद्रिशृङ्गडिण्डीरबुद्बुदः ॥ २४ ॥

dhārātripadhagāpūrainirpatadbhirnirantaram| magnonmagno hyamānādriśṛṅgaḍiṇḍīrabudbudaḥ || 24 ||

With the continuous falling of the three-path streams, it is submerged and emerges, with the bubbles of the immeasurable mountain peaks and drums.

तीन पथों की धाराओं के लगातार गिरने से, यह डूबता और उभरता है, अपार पर्वत शिखरों और ढोलों के बुलबुलों के साथ।

7.78.25

उह्यमानदलत्स्वर्गखण्डक्रन्दन्नभश्चरः । वहद्विद्याधरीवृन्दपद्मिनीसुन्दरान्तरः ॥ २५ ॥

uhyamānadalatsvargakhaṇḍakrandannabhaścaraḥ| vahadvidyādharīvṛndapadminīsundarāntaraḥ || 25 ||

Carrying the crying pieces of heaven with moving petals, the sky-dweller, carrying the beautiful lotus-like group of Vidyadharis.

चलते हुए पंखुड़ियों वाले रोते हुए स्वर्ग के टुकड़ों को लेकर, आकाश-निवासी, सुंदर कमल के समान विद्याधरियों के समूह को लेकर।

7.78.26

एकार्णवपयःपूरैर्घर्घरारावरंहसि । त्रैलोक्यखण्डसंहारे प्रोह्यमाणे महाम्भसि ॥ २६ ॥

ekārṇavapayaḥpūraiṛghargharārāvaraṃhasi | trailokyakhaṇḍasaṃhāre prohyamāṇe mahāmbhasi || 26 ||

With the roaring waves of the ocean of milk, the destruction of the three worlds is being caused by the great waters.

दूध के समुद्र की गर्जना से, तीनों लोकों का विनाश महान जल द्वारा किया जा रहा है।

7.78.27

नासीत्कश्चित्परित्राता हन्ताऽवीचिवशोऽपि च । शक्नोति कः परित्रातुं कालेन कवलीकृतम् ॥ २७ ॥

nāsītkasciṭparitrātā hantā'vīcivaśo'pi ca | śaknoti kaḥ paritrātuṃ kālena kavalīkṛtam || 27 ||

There was no one who could protect or destroy, even the one who is under the control of the ocean. Who can protect what has been swallowed by time?

कोई भी ऐसा नहीं था जो रक्षा कर सके या नष्ट कर सके, चाहे वह समुद्र के अधीन हो। समय द्वारा निगले हुए को कौन बचा सकता है?

7.78.28

नाकाशमासीन्न दिगन्त आसीदधोऽपि नासीन्न तदूर्ध्वमासीत् । भूतं न आसीन्न च सर्ग आसीदासीत्परं केवलमेव वारि ॥ २८ ॥

nākāśamāsīnna diganta āsīdadho'pi nāsīnna tadūrdhvamāsīt | bhūtaṃ na āsīnna ca sarga āsīdāsītparaṃ kevalameva vāri || 28 ||

There was no sky, no directions, no below, no above, no beings, no creation, there was only the supreme water.

न आकाश था, न दिशाएँ थीं, न नीचे था, न ऊपर था, न भूत थे, न सृष्टि थी, केवल परम जल था।

Chapter 79

7.79.1

श्रीवसिष्ठ उवाच एतस्मिन्नन्तरे चक्षुर्व्योमस्थोऽहमथात्यजम् ब्रह्मलोके महालोके प्रभातेऽर्कप्रभामिव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca etasminnantare cakṣurvyomastho'hamathātyajam brahmaloke mahāloke prabhāte'rkaprabhāmiva || 1 ||

Shri Vasishtha said: In the meantime, I left my celestial vision in the great Brahmaloka, like the dawning of the sun's radiance.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस बीच, मैंने ब्रह्मलोक में अपनी आकाशीय दृष्टि को छोड़ दिया, जैसे सूर्य की प्रभा का उदय होता है।

7.79.2

यावद्दृष्टो मया तत्र शैलादिव विनिर्मितः परमेष्ठी समाधिस्थः प्रधानपरिवारवान् ॥ २ ॥

yāvaddṛṣṭo mayā tatra śailādiva vinirmitaḥ parameṣṭhī samādhisthaḥ pradhānaparivāravān || 2 ||

As long as I saw there, the Supreme Lord, seated in meditation, surrounded by his principal attendants, appeared as if created from a mountain.

जब तक मैंने वहाँ देखा, परमेश्वर, ध्यान में बैठे हुए, अपने मुख्य परिवार से घिरे हुए, एक पर्वत से बने हुए जैसे प्रतीत हुए।

7.79.3

समूहश्चैव देवानां मुनीनां भावितात्मनाम् शुक्रो बृहस्पतिश्चैव शक्रो वैश्रवणो यमः ॥ ३ ॥

samūhaścaiva devānāṃ munīnāṃ bhāvitātmanām śukro bṛhaspatiścaiva śakro vaiśravaṇo yamaḥ || 3 ||

There was a gathering of gods and sages with purified minds, including Shukra, Brihaspati, Indra, Kubera, and Yama.

वहाँ शुद्ध मन वाले देवताओं और ऋषियों का समूह था, जिसमें शुक्र, बृहस्पति, इंद्र, कुबेर और यम शामिल थे।

7.79.4

सोमोऽथ वरुणोऽग्निश्च तथान्येऽपि सुरर्षयः देवगन्धर्वसिद्धानां साध्यानां च विनायकाः ॥ ४ ॥

somō'tha varuṇō'gnīśca tathānyē'pi surarṣayaḥ devagandharvasiddhānāṃ sādhyānāṃ ca vināyakāḥ || 4 ||

Along with Soma, Varuna, Agni, and other divine sages, there were leaders of the gods, Gandharvas, Siddhas, and Sadhyas.

सोम, वरुण, अग्नि और अन्य दिव्य ऋषियों के साथ, देवताओं, गंधर्वों, सिद्धों और साध्यों के नेता भी थे।

7.79.5

लिपिकर्मार्पिताकाराः सर्वे ध्यानपरायणाः बद्धपद्मासनास्तत्र निर्जीवा इव संस्थिताः ॥ ५ ॥

lipikarmārpitākārāḥ sarve dhyānaparāyaṇāḥ baddhapadmāsanāstatra nirjīvā iva saṃsthitāḥ || 5 ||

All of them, with their forms dedicated to the divine work, were engrossed in meditation, seated in the lotus position, appearing as if lifeless.

सभी, अपने रूप को दिव्य कार्य के लिए समर्पित करके, ध्यान में डूबे हुए, पद्मासन में बैठे हुए, जैसे निर्जीव प्रतीत हो रहे थे।

7.79.6

अथ ते द्वादशादित्यास्तमेवोद्देशमागताः । बद्धपद्मासनास्तस्थुस्तथैवाशु यथैव ते ॥ ६ ॥

atha te dvādaśādityāstamevoddēśamāgatāḥ | baddhapadmāsanāstasthustathaivāśu yathaiva te || 6 ||

Then those twelve Adityas arrived at that place | They sat in the lotus position, just as they had done before

तब वे बारह आदित्य उस स्थान पर आए | वे कमल आसन में बैठे, जैसे पहले बैठे थे

7.79.7

ततो मुहूर्तमात्रेण दृष्टवानहमब्जजम् । पुरो विनिद्रतां यातः स्वप्नदृष्टमिवाग्रगम् ॥ ७ ॥

tato muhūrtamātrēṇa dṛṣṭavānahamabjajaṃ | puro vinidratāṃ yātaḥ svapnadṛṣṭamivāgragaṃ || 7 ||

Then, in just a moment, I saw the lotus-born one | He appeared before me as if in a dream

तब, एक क्षण में ही, मैंने कमलोद्भव को देखा | वह मुझे सपने में दिखाई देने लगा

7.79.8

ब्रह्मलोकजनं सर्वं महतामिव वासनाम् । नापश्यं स्वप्ननगरं बुध्यमान इवाग्रगम् ॥ ८ ॥

brahmalokajanaṃ sarvaṃ mahatāmiva vāsanām | nāpaśyaṃ svapnanagaraṃ budhyamāna ivāgragaṃ || 8 ||

I saw all the inhabitants of Brahmaloka as if in a great dwelling | I did not see the dream city, as if awakening

मैंने ब्रह्मलोक के सभी निवासियों को महान निवास में देखा | मैंने सपने के नगर को नहीं देखा, जैसे जाग रहा हूँ

7.79.9

अरण्यशून्यमेवासीत्तद्ब्रह्मननं तदा । कठिनाकाण्डविध्वस्तं पृथिव्यामिव पत्तनम् ॥ ९ ॥

araṇyaśūnyamevāsīttadbrahmananaṃ tadā | kaṭhinākāṇḍavidhvastaṃ pṛthivyāmiva pattanam || 9 ||

That place was empty like a forest | It was as if the city on earth had been destroyed by a hard thunderbolt

वह स्थान जंगल की तरह खाली था | ऐसा लग रहा था जैसे पृथ्वी पर शहर कठिन वज्रपात से नष्ट हो गया हो

7.79.10

सर्व एव न च क्वापि ते तथा तादृशास्तदा । ऋषयो मुनयो देवा वेदा विद्याधरादयः ॥ १० ॥

sarva eva na ca kvāpi te tathā tādṛśāstadā | ṛṣayo munayo devā vedā vidyādharādayaḥ || 10 ||

None of them were anywhere to be seen at that time | The sages, the ascetics, the gods, the Vedas, and the Vidyadharas

उस समय उनमें से कोई भी कहीं नहीं दिखा | ऋषि, मुनि, देवता, वेद और विद्याधर

7.79.11

ज्ञातं ततोऽवधानेन मया नभसि तिष्ठता । यावन्निर्वाणमापन्ना ब्रह्मवत्सर्व एव ते ॥ ११ ॥

jñātaṃ tato'vadhānena mayā nabhasi tiṣṭhatā | yāvannirvāṇamāpannā brahmavatsarva eva te || 11 ||

Thus, it is known by me with full attention, while abiding in the sky, all these have attained liberation, indeed all are like Brahman.

इस प्रकार, मैंने पूरे ध्यान से जान लिया है, आकाश में रहते हुए, ये सभी मुक्ति प्राप्त कर चुके हैं, वास्तव में सभी ब्रह्म के समान हैं।

7.79.12

वासनायां विलीनायामदर्शनमुपागताः । स्वप्नलोकाः प्रबुद्धानामिव स्वं रूपमागताः ॥ १२ ॥

vāsanāyāṃ vilīnāyāmadarśanamupāgatāḥ | svapnalokāḥ prabuddhānāmiva svaṃ rūpamāgatāḥ || 12 ||

When the impressions are dissolved, they become invisible, like the dream worlds of the awakened ones, they regain their own form.

जब संस्कार विलीन हो जाते हैं, तब वे अदृश्य हो जाते हैं, जैसे जागृत लोगों के स्वप्न लोक, वे अपने रूप को प्राप्त कर लेते हैं।

7.79.13

आकाशात्मैव देहोऽयं भाति वासनया स्फुटः । तदभावात्तु नो भाति स्वप्नो बोधवतो यथा ॥ १३ ॥

ākāśātmaiva deho'yaṃ bhāti vāsanayā sphuṭaḥ | tadabhāvāttu no bhāti svapno bodhavato yathā || 13 ||

This body appears clearly due to impressions, just like space. However, due to the absence of that, it does not appear, like a dream to the awakened.

यह शरीर संस्कारों के कारण स्पष्ट रूप से प्रकट होता है, जैसे आकाश। फिर भी, उसके अभाव में, यह प्रकट नहीं होता, जैसे जागृत व्यक्ति का स्वप्न।

7.79.14

अन्तरिक्षगतो देहो यथा स्वप्ने विलोक्यते । बोधे तद्वासनाशान्तौ न किंचिदपि लक्ष्यते ॥ १४ ॥

antarikṣagato deho yathā svapne vilokyate | bodhe tadvāsanāśāntau na kiṃcidapi lakṣyate || 14 ||

Just as the body is seen in a dream in the sky, upon awakening, when those impressions are pacified, nothing is perceived.

जैसे स्वप्न में आकाश में शरीर दिखाई देता है, जागने पर, जब वे संस्कार शान्त हो जाते हैं, तब कुछ भी दिखाई नहीं देता।

7.79.15

जाग्रत्यपि तथैवायं वासनायाः परिक्षये । नैवातिवाहिको नैव लक्ष्यतेऽत्राधिभौतिकः ॥ १५ ॥

jāgratyapi tathaivāyaṃ vāsanāyāḥ parikṣaye | naivātivāhiko naiva lakṣyate'trādhibhautikaḥ || 15 ||

Even in the waking state, similarly, with the diminution of impressions, neither the transient nor the material is perceived here.

जागृत अवस्था में भी, इसी प्रकार, संस्कारों के क्षय होने पर, यहाँ न तो अस्थायी और न ही भौतिक कुछ भी दिखाई देता है।

7.79.16

स्वप्नानुभव एषोऽत्र दृष्टान्तत्वेन लक्ष्यते । आबालमेतत्संसिद्धमनुभूतं श्रुतं स्मृतम् ॥ १६ ॥

svapnānubhava eṣo'tra dṛṣṭāntatvena lakṣyate | ābālametatsaṃsiddhamanubhūtaṃ śrutaṃ smṛtam || 16 ||

This experience of dream is illustrated here as an example. From childhood, this has been experienced, heard, and remembered.

यह स्वप्न का अनुभव यहाँ एक उदाहरण के रूप में दिखाया गया है। बचपन से ही यह अनुभव किया गया है, सुना गया है और याद किया गया है।

7.79.17

अपह्नुते च वा योऽपि स्वमेवानुभवं शठः । स त्याज्यः को ह्यलीकेन सुप्तमुद्बोधयेत्किल ॥ १७ ॥

apahnute ca vā yo'pi svamevānubhavaṃ śaṭhaḥ | sa tyājyaḥ ko hyalīkena suptamudvodhayetkil || 17 ||

One who denies their own experience is a fool. Such a person should be abandoned. Who can awaken a sleeping person with a mere lie?

जो अपने अनुभव को नकारता है, वह मूर्ख है। ऐसे व्यक्ति को त्याग देना चाहिए। झूठ से कौन सोए हुए व्यक्ति को जगा सकता है?

7.79.18

देहकारणकः स्वप्नो देहाभावान्न दृश्यते । इति चेत्तददेहानां परलोकोऽपि नास्ति च ॥ १८ ॥

dehakāraṇakaḥ svapno dehābhāvānna dṛśyate | iti cet tadadehānāṃ paraloko'pi nāsti ca || 18 ||

Dreams are caused by the body, and without the body, they are not seen. If this is the case, then for those without a body, there is no other world either.

स्वप्न शरीर के कारण होते हैं, और शरीर के बिना वे नहीं दिखते। यदि ऐसा है, तो शरीर के बिना लोगों के लिए कोई परलोक भी नहीं है।

7.79.19

इत्येतदभविष्यच्चेत्तच्छरीरकसंक्षये । नाभविष्यदयं सर्गः स चास्त्येव च सर्वदा ॥ १९ ॥

ityetadabhaviṣyacchettaccharīrakasaṃkṣaye | nābhaviṣyadayaṃ sargaḥ sa cāstyeva ca sarvadā || 19 ||

If this were not to be, then in the destruction of the body, this creation would not exist. But it exists always.

यदि यह नहीं होता, तो शरीर के नाश में, यह सृष्टि नहीं होती। लेकिन यह हमेशा मौजूद है।

7.79.20

अवयवविभागात्मन्यवश्यंभाविनि क्षये । न कदाचिदनित्थं तज्जगदित्यप्यसंस्थितम् ॥ २० ॥

avayavavibhāgātmani avaśyaṃbhāvini kṣaye | na kadācidanitthaṃ tajjagadityapyasaṃsthitam || 20 ||

In the inevitable decay of the parts, the world is never without purpose. This is also established.

अंगों के अवश्यंभावी क्षय में, संसार कभी भी अनर्थक नहीं होता। यह भी स्थापित है।

7.79.21

न कदाचिज्जगन्नाशो देहोद्भूतगुणादिकम् । मदशक्तिरिव ज्ञप्तिरुदेतीति च वक्षि चेत् ॥ २१ ॥

na kadācijjagan nāśo dehodbhūtaguṇādikam | madaśaktiriva jñaptirudetīti ca vakṣi cet || 21 ||

Never is there destruction of the world, which is endowed with qualities born of the body | Knowledge arises like my power, and if you say so, I will explain || 21 ||

कभी भी शरीर से उत्पन्न गुणों से युक्त जगत का विनाश नहीं होता | ज्ञान मेरी शक्ति की तरह उत्पन्न होता है, और यदि आप ऐसा कहते हैं, तो मैं समझाऊँगा || २१ ||

7.79.22

तत्पुराणेतिहासानां सर्वसंक्षयवादिनाम् । स्मृत्यादीनां सवेदानां वैयर्थ्यमुपजायते ॥ २२ ॥

tatpurāṇetihāsānāṃ sarvasaṃkṣayavādinām | smṛtyādīnāṃ savedānāṃ vaiyarthyamupajāyate || 22 ||

The futility of all the Puranas, Itihasas, Smritis, and Vedas, which advocate the destruction of everything, arises || 22 ||

सभी पुराणों, इतिहासों, स्मृतियों और वेदों की व्यर्थता, जो सब कुछ के विनाश की वकालत करते हैं, उत्पन्न होती है || २२ ||

7.79.23

अप्रमाणतयैतस्मिन्नर्थे तेषां महामते । अन्यत्राणि प्रमाणत्वं वन्ध्यादावपि किं भवेत् ॥ २३ ॥

apramāṇatayaitasminnarthe teṣāṃ mahāmate | anyatrāṇi pramāṇatvaṃ vandhyādāvapi kiṃ bhavet || 23 ||

O great sage, if these are not authorities in this matter, then what authority do they have in other matters, even in the case of a barren woman? || 23 ||

हे महामते, यदि यहाँ ये प्रमाण नहीं हैं, तो अन्य मामलों में इनका प्रमाण क्या होगा, चाहे वह बंझ स्त्री का मामला ही क्यों न हो? || २३ ||

7.79.24

न चैतदिष्यते लोके जगदुच्छेदकारणात् । अन्यच्चास्तामेतदङ्ग ममेदमपरम शृणु ॥ २४ ॥

na caitadiṣyate loke jagaducchēdakāraṇāt | anyaccāstāmētadaṅga mamēdamaparama śṛṇu || 24 ||

This is not desired in the world due to the cause of the destruction of the universe | Listen to this other thing from me, O friend || 24 ||

यह लोक में ब्रह्मांड के विनाश के कारण से इच्छित नहीं है | हे मित्र, मुझसे यह दूसरी बात सुनो || २४ ||

7.79.25

मदशक्त्यात्मनि ज्ञाने दृष्टा देशान्तरेषु या । प्रसृतानां पिशाचादिदेहता सा न सिध्यति ॥ २५ ॥

madaśaktyātmani jñānē dṛṣṭā dēśāntarēṣu yā | prasṛtānāṃ piśācādidēhatā sā na sidhyati || 25 ||

The knowledge that is seen in other places in the self of my power does not establish the bodily existence of beings like ghosts || 25 ||

जो ज्ञान मेरी शक्ति के स्वरूप में दूसरे स्थानों पर देखा जाता है, वह पिशाच जैसे प्राणियों की शारीरिक सत्ता स्थापित नहीं करता || २५ ||

7.79.26

अथ सापि मुधा भ्रान्तिर्यावद्देहं प्रदृश्यते । इति चेत्तन्मुधा नाम सत्यमित्येव वो भवेत् ॥ २६ ॥

atha sāpi mudhā bhrāntiryāvaddehaṃ pradṛśyate | iti cet tan mudhā nāma satyamityeva vo bhavet || 26 ||

If this delusion persists as long as the body is visible, then it is indeed true in that sense.

यदि यह भ्रम तब तक बना रहता है जब तक शरीर दिखाई देता है, तो यह उस अर्थ में सत्य है।

7.79.27

एवं चेत्तत्परो लोकः सत्स्वर्गनरकादिकम् । इत्येषापि न संवित्किं सत्यतामुपगच्छति ॥ २७ ॥

evaṃ cet tatparo lokaḥ satsvarganarakādikam | ityeṣāpi na saṃvitkiṃ satyatāmupagacchati || 27 ||

If the world is devoted to that, including heaven and hell, then this consciousness does not attain truth.

यदि संसार उसके प्रति समर्पित है, जिसमें स्वर्ग और नरक शामिल हैं, तो यह चेतना सत्यता को प्राप्त नहीं होती।

7.79.28

न पिशाचप्रमा सत्या मदशक्तिमतोऽपि हि । प्रतिभास्य न सत्या स्यात्परलोकात्मिका कथम् ॥ २८ ॥

na piśācapramā satyā madaśaktimato'pi hi | pratibhāsya na satyā syātparalokātmikā katham || 28 ||

The perception of a ghost is not true, even if it is due to the power of intoxication. How can the idea of the afterlife be true if it is merely an illusion?

भूत की धारणा सत्य नहीं है, भले ही यह मादक शक्ति के कारण हो। यदि यह केवल एक भ्रम है, तो परलोक की धारणा कैसे सत्य हो सकती है?

7.79.29

पिशाचोऽस्तीति चेत्संवित्सत्यार्था तेन संविदः । मृतस्यास्ति परो लोक इत्यस्यां किं न सत्यता ॥ २९ ॥

piśāco'stīti cet saṃvitsatyārthā tena saṃvidaḥ | mṛtasyāsti paro loka ityasyāṃ kiṃ na satyatā || 29 ||

If the consciousness that a ghost exists is true, then why is the idea that there is an afterlife for the dead not true?

यदि भूत के अस्तित्व की चेतना सत्य है, तो मृत के लिए परलोक की धारणा सत्य क्यों नहीं है?

7.79.30

काकतालीयवद्देहात्पैशाची ज्ञप्तिरस्ति चेत्। परलोकार्थसंवित्तिः कथं नास्ति सकारणा ॥ ३० ॥

kākatālīyavaddehātpaiśācī jñaptirasti cet | paralokārthasaṃvittiḥ kathaṃ nāsti sakāraṇā || 30 ||

If there is a ghostly perception from the body like the crow's eye, then how can there not be a conscious perception of the afterlife?

यदि शरीर से कौए की आँख की तरह भूत की धारणा है, तो परलोक की चेतना कैसे नहीं हो सकती?

7.79.31

यान्तर्वेत्ति यथा संवित्सा तथानुभवत्यलम्। अस्तु सत्यमसत्यं वा सिद्धमित्यनुभूतितः ॥ ३१ ॥

yāntarvettyathā saṃvitsā tathānubhavatyalaṃ | astu satyamasyataṃ vā siddhamityanubhūtiḥ || 31 ||

As the inner knower knows, so does the consciousness experience | Let it be true or false, it is accomplished through experience

जैसे अंतर्दृष्टि जानती है, वैसे ही चेतना अनुभव करती है | चाहे यह सत्य हो या असत्य, यह अनुभव से सिद्ध होता है

7.79.32

मृतस्यास्ति परो लोको विदित्येवंमयी भवेत्। सति वाऽसति देहेऽस्मिंस्तेन किं सदसच्च किम्॥ ३२ ॥

mṛtasyāsti paro loko vidityevaṃmayī bhavet | sati vā'sati dehe'smiṃsten kiṃ sadasacca kim || 32 ||

There is another world for the dead, thus one becomes knowledgeable | Whether this body exists or not, what is the truth and what is the falsehood

मृतक के लिए एक दूसरा लोक है, इसलिए वह ज्ञानी बन जाता है | चाहे यह शरीर हो या न हो, सत्य क्या है और असत्य क्या है

7.79.33

तस्मात्स्वभावः प्रथमं प्रस्फुरन्वेत्ति संविदम्। वासनाकारणं पश्चाद्बुद्ध्वा संपश्यति भ्रमम्॥ ३३ ॥

tasmātsvabhāvaḥ prathamaṃ prasphuranvetti saṃvidam | vāsanākāraṇaṃ paścādbuddhvā saṃpaśyati bhramam || 33 ||

Therefore, the inherent nature first perceives the consciousness | Later, understanding the cause of desires, one sees the delusion

इसलिए, स्वभाव पहले चेतना को जानता है | बाद में, इच्छाओं के कारण को समझकर, वह भ्रम को देखता है

7.79.34

तत्क्षयाच्छममायाति द्रष्टृदृश्यदृगामयः। तत्सत्तायामुदेतीयं संसृत्याख्या पिशाचिका ॥ ३४ ॥

tatkṣayācchamamāyāti draṣṭṛdṛśyadṛgāmayaḥ | tatsattāyāmudetīyaṃ saṃsṛtyākhyā piśācikā || 34 ||

From the destruction of that, the seer of the seen and the unseen attains peace | In that state, this is called the cycle of transmigration, the demoness

उस विनाश से, देखने वाला और देखा जाने वाला शांति प्राप्त करता है | उस अवस्था में, यह पुनर्जन्म के चक्र कहलाता है, पिशाचिका

7.79.35

उपलम्भ उदेत्यादौ ब्रह्मणो वासनां ततः तच्छान्तिं विद्धि निर्वाणं तत्सत्तां संसृतिभ्रमम्॥ ३५ ॥

upalambha udetyādau brahmaṇo vāsanā tataḥ tacchāntiṃ viddhi nirvāṇaṃ tatsattāṃ saṃsṛtibhramam || 35 ||

The sense of separation arises first as a notion of Brahman. Know that the cessation of this is nirvana, while its existence is the delusion of worldly existence.

ब्रह्म के बारे में उपलंभ (विभाजन की भावना) पहले उठता है। इस उपलंभ की शांति को निर्वाण जानो, और इसका अस्तित्व संसार का भ्रम है।

7.79.36

उत्पन्नैव च सानादौ परब्रह्मण्यसंभवात्। उत्पन्ना समयाद्यासौ ब्रह्मैव परमेव सत्॥ ३६॥

utpannaiva ca sānādau parabrahmaṇyasaṃbhavāt | utpannā samayādyāsau brahmaiva parameva sat || 36 ||

That which is born at the beginning is not born from the Supreme Brahman | That which is born from the beginning is Brahman itself, the Supreme.

जो शुरुआत में उत्पन्न होता है, वह परब्रह्म से उत्पन्न नहीं होता | जो शुरुआत में उत्पन्न होता है, वह ब्रह्म ही है, परम है।

7.79.37

एतावद्यत्परिज्ञानं तन्निर्वाणं विदुर्बुधाः। यदत्रैवापरिज्ञानं तं बन्धं विद्धि राघव॥ ३७॥

etāvadyatparijñānaṃ tannirvāṇaṃ vidurbudhāḥ | yadatraivāparijñānaṃ taṃ bandhaṃ viddhi rāghava || 37 ||

Knowledge of this much is liberation, the wise know | Whatever ignorance is here, know that as bondage, O Raghava.

इतना ज्ञान ही मोक्ष है, बुद्धिमान लोग जानते हैं | जो भी अज्ञान यहाँ है, उसे बंधन समझो, हे राघव।

7.79.38

विज्ञानघन एवायं कचनाकचनात्मकः। स्वयमेव कचत्यन्तर्न कचत्येव वा स्वयम्॥ ३८॥

vijñānaghana evāyaṃ kacanākacanātmakaḥ | svayameva kacatyantarn na kacatyeva vā svayam || 38 ||

This consciousness is dense and consists of both the manifest and the unmanifest | It shines by itself within, or it does not shine at all.

यह चेतना घनी है और प्रकट और अप्रकट दोनों से बनी है | यह स्वयं अंदर चमकती है, या फिर बिल्कुल नहीं चमकती।

7.79.39

संविदंशपरावृत्तिमात्रे पेलवरूपिणि। बन्धदृङ्मोक्षदृक् चेति क्लेशस्तत्साधनं कियत्॥ ३९॥

saṃvidaṃśaparāvṛttimātre pelavarūpiṇi | bandhadṛṅmokṣadṛk ceti kleśastatsādhanaṃ kiyat || 39 ||

In the mere turning away from the aspect of consciousness, which is insignificant | The vision of bondage and liberation is suffering, and how much is its means?

चेतना के पहलू से मात्र मुँह मोड़ने में, जो अप्रधान है | बंधन और मोक्ष की दृष्टि दुःख है, और उसका साधन कितना है?

7.79.40

संविदुद्बोधने बन्धस्तदनुद्बोधने शिवम्। असत्सद्वज्जगद्भाति संविदुद्बोधनोदरम्॥ ४०॥

saṃvidudvodhane bandhas tadanudvodhane śivam | asatsadvajjagadbhāti saṃvidudvodhanodaram || 40 ||

In the agitation of consciousness, there is bondage; in the non-agitation of consciousness, there is Shiva | The world appears as both real and unreal, full of the agitation of consciousness.

चेतना की अशांति में बंधन है; चेतना की शांति में शिव है | वास्तविक और अवास्तविक दोनों के रूप में जगत प्रकट होता है, चेतना की अशांति से भरा हुआ।

7.79.41

अजडं वेदनं सुप्तं मोक्ष इत्यभिधीयते। प्रबुद्धं बन्ध इत्याहुर्यदिच्छसि तदाहर॥ ४१॥

ajadaṃ vedaṃ suptaṃ mokṣa ityabhidhīyate | prabuddhaṃ bandha ityāhuryadicchasi tadāhara || 41 ||

The state of being unaware and asleep is called liberation | The state of being awake is called bondage | If you wish, bring that forth || 41 ||

अजड़ और सोया हुआ अवस्था को मोक्ष कहते हैं | जागृत अवस्था को बंधन कहते हैं | यदि आप चाहते हैं, तो उसे ले आइए || ४१ ||

7.79.42

निर्वाणवासनमनन्तमनाद्यमच्छबोधैकतानमपयन्त्रणमस्तशङ्कम् । अद्वैतमैक्यरहितं च
निरस्तशून्यमाकाशकोशविशदाशयशान्तमास्व ॥ ४२ ॥

nirvāṇavāsanamanantamanādyamacchabodhaikatānamapayantraṇamastaśaṅkam | advaitamaikyarahitaṃ ca nirastaśūnyamākāśakośaviśadāśayaśāntamāsv || 42 ||

Desire for nirvana, endless, without beginning, pure consciousness, without duality, without unity, without emptiness, clear like the sky, peaceful, be in that state || 42 ||

निर्वाण की इच्छा, अनंत, अनादि, शुद्ध बोध, द्वैत रहित, एकता रहित, शून्यता रहित, आकाश की तरह स्पष्ट, शांत, उस अवस्था में रहें || ४२ ||

Chapter 80

7.80.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति ते सर्वं आयाता ब्रह्मलोकनिवासिनः । अदृश्यतामेव गता दीपाः क्षीणदशा इव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti te sarvaṃ āyātā brahmalokanivāsinaḥ | adṛśyatāmeva gatā dīpāḥ kṣīṇadaśā iva || 1 ||

Shri Vasishtha said: Thus, all the inhabitants of Brahmaloka came and then disappeared like lamps whose oil has been exhausted.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, सभी ब्रह्मलोक निवासी आए और फिर ऐसे ही अदृश्य हो गए जैसे तेल समाप्त हो चुके दीपक।

7.80.2

अथ ते द्वादशादित्या ब्रह्मणि ब्रह्मतां गते । जगद्वद्ब्रह्मलोकं तमदहन्भास्वरार्चिषः ॥ २ ॥

atha te dvādaśādityā brahmaṇi brahmatāṃ gate | jagadvadbrahmalokaṃ tamadahanbhāsvarārciṣaḥ || 2 ||

Then, when Brahma attained the state of Brahman, those twelve suns, with their brilliant rays, burned that Brahmaloka as if it were the world.

फिर, जब ब्रह्मा ब्रह्म की अवस्था को प्राप्त हुए, तब वे बारह सूर्य, अपनी चमकीली किरणों से, उस ब्रह्मलोक को जला दिया जैसे वह संसार हो।

7.80.3

वैरिञ्चनगरं दग्ध्वा ध्यानं कृत्वा विरञ्चिवत् । तेऽपि निर्वाणमाजग्मुर्निःस्नेहदशदीपवत् ॥ ३ ॥

vairiñcanagaraṃ dagdhvā dhyānaṃ kṛtvā virañcivat | te'pi nirvāṇamājagmurniḥsnehadaśadīpavat || 3 ||

After burning the city of Vairincha (Brahma), they meditated like Viranchi (Brahma) and attained nirvana, becoming free from attachment like lamps whose oil has been exhausted.

वैरिञ्च (ब्रह्मा) के नगर को जलाकर, वे विरञ्चि (ब्रह्मा) की तरह ध्यान किया और निर्वाण प्राप्त किया, आसक्ति से मुक्त हो गए जैसे तेल समाप्त हो चुके दीपक।

7.80.4

तत एकार्णवापूरो विरिञ्चनगरान्तरम् । रात्रौ भुवमिव ध्वान्तं पूरयामास सूर्मिमान् ॥ ४ ॥

tata ekārṇavāpūro viriñcanagarāntaram | rātrau bhuvamiva dhvāntaṃ pūrayāmāsa sūrmimān || 4 ||

Then, the entire interior of the city of Vairincha became filled with a single ocean, like the earth filled with darkness at night.

फिर, वैरिञ्च के नगर का सारा अंतरिक्ष एक समुद्र से भर गया, जैसे रात में पृथ्वी अंधेरे से भर जाती है।

7.80.5

आब्रह्मलोकमभवज्जगदापूर्णमर्णसा । तुल्यं रसैकपूर्णेन पक्वद्राक्षाफलेन तत् ॥ ५ ॥

ābrahmalokamabhavajjagadāpūrṇam arṇasā | tulyaṃ rasai kapūrṇena pakvadrākṣāphalena tat || 5 ||

The entire world up to Brahmaloka became filled with water, similar to a ripe grape filled with a single juice.

ब्रह्मलोक तक का सारा संसार जल से भर गया, जैसे एक पकी अंगूर एक ही रस से भरा होता है।

7.80.6

तत्तदूर्मिगिरिव्रातखगैरावलिताः खिलाः विच्छिन्नाः कल्पजलदा जल एव निलिल्यिरे ॥ ६ ॥

tattadūrmigirivrātakhagairāvalitāḥ khilāḥ vicchinnāḥ kalpajaladā jala eva nililyire || 6 ||

The waves of the mountains, the clouds, and the birds were enveloped in darkness, and the clouds were scattered, merging into the water.

पर्वतों की लहरें, बादल और पक्षी अंधेरे में ढंक गए थे, और बादल बिखर गए, जल में मिल गए।

7.80.7

एतस्मिन्नन्तरे तत्र दृष्टवानहमम्बरात् यावदभ्युदितं भीमं भीतः किंचिन्नभोन्तरात् ॥ ७ ॥

etasminnantare tatra dṛṣṭavānhamambarāt yāvadabhyuditaṃ bhīmaṃ bhītaḥ kiṃcinnabhontarāt || 7 ||

At that moment, I saw from the sky a terrifying form rising, and I was frightened by something in the sky.

उस समय, मैंने आकाश से एक भयंकर रूप उठते देखा, और मैं आकाश में किसी चीज से डर गया।

7.80.8

कल्पान्तजगदाकारं कृष्णमापूरिताम्बरम् आकल्पं संभृतं नैशं देहेनेवोत्थितं तमः ॥ ८ ॥

kalpāntajagadākāraṃ kṛṣṇamāpūritāmbaram ākalpaṃ saṃbhṛtaṃ naiśaṃ dehenevottithaṃ tamaḥ || 8 ||

The form of the universe at the end of the world, filled with darkness, appeared as if the darkness itself had risen like a body.

प्रलय के समय ब्रह्माण्ड का रूप, अंधेरे से भरा हुआ, ऐसा लगता था जैसे अंधेरा ही एक शरीर के रूप में उठ गया हो।

7.80.9

तरुणादित्यलक्षाणां तेज आभास्वरं दधत् आदित्यत्रयसंकाशैः स्थिरविद्युच्चयोल्वणैः ॥ ९ ॥

taruṇādityalakṣāṇāṃ teja ābhāsvaraṃ dadhat ādityatrayasaṃkāśaiḥ sthiravidyuccayolvaṇaiḥ || 9 ||

With the radiance of young suns, it had a brilliant light, and it was adorned with steady lightning bolts resembling three suns.

युवा सूर्यों की चमक के साथ, इसमें एक चमकीला प्रकाश था, और इसे तीन सूर्यों के समान स्थिर बिजली के तीर से सजाया गया था।

7.80.10

नेत्रैराभास्वरमुखं ज्वालापुञ्जसमुद्गिरम् पञ्चाननं दशभुजं त्रिनेत्रं शूलपाणिकम् ॥ १० ॥

netrairābhāsvaramukhaṃ jvālāpuñjasamudgiram pañcānanaṃ daśabhujaṃ trinetraṃ śūlapāṇikam || 10 ||

With radiant eyes and a mouth emitting flames, it had five faces, ten arms, three eyes, and held a trident.

चमकीले नेत्रों और ज्वालाओं से उगलते हुए मुख के साथ, इसके पाँच मुख, दस भुजाएँ, तीन नेत्र और एक त्रिशूल था।

7.80.11

आयान्तमन्तमुक्तेऽपि व्योम्नीव विततताकृतिम्। खमिवासि घनश्यामं देहमासाद्य संस्थितम् ॥ ११ ॥

āyāntamantamukte'pi vyomnīva vitatākṛtim | khamivāsi ghanaśyāmaṃ dehamāsādya saṃsthitam || 11 ||

Even though the end is declared, you are like the sky, with an expanded form | You are like the sky, dark blue, having attained a body and established

अंत की घोषणा के बावजूद, आप आकाश के समान विस्तृत रूप वाले हैं | आप आकाश के समान, घने नीले रंग के, शरीर प्राप्त करके स्थित हैं

7.80.12

स्थितमेकार्णवापूर्णाद्ब्रह्माण्डाद्बहिरम्बरे । व्योमेव हस्तपादादिसंनिवेशेन लक्षितम् ॥ १२ ॥

sthitamekārṇavāpūrṇādbrahmāṇḍādvahirambare | vyomeva hastapādādisaṃniveśena lakṣitam || 12 ||

Established outside the universe filled with a single ocean | Marked by the arrangement of hands, feet, etc., like the sky

एक समुद्र से भरे ब्रह्मांड के बाहर स्थित | हाथ, पैर आदि के व्यवस्था से चिह्नित, आकाश के समान

7.80.13

घोणानिलपरावृत्तिविधूतैकमहार्णवम् । गोविन्दमिव दोर्दण्डक्षोभितक्षीरसागरम् ॥ १३ ॥

ghoṇānilaparāvṛttividhūtaikamahārṇavam | govindamiva dordaṇḍakṣobhitakṣīrasāgaram || 13 ||

The single great ocean agitated by the turning of the nose and wind | Like Govinda, the ocean of milk churned by the staff of the arms

नाक और हवा के घूमने से उत्पन्न एक महान समुद्र | गोविन्द के समान, हाथों के डंडे से मथा दूध का समुद्र

7.80.14

कल्पार्णवजलापूरं पुंस्त्वेनेव समुत्थितम् । मूर्तियुक्तमहंकारमस्तकारणमागतम् ॥ १४ ॥

kalpārṇavajalāpūraṃ puṃstveneva samutthitam | mūrtiyuktamahaṃkāramastakāraṇamāgatam || 14 ||

Filled with the waters of the ocean of creation | Risen with masculinity | Embodied with ego, the cause of the head

सृष्टि के समुद्र के जल से भरा हुआ | पुरुषत्व के साथ उठा हुआ | अहंकार के साथ शरीर युक्त, सिर का कारण

7.80.15

कुलाचलबृहद्वृन्दमिवोड्डयनडम्बरैः । पक्षौघैरुत्थितं व्योम समस्तमभिपूरयत् ॥ १५ ॥

kulācalabṛhadvṛndamivouḍḍayanaḍambaraiḥ | pakṣaughairutthitaṃ vyoma samastamabhipūrayat || 15 ||

Like a great mountain range lifted by the pride of elevation | The sky filled with groups of wings rose and pervaded everything

उच्चता के गर्व से उठा हुआ एक महान पर्वत श्रृंखला के समान | पंखों के समूहों से भरा आकाश उठा और सब कुछ व्याप्त किया

7.80.16

ततस्त्रिशूलनयनैर्मया रुद्रोऽयमित्यसौ । दूरादेव परिज्ञाय परमेशो नमस्कृतः ॥ १६ ॥

tataśtriśūlanayanairmayā rudro'yamityasau | dūrādeva parijñāya parameśo namaskṛtaḥ || 16 ||

Then, recognizing from afar that this was Rudra with his trident and eyes, the Supreme Lord was saluted.

तब, दूर से ही यह जानकर कि यह त्रिशूल और नेत्रों वाला रुद्र है, परमेश्वर को प्रणाम किया गया।

7.80.17

श्रीराम उवाच । किं स तादृग्विधो रुद्रः किं कृष्णः किं महाकृतिः । किं पञ्चवदनः कस्माद्दशबाहुः स तिष्ठति ॥ १७ ॥

śrīrāma uvāca | kiṃ sa tādṛgvidho rudraḥ kiṃ kṛṣṇaḥ kiṃ mahākṛtiḥ | kiṃ pañcavadanaḥ kasmāddaśabāhuḥ sa tiṣṭhati || 17 ||

Sri Rama said: What kind of being is that Rudra? Why is he dark? Why does he have a massive form? Why does he have five faces? Why does he stand with ten arms?

श्री राम ने कहा: वह रुद्र कैसा है? वह क्यों काला है? वह क्यों विशाल आकार वाला है? वह क्यों पाँच मुखों वाला है? वह क्यों दस भुजाओं के साथ खड़ा है?

7.80.18

किं त्रिनेत्रः किमुग्रात्मा किमेकः किंप्रयोजनः । केनेरितः किमकरोच्छायासीद्वद का मुने ॥ १८ ॥

kiṃ trinetraḥ kimugrātmā kimekaḥ kiṃprayojanaḥ | kenēritaḥ kimakaročchāyāsīdvada kā mune || 18 ||

Why does he have three eyes? Why is he fierce? Why is he alone? What is his purpose? By whom is he driven? What did he do? Who is this shadow? Tell me, O sage.

वह क्यों तीन नेत्रों वाला है? वह क्यों उग्र है? वह क्यों अकेला है? उसका क्या उद्देश्य है? उसे किसने प्रेरित किया? उसने क्या किया? यह छाया कौन है? बताओ, हे मुनि।

7.80.19

श्रीवसिष्ठ उवाच । काकुत्स्थ रुद्रनामासावहंकारतयोत्थितः । विषमैकाभिमानात्मा मूर्तिरस्यामलं नभः ॥ १९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kākutstha rudranāmāsāvahaṃkāratayotthitaḥ | viṣamaikābhimānātmā mūrtirasyāmalan nabhaḥ || 19 ||

Vasishtha said: O descendant of Kakutstha, this Rudra, arisen from ego, is the embodiment of uneven pride. His form is the pure sky.

वसिष्ठ ने कहा: हे ककुत्स्थ के वंशज, यह रुद्र, अहंकार से उत्पन्न, असमान अभिमान का स्वरूप है। उसकी मूर्ति शुद्ध आकाश है।

7.80.20

व्योमाकृतिः स भगवाम्व्योमवर्णो महाद्युतिः । चिद्व्योममात्रसारत्वादाकाशात्मा स उच्यते ॥ २० ॥

vyomākṛtiḥ sa bhagavāṃvyomavarṇo mahādyutiḥ | cidvyomamātrasāratvādākāśātmā sa ucyate || 20 ||

He has the form of the sky, is of the color of the sky, and has great brilliance. Because his essence is the pure sky of consciousness, he is called the embodiment of the sky.

वह आकाश के रूप वाला, आकाश के रंग वाला, और महान तेजस्वी है। क्योंकि उसका सार चेतना का शुद्ध आकाश है, इसलिए वह आकाश का स्वरूप कहलाता है।

7.80.21

सर्वभूतात्मभूतत्वात्सर्वगत्वान्महाकृतिः । यानि तस्यानुषक्तानि पञ्च खानीन्द्रियाण्यलम् ॥ २१ ॥

sarvabhūtātmabhūtatvātsarvagatvānmahākṛtiḥ | yāni tasyānuṣaktāni pañca khānīndriyāṇy alam || 21 ||

Due to being the self of all beings and being omnipresent, the great form has five senses attached to it.

सभी प्राणियों के आत्मा होने और सर्वव्यापी होने के कारण, महान रूप में पांच इंद्रियां जुड़ी हुई हैं।

7.80.22

तानि तस्य मुखान्याहुस्तपद्रूपाणि सर्वतः । कर्मेन्द्रियाणि विषयास्ते हि तस्य भुजा दश ॥ २२ ॥

tāni tasya mukhānyāhus tapadrūpāṇi sarvataḥ | karmeindriyāṇi viṣayās te hi tasya bhujā daśa || 22 ||

Those are said to be its mouths, having the form of heat everywhere. The organs of action are the senses, and they are its ten arms.

वे उसके मुख कहे जाते हैं, जो सर्वत्र ताप के रूप में हैं। कर्मेंद्रियां इंद्रियां हैं, और वे उसके दस भुजा हैं।

7.80.23

सर्वभूतनरैः सार्धं ब्रह्मणा परमेयुषा । यदासौ संपरित्यक्तस्तदा स्वां मूर्तिमागतः ॥ २३ ॥

sarvabhūtanaraiḥ sārdhaṃ brahmaṇā parameyuṣā | yadāsau saṃparityaktastadā svāṃ mūrtimāgataḥ || 23 ||

When it is abandoned by all beings and Brahma, the supreme life force, then it attains its own form.

जब यह सभी प्राणियों और ब्रह्मा, परम जीवन शक्ति से छोड़ दिया जाता है, तब यह अपने रूप को प्राप्त करता है।

7.80.24

स चैकांशैकरूपात्मा नास्ति तस्य हि साकृतिः । तथा दृश्यत एवासौ भ्रान्तिमात्रेण मूर्तिमान् ॥ २४ ॥

sa caikaṃśaikarūpātmā nāsti tasya hi sākṛtiḥ | tathā dṛśyata evāsau bhrāntimātreṇa mūrtimān || 24 ||

And it is one part, one form, and there is no similarity to it. Thus, it is seen as embodied only due to illusion.

और यह एक अंश, एक रूप है, और इसके समान कुछ नहीं है। इसलिए, यह केवल भ्रम के कारण ही साकार दिखाई देता है।

7.80.25

चिदाकाशगते स्फारे भूताकाशे स तिष्ठति । देहे च सर्वभूतानां नित्यं वायुरिवेश्वरः ॥ २५ ॥

cidākāśagate sphāre bhūtākāśe sa tiṣṭhati | dehe ca sarvabhūtānāṃ nityaṃ vāyuriveśvaraḥ || 25 ||

It resides in the sphere of the sky of consciousness, in the space of elements, and in the body of all beings, always like the wind, the lord.

यह चेतना के आकाश की गोलाई में, तत्वों के आकाश में, और सभी प्राणियों के शरीर में, हमेशा हवा की तरह, ईश्वर के रूप में रहता है।

7.80.26

सर्वभूतपरित्यक्तस्तस्मिन्काले खमूर्तिमान् । क्षोभयन्स क्षणं क्षीणः परमां शान्तिमेष्यति ॥ २६ ॥

sarvabhūtaparityaktastasmin kāle khamūrtimān | kṣobhayan sa kṣaṇaṃ kṣīṇaḥ paramāṃ śāntim eṣyati || 26 ||

Abandoning all beings at that time, assuming the form of the sky, agitating for a moment, he will attain supreme peace.

उस समय सभी प्राणियों को छोड़कर, आकाश का रूप धारण करके, एक क्षण के लिए विचलित होकर, वह परम शान्ति प्राप्त करेगा।

7.80.27

ये गुणाकृतयः कालाश्चित्ताहंकारबुद्धयः । प्रणवस्य च ये वर्णा ये च वेदास्तथा त्रयः ॥ २७ ॥

ye guṇākṛtayaḥ kālāś cittāhaṃkārabuddhayaḥ | praṇavasya ca ye varṇā ye ca vedās tathā trayāḥ || 27 ||

These are the qualities, times, mind, ego, and intellects, the syllables of the Pranava, and the three Vedas.

ये गुण, काल, चित्त, अहंकार, और बुद्धि हैं, प्रणव के वर्ण और तीन वेद हैं।

7.80.28

रुद्रस्य तस्य ते नेत्रसंनिवेशेन संस्थिताः । त्रिशूलं तेन त्रैलोक्यं गृहीतं करकोटरे ॥ २८ ॥

rudrasya tasya te netrasaṃniveśena saṃsthitāḥ | triśūlaṃ tena trailokyaṃ gṛhītaṃ karakoṭare || 28 ||

Those are established by the placement of the eyes of that Rudra. With that trident, the three worlds are grasped in the palm.

वे उस रुद्र की आँखों के स्थान द्वारा स्थापित हैं। उस त्रिशूल के साथ, तीनों लोक हथेली में पकड़े गए हैं।

7.80.29

यस्मात्तद्व्यतिरेकेण सर्वभूतगणेष्वपि । अन्यन्न विद्यते किंचिद्देहात्मैव ततः स्थितः ॥ २९ ॥

yasmāt tadvyatirekeṇa sarvabhūtagaṇeṣv api | anyan na vidyate kiṃcid dehātmaiva tataḥ sthitaḥ || 29 ||

Because without that, even among all beings, there is nothing else; only the embodied self exists from that.

क्योंकि उसके बिना, सभी प्राणियों में भी, कुछ और नहीं है; केवल शरीर आत्मा उससे अस्तित्व में है।

7.80.30

सर्वसत्त्वोपलम्भात्मा स्वभावोऽस्य प्रयोजनम् । ईरितः शिवरूपेण चिन्मात्राकाशरूपिणा ॥ ३० ॥

sarvasattvopalambhātmā svabhāvo'sya prayojanam | īritaḥ śivarūpeṇa cinmātrākāśarūpiṇā || 30 ||

The nature of this is the essence of the attainment of all beings, the purpose is expressed by Shiva, who is in the form of pure consciousness and space.

इसका स्वभाव सभी प्राणियों के उपलब्धि का सार है, उद्देश्य शिव द्वारा व्यक्त किया जाता है, जो शुद्ध चेतना और आकाश के रूप में है।

7.80.31

तेनैव च निगीर्णः सन्परमां शान्तिमेत्यसौ । निर्मलाकाशरूपाप्मा कृष्ण इत्येष ईश्वरः ॥ ३१ ॥

tenaiva ca nigīrṇaḥ sanparamāṃ śāntimetyasau | nirmalākāśarūpāpmā kṛṣṇa ityeṣa īśvaraḥ || 31 ||

By that very act, having been absorbed, he attains supreme peace | Pure like the sky, this is Krishna, the Lord || 31 ||

उसी के द्वारा अवशोषित होकर, वह परम शान्ति को प्राप्त होता है | निर्मल आकाश के समान, यह कृष्ण है, ईश्वर || ३१ ||

7.80.32

कृत्वा कल्पं जगत्सर्वं तत्पीत्वैकार्णवं तदा । स प्रयाति परां शान्तिमभूयःसंनिवृत्तये ॥ ३२ ॥

kṛtvā kalpaṃ jagatsarvaṃ tatpītvaikārṇavaṃ tadā | sa prayāti parāṃ śāntimabhūyaḥsaṃnivṛttaye || 32 ||

Having created the entire universe, and then having drunk it as a single ocean, he proceeds to attain supreme peace for the sake of ultimate dissolution || 32 ||

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को रचकर, और फिर उसे एक समुद्र के रूप में पी लेने के बाद, वह अन्तिम विलय के लिए परम शान्ति प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ता है || ३२ ||

7.80.33

अनन्तरं मया दृष्टस्तत्रासौ यावदुद्यमात् । प्रवृत्तः प्राणवेगेन तमाक्रष्टुं महार्णवम् ॥ ३३ ॥

anantaraṃ mayā dṛṣṭastatrāsau yāvadudyamāt | pravṛttaḥ prāṇavegena tamākraṣṭuṃ mahārṇavam || 33 ||

Immediately after, I saw him there, as he began to exert himself with the force of his breath to draw in the great ocean || 33 ||

तत्काल ही, मैंने उसे वहां देखा, जब वह अपने श्वास की शक्ति से महान समुद्र को अपने में खींचने के लिए प्रयास करना शुरू किया || ३३ ||

7.80.34

अथ तस्य मुखं स्फारं ज्वालामालाकुलान्तरम् । प्राणाकृष्टो महाम्भोधिर्वाडवाग्निमिवाविशत् ॥ ३४ ॥

atha tasya mukhaṃ sphāraṃ jvālāmālākulāntaram | prāṇākṛṣṭo mahāmbhodhirvāḍavāgnimivāviśat || 34 ||

Then, his mouth expanded, filled with rows of flames within, and the great ocean, drawn by his breath, entered him like the submarine fire || 34 ||

तब, उसका मुख फैल गया, जो अंदर से ज्वालाओं की पंक्तियों से भरा हुआ था, और उसके श्वास से खींचा हुआ महान समुद्र उसमें समुद्री अग्नि की तरह प्रवेश कर गया || ३४ ||

7.80.35

स एव वाडवो भूत्वा वह्निराकल्पमर्णवे। अहंकारः पिबत्यम्बु रुद्रः सर्वं तु तत्तदा ॥ ३५ ॥

sa eva vāḍavo bhūtvā vahnirākalpam arṇave | ahaṃkāraḥ pibatyambu rudraḥ sarvaṃ tu tattadā || 35 ||

He himself, becoming the submarine fire, burns the ocean at the end of the kalpa, and Rudra, the ego, drinks the water, and indeed, he is everything at that time || 35 ||

वह स्वयं, समुद्री अग्नि बनकर, कल्प के अंत में समुद्र को जलाता है, और रुद्र, अहंकार, पानी पीता है, और वास्तव में, उस समय वह सब कुछ है || ३५ ||

7.80.36

पातालमिव पानीयं सर्पो बिलमिव क्षणात्। पञ्चवायुरिवाकाशमविशत्तन्मुखं जवात् ॥ ३६ ॥

pātālamiva pānīyaṃ sarpobilamiva kṣaṇāt| pañcavāyurivākāśamaviśattanmukhaṃ javāt || 36 ||

Like the netherworld, the water, like a serpent into a hole in an instant, the five winds entered that mouth swiftly.

जैसे पाताल की तरह पानी, जैसे साँप क्षण भर में बिल में घुस जाता है, वैसे ही पाँच वायुएँ उस मुख में तेजी से घुस गईं।

7.80.37

समुपेत्यापिबद्रुद्रः स मुहूर्तेन तत्पयः। कृष्णाङ्गोर्क इव ध्वान्तं सत्संपर्क इवागुणम् ॥ ३७ ॥

samupetyāpibadruadraḥ sa muhūrtena tatpayaḥ| kṛṣṇāṅgoarka iva dhvāntaṃ satsaṃparka ivāguṇam || 37 ||

Rudra, having approached, drank that water in a moment, like the dark-bodied sun dispelling darkness, like the contact with the good dispelling qualities.

रुद्र ने निकट आकर उस पानी को एक क्षण में पी लिया, जैसे काले शरीर वाले सूर्य ने अंधेरा दूर किया, जैसे सत्संग ने गुणों को दूर किया।

7.80.38

आब्रह्मलोकपातालं शान्तं शून्यमथाभवत्। रजोधूमानिलाम्भोधिभूतमुक्तं समं नभः ॥ ३८ ॥

ābrahmalokapātālaṃ śāntaṃ śūnyamathābhavat| rajodhūmānilāmbhodhibhūtamuktaṃ samaṃ nabhaḥ || 38 ||

From Brahmaloka to Patala, everything became calm and empty, the sky became uniform, free from dust, smoke, wind, water, and elements.

ब्रह्मलोक से पाताल तक, सब कुछ शांत और खाली हो गया, आकाश समान हो गया, धूल, धुआँ, हवा, पानी और तत्वों से मुक्त।

7.80.39

केवलं तत्र दृश्यन्ते चत्वारो व्योमनिर्मलाः। इमे पदार्था निस्पन्दाः श्रृणु तान्रघुनन्दन ॥ ३९ ॥

kevalaṃ tatra dṛśyante catvāro vyomanirmalāḥ| ime padārthā nispandāḥ śṛṇu tānraghunandana || 39 ||

Only these four pure elements are seen there, motionless. Listen, O Raghunandana, to these substances.

वहाँ केवल ये चार शुद्ध तत्व दिखाई देते हैं, निश्चल। सुनो, हे रघुनंदन, इन पदार्थों को।

7.80.40

एकस्तावदसौ मध्ये रुद्रः कृष्णाम्बराकृतिः। निराधारः स्थितो व्योम्नि निस्पन्दामोदबिम्बवत् ॥ ४० ॥

ekastāvadasau madhye rudraḥ kṛṣṇāmbarākṛtiḥ| nirādhāraḥ sthito vyomni nispandāmodabimbavat || 40 ||

One, Rudra, in the middle, with a dark form, supportless, stood in the sky, like a motionless reflection of joy.

एक, रुद्र, बीच में, काले रूप में, बिना आधार के, आकाश में खड़ा था, जैसे निश्चल आनंद का प्रतिबिंब।

7.80.41

द्वितीयोऽवस्थितो दूरे पृथ्व्याकाशतलोपमःभागो ब्रह्माण्डसदनस्याधः पातालसप्तकात् ॥ ४१ ॥

dvitīyo'vasthito dūre pṛthvyākāśatalopamaḥbhāgo brahmāṇḍasadanasyādhaḥ pātālasaptakāt || 41 ||

The second part, situated far away, resembles the surface of the earth and sky. It is the lower part of the abode of the universe, below the seven underworlds.

दूसरा भाग, जो दूर स्थित है, पृथ्वी और आकाश की सतह के समान है। यह ब्रह्माण्ड के निवास का नीचे का भाग है, सात पातालों से नीचे।

7.80.42

पातालभूतलदिवां सशैलेन्द्रदिवौकसाम् । व्याप्तः पार्थिवभागेन पङ्कमात्रात्मनात्मभाक् ॥ ४२ ॥

pātālabhūtaladivāṃ saśailendradivaukasām| vyāptaḥ pārthivabhāgena paṅkamātrātmanātmabhāk || 42 ||

The underworld, earth, and heaven, along with the mountains, gods, and celestial beings| Are pervaded by the earthly part, which is the essence of mere mud

पाताल, भूतल, और स्वर्ग, पर्वतों, देवताओं, और दिव्य प्राणियों के साथ| पृथ्वी के भाग से व्याप्त हैं, जो केवल मिट्टी का सार है

7.80.43

तृतीयोऽत्र पदार्थोऽभूदूर्ध्वं ब्रह्माण्डभागभूः । दृष्टिक्षयात्सुदूरत्वाद्दुर्लक्ष्यगगनासितः ॥ ४३ ॥

tṛtīyo'tra padārtho'bhūdūrdhvaṃ brahmāṇḍabhāgabhūḥ| dṛṣṭikṣayātsudūratvāddurlakṣyagagaganāsitaḥ || 43 ||

The third entity here is the upper part of the universe| Due to the limitation of vision and great distance, it is difficult to perceive, like the dark sky

यहाँ तीसरा पदार्थ ब्रह्मांड का ऊपरी भाग है| दृष्टि की सीमा और बहुत दूरी के कारण, यह देखने में कठिन है, जैसे अंधेरे आकाश की तरह

7.80.44

दूरविश्लिष्टयोर्मध्यं यत्तद्ब्रह्माण्डखण्डयोः । तदाकाशमनाद्यन्तं ब्रह्म निर्मलमाततम् ॥ ४४ ॥

dūraviśliṣṭayormadhyaṃ yattadbrahmāṇḍakhaṇḍayoḥ| tadākāśamanādyantaṃ brahma nirmalamātatam || 44 ||

The space between the two distant and separated parts of the universe| That is the endless and pure sky, the supreme Brahman

दो दूर और अलग ब्रह्मांड के खंडों के बीच का स्थान| वह अनंत और शुद्ध आकाश है, परम ब्रह्म

7.80.45

चतुर्थोऽसौ पदार्थस्तु तदा संलक्षितो मया । चतुष्टयादत्र नान्यदेतस्मादेव किंचन ॥ ४५ ॥

caturtho'sau padārthastu tadā saṃlakṣito mayā| catuṣṭayādatra nānyadetasmādeva kiṃcana || 45 ||

The fourth entity is perceived by me at that time| There is nothing else here other than this set of four

चौथा पदार्थ उस समय मुझे दिखाई देता है| यहाँ इस चार के समूह के अलावा कुछ और नहीं है

7.80.46

श्रीराम उवाच । बहिः किं विद्यते ब्रह्मन्ब्रह्मसद्मकटाहतः । कास्तत्रावरणा ब्रूहि कियत्यः संस्थिताः कथम् ॥ ४६ ॥

śrīrāma uvāca | bahiḥ kiṃ vidyate brahmanbrahmasadmakaṭāhataḥ | kāstatrāvaraṇā brūhi kiyatyaḥ saṃsthitāḥ katham || 46 ||

Sri Rama said: What is there outside the Brahma-sphere? What are the coverings there? How many are they and how are they situated?

श्री राम ने कहा: ब्रह्माण्ड के बाहर क्या है? वहाँ कौन से आवरण हैं? वे कितने हैं और कैसे स्थित हैं?

7.80.47

श्रीवसिष्ठ उवाच । ब्रह्माण्डखण्डयोः पारे ततो दशगुणं जलम् । संध्याकाशमनन्तं तद्वर्जयित्वा ततः स्थितम् ॥ ४७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | brahmāṇḍakhaṇḍayoḥ pāre tato daśaguṇaṃ jalam | sandhyākāśamanantaṃ tadvajayitvā tataḥ sthitam || 47 ||

Sri Vasistha said: Beyond the Brahma-sphere, there is water ten times as much. Beyond that, there is the infinite twilight sky, excluding that.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ब्रह्माण्ड के पार, दस गुना जल है। उसके बाद, उस अनन्त संध्या आकाश को छोड़कर, वहाँ स्थित है।

7.80.48

ततस्तथैव ज्वालात्म तेजो दशगुणं स्थितम् । ततस्तथैव पवनः पवनो निर्मलः स्थितः ॥ ४८ ॥

tatastathaiva jvālātma tejo daśaguṇaṃ sthitam | tatastathaiva pavanaḥ pavano nirmalaḥ sthitaḥ || 48 ||

Then, similarly, there is radiant fire ten times as much. Then, similarly, there is pure wind.

फिर, उसी तरह, दस गुना चमकीली अग्नि है। फिर, उसी तरह, शुद्ध वायु है।

7.80.49

ततस्तथैव विमलं नभो दशगुणं स्मृतम् । ततः परममत्यच्छं ब्रह्माकाशमनन्तकम् ॥ ४९ ॥

tatastathaiva vimalaṃ nabho daśaguṇaṃ smṛtam | tataḥ paramamatyacchaṃ brahmākāśamanantakam || 49 ||

Then, similarly, there is pure sky ten times as much. Then, there is the supreme, most transparent, infinite Brahma-sky.

फिर, उसी तरह, दस गुना शुद्ध आकाश है। फिर, सर्वोच्च, सबसे पारदर्शी, अनन्त ब्रह्माकाश है।

7.80.50

अन्यत्रान्यत्र तस्याथ दृष्टयोऽन्यास्तथैव खे । कचन्त्यनन्ता दूरस्था मिथो दृष्टात्मसृष्टयः ॥ ५० ॥

anyatrānyatra tasyātha dṛṣṭayo'nyāstathaiva khe | kacantyanantā dūrasthā mitho dṛṣṭātmasṛṣṭayaḥ || 50 ||

Elsewhere, in different places, there are other perceptions in the sky. They shine infinitely, distant from each other, created by the perceived self.

अन्यत्र, अलग-अलग स्थानों पर, आकाश में अन्य अनुभूतियाँ हैं। वे अनन्त रूप से चमकती हैं, एक-दूसरे से दूर, दृश्यमान आत्मा द्वारा सृजित।

7.80.51

श्रीराम उवाच । ऊर्ध्वे ब्रह्माण्डखण्डस्य तथाधस्तान्मुनीश्वर । तज्जलादिमहाकारं क्व कथं केन धार्यते ॥ ५१ ॥

śrīrāma uvāca | ūrdhve brahmāṇḍakhaṇḍasya tathādhastānmunīśvara | tajjalādimahākāraṃ kva kathaṃ kena dhāryate || 51 ||

Sri Rama said: O great sage, how and by whom is the great form of the universe, which is above and below the Brahmanda, sustained?

श्री राम ने कहा: हे मुनीश्वर, ब्रह्माण्ड के ऊपर और नीचे की ओर जो महान आकार है, वह कैसे और किस द्वारा धारण किया जाता है?

7.80.52

श्रीवसिष्ठ उवाच । स पार्थिवपदार्थानां स्थितः पुष्करपत्रवत् । भागस्तमेवाधावन्ति ते सुता मातरं यथा ॥ ५२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sa pārthivapadārthānāṃ sthitaḥ puṣkarapatravat | bhāgastamevādhāvanti te sutā mātaraṃ yathā || 52 ||

Sri Vasistha said: That part of the earthly elements remains steady like a lotus leaf. Those elements rush towards it like children to their mother.

श्री वसिष्ठ ने कहा: वह पृथ्वी के तत्वों का भाग कमल के पत्र की तरह स्थिर रहता है। वे तत्व उसकी ओर उसी तरह दौड़ते हैं जैसे बच्चे अपनी माँ की ओर दौड़ते हैं।

7.80.53

अतो यदेव नेदीयो ब्रह्माण्डाख्यं महावपुः । तत्पदार्थाः प्रधावन्ति तृषिताः सलिलं यथा ॥ ५३ ॥

ato yadeva nedīyo brahmāṇḍākhyaṃ mahāvapuḥ | tatpadārthāḥ pradhāvanti tṛṣitāḥ salilaṃ yathā || 53 ||

Therefore, whatever is not distant from the great form known as Brahmanda, those elements rush towards it like the thirsty rush towards water.

इसलिए, जो कुछ भी ब्रह्माण्ड के नाम से जाने जाने वाले महान आकार से दूर नहीं है, वे तत्व उसकी ओर उसी तरह दौड़ते हैं जैसे प्यासे लोग पानी की ओर दौड़ते हैं।

7.80.54

अवलम्ब्य तदेवान्तः संस्थितास्तैजसादयः । न स्थितिं प्रविमुञ्चन्ति स्वां यथावयवा इव ॥ ५४ ॥

avalambya tadevāntaḥ saṃsthitāstaijasādayaḥ | na sthitiṃ pravimuñcanti svāṃ yathāvayavā iva || 54 ||

Relying on that very essence, the luminous and other elements remain established. They do not abandon their own state, just as the limbs do not abandon their own positions.

उसी सार पर भरोसा करके, तेजस्वी और अन्य तत्व स्थिर रहते हैं। वे अपनी स्थिति को नहीं छोड़ते, जैसे अंग अपनी स्थिति को नहीं छोड़ते।

7.80.55

श्रीराम उवाच । ब्रह्मन्ब्रह्माण्डखण्डे ते तिष्ठतः कथमुच्यताम् । किमाकृती धृते केन कथं वा परिनश्यतः ॥ ५५ ॥

śrīrāma uvāca | brahmannbrahmāṇḍakhaṇḍe te tiṣṭhataḥ kathamucyatām | kimākṛtī dhṛte kena kathaṃ vā parinaśyataḥ || 55 ||

Sri Rama said: O Brahman, how can it be said that they remain in the fragment of Brahmanda? What form do they take, how are they supported, and how do they perish?

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, ब्रह्माण्ड के खण्ड में वे कैसे रहते हैं, यह कैसे कहा जा सकता है? वे किस रूप में होते हैं, किस द्वारा धारण किए जाते हैं, और कैसे नष्ट होते हैं?

7.80.56

श्रीवसिष्ठ उवाच । अधृतं धृतमेवोच्चैरपतच्चैव वा पतत् । अनाकृत्येव साकारं जगत्स्वप्नपुरं यथा ॥ ५६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | adhṛtaṃ dhṛtamevoccairapataccai va pātat | anākṛtyeva sākāraṃ jagatsvapnapuraṃ yathā || 56 ||

Vasishtha said: The unsupported appears as supported, or it may fall; the world, like a dream-city, appears formed though unformed.

वसिष्ठ ने कहा: असहाय भी सहाय प्रतीत होता है, या गिर सकता है; संसार स्वप्न-नगर की तरह है, जो बना हुआ प्रतीत होता है भले ही बना न हो।

7.80.57

किमस्य नाम पतति किंवा केनास्य धार्यते । यथा संवित्ति कचनं तथैतदवतिष्ठते ॥ ५७ ॥

kimasya nāma pātati kiṃvā kenāsya dhāryate | yathā saṃvitti kacanaṃ tathaitadavatiṣṭhate || 57 ||

What is its name? Does it fall? Or by what is it supported? As is the awareness, so it remains.

इसका नाम क्या है? यह गिरता है क्या? या इसे किसने सहारा दिया है? जैसी चेतना है, वैसे ही यह रहता है।

7.80.58

यथा केशोण्ड्रकं व्योम्नि यथा च व्योम्नि शून्यता । यथा वा पवने स्पन्दो जगच्चिद्गगने तथा ॥ ५८ ॥

yathā keśoṇḍrakaṃ vyomni yathā ca vyomni śūnyatā | yathā vā pavane spando jagaccidgagane tathā || 58 ||

Just as a hair floating in the sky, just as emptiness in the sky, just as a vibration in the wind, so is the world in the consciousness-sky.

जैसे आकाश में बाल तैरता है, जैसे आकाश में शून्यता है, जैसे हवा में कंपन होता है, वैसे ही संसार चेतना-आकाश में है।

7.80.59

चितौ संकल्पनगरं ब्रह्माण्डाख्यं जगद्गृहम् । खे खमेवाप्यनाकारं प्रत्याकारमिव स्थितम् ॥ ५९ ॥

citau saṃkalpanagaraṃ brahmāṇḍākhyaṃ jagadgṛham | khe kham evāpy anākāraṃ pratyākāram iva sthitam || 59 ||

In consciousness, the world-house known as the cosmic egg appears as a conceptual city, formless yet appearing as formed in the sky.

चेतना में, ब्रह्माण्ड के नाम से जाना जाने वाला संसार-घर एक कल्पनात्मक नगर की तरह प्रतीत होता है, जो आकारहीन है पर आकाश में आकार प्रतीत होता है।

7.80.60

पातसंवित्समुद्भूतं पतदास्ते दिवानिशम् । गच्छन्त्या संविदोद्भूतं गच्छदास्ते दिवानिशम् ॥ ६० ॥

pātasaṃvitsamudbhūtaṃ pātadāste divāniśam | gacchantyā saṃvidodbhūtaṃ gacchadāste divāniśam || 60 ||

That which arises from the awareness of falling remains falling day and night. That which arises from the awareness of moving remains moving day and night.

जो गिरने की चेतना से उत्पन्न होता है, वह दिन-रात गिरता रहता है। जो चलने की चेतना से उत्पन्न होता है, वह दिन-रात चलता रहता है।

7.80.61

स्थितसंवित्समुद्भूतं तिष्ठदास्ते दिवानिशम् । उत्पतन्त्या चितोद्भूतमुत्पतच्चैव तिष्ठति ॥ ६१ ॥

sthitasaṃvitsamudbhūtaṃ tiṣṭhadāste divāniśam | utpatantyā citodbhūtamutpataccaiva tiṣṭhati || 61 ||

The consciousness that arises remains steady day and night | It arises with the arising of consciousness and remains steady || 61 ||

जो चेतना उत्पन्न होती है, वह दिन-रात स्थिर रहती है | चेतना के उत्पन्न होने पर वह उठती है और स्थिर रहती है || ६१ ||

7.80.62

एति नाशविदा नाशं महाकल्पादिवेदनैः । जायते जन्मसंवित्त्या व्योम्नि सर्वादिवेदनैः ॥ ६२ ॥

eti nāśavidā nāśaṃ mahākalpādivedanaiḥ | jāyate janmasaṃvittyā vyomni sarvādivedanaiḥ || 62 ||

It goes to destruction known by the knowledge of the great aeon | It is born with the knowledge of birth in the sky with all the knowledge || 62 ||

यह महाकल्प के ज्ञान से जाने जाने वाले विनाश की ओर जाता है | यह जन्म के ज्ञान से आकाश में सब ज्ञान के साथ जन्म लेता है || ६२ ||

7.80.63

आभाति मौक्तिकगणः शरदम्बरान्तर्दृष्टावसत्य उदितोऽप्यतिसत्यरुपः । भ्रान्त्या यथा नभसि च स्फुरतां तथैषां संख्यां विधातुमिह को जगतां समर्थः ॥ ६३ ॥

ābhāti mauktikagaṇaḥ śaradambarāntardṛṣṭāvasatya udito'pyatisatyarupaḥ | bhrāntyā yathā nabhasi ca sphuratāṃ tathaiṣāṃ saṃkhyāṃ vidhātumihako jagatāṃ samarthaḥ || 63 ||

It appears like a cluster of pearls seen inside the autumn clouds, even though it is very real | Just as an illusion appears in the sky, who is capable of determining their number in this world || 63 ||

यह शरद ऋतु के बादलों के अंदर देखे जाने वाले मोती के झुंड की तरह प्रतीत होता है, भले ही यह बहुत वास्तविक हो | जैसे आकाश में एक भ्रम प्रकट होता है, इस दुनिया में उनकी संख्या निर्धारित करने में कौन सक्षम है || ६३ ||

Chapter 81

7.81.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ राघव रुद्रं तं तदा तस्मिन्महाम्बरे । प्रवृत्तं नर्तितुं मत्तमपश्यं विततातकृतिम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha rāghava rudraṃ taṃ tadā tasminmahāmbare | pravṛttaṃ nartituṃ mattamapaśyaṃ vitatākṛtim || 1 ||

Vasishtha said: Then, O Raghava, I saw Rudra, who was engaged in dancing wildly in that great sky, with a vast form.

वसिष्ठ ने कहा: फिर, हे रघुवंशी, मैंने उस महान आकाश में उन्मत्त होकर नृत्य करते हुए रुद्र को देखा, जिनका आकार विशाल था।

7.81.2

व्योमेवाकृतिमापन्नमजहद्व्यापितां निजाम् । महाकारं घनश्यामं दशाशापरिपूरकम् ॥ २ ॥

vyomevākṛtimāpannamajahadvyāpitāṃ nijām | mahākāraṃ ghanaśyāmaṃ daśāśāparipūrakam || 2 ||

He had assumed the form of the sky itself, abandoning his own pervasive form. He was of great size, dark blue in color, and filling the ten directions.

वह आकाश के रूप में आ गया था, अपने व्यापक रूप को छोड़कर। वह विशाल आकार का, घने नीले रंग का और दसों दिशाओं को भरने वाला था।

7.81.3

अर्केन्दुवह्निनयनं चलद्दशदिगम्बरघनदीर्घप्रभाजालमालानां श्यामलार्चिषाम् ॥ ३ ॥

arkenduvahninayanaṃ caladdaśadigambaramghanadīrghaprabhājālamālānaṃ śyāmalārciṣām || 3 ||

With eyes like the sun, moon, and fire, he was adorned with garlands of rays that were moving in the ten directions, dense and long, and had dark rays.

जिनकी आँखें सूर्य, चंद्रमा और अग्नि की तरह थीं, वह दसों दिशाओं में चलती हुई, घनी और लंबी किरणों की मालाओं से सुशोभित था, जिनकी किरणें काली थीं।

7.81.4

वडवाग्निदृशं लोलभुजोर्मिभरभासुरम् । एकार्णवार्णो द्राग्देहबन्धेनेव समुत्थितम् ॥ ४ ॥

vaḍavāgnidṛśaṃ lolabhujormibharabhāsuram | ekārṇavārṇo drāgdehabandhenaiva samutthitam || 4 ||

He had the appearance of the submarine fire, with shining, restless waves of arms. He seemed to have arisen from the bondage of the body, like a single ocean.

उनका रूप समुद्री अग्नि के समान था, चमकदार, बेचैन बाहुओं की लहरों के साथ। वह शरीर के बंधन से उठा हुआ लग रहा था, जैसे एक समुद्र।

7.81.5

पश्याम्यनन्तरमहं यावत्तस्य शरीरतः । छायेव परिनिर्याति नर्तनानुविधायिनी ॥ ५ ॥

paśyāmyanantaramahaṃ yāvattasya śarīrataḥ | chāyeva pariniryāti nartanānuvidhāyinī || 5 ||

I see that from his body, a shadow-like form emerges, following the dance.

मैं देखता हूँ कि उसके शरीर से एक छाया के समान रूप निकलता है, जो नृत्य का अनुसरण करता है।

7.81.6

सूर्येष्वविद्यमानेषु महातमसि चाम्बरे । स्थिता कथमियं छाया भवेदिति मतिर्मम ॥ ६ ॥

sūryeṣvavidyamāneṣu mahātamasi cāmbare | sthitā kathamayaṃ chāyā bhaveditī matirmama || 6 ||

In the absence of the suns, in the great darkness of the room, how can this shadow exist? This is my thought.

सूर्यों के अभाव में, कमरे में महान अंधेरे में, यह छाया कैसे हो सकती है? यह मेरा विचार है।

7.81.7

यावद्विचारयाम्याशु तावत्तस्य तदा पुरः । सा स्थिता परिनृत्यन्ती विस्तीर्णा श्रीत्रिलोचना ॥ ७ ॥

yāvadvicārayāmyāśu tāvattasya tadā puraḥ | sā sthitā pariṇṛtyantī vistīrṇā śrītrilocanā || 7 ||

As soon as I began to think about it, she appeared before me, dancing and spreading out, the glorious three-eyed one.

जैसे ही मैंने इस पर सोचना शुरू किया, वह मेरे सामने नृत्य करते हुए और फैलते हुए, तीन नेत्रों वाली शोभायमान देवी प्रकट हुई।

7.81.8

कृष्णा कृशा शिरालाङ्गी जर्जरा विततातिकृतिः । ज्वालाकुलानलालोलवनसंभारशेखरा ॥ ८ ॥

kṛṣṇā kṛśā śirālāṅgī jarjarā vitatākṛtiḥ | jvālākulānalālolavanasaṃbhāraśekharā || 8 ||

Dark, thin, with a long body, old, with a spread-out form, with a crown of blazing, waving forest fire.

काली, दुबली, लंबे शरीर वाली, बूढ़ी, फैली हुई आकृति वाली, जलते हुए जंगल की आग की लहराती मुकुट वाली।

7.81.9

मिन्नाञ्जनतमःश्यामा यामिनोवाकृतिं गता । तमःश्रीर्देहयुक्तेव साकारेवाम्बरद्युतिः ॥ ९ ॥

minnāñjanatamaḥśyāmā yāminovākṛtiṃ gatā | tamaḥśrīrdehayukteva sākārevāmbardyutiḥ || 9 ||

Dark as the night, having the form of the night, as if the glory of darkness embodied, appearing as if the sky itself.

रात की तरह काली, रात की आकृति वाली, जैसे अंधेरे की शोभा शरीर धारण कर ली हो, आकाश की तरह दिखाई देती हुई।

7.81.10

अतिदीर्घा करालास्या नभो मातुमिवोद्यता । दीर्घजानुभुजभ्रान्त्या मातुकामेव दिङ्मुखम् ॥ १० ॥

atidīrghā karālāsyā nabho mātumivodyatā | dīrghajānubhujabhrāntyā mātukāmeva diṅmukham || 10 ||

Very tall, with a terrifying face, as if ready to measure the sky, with long knees and arms, appearing like a mother facing all directions.

बहुत लंबी, भयानक चेहरे वाली, जैसे आकाश को मापने के लिए तैयार, लंबे घुटनों और भुजाओं वाली, सभी दिशाओं की ओर मुँह करके माँ की तरह दिखाई देती हुई।

7.81.11

कृशा बहूपवासेव परिनिम्नमहातनुः । कज्जलश्यामला मेघमालेव पवनाकुला ॥ ११ ॥

kṛśā bahūpavāseva parinimnamahātanuḥ | kajjalśyāmalā meghamāleva pavanākulā || 11 ||

She is emaciated due to prolonged fasting, her body is extremely thin, dark like kajal, and she is agitated like a cloud driven by the wind.

वह लंबे समय तक उपवास करने के कारण दुबली हो गई है, उसका शरीर अत्यंत पतला है, काजल की तरह काला है, और वह हवा से उड़ते बादल की तरह व्याकुल है।

7.81.12

कृशाशक्ता यदा स्थातुं सुदीर्घा विधिना तदा । ग्रथितेव शिरारूपैर्दामभिर्दैर्घ्यशालिभिः ॥ १२ ॥

kṛśāśaktā yadā sthātuṃ sudīrghā vidhinā tadā | grathiteva śirārūpairdāmabhirdaidrghyaśālibhiḥ || 12 ||

When she is unable to stand due to weakness, she appears very tall, tied with long ropes resembling veins.

जब वह कमजोरी के कारण खड़ी नहीं हो सकती, तब वह बहुत लंबी दिखाई देती है, लंबी रस्सियों से बंधी हुई, जो नसों की तरह लगती हैं।

7.81.13

तथा नाम सुदीर्घा सा यथा तस्याः शिरःखुरम् । मया दृष्टं प्रयत्नेन चिरोर्ध्वाधोगमागमैः ॥ १३ ॥

tathā nāma sudīrghā sā yathā tasyāḥ śiraḥkhuram | mayā dṛṣṭaṃ prayatnena cirordhvādhogamāgamaiḥ || 13 ||

Thus, she is named 'very tall,' as I have seen with effort her head moving up and down repeatedly.

इस प्रकार, उसका नाम 'बहुत लंबी' है, जैसा कि मैंने प्रयास से देखा है कि उसका सिर बार-बार ऊपर-नीचे हिलता है।

7.81.14

अन्त्रान्त्रतन्त्रीग्रशितशिरःकरखुरोत्करा । आमूलात्सूत्रवलिता कण्टकानामिव स्थली ॥ १४ ॥

antrāntratantīgraśitaśiraḥkarakhurotkarā | āmūlātsūtravalitā kaṇṭakānāmiva sthalī || 14 ||

Her intestines are entangled like strings, her head and hands are raised like thorns, and she is bound from the root with threads like a thorny field.

उसकी आंतें डोरियों की तरह उलझी हुई हैं, उसका सिर और हाथ कांटों की तरह ऊपर उठे हुए हैं, और वह जड़ से डोरियों से बंधी हुई है जैसे कांटों वाला मैदान।

7.81.15

विश्वरूपमयार्कादिशिरःकमलजालकैः । कृतमालामलालोकवातवह्निमयाञ्चला ॥ १५ ॥

viśvarūpamayārkādiśiraḥkamalajālakaiḥ | kṛtamālāmalālokavātavahnimayāñcalā || 15 ||

She is adorned with garlands of lotus flowers that resemble the sun and other celestial bodies, and her veil is made of wind and fire, pure and radiant.

वह सूर्य और अन्य दिव्य पिंडों के समान कमल के फूलों की मालाओं से सुशोभित है, और उसकी ओढ़नी हवा और आग से बनी है, पवित्र और चमकदार।

7.81.16

प्रलम्बकर्णालुलितनागा नृशवकुण्डला । शुष्कतुम्बीलताष्ठीलादीर्घालोलासितस्तनी ॥ १६ ॥

pralambakarṇālulitanāgā nṛśavakuṇḍalā | śuṣkatumbīlatāṣṭhīlādīrghālolāsitastanī || 16 ||

The woman with long, dangling earrings and a dry, slender waist, her breasts swaying and blue-black.

लम्बे झुमके और सूखी, पतली कमर वाली स्त्री, जिसके स्तन लहरा रहे हैं और नीले-काले हैं।

7.81.17

कुमारबर्हिपिच्छौघैर्ब्राह्ममूर्धजमण्डलैः । लाञ्छितोच्चसुराधीशशिरःखट्वाङ्गमण्डला ॥ १७ ॥

kumārabarhipicchaughairbrāhmamūrdhajamaṇḍalaiḥ | lāñchitoccchasurādhīśaśiraḥkhaṭvāṅgamaṇḍalā || 17 ||

Adorned with the feathers of young peacocks and the sacred threads of Brahmins, the high lord of the gods has a halo around his head.

कुमार मोरों के पंखों और ब्राह्मणों के पवित्र धागों से सज्जित, देवताओं के उच्च स्वामी के सिर पर एक प्रभामंडल है।

7.81.18

दन्तेन्दुमालाविमला विमलोद्द्योतपाततः । तमोर्णवोर्द्धलेखेव वृत्तावर्तविवर्तिनी ॥ १८ ॥

dantendumālāvimalā vimaloddayotapātataḥ | tamorṇavorddhvalekheva vṛttāvartavivartinī || 18 ||

With a pure garland of moon-like teeth, shining brightly, she appears like a line of darkness above the waves, moving in circles.

चांद-जैसे दांतों की पवित्र माला से सज्जित, चमकदार, वह लहरों के ऊपर एक अंधेरी रेखा की तरह दिखाई देती है, गोलाकार में घूमती हुई।

7.81.19

शुष्कतुम्बीलतेवोच्चैराकाशतरुसंस्थिता । विलोलावयवाष्ठीला वातैः पटपटारवा ॥ १९ ॥

śuṣkatumbīlatevoccairākāśatarusaṃsthitā | vilolāvayavāṣṭhīlā vātaiḥ paṭapaṭāravā || 19 ||

Standing tall like a dry palm tree in the sky, with swaying limbs, making a rustling sound with the wind.

आकाश में सूखे ताड़ के वृक्ष की तरह ऊंची खड़ी, लहराते अंगों के साथ, हवा से सरसराहट की आवाज करती हुई।

7.81.20

बृहत्तरङ्गोर्ध्वभुजा श्यामलोल्लासशालिनी । एकार्णवोर्मिमालेव नृत्तावृत्तिविवर्तिनी ॥ २० ॥

bṛhattaraṅgordhvabhujā śyāmollāsaśālinī | ekārṇavorvimimāleva nṛttāvṛttivivartinī || 20 ||

With large waves rising like arms, adorned with dark splendor, she appears like a garland of ocean waves, dancing in circular motion.

ऊंची लहरों के समान भुजाओं के साथ, श्याम उल्लास से सज्जित, वह समुद्र की लहरों की माला की तरह दिखाई देती है, गोलाकार में नृत्य करती हुई।

7.81.21

क्षणमेकभुजाकारा क्षणं बहुभुजाकुला । अनन्तोग्रभुजाक्षिप्तजगन्नर्तनमण्डपा ॥ २१ ॥

kṣaṇamekabhujākārā kṣaṇaṃ bahubhujākulā | anantograbhujākṣiptajagannartanamaṇḍapā || 21 ||

At one moment, she has one arm, at another moment, she has many arms | She is the one who has countless arms and dances in the universe.

एक क्षण में वह एक भुजा वाली है, दूसरे क्षण में वह बहुत सी भुजाओं वाली है | वह अनंत भुजाओं वाली है और ब्रह्मांड में नृत्य करती है।

7.81.22

क्षिप्रमेकमुखाकारा क्षिप्रं बहुमुखाकृतिः । अनन्तोग्रमुखी क्षिप्रं निर्मुखी चापि च क्षणम् ॥ २२ ॥

kṣipramekamukhākārā kṣipraṃ bahumukhākṛtiḥ | anantogramukhī kṣipraṃ nirmukhī cāpi ca kṣaṇam || 22 ||

At one moment, she has one face, at another moment, she has many faces | She is the one who has countless faces and is faceless at times.

एक क्षण में वह एक मुख वाली है, दूसरे क्षण में वह बहुत से मुखों वाली है | वह अनंत मुखों वाली है और कभी-कभी मुखरहित भी होती है।

7.81.23

एकपादान्विता क्षिप्रं क्षिप्रं पादशतान्विता । क्षणं चानन्तपादाढ्या निष्पादाकारिणी क्षणम् ॥ २३ ॥

ekapādānvitā kṣipraṃ kṣipraṃ pādaśatānvitā | kṣaṇaṃ cānantapādāḍhyā niṣpādākāriṇī kṣaṇam || 23 ||

At one moment, she has one foot, at another moment, she has many feet | She is the one who has countless feet and is footless at times.

एक क्षण में वह एक पाद वाली है, दूसरे क्षण में वह बहुत से पादों वाली है | वह अनंत पादों वाली है और कभी-कभी पादरहित भी होती है।

7.81.24

कालरात्रिरियं सेति मयानुमितदेहिका । काली भगवती सेयमितिनिर्णीतसज्जना ॥ २४ ॥

kālarātririyam seti mayānumitadehikā | kālī bhagavatī seyamitinirṇītasajjanā || 24 ||

This is Kali, the night of time, as I have inferred | She is the goddess Kali, as determined by the wise.

यह कालरात्रि है, समय की रात, जैसा मैंने अनुमान लगाया है | यह भगवती काली है, जैसा बुद्धिमान लोगों ने निर्णय किया है।

7.81.25

ज्वालापूर्णारघट्टोग्रखाताभनयनत्रया । ज्वलद्धरेन्द्रनीलाद्रिसानूपमललाटभूः ॥ २५ ॥

jvālāpūrṇāraghaṭṭograkhātābhanayanatrayā | jvaladdharendranīlādrisānūpamalalāṭabhūḥ || 25 ||

With eyes like the blazing sun, moon, and fire, and a forehead like the peak of Mount Meru | She has three eyes that are like the blazing sun, moon, and fire, and her forehead is like the peak of Mount Meru.

जिसकी आँखें सूर्य, चंद्रमा और अग्नि के समान प्रज्वलित हैं, और माथा मेरु पर्वत की चोटी के समान है | उसकी तीन आँखें सूर्य, चंद्रमा और अग्नि के समान प्रज्वलित हैं, और उसका माथा मेरु पर्वत की चोटी के समान है।

7.81.26

लोकालोकेन्द्रनीलोग्रश्वभ्रभीमहनुद्वया । वातस्कन्धगुणप्रोततारामुक्ताकलापिनी ॥ २६ ॥

lokālokendranīlograśvabhrabhīmahanudvayā | vātaskandhaguṇaprotatārāmuktākalāpinī || 26 ||

The central point of Lokāloka, adorned with dark blue sapphires, fierce with the two jaws of the cave, with the qualities of the wind, decorated with stars and pearls.

लोकालोक का केन्द्र, नीलमणियों से अलंकृत, गुफा के दोनों जबड़ों से भयानक, वायु के गुणों से युक्त, तारों और मोतियों से सजा हुआ।

7.81.27

इन्द्रनीलाद्रितुल्योच्चतोरणोच्चैःप्रभाम्बरे । विश्रान्तकाचशैलाभभगभीषणवायसी ॥ २७ ॥

indranīlādritulyoccatoraṇoccaiḥprabhāmbare | viśrāntakācaśailābhbhagabhīṣaṇavāyasī || 27 ||

In the sky, which is like the lofty arch of the Indranīla mountain, with its brilliant light, the resting place of the glass-like mountain, with a terrifying appearance.

आकाश में, जो इन्द्रनील पर्वत की ऊँची छतरी के समान है, उसके उज्ज्वल प्रकाश के साथ, काँच के समान पर्वत का विश्राम स्थान, भयानक दिखने वाला।

7.81.28

नृत्यद्भुजलतापुष्पैर्नखशुभ्राभ्रमण्डलैः । पूर्णचन्द्रशतानीव भ्रमन्ती नभस्तले ॥ २८ ॥

nṛtyadbhujalatāpuṣpairnakśubhrābhramaṇḍalaiḥ | pūrṇacandraśatānīva bhramantī nabhastale || 28 ||

In the sky, revolving like hundreds of full moons, with the flowers of the dancing arm-vines, with the white nail-cloud circles.

आकाश में, सौ पूर्ण चन्द्रमाओं की तरह घूमते हुए, नृत्य करती बाहों की लताओं के फूलों के साथ, सफेद नाखून-बादल मंडलों के साथ।

7.81.29

भ्रमद्भिर्व्याप्तदिक्चक्रा भुजैः कल्पाम्बुदैरिव । वर्षद्भिः प्राणिजप्रान्ततारालेखाबृहत्प्रभाः ॥ २९ ॥

bhramadbhirvyāptadikcakrā bhujaiḥ kalpāmbudairiva | varṣadbhiḥ prāṇijaprāntatārālekhābṛhatprabhāḥ || 29 ||

With the revolving arms spreading in all directions like the clouds of the Kalpa, raining with the great light of the star-lines reaching the ends of the living beings.

घूमती बाहें सभी दिशाओं में फैली हुई, कल्प के बादलों की तरह, जीवों के अंत तक पहुँचने वाली तारा रेखाओं के महान प्रकाश के साथ बरसाती हुई।

7.81.30

नखपुष्पाङ्गुलीवल्लीजालैर्भ्रान्तभुजद्रुमैः । कृष्णैः काननिताशेषगगनाग्रोग्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥

nakhapuṣpāṅgulīvallījālairbhrāntabhujadrumaiḥ | kṛṣṇaiḥ kānanitāśeṣagaganāgrōgramūrtibhiḥ || 30 ||

With the confused arm-trees with the nets of nail-flowers and finger-vines, with the dark forms filling the entire sky.

नाखून-फूलों और उँगली-लताओं के जालों से भ्रमित बाह-वृक्षों के साथ, पूरे आकाश को भरने वाले काले रूपों के साथ।

7.81.31

तमालतालतः स्थूलां भुवं दग्धमहावनैः । विडम्बयन्ती वलितां जङ्घासङ्घेन लोलता ॥ ३१ ॥

tamālatālataḥ sthūlāṃ bhuvaṃ dagdhamahāvanaiḥ | viḍambayantī valitāṃ jaṅghāsaṅghena lolatā || 31 ||

The earth, which is vast and burnt by great forests, is mocking with its swaying thighs.

विशाल और महान वनों द्वारा जलाई हुई पृथ्वी अपनी लहराती जांघों से विडंबना कर रही है।

7.81.32

अप्यनन्ते महाव्योम्नि पारं प्राप्तैः शिरोरुहैः । कुर्वाणेवाततं वासं चरत्तिमिरदन्तिनः ॥ ३२ ॥

apyanante mahāvyomni pāraṃ prāptaiḥ śiroruhaiḥ | kurvāṇevātataṃ vāsaṃ carattimiradantinaḥ || 32 ||

Even in the infinite vast sky, those who have reached the other side with their heads are making their abode, moving like dark clouds.

अनंत महान आकाश में भी, जिनके सिर दूसरी ओर पहुंचे हैं, वे अपना निवास बना रहे हैं, घने बादलों की तरह चल रहे हैं।

7.81.33

उह्यन्ते मेरवो येन तेन निश्वासवायुना । घनघुंघुमदिक्चक्रगगनग्रामघोषिणा ॥ ३३ ॥

uhyante meravo yena tena niśvāsavāyunā | ghanaghuṃghumadikcakragaganagrāmaghoṣiṇā || 33 ||

Those who are lifted by the breath of the wind, which makes a deep humming sound in the sky, like the sound of a village.

जो हवा की सांस द्वारा उठाए जाते हैं, जो आकाश में गहरी गुंजाइश की आवाज करती है, जैसे गांव की आवाज।

7.81.34

घनमारुतफूत्कारक्ष्वेडगेयं प्रगायता । नियतानुनयेनेव चलिता सानुवृत्तिना ॥ ३४ ॥

ghanamārutaphūtkārakṣveḍageyaṃ pragāyatā | niyatānunayeneveva calitā sānuvṛttinā || 34 ||

Singing the song of the deep roar of the wind, she moves with a steady rhythm, as if persuaded.

हवा की गहरी गर्जना का गीत गाते हुए, वह एक स्थिर लय के साथ चलती है, जैसे कि राजी की गई हो।

7.81.35

ततो नृत्तवशावेशाद्वर्धमानशरीरिणी । मया दृष्टावधानेन गगनाभोगभूरिणा ॥ ३५ ॥

tato nṛttavaśāveśādvardhamānaśarīriṇī | mayā dṛṣṭāvadhānena gaganābhogabhūriṇā || 35 ||

Then, due to the influence of the dance, the body grows, and I saw it with great attention, filling the sky.

फिर, नृत्य के प्रभाव से, शरीर बढ़ता है, और मैंने इसे बड़े ध्यान से देखा, आकाश को भरते हुए।

7.81.36

यावत्तयाऽऽवृऽता देहे हेलावलनसारया । माला मलयकेलाससह्यमन्दरमेरुभिः ॥ ३६ ॥

yāvattayā''avṛ'tā dehe helāvalanasārayā | mālā malayakelāsasahyamandaramerubhiḥ || 36 ||

As long as she was adorned with the essence of the earth, she wore a garland of Malaya, Kailasa, Sahya, Mandara, and Meru mountains.

जब तक वह पृथ्वी के सार से सुशोभित थी, उसने मलय, कैलास, सह्य, मन्दर और मेरु पर्वतों की माला पहनी थी।

7.81.37

आसीत्तस्या युगान्ताभ्रमालिका पट्टपट्टिका । आदर्शमण्डलान्यङ्गे त्रीणि लोकान्तराणि च ॥ ३७ ॥

āsīttasyā yugāntābhramālikā paṭṭapaṭṭikā | ādarśamaṇḍalānyaṅge trīṇi lokāntarāṇi ca || 37 ||

She had a garland of clouds resembling the end of an era, a silk sash, and three mirrors on her body representing the three worlds.

उसके शरीर पर युगान्त के बादलों की माला, रेशम की साड़ी और तीन दर्पण थे, जो तीनों लोकों का प्रतीक थे।

7.81.38

कर्णयोर्हिमवन्मेरू रूप्यकाञ्चनमुद्रिके । ब्रह्माण्डघुंघुमैर्माला महती कटिमेखला ॥ ३८ ॥

karṇayorhimavanmerū rūpyakāñcanamudrike | brahmāṇḍaghuṃghumairmālā mahatī kaṭimekhalā || 38 ||

In her ears, she wore the Himalayas and Meru as earrings made of silver and gold. Around her waist, she had a great girdle adorned with the sound of the universe.

उसके कानों में हिमालय और मेरु चाँदी और सोने के कुण्डल के रूप में थे। उसकी कमर पर ब्रह्माण्ड की ध्वनि से सुशोभित एक महान करधनी थी।

7.81.39

स्रजः कुलाचलाः शृङ्गवनपत्तनगुच्छकाः । जरत्पुरवनद्वीपग्रामपेलवपल्लवाः ॥ ३९ ॥

srajaḥ kulācalāḥ śṛṅgavanapattanaguccakāḥ | jaratpuravanadvīpagrāmapelavapallavāḥ || 39 ||

She had garlands of mountain peaks, forests, cities, and clusters of trees. She was adorned with old forests, islands, villages, and tender leaves.

उसके पास पर्वतों की चोटियों, वनों, नगरों और पेड़ों के झुंड की मालाएँ थीं। उसके शरीर पर पुराने वन, द्वीप, गाँव और कोमल पत्तियाँ सुशोभित थीं।

7.81.40

तस्या अङ्गेषु दृष्टानि पुराणि नगराणि च । ऋतवश्च त्रयो लोका मासाहोरात्रमालिकाः ॥ ४० ॥

tasyā aṅgeṣu dṛṣṭāni purāṇi nagarāṇi ca | ṛtavaśca trayo lokā māsāhorātramālikāḥ || 40 ||

In her body, ancient cities, seasons, and the three worlds were visible. She was adorned with garlands of months, days, and nights.

उसके शरीर में पुराने नगर, ऋतुएँ और तीनों लोक दिखाई देते थे। उसके शरीर पर महीनों, दिनों और रातों की मालाएँ सुशोभित थीं।

7.81.41

मुक्तालतादिकं नद्यः कालिन्दीत्रिपथादिकाः । धर्माधर्मावुभौ कर्णभूषणे चान्यकर्णयोः ॥ ४१ ॥

muktālatādikaṃ nadyaḥ kālindītripathādikāḥ | dharmādharmāvubhau karṇabhūṣaṇe cānyakarṇayoḥ || 41 ||

The rivers such as Muktālatā and others, Kālindī and Tripadhā, etc., are the ear ornaments of both Dharma and Adharma on the other ears.

मुक्तालता आदि नदियाँ, कालिन्दी और त्रिपथा आदि, धर्म और अधर्म दोनों के कानों में कर्णभूषण हैं और अन्य कानों में भी।

7.81.42

स्तनास्तस्यास्तु चत्वारः स्रवद्धर्मपयोलवाः । वेदाः सकलशास्त्रार्थचतुःसंस्थानचूचुकाः ॥ ४२ ॥

stanāstasyāstu catvāraḥ sravadgharmapayolavāḥ | vedāḥ sakalaśāstrārthacatuḥsaṃsthānacūcukāḥ || 42 ||

Her four breasts are flowing with the essence of Dharma, and the Vedas are the nipples containing the essence of all scriptures in four divisions.

उसके चार स्तन धर्म के सार से प्रवाहित हैं, और वेद चार विभागों में समस्त शास्त्रों के सार को धारण करने वाले स्तनों के चूचुक हैं।

7.81.43

त्रिशूलैः पट्टिशैः प्रासैः शरशक्त्यृष्टिमुद्गरैः । निर्यदायुधजालानि स्रग्दामानि बिभर्ति सा ॥ ४३ ॥

triśūlaiḥ paṭṭiśaiḥ prāsaiḥ śaraśaktyṛṣṭimudgaraiḥ | niryadāyudhajālāni sragdāmāni bibharti sā || 43 ||

She bears a network of weapons such as tridents, swords, axes, arrows, spears, javelins, and maces, along with garlands and strings of beads.

वह त्रिशूल, तलवार, कुल्हाड़ी, तीर, भाले, भाला और गदा जैसे हथियारों का जाल और मालाएँ तथा मोतियों की लड़ियाँ धारण करती है।

7.81.44

चतुर्दशविधा भूतजातयो याः सुरादिकाः । तस्याः शरीरशालिन्यास्ता लोमावलयः स्थिताः ॥ ४४ ॥

caturdaśavidhā bhūtajātayo yāḥ surādikāḥ | tasyāḥ śarīraśālinyāstā lomāvalayaḥ sthitāḥ || 44 ||

The fourteen types of beings, including the gods and others, are situated as the hairs on her body.

चौदह प्रकार के प्राणी, जिनमें देवता और अन्य शामिल हैं, उसके शरीर के बालों के रूप में स्थित हैं।

7.81.45

तस्याश्च नगरग्रामगिरयो देहशायिनः । नृत्यन्त्या सह नृत्यन्ति पुनर्जन्म मुदेव ते ॥ ४५ ॥

tasyāśca nagaragrāmagirayo dehaśāyinaḥ | nṛtyantyā saha nṛtyanti punarjanma mudeva te || 45 ||

The cities, villages, and mountains that reside in her body dance with her as she dances, rejoicing in rebirth.

उसके शरीर में रहने वाले नगर, ग्राम और पर्वत उसके साथ नृत्य करते हैं, पुनर्जन्म की खुशी में नाचते हैं।

7.81.46

जङ्गमात्मैकमेवैतज्जगदस्थावरं तदानृत्यतीति मया ज्ञातं परलोके सुखं स्थितम् ॥ ४६ ॥

jaṅgamātmaikamevaitajjagadasthāvaraṃ tadānṛtyatīti mayā jñātaṃ paraloke sukhaṃ sthitam || 46 ||

The moving soul is the only one in the world that is immovable. It dances, and I know that it is happy in the other world.

चल आत्मा ही एकमात्र है जो जगत् में अचल है। वह नृत्य करता है, और मैं जानता हूँ कि वह परलोक में सुखी है।

7.81.47

निगीर्णं जगदङ्गस्थं कृत्वा तृप्तिमुपागतापरिनृत्यति सा मत्ता जगज्जीर्णाहि चातकी ॥ ४७ ॥

nigīrṇaṃ jagadaṅgasthaṃ kṛtvā tṛptimupāgatāparinṛtyati sā mattā jagajjīrṇāhi cātakī || 47 ||

Having swallowed the world and its parts, she attains satisfaction and dances madly, like a cuckoo that has eaten the world.

जगत् और उसके अंगों को निगल कर, वह संतुष्टि प्राप्त करती है और पागलों की तरह नृत्य करती है, जैसे कि जगत् को खा चुकी कोयल।

7.81.48

आदर्शप्रतिबिम्बस्थमिवाभात्यखिलं जगत्तस्या वपुषि विस्तीर्णे स्वरूपिणि सरूपधृक् ॥ ४८ ॥

ādarśapratibimbasthamivābhātyakhilaṃ jagattasyā vapuṣi vistīrṇe svarūpiṇi sarūpadhṛk || 48 ||

The entire world appears as a reflection in a mirror, in her expanded form, which is true to her nature and form.

पूरा जगत् एक दर्पण में प्रतिबिम्बित होता है, उसके विस्तृत रूप में, जो उसके स्वभाव और रूप के अनुकूल है।

7.81.49

सा न नृत्यति तत्सर्वं सशैलवनकाननम्जगन्नृत्यति नानात्म मृत्वा पुनरुपागतम् ॥ ४९ ॥

sā na nṛtyati tatsarvaṃ saśailavanakānanamjagannṛtyati nānātma mṛtvā punarupāgatam || 49 ||

She does not dance, but the entire world, including mountains, forests, and groves, dances. The world dances with various souls, having died and returned again.

वह नृत्य नहीं करती, लेकिन पूरा जगत्, जिसमें पहाड़, वन और उपवन शामिल हैं, नृत्य करता है। जगत् विभिन्न आत्माओं के साथ नृत्य करता है, मरकर फिर से लौट आया है।

7.81.50

तज्जगन्नर्तन चारु तद्देहादर्शसंस्थितम्चिरं मया तदा दृष्टमविनष्टं पुनः स्थितम् ॥ ५० ॥

tajjagannartana cāru taddehādarśasaṃsthitamciraṃ mayā tadā dṛṣṭamavinaṣṭaṃ punaḥ sthitam || 50 ||

That beautiful dance of the world, situated in the mirror of her body, was seen by me for a long time, undestroyed and situated again.

जगत् का वह सुंदर नृत्य, जो उसके शरीर के दर्पण में स्थित है, मैंने उसे लंबे समय तक देखा, अविनाशी और फिर से स्थित।

7.81.51

विचलत्तारकाजालं भ्रमत्पर्वतमण्डलम् । मशकव्यूहवद्वातव्याधूतामरदानवम् ॥ ५१ ॥

vicalattārakājālaṃ bhramatparvatamaṇḍalam | maśakavyūhavadvātavyādhūtāmaradānavam || 51 ||

The trembling network of stars and the whirling mountain ranges, like the formation of mosquitoes, are shaken by the wind, disturbing the gods and demons.

विचलित तारकाओं का जाल और भ्रमण करते पर्वत मण्डल, जैसे मशकों का व्यूह, वायु से व्याधूत होकर देवताओं और दानवों को विचलित करते हैं।

7.81.52

संग्रामोन्मुक्तचक्राभद्वीपार्णववृताम्बरम् । हेलाविवलनावर्त प्रौढशैलधरातृणम् ॥ ५२ ॥

saṃgrāmonmuktacakrābhadvīpārṇavavṛtāmbaram | helāvivolanāvart prauḍśailadharātṛṇam || 52 ||

The sky, filled with islands and oceans, resembling a battlefield with released discs, is disturbed by the whirlwinds and the tall mountains bearing grass.

द्वीपों और समुद्रों से भरा आकाश, जो चक्रों के छूटने से युद्धक्षेत्र के समान लगता है, भंवरों और ऊँचे पर्वतों के घास से विचलित होता है।

7.81.53

नीलगेघांशुकावृत्तिवातघुंघुमिताम्बरम् । काष्ठास्थ्यादिस्फुटास्फोटपटत्पटपटारवम् ॥ ५३ ॥

nīlageghāṃśukāvṛttivātaghuṃghumitāmbaram | kāṣṭhāsthyādisphuṭāsphoṭapaṭatpaṭapaṭāravam || 53 ||

The sky, covered with dark clouds and strong winds, resounds with the crackling of wood and bones, and the sound of fluttering and clattering.

काले बादलों और तेज हवाओं से ढका आकाश, लकड़ी और हड्डियों के चटकने और फड़फड़ाने की आवाज से गूँजता है।

7.81.54

जगत्पदार्थैर्व्यामिश्रैरमिश्रैर्मुकुरैर्यथा । व्याप्तमाभोगिभाकारैरङ्गैरङ्गभ्रमैस्तथा ॥ ५४ ॥

jagatpadārthairvyāmiśrairamiśrairmukurairyathā | vyāptamābhogibhākārairangairaṅgabhramaistathā || 54 ||

The world is filled with various mixed elements, like pearls, and is pervaded by various forms of enjoyment and colors.

विश्व विभिन्न मिश्रित पदार्थों से भरा है, जैसे मोती, और विभिन्न भोग और रंगों के रूप में व्याप्त है।

7.81.55

मेरुर्नृत्यति लोलोच्चकुलाचलबृहद्भुजः । भ्रमदभ्रपटोपेतनमत्तनुतूनूरुहः ॥ ५५ ॥

merurnṛtyati lolocchakulācalabṛhadbhujaḥ | bhramadabhrapaṭopetanamattantūnūruhaḥ || 55 ||

Mount Meru dances with its lofty peaks and broad shoulders, adorned with whirling clouds, like a drunken elephant.

मेरु पर्वत अपने ऊँचे शिखरों और चौड़े कंधों के साथ नृत्य करता है, भंवरों से घिरा हुआ, जैसे मतवाला हाथी।

7.81.56

अत्यजन्तः समुद्राश्च मर्यादामुद्रणं द्रुमाः । भूमेर्नभस्तलं यान्ति नभसो यान्ति भूतलम् ॥ ५६ ॥

atyajantaḥ samudrāśca maryādāmudraṇaṃ drumāḥ | bhūmernabhastalaṃ yānti nabhaso yānti bhūtalam || 56 ||

The oceans transgress their boundaries, trees reach the sky, and the sky reaches the earth.

समुद्र अपनी सीमाओं को तोड़ते हैं, पेड़ आकाश तक पहुंचते हैं, और आकाश धरती तक पहुंचता है।

7.81.57

पुराणि घर्घरारावैर्दृश्यन्ते लुतितान्यधः । सगृहाट्टालवास्तव्यं न च किंचिल्लुठत्यधः ॥ ५७ ॥

purāṇi ghargharārāvairdṛśyante lutitānyadhaḥ | sagṛhāṭṭālavāstavyaṃ na ca kiñcilluṭhatyadhaḥ || 57 ||

Cities are seen collapsing with a loud rumble, but nothing remains intact, not even the houses and markets.

नगर गरजती आवाज के साथ ध्वस्त होते दिखाई देते हैं, लेकिन कुछ भी अक्षत नहीं रहता, न तो घर और न ही बाजार।

7.81.58

तस्यां भ्रमन्त्यां चतुरं चन्द्रार्कदिनरात्रयः । नखाग्रलेखालोकान्तर्भ्रान्तिकाञ्चनसूत्रवत् ॥ ५८ ॥

tasyāṃ bhramantyāṃ caturaṃ candrārkadinarātrayaḥ | nakhāgralekhālokāntarbhrāntikāñcanasūtravat || 58 ||

In that chaotic state, the days and nights of the sun and moon become confused, like a golden thread in the midst of a nail-tip-thin line.

उस अस्त-व्यस्त स्थिति में, सूर्य और चंद्रमा के दिन और रात उलझ जाते हैं, जैसे एक नाखून के अग्र जितनी पतली रेखा में सोने का धागा।

7.81.59

विभान्ति सृष्टयस्तस्या घर्माणि जलजालिकाः । इव नीहारहारिण्या नीलवारिदवाससः ॥ ५९ ॥

vibhānti sṛṣṭayastasyā gharmāṇi jalajālikāḥ | iva nīhārahāriṇyā nīlavāridavāsasaḥ || 59 ||

Her creations shine like water droplets, resembling the blue garments of the clouds that dispel the mist.

उसकी सृष्टियाँ जल की बूंदों की तरह चमकती हैं, जैसे कि बादलों के नीले वस्त्र जो कुहरा दूर करते हैं।

7.81.60

खमेव तस्याः संपन्नं कबरीमण्डलं बृहत् । पातालं चरणौ भूमिरुदरं बाहवो दिशः ॥ ६० ॥

kham eva tasyāḥ saṃpannaṃ kabarīmaṇḍalaṃ bṛhat | pātālaṃ caraṇau bhūmir udaraṃ bāhavo diśaḥ || 60 ||

The sky itself is her vast, complete circle. The underworld is her feet, the earth is her belly, and the directions are her arms.

आकाश स्वयं उसका विशाल, पूर्ण मंडल है। पाताल उसके पैर हैं, धरती उसका पेट है, और दिशाएँ उसकी बाहें हैं।

7.81.62

तदानुभूतं नृत्यन्त्यास्तस्या वपुषि विस्तृते । हिमवन्मेरुस्रह्याद्यैर्दोलनभ्रममद्रिभिः ॥ ६२ ॥

tadānubhūtaṃ nṛtyantyāstasyā vapuṣi vistṛte | himavanmerusrahyādyairdolanabhramamadribhiḥ || 62 ||

Then, experiencing the expanded form of her dancing, with the swaying and spinning of mountains like the Himalayas, Meru, and others.

तब, उसके नृत्य के विस्तृत रूप को अनुभव करते हुए, हिमालय, मेरु और अन्य पर्वतों के झूलने और घूमने के साथ।

7.81.63

द्वीपाब्धयोऽन्त्रवलयः पार्श्वकाः सर्वपर्वताः । प्राणापानावलीदोलाः पवनस्कन्धशालिकाः ॥ ६३ ॥

dvīpābdhayo'ntravalayaḥ pārśvakāḥ sarvaparvatāḥ | prāṇāpānāvalīdolāḥ pavanasakndhaśālikāḥ || 63 ||

The islands and oceans are her internal organs, all mountains are her sides, the breaths are her swinging vines, and the winds are her shoulder blades.

द्वीप और समुद्र उसके अंतरंग हैं, सभी पर्वत उसके पार्श्व हैं, श्वास उसके झूलते हुए लता हैं, और हवाएँ उसके कंधों की हड्डियाँ हैं।

7.81.64

सुरासुरोरगानीकरोमशाङ्गः शरीरकः । निस्पन्दं स्थातुमशकन्नसौ भ्रमति चक्रवत् ॥ ६४ ॥

surāsuroragānīkaromaśāṅgaḥ śarīrakaḥ | nispandaṃ sthātum aśakannasau bhramati cakravat || 64 ||

Her body is made of the hairs of the armies of gods, demons, and serpents. She is unable to stand still and spins like a wheel.

उसका शरीर देवताओं, असुरों और सर्पों की सेनाओं के बालों से बना है। वह स्थिर नहीं रह सकती और चक्र की तरह घूमती है।

7.81.65

नानाविभवविज्ञानयज्ञयज्ञोपवीतिनी । सा सरन्ती नभस्यासीद्धनघूत्कारघोषिणी ॥ ६५ ॥

nānāvibhavavijñānayajñayajñopavītinī | sā sarantrī nabhasyāsīddhanaghūtkārghoṣiṇī || 65 ||

Adorned with various riches, knowledge, sacrifices, and sacred threads, she moves through the sky with the sound of jingling bells.

विभिन्न सम्पत्ति, ज्ञान, यज्ञ और पवित्र धागों से अलंकृत, वह आकाश में घंटियों की आवाज के साथ चलती है।

7.81.66

तत्र भूतलमाकाशमाकाशमपि भूतलम्। प्रतिकृतिं भवत्यन्तर्न च किंचिद्विवर्तते ॥ ६६ ॥

tatra bhūtalamākāśamākāśamapi bhūtalam | pratikṛtiṃ bhavatyantarnaca kiñcidvivartate || 66 ||

There, the earth becomes the sky, and the sky becomes the earth. Everything is reflected within, and nothing is separate.

वहाँ, पृथ्वी आकाश बन जाती है, और आकाश पृथ्वी बन जाता है। सब कुछ अंदर प्रतिबिंबित होता है, और कुछ भी अलग नहीं होता।

7.81.67

बृहन्नासागुहागेहनिर्गता घनघुंघुमाः। तत्रोग्रा वायवो वान्ति घोरघूत्कारकारिणः ॥ ६७ ॥

bṛhannāsāguhāgehanirgatā ghanaghuṃghumāḥ | tatrogra vāyavo vānti ghoraghūtkārakāriṇaḥ || 67 ||

From the large caverns of the mountains, dense clouds emerge | There, fierce winds blow, making terrifying sounds || 67 ||

बड़ी गुफाओं से घने बादल निकलते हैं | वहाँ भयानक हवाएँ चलती हैं, जो डरावनी आवाजें करती हैं || ६७ ||

7.81.68

नभःकरशतैस्तस्याश्चतुरावृत्तिवर्तिभिः। भाति चण्डानिलोद्धूतैराकीर्णमिव पल्लवैः ॥ ६८ ॥

nabhaḥkaraśataistasyāścaturāvṛttivartibhiḥ | bhāti caṇḍāniloddhūtairākīrṇamiva pallavaiḥ || 68 ||

The sky appears as if covered with countless stars, revolving four times, blown by fierce winds, and scattered like petals || 68 ||

आकाश ऐसा लगता है मानो अनगिनत तारे चार बार घूम रहे हों, भयानक हवाओं से उड़ाए जा रहे हों, और पत्तियों की तरह बिखरे हुए हों || ६८ ||

7.81.69

तदङ्गजजगद्वस्तुजातभ्रमणसंभवात्। दृष्टिर्धीरापि मे मोहे सन्ना सेनेव संगरे ॥ ६९ ॥

tadaṅgajajagadvastujātabhramaṇasaṃbhavāt | dṛṣṭirdhīrāpi me mohe sannā seneva saṅgare || 69 ||

Due to the spinning of the worldly objects created by the elephants, even my steadfast vision is confused, like an army in battle || 69 ||

हाथियों द्वारा बनाई गई दुनियावी वस्तुओं के घूमने के कारण, मेरी स्थिर दृष्टि भी भ्रमित हो गई है, जैसे युद्ध में सेना || ६९ ||

7.81.70

प्रोह्यन्ते यन्त्रवच्छैला निपतन्ति नभश्चराः। लुठन्त्यमरगेहानि वलिते देहदर्पणे ॥ ७० ॥

prohyante yantravaśśailā nipatanti nabhaścarāḥ | luṭhantyamaragehāni valite dehadarpaṇe || 70 ||

The mountains are thrown like machines, the celestial beings fall, the divine abodes are shattered, and the body's pride is twisted || 70 ||

पर्वत यंत्रों की तरह फेंके जाते हैं, देवता गिरते हैं, दिव्य निवास स्थान टूट जाते हैं, और शरीर का अहंकार मुड़ जाता है || ७० ||

7.81.71

मेरवः पर्णवद्व्यूढा मलयाः पल्लवा इव। हिमाद्रयो हिमकणा इवौर्व्योऽब्जलता इव ॥ ७१ ॥

meravaḥ parṇavadvyūḍhā malayāḥ pallavā iva | himādrayo himakaṇā ivaaurvyo'bjalatā iva || 71 ||

The Meru mountains appear as if covered with leaves, the Malaya mountains like buds, the Himalayas like snowflakes, and the entire earth like a lotus vine || 71 ||

मेरु पर्वत पत्तों से ढंके हुए लगते हैं, मलय पर्वत कलियों की तरह लगते हैं, हिमालय बर्फ के कणों की तरह लगते हैं, और पूरी पृथ्वी कमल की लता की तरह लगती है || ७१ ||

7.81.72

सह्या मह्यामिव खगा विन्ध्या विद्याधरा इव । वृक्षावर्ते भ्रमन्तोऽन्ता राजहंसा इवाम्बरे ॥ ७२ ॥

sahyā mahyāmiva khagā vindhyā vidyādharā iva | vṛkṣāvarte bhramanto'ntā rājahaṃsā ivāmbare || 72 ||

The Sahya mountains appear like birds in the sky, and the Vindhya mountains like the Vidyadharas. The trees seem to be circling around like royal swans in the sky.

सह्या पर्वत आकाश में पक्षी की तरह लगते हैं, और विन्ध्य पर्वत विद्याधरों की तरह। पेड़ आकाश में राजहंसों की तरह घूमते प्रतीत होते हैं।

7.81.73

द्वीपान्यपि तृणानीव समुदा वलया इव । सुरलोकालयः पद्मा आसंस्तद्देहवारिणि ॥ ७३ ॥

dvīpānyapi tṛṇānīva samudā valayā iva | suralokālayaḥ padmā āsaṃstaddhehavāriṇi || 73 ||

Even the islands appear like blades of grass, and the oceans like bracelets. The abodes of the gods appear like lotuses in the waters of her body.

द्वीप भी घास की पत्तियों की तरह लगते हैं, और समुद्र कंगनों की तरह। देवताओं के निवास स्थान उसके शरीर के जल में कमल की तरह प्रतीत होते हैं।

7.81.74

विशदाकाशसंकाशे स्वप्नाञ्जनपुरोपमे । अङ्गे तस्या बृहज्जङ्घे पिण्डादित्यसमत्विषि ॥ ७४ ॥

viśadākāśasaṃkāśe svapnāñjanapuropame | aṅge tasyā bṛhajjaṅghe piṇḍādityasamatviṣi || 74 ||

In her body, which is clear like the sky and resembles a city seen in a dream, her large thighs shine like the orb of the sun.

उसके शरीर में, जो आकाश की तरह साफ और स्वप्न में देखे गए शहर की तरह है, उसकी बड़ी जांघें सूर्य के मंडल की तरह चमकती हैं।

7.81.75

विन्ध्यो नृत्यति काञ्चनाचलवने सह्यश्च सह्यो गिरिः कैलासो मलयो महेन्द्रशिखरी क्रौञ्चाचलो मन्दरः । गोकर्णो गगनाङ्गणे वसुमती विद्याधराणां पुरं सर्वे जंगमतां गता वनभुवस्तस्याः शरीरे सदा ॥ ७५ ॥

vindhyo nṛtyati kāñcanācalavane sahyaśca sahyo giriḥ kailāso malayo mahendraśikharī krauñcācalo mandaraḥ | gokarṇo gaganaṅgaṇe vasumatī vidyādharāṇāṃ puraṃ sarve jaṅgamatāṃ gatā vanabhuvastasyāḥ śarīre sadā || 75 ||

The Vindhya mountain dances in the golden mountain forest, and the Sahya mountain also dances. Kailasa, Malaya, Mahendra peak, Krauncha mountain, and Mandara mountain are all present. Gokarna is in the sky, Vasumati is the city of the Vidyadharas, and all moving beings are always in her body.

विन्ध्य पर्वत सोने के पर्वत वन में नृत्य करता है, और सह्य पर्वत भी नृत्य करता है। कैलास, मलय, महेन्द्र शिखर, क्रौंच पर्वत, और मंदर पर्वत सभी उपस्थित हैं। गोकर्ण आकाश में है, वसुमती विद्याधरों का नगर है, और सभी चलने वाले प्राणी हमेशा उसके शरीर में हैं।

7.81.76

अब्धिर्नृत्यति पर्वते गिरिरपि प्रोच्चैर्नभःकोटरे व्योमापीन्दुदिवाकरैः क्व चलितं भूमेरधस्ताद्गतम्। सद्वीपाचलपत्तनो वनगणः प्रोत्कीर्णपुष्पो दिवि व्यालोलं जगदम्बुधाविव तृणं दिक्चक्रके भ्राम्यति ॥ ७६ ॥

abdhirnṛtyati parvate girirapi procchairnabhaḥkoṭare vyomāpīndudivākaraiḥ kva calitaṃ bhūmeradhastādgatam | sadvīpācalapattano vanagaṇaḥ protkīrṇapuṣpo divi vyālolaṃ jagadambudhāviva tṛṇaṃ dikcakrake bhrāmyati || 76 ||

The ocean dances on the mountain, and the mountain also rises high in the sky. The sky, along with the moon and the sun, has moved from beneath the earth. The islands, mountains, cities, and forests with scattered flowers are in the sky, swaying like the universe in the ocean, like a blade of grass in the wheel of directions.

समुद्र पर्वत पर नृत्य करता है, और पर्वत भी आकाश में ऊँचा उठता है। आकाश, चंद्रमा और सूर्य के साथ, पृथ्वी के नीचे से हट गया है। द्वीप, पर्वत, नगर, और बिखरे हुए फूलों वाले वन आकाश में हैं, समुद्र में ब्रह्मांड की तरह लहराते हुए, दिशाओं के चक्र में एक तिनके की तरह घूमते हुए।

7.81.77

व्योम्नि भ्रमन्ति गिरयोऽम्बुधयो दिगन्ते लोकान्तराणि पुरपत्तनमण्डलानिनद्यः सरांसि मुकुरान्तरिव प्रवृद्धवातावकीर्णतृणविक्रमणक्रमेण ॥ ७७ ॥

vyomni bhramanti girayo'mbudhayo digante lokāntarāṇi purapattanamaṇḍalāninadyaḥ sarāṃsi mukurāntariva pravṛddhavātāvakīrṇatṛṇavikramaṇakrameṇa || 77 ||

In the sky, mountains and clouds wander. At the edge of the directions, other worlds and city circles move. The rivers and lakes sway like buds in the strong wind, scattering grass.

आकाश में, पर्वत और बादल भटकते हैं। दिशाओं के किनारे पर, अन्य लोक और नगर मण्डल चलते हैं। नदियाँ और सरोवर तेज हवा में कलियों के समान लहराते हैं, घास बिखेरते हुए।

7.81.78

मत्स्याश्चरन्ति च मरौ वरवारिणीव व्योम्नि स्थिराणि नगराणि भुवीव भान्तिक्षे भूधरा गगनसंक्षयवारिवाहमुत्पातवातपरिवृत्तगिरिस्थितं तत् ॥ ७८ ॥

matsyāścaranti ca marau varavāriṇīva vyomni sthirāṇi nagarāṇi bhuvīva bhāntikhe bhūdharā gaganasaṃkṣayavārivāhamutpātavātaparivṛttagiristhitaṃ tat || 78 ||

Fish move in the desert like excellent water. Cities stand still in the sky as if on earth. In the sky, the mountains, carried by the wind of destruction, appear to be on the mountain.

मछलियाँ रेगिस्तान में उत्तम जल के समान चलती हैं। शहर आकाश में पृथ्वी पर के समान स्थिर हैं। आकाश में, पर्वत, विनाश की हवा से उठाए गए, पर्वत पर दिखाई देते हैं।

7.81.79

ऋक्षोत्करो भ्रमति दीपसहस्रयन्त्रचक्रक्रमेण मणिवर्षणवेगचारुःअन्तर्बहिश्च परितः प्रणयेन मुक्त विद्याधरामरगणैरिव पुष्पवर्षम् ॥ ७९ ॥

ṛkṣotkaro bhramati dīpasahasrayantracakrakrameṇa maṇivarṣaṇavegacāruḥantarbahiśca paritaḥ praṇayena mukta vidyādharāmaragaṇairiva puṣpavarṣam || 79 ||

The constellation of stars moves with the mechanism of a thousand lamps, beautiful with the speed of a jewel shower. Inside and outside, all around, it is released with love by the Vidyadharas and gods, like a shower of flowers.

तारों का झुंड हजारों दीपों के यंत्र के साथ चलता है, रत्न वर्षा की गति से सुंदर। अंदर और बाहर, सब ओर, यह विद्याधरों और देवताओं द्वारा प्यार से छोड़ा जाता है, फूलों की वर्षा के समान।

7.81.80

संहारसर्गनिचया दिनरात्रिभागे बिन्दूपमा रजतयोर्दिवसोत्कराश्चकृष्णाः सिताश्च
परितोऽमलशुक्लकृष्णस्वादर्शमण्डलवदाकुलमुल्लसन्ति ॥ ८० ॥

saṃhārasarganicayā dinarātribhāge bindūpamā rajatayordivasotkarāścakṛṣṇāḥ sitāśca
parito'malaśuklakṛṣṇasvādarśamaṇḍalavadākulamullasanti || 80 ||

The collections of creation and destruction, in the parts of day and night, appear like drops of silver. Black and white, they shine all around, like pure black and white mirrors, rising beautifully.

सृष्टि और विनाश के संग्रह, दिन और रात के भागों में, चाँदी की बूँदों के समान दिखाई देते हैं। काले और सफेद, वे सब ओर शुद्ध काले और सफेद दर्पणों के समान चमकते हैं, सुंदर रूप से उठते हैं।

7.81.81

रत्नानि भास्करनिशाकरमण्डलानि तारोत्करास्तरलमण्डलकान्तिहाराःस्वच्छाम्बराणि वलितानि महाम्बराणि
कुर्वन्त्यनारतमनल्पमलातलेखाः ॥ ८१ ॥

ratnāni bhāskaraniśākaramaṇḍalāni tārotkarāstaralamaṇḍalakāntihārāḥsvacchāmbarāṇi valitāni
mahāmbarāṇi kurvantyanāratamanalpamalātalekhāḥ || 81 ||

The jewels, the orbs of the sun and moon, the garlands of stars, the lustrous necklaces, the clear skies, the vast firmaments, continuously create countless minute particles.

रत्न, सूर्य और चंद्रमा के मण्डल, तारों के गुच्छे, चमकीले हार, स्वच्छ आकाश, विशाल आकाश, लगातार अनगिनत छोटे कण बनाते हैं।

7.81.82

कल्पान्तकालविलुठ्ठत्रिजगन्मणीनि व्यावर्तनैर्ज्झगिति जातज्झणज्झणानितेजांसि झंकृततयोर्ध्वमधश्च यान्ति नानाविधानि
गुणवन्ति विभूषणानि ॥ ८२ ॥

kalpāntakālaviluṭhattrijaganmaṇīni vyāvartanairjhagiti jātajhaṇajjhaṇānitejāṃsi jhaṃkṛtatayordhvamadhaśca
yānti nānāvidhāni guṇavanti vibhūṣaṇāni || 82 ||

At the end of the cosmic cycle, the three worlds are shaken, and the ornaments, which are endowed with various qualities, move up and down, shining brilliantly.

ब्रह्मांड के अंत में, तीनों लोक हिल जाते हैं, और विभिन्न गुणों से युक्त आभूषण ऊपर और नीचे चलते हैं, चमकदार रूप से चमकते हुए।

7.81.83

संग्राममत्तभटखड्गरीचिवीचि श्यामायमानसकलातपवासराणाम्व्यावृत्तिभिर्विलुठ्ठतामपि सुस्थिराणामाकर्ण्यते कलकलो
जनमण्डलानाम् ॥ ८३ ॥

saṃgrāmamattabhaṭakhaṅgamarīcivīci śyāmāyamānasakalātapavāsarāṇāmvyāvṛttibhirviluṭhatāmapi
susthirāṇāmākarṇyate kalakalo janamaṇḍalānām || 83 ||

The clamor of the battle-intoxicated warriors, the rays of their swords, the dark clouds, the heat of the sun, the movements of the stable and the unstable, all these are heard as the noise of the world.

युद्ध-मत्त योद्धाओं की आवाज, उनकी तलवारों की किरणें, काले बादल, सूर्य की गर्मी, स्थिर और अस्थिर की गतिविधियाँ, ये सभी संसार की आवाज के रूप में सुनी जाती हैं।

7.81.84

ब्रह्मेन्द्रविष्णुहरवह्निरवीन्दुपूर्वा देवासुराः परिविवृत्तिभिरापतन्तःअन्येऽन्य एव विविधा उपयान्ति वातावधूतमशकाशनिविभ्रमेण ॥ ८४ ॥

brahmendraviṣṇuharavahniravīndupūrvā devāsurāḥ parivivṛttibhirāpatantaḥanye'nya eva vividhā upayānti vātāvadhūtamaśakāśanivibhrameṇa || 84 ||

Brahma, Indra, Vishnu, Shiva, Agni, and the wind, along with the gods and demons, move in various ways, each distinct from the other, with the swiftness of the wind.

ब्रह्मा, इंद्र, विष्णु, शिव, अग्नि, और वायु, देवताओं और असुरों के साथ, विभिन्न तरीकों से चलते हैं, प्रत्येक दूसरे से अलग, वायु की तेजी से।

7.81.85

संहारसर्गसुखदुःखभवाभवेहानीहानिषेधविधिजन्ममृतिभ्रमाद्याःसार्धं पृथक्च विलसन्ति सदैव सर्गे व्यामिश्रतामुपगता अपि तत्र भावाः ॥ ८५ ॥

saṃhārasargasukhaduḥkhabhavābhavehānīhāniṣedhavidhijanmamṛtibhramādyāḥsārdhaṃ pṛthakca vilasanti sadaiva sarge vyāmiśratāmupagatā api tatra bhāvāḥ || 85 ||

The states of destruction, creation, happiness, sorrow, existence, non-existence, prohibition, injunction, birth, death, illusion, and others always manifest together and separately in creation, even though they are mixed.

विनाश, सृष्टि, सुख, दुःख, अस्तित्व, अनस्तित्व, निषेध, विधि, जन्म, मृत्यु, भ्रम, और अन्य स्थितियाँ सृष्टि में सदा एक साथ और अलग-अलग प्रकट होती हैं, भले ही वे मिली-जुली हों।

7.81.86

भावोद्भवस्थितिविपत्करणभ्रमाणां संहारसर्गभुवनावनिविभ्रमाणाम्मिथ्यैव खे प्रकचतां खशरीरकाणां संलक्ष्यतेऽत्र न मनागपि नाम संख्या ॥ ८६ ॥

bhāvodbhavasthitivipatkaraṇabhramāṇāṃ saṃhārasargabhuvanāvanivibhramāṇāmmithyaiva khe prakacatāṃ khaśarīrakāṇāṃ saṃlakṣyate'tra na manāgapi nāma saṃkhyā || 86 ||

The cycles of creation, existence, and dissolution, along with their illusory nature, are perceived in the sky. Even the celestial bodies, which seem to move, are seen here, but their number cannot be comprehended by the mind.

उत्पत्ति, स्थिति और विनाश के चक्र, उनके भ्रम सहित, आकाश में दिखाई देते हैं। यहाँ खगोलीय पिंड भी दिखाई देते हैं, जो चलते हुए प्रतीत होते हैं, लेकिन उनकी संख्या मन से नहीं समझी जा सकती।

7.81.87

उत्पातशान्तिमरणोत्सवयुद्धसाम्यविद्वेषरागभयविश्वसनादि तत्र एकत्र कोश इव रत्नचयो विभाति नानारसाप्रतिघसर्गपरम्परं तत् ॥ ८७ ॥

utpātaśāntimaraṇotsavayuddhasāmyavidveṣarāgabhayaviśvasanādi tatra ekatra kośa iva ratnacayo vibhāti nānārasāpratighasargaparamparaṃ tat || 87 ||

In that place, various emotions such as peace after calamity, death, celebration, war, equality, hatred, passion, fear, and trust appear like a treasure trove of gems, each with its unique essence and sequence.

उस स्थान पर, विभिन्न भावनाएँ जैसे कि उत्पात शान्ति, मरण, उत्सव, युद्ध, साम्य, विद्वेष, राग, भय और विश्वास एक रत्नों के खजाने की तरह प्रकट होती हैं, जिनमें से प्रत्येक का अपना अलग स्वाद और क्रम है।

7.81.88

तस्याश्चिदम्बरमये वपुषि स्वभावभूतास्फुटानुभवभावजगद्व्यवस्थाः सर्वक्षया
मलिनदृक्कलिताम्बरस्थकेशोण्ड्रकस्फुरणवत्परितः स्फुरन्ति ॥ ८८ ॥

tasyāścidambaramaye vapuṣi svabhāvabhūtāsphuṭānubhavabhāvajagadvyavasthāḥ sarvakṣayā malinadṛkkalitāmbarasthakeśoṇḍrakasphuraṇavatparitaḥ sphuranti || 88 ||

In her divine form, which is the essence of consciousness, the natural and clearly experienced states of the world's arrangements shine forth, surrounded by the radiant brilliance of the universe, which is free from all decay and impurity.

उसके चिदम्बरमय रूप में, जो चेतना का सार है, प्रकृति और स्पष्ट रूप से अनुभव किए गए विश्व के व्यवस्थाओं की स्थितियाँ चमकती हैं, जो सभी क्षय और अशुद्धि से मुक्त हैं, और ब्रह्माण्ड की चमकदार चमक से घिरी हैं।

7.81.89

जगत्संक्षुब्धमक्षुब्धं दृश्यते स्थितिसंस्थिति संचाल्यमानमुकुरप्रतिबिम्ब इवास्थितम् ॥ ८९ ॥

jagatsaṅkṣubdhamakṣubdhaṃ dṛśyate sthitisaṃsthiti saṃcālyamānamukurapratibimba ivāsthitam || 89 ||

The world appears both disturbed and undisturbed, in a state of stability and instability, like a reflection in a moving mirror.

विश्व दोनों ही तरह से दिखाई देता है, अस्थिर और स्थिर, स्थिरता और अस्थिरता की स्थिति में, जैसे कि एक चलते हुए दर्पण में प्रतिबिम्ब।

7.81.90

नृत्यस्फुरत्प्रतापान्तर्जगदर्थाः प्रतिक्षणम् स्थितिं त्यजन्ति गृह्णन्ति बालसंकल्पसर्गवत् ॥ ९० ॥

nṛtyasphuratpratāpāntarjagadarthāḥ pratikṣaṇaṃ sthitiṃ tyajanti gṛhṇanti bālasaṃkalpasargavat || 90 ||

The worldly matters, glowing with the radiance of dance, constantly abandon and assume stability, like the fleeting thoughts of a child.

नृत्य की चमक से चमकते हुए विश्व के मामले, प्रतिक्षण स्थिरता को छोड़ते और ग्रहण करते हैं, जैसे कि एक बच्चे के अस्थायी विचार।

7.81.91

क्रियाशक्तिः शरीरेऽन्तः पूर्यमाणा अनारतम् राशीभूय विशीर्यन्ते जगन्मुद्गकणोत्कराः ॥ ९१ ॥

kriyāśaktiḥ śarīre'ntaḥ pūryamāṇā anāratam rāśībhūya viśīryante jagamudgakaṇotkarāḥ || 91 ||

The power of action, constantly filling the body within, becomes a heap and then disperses like the scattered seeds of the world.

क्रिया की शक्ति, निरन्तर शरीर के अंदर भरती रहती है, एक ढेर बन जाती है और फिर विश्व के बिखरे हुए बीजों की तरह बिखर जाती है।

7.81.92

क्षणमालक्ष्यते किंचिन्न किंचिदपि सा क्षणम्। क्षणमङ्गुष्ठमात्रैव क्षणमाकाशपूरिणी ॥ ९२ ॥

kṣaṇamālakṣyate kiṃcinna kiṃcidapi sā kṣaṇam | kṣaṇamaṅguṣṭhamātraiva kṣaṇamākāśapūriṇī || 92 ||

In one moment, she is perceived as something, in another moment, she is perceived as nothing. In one moment, she is as small as a thumb, in another moment, she fills the entire space.

एक क्षण में वह कुछ के रूप में दिखाई देती है, दूसरे क्षण में वह कुछ भी नहीं दिखाई देती | एक क्षण में वह अंगुष्ठ के बराबर होती है, दूसरे क्षण में वह आकाश को भर देती है ||

7.81.93

यस्मात्सा सकला देवी संविच्छक्तिर्जगन्मयी । अनन्ता परमाकाशकोशशुद्धशरीरिणी ॥ ९३ ॥

yasmātsā sakalā devī saṃvicchaktirjaganmayī | anantā paramākāśakośaśuddhaśarīriṇī || 93 ||

Therefore, she is the complete goddess, the power of consciousness, pervading the universe. She is infinite, with a pure body like the supreme space.

इसलिए, वह पूर्ण देवी है, चेतना की शक्ति, ब्रह्मांड में व्याप्त है | वह अनंत है, परम आकाश के समान शुद्ध शरीर वाली |

7.81.94

कालत्रयस्थितजगत्त्रितयान्तरी हि चित्सा तथा कचति तेन यथास्थितेन । रूपेण चित्रकृदुदारमनःस्थचित्रसंसारजालसदृशेन कचज्जवेन ॥ ९४ ॥

kālatrayasthitajagattritayāntarī hi cittsā tathā kacati tena yathāsthitena | rūpeṇa citrakṛdudāramanaḥsthacitrasaṃsārajālasadṛśena kacajjavena || 94 ||

She, the power of consciousness, dwells in the three worlds and the three times. She shines with her inherent nature, like a magnificent painting in the mind, resembling the intricate web of the world.

वह, चेतना की शक्ति, तीनों लोकों और तीनों कालों में विराजमान है | वह अपने स्वाभाविक रूप से चमकती है, मन में एक विशाल चित्र की तरह, जो संसार के जटिल जाल के समान है |

7.81.95

सर्वात्मकैकवपुरेकचिदात्मकत्वात्संशान्तखैकवपुरेकचिदात्मतत्वात् । एवं निमेषणसमुन्मिषितैकरूपं सा बिभ्रती वपुरनन्तमनादि भाति ॥ ९५ ॥

sarvātmakaikavapurekacidātmakatvātsaṃśāntakhaikavapurekacidātmatatvāt | evaṃ nimeṣaṇasamunmiṣitaikarūpaṃ sā bibhratī vapuranantamanādi bhāti || 95 ||

Thus, she possesses the form of the entire universe, being the sole consciousness. From her peaceful and singular form of pure consciousness, she manifests in an instant, appearing in an eternal and beginningless form.

इस प्रकार, वह पूरे ब्रह्मांड के रूप में विराजमान है, एकमात्र चेतना होने के कारण | उसके शांत और एकाकी रूप से, जो शुद्ध चेतना है, वह एक क्षण में प्रकट होती है, अनंत और अनादि रूप में |

7.81.96

तस्यां विभाति तदनन्तशिलात्मकोशे लेखाब्जचक्ररचनादिवदेव दृश्यम् । व्योमात्मकं गगनमात्रशरीरवत्यां चित्त्वाद्रवज्जलधिकोश इवोर्मिलेखा ॥ ९६ ॥

tasyāṃ vibhāti tadanantaśilātmakośe lekhābjacakraracanādivadeva dṛśyam | vyomātmakaṃ gaganamātraśarīravatyāṃ cittvāddravajjaladhikośa ivormilekhā || 96 ||

In her, the infinite, stone-like cosmic egg shines, appearing like the design of a lotus wheel. In her, who has the form of the vast sky, the waves appear like lines on the surface of the ocean of consciousness.

उसमें, अनंत, पत्थर के समान ब्रह्मांडीय अंडे की तरह चमकता है, कमल के चक्र की रचना के समान दिखाई देता है | उसमें, जो विशाल आकाश के रूप में है, चेतना के समुद्र पर लहरें रेखाओं की तरह दिखाई देती हैं |

7.81.97

महती भैरवी देवी नृत्यन्त्यापूरिताम्बरा तस्य कल्पान्तरुद्रस्य सा पुरो भैरवाकृतेः ॥ ९७ ॥

mahatī bhairavī devī nṛtyantyāpūritāmbarā tasya kalpāntarudrasya sā puro bhairavākṛteḥ || 97 ||

The great Bhairavi Devi, with her garments filled with dancing, stands before the form of Bhairava, the Rudra of the end of the aeon.

महान भैरवी देवी, जिनके वस्त्र नृत्य से भरे हुए हैं, कल्पान्त रुद्र के भैरव रूप के सामने खड़ी हैं।

7.81.98

शिरोमन्दाश्रितोग्राग्निदग्धस्थाणुवनावनिः कल्पान्तवातव्याधूता वनमालेव नृत्यति ॥ ९८ ॥

śiromandāśritogrāgnidagdhasthāṇuvanāvaniḥ kalpāntavātavyādhūtā vanamāleva nṛtyati || 98 ||

With the fierce fire residing on her head, she dances like a forest consumed by the wind of the end of the aeon, with burnt trees.

जिसके सिर पर भयंकर अग्नि स्थित है, वह कल्पान्त की हवा से उड़ाई गई जली हुई वन की तरह नृत्य करती है।

7.81.99

कुद्दालोलूखलबृसीफलकुम्भकरण्डकैः मुसलोदञ्चनस्थालीस्तम्भैः स्रग्दामधारिणी ॥ ९९ ॥

kuddālolūkhalabṛsīphalakumbhakaraṇḍakaiḥ musalodañcanasthālīstambhaiḥ sragdāmadhāriṇī || 99 ||

She holds various implements like a hoe, mortar, pestle, plough, pot, pitcher, pestle, grinding stone, pillar, and garland.

वह खुरपी, ओखली, मूसल, उदञ्चन, स्थाली, स्तम्भ और माला जैसे विभिन्न उपकरणों को धारण करती है।

7.81.100

एवंविधानां स्रग्दामजालानां कुसुमोत्करम् किरन्ती संसृजन्तीव नृत्तक्षुब्धं क्षयक्षतम् ॥ १०० ॥

evaṃvidhānāṃ sragdāmajālānāṃ kusumotkaram kirantī saṃsṛjantīva nṛttakṣubdhaṃ kṣayakṣatam || 100 ||

She scatters the garlands of flowers, creating a whirlwind of dance, causing destruction and injury.

वह फूलों की मालाओं को बिखेरती है, नृत्य का एक भंवर पैदा करती है, जो विनाश और चोट पहुँचाता है।

7.81.101

वन्द्यमानस्तया सोऽपि तथैवाकाशभैरवः तथैव विततताकारस्तदोच्चैः परिनृत्यति ॥ १०१ ॥

vandyamānastayā so'pi tathaivākāśabhairavaḥ tathaiva vitatākārastadochchaiḥ parinṛtyati || 101 ||

Worshipped by her, that Akasha Bhairava also, in the same manner, with an expanded form, dances vigorously.

उसके द्वारा पूजित, वह आकाश भैरव भी, उसी तरह, एक विस्तृत रूप में, उत्साहपूर्वक नृत्य करता है।

7.81.102

डिंबं डिबं सुडिंबँ पच पच सहसाझम्य झम्यं प्रझम्यं नृत्यन्ती शब्दवाद्यैः स्रजमुरसि शिरःशेखरं ताक्ष्र्यपक्षैः पूर्णं रक्तासवानां यममहिषमहाशृङ्गमादाय पाणौ पायाद्वो वन्द्यमानः प्रलयमुदितया भैरवः कालरात्र्या ॥ १०२ ॥

ḍiṃbaṃ ḍibaṃ suḍiṃbaṃ paca paca sahasājhamya jhamyaṃ prajhamyaṃ nṛtyantī śabdavādyaiḥ srajamurasī śiraḥśekharaṃ tārkṣyapakṣaiḥ pūrṇaṃ raktāsavānāṃ yamamahiṣamahāśṛṅgamādāya pāṇau pāyādvō vandyamānaḥ pralayamuditayā bhairavaḥ kālarātryā || 102 ||

With the sounds of 'ḍiṃbaṃ ḍibaṃ suḍiṃbaṃ paca paca,' suddenly dancing with the musical instruments, adorning the head with a garland of Tārkṣya feathers, holding in the hand the great horn of the buffalo filled with red liquor, may Bhairava, praised by Kālarātrī who has arisen for destruction, protect you.

डिंबं डिबं सुडिंबँ पच पच शब्द के साथ अचानक नृत्य करते हुए, वाद्यों के साथ अलंकृत, ताक्ष्र्य के पंखों से सिर को सजाया हुआ, हाथ में लाल मदिरा से भरे हुए महान भैंस के सींग को लेकर, विनाश के लिए उदित कालरात्री द्वारा वंदित भैरव आपकी रक्षा करें।

Chapter 82

7.82.1

श्रीराम उवाचकिमेतद्भगवन्सर्वनाशे नृत्यति केन साकिं शूर्पफलकुम्भाद्यस्तस्याः स्रग्दामधारणम् ॥ १ ॥

śrīrāma uvācakimetadbhagavansarvanāśe nṛtyati kena sākiṃ śūrpaphalakumbhādyastasyāḥ sragdāmadhāraṇam || 1 ||

Shri Rama said: What is this, O Lord, that dances in the universal destruction? With whom does she dance, and what is the purpose of her holding a winnowing fan, a fruit basket, and other such objects?

श्री राम ने कहा: हे भगवन्, यह क्या है जो सारे नाश में नृत्य कर रहा है? उसके साथ कौन नृत्य कर रहा है, और उसके हाथ में चालनी, फल का टोकरा और अन्य वस्तुएँ हैं?

7.82.2

किं नष्टं त्रिजगद्भूयः किं काल्या देहसंस्थितम् । परिनृत्यति निर्वाणं कथं पुनरुपागतम् ॥ २ ॥

kiṃ naṣṭaṃ trijagadbhūyaḥ kiṃ kālyā dehasaṃsthitam | parinṛtyati nirvāṇaṃ kathaṃ punarupāgatam || 2 ||

What has been destroyed in the three worlds? What is established in the body of Kali? How does liberation dance again?

तीनों लोकों में क्या नष्ट हो गया है? काली के शरीर में क्या स्थापित है? मोक्ष फिर से कैसे नृत्य कर रहा है?

7.82.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । नासौ पुमान्न चासौ स्त्री न तन्नृत्तं न तावुभौ । तथाभूते तथाचारे आकृती न च ते तयोः ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nāsau pumānna cāsau strī na tannṛttaṃ na tāvubhau | tathābhūte tathācāre ākṛtī na ca te tayoḥ || 3 ||

Vasishtha said: That is neither a man nor a woman, nor is that dance real, nor are both of them real. In such a state and in such behavior, there is no form for them.

वसिष्ठ ने कहा: वह न तो पुरुष है न स्त्री, न ही वह नृत्य वास्तविक है, न ही दोनों वास्तविक हैं। ऐसी स्थिति और ऐसे व्यवहार में, उनके लिए कोई आकृति नहीं है।

7.82.4

अनादिचिन्मात्रनभो यत्तत्कारणकारणम् । अनन्तं शान्तमाभासमात्रमव्ययमाततम् ॥ ४ ॥

anādicinmātranabho yattatkāraṇakāraṇam | anantaṃ śāntamābhāsamātramavyayamātatam || 4 ||

That which is the eternal, pure consciousness, the sky, is the cause of causes. It is infinite, peaceful, mere reflection, imperishable, and eternal.

जो अनादि, शुद्ध चेतना, आकाश है, वही कारणों का कारण है। वह अनंत, शांत, केवल प्रतिबिंब, अविनाशी और सनातन है।

7.82.5

शिवं तत्सच्छिवं साक्षाल्लक्ष्यते भैरवाकृति । तथास्थितो जगच्छान्तौ परमाकाश एव सः ॥ ५ ॥

śivaṃ tatsacchiśivaṃ sākṣāllakṣyate bhairavākṛti | tathāsthito jagacchāntau paramākāśa eva saḥ || 5 ||

That is Shiva, the true Shiva, directly perceived as Bhairava. Thus situated at the beginning and end of the world, he is the supreme sky itself.

वह शिव है, सच्चिदानंद शिव, जो भैरव के रूप में सीधे देखा जाता है। जगत के आरंभ और अंत में ऐसे स्थित, वह परम आकाश स्वयं है।

7.82.6

चेतनत्वात्तथाभूतस्वभावविभवादृते । स्थातुं न युज्यते तस्य यथा हेम्नो निराकृति ॥ ६ ॥

cetanatvāttathābhūtasvabhāvavibhavādṛte | sthātuṃ na yujyate tasya yathā hemno nirākṛti || 6 ||

Due to consciousness and the inherent nature of its splendor, it cannot exist without form, just as gold cannot exist without form.

चेतनता और उसके स्वभाव के वैभव के कारण, वह रूप के बिना नहीं रह सकता, जैसे सोना रूप के बिना नहीं रह सकता।

7.82.7

कथमास्तां वद प्राज्ञ चिन्मात्रं चेतनं विना । कथमास्तां वद प्राज्ञ मरिचं तिक्ततां विना ॥ ७ ॥

kathamāstāṃ vada prājña cinmātraṃ cetanaṃ vinā | kathamāstāṃ vada prājña maricaṃ tiktatāṃ vinā || 7 ||

Tell me, wise one, how can pure consciousness exist without consciousness? Tell me, wise one, how can pepper exist without bitterness?

बताओ, हे विद्वान्, चेतना के बिना शुद्ध चेतना कैसे रह सकती है? बताओ, हे विद्वान्, कड़वापन के बिना मिर्च कैसे रह सकती है?

7.82.8

कटकादि विना हेम कथमास्तां विलोच्यताम् । कथं स्वभावेन विना पदार्थस्य भवेत्स्थितिः ॥ ८ ॥

kaṭakādi vinā hemna kathamāstāṃ vilocyatām | kathaṃ svabhāvena vinā padārthasya bhavetsthitiḥ || 8 ||

How can gold exist without a bracelet or other forms? How can an object exist without its inherent nature?

कंगन या अन्य रूपों के बिना सोना कैसे रह सकता है? अपनी स्वाभाविक प्रकृति के बिना कोई वस्तु कैसे रह सकती है?

7.82.9

विना तिष्ठति माधुर्यं कथयेक्षुरसः कथम् । निर्माधुर्यश्च यस्त्विक्षुरसो न हि स तद्रसः ॥ ९ ॥

vinā tiṣṭhati mādhuryaṃ kathayekṣurasaḥ katham | nirmādhuryaśca yastvikṣuraso na hi sa tadrsaḥ || 9 ||

How can sugarcane juice exist without sweetness? If sugarcane juice has no sweetness, it is not sugarcane juice.

मिठास के बिना गन्ने का रस कैसे रह सकता है? अगर गन्ने का रस में मिठास नहीं है, तो वह गन्ने का रस नहीं है।

7.82.10

अचेतनं यच्चिन्मात्रं न तच्चिन्मात्रमुच्यते । न च चिन्मात्रनभसो नष्टं क्वचन युज्यते ॥ १० ॥

acetanaṃ yaccinmātraṃ na taccinmātramucyate | na ca cinmātranabhaso naṣṭaṃ kvacana yujyate || 10 ||

That which is non-conscious and pure consciousness is not called pure consciousness. And it is not appropriate to say that pure consciousness is destroyed anywhere.

जो अचेतन और शुद्ध चेतना है, वह शुद्ध चेतना नहीं कहलाता। और यह उचित नहीं है कि कहीं भी शुद्ध चेतना नष्ट हो जाती है।

7.82.11

स्वसत्तामात्रकादन्यत्किंचित्तस्य न युज्यते । अन्यत्वमुररीकर्तुं व्योमानन्यमसौ किल ॥ ११ ॥

svasattāmātrakādanyatkiñcit tasya na yujyate | anyatvamurarīkartuṃ vyomānanyam asau kil || 11 ||

Nothing other than pure existence can be attributed to it. It cannot be made different from itself, as the sky cannot be made different from itself.

इसके अलावा कोई भी अन्य अस्तित्व इसके लिए उपयुक्त नहीं है। यह अपने से अलग नहीं किया जा सकता, जैसे आकाश अपने से अलग नहीं किया जा सकता।

7.82.12

तस्मात्तस्य यदक्षुब्धं सत्तामात्रं स्वभासनम्। अनादिमध्यपर्यन्तं सर्वशक्तिमयात्मकम्॥ १२॥

tasmāt tasya yadakṣubdhaṃ sattāmātraṃ svabhāsanam | anādimadhyaparyantaṃ sarvaśaktimayātmakam || 12 ||

Therefore, that which is undisturbed, pure existence, self-luminous, without beginning, middle, or end, and of the nature of all powers.

इसलिए, जो अविचलित, शुद्ध अस्तित्व, स्वयं प्रकाशित, अनादि, मध्य और अंत से रहित और सभी शक्तियों का स्वरूप है।

7.82.13

तदेतत्त्रिजगत्सर्गकल्पान्तौ व्योम भूर्दिशः। नाश उत्पादनं नाम विनानाभासनं नभः॥ १३॥

tadetat trijagatsargakalpāntau vyoma bhūrdiśaḥ | nāśa utpādanaṃ nāma vinānābhāsanam nabhaḥ || 13 ||

That which is the creation and dissolution of the three worlds, the sky, the earth, and the directions, is called destruction and production without manifestation.

जो तीनों लोकों के सृजन और प्रलय का कारण है, आकाश, पृथ्वी और दिशाओं का, उसे अभिव्यक्ति के बिना नाश और उत्पादन कहा जाता है।

7.82.14

जननं मरणं मायामोहं मान्द्यमवस्तुता। वस्तुता च विवेकश्च बन्धो मोक्षः शुभाशुभे॥ १४॥

jananaṃ maraṇaṃ māyāmohaṃ māndyamavastutā | vastutā ca vivekaśca bandho mokṣaḥ śubhāśubhe || 14 ||

Birth, death, illusion, delusion, dullness, unreality, reality, discrimination, bondage, liberation, good, and bad.

जन्म, मृत्यु, माया, मोह, मांद्य, अवास्तविकता, वास्तविकता, विवेक, बंधन, मोक्ष, शुभ और अशुभ।

7.82.15

विद्याऽविद्या विदेहत्वं सदेहत्वं क्षणश्चिरम्। चञ्चलत्वं स्थिरत्वं वा त्वं चाहं चेतरश्च तत्॥ १५॥

vidyā'vidyā videhatvaṃ sadehatvaṃ kṣaṇaściram | cañcalatvaṃ sthiratvaṃ vā tvaṃ cāhaṃ cetaraśca tat || 15 ||

Knowledge and ignorance, bodilessness and embodiment, momentary and eternal, restless and steady, you and I, and others.

ज्ञान और अज्ञान, देहरहितता और देहधारण, क्षणिक और शाश्वत, चंचल और स्थिर, आप और मैं, और दूसरे।

7.82.16

सदसच्चाथ सदसन्मौर्ख्यं पाण्डित्यमेव च। देशकालक्रियाद्रव्यकलनाकेलिकल्पनम्॥ १६॥

sadasaccātha sadasantmaukhyam pāṇḍityameva ca | deśakālakriyādravyakalanākelikalpanam || 16 ||

Truth and falsehood, as well as the absence of truth and foolishness, are considered wisdom. The calculation of place, time, action, and substance is also considered wisdom.

सत्य और असत्य, सत्य की अनुपस्थिति और मूर्खता, यह सब ज्ञान माना जाता है। स्थान, समय, कार्य और पदार्थ का गणना भी ज्ञान माना जाता है।

7.82.17

रूपालोकमनस्कारकर्मबुद्धीन्द्रियात्मकम्। तेजोवार्यनिलाकाशपृथ्व्यादिकमिदं ततम्॥ १७॥

rūpālokamanaskārakarmabuddhīndriyātmakam | tejovāryanilākāśapṛthvyādikamidaṃ tatam || 17 ||

This is pervaded by form, sight, mind, action, intellect, senses, and the self. It is also pervaded by fire, water, air, space, and earth.

यह रूप, दृष्टि, मन, कर्म, बुद्धि, इंद्रियों और आत्मा से व्याप्त है। यह अग्नि, जल, वायु, आकाश और पृथ्वी से भी व्याप्त है।

7.82.18

एतत्सर्वमसौ शुद्धचिदाकाशो निरामयः । अजहद्व्योमतामेव सर्वात्मैवैवमास्थितः ॥ १८ ॥

etatsarvamasaū śuddhacidākāśo nirāmayaḥ | ajahadvyomatāmeva sarvātmaivaivamāsthitaḥ || 18 ||

All this is the pure, flawless, and eternal consciousness. It has never abandoned its nature as the all-pervading self.

यह सब शुद्ध, दोषरहित और सनातन चेतना है। यह कभी भी अपने सर्वव्यापी आत्मा के स्वभाव को नहीं छोड़ा है।

7.82.19

एतत्सर्वं च विमलं खमेवात्र न संशयः । अस्मादनन्यत्स्वप्नादिर्दृष्टान्तोऽत्राविखण्डितः ॥ १९ ॥

etatsarvaṃ ca vimalaṃ khamevātra na saṃśayaḥ | asmādananyatsvapnādirdṛṣṭānto'trāvikhaṇḍitaḥ || 19 ||

All this is pure and flawless, like the sky. There is no doubt about it. The example of a dream is not different from this.

यह सब शुद्ध और दोषरहित है, जैसे आकाश। इसमें कोई संदेह नहीं है। स्वप्न का उदाहरण इससे अलग नहीं है।

7.82.20

चिन्मयः परमाकाशो य एव कथितो मया । एषोऽसौ शिव इत्युक्तो भवत्येष सनातनः ॥ २० ॥

cinmayoḥ paramākāśo ya eva kathito mayā | eṣo'sau śiva ityukto bhavatyesa sanātanaḥ || 20 ||

The supreme consciousness, which is pure and eternal, is what I have described. This is known as Shiva, the eternal one.

जो शुद्ध और सनातन चेतना है, वही मैंने बताया है। यह शिव कहलाता है, सनातन है।

7.82.21

स एष हरिरित्यास्ते भवत्येष पितामहः । चन्द्रोऽर्क इन्द्रो वरुणो यमो वैश्रवणोऽनलः ॥ २१ ॥

sa eṣa haririty āste bhavatyēṣa pitāmahaḥ | candro'rka indro varuṇo yamo vaiśravaṇo'nalaḥ || 21 ||

This is Hari, this is the grandfather, this is the moon, the sun, Indra, Varuna, Yama, Kubera, and fire.

यह हरि है, यह पितामह है, यह चन्द्रमा है, सूर्य है, इन्द्र है, वरुण है, यम है, कुबेर है, और अग्नि है।

7.82.22

अनिलो जलदोम्भोधिर्ह्यो यद्वस्त्वस्ति नास्ति च । इत्येते चिन्मयाकाशकोशलेशाः स्फुरन्त्यलम् ॥ २२ ॥

anilo jaladombhodhirhyo yadvastvasti nāsti ca | ityete cinmayākāśakośaleśāḥ sphurantyalam || 22 ||

Wind, clouds, the ocean, the sky, whatever exists or does not exist, all these are the manifestations of the consciousness-filled space.

वायु, बादल, समुद्र, आकाश, जो कुछ भी है या नहीं है, ये सभी चेतना से भरे आकाश के प्रकटीकरण हैं।

7.82.23

एवंविधाभिः संज्ञाभिर्मुधाभावनयेदृशाः । स्वभावमात्रबोधेन भवन्त्येते तु तादृशाः ॥ २३ ॥

evaṃvidhābhiḥ saṃjñābhirmudhābhāvanayedṛśāḥ | svabhāvamātrabodhena bhavantyete tu tādṛśāḥ || 23 ||

Thus, by meditating on these names and forms, one realizes the true nature of these entities, and they become as they are.

इस प्रकार, इन नामों और रूपों पर ध्यान करके, एक व्यक्ति इन सत्ताओं के वास्तविक स्वभाव को समझता है, और वे जैसे हैं वैसे ही बन जाते हैं।

7.82.24

अबोधो बोध इत्येवं चिद्व्योमैवात्मनि स्थितम्। तस्माद्भेदो द्वैतमैक्यं नास्त्येवेति प्रशाम्यताम्॥ २४॥

abodho bodha ityevaṃ cidvyomaiātmani sthitam | tasmādbhedo dvaitamaikyaṃ nāstyeveti praśāmyatām || 24 ||

Ignorance and knowledge are thus established in the consciousness-filled space of the self. Therefore, there is no difference, duality, or non-duality; let there be peace.

अज्ञान और ज्ञान इस प्रकार आत्मा के चेतना से भरे आकाश में स्थापित हैं। इसलिए, कोई भेद, द्वैत, या अद्वैत नहीं है; शांति हो।

7.82.25

तावत्तरङ्गत्वमयं करोति जीवः स्वसंसारमहासमुद्रे। यावन्न जानाति परं स्वभावं निरामयं तन्मयतामुपेतः॥ २५॥

tāvattaraṅgatvamayaṃ karoti jīvaḥ svasamāsaramahāsamudre | yāvanna jānāti paraṃ svabhāvaṃ nirāmayaṃ tanmayatāmupetaḥ || 25 ||

As long as the individual soul does not realize its true, flawless nature, it continues to create waves in the great ocean of its own worldly existence.

जब तक जीवात्मा अपने वास्तविक, दोषरहित स्वभाव को नहीं जानता, तब तक वह अपने संसार के महासागर में तरंगें पैदा करता रहता है।

7.82.26

ज्ञाने तु शान्तिं स तथोपयाति यथा न सोऽब्धिर्न तरङ्गकोऽसौ। यथास्थितं सर्वमिदं च शान्तं भवत्यनन्तं परमेव तस्य॥ २६॥

jñāne tu śāntiṃ sa tathopayāti yathā na so'bdhirna taraṅgako'sau | yathāsthitaṃ sarvamidaṃ ca śāntaṃ bhavatyanantaṃ parameva tasya || 26 ||

In knowledge, one attains such peace that the ocean and its waves are not different from it. Everything remains as it is, peaceful, infinite, and supreme.

ज्ञान में, वह ऐसी शान्ति प्राप्त करता है कि समुद्र और उसकी लहरें उससे अलग नहीं होतीं। सब कुछ जैसा है, शान्त, अनन्त और परम है।

Chapter 83

7.83.1

चिन्मात्रपरमाकाश एष यः कथितो मयाएषोऽसौ शिव इत्युक्तस्तदा रुद्रः प्रनृत्यति ॥ १ ॥

cinmātraparamākāśa eṣa yaḥ kathito mayāeṣo'sau śiva ityuktastadā rudraḥ pranṛtyati || 1 ||

That supreme space of pure consciousness, which I have described, is called Shiva. Then Rudra dances.

वह परम चिन्मात्र आकाश, जिसका मैंने वर्णन किया है, शिव कहलाता है। तब रुद्र नृत्य करता है।

7.83.2

यासौ तस्याकृतिर्नासावाकृतिः कृतिनां वरतच्चिन्मात्रघनं व्योम तथा कचति तादृशम् ॥ २ ॥

yāsau tasyākṛtirnāsāvākṛtiḥ kṛtināṃ varataccinmātraghanaṃ vyoma tathā kacati tādṛśam || 2 ||

That which has no form is the best form for the wise. The space of pure consciousness is dense and appears as such.

जो रूप नहीं है, वही बुद्धिमानों के लिए सर्वोत्तम रूप है। शुद्ध चेतना का आकाश घना है और ऐसा ही प्रतीत होता है।

7.83.3

मया दृष्टा तदाकाशमेव शान्तं तदाकृतिःमयेव तत्परिज्ञातं नान्यः पश्यति तत्तथा ॥ ३ ॥

mayā dṛṣṭā tadākāśameva śāntaṃ tadākṛtiḥmayeva tatparijñātaṃ nānyaḥ paśyati tattathā || 3 ||

I have seen that space as peaceful and formless. Only I have fully known it; no one else sees it as such.

मैंने उस आकाश को शान्त और निराकार देखा है। केवल मैंने ही उसे पूरी तरह से जाना है; कोई और उसे ऐसा नहीं देखता।

7.83.4

यथा नाम स कल्पान्तः स रुद्रः सा च भैरवीमायामात्रं तथा सर्वं परिज्ञातमलं मया ॥ ४ ॥

yathā nāma sa kalpāntaḥ sa rudraḥ sā ca bhairavīmāyāmātraṃ tathā sarvaṃ parijñātamalaṃ mayā || 4 ||

Just as the end of the world is called Rudra and Bhairavi, so too is the entire illusion known purely by me.

जैसे कल्पान्त को रुद्र और भैरवी कहा जाता है, वैसे ही सारी माया मुझे ही पूरी तरह से ज्ञात है।

7.83.5

चिद्व्योमैव परं शून्यं संनिवेशेन तेन तथा संलक्ष्यते नाम भैरवाकारतां गतम् ॥ ५ ॥

cidvyomaiva paraṃ śūnyaṃ saṃniveśena tena tathā saṃlakṣyate nāma bhairavākāratāṃ gatam || 5 ||

The space of pure consciousness is the supreme void. By its presence, it is thus recognized as having the form of Bhairava.

शुद्ध चेतना का आकाश परम शून्य है। इसकी उपस्थिति से, यह भैरव के रूप में पहचाना जाता है।

7.83.6

वाच्यवाचकसंबन्धं विना बोधो न जायते । यस्मात्तस्मात्त्वयि मया दृष्टमेव प्रवर्णितम् ॥ ६ ॥

vācyavācakasaṃbandhaṃ vinā bodho na jāyate | yasmāttasmāttvayi mayā dṛṣṭameva pravarṇitam || 6 ||

Without the relationship between the signifier and the signified, understanding does not arise. Therefore, what I have seen in you, I have described.

वाच्य और वाचक के संबंध के बिना बोध नहीं होता | इसलिए, जो मैंने तुममें देखा है, उसी को मैंने वर्णित किया है।

7.83.7

यदेव वाच्युपारूढमेतद्राम सदैव ते । रूढाधिभौतिकदृशः क्षणान्मायात्मतां गतम् ॥ ७ ॥

yadeva vācyupārūḍhametadrāma sadaiva te | rūḍhādhibhautikadṛśaḥ kṣaṇānmāyātmatāṃ gatam || 7 ||

Whatever is established as the meaning, O Rama, is always yours. The view of the material world, which is well-established, attains the nature of illusion in an instant.

जो कुछ भी अर्थ के रूप में स्थापित है, हे राम, वह हमेशा तुम्हारा ही है। जो भौतिक दृश्य अच्छी तरह से स्थापित है, वह एक क्षण में माया की प्रकृति को प्राप्त हो जाता है।

7.83.8

न भैरवी सा नैवासौ भैरवो नैव संक्षयः । समस्तमेव तद्भ्रान्तिमात्रं चिद्व्योम भासते ॥ ८ ॥

na bhairavī sā naivāsau bhairavo naiva saṃkṣayaḥ | samastameva tadbhrāntimātraṃ cidvyoma bhāsate || 8 ||

That Bhairavi is not real, nor is Bhairava, nor is destruction. All of it is merely an illusion, shining in the sky of consciousness.

वह भैरवी वास्तविक नहीं है, न ही भैरव, न ही विनाश। यह सब कुछ केवल एक भ्रांति है, जो चेतना के आकाश में चमक रही है।

7.83.9

स्वप्ननिर्माणपुरवत्संकल्परणवेगवत् । कथार्थसार्थरसवन्मनोराज्यविलासवत् ॥ ९ ॥

svapnanirmāṇapuravatsaṃkalparaṇavegavat | kathārthasārtharasavatmanorājyavilāsavat || 9 ||

Like a dream-created city, like the swift movement of thought, like the essence of a story, like the delight of a kingdom in the mind.

जैसे स्वप्न में बनी नगरी, जैसे विचार की तेज गति, जैसे कथा का सार, जैसे मन में राज्य का आनंद।

7.83.10

यथा स्वप्नपुरं स्वच्छे व्योम्नि मौक्तिकधीर्यथा । यथाकेशोण्ड्रकं व्योम्नि तथाऽचिद्भाति चिद्घने ॥ १० ॥

yathā svapnapuraṃ svacche vyomni mauktikadhīryathā | yathākeśoṇḍrakaṃ vyomni tathā'cidbhāti ciddhane || 10 ||

Just as a dream city appears in the clear sky, just as a pearl necklace appears in the sky, so does the non-conscious appear in the conscious.

जैसे स्वप्न में नगरी स्वच्छ आकाश में दिखाई देती है, जैसे मोती की माला आकाश में दिखाई देती है, वैसे ही अचेतन चेतन में दिखाई देता है।

7.83.11

चिन्मात्राकाशमेवाच्छं कचति स्वात्मनात्मनि । तथा नाम यदाभाति तदात्मैवं जगत्तया ॥ ११ ॥

cinmātrākāśamevācchaṃ kacati svātmanātmani | tathā nāma yadābhāti tadātmaivaṃ jagattayā || 11 ||

The pure consciousness, which is like the sky, shines by itself within itself. Similarly, when the name appears, the world is thus the self.

चिन्मात्र जो आकाश के समान है, वह स्वयं अपने आप में चमकता है | उसी प्रकार, जब नाम प्रकट होता है, तब यह जगत आत्मा ही है |

7.83.12

यथा चिद्व्योम्नि कचति स्व एवात्मा तथा पटे । तथा कचति तत्तत्र कल्पान्तानलनर्तने ॥ १२ ॥

yathā cidvyomni kacati sva evātmā tathā paṭe | tathā kacati tattatra kalpāntānalanartane || 12 ||

Just as the self shines in the sky of consciousness, so does it shine in the cloth. Similarly, it shines there in the dance of the fire at the end of the world.

जैसे आत्मा चेतना के आकाश में चमकती है, वैसे ही वह कपड़े में चमकती है | उसी प्रकार, वह संसार के अंत में अग्नि के नृत्य में चमकती है |

7.83.13

शिवयोरेवमाकारो निराकारोऽङ्ग वर्णितः । अधुना श्रृणु ते वक्ष्ये नृत्यस्यानृत्ततास्थितिम् ॥ १३ ॥

śivayorevamākāro nirākāro'ṅga varṇitaḥ | adhunā śṛṇu te vakṣye nṛtyasyānṛttatāsthitim || 13 ||

Thus, the form of Shiva is described as formless. Now, listen, I will tell you the state of the dance without dance.

इस प्रकार, शिव का रूप निराकार के रूप में वर्णित है | अब, सुनो, मैं तुम्हें नृत्य की अनृत्य स्थिति बताऊंगा |

7.83.14

चेतनं चेतनाधातोः किंचित्संस्पदनं विना । क्वचित्स्थातुं न शक्नोति वस्त्ववस्तुतया यथा ॥ १४ ॥

cetanaṃ cetanādhātoḥ kiṃcitsaṃspadanaṃ vinā | kvacitsthātuṃ na śaknoti vastvavastutayā yathā || 14 ||

Consciousness cannot exist anywhere without some association with the substratum of consciousness, just as reality and unreality.

चेतना किसी भी स्थान पर चेतना के आधार के साथ किसी न किसी संबंध के बिना नहीं रह सकती, जैसे वास्तविकता और अवास्तविकता |

7.83.15

स्वभावाच्चेतनं तस्माद्रुद्रत्वेन तथा स्थितम् । हेमेव रूपकत्वेन संनिवेशविलासिना ॥ १५ ॥

svabhāvāccetanaṃ tasmādrudratvena tathā sthitam | hemeva rūpakatvena saṃniveśavilāsinā || 15 ||

Therefore, consciousness is established in the form of Rudra by its very nature, just as gold is established in the form of ornaments with its inherent beauty.

इसलिए, चेतना अपने स्वभाव से रुद्र के रूप में स्थापित है, जैसे सोना अपनी सहज सुंदरता के साथ आभूषणों के रूप में स्थापित है |

7.83.16

यन्नाम चेतनं यत्र तदवश्यं स्वभावतः । स्पन्दधर्मि भवत्येव वस्तुता हि स्वभावजा ॥ १६ ॥

yannāma cetanaṃ yatra tadavaśyaṃ svabhāvataḥ | spandadharmi bhavatyeva vastutā hi svabhāvajā || 16 ||

Whatever is named and conscious, it inevitably becomes endowed with vibration by its very nature. Indeed, the reality is inherent in its nature.

जो कुछ भी नामित और चेतन है, वह अपने स्वभाव से अवश्य ही स्पंदन धर्मी बन जाता है। वास्तविकता तो स्वभावजन्य ही है।

7.83.17

यः स्पन्दश्चिद्धनस्यास्य शिवस्यास्य स एव नः । स्ववासनावेशवशान्नृत्यमेव विराजते ॥ १७ ॥

yaḥ spandaściddhanasyāsya śivasyāsya sa eva naḥ | svavāsanāveśavśānnṛtyameva virājate || 17 ||

That vibration of this conscious wealth, of this Shiva, is indeed ours. Due to the influence of our own impressions, it shines forth as a dance.

यह स्पंदन, इस चेतन धन का, इस शिव का, वास्तव में हमारा ही है। अपनी वासनाओं के प्रभाव से, यह नृत्य के रूप में विराजमान होता है।

7.83.18

अतः स कल्पान्तशिवो रुद्रो रौद्राकृतिर्द्रुतम्। यन्नृत्यति हि तद्विद्धि चिद्धनस्पन्दनं निजम्॥ १८॥

ataḥ sa kalpāntaśivo rudro raudrākṛtirdrutam | yannṛtyati hi tadviddhi ciddhanaspandanaṃ nijam || 18 ||

Therefore, that Shiva at the end of the aeon, Rudra with a fierce form, quickly dances. Know that this dance is the vibration of the wealth of consciousness.

इसलिए, वह कल्पांत शिव, रुद्र, भयानक रूप में, तेजी से नृत्य करता है। यह नृत्य चेतन धन के स्पंदन को जानो।

7.83.19

श्रीराम उवाच। प्रामाणिकदृशा दृश्यमिदं नास्त्येव वस्तुतः। यदेवास्तीव तत्सर्वं कल्पान्ते प्रविनश्यति॥ १९॥

śrīrāma uvāca | prāmāṇikadṛśā dṛśyamidaṃ nāstyeva vastutaḥ | yadevāstīva tatsarvaṃ kalpānte pravinaśyati || 19 ||

Shri Rama said: According to the authoritative view, this visible world does not exist in reality. Whatever exists, all of it perishes at the end of the aeon.

श्री राम ने कहा: प्रामाणिक दृष्टिकोण से, यह दृश्य जगत वास्तव में नहीं है। जो कुछ भी है, वह सब कल्पांत में नष्ट हो जाता है।

7.83.20

तत्कल्पान्तमहाशून्ये एतस्मिन्परमाम्बरे। कथं चिन्नाम वाऽचेत्यं चेता चेतति चिद्धनः॥ २०॥

tatkalpāntamahāśūnye etasminparamāmbare | kathaṃ cinnāma vā'cetyaṃ cetā cetati ciddhanaḥ || 20 ||

In that great void at the end of the aeon, in this supreme sky, how does the conscious wealth, the knower, know the conscious and the unconscious?

कल्पांत के उस महान शून्य में, इस परम आकाश में, चेतन धन, ज्ञाता, चेतन और अचेतन को कैसे जानता है?

7.83.21

श्रीवसिष्ठ उवाच एतदेव तदाप्यङ्ग द्वैतैक्याम्भोधिशान्तये यदि चिन्मात्रनभसश्चेत्यमस्ति न किंचन॥ २१॥

śrīvasiṣṭha uvāca etadeva tadāpyaṅga dvaitaikyāmbhodiśāntaye yadi cinmātranabhsaścetyamasti na kiñcana || 21 ||

Sri Vasistha said: This alone is the means for the pacification of the ocean of duality and non-duality, if there is only the sky of pure consciousness, there is nothing else.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यही द्वैत और अद्वैत के समुद्र की शान्ति का साधन है, यदि केवल चेतना का आकाश है, तो कुछ भी नहीं है।

7.83.22

न किंचिच्चेतति ततः क्वचित्किंचित्कदाचन सर्वं शान्तं दृषन्मौनं विज्ञानघनमम्बरम्॥ २२॥

na kiñciccetati tataḥ kvacitkiñcitkadācana sarvaṃ śāntaṃ dṛṣanmaunaṃ vijñānaghanamambaram || 22 ||

Nothing thinks, nothing exists anywhere at any time. Everything is peaceful, silent, and full of the sky of consciousness.

कुछ भी नहीं सोचता, कुछ भी कहीं भी कभी भी नहीं है। सब कुछ शान्त, मौन और चेतना के आकाश से भरा हुआ है।

7.83.23

यच्चेदं चेत्यते नाम तत्स्वभावोऽस्य वल्गति चित्स्वभावस्य शान्तस्य स्वसत्तायामवस्थितेः॥ २३॥

yaccedaṃ cetyate nāma tatsvabhāvo'sya valgati cittasvabhāvasya śāntasya svasattāyāmavasthiteḥ || 23 ||

Whatever is thought to exist is merely the nature of that. The nature of consciousness is peaceful, established in its own existence.

जो कुछ भी सोचा जाता है वह उसका स्वभाव है। चेतना का स्वभाव शान्त है, अपने अस्तित्व में स्थित है।

7.83.24

यथा स्वप्ने चिदेवान्तः पुरपत्तनवद्भवेत् पुरादि न तु तत्किंचिद्विज्ञानाकाशमेव तत् ॥ २४ ॥

yathā svapne cidevāntaḥ purapattanavadbhavet purādi na tu tatkiñcidvijñānākāśameva tat || 24 ||

Just as in a dream, consciousness alone appears as a city or a town, but there is nothing real, it is only the sky of consciousness.

जैसे स्वप्न में, चेतना ही एक शहर या नगर के रूप में प्रकट होती है, लेकिन वहां कुछ भी वास्तविक नहीं है, यह केवल चेतना का आकाश है।

7.83.25

आत्मनात्मनि चिच्छून्यं ज्ञात्वा च ज्ञेयमप्यलम् तथा च सर्गादारभ्य वेत्ति स्वं कचनं च तत् ॥ २५ ॥

ātmanātmani cicchūnyaṃ jñātvā ca jñeyamapyalam tathā ca sargādārabhya vetti svaṃ kacanaṃ ca tat || 25 ||

Knowing the self to be empty of consciousness, the knowable also becomes insignificant. Thus, from the beginning of creation, one knows one's own self.

आत्मा को चेतना से खाली जानकर, ज्ञेय भी अप्रासंगिक हो जाता है। इस प्रकार, सृष्टि के आरंभ से ही, एक अपने स्वयं को जानता है।

7.83.26

स्वयमन्तः कचन्ती चित्स्वभावाकाशकोटरे । क्षणकल्पजगद्भ्रान्तिं धत्ते कल्पनया स्वया ॥ २६ ॥

swayamantaḥ kacantī cittasvabhāvākāśakoṭare | kṣaṇakalpajagadbhrāntiṃ dhatte kalpanayā svayā || 26 ||

Within the space of its own nature, consciousness itself shines, and by its own imagination, it holds the fleeting illusion of the world.

अपने स्वभाव के आकाश में, चेतना स्वयं चमकती है, और अपनी कल्पना से, यह संसार की क्षणिक भ्रान्ति को धारण करती है।

7.83.27

स्वयमन्तः कचत्कान्तिश्चिदाकाशः स्वभावखे । अयं सोहमयं च त्वं करोतीत्यादिकल्पनम् ॥ २७ ॥

swayamantaḥ kacatkāntiścidākāśaḥ svabhāvakhe | ayaṃ sohamayaṃ ca tvaṃ karotītyādikalpanam || 27 ||

Within the space of its own nature, consciousness itself shines beautifully. This is the beginning of the imagination such as 'I am this' and 'You are that'.

अपने स्वभाव के आकाश में, चेतना स्वयं सुंदर रूप से चमकती है। यह 'मैं यह हूँ' और 'तुम वह हो' जैसी कल्पना की शुरुआत है।

7.83.28

तस्मान्न द्वैतमस्तीह न चैक्यं न च शून्यता । न चेतनाचेतनं वै मौनमेव न तच्च वा ॥ २८ ॥

tasmānna dvaitamastīha na caikyaṃ na ca śūnyatā | na cetanācetanaṃ vai maunameva na tacca vā || 28 ||

Therefore, there is no duality here, nor is there unity, nor is there emptiness. There is no distinction between the sentient and the insentient. There is only silence, and not even that.

इसलिए, यहाँ न द्वैत है, न एकता है, न शून्यता है। चेतन और अचेतन में कोई भेद नहीं है। यहाँ तो बस मौन है, और उससे भी कुछ नहीं।

7.83.29

न चेतति क्वचित्किंचित्कश्चिच्चेत्यात्मभावतः । तेन चेतापि नास्तीव मौनमेवावशिष्यते ॥ २९ ॥

na cetati kvacitkiñcitkaścicchetyātmabhāvataḥ | tena cetāpi nāstīva maunamevāvaśiṣyate || 29 ||

Nothing thinks anywhere due to the nature of the self. Therefore, even the thinker does not exist. Only silence remains.

आत्मभाव के कारण कहीं भी कुछ भी नहीं सोचता। इसलिए, सोचने वाला भी अस्तित्व में नहीं है। बस मौन ही शेष रहता है।

7.83.30

निर्विकल्पसमाधिर्हि सिद्धान्तः सर्ववाङ्मये । तच्च जीवदृषन्मौनं तूष्णीमेवात आस्यताम् ॥ ३० ॥

nirvikalpasamādhirhi siddhāntaḥ sarvavāṅmaye | tacca jīvadṛṣanmaunaṃ tūṣṇīmevāta āsyatām || 30 ||

Indeed, the state of nirvikalpa samadhi is the ultimate doctrine in all philosophies. That living realization of silence should be attained in stillness.

वास्तव में, निर्विकल्प समाधि की अवस्था सभी दर्शनों में परम सिद्धांत है। वह जीवन की मौन की साक्षात्कार को शांति में प्राप्त करना चाहिए।

7.83.31

कुर्वन्निजं प्रकृतमेव यथाप्रवाहमाचारजालमचलः परमार्थमौनात् ।
निर्मानमोहमदभेदमनङ्गजीवमाकाशकोशविशदाशयशान्तमास्व ॥ ३१ ॥

kurvannijaṃ prakṛtameva yathāpravāhamācārajālamacalaḥ paramārthamaunāt |
nirmānamohamadabhedamanāṅgajīvamākāśakośaviśadāśayaśāntamāsv || 31 ||

Performing one's own duties as they come naturally, steadfast in the practice of righteousness, silent in the ultimate truth, free from pride, delusion, and duality, pure in heart, and peaceful in the sky-like consciousness.

अपने कर्तव्यों को प्राकृतिक रूप से निभाते हुए, धर्म के अभ्यास में अचल, परम सत्य में मौन, अहंकार, मोह और द्वैत से मुक्त, हृदय में शुद्ध और आकाश-जैसे चेतना में शांत।

Chapter 84

7.84.1

श्रीराम उवाच । अनन्तरं मुने ब्रूहि काली किमिव नृत्यति । किं शूर्पफलकुद्दालमुसलादिस्रजाऽऽवृता ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | anantaraṃ mune brūhi kālī kimiva nṛtyati | kiṃ śūrpaphalakuddālamusalādisrajā'āvṛtā || 1 ||

Shri Rama said: O Sage, tell me, how does Kali dance? Why is she adorned with a winnowing basket, a spade, a pestle, and other such ornaments?

श्री राम ने कहा: हे मुनि, बताओ, काली कैसे नृत्य करती है? वह चाज, फावड़ा, मूसल और अन्य आभूषणों से क्यों सजी है?

7.84.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । स भैरवश्चिदाकाशः शिव इत्यभिधीयते । अनन्यां तस्य तां विद्धि स्पन्दशक्तिं मनोमयीम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sa bhairavaścidākāśaḥ śiva ityabhidhīyate | ananyāṃ tasya tāṃ viddhi spandaśaktiṃ manomayīm || 2 ||

Shri Vasistha said: That Bhairava, the space of consciousness, is called Shiva. Know that his unique power is the vibratory energy, which is mental in nature.

श्री वसिष्ठ ने कहा: वह भैरव, चेतना का आकाश, शिव कहलाता है। उसकी अनन्य शक्ति को जानो, जो कि मानसिक स्वभाव वाली स्पंद शक्ति है।

7.84.3

यथैकं पवनस्पन्दमेकमौष्ण्यानलौ यथा । चिन्मात्रं स्पन्दशक्तिश्च तथैवैकात्म सर्वदा ॥ ३ ॥

yathaikaṃ pavanaspadam ekamauṣṇyānalau yathā | cinmātraṃ spandaśaktiśca tathaivaikātma sarvadā || 3 ||

Just as there is one vibration of the wind and one heat of the fire, so too, the pure consciousness and the vibratory energy are always one and the same.

जैसे एक हवा की स्पंदन होती है और एक आग की गर्मी, वैसे ही, शुद्ध चेतना और स्पंद शक्ति हमेशा एक ही होती हैं।

7.84.4

स्पन्देन लक्ष्यते वायुर्वह्निरौष्ण्येन लक्ष्यते । चिन्मात्रममलं शान्तं शिव इत्यभिधीयते ॥ ४ ॥

spandena lakṣyate vāyurvahnirauṣṇyena lakṣyate | cinmātramamalaṃ śāntaṃ śiva ityabhidhīyate || 4 ||

The wind is perceived by its vibration, and fire is perceived by its heat. The pure, stainless, and peaceful consciousness is called Shiva.

हवा अपनी स्पंदन से जानी जाती है, और आग अपनी गर्मी से जानी जाती है। शुद्ध, निर्मल और शांत चेतना को शिव कहा जाता है।

7.84.5

तत्स्पन्दमायाशक्त्यैव लक्ष्यते नान्यथा किल । शिवं ब्रह्म विदुः शान्तमवाच्यं वाग्विदामपि ॥ ५ ॥

tatspandamāyāśaktyaiva lakṣyate nānyathā kila | śivaṃ brahma viduḥ śāntamavācyaṃ vāgvidāmapi || 5 ||

That vibratory energy, which is the power of illusion, is perceived in no other way. The wise know Shiva as Brahman, the peaceful and inexpressible, even among those who are knowledgeable in speech.

वह स्पंद शक्ति, जो माया की शक्ति है, किसी अन्य तरीके से नहीं जानी जाती। बुद्धिमान लोग शिव को ब्रह्म, शांत और अवाच्य, यहां तक कि वाणी के ज्ञाताओं में भी जानते हैं।

7.84.6

स्पन्दशक्तिस्तदिच्छेदं दृश्याभासं तनोति सा । साकारस्य नरस्येच्छा यथा वै कल्पनापुरम् ॥ ६ ॥

spandaśaktistadicchedaṃ dṛśyābhāsaṃ tanoti sā | sākārasya narasyecchā yathā vai kalpanāpuram || 6 ||

The power of vibration, which is the will of that (Supreme Consciousness), projects the appearance of the perceivable world. Just as the desire of an embodied person (creates) a city of imagination.

स्पन्द शक्ति, जो उसकी इच्छा है, दृश्य जगत का आभास प्रकट करती है | जैसे कि एक शरीर वाले व्यक्ति की इच्छा कल्पना का नगर बनाती है |

7.84.7

करोत्येव शिवस्येच्छा करोतीदमनाकृतेः । सैषा चितिरिति प्रोक्ता जीवनाज्जीवितैषिणाम् ॥ ७ ॥

karotyeva śivasyaicchā karotīdamanākṛteḥ | saiṣā citiriti proktā jīvanājjīviteṣiṇām || 7 ||

The will of Shiva indeed does this, which is uncreated. This is called 'Chiti,' the life of those who desire to live.

शिव की इच्छा वास्तव में यह करती है, जो अनाकृत (अनिर्मित) है। यह 'चिति' कहलाती है, जो जीने की इच्छा रखने वालों का जीवन है।

7.84.8

प्रकृतित्वेन सर्गस्य स्वयं प्रकृतितां गता । दृश्याभासानुभूतानां करणात्सोच्यते क्रिया ॥ ८ ॥

prakṛtitvena sargasya svayaṃ prakṛtitāṃ gatā | dṛśyābhāsānubhūtānāṃ karṇātsochyate kriyā || 8 ||

By the nature of creation, it has itself become the nature. From the experience of the perceivable appearance, the action is considered.

सृष्टि की प्रकृति से, यह स्वयं प्रकृति बन गई है। दृश्य आभास के अनुभव से, क्रिया समझी जाती है।

7.84.9

वडवाग्निशिखाकाराच्छोष्याच्छुष्केति कथ्यते । चण्डित्वाच्चण्डिका प्रोक्ता सोत्पलोत्पलवर्णतः ॥ ९ ॥

vaḍavāgniśikhākārācchuṣyācchuṣketi kathyate | caṇḍitvāccaṇḍikā proktā sotpalotpalavarṇataḥ || 9 ||

She is called 'dry' because she dries up like the flame of a mare's fire. Because of her fierceness, she is called 'Chandika,' and she is described as having the color of a blue lotus.

वह सूखी कहलाती है क्योंकि वह घोड़ी की अग्नि की लपट की तरह सूखा देती है। अपनी उग्रता के कारण वह 'चण्डिका' कहलाती है, और वह नीले कमल के रंग की वर्णित है।

7.84.10

जया जयैकनिष्ठत्वात्सिद्धा सिद्धिसमाश्रयात् । जयन्ती च जया प्रोक्ता विजया विजयाश्रयात् ॥ १० ॥

jayā jayaikanisthtavātsiddhā siddhisamāśrayāt | jayantī ca jayā proktā vijayā vijayāśrayāt || 10 ||

She is called 'Jaya' because she is devoted to victory. She is called 'Siddha' because she is the abode of perfection. She is called 'Jayanti' because she is the embodiment of victory, and she is called 'Vijaya' because she is the abode of victory.

वह 'जया' कहलाती है क्योंकि वह विजय में निष्ठा रखती है। वह 'सिद्धा' कहलाती है क्योंकि वह सिद्धि की आश्रय है। वह 'जयन्ती' कहलाती है क्योंकि वह विजय का स्वरूप है, और वह 'विजया' कहलाती है क्योंकि वह विजय की आश्रय है।

7.84.11

प्रोक्ता पराजिता वीर्याद्दुर्गा दुर्ग्रहरूपतः । ओंकारसारशक्तित्वादुमेति परिकीर्तिता ॥ ११ ॥

proktā parājitā vīryāddurgā durgraharaūpatāḥ | oṃkārasāraśaktitvādumeti parikīrtitā || 11 ||

She is known as Uma because she is proclaimed as the unconquerable, the embodiment of fortitude, and the essence of the sacred syllable 'Om'.

वह उमा के नाम से जानी जाती है क्योंकि वह अजेय, धैर्य का प्रतीक और ओंकार की आत्मा है।

7.84.12

गायत्री गायनात्मत्वात्सावित्री प्रसवस्थितेः । सरणात्सर्वदृष्टीनां कथितैषा सरस्वती ॥ १२ ॥

gāyatrī gāyanātmātvātsāvitrī prasavasthiteḥ | saraṇātsarvadṛṣṭīnāṃ kathitaiṣā sarasvatī || 12 ||

She is known as Saraswati because she is the essence of the Gayatri mantra, the source of creation, and the refuge of all knowledge.

वह सरस्वती के नाम से जानी जाती है क्योंकि वह गायत्री मंत्र की आत्मा, सृष्टि का स्रोत और सभी ज्ञान की शरण है।

7.84.13

गौरी गौराङ्गदेहत्वाद्भवदेहानुषङ्गिणी । सुप्तानामथ बुद्धानाममात्रोच्चारणाद्धृदि ॥ १३ ॥

gaurī gaurāṅgadehatvādbhavadehānuṣaṅgiṇī | suptānāmatha buddhānāmamātroccāraṇāddhṛdi || 13 ||

She is known as Gauri because of her fair complexion and her association with the body of Shiva. She resides in the hearts of both the sleeping and the awakened through the utterance of the syllable 'Om'.

वह गौरी के नाम से जानी जाती है क्योंकि उनका रंग गौर है और वह शिव के शरीर से जुड़ी हुई है। वह सोए हुए और जागे हुए दोनों के हृदय में 'ओं' अक्षर के उच्चारण से निवास करती है।

7.84.14

नित्यं त्रैलोक्यभूतानामुमेतीन्दुकलोच्यते । शिवयोर्व्योमरूपत्वादसितं लक्ष्यते वपुः ॥ १४ ॥

nityaṃ trailokyabhūtānāmumetīndukalocyate | śivayorvyomarūpatvādasitaṃ lakṣyate vapuḥ || 14 ||

She is always known as Uma, the moonlight, among the beings of the three worlds. Due to her ethereal form with Shiva, her body appears dark.

वह हमेशा तीनों लोकों के प्राणियों में उमा, चंद्रमा के प्रकाश के रूप में जानी जाती है। शिव के साथ उनके आकाशीय रूप के कारण, उनका शरीर काला दिखाई देता है।

7.84.15

नभो हि मांसमेताभ्यां दृष्टिदृष्टं विलोक्यते । अस्ति नभो नभस्येव तौ नभोनभसि स्थितौ ॥ १५ ॥

nabho hi māṃsametābhyāṃ dṛṣṭidṛṣṭaṃ vilokyate | asti nabho nabhasyeva tau nabhonabhasi sthitau || 15 ||

The sky is indeed seen as flesh by these two (Shiva and Shakti). The sky exists as the sky itself, and they are situated in the sky and the sky.

आकाश वास्तव में इन दोनों (शिव और शक्ति) द्वारा मांस के रूप में देखा जाता है। आकाश आकाश के रूप में ही मौजूद है, और वे आकाश और आकाश में स्थित हैं।

7.84.16

नभोनिभावभूताङ्गावच्छौ व्योम्न इवाग्रजौ । हस्तपादास्यमूर्ध्नो यद्बहुत्वाल्पत्वभेदतः ॥ १६ ॥

nabhonibhāvabhūtāṅgāvacchau vyomna ivāgrajau | hastapādāsyamūrdhno yadvahutvālpatvabhedataḥ || 16 ||

The two elder ones, resembling the sky, are like the limbs of the universe | The differences in the size of the hands, feet, face, and head || 16 ||

दोनों बड़े भाई आकाश के समान हैं, जैसे ब्रह्मांड के अंग | हाथ, पैर, मुख और मस्तक के आकार में अंतर || १६ ||

7.84.17

नानात्वं हलशूर्पादिस्रग्धरत्वं च तच्छृणु । सा हि क्रिया भगवती परिस्पन्दैकरूपिणी ॥ १७ ॥

nānātvaṃ halaśūrpādisragdharaṃ ca tacchṛṇu | sā hi kriyā bhagavatī parispandairūpiṇī || 17 ||

Listen to the diversity of the plow, winnowing fan, and other tools | That action is the divine, manifesting as a single vibration || 17 ||

हल, शूर्प और अन्य औजारों की विविधता सुनो | वह क्रिया भगवती है, एक स्पंद के रूप में प्रकट होती है || १७ ||

7.84.18

दद्यात्स्नायाच्च जुहुयादित्याद्यग्रशरीरिणी । चितिशक्तिरनाद्यन्ता तथा भातात्मनात्मनि ॥ १८ ॥

dadyātsnāyācca juhuyādityādyagraśarīriṇī | citiśaktiranādyantā tathā bhātātmanātmani || 18 ||

She gives, bathes, and offers, thus she is the foremost embodied one | The power of consciousness, without beginning or end, thus she shines in the self || 18 ||

वह देती है, स्नान करती है और अर्पण करती है, इसलिए वह अग्र शरीरधारी है | चेतना की शक्ति, जिसका न आदि है न अंत, वह आत्मा में चमकती है || १८ ||

7.84.19

साकाशरूपिणी कान्ता दृश्यश्रीः स्पन्दधर्मिणी । देव्यास्तस्या हि याः काल्या नानाभिनयनर्तनाः ॥ १९ ॥

sākāśarūpiṇī kāntā dṛśyaśrīḥ spandadharmiṇī | devyāstasyā hi yāḥ kālyā nānābhinayanartanāḥ || 19 ||

She is beautiful like the sky, visible splendor, possessing vibration | The various gestures and dances of that goddess are indeed timeless || 19 ||

वह आकाश के समान सुंदर है, दृश्य शोभा, स्पंद से युक्त | उस देवी के विभिन्न अभिनय और नृत्य वास्तव में कालातीत हैं || १९ ||

7.84.20

ता इमा ब्रह्मणः सर्गजरामरणरीतयः । क्रियासौ ग्रामनगरद्वीपमण्डलमालिकाः ॥ २० ॥

tā imā brahmaṇaḥ sargajarāmaraṇarītayaḥ | kriyāsau grāmanagaradvīpamaṇḍalamālikāḥ || 20 ||

These are the ways of creation, aging, and death of Brahma | That action is the garland of villages, cities, islands, and continents || 20 ||

ये ब्रह्मा के सृष्टि, जीर्णता और मृत्यु के मार्ग हैं | वह क्रिया गाँवों, शहरों, द्वीपों और महाद्वीपों की माला है || २० ||

7.84.21

स्पन्दान्करोति धत्तेऽन्तः कल्पितावयवात्मिका । काली कमलिनी काली क्रिया ब्रह्माण्डकालिका ॥ २१ ॥

spandānkaroti dhatte'ntaḥ kalpitāvayavātmikā | kālī kamalinī kālī kriyā brahmāṇḍakālikā || 21 ||

She causes vibration and holds within the imagined parts of the universe | Kali, Kamalini, Kali, the action of the universe || 21 ||

वह स्पंदन उत्पन्न करती है और कल्पित अवयवों को अंतः में धारण करती है | काली, कमलिनी, काली, ब्रह्माण्ड की क्रिया || २१ ||

7.84.22

धत्ते स्वावयवीभूतां दृश्यलक्ष्मीमिमां हृदि । न कदाचन चिद्देवी निर्देश्यावयवा क्वचित् ॥ २२ ॥

dhatte svāvayavībhūtāṃ dṛśyalakṣmīmimāṃ hṛdi | na kadācana ciddevī nirdeśyāvayavā kvacit || 22 ||

She holds this visible beauty in her heart as her own parts | Never is the goddess of consciousness without describable parts anywhere || 22 ||

वह इस दृश्य सुंदरता को अपने हृदय में अपने अवयवों के रूप में धारण करती है | चेतना की देवी कभी भी कहीं भी वर्णनीय अवयवों के बिना नहीं होती || २२ ||

7.84.23

शिवत्वाव्यतिरेकेण शिवतैवं विदृश्यताम् । यथाङ्ग शून्यता व्योम्नः स्पन्दनं मातरिश्वनः ॥ २३ ॥

śivatvāvyatirekeṇa śivataivaṃ vidṛśyatām | yathāṅga śūnyatā vyomnaḥ spandanaṃ mātariśvanaḥ || 23 ||

May you see Shiva without difference | Just as the emptiness of the sky and the vibration of the wind || 23 ||

शिव को भेद के बिना देखें | जैसे आकाश की शून्यता और वायु का स्पंदन || २३ ||

7.84.24

ज्योत्स्नायाश्चेत्यमेवं हि दृश्यमङ्गं चितेः क्रिया । शिवं शान्तमनायासमव्ययं विद्धि निर्मलम् ॥ २४ ॥

jyotsnāyāścetyamevaṃ hi dṛśyamāṅgaṃ citeḥ kriyā | śivaṃ śāntamanāyāsamavyayaṃ viddhi nirmalam || 24 ||

Thus, the visible part of consciousness is like the light of the moon | Know Shiva to be peaceful, effortless, imperishable, and pure || 24 ||

इस प्रकार, चेतना का दृश्य अंग चंद्रमा की ज्योति के समान है | शिव को शांत, अनायास, अविनाशी और निर्मल जानें || २४ ||

7.84.25

न मनागपि तत्रास्ति स्तैमित्यं स्पन्दधर्मता । सा क्रियैव तथारूपा सती बोधवशाद्यदा ॥ २५ ॥

na manāgapi tatrāsti staimityaṃ spandadharmatā | sā kriyaiva tathārūpā satī bodhavashādyadā || 25 ||

There is not even a little bit of inertia in that vibrational nature | That action itself is of such a form when it is under the influence of consciousness || 25 ||

उस स्पंदन स्वभाव में थोड़ी सी भी जड़ता नहीं है | वह क्रिया स्वयं ऐसे रूप की होती है जब वह चेतना के प्रभाव में होती है || २५ ||

7.84.26

व्यावृत्त्यैव तथैवास्ते शिव इत्युच्यते तदा । चितिशक्तेः क्रिया देव्याः प्रतिस्थानं यदात्मनि ॥ २६ ॥

vyāvṛttyaiva tathaivāste śiva ityucyate tadā | citiśakteḥ kriyā devyāḥ pratisthānaṃ yadātmani || 26 ||

Shiva is said to exist in that state of complete manifestation when the divine power of consciousness is established in the self.

जब चेतना की दिव्य शक्ति आत्मा में स्थापित होती है, तब शिव को पूर्ण व्यक्तित्व की अवस्था में माना जाता है।

7.84.27

यथाभूतस्थितेरेव तदेव शिव उच्यते । देव्याः क्रियायाश्चिच्छक्तेः स्वरूपिण्या महाकृतेः ॥ २७ ॥

yathābhūtasthiter eva tadeva śiva ucyate | devyāḥ kriyāyaścicchakteḥ svarūpiṇyā mahākṛteḥ || 27 ||

Shiva is said to be the very essence of the true state of existence, which is the great action of the divine power of consciousness.

शिव उस सच्चे अस्तित्व की स्थिति का ही सार है, जो चेतना की दिव्य शक्ति का महान कार्य है।

7.84.28

कल्पिताकारधारिण्या अनन्यावयवा इमे । सर्गाः सज्जनतावर्गा लोका आलोकभास्वराः ॥ २८ ॥

kalpitākāradhāriṇyā ananyāvayavā ime | sargāḥ sajjantāvargā lokā ālokabhāsvarāḥ || 28 ||

These creations, which are parts of the indivisible whole, are bearers of imagined forms. They are worlds illuminated by the light of consciousness.

ये सृष्टियाँ, जो अविभाज्य पूर्ण के अंग हैं, कल्पित रूपों के धारण करती हैं। ये चेतना के प्रकाश से प्रकाशित लोक हैं।

7.84.29

सद्वीपसागराः पृथ्व्यः सवनावनयोऽद्रयः । साङ्गोपाङ्गास्त्रयो वेदाः सविद्यास्थानगीतयः ॥ २९ ॥

sadvīpasāgarāḥ pṛthvyaḥ savanāvanayo'drayaḥ | sāṅgopāṅgāstrayo vedāḥ savidyāsthānagītayaḥ || 29 ||

These are the islands, oceans, earths, forests, mountains, the three Vedas with their limbs and sub-limbs, and the songs of knowledge.

ये द्वीप, सागर, पृथ्वी, वन, पर्वत, तीनों वेद उनके अंगों और उपांगों के साथ, और ज्ञान के गीत हैं।

7.84.30

सविधिप्रतिषेधार्थाः सशुभाशुभकल्पनाः । सदक्षिणाग्नयो यज्ञाः पुरोडाशाद्यशंसिनः ॥ ३० ॥

savidhipratiṣedhārthāḥ saśubhāśubhakalpanāḥ | sadakṣiṇāgnyo yajñāḥ puroḍāśādyaśaṃsinaḥ || 30 ||

These are the rituals with their prescriptions and prohibitions, the concepts of good and evil, the sacred fires, the sacrifices, and the praises of offerings.

ये उनके विधि और प्रतिषेध के साथ अनुष्ठान, शुभ और अशुभ की कल्पनाएँ, पवित्र अग्नियाँ, यज्ञ, और भेंट की प्रशंसा हैं।

7.84.31

भूपालोलूखलवृसीशूर्पयूपादिसयुताःसंग्रामाः सायुधग्रामाः सशूलशरशक्तयः ॥ ३१ ॥

bhūpālolūkhalavṛsīśūrpayūpādisayutāḥsaṃgrāmāḥ sāyudhagrāmāḥ saśūlaśaraśaktayaḥ || 31 ||

The battles were equipped with kings, mortars, ploughs, heroes, chariots, and other weapons, and were fierce with weapons, villages, and arrows.

युद्ध राजाओं, ओखलियों, हलों, वीरों, रथों और अन्य हथियारों से सुसज्जित थे, और हथियारों, गांवों और तीरों से भयंकर थे।

7.84.32

सभुशुण्डीगदाप्रासहयेभभटभासुराःज्ञातयो भूतसंघानां चतुर्दश सुरादिकाःचतुर्दशाब्धिद्वीपोर्व्यस्तथा लोकाश्चतुर्दश ॥ ३२ ॥

sabhuśuṇḍīgadāprāsahayebhabhaṭabhāsurāḥjñātayo bhūtasaṃghānāṃ caturdaśa surādikāḥcaturdaśābdhidvīporvyastathā lokāścaturdaśa || 32 ||

The known ones among the assembly of beings are fourteen, including the gods and others, and the worlds are also fourteen, including the oceans and islands.

भूतों की सभा में ज्ञात चौदह हैं, जिनमें देवता और अन्य शामिल हैं, और लोक भी चौदह हैं, जिनमें समुद्र और द्वीप शामिल हैं।

7.84.33

श्रीराम उवाचचितेः कल्पाः शरीरिण्याः सर्गा येऽङ्गे स्थितास्तथाते किमात्मनि तिष्ठन्ति उतासत्या वदेति भो ॥ ३३ ॥

śrīrāma uvācaciteḥ kalpāḥ śarīriṇyāḥ sargā ye'ṅge sthitāstathāte kimātmani tiṣṭhanti utāsatyā vadeti bho || 33 ||

Sri Rama said: The creations that are situated in the body of consciousness, do they abide in the Self or are they unreal? Please tell me, O Lord.

श्री राम ने कहा: चेतना के शरीर में स्थित सृष्टियाँ, क्या वे आत्मा में रहती हैं या असत्य हैं? कृपया बताएँ, हे भो।

7.84.34

श्रीवसिष्ठ उवाचरामासौ किल चिच्छक्तिस्तया यच्चोदितं तथातत्प्रचेतितमेवातः सत्यं चेदमिवाखिलम् ॥ ३४ ॥

śrīvasiṣṭha uvācarāmāsau kila cicchaktistayā yaccoditaṃ tathātatpracetitamevātaḥ satyaṃ cedamivākhilam || 34 ||

Sri Vasistha said: Indeed, Rama, the power of consciousness is that by which everything is impelled. Thus, whatever is perceived by that is truly this entire universe.

श्री वसिष्ठ ने कहा: निश्चय ही, हे राम, चेतना की शक्ति वह है जिससे सब कुछ प्रेरित होता है। इसलिए, जो कुछ भी उससे जाना जाता है, वह सचमुच यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड है।

7.84.35

तत्प्रतिबिम्बितं बाह्यान्मुखुरप्रतिबिम्बवत्सत्यं तदन्तरेवास्ति चितेर्नासत्यमर्थतः ॥ ३५ ॥

tatpratibimbitaṃ bāhyānmukurapratibimvavatsatyaṃ tadantarevāsti citernāsatyamarthataḥ || 35 ||

The reflection of that is like the reflection of an external face in a mirror. The truth exists within that, not unreal in reality.

उसका प्रतिबिम्ब एक दर्पण में बाहरी चेहरे के प्रतिबिम्ब की तरह है। सत्य उसमें ही है, वास्तविकता में असत्य नहीं है।

7.84.36

चिद्रूपस्य तथाप्यन्तः सत्संकल्पपुरं भवेत् । दृढध्यानाद्विशुद्धायाश्चितेर्भवतु सा कथम् ॥ ३६ ॥

cidrūpasya tathāpyantaḥ satsaṅkalpapuraṃ bhavet | dṛḍadhyānādviśuddhāyāściterbhavatu sā katham || 36 ||

Even though the form of consciousness is pure, within it, the city of true intentions arises. How can that be from the firm meditation of a purified mind?

चेतना का रूप शुद्ध होते हुए भी, उसके अंदर सच्चे संकल्पों का नगर उत्पन्न होता है। एक शुद्ध मन के दृढ़ ध्यान से वह कैसे हो सकता है?

7.84.37

आदर्शेष्वथवा स्वप्ने सर्गः संकल्पनेऽस्तु वा । स आत्मन्यर्थकारित्वात्सत्य इत्येव मे मतिः ॥ ३७ ॥

ādarśeṣvathavā svapne sargaḥ saṅkalpane'stu vā | sa ātmanyarthakāritvātsatya ityeva me matiḥ || 37 ||

Whether in mirrors or in dreams, creation in imagination may exist. That, due to its purposeful action in the self, is truly real, this is my belief.

चाहे दर्पणों में हो या स्वप्नों में, कल्पना में सृष्टि हो सकती है। वह, अपने उद्देश्यपूर्ण कार्य के कारण, सचमुच वास्तविक है, यह मेरा विश्वास है।

7.84.38

मम नार्थाय स इति वक्षि चेत्तत्कथं भवेत् । देशान्तरगताः सर्वे भवन्त्यर्थाय संप्रति ॥ ३८ ॥

mama nārthāya sa iti vakṣi cet tat kathaṃ bhavet | deśāntaragatāḥ sarve bhavantyarthāya saṃprati || 38 ||

If you say that it is not for my benefit, how can that be? Currently, all those who are in other places are for the purpose.

अगर आप कहते हैं कि यह मेरे लाभ के लिए नहीं है, तो यह कैसे हो सकता है? वर्तमान में, जो लोग दूसरी जगहों पर हैं, वे सभी उद्देश्य के लिए हैं।

7.84.39

यथा देशान्तरग्रामस्तद्गतस्यार्थकृद्भवेत् । सर्वे तथैव तद्भावं गतस्यार्थविनिश्चयात् ॥ ३९ ॥

yathā deśāntaragrāmas tadgatasyārthakṛdbhavet | sarve tathaiva tadbhāvaṃ gatasyārthaviniścayāt || 39 ||

Just as a village in another place serves the purpose of one who goes there, similarly, all those who have attained that state serve the purpose due to the determination of the goal.

जैसे एक दूसरी जगह का गाँव उसके लिए उद्देश्यपूर्ण होता है जो वहाँ जाता है, उसी तरह, जो लोग उस अवस्था को प्राप्त होते हैं, वे लक्ष्य के निर्धारण के कारण उद्देश्यपूर्ण होते हैं।

7.84.40

यद्यथाभूतसर्वार्थक्रियाकारि प्रदृश्यते । तत्सत्यमात्मनोऽन्यस्य नैवातत्तामुपेयुषः ॥ ४० ॥

yadyathābhūtasarvārthakriyākāri pradṛśyate | tatsatyamātmano'nyasya naivātattāmupeyuṣaḥ || 40 ||

That which is seen to perform all actions according to its true nature is truly real for the self and not for others who do not attain that state.

जो अपनी सच्ची प्रकृति के अनुसार सभी कार्यों को करता हुआ दिखाई देता है, वह आत्मा के लिए सचमुच वास्तविक है, और उस अवस्था को प्राप्त न करने वालों के लिए नहीं।

7.84.41

तस्माच्चिच्छक्तिकोशस्थाः सर्वाः सर्गपरम्पराः । सत्य आत्मेति तद्भावं गतस्यान्यस्य नाखिलाः ॥ ४१ ॥

tasmācchicchaktikośasthāḥ sarvāḥ sargaparamparāḥ| satya ātmeti tadbhāvaṃ gatasyānyasya nākhilāḥ || 41 ||

Therefore, all the series of creations residing in the consciousness-power sheath are true, and that state is the Self. Others who have not attained that state are not complete.

इसलिए, चेतना-शक्ति के कोश में रहने वाली सभी सृष्टि की परम्पराएँ सत्य हैं, और वह स्थिति आत्मा है। जो उस स्थिति को प्राप्त नहीं हुए हैं, वे पूर्ण नहीं हैं।

7.84.42

भूतभव्यभविष्यस्थाः संकल्पस्वप्नपूर्गणाः । सर्वे सत्याः परं तत्त्वं सर्वात्मा कथमन्यथा ॥ ४२ ॥

bhūtabhavyabhaviṣyasthāḥ saṃkalpasvapnapūrgaṇāḥ| sarve satyāḥ paraṃ tattvaṃ sarvātmā kathamanyathā || 42 ||

All the entities that exist in the past, present, and future, including thoughts, dreams, and the city of dreams, are true. How can the supreme reality, the universal Self, be otherwise?

भूत, भव्य और भविष्य में स्थित सभी वस्तुएँ, संकल्प, स्वप्न और स्वप्न नगरी सहित, सत्य हैं। परम तत्त्व, सर्वात्मा कैसे अन्यथा हो सकता है?

7.84.43

प्राप्यन्ते योगसिद्धेन तद्भावं तु गतेन ते । अन्येन पर्वता ग्रामा गत्या देशान्तरे यथा ॥ ४३ ॥

prāpyante yogasiddhena tadbhāvaṃ tu gatena te| anyena parvatā grāmā gatyā deśāntare yathā || 43 ||

That state is attained by one who is accomplished in yoga, just as one reaches a distant place by traveling. Others, like mountains and villages, remain stationary.

वह स्थिति योग में सिद्ध व्यक्ति द्वारा प्राप्त होती है, जैसे किसी दूरस्थ स्थान तक यात्रा करके पहुँचा जाता है। अन्य, जैसे पर्वत और गाँव, स्थिर रहते हैं।

7.84.44

चालितस्य यथा गाढनिद्रस्य स्वप्नपत्तनम् । न लुठत्येव लुठितमित्यप्यनुमतं स्फुटम् ॥ ४४ ॥

cālitasya yathā gāḍhanidrasya svapnapattanam| na luṭhatyeva luṭhitamityapyanumataṃ sphuṭam || 44 ||

Just as the dream city of one who is deeply asleep does not waver, even though it is perceived as wavering, so it is clearly accepted.

जैसे गहरी नींद में सोये हुए व्यक्ति का स्वप्न नगर कांपता नहीं है, भले ही वह कांपता हुआ दिखाई देता हो, वैसे ही यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया जाता है।

7.84.45

तथा चलन्त्या लुठितं तस्या देहगतं जगत् । न लुठत्येव मुकुरप्रतिबिम्बमिव स्थितम् ॥ ४५ ॥

tathā calantyā luṭhitaṃ tasyā dehagataṃ jagat| na luṭhatyeva mukurapratibimbamiva sthitam || 45 ||

Similarly, the world that is perceived as wavering due to the movement of the body does not actually waver, just like the reflection in a mirror remains stable.

इसी प्रकार, शरीर की गतिविधि के कारण जो जगत कांपता हुआ दिखाई देता है, वास्तव में वह कांपता नहीं है, जैसे दर्पण में प्रतिबिम्ब स्थिर रहता है।

7.84.46

स त्रैलोक्यमहारम्भः सत्योऽपि भ्रान्तिमात्रकम् । भ्रान्तिमात्रस्य के नाम लुठनालुठने वद ॥ ४६ ॥

sa trailokyamahārambhaḥ satyo'pi bhrāntimātrakam | bhrāntimātrasya ke nāma luṭhanāluṭhane vada || 46 ||

That great endeavor of the three worlds, though true, is merely an illusion | Of mere illusion, what is the name, tell me the repeated rising and falling || 46 ||

वह तीनों लोकों का महान उद्यम, यद्यपि सत्य है, केवल भ्रम है | केवल भ्रम का नाम क्या है, मुझे बताओ उठना-बैठना || ४६ ||

7.84.47

कदा स्वप्नपुरं सत्यं कदा स्वप्नपुरं मुधा । कदा स्वप्नपुरं भग्नं कदा स्वप्नपुरं स्थितम् ॥ ४७ ॥

kadā svapnapuraṃ satyaṃ kadā svapnapuraṃ mudhā | kadā svapnapuraṃ bhagnaṃ kadā svapnapuraṃ sthitam || 47 ||

When is the dream city true, when is the dream city foolish | When is the dream city broken, when is the dream city stable || 47 ||

कब स्वप्नपुर सत्य है, कब स्वप्नपुर मूर्खतापूर्ण है | कब स्वप्नपुर टूटा हुआ है, कब स्वप्नपुर स्थिर है || ४७ ||

7.84.48

भ्रान्तित्वं केवलं सैव दृश्यश्रीर्यावदग्रगा । त्वं विद्धीमामपि भ्रान्तिं जगल्लक्ष्मीमवास्तवीम् ॥ ४८ ॥

bhrāntitvaṃ kevalaṃ saiva dṛśyaśrīryāvadagragā | tvaṃ viddhīmāmapi bhrāntiṃ jagallakṣmīmavāstavīm || 48 ||

That illusion itself is merely illusion, as long as it is perceptible | Know me also as illusion, the unreal wealth of the world || 48 ||

वह भ्रम स्वयं केवल भ्रम है, जब तक वह दृश्यमान है | मुझे भी भ्रम के रूप में जानो, संसार की अवास्तविक समृद्धि || ४८ ||

7.84.49

संकल्पने मनोराज्ये स्वप्ने संकथने भ्रमे । यथापुरानुभवनं त्रैलोक्यानुभवं तथा ॥ ४९ ॥

saṃkalpane manorājye svapne saṃkathane bhrame | yathāpurānubhavanaṃ trailokyānubhavaṃ tathā || 49 ||

In imagination, in the kingdom of the mind, in dreams, in stories, in illusions | The experience of the past is like the experience of the three worlds || 49 ||

कल्पना में, मन के राज्य में, स्वप्न में, कथाओं में, भ्रम में | अतीत का अनुभव तीनों लोकों के अनुभव के समान है || ४९ ||

7.84.50

अहमिति जगदिति नान्तभ्रान्तिरियं प्रकचतीव चितः । परमाकाशकृशाख्या शाम्यति निपुणं परिज्ञाता ॥ ५० ॥

ahamiti jagaditi nāntabhrāntiriyam prakacatīva citah | paramākāśakṛśākhyā śāmyati nipuṇaṃ parijñātā || 50 ||

The endless illusion of 'I' and 'the world' shines forth from the mind | Known as the supreme space, it subsides skillfully || 50 ||

'मैं' और 'संसार' का अनंत भ्रम मन से चमकता है | परम आकाश के रूप में जाना जाता है, यह कुशलतापूर्वक शांत हो जाता है || ५० ||

Chapter 85

7.85.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति नृत्यति सा देवी दीर्घदोर्दण्डमण्डलैः । परिस्पन्दात्मकैर्व्योम कुर्वाणा घनकाननम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti nṛtyati sā devī dīrghadordaṇḍamaṇḍalaiḥ | parispandātmakairvyoma kurvāṇā ghanakānanam || 1 ||

Shri Vasistha said: Thus, the goddess dances with long staffs and circles, creating a dense forest in the sky with vibrating movements.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार, वह देवी लंबी डंडों और चक्रों के साथ नृत्य करती है, कंपन से आकाश में घना वन बनाती है।

7.85.2

क्रियासौ नृत्यति तथा चितिशक्तिरनामया । अस्या विभूषणं शूर्पकुडालपटलादिकम् ॥ २ ॥

kriyāsau nṛtyati tathā citiśaktiranāmayā | asyā vibhūṣaṇaṃ śūrpakuḍālapatalādikam || 2 ||

Similarly, the power of consciousness dances with action, adorned with tools like winnowing baskets, hoes, and pots.

इसी प्रकार, चेतना की शक्ति क्रिया के साथ नृत्य करती है, जो सूप और कुडाल जैसे उपकरणों से सजी है।

7.85.3

शरशक्तिगदाप्रासमुसलादि शिलादि च । भावाभावपदार्थौघकलाकालक्रमादि च ॥ ३ ॥

śaraśaktigadāprāsamusalādi śilādi ca | bhāvābhāvapadārthaughakalākālakramādi ca || 3 ||

Arrows, spears, maces, swords, pestles, stones, and other objects, as well as the sequence of time and arts, are part of her adornment.

तीर, भाले, गदाएँ, तलवारें, मूसल, पत्थर और अन्य वस्तुएँ, साथ ही समय और कलाओं की क्रम भी उसके आभूषण का हिस्सा हैं।

7.85.4

चित्स्पन्दोऽन्तर्जगद्धत्ते कल्पनेव पुरं हृदि । सैव वा जगदित्येव कल्पनैव यथा पुरम् ॥ ४ ॥

citspondo'ntarjagaddhatte kalpaneva puraṃ hṛdi | saiva vā jagadityeva kalpaneva yathā puram || 4 ||

The vibration of consciousness holds the inner world like an imagined city in the heart. Indeed, that itself is the world, just as the imagined city is.

चेतना की स्पंदन अंतर्जगत को हृदय में कल्पित नगर की तरह धारण करती है। वास्तव में, वही जगत है, जैसे कल्पित नगर है।

7.85.5

पवनस्य यथा स्पन्दस्तथैवेच्छा शिवस्य सा । यथास्पन्दोऽनिलस्यान्तः प्रशान्तेच्छस्तथा शिवः ॥ ५ ॥

pavanasya yathā spandastathaivecchā śivasya sā | yathāspando'nilasyāntaḥ praśāntecchastathā śivaḥ || 5 ||

Just as the vibration of the wind, so is the will of Shiva. As the vibration of the wind becomes calm, so does the will of Shiva.

जैसे वायु की स्पंदन, वैसे ही शिव की इच्छा है। जैसे वायु की स्पंदन शांत होती है, वैसे ही शिव की इच्छा शांत होती है।

7.85.6

अमूर्तो मूर्तमाकाशे शब्दाडम्बरमानिलः । यथा स्पन्दस्तनोत्येवं शिवेच्छा कुरुते जगत् ॥ ६ ॥

amūrto mūrtamākaśe śabdāḍambaramānilaḥ | yathā spandastanotyevaṃ śivecchā kurute jagat || 6 ||

The formless (amūrto) in the form (mūrtam) of space (ākaśe), the sound (śabdāḍambara) in the form of wind (mānilaḥ), just as (yathā) the vibration (spanda) expands (tanoti), so does (evaṃ) the will (icchā) of Shiva (śiva) create (kurute) the world (jagat).

निराकार (अमूर्तो) आकाश (आकाशे) के रूप में, ध्वनि (शब्दाडम्बर) वायु (मानिलः) के रूप में, जैसे (यथा) स्पंदन (स्पन्द) फैलता है (तनोति), वैसे ही (एवं) शिव (शिव) की इच्छा (इच्छा) जगत (जगत्) को रचती है (कुरुते).

7.85.7

नृत्यन्त्याथ यदा तत्र तथा तस्मिन्पराम्बरे । काकतालीययोगेन संरम्भवशतः स्वयम् ॥ ७ ॥

nṛtyantyātha yadā tatra tathā tasminparāmbare | kākatālīyayogena saṃrambhavaśataḥ svayam || 7 ||

When (yadā) she dances (nṛtyanti) there (tatra), in that (tathā) supreme (parā) garment (ambare), with the union (yogena) of the crow (kāka) and the palm tree (tālīya), by herself (svayam) she becomes (bhavati) full of passion (saṃrambha).

जब (यदा) वह वहां (तत्र) नृत्य (नृत्यन्ति) करती है, उस (तथा) परम (परा) वस्त्र (अम्बरे) में, कौए (काक) और ताड़ (तालीय) के योग (योगेन) से, स्वयं (स्वयम्) वह उत्तेजना (संरम्भ) से भर जाती है।

7.85.8

निकटस्थः शिवः स्पृष्टः स मनागभ्रमन्तिकम् । वाडवोऽग्निः स्वनाशाय वहन्त्येवाम्बुलेखया ॥ ८ ॥

nikaṭasthaḥ śivaḥ spṛṣṭaḥ sa manāgabhramantikam | vāḍavo'gnis svanāśāya vahantyevāmbulekhayā || 8 ||

Shiva (śivaḥ), who is near (nikaṭasthaḥ), is touched (spṛṣṭaḥ) by her, as if (manāk) by a whirlwind (abhramantikam). The submarine fire (vāḍavo'gniḥ) carries (vahanti) itself (eva) to its own destruction (svanāśāya) with a watery line (ambulekhayā).

शिव (शिवः), जो निकट (निकटस्थः) है, उसे (सः) उसके द्वारा (मनाक) एक भंवर (अभ्रमन्तिकम) के समान स्पर्श (स्पृष्टः) किया जाता है। समुद्री अग्नि (वाडवोऽग्निः) अपने विनाश (स्वनाशाय) की ओर जल रेखा (अम्बुलेखया) के साथ स्वयं (एव) ले जाता है (वहन्ति)।

7.85.9

स्पृष्टमात्रे शिवे तस्मिंस्ततः परमकारणे । प्रवृत्ता प्रकृतिं गन्तुं सा शनैरुरजां तथा ॥ ९ ॥

spṛṣṭamātre śive tasmiṃstataḥ paramakāraṇe | pravṛttā prakṛtiṃ gantuṃ sā śanairurajāṃ tathā || 9 ||

Having merely touched (spṛṣṭamātre) that Shiva (śive), the supreme cause (paramakāraṇe), she (sā) is inclined (pravṛttā) to go (gantuṃ) to nature (prakṛtiṃ) gradually (śanaiḥ) in that manner (tathā).

उस शिव (शिवे) को मात्र (मात्रे) स्पर्श (स्पृष्ट) करने के बाद, परम कारण (परमकारणे) से, वह (सा) प्रकृति (प्रकृतिं) की ओर जाने (गन्तुं) के लिए प्रवृत्त (प्रवृत्ता) हो जाती है, धीरे-धीरे (शनैः) उसी प्रकार (तथा)।

7.85.10

अनन्ताकारतां त्यक्त्वा संपन्ना गिरिमात्रिका । ततो नगरमात्रासौ ततश्च द्रुमसुन्दरी ॥ १० ॥

anantākāratāṃ tyaktvā saṃpannā girimātrikā | tato nagaramātrāsau tataśca drumasundarī || 10 ||

Having abandoned (tyaktvā) the infinite form (anantākāratāṃ), she (sā) becomes (saṃpannā) the essence of the mountain (girimātrikā). Then (tataḥ) she becomes (saṃpannā) the essence of the city (nagaramātrāsau). Then (tataśca) she becomes (saṃpannā) the beautiful tree (drumasundarī).

अनंत आकार (अनन्ताकारतां) को त्याग (त्यक्त्वा) कर, वह (सा) पर्वत (गिरिमात्रिका) की संपन्न (संपन्ना) हो जाती है। फिर (ततः) वह (सा) नगर (नगरमात्रासौ) की संपन्न (संपन्ना) हो जाती है। फिर (ततश्च) वह (सा) सुंदर वृक्ष (द्रुमसुन्दरी) की संपन्न (संपन्ना) हो जाती है।

7.85.11

ततो व्योमसमाकारा शिवस्यैवाकृतिं ततः । सा प्रविष्टा सरिच्छान्तसंरम्भेव महार्णवम् ॥ ११ ॥

tato vyomasamākārā śivasyaiavākṛtiṃ tataḥ | sā praviṣṭā saricchāntasaṃrambheva mahārṇavam || 11 ||

Then, assuming the form of the sky, she entered the great ocean like a river merging into it, taking the form of Shiva.

फिर, आकाश के रूप में, वह एक नदी की तरह महासागर में विलीन हो गई, शिव का रूप धारण करते हुए।

7.85.12

एक एवाभवदथो शिवया परिवर्जितः । शिव एव शिवः शान्त आकाशे शमनोऽभितः ॥ १२ ॥

eka evābhavaadatho śivayā parivarjitaḥ | śiva eva śivaḥ śānta ākāśe śamano'bhitaḥ || 12 ||

Then, he became one, devoid of Shiva, Shiva himself became calm and peaceful in the sky.

फिर, वह एक हो गया, शिव से रहित, शिव स्वयं आकाश में शांत और शांतिपूर्ण हो गया।

7.85.13

श्रीराम उवाच । भगवञ्छिवसंस्पृष्टा सा शिवा परमेश्वरी । किमर्थमागता शान्तिमिति मे ब्रूहि तत्त्वतः ॥ १३ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavañchivasanspṛṣṭā sā śivā parameśvarī | kimarthamāgatā śāntimiti me brūhi tattvataḥ || 13 ||

Sri Rama said: O Lord, that divine Shiva, the supreme goddess, touched by Shiva, why did she attain peace? Please tell me the truth.

श्री राम ने कहा: हे भगवन्, वह दिव्य शिवा, परमेश्वरी, शिव से स्पर्शित, शांति क्यों प्राप्त हुई? कृपया मुझे सच्चाई बताएँ।

7.85.14

श्रीवसिष्ठ उवाच । सा राम प्रकृतिः प्रोक्ता शिवेच्छा पारमेश्वरी । जगन्मायेति विख्याता स्पन्दशक्तिरकृत्रिमा ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sā rāma prakṛtiḥ proktā śivecchā pārameśvarī | jagannmāyeti vikhyātā spandaśaktirakṛtrimā || 14 ||

Sri Vasistha said: O Rama, she is known as Prakriti, the supreme will of Shiva, famed as the illusion of the world, the natural, vibratory power.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राम, वह प्रकृति के रूप में जानी जाती है, शिव की परम इच्छा, जगत की माया के रूप में प्रसिद्ध, स्वाभाविक, स्पंदन शक्ति।

7.85.15

स परः प्रकृतेः प्रोक्तः पुरुषः पवनाकृतिः । शिवरूपधरः शान्तः शरदाकाशशान्तिमान् ॥ १५ ॥

sa paraḥ prakṛteḥ proktaḥ puruṣaḥ pavanākṛtiḥ | śivarūpadharaḥ śāntaḥ śaradākāśaśāntimān || 15 ||

He is known as the supreme beyond Prakriti, the Purusha with the form of air, bearing the form of Shiva, calm, and peaceful like the autumn sky.

वह प्रकृति से परे परम के रूप में जाना जाता है, हवा के रूप में पुरुष, शिव का रूप धारण करने वाला, शांत, और शरद आकाश की तरह शांतिपूर्ण।

7.85.16

भ्रमति प्रकृतिस्तावत्संसारे भ्रमरूपिणी । स्पन्दमात्रात्मिका सेच्छा चिच्छक्तिः पारमेश्वरी ॥ १६ ॥

bhramati prakṛtistāvatsaṃsāre bhramarūpiṇī | spandamātrātmikā secchā cicchaktiḥ pārameśvarī || 16 ||

The nature wanders in the world, appearing as an illusion | The mere pulsation is the will, the supreme power of consciousness || 16 ||

प्रकृति संसार में भ्रम के रूप में भटकती है | स्पंद मात्र ही इच्छा है, चेतना की परम शक्ति || १६ ||

7.85.17

यावन्न पश्यति शिवं नित्यतृप्तमनामयम् । अजरं परमाद्यन्तवर्जितं वर्जितद्वयम् ॥ १७ ॥

yāvanna paśyati śivaṃ nityatṛptamanāmayam | ajaraṃ paramādyantavarjitaṃ varjitadvayam || 17 ||

Until one sees Shiva, who is eternally satisfied, free from disease, ageless, beyond beginning and end, and non-dual || 17 ||

जब तक कोई शिव को नहीं देखता, जो नित्य तृप्त, रोगमुक्त, अजर, आदि-अंत से परे और अद्वैत है || १७ ||

7.85.18

संविन्मात्रैकधर्मित्वात्काकतालीययोगतः । संविद्देवी शिवं स्पृष्ट्वा तन्मयीव भवत्यलम् ॥ १८ ॥

saṃvinmātraikadharmitvātkākatālīyayogataḥ | saṃviddhevī śivaṃ spṛṣṭvā tanmayīva bhavatyalam || 18 ||

Due to the nature of pure consciousness alone, and by the union like that of a crow and a palm fruit, the goddess of consciousness, having touched Shiva, becomes one with him || 18 ||

शुद्ध चेतना के स्वभाव के कारण और कौए और ताड़ के फल के मिलन की तरह, चेतना की देवी, शिव को छूकर, उनके साथ एक हो जाती है || १८ ||

7.85.19

प्रकृतिः पुरुषं स्पृष्ट्वा प्रकृतित्वं समुज्झति । तदन्तरेकतां गत्वा नदीरूपमिवार्णवे ॥ १९ ॥

prakṛtiḥ puruṣaṃ spṛṣṭvā prakṛtitvaṃ samujjhati | tadantarekatāṃ gatvā nadīrūpamivārṇave || 19 ||

Nature, having touched the Purusha, abandons its nature | Having attained oneness within, like a river merging into the ocean || 19 ||

प्रकृति, पुरुष को छूकर, अपनी प्रकृति त्याग देती है | अंतर में एकता प्राप्त करके, नदी की तरह समुद्र में विलीन हो जाती है || १९ ||

7.85.20

आपगा हि पयोमात्रं सङ्गे अर्णव एव सा । यदा तदा तमेवाशु प्राप्य तत्रैव लीयते ॥ २० ॥

āpagā hi payomātraṃ saṅge arṇava eva sā | yadā tadā tam evāśu prāpya tatraiva līyate || 20 ||

Indeed, the river, which is merely water, merges into the ocean upon contact | At that very moment, having quickly reached it, she dissolves into it || 20 ||

वास्तव में, नदी, जो केवल जल है, संपर्क में आकर समुद्र में विलीन हो जाती है | उसी क्षण में, उसे शीघ्र ही प्राप्त करके, वह उसमें ही विलीन हो जाती है || २० ||

7.85.21

चितिः शिवेच्छा सा देवं तमेवासाद्य शाम्यति । जन्मस्थानशिलां प्राप्य तीक्ष्णधारा यथायसी ॥ २१ ॥

citiḥ śivecchā sā devaṃ tamevāsādya śāmyati | janmasthānaśilāṃ prāpya tīkṣṇadhārā yathāyasī || 21 ||

The desire of Shiva, that is, the divine will, is fulfilled by reaching Him alone. Just as a sharp-edged sword becomes calm when it reaches the stone at its place of origin.

शिव की इच्छा, यानी दिव्य इच्छा, उसे ही प्राप्त करके पूर्ण होती है। जैसे तीक्ष्ण धार वाला तलवार अपने जन्मस्थान पर पहुँचकर शान्त हो जाता है।

7.85.22

पुंसश्छायां निजच्छाया प्रविष्टस्य शरीरकम् । यथाशु प्रविशत्येव प्रकृतिः पुरुषं तथा ॥ २२ ॥

puṃsaśchāyāṃ nijacchāyā praviṣṭasya śarīrakam | yathāśu praviśatyeva prakṛtiḥ puruṣaṃ tathā || 22 ||

Just as the shadow of a person enters his own shadow immediately, so does nature enter the individual.

जैसे किसी व्यक्ति की छाया तुरन्त अपनी छाया में प्रवेश करती है, उसी प्रकार प्रकृति पुरुष में प्रवेश करती है।

7.85.23

चेतित्वा चिन्निजं भावं पुरुषाख्यं सनातनम् । भूयो भ्रमति संसारे नेह तत्तां प्रयाति हि ॥ २३ ॥

cetitvā cinnijaṃ bhāvaṃ puruṣākhyaṃ sanātanam | bhūyo bhramati saṃsāre neha tattāṃ prayāti hi || 23 ||

Having realized one's own eternal nature known as the individual, one still wanders in the world and does not attain that state here.

अपनी सनातन प्रकृति को जानकर, जिसे पुरुष कहते हैं, फिर भी वह संसार में भटकता रहता है और यहाँ उस अवस्था को प्राप्त नहीं होता।

7.85.24

साधुर्वसति चोरौघे तावद्यावदसौ नतम् । परिजानाति विज्ञाय न तत्र रमते पुनः ॥ २४ ॥

sādhurvasati caurauGhe tāvadyāvadasau natam | parijānāti vijñāya na tatra ramate punaḥ || 24 ||

The virtuous person dwells in the midst of thieves until he recognizes and understands them. Then, he does not delight in that place again.

साधु पुरुष चोरों के बीच तब तक रहता है जब तक उन्हें पहचान नहीं लेता। फिर वह उस स्थान में आनन्द नहीं लेता।

7.85.25

द्वैते तावदसद्रूपे रमते भ्रमते चितिः । परं पश्यति नो यावत्तं दृष्ट्वा तन्मयी भवेत् ॥ २५ ॥

dvaita tāvadasadrūpe ramate bhramate citiḥ | paraṃ paśyati no yāvattad dṛṣṭvā tanmayī bhavet || 25 ||

The consciousness enjoys and wanders in the duality of the unreal form until it sees the Supreme. Upon seeing Him, it becomes one with Him.

चेतना असत् रूप के द्वैत में रमती और भटकती है, जब तक कि वह परमात्मा को नहीं देखती। उसे देखने पर, वह उसी में एक हो जाती है।

7.85.26

चितिनिर्वाणरूपं यत्प्रकृतिः परमं पदम्। प्राप्य तत्तामवाप्नोति सरिदब्धाविवाब्धिताम्॥ २६॥

citinirvāṇarūpaṃ yatprakṛtiḥ paramaṃ padam | prāpya tattāmavāpnoti saridabdhāvivābdhitām || 26 ||

That which is of the form of the liberation of consciousness, the supreme state of nature, having attained that, one obtains the state of the ocean like a river.

जो चेतना के मोक्ष का रूप है, प्रकृति का परम पद है, उसे प्राप्त करके वह नदी की तरह समुद्र की स्थिति प्राप्त करता है।

7.85.27

तावद्विमोहवशतश्चितिराकुलेषु सर्गेषु संसरति जन्मदशासु तासु। यावन्न पश्यति परं तमथाशु दृष्ट्वा तत्रैव मज्जति घनं मधुनीव भृङ्गी॥ २७॥

tāvadvimohavaśataścitirākuleṣu sargeṣu saṃsarati janmadashāsu tāsu | yāvanna paśyati paraṃ tamathāśu dṛṣṭvā tatraiva majjati ghanaṃ madhunīva bhṛṅgī || 27 ||

As long as one is under the influence of delusion, the consciousness wanders in the confused states of existence in various births. Until one sees the supreme, and having seen it, one immediately merges into it, like a bee into a lotus.

जब तक कोई भ्रम के अधीन है, चेतना अस्पष्ट अस्तित्व की स्थितियों में विचरण करती है, विभिन्न जन्मों में। जब तक कोई परम को नहीं देखता, और उसे देखने के बाद, वह तुरंत उसमें विलीन हो जाता है, जैसे कि एक भौंरा एक कमल में।

7.85.28

संप्राप्य कस्त्यजति नाम तदात्मतत्त्वं प्राप्यानुभूय च जहाति रसायनं कः। शाम्यन्ति येन सकलानि निरन्तराणि दुःखानि जन्ममृतिमोहमयानि राम॥ २८॥

saṃprāpya kastyajati nāma tadātmatattvaṃ prāpyānubhūya ca jahāti rasāyanaṃ kaḥ | śāmyanti yena sakalāni nirantarāṇi duḥkhāni janmamṛtimohamayāni rāma || 28 ||

Who, having attained the essence of the self, would abandon it? Having experienced it, who would give up the elixir? By which all continuous sufferings of birth, death, and delusion are pacified, O Rama.

जो आत्मा के तत्त्व को प्राप्त कर चुका है, वह क्यों उसे छोड़ेगा? उसे अनुभव करके, कौन रसायन को छोड़ेगा? जिससे जन्म, मृत्यु और भ्रम के सभी निरंतर दुःख शांत हो जाते हैं, हे राम।

Chapter 86

7.86.1

श्रीवसिष्ठ उवाच श्रृणु राम कथं तत्र महाकाशे तथा स्थितः देहे भ्रान्तिं तु तां त्यक्त्वा स रुद्रोऽप्युपशाम्यति ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca śṛṇu rāma kathaṃ tatra mahākāśe tathā sthitaḥ dehe bhrāntiṃ tu tāṃ tyaktvā sa rudro'pyupaśāmyati || 1 ||

Vasishtha said: Listen, Rama, how Rudra, having abandoned the delusion of the body, remains calm in the great void.

वसिष्ठ ने कहा: सुनो राम, कैसे रुद्र, शरीर के भ्रम को त्यागकर, महान शून्य में शान्त रहता है।

7.86.2

स रुद्रस्तौ जगत्खण्डौ तदा चित्र इवार्पिताः निस्पन्दा एव तत्रासन्प्रेक्षमाणे स्थिते मयि ॥ २ ॥

sa rudrastau jagatkhaṇḍau tadā citra ivārpitāḥ nispandā eva tatrāsanprekṣamāṇe sthite mayi || 2 ||

That Rudra, having placed the two fragments of the universe as if in a painting, remained motionless there, while I was watching.

वह रुद्र, दो ब्रह्माण्ड के टुकड़ों को चित्र की तरह रखकर, मेरे देखते-देखते वहाँ निश्चल रहा।

7.86.3

ततो मुहूर्तमात्रेण स रुद्रस्तौ नभोन्तरे खण्डौ विलोकयामास दृशार्केणेव रोदसी ॥ ३ ॥

tato muhūrtamātreṇa sa rudrastau nabhontare khaṇḍau vilokayāmāsa dṛśārkeṇeva rodasī || 3 ||

Then, in a moment, Rudra saw those two fragments in the sky, as if with the eyes of the sun.

तब, एक पल में, रुद्र ने आकाश में उन दो टुकड़ों को देखा, मानो सूर्य की आँखों से।

7.86.4

ततो निमेषमात्रेण घोणाश्वासेन खण्डकौ तौ समानीय चिक्षेप पातालान्तरिवानने ॥ ४ ॥

tato nimeṣamātreṇa ghoṇāśvāsena khaṇḍakau tau samānīya cikṣepa pātālāntarivānane || 4 ||

Then, in the blink of an eye, with a deep breath, he brought those two fragments together and threw them into the netherworld, as if into a mouth.

तब, एक पल में, एक गहरी साँस लेकर, उसने उन दो टुकड़ों को एक साथ लाकर पाताल में फेंक दिया, मानो किसी मुँह में।

7.86.5

अतिष्ठदेक एवासावेकं खे खमिवाखिले भुक्तब्रह्माण्डखण्डोग्रमण्डमण्डकमण्डलः ॥ ५ ॥

atiṣṭhadeka evāsāvekaṃ khe khamivākhile bhuktabrahmāṇḍakhaṇḍogramṇḍamaṇḍakamaṇḍalaḥ || 5 ||

He remained alone in the sky, as if he were the entire sky, having consumed the fierce fragments of the universe.

वह आकाश में अकेला रहा, मानो वह सम्पूर्ण आकाश हो, ब्रह्माण्ड के भयानक टुकड़ों को ग्रहण करके।

7.86.6

ततो मुहूर्तमात्रेण लघुः सोऽभ्रमिवाभवत् । ततोऽभवद्यष्टिसमस्ततः प्रादेशमात्रकः ॥ ॥ ६ ॥

tato muhūrtamātreṇa laghuḥ so'bhramivābhavat | tato'bhavadyaṣṭisamastataḥ prādeśamātrakaḥ || 6 ||

Then, in a moment, he became as light as a cloud. Then he became as small as a stick, and then he became the size of a span.

तब, एक पल में, वह एक बादल की तरह हलका हो गया। फिर वह एक लकड़ी की तरह छोटा हो गया, और फिर वह एक हाथ की लंबाई के बराबर हो गया।

7.86.7

ततः काचकणाकारो मया दृष्टः स तादृशः । ततः सोऽणूभवन्दृष्टो मया स्वाद्दिव्यदृष्टिना ॥ ॥ ७ ॥

tataḥ kācakaṇākāro mayā dṛṣṭaḥ sa tādṛśaḥ | tataḥ so'ṇūbhavandṛṣṭo mayā svāddivyadṛṣṭinā || 7 ||

Then, he was seen by me as small as a glass bead. Then, he was seen by me with divine vision as an atom.

तब, वह मुझे एक कांच की मनका के आकार का दिखाई दिया। फिर, वह मुझे दिव्य दृष्टि से एक अणु के रूप में दिखाई दिया।

7.86.8

परमाणुरथो भूत्वा ततस्त्वन्तर्द्धिमाययौ । इत्यसौ शममायातः शरदम्बुदखण्डवत् ॥ ॥ ८ ॥

paramāṇuratho bhūtvā tatastvantarddhimāyayau | ityasau śamamāyātaḥ śaradambudakhaṇḍavat || 8 ||

Then, having become an atom, he disappeared. Thus, he attained peace like a piece of an autumn cloud.

तब, एक अणु बनकर, वह अंतर्धान हो गया। इस प्रकार, वह शांति प्राप्त कर ली, जैसे एक शरद ऋतु का बादल का टुकड़ा।

7.86.9

तादृशोऽपि महारम्भः पुरः पश्यत एव मे । इति सावरणे तेन ते ब्रह्माण्डकवाटके ॥ ॥ ९ ॥

tādṛśo'pi mahārambhaḥ puraḥ paśyata eva me | iti sāvaraṇe tena te brahmāṇḍakavāṭake || 9 ||

Even such a great endeavor was seen by me. Thus, with that protection, those doors of the universe were closed.

इस तरह का एक महान उद्यम मुझे दिखाई दिया। इस प्रकार, उस सुरक्षा के साथ, ब्रह्माण्ड के द्वार बंद हो गए।

7.86.10

विनिगीर्णे क्षुधार्तेन हरिणेनेव पर्णके । अथाभून्निर्मलं व्योम शान्तं ब्रह्मैव केवलम् ॥ ॥ १० ॥

vinigīrṇe kṣudhārtena hariṇeneva parṇake | athābhūnnirmalaṃ vyoma śāntaṃ brahmaiva kevalam || 10 ||

When the hungry deer has consumed the leaves, then the sky becomes pure and calm, which is the absolute Brahman.

जब भूखे हिरण ने पत्ते खा लिए, तब आकाश शुद्ध और शांत हो गया, जो केवल ब्रह्म है।

7.86.11

अनादिमध्यपर्यन्तं संविदाकाशमात्रकम् । इत्यहं दृष्टवांस्तत्र कल्पान्तमुरुविभ्रमम् ॥ ११ ॥

anādimadhyaparyantaṃ saṃvidākāśamātrakam | ityahaṃ dṛṣṭavāṃstatra kalpāntamuruvibhramam || 11 ||

I saw there the great delusion of the end of the world, which is only the sky of consciousness, without beginning, middle, or end.

मैंने वहाँ उस महान भ्रम को देखा जो अनादि, मध्य और अन्त से रहित चेतना का आकाश है।

7.86.12

दर्पणप्रतिबिम्बाभं शिलाशकलकोटरे । अथ तामङ्गनां स्मृत्वा तां शिलां तच्च विभ्रमम् ॥ १२ ॥

darpaṇapratibimbābhaṃ śilāśakalakoṭare | atha tāmaṅganāṃ smṛtvā tāṃ śilāṃ tacca vibhramam || 12 ||

Like a reflection in a mirror, in the hollow of a stone fragment, then remembering that woman, I saw that stone and that delusion.

दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह, पत्थर के टुकड़े के खोखले में, फिर उस स्त्री को याद करके, मैंने उस पत्थर और उस भ्रम को देखा।

7.86.13

राजद्वारगतो ग्राम्य इवाहं विस्मयं गतः । तामालोकितवान्भूयः कलूधौतशिलामहम् ॥ १३ ॥

rājadvāragato grāmya ivāhaṃ vismayaṃ gataḥ | tāmālokitavānbhūyaḥ kalūdhautaśilāmham || 13 ||

Like a villager who has come to the royal gate, I was amazed. I looked at that stone again, washed by the river.

जैसे एक ग्रामीण जो राजद्वार पर आया है, मैं आश्चर्यचकित हो गया। मैंने उस नदी से धुले हुए पत्थर को फिर से देखा।

7.86.14

यावत्सर्वत्र सन्त्यत्र सर्गाः काल्या इवाङ्गके । बुद्धिनेत्रेण दृश्यन्ते दिव्याक्ष्णा वा न ते यथा ॥ १४ ॥

yāvatsarvatra santyatra sargāḥ kālyā ivāṅgake | buddhinetreṇa dṛśyante divyākṣṇā vā na te yathā || 14 ||

As long as all creations are present everywhere, like limbs of Kali, they are seen by the eye of intellect or by divine eyes, but not as they truly are.

जब तक सभी सृष्टियाँ हर जगह उपस्थित हैं, जैसे काली के अंग, वे बुद्धि की आँखों से या दिव्य आँखों से देखी जाती हैं, लेकिन वे वास्तव में ऐसी नहीं हैं।

7.86.15

सर्वत्र सर्वदा सर्वं यदस्त्येव तदा तथा । दूरवत्प्रेक्ष्यते मांसदृशा यद्येव सा शिला ॥ १५ ॥

sarvatra sarvadā sarvaṃ yadastyeva tadā tathā | dūravatprekṣyate māṃsadṛśā yadyeva sā śilā || 15 ||

Everywhere, always, everything that exists is just as it is. If it is seen from a distance with fleshy eyes, then it is just that stone.

हर जगह, हमेशा, जो कुछ भी है वह ठीक वैसा ही है। यदि वह दूर से मांसल आँखों से देखा जाता है, तो वह बस वही पत्थर है।

7.86.16

दृश्यते तच्छिलैवैका न तु सर्गादि किंचन । सावस्थिता शिलैवैकरूपा निविडमण्डला ॥ १६ ॥

dṛśyate tacchilaivaiakā na tu sargādi kiñcana | sāvasthitā śilaivaiakarūpā niviḍamaṇḍalā || 16 ||

It is seen that there is only one stone, not any creation or anything else. It is situated in the form of a single stone, a dense circle.

यह देखा जाता है कि वहाँ एक ही शिला है, कोई सृष्टि या कुछ और नहीं। वह एक ही रूप में स्थित है, एक घना मण्डल।

7.86.17

कलधौतमयी स्फारा संध्याजलदसुन्दरी । ततोऽहं विस्मयाविष्टः प्रविचारितवान्पुनः ॥ १७ ॥

kaladhautamayī sphārā sandhyājaladasundarī | tato'haṃ vismayāviṣṭaḥ pravicāritavānpunaḥ || 17 ||

The sphere is made of polished metal, beautiful like the evening clouds. Then I, filled with wonder, investigated again.

यह गोला चमकदार धातु से बना है, संध्या के बादलों की तरह सुंदर। फिर मैं, आश्चर्य से भरा हुआ, फिर से जांच करने लगा।

7.86.18

शिलायामपरं भागं तथैव परया दृशा । यावत्तमपि पश्यामि जगदारम्भमन्थरम् ॥ १८ ॥

śilāyāmaparaṃ bhāgaṃ tathaiva parayā dṛśā | yāvattamapi paśyāmi jagadārambhamantharam || 18 ||

In another part of the stone, with the same intense gaze, I see the beginning of the world inside it.

शिला के दूसरे भाग में, उसी तीव्र दृष्टि से, मैं उसके अंदर संसार की शुरुआत देखता हूँ।

7.86.19

तथैव सुषिराकार इव नानार्थसुन्दरम् । पुनरन्यं तथैवाहं प्रदेशं परिदृष्टवान् ॥ १९ ॥

tathaiva suṣirākāra iva nānārthasundaram | punaranyaṃ tathaivāhaṃ pradeśaṃ paridṛṣṭavān || 19 ||

Similarly, in another form, beautiful in various ways, I saw another region.

उसी तरह, एक अन्य रूप में, विभिन्न तरीकों से सुंदर, मैंने एक अन्य क्षेत्र देखा।

7.86.20

सर्गसंरम्भवलितं यावत्तमपि तादृशम् । यं यं प्रदेशं पश्यामि शिलायास्तत्र तत्र वै ॥ २० ॥

sargasaṃrambhavalitaṃ yāvattamapi tādṛśam | yaṃ yaṃ pradeśaṃ paśyāmi śilāyāstatra tatra vai || 20 ||

As far as I see, every region of the stone is filled with the vigor of creation. Wherever I look, I see the same.

जितना भी मैं देखता हूँ, शिला का हर क्षेत्र सृष्टि की ऊर्जा से भरा हुआ है। जहाँ भी मैं देखता हूँ, वही दिखाई देता है।

7.86.21

जगत्पश्यामि विमलमादर्श इव बिम्बितम् । मयातिकौतुकेनाथ सर्वास्तस्य गिरेः शिलाः ॥ २१ ॥

jagatpaśyāmi vimalamādarśa iva bimbītam | mayātikautukenātha sarvāstasya gireḥ śilāḥ || 21 ||

I see the world reflected in a clear mirror | With great curiosity, all the stones of that mountain

मैं साफ दर्पण में प्रतिबिंबित होने वाले जगत को देखता हूँ | बड़े उत्सुकता से, उस पर्वत के सभी पत्थर

7.86.22

अन्विष्टा भूतिभागाश्च तृणगुल्मादयस्तथा । यावत्सर्वत्र तत्तादृग्जगदस्ति यथास्थितम् ॥ २२ ॥

anviṣṭā bhūtibhāgāśca tṛṇagulmādayastathā | yāvatsarvatra tattādṛgjagadasti yathāsthitam || 22 ||

Sought after are the parts of prosperity and grass, bushes, etc. | As long as the world exists in that manner everywhere

समृद्धि के भाग और घास, झाड़ियाँ आदि खोजे जाते हैं | जब तक दुनिया उस तरह से हर जगह मौजूद है

7.86.23

बुद्ध्यैव दृश्यते नाक्ष्णा परया विविधाकृति । क्वचित्प्रथमसर्गात्म जायमानप्रजापति ॥ २३ ॥

buddhyeva dṛśyate nākṣṇā parayā vividhākṛti | kvacitprathamasargātma jāyamānaprajāpati || 23 ||

It is perceived by the intellect, not by the eyes, with various forms | Sometimes the first creation, the lord of creatures being born

यह बुद्धि द्वारा देखा जाता है, आँखों से नहीं, विविध रूपों में | कभी-कभी प्रथम सृष्टि, प्रजा के स्वामी का जन्म होता है

7.86.24

कल्प्यमानर्क्षचन्द्रार्कदिनरात्र्यृतुवत्सरम् । क्वचित्क्वचिन्महीपीठसंपन्नजनमण्डलम् ॥ २४ ॥

kalpyamānārkṣacandrārkadinarātryṛtuvatsaram | kvacitkvacinmahīpīṭhasaṃpannajanamaṇḍalam || 24 ||

Imagined stars, moon, sun, day, night, seasons, and years | Sometimes the assembly of people endowed with the earth's throne

कल्पित तारे, चंद्रमा, सूर्य, दिन, रात, ऋतु और वर्ष | कभी-कभी पृथ्वी के सिंहासन से सुसज्जित लोगों की सभा

7.86.25

क्वचित्किंचिदखातोग्रचतुःसागरखातकम् । कचित्किंचिदसंजातसुरसंजातदानवम् ॥ २५ ॥

kvacitkiñcidakhātogracatuḥsāgarakhātakam | kacitkiñcidasaṃjātasurasaṃjātadānavam || 25 ||

Sometimes a little bit of the terrible pit of the four oceans | Sometimes a little bit of the unborn gods and the born demons

कभी-कभी थोड़ा सा भयानक चार समुद्रों का गड्ढा | कभी-कभी थोड़ा सा अजन्मे देवता और जन्मे असुर

7.86.26

क्वचित्किंचित्कृतयुगाचारसज्जनभूतकम् । क्वचित्किंचित्कलियुगाचारदुर्जनभूतकम् ॥ २६ ॥

kvcitkiñcitkṛtayugācārasajjanabhūtakam| kvcitkiñcitkaliyugācāradurjanabhūtakam || 26 ||

Sometimes it is like the good people of the Satya Yuga, sometimes it is like the bad people of the Kali Yuga.

कभी सत्य युग के सज्जनों के समान होता है, कभी कलि युग के दुर्जनों के समान होता है।

7.86.27

क्वचित्किंचित्पुरव्यूहदैत्यसंगरदुस्तरम् ॥ २७ ॥

kvcitkiñcitpuravyūhadaityasaṃgaradustaram || 27 ||

Sometimes it is like the difficult battle with the demons in the city's formation.

कभी यह नगर के व्यूह में दैत्यों के साथ कठिन संगर के समान होता है।

7.86.28

क्वचित्किंचिन्महाशैलजालनिर्विवरावनि । क्वचित्किंचिदसंपन्नसर्गमेकाम्बुजोद्भवम् ॥ २८ ॥

kvcitkiñcinmahāśailajālanirvivarāvani| kvcitkiñcidasaṃpannasargamekāmbujodbhavam || 28 ||

Sometimes it is like the vast expanse of mountains and forests, sometimes it is like the incomplete creation of the lotus-born.

कभी यह पर्वतों और वनों के विस्तृत भाग के समान होता है, कभी कमल से उत्पन्न अपूर्ण सृष्टि के समान होता है।

7.86.29

क्वचित्किंचिज्जरामृत्यून्मुक्तभूतलमानवम् । क्वचित्किंचिदसंजातचन्द्रशून्यशिरःशिवम् ॥ २९ ॥

kvcitkiñcijjarāmṛtyūnmuktabhūtalamānavam| kvcitkiñcidasaṃjātacandrāśūnyaśiraḥśivam || 29 ||

Sometimes it is like humans on earth freed from old age and death, sometimes it is like the moonless night.

कभी यह जरा और मृत्यु से मुक्त पृथ्वी पर मानव के समान होता है, कभी चन्द्र रहित रात्रि के समान होता है।

7.86.30

अनिर्मथितदुग्धाब्धिमृत्युमत्सुरपूरितम्। असंजातामृताश्वेभवैद्यगोकमलाविषम्॥ ३०॥

anirmatitadugdhābdhimṛtyumatsurapūritam| asaṃjātāmṛtāśvebhavaidyagokamalāviṣam || 30 ||

The ocean of milk is not churned, filled with death and envy, without the nectar of immortality, the poison of the physician's cow.

दुग्ध सागर अमथित है, मृत्यु और ईर्ष्या से भरा है, अमृत के बिना, वैद्य की गाय का विष है।

7.86.31

शुक्रामरमहाविद्यानाशनोत्कसुरव्रजम्। क्वचित्किंचिच्च गर्भाङ्गकर्तनोत्कसुरेश्वरम्॥ ३१॥

śukrāmaramahāvidyānāśanotkasuravrajam | kvacitkiñcicca garbhāṅgakartanotkasureśvaram || 31 ||

The great knowledge that destroys the demon army, the abode of the powerful demons, sometimes the lord of the demons who cuts the limbs of the embryo.

जो महान ज्ञान असुर सेना को नष्ट करता है, शक्तिशाली असुरों का निवास, कभी-कभी गर्भावस्था के अंगों को काटने वाले असुरेश्वर का निवास।

7.86.32

अपरिम्लानधर्मत्वात्स्वप्रकाशाखिलव्रजम्। क्वचित्किंचिच्च पूर्वान्यसंनिवेशक्रमस्थिति॥ ३२॥

aparimlānadharmatvātsvaprakāśākhilavrajam | kvacitkiñcicca pūrvānyasaṃniveśakramasthiti || 32 ||

Due to the unblemished nature of dharma, the self-illuminating entire abode, sometimes the previous arrangement of the settlement.

धर्म के अकलुषित स्वभाव के कारण, स्वयं प्रकाशित सम्पूर्ण निवास, कभी-कभी पूर्व के बसाव की व्यवस्था।

7.86.33

अपूर्ववेदशास्त्रार्थसमाचारविचारणम्। क्वचित्किंचिन्न कल्पान्तसंक्षोभमिव संस्थितम्॥ ३३॥

apūrvavedaśāstrārthasamācāravicāraṇam | kvacitkiñcinna kalpāntasaṃkṣobhamiva saṃsthitam || 33 ||

The unprecedented meaning of the Vedas and scriptures, the practice of conduct and deliberation, sometimes not like the disturbance at the end of the kalpa.

वेदों और शास्त्रों का अनूठा अर्थ, आचरण और विचार की प्रथा, कभी-कभी कल्प के अंत की अशांति की तरह नहीं।

7.86.34

क्वचित्किंचिच्च दैत्यौघविलुण्ठितसुरालयम्। क्वचित्किंचित्सुरोद्यानगायद्गन्धर्वकिन्नरम्॥ ३४॥

kvacitkiñcicca daityaughaviluṇṭhitasurālayam | kvacitkiñcitsurodyānagāyadgandharvakinnaram || 34 ||

Sometimes the abode of the gods plundered by the hordes of demons, sometimes the garden of the gods where the Gandharvas and Kinnaras sing.

कभी-कभी असुरों के समूह द्वारा लूटा हुआ देवताओं का निवास, कभी-कभी गंधर्व और किन्नरों द्वारा गाया जाने वाला देवताओं का उद्यान।

7.86.35

क्वचित्किंचित्समारब्धगीर्वाणासुरसौहृदम्। भूतभव्यभविष्यत्स्थजगदाडम्बरं मया॥ ३५॥

kvacitkiñcitsamārabdha gīrvāṇāsurasauhṛdam | bhūtabhavyabhaviṣyatsthajagadāḍambaraṃ mayā || 35 ||

Sometimes the friendship between the gods and demons is initiated, the grandeur of the world that exists in the past, present, and future.

कभी-कभी देवताओं और असुरों के बीच मित्रता शुरू होती है, भूत, भविष्य और वर्तमान में स्थित विश्व का वैभव।

7.86.36

तदानुभूतं वपुषि महाविश्वगणात्मनि । एकत्र कल्पविक्षुब्धपुष्करावर्तमन्थरम् ॥ ३६ ॥

tadānubhūtaṃ vapuṣi mahāviśvagaṇātmani | ekatra kalpavikṣubdhapuṣkarāvartamantharam || 36 ||

Then, in the form of the great universe, the lotus whirlpool was disturbed in one place.

तब, महाविश्व के रूप में, एक जगह पर कमल का भँवर विक्षुब्ध हो गया।

7.86.37

एकत्र सौम्यसकलभूतसंततिसंस्थितम् । एकत्र समनुक्षुब्धसुरासुरनरेश्वरम् ॥ ३७ ॥

ekatra saumyasakalabhūtasaṃtatisaṃsthitam | ekatra samanukṣubdhasurāsuranareśvaram || 37 ||

In one place, all gentle beings are established together. In one place, the gods, demons, and human kings are all disturbed.

एक जगह पर, सभी सौम्य प्राणी एक साथ स्थापित हैं। एक जगह पर, देवता, असुर और मानव राजा सभी विक्षुब्ध हैं।

7.86.38

एकत्रासंभवद्भानुनित्याभिन्नतमोघनम् । एकत्रासंभवद्भान्त कान्तं ज्वालोदरोपमम् ॥ ३८ ॥

ekatrāsaṃbhavadbhānunitābhinntamoghanam | ekatrāsaṃbhavaddhvānta kāntaṃ jvālodaropamam || 38 ||

In one place, the sun is eternally distinct from the dense darkness. In one place, the darkness is radiant, resembling the belly of a flame.

एक जगह पर, सूर्य सदा घने अंधकार से अलग है। एक जगह पर, अंधकार चमकीला है, ज्वाला के पेट की तरह लगता है।

7.86.39

एकत्र नलिनीनालनिलीनमधुकैटभम् । एकत्र पद्ममञ्जूषासुप्तबालनवाब्जजम् ॥ ३९ ॥

ekatra nalinīnālanilīnamadhukaiṭabham | ekatra padmamañjūṣāsuptabālanavābjajam || 39 ||

In one place, the lotus stalk is filled with nectar and the demon Kaiṭabha. In one place, the lotus bud is like a sleeping young child.

एक जगह पर, कमल की डंठल मधु और असुर कैटभ से भरी हुई है। एक जगह पर, कमल का बटर सोये हुए छोटे बच्चे की तरह है।

7.86.40

एकत्रैकार्णवोदग्रवृक्षविश्रान्तमाधवम् । एकत्र कल्परजनीनिःशून्यतिमिराकुलम् ॥ ४० ॥

ekatraikārṇavodagravṛkṣaviśrāntamādhavam | ekatrakalparajanīniḥśūnyatimirākulam || 40 ||

In one place, Madhava is resting on the lofty tree in the midst of the ocean. In one place, the night is filled with the dense darkness of the end of the eon.

एक जगह पर, माधव समुद्र के बीच उठे हुए वृक्ष पर विश्राम कर रहे हैं। एक जगह पर, युगांत का घना अंधकार से रात भरी हुई है।

7.86.41

शिलाजठरनिस्पन्दं व्योमैव विततात्कृति । सुषुप्तजठराकारमप्रज्ञातमलक्षणम् ॥ ४१ ॥

śilājaṭharanispandaṃ vyomaiva vitatākṛti | suṣuptajaṭharākāramaprajñātamalakṣaṇam || 41 ||

The immovable stone-like belly, the sky itself is spread out | It is in the form of a sleeping belly, unknowable and without characteristics

पत्थर की तरह अचल पेट, आकाश स्वयं फैला हुआ है | यह सोए हुए पेट के रूप में है, अज्ञेय और लक्षणहीन

7.86.42

अप्रतर्क्यमविज्ञेयं सुषुप्तमिव सर्वतः । एकत्र पक्षविक्षुब्धशैलकाकाकुलाम्बरम् ॥ ४२ ॥

apratarkyamavijñeyaṃ suṣuptamiva sarvataḥ | ekatra pakṣavikṣubdhśailakākākulāmbaram || 42 ||

It is beyond reasoning and unknowable, like sleep everywhere | In one place, the sky is disturbed by the flapping wings of birds on the mountain

यह तर्क से परे और अज्ञेय है, जैसे नींद हर जगह | एक जगह, पहाड़ पर पक्षियों के पंखों के फड़फड़ाने से आकाश विचलित है

7.86.43

एकत्र वज्रनिष्पेषद्रवद्भूधरभासुरम् । एकत्रोद्वृत्तमत्ताब्धिह्रियमाणधराचलम् ॥ ४३ ॥

ekatra vajranispēṣadravadbhūdharabhāsuram | ekatrodvṛttamattābdhihriyamāṇadharācalam || 43 ||

In one place, the mountain shines with the flowing juice of crushed diamonds | In another place, the intoxicated ocean drags the mountain

एक जगह, कुचले हुए हीरों के रस से पहाड़ चमकता है | दूसरी जगह, नशे में धुत समुद्र पहाड़ को खींचता है

7.86.44

एकत्र पुरवृत्रान्धवलिसंगरसंकुलम् । एकत्र मत्तपातालगजकम्पिवसुन्धरम् ॥ ४४ ॥

ekatra puravṛtrāndhavalisamgarasaṅkulam | ekatra mattapātālagajakampivasundharam || 44 ||

In one place, there is a battle between the city and the demon Vritra, filled with blind armies | In another place, the intoxicated elephants of the underworld shake the earth

एक जगह, नगर और दानव वृत्र के बीच युद्ध है, अंधे सेनाओं से भरा हुआ | दूसरी जगह, नशे में धुत पाताल के हाथी धरती को हिलाते हैं

7.86.45

एकत्र शेषशिरसः कल्पान्तलुठितावनि । क्वचिदल्पेन रामेण हतरावणराक्षसम् ॥ ४५ ॥

ekatra śeṣaśirasaḥ kalpāntaluṭhitāvani | kvacidalpena rāmeṇa hatarāvaṇarākṣasam || 45 ||

In one place, the earth is being swallowed by the mouth of Shesha at the end of the eon | Somewhere, with a little effort, Rama has slain the demon Ravana

एक जगह, कल्प के अंत में शेष के मुंह से धरती निगली जा रही है | कहीं, थोड़े प्रयास से, राम ने राक्षस रावण को मार डाला है

7.86.46

रक्षसा रावणेनैव क्वचिद्विहतराघवम् । भूस्थपादेन देवाद्रिशिरस्थशिरसा परम् ॥ ४६ ॥

rakṣasā rāvaṇenainaiva kvacidvihatarāghavam | bhūsthapādena devādriśirasthaśirasā param || 46 ||

Sometimes, Raghava (Rama) was defeated by the demon Ravana, who had his feet on the earth and his head on the peak of the divine mountain.

कभी-कभी, रघुवंशी राम रावण द्वारा पराजित हुए, जिसके पैर पृथ्वी पर थे और सिर देवताओं के पर्वत के शिखर पर था।

7.86.47

पश्याम्यम्बरमाक्रान्तं क्वचिद्वै कालनेमिना । क्वचिच्चापसुरैर्नित्यं दानवैरेव पालितम् ॥ ४७ ॥

paśyāmyambaramākrāntaṃ kvacidvai kālaneminā | kvaciccāpasurairnityaṃ dānavaireva pālitam || 47 ||

I see the sky sometimes occupied by Kālanemi, sometimes by the demons, and always protected by the demons.

मैं आकाश को कभी-कभी कालनेमि द्वारा घेरा हुआ देखता हूँ, कभी-कभी असुरों द्वारा, और हमेशा दानवों द्वारा सुरक्षित।

7.86.48

क्वचिच्च भ्रष्टदनुजैरमरैरेव पालितम्। जिष्णुयुक्तेन गुप्तेन विष्णुपाण्डवकौरवैः ॥ ४८ ॥

kvaciccabhraṣṭadanujairamaraireva pālitam | jiṣṇuyuktena guptena viṣṇupāṇḍavakauravaiḥ || 48 ||

Sometimes it is protected by the fallen demons and the gods, and by the protected and united Vishnu, Pandavas, and Kauravas.

कभी-कभी यह गिरे हुए दानवों और देवताओं द्वारा, और सुरक्षित और एकजुट विष्णु, पाण्डवों और कौरवों द्वारा सुरक्षित होता है।

7.86.49

क्वचिद्भारतयुद्धेन निहताक्षौहिणीगणम्। श्रीराम उवाच। किमहं भगवन्पूर्वमभवं कथयेति मे ॥ ४९ ॥

kvacidbhāratayuddhena nihataakṣauhiṇīgaṇam | śrīrāma uvāca | kimahaṃ bhagavanpūrvamabhavaṃ kathayeti me || 49 ||

Sometimes, in the battle of Bharata, the army divisions were destroyed. Shri Rama said, 'O Lord, what was I in the past? Please tell me.'

कभी-कभी, भारत के युद्ध में, सेना की विभागों को नष्ट कर दिया गया। श्री राम ने कहा, 'हे भगवान, मैं पहले क्या था? कृपया मुझे बताएँ।'

7.86.50

अभवं चेदनेनैव संनिवेशेन तत्कथम्। श्रीवसिष्ठ उवाच। सर्व एव विवर्तन्ते राम भावाः पुनःपुनः ॥ ५० ॥

abhavaṃ cedanenainaiva saṃniveśena tatkatham | śrīvasiṣṭha uvāca | sarva eva vivartante rāma bhāvāḥ punaḥpunaḥ || 50 ||

If I existed in this way, then how was it so? Shri Vasistha said, 'O Rama, all states of being continually transform.'

यदि मैं इस तरह से अस्तित्व में था, तो फिर यह कैसे हुआ? श्री वसिष्ठ ने कहा, 'हे राम, सभी अस्तित्व की स्थितियाँ बार-बार परिवर्तित होती रहती हैं।'

7.86.51

पूर्यमाणा यथा माषाः क्रमेणान्येन तेन वा। सर्वक्रमसमाः केचित्तयैवान्येन वा मिथः ॥ ५१ ॥

pūryamāṇā yathā māṣāḥ krameṇānyena tena vā | sarvakramasamāḥ kecit tayaivānyena vā mithaḥ || 51 ||

Just as beans are filled in sequence, one by one, some are equal to all sequences, and others are equal to each other.

जैसे माष दाल के दाने क्रम से भरे जाते हैं, कुछ सभी क्रमों के बराबर होते हैं, और कुछ एक दूसरे के बराबर होते हैं।

7.86.52

स्फुरन्त्यर्थसमा भावाः केचिदब्धितरङ्गवत्। पुनस्त्वं पुनरेवाहं पुनः पुनरिमे जनाः ॥ ५२ ॥

sphurantyarthasamā bhāvāḥ kecidabdhitarangavat | punastvaṃ punarevāhaṃ punaḥ punarime janāḥ || 52 ||

Some emotions are meaningful, like the waves of the ocean, and again, you and I, and these people, repeatedly.

कुछ भाव अर्थपूर्ण होते हैं, जैसे सागर के तरंग, और फिर, आप और मैं, और ये लोग, बार-बार।

7.86.53

न कदाचन नैवान्ये संभवन्त्यखिलं परे । त एवान्येऽथवाम्भोधौ तरङ्गा इव निर्णयः ॥ ५३ ॥

na kadācana naivānye saṃbhavantyakhilaṃ pare | ta evānye'thavāmbhodhau tarangā iva nirṇayaḥ || 53 ||

Never do others exist in their entirety, but they are like waves in the ocean, according to the conclusion.

कभी भी दूसरे पूरी तरह से अस्तित्व में नहीं होते, लेकिन वे सागर के तरंगों की तरह होते हैं, निर्णय के अनुसार।

7.86.54

यद्वन्न जायते तद्वद्भूतानां भ्रमतां भवेत् । आयान्ति यान्त्यनन्तानि भूतानीह भवद्भ्रमैः ॥ ५४ ॥

yadvanna jāyate tadvadbhūtānāṃ bhramatāṃ bhavet | āyānti yāntyanantāni bhūtānīha bhavadbhra maiḥ || 54 ||

Just as something is not born, similarly, the wandering of beings occurs. Beings come and go endlessly due to the illusions of existence.

जैसे कुछ पैदा नहीं होता, उसी तरह, जीवों का भटकना होता है। जीव अंतहीन रूप से अस्तित्व के भ्रम के कारण आते जाते हैं।

7.86.55

तान्येवान्यानि चान्यानि समानि विषमाणि च । आवृत्तिमन्ति तान्येव तथैवान्यानि चाभितः ॥ ५५ ॥

tānyevānyāni cānyāni samāni viṣamāṇi ca | āvṛttimanti tānyeva tathaivānyāni cābhitaḥ || 55 ||

Those very same and different, equal and unequal, are recurring, and so are the others from outside.

वही समान और अलग, बराबर और असमान, दोहराते हैं, और बाहर से दूसरे भी उसी तरह दोहराते हैं।

7.86.56

विद्धि सीकरजालानि भूतानि जगदम्बुधेः । वित्तबन्धुवयःकर्मविद्याविज्ञानचेष्टितैः ॥ ५६ ॥

viddhi sīkarajālāni bhūtāni jagadambudheḥ | vittabandhuvayaḥkarma vidyāvijñānaceṣṭitaiḥ || 56 ||

Know the beings as the network of drops of the ocean of the world, characterized by wealth, relatives, age, actions, knowledge, and activities.

जानो कि प्राणियों को संसार के समुद्र के बूंदों का जाल माना जाता है, जो धन, रिश्तेदार, आयु, कर्म, ज्ञान और गतिविधियों से चिह्नित हैं।

7.86.57

तैरेव केचिज्जायन्ते भूयोभूयः शरीरिणः । अर्धैस्तैः सदृशाः केचित्केचित्पादेन तैः समाः ॥ ५७ ॥

taireva kecijjāyante bhūyobhūyaḥ śarīriṇaḥ | ardhaistaiḥ sadṛśāḥ kecitkecitpādena taiḥ samāḥ || 57 ||

Some beings are born again and again due to these characteristics. Some are similar to half of these, and some are equal to a quarter of these.

कुछ प्राणी इन विशेषताओं के कारण बार-बार जन्म लेते हैं। कुछ इनके आधे समान होते हैं, और कुछ इनके चौथाई समान होते हैं।

7.86.58

तज्जीवास्तैर्विसदृशा भवन्त्यन्यशरीरिणः । सर्वैरेभिः समाः केचित्कालेनैव विलक्षणाः । कालेन सदृशाः केचिदनेन च विलक्षणाः ॥ ५८ ॥

tajjīvāstairvisadṛśā bhavantyanyaśarīriṇaḥ | sarvairebhiḥ samāḥ kecitkālenaiva vilakṣaṇāḥ | kālena sadṛśāḥ kecidanena ca vilakṣaṇāḥ || 58 ||

Other embodied beings become dissimilar due to these characteristics. Some are equal to all these, some are distinct due to time, some are similar due to time, and some are distinct due to this.

अन्य शरीरधारी प्राणी इन विशेषताओं के कारण असमान हो जाते हैं। कुछ इन सभी से बराबर होते हैं, कुछ समय के कारण भिन्न होते हैं, कुछ समय के कारण समान होते हैं, और कुछ इसके कारण भिन्न होते हैं।

7.86.59

कालेनाकुलचेष्टयान्य इव ते गच्छन्त्यधोर्ध्वं पुनदेहालेखनखेदितान्यगणितान्यन्यानि चान्यान्यलम् । भूताम्बूनि वहन्ति संसृतिमये तान्यम्बुधौ चञ्चले चक्रावृत्तिमयानि संकलयितुं शक्नोति कस्तान्यलम् ॥ ५९ ॥

kālenākulaceṣṭayānya iva te gacchantyadhoradhvaṃ punadehālekhana kheditānyagaṇitānyanyānyalam | bhūtāmbūni vahanti saṃsṛtimaye tānyambudhau cañcale cakrāvṛttimayāni saṃkalayituṃ śaknoti kastānyalam || 59 ||

Due to the agitated activities of time, some beings move up and down, repeatedly experiencing the pain of embodiment. They carry the waters of existence in the restless ocean of transmigration, revolving in cycles. Who can comprehend these endless cycles?

समय की अशांत गतिविधियों के कारण, कुछ प्राणी ऊपर और नीचे चलते हैं, बार-बार शरीर के दुःख का अनुभव करते हैं। वे अस्थिर संसार सागर में अस्तित्व के जल को लेकर चलते हैं, चक्रों में घूमते हैं। इन अनंत चक्रों को कौन समझ सकता है?

Chapter 87

7.87.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततश्चिदाकाशवपुर्व्याप्यनन्तो निरामयः । दत्तावधानो वपुषि तदा पश्याम्यहं क्वचित् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tataścidākāśavapurvyāpyananto nirāmayaḥ | dattāvadhāno vapuṣi tadā paśyāmyahaṃ kvacit || 1 ||

Shri Vasistha said: Then, in the infinite, disease-free, all-pervading form of consciousness, I see myself attentive to that form at that time.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब, अनन्त, रोगमुक्त, सर्वव्यापी चेतना के रूप में, मैं उस समय उस रूप पर ध्यान देता हूँ।

7.87.2

यावदन्तर्गतः सर्गः संस्थितोऽङ्कुरितोपमः । कुसूलस्येव बीजस्य सिक्तस्येवाङ्कुरो हृदि ॥ २ ॥

yāvadantargataḥ sargaḥ saṃsthito'ṅkuritopamaḥ | kusūlasyeva bījasya siktasyevāṅkuro hṛdi || 2 ||

As long as the creation is within, it remains like a sprout, like the seed of a grain that has been watered in the heart.

जब तक सृष्टि अंदर है, वह एक अंकुर की तरह रहती है, जैसे एक अनाज का बीज जिसे पानी दिया गया हो हृदय में।

7.87.3

ऊर्ध्वमुच्छून एवान्तःसेकाद्बीजे यथाङ्कुरः । आकारवत्यनाकारे चित्त्वाचित्त्वे तथा जगत् ॥ ३ ॥

ūrdhvamucchūna evāntaḥsekādbīje yathāṅkuraḥ | ākāravatyānākāre cittvācittve tathā jagat || 3 ||

Just as a sprout grows upwards from the seed due to internal watering, similarly, the world manifests in the formless from the form.

जैसे एक अंकुर बीज से अंदरूनी सिंचाई के कारण ऊपर की ओर बढ़ता है, वैसे ही, जगत निराकार से आकार में प्रकट होता है।

7.87.4

यथोन्मिषति दृश्यश्रीः सुषुप्ताद्बोधमेयुषः । जाग्रद्वा विगते स्वप्ने चिन्मात्रस्य स्वचेतनात् ॥ ४ ॥

yathounmiṣati dṛśyaśrīḥ suṣuptādbodhameyuṣaḥ | jāgradvā vigate svapne cinmātrasya svacetanāt || 4 ||

Just as the visible world appears when awakening from deep sleep or when the dream ends, similarly, the world manifests from pure consciousness.

जैसे दृश्य दुनिया गहरी नींद से जागने पर या सपना खत्म होने पर प्रकट होती है, वैसे ही, जगत शुद्ध चेतना से प्रकट होता है।

7.87.5

तथैवात्मनि सर्गादावनुभूतस्वरूपिणि । हृदि सर्गोदयो नान्यरूप आकाशरूपतः ॥ ५ ॥

tathaivātmani sargādāvanubhūtasvarūpiṇi | hṛdi sargodayo nānyarūpa ākāśarūpataḥ || 5 ||

Similarly, in the self, which is experienced as one's own nature at the beginning of creation, the arising of creation in the heart is not different from the form of space.

वैसे ही, आत्मा में, जो सृष्टि के आरंभ में अपने स्वरूप के रूप में अनुभव की जाती है, हृदय में सृष्टि का उदय अंतरिक्ष के रूप से अलग नहीं है।

7.87.7

श्रीवसिष्ठ उवाच । शृणु राम यथापूर्वं स्वयंभूत्वं मया तदा । अनुभूतमसत्सद्वदिदं स्वप्नपुरोपमम् ॥ ७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śṛṇu rāma yathāpūrvaṃ svayaṃbhūtvaṃ mayā tadā | anubhūtamasatsadvadidaṃ svapnapuropamam || 7 ||

Vasishtha said: Listen, Rama, how I experienced the state of being self-existent earlier, like an unreal reality, similar to a dream.

वसिष्ठ ने कहा: सुनो राम, मैंने पहले कैसे स्वयंभू अवस्था का अनुभव किया था, जैसे कि एक असत्य सत्य की तरह, सपने के समान।

7.87.8

तमालोक्य महाकल्पसंभ्रमं व्योमरूपिणा । भागेऽन्यत्र शरीरस्य संविदुन्मेषिता मया ॥ ८ ॥

tamālokya mahākalpasambhramaṃ vyomarūpiṇā | bhāge'nyatra śarīrasya saṃvidunmeṣitā mayā || 8 ||

Seeing that great confusion of the cosmic cycle with the form of space, I experienced awareness in another part of the body.

उस महान ब्रह्मांडीय भ्रम को आकाश के रूप में देखकर, मैंने शरीर के दूसरे भाग में चेतना का अनुभव किया।

7.87.9

यदैव सामला संवित्किंचिदुन्मेषिता स्थिता । तदैवाहं क्वचित्तत्र पश्याम्याकाशतामिव ॥ ९ ॥

yadaiva sāmalā saṃvitkiṃcidunmeṣitā sthitā | tadaivāhaṃ kvacittatra paśyāmyākāśatāmiva || 9 ||

As soon as that pure awareness is slightly awakened, I immediately see the state of space there.

जैसे ही वह शुद्ध चेतना थोड़ी जागृत होती है, मैं तुरंत वहाँ आकाश की अवस्था को देखता हूँ।

7.87.10

गतं स्वभावं चिद्व्योम यथा त्वं राम निद्रया । जाग्रद्वा स्वप्नलोकं वा विशन्वेत्सि ससं घनम् ॥ १० ॥

gataṃ svabhāvaṃ cidvyoma yathā tvaṃ rāma nidrayā | jāgradvā svapnalokaṃ vā viśanvetasi sasaṃ ghanam || 10 ||

Just as you, Rama, enter the dense world of dreams or the waking state through sleep, so does the consciousness-space return to its natural state.

जैसे तुम, राम, नींद से सपनों की घनी दुनिया या जागृत अवस्था में प्रवेश करते हो, वैसे ही चेतना-आकाश अपने स्वाभाविक अवस्था में लौट जाता है।

7.87.11

दिङ्मात्राकाशमेवादौ ततोऽस्मीत्येव वेदनम् । तद्घनं कथ्यते बुद्धिः सा घना मन उच्यते ॥ ११ ॥

diṅmātrākāśamevādau tato'smītyeva vedanam | tadghanam kathyate buddhiḥ sā ghanā mana ucyate || 11 ||

In the beginning, there is only the subtle space of directions. Then comes the awareness of 'I am.' That dense awareness is called the intellect, which is also known as the mind.

शुरुआत में, केवल दिशाओं का सूक्ष्म आकाश होता है। फिर 'मैं हूँ' की चेतना आती है। वह घनी चेतना बुद्धि कहलाती है, जिसे मन भी कहा जाता है।

7.87.12

तद्वेत्ति शब्दतन्मात्रं तन्मात्राणीतराण्यथ । पञ्चेन्द्रियाणि तत्स्थौल्यादितीन्द्रियगणोदयः ॥ १२ ॥

tadvetti śabdatanmātraṃ tanmātrāṇītarāṇyatha | pañcendriyāṇi tatsthaulādityendriyagaṇodayaḥ || 12 ||

That which knows the subtle elements of sound, and then the other subtle elements, the five senses arise from that grossness.

जो शब्द के सूक्ष्म तत्व को जानता है, और फिर अन्य सूक्ष्म तत्वों को, पाँच इंद्रियाँ उस स्थूलता से उत्पन्न होती हैं।

7.87.13

सुषुप्ताद्विशतः स्वप्नं जगद्दृश्यघनोदयम् । यथा तथैव सर्गादौ दुःखं भाति निमेषतः ॥ १३ ॥

suṣuptādviviśataḥ svapnaṃ jagaddṛśyaghanodayam | yathā tathaiva sargādau duḥkhaṃ bhāti nimeṣataḥ || 13 ||

Just as from deep sleep one enters a dream, the world appears dense and visible, similarly, at the beginning of creation, suffering appears instantly.

जैसे गहरी नींद से कोई सपने में प्रवेश करता है, वैसे ही सृष्टि के आरंभ में दुःख तुरंत प्रकट होता है।

7.87.14

तुल्यकालमनन्तेऽस्मिन्दृश्यजालावभासने । कथयन्ति क्रमं केचित्केचिन्न कथयन्ति च ॥ १४ ॥

tulyakālamanante'smin dṛśyajālāvabhāsane | kathayanti kramam kecit kecinnna kathayanti ca || 14 ||

In this endless, simultaneous manifestation of the visible world, some describe the sequence, while others do not.

इस अनंत, समानांतर दृश्य संसार के प्रकट होने में, कुछ लोग क्रम बताते हैं, जबकि कुछ नहीं बताते।

7.87.15

परमाणुकणे कान्ते संपन्नमनुभूतवान् । अहं चेतनमात्मानं वस्तुतोऽमलमेव खम् ॥ १५ ॥

paramāṇukṇe kānte saṃpannamanubhūtavān | ahaṃ cetanamātmānaṃ vastuto'malameva kham || 15 ||

In the beautiful atom, I have experienced the complete, conscious self, which is truly pure space.

सुंदर परमाणु में, मैंने पूर्ण, चेतन आत्मा का अनुभव किया है, जो वास्तव में शुद्ध आकाश है।

7.87.16

यथा स्वभावतो व्योम्नि चलत्येवानिशं मरुत् । तथा स्वभावात्सर्वत्र पश्यत्येव वपुस्त्विति ॥ १६ ॥

yathā svabhāvato vyomni calatyevāniśaṃ marut | tathā svabhāvātsarvatra paśyatyeva vapustviti || 16 ||

Just as the wind always moves in the sky by its nature, similarly, by its nature, the body always sees everywhere.

जैसे हवा अपने स्वभाव से आकाश में हमेशा चलती रहती है, वैसे ही, अपने स्वभाव से, शरीर हर जगह देखता रहता है।

7.87.17

यादृशं चेतितं रूपं शक्त्या परमया तया । तच्छक्नोत्यन्यथाकर्तुं नैषा यत्नेन भूयसा ॥ १७ ॥

yādṛśaṃ cetitaṃ rūpaṃ śaktyā paramayā tayā | tacchaknotyanyathākartuṃ naiṣā yatnena bhūyasā || 17 ||

Whatever form is conceived by that supreme power, it cannot be altered by any great effort.

जो भी रूप उस परम शक्ति द्वारा सोचा जाता है, उसे किसी बड़े प्रयास से बदला नहीं जा सकता।

7.87.18

ततः पश्याम्यहं यावत्संपन्नोऽप्यणुरूपकः । चित्त्वाच्चेतस्तदेवाशु तथाभूतोऽस्मि संस्थितः ॥ १८ ॥

tataḥ paśyāmyahaṃ yāvatsaṃpanno'pyaṇurūpakaḥ | cittvācetastadevāśu tathābhūto'smi saṃsthitaḥ || 18 ||

Then I see that although I am endowed with a subtle form, I am quickly established in that very form as conceived by the mind.

तब मैं देखता हूँ कि यद्यपि मैं सूक्ष्म रूप से युक्त हूँ, मैं शीघ्र ही मन द्वारा सोचे गए उसी रूप में स्थापित हो जाता हूँ।

7.87.19

ततोऽहं बुद्धवान्रूपं तनु तेजःकणाकृति । तदेव भावयन्पश्चाद्गतोऽहं स्थूलतामिव ॥ १९ ॥

tato'haṃ buddhvānrūpaṃ tanu tejaḥkaṇākṛti | tadeva bhāvayanpaścādgato'haṃ sthūlatāmiva || 19 ||

Then, realizing that form, I became subtle like a particle of light, and later, meditating on that very form, I attained a gross form.

तब, उस रूप को समझकर, मैं प्रकाश के कण के समान सूक्ष्म हो गया, और बाद में, उसी रूप पर ध्यान करके, मैंने एक स्थूल रूप प्राप्त किया।

7.87.20

प्रेक्षे तावदहं किंचिदिति बोधाल्लघोस्ततः । मनागालोकनायैव संप्रवृत्तोऽनुभूतवान् ॥ २० ॥

prekṣe tāvadahaṃ kiṃciditi bodhāllaghostataḥ | manāgālokanāyaiva saṃpravṛtto'nubhūtavān || 20 ||

I perceive something, thus I know a little, and then, for the mere sake of seeing, I become engaged in experiencing.

मैं कुछ देखता हूँ, इसलिए मैं थोड़ा जानता हूँ, और तब, केवल देखने के लिए, मैं अनुभव करने में लग जाता हूँ।

7.87.21

यन्नाम तत्र तत्किंचित्तस्येहाद्य रघूद्वह । शृणु नामानि मुख्यानि कल्पितानि भवादृशैः ॥ २१ ॥

yannāma tatra tatkiṃcittasyehādya raghūdvaha | śṛṇu nāmāni mukhyāni kalpitāni bhavādṛśaiḥ || 21 ||

Whatever name is there, that is something, O Raghuvanshi, listen to the main names created by people like you.

जो भी नाम वहाँ है, वह कुछ है, हे रघुवंशी, आप जैसे लोगों द्वारा रचित मुख्य नामों को सुनिए।

7.87.22

द्रष्टुं प्रवृत्तो रन्ध्रेण येन तच्चक्षुरुच्यते । यच्च पश्यामि तद्दृश्यं दर्शनं तु फलं ततः ॥ २२ ॥

draṣṭuṃ pravṛtto randhreṇa yena taccakṣurucyate | yacca paśyāmi taddṛśyaṃ darśanaṃ tu phalaṃ tataḥ || 22 ||

I am inclined to see through the opening which is called the eye. Whatever I see is the visible object, and seeing is the result.

मैं उस खिड़की से देखने के लिए प्रेरित हूं जिसे आंख कहा जाता है | जो मैं देखता हूं वह दृश्य है, और देखना परिणाम है |

7.87.23

यदा पश्यामि कालोऽसौ यथा पश्यामि स क्रमः । प्रौढा नियतिरित्यस्य यत्र पश्यामि तन्नभः ॥ २३ ॥

yadā paśyāmi kālo'sau yathā paśyāmi sa kramaḥ | prauḍhā niyatiritysa yatra paśyāmi tannabhaḥ || 23 ||

When I see, that is the time. How I see, that is the sequence. Where I see, that is the mature destiny, and that is the sky.

जब मैं देखता हूं, वह समय है। जैसे मैं देखता हूं, वह क्रम है। जहां मैं देखता हूं, वह परिपक्व नियति है, और वह आकाश है।

7.87.24

स्थितोऽस्मि यत्र देशोऽसावित्यद्यैषा प्रकल्पना । तदा त्वहं चिदुन्मेषमात्रात्तन्मात्रकारणम् ॥ २४ ॥

sthito'smi yatra deśo'sāvityadyaiṣā prakalpanā | tadā tvahaṃ cidunmeṣamātrāttanmātrakāraṇam || 24 ||

Where I am situated, that is the place. This is the current arrangement. Then I am the cause of that mere consciousness.

जहां मैं स्थित हूं, वह स्थान है। यह वर्तमान व्यवस्था है। तब मैं उस चेतना का कारण हूं।

7.87.25

पश्यामीति ततस्तत्र मनाग्वोधो ममोदभूत् । ततो रन्ध्रद्वयेनाहमपश्यं यत्तदप्यखम् ॥ २५ ॥

paśyāmīti tatastatra manāgvodho mamodabhūt | tato randhradvayenāham apaśyaṃ yattadapyakham || 25 ||

Then, I thought, 'I see,' and a desire arose in me. Then, with two openings, I saw that which is also the sky.

तब, मैंने सोचा, 'मैं देखता हूं,' और मुझमें एक इच्छा उत्पन्न हुई। तब, दो खिड़कियों से, मैंने उसे देखा जो आकाश भी है।

7.87.26

याभ्यामपश्यं रन्ध्राभ्यां त इमे लोचने स्थिते । ततः किंचिच्छृणोमीति संविदित्युदिता मम ॥ २६ ॥

yābhyāmapaśyaṃ randhrābhyāṃ ta ime locane sthite | tataḥ kiṃcicchṛṇomīti saṃvidityuditā mama || 26 ||

With which two openings I saw, those are the eyes situated. Then, I heard something, and awareness arose in me.

जिन दो खिड़कियों से मैंने देखा, वे आंखें स्थित हैं। तब, मैंने कुछ सुना, और मुझमें चेतना उत्पन्न हुई।

7.87.27

ततः किंचिन्मनाङ्मात्रं झंकारं श्रुतत्रानहम् । प्रध्मातस्येव शङ्खस्य शब्दं व्योम्नः स्वभावजम् ॥ २७ ॥

tataḥ kiṃcinmanāṅmātraṃ jhaṅkāraṃ śrutatrānaham | pradhmātasyeva śaṅkhasya śabdaṃ vyomnaḥ svabhāvajam || 27 ||

Then I heard a slight sound, like the natural sound of the sky, similar to the blowing of a conch.

तब मैंने एक हल्की सी आवाज सुनी, जैसे आकाश की प्राकृतिक ध्वनि, शंख के फूँकने जैसी।

7.87.28

याभ्यामहमथाश्रौषं त इमे श्रवणव्रणे । प्रदेशाभ्यां विचरता मरुता विततस्वनम् ॥ २८ ॥

yābhyāmahamathāśrauṣaṃ ta ime śravaṇavraṇe | pradeśābhyāṃ vicaratā marutā vitatasvanam || 28 ||

Then I heard these two sounds in my ears, spreading through the regions, carried by the wind.

तब मैंने अपने कानों में इन दो ध्वनियों को सुना, जो क्षेत्रों में फैलती हुई, हवा द्वारा ले जाई गई।

7.87.29

स्पर्शसंवेदनं किंचिदहमत्रानुभूतवान् । येन नाम प्रदेशेन तेन सा त्वक्च कथ्यते ॥ २९ ॥

sparśasaṃvedanaṃ kiṃcidahamatrānubhūtavān | yena nāma pradeśena tena sā tvakca kathyate || 29 ||

I experienced some sensation of touch, by which the skin is known in that region.

मैंने कुछ स्पर्श की अनुभूति की, जिससे उस क्षेत्र में त्वचा जानी जाती है।

7.87.30

येन स्पृष्टमिवाङ्गं तत्तदाहमनुभूतवान्। सत्संवेदनमात्रात्मा सोऽयं वायुरिति स्मृतः ॥ ३० ॥

yena spṛṣṭamivāṅgaṃ tattadāhamanubhūtavān | satsaṃvedanamātrātmā soayaṃ vāyuriti smṛtaḥ || 30 ||

By which my body felt as if touched, I experienced that, the essence of which is the sensation of existence, that is known as wind.

जिससे मेरा शरीर छुआ हुआ-सा महसूस हुआ, मैंने उसे अनुभव किया, जिसका सार अस्तित्व की अनुभूति है, वह हवा कहलाती है।

7.87.31

स्पर्शनेन्द्रियतन्मात्रमिति वेदिनि संस्थितम्। आस्वादसंविद्याभून्मे तदास्वाद्यरसेन्द्रियम् ॥ ३१ ॥

sparśanendriyatanmātramiti vediṇi saṃsthitam | āsvādasaṃvidyābhūnmme tadāsvādyarasendriyam || 31 ||

The subtle element of the sense of touch is established in the knower, and the sensation of taste arose in me, that is the sense of taste.

स्पर्श की इंद्रिय का सूक्ष्म तत्व ज्ञाता में स्थित है, और स्वाद की अनुभूति मुझमें उत्पन्न हुई, वह स्वाद की इंद्रिय है।

7.87.32

प्राणान्मे घ्राणतन्मात्रमुदितं व्योमरूपिणः। इत्थं न किंचित्संपन्नं सर्वं संपन्नमत्र मे ॥ ३२ ॥

prāṇānme ghrāṇatanmātramuditaṃ vyomarūpiṇaḥ | itthaṃ na kiṃcitsaṃpannaṃ sarvaṃ saṃpannamatra me || 32 ||

From the vital breath, the subtle element of smell arises, which is of the nature of space. Thus, nothing is accomplished here, everything is accomplished by me.

प्राण से गंध का सूक्ष्म तत्व उत्पन्न होता है, जो आकाश के स्वरूप का है। इस प्रकार, यहाँ कुछ भी संपन्न नहीं है, सब कुछ मेरे द्वारा संपन्न है।

7.87.33

एवमिन्द्रियतन्मात्रजालं चेत्तत्र संस्थितः। यावत्तावद्विदः पञ्च बलादेव ममोदिताः ॥ ३३ ॥

evamindriyatanmātrajālaṃ cettatra saṃsthitaḥ | yāvattāvadvidaḥ pañca balādeva mamoditāḥ || 33 ||

Thus, the network of subtle elements of the senses is established there. As long as the five knowers are forcibly manifested by me.

इस प्रकार, इंद्रियों के सूक्ष्म तत्वों का जाल वहाँ स्थापित है। जब तक पाँच ज्ञाता बलपूर्वक मेरे द्वारा प्रकट किए जाते हैं।

7.87.34

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धमात्रशरीरिकाः। अनाकारास्तथा भातस्वरूपिण्यो भ्रमात्मिकाः ॥ ३४ ॥

śabdarūparasasparśagandhamātraśarīrikāḥ | anākārāstathā bhātasvarūpiṇyo bhramātmikāḥ || 34 ||

The subtle elements of sound, form, taste, touch, and smell are embodied. They are formless, yet they appear as if they have form, and they are of the nature of illusion.

शब्द, रूप, रस, स्पर्श और गंध के सूक्ष्म तत्व शरीर में स्थित हैं। वे निराकार हैं, फिर भी वे ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे उनमें आकार है, और वे भ्रम के स्वरूप के हैं।

7.87.35

एवंरूपमहं जालं भावयन्यत्तदास्थितः। तदहंकार इत्यद्य कथ्यते त्वादृशैर्जनैः ॥ ३५ ॥

evaṃrūpamahaṃ jālaṃ bhāvayanyattadāsthitaḥ | tadahaṃkāra ityadya kathyate tvādṛśairjanaiḥ || 35 ||

Thus, I contemplate this network of such form, established in that. This is now called ego by people like you.

इस प्रकार, मैं इस रूप के जाल को सोचता हूँ, जो उसमें स्थापित है। यह अब आप जैसे लोगों द्वारा अहंकार कहलाता है।

7.87.36

एष एव घनीभूतो बुद्धिरित्यभिधीयते । साथ बुद्धिर्घनीभूता मन इत्यभिधीयते ॥ ३६ ॥

eṣa eva ghanībhūto buddhiritiabhidhīyate | sātha buddhirghanībhūtā mana ityabhidhīyate || 36 ||

This very dense one is called intellect. Then, the dense intellect is called the mind.

यही घना एक बुद्धि कहलाता है। फिर, घनी बुद्धि मन कहलाती है।

7.87.37

अन्तःकरणरूपत्वमेवमत्राहमास्थितः । आतिवाहिकदेहात्मा चिन्मयव्योमरूपवान् ॥ ३७ ॥

antaḥkaraṇarūpatvamevamatrāhamāsthitaḥ | ātivāhikadehātmā cinmayavyomarūpavān || 37 ||

I am established here in the form of the inner self | I am the transcendental body, the form of the conscious sky

मैं यहाँ अंतःकरण के रूप में स्थित हूँ | मैं परात्परिक शरीर हूँ, चेतना के आकाश के रूप में

7.87.38

पवनाद्यप्यहं शून्यः केवलाकाशमात्रकः । सर्वेषामेव भावानां शून्याकृतिररोधकः ॥ ३८ ॥

pavanādyapyahaṃ śūnyaḥ kevalākāśamātrakaḥ | sarveṣāmeva bhāvānāṃ śūnyākṛtirarodhakaḥ || 38 ||

Even though I am the wind and other elements, I am empty, merely the sky | I am the form of emptiness that obstructs all beings

यद्यपि मैं वायु और अन्य तत्व हूँ, मैं शून्य हूँ, केवल आकाश | मैं सभी भावों को रोकने वाले शून्य का रूप हूँ

7.87.39

अथैवंभावनाच्चाहं यदा तत्र चिरं स्थितः । तदाहं देहवान्दृष्ट इति मे प्रत्ययोऽभवत् ॥ ३९ ॥

athaivambhāvanāccāhaṃ yadā tatra ciraṃ sthitaḥ | tadāhaṃ dehavāndṛṣṭa iti me pratyayo'bhavat || 39 ||

Thus, when I remained in this contemplation for a long time | Then I was seen as embodied, this was my conviction

इस प्रकार, जब मैं इस भावना में लंबे समय तक रहा | तब मुझे शरीरधारी देखा गया, यह मेरा विश्वास हुआ

7.87.40

तेनाहंप्रत्ययेनाथ शब्दं कर्तुं प्रवृत्तवान् । शून्य एव यथा सुप्तः स्वप्नोड्डीननरो रवम् ॥ ४० ॥

tenāhaṃpratyayenātha śabdaṃ kartuṃ pravṛttavān | śūnya eva yathā suptaḥ svapnoḍḍīnanaro ravam || 40 ||

With that conviction, I then proceeded to make a sound | Just as an empty person in sleep makes a sound in a dream

उस विश्वास के साथ, मैंने फिर ध्वनि बनाने की कोशिश की | जैसे एक शून्य व्यक्ति नींद में सपने में ध्वनि बनाता है

7.87.41

अथ पूर्वं कृतः शब्दो बालेनेव तदोमिततः स एष ओंकार इति नीतः पुनः प्रथाम ॥ ४१ ॥

atha pūrvaṃ kṛtaḥ śabdo bāleneva tadomititataḥ sa eṣa oṃkāra iti nītaḥ punaḥ prathām || 41 ||

Then, the sound that was previously made, like a child, was uttered as 'Om.' It was then repeated again.

फिर, पहले बनाया गया शब्द, जैसे एक बच्चे ने, 'ओम' कहा गया। फिर इसे दोहराया गया।

7.87.42

ततः स्वप्ननरेणेव यत्किंचिद्गदितं मया । तदेतद्विद्धि वाचं त्वं पश्चान्नीतां प्रथामिह ॥ ४२ ॥

tataḥ svapnanareṇeva yatkiñcidgaditaṃ mayā | tadetadviddhi vācaṃ tvaṃ paścānnītāṃ prathāmiha || 42 ||

Therefore, whatever has been said by me, know that to be my initial statement brought forth later, like a person in a dream.

इसलिए, जो कुछ भी मैंने कहा है, उसे ऐसे समझो जैसे स्वप्न में किसी व्यक्ति की बात हो, जो बाद में पहले कही गई बात के रूप में लाई गई हो।

7.87.43

ब्रह्मैव सोऽस्मि संपन्नः सृष्टेः कर्ता जगद्गुरुः । ततो मनोमयेनैव कल्पिताः सृष्टयो मया ॥ ४३ ॥

brahmaiva so'smi saṃpannaḥ sṛṣṭeḥ kartā jagadguruḥ | tato manomayenaiva kalpitāḥ sṛṣṭayo mayā || 43 ||

I am indeed that Brahman, the creator of the universe, the world teacher. Therefore, with the mind alone, I have created these creations.

मैं वही ब्रह्म हूँ, ब्रह्मांड का सृष्टिकर्ता, जगत् गुरु। इसलिए, मन के द्वारा ही मैंने ये सृष्टियाँ बनाई हैं।

7.87.44

एवमस्मि समुत्पन्नो न तु जातोऽस्मि किंचन । दृष्टवानस्मि ब्रह्माण्डं ब्रह्माण्डान्तं न किंचन ॥ ४४ ॥

evamasmī samutpanno na tu jāto'smi kiñcana | dṛṣṭavānasmī brahmāṇḍaṃ brahmāṇḍāntaṃ na kiñcana || 44 ||

Thus, I have arisen, but I have not been born as anything. I have seen the universe, but I have not seen the end of the universe.

इस प्रकार, मैं उत्पन्न हुआ हूँ, लेकिन मैं किसी चीज के रूप में जन्मा नहीं हूँ। मैंने ब्रह्मांड देखा है, लेकिन मैंने ब्रह्मांड का अंत नहीं देखा है।

7.87.45

एवं जगति संपन्ने ममैतस्मिन्मनोमये । न किंचित्तत्र संपन्नं तच्छून्यं व्योम केवलम् ॥ ४५ ॥

evaṃ jagati saṃpanne mamaetasminmanomaye | na kiñcittatra saṃpannaṃ tacchūnyaṃ vyoma kevalam || 45 ||

Thus, in this universe that has arisen from my mind, nothing has truly arisen. That is merely empty space.

इस प्रकार, इस ब्रह्मांड में जो मेरे मन से उत्पन्न हुआ है, वास्तव में कुछ भी उत्पन्न नहीं हुआ है। वह केवल खाली स्थान है।

7.87.46

इत्थं संशून्यमेवेदं सर्वं वेदनमात्रकम् । मनागपि न सन्त्येते भावाः पृथ्व्यादयः किल ॥ ४६ ॥

itthaṃ saṃśūnyamevedaṃ sarvaṃ vedanamātrakam | manāgapi na santyete bhāvāḥ pṛthvyādayaḥ kila || 46 ||

Thus, this entire universe is merely empty, purely experiential. Even mentally, the elements such as earth do not exist.

इस प्रकार, यह पूरा ब्रह्मांड केवल खाली है, पूरी तरह से अनुभवात्मक। मानसिक रूप से भी, पृथ्वी जैसे तत्व मौजूद नहीं हैं।

7.87.47

जगन्मृगतृडम्बूनि भान्ति संविदि संविदः । न बाह्यमस्ति नो बाह्ये खे तद्व्योम तथा स्थितम् ॥ ४७ ॥

jaganmṛgatṛḍambūni bhānti saṃvidi saṃvidaḥ | na bāhyamasti no bāhye khe tadvyoma tathā sthitam || 47 ||

The world appears as a mirage in consciousness; there is nothing external, nor is there anything in the external space; it is established thus in the sky of consciousness.

जगत चेतना में मृगतृष्णा के समान प्रतीत होता है; बाहर कुछ नहीं है, न बाहरी स्थान में कुछ है; यह चेतना के आकाश में ऐसे ही स्थित है।

7.87.48

मरौ नास्त्येव सलिलं संवित्पश्यति तत्तथा । निर्मूलमन्तःसंतप्ता स्वसंभ्रमवती भ्रमम् ॥ ४८ ॥

marau nāstyeva salilaṃ saṃvitpashyati tattathā | nirmūlamantaḥsantaptā svasaṃbhramavatī bhramam || 48 ||

Just as there is no water in a mirage, consciousness sees it as such; being internally afflicted, it is deluded by its own confusion.

जैसे मृगतृष्णा में जल नहीं होता, चेतना उसे ऐसे ही देखती है; अंतर से संतप्त होकर, वह अपने भ्रम से भ्रमित हो जाती है।

7.87.49

नास्त्येव ब्रह्मणि जगत् संवित्पश्यति तत्तथा । निर्मूलमेव संवित्त्वादेवं भ्रान्तेश्च संभ्रमम् ॥ ४९ ॥

nāstyeva brahmaṇi jagat saṃvitpashyati tattathā | nirmūlamēva saṃvittvādevaṃ bhrāntēśca saṃbhramam || 49 ||

Just as there is no world in Brahman, consciousness sees it as such; being without root, due to the nature of consciousness and the delusion of the deluded, it is thus confused.

जैसे ब्रह्म में जगत नहीं होता, चेतना उसे ऐसे ही देखती है; बिना मूल के, चेतना के स्वभाव और भ्रमित के भ्रम के कारण, यह ऐसे ही भ्रमित है।

7.87.50

असदेवेदमाभाति हृद्येव जगदाततम् । संकल्पनमनोराज्यं यथा स्वप्नपुरादिवत् ॥ ५० ॥

asadevedamābhāti hṛdyeva jagadātatam | saṃkalpanamanorājyaṃ yathā svapnapurādivat || 50 ||

This world appears as unreal, as if it is spread out in the heart; it is like the imaginary kingdom of a dream, a mere mental projection.

यह जगत असत् के रूप में प्रतीत होता है, जैसे यह हृदय में फैला हुआ है; यह स्वप्न के नगर के समान है, एक मानसिक कल्पना मात्र।

7.87.51

पार्श्वसुप्तजनस्वप्नस्तच्चित्तावेशनं विना । यथा न किंचित्तच्चित्तावेशनादनुभूयते ॥ ५१ ॥

pārśvasuptajanasvapnastaccittāveśanaṃ vinā | yathā na kiṃcit taccittāveśanādanubhūyate || 51 ||

Just as the dream of a person sleeping nearby is not experienced without the influence of that person's mind, so too the world is not experienced without the influence of the mind.

जैसे पास सोये हुए व्यक्ति का स्वप्न उसके मन के प्रभाव के बिना अनुभव नहीं किया जाता, वैसे ही जगत मन के प्रभाव के बिना अनुभव नहीं किया जाता।

7.87.52

तथा जगत्तदृषदं संप्रविश्यानुभूयते । आदर्शबिम्बिताकारं दृष्टमप्यन्यथाप्यसत् ॥ ५२ ॥

tathā jagattaddṛṣadaṃ saṃpraviśyānubhūyate | ādarśabimbitākāraṃ dṛṣṭamapyanyathāpyasat || 52 ||

Thus, the world is experienced as it is perceived | The reflection seen in a mirror, though seen, is not real || 52 ||

इस प्रकार, जगत उसी तरह अनुभव किया जाता है जिस तरह से वह देखा जाता है | दर्पण में प्रतिबिम्बित आकार, देखा जाने पर भी, वास्तविक नहीं होता || ५२ ||

7.87.53

आधिभौतिकभावेन नेत्रेण यदि लक्ष्यते । तत्तन्न दृश्यते किंचिद्गिरिरेव प्रदृश्यते ॥ ५३ ॥

ādhibhautikabhāvena netreṇa yadi lakṣyate | tattanna dṛśyate kiṃcidgirireva pradṛśyate || 53 ||

If one looks with materialistic eyes | Nothing is seen, only the mountain appears || 53 ||

यदि कोई भौतिक दृष्टि से देखता है | तो कुछ भी नहीं दिखता, सिर्फ पर्वत ही दिखाई देता है || ५३ ||

7.87.54

आतिवाहिकदेहेन परं बोधदृशा यदि । प्रेक्ष्यते दृश्यते सर्गः परमात्मैव चामलः ॥ ५४ ॥

ātivāhikadehena paraṃ bodhadṛśā yadi | prekṣyate dṛśyate sargaḥ paramātmaiva cāmalaḥ || 54 ||

If one looks with the transcendental body and the supreme vision of knowledge | The creation is seen, and the supreme self is pure || 54 ||

यदि कोई पारलौकिक शरीर और ज्ञान की परम दृष्टि से देखता है | तो सृष्टि दिखाई देती है, और परमात्मा शुद्ध होता है || ५४ ||

7.87.55

सर्वत्र सर्गनिर्वाणं प्रज्ञालोकेन लक्ष्यते । ब्रह्मात्मैवान्यथा चेत्तन्न किंचिदभिलक्ष्यते ॥ ५५ ॥

sarvatra sarganirvāṇaṃ prajñālokena lakṣyate | brahmātmaiva anyathā cet tanna kiṃcidabhilakṣyate || 55 ||

Everywhere, the creation and liberation are seen with the light of wisdom | If Brahman is seen otherwise, nothing is perceived || 55 ||

सर्वत्र, सृष्टि और मुक्ति ज्ञान के प्रकाश से दिखाई देती है | यदि ब्रह्म को अन्यथा देखा जाता है, तो कुछ भी दिखाई नहीं देता || ५५ ||

7.87.56

यत्पश्यत्यवदाता धीः सोपपत्तिविचारणा । न तन्नेत्रैस्त्रिभिः शर्वो नेन्द्रो नेत्रशतैरपि ॥ ५६ ॥

yatpaśyatyavadātā dhīḥ sopapattivicāraṇā | na tannetraistribhiḥ śarvo nendro netraśatairapi || 56 ||

That which is seen by the unbiased intellect with logical reasoning | Cannot be seen by the three eyes of Shiva, nor by Indra with a hundred eyes || 56 ||

जो निष्पक्ष बुद्धि द्वारा तर्कसंगत विचार से देखा जाता है | वह शिव के तीन नेत्रों से नहीं देखा जा सकता, न ही इंद्र के सौ नेत्रों से || ५६ ||

7.87.57

यथा खमावृतं सर्गैस्तथा भूरिति बुद्धवान् । तदाहमभवं ध्याता धराधारणयान्वितः ॥ ५७ ॥

yathā khamāvṛtaṃ sargais tathā bhūriti buddhvān| tadāhamabhavaṃ dhyātā dharādhāraṇayānvitaḥ || 57 ||

Just as the sky is covered by the creations, similarly, I realized the Earth| Then I became the meditator, endowed with the support of the Earth

जैसे आकाश सृष्टियों से ढका हुआ है, वैसे ही मैंने पृथ्वी को समझा| तब मैं ध्यान करने वाला बन गया, पृथ्वी के सहारे से युक्त

7.87.58

तया धराधारणया धरारूपधरोऽभवम् । अत्यजन्नेव चिद्व्योमवपुः सम्राडिवाचिरात् ॥ ५८ ॥

tayā dharādhāraṇayā dharārūpadharo'bhavaṃ| atyajanneva cidvyomavapuḥ samrāḍivācirāt || 58 ||

By that support of the Earth, I became the supporter of the Earth's form| I immediately abandoned the form of the conscious sky, like a king from his throne

उस पृथ्वी के सहारे से, मैं पृथ्वी के रूप का धारण करने वाला बन गया| मैंने तुरंत चेतन आकाश के रूप को त्याग दिया, जैसे कोई राजा अपने सिंहासन से

7.87.59

धराधारणया चैव धराधातूदरं गतः । द्वीपाद्रितृणवृक्षादिदेहोऽहमनुभूतवान् ॥ ५९ ॥

dharādhāraṇayā caiva dharādhātūdaraṃ gataḥ| dvīpādrītṛṇavṛkṣādideho'hamanubhūtavān || 59 ||

And by the support of the Earth, I entered the essence of the Earth| I experienced the body composed of islands, mountains, grass, trees, etc.

और पृथ्वी के सहारे से, मैं पृथ्वी की आत्मा में प्रवेश किया| मैंने द्वीपों, पर्वतों, घास, पेड़ों आदि से बने शरीर का अनुभव किया

7.87.60

संपन्नोऽस्म्यथ भूपीठे नानावनतनूरुहम्। नानारत्नावलीव्याप्ते नानानगरभूषणम्॥ ६०॥

saṃpanno'smyatha bhūpīṭhe nānāvanatanūruham| nānāratnāvalīvyāpte nānānagarabhūṣaṇam || 60 ||

Then I became complete on the throne of the Earth, with various bowing bodies| Adorned with various gems and various city ornaments

फिर मैं पृथ्वी के सिंहासन पर पूर्ण हो गया, विविध झुके हुए शरीरों के साथ| विविध रत्नों और विविध नगर आभूषणों से सुशोभित

7.87.61

ग्रामगह्वरपर्वाढ्यं पातालसुषिरोदरम्। कुलाचलभुजाश्लिष्टद्वीपाब्धिवलयान्वितम्॥ ६१॥

grāmagahvaraparvāḍhyaṃ pātālasuṣirodaram| kulācalabhujāśliṣṭadvīpābdhivalayānvitam || 61 ||

With the abundance of villages, caves, and mountains, with the hollow interior of the underworld| Embraced by the arms of the mountain ranges, adorned with the garland of islands and oceans

गाँवों, गुफाओं और पर्वतों की अधिकता के साथ, पाताल के खोखले अंतर के साथ| पर्वत श्रृंखलाओं की बाहों से आलिंगन किया हुआ, द्वीपों और समुद्रों की माला से सुशोभित

7.87.62

तृणौघतनुरोमाढ्यं गिरिखण्डकगुल्मकम्। दिग्वारणकटव्यूहधृतं शेषशिरःशतैः॥ ६२॥

tṛṇaughatanuromāḍhyaṃ girikhaṇḍakagulmakam | digvāraṇakaṭavyūhadhṛtaṃ śeṣaśiraḥśataiḥ || 62 ||

The earth, adorned with grass, thin-bodied, and covered with hair, is like a small hillock or a bush. It is protected by the arrangement of the cardinal directions and supported by hundreds of serpent heads.

यह धरती घास से सजी, पतले शरीर वाली और बालों से ढकी हुई है, जैसे एक छोटा पहाड़ी टीला या झाड़ी हो। यह दिशाओं के व्यूह द्वारा सुरक्षित है और सैकड़ों साँपों के सिरों द्वारा समर्थित है।

7.87.63

ह्रियमाणं महीपालः शोभमानेभतन्तुभिः। प्राणिभिर्भुज्यमानाङ्गं वर्धमानं व्यवस्थया॥ ६३॥

hriyamāṇaṃ mahīpālaḥ śobhamānebhatantubhiḥ | prāṇibhirbhujyamānāṅgaṃ vardhamānaṃ vyavasthayā || 63 ||

The king of the earth is being taken away, adorned with shining threads. The body is being enjoyed by living beings and is growing in order.

धरती का राजा चमकीले तारों से सजा हुआ ले जाया जा रहा है। शरीर प्राणियों द्वारा भोगा जा रहा है और क्रम से बढ़ रहा है।

7.87.64

हिमवद्विन्ध्यसुस्कन्धं सुमेरूदारकन्धरम्। गङ्गादिसरिदापूरमुक्ताहाररणत्तनुम्॥ ६४॥

himavadvindhyasuskandhaṃ sumerūdārakandharam | gaṅgādisaridāpūramuktāhāraraṇattanum || 64 ||

With the Himalayas and Vindhyas as its beautiful shoulders, the Meru mountain as its strong neck, filled with rivers like the Ganges, and adorned with pearl necklaces.

हिमालय और विंध्याचल इसके सुंदर कंधे हैं, मेरु पर्वत इसकी मजबूत गर्दन है, गंगा जैसी नदियों से भरा हुआ और मोती की मालाओं से सजा हुआ।

7.87.65

गुहागहनकच्छादि सागरादर्शमण्डलम्। मरूषरस्थलश्वेतसुवराम्बरसुन्दरम्॥ ६५॥

guhāgahanakacchādi sāgarādarśamaṇḍalam | marūṣarasthalasveta suvarāmbarasundaram || 65 ||

Covered with dense forests and caves, reflecting like a mirror of the ocean, beautiful with white deserts and golden skies.

घने जंगलों और गुफाओं से ढका हुआ, समुद्र के दर्पण की तरह प्रतिबिंबित, सफेद रेगिस्तान और सुनहरे आकाश से सुंदर।

7.87.66

भूतपूर्वैः परापूर्णं परिपूतं महार्णवैः। अलंकृतं पुष्पवनैः समारब्धं रजोघनैः॥ ६६॥

bhūtapūrvaiḥ parāpūrṇaṃ paripūtaṃ mahārṇavaiḥ | alaṅkṛtaṃ puṣpavanaaiḥ samārabdhaṃ rajoghanaiḥ || 66 ||

Filled with past beings, purified by great oceans, adorned with flower gardens, and enveloped by dense clouds.

भूतकाल के प्राणियों से भरा हुआ, महान समुद्रों द्वारा पवित्र, फूलों के बगीचों से सजा हुआ, और घने बादलों से ढका हुआ।

7.87.67

नित्यं कृषीवलैः कृष्टं वीजितं शिशिरानिलैः। तापितं तपनैस्तप्तैरुक्षितं प्रावृडम्बुभिः॥ ६७॥

nityaṃ kṛṣīvalaiḥ kṛṣṭaṃ vījitaṃ śiśirānilaiḥ | tāpitaṃ tapanais taptai rukṣitaṃ prāvṛḍambubhiḥ || 67 ||

The earth is always plowed by farmers, sown by the cool breeze, heated by the scorching sun, and moistened by the rainwater.

यह धरती हमेशा किसानों द्वारा जोती जाती है, ठंडी हवाओं से बीजी जाती है, तपते सूरज से गर्म होती है, और बारिश के पानी से भीगती है।

7.87.68

विपुलाग्रस्थलोरस्कं पद्माकरकृतेक्षणम्। सितासितघनोष्णीषं दशाशोदरमन्दिरम्॥ ६८॥

vipulāgrasthaloraskaṃ padmākarakṛtekṣaṇam | sitāsitaghanōṣṇīṣaṃ daśāśodaramandiram || 68 ||

The earth is vast with high peaks and broad chest, with eyes like lotus ponds, wearing a garland of white and black clouds, and having the ocean as its belly.

यह धरती विशाल है जिसके ऊँचे शिखर और चौड़ा वक्ष है, जिसकी आँखें कमल के तालाब की तरह हैं, जो सफेद और काले बादलों की माला पहने हुए है, और जिसका पेट समुद्र है।

7.87.69

लोकालोकमहाखातवलयोग्रास्यभीषणम्। अनन्तभूतसंघातपरिस्पन्दैकचेतनम्॥ ६९॥

lokālokamahākhātavalayograsyabhīṣaṇam | anantabhūtasaṃghātaparispaṇḍaikacetanam || 69 ||

The earth is a terrifying abyss, surrounded by the vast expanse of the universe, with countless beings trembling in fear.

यह धरती एक भयानक गहराई है, जो ब्रह्मांड के विशाल विस्तार से घिरी हुई है, जिसमें अनगिनत प्राणी डर से काँप रहे हैं।

7.87.70

व्याप्तमन्तर्बहिश्चैव नानाभूतगणैः पृथक्। देवदानवगन्धर्वैर्बहिरन्तस्तु कीटकैः॥ ७०॥

vyāptamantarbahiścaiva nānābhūtagaṇaiḥ pṛthak | devadānavagandharvairbahirantastu kīṭakaiḥ || 70 ||

The earth is pervaded both internally and externally by various beings, including gods, demons, celestial musicians, and even insects.

यह धरती आंतरिक और बाह्य रूप से विभिन्न प्राणियों से व्याप्त है, जिसमें देवता, असुर, गंधर्व और कीड़े शामिल हैं।

7.87.71

पातालेन्द्रियरन्ध्रेषु नागासुरकृमिव्रजैः । सप्तस्वर्णवकोशेषु नानाजातिजलेचरैः ॥ ७१ ॥

pātālendriyarandhreṣu nāgāsurakṛmivrajaiḥ | saptasvarṇavakośeṣu nānājātijalecharaiḥ || 71 ||

In the underworld, there are various beings like serpents, demons, worms, and different types of aquatic creatures in the seven oceans.

पाताल में, विभिन्न प्राणी जैसे सर्प, असुर, कीड़े और सात समुद्रों में विभिन्न प्रकार के जलीय जीव हैं।

7.87.72

व्याप्तं नदीवनसमुद्रदिगन्तशैलद्वीपाख्यजन्तुविषयस्थलजङ्गलौघैः । नानावलीवलितमण्डलकोशखण्डं वल्लीसरःसरिदरातिगणाब्जखण्डैः ॥ ७२ ॥

vyāptaṃ nadīvanasamudradigantaśailadvīpākhyajantuviṣayasthalajaṅgalaughaiḥ |
nānāvalīvalitamaṇḍalakośakhaṇḍaṃ vallīsaraḥsaridarātigaṇābjakhaṇḍaiḥ || 72 ||

The world is filled with various entities such as rivers, forests, oceans, directions, mountains, islands, living beings, places, and forests. It is adorned with diverse garlands, circular regions, and segments of lotus-like formations.

यह दुनिया नदियों, जंगलों, समुद्रों, दिशाओं, पहाड़ों, द्वीपों, जीवों, स्थानों और जंगलों से भरी हुई है। यह विविध मालाओं, गोल क्षेत्रों और कमल जैसे खंडों से सजी हुई है।

Chapter 88

7.88.1

भूपीट्हेन सता तत्र मया तदनु मानवानुभूतं नदनदीस्वसंवेदनसंस्थितेः ॥ १ ॥

bhūpīṭhena satā tatra mayā tadanu mānavaanubhūtaṃ nadanadīsvasaṃvedanasaṃsthiteḥ || 1 ||

By the power of the earth, I experienced there the sensations of rivers and sounds, following the human experience.

पृथ्वी की शक्ति से, मैंने वहाँ नदियों और ध्वनियों के अनुभव को महसूस किया, मानवीय अनुभव का अनुसरण करते हुए।

7.88.2

क्वचिन्मरणसाक्रन्दनारीकरुणवेदनम्क्वचिदुत्ताण्डवस्त्रैणमहोत्सवमहासुखम् ॥ २ ॥

kvacinmaraṇasākrandanārīkaruṇavedanamkvaciduttāṇḍavastraiṇamahotsavamahāsukham || 2 ||

Sometimes there is the mournful wailing of women at the time of death, and sometimes there is the great joy of festivals with exuberant dancing.

कभी-कभी मृत्यु के समय स्त्रियों का दुःखभरा रोना होता है, और कभी-कभी उत्सवों का महान आनंद होता है, जिसमें उल्लासपूर्ण नृत्य होता है।

7.88.3

क्वचिद्दुर्वारदुर्भिक्षदुराक्रन्दं दुरीहितम्क्वचित्सकलसस्यौघसंपन्नघनसौहृदम् ॥ ३ ॥

kvaciddurvāradurbhikṣadurākrandaṃ durīhitamkvacitsakalasasyaughasaṃpannaghanasauhṛdam || 3 ||

Sometimes there is severe famine and harsh cries of distress, and sometimes there is an abundance of crops and dense friendliness.

कभी-कभी कठोर अकाल और कठिन पीड़ा के रोने होते हैं, और कभी-कभी फसलों की अधिकता और घनिष्ठ मित्रता होती है।

7.88.4

क्वचिदग्निमहादाहदग्धदेहोग्रवेदनम्क्वचिज्जलप्लवालूनपुरपत्तनकहण्डकम् ॥ ४ ॥

kvacidagnimahādāhadagdhadehogravedanamkvacijjalaplavālūnapurapattanakhaṇḍakam || 4 ||

Sometimes there is the intense burning sensation of a body consumed by a great fire, and sometimes there is the delight of floating on water in a city.

कभी-कभी एक महान आग से जले हुए शरीर की तीव्र जलन का अनुभव होता है, और कभी-कभी पानी पर तैरने का आनंद एक शहर में होता है।

7.88.5

क्वचिद्चपलसामन्तकृतलुण्ठनमण्डलम्क्वचिदुद्दामदौरात्म्यरक्षःपैशाचमण्डलम् ॥ ५ ॥

kvacidcapalasāmantakṛtaluṇṭhanamaṇḍalamkvaciduddāmadaurātmyarakṣaḥpaiśācamaṇḍalam || 5 ||

Sometimes there is a circle of restless attendants creating chaos, and sometimes there is a grand circle of self-pride and demonic protection.

कभी-कभी बेचैन सेवकों का एक गोलाकार अव्यवस्था पैदा करता है, और कभी-कभी एक महान गोलाकार आत्म-गर्व और राक्षसी सुरक्षा होती है।

7.88.6

क्वचिज्जलाशयोल्लासवेल्लनोत्पुलकाग्रकम् । कन्दरोदरनिष्क्रान्तवातवेल्लितवारिदम् ॥ ६ ॥

kvcidjalāśayollāsavelanotpulakāgrakam | kandarodaraniskrāntavātavellitavāridam || 6 ||

Somewhere, the waves of the lake are rising, causing the tips of the lotuses to tremble | The wind, emerging from the caves, is shaking the water.

कहीं, झील की लहरें उठ रही हैं, कमल के किनारों को कंपा रही हैं | गुफाओं से निकली हवा पानी को हिला रही है।

7.88.7

संविद्बोधोन्नमत्स्वाङ्गकेशोत्थाङ्कुरलोमकम् । वारिवाहनविक्षोभनतोन्नतलसत्तलम् ॥ ७ ॥

saṃvidbodhonnamatsvāṅakeśotthāṅkuralomakam | vārivāhanavikṣobhanatonnatalasattalam || 7 ||

The hair on the body is standing up due to the awakening of consciousness | The water carriers are disturbed, causing the waves to rise.

चेतना के जागरण से शरीर के बाल खड़े हो गए हैं | पानी के वाहक विचलित हो गए हैं, जिससे लहरें उठ रही हैं।

7.88.8

सशृङ्गभैरवश्वभ्रपुराद्रिवनपत्तनम् । संविन्मण्डलसंचाललेखाङ्कमृदुकम्पनम् ॥ ८ ॥

saśṛṅgabhairavaśvabhrapurādrirvanapattanam | saṃvinmaṇḍalasaṃcālalekhāṅkamṛdukampanam || 8 ||

The city with mountains and forests, with peaks and valleys, is gently vibrating due to the movement of the consciousness circle.

पहाड़ों और जंगलों वाला शहर, चोटियों और घाटियों के साथ, चेतना के चक्र की गति से हल्के से काँप रहा है।

7.88.9

क्वचित्सामन्तसंक्षुब्धसैन्यसंहरणं रणे । क्वचित्सौम्यसुखासीनसर्वसामन्तमण्डलम् ॥ ९ ॥

kvcitsāmantasaṅkṣubdhasainyasaṃharaṇaṃ raṇe | kvcitsaumyasukhāsīnasarvasāmantamaṇḍalam || 9 ||

Somewhere, the army of the neighboring kingdoms is being defeated in battle | Somewhere, all the neighboring kingdoms are peacefully seated in happiness.

कहीं, पड़ोसी राज्यों की सेना युद्ध में हार रही है | कहीं, सभी पड़ोसी राज्य शांतिपूर्वक सुख में बैठे हैं।

7.88.10

अरण्यं क्वचिदाशून्यमुल्लसद्वातझंकृति । जंगलं क्वचिदालूनव्युप्तसंपन्नसस्यकम् ॥ १० ॥

araṇyaṃ kvcidāśūnyamullasadvātjhaṅkṛti | jaṅgalaṃ kvcidālūnavyuptasaṃpannasasyakam || 10 ||

Somewhere, the forest is empty, with the wind blowing through it | Somewhere, the jungle is full of abundant crops.

कहीं, जंगल खाली है, हवा उसमें बह रही है | कहीं, जंगल फसलों से भरा हुआ है।

7.88.11

हंसकारण्डवाकीर्णसरः फुल्लाम्बुजं क्वचित् । क्वचिन्मरुस्थलस्थूलस्तम्भनार्जुनमारुतम् ॥ ११ ॥

haṃsakāraṇḍavākīrṇasaraḥ phullāmbujaṃ kvacit | kvacinmarusthalasthūlastambhanārjunamārutam || 11 ||

In some places, the lake is filled with swans and ducks, and lotuses are in full bloom. In some places, there is a strong wind blowing through the thick pillars of the desert.

कहीं-कहीं हंस और कारंडव से भरा सरोवर है, और कमल पूरी तरह से खिले हुए हैं। कहीं-कहीं, रेगिस्तान के मोटे स्तंभों से तेज हवा चल रही है।

7.88.12

क्वचिन्नदनदीवाहहेलानिकषघर्घरम् । क्वचिदङ्कुरकार्याङ्गसिक्तबीजस्य जृम्भणम् ॥ १२ ॥

kvacinnadanadīvāhahelānikṣaghargharam | kvacidaṅkurakāryāṅgasiktabījasya jṛmbhaṇam || 12 ||

In some places, the sound of flowing rivers and streams is heard. In some places, the sprouting of seeds that have been soaked in water is seen.

कहीं-कहीं नदियों और धाराओं के बहने की आवाज सुनाई देती है। कहीं-कहीं, पानी में भीगे हुए बीजों के अंकुरित होने का दृश्य दिखाई देता है।

7.88.13

क्वचिदन्तस्तु कीटास्यमृदुस्पन्दनवेदनम् । मां त्वमेवाशु बुद्धेह त्रायस्वेतीव बोधनम् ॥ १३ ॥

kvacidantastu kīṭāsyamṛduspandanavedanam | māṃ tvamevāśu buddhveha trāyasvetīva bodhanam || 13 ||

In some places, there is a gentle sensation of insects moving. Please protect me quickly, realizing this.

कहीं-कहीं, कीड़ों के हल्के हिलने की अनुभूति होती है। कृपया इसे जल्दी समझकर मेरी रक्षा करें।

7.88.14

शाखापरिकराभोगं मृद्भागाङ्गनिपीडनैः । मूलजालमवष्टभ्य क्वचिद्विटपधारिणम् ॥ १४ ॥

śākhāparikarābhogaṃ mṛdbhāgāṅganipīḍanaiḥ | mūlajālamavaṣṭabhya kvacidviṭapadhāriṇam || 14 ||

In some places, the branches are adorned with beautiful leaves, and the roots are firmly supported by the earth. The tree is laden with foliage.

कहीं-कहीं, शाखाएँ सुंदर पत्तों से सजी हुई हैं, और जड़ें धरती द्वारा मजबूती से सहारा दिया जाता है। पेड़ पत्तों से भरा हुआ है।

7.88.15

अन्योन्यमलमाक्रम्य दिक्तटाङ्गनिपीडनैः । क्वचिदद्य स्थिनिबिडैरर्णवोल्लासवेल्लितम् ॥ १५ ॥

anyonyamalamākramya diktatāṅganipīḍanaiḥ | kvacidadrya sthinibiḍairarṇavollāsavellitam || 15 ||

In some places, the mountains are intertwined, and their peaks are pressed against each other, creating a dense and compact formation. The ocean waves crash against them, causing a dynamic scene.

कहीं-कहीं, पर्वत एक-दूसरे से गुंथे हुए हैं, और उनकी चोटियाँ एक-दूसरे से दबी हुई हैं, जिससे एक घना और संपीड़ित संरचना बनती है। समुद्र की लहरें उनसे टकराती हैं, जिससे एक गतिशील दृश्य बनता है।

7.88.16

शुष्कपल्लवसंकोचनिबिडाङ्गनिपीडनम् । अमर्षणैः करैरार्कैः स्वरसाकर्षणं क्वचित् ॥ १६ ॥

śuṣkapallavasaṃkocanibiḍāṅganipīḍanam | amarṣaṇaiḥ karairārkaiḥ svarasākarṣaṇaṃ kvacit || 16 ||

The dry leaves shrink and the dense body parts are pressed | With angry hands, they sometimes pull the voice harshly.

सूखे पत्ते सिकुड़ जाते हैं और घने अंगों को दबाया जाता है | क्रोधित हाथों से, वे कभी-कभी आवाज को कठोरता से खींचते हैं।

7.88.17

शृङ्गमन्दिरमातङ्गप्रहाराशनिभूरुहाम् । निबिडाङ्गोत्कटस्थैर्यपरुषापतनं क्वचित् ॥ १७ ॥

śṛṅgamandiramātaṅgaprahārāśanibhūruhām | nibiḍāṅgotkaṭasthairya-paruṣāpatanaṃ kvacit || 17 ||

The temple of the horns of the elephant's strike is like a thunderbolt | Sometimes the dense body parts fall harshly with firm stability.

हाथी के प्रहार का सींगों का मंदिर वज्र के समान है | कभी-कभी घने अंग स्थिरता से कठोरता से गिरते हैं।

7.88.18

निमीलितैक्षणानन्दतनूनामसमाक्रमम्। क्वचित्सूक्ष्मतरोल्लेखमङ्कुरोल्लासनं नवम्॥ १८॥

nimīlitaiakṣaṇānandatanūnāmasamākramam | kvacitsūkṣmatarollekhamankurollāsanaṃ navam || 18 ||

The bliss of the closed eyes and the subtle mark of the sprouting of the body | Sometimes the delicate mark of the sprouting of the bud is the ninth.

बंद आँखों का आनंद और शरीर के अंकुरण का सूक्ष्म चिह्न | कभी-कभी अंकुर के उभार का सूक्ष्म चिह्न नवाँ होता है।

7.88.19

मक्षिकायौकमशकनिवाससदृशं क्वचित्। कुड्यलेशकुभृङ्गारिहलहेलानिकर्षणम्॥ १९॥

makṣikāyaukamaśakanivāsasadṛśaṃ kvacit | kuḍyaleśakubhṛṅgārihalahēlānikarṣaṇam || 19 ||

Sometimes like the residence of flies and bees | The pulling of the delicate mark of the wall, bees, and the buzzing sound.

कभी-कभी मक्खियों और मधुमक्खियों के निवास के समान | दीवार, मधुमक्खियों और भनभनाहट के सूक्ष्म चिह्न को खींचना।

7.88.20

शीतं शीतविशीर्णाङ्गजर्जरत्वग्विकीर्णवत्। पाषाणीभूतसलिलं क्वचित्परुषमारुतम्॥ २०॥

śītaṃ śītaviśīrṇāṅgajarjaratvagvikīrṇavat | pāṣāṇībhūtasalilaṃ kvacitparuṣamārutam || 20 ||

Cold, with the body parts scattered and the skin rough due to the cold | Sometimes the water becomes like stone, and the wind is harsh.

ठंड, ठंड से बिखरे हुए अंगों और खुरदुरी त्वचा के साथ | कभी-कभी पानी पत्थर के समान हो जाता है, और हवा कठोर होती है।

7.88.21

उद्दालीभूतमृद्वङ्गमज्जदन्तःकृमिव्रजम्। क्वचिदुद्भवदङ्गादिमूलं जलनिमज्जनम्॥ २१॥

uddālībhūtamṛdvagamajjadantaḥkṛmivrajam | kvacidudbhvadagādimūlaṃ jalanimajjanam || 21 ||

The body, which has become emaciated, is infested with worms inside, and sometimes the roots of the body parts sprout, immersed in water.

शरीर, जो दुबला हो गया है, अंदर कीड़ों से भरा हुआ है, और कभी-कभी शरीर के अंगों की जड़ें पानी में डूबी हुई उगती हैं।

7.88.22

शनैरन्तर्निलीनाम्बुकृताह्लादं बहिश्च रसोन्नामाङ्कुररोमौघं क्वचिद्वर्षविजृम्भितम्॥ २२॥

śanairantarnilīnāmbukṛtāhlādaṃ bahiśca rasounnāmāṅkuraromaughaṃ kvacidvarṣavijṛmbhitam || 22 ||

Slowly, the water inside brings joy, and outside, the sprouts of hair and other growths sometimes burst forth with the rains.

धीरे-धीरे, अंदर का पानी आनंद लाता है, और बाहर, बालों और अन्य वृद्धियों की अंकुर कभी-कभी वर्षा के साथ फूट पड़ती हैं।

7.88.23

तनुतरपवनविकम्पितकोमलनलिनीदलास्तरणैः। विहरणमिव मे विहितं सरोभिरङ्गेषु निर्वाणम्॥ २३॥

tanutarapavanavikampitakomalanalinīdalāstaraṇaiḥ | viharaṇamiva me vihitaṃ sarobhiraggeṣu nirvāṇam || 23 ||

With the delicate lotus petals trembling in the gentle breeze, it seems as if the lakes have arranged a playful sport for me in their waters.

हलकी हवा में कोमल कमल के पत्तों के कारण झूमते हुए, ऐसा लगता है कि सरोवरों ने मेरे लिए अपने पानी में एक खेल की व्यवस्था कर दी है।

Chapter 89

7.89.1

श्रीराम उवाच । पार्थिवीं धारणां बद्ध्वा जगन्ति समवेक्षितुम् । संपन्नस्त्वमसौ भूमिलोकः किमुत मानसः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | pārthivīṃ dhāraṇāṃ baddhvā jaganti samavekṣitum | saṃpannastvamasaubhūmilokaḥ kimuta mānasaḥ || 1 ||

Shri Rama said: Having assumed the earthly form, to observe the world, you have attained this earthly realm, what to speak of the mental realm.

श्री राम ने कहा: पृथ्वी का रूप धारण करके जगत को देखने के लिए, आपने इस भूमि लोक को प्राप्त कर लिया है, मन के लोक की तो बात ही छोड़िए।

7.89.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । इदं च मानसं चाहं संपन्नः पृथुभूतलम् । नेदं न मानसं नैव संपन्नो वस्तुतस्त्वहम् ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | idaṃ ca mānasaṃ cāhaṃ saṃpannaḥ pṛthubhūtalam | nedaṃ na mānasaṃ naiva saṃpanno vastutastvaham || 2 ||

Vasistha said: I have attained both this earthly realm and the mental realm. Truly, I have not attained neither this nor the mental realm.

वसिष्ठ ने कहा: मैंने इस भूमि लोक और मन के लोक दोनों को प्राप्त कर लिया है। वास्तव में, मैंने न तो इसे प्राप्त किया है न ही मन के लोक को।

7.89.3

अमानसं महीपीठं न संभवति किंचन । यदसद्वेत्सि यत्सद्वा मनोमात्रकमेव तत् ॥ ३ ॥

amānasaṃ mahīpīṭhaṃ na saṃbhavati kiṃcana | yadasadvetsi yatsadvā manomātrakameva tat || 3 ||

Without the mind, the earthly realm does not exist at all. Whatever you perceive as real or unreal is merely a creation of the mind.

मन के बिना, भूमि लोक बिलकुल नहीं होता। जो कुछ भी आप सत्य या असत्य समझते हैं, वह सब केवल मन की ही सृष्टि है।

7.89.4

चिदाकाशमहं शुद्धं तस्य मे तत्पदात्मनः । यच्चिन्मात्रात्मकचनं तत्संकल्पाभिदं स्मृतम् ॥ ४ ॥

cidākāśamahaṃ śuddhaṃ tasya me tatpadātmanaḥ | yaccinmātrātmakaścanaṃ tatsaṃkalpābhidaṃ smṛtam || 4 ||

I am the pure consciousness, the essence of that state. Whatever is purely conscious is known as the product of imagination.

मैं शुद्ध चेतना हूं, उस स्थिति का सार हूं। जो कुछ भी पूर्ण रूप से चेतना है, वह कल्पना का परिणाम माना जाता है।

7.89.5

तन्मनस्तन्महीपृष्ठं तज्जगत्स पितामहः । संकल्पपुरवद्व्योम्नि कचत्येतन्मनोनभः ॥ ५ ॥

tanmanastanmahīpṛṣṭhaṃ tajjagatsa pitāmahaḥ | saṃkalpapuravadvyomni kacatyetanmanonabhaḥ || 5 ||

That mind, that earthly realm, that world, and that Brahma, all move in the sky of imagination like a city in the clouds.

वह मन, वह भूमि लोक, वह जगत, और वह ब्रह्मा, सब कल्पना के आकाश में बादलों की नगरी की तरह चलते हैं।

7.89.6

एवं संकल्पमात्रं मे मनोमात्रं तदाततम्। धारणाभ्याससंपुष्टं भूमण्डलमिति स्थितम्॥ ६॥

evaṃ saṃkalpamātraṃ me manomātraṃ tadātatam | dhāraṇābhyāsasaṃpuṣṭaṃ bhūmaṇḍalamiti sthitam || 6 ||

Thus, my mere resolve, which is just a mental construct, is established as the earth, nourished by the practice of concentration.

इस प्रकार, मेरा यह संकल्प, जो केवल मन का विचार है, धारणा के अभ्यास से पुष्ट होकर पृथ्वी के रूप में स्थित है।

7.89.7

नेदं भूमण्डलं तद्वै तदन्यद्धि मनोमयम्। आकाशमात्रकचनमचेत्यं कचनं चितेः॥ ७॥

nedaṃ bhūmaṇḍalaṃ tadvai tadanyaddhi manomayam | ākāśamātrakacanamacetyaṃ kacanaṃ citeḥ || 7 ||

This earth is not that; it is something else, mental in nature, a mere appearance in the sky, non-conscious, a mere appearance of consciousness.

यह पृथ्वी वह नहीं है; यह कुछ और है, मानसिक स्वभाव का, आकाश में एक मात्र दिखावट, अचेतन, चेतना का एक मात्र दिखावट।

7.89.8

तदेवाकाशमात्रात्म तथाभूतं चिरं स्थितम्। इदं प्रत्ययलब्धत्वान्मानसत्वं समुज्झति॥ ८॥

tadevākāśamātrātma tathābhūtaṃ ciraṃ sthitam | idaṃ pratyayalabdhatvānmānasatvaṃ samujjhati || 8 ||

That very thing, which is merely the nature of space, remains thus for a long time. This, having obtained the nature of a mental impression, abandons its mental nature.

वही चीज, जो केवल आकाश की प्रकृति है, लंबे समय तक ऐसे ही रहती है। यह, मानसिक संवेदना की प्रकृति प्राप्त करके, अपनी मानसिक प्रकृति को त्याग देती है।

7.89.9

इदं स्थिरं सुकठिनं विततं भूमिमण्डलम्। अस्तीति जायते बुद्धिर्व्योम्नीव चिरवेदनात्॥ ९॥

idaṃ sthiraṃ sukaṭhinaṃ vitataṃ bhūmimaṇḍalam | astīti jāyate buddhirvyomnīva ciravedanāt || 9 ||

This stable, very hard, and extensive earth is perceived to exist, just like the sky, due to long-standing knowledge.

यह स्थिर, बहुत कठिन, और विस्तृत पृथ्वी लंबे समय से ज्ञान के कारण अस्तित्व में दिखाई देती है, जैसे आकाश।

7.89.10

न्यायेनेदमिवानेन न स्थितं वसुधातलम्। इदं चैवैकमेवाद्यसर्गस्याद्यमुपागतम्॥ १०॥

nyāyenenedamivānena na sthitaṃ vasudhātalam | idaṃ caivaikamevādyasargasyādyamupāgatam || 10 ||

By logical reasoning, this earth is not established as it appears. This is indeed the first creation of the primordial creation.

तर्क के द्वारा, यह पृथ्वी जैसी दिखाई देती है वैसी स्थापित नहीं है। यह वास्तव में आदि सृष्टि की पहली सृष्टि है।

7.89.11

यथा स्वप्ने पुरत्वेन चिदेव व्योम्नि भासते। तथा चिदेव सर्गादाविदं जगदिति स्थितम्॥ ११॥

yathā svapne puratvena cideva vyomni bhāsate | tathā cideva sargādāvidaṃ jagaditi sthitam || 11 ||

Just as in a dream, consciousness alone appears as a city in the sky, similarly, consciousness alone is established as this universe at the beginning of creation.

जैसे स्वप्न में, चेतना ही आकाश में एक नगर के रूप में प्रकट होती है, उसी प्रकार, सृष्टि के आरंभ में चेतना ही इस जगत के रूप में स्थापित है।

7.89.12

विद्धि चिदूपबालस्य मनोराज्यं जगत्त्रयम्। महीतलादिकं दृश्यमिदं सर्वं च सर्वदा ॥ १२ ॥

viddhi cidūpabālasya manorājyaṃ jagattrayam | mahītalādikaṃ dṛśyamidaṃ sarvaṃ ca sarvadā || 12 ||

Know that the three worlds are the kingdom of the child of consciousness. All this visible world, including the earth and more, is always perceived.

जान लो कि चेतना के बालक का राज्य है ये तीनों लोक। यह पूरा दृश्य जगत, जिसमें पृथ्वी आदि शामिल है, हमेशा दिखाई देता है।

7.89.13

चिद्रूपस्यात्मनो नान्यः संकल्पस्तन्मयं जगत्। वस्तुतस्तु न सत्यात्म न पिण्डात्म न भासुरम् ॥ १३ ॥

cidrūpasya ātmano nānyaḥ saṃkalpas tanmayam jagat | vastutas tu na satyātma na piṇḍātma na bhāsuram || 13 ||

There is no other resolve of the self, which is of the nature of consciousness, than this world which is permeated by it. In reality, it is neither true, nor gross, nor luminous.

चेतना स्वरूप आत्मा का कोई दूसरा संकल्प नहीं है, इस जगत के अलावा जो उससे व्याप्त है। वास्तव में, यह न तो सत्य है, न स्थूल, न चमकीला।

7.89.14

दृश्यमस्त्यपरिज्ञातं परिज्ञातं न विद्यते। परिज्ञातं तदेवास्य शृणोषि यदिदं चिरम् ॥ १४ ॥

dṛśyam asty aparijñātaṃ parijñātaṃ na vidyate | parijñātaṃ tadevāsya śṛṇoṣi yad idaṃ ciram || 14 ||

The visible exists as long as it is not known. Once known, it does not exist. That which is known is the eternal truth you hear about.

दृश्य तब तक अस्तित्व में है जब तक उसे जाना नहीं जाता। एक बार जान लिया जाए, तो वह अस्तित्व में नहीं रहता। जो जाना जाता है, वही वह सनातन सत्य है जिसके बारे में तुम सुनते हो।

7.89.15

सर्वं चिन्मात्रमाशान्त प्रकचत्यात्मनात्मनि। भूमण्डलात्म दृश्यात्म द्वैतैक्याभ्यां विवर्जितम् ॥ १५ ॥

sarvaṃ cinmātram āśānta prakacatya ātmanātmani | bhūmaṇḍalātma dṛśyātma dvaitaikyābhyāṃ vivarjitam || 15 ||

Everything is pure consciousness, shining in the self by the self. It is devoid of the duality and unity of the earth and the visible world.

सब कुछ शुद्ध चेतना है, जो आत्मा में आत्मा द्वारा चमकती है। यह पृथ्वी और दृश्य जगत के द्वैत और एकता से रहित है।

7.89.16

मणिर्यथा स्वभावेन शुक्लपीतादिकास्त्विषः। अकुर्वन्नेव कुरुते चिदाकाशस्तथा जगत् ॥ १६ ॥

maṇiryathā svabhāvena śuklapītādikāstviṣaḥ | akurvannēva kurutē cidākāśastathā jagat || 16 ||

Just as a gem, by its nature, appears to have various colors like white and yellow, similarly, the consciousness-space creates the world without doing anything.

जैसे एक मणि अपने स्वभाव से श्वेत और पीत जैसे विभिन्न रंगों में दिखाई देती है, उसी प्रकार चिदाकाश कुछ न करते हुए भी जगत को उत्पन्न करता है।

7.89.17

यतो न किंचित्कुरुते न च रूपं समुज्झति । तस्मान्न मानसं नेदं किंचिदस्ति महीतलम् ॥ १७ ॥

yato na kiñcitkurutē na ca rūpaṃ samujjhati | tasmānna mānasaṃ nēdaṃ kiñcidasti mahītalam || 17 ||

Since it does not do anything and does not abandon any form, therefore, there is nothing mental in this world.

क्योंकि यह कुछ नहीं करता और किसी रूप को नहीं छोड़ता, इसलिए इस जगत में कोई मानसिक वस्तु नहीं है।

7.89.18

महीतलमिवाभाति चिद्व्योमैव निरन्तरम् । आत्मन्येवातलं व्योम यथामलतलं स्थितम् ॥ १८ ॥

mahītalamivābhāti cidvyomaiava nirantaram | ātmanyēvātalaṃ vyoma yathāmalatalaṃ sthitam || 18 ||

The world appears as if it is the continuous consciousness-space. Just as the pure sky is situated in the self, so is the world.

जगत ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह निरन्तर चिदाकाश है। जैसे शुद्ध आकाश आत्मा में स्थित है, वैसे ही जगत भी है।

7.89.19

स्वभावमात्रकचन तत्तदेव यथास्थितम् । भूमण्डलमिवात्यच्छं खमेव विशतान्तरम् ॥ १९ ॥

svabhāvamātrakacana tattadeva yathāsthitam | bhūmaṇḍalamivātyacchaṃ khameva viśatāntaram || 19 ||

Only the nature itself is as it is. The earth appears as if it is the very transparent sky.

केवल स्वभाव ही जैसा है वैसा है। पृथ्वी ऐसी प्रतीत होती है जैसे यह स्वयं पारदर्शी आकाश है।

7.89.20

इदं भूमण्डलं तच्च द्वयमेतन्महाचितेः । स्वरूपमेव कचति तव स्वप्नपुरं यथा ॥ २० ॥

idaṃ bhūmaṇḍalaṃ taccadvayametanmahāciteḥ | svarūpameva kacati tava svapnapuraṃ yathā || 20 ||

This earth and that are both the nature of the great consciousness. It appears just like your dream city.

यह पृथ्वी और वह दोनों महाचेतना के स्वभाव हैं। यह आपके स्वप्न नगर की तरह प्रतीत होता है।

7.89.21

इदमाकाशमात्रात्म तदप्याकाशमात्रकम् । अज्ञानात्मपरिज्ञानाज्ज्ञानान्नेदं न तत्क्वचित् ॥ २१ ॥

idamākāśamātrātma tadapyākāśamātrakam | ajñānātmaparijñānājjñānānnedaṃ na tatkvacit || 21 ||

This is merely space, and that too is merely space. Through the knowledge of the self, which is ignorance, this is not that anywhere.

यह केवल आकाश है, और वह भी केवल आकाश है | अज्ञान आत्मा के ज्ञान से, यह कहीं भी वह नहीं है |

7.89.22

त्रैलोक्यभूतजालानां कालत्रितयभाविनाम् । संभ्रमः स्वप्नसंकल्पो मनोराज्यदशास्थितौ ॥ २२ ॥

trailokyabhūtajālānāṃ kālatritayabhāvinām | saṃbhramaḥ svapnasankalpo manorājyadaśāsthitau || 22 ||

The confusion of the three worlds and their beings, which exist in the three times, is like a dream or imagination, situated in the state of the mind's kingdom.

तीनों लोकों और उनके प्राणियों का भ्रम, जो तीनों कालों में है, एक स्वप्न या कल्पना की तरह है, जो मन के राज्य की दशा में स्थित है।

7.89.23

भूतान्यथ भविष्यन्ति वर्तमानानि यानि च। भूमण्डलानि तान्यत्र सत्ता सामान्यतां गता॥ २३॥

bhūtānyatha bhaviṣyanti vartamānāni yāni ca | bhūmaṇḍalāni tānyatra sattā sāmānyatāṃ gatā || 23 ||

The beings that will exist in the future and those that are present now, those worlds have attained a common existence there.

जो प्राणी भविष्य में होंगे और जो वर्तमान में हैं, वे लोक वहाँ एक सामान्य अस्तित्व प्राप्त कर चुके हैं।

7.89.24

अहमेव समग्राणि तेषामन्तर्गतान्यपि। तेन तान्यनुभूतानि तथा दृष्टानि चाखिलम्॥ २४॥

ahameva samagrāṇi teṣāmantargatānyapi | tena tānyanubhūtāni tathā dṛṣṭāni cākhilam || 24 ||

I alone am all the aggregates and also those that are within them. Therefore, they are experienced and seen in their entirety.

मैं ही सभी समूह हूँ और उनके भीतर वाले भी। इसलिए, वे अनुभव किए जाते हैं और पूरी तरह से देखे जाते हैं।

7.89.25

चिन्मात्रमेतदजरं परमात्मतत्त्वं शुद्धात्मतामजहदङ्गगतं बिभर्ति। सर्वं यथास्थितमिदं जगदात्तभेदं बुद्धं सदङ्ग न बिभर्ति तु किंचनापि॥ २५॥

cinmātrametadajaraṃ paramātmatattvaṃ śuddhātmatāmajahadaṅgagataṃ bibharti | sarvaṃ yathāsthitamidaṃ jagadāttabhedaṃ buddhaṃ sadaṅga na bibharti tu kiṃcanāpi || 25 ||

This is merely consciousness, eternal, the supreme reality of the self, bearing pure self-nature without the body. The entire world, as it is, without distinction, is perceived, always with the body, but does not bear anything at all.

यह केवल चेतना है, अनन्त, आत्मा की परम वास्तविकता, शरीर के बिना शुद्ध आत्मा की प्रकृति को धारण करती है। पूरा जगत, जैसा है, भेद के बिना, बोध किया जाता है, हमेशा शरीर के साथ, लेकिन कुछ भी नहीं धारण करता।

Chapter 90

7.90.1

श्रीराम उवाच । अनन्तरं वद ब्रह्मञ्जगन्ति भवता तदा । भूमण्डलानां हृदये क्वचिद्दृष्टानि नैव वा ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | anantaraṃ vada brahmañjaganti bhavatā tadā | bhūmaṇḍalānāṃ hṛdaye kvaciddṛṣṭāni naiva vā || 1 ||

Shri Rama said: Please tell me, O Brahman, what happened next? Were the worlds seen in the heart of the earth or not?

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, कृपया बताएं, उसके बाद क्या हुआ? क्या पृथ्वी के हृदय में किसी भी संसार दिखाई दिए या नहीं?

7.90.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । परात्मजाग्रत्स्वप्नोर्वीमण्डलौघात्मना मया । ततोऽनुभूतं हृदये दृष्टं च परया दृशा ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | parātmajāgratsvapnorvīmaṇḍalaughātmanā mayā | tato'nubhūtaṃ hṛdaye dṛṣṭaṃ ca parayā dṛśā || 2 ||

Shri Vasistha said: By the power of the Supreme Self, which encompasses the waking, dreaming, and deep sleep states, I experienced and saw everything in the heart.

श्री वसिष्ठ ने कहा: परमात्मा की शक्ति से, जो जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओं को समेटे हुए है, मैंने हृदय में सब कुछ अनुभव किया और देखा।

7.90.3

यावत्तथैव सर्वत्र जगज्जालमवास्थितम् । सर्वं दृश्यमयं शान्तमपि द्वैतमयात्मकम् ॥ ३ ॥

yāvattathaiva sarvatra jagajjālamavāsthitam | sarvaṃ dṛśyamayaṃ śāntamapi dbaitamayātmakam || 3 ||

As long as the entire universe is established in that way, everything is calm and composed of the seen, even though it is dual in nature.

जब तक सारा ब्रह्मांड उसी तरह स्थापित है, सब कुछ शांत और दृश्यमय है, भले ही यह द्वैत स्वभाव का हो।

7.90.4

जगन्ति सन्ति सर्वत्र सर्वत्र ब्रह्म संस्थितम् । सर्वं शून्यं परं शान्तं सर्वमारम्भमन्थरम् ॥ ४ ॥

jaganti santi sarvatra sarvatra brahma saṃsthitam | sarvaṃ śūnyaṃ paraṃ śāntaṃ sarvamārambhamantharam || 4 ||

The worlds exist everywhere, and Brahman is established everywhere. Everything is void, supreme, peaceful, and without any beginning.

संसार सर्वत्र हैं, और ब्रह्म सर्वत्र स्थापित है। सब कुछ शून्य, परम, शांत और बिना किसी आरंभ के है।

7.90.5

सर्वत्रैवास्ति पृथ्व्यादि स्थूलं तच्च न किंचन । चिद्व्योमैव यथा स्वप्नपुरं परमजातवत् ॥ ५ ॥

sarvatraivāsti pṛthvyādi sthūlaṃ tacca na kiṃcana | cidvyomaiva yathā svapnapuraṃ paramajātavat || 5 ||

Everywhere there exists the gross elements like earth, but they are nothing. It is like the dream city in the sky of consciousness.

सर्वत्र स्थूल तत्व जैसे पृथ्वी हैं, लेकिन वे कुछ भी नहीं हैं। यह चेतना के आकाश में स्वप्न नगर की तरह है।

7.90.6

नेह नानास्ति नो नाना न नास्तित्वं न चास्तिता । अहमित्येव नैवास्ति यत्र तत्र कुतोऽस्ति किम् ॥ ६ ॥

neha nānāsti no nānā na nāstitvaṃ na cāstitā | ahamityeva naivāsti yatra tatra kuto'sti kim || 6 ||

There is no diversity here, nor is there any diversity | There is no existence, nor is there any non-existence | The sense of 'I' does not exist at all | Where and how does anything exist?

यहाँ कोई विविधता नहीं है, न ही कोई विविधता है | कोई अस्तित्व नहीं है, न ही कोई अनस्तित्व है | 'मैं' का भाव बिलकुल नहीं है | कहाँ और कैसे कुछ भी है?

7.90.7

अनुभूतमपीदं सदहमित्यादिरूपकम् । नास्त्येव यदि वाप्यस्ति तद्ब्रह्माजमनामयम् ॥ ७ ॥

anubhūtamapīdaṃ sadahamityādirūpakam | nāstyeva yadi vāpyasti tadbrahmājamanāmayam || 7 ||

Even this experienced reality, which appears as 'I am this,' does not exist | If it does exist, it is that Brahman, which is unborn and free from all defects

यह अनुभव की गई वास्तविकता, जो 'मैं यह हूँ' के रूप में प्रकट होती है, अस्तित्व में नहीं है | अगर यह अस्तित्व में है, तो यह वह ब्रह्म है, जो अजन्मा और सभी दोषों से मुक्त है

7.90.8

यत्स्वप्नपुरमेवेदं सर्गादावेव चिन्नभः । अस्तितानास्तिते तत्र कीदृशे क्व कुतः स्थिते ॥ ८ ॥

yatsvapnapurameveda sargādāveva cinnabhaḥ | astitānāstite tatra kīdṛśe kva kutaḥ sthite || 8 ||

This world, which appears like a dream city, is merely a reflection of consciousness from the beginning of creation | In that, where and how does existence or non-existence reside?

यह संसार, जो स्वप्न नगर की तरह प्रतीत होता है, सृष्टि के आरंभ से ही चेतना का प्रतिबिंब मात्र है | उसमें, अस्तित्व या अनस्तित्व कहाँ और कैसे स्थित है?

7.90.9

यथाहं दृष्टवांस्तानि जगन्त्यवनिरूपधृक् । तथा मया जलीभूय दृष्टं तादृशमेव तत् ॥ ९ ॥

yathāhaṃ dṛṣṭavāṃstāni jagantyavanirūpadhṛk | tathā mayā jalībhūya dṛṣṭaṃ tādṛśameva tat || 9 ||

Just as I have seen the world with its various forms, similarly, having become water, I have seen it in the same way

जैसे मैंने संसार को उसके विभिन्न रूपों के साथ देखा है, उसी तरह, जल बनकर मैंने उसे उसी तरह देखा है

7.90.10

वारिधारणया वारि भूत्वा जडमिवाजडम् । समुद्रमन्दिरेष्वन्तश्चिरं गुलगुलायितम् ॥ १० ॥

vāridhāraṇayā vāri bhūtvā jaḍamivājaḍam | samudramandireṣvanantaściraṃ gulagulāyitam || 10 ||

By holding water, becoming like insentient water, it is churned for a long time within the ocean and the mansions

जल धारण करके, जड़ जल की तरह बनकर, यह समुद्र और महलों के भीतर लंबे समय तक मथा जाता है

7.90.11

तृणवृक्षलतागुल्मवल्लीनां स्तम्भनाडिषु । मृद्वलक्षितमारूढं तवाङ्गेष्विव यूकया ॥ ११ ॥

tṛṇavṛkṣalatāgulmavallīnāṃ stambhanāḍiṣu | mṛdvalakṣitamārūḍhaṃ tavāṅgeṣviva yūkayā || 11 ||

In the stems and veins of grasses, trees, creepers, shrubs, and climbers, it is seen as if marked softly, like the body parts infested with insects.

घास, पेड़, लता, झाड़ी और बेलों की थूनों और नसों में, यह कोमल रूप से चिह्नित दिखाई देता है, जैसे कीड़ों से भरे अंगों की तरह।

7.90.12

सर्वोत्थानोपमास्तम्भे तच्छेदे वलयोपमा । मृद्व्या कर्णाहिगत्येव रचना प्रकृतोदरे ॥ १२ ॥

sarvotthānopamāstambhe tacchede valayopamā | mṛdvyā karṇāhigatyeva racanā prakṛtodare || 12 ||

In the pillar-like erections and their cuts, it resembles a ring, and its creation in the natural belly is like that of a soft snake.

स्तम्भ-जैसी उत्थानों और उनके कटाव में, यह एक अंगूठी के समान दिखाई देता है, और इसकी रचना प्राकृतिक पेट में एक कोमल साँप के समान है।

7.90.13

वल्लीतमालतालादिपल्लवेषु फलेषु च । विश्रम्य पुष्टयाऽऽकृत्या रेखाविरचनं कृतम् ॥ १३ ॥

vallītamālatālādipallaveṣu phaleṣu ca | viśramya puṣṭayā''kṛtyā rekhāviracanaṃ kṛtam || 13 ||

In the sprouts of climbers, jasmine, and other plants, and in the fruits, resting with nourishment, the line drawings are made.

बेल, चमेली और अन्य पौधों की कलियों और फलों में, पोषण के साथ विश्राम करते हुए, रेखा चित्रण किए जाते हैं।

7.90.14

मुखेनाविश्य हृदयमृतुवैधुर्यधारिणा । हृता विधुरिता भुक्ता लूना देहेषु धातवः ॥ १४ ॥

mukhenāviśya hṛdayamṛtuvaidhuryadhāriṇā | hṛtā vidhuritā bhukta lūnā deheṣu dhātavaḥ || 14 ||

Entering through the mouth, the heart's seasonal widowhood bearer, the elements in the body are taken, enjoyed, and absorbed.

मुँह से प्रवेश करके, हृदय के ऋतु वैधव्य धारक, शरीर के तत्व लिए जाते हैं, भोगे जाते हैं, और शोषित होते हैं।

7.90.16

नानाह्रदनदीगेहग्राहिणाऽविरताध्वना । विश्रान्तं सेतुसुहृदः प्रसादेन क्वचित्क्वचित् ॥ १६ ॥

nānāhradanadīgehagrāhiṇā''viratādhvanā | viśrāntaṃ setusuhṛdaḥ prasādena kvacitkvacit || 16 ||

With various lakes, rivers, and houses as the path, the uninterrupted journey is rested by the grace of the bridge-friend occasionally.

विभिन्न झीलों, नदियों और घरों को मार्ग बनाकर, अविरत यात्रा पुल-मित्र की कृपा से कभी-कभी विश्राम करती है।

7.90.17

विदाऽविदनुसंधानाज्जडेन तदनाश्रयात् । जडाशयेषूल्लसितं जलेनावर्तवर्तिना ॥ १७ ॥

vidā'vidanusandhānājjade na tadanāśrayāt | jaḍāśayeṣūllasitaṃ jalenāvartavartinā || 17 ||

By the inquiry of knowledge and ignorance, from the inert, not relying on that, it shines in inert objects, like water in a whirlpool.

ज्ञान और अज्ञान की खोज से, जड़ से, उस पर निर्भर न होकर, यह जड़ वस्तुओं में चमकता है, जैसे पानी भंवर में।

7.90.18

मया दुष्कृतिनेवोर्ध्वशिलास्वस्थेन भूभृताम्। स्वावर्तवर्तिना श्वभ्रपातेषु शतधा गतम्॥ १८॥

mayā duṣkṛtinevordhvaśilāsvasthena bhūbhṛtām | svāvartavartinā śvabhrapāteṣu śatadhā gatam || 18 ||

By me, like a sinner, standing on high rocks, of the earth-bearers, by my own whirlpool, in the fall of pits, gone in hundreds of ways.

मैंने, जैसे पापी, ऊँची चट्टानों पर खड़ा होकर, पृथ्वी के धारकों का, अपने भंवर से, गड्ढों में गिरने से, सैकड़ों तरीकों से चला गया।

7.90.19

धूमरूपेण निर्गत्य दारुभ्यो गगनार्णवे। कणरत्नेन नीलर्क्षमण्यन्तर्वर्तिना स्थितम्॥ १९॥

dhūmarūpeṇa nirgatya dārubhyo gaganārṇave | kaṇaratnena nīlarkṣamaṇyantarvartinā sthitam || 19 ||

Having emerged in the form of smoke from the woods, in the ocean of the sky, with a small jewel, situated within the blue sapphire.

धूम्र रूप में वनों से निकलकर, आकाश के समुद्र में, एक छोटे रत्न के साथ, नीले नीलम मणि के भीतर स्थित।

7.90.20

विश्रान्तमभ्रपीठेषु विद्युद्वनितया सह। भिन्नेन्द्रनीलनीलेन शेषाङ्गेष्विव शौरिणा॥ २०॥

viśrāntamabhrapīṭheṣu vidyudvanitayā saha | bhinnaendranīlanīlena śeṣāṅgeṣviv śauriṇā || 20 ||

Resting on the cloud seats, with the sound of lightning, with the broken blue sapphire, in the remaining parts, like the son of Shuri.

बादलों की सीटों पर विश्राम करते हुए, बिजली की आवाज के साथ, टूटे हुए नीले नीलम के साथ, शेष अंगों में, शौरि के पुत्र की तरह।

7.90.21

परमाणुमये सर्गे पिण्डरूपेष्वलक्षितम्। स्थितमन्तःपदार्थेषु ब्रह्मणैवाखिलात्मना॥ २१॥

paramāṇumaye sar ge piṇḍarūpeṣvalakṣitam | sthitamantaḥpadārtheṣu brahmaṇaivākhilātmanā || 21 ||

In the creation composed of atoms, unseen in the forms of bodies, situated in the inner elements, by Brahman, the all-pervading self.

परमाणुओं से बने सृष्टि में, शरीरों के रूपों में अदृश्य, अंतर्निहित तत्वों में स्थित, ब्रह्म द्वारा, सर्वव्यापी आत्मा द्वारा।

7.90.22

प्राप्य जिह्वाणुभिः सङ्गमनुभूतिः कृतोत्तमा। यामात्मनो न देहस्य मन्ये ज्ञानस्य केवलम्॥ २२॥

prāpya jihvāṇubhiḥ saṅgamanubhūtiḥ kṛtottamā | yāmātmano na dehasya manye jñānasya kevalam || 22 ||

Having attained the highest experience through the union with the taste buds, I consider it to be the knowledge of the self, not of the body.

जिह्वा के अणुओं के साथ संयोग से उत्तम अनुभूति प्राप्त करके, मैं इसे आत्मा का ज्ञान मानता हूँ, शरीर का नहीं।

7.90.23

न मया न च देहेन नान्येनास्वादितात्म यत्। तदन्तर्विवृतं चेत्यमज्ञानाय तदप्यसत्॥ २३॥

na mayā na ca dehena nānyenāsvāditātma yat | tadantarvivṛtaṃ cetyamajñānāya tadapyasat || 23 ||

That which is not tasted by me, nor by the body, nor by anyone else, that which is revealed within the mind, is also unreal for the ignorant.

जो मेरे द्वारा, न शरीर द्वारा, न किसी और द्वारा स्वादित नहीं है, जो मन में प्रकट होता है, वह अज्ञानी के लिए भी असत् है।

7.90.24

सर्वर्तुरसरूपेण नानामोदानि दिक्ष्वलम्। भुक्तानि पुष्पजालानि प्रोच्छिष्टं ददतालये ॥ २४ ॥

sarvarturasarūpeṇa nānāmodāni dikṣvalam | bhuktāni puṣpajālāni procchiṣṭaṃ dadatālaye || 24 ||

In the form of all tastes, various delights are spread in all directions, enjoyed as garlands of flowers, offering the remnants to the abode.

सभी रसों के रूप में, विभिन्न आनंद सभी दिशाओं में फैले हुए हैं, फूलों की मालाओं के रूप में भोगे जाते हैं, अवशेष को आलय में अर्पित करते हुए।

7.90.25

चतुर्दशप्रकाराणां भूतानामङ्गसन्धिषु। उषितं चेतनेनेव जडेनाप्यजडात्मना ॥ २५ ॥

caturdaśaprakārāṇāṃ bhūtānāmaṅgasandhiṣu | uṣitaṃ cetaneneva jaḍenāpyajaḍātmanā || 25 ||

In the joints of the fourteen types of beings, it resides as if conscious, even though it is inert, with an inert nature.

चौदह प्रकार के जीवों के अंग-संधियों में, यह चेतन के समान निवास करता है, हालाँकि यह जड़ है, जड़ स्वभाव के साथ।

7.90.26

सीकरोत्कररूपेण रथमारुह्य मारुतम्। आमोदेनेव विहितं विमलव्योमवीथिषु ॥ २६ ॥

sīkarotkararūpeṇa rathamāruhya mārutam | āmodeneva vihitaṃ vimalavyomavīthiṣu || 26 ||

Mounting the chariot of the wind in the form of a shower of pearls, it is ordained with delight in the pure paths of the sky.

मोती की वर्षा के रूप में वायु के रथ पर चढ़कर, यह आकाश के शुद्ध मार्गों में आनंद के साथ नियत है।

7.90.27

राम तस्यामवस्थायां परमाणुकणं प्रति। अनुभूतमशेषेण यथास्थितमिदं जगत् ॥ २७ ॥

rāma tasyāmavasthāyāṃ paramāṇukaṇaṃ prati | anubhūtamaśeṣeṇa yathāsthitamidaṃ jagat || 27 ||

Rama, in that state, experienced the entire universe as it is, down to the smallest particle.

राम, उस अवस्था में, सब कुछ अपने वैसे ही रूप में अनुभव किया, सबसे छोटे कण तक।

7.90.28

अजडेन जडेनेव समया जालया तया। अन्तःसर्वपदार्थानां ज्ञाताज्ञातेन संस्थितम् ॥ २८ ॥

ajaḍena jaḍeneva samayā jālayā tayā | antaḥsarvapadārthānāṃ jñātājñātena saṃsthitam || 28 ||

By the insentient and sentient, by time and illusion, all things are established, known and unknown.

जड़ और चेतन द्वारा, समय और माया द्वारा, सब कुछ ज्ञात और अज्ञात रूप में स्थापित है।

7.90.29

जगतां तत्र लक्षाणि नाशोत्पातशतानि च। मया दृष्टानि रूढानि कदलीदलपीठवत् ॥ २९ ॥

jagatāṃ tatra lakṣāṇi nāśotpātaśatāni ca | mayā dṛṣṭāni rūḍhāni kadalīdalapīṭhavat || 29 ||

There, I have seen the signs of worlds, hundreds of destructions and creations, firmly established like the layers of a banana leaf.

वहाँ, मैंने जगतों के चिह्न देखे हैं, सैकड़ों विनाश और सृष्टि, जो केले के पत्ते की परतों की तरह स्थापित हैं।

7.90.30

एवं जगच्चाजगद्वा साकारं वा निराकृति । चिन्मात्रगगनं सर्वमाकाशाधिकनिर्मलम् ॥ ३० ॥

evaṃ jagaccājagadvā sākāraṃ vā nirākṛti | cinmātragaganaṃ sarvamākāśādhikanirmalam || 30 ||

Thus, whether the universe is real or unreal, with form or without form, it is all pure consciousness, more pure than the sky.

इस प्रकार, चाहे ब्रह्मांड वास्तविक हो या अवास्तविक, रूप से युक्त हो या रूपहीन, यह सब शुद्ध चेतना है, आकाश से भी अधिक शुद्ध।

7.90.31

न किंचनत्वं च न किंचनेदं शुद्धः परो बोध इदं विभाति । स चापि नो किंचन नापि शून्यमाकाशमेवासि विकासमास्व ॥ ३१ ॥

na kiṃcanatvaṃ ca na kiṃcanedam śuddhaḥ paro bodha idaṃ vibhāti | sa cāpi no kiṃcana nāpi śūnyamākāśamevāsi vikāsamāsv || 31 ||

There is nothingness, nor is there anything; pure supreme consciousness shines forth. That too is not anything, nor is it emptiness; it is like the sky, expansive.

कुछ भी नहीं है, न ही कोई चीज है; शुद्ध परम चेतना चमकती है। वह भी कुछ नहीं है, न ही शून्य है; वह आकाश की तरह विस्तृत है।

Chapter 91

7.91.1

श्रीवसिष्ठ उवाच ततोऽहमभवं तेजस्तेजोधारणयेद्धया चन्द्रार्कतारकाग्न्यादिविचित्रावयवान्वितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca tato'hamabhavaṃ tejastejodhāraṇayeddhayā candrārkatārakāgnyādivicitrāvayavānvitam || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then I became the radiance, the sustainer of radiance, endowed with various parts like the moon, sun, stars, and fire.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तब मैं तेज बन गया, तेज को धारण करने वाला, चन्द्रमा, सूर्य, तारे और अग्नि जैसे विचित्र अवयवों से युक्त।

7.91.2

नित्यं सत्त्वप्रधानत्वात्प्रकाशाकृतिराजगत् सर्वं दृश्यमृते सर्वचौरध्वान्तप्रतापयुक् ॥ २ ॥

nityaṃ sattvapradhānatvātprakāśākṛtirājagat sarvaṃ dṛśyamṛte sarvacauradhvāntapratāpayuk || 2 ||

Always, due to the predominance of sattva, the world appears luminous. Everything is visible except for the darkness, thieves, and the intense heat.

हमेशा, सत्त्व की प्रधानता के कारण, जगत प्रकाशमय दिखाई देता है। सब कुछ दृश्यमान है, अंधेरे, चोरों और तीव्र गर्मी को छोड़कर।

7.91.3

दीपादिभिः शनैः स्निग्धैर्दशाशतविहारिभिः प्रत्यक्षीकृतसर्वार्थं प्रतिगेहं सुराजवत् ॥ ३ ॥

dīpādibhiḥ śanaiḥ snigdhairdaśāśatavihāribhiḥ pratyakṣīkṛtasarvārthaṃ pratigehaṃ surājavat || 3 ||

With lamps and other gentle, slowly moving objects that illuminate for hundreds of years, everything becomes visible in every house, like a good king.

दीपक और अन्य धीमे, कोमल चीजों के साथ जो सौ वर्षों तक प्रकाश देती हैं, हर घर में सब कुछ दृश्यमान हो जाता है, जैसे एक अच्छा राजा।

7.91.4

लोकालोके च हृषितैश्चन्द्रार्काद्यंशुरोमभिः परप्रकाशैकरतैर्दूरोत्क्षिप्ताम्बराम्बरम् ॥ ४ ॥

lokāloke ca hṛṣitaiścandrārkādyaṃśuromabhiḥ paraprakāśaikaratairdūrotkṣiptāmbarāmbaram || 4 ||

In the world and beyond, with the delighted rays of the moon, sun, and other luminaries, the sky is illuminated from afar, appearing like a canopy.

जगत और उसके पार, चन्द्रमा, सूर्य और अन्य प्रकाशमान वस्तुओं की हर्षित किरणों के साथ, आकाश दूर से प्रकाशित होता है, जैसे एक छत्र।

7.91.5

अन्धकारस्य दैन्यस्य समस्तगुणनाशिनः दृश्यं सदृश्यमनिशं सर्वस्य गुणशालिनः ॥ ५ ॥

andhakārasya dainyasya samastaguṇanāśinaḥ dṛśyaṃ sadṛśyamanisaṃ sarvasya guṇaśālinaḥ || 5 ||

The darkness, which is miserable and destroys all qualities, is visible and invisible at all times, possessing all qualities.

अंधेरा, जो दुःखदायी है और सभी गुणों को नष्ट करता है, हमेशा दृश्यमान और अदृश्य है, सभी गुणों से युक्त।

7.91.6

तमस्तमालपरशुः परशुद्धिकरं पदम् । सुवर्णमणिमाणिक्यमुक्तादिजनजीवितम् ॥ ६ ॥

tamastamālaparaśuḥ paraśuddhikaraṃ padam | suvarṇamaṇimāṇikyamuktādijanajīvitam || 6 ||

The axe of darkness purifies the path, which is the life of beings like gold, jewels, and pearls.

अंधकार की कुल्हाड़ी मार्ग को शुद्ध करती है, जो सोने, रत्नों और मोतियों जैसे जीवों का जीवन है।

7.91.7

शुक्लकृष्णारुणादीनां नित्यं ज्योत्स्नाङ्गशायिनाम्। पुत्राणामिव वर्णानां सर्वेषां देहदः पिता ॥ ७ ॥

śuklakṛṣṇāruṇādīnāṃ nityaṃ jyotsnāṅgaśāyināṃ | putrāṇāmiva varṇānāṃ sarveṣāṃ dehadḥ pitā || 7 ||

The eternal father of all colors, like white, black, and red, which rest in the limbs of light, is the giver of bodies to all beings like a father to his sons.

प्रकाश के अंगों में विश्राम करने वाले सभी रंगों का, जैसे सफेद, काला और लाल, नित्य पिता सभी जीवों को शरीर देने वाला है, जैसे पिता अपने पुत्रों को।

7.91.8

घनस्नेहरसं पृथ्व्या रक्षितानलवेधनम्। गृहं प्रति घनानन्दैर्वृतदीपकपुत्रकम् ॥ ८ ॥

ghanasneharasaṃ pṛthvyā rakṣitānalavedhanam | gṛhaṃ prati ghanānandairvṛtadīpakaputrakam || 8 ||

The dense, oily essence of the earth protects the fire within, like a house filled with dense joy and surrounded by lamp-like sons.

पृथ्वी का घना और तेलीय सार अंदर की आग को सुरक्षित रखता है, जैसे घने आनंद से भरा घर जो दीपक-जैसे पुत्रों से घिरा हुआ है।

7.91.9

दृष्टं पातालकेष्वीषत्तमोरूपेषु पावकम्। अर्धदृष्टं रजोरूपे भूतले भूतमालिते ॥ ९ ॥

dṛṣṭaṃ pātālakeṣvīṣattamorūpeṣu pāvakam | ardhadṛṣṭaṃ rajorūpe bhūtale bhūtamālite || 9 ||

Fire is seen in the forms of darkness in the netherworlds, and half-seen in the form of passion on the earth covered with beings.

आग पाताल लोकों में अंधकार के रूप में देखी जाती है, और पृथ्वी पर जीवों से ढके हुए राग के रूप में आधी देखी जाती है।

7.91.10

सत्त्वात्मसु महासत्त्वं नित्यत्वं देवसद्मसु। जगज्जीर्णकुटीदीपः कूपोम्भस्तमसोर्महान् ॥ १० ॥

sattvātmasu mahāsattvaṃ nityatvaṃ devasadmasu | jagajjīrṇakuṭīdīpaḥ kūpombhastamasormahān || 10 ||

In the abodes of the gods, the great essence of purity is eternal. The lamp of the worn-out hut of the world is the great darkness of the well.

देवताओं के निवास स्थानों में, शुद्धता का महान सार नित्य है। संसार की जीर्ण-शीर्ण झोंपड़ी का दीपक कुएँ का महान अंधकार है।

7.91.11

दिग्वधूविमलादर्शो निशानीहारमारुतः सत्त्वं चन्द्रार्कवह्नीनां कुङ्कुमालेपनं दिवः ॥ ११ ॥

digvadhūvimalādarśo niśānīhāramārutaḥ sattvaṃ candraārkavahnīnāṃ kuṅkumālepanaṃ divaḥ || 11 ||

The clear mirror of the directions, the wind carrying the fragrance of the night, the essence of the moon, sun, and fire, the sky adorned with saffron.

दिशाओं का साफ़ दर्पण, रात्रि की सुगंध लेकर चलने वाली हवा, चंद्रमा, सूर्य और अग्नि का सार, केसर से सजा आकाश।

7.91.12

केदारं दिनसस्यानां तमोच्छूनामनुग्रहः नभःकाचबृहत्पात्रक्षालनाम्बु समुल्लसत् ॥ १२ ॥

kedāraṃ dinasasyānāṃ tamocchūnāmanugrahaḥ nabhaḥkācabṛhatpātrakṣālanāmbu samullasat || 12 ||

The field of day crops, the grace of those who are free from darkness, the water that washes the vast sky-pot shines.

दिन की फसल का खेत, अंधकार से मुक्त लोगों का अनुग्रह, विशाल आकाश-पात्र को धोने वाला जल चमकता है।

7.91.13

सत्ताप्रदतयार्थानां प्रकाशकतयापि च चिन्मात्रपरमार्थस्य सहोदर इवानुजः ॥ १३ ॥

sattāpradatayārthānāṃ prakāśakatayāpi ca cinmātraparamārthasya sahodara ivānujaḥ || 13 ||

By bestowing existence and by illuminating, it is like the younger brother of the supreme reality which is pure consciousness.

अस्तित्व प्रदान करने और प्रकाशित करने से, यह शुद्ध चेतना के परम सत्य का छोटा भाई है।

7.91.14

क्रियाकमलिनीभानुर्भूतलोदरजीवितम् रूपालोकमनस्कारचमत्कारश्चितेर्यथा ॥ १४ ॥

kriyākamalinībhānur bhūtalodarajīvitam rūpālokamanaskāracamatkāraściter yathā || 14 ||

The sun of actions, the life within the earth's womb, the wonder of form, sight, and mental impressions, just as in consciousness.

कर्मों का सूर्य, पृथ्वी की कोख में जीवन, रूप, दृष्टि और मानसिक संस्कारों का आश्चर्य, जैसे चेतना में।

7.91.15

नभस्तलगतासंख्यनक्षत्रमणिमालितः दिनर्तुवत्सराबृंह्यवाडवाग्न्यादिफेनिलः ॥ १५ ॥

nabhastalagatāsaṃkhyanakṣatramāṇimālitaḥ dinartuvatsarābṛṃhya vāḍavāgnyādiphenilaḥ || 15 ||

Adorned with countless stars in the sky, the smoke of the submarine fire and other fires during the day, season, and year.

आकाश में अनगिनत तारों से सजा, दिन, ऋतु, और वर्ष के दौरान समुद्री अग्नि और अन्य अग्नियों का धुआं।

7.91.16

चन्द्रार्कादितरङ्गान्तरजडं पङ्किलो महान्बृहद्ब्रह्माण्डखातस्थो नित्यमेकार्णवोऽक्षयः ॥ १६ ॥

candrārkāditaraṅgāntarajaḍaṃ paṅkilo mahānbṛhadbrahmāṇḍakhātastho nityamekārṇavo'kṣayaḥ || 16 ||

The eternal ocean, which is in the vast expanse of the universe, is filled with the waves of the moon, the sun, and the stars, and is muddy and inert.

वह नित्य समुद्र जो विशाल ब्रह्मांड में स्थित है, चन्द्रमा, सूर्य और तारों की लहरों से भरा है, और मैला और जड़ है।

7.91.17

हेमादिषु सुवर्णत्वं नरादिषु पराक्रमःकाचकच्यं च रत्नादौ वर्षादिष्ववभासनम् ॥ १७ ॥

hemādiṣu suvarṇatvaṃ narādiṣu parākramaḥkācakacyaṃ ca ratnādau varṣādiṣvavabhāsanam || 17 ||

In gold and other precious metals, there is the quality of gold. In men, there is valor. In gems, there is brilliance. In the rains, there is the manifestation.

सोने और अन्य धातुओं में सोने का गुण है। मनुष्यों में पराक्रम है। रत्नों में चमक है। वर्षा में प्रकट होना है।

7.91.18

ज्योत्स्ना मुखेन्दुबिम्बेषु पक्ष्मलेक्षणलक्ष्मसुस्रवत्स्नेहामृतापूरो हाससौहार्दभासनम् ॥ १८ ॥

jyotsnā mukhendubimbeṣu pakṣmalekṣaṇalakṣmasusravatsnehāmṛtāpūro hāsasauhārdabhāsanam || 18 ||

In the moonlit faces, there is the beauty of the eyes with long eyelashes. In the affectionate speech, there is the sweetness of nectar, and the expression of laughter and friendship.

चांदनी रात में चेहरों में लंबी पलकों वाली आंखों की सुंदरता है। प्यार भरी बातचीत में अमृत की मिठास है, और हंसी और दोस्ती का भाव है।

7.91.19

कपोलबाहुनेत्राक्षिभ्रूकरालकलासकःनिजोऽजेयतया जातो विलासः कामिनीजने ॥ १९ ॥

kapolabāhunetrākṣibhrūkarālakalāsakaḥnijo'jeyatayā jāto vilāsaḥ kāminījane || 19 ||

In the company of beautiful women, the graceful movements of the cheeks, arms, eyes, eyebrows, and eyelashes are born from their unconquerable charm.

सुंदर महिलाओं के साथ, गालों, बांहों, आंखों, भौंहों और पलकों के सुंदर अंदाज उनके अजेय आकर्षण से उत्पन्न होते हैं।

7.91.20

तृणीकृतत्रिभुवनचपेटास्फोटितद्विषांशिरःसु वज्रीकरणं वीर्यं सिंहादिचेतसि ॥ २० ॥

tṛṇīkṛtatribhuvanacapeṭāsphoṭitadviṣāmśiraḥsu vajrīkaraṇaṃ vīryaṃ siṃhādicetasi || 20 ||

The valor of the lion-hearted, who considers the three worlds as mere straw, is like the thunderbolt that shatters the heads of enemies.

सिंह-हृदय वाले का पराक्रम, जो तीनों लोकों को तिनके के समान मानता है, शत्रुओं के सिरों को तोड़ने वाले वज्र के समान है।

7.91.21

कटुकङ्कटकुट्टाकखड्गसंघट्टटांकृतैः । पटुस्फुटाटोपरटि भटेष्वटनमुद्भटम् ॥ २१ ॥

kaṭukaṅkaṭakuṭṭākakhaḍgasanghaṭṭaṭāṅkṛtaiḥ | paṭusphuṭāṭoparaṭi bhaṭeṣvaṭanamudbhataṃ || 21 ||

With sharp and fierce weapons, the warriors fought fiercely, making a loud noise.

तीखे और भयंकर शस्त्रों से योद्धाओं ने भयंकर रूप से लड़ाई की, जिससे बहुत शोर हुआ।

7.91.22

देवेषु दानवारित्वं सुरारित्वं सुरादिषु । सर्वभूतेषु सोजस्त्वमुन्नामः स्थावरादिषु ॥ २२ ॥

deveṣu dānavāritvaṃ surāritvaṃ surādiṣu | sarvabhūteṣu sojastvamunnāmaḥ sthāvarādiṣu || 22 ||

Among the gods, you are the enemy of the demons; among the demons, you are the enemy of the gods. You are the vigor in all beings and the supreme in all immovable things.

देवताओं में, आप दानवों के शत्रु हैं; दानवों में, आप देवताओं के शत्रु हैं। आप सभी प्राणियों में ओज हैं और सभी अचल वस्तुओं में सर्वोच्च हैं।

7.91.23

अथ ते मरुवद्भास्वांस्तत्राहमनुभूतवान् । जगदाकाशकोशेषु तेषु तामरसेक्षण ॥ २३ ॥

atha te maruvadbhāsvāṃstatrāhamanubhūtavān | jagadākāśakośeṣu teṣu tāmarasekṣaṇa || 23 ||

Then, I experienced your radiance like the desert sun in the spaces of the universe, with eyes full of nectar.

तब, मैंने ब्रह्मांड के अंतरिक्ष में आपकी चमक का अनुभव किया, जैसे रेगिस्तान की धूप, नेत्रों में अमृत भरा हुआ।

7.91.24

दिगन्तदशनिस्तीर्णैः करजालैर्जगत्खगम् । गृह्णदद्व्यङ्गमर्कत्वं ग्रामवद्दृष्टभूतलम् ॥ २४ ॥

digantadaśanistīrṇaiḥ karajālairjagatkhagam | gṛhṇadadvyaṅgamarkatvaṃ grāmavadṛṣṭabhūtalam || 24 ||

With hands outstretched like lightning covering the directions, you grasp the sky and the earth, making them appear like a village.

बिजली की तरह दिशाओं को ढंकते हुए हाथों से, आप आकाश और पृथ्वी को पकड़ते हैं, जिससे वे एक गाँव की तरह दिखाई देते हैं।

7.91.25

कामोत्पले कोशचक्रं वाडवं तिमिरार्णवे। ब्रह्माण्डसदने दीपं वृक्षं दिनफलावलेः ॥ २५ ॥

kāmotpale kośacakraṃ vāḍavaṃ timirārṇave | brahmāṇḍasadane dīpaṃ vṛkṣaṃ dinaphalāvaleḥ || 25 ||

In the lotus of desire, the treasure wheel; in the ocean of darkness, the submarine fire; in the abode of the universe, the lamp; in the tree of day fruits.

इच्छा के कमल में, धन का चक्र; अंधकार के समुद्र में, जलांतर्गामी अग्नि; ब्रह्मांड के निवास में, दीपक; दिन के फलों के वृक्ष में।

7.91.26

रसायनह्रदाकारमिन्दुत्वं वदनं दिवः। निशानिशाचरीहासं विकासं रजनीविशाम् ॥ २६ ॥

rasāyanahradākāramindutvaṃ vadanaṃ divaḥ | niśāniśācarīhāsaṃ vikāsaṃ rajanīviśām || 26 ||

The face, resembling a lake of nectar, is like the moon in the sky | The smile, like the night-blooming lotus, is the laughter of the night-dwelling beings || 26 ||

चेहरा अमृत के सरोवर के समान है, जो आकाश में चन्द्रमा के समान है | मुस्कान रात में खिलने वाले कमल की तरह है, जो रात में रहने वाले प्राणियों की हँसी है || 26 ||

7.91.27

जगल्लावण्यलक्ष्मीणां सर्वासामुपमास्पदम्। रजनीरोहिणीनारीकैरवाणां परं प्रियम् ॥ २७ ॥

jagallāvaṇyalakṣmīṇāṃ sarvāsāmupamāspadam | rajanīrohiṇīnārīkairavāṇāṃ paraṃ priyam || 27 ||

The embodiment of all the graces and beauties of the world | The beloved of the night-blooming lotus, the most cherished one || 27 ||

संसार की सभी लावण्य और सुंदरताओं का सार | रात में खिलने वाले कमल का प्रिय, सबसे प्यारा है || 27 ||

7.91.28

नेत्रवृन्दस्य वक्त्रस्य द्युलतापुष्पजालकम्। स्वर्गौघमशकव्यूहं तारकापटलं मृदु ॥ २८ ॥

netravṛndasya vaktrasya dyulatāpuṣpajālakam | svargaughamaśakavyūhaṃ tārakāpaṭalaṃ mṛdu || 28 ||

The cluster of eyes on the face is like a garland of flowers in the sky | The heavenly host of stars is like a soft bee-swarm || 28 ||

चेहरे पर आँखों का समूह आकाश में फूलों की माला के समान है | स्वर्गीय तारों का समूह एक नरम मधुमक्खी के झुंड के समान है || 28 ||

7.91.29

वणिङ्मात्रे वणिग्घस्ततुलातोलनदोलितम्। रत्नत्वं जलकल्लोलहस्तान्दोलनमब्धिभिः ॥ २९ ॥

vaṇiṅmātre vaṇigghastatulātolanadolitam | ratnatvaṃ jalakallolahastāndolanamabdhibhiḥ || 29 ||

The mere sound of the merchant's hand weighing on the scale | The gem-like quality of the ocean's waves swaying || 29 ||

व्यापारी के हाथ की आवाज तराजू पर तौलने से डोलती है | समुद्र की लहरों का रत्न-सा गुण डोलता है || 29 ||

7.91.30

अब्धाऽब्धौ शफरावर्तमब्धा गोमञ्जरीगणः। अब्दादौ दावदहनं वैद्युतं द्योतनं तनौ ॥ ३० ॥

abdhā'bdhau śapharāvartamabdhā gomañjarīgaṇaḥ | abdādau dāvadahanaṃ vaidyutaṃ dyotanaṃ tanau || 30 ||

The ocean in the ocean, the whirlpool of the conch | The ocean of the cluster of cow-bells | The fire of the forest at the beginning of the ocean | The lightning illuminating the body || 30 ||

समुद्र में समुद्र, शंख का भँवर | गाय की घंटियों का समूह समुद्र | समुद्र के आरंभ में वन की आग | बिजली शरीर को प्रकाशित करती है || 30 ||

7.91.31

दारुदारणदुर्वारदीप्तं ज्वलनमाततम्यज्ञाग्निदाहकल्याणं विस्फोटकठिनारवम् ॥ ३१ ॥

dārudāraṇadurvāradīptaṃ jvalanamātatamyajñāgnidāhakalyāṇaṃ visphoṭakaṭhināravam || 31 ||

The unbearable, blazing fire of the sacrificial ritual, which is auspicious and produces a harsh, crackling sound.

यज्ञ की अग्नि का असहनीय, प्रज्वलित रूप जो कल्याणकारी है और एक कठोर, चटकने वाली आवाज उत्पन्न करता है।

7.91.32

कचत्काञ्चनमाणिक्यमुक्तामणिमयं महःतपस्तां नीतमाक्षिप्य पाण्डित्यमिव पामरैः ॥ ३२ ॥

kacatkāñcanamāṇikyamuktāmaṇimayaṃ mahaḥtapastāṃ nītamākṣipya pāṇḍityamiva pāmaraiḥ || 32 ||

The golden, gem-studded, pearl-adorned, and lustrous penance, when cast away, resembles the wisdom of the ignorant.

सोने की, रत्नजड़ित, मोती से अलंकृत, और चमकदार तपस्या, जब फेंक दी जाती है, तो मूर्खों की बुद्धिमत्ता के समान लगती है।

7.91.33

विभ्रान्तं स्तनशृङ्गेषु मुक्ताहारतया तयासुरोरगगन्धर्वनरनायकयोषिताम् ॥ ३३ ॥

vibhrāntaṃ stanaśṛṅgeṣu muktāhāratayā tayāasuroragagandharvanaranāyakayoṣitām || 33 ||

The pearl necklace, wandering on the breast-peaks of the women who are the leaders of demons, serpents, Gandharvas, and humans.

मोती का हार, जो असुरों, सर्पों, गंधर्वों और मनुष्यों की नायिकाओं के स्तन-शृंगों पर भटक रहा है।

7.91.34

पादाहतिं गतं मार्गे तिलकत्वं वधूमुखेखद्योतेन मया लब्धं पश्यावस्थासु चापलम् ॥ ३४ ॥

pādāhatiṃ gataṃ mārge tilakatvaṃ vadhūmukhekhadyotena mayā labdhaṃ paśyāvasthāsu cāpalam || 34 ||

See the unsteadiness in various situations, obtained by me through the light of the tilaka on the bride's forehead, which has gone on the path of the footprint.

देखो विभिन्न स्थितियों में अस्थिरता, जो मुझे वधू के माथे पर तिलक के प्रकाश से प्राप्त हुई है, जो पैर के निशान के मार्ग पर चली गई है।

7.91.35

क्वचिद्विद्युत्तया तेषु शफर्या चार्णवेष्विवखस्थेषु विकृतं चारु वार्यावर्तविराविषु ॥ ३५ ॥

kvacidvidyuttayā teṣu śapharyā cārṇaveṣvivakhastheṣu vikṛtaṃ cāru vāryāvartavirāviṣu || 35 ||

Sometimes, with the lightning, those clouds, resembling large bodies of water, appear beautifully distorted with the charming sound of the roaring waters.

कभी-कभी, बिजली के साथ, वे बादल, जो बड़े जलाशयों के समान लगते हैं, गर्जने वाले पानी की मनमोहक आवाज के साथ सुंदर रूप से विकृत दिखाई देते हैं।

7.91.36

क्वचिद्दीपतयानीय कलिकाकोमलाङ्गया । अन्तःपुरेषु कान्तानां सुरतालोकनं कृतम् ॥ ३६ ॥

kvaciddīpatayānīya kalikākomalāṅgayā | antaḥpureṣu kāntānāṃ suratālokanaṃ kṛtam || 36 ||

Sometimes, with the tender-bodied beloved brought like a lamp, the act of lovemaking was witnessed in the inner chambers.

कभी-कभी, कोमल शरीर वाली प्रियतमा को दीपक की तरह लाकर, अंतःपुर में प्रेमालाप का दृश्य देखा गया।

7.91.37

क्वचित्कज्जलजालस्य ज्वालाकनकदाकृते । खेदिना घनकूर्माभं सङ्गेनैव स्वकोटरे ॥ ३७ ॥

kvacitkajjalajālasya jvālākanakadākṛte | khedinā ghanakūrmābhaṃ saṅgenaiva svakoṭare || 37 ||

Sometimes, the golden flame of the lotus-like water network, resembling a dense tortoise, was extinguished by its own shell.

कभी-कभी, कमल जैसे जल जाल की सुनहरी ज्वाला, घने कछुए के समान, अपने ही खोल से बुझ जाती थी।

7.91.38

कल्पान्तेषु क्वचित्सर्वजगद्भ्रमघनश्रमात् । खे कज्जलासिते लीनं रुद्रेभ इव विद्युता ॥ ३८ ॥

kalpānteṣu kvacitsarvajagadbhramaghanśramāt | khe kajjalāsite līnaṃ rudrebh iva vidyutā || 38 ||

At the end of the eons, sometimes due to the dense fatigue of the entire world's delusion, it merged into the dark sky like lightning in the clouds.

कल्पों के अंत में, कभी-कभी समूचे विश्व के भ्रम के घने थकान के कारण, यह अंधेरे आकाश में बिजली की तरह विलीन हो गया।

7.91.39

क्वचिदाकल्पमापीय वाडवाग्नितया जलम् । जगत्सु गगनेष्वन्ते ननृते जलराशिषु ॥ ३९ ॥

kvacidākalpamāpīya vāḍavāgnitayā jalam | jagatsu gaganeṣvante nanṛte jalarāśiṣu || 39 ||

Sometimes, having drunk the ocean at the end of the world, the submarine fire danced in the water masses in the sky.

कभी-कभी, विश्व के अंत में समुद्र को पीकर, समुद्री अग्नि आकाश में जल के भंडारों में नृत्य करती थी।

7.91.40

क्वचिदुल्मुकदन्तेन मया ज्वालाभुजात्मना । विलोलधूमावर्तोग्रकुन्तलेनाकुलौजसा ॥ ४० ॥

kvacidulmukadantena mayā jvālābhujātmanā | viloladhūmāvartograkuntalena ākulaujasā || 40 ||

Sometimes, with the flame-armed form of mine with disheveled hair, the fierce curls of the swaying smoke caused confusion.

कभी-कभी, मेरे ज्वाला-भुज रूप के साथ बिखरे बालों वाले, झूमते धुएं के भयानक घुंघराले बालों ने उलझन पैदा की।

7.91.41

पुरपल्वलदाहेषु कवलीकृतजन्तुना । कृताः कृताष्ट काष्ठादिपदार्थाः खादनोचिताः ॥ ४१ ॥

purapalvaladāheṣu kavalīkṛtajantunā | kṛtāḥ kṛtāṣṭa kāṣṭhādipadārthāḥ khādanocitāḥ || 41 ||

In the burning of cities and villages, by the creature that has been swallowed, various objects made of wood and other materials suitable for eating have been created.

शहरों और गांवों के जलने में, निगले गए जीव द्वारा, खाने के लिए उपयुक्त लकड़ी और अन्य पदार्थों से बने विभिन्न वस्तुएँ बनाई गई हैं।

7.91.42

हतेन शस्त्रपाषाणैरयःपिण्डादिवासिना । हन्तृदाहार्थमुद्गीर्णाः कणकोपलताः क्वचित् ॥ ४२ ॥

hatena śastrapāṣāṇairayaḥpiṇḍādivāsinā | hantṛdāhārthamudgīrṇāḥ kaṇakopalatāḥ kvacit || 42 ||

By the one killed with weapons and stones, living in the form of an iron ball, etc., for the purpose of burning the killer, small particles and lumps are sometimes uttered.

हथियारों और पत्थरों से मारे गए उस व्यक्ति द्वारा, जो लोहे के गोले के रूप में रहता है, आदि, हत्यारे को जलाने के लिए, कभी-कभी छोटे कण और ढेले निकलते हैं।

7.91.43

क्वचिन्महाशिलाकोशे पाषाणमणिना मया । समस्तभूताद्दश्येन स्थितं युगशतान्यपि ॥ ४३ ॥

kvacinmahāśilākośe pāṣāṇamaṇinā mayā | samastabhūtādṛśyena sthitaṃ yugaśatānyapi || 43 ||

Sometimes in a great stone chest, with a stone jewel by me, it remains invisible to all beings for hundreds of years.

कभी-कभी एक बड़े पत्थर के सन्दूक में, एक पत्थर के रत्न के साथ मेरे द्वारा, यह सभी जीवों के लिए अदृश्य रहता है सैकड़ों वर्षों तक।

7.91.44

श्रीराम उवाच । मुने तस्यामवस्थायामनुभूतं त्वया सुखम् । उत दुःखमिति ब्रूहि बोधाय मम मानद ॥ ४४ ॥

śrīrāma uvāca | mune tasyāmavasthāyāmanubhūtaṃ tvayā sukham | uta duḥkhamiti brūhi bodhāya mama mānada || 44 ||

Sri Rama said: O sage, in that state, did you experience happiness or sorrow? Please tell me for my enlightenment, O honorable one.

श्री राम ने कहा: हे मुनि, उस अवस्था में, आपने सुख अनुभव किया या दुःख? कृपया मेरे बोध के लिए बताएं, हे आदरणीय।

7.91.45

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथा याति नरः सुप्तो जडतां चेतनोऽपि सन् । चिद्व्योम गच्छेद्दृश्यत्वं तथा जाड्यं प्रचेतति ॥ ४५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathā yāti naraḥ supto jāḍatāṃ cetano'pi san | cidvyoma gaccheddṛśyatvaṃ tathā jāḍyaṃ pracetati || 45 ||

Sri Vasistha said: Just as a sleeping person, though conscious, goes into a state of inertness, so does the conscious space go into a state of being an object of perception, thus it appears as inert.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जैसे एक सोया हुआ व्यक्ति, होते हुए चेतन, जड़ता की अवस्था में चला जाता है, वैसे ही चेतन अंतरिक्ष दृश्यता की अवस्था में चला जाता है, इसलिए यह जड़ प्रतीत होता है।

7.91.46

आत्मानं चेतति ब्रह्म पृथ्व्यादीव यदा तदासुप्तं जडमिवास्तेऽन्तः स्यादस्य न तदन्यथा ॥ ४६ ॥

ātmānaṃ cetati brahma pṛthvyādīva yadā tadāsuptaṃ jaḍamivāste'ntaḥ syādasya na tadanyathā || 46 ||

When the self (ātmānaṃ) reflects on Brahman (brahma), it becomes like the earth (pṛthvyādīva) and other elements. Then, it remains inert (jaḍamivāste) and dormant (suptaṃ) within. It cannot be otherwise (na tadanyathā).

जब आत्मा (आत्मानं) ब्रह्म (ब्रह्म) पर ध्यान करता है, तो वह पृथ्वी (पृथ्व्यादीव) और अन्य तत्वों की तरह हो जाता है। तब, वह अन्दर जड़ (जडमिवास्ते) और निष्क्रिय (सुप्तं) रहता है। यह किसी और तरीके से नहीं हो सकता (न तदन्यथा)।

7.91.47

वस्तुतस्तस्य खोर्व्यादि नासद्रूपं न सन्मयम्द्रष्टृदृश्यमिवाभाति ब्रह्म चैतत्समं स्थितम् ॥ ४७ ॥

vastutastasya khorvyādi nāsadrūpaṃ na sanmayamdraṣṭṛdṛśyamivābhāti brahma caitatsamaṃ sthitam || 47 ||

In reality, the elements such as space (khorvyādi) do not have a form (nāsadrūpaṃ) nor existence (na sanmayam). They appear like the seer and the seen (draṣṭṛdṛśyamivābhāti). Brahman (brahma) is established (sthitam) in this sameness (caitatsamaṃ).

वास्तव में, आकाश (खोर्व्यादि) जैसे तत्व न तो रूप (नासद्रूपं) रखते हैं न ही अस्तित्व (न सन्मयम्)। वे द्रष्टा और दृश्य की तरह प्रतीत होते हैं (द्रष्टृदृश्यमिवाभाति)। ब्रह्म (ब्रह्म) इस समानता (चैतत्समं) में स्थापित है (स्थितम्)।

7.91.48

एतत्सत्यपरिज्ञानं यस्योत्पन्नमखण्डितम्न तस्य पञ्चभूतानि न दृश्यद्रष्टृविभ्रमः ॥ ४८ ॥

etatsatyaparijñānaṃ yasyotpannamakhaṇḍitamna tasya pañcabhūtāni na dṛśyadraṣṭṛvibhramaḥ || 48 ||

For one who has attained the unbroken (akhaṇḍitam) knowledge (parijñānaṃ) of this truth (etatsatya), the five elements (pañcabhūtāni) do not exist, nor is there any confusion (vibhramaḥ) between the seer and the seen (dṛśyadraṣṭṛ).

जिसने इस सत्य (एतत्सत्य) के अखंड (अखण्डितम्) ज्ञान (परिज्ञानं) को प्राप्त कर लिया है, उसके लिए पाँच तत्व (पञ्चभूतानि) अस्तित्वहीन हैं, और द्रष्टा और दृश्य (दृश्यद्रष्टृ) के बीच कोई भ्रम (विभ्रमः) नहीं है।

7.91.49

तदा मयैवं शुद्धेन तत्कृतं ब्रह्मरूपिणाब्रह्मरूपादृते किंचिदेतत्कर्तुर्न युज्यते ॥ ४९ ॥

tadā mayaivaṃ śuddhena tatkṛtaṃ brahmarūpiṇābrahmarūpādṛte kiṃcidetatkarturna yujyate || 49 ||

Then, by this pure (śuddhena) illusion (maya), everything is done (tatkṛtaṃ) by Brahman (brahmarūpiṇā). Without the form of Brahman (brahmarūpādṛte), nothing (kiṃcid) else (etat) can be the doer (karturna yujyate).

तब, इस शुद्ध (शुद्धेन) माया (मय) द्वारा, सब कुछ ब्रह्म (ब्रह्मरूपिणा) द्वारा किया जाता है। ब्रह्म के रूप (ब्रह्मरूपादृते) के बिना, कुछ भी (किंचिदेतत्) कर्ता (कर्तुर्न) नहीं हो सकता।

7.91.50

यदा सर्वमिदं दृश्यं जातं ब्रह्म निरामयम्तदा ब्रह्मपदस्थेन मयात्मैवैवमीक्षितः ॥ ५० ॥

yadā sarvamidaṃ dṛśyaṃ jātaṃ brahma nirāmayamtadā brahmapadasthena mayātmaivaivamīkṣitaḥ || 50 ||

When all this visible (dṛśyaṃ) world (sarvamidaṃ) is born (jātaṃ) from Brahman (brahma) without defect (nirāmayam), then, established in the state of Brahman (brahmapadasthena), I (mayā) see (īkṣitaḥ) the self (ātmaiva) alone (evam) in this way (evam).

जब यह सारा दृश्य (दृश्यं) जगत (सर्वमिदं) ब्रह्म (ब्रह्म) से दोषरहित (निरामयम्) उत्पन्न (जातं) होता है, तब, ब्रह्म की अवस्था (ब्रह्मपदस्थेन) में स्थापित, मैं (मया) आत्मा (आत्मैव) को ही इस प्रकार (एवम्) देखता हूँ (ईक्षितः)।

7.91.51

यदा पुनरहं पञ्चभूतानीत्येव भासयन्। भवामि जड एवाहं तदा चेतामि किं किल ॥ ५१ ॥

yadā punarahaṃ pañcabhūtānītyeva bhāsayan | bhavāmi jaḍa evāhaṃ tadā cetāmi kiṃ kila || 51 ||

When I consider myself to be merely the five elements, I become inert. Then, what do I comprehend?

जब मैं अपने आप को पाँच भूतों के रूप में देखता हूँ, तो मैं जड़ हो जाता हूँ। फिर, मैं क्या समझता हूँ?

7.91.52

सुप्तोऽस्मीति दृढं भावं बुद्धवांश्चेतनोऽपि सन्। नैद्रमेवैत्यलं जाड्यं लसच्चेतति किंचन ॥ ५२ ॥

supto'smīti dṛḍhaṃ bhāvaṃ buddhvāṃścetano'pi san | naidram evaityalam jāḍyaṃ lasaccetati kiṃcana || 52 ||

Even if one is conscious and wise, firmly believing 'I am asleep,' one attains only inertia. What does one comprehend then?

चाहे कोई चेतन और बुद्धिमान हो, फिर भी यदि वह दृढ़ता से 'मैं सोया हुआ हूँ' का भाव रखता है, तो वह केवल जड़ता प्राप्त करता है। फिर वह क्या समझता है?

7.91.53

यस्तु ज्ञानप्रबुद्धात्मा देहस्तस्याधिभौतिकः । शाम्यत्युदेति विमलो बोधात्मैवातिवाहिकः ॥ ५३ ॥

yastu jñānaprabuddhātmā dehastasyādhibhautikaḥ | śāmyatyudeti vimalo bodhātmaivātivāhikaḥ || 53 ||

One whose self is awakened by knowledge, their body becomes pure and radiant, transcending the material.

जिसका आत्मा ज्ञान से जागृत होता है, उसका शरीर शुद्ध और चमकदार हो जाता है, भौतिक से परे जाता है।

7.91.54

आतिवाहिकदेहेन तेन बोधात्मनाणुना । बृहता वा यथाकामं निर्वाणात्मावतिष्ठते ॥ ५४ ॥

ātivāhikadehena tena bodhātmanāṇunā | bṛhatā vā yathākāmaṃ nirvāṇātmāvatiṣṭhate || 54 ||

With that transcendent body, the self of knowledge, whether minute or vast, abides in the state of liberation.

उस पारलौकिक शरीर के साथ, ज्ञान का आत्मा, चाहे छोटा हो या विशाल, मुक्ति की अवस्था में रहता है।

7.91.55

बोधदेहेन हृदयं शिलानामप्यभेदिनाम् । प्रविश्याशु विनिर्याति याति पातालमम्बरम् ॥ ५५ ॥

bodhadehena hṛdayaṃ śilānāmapyabhedinām | praviśyāśu viniryāti yāti pātālamambaram || 55 ||

With the body of knowledge, one can enter and exit the hearts of even the hardest stones, traveling to the underworld and the sky.

ज्ञान के शरीर के साथ, कोई सबसे कठोर पत्थरों के हृदय में प्रवेश कर सकता है और बाहर निकल सकता है, पाताल और आकाश तक यात्रा कर सकता है।

7.91.56

तस्मान्मया पुरा राम बोधदेहेन तत्तदा । तथा कृतमनन्तेन चिन्मयव्योमरूपिणा ॥ ५६ ॥

tasmānmayā purā rāma bodhadēhēna tattadā| tathā kṛtamanantēna cinmayavyōmarūpiṇā || 56 ||

Therefore, O Rama, in the past, I, with my body of pure consciousness, did that action in that manner.

इसलिए, हे राम, पूर्वकाल में, मैंने अपने चिन्मय शरीर से उस तरह का कार्य किया था।

7.91.57

वज्रपाषाणपातालनभोम्बरगमागमान् । कुर्वतस्तादृशस्याशु न विघ्न उपजायते ॥ ५७ ॥

vajrapāṣāṇapātālanabhōmbaragamāgamān| kurvatastādṛśasyāśu na vighna upajāyatē || 57 ||

For one who performs actions like the movement of thunderbolts, stones, the underworld, and the sky, no obstacles arise quickly.

जो वज्र, पत्थर, पाताल और आकाश की तरह कार्य करता है, उसके लिए शीघ्र ही कोई विघ्न नहीं उत्पन्न होता।

7.91.58

बोधमात्रशरीरेण यावदास्ते जडेष्वसौ । पदार्थेषु तथाभूतस्तावत्तत्रावतिष्ठते ॥ ५८ ॥

bodhamātraśarīrēṇa yāvadāstē jaḍēṣvasau| padārthēṣu tathābhūtastāvattatrāvatiṣṭhatē || 58 ||

As long as the body of pure consciousness remains in inert objects, it stays there in that form.

जब तक शुद्ध चेतना का शरीर जड़ वस्तुओं में रहता है, तब तक वह उसी रूप में वहाँ रहता है।

7.91.59

स्वेच्छयैव चलित्वाथ ततोऽन्यत्र प्रयाति चेत् । तच्चैव स्थितिं याति तत्तथैवागतिर्यथा ॥ ५९ ॥

svēcchayaiva calitvātha tatō'nyatra prayāti cēt| taccaiava sthitiṃ yāti tattathaivāgatiryathā || 59 ||

If, by its own will, it moves from there to another place, it attains stability there just as it had before.

यदि अपनी इच्छा से, वह वहाँ से कहीं और चला जाता है, तो वह वहाँ उसी तरह स्थिर हो जाता है जैसा पहले था।

7.91.60

बोधमात्रं विदुर्देहमातिवाहिकमव्ययम् । इदानीं त्वं तमेवेह बुधोऽनुभवसि स्वयम् ॥ ६० ॥

bodhamātraṃ vidurdēhamātivāhikamavyayam| idānīṃ tvaṃ tamēvēha budhō'nubhavasi svayam || 60 ||

The wise know the body of pure consciousness to be transcendental and imperishable. Now, you yourself experience that very consciousness here.

बुद्धिमान लोग शुद्ध चेतना के शरीर को पारलौकिक और अविनाशी मानते हैं। अब, आप स्वयं उसी चेतना का अनुभव करते हैं।

7.91.61

चिन्मात्रव्योमरूपोऽस्मीत्यर्कादाविति बोधतः । आत्मैवास्तमुपानीतः सन्नेवासन्निवात्मना ॥ ६१ ॥

cinmātravyomarūpo'smītyarkādāviti bodhataḥ | ātmaivāstamupānītaḥ sannevāsannivātmanā || 61 ||

I am the pure consciousness that pervades the sky, as realized from the sun and other sources of knowledge. The self itself is brought to rest, as if it were both existent and non-existent.

मैं वह शुद्ध चेतना हूं जो आकाश में व्याप्त है, जैसा कि सूर्य और अन्य ज्ञान के स्रोतों से ज्ञात होता है। आत्मा स्वयं को विश्राम पर लाया जाता है, मानो वह अस्तित्व में और अनस्तित्व में दोनों हो।

7.91.62

स्थितं स्वप्नादिजगति तमसेवासतेव च । आवृतेनेव वान्यासामलभ्येन सता दृशम् ॥ ६२ ॥

sthitaṃ svapnādijagati tamasevāsateva ca | āvṛteneva vānyāsāmalabhyena satā dṛśam || 62 ||

Established in the dream-like world, it appears as darkness and non-existence. It is as if covered, unattainable by others, and visible to the wise.

स्वप्न-जैसे जगत में स्थित, यह अंधकार और अनस्तित्व के रूप में प्रतीत होता है। यह ढका हुआ-सा लगता है, दूसरों के लिए अप्राप्य है, और ज्ञानी के लिए दृश्यमान है।

7.91.63

तरङ्गलेखयाङ्गारसरितः स्वाङ्गलग्नया । मनोराज्यश्रियेवाशुक् प्रोत्पन्नस्तद्वदेहया ॥ ६३ ॥

taraṅgalekhayāṅgārasaritaḥ svāṅgalagnayā | manorājyaśriyevāśuk prōtpannastadvadēhayā || 63 ||

Like the waves of a river flowing with embers, the glory of the mind's kingdom arises quickly, as if embodied in that form.

जैसे अंगारों से भरी नदी की लहरें, मन के राज्य की शोभा तुरंत उठती है, मानो उसी रूप में शरीरधारी हो।

7.91.64

कज्जलालिकया वह्निविपिनं पुष्पशोभया । फुल्लस्थलाम्बुजाकारं किंशुकाशोकरूपया ॥ ६४ ॥

kajjalālikayā vahnivipinaṃ puṣpaśōbhayā | phullasthalāmbujākāraṃ kiṃśukāśōkarūpayā || 64 ||

With the beauty of flowers, the forest of fire appears like a blooming lotus pond, with the form of the kinsuka and ashoka trees.

फूलों की शोभा से, अग्नि का वन खिले हुए कमल तालाब के समान दिखाई देता है, किंशुक और अशोक वृक्षों के रूप में।

7.91.65

विततारम्भयाप्युच्चैर्ज्वालाज्वलतयेद्धया । उपोत्थायाङ्ग गलितं खललक्ष्म्येव लीलया ॥ ६५ ॥

vitatārambhayāpyuccairjvālājvalatayeddhayā | upōtthāyāṅga galitaṃ khalalakṣmyēva līlayā || 65 ||

With the lofty beginning and the blazing flames, it rises and melts away like the fickle fortune, playfully.

उच्च आरंभ और ज्वालामुखी लपटों के साथ, यह उठता है और चंचल भाग्य की तरह खेल से पिघल जाता है।

7.91.66

तेजस्तयापि परमाणुकणोदरेऽपि दृष्टेत्थमेवमिह राम मया जगच्छ्रीः । अन्या च सा न च चिदम्बरतः परस्मात्स्वप्ने पुराचलगणोऽत्र निदर्शनं वः ॥ ६६ ॥

tejastayāpi paramāṇukaṇodare'pi dṛṣṭetthamevamiharāma mayā jagacchrīḥ| anyā ca sā na ca cidambarataḥ parasmātsvapne purācalagaṇo'tra nidarśanaṃ vaḥ || 66 ||

Even in the subtlest particle, this brilliance is seen, O Rama, thus the glory of the world is perceived by me. That other glory is not from the supreme consciousness; it is like a dream, an example of the ancient mountains here.

हे राम, इस प्रकार यह चमक सबसे छोटे कण में भी दिखाई देती है, इसलिए मैं जगत की शोभा को देखता हूँ। वह दूसरी शोभा परम चेतना से नहीं है; यह एक स्वप्न की तरह है, यहाँ पुराने पर्वतों का उदाहरण है।

Chapter 92

7.92.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ वातमयीं कृत्वा जगत्प्रेक्षणकौतुकात् । धारणां धीरया वृत्त्या वितताम्महमागतः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha vātamayīṃ kṛtvā jagatprekṣaṇakautukāt | dhāraṇāṃ dhīrayā vṛttyā vitatāmahamāgataḥ || 1 ||

Sri Vasistha said: Then, out of curiosity to observe the world, I have come to hold the wind-filled creation with a steady mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, संसार को देखने की उत्सुकता से, मैंने वायुमय सृष्टि को स्थिर मन से धारण कर लिया है।

7.92.2

संपन्नोऽस्म्यनिलो वल्लीललनालोकलासकः । कमलोत्पलकुन्दादिजालकामोदपालकः ॥ २ ॥

sampanno'smyanilo vallīlalanālokalāsakaḥ | kamalotpalakundādijālakāmodapālakaḥ || 2 ||

I am complete, being the wind, the swayer of the creepers, the delight of the eyes of women, the protector of the fragrance of the network of lotuses, water lilies, and jasmine.

मैं पूर्ण हूँ, वायु के रूप में, लताओं को हिलाने वाला, स्त्रियों की आँखों का आनंद, कमल, कुमुद और चमेली की जाली की सुगंध का रक्षक।

7.92.3

सीकरोत्करनीहारहेलाहरणतत्परः । सुरतश्रान्तसर्वाङ्गसमाह्लादनतर्षुलः ॥ ३ ॥

sīkarotkaranīhārahelāharaṇatatparaḥ | surataśrāntasarvāṅgasamāhlādanatarṣulaḥ || 3 ||

I am eager to carry away the sprays of water, the garlands of mist, and the fatigue of all the limbs after lovemaking, providing refreshment.

मैं पानी की फुहारों, कुहरे की मालाओं और प्रेम क्रीड़ा के बाद सभी अंगों की थकान को उठाने और ताजगी प्रदान करने के लिए उत्सुक हूँ।

7.92.4

तृणगुल्मलतावल्लीदलताण्डवपण्डितःलतौषधिफलोल्लासकुसुमामोदमण्डितः ॥ ४ ॥

tṛṇagulmalatāvallīdalatāṇḍavapaṇḍitaḥlatauṣadhiphalollāsakusumāmodamaṇḍitaḥ || 4 ||

I am skilled in the dance of grass, shrubs, and creepers, and I am adorned with the joy of herbs, fruits, and the fragrance of flowers.

मैं घास, झाड़ियों और लताओं के नृत्य में कुशल हूँ, और मैं औषधियों, फलों और फूलों की सुगंध की खुशी से सजा हुआ हूँ।

7.92.5

मृदुर्मङ्गलकालेषु ललनालोकलालकः । भीम उत्पातकालेषु पर्णवत्प्रौढपर्वतः ॥ ५ ॥

mṛdurmangalakāleṣu lalanālokalālakaḥ | bhīma utpātakāleṣu parṇavatprauḍhaparvataḥ || 5 ||

I am gentle during auspicious times, delighting the eyes of women, but fierce during times of calamity, like a mountain covered with leaves.

मैं शुभ समय में कोमल हूँ, स्त्रियों की आँखों का आनंद लेता हूँ, लेकिन आपदा के समय में भयंकर हूँ, पत्तों से ढके पर्वत की तरह।

7.92.6

नन्दने कुन्दमन्दारमकरन्दरजोरुणः । नरकेऽङ्गारसंभारभूरिनीहारभासुरः ॥ ६ ॥

nandane kundamandāramakarandarajoruṇaḥ | narake'ṅgārasaṃbhārabhūrinīhārabhāsuraḥ || 6 ||

In the celestial garden, the pollen dust of the jasmine flowers is reddish | In hell, it is as bright as the heap of burning coals

स्वर्गीय उद्यान में, चमेली के फूलों का पराग लालिमा लिए है | नरक में, यह जलती हुई अंगारों के ढेर की तरह चमकता है

7.92.7

सागरे सरलावर्तलेखानुमितसर्पणः । दिवि वारिदसंचारमृष्टामृष्टेन्दुदर्पणः ॥ ७ ॥

sāgare saralāvartalekhānumitasarpaṇaḥ | divi vāridasaṃcāramṛṣṭāmṛṣṭendudarpaṇaḥ || 7 ||

In the ocean, it moves like a straight line drawn by waves | In the sky, it is like a mirror reflecting the clear and unclear moon

समुद्र में, यह लहरों द्वारा खींची गई सीधी रेखा की तरह चलता है | आकाश में, यह स्पष्ट और अस्पष्ट चंद्रमा को दर्पण की तरह प्रतिबिंबित करता है

7.92.8

नक्षत्रक्षत्रसैन्यस्य रथो रंहोविबृंहितः । त्रैलोक्यसिद्धसंचारविमानधरणे हितः ॥ ८ ॥

nakṣatrakṣatrasainyasya ratho raṃhovibṛṃhitaḥ | trailokyasiddhasaṃcāravimānadharaṇe hitaḥ || 8 ||

The chariot of the army of stars is adorned with joy | It is beneficial for the movement of the perfected beings in the three worlds

तारों की सेना का रथ आनंद से सजा है | यह तीनों लोकों में सिद्ध प्राणियों की गति के लिए लाभकारी है

7.92.9

सहोदर इव क्षिप्रगामित्वादस्य चेतसः । अनङ्गोऽपि समस्ताङ्गः स्पन्दानन्दनचन्दनः ॥ ९ ॥

sahodara iva kṣipragāmitvādasyacetasaḥ | anaṅgo'pi samastāṅgaḥ spandānandanacandanaḥ || 9 ||

Like a brother due to the swiftness of his mind | Although bodiless, he is complete in all limbs, the sandalwood of the forest of joy

मन की तीव्रता के कारण भाई की तरह | भले ही शरीरहीन हो, वह सभी अंगों में पूर्ण है, आनंद के वन का चंदन

7.92.10

तुषारसीकरासारजरारोमविजर्जरः । आमोदयौवनोन्मादो मौनमार्दवशैशवः ॥ १० ॥

tuṣārasīkarāsārajaraāromavijarjaraḥ | āmodayauvanounmādo maunamārdavaśaiśavaḥ || 10 ||

He who shakes off the old hairs of the essence of snow flakes | The madness of youthful fragrance, the tenderness of silence and childhood

जो बर्फ के पालों की सार के पुराने बालों को झटकता है | युवा सुगंध का उन्माद, मौन और बचपन की कोमलता

7.92.11

नन्दनामोदमधुरो मधुरोदारसंसृतिःचारुचैत्ररथोन्मुक्तो हृतकान्तारतश्रमः ॥ ११ ॥

nandanāmodamadhuro madhurodārasaṃsṛtiḥcārucaitrarathonmukto hṛtakāntārataśramaḥ || 11 ||

The delightful fragrance of the Nandana garden, the sweet flow of nectar, the beautiful chariot of spring, released from the toil of the beloved's heart.

नन्दन वन की मधुर सुगंध, मधुर अमृत का प्रवाह, वसंत का सुंदर रथ, प्रिय के हृदय की थकान से मुक्त।

7.92.12

चिरं गङ्गातरङ्गाङ्गदोलान्दोलनसश्रमः । श्रमस्वरूपाज्ञतया निवारिततत्श्रमः ॥ १२ ॥

ciram gaṅgātaraṅgāṅgadolāndolanasashramaḥ | śramasvarūpājñatayā nivāritatataśramaḥ || 12 ||

Long enduring the fatigue of the swinging waves of the Ganges, the fatigue was removed by the knowledge of the nature of fatigue.

गंगा के तरंगों की झूले की थकान लंबे समय तक सहन करना, थकान की प्रकृति के ज्ञान से थकान दूर हो गई।

7.92.13

पुष्पभारानताः स्पर्शैर्वसन्तवनितालताः । चिरं चपलयँल्लोलदलहस्तालिलोचनाः ॥ १३ ॥

puṣpabhārānatāḥ sparśairvasantavanitālatāḥ | ciram capalayamlloladalahastālilocanāḥ || 13 ||

Bent under the weight of flowers, the spring vines touched by the spring breeze, long with flickering, dancing, delicate leaf-hands and eyes.

फूलों के भार से झुकी हुई, वसंत की लताएँ वसंत की हवा से छूई हुई, लंबे समय तक कंपित, नृत्य करती, कोमल पत्ती-हाथ और आँखें।

7.92.14

चिरं भुक्त्वेन्दुबिम्बाग्रं सुप्ता पूर्णाभ्रतल्पके । विधूय कमलानीकमपनीतरतश्रमः ॥ १४ ॥

ciram bhuktvendubimbāgraṃ suptā pūrṇābhraṭalpake | vidhūya kamalānīkamapanītarataśramaḥ || 14 ||

Long enjoying the moon's orb at the top, sleeping on the bed of full clouds, having shaken off the array of lotuses, the fatigue removed.

लंबे समय तक चंद्रमा के गोले का आनंद लेते हुए पूर्ण बादलों के बिस्तर पर सोते हुए, कमलों की पंक्ति को झटककर, थकान दूर हो गई।

7.92.15

समस्तरजसामेको व्योमगामी तुरंगमः । आमोदमदमातङ्गसमुल्लासमहासुहृत् ॥ १५ ॥

samastarajasāmeko vyomagāmī turaṅgamaḥ | āmodamadamātaṅgasamullāsamahāsuhṛt || 15 ||

One with all the dust, going to the sky, the horse, the great friend of the joyful elephant's exultation.

सभी धूल के साथ एक, आकाश की ओर जाने वाला, घोड़ा, आनंदित हाथी के उल्लास का महान मित्र।

7.92.16

धीरेणाप्य तडिच्छृङ्गं पयोदपशुपालकः । तन्तुः सीकरमुक्तानामरिधर्मा रजोरुजाम् ॥ १६ ॥

dhīreṇāpya taḍicchṛṅgaṃ payodapaśupālakaḥ| tantuḥ sīkaramuktānāmaridharmā rajorujām|| 16 ||

Even slowly, the lightning's peak, the protector of water and animals| The thread of pearl drops, the enemy of dust and disease|| 16 ||

धीरे-धीरे, बिजली का शिखर, पानी और पशुओं का रक्षक| मोती की बूँदों का धागा, धूल और रोगों का शत्रु|| १६ ||

7.92.17

आकाशकुसुमामोदः सर्वशब्दसहोदरः । नाडीप्रणालीसलिलं भूताङ्गोपाङ्गवर्तकः ॥ १७ ॥

ākāśakusumāmodaḥ sarvaśabdasahodaraḥ| nāḍīpraṇālīsalilaṃ bhūtāṅgopāṅgavartakaḥ|| 17 ||

The fragrance of the sky's flowers, the one who bears all sounds| The water of the channels and veins, the one who revolves around the limbs of beings|| 17 ||

आकाश के फूलों की सुगंध, जो सभी आवाजों को सहन करता है| नाड़ियों और नसों का पानी, जो प्राणियों के अंगों के चारों ओर घूमता है|| १७ ||

7.92.18

मर्मकर्मकरैकात्मा हृद्गुहागेहकेसरी । नित्यमेकान्तपथिकः सारविज्जातवेदसः ॥ १८ ॥

marmakarmakaraikātmā hṛdguhāgehakesarī| nityamekāntapathikaḥ sāravijjātavedasaḥ|| 18 ||

The one who performs secret actions, the lion of the heart's cave| The eternal solitary traveler, the one who knows the essence of all knowledge|| 18 ||

जो गुप्त कार्य करता है, हृदय की गुफा का सिंह| नित्य एकांत पथिक, जो सभी ज्ञान की सार जानता है|| १८ ||

7.92.19

आमोदरत्नलुण्टाको विमाननगरावनिःदाहान्धकारशीतांशुः शैत्येन्दुक्षीरसागरः ॥ १९ ॥

āmodaratnaluṇṭāko vimānanagarāvaniḥdāhāndhakāraśītāṃśuḥ śaityendukṣīrasāgaraḥ || 19 ||

The one who steals the gem of joy, the sound of the celestial city, the burning darkness, the cool moonlight, the ocean of cold moonlight.

आनंद के रत्न का चोर, दिव्य नगर की ध्वनि, जलती अंधेरी, ठंडी चांदनी, ठंडे चांदनी का समुद्र।

7.92.20

प्राणापानकलारज्ज्वा प्राणिनां यन्त्रवाहकः । अरिर्मित्रं च द्वीपानां द्वीपसंचारणे रतः ॥ २० ॥

prāṇāpānakalārajjvā prāṇināṃ yantravāhakaḥ| arirmitraṃ ca dvīpānāṃ dvīpasaṃcāraṇe rataḥ|| 20 ||

The rope of the art of inhalation and exhalation, the carrier of the machine of living beings| The enemy and friend of islands, engaged in the movement of islands|| 20 ||

श्वास और प्रश्वास की कला का रज्जु, प्राणियों के यंत्र का वाहक| द्वीपों का शत्रु और मित्र, द्वीपों की गति में लगा हुआ|| २० ||

7.92.21

पुरोगतोऽप्यदृश्यात्मा मनोराज्यपुरोपमः । तालवृन्ततिलेतैलमालानं स्पन्ददन्तिनः ॥ २१ ॥

purogato'pyadṛśyātmā manorājyapuropamaḥ| tālavṛntatiletailamālānaṃ spandadantinaḥ|| 21 ||

Even though preceding, the invisible self, similar to the kingdom of the mind| The garland of palm leaves, oil, and sesame, the vibrating teeth|| 21 ||

भले ही आगे हो, अदृश्य आत्मा, मन के राज्य के समान| ताड़ के पत्तों, तिल और तेल की माला, काँपते दाँत|| २१ ||

7.92.22

एकक्षणलवेनैव चालिताखिलभूधरः । वर्णावलितरङ्गाणां गङ्गावाह इवैककृत् ॥ २२ ॥

ekakṣaṇalavenaiva cālitākhilabhūdharaḥ | varṇāvalitarāṅgāṇāṃ gaṅgāvāha ivaikakṛt || 22 ||

In just a moment, the entire earth is shaken, as if the Ganges, with its waves adorned with colors, is made one.

एक क्षण में ही सारी पृथ्वी हिल उठती है, जैसे रंगों से सजी गंगा की लहरें एक हो गई हों।

7.92.23

धूमाम्बुवाहरजसां महावर्तकृदम्भसाम् । द्युनदीवाहवार्योघनभोनीलोत्पलालिकः ॥ २३ ॥

dhūmāmbuvāharajasāṃ mahāvartakṛdamphasām | dyunadīvāhavāryoghanabhonīlotpalālikaḥ || 23 ||

The clouds, which carry smoke and water, create great whirlpools and are like the blue lotuses of the sky, carrying the waters of the celestial rivers.

धूम और जल को लेकर चलने वाले बादल महान भँवर बनाते हैं और आकाश के नीले कमलों के समान होते हैं, जो दिव्य नदियों के जल को लेकर चलते हैं।

7.92.24

शरीरावेष्टितोन्मुक्तपुराणतृणचोपनः । स्पन्दपद्मवनादित्यः शब्दवर्षैकवारिदः ॥ २४ ॥

śarīrāveṣṭitonmuktapurāṇatṛṇacopanaḥ | spandapadmavanādityaḥ śabdavarṣaikavāridaḥ || 24 ||

The body is covered with released ancient grass, like the sun in the lotus pond, a single cloud of sound rain.

शरीर पुरानी घास से ढका हुआ है, जैसे कमल के तालाब में सूर्य, एक शब्द वर्षा का बादल।

7.92.25

व्योमकाननमातङ्गः शरीरगृहगर्गटः । धूलीकदम्बविपिनमालालिङ्गननायकः ॥ २५ ॥

vyomakānanamātaṅgaḥ śarīragṛhagargaṭaḥ | dhūlīkadambavipinamālālilṅgananāyakaḥ || 25 ||

The elephant of the sky forest, the body is the house of the throat, the leader embracing the garland of the dust cloud forest.

आकाश के वन का हाथी, शरीर गले का घर है, धूल के बादल के जंगल की माला को आलिंगन करने वाला नायक।

7.92.26

स्त्यानीकरणसंशोषधृतिस्पन्दनसौरभैः । सशैत्यैः कर्मभिः षड्भिरलब्धक्षण आक्षयम् ॥ २६ ॥

styānīkaraṇasaṃśoṣadhṛtispadanasaurabhaiḥ | saśaityaiḥ karmabhiḥ ṣaḍbhir alabdhakṣaṇa ākṣayam || 26 ||

With the six actions of causing languor, drying up, supporting, quivering, fragrance, and coolness, the moment is not obtained, it is eternal.

थकान पैदा करने, सुखाने, सहारा देने, काँपने, सुगंध और ठंडक के छह कर्मों से, क्षण प्राप्त नहीं होता, यह अनंत है।

7.92.27

रसाकर्षणसव्यग्रो नित्यं भ्रातेव तेजसः । हरणादानकर्तॄणामङ्गानां विनियोगकृत् ॥ २७ ॥

rasākaraṣaṇasavyagrō nityaṃ bhrātēva tējasasa | haraṇādānakartṝṇāmaṅgānāṃ viniyōgakṛt || 27 ||

Always engaged in the extraction of essence, like a brother to energy, the one who utilizes the organs of giving and taking.

हमेशा रस को आकर्षित करने में व्यस्त, ऊर्जा के भाई की तरह, जो देने और लेने के अंगों का उपयोग करता है।

7.92.28

शरीरनगरे नाडीमार्गैर्गतिनिरर्गलः । रसभाण्डे परावर्तादायुर्मणिमहावणिक् ॥ २८ ॥

śarīranagarē nāḍīmārgairgatinirargalaḥ | rasabhāṇḍē parāvartādāyurmṇimahāvaṇik || 28 ||

In the city of the body, moving through the paths of the nerves, it rotates in the vessel of essence, the great merchant of life.

शरीर के नगर में, नाड़ियों के मार्गों से गति करते हुए, यह रस के भांडे में घूमता है, जीवन का महान व्यापारी।

7.92.29

शरीरनगरीनाशनिर्माणैकपरायणः । रसकिट्टकलाधातुपृथक्करणकोविदः ॥ २९ ॥

śarīranagarīnāśanirmāṇaikaparāyaṇaḥ | rasakiṭṭakalādhātupṛthakkaraṇakovidaḥ || 29 ||

Dedicated solely to the destruction and creation of the city of the body, skilled in the separate formation of essence, excrement, skin, and minerals.

शरीर के नगर के विनाश और निर्माण में एकाग्र, रस, मल, त्वचा और धातुओं के अलग-अलग निर्माण में कुशल।

7.92.30

प्रतिसूक्ष्माणुकं देहे ततो दृष्टं मया जगत्। तत्रेत्थं रूपवानस्मि स्फुटमाभोगि सुस्थिरम्॥ ३०॥

pratisūkṣmāṇukaṃ dēhē tatō dṛṣṭaṃ mayā jagat | tatrētthaṃ rūpavānasmī sphuṭamābhōgi susthiram || 30 ||

In every subtle atom of the body, I have seen the universe. There, I am manifested clearly and steadily.

देह के हर सूक्ष्म अणु में, मैंने ब्रह्मांड देखा है। वहाँ, मैं स्पष्ट और स्थिर रूप से प्रकट हूँ।

7.92.31

परमाणुप्रति त्वत्र प्रोह्यन्त इव सर्गकाः। न च किंचित्किलोह्यन्ते स्वा कृते किमिवोह्यते॥ ३१॥

paramāṇuprati tvatra prohyanta iva sargakāḥ | na ca kiṃcitkilo hyantē svā kṛtē kimivōhyatē || 31 ||

Here, for every atom, creations seem to emerge. Yet, nothing is truly destroyed; what is the purpose of this creation?

यहाँ, हर परमाणु के लिए, सृष्टियाँ उभरती प्रतीत होती हैं। फिर भी, कुछ भी वास्तव में नष्ट नहीं होता; इस सृष्टि का क्या उद्देश्य है?

7.92.32

सचन्द्रार्कानिलाग्नीन्द्रपद्मवैश्रवणेश्वराः। सब्रह्महरिगन्धर्वा विद्याधरमहोरगाः॥ ३२॥

sacandraarkānilāgnīndrapadmavaishravaneshvarāḥ | sabrahmaharigandharvā vidyādharamahoragāḥ || 32 ||

Along with the moon, the sun, the wind, the fire, Indra, the lotus, Kubera, and Shiva, along with Brahma, Vishnu, the Gandharvas, the Vidyadharas, and the great serpents.

चन्द्रमा, सूर्य, वायु, अग्नि, इंद्र, कमल, कुबेर और शिव के साथ, ब्रह्मा, विष्णु, गंधर्व, विद्याधर और महानागों के साथ।

7.92.33

ससागरगिरिद्वीपदिगन्तरमहार्णवाः। सलोकान्तरलोकेशक्रियाकालकलाक्रमाः॥ ३३॥

sasāgaragiridvīpadigantaramahārṇavāḥ | salokāntaralokeshakriyākālakalākramāḥ || 33 ||

Along with the oceans, mountains, islands, directions, great oceans, along with the worlds, intermediate worlds, lords of the worlds, actions, times, and the order of arts.

समुद्रों, पर्वतों, द्वीपों, दिशाओं, महासागरों के साथ, लोकों, अंतरलोकों, लोकेशों, क्रियाओं, कालों और कलाओं के क्रम के साथ।

7.92.34

सस्वर्गभूमिपातालततलोकान्तरान्तराः। सभावाभाववैधुर्यजरामरणसंभ्रमाः॥ ३४॥

sasvargabhūmipātālatatlokāntarāntarāḥ | sabhāvābhāvavaidhuryajarāmaraṇasaṃbhramāḥ || 34 ||

Along with heaven, earth, the underworld, the netherworld, the intermediate worlds, along with the nature of existence, non-existence, splendor, old age, death, and confusion.

स्वर्ग, भूमि, पाताल, अतल, अंतरलोकों के साथ, अस्तित्व, अनस्तित्व, शोभा, वृद्धावस्था, मृत्यु, और भ्रम के साथ।

7.92.35

एवं नाम तदा राम भूतपञ्चकरूपिणा। मया प्रविहृतं तत्र त्रैलोक्यनलिनोदरे॥ ३५॥

evaṃ nāma tadā rāma bhūtapañcakarūpiṇā | mayā pravihṛtaṃ tatra trailokyanalinodare || 35 ||

Thus, O Rama, at that time, I, in the form of the five elements, was engaged in the creation of the three worlds in the lotus of the universe.

इस प्रकार, हे राम, उस समय, मैं पाँच तत्वों के रूप में, ब्रह्मांड के कमल में तीनों लोकों की सृष्टि में व्यस्त था।

7.92.36

रसः पीतोऽनुभूतश्च क्ष्माजलानिलतेजसाम्। मूलजालेन वृक्षाणां प्राणिनां वसता मया ॥ ३६ ॥

rasaḥ pīto'nubhūtaśca kṣmājalānilatejasām | mūlajālena vṛkṣāṇāṃ prāṇināṃ vasatā mayā || 36 ||

The essence was drunk and experienced by me, the root cause of the earth, water, wind, and fire, and the life of trees and living beings.

रस पीया गया और मैंने अनुभव किया, पृथ्वी, जल, वायु, और अग्नि का मूल कारण, और पेड़ों और जीवों का जीवन।

7.92.37

रसायनघनाङ्गेषु चन्दनद्रवशोभिषु। लुठितं चन्द्रबिम्बेषु तुषारशयनेष्विव ॥ ३७ ॥

rasāyanaghanāṅgeṣu candanadravaśobhiṣu | luṭhitaṃ candrabimbeṣu tuṣāraśayaneṣviva || 37 ||

In the limbs anointed with fragrant oils and adorned with sandalwood paste, it is as if smeared on the moon's surface, like a bed of snow.

रसायन से घन अंगों में चन्दन के द्रव से शोभित, चन्द्रमा के बिम्ब पर लगा हुआ सा है, बर्फ के शयन की तरह।

7.92.38

सर्वर्तुवनजालेषु नानामोदानि दिक्ष्वलम्। भुक्तानि पुष्पजालानि प्रोच्छिष्टं ददताऽलये ॥ ३८ ॥

sarvartuvanajāleṣu nānāmodāni dikṣvalam | bhuktaāni puṣpajālāni procchiṣṭaṃ dadatā'laye || 38 ||

In the gardens of all seasons, various fragrances pervade in all directions, as if the remnants of consumed flower garlands are offered in the abode.

सभी ऋतुओं के वनों में, विभिन्न सुगंधें सभी दिशाओं में फैली हुई हैं, जैसे भक्षित फूलों के मालाओं के अवशेष आलय में अर्पित किए गए हों।

7.92.39

ततोन्नतासु मृद्वीषु स्वास्तीर्णास्वम्बराजिरे। सुप्तं शुभ्राभ्रमालासु नवनीतस्थलीष्विव ॥ ३९ ॥

tatonnatāsu mṛdvīṣu svāstīrṇāsvambarājire | suptaṃ śubhrābhramālāsu navanītasthalīṣviva || 39 ||

Then, on the elevated, soft beds spread with fine cloth, it is as if sleeping on the bright cloud garlands, like beds of fresh butter.

फिर, ऊँचे, कोमल शय्याओं पर जो सुंदर कपड़ों से बिछी हुई हैं, वह चमकीले बादलों की मालाओं पर सोने के समान है, ताजे मक्खन की शय्याओं की तरह।

7.92.40

सुमनःपत्रमृदुषु नीललक्ष्मीविलासिषु। सुरसिद्धाङ्गनाङ्गेषु दूरास्तस्मरवासनम् ॥ ४० ॥

sumanaḥpatramṛduṣu nīlalakṣmīvilāsiṣu | surasiddhāṅganāṅgeṣu dūrāstasmravāsanam || 40 ||

In the soft petals of flowers, in the blue splendor, in the limbs of the celestial nymphs, the fragrance of sandalwood is perceived from afar.

फूलों के कोमल पत्रों में, नीले शोभा में, देवांगनाओं के अंगों में, चन्दन की सुगंध दूर से महसूस की जाती है।

7.92.41

कृतः कुमुदकह्लारकमले नलिनीवने। कोमलः कलहंसीभिर्लीलाकलकलारवः ॥ ४१ ॥

kṛtaḥ kumudakahrārakamale nalinīvane | komalaḥ kalahaṃsībhirlīlākalakalāravaḥ || 41 ||

In the lotus pond filled with white and red lotuses, a gentle sound of playful swans is created.

सफेद और लाल कमलों से भरे कमल तालाब में, खेलते हंसों की कोमल ध्वनि उत्पन्न होती है।

7.92.42

सरत्सरिच्छिरासारा मूलभूमण्डलान्विताः । अङ्गैरूढाः स्फुरद्भूता लोमालय इवाद्रयः ॥ ४२ ॥

saratsaricchirāsārā mūlabhūmaṇḍalānvitāḥ | aṅgairūḍhāḥ sphuradbhūtā lomālaya ivādrayaḥ || 42 ||

The mountains, adorned with various flowing rivers and lakes, appear as if they are wearing garments of shining beings, like the hairs on a body.

पर्वत अनेक प्रवाहमान नदियों और झीलों से सुशोभित हैं, और चमकते प्राणियों के वस्त्रों के समान दिखाई देते हैं, जैसे शरीर पर बाल।

7.92.43

खाद्रयः प्रथिता दीर्घसरित्सूत्रैः समुद्रकैः । आदर्शैरिव विश्रान्तमङ्गेषु प्रतिबिम्बिभिः ॥ ४३ ॥

khādrayaḥ prathitā dīrghasaritsūtraiḥ samudrakaiḥ | ādarśairiva viśrāntamaṅgeṣu pratibimbibhiḥ || 43 ||

The famous mountains are adorned with long rivers and oceans, reflecting like mirrors in their parts.

प्रसिद्ध पर्वत लंबी नदियों और समुद्रों से सुशोभित हैं, जो अपने अंगों में दर्पणों की तरह प्रतिबिंबित होते हैं।

7.92.44

भूतसर्गेण विश्रान्तं सिद्धविद्याधरादिना । मद्देहे चेतितेनेव मक्षिकायौकरूपिणा ॥ ४४ ॥

bhūtasargeṇa viśrāntaṃ siddhavidyādharādinā | maddehe cetiteneveva makṣikāyaukarūpiṇā || 44 ||

The creation of beings is rested in the perfect knowledge of the Siddhas and Vidyadharas, as if it is embodied in my conscious form, like a bee in a lotus.

प्राणियों की सृष्टि सिद्धों और विद्याधरों के पूर्ण ज्ञान में विश्राम करती है, जैसे कि यह मेरे चेतन रूप में अंकित है, जैसे कि एक भौंरा कमल में।

7.92.45

मत्प्रसादेन मुदितैर्लब्धमर्कादिभिर्वपुः । कृष्णरक्तसितापीतहरितैर्हरितैरिव ॥ ४५ ॥

matprasādena muditairlabdhamarkādibhirvapuḥ | kṛṣṇaraktasitāpītaharitairharitairiva || 45 ||

By my grace, the joyful beings have obtained bodies that are black, red, white, yellow, and green, as if they are stolen.

मेरी कृपा से, आनंदित प्राणी काले, लाल, सफेद, पीले और हरे शरीर प्राप्त करते हैं, जैसे कि वे चुराए गए हों।

7.92.46

समुद्रमुद्रया सप्तद्वीपसप्तात्मरूपया । संस्थया स्थापिता भूमिः प्रकोष्ठे वलयोपमा ॥ ४६ ॥

samudramudrayā saptadvīpasaptātmarūpayā | saṃsthayā sthāpitā bhūmiḥ prakoṣṭhe valayopamā || 46 ||

The earth is established with the seal of the ocean, having the form of seven continents and seven souls, like a ring in a chest.

पृथ्वी समुद्र की मुद्रा से स्थापित है, जिसमें सात महाद्वीपों और सात आत्माओं का रूप है, जैसे कि संदूक में एक अंगूठी।

7.92.47

विद्याधरपुरन्ध्रीणां परामृष्टाङ्गयष्टिना । अदृष्टेनैव विहितः पुलकोल्लास आत्मना ॥ ४७ ॥

vidyādharapurandhrīṇāṃ parāmṛṣṭāṅgayaṣṭinā | adṛṣṭenaiva vihitaḥ pulakollāsa ātmanā || 47 ||

The women of Vidyadhara, with their bodies touched by the unseen, experienced goosebumps all over their bodies.

विद्याधर की स्त्रियों के शरीर को अदृश्य से स्पर्श किया गया, जिससे उनके शरीर में पुलक उठे।

7.92.48

सरिच्छिरामलस्फाररसानि सुषिराणि च । जगन्त्येवास्थिजालानि ममासन्संस्थितानि च ॥ ४८ ॥

saricchirāmalasphārarasāni suṣirāṇi ca | jagantyevāsthijālāni mamāsansaṃsthitāni ca || 48 ||

The pure, clear, and resonant essences of the rivers, the hollow spaces, and the network of bones all existed within me.

नदियों के शुद्ध, स्पष्ट और प्रतिध्वनित रस, खोखले स्थान और हड्डियों का जाल सभी मेरे अंदर विद्यमान थे।

7.92.49

असंख्यैर्व्योममातङ्गैश्चन्द्रार्कचलचामरैः । उदुम्बरान्तर्मशकैरिव मद्धृदये स्थितम् ॥ ४९ ॥

asaṃkhyairvyomamātaṅgaiścandrārkacalacāmaraiḥ | udumbarāntarmaśakairiva maddhṛdaye sthitam || 49 ||

Innumerable celestial elephants, moon, sun, and mountains seemed to be in my heart, like insects within a fig tree.

असंख्य आकाशीय हाथी, चंद्रमा, सूर्य और पर्वत मेरे हृदय में स्थित थे, जैसे अंजीर के पेड़ में कीड़े।

7.92.50

सर्वपातालपादेन भूतलोदरधारिणा । स्वमूर्ध्नापि तदा राम न त्यक्ताथ पराणुता ॥ ५० ॥

sarvapātālapādena bhūtalodaradhāriṇā | svamūrdhnāpi tadā rāma na tyaktātha parāṇutā || 50 ||

O Rama, even with my head, I did not give up the subtlety of supporting the entire underworld and the earth's core at that time.

हे राम, उस समय भी मैंने अपने सिर से पूरे पाताल और पृथ्वी के केंद्र को सहारा देने की सूक्ष्मता को नहीं छोड़ा।

7.92.51

दिक्षु सर्वासु सर्वत्र सर्वदा सर्वकारिणा । सर्वात्मनाप्यसर्वेण शून्यरूपेण संस्थितम् ॥ ५१ ॥

dikṣu sarvāsu sarvatra sarvadā sarvakāriṇā | sarvātmanāpyasarveṇa śūnyarūpeṇa saṃsthitam || 51 ||

In all directions, everywhere, always, by the doer of all, by the all-pervading self, yet not by the self, it is established in the form of emptiness.

सभी दिशाओं में, हर जगह, हमेशा, सबकुछ करने वाले, सर्वव्यापी आत्मा द्वारा, फिर भी आत्मा द्वारा नहीं, यह शून्य रूप में स्थित है।

7.92.52

किंचित्त्वे सदकिंचित्त्वं साकृतित्वं निराकृति । अनुभूतं सजाड्यं च चेतनत्वमलं मया ॥ ५२ ॥

kiṃcittve sadakiṃcittvaṃ sākṛtitvaṃ nirākṛti | anubhūtaṃ sajāḍyaṃ ca cetanatvamalaṃ mayā || 52 ||

I have experienced a little bit of existence, a little bit of non-existence, form, formlessness, experience, inertness, and consciousness.

मैंने थोड़ा अस्तित्व, थोड़ा अनस्तित्व, रूप, अरूप, अनुभव, जड़ता और चेतना का अनुभव किया है।

7.92.53

मैनाकमुग्धपीनस्य सागरस्यावनिं प्रति । सन्ति सर्गसहस्राणि स्थाणुभूतान्यथो मया ॥ ५३ ॥

mainākamugdhapīnasyā sāgarasyāvaniṃ prati | santi sargasahasrāṇi sthāṇubhūtānyatho mayā || 53 ||

There are thousands of creations of the vast ocean, which are motionless, and I have experienced them.

विशाल सागर की हजारों सृष्टियाँ हैं, जो स्थिर हैं, और मैंने उन्हें अनुभव किया है।

7.92.54

जगन्त्यङ्गे मयोढानि गूढानि प्रकटान्यपि । प्रतिबिम्बपुराणीव मुकुरेणाजडात्मना ॥ ५४ ॥

jagantyaṅge mayoḍhāni gūḍhāni prakaṭānyapi | pratibimbapurāṇīva mukureṇājaḍātmanā || 54 ||

In the body of the universe, there are hidden and manifest creations, like reflections in a mirror, by the non-material self.

ब्रह्माण्ड के शरीर में, छिपे और प्रकट सृष्टियाँ हैं, जैसे दर्पण में प्रतिबिम्ब, अजड़ आत्मा द्वारा।

7.92.55

एवं जलानिलाग्नित्वं भूमित्वं खात्मना मया । कृतं चितेव स्वप्नेषु बत मायाविजृम्भितम् ॥ ५५ ॥

evaṃ jalānilāgntvaṃ bhūmitvaṃ khātmanā mayā | kṛtaṃ citeva svapneṣu bata māyāvijṛmbhitam || 55 ||

Thus, the elements of water, air, fire, earth, and space have been created by me, as if in a dream, indeed it is a manifestation of illusion.

इस प्रकार, जल, वायु, अग्नि, भूमि और आकाश के तत्वों को मैंने स्वप्न में की तरह बनाया है, वास्तव में यह माया का प्रकटीकरण है।

7.92.57

परमाणु प्रति व्योम परमाणु प्रति स्थितम् । सर्गवृन्दं यथा स्वप्ने स्वप्नान्तरयुतं पुरम् ॥ ५७ ॥

paramāṇu prati vyoma paramāṇu prati sthitam | sargavṛndaṃ yathā svapne svapnāntarayutaṃ puram || 57 ||

In every atom, there is space, and in every atom, there is a creation, like a city in a dream within a dream.

हर परमाणु में आकाश है, और हर परमाणु में एक सृष्टि है, जैसे स्वप्न के भीतर एक स्वप्न में एक नगर।

7.92.58

स्वमेवाहमभूवं भूमण्डलं द्वीपकुण्डलम् । सर्वात्मनापि न व्याप्तं किंचनापि मया क्वचित् ॥ ५८ ॥

svamevāhamabhūvaṃ bhūmaṇḍalaṃ dvīpakuṇḍalam | sarvātmanāpi na vyāptaṃ kiṃcanāpi mayā kvacit || 58 ||

I myself became the earth, the island-continent, but nothing was pervaded by me in any way.

मैं स्वयं ही पृथ्वी, द्वीप-महाद्वीप बन गया, लेकिन मेरे द्वारा किसी भी तरह से कुछ भी व्याप्त नहीं हुआ।

7.92.59

समुत्पादयताशेषं लतातरुतृणाङ्कुरम् । भूतलेन रसाः कृष्टा मयार्थेनैव पुंभृताम् ॥ ५९ ॥

samutpādayatāśeṣaṃ latātarutṛṇāṅkuram | bhūtalena rasāḥ kṛṣṭā mayārtheneiva puṃbhṛtām || 59 ||

I produced all the plants, trees, grasses, and sprouts, and the earth was cultivated for the benefit of all living beings.

मैंने सभी पौधे, पेड़, घास और अंकुरों को उत्पन्न किया, और पृथ्वी को सभी जीवों के लाभ के लिए खेती की गई।

7.92.60

अवदाततमे युद्धबोधकालमुपेयुषि । जगल्लक्षाणि तिष्ठन्ति न तिष्ठन्ति च कानिचित् ॥ ६० ॥

avadātatame yuddhabodhakālamupeyuṣi | jagallakṣāṇi tiṣṭhanti na tiṣṭhanti ca kānicit || 60 ||

In the time of war, some signs appear, while others do not.

युद्ध के समय, कुछ चिह्न दिखाई देते हैं, जबकि कुछ नहीं दिखाई देते।

7.92.61

चिति यास्तु चमत्कारं चमत्कुर्वन्ति यस्त्वतः । स्वचमत्कृतयोऽन्तस्थास्तदेताः सृष्टिदृष्टयः ॥ ६१ ॥

citi yāstu camatkāraṃ camatkurvanti yastvataḥ | svacamatkṛtayo'ntasthāstadetāḥ sṛṣṭidṛṣṭayaḥ || 61 ||

Those who create wonder are themselves wonders, and these internal wonders are the views of creation.

जो आश्चर्य पैदा करते हैं, वे स्वयं आश्चर्य हैं, और ये आंतरिक आश्चर्य सृष्टि के दृष्टिकोण हैं।

7.92.62

अनुभूतं कृतं कष्टं यावत्क्वचन किंचन । परमार्थचमत्काराद्दते नेहोपलभ्यते ॥ ६२ ॥

anubhūtaṃ kṛtaṃ kaṣṭaṃ yāvatkvacana kiṃcana | paramārthacamatkārādṛte nehoplabhyate || 62 ||

Whatever is experienced, done, or suffered, nothing is perceived here without the ultimate wonder.

जो कुछ भी अनुभव किया जाता है, किया जाता है, या सहन किया जाता है, वह परम आश्चर्य के बिना यहाँ अनुभव नहीं किया जाता।

7.92.63

प्रत्येकं विश्वरूपात्मा सर्वकर्ता निरामयः । प्रबुद्धः शुद्धबोधात्मा सर्वं ब्रह्मात्मकं यतः ॥ ६३ ॥

pratyekaṃ viśvarūpātmā sarvakartā nirāmayaḥ| prabuddhaḥ śuddhabodhātmā sarvaṃ brahmātmakaṃ yataḥ || 63 ||

Every individual is the embodiment of the universe, the doer of all, free from disease, awakened, pure in consciousness, because everything is of the nature of Brahman.

प्रत्येक व्यक्ति विश्व का स्वरूप है, सब कुछ करने वाला है, रोगमुक्त है, जाग्रत है, शुद्ध चेतना से भरा है, क्योंकि सब कुछ ब्रह्म का स्वरूप है।

7.92.64

सर्वः सर्वत्र सर्वात्मा सर्वगः सर्वसंश्रयः । एतत्प्रबुद्धविषयमप्रबुद्धं न वेद्म्यहम् ॥ ६४ ॥

sarvaḥ sarvatra sarvātmā sarvagaḥ sarvasaṃśrayaḥ| etatprabuddhaviṣayamaprabuddhaṃ na vedmyaham || 64 ||

Everything is everywhere, the soul of all, pervading all, the support of all. This is the subject matter for the awakened; the unawakened do not understand this.

सब कुछ हर जगह है, सब का आत्मा है, सब कुछ व्याप्त करता है, सब का आधार है। यह जाग्रत व्यक्ति का विषय है; अजाग्रत व्यक्ति इसे नहीं समझते।

7.92.65

आकाशकोशविशदात्मनि चित्स्वरूपे येयं सदा कचति सर्गपरम्परेति । सान्तस्तदेव किल ताप इवान्तरूष्मा भेदोपलम्भ इति नास्ति सदस्त्यनन्तम् ॥ ६५ ॥

ākāśakośaviśadātmani cittasvarūpe yeyaṃ sadā kacati sargaparamparāiti| sāntastadeva kila tāpa ivāntarūṣmā bhedopalambha iti nāsti sadastyānantam || 65 ||

In the pure consciousness, which is like the clear sky, this world always shines as a series of creations. That peace itself is like the inner heat of fever, the perception of difference does not exist; there is only the eternal truth.

शुद्ध चेतना में, जो साफ आकाश की तरह है, यह दुनिया हमेशा सृष्टि की एक श्रृंखला के रूप में चमकती है। वही शांति बुखार की आंतरिक गर्मी की तरह है, भेद का अनुभव नहीं है; केवल अनंत सत्य है।

Chapter 93

7.93.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथैवंरूपसंवित्तेः परावृत्त्य प्रयत्नतः । तमम्बरकुटीकोशदेशमागतवानहम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athaivamrūpasanvitteḥ parāvṛttya prayatnataḥ | tamambarakuṭīkośadeśamāgatavān aham || 1 ||

Sri Vasistha said: Thus, having attained the knowledge of the true form, I have reached the realm of the sky-dwelling sages with great effort.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार सत्य रूप के ज्ञान को प्राप्त करके, मैंने बहुत प्रयास से आकाश में रहने वाले ऋषियों के क्षेत्र तक पहुंच गया।

7.93.2

यावत्तत्र न पश्यामि स्वदेहं क्वचन स्थितम् । पश्यामि केवलं सिद्धं कमप्यन्यं पुरः स्थितम् ॥ २ ॥

yāvattatra na paśyāmi svadehaṃ kvacana sthitam | paśyāmi kevalaṃ siddhaṃ kamapyanyaṃ puraḥ sthitam || 2 ||

As long as I do not see my own body anywhere there, I see only a perfected sage standing before me.

जब तक मैं वहाँ अपने शरीर को कहीं भी नहीं देखता, मैं केवल एक सिद्ध ऋषि को अपने सामने खड़ा देखता हूँ।

7.93.3

उपविष्ट समाधाननिष्ठमिष्टं पदं गतम् । सौम्योदयमिवादित्यं दग्धेन्धनमिवानलम् ॥ ३ ॥

upaviṣṭa samādhānaniṣṭhamiṣṭaṃ padaṃ gatam | saumyodayamivādityaṃ dagdhendhanamivānalam || 3 ||

Seated, firmly established in the state of samadhi, having attained the desired state, like the rising sun, like a fire that has consumed its fuel.

बैठे हुए, समाधि की अवस्था में दृढ़ता से स्थित, इच्छित पद को प्राप्त, उगते सूर्य की तरह, ईंधन को जला चुके अग्नि की तरह।

7.93.4

बद्धपद्मासनं शान्तं समाधाननिरिङ्गनम् । गुल्फद्वितयमध्यस्थवृषणं विषयातिगम् ॥ ४ ॥

baddhapadmāsanaṃ śāntaṃ samādhānanirin̐ganam | gulphadvitayamadhyasthavṛṣaṇaṃ viṣayātigam || 4 ||

Bound in the lotus posture, calm, absorbed in samadhi, with the testicles placed between the ankles, transcending the senses.

पद्मासन में बंधे हुए, शांत, समाधि में डूबे हुए, गुल्फों के बीच वृषण रखे हुए, इंद्रियों से परे।

7.93.5

मृष्टसौम्यसमाभोगस्कन्धबन्धुरकन्धरम् । सुस्थिरोदारविश्रान्तरकारकस्थितिसुन्दरम् ॥ ५ ॥

mṛṣṭasaumyasamābhogaskandhabandhurakandharam | susthiroudāravishrāntarakārakasthitisundaram || 5 ||

With smooth and gentle shoulders and a graceful neck, firmly established in a beautiful and relaxed posture.

चिकने और कोमल कंधों और सुंदर गर्दन वाले, सुंदर और आरामदायक मुद्रा में दृढ़ता से स्थित।

7.93.6

नाभीनिकटगोत्तानपाणिद्वितयदीप्तिभिः । हृदयाम्भोजतेजोभिर्बहिष्ठैरिव भासितम् ॥ ६ ॥

nābhīnikṭagottānapāṇidvitayadīptibhiḥ | hṛdayāmbhojatejobhirbahiṣṭhairiva bhāsitam || 6 ||

With the radiance of the two hands placed near the navel, it seemed to shine with the light of the lotus of the heart, as if from outside.

नाभि के पास रखे हुए दोनों हाथों की चमक से, हृदय कमल की ज्योति से बाहर से ही चमकता हुआ प्रतीत होता है।

7.93.7

श्लिष्टपक्ष्मेक्षणं क्षीणसर्वेक्षं स्वच्छतां गतम् । सरो निमीलिताम्भोजमिव सुप्तं दिनात्यये ॥ ७ ॥

śliṣṭapakṣmekṣaṇaṃ kṣīṇasarvekṣaṃ svacchatāṃ gatam | saro nimīlitāmbhojamiva suptaṃ dinātyaye || 7 ||

With eyes closed and clear, like a lotus that has closed its petals at the end of the day, it seemed to be in a state of pure clarity.

आँखें बंद होने और स्पष्ट होने से, दिन के अंत में कमल के पंखुड़ियों की तरह बंद हुआ, यह शुद्ध स्पष्टता की अवस्था में प्रतीत होता है।

7.93.8

अविक्षुभितमाशान्तमन्तःकरणकोटरम् । दधानं धीरया वृत्त्या शान्तोत्पातमिवाम्बरम् ॥ ८ ॥

avikṣubhitamāśāntamantaḥkaraṇakoṭaram | dadhānaṃ dhīrayā vṛttyā śāntotpātamivāmbaram || 8 ||

With an unperturbed and peaceful inner self, bearing a calm and steady demeanor, like the tranquil sky after a storm.

अविचलित और शांत अंतःकरण के साथ, शांत और स्थिर व्यवहार के साथ, तूफान के बाद शांत आकाश की तरह।

7.93.9

अपश्यता निजं देहं तं मुनिं पश्यता पुरः । इदं मया तदा तत्र चिन्तितं चारुचेतसा ॥ ९ ॥

apaśyatā nijaṃ dehaṃ taṃ muniṃ paśyatā puraḥ | idaṃ mayā tadā tatra cintitaṃ cārucetasā || 9 ||

Seeing my own body and that sage before me, I thought this with a beautiful mind at that time and place.

अपने शरीर और उस ऋषि को सामने देखकर, मैंने उस समय और स्थान पर सुंदर मन से यह सोचा।

7.93.10

अयं कश्चिन्महासिद्धः संप्राप्तोऽस्मिन्दिगन्तरे । विचार्याहमिवैकान्तं विश्रामार्थी महाम्बरम् ॥ १० ॥

ayaṃ kaścinmahāsiddhaḥ saṃprāpto'smindigantare | vicāryāhamivaikāntaṃ viśrāmārthī mahāmbaram || 10 ||

This great sage has arrived in this direction, contemplating solitude, seeking rest in the vast sky.

यह महान सिद्ध इस दिशा में आया है, एकांत पर विचार करते हुए, विश्राम की तलाश में विशाल आकाश में।

7.93.11

समाधियोग्यमेकान्तं लभेयेतीह चिन्तयाकुटी दृष्टेयमेतेन सत्यसंकल्पशालिना ॥ ११ ॥

samādhiyogyamekāntaṃ labheyetīha cintayākuṭī dṛṣṭeyametena satyasaṃkalpaśālinā || 11 ||

By contemplating thus, one can attain a state suitable for samādhi in solitude, and this hut is visible to one who has true resolve.

इस प्रकार सोचकर, एक व्यक्ति एकान्त में समाधि के लिए उपयुक्त अवस्था प्राप्त कर सकता है, और यह कुटी उसके लिए दिखाई देती है जिसके पास सच्चा संकल्प है।

7.93.12

मदागमनमेतेन ततोऽचिन्तयता चिरम्तं स्वदेहं शवीभूतमपास्येह कृता स्थितिः ॥ १२ ॥

madāgamanametena tato'cintayatā ciramtaṃ svadehaṃ śavībhūtamapāsyeha kṛtā sthitiḥ || 12 ||

By the arrival of this pride, and then contemplating for a long time, I have abandoned this body as a corpse here, and the state has been made.

इस अहंकार के आगमन से, और फिर लंबे समय तक सोचने के बाद, मैंने इस शरीर को यहाँ शव के रूप में त्याग दिया है, और अवस्था बनाई गई है।

7.93.13

तदिहास्तमहं यामि स्वं लोकमिति निश्चयम्यावद्गन्तुं प्रवृत्तोऽस्मि तावत्संकल्पनक्षयात् ॥ १३ ॥

tadihāstamahaṃ yāmi svaṃ lokamiti niścayamyāvadgantuṃ pravṛtto'smi tāvatsaṃkalpanakṣayāt || 13 ||

Therefore, I am now going to my own world, having decided to go until the destruction of resolve.

इसलिए, मैं अब अपनी दुनिया में जा रहा हूँ, संकल्प के विनाश तक जाने का निश्चय करके।

7.93.14

सा निवृत्ता कुटी तत्र सम्पन्नं व्योम केवलम् स सिद्धोऽपि निराधारः पतितोदः समाधिमान् ॥ १४ ॥

sā nivṛttā kuṭī tatra saṃpannaṃ vyoma kevalam sa siddho'pi nirādhāraḥ patitodhaḥ samādhimān || 14 ||

When that withdrawal occurs, the hut there becomes the vast sky alone. Though accomplished, he is without support, like a pot fallen into the ocean, absorbed in samadhi.

जब वह निवृत्ति (वापसी) होती है, तो वहाँ की कुटिया केवल आकाश बन जाती है। सिद्ध होने पर भी वह निराधार होता है, जैसे समुद्र में गिरा हुआ घड़ा, समाधि में लीन।

7.93.15

स्वप्नसंकल्पसंशान्तौ स्वप्नसंकल्पपत्तनम्यदा सा सुकुटी नष्टा मत्संकल्पोपशान्तितः ॥ १५ ॥

svapnasaṃkalpasaṃśāntau svapnasaṃkalpapattanamyadā sā sukuṭī naṣṭā matsaṃkalpopaśāntitaḥ || 15 ||

When the dream and imagination are pacified, and when that hut is destroyed due to the pacification of my imagination,

जब स्वप्न और कल्पना शांत हो जाते हैं, और जब वह झोंपड़ी मेरी कल्पना के शांत होने से नष्ट हो जाती है,

7.93.16

स पपात ततो ध्यानी जलोत्पीड इवाम्बुदात्। खादिवानिलनुन्नोऽब्द इन्दुबिम्बमिव क्षये ॥ १६ ॥

sa papāta tato dhyānī jalotpīḍa ivāmbudāt | khādivānilanunno'bda indu-bimbamiva kṣaye || 16 ||

He fell from there, meditating, like a water-laden cloud, and like the moon's orb waning, driven by the wind in the sky.

वह वहाँ से गिरा, ध्यान में लीन, जैसे पानी से भरा हुआ बादल, और जैसे हवा से उड़ाया हुआ चन्द्रमा घटता है।

7.93.17

वैमानिक इवापुण्यश्छिन्नमूल इव द्रुमः। खात्त्यक्त इव पाषाणः स पपात ततोऽवनौ ॥ १७ ॥

vaimānika ivāpuṇyaśchinnamūla iva drumaḥ | khāttyakta iva pāṣāṇaḥ sa papāta tato'vanau || 17 ||

Like a bird without merit, like a tree with its roots cut off, like a stone thrown away in the sky, he fell in the forest.

जैसे कोई पुण्यहीन पक्षी, जैसे जड़ कटे हुए पेड़, जैसे आकाश में फेंका हुआ पत्थर, वह वन में गिरा।

7.93.18

अहं यावदियं तावत्कुटिकास्त्विति कल्पने । क्षीणे कुटीक्षये जाते स सिद्धः पतितः क्षणात् ॥ १८ ॥

ahaṃ yāvadiyaṃ tāvatkuṭikāstviti kalpane | kṣīṇe kuṭīkṣaye jāte sa siddhaḥ patitaḥ kṣaṇāt || 18 ||

As long as I thought this hut was mine, it was destroyed in an instant, and he fell, perfected.

जब तक मैंने सोचा कि यह झोंपड़ी मेरी है, तब तक यह एक क्षण में नष्ट हो गई, और वह सिद्ध होकर गिरा।

7.93.19

पतता तेन सिद्धेन ततः सौजन्यकौतुकः । मनसैवाहमगमं नभसो वसुधातलम् ॥ १९ ॥

patatā tena siddhena tataḥ saujanyakautukaḥ | manasaivāhamagamaṃ nabhaso vasudhātalam || 19 ||

With the fall of that perfected one, then with the wonder of kindness, I went with my mind from the sky to the surface of the earth.

उस सिद्ध के पतन से, फिर दया के आश्चर्य से, मैंने मन से आकाश से पृथ्वी की सतह तक की यात्रा की।

7.93.20

सोऽपतत्पवनस्कन्धवलनावर्तवृत्तिभिः । सप्तद्वीपसमुद्रान्ते गीर्वाणरमणावनौ ॥ २० ॥

so'patatpavanaskandhavalanāvartavṛttibhiḥ | saptadvīpasamudrānte gīrvāṇaramaṇāvanau || 20 ||

He fell, with the movements of the wind's shoulders, at the end of the seven continents and oceans, in the forest delightful to the gods.

वह गिरा, हवा के कंधों की गतिविधियों से, सात द्वीपों और समुद्रों के अंत में, देवताओं के लिए आनंददायक वन में।

7.93.21

प्राणापानोर्ध्वगामित्वात्खाद्यथास्थितमेव सः । सृष्टपूर्वोर्ध्वमूर्धोर्व्यां बद्धपद्मासनोऽपतत् ॥ २१ ॥

prāṇāpānordhvagāmitvātkhādyathāsthitameva saḥ | sṛṣṭapūrvordhvamūrdhorvyāṃ baddhapadmāsano'patat || 21 ||

Due to the upward movement of prana and apana, he remained in the same state as before | He fell from the sky, bound in the lotus position, as he was created before

प्राण और अपान के ऊपर की ओर जाने के कारण, वह पहले की ही स्थिति में रहा | वह आकाश से गिरा, पद्मासन में बंधा हुआ, जैसे उसे पहले बनाया गया था

7.93.22

न प्रबुद्धो बभूवासौ विचरं तमचेतनः । पाषाणदेह इव वा तूलात्मेवैव वा लघुः ॥ २२ ॥

na prabuddho babhūvāsau vicaraṃ tamacetanaḥ | pāṣāṇadeha iva vā tūlātmevaiva vā laghuḥ || 22 ||

He did not become conscious, he wandered unconsciously | Like a stone body or as light as cotton

वह चेतन नहीं हुआ, वह अचेतन रूप से भटकता रहा | जैसे पत्थर का शरीर या रूई के समान हल्का

7.93.23

मया तदवबोधार्थमथ यत्नवता तदा । कृत्वा जलदतां व्योम्नि वृष्टं गर्जितमूर्जितम् ॥ २३ ॥

mayā tadavabodhārthamatha yatnavatā tadā | kṛtvā jaladatāṃ vyomni vṛṣṭaṃ garjitamūrjitam || 23 ||

By me, for the purpose of awakening him, then with effort at that time | Making the sky cloudy, it rained, thundered, and roared

मेरे द्वारा, उसे जगाने के लिए, तब प्रयास से उस समय | आकाश को बादलों से भर दिया, बरसा, गरजा, और गड़गड़ाया

7.93.24

करकाशनिपातेन तेन तस्मिन्दिगन्तरे। मयूरं प्रावृषेवामुं बुद्ध्या बोधितवानसौ ॥ २४ ॥

karakāśanipātena tena tasmin digantare | mayūraṃ prāvṛṣevāmuṃ buddhyā bodhitavān asau || 24 ||

With the fall of lightning and thunder in that direction | Like a peacock in the rainy season, he was awakened by intelligence

बिजली और गरज के गिरने से उस दिशा में | जैसे मोर बरसात के मौसम में, वह बुद्धि से जागा

7.93.25

बभूवाभासिताङ्गश्रीर्विकासितविलोचनः। धारानिकरफुल्लात्मा प्रावृषीवाम्बुजाकरः ॥ २५ ॥

babhūvābhāsitāṅgaśrīrvikāsitavilocanaḥ | dhārānikaraphullātmā prāvṛṣīvāmbujākaraḥ || 25 ||

He became radiant with his limbs shining, his eyes blooming | His being was like a lotus flower in full bloom during the rainy season

वह चमकते अंगों के साथ चमकने लगा, उसकी आंखें खिली हुई थीं | उसका अस्तित्व बरसात के मौसम में पूरी तरह से खिले हुए कमल के समान था

7.93.26

प्रबुद्धं संप्रशान्तायां दृष्टौ तमहमग्रतः। अपृच्छं स्वच्छया वृत्त्या निवृत्तं परमार्थतः ॥ २६ ॥

prabuddhaṃ saṃpraśāntāyāṃ dṛṣṭau tamahamagrataḥ| apṛcchaṃ svacchayā vṛttyā nivṛttaṃ paramārthataḥ || 26 ||

In the clear and calm vision, I saw him before me, and I asked him with a pure mind, who had attained the ultimate truth.

स्पष्ट और शांत दृष्टि में, मैंने उसे अपने सामने देखा, और मैंने पूछा एक शुद्ध मन से, जो परम सत्य को प्राप्त हो चुका था।

7.93.27

क्व स्थितोऽसि करोषीदं किं च भो मुनिनायक। कस्त्वं कस्मादलं दूरान्न भ्रंशमपि चेतसि ॥ २७ ॥

kva sthito'si karoṣīdaṃ kiṃ ca bho munināyaka| kastvaṃ kasmādalṃ dūrānnna bhraṃśamapi cetasi || 27 ||

Where are you situated? What are you doing? And who are you, O leader of sages? Why do you not feel tired even from a distance?

तुम कहाँ स्थित हो? तुम क्या कर रहे हो? और तुम कौन हो, हे मुनियों के नायक? दूर से भी तुम्हें थकान क्यों नहीं महसूस होती?

7.93.28

इत्युक्तो मामसौ प्रेक्ष्य संस्मृत्य प्राक्तनीं गतिम्। उवाच वचनं चारु चातको जलदं यथा ॥ २८ ॥

ityukto māmasau prekṣya saṃsmṛtya prāktanīṃ gatim| uvāca vacanaṃ cāru cātako jaladaṃ yathā || 28 ||

Thus addressed, he looked at me and remembered his past journey. He spoke sweet words, like a chataka bird to a cloud.

इस प्रकार संबोधित होकर, उसने मुझे देखा और अपनी पिछली यात्रा को याद किया। उसने चातक पक्षी की तरह बादल से मधुर शब्द बोले।

7.93.29

सिद्ध उवाच। प्रतिपालय मे यावत्स्ववृत्तान्तं स्मराम्यहम्। कथयिष्यामि ते पश्चात्पाश्चात्यं वृत्तमात्मनः ॥ २९ ॥

siddha uvāca| pratipālaya me yāvatsvavṛttāntaṃ smarāmyaham| kathayiṣyāmi te paścātpāścātyaṃ vṛttamātmanaḥ || 29 ||

The accomplished one said: Protect me while I remember my own story. I will narrate to you afterwards the events of my past.

सिद्ध ने कहा: मुझे तब तक सुरक्षित रखो जब तक मैं अपनी कहानी याद करता हूँ। मैं तुम्हें बाद में अपने अतीत की घटनाओं के बारे में बताऊँगा।

7.93.30

इत्युक्त्वा चिन्तयित्वाशु स यथा वृत्तमक्षतम्। स्मृतवान्सायमह्नीव समाचरितमात्मनः ॥ ३० ॥

ityuktvā cintayitvāśu sa yathā vṛttamakṣatam| smṛtavānsāyamahnīva samācaritamātmanaḥ || 30 ||

Having said this, he quickly contemplated and remembered his past actions accurately, as if it were evening.

इस प्रकार कहकर, उसने तुरंत सोचा और अपने अतीत के कार्यों को सही ढंग से याद किया, मानो सायंकाल हो।

7.93.31

मामथोवाच वचनं चारु चन्द्रांशुशीतलम्। आह्लादनमनिन्द्यं च निरवद्यं सुखोदयम् ॥ ३१ ॥

māmathovāca vacanaṃ cāru candrāṃśuśītalam | āhlādanamanindyaṃ ca niravadyaṃ sukhodayam || 31 ||

He spoke words that were as charming as the cool moonbeams, delightful, flawless, and bringing happiness.

उसने चाँदनी की ठंडी किरणों के समान मनोहर वचन कहे, जो आनंददायक, निर्दोष और सुखद थे।

7.93.32

सिद्ध उवाच। अधुना त्वं मया ब्रह्मन्परिज्ञातोऽभिवादये। अतिक्रमोऽयं क्षन्तव्यः स्वभावो हि सतां क्षमा ॥ ३२ ॥

siddha uvāca | adhunā tvaṃ mayā brahmanparijñāto'bhivādaye | atikramo'yaṃ kṣantavyaḥ svabhāvo hi satāṃ kṣamā || 32 ||

The Siddha said, 'Now, O Brahman, I recognize you and salute you. This transgression should be forgiven, for forgiveness is the nature of the virtuous.'

सिद्ध ने कहा, 'अब, हे ब्रह्मन्, मैं आपको पहचानता हूँ और आपको प्रणाम करता हूँ। इस अपराध को क्षमा करना चाहिए, क्योंकि क्षमा सज्जनों की प्रकृति है।'

7.93.33

मुने चिरमहं भ्रान्तो देवोपवनभूमिषु। भोगामोदविमोहेषु षट्पदः पद्मिनीष्विव ॥ ३३ ॥

munē ciramahaṃ bhrāntō dēvōpavanabhūmiṣu | bhōgāmōdavimōhēṣu ṣaṭpadaḥ padminīṣviva || 33 ||

O sage, I have long been wandering in the gardens of the gods, bewildered by the pleasures and delusions, like a bee in the lotus flowers.

हे मुनि, मैं देवों के उपवनों में लंबे समय तक भटकता रहा हूँ, भोगों और मोहों में उलझा हुआ, जैसे कि कमल के फूलों में भ्रमण करता हुआ भौंरा।

7.93.34

दृश्यनद्यामथो चित्तजलकल्लोलहेलया । चक्रावर्तोह्यमानेन मयोद्विग्नेन चिन्तितम् ॥ ३४ ॥

dṛśyanadyāmatho cittajalakallōlahēlayā | cakrāvartōhyamānēna mayōdvignēna cintitam || 34 ||

Then, seeing the river, my mind was disturbed by the waves of thoughts, like a whirlpool, and I contemplated with anxiety.

तब, नदी देखकर, मेरे मन की लहरें विचारों के तरंगों से उथल-पुथल हो गईं, जैसे कि एक भँवर, और मैंने चिंता के साथ सोचा।

7.93.35

संसारसागरे दृश्यकल्लोलैरहमाकुलः । कालेनोद्वेगमायातश्चातकोऽवग्रहे यथा ॥ ३५ ॥

saṃsārasāgarē dṛśyakallōlairahamākulaḥ | kālēnōdvēgamāyātaścātakō'vagrahē yathā || 35 ||

In the ocean of worldly existence, I am disturbed by the visible waves, and like a chataka bird, I am anxious waiting for the rain.

संसार के सागर में, मैं दृश्य तरंगों से व्याकुल हूँ, और जैसे चातक पक्षी, मैं वर्षा के इंतजार में बेचैन हूँ।

7.93.36

संविन्मात्रैकसारेषु रम्यं भोगेषु नाम किम् । अवतिष्ठे गतोद्वेगसंविद्व्योम्न्येव केवलम् ॥ ३६ ॥

saṃvinmātraikasāreṣu ramyaṃ bhogeṣu nāma kim | avatiṣṭhe gatodvegasamvidvyomnyeva kevalam || 36 ||

In the essence of pure consciousness, what is the pleasure in enjoyments? I abide solely in the pure sky of consciousness, free from anxiety.

शुद्ध चेतना के सार में, भोगों में क्या आनंद है? मैं चिंतामुक्त चेतना के शुद्ध आकाश में ही निवास करता हूँ।

7.93.37

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धमात्रादृते परम् । नेह किंचन नामास्ति किमेतावत्यहं रमे ॥ ३७ ॥

śabdarūparasasparśagandhamātrādṛte param | neha kiṃcana nāmāsti kimetāvatyahaṃ rame || 37 ||

Beyond the mere perception of sound, form, taste, touch, and smell, there is nothing else here. Why should I delight in these?

शब्द, रूप, रस, स्पर्श और गंध के अनुभव से परे, यहाँ और कुछ नहीं है। फिर मैं इनमें क्यों आनंद लूँ?

7.93.38

चिन्मात्राकाशमेवैतत्सर्वं चिन्मात्रमेव वा । तत्किमत्रासदाकारे रमे नष्टमतिर्यथा ॥ ३८ ॥

cinmātrākāśamevaitatsarvaṃ cinmātrameva vā | tatkimatrāsadākāre rame naṣṭamatiryathā || 38 ||

All this is indeed the sky of pure consciousness. Everything is pure consciousness. Then why should I delight in this non-existent form, with my mind lost?

यह सब कुछ शुद्ध चेतना का आकाश ही है। सब कुछ शुद्ध चेतना ही है। तो फिर मैं इस असत् रूप में क्यों आनंद लूँ, जबकि मेरा मन खो गया है?

7.93.39

विषया विषवैषम्या वामाः कामविमोहदाः । रसाः सरसवैरस्या लुठन्नेषु न को हतः ॥ ३९ ॥

viṣayā viṣavaiṣamyā vāmāḥ kāmavimohadāḥ | rasāḥ sarasavairasyā luṭhannesu na ko hataḥ || 39 ||

The objects of the senses are like poison, causing delusion and desire. The tastes are both delightful and unpleasant. No one is harmed by enjoying them.

इंद्रियों के विषय विष के समान हैं, जो भ्रम और इच्छा उत्पन्न करते हैं। स्वाद में सुख और दुःख दोनों हैं। उनका आनंद लेने से किसी को कोई हानि नहीं होती।

7.93.40

जीर्णा जीवितजम्बालजरच्छफरिकामतिः । कायं द्रुतगताऽऽदातुं जरेच्छति बृहद्बकी ॥ ४० ॥

jīrṇā jīvitajambālajaracchapharikāmatiḥ | kāyaṃ drutagatā''dātuṃ jarecchati bṛhadvakī || 40 ||

The mind, worn out by the burden of life, desires to quickly give up the body, like a large bee eager to leave a withered jambu flower.

जीवन के बोझ से थकी हुई मन शरीर को जल्दी छोड़ना चाहती है, जैसे एक बड़ी भौंरी जो सूखे जामुन फूल को छोड़ने के लिए उत्सुक हो।

7.93.41

कायोऽयमचिरापायो बुद्बुदोऽम्बुनिधाविव । स्फुरन्नेव पुरोन्तर्द्धि याति दीपशिखा यथा ॥ ४१ ॥

kāyo'yamacirāpāyo budbudomambunidhāviva| sphuranneva purontarddhi yāti dīpaśikhā yathā || 41 ||

This body is as transient as a bubble in the ocean| It appears for a moment and then disappears like the flame of a lamp

यह शरीर समुद्र में बुलबुले की तरह अस्थायी है| यह एक क्षण के लिए दिखाई देता है और फिर दीपक की लौ की तरह गायब हो जाता है

7.93.42

विविधाकुलकल्लोला चक्रावर्तविधायिनी । मृतिजन्मवृहत्कूला सुखदुःखतरङ्गिणी ॥ ४२ ॥

vividhākulakallolā cakrāvartavidhāyinī| mṛtijanmavṛhatkūlā sukhaduḥkhataraṅgiṇī || 42 ||

This life is full of various disturbances and waves| It creates cycles of birth and death, and is filled with immense joy and sorrow

यह जीवन विविध उथल-पुथल और लहरों से भरा है| यह जन्म और मृत्यु के चक्र को बनाता है, और बड़े सुख और दुःख से भरा है

7.93.43

यौवनोल्लासकलिला जराधवलफेनिला । काकतालीययोगेन संपन्नसुखबुद्बुदा ॥ ४३ ॥

yauvanollāsakalilā jarādhavalaphenilā| kākatālīyayogena saṃpannasukhabudbudā || 43 ||

Life is filled with the joy of youth and the frailty of old age| It is like a bubble of happiness that bursts with the passage of time

जीवन युवावस्था के आनंद और वृद्धावस्था की कमजोरी से भरा है| यह समय के साथ फूट जाने वाले सुख के बुलबुले की तरह है

7.93.44

व्यवहारमहावाहलेखाजडरवाकुला । रागद्वेषघनोल्लासा भूतलालोलदेहिका ॥ ४४ ॥

vyavahāramahāvāhalekhājaḍaravākulā| rāgadveṣaghanollāsā bhūtalāloladehikā || 44 ||

Life is filled with the complexities of worldly affairs and dull routines| It is driven by strong emotions of attachment and aversion, making the body restless

जीवन संसारिक मामलों और नीरस दिनचर्या से भरा है| यह आसक्ति और घृणा जैसे प्रबल भावनाओं से चलायमान है, जो शरीर को बेचैन बनाता है

7.93.45

लोभमोहमहावर्ता पातोत्पातविवर्तनी । हा तप्ता जीविताख्येयं नदी नदनशीतला ॥ ४५ ॥

lobhamohamahāvartā pātotpātavivartanī| hā taptā jīvitākhyeyaṃ nadī nadanaśītalā || 45 ||

Life is a river of greed and delusion, filled with ups and downs| It is a tormented existence, cooled only by the soothing sound of 'nadana'

जीवन लोभ और मोह की नदी है, जो उतार-चढ़ाव से भरी है| यह एक पीड़ित अस्तित्व है, जो केवल 'नदन' की शांतिदायक ध्वनि से ठंडा होता है

7.93.46

अपूर्वाण्युपगच्छन्ति तथा पूर्वाणि यान्त्यलम्। संसारसरिदम्बूनि संगतानि धनानि च ॥ ४६ ॥

apūrvāṇyupagacchanti tathā pūrvāṇi yāntyalam | saṃsārasaridambūni saṃgatāni dhanāni ca || 46 ||

New things come, and old things go away; thus, the wealth accumulated in the worldly life flows like a river.

नए चीजें आती हैं और पुरानी चीजें चली जाती हैं; इस प्रकार, संसार की नदी की तरह धन आता-जाता रहता है।

7.93.47

प्रवृत्ता ये निवर्तन्ते तैरलं हतभावकैः। अपूर्वा ये प्रवर्तन्ते तेष्वथास्थेह कीदृशी ॥ ४७ ॥

pravṛttā ye nivartante tairalaṃ hatabhāvakaiḥ | apūrvā ye pravartante teṣvathāstheha kīdṛśī || 47 ||

Those who are engaged in activities will eventually cease; what kind of state will those who are newly engaged in activities be in?

जो लोग कार्यों में लगे हुए हैं, वे अंततः रुक जाएंगे; जो लोग नए कार्यों में लगे हुए हैं, उनकी क्या स्थिति होगी?

7.93.48

सर्वस्याः सरितो वारि प्रयात्यायाति चाकरात्। देहनद्याः पयस्त्वायुर्यात्येवायाति नो पुनः ॥ ४८ ॥

sarvasyaḥ sarito vāri prayātyāyāti cākarāt | dehanadyāḥ payastvāyuryātyevāyāti no punaḥ || 48 ||

The water of all rivers flows and returns from the source; similarly, the life force in the body comes and goes but does not return again.

सभी नदियों का पानी बहता है और स्रोत से वापस आता है; इसी तरह, शरीर में प्राण आता है और चला जाता है, लेकिन फिर से नहीं आता।

7.93.49

शतशः परिवर्तन्ते प्रतिपिण्डं क्षणं प्रति। कुलालचक्रकाभावा इव भावा भवाम्बुधौ ॥ ४९ ॥

śataśaḥ parivartante pratipiṇḍaṃ kṣaṇaṃ prati | kulālacakrakābhāvā iva bhāvā bhavāmbudhau || 49 ||

Hundreds of changes occur every moment, like the potter's wheel; such are the states in the ocean of existence.

हर क्षण सैकड़ों परिवर्तन होते हैं, जैसे कुम्हार का चाक; ऐसे ही अस्तित्व के समुद्र में अवस्थाएँ होती हैं।

7.93.50

चरन्ति चतुराश्चौरा विषमा विषयारयः। हरन्ति भावसर्वस्वं जागर्मि स्वपिमीह किम् ॥ ५० ॥

caranti caturāścaurā viṣamā viṣayārayaḥ | haranti bhāvasarvasvaṃ jāgarmi svapimīha kim || 50 ||

Cunning thieves of the senses wander, uneven and harmful; they steal the wealth of emotions; what is the use of being awake or asleep?

इंद्रियों के चतुर चोर घूमते हैं, असमान और हानिकारक; वे भावनाओं की संपत्ति को चुरा लेते हैं; जागने या सोने से क्या फायदा?

7.93.51

आयुषः खण्डखण्डाश्च निपतन्तः पुनःपुनः न कश्चिद्वेत्ति कालेन क्षतानि दिवसान्यहो ॥ ५१ ॥

āyuṣaḥ khaṇḍakhaṇḍāśca nipatantaḥ punaḥpunaḥ na kaścidvetti kālena kṣatāni divasānyaho || 51 ||

The fragments of life fall again and again, no one knows how many days have passed with time.

जीवन के टुकड़े बार-बार गिरते हैं, कोई नहीं जानता कि समय के साथ कितने दिन बीत चुके हैं।

7.93.52

इदमद्य तथेदं च तथेदमिदमस्य मे एवं कलनया लोको गतं प्राप्तं न वेत्त्यहो ॥ ५२ ॥

idamadya tathedaṃ ca tathedamidamasyame evaṃ kalanayā loko gataṃ prāptaṃ na vettayaho || 52 ||

This today and that, and this is mine, thus by calculation the world does not know what has passed and what is gained.

यह आज और वह, और यह मेरा है, इस तरह गणना के द्वारा संसार नहीं जानता कि क्या गया और क्या प्राप्त हुआ है।

7.93.53

भुक्तं पीतमनन्तासु भ्रान्तं च वनभूमिषु दृष्टानि सुखदुःखानि किमन्यदिह साध्यते ॥ ५३ ॥

bhuktaṃ pītamanantāsu bhrāntaṃ ca vanabhūmiṣu dṛṣṭāni sukhaduḥkhāni kimanyadih sādhyate || 53 ||

Eaten, drunk, wandered in the forests and lands, seen happiness and sorrow, what else is there to achieve here?

खाया, पीया, वनों और भूमियों में भटका, सुख-दुःख देखे, यहाँ और क्या हासिल करना है?

7.93.54

सुखदुःखानुभवनाद्भूयोभूयो विवर्तनात् अनित्यत्वाच्च भावानां स्थिता निष्कौतुका वयम् ॥ ५४ ॥

sukhaduḥkhānubhavanād bhūyobhūyo vivartanāt anityatvāc ca bhāvānāṃ sthitā niṣkautukā vayam || 54 ||

From the experience of happiness and sorrow, from repeated transformations, and from the impermanence of things, we are established in a state of dispassion.

सुख-दुःख के अनुभव से, बार-बार परिवर्तन से, और वस्तुओं की अस्थायिता से, हम वैराग्य की स्थिति में स्थापित हैं।

7.93.55

भुक्तानि भोगवृन्दानि दृष्टा चानित्यता भृशम् नोपलभ्यत एवाति विश्रान्तिरिह कुत्रचित् ॥ ५५ ॥

bhaktāni bhogavṛndāni dṛṣṭā cānityatā bhṛśam nopalabhyata evāti viśrāntirih kutracit || 55 ||

The pleasures have been enjoyed, the impermanence has been seen intensely, yet no rest is found anywhere here.

भोग भोगे गए, अनित्यता को तीव्रता से देखा गया, फिर भी यहाँ कहीं भी विश्राम नहीं मिलता।

7.93.56

भ्रान्तमुत्तुङ्गशृङ्गासु मेरूपवनभूमिषु लोकपालपुरीषूच्चैः संप्राप्तं किमकृत्रिमम् ॥ ५६ ॥

bhrāntamuttuṅgaśṛṅgāsu merūpavanabhūmiṣu lokapālapurīṣūccaiḥ saṃprāptaṃ kimakṛtrimam || 56 ||

In the high peaks and forests of Mount Meru, and in the cities of the guardians of the world, what has been achieved is not artificial.

मेरु पर्वत की ऊँची चोटियों और वनों में, और लोकपालों के शहरों में, जो प्राप्त हुआ है वह अस्वाभाविक नहीं है।

7.93.57

सर्वत्र दारुभिर्वृक्षा मांसैर्भूतानि भूर्मृदा दुःखान्यनित्यता चेति कथमाश्वास्यते वद ॥ ५७ ॥

sarvatra dārubhirvṛkṣā māṃsairbhūtāni bhūrmṛdā duḥkhānyanityatā ceti kathamāśvāsyate vada || 57 ||

Everywhere trees are made of wood, beings are made of flesh, the earth is made of soil, and sorrows are impermanent. Tell me, how can one be consoled?

हर जगह पेड़ लकड़ी से बने होते हैं, प्राणी मांस से बने होते हैं, पृथ्वी मिट्टी से बनी होती है, और दुःख अस्थायी होते हैं। बताओ, किस तरह से कोई सांत्वना पा सकता है?

7.93.58

न धनानि न मित्राणि न सुखानि न बान्धवाः शक्नुवन्ति परित्रातुं कालेनाकलितं जनम् ॥ ५८ ॥

na dhanāni na mitrāṇi na sukhāni na bāndhavāḥ śaknuvanti paritrātuṃ kālenākalitaṃ janam || 58 ||

Neither wealth, nor friends, nor pleasures, nor relatives can save a person who is distressed by time.

न धन, न मित्र, न सुख, न बंधु उस व्यक्ति को बचा सकते हैं जो समय से व्याकुल हो गया है।

7.93.59

जनो जीमूतजठरजलवद्गिरिकुक्षिषु यात्यन्तःशून्य एवास्तं पांसूपचयपेलवः ॥ ५९ ॥

jano jīmūtajaṭharajalavadgirikukṣiṣu yātyantaḥśūnya evāstaṃ pāṃsūpacayapelavaḥ || 59 ||

People, like the water in the belly of a cloud that disappears into the hollows of mountains, ultimately become empty within, reduced to a mere pile of dust.

लोग, जैसे बादल के पेट में पानी जो पहाड़ों की खोहों में गिरकर खाली हो जाता है, अंततः अंदर से खाली हो जाते हैं, मात्र धूल के ढेर में बदल जाते हैं।

7.93.60

न मे मनोरमाः कामा न च रम्या विभूतयः इदं मत्ताङ्गनापाङ्गभङ्गलोलं च जीवितम् ॥ ६० ॥

na me manoramāḥ kāmā na ca ramyā vibhūtayaḥ idaṃ mattāṅganāpāṅgabhaṅgalolaṃ ca jīvitam || 60 ||

I have no delightful desires, nor do I have charming possessions. This life is as unstable as the swaying glance of a drunken elephant.

मेरे पास कोई मनोरम इच्छाएँ नहीं हैं, न ही मेरे पास कोई रमणीय संपत्ति है। यह जीवन मतवाले हाथी की लहराती दृष्टि की तरह अस्थिर है।

7.93.61

क्वेव कस्य कथं नाम कुत आश्वासना मुनेअद्य श्वो वा''पदं पापो मृत्युर्मूर्ध्नि नियच्छति ॥ ६१ ॥

kveva kasya kathaṃ nāma kuta āśvāsanā muneadya śvo vā''padaṃ pāpo mṛtyurmūrdhni niyacchati || 61 ||

O sage, where, how, and from whom can there be any assurance? Today or tomorrow, death, the wicked one, places calamity upon one's head.

हे मुनि, कहाँ, कैसे और किससे कोई आश्वासन हो सकता है? आज या कल, मृत्यु, यह पापी, किसी के सिर पर विपदा रख देता है।

7.93.63

नीतं मनोरथैरेव नीरसैर्वा''युराततम्न मम स्वं चमत्कारकारि किंचिदपीहितम् ॥ ६३ ॥

nītaṃ manorathaireva nīrasairvā''yurātatamna mama svaṃ camatkārakāri kiṃcidapīhitam || 63 ||

Life is led by insipid desires, and time is wasted. Nothing remarkable or wonderful has been achieved by me.

जीवन नीरस इच्छाओं द्वारा चलाया जाता है, और समय बर्बाद होता है। मैंने कुछ भी अद्भुत या चमत्कारिक हासिल नहीं किया है।

7.93.64

मोहोऽद्य मान्यमायातो देहो नेहोपयुज्यतेअनास्थैवोत्तमावस्था स्थानास्थैवाधमा स्थितिः ॥ ६४ ॥

moho'dya mānyamāyāto deho nehopayujyateanāsthaivottamāvasthā sthānāsthaivādhamā sthitiḥ || 64 ||

Today, delusion arises from pride, and the body is not useful here. The highest state is indifference, and the lowest state is attachment.

आज, देह का कोई उपयोग नहीं है, और भ्रम अभिमान से उत्पन्न होता है। उत्तम अवस्था उदासीनता है, और निम्न अवस्था आसक्ति है।

7.93.65

आपदापतितैवेयमहो मोहविधायिनीनित्यमित्येव मन्तव्यं सक्तव्यं नेह संसृतौ ॥ ६५ ॥

āpadāpatitaiveyamaho mohavidhāyinīnityamityeva mantavyaṃ saktavyaṃ neha saṃsṛtau || 65 ||

Alas, this mind is indeed fallen into calamity, constantly engaged in delusion. It should be considered as ever-changing and not to be attached to in this worldly existence.

हाय, यह मन वास्तव में विपदा में फँस गया है, लगातार भ्रम में लगा हुआ है। इसे सदा परिवर्तनशील मानना चाहिए और संसार में इससे आसक्त नहीं होना चाहिए।

7.93.66

विधिभिः प्रतिषेधैश्च शाश्वतैरप्यशाश्वतैःयथेष्टं नीयते लोको जलं निमनोन्नतैरिव ॥ ६६ ॥

vidhibhiḥ pratiṣedhaiśca śāśvatairapyaśāśvataiḥyatheṣṭaṃ nīyate loko jalaṃ nimanonnatairiva || 66 ||

By eternal and non-eternal rules and prohibitions, the world is led as desired, like water by high and low grounds.

शाश्वत और अशाश्वत विधियों और प्रतिषेधों द्वारा, संसार इच्छानुसार चलाया जाता है, जैसे पानी ऊँचे-नीचे भूमि से चलता है।

7.93.67

विवेकामोदसर्वस्वं चेतः कुसुमकोशतः । हृत्वा मूर्च्छां प्रयच्छन्ति विषया विषवायवः ॥ ६७ ॥

vivekāmodasarvasvaṃ cetaḥ kusumakośataḥ | hṛtvā mūrcchāṃ prayacchanti viṣayā viṣavāyavaḥ || 67 ||

The senses, which are like poisonous winds, steal the essence of the mind's discernment and cause it to faint.

इंद्रियाँ, जो विषैले वायु की तरह हैं, मन के विवेक का सार चुरा लेती हैं और उसे बेहोश कर देती हैं।

7.93.68

असदेव तथा नाम दृष्टं सत्तामुपागतम् । यथाऽसदेव सद्रूपं संपन्नमसदेव सत् ॥ ६८ ॥

asadeva tathā nāma dṛṣṭaṃ sattāmupāgatam | yathā'sadeva sadrūpaṃ sampannamasadeva sat || 68 ||

Just as the unreal is perceived as real, so too the unreal takes on the form of the real.

जैसे असत् को सत् के रूप में देखा जाता है, वैसे ही असत् सत् का रूप धारण कर लेता है।

7.93.69

दोलायन्त्योऽवनौ देहं सागरान्सागराङ्गनाः । यथा धावन्ति धावन्ति जनता विषयांस्तथा ॥ ६९ ॥

dolāyantyo'vanau dehaṃ sāgarānsāgarāṅganāḥ | yathā dhāvanti dhāvanti janatā viṣayāṃstathā || 69 ||

Just as the waves of the ocean rush towards the shore, so too do people rush towards sensual pleasures.

जैसे समुद्र की लहरें तट की ओर दौड़ती हैं, वैसे ही लोग इंद्रिय सुखों की ओर दौड़ते हैं।

7.93.70

धावन्ति विषयाँल्लक्ष्यमुन्मुक्ताश्चित्तसायकाः । स्पृशन्ति न गुणान्भूयः कृतघ्नाः सौहृदं यथा ॥ ७० ॥

dhāvanti viṣayāllakṣyamunmuktāścittasāyakāḥ | spṛśanti na guṇānbhūyaḥ kṛtaghnāḥ sauhṛdaṃ yathā || 70 ||

The senses, like arrows released from the mind, rush towards their targets but do not touch the qualities again, like ungrateful friends.

इंद्रियाँ, जो मन से छूटे हुए तीर की तरह हैं, अपने लक्ष्य की ओर दौड़ती हैं लेकिन गुणों को फिर से नहीं छूतीं, जैसे कृतघ्न मित्र।

7.93.71

उत्पातवायुरेवायुर्मित्राण्येवातिशत्रवः । बन्धवो बन्धनान्येव धनान्येवाति नैधनम् ॥ ७१ ॥

utpātavāyurevāyurmitrāṇyevātiśatravaḥ | bandhavo bandhanānyeva dhanānyevāti naidhanam || 71 ||

The wind of calamity is indeed the wind, friends are indeed great enemies, relatives are indeed bonds, and wealth is indeed great poverty.

विपत्ति की हवा ही हवा है, मित्र ही बड़े शत्रु हैं, रिश्तेदार ही बंधन हैं, और धन ही बड़ी गरीबी है।

7.93.72

सुखान्येवातिदुःखानि संपदः परमापदः । भोगा भवमहारोगा रतिरेव पराराततिः ॥ ७२ ॥

sukhānyevātiduḥkhāni saṃpadaḥ paramāpadaḥ | bhogā bhavamahārogā ratirev parāratiḥ || 72 ||

Even pleasures are extreme sorrows, prosperity is the greatest calamity. Enjoyments are the great diseases of existence, and attachment is the greatest affliction.

सुख भी अति दुःख हैं, संपदा परम आपदा हैं | भोग भव महारोग हैं, और रति ही परम आरति है |

7.93.73

आपदः संपदः सर्वाः सुखं दुःखाय केवलम् । जीवितं मरणायैव बत मायाविजृम्भितम् ॥ ७३ ॥

āpadaḥ saṃpadaḥ sarvāḥ sukhaṃ duḥkhāya kevalam | jīvitaṃ maraṇāyaiva bata māyāvijṛmbhitam || 73 ||

All calamities and prosperities are merely for sorrow. Life is only for death, indeed, it is an illusion.

सभी आपदाएँ और संपदाएँ केवल दुःख के लिए हैं | जीवन केवल मरण के लिए है, यह माया का विजृम्भण है |

7.93.74

बहून्कालपरावर्तानिष्टानिष्टान्सुखं मनाक् । पश्यन्प्रियवियोगांश्च याति जर्जरतां जनः ॥ ७४ ॥

bahūnkālaparāvartāniṣṭāniṣṭānsukhaṃ manāk | paśyanpriyaviyogāṃśca yāti jarjaratāṃ janaḥ || 74 ||

Seeing many cycles of time, desirable and undesirable, happiness as insignificant, and the separation from dear ones, people become weak.

बहुत से काल चक्रों को देखते हुए, इच्छित और अनिच्छित, सुख को अल्प, और प्रियजनों से वियोग को देखते हुए, लोग कमजोर हो जाते हैं |

7.93.75

भोगा विषयसंभोगा भोगा एव फणावताम् । दशन्त्येव मनाक् स्पृष्टा दृष्टा नष्टाः प्रतिक्षणम् ॥ ७५ ॥

bhogā viṣayasaṃbhogā bhogā eva phaṇāvatām | daśantyeva manāk spṛṣṭā dṛṣṭā naṣṭāḥ pratikṣaṇam || 75 ||

Enjoyments are the enjoyments of the senses, enjoyments are like the hoods of snakes. They bite even when slightly touched, seen, or destroyed at every moment.

भोग इंद्रियों के भोग हैं, भोग साँपों के फण के समान हैं | वे छुए जाने पर, देखे जाने पर, या नष्ट होने पर प्रतिक्षण काटते हैं |

7.93.76

आयुर्याति निरायासपदप्राप्तिविवर्जितैः । उदर्कभङ्गुराकारैः करालैः कष्टचेष्टितैः ॥ ७६ ॥

āyuryāti nirāyāsapadaprāptivivarjitaiḥ | udarkabhaṅgurākāraiḥ karālaiḥ kaṣṭaceṣṭitaiḥ || 76 ||

Life passes with efforts that do not lead to the attainment of a state without effort, with actions that are fragile, fierce, and difficult.

जीवन बिना प्रयास के अवस्था प्राप्त किए बिना बीत जाता है, नाजुक, भयानक, और कठिन क्रियाओं से |

7.93.77

भोगाशाबद्धतृष्णानामपमानः पदे पदे । आलानमवलीनानां वन्यानामिव दन्तिनाम् ॥ ७७ ॥

bhogāśābaddhatṛṣṇānāmapamānaḥ pade pade | ālānamavalīnānāṃ vanyānāmiva dantinām || 77 ||

Those who are bound by the desire for enjoyment face humiliation at every step, like wild elephants that are trapped in a pit.

जो भोगों की तृष्णा से बंधे हुए हैं, उनका अपमान हर कदम पर होता है, जैसे जंगली हाथियों का जो गड्ढे में फंस जाते हैं।

7.93.78

संपदः प्रमदाश्चैव तरङ्गोत्सङ्गभङ्गुराः । कस्तास्वहिफणाच्छत्रच्छायासु रमते बुधः ॥ ७८ ॥

sampadaḥ pramadāścaiva taraṅgotsaṅgabhaṅgurāḥ | kastāsvahiphaṇācchatracchāyāsu ramate budhaḥ || 78 ||

Wealth and beautiful women are as fickle as the waves of a river. Who among the wise would find pleasure in their fleeting shadows?

धन और सुंदर स्त्रियां नदी की लहरों की तरह चंचल होती हैं। बुद्धिमान व्यक्ति कौन उनकी क्षणभंगुर छायाओं में आनंद लेगा?

7.93.79

सत्यं मनोरमाः कामाः सत्यं रम्या विभूतयः । किंतु मत्ताङ्गनापाङ्गभङ्गलोलं हि जीवितम् ॥ ७९ ॥

satyaṃ manoramāḥ kāmāḥ satyaṃ ramyā vibhūtayaḥ | kintu mattāṅganāpāṅgabhaṅgalolaṃ hi jīvitam || 79 ||

It is true that desires are delightful and possessions are enjoyable. However, life is as fickle as the glances of an intoxicated woman.

यह सत्य है कि इच्छाएं मनोरम होती हैं और संपत्ति रमणीय होती है। फिर भी, जीवन मदमस्त स्त्री की चंचल नजरों की तरह अस्थिर है।

7.93.80

आपातरमणीयेषु रमन्ते विषयेषु ये । अत्यन्तविरसान्तेषु पतन्ति निरयेषु ते ॥ ८० ॥

āpātaramaṇīyeṣu ramante viṣayeṣu ye | atyantavirasānteṣu patanti nirayeṣu te || 80 ||

Those who delight in seemingly attractive objects ultimately fall into the most bitter hells.

जो लोग दिखने में आकर्षक वस्तुओं में आनंद लेते हैं, वे अंततः अत्यंत कड़वे नरकों में गिरते हैं।

7.93.81

द्वन्द्वदोषोपरुद्धानि दुःसाध्यान्यस्थिराणि च । धनान्यभव्यसेव्यानि मम जातु न तुष्टये ॥ ८१ ॥

dvandvadoṣoparuddhāni duḥsādhyānyasthirāṇi ca | dhanānyabhavyasevyāni mama jātu na tuṣṭaye || 81 ||

Wealth, which is afflicted by dualities, is difficult to obtain and unstable. It should not be served by the unworthy, and it never satisfies me.

धन, जो द्वंद्वों से पीड़ित है, प्राप्त करना कठिन है और अस्थिर है। यह अयोग्य लोगों द्वारा सेवित नहीं होना चाहिए, और यह मुझे कभी संतुष्ट नहीं करता।

7.93.82

आपातमात्रमधुरा दुःखपर्यवसायिनी । मोहनायैव लोकस्य लक्ष्मीः क्षणविलासिनी ॥ ८२ ॥

āpātamātramadhurā duḥkhaparyavasāyinī | mohanāyaiva lokasya lakṣmīḥ kṣaṇavilāsinī || 82 ||

Wealth is sweet only at first, but ultimately it leads to sorrow. It enchants the world, but it is fleeting, lasting only for a moment.

धन पहले में मीठा लगता है, पर अंत में दुःख ही देता है। यह संसार को मोहित करता है, पर यह क्षणभंगुर है।

7.93.83

आपातरमणीयानि विमर्दविसराण्यति । दुःखान्यापत्प्रदातृणि संगतानि खलैरिव ॥ ८३ ॥

āpātarmaṇīyāni vimardavisarāṇyati | duḥkhānyāpatpradātṛṇi saṃgatāni khalairiva || 83 ||

Things that seem delightful at first ultimately lead to conflict and sorrow. They bring misfortune, just like associating with wicked people.

जो चीजें पहले आनंददायक लगती हैं, वे अंत में विवाद और दुःख ही देती हैं। वे दुर्भाग्य लाती हैं, जैसे कि दुष्ट लोगों के साथ संगत करना।

7.93.84

शरदम्बुधरच्छायागत्वर्यो यौवनश्रियः । आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः ॥ ८४ ॥

śaradambudharacchāyāgatvaryo yauvanaśriyaḥ | āpātaramyā viṣayāḥ paryantaparitāpinaḥ || 84 ||

The pleasures of youth are as fleeting as the autumn clouds. Though they seem delightful at first, they ultimately lead to sorrow.

युवावस्था के सुख शरद ऋतु के बादलों की तरह क्षणभंगुर हैं। हालांकि वे पहले आनंददायक लगते हैं, पर अंत में वे दुःख ही देते हैं।

7.93.85

अन्तकः पर्यवस्थाता जीविते महतामपि । चलन्त्यायूंषि शाखाग्रलम्बाम्बूनीव देहिनाम् ॥ ८५ ॥

antakaḥ paryavasthātā jīvite mahatāmapi | calantyāyūṃṣi śākhāgralambāmbūnīva dehinām || 85 ||

Death is the ultimate end even for the great ones. The lifespans of beings are as fragile as leaves hanging from the tips of branches.

मृत्यु महान लोगों के लिए भी अंतिम परिणाम है। प्राणियों की आयु डालों के अग्रभाग से लटकते पत्तों की तरह नाजुक है।

7.93.86

जीर्यन्ते जीर्यतः केशा हुत्वा जीर्यन्ति जीर्यतः । क्षीयते जीर्यते सर्वं तृष्णैवैका न जीर्यते ॥ ८६ ॥

jīryante jīryataḥ keśā hutvā jīryanti jīryataḥ | kṣīyate jīryate sarvaṃ tṛṣṇaivaikā na jīryate || 86 ||

Hair turns grey with age, and even after being cut, it grows grey again. Everything decays with time, but desire alone does not age.

बाल उम्र के साथ सफेद हो जाते हैं, और कटने के बाद भी वे फिर से सफेद हो जाते हैं। सब कुछ समय के साथ घिस जाता है, पर इच्छा ही एकमात्र ऐसी चीज है जो बूढ़ी नहीं होती।

7.93.87

भोगाभोगातिगहने सर्वस्मिन्कायकानने । परमुल्लासमायाति तृष्णैका विषमञ्जरी ॥ ८७ ॥

bhogābhogātigahane sarvasminkāyakānane | paramullāsamāyāti tṛṣṇaikā viṣamañjarī || 87 ||

In the dense forest of experiences and non-experiences, a single desire blooms into supreme joy.

भोग और अभोग के घने वन में, एक इच्छा परम आनंद में परिणत होती है।

7.93.88

बाल्यं यौवनवद्याति यौवनं याति बाल्यवत् । उपमानोपमेयत्वं भङ्गुरत्वं मिथोऽनयोः ॥ ८८ ॥

bālyaṃ yauvanavadyāti yauvanaṃ yāti bālyavat | upamānopameyatvaṃ bhaṅguratvaṃ mitho'nayoḥ || 88 ||

Childhood passes like youth, and youth passes like childhood. Both are transient and comparable to each other.

बचपन जवानी की तरह बीतता है, और जवानी बचपन की तरह बीतती है। दोनों अस्थायी हैं और एक-दूसरे के समान हैं।

7.93.89

जीवितं गलति क्षिप्रं जलमञ्जलिना यथा । प्रवाह इव वाहिन्या गतं न विनिवर्तते ॥ ८९ ॥

jīvitaṃ galati kṣipraṃ jalamañjalinā yathā | pravāha iva vāhinyā gataṃ na vinivartate || 89 ||

Life slips away quickly, like water from cupped hands. Like a flowing river, it does not return once it has passed.

जीवन तेजी से बीत जाता है, जैसे हथेली से पानी छूट जाता है। जैसे बहती नदी, एक बार बीत जाने के बाद वापस नहीं आता।

7.93.90

झटित्येवागतो देहः कुतोऽप्यर्जुनवातवत् । याति पश्यत एवास्तं तरङ्गाम्बुददीपवत् ॥ ९० ॥

jhaṭityevāgato dehaḥ kuto'pyarjunavātavat | yāti paśyata evāstaṃ taraṅgāmbudadīpavat || 90 ||

The body comes suddenly, like the Arjuna wind from somewhere. It passes away right before our eyes, like a wave, cloud, or lamp.

शरीर अचानक आता है, जैसे कहीं से आती हुई अर्जुन वायु। यह हमारी आँखों के सामने ही चला जाता है, जैसे लहर, बादल या दीपक।

7.93.91

रम्येष्वरम्यता दृष्टा स्थिरेष्वस्थिरतापि च । सत्येष्वसत्यतार्थेषु तेनेह विरसा वयम् ॥ ९१ ॥

ramyeṣvaramyatā dṛṣṭā sthireṣvasthiratāpi ca | satyeṣvasatyatārtheṣu tenaiha virasā vayam || 91 ||

Beauty is seen in beautiful things, instability in stable things, and falsity in truths. Therefore, we are disillusioned here.

सुंदर चीजों में सुंदरता देखी जाती है, स्थिर चीजों में अस्थिरता, और सत्यों में असत्यता। इसलिए, हम यहाँ निराश हैं।

7.93.92

सुखं यदात्मविश्रान्तौ गते मनसि सत्त्वताम् । पाताले भूतले स्वर्गे तन्न भोगेषु केषुचित् ॥ ९२ ॥

sukhaṃ yadātmaviśrāntau gate manasi sattvatām | pātāle bhūtale svarge tanna bhogeṣu keṣucit || 92 ||

When the mind attains the state of pure goodness and rests in the self, there is happiness; that happiness is not found in the pleasures of the underworld, the earth, or heaven.

जब मन शुद्ध सत्त्व की अवस्था में आता है और आत्मा में विश्राम करता है, तब सुख मिलता है; वह सुख पाताल, भूतल या स्वर्ग के भोगों में नहीं मिलता।

7.93.93

अपि संपूर्णहृद्यार्थाः पञ्चापीन्द्रियवृत्तयः । तावज्जयन्ति मामेता भृङ्गं चित्रलता इव ॥ ९३ ॥

api saṃpūrṇahṛdyārthāḥ pañcāpīndriyavṛttayaḥ | tāvajjayanti māmetā bhṛṅgaṃ citralatā iva || 93 ||

Even the five senses, which are the complete objects of the heart, conquer me like a bee to a colorful vine.

यहां तक कि हृदय के पूर्ण विषय, पांचों इंद्रियां, मुझे एक रंगबिरंगी लता पर भ्रमर की तरह जीत लेती हैं।

7.93.94

अद्य दीर्घेण कालेन निरहंकृतिना मया । स्वर्गापवर्गवैतृष्ण्यमिदमासादितं धिया ॥ ९४ ॥

adya dīrgheṇa kālena nirahaṃkṛtinā mayā | svargāpavargavaitṛṣṇyamidamāsāditaṃ dhiyā || 94 ||

Today, after a long time, with humility, I have attained this dispassion towards heaven and liberation with my intellect.

आज, लंबे समय के बाद, निरहंकार से, मैंने अपने बुद्धि से स्वर्ग और मोक्ष के प्रति यह वैराग्य प्राप्त किया है।

7.93.95

चिरमेकान्तविश्रान्त्यै तेनैतन्नभसः पदम्। त्वमिवागतवानत्र दृष्टवानस्मि तां कुटीम्॥ ९५॥

ciramekāntaviśrāntyai tenaitannabhasaḥ padam | tvamivāgatavānatra dṛṣṭavānasmī tāṃ kuṭīm || 95 ||

For a long time, for the sake of solitary rest, I have attained this state of the sky. You have come here like me and I have seen that hut.

लंबे समय से, एकांत विश्राम के लिए, मैंने इस आकाश की अवस्था को प्राप्त किया है। आप मेरे जैसे यहां आए हैं और मैंने उस कुटी को देखा है।

7.93.96

अद्यैतत्संपरिज्ञातं यदेषा भवतः कुटी। आगन्ता त्वं पुनश्चेति मया तन्न विचारितम्॥ ९६॥

adyaitatsaṃparijñātaṃ yadeṣā bhavataḥ kuṭī | āgantā tvaṃ punaśceti mayā tanna vicāritam || 96 ||

Today it is known to me that this is your hut. Whether you will come again or not, I have not thought about it.

आज मुझे पता चला है कि यह आपकी कुटी है। क्या आप फिर आएंगे या नहीं, इस पर मैंने सोचा नहीं है।

7.93.97

तदा त्वत्र मया ज्ञातं कश्चित्सिद्धोऽयमात्मना। देहं त्यक्त्वेह निर्वाणं गत इत्यनुमानतः॥ ९७॥

tadā tvatra mayā jñātaṃ kaścitsiddho'yamātmanā | dehaṃ tyaktveha nirvāṇaṃ gata ityanumānataḥ || 97 ||

Then, I realized that some perfected being has attained liberation here by abandoning the body, as inferred.

तब, मैंने यहाँ यह जाना कि कोई सिद्ध पुरुष ने शरीर त्यागकर मुक्ति प्राप्त कर ली है, जैसा कि अनुमान से पता चलता है।

7.93.98

एतन्मे भगवन्वृत्तमेषोऽस्मीति यथास्थितम्। मया ते कथितं सर्वं यथा जानासि तत्कुरु॥ ९८॥

etanme bhagavanvṛttameṣo'smīti yathāsthitam | mayā te kathitaṃ sarvaṃ yathā jānāsi tatkuru || 98 ||

O Lord, this is the true account of me as it is. I have told you everything as you know it, so do as you see fit.

हे भगवन्, यह मेरा सच्चा वृत्तांत है जैसा कि है। मैंने आपको सब कुछ बता दिया है जैसा कि आप जानते हैं, तो जैसा आप ठीक समझें वैसा करें।

7.93.99

सिद्धैर्न यावदवधानपरैर्विचार्य निर्णीतमुत्तमधियान्तरशेषवस्तु। तावत्त्रिकालकलनं न विदन्ति किंचिदित्यब्जजादिमनसोऽपि मुने स्वभावः॥ ९९॥

siddhairna yāvadavadhānaparairvicārya nirṇītamuttamadhiyāntaraśeṣavastu | tāvattrikālakalanaṃ na vidanti kiñcidityabjajādimanoso'pi mune svabhāvaḥ || 99 ||

O sage, even the minds of those born from the lotus (like Brahma) do not know the calculation of the three times (past, present, future) until the perfected beings, who are focused and have discerned the essence of the supreme intellect, have thoroughly examined it.

हे मुनि, जब तक एकाग्र और उत्तम बुद्धि के सार को समझने वाले सिद्ध पुरुष इसका गहन विचार नहीं कर लेते, तब तक कमल से उत्पन्न (जैसे ब्रह्मा) के मन भी त्रिकाल (भूत, वर्तमान, भविष्य) की गणना नहीं जानते।

Chapter 94

7.94.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ हेममयाकाशविस्तीर्णायां महाभुवि । सौहार्दादेव सिद्धस्य तस्येदमहमुक्तवान् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha hemamayākāśavistīrṇāyāṃ mahābhuvī | sauhārdādeva siddhasya tasyedamahamuktavān || 1 ||

Shri Vasistha said: Then, in the vast golden sky, out of affection, I spoke these words to that accomplished one.

श्री वसिष्ठ ने कहा: फिर, विशाल सोने के आकाश में, स्नेह से, मैंने उस सिद्ध को ये शब्द कहे।

7.94.2

त्वया न केवलं तावन्मयापि न विचारितम् । आव्याप्तिरहिता नाम न संभवति देहिनाम् ॥ २ ॥

tvayā na kevalaṃ tāvanmayāpi na vicāritam | āvyāptirahitā nāma na saṃbhavati dehinām || 2 ||

It is not just you; even I have not considered it. There is no existence for embodied beings without pervasiveness.

यह सिर्फ तुम्हारे लिए नहीं है; मैंने भी इस पर विचार नहीं किया है। शरीरधारियों के लिए व्याप्ति के बिना कोई अस्तित्व नहीं है।

7.94.3

कस्मान्मया तवोदन्तं विचार्यासौ स्थिरीकृता । न कुटी व्योम्नि तेन त्वमभविष्यः स्थिरस्थितिः ॥ ३ ॥

kasmānmayā tavodantaṃ vicāryāsau sthirīkṛtā | na kuṭī vyomni tena tvamabhaviṣyaḥ sthirasthitiḥ || 3 ||

Why did I, considering your words, make it stable? You would not have been in a stable state in the sky because of that.

मैंने आपके शब्दों को सोचकर इसे स्थिर क्यों किया? उसके कारण आप आकाश में स्थिर अवस्था में नहीं होते।

7.94.4

उत्तिष्ठ सिद्धलोकेषु निवसावो यथास्थितम् । स्वास्पदस्थितयः सौम्याः स्वात्मसिद्धौ सुसाधनम् ॥ ४ ॥

uttiṣṭha siddhalokeṣu nivasāvo yathāsthitam | svāspadasthitayaḥ saumyāḥ svātmasiddhau susādhanam || 4 ||

Arise and dwell in the realms of the accomplished ones as you are. The abodes of the self are peaceful and conducive to self-realization.

उठो और सिद्धों के लोकों में जैसे हो वैसे ही रहो। आत्मा के निवास शांतिपूर्ण हैं और आत्मसाक्षात्कार के लिए अनुकूल हैं।

7.94.5

इति निर्णीय तावुच्चैरुत्सृतौ तारकोपमौ । सममेकपुटोड्डीनौ व्योम यन्त्रोपलाविव ॥ ५ ॥

iti nirṇīya tāvuccairutsṛtau tārakopamau | samamekapuṭoḍḍīnau vyoma yantrapalāviva || 5 ||

Having thus decided, both of them loudly rose up, resembling stars. They were equally balanced, like a single ball thrown into the sky.

इस प्रकार निर्णय लेकर, दोनों ने ऊँची आवाज में उठकर तारों की तरह चमकना शुरू किया। वे एक समान संतुलित थे, जैसे आकाश में एक गेंद फेंकी गई हो।

7.94.6

प्रणामपूर्वमन्योन्यमथ कृत्वा विसर्जनम् । गतः सोऽभिमतं देशमहं चाभिमतं गतः ॥ ६ ॥

praṇāmapūrvamanyonyamatha kṛtvā visarjanam | gataḥ so'bhimataṃ deśamahaṃ cābhimataṃ gataḥ || 6 ||

After bowing to each other, we parted ways. He went to his desired place, and I went to my desired place.

एक दूसरे को प्रणाम करके हम विदाई ले ली | वह अपने इच्छित स्थान पर गया, और मैं अपने इच्छित स्थान पर गया।

7.94.7

इति वृत्तान्तमखिलमुक्तवानस्मि राघव । तवाश्चर्यमयीं पश्य संसृतीनां विचित्रताम् ॥ ७ ॥

iti vṛttāntamakhilamuktavānasmi rāghava | tavāścaryamayīṃ paśya saṃsṛtīnāṃ vicitratām || 7 ||

Thus, I have narrated the entire story to you, Raghava. Behold the wondrous variety of transmigration.

इस प्रकार, मैंने आपको पूरी कथा सुना दी है, ओ रघुनन्दन। देखिए पुनर्जन्म की अद्भुत विविधता।

7.94.8

श्रीराम उवाच । भगवंस्तव देहोऽसौ पृथिव्यामणुतां गतः । भ्रान्तः केन शरीरेण सिद्धलोकांस्ततो भवान् ॥ ८ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavaṃstava deho'sau pṛthivyāmaṇutāṃ gataḥ | bhrāntaḥ kena śarīreṇa siddhalokāṃstato bhavān || 8 ||

Sri Rama said, 'O Lord, your body has become minute on Earth. With what body did you wander and reach the realm of the Siddhas?'

श्री राम ने कहा, 'हे भगवन्, आपका शरीर पृथ्वी पर अणु के समान हो गया है। आप किस शरीर से भ्रमण करके सिद्धलोक पहुंचे?'

7.94.9

श्रीवसिष्ठ उवाच । आ स्मृतं शृणु वृत्तान्तं ततो मम जगद्गृहे । भ्रमतः सिद्धसेनासु लोकपालपुरीषु च ॥ ९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ā smṛtaṃ śṛṇu vṛttāntaṃ tato mama jagadgṛhe | bhramataḥ siddhasenāsu lokapālapurīṣu ca || 9 ||

Vasistha said, 'Listen to the story of my wandering in the world, in the abodes of the Siddhas and the cities of the guardians of the world.'

वसिष्ठ ने कहा, 'सुनिए मेरी पृथ्वी पर भ्रमण की कथा, सिद्धों के निवास स्थानों और लोकपालों के नगरों में।'

7.94.10

अहमिन्द्रपुरं प्राप्तो न कश्चित्तत्र दृष्टवान् । मामिमं देहरहितमातिवाहिकदेहिनम् ॥ १० ॥

ahamindrapuraṃ prāpto na kaścittatra dṛṣṭavān | māmimaṃ deharahitamātivāhikadehinam || 10 ||

I reached Indra's city, but no one saw me there, as I was without a body, having only a subtle form.

मैं इन्द्र के नगर में पहुंचा, लेकिन वहाँ कोई भी मुझे नहीं देख सका, क्योंकि मैं शरीर से रहित था, केवल सूक्ष्म रूप में था।

7.94.11

अह किल तदा राम संपन्नो गगनाकृतिः । न चाधारो न चाधेयश्चिदाकाशमयात्मकः ॥ ११ ॥

aha kila tadā rāma saṃpanno gaganākṛtiḥ | na cādhāro na cādheyaścidākāśamayātmakaḥ || 11 ||

Oh, indeed, at that time, Rama, you are complete, like the sky. You are neither the support nor the supported, you are of the nature of the space of consciousness.

ओह, वास्तव में, उस समय, हे राम, आप पूर्ण हैं, आकाश के समान | आप न आधार हैं न आधेय, आप चेतना के आकाश के स्वभाव वाले हैं।

7.94.12

न ग्रहीता न च ग्राह्यस्त्वादृशार्थावबोधिनाम्। न चैव देशकालानां क्वचिदावृत्तिकारकः ॥ १२ ॥

na grahītā na ca grāhyastvādṛśārthāvabodhinām | na caiva deśakālānāṃ kvacidāvṛttikārakaḥ || 12 ||

You are neither the perceiver nor the perceived, for those who understand such meanings. You are not the cause of any recurrence of place and time.

आप न ग्रहीता हैं न ग्राह्य, ऐसे अर्थों को समझने वालों के लिए | आप किसी भी स्थान और समय के पुनरावृत्ति के कारण नहीं हैं।

7.94.13

मनोमननमात्रात्मा पृथ्व्यादिपरिवर्जितः। संकल्पपुरुषाकारः पदार्थानामरोधकः ॥ १३ ॥

manomananamātrātmā pṛthvyādiparivarjitaḥ | saṃkalpapuruṣākāraḥ padārthānāmarodhakaḥ || 13 ||

You are the essence of mere mental contemplation, devoid of earth and other elements. You are in the form of a resolved person, obstructing the objects.

आप मानसिक चिंतन के स्वरूप हैं, पृथ्वी और अन्य तत्वों से रहित | आप एक निश्चित पुरुष के रूप में हैं, वस्तुओं को रोकने वाले।

7.94.14

अरुद्धश्च पदार्थौघैः स्वयं स्वानुभवोन्मुखः। व्यवहर्ता तथाभूतैरेवं पुंभिर्मनोमयैः ॥ १४ ॥

aruddhaśca padārthaughaiḥ svayaṃ svānubhavonmukhaḥ | vyavahartā tathābhūtair evaṃ puṃbhirmanomayaiḥ || 14 ||

You are unobstructed by the multitude of objects, self-experiencing, and the one who engages with such beings who are made of mind.

आप वस्तुओं के समूह से अरुद्ध हैं, स्वयं अनुभव करने वाले, और ऐसे मानसिक प्राणियों से व्यवहार करने वाले।

7.94.15

स्वप्नानुभूतयो राम दृष्टान्तोऽत्राविखण्डितः। अनुभूत्यपलापं तु यः कुर्यात्तेन तेऽस्त्वलम् ॥ १५ ॥

svapnānubhūtayo rāma dṛṣṭānto'trāvikhaṇḍitaḥ | anubhūtyapalāpaṃ tu yaḥ kuryāttena te'stvalam || 15 ||

Oh Rama, the experiences in dreams are an unbroken example here. But for those who engage in the chatter of experiences, it is enough for them.

हे राम, स्वप्न में अनुभव यहाँ एक अखंड दृष्टांत हैं | लेकिन जो अनुभव की बकवाद करते हैं, उनके लिए यह पर्याप्त है।

7.94.16

यथा स्वप्नचरो गेहे व्यवहर्ता न दृश्यते। तथा तदा न दृष्टोस्मि पुरस्थोऽपि नभोगतैः ॥ १६ ॥

yathā svapnacaro gehe vyavahartā na dṛśyate | tathā tadā na dṛṣṭosmi purastho'pi nabhogataiḥ || 16 ||

Just as a person moving in a dream is not seen by the householders, similarly, even though I was present in the city, I was not seen by those who move in the sky.

जैसे सपने में चलने वाला व्यक्ति घर वालों द्वारा नहीं देखा जाता, वैसे ही, उस समय मैं शहर में रहते हुए भी आकाश में चलने वालों द्वारा नहीं देखा गया।

7.94.17

अहमन्यान्प्रपश्यामि पार्थिवाकारभासुरान्। मामातिवाहिकात्मानं न कश्चिदपि पश्यति ॥ १७ ॥

ahamanyānprapaśyāmi pārthivākārabhāsurān | māmātivāhikātmānaṃ na kaścidapi paśyati || 17 ||

I see others appearing in earthly forms, but no one sees me, who am of a transcendental nature.

मैं दूसरों को पृथ्वी के रूप में देखता हूँ, लेकिन कोई भी मुझे, जो पारलौकिक स्वभाव का हूँ, नहीं देखता।

7.94.18

श्रीराम उवाच । न दृश्यते विदेहत्वाद्भवान्व्योमवपुर्यदि । तत्कथं तेन सिद्धेन दृष्टोऽसि कनकावनौ ॥ १८ ॥

śrīrāma uvāca | na dṛśyate videhatvādbhavānvyomavapuryadi | tatkathaṃ tena siddhena dṛṣṭo'si kanakāvanau || 18 ||

Sri Rama said: If you are not visible due to your bodiless nature, then how were you seen by the accomplished one in the golden forest?

श्री राम ने कहा: यदि आप अपने देहरहित स्वभाव के कारण दिखाई नहीं देते, तो फिर सिद्ध पुरुष ने सोने के वन में आपको कैसे देखा?

7.94.19

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्मदादिर्जनो नाम यथा संकल्पकल्पितान् । नासंकल्पितमाप्नोति सत्यकामवपुर्यतः ॥ १९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asmadādirjano nāma yathā saṃkalpakalpitān | nāsaṃkalpitamāpnoti satyakāmavapuryataḥ || 19 ||

Sri Vasistha said: People, beginning with me, obtain only what they imagine. They do not obtain what they do not imagine, because their nature is that of true desire.

श्री वसिष्ठ ने कहा: मुझसे शुरू होकर लोग केवल उसी को प्राप्त करते हैं जो उनकी कल्पना में होता है। वे उसे नहीं प्राप्त करते जो उनकी कल्पना में नहीं होता, क्योंकि उनका स्वभाव सच्ची इच्छा का होता है।

7.94.20

व्यवहारेषु मग्नेन लौकिकेष्वमलात्मना । क्षणाद्विस्मर्यते पुंसा आतिवाहिकमात्मनः ॥ २० ॥

vyavahāreṣu magnena laukikeṣvamalātmanā | kṣaṇādvismaryate puṃsā ātivāhikamātmanaḥ || 20 ||

Engaged in worldly affairs with a pure mind, one quickly forgets their transcendental nature.

लौकिक व्यवहारों में लीन होकर पवित्र मन से, व्यक्ति अपने पारलौकिक स्वभाव को शीघ्र ही भूल जाता है।

7.94.21

मया पश्यतु मामेष इति संकल्पितं तदा । तेन मां दृष्टवानेष स्वसंकल्पार्थभाजनम् ॥ २१ ॥

mayā paśyatu māmeṣa iti saṃkalpitam tadā | tena māṃ dṛṣṭavāneṣa svasaṃkalpārthabhājanam || 21 ||

I resolved that he should see me, and thus he saw me, fulfilling my intention.

मैंने सोचा कि यह मुझे देखे, और इस तरह उसने मुझे देखा, मेरी इच्छा को पूरा करते हुए।

7.94.22

जनो जरठभेदत्वान्न संकल्पार्थभाजनम् । स एष जीर्णभेदत्वात्सत्यकामत्वभाजनम् ॥ २२ ॥

jano jaraṭhabhedatvānna saṃkalpārthabhājanam | sa eṣa jīrṇabhedatvātsatyakāmatvabhājanam || 22 ||

People, due to their old age, do not fulfill their intentions. This one, due to his worn-out state, fulfills his true desires.

लोग अपनी बुढ़ापे के कारण अपनी इच्छाओं को पूरा नहीं कर पाते। यह व्यक्ति, अपने थके-हारे अवस्था के कारण, अपनी सच्ची इच्छाओं को पूरा करता है।

7.94.23

द्वयोस्तु सिद्धयोः सिद्धविरुद्धेप्सितयोर्मिथः । अधिकैकावदातात्मा जयी पुरुषयत्नवान् ॥ २३ ॥

dvyostu siddhayoḥ siddhaviruddhepsitayormithaḥ | adhikaikāvadātātmā jayī puruṣayatnavān || 23 ||

Between two accomplished persons with conflicting desires, the one who is more determined and puts in more effort will be victorious.

दो सफल व्यक्तियों के बीच जिनकी इच्छाएँ विरोधी हैं, जो अधिक संकल्पवान और अधिक प्रयास करता है, वह विजयी होगा।

7.94.24

भ्रमतः सिद्धसेनासु लोकपालपुरीषु मे । विस्मृता व्यवहारौघैः सातिवाहिकतात्मनः ॥ २४ ॥

bhramataḥ siddhasenāsu lokapālapurīṣu me | vismṛtā vyavahāraughaiḥ sātivāhikatātmanaḥ || 24 ||

Wandering in the cities of the guardians of the world, I was forgotten due to the overwhelming activities of the accomplished armies.

लोकपालों की नगरियों में भटकते हुए, मैं सिद्ध सेनाओं के व्यस्त कार्यों के कारण भूल गया।

7.94.25

यदा तदाहमपरैर्व्यवहर्तुं महाम्बरे । प्रवृत्तो न च मां कश्चित्तत्र पश्यति चञ्चलम् ॥ २५ ॥

yadā tadāhamaparairvyavahartuṃ mahāmbare | pravṛtto na ca māṃ kaścit tatra paśyati cañcalam || 25 ||

When I tried to interact with others in the great sky, no one saw me, the restless one.

जब मैंने महान आकाश में दूसरों से संपर्क करने की कोशिश की, तो कोई भी मुझे, अस्थिर को, नहीं देखा।

7.94.26

अत्यन्तमप्यारटतः शब्दो न श्रूयते मम केनचित्सुरलोकेषु स्वप्नपुंस इवानघ ॥ २६ ॥

atyantamapyārṭataḥ śabdo na śrūyate mama kenacitsuralokeṣu svapnapuṁsa ivānagha || 26 ||

Even the loudest sound is not heard by me in any of the celestial realms, as if I am a dreaming man, O sinless one.

मुझे किसी भी स्वर्गीय लोक में सबसे ऊँचा शब्द भी नहीं सुनाई देता, जैसे मैं स्वप्न देख रहा हूँ, हे अनघ।

7.94.27

अवष्टब्धं प्रवृत्तस्य नान्यावष्टब्धये मम संपद्यते किंचिदपि मनोमननदेहिनः ॥ २७ ॥

avaṣṭabdhaṁ pravṛttasya nānyāvaṣṭabdhaye mama saṁpadyate kiñcidapi manomananadehinaḥ || 27 ||

Nothing else is fixed for me, who am engaged in contemplation, O embodied one with a contemplative mind.

मुझे, जो ध्यान में लगा हुआ हूँ, कुछ भी और स्थिर नहीं है, हे ध्यान में लगे हुए शरीर वाले।

7.94.28

एवं व्योमपिशाचोऽहं संपन्नो रघुनन्दन मयानुभूता काप्येषा देवागारपिशाचता ॥ २८ ॥

evaṁ vyomapiśāco'haṁ saṁpanno raghunandana mayānubhūtā kāpyeṣā devāgārapiśācatā || 28 ||

Thus, I have become a sky-dwelling demon, O Raghunandana. I have experienced this state of being a demon in the celestial realm.

इस प्रकार, मैं एक आकाश-निवासी दानव बन गया हूँ, हे रघुनन्दन। मैंने इस स्वर्गीय लोक में दानव की स्थिति का अनुभव किया है।

7.94.29

श्रीराम उवाच पिशाचाः सन्तिलोकेस्मिन्किमाकाराःकिमास्पदाः किंजातीयाः किमाचाराः कीदृशाः कीदृशाशयाः ॥ २९ ॥

śrīrāma uvāca piśācāḥ santilokesminkimākārāḥkimāspadāḥ kiṁjātīyāḥ kiṁācārāḥ kīdṛśāḥ kīdṛśāśayāḥ || 29 ||

Sri Rama said: What kind of forms, abodes, lineages, behaviors, and desires do the demons have in this world?

श्री राम ने कहा: इस लोक में दानवों के किस प्रकार के रूप, निवास, जाति, व्यवहार और इच्छाएँ हैं?

7.94.30

श्रीवसिष्ठ उवाच पिशाचाः सन्ति लोकेऽस्मिन्यादृशास्तादृशान्शृणु न सभ्योऽसौ न यो वक्ति प्रसङ्गापतितं वचः ॥ ३० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca piśācāḥ santi loke'sminyādṛśāstādṛśānśṛṇu na sabyo'sau na yo vakti prasaṅgāpatitaṁ vacaḥ || 30 ||

Sri Vasishtha said: There are demons in this world of various kinds, listen to them. One who speaks irrelevant words is not a gentleman.

श्री वसिष्ठ ने कहा: इस लोक में विभिन्न प्रकार के दानव हैं, उन्हें सुनो। जो अनुचित बातें बोलता है, वह सभ्य नहीं है।

7.94.31

पिशाचाः केचिदाकाशसदृशाः सूक्ष्मदेहकाः । हस्तपादादिसंयुक्ताः पश्यन्ति त्वमिवाकृतिम् ॥ ३१ ॥

piśācāḥ kecidākāśasadṛśāḥ sūkṣmadehakāḥ | hastapādādisaṃyuktāḥ paśyanti tvamivākṛtim || 31 ||

Some Pishachas are like the sky, having subtle bodies. They have limbs like hands and feet, and they see your form.

कुछ पिशाच आकाश के समान सूक्ष्म शरीर वाले होते हैं। वे हाथ, पैर आदि से युक्त होते हैं और आपकी आकृति देखते हैं।

7.94.32

छायया भयदायिन्या त्वन्यत्र भ्रमरूपया । ते चित्ताक्रमणं कृत्वा बोधयन्ति नराशयम् ॥ ३२ ॥

chāyayā bhayadāyinyā tvanyatra bhramarūpayā | te cittākramaṇaṃ kṛtvā bodhayanti narāśayam || 32 ||

With their frightening shadows, they create illusions elsewhere. By invading the mind, they awaken human desires.

अपनी भयानक छायाओं से, वे दूसरी जगह भ्रम पैदा करते हैं। मन पर कब्जा करके, वे मनुष्यों की इच्छाओं को जागृत करते हैं।

7.94.33

घ्नन्त्यदन्ति पिबन्त्याशु लघुसत्त्वबलं जनम् । बलं सत्त्वमथो जीवान्हिंसन्त्याक्रम्य चित्तकम् ॥ ३३ ॥

ghnantyadanti pibantyāśu laghusattvabalaṃ janam | balaṃ sattvamatho jīvānhinsantyākramya cittakam || 33 ||

They quickly kill, eat, and drink people with weak vitality and strength. By invading the mind, they harm the vitality, strength, and lives of people.

वे तेजी से कमजोर शक्ति और बल वाले लोगों को मारते, खाते और पीते हैं। मन पर कब्जा करके, वे लोगों की शक्ति, बल और जीवन को नुकसान पहुँचाते हैं।

7.94.34

आकाशसदृशाः केचित्केचिन्नीहारसंनिभाः । केचित्स्वप्ननराकाराः साकारा अपि स्वात्मकाः ॥ ३४ ॥

ākāśasadṛśāḥ kecitkecinnīhārasannibhāḥ | kecitsvapnanarākārāḥ sākārā api svātmakāḥ || 34 ||

Some are like the sky, some resemble fog, some appear like dream figures, and some have their own forms.

कुछ आकाश के समान होते हैं, कुछ कुहरे के समान होते हैं, कुछ स्वप्न में दिखने वाले मनुष्यों के समान होते हैं, और कुछ अपने ही रूप में होते हैं।

7.94.35

केचिदभ्रदलप्रख्याः केचित्पवनदेहकाः । केचिद्भ्रमात्मका एव सर्वे बुद्धिमनोमयाः ॥ ३५ ॥

kecidabhradalaprakhyāḥ kecitpavanadehakāḥ | kecidbhramātmakā eva sarve buddhimanomayāḥ || 35 ||

Some resemble cloud petals, some have bodies of wind, some are illusory, and all are made of intellect and mind.

कुछ बादल के पंखुड़ियों के समान होते हैं, कुछ हवा के शरीर वाले होते हैं, कुछ भ्रम के समान होते हैं, और सभी बुद्धि और मन से बने होते हैं।

7.94.36

ग्रहीतुं नैव युज्यन्ते ग्रहीतुं शक्नुवन्ति नो आकाशशून्यवपुषः पश्यन्त्याकृतिमात्मनः ॥ ३६ ॥

grahītuṃ naiva yujyante grahītuṃ śaknuvanti no ākāśaśūnyavapuṣaḥ paśyantyākṛtimātmanaḥ || 36 ||

They are not capable of grasping, nor can they grasp the formless self, which is like empty space.

वे ग्रहण करने में सक्षम नहीं हैं, न ही वे आकाश के समान रूपरहित आत्मा को देख सकते हैं।

7.94.37

शीतातपादिविहितं सुखं दुःखं विदन्ति च पातुमत्तुमवष्टब्धुमीहितुं शक्नुवन्ति नो ॥ ३७ ॥

śītātapādivihitaṃ sukhaṃ duḥkhaṃ vidanti ca pātumattumavaṣṭabdhumīhitum śaknuvanti no || 37 ||

They experience pleasure and pain caused by heat and cold, but they cannot fall, rise, stay, or desire.

वे गर्मी और सर्दी से उत्पन्न सुख और दुःख का अनुभव करते हैं, लेकिन वे गिरने, उठने, ठहरने या इच्छा करने में असमर्थ हैं।

7.94.38

इच्छाद्वेषभयक्रोधलोभमोहसमन्विताः मन्त्रौषधतपोदानधैर्यधर्मवशीकृताः ॥ ३८ ॥

icchādveṣabhayakrodhalobhamohasamanvitāḥ mantrauṣadhatapodānadhairydharmavaśīkṛtāḥ || 38 ||

They are influenced by desire, hatred, fear, anger, greed, and delusion, and are controlled by mantras, medicines, austerities, charity, patience, and righteousness.

वे इच्छा, द्वेष, भय, क्रोध, लोभ और मोह से प्रभावित हैं, और मंत्र, औषधि, तप, दान, धैर्य और धर्म से नियंत्रित हैं।

7.94.39

सत्त्वावष्टम्भयन्त्रेण मन्त्रेणाराधितेन वादृश्यन्तेऽपि च गृह्यन्ते कदाचित्केनचित्क्वचित् ॥ ३९ ॥

sattvāvaṣṭambhayantreṇa mantreṇārādhitena vādṛśyante'pi ca gṛhyante kadācitkenacitkvacit || 39 ||

By the power of restraining the senses or by worshipped mantras, they sometimes become visible and can be grasped by someone, somewhere.

इंद्रियों को नियंत्रित करने की शक्ति या पूजित मंत्रों द्वारा, वे कभी-कभी दृश्यमान होते हैं और किसी के द्वारा, कहीं पकड़े जा सकते हैं।

7.94.40

देवयोनिर्हि सा तेन केचिद्देवोपमादयः केचिन्नरसमश्रीकाः केचिन्नागसमन्वयाः ॥ ४० ॥

devayonirhi sā tena keciddevopamādayaḥ kecinnarasamaśrīkāḥ kecinnāgasamanvayāḥ || 40 ||

That divine origin is indeed due to that, some are like gods, some are like humans, and some are like serpents.

वह दिव्य उत्पत्ति वास्तव में उससे है, कुछ देवताओं के समान हैं, कुछ मनुष्यों के समान हैं, और कुछ सर्पों के समान हैं।

7.94.41

श्वश्रृगालोपमाः केचिद्ग्रामजङ्गलवासिनः । कुल्यावकररथ्यासु वसन्ति निरयेषु च ॥ ४१ ॥

śvaśṛgālopamāḥ kecidgrāmajaṅgalavāsinaḥ | kulyāvakararathyāsu vasanti nirayeṣu ca || 41 ||

Some, who are like dogs and jackals, dwell in villages and forests, in wells, pits, roads, and even in hells.

कुछ लोग, जो कुत्तों और सियारों के समान हैं, गाँवों और जंगलों में, कुओं, गड्ढों, रास्तों और नरकों में रहते हैं।

7.94.42

एतदास्पदमेतेषामित्याकाराः प्रकीर्तिताः । पिशाचा एवमाचारा जन्मैषां श्रूयतामिदम् ॥ ४२ ॥

etadāspadameteṣāmityākārāḥ prakīrtitāḥ | piśācā evamācārā janmaiṣāṃ śrūyatāmidam || 42 ||

This is the abode of these beings, thus they are known by their forms. The Pishachas have such conduct, listen to their birth.

यह इन प्राणियों का निवास स्थान है, इसलिए वे अपने रूपों से जाने जाते हैं। पिशाचों का ऐसा ही व्यवहार है, उनके जन्म के बारे में सुनो।

7.94.43

अचेत्यचिन्मयं ब्रह्म सर्वशक्तिस्वभावतः । यत्स्थितं बुद्धमेवान्तश्चेत्यं संकल्पयन्निव ॥ ४३ ॥

acetyacinmayaṃ brahma sarvaśaktisvabhāvataḥ | yatsthitaṃ buddham evāntaścetyaṃ saṃkalpayanniva || 43 ||

The Brahman, which is beyond the unreal and the conscious, is inherently all-powerful. It is established as the pure consciousness within, as if imagining the conscious being.

ब्रह्म, जो अचेतन और चेतन से परे है, स्वभाव से सर्वशक्तिमान है। यह अंतर्निहित शुद्ध चेतना के रूप में स्थापित है, मानो चेतन प्राणी की कल्पना कर रहा हो।

7.94.44

तं जीवं विद्धि स प्रौढस्त्वहंकार इति स्मृतः । सोऽहंकारः स्मृतः पुष्टो मन इत्युदितात्मभिः ॥ ४४ ॥

taṃ jīvaṃ viddhi sa prauḍhastvahaṃkāra iti smṛtaḥ | so'haṃkāraḥ smṛtaḥ puṣṭo mana ityuditātmabhiḥ || 44 ||

Know that being as the individual soul, which is known as the ego. That ego, when nourished, is known as the mind by those who have realized the self.

उस प्राणी को जीव के रूप में जानो, जो अहंकार के रूप में जाना जाता है। वह अहंकार, जब पोषित होता है, तब आत्मज्ञानी लोगों द्वारा मन के रूप में जाना जाता है।

7.94.45

स एव कथ्यते ब्रह्मा सकल्पाकाशरूपवान् । असदेवासतो बीजं जगतो विगताकृतिः ॥ ४५ ॥

sa eva kathyate brahmā sakalpākāśarūpavān | asadevāsato bījaṃ jagato vigatākṛtiḥ || 45 ||

That same being is described as Brahma, having the form of the sky with imagination. It is the seed of the unreal from the unreal, devoid of form in the world.

वही प्राणी ब्रह्मा के रूप में वर्णित है, जिसका रूप कल्पना से युक्त आकाश के समान है। यह असत् से असत् का बीज है, जो संसार में रूपहीन है।

7.94.46

एवं मनःस्थितो ब्रह्मा सदेहोऽप्यमलं नभः । तत्स्वप्नपुरुषाकारः सन्नेवासद्वपुः सदा ॥ ४६ ॥

evaṃ manaḥsthito brahmā sadeho'pyamalaṃ nabhaḥ | tatsvapnapuruṣākāraḥ sannevāsadvapuḥ sadā || 46 ||

Thus, Brahma, situated in the mind, even with a body, is pure in the sky. That dream-like form is always non-existent.

इस प्रकार, मन में स्थित ब्रह्मा, शरीर के साथ भी, आकाश में शुद्ध है। वह स्वप्न-जैसा रूप हमेशा असत् है।

7.94.47

पृथ्व्यादिमूर्तिरहितस्त्वातिवाहिकदेहवान्। पृथ्व्यादयः किल कुतः संकल्पपुरुषस्य खे ॥ ४७ ॥

pṛthvyādimūrtirahitastvātivāhikadehavān | pṛthvyādayaḥ kila kutaḥ saṃkalpapuruṣasya khe || 47 ||

Devoid of earthly forms, he possesses a transcendental body. Indeed, from where do the elements like earth arise in the sky of the imagined being?

पृथ्वी जैसी मूर्तियों से रहित, वह एक पारलौकिक शरीर धारण करता है। वास्तव में, कल्पित पुरुष के आकाश में पृथ्वी जैसे तत्व कहाँ से उत्पन्न होते हैं?

7.94.48

भवन्मनो यथाकाशपुरं पश्यति कल्पितम्। तथा मनोविरञ्चित्वं पश्यत्यात्मनि कल्पितम् ॥ ४८ ॥

bhavanmano yathākāśapuraṃ paśyati kalpitam | tathā manovirañcitvaṃ paśyatyātmani kalpitam || 48 ||

Just as the mind sees a city in the sky as imagined, so too it sees the imagined creation in the self.

जैसे मन आकाश में एक कल्पित नगर को देखता है, वैसे ही वह आत्मा में कल्पित सृष्टि को देखता है।

7.94.49

यद्वेत्ति कल्पितं तत्सत्पश्यत्यनुभवत्यपि। यो यावन्मात्रकस्तत्स कस्मात्किल न पश्यति ॥ ४९ ॥

yadvetti kalpitaṃ tatsatpaśyaty anubhavatyapi | yo yāvanmātrakastatsa kasmāt kila na paśyati || 49 ||

Whatever is imagined is perceived as real and experienced. Why does one not see that which is merely imagined?

जो कुछ भी कल्पित है, वह सत्य के रूप में देखा जाता है और अनुभव किया जाता है। क्यों कोई उसे नहीं देखता जो केवल कल्पित है?

7.94.50

स यत्पश्यति तत्तादृक् शून्यात्मा शून्यमम्बरे। ब्रह्म ब्रह्मणि वा ब्रह्मा तदिदं जगदुच्यते ॥ ५० ॥

sa yatpaśyati tattādṛk śūnyātmā śūnyamambare | brahma brahmaṇi vā brahmā tadidaṃ jagaducyate || 50 ||

Whatever one sees, that is of such nature, empty in essence, empty in the sky. Brahma in Brahma, or Brahma itself, this is called the world.

जो कुछ भी कोई देखता है, वह ऐसी प्रकृति का होता है, शून्य आत्मा, शून्य आकाश में। ब्रह्मा ब्रह्मा में, या ब्रह्मा स्वयं, यह संसार कहलाता है।

7.94.51

तथा संप्रति भासोऽस्य चिरकालैकभावनात्यनीभूतः स्थितः पुष्टः सुदीर्घस्वप्नसुन्दरः ॥ ५१ ॥

tathā saṃprati bhāso'sya cirakālaikabhāvanātghanībhūtaḥ sthitaḥ puṣṭaḥ sudīrghasvapnasundaraḥ || 51 ||

Thus, now, his splendor, due to long-term single-pointed meditation, has become dense, stable, nourished, and very beautiful like a long dream.

इस प्रकार, अब, उसकी चमक, लंबे समय तक एकाग्रता से ध्यान करने के कारण, घनीभूत हो गई है, स्थिर है, पुष्ट है, और एक लंबे सपने की तरह बहुत सुंदर है।

7.94.52

आतिवाहिकदेहस्य तस्य तच्चिरभावनात्सर्गानुभवनं भूरि ब्रह्मणो ब्रह्मरूप्यपि ॥ ५२ ॥

ātivāhikadehasya tasya taccirabhāvanātsargānubhavanaṃ bhūri brahmaṇo brahmarūpyapi || 52 ||

The experience of creation from that long-term meditation is abundant for that transcendental body, even though it is of the form of Brahman.

उस लंबे समय तक ध्यान से सृष्टि का अनुभव उस पारलौकिक शरीर के लिए पर्याप्त है, भले ही वह ब्रह्म के रूप में हो।

7.94.53

गतं प्रकटतोत्कर्षादाधिभौतिकदेहताम्तेनैव सर्ग इत्युक्तो भेदसंततिभासुरः ॥ ५३ ॥

gataṃ prakaṭatotkarṣādādhibhautikadehatāmtenaiva sarga ityukto bhedasaṃtatibhāsuraḥ || 53 ||

It is said that the creation itself, which is the manifestation of excellence, has gone to the material body. It is called the creation, shining with the continuity of differences.

कहा जाता है कि सृष्टि स्वयं, जो उत्कर्ष का प्रकटीकरण है, भौतिक शरीर में चली गई है। यह सृष्टि कहलाती है, जो भेदों की निरंतरता से चमकती है।

7.94.54

स ब्रह्मा ब्रह्ममात्रात्मा ब्रह्ममात्रात्मनोस्तयोःअजातयोरेव सदा तदात्मजगतोर्द्वयोः ॥ ५४ ॥

sa brahmā brahmamātrātmā brahmamātrātmanostayoḥajātayoreva sadā tadātmajagatordvayoḥ || 54 ||

That Brahma, whose self is only Brahman, is always the self of the two unborn ones, the self of the universe.

वह ब्रह्मा, जिसका स्वयं केवल ब्रह्म है, हमेशा दो अजन्मे का स्वयं है, ब्रह्मांड का स्वयं है।

7.94.55

अभिन्नयोरेव भृशं शून्यत्वाम्बरयोरिवाएकात्म्येनैव वसतोः पवनस्पन्दयोरिव ॥ ५५ ॥

abhinnayoreva bhṛśaṃ śūnyatvāmbarayorivaaikātmyenaiva vasatoḥ pavanaspandayoriva || 55 ||

The two are indeed non-different, intensely like the void and the sky, abiding in oneness like the vibrations of the wind.

दोनों वास्तव में अभिन्न हैं, शून्यता और आकाश की तरह तीव्र रूप से, हवा की कंपनों की तरह एकता में निवास करते हुए।

7.94.56

वेत्ति भूतमयत्वं तन्मिथ्यैव न तु वास्तवम्। तथा यथा त्वं संकल्पपुरुषस्य सतोऽसतः ॥ ५६ ॥

vetti bhūtamayatvaṃ tanmithyaiva na tu vāstavam | tathā yathā tvaṃ saṃkalpapuruṣasya sato'sataḥ || 56 ||

The knower understands that the material world is merely an illusion, not real. Just as you, the person of resolve, are both real and unreal.

ज्ञाता यह समझता है कि भौतिक जगत केवल एक भ्रम है, वास्तविक नहीं | ठीक वैसे ही जैसे तुम, संकल्प पुरुष, सत् और असत् दोनों हो|

7.94.57

ततः शरीरधातूनां तेन पृथ्व्यादिकाः कृताः। अभिधाः पञ्च चित्पुष्टा जगदित्येव ताः स्थिताः ॥ ५७ ॥

tataḥ śarīradhātūnāṃ tena pṛthvyādikāḥ kṛtāḥ | abhidhāḥ pañca citpuṣṭā jagadityeva tāḥ sthitāḥ || 57 ||

From that, the elements of the body are created by the earth and other elements. These five elements, nourished by consciousness, are established as the world.

उससे, शरीर के तत्व पृथ्वी और अन्य तत्वों द्वारा बनाए जाते हैं | ये पाँच तत्व, चेतना से पोषित, जगत के रूप में स्थापित हैं|

7.94.58

यथा त्वसत्य एवायं संकल्पः सत्य एव ते। तथासावात्मसंकल्पं सत्यमेवानुभूतवान् ॥ ५८ ॥

yathā tvasy ēvāyaṃ saṃkalpaḥ satya ēva tē | tathāsāvātmasaṃkalpaṃ satyamēvānubhūtavān || 58 ||

Just as this resolve is unreal, yet real to you, so he experienced his own resolve as real.

ठीक वैसे ही जैसे यह संकल्प असत्य है, फिर भी तुम्हारे लिए सत्य है, वैसे ही उसने अपने संकल्प को सत्य के रूप में अनुभव किया|

7.94.59

स स्वयं चिन्मयाकाशः स संकल्पश्चिदम्बरम् । अतः स्वप्नो जगत्सर्वं कृतौ नाशोद्भवौ स्थितौ ॥ ५९ ॥

sa svayaṃ cinmayākāśaḥ sa saṃkalpaścidambaram | ataḥ svapno jagatsarvaṃ kṛtau nāśodbhvau sthitau || 59 ||

He himself is the sky of consciousness, he is the resolve of consciousness. Therefore, the entire world is like a dream, existing in creation and destruction.

वह स्वयं चेतना का आकाश है, वह चेतना का संकल्प है | इसलिए, पूरा जगत स्वप्न की तरह है, सृजन और विनाश में स्थित|

7.94.60

यथैवैतन्मनः सत्यं तदंशाः सत्यमेव ते । तथैव तत्कृताश्चन्द्ररुद्रार्केन्दुमरीचयः ॥ ६० ॥

yathaivaitanmanaḥ satyaṃ tadaṃśāḥ satyameva te | tathaiva tatkṛtāścandrarudrārkendumarīcayaḥ || 60 ||

Just as this mind is real, so are its parts real. Similarly, the rays of the moon, Rudra, sun, and moon are created by that.

ठीक वैसे ही जैसे यह मन सत्य है, वैसे ही उसके अंश सत्य हैं | इसी तरह, चंद्रमा, रुद्र, सूर्य और चंद्रमा की किरणें उससे बनी हैं|

7.94.61

एवं स्थिते जगज्जालं तन्मनोराज्यमुच्यते तच्च शून्यं निरालम्बमाकाशकचनं चिति ॥ ६१ ॥

evaṃ sthite jagajjālaṃ tanmanorājyamucyate tacca śūnyaṃ nirālambamākāśakacanaṃ citi || 61 ||

Thus, the world is said to be a mere illusion of the mind, which is void and without support, like the sky.

इस प्रकार, यह जगत मन का एक भ्रम कहा जाता है, जो शून्य और बिना आधार के आकाश के समान है।

7.94.62

यथा स्वप्नपुरं व्योम संकल्पाद्रिर्यथा नभः तथा ब्रह्म जगच्चैव खमेवाच्छमनाकृति ॥ ६२ ॥

yathā svapnapuraṃ vyoma saṃkalpādriryathā nabhaḥ tathā brahma jagaccaiava khamevācchamanākṛti || 62 ||

Just as a dream city is in the sky and a mountain is in the sky, so too is Brahman and the world, merely like the sky.

जैसे स्वप्न का नगर आकाश में होता है और पर्वत आकाश में होता है, वैसे ही ब्रह्म और जगत भी केवल आकाश के समान है।

7.94.63

एवमाभासमात्रस्य कचतोऽनिशमव्ययम् सर्गादिमध्यान्तदृशो मुधैवात्रोदिताः स्थिताः ॥ ६३ ॥

evamābhāsamātrasya kacato'niśamavyayam sargādimadhyāntadṛśo mudhaivātroditāḥ sthitāḥ || 63 ||

Thus, the mere appearance of the world is eternal and unchanging. The seers of creation, middle, and end are merely fools here.

इस प्रकार, जगत का केवल आभास सनातन और अविनाशी है। सृष्टि, मध्य और अंत के द्रष्टा यहाँ केवल मूर्ख हैं।

7.94.64

किंचिदाकाशकोशस्य तव वा मम वानघ जगतो वापि जायेत किं वा नश्यति मे वद ॥ ६४ ॥

kiṃcidākāśakośasya tava vā mama vānagha jagato vāpi jāyeta kiṃ vā naśyati me vada || 64 ||

Tell me, O sinless one, what arises or perishes in the sky, whether it is yours, mine, or the world's?

हे निष्पाप, मुझे बताओ, आकाश में क्या उत्पन्न होता है या नष्ट होता है, चाहे वह तुम्हारा हो, मेरा हो, या जगत का?

7.94.65

तत्किमर्थमनर्थाय निरर्थकमपार्थकाः कस्मादभ्युदिता ब्रूहि रागद्वेषभयादयः ॥ ६५ ॥

tatkimarthamanarthāya nirarthakamapārthakāḥ kasmādabhyuditā brūhi rāgadveṣabhayādayaḥ || 65 ||

Tell me, for what purpose do attachment, aversion, and fear arise, which are meaningless and without any real purpose?

मुझे बताओ, राग, द्वेष और भय किस उद्देश्य से उत्पन्न होते हैं, जो निरर्थक और बेमतलब हैं?

7.94.66

वस्तुतोऽङ्ग न सर्गादिर्न सर्गो नाप्यसर्गता । विद्यते सकृदाभातमिदमित्थं सदैव तत् ॥ ६६ ॥

vastuto'ṅga na sargādirna sargo nāpyasargatā | vidyate sakṛdābhātamidamitthaṃ sadaiva tat || 66 ||

In reality, there is no creation, no destruction, nor any state of being created or destroyed. Everything appears as it is, eternally.

वास्तव में, न तो सृष्टि है, न विनाश, न ही सृष्टि या विनाश की कोई अवस्था। सब कुछ ऐसे ही प्रकट होता है, जैसा है, सदा के लिए।

7.94.67

आशून्ये विपुलाभोगे स्वच्छचिज्जलपूरिते । कलनापङ्ककलिले भविष्यति चिदम्बरे ॥ ६७ ॥

āśūnye vipulābhoge svacchacijjalapūrite | kalanāpaṅkakalile bhaviṣyati cidambare || 67 ||

In the vast, empty space filled with pure consciousness, devoid of any impurities or blemishes, the pure consciousness will manifest.

विशाल, खाली अंतरिक्ष में, जो शुद्ध चेतना से भरा हुआ है, जिसमें कोई दोष या कलंक नहीं है, वहाँ शुद्ध चेतना प्रकट होगी।

7.94.68

अन्तरिक्षाक्षयक्षेत्रे खात्मनो गगनात्मिका । तस्माद्बीजादियं जाता भूरिभूतशिलावलिः ॥ ६८ ॥

antarikṣākṣayakṣetre khātmano gaganātmikā | tasmādbījādiyaṃ jātā bhūribhūtaśilāvaliḥ || 68 ||

In the infinite space of the sky, which is the essence of emptiness, from that seed, this vast array of elements and stones has arisen.

अंतरिक्ष के अनंत क्षेत्र में, जो खालीपन का सार है, उस बीज से यह विशाल तत्वों और पत्थरों की श्रृंखला उत्पन्न हुई है।

7.94.69

नास्ति किंचिदिह क्षेत्रं व्युप्तं नाम न किंचन । न बीजमस्ति नो जातं किंचित्सर्वं च संस्थितम् ॥ ६९ ॥

nāsti kiṃcidiha kṣetraṃ vyuptaṃ nāma na kiṃcana | na bījamasti no jātaṃ kiṃcitsarvaṃ ca saṃsthitam || 69 ||

There is no field here that is empty, nor is there any seed that has arisen. Everything is established as it is.

यहाँ कोई खाली क्षेत्र नहीं है, न ही कोई बीज उत्पन्न हुआ है। सब कुछ ऐसे ही स्थापित है।

7.94.70

याः शिलावलयस्तत्र पुष्टास्ता विबुधादयः । यास्तु वर्णोज्ज्वला एताः स्वास्थिता बुद्धबुद्धयः ॥ ७० ॥

yāḥ śilāvalayastatra puṣṭāstā vibudhādayaḥ | yāstu varṇojjvalā etāḥ svāsthitā buddhabuddhayaḥ || 70 ||

Those who are well-nourished among the array of stones are the gods and others. Those who are radiant in color are the Buddhas, established in their own state.

जो पत्थरों की श्रृंखला में पुष्ट हैं, वे देवता और अन्य हैं। जो रंग में उज्ज्वल हैं, वे बुद्ध हैं, जो अपनी अवस्था में स्थापित हैं।

7.94.71

यास्त्वर्धपक्वास्ता एता नरनागादिजातयः । यास्त्वाश्याना रजोनष्टास्ताः कृमिस्थावरादयः ॥ ७१ ॥

yāstv ardhapakvāstā etā naranāgādijātayaḥ | yāstvāśyānā rajonaṣṭāstāḥ kṛmisthāvarādayaḥ || 71 ||

Those who are half-baked are of human and serpent lineages. Those who are inedible, devoid of passion, are worms and immovable beings.

जो अधपक्व हैं, वे मनुष्य और नाग जातियों के हैं। जो अखाद्य हैं, रजोरहित हैं, वे कीड़े और अचल प्राणियों के हैं।

7.94.72

यास्तु गुर्व्यः फलैर्हीनाः शून्याकाराः क्षयक्षताः । अशरीराः शरीरिण्यस्ताःपिशाचादिकाः स्मृताः ॥ ७२ ॥

yāstu gurvyaḥ phalairhīnāḥ śūnyākārāḥ kṣayakṣatāḥ | aśarīrāḥ śarīriṇyastāḥpiśācādikāḥ smṛtāḥ || 72 ||

Those who are heavy, devoid of fruits, empty in form, decayed, without a body, yet embodied, are considered as ghosts and similar beings.

जो भारी हैं, फलों से रहित हैं, रूप में खाली हैं, क्षय से क्षतिग्रस्त हैं, शरीर रहित हैं, फिर भी शरीर युक्त हैं, वे पिशाच और उसी प्रकार के प्राणियों के रूप में माने जाते हैं।

7.94.73

न हि संकल्पितुः स्वेच्छा क्वचित्पर्यनुयुज्यते । तास्तथेच्छा विरिञ्चस्य तथा नाम तथोदिताः ॥ ७३ ॥

na hi saṃkalpitur svacchā kvacit paryanuyujyate | tāstathaicchā viriñcasya tathā nāma tathoditāḥ || 73 ||

Indeed, the will of the determined one is not followed anywhere. Those are thus willed by Brahma, thus named, and thus spoken of.

वास्तव में, निश्चित करने वाले की इच्छा कहीं भी नहीं मानी जाती। वे ब्रह्मा द्वारा ऐसे ही इच्छित हैं, ऐसे ही नाम दिए गए हैं, और ऐसे ही कहे जाते हैं।

7.94.74

सर्वा एव चिदाकाशरूपिण्यो भूतजातयः । आतिवाहिकदेहिन्यः पृथ्व्यादिरहितात्मिकाः ॥ ७४ ॥

sarvā eva cidākāśarūpiṇyo bhūtajātayaḥ | ātivāhikadehinyaḥ pṛthvyādirahitātmikāḥ || 74 ||

All these beings are of the nature of pure consciousness, transcending the physical body, devoid of the elements like earth, etc.

ये सभी प्राणी शुद्ध चेतना के स्वरूप के हैं, शारीरिक देह से परे हैं, पृथ्वी जैसे तत्वों से रहित हैं।

7.94.75

ताश्चिराभ्यासवशतस्त्वाधिभौतिकसंविदम् । प्राप्ता दीर्घानुभवनात्स्वप्नजाग्रद्दशामिव ॥ ७५ ॥

tāścirābhyāsavaśatastvādhibhautikasaṃvidam | prāptā dīrghānubhavanātsvapnajāgraddaśāmiva || 75 ||

Those, due to long practice, have attained the material consciousness, as if experiencing the dream and waking states for a long time.

वे, लंबे समय से अभ्यास के कारण, भौतिक चेतना को प्राप्त हो गए हैं, जैसे कि दीर्घकाल तक स्वप्न और जागृत अवस्था का अनुभव कर रहे हों।

7.94.76

पिशाचाद्यास्तथा एते तथाभूताधिभौतिकाः । तिष्ठन्ति तुष्टमनसः स्वसंसारविहारिणः ॥ ७६ ॥

piśācādyāstathā ete tathābhūtādhibhautikāḥ | tiṣṭhanti tuṣṭamanasaḥ svasaṃsāravihāriṇaḥ || 76 ||

These beings, such as Pishachas, are of a similar material nature and remain content in their own worldly activities.

ये पिशाच आदि प्राणी भौतिक स्वभाव के हैं और अपने संसारिक विहारों में संतुष्ट रहते हैं।

7.94.77

पश्यन्ति काश्चिदन्योन्यं ग्राम्या ग्राम्येयकानिव । स्वप्नैकलोकवास्तव्या इवैता भूतजातयः ॥ ७७ ॥

paśyanti kāścidanyonyaṃ grāmyā grāmyeyakāniva | svapnaikalokavāstyā ivaetā bhūtajātayaḥ || 77 ||

Some of these beings see each other like villagers seeing village things, as if they are living in a dream-like world.

इनमें से कुछ प्राणी एक-दूसरे को गाँव वालों की तरह देखते हैं, जैसे कि वे एक स्वप्न-सदृश जगत में रह रहे हों।

7.94.78

काश्चिद्बहुनरप्राप्तस्वप्ननिर्माणलोकवत् । नान्योन्यमपि पश्यन्ति नानासंस्थानसंस्थिताः ॥ ७८ ॥

kāścidvahunaraprāptasvapnanirmāṇalokavat | nānyonyamapi paśyanti nānāsaṃsthānasaṃsthitāḥ || 78 ||

Some beings, like those in a dream-created world, do not see each other, being situated in various different states.

कुछ प्राणी, जैसे स्वप्न-निर्मित जगत में, एक-दूसरे को नहीं देखते, क्योंकि वे विभिन्न अवस्थाओं में स्थित हैं।

7.94.79

स्थिता यथैता जगति पिशाचाद्याः कुजातयः । प्रायस्तथैताः कुम्भाण्डयक्षप्रेतादयः स्थिताः ॥ ७९ ॥

sthitā yathaitā jagati piśācādyāḥ kujātayaḥ | prāyastathaitāḥ kumbhāṇḍayakṣapretādayaḥ sthitāḥ || 79 ||

Just as these Pishachas and other lowly beings exist in the world, similarly, beings like Kumbhandas, Yakshas, and Pretas also exist.

जैसे ये पिशाच आदि नीच जाति के प्राणी जगत में स्थित हैं, वैसे ही कुम्भाण्ड, यक्ष और प्रेत आदि भी स्थित हैं।

7.94.80

यथा यत्रेह वै निम्ना जलं तत्रावतिष्ठते । तथा यत्र पिशाचाद्यास्तमस्तत्रावतिष्ठते ॥ ८० ॥

yathā yatreha vai nimnā jalaṃ tatrāvatiṣṭhate | tathā yatra piśācādyāstamastatrāvatiṣṭhate || 80 ||

Just as water settles in a low place, similarly, Pishachas and other beings settle where there is darkness.

जैसे पानी नीचे स्थान पर जम जाता है, वैसे ही पिशाच आदि प्राणी अंधकार के स्थान पर जम जाते हैं।

7.94.81

मध्याह्नेपि पिशाचश्चेदजिरे तिष्ठति स्वयम् । तत्तस्यान्धं तमस्तत्र संनिधानं करोत्यलम् ॥ ८१ ॥

madhyāhnepi piśācaścedajire tiṣṭhati svayam | tattasyāndhaṃ tamastatra sannidhānaṃ karotyalam || 81 ||

Even at noon, if a demon (piśāca) stands there, it creates a dense darkness in that place.

दोपहर में भी अगर कोई पिशाच वहाँ खड़ा होता है, तो वह उस स्थान पर घना अंधेरा उत्पन्न करता है।

7.94.82

न निहन्ति च तद्भानुर्न चान्यस्तत्प्रपश्यति । स एव चानुभवति पश्य मायाविजृम्भितम् ॥ ८२ ॥

na nihanti ca tadbhānurna cānyastatprapaśyati | sa eva cānubhavati paśya māyāvijṛmbhitam || 82 ||

The sun (bhānu) does not dispel that darkness, nor does anyone else see it. Only the demon itself experiences this darkness, which is a manifestation of its own illusory power (māyā).

सूर्य (भानु) उस अंधेरे को दूर नहीं करता है, न ही कोई और उसे देखता है। केवल पिशाच ही इस अंधेरे का अनुभव करता है, जो उसकी अपनी भ्रामक शक्ति (माया) का प्रकटीकरण है।

7.94.83

अग्नेरादित्यचन्द्रादेस्तैजसं मण्डलं यथा । पिशाचादेरजन्यात्म तामसं मण्डलं तथा ॥ ८३ ॥

agnirādityacandrādestaijasaṃ maṇḍalaṃ yathā | piśācāderajanyātma tāmasaṃ maṇḍalaṃ tathā || 83 ||

Just as the luminous sphere of fire, sun, and moon is bright, the dark sphere of the demon is similarly dark.

जैसे अग्नि, सूर्य और चंद्रमा का तेजस्वी मण्डल उज्ज्वल होता है, वैसे ही पिशाच का तामसिक मण्डल अंधकारमय होता है।

7.94.84

याति तेजस्यनोजस्त्वं तमस्योजःप्रधानताम् । उलूकवत्पिशाचाद्या आश्चर्यं तत्स्वभावतः ॥ ८४ ॥

yāti tejasyanojastvaṃ tamasyojahpradhānatām | ulūkavatpiśācādyā āścaryaṃ tatsvabhāvataḥ || 84 ||

The brilliance of light diminishes, and the darkness becomes predominant. Like an owl, the demon is astonishing by nature.

प्रकाश की चमक घटती है, और अंधेरा प्रधान हो जाता है। उल्लू की तरह, पिशाच अपने स्वभाव से आश्चर्यजनक होता है।

7.94.85

एषा पिशाचाजनितस्य जातिः प्रोक्ता मया ते समयानपेता । पिशाचतुल्यः सुरलोकपाललोकेषु जातोऽहमिति प्रसङ्गात् ॥ ८५ ॥

eṣā piśācājanitasya jātiḥ proktā mayā te samayānapetā | piśācatulyaḥ suralokapālalokeṣu jāto'hamiti prasaṅgāt || 85 ||

This is the nature of the demon-born, as explained to you by me, without any doubt. By circumstance, I am born in the world of the gods, similar to a demon.

यह पिशाच-जनित जाति का स्वभाव है, जैसा कि मैंने तुम्हें बिना किसी संदेह के बताया है। परिस्थितियों के कारण, मैं देवलोक में पिशाच की तरह पैदा हुआ हूँ।

Chapter 95

7.95.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ततश्चिदाकाशवपुर्भूतपञ्चकवर्जितः । विहरन्नहमाकाशे पिशाच इव संस्थितः ॥ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tataścidākāśavapurbhūtapañcakavarjitaḥ | viharannahamākāśe piśāca iva saṃsthitaḥ || 1 ||

Shri Vasishtha said: Then, devoid of the five elements, I wandered in the sky like a ghost.

श्री वसिष्ठ ने कहा: तदनन्तर, पंचभूतों से रहित, मैं आकाश में पिशाच की तरह भटकता रहा।

7.95.2

न मां पश्यन्ति चन्द्रार्कशक्रा हरिहरादयः । न देवसिद्धगन्धर्वकिंनरा नाप्सरोगणाः ॥ ॥ २ ॥

na māṃ paśyanti candrārkaśakrā hariharādayaḥ | na devasiddhagandharvakiṃnarā nāpsaroganāḥ || 2 ||

Neither the moon, sun, Indra, Vishnu, Shiva, nor the gods, siddhas, gandharvas, kinnaras, and apsaras see me.

न चन्द्रमा, सूर्य, इन्द्र, विष्णु, शिव, न देवता, सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर और अप्सराएँ मुझे देखते हैं।

7.95.3

नाक्रामन्ति मयाक्रान्ता न च श्रृण्वन्ति मद्वचः । इत्यहं मोहमापन्नो विक्रीत इव सज्जनः ॥ ॥ ३ ॥

nākrāmanti mayākrāntā na ca śrṛṇvanti madvacaḥ | ityahaṃ mohamāpanno vikrīta iva sajjanaḥ || 3 ||

They do not approach me, nor do they hear my words. Thus, I am deluded, like a noble person who is sold.

वे मेरे पास नहीं आते, न ही मेरी बात सुनते हैं। इस प्रकार, मैं मोहित हूँ, जैसे कोई सज्जन व्यक्ति बेच दिया गया हो।

7.95.4

अथ चिन्तितवानस्मि सत्यकामा इमे वयम् । पश्यन्तु मां सुरगणास्तेन तस्मिन्सुरालये ॥ ॥ ४ ॥

atha cintitavānasmī satyakāmā ime vayam | paśyantu māṃ suragaṇāsten tasmin surālaye || 4 ||

Then I thought, 'We are truth-seekers. Let the gods see me in their abode.'

तब मैंने सोचा, 'हम सत्य की इच्छा रखने वाले हैं। देवताओं को मुझे अपने निवास में देखना चाहिए।'

7.95.5

द्रष्टुं प्रवृत्ता मामग्रे वास्तव्याः सर्व एव ते । झटित्येव पुरं प्राप्तमिन्द्रजालद्रुमं यथा ॥ ॥ ५ ॥

draṣṭuṃ pravṛttā māmagre vāstavyāḥ sarva eva te | jhaṭityeva puraṃ prāptamindrajāladrumaṃ yathā || 5 ||

To see me, all of them should come forward and stay. Immediately, the city was reached, like an Indrajala tree.

मुझे देखने के लिए, सभी को आगे आना चाहिए और रहना चाहिए। तुरंत, नगर पहुँच गया, जैसे इन्द्रजाल वृक्ष।

7.95.6

अथ गीर्वाणगेहेषु संपन्नो व्यवहार्यहम्यथास्थितसमाचारः स्थितो निःशङ्कचेष्टितः ॥ ६ ॥

atha gīrvāṇageheṣu saṃpanno vyavahāryahamyathāsthitasamācāraḥ sthito niḥśaṅkaceṣṭitaḥ || 6 ||

Then, in the houses of the gods, I am well-versed in worldly affairs, established in proper conduct, and acting without fear.

फिर, देवताओं के घरों में, मैं संसार के व्यवहार में कुशल हूँ, उचित आचरण में स्थित हूँ, और निडर कार्य करता हूँ।

7.95.7

यैरविज्ञातवृत्तान्तैर्दृष्टोऽहमजिरोत्थितःवसिष्ठः पार्थिव इति लोकेषु प्रथितोऽस्मि तैः ॥ ७ ॥

yairavijñātavṛttāntairdṛṣṭo'hamajirotthitaḥvasiṣṭhaḥ pārthiva iti lokeṣu prathito'smi taiḥ || 7 ||

By those who do not know the truth, I am seen as one who has arisen from the unborn, known as Vasiṣṭha, the earthly one, thus I am famous in the worlds.

जिन्होंने सत्य को नहीं जाना है, उनके द्वारा मैं अजन्मा से उत्पन्न दिखाई देता हूँ, वसिष्ठ के रूप में, पृथ्वी पर, इस प्रकार मैं लोकों में प्रसिद्ध हूँ।

7.95.8

व्योमन्यादित्यरश्मिभ्यो दृष्टोऽहं यैर्नभोगतैःवसिष्ठस्तैजस इति लोकेषु प्रथितोऽस्मि तैः ॥ ८ ॥

vyomanyādityaraśmibhyo dṛṣṭo'haṃ yairnabhogataiḥvasiṣṭhastaijasa iti lokeṣu prathito'smi taiḥ || 8 ||

By those who have come from the sky, I am seen from the rays of the sun, known as Vasiṣṭha, the radiant one, thus I am famous in the worlds.

जिन्होंने आकाश से आने वालों द्वारा, मैं सूर्य की किरणों से दिखाई देता हूँ, वसिष्ठ के रूप में, चमकदार, इस प्रकार मैं लोकों में प्रसिद्ध हूँ।

7.95.9

वातात्समुदितो दृष्टो यैरहं गगनास्पदैःसिद्धैर्वातवसिष्ठाख्यस्तैरहं समुदाहृतः ॥ ९ ॥

vātātsamudito dṛṣṭo yairahaṃ gaganāspadaiḥsiddhairvātavasiṣṭhākhyastairahaṃ samudāhṛtaḥ || 9 ||

By those who have arisen from the wind, I am seen in the sky, known as Vātavasiṣṭha, the accomplished one, thus I am proclaimed.

जिन्होंने हवा से उत्पन्न होने वालों द्वारा, मैं आकाश में दिखाई देता हूँ, वातवसिष्ठ के रूप में, सिद्ध, इस प्रकार मैं घोषित हूँ।

7.95.10

यैरहं सलिलाद्दृष्टः प्रोत्थितस्तैर्मुनीश्वरैःउक्तो वारिवसिष्ठोऽहमिति मे जन्मसंततिः ॥ १० ॥

yairahaṃ salilāddṛṣṭaḥ protthitastairmunīśvaraiḥukto vārivasiṣṭho'hamiti me janmasaṃtatiḥ || 10 ||

By those great sages who have arisen from the water, I am seen and known as Vārivasiṣṭha, thus is my lineage.

जिन महान ऋषियों द्वारा जो पानी से उत्पन्न हुए हैं, मैं दिखाई देता हूँ और वारिवसिष्ठ के रूप में जाना जाता हूँ, इस प्रकार मेरी वंशावली है।

7.95.11

ततःप्रभृति लोकेऽहं पार्थिवः प्रथितः क्वचितम्मयः क्वचिदन्येषां तैजसो मारुतः क्वचित ॥ ११ ॥

tataḥprabhṛti loke'haṃ pārthivaḥ prathitaḥ kvacitammayaḥ kvacidanyeṣāṃ taijaso mārutaḥ kvacit || 11 ||

Since then, I have been known in the world sometimes as a king, sometimes as myself, sometimes as others, sometimes as fiery, and sometimes as windy.

तब से, मैं दुनिया में कभी राजा के रूप में, कभी अपने रूप में, कभी दूसरों के रूप में, कभी अग्नि के रूप में और कभी वायु के रूप में जाना जाता हूँ।

7.95.12

अथ कालेन मे तत्र तस्मिन्नेवातिवाहिकेऽधिभौतिकता देहे रूढा रूढान्तरेरिता ॥ १२ ॥

atha kālena me tatra tasminnevātivāhikeādhibhautikatā dehe rūḍhā rūḍhāntareritā || 12 ||

Then, over time, in that very excessive vehicle, the physical nature became firmly established in my body, and the inner nature became firmly established.

फिर, समय के साथ, उसी अतिशय वाहन में, भौतिक प्रकृति मेरे शरीर में दृढ़ता से स्थापित हो गई, और आंतरिक प्रकृति भी दृढ़ता से स्थापित हो गई।

7.95.13

यदेतदातिवाहित्वमाधिभौतिकता च खम्द्वयमप्येकदेहात्म ततः कचति मे चितिः ॥ १३ ॥

yadetadātivāhitvamādhibhautikatā ca khamdvayamapyekadehātma tataḥ kacati me citiḥ || 13 ||

This excessive vehicular nature and physical nature, both being one with the body, therefore my consciousness shines.

यह अतिशय वाहन प्रकृति और भौतिक प्रकृति, दोनों शरीर के साथ एक होने के कारण, मेरी चेतना चमकती है।

7.95.14

एवमात्मा क्वचिद्व्योम कचनात्माप्यहं नभःपरमेव निराकारं युष्मास्वाकारवानपि ॥ १४ ॥

evamātma kvacidvyoma kacanātmāpyahaṃ nabhaḥparameva nirākāraṃ yuṣmāsvākāravānapi || 14 ||

Thus, sometimes I am the sky, sometimes I am myself, and in the supreme formless state, I am also formless among you.

इस प्रकार, कभी मैं आकाश हूँ, कभी मैं स्वयं हूँ, और परम निराकार अवस्था में, मैं आप लोगों में भी निराकार हूँ।

7.95.15

जीवन्मुक्तो व्यवहरंस्तथास्ते ब्रह्मखात्मकःतथैवादेहमुक्तोऽपि तिष्ठति ब्रह्ममात्रकः ॥ १५ ॥

jīvanmukto vyavaharaṃstathāste brahmakhātmakaḥtathaivādehamukto'pi tiṣṭhati brahmamātrakaḥ || 15 ||

The liberated one engages in worldly activities, thus remaining in the nature of Brahman. Similarly, even after giving up the body, one remains in the pure state of Brahman.

मुक्त व्यक्ति संसारिक गतिविधियों में लगा रहता है, इस प्रकार ब्रह्म की प्रकृति में रहता है। इसी प्रकार, शरीर को छोड़ने के बाद भी, वह ब्रह्म की शुद्ध अवस्था में रहता है।

7.95.16

मम न ब्रह्मतापेता तादृग्व्यवहृतेरपिअसंभवादन्यदृशो युष्मदादिष्वहं त्वहम् ॥ १६ ॥

mama na brahmatāpetā tādṛgvyavahṛterapiasaṃbhavādanyadṛśo yuṣmadādiṣvahaṃ tvaham || 16 ||

I am not tainted by the actions of Brahman, nor by any other perceptions in you and others, due to the impossibility of such occurrences.

मैं ब्रह्म के कर्मों से दूषित नहीं हूँ, न ही आप और दूसरों में किसी अन्य दृष्टि से, ऐसे घटनाक्रम की असंभावना के कारण।

7.95.17

यथाऽज्ञस्य स्वप्ननरे निर्जन्मनि निराकृतौआधिभौतिकताबुद्धिस्तथा मे जगतोऽपि च ॥ १७ ॥

yathā'jñasya svapnanare nirjanmani nirākṛtauādhibhautikatābuddhistathā me jagatopi ca || 17 ||

Just as an ignorant person perceives a dream character as real, without birth or form, and with materialistic thoughts, so too is the world to me.

जैसे एक अज्ञानी व्यक्ति सपने में एक पात्र को वास्तविक मानता है, जिसका जन्म या रूप नहीं होता, और भौतिक विचारों से भरा होता है, वैसे ही यह संसार मुझे लगता है।

7.95.18

एवमेवावभासन्ते सर्व एव स्वयंभुवःसर्गाश्च न तु जायन्ते प्रयाता इव चोदिताः ॥ १८ ॥

evamevāvabhāsante sarva eva svayaṃbhuvaḥsargāśca na tu jāyante prayātā iva coditāḥ || 18 ||

Thus, all self-existent beings appear, but creations do not actually arise, as if they are merely set in motion.

इस प्रकार, सभी स्वयंभू प्राणी प्रकट होते हैं, लेकिन सृष्टि वास्तव में उत्पन्न नहीं होती, मानो वे केवल चलाए गए हों।

7.95.19

एष सोऽहमिहाकाशवसिष्ठः पुष्टतामिवगतोऽद्य स्वात्मनाभ्यासाद्भवतां वा भवत्स्थितिः ॥ १९ ॥

eṣa sohamihākāśavasiṣṭhaḥ puṣṭatāmivagato'dya svātmanābhyāsādbhavatāṃ vā bhavatsthitiḥ || 19 ||

This I, Vasistha, am here in the sky, as if I have attained prosperity today through the practice of my own self, or may your existence be.

यह मैं, वसिष्ठ, आकाश में हूँ, मानो मैंने आज अपने स्वयं के अभ्यास से समृद्धि प्राप्त की है, या आपका अस्तित्व हो।

7.95.20

आकाशात्मान एव एते सर्व एव स्वयंभुवःयथा त्वेतन्मनोमात्रमिमे सर्गास्तथैव हि ॥ २० ॥

ākāśātmāna evaite sarva eva svayaṃbhuvaḥyathā tvetanmanomātramime sargāstathaiva hi || 20 ||

All these are indeed the self of the sky, all self-existent. Just as these creations are merely mental, so it is.

ये सभी वास्तव में आकाश के आत्मा हैं, सभी स्वयंभू हैं। जैसे ये सृष्टियाँ केवल मानसिक हैं, वैसे ही यह है।

7.95.21

अहमादिरयं सर्गस्त्वपरिज्ञानदोषतः । वेताल इव बालानां गतो वो वज्रसारताम् ॥ २१ ॥

ahamādirayaṃ sargastvaparijñānadoṣataḥ | vetāla iva bālānāṃ gato vo vajrasāratām || 21 ||

I am the cause of this creation, due to the fault of ignorance. Like a ghost among children, it has become as hard as a thunderbolt.

मैं इस सृष्टि का कारण हूँ, अज्ञान के दोष के कारण। बच्चों के बीच भूत की तरह, यह वज्र के समान कठोर हो गया है।

7.95.22

परिज्ञातस्तु कालेन स्वल्पेनैवोपशाम्यति । वासनातानवात्स्नेहो बन्धौ दूरगते यथा ॥ २२ ॥

parijñātastu kālena svalpenaivopaśāmyati | vāsanātānavātsneho bandhau dūragate yathā || 22 ||

When known, it is quickly pacified in a short time. Like the attachment to the body, it subsides when the bond is far away.

जब जाना जाता है, तो यह थोड़े समय में शान्त हो जाता है। शरीर के प्रति आसक्ति की तरह, यह दूर होने पर शान्त हो जाता है।

7.95.23

घनत्वमहमासाद्य तथा सर्गस्य शाम्यति । परिज्ञाता यथा स्वप्ननिधेरादेयभावना ॥ २३ ॥

ghanatvamahamāsādya tathā sargasya śāmyati | parijñātā yathā svapnanidherādeyabhāvanā || 23 ||

Having attained the state of density, thus the creation is pacified. Like the perception of a dream treasure, it is known.

घनत्व की स्थिति प्राप्त करने पर, इस प्रकार सृष्टि शान्त हो जाती है। स्वप्न के खजाने की तरह, यह जाना जाता है।

7.95.24

शाम्यन्ति संपरिज्ञाताः सकला दृश्यदृष्टयः । यथा मरुनदीवेगवारिग्रहणबुद्धयः ॥ २४ ॥

śāmyanti saṃparijñātāḥ sakalā dṛśyadṛṣṭayaḥ | yathā marunadīvegavārigrahaṇabuddhayaḥ || 24 ||

All perceptions of the seen and the unseen are pacified when known. Like the perception of grasping the water of a mirage.

सभी दृश्य और अदृश्य की धारणाएँ जानने पर शान्त हो जाती हैं। मरीचिका के जल को ग्रहण करने की धारणा की तरह।

7.95.25

महारामायणप्रायशास्त्रप्रेक्षणमात्रतः । एतदासाद्यते नित्यं किमेतावति दुष्करम् ॥ २५ ॥

mahārāmāyaṇaprāyaśāstrapreṣaṇamātrataḥ | etadāsādyate nityaṃ kimetāvati duṣkaram || 25 ||

By merely studying the scriptures, which are like the great Rāmāyaṇa, this is always attained. What is so difficult in this?

केवल शास्त्रों का अध्ययन करके, जो महान रामायण के समान हैं, यह हमेशा प्राप्त होता है। इसमें क्या कठिन है?

7.95.26

संसारवासनाभावरूपे सक्ता नु यस्य धीः । मन्दो मोक्षे निराकाङ्क्षी स श्वा कीटोऽथवा जनः ॥ २६ ॥

saṃsāravāsanābhāvarūpe saktā nu yasya dhīḥ | mando mokṣe nirākāṅkṣī sa śvā kīṭo'thavā janaḥ || 26 ||

One whose mind is attached to worldly desires is indeed dull and lacks the desire for liberation. Such a person is like a dog or an insect.

जिसका मन संसार की वासनाओं में आसक्त है, वह मूर्ख है और मोक्ष की इच्छा नहीं रखता | ऐसा व्यक्ति कुत्ते या कीड़े के समान है |

7.95.27

भोगाभोगः किलायं यः स जीवन्मुक्तबुद्धिना । कीदृशो भुज्यमानः स्यात्कीदृक्स्यान्मौर्ख्यसेविना ॥ २७ ॥

bhogābhogaḥ kilāyaṃ yaḥ sa jīvanmuktabuddhinā | kīdṛśo bhujyamānaḥ syātkīdṛksyānmaukhyasevinā || 27 ||

The enjoyment and non-enjoyment of worldly pleasures are experienced differently by one who is liberated in life and by one who is foolish.

संसार के भोग और अभोग का अनुभव जीवन्मुक्त बुद्धि वाले व्यक्ति और मूर्ख व्यक्ति द्वारा अलग-अलग तरीके से किया जाता है |

7.95.28

महारामायणप्रायशास्त्रप्रेक्षणमात्रतः । अन्तःशीतलतोदेति परार्थेषु हिमोपमा ॥ २८ ॥

mahārāmāyaṇaprāyaśāstraprēkṣaṇamātrataḥ | antaḥśītalatodeti parārthēṣu himopamā || 28 ||

Even a mere glance at the scriptures like the Maharamayana brings inner coolness and is like the coolness of snow in the affairs of others.

महारामायण जैसे शास्त्रों पर एक नजर डालना भी अंतर्मन को शीतलता प्रदान करता है और दूसरों के मामलों में बर्फ की तरह ठंडा होता है |

7.95.29

मोक्षः शीतलचित्तत्वं बन्धः संतप्तचित्तता । एतस्मिन्नपि नार्थित्वमहो लोकस्य मूढता ॥ २९ ॥

mokṣaḥ śītalacittatvaṃ bandhaḥ saṃtapta cittatā | etasminnapi nārthitvamaho lokasya mūḍhatā || 29 ||

Liberation is the state of a cool mind, while bondage is the state of a tormented mind. Alas, the world does not understand this.

मोक्ष शीतल मन की अवस्था है, जबकि बंधन संतप्त मन की अवस्था है | अफसोस, संसार इसे नहीं समझता |

7.95.30

अयं प्रकृत्या विषयैर्वशीकृतः परस्परं स्त्रीधनलोलुपो जनः । यथार्थसंदर्शनतः सुखी भवेन्मुमुक्षुशास्त्रार्थविचारणादितः ॥ ३० ॥

ayaṃ prakṛtyā viṣayairvaśīkṛtaḥ parasparaṃ strīdhanalolupo janaḥ | yathārthasandarśanataḥ sukhī bhavenmumukṣuśāstrārthavicāraṇāditaḥ || 30 ||

This person, naturally enslaved by worldly objects, is greedy for women and wealth. However, through the correct perception of reality and the study of scriptures, one can become happy and attain liberation.

यह व्यक्ति प्रकृति से विषयों द्वारा वश में किया गया है, और स्त्री और धन के लिए लालायित है | फिर भी, वास्तविकता के सही दर्शन और शास्त्रों के अध्ययन से, वह सुखी हो सकता है और मुक्ति प्राप्त कर सकता है |

7.95.31

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्तवत्यथ मुनौ दिवसो जगाम सायंतनाय विधयेऽस्तमिनो जगाम । स्नातुं सभा कृतनमस्करणा जगाम श्यामाक्षये रविकरैश्च सहाजगाम ॥ ३१ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityuktavatyatha munau divaso jagāma sāyanatanāya vidhaye'stamino jagāma | snātuṃ sabhā kṛtnamaskarṇā jagāma śyāmākṣaye ravikaraiśca sahājagāma || 31 ||

Thus spoke Valmiki: After the sage had spoken, the day ended and the sun set. The assembly, having paid their respects, went to bathe as the dark-eyed night approached, accompanied by the rays of the sun.

श्रीवाल्मीकि ने कहा: मुनि के कहने के बाद, दिन समाप्त हो गया और सूर्य अस्त हो गया। सभा, जिसने अपना प्रणाम किया था, स्नान करने के लिए गई जब काली आँखों वाली रात आई, सूर्य की किरणों के साथ।

Chapter 96

7.96.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । पाषाणाख्यानमेतत्ते कथितं कार्यकोविद । अनयेमाः स्फुरद्दृष्ट्या सृष्टयो नभसि स्थिताः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pāṣāṇākhyānametatte kathitaṃ kāryakovida | anayemāḥ sphuraddṛṣṭyā sṛṣṭayo nabhasi sthitāḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: This story of the stone has been told to you, O wise one| By this, these creations shine in the sky

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह पत्थर की कहानी तुम्हें बताई गई है, हे कार्यकुशल| इससे ये सृष्टियाँ आकाश में चमकती हैं

7.96.2

न च स्थितं किंचनापि क्वचनापि कदाचन । स्थितं ब्रह्मघने ब्रह्म यथास्थितमखण्डितम् ॥ २ ॥

na ca sthitaṃ kiṃcanāpi kvacanāpi kadācana | sthitaṃ brahmaghane brahma yathāsthitamakhṇḍitam || 2 ||

Nothing is ever established anywhere at any time| Brahman is established in the abode of Brahman, as it is, unbroken

कभी भी कहीं भी कुछ भी स्थिर नहीं होता| ब्रह्म ब्रह्म के घर में जैसा है, अखंडित रूप में स्थिर है

7.96.3

ब्रह्म चिन्मात्रकं विद्धि तद्यथा स्वप्नदृष्टिषु । पुरं भवन्निजाद्रूपान्न कदाचन भिद्यते ॥ ३ ॥

brahma cinmātrakaṃ viddhi tadyathā svapnadṛṣṭiṣu | puraṃ bhavanni jādrūpānna kadācana bhidyate || 3 ||

Know Brahman as pure consciousness| Just as in dream visions, the city does not differ from one's own form at any time

ब्रह्म को शुद्ध चेतना के रूप में जानो| जैसे स्वप्न दृश्यों में, नगर कभी भी अपने स्वरूप से भिन्न नहीं होता

7.96.4

स्वयंभूत्वसमापत्तौ तथा दृश्यव्यवस्थितौ । स्वरूपमजहत्त्वेव चिदाकाशमजं स्थितम् ॥ ४ ॥

svayaṃbhūtvasamāpattau tathā dṛśyavyavasthitau | svarūpamajahattveva cidākāśamajaṃ sthitam || 4 ||

In the attainment of self-existence and in the arrangement of the visible| The true form is not abandoned, the unborn space of consciousness is established

स्वयंभूत्व की प्राप्ति और दृश्य की व्यवस्था में| स्वरूप को छोड़ा नहीं जाता, अजन्मा चेतना का आकाश स्थापित है

7.96.5

न स्वयंभूर्न च जगन्न स्वप्नपुरमस्त्यलम् । स्थितं संविन्महादृष्ट्या ब्रह्म चिन्मात्रमेतया ॥ ५ ॥

na svayaṃbhūrna ca jagann na svapnapuramastyalaṃ | sthitaṃ saṃvinmahādṛṣṭyā brahma cinmātrametayā || 5 ||

There is neither self-existence nor the world, nor is there a dream city| Brahman, which is pure consciousness, is established by this great vision

न तो स्वयंभूत्व है न ही जगत, न ही स्वप्न नगर है| ब्रह्म, जो शुद्ध चेतना है, इस महान दृष्टि से स्थापित है

7.96.6

यथा पुरं भवत्स्वप्ने चिद्रूपं स्वात्मनि स्थितम् । अखण्डमेवमासृष्टेरामहाप्रलयस्थितेः ॥ ६ ॥

yathā puraṃ bhavatsvapne cidrūpaṃ svātmani sthitam | akhaṇḍamevamāsṛṣṭerāmahāpralayasthiteḥ || 6 ||

Just as a city in a dream is of the nature of consciousness and is situated in one's own self, similarly, the undivided creation is situated in the great dissolution.

जैसे स्वप्न में एक नगर चेतना के स्वरूप का होता है और अपने आत्मा में स्थित होता है, उसी प्रकार, अखण्ड सृष्टि महाप्रलय में स्थित है।

7.96.7

हेमहेमाश्मनोः स्वप्नपुरचेतनयोर्यथा । भेदो न संभवत्येव न भेदश्चितिसर्गयोः ॥ ७ ॥

hemahemaśmanoḥ svapnapuracetanayoryathā | bhedo na saṃbhavatyeva na bhedaścitisargayoḥ || 7 ||

Just as there is no difference between gold and a golden ornament in a dream, similarly, there is no difference between consciousness and creation.

जैसे स्वप्न में सोने और सोने के आभूषण में कोई अंतर नहीं होता, उसी प्रकार, चेतना और सृष्टि में कोई अंतर नहीं है।

7.96.8

चितिरेकास्ति नो सर्गो हेमास्ति न तदूर्मिका । स्वप्नाचले चिदेवास्ति न तु काचन शैलता ॥ ८ ॥

citirekāsti no sargo hemaāsti na tadūrmikā | svapnācale cidevāsti na tu kācana śailatā || 8 ||

There is only one consciousness, not creation. There is gold, not the ornament made from it. In a dream mountain, there is only consciousness, not any mountain.

केवल एक चेतना है, सृष्टि नहीं। सोना है, उससे बना आभूषण नहीं। स्वप्न में पर्वत में केवल चेतना है, कोई पर्वत नहीं।

7.96.9

चिदेव शैलवद्भाति यथा स्वप्ने निरामया । तथा ब्रह्म निराकारं सर्गवद्भाति नेतरत् ॥ ९ ॥

cideva śailavadbhāti yathā svapne nirāmayā | tathā brahma nirākāraṃ sargavadbhāti netarat || 9 ||

Just as consciousness appears like a mountain in a dream, free from defects, similarly, Brahman, which is formless, appears like creation, not otherwise.

जैसे चेतना स्वप्न में दोषरहित पर्वत की तरह प्रतीत होती है, उसी प्रकार, रूपरहित ब्रह्म सृष्टि की तरह प्रतीत होता है, अन्यथा नहीं।

7.96.10

चिन्मात्रमिदमाकाशमनन्तमजमव्ययम् । महाकल्पसहस्रेषु नोदेति न च शाम्यति ॥ १० ॥

cinmātramidamākāśamanantamajamavyayam | mahākalpasahasreṣu nōdeti na ca śāmyati || 10 ||

This space is pure consciousness, infinite, unborn, and imperishable. It neither arises nor dissolves in thousands of great cycles.

यह आकाश शुद्ध चेतना है, अनंत, अजन्मा और अविनाशी। यह हजारों महाकल्पों में न उत्पन्न होता है न विलीन।

7.96.11

चिदाकाशो हि पुरुषश्चिदाकाशो भवानयम् । चिदाकाशोऽहमजरश्चिदाकाशो जगत्त्रयम् ॥ ११ ॥

cidākāśo hi puruṣaścidākāśo bhavānayam | cidākāśo'hamajaraścidākāśo jagattrayam || 11 ||

Indeed, the individual soul is the space of consciousness, this world is the space of consciousness, I am the eternal space of consciousness, the three worlds are the space of consciousness.

वास्तव में, जीवात्मा चेतना का आकाश है, यह संसार चेतना का आकाश है, मैं अजर चेतना का आकाश हूँ, तीनों लोक चेतना के आकाश हैं।

7.96.12

चिदाकाशं वर्जयित्वा शवमेव शरीरकम् । अच्छेद्योऽसावदाह्योऽसौ चिदाकाशो न शाम्यति ॥ १२ ॥

cidākāśaṃ varjayitvā śavameva śarīrakam | acchedyo'sāvadāhyo'sau cidākāśo na śāmyati || 12 ||

Without the space of consciousness, the body is merely a corpse. It cannot be cut, it cannot be burned, the space of consciousness does not diminish.

चेतना के आकाश के बिना, शरीर केवल एक शव है। वह काटा नहीं जा सकता, जलाया नहीं जा सकता, चेतना का आकाश कम नहीं होता।

7.96.13

अतो न किंचिन्म्रियते न च किंचन जायते । चित्त्वात्ततश्चित्कचनं जगदित्यनुभूयते ॥ १३ ॥

ato na kiñcinmriyate na ca kiñcan jāyate | cittvāttataścitkacaṇaṃ jagadityanubhūyate || 13 ||

Therefore, nothing dies, nor is anything born. Because of consciousness, the world is experienced as a collection of consciousness.

इसलिए, कुछ भी नहीं मरता, न ही कुछ भी जन्म लेता है। चेतना के कारण, संसार चेतना के संग्रह के रूप में अनुभव किया जाता है।

7.96.14

चिन्मात्रपुरुषो जन्तुर्म्रियते यदि नाम वा । ततो मरिष्यत्तत्पुत्रो निःसंदेहं पितुर्मृतौ ॥ १४ ॥

cinmātrapuruṣo janturmriyate yadi nāma vā | tato mariṣyattatputro niḥsaṃdehaṃ piturmṛtau || 14 ||

If the individual soul, which is pure consciousness, dies, then undoubtedly the son will die upon the father's death.

यदि जीवात्मा, जो शुद्ध चेतना है, मरता है, तो निःसंदेह पिता की मृत्यु पर पुत्र भी मरेगा।

7.96.15

एकस्मिन्प्रमृते जन्तावमरिष्यंस्तु सर्वदा । सर्व एव जनाः शून्यमभविष्यन्महीतलम् ॥ १५ ॥

ekasminpramṛte jantāvamarṣyaṃstu sarvadā | sarva eva janāḥ śūnyamabhaviṣyanmahītalam || 15 ||

If one individual dies, then all beings would always die. All people would become empty, and the earth would become desolate.

यदि एक जीव मरता है, तो सभी प्राणी हमेशा मरेंगे। सभी लोग खाली हो जाएँगे, और धरती सूनी हो जाएगी।

7.96.16

न चाद्यापि मृतं राम चिन्मात्रं कस्यचित्क्वचित् । न च शून्या स्थिता भूमिस्तस्माच्चित्पुरुषोऽक्षयः ॥ १६ ॥

na cādyāpi mṛtaṃ rāma cinmātraṃ kasyacitkvacit | na ca śūnyā sthitā bhūmistasmāccitpuruṣo'kṣayaḥ || 16 ||

O Rama, even now, consciousness alone is not dead anywhere for anyone. The earth is not empty; therefore, the conscious being is imperishable.

हे राम, अभी भी, किसी के लिए कहीं भी चेतना मात्र मरी नहीं है। पृथ्वी खाली नहीं है; इसलिए, चेतन पुरुष अविनाशी है।

7.96.17

एकं चिन्मात्रमेवाहं न शरीरादयो मम । इति सत्यनुसंधाने क्व जन्ममरणादयः ॥ १७ ॥

ekaṃ cinmātramevāhaṃ na śarīrādayo mama | iti satyanusandhāne kva janmamaraṇādayaḥ || 17 ||

I am only pure consciousness, not the body and so forth. In the true contemplation of this, where are birth, death, and so on?

मैं केवल शुद्ध चेतना हूँ, शरीर और आदि नहीं। इसके सत्य अनुसंधान में, जन्म, मृत्यु और आदि कहाँ हैं?

7.96.18

अहं चिन्मात्रममलमित्यात्मानुभवं स्वयम्। अपहन्त्यात्महन्तारो निमज्जन्त्यापदर्णवे ॥ १८ ॥

ahaṃ cinmātramamalamityātmānubhavaṃ svayam | apahantyātmahantāro nimajjantyāpadarṇave || 18 ||

I am pure, stainless consciousness—this is the self-experience. Those who destroy the self-experience sink in the ocean of misfortune.

मैं शुद्ध, निर्दोष चेतना हूँ—यह आत्म-अनुभव है। जो आत्म-अनुभव को नष्ट करते हैं, वे दुर्भाग्य के समुद्र में डूब जाते हैं।

7.96.19

चिदहं गगनादच्छा नित्यानन्ता निरामया। किं जीवितं मे किं वापि मरणं वा सुखासुखे ॥ १९ ॥

cidahaṃ gaganādacchā nityānantā nirāmayā | kiṃ jīvitaṃ me kiṃ vāpi maraṇaṃ vā sukhāsukhe || 19 ||

I am pure consciousness, clear like the sky, eternal, infinite, and free from disease. What is life to me, or even death, in happiness or sorrow?

मैं शुद्ध चेतना हूँ, आकाश की तरह स्वच्छ, नित्य, अनंत और रोगमुक्त। मुझे जीवन क्या है, या दुःख में भी मृत्यु क्या है?

7.96.20

व्योमात्मचेतनमहं के शरीरादयो मम। इत्यात्महापह्नुतेऽन्तर्योऽनुभूतं धिगस्तु तम् ॥ २० ॥

vyomātmacetanamahaṃ ke śarīrādayo mama | ityātmahāpahnuteyantaryo'nubhūtaṃ dhigastu tam || 20 ||

I am the sky-like consciousness; what are the body and so forth to me? Alas for the inner experience of those who deny the self.

मैं आकाश की तरह चेतना हूँ; मुझे शरीर और आदि क्या है? आत्मा को अस्वीकार करने वालों के अंतर्दृष्टि पर दुःख है।

7.96.21

चिदाकाशमहं स्वच्छमनुभूतिरिति स्फुटायस्यास्तमागता मूढं तं जीवन्तं शवं विदुः ॥ २१ ॥

cidākāśamahaṃ svacchamanubhūtiriti sphuṭāyasyāstamāgatā mūḍhaṃ taṃ jīvantaṃ śavaṃ viduḥ || 21 ||

Those who realize the pure consciousness as 'I am the pure experience' are considered wise, but those who do not realize this are considered ignorant, like living corpses.

जो लोग शुद्ध चेतना को 'मैं शुद्ध अनुभूति हूँ' के रूप में जानते हैं, वे बुद्धिमान माने जाते हैं, लेकिन जो इसे नहीं जानते, वे मूर्ख माने जाते हैं, जैसे जीवित शव।

7.96.22

अहं वेदनमात्रात्मा कानि देहेन्द्रियाणि मे। लब्धात्मानमिति स्वच्छं प्रविलुम्पन्ति नापदः ॥ २२ ॥

ahaṃ vedanamātrātmā kāni dehendriyāṇi me | labdhātmānamiti svacchaṃ pravilumpanti nāpadaḥ || 22 ||

I am the essence of pure experience; what are these body and senses to me? Those who have realized this are not affected by calamities.

मैं शुद्ध अनुभूति का सार हूँ; ये शरीर और इन्द्रियाँ मुझे क्या? जिन्होंने इसे प्राप्त किया है, वे विपत्तियों से प्रभावित नहीं होते।

7.96.23

चिन्मात्रं शुद्धमात्मानं योऽवलम्ब्य स्थिरः स्थितः। नाधयस्तं विलुम्पन्ति महोपलमिवेषवः ॥ २३ ॥

cinmātraṃ śuddhamātmānaṃ yo'valambya sthiraḥ sthitaḥ | nādhayastam vilumpanti mahopalamiveṣavaḥ || 23 ||

One who is firmly established in the pure self, which is pure consciousness, is not affected by sorrows, just as arrows do not affect a great stone.

जो शुद्ध आत्मा में, जो कि शुद्ध चेतना है, स्थिर रूप से स्थापित है, उसे दुःख प्रभावित नहीं करते, जैसे तीर एक बड़े पत्थर को प्रभावित नहीं करते।

7.96.24

चित्त्वं स्वभावं विस्मृत्य बद्धास्था ये शरीरके । तैः सुवर्णं परित्यज्य गृहीतं भस्म वस्तुतः ॥ २४ ॥

cittvaṃ svabhāvaṃ vismṛtya baddhāsthā ye śarīrake | taiḥ suvarṇaṃ parityajya gṛhītaṃ bhasma vastutaḥ || 24 ||

Those who are bound to the body, forgetting their true nature as consciousness, have indeed abandoned gold and taken ashes.

जो लोग अपने चेतना के स्वभाव को भूलकर शरीर से बंधे हुए हैं, उन्होंने वास्तव में सोना छोड़कर राख ले ली है।

7.96.25

बलं बुद्धिश्च तेजश्च देहोऽहमिति भावनात् । नश्यत्युदेत्येतदेव चिदेवाहमिति स्थितेः ॥ २५ ॥

balaṃ buddhiśca tejaśca deho'hamiti bhāvanāt | naśyatyudetyetadeva cidevāhamiti sthiteḥ || 25 ||

Strength, intellect, and vigor arise from the notion 'I am the body' and perish with it. This ceases to exist when one is established in the realization 'I am pure consciousness'.

बल, बुद्धि और तेज इस भावना से उत्पन्न होते हैं कि 'मैं शरीर हूँ' और इसके साथ नष्ट हो जाते हैं। यह तब समाप्त हो जाता है जब कोई इस ज्ञान में स्थिर हो जाता है कि 'मैं शुद्ध चेतना हूँ'।

7.96.26

चिदाकाशमहं शुद्धं के मे मरणजन्मनी । एवं स्थिते स्युः किंनिष्ठा लोभमोहमदादयः ॥ २६ ॥

cidākāśamahaṃ śuddhaṃ ke me maraṇajanmanī | evaṃ sthite syuḥ kiṃniṣṭhā lobhamohamadādayaḥ || 26 ||

I am the pure space of consciousness; who can cause my birth and death? In this state, what significance do greed, delusion, and pride hold?

मैं शुद्ध चिदाकाश हूँ; मेरे जन्म और मरण कौन कर सकता है? इस स्थिति में, लोभ, मोह और अहंकार का क्या महत्व है?

7.96.27

चिदाकाशादृते देहान्योऽन्यत्सारमवाप्नुयात् । तस्मै तद्युज्यते वक्तुं सन्ति लोभादयस्त्विति ॥ २७ ॥

cidākāśādṛte dehānyo'nyatsāramavāpnuyāt | tasmai tadyujyate vaktuṃ santi lobhādayastviti || 27 ||

Without the space of consciousness, the body would not attain its essence. Therefore, it can be said that greed and other vices exist.

चिदाकाश के बिना, शरीर अपनी सार प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए, यह कहा जा सकता है कि लोभ और अन्य दोष मौजूद हैं।

7.96.28

न च्छिद्ये न च दह्येऽहं चिन्मात्रं वज्रवच्चिति । न देही निश्चयो यस्य तं प्रत्यन्तकरस्तृणम् ॥ २८ ॥

na cchidyena ca dahye'haṃ cinmātraṃ vajravacciti | na dehī niścayo yasya taṃ pratyaṃtakarastr̥ṇam || 28 ||

I cannot be cut or burned; I am pure consciousness, indestructible like a diamond. One who is not certain of this is like a blade of grass before the destroyer.

मैं काटा या जलाया नहीं जा सकता; मैं शुद्ध चेतना हूँ, हीरे की तरह अविनाशी। जो इसके बारे में निश्चित नहीं है, वह विनाशक के सामने घास की पत्ती की तरह है।

7.96.29

अहो नु मुग्धता ज्ञानदृष्टीनां यद्विदन्त्यलम् । शरीरशकलाभावे नश्याम इति मोहिताः ॥ २९ ॥

aho nu mugdhatā jñānadṛṣṭīnāṃ yadvidantyalam | śarīraśakalābhāve naśyāma iti mohitāḥ || 29 ||

Alas, the ignorance of those with the vision of knowledge, who think that without the physical body, they will perish.

अरे, ज्ञान की दृष्टि वालों की अज्ञानता, जो सोचते हैं कि शारीरिक शरीर के बिना हम नष्ट हो जाएँगे।

7.96.30

अहं चिन्नभ एवेति सत्ये भावे स्थिरे सति । वज्रपातयुगान्ताग्निदाहाः पुष्पोत्करोपमाः ॥ ३० ॥

ahaṃ cinnabha eveti satye bhāve sthire sati | vajrapātayugāntāgnidāhāḥ puṣpotkaropamāḥ || 30 ||

When it is firmly established that 'I am pure consciousness,' the strikes of thunderbolts and the fires of the end of the world are like offerings of flowers.

जब यह दृढ़ता से स्थापित हो जाता है कि 'मैं शुद्ध चेतना हूँ,' तो वज्रपात और प्रलय की अग्नि फूलों की आहुति की तरह होती है।

7.96.31

चिन्मात्रममरं नाहं यन्नश्यामीति रोदिति । अनष्ट एव तद्देहो जातापूर्वा खरोलिका ॥ ३१ ॥

cinmātramamaraṃ nāhaṃ yannaśyāmīti roditi | anaṣṭa eva taddeho jātāpūrvā kharolikā || 31 ||

I am not just pure consciousness, immortal, because I lament that I will perish. That body is indeed imperishable, and the donkey's tail has grown again.

मैं केवल चेतना और अमर नहीं हूँ, क्योंकि मैं यह रोता हूँ कि मैं नष्ट हो जाऊँगा। वह शरीर वास्तव में अविनाशी है, और गधे की पूँछ फिर से बढ़ गई है।

7.96.32

इदं चेतनमेवाहं नाहं देहादिदृष्टयः । इति निश्चयवान्योऽन्तर्न स मुह्यति कर्हिचित् ॥ ३२ ॥

idaṃ cetanamevāhaṃ nāhaṃ dehādidṛṣṭayaḥ | iti niścayavānyo'ntarna sa muhyati karhicit || 32 ||

I am this consciousness alone, not the perceptions of the body, etc. Thus, one who is certain of this within does not get deluded at any time.

मैं इस चेतना के अलावा कुछ नहीं हूँ, शरीर आदि की धारणाओं से नहीं। इस प्रकार, जो इसके बारे में अंदर से निश्चित है, वह कभी भी भ्रमित नहीं होता।

7.96.33

अहं चेतनमाकाशो नाशो मे नोपपद्यते । चेतनेन जगत्पूर्णं केव संदेहितात्र वः ॥ ३३ ॥

ahaṃ cetanamākāśo nāśo me nopapadyate | cetanena jagatpūrṇaṃ keva saṃdehitātra vaḥ || 33 ||

I am the infinite consciousness, the sky. Destruction does not befit me. The world is full of consciousness; why do you doubt this?

मैं अनंत चेतना, आकाश हूँ। विनाश मुझे शोभा नहीं देता। संसार चेतना से भरा हुआ है; तुम इस पर क्यों संदेह करते हो?

7.96.34

चेतनं वर्जयित्वान्यत्किंचिद्यूयं जना यदि । यदुच्यतां महामूढाः स्वात्मा किमपलप्यते ॥ ३४ ॥

cetanaṃ varjayitvānyatkiṃcidyūyaṃ janā yadi | yaducyatāṃ mahāmūḍhāḥ svātmā kimapalapyate || 34 ||

If you people leave aside consciousness and say anything else, O greatly foolish ones, what is your own self babbling about?

अगर तुम लोग चेतना को छोड़कर कुछ और कहते हो, हे महामूर्खों, तुम्हारा अपना स्वयं क्या बकवास कर रहा है?

7.96.35

तच्चेतनं चेन्म्रियते तज्जनाः प्रत्यहं मृताः । ब्रूत किं न मृता यूयं तन्मृतं किल चेतनम् ॥ ३५ ॥

taccetanaṃ cenmriyate tajjanāḥ pratyahaṃ mṛtāḥ | brūta kiṃ na mṛtā yūyaṃ tanmṛtaṃ kila cetanam || 35 ||

If that consciousness dies, then those people die every day. Tell me, are you not dead? That consciousness is indeed dead.

अगर वह चेतना मर जाती है, तो वे लोग प्रतिदिन मर जाते हैं। बताओ, क्या तुम मरे नहीं हो? वह चेतना वास्तव में मरी हुई है।

7.96.36

तस्मान्न म्रियते किंचिन्न च जीवति किंचन। जीवामीति मृतोऽस्मीति चिच्चेतति न नश्यति॥ ३६॥

tasmānna mriyate kiṃcinna ca jīvati kiṃcana | jīvāmīti mṛto'smīti cicchetatī na naśyati || 36 ||

Therefore, nothing dies, nor does anything live | The thought 'I am alive' or 'I am dead' is merely a mental construct and does not perish

इसलिए, कुछ भी नहीं मरता है, न ही कुछ जीवित है | 'मैं जीवित हूँ' या 'मैं मृत हूँ' यह विचार मात्र एक मानसिक निर्माण है और नष्ट नहीं होता

7.96.37

चिच्चेतति यथा वा यत्तत्तथा साशु पश्यति। आबालमेषोऽनुभवो न क्वचित्सा च नश्यति॥ ३७॥

cicchetatī yathā vā yattattathā sāśu paśyati | ābālameṣo'nubhavo na kvacitsā ca naśyati || 37 ||

As the mental construct perceives, so it sees immediately | This experience from childhood does not perish anywhere

जैसे मानसिक निर्माण सोचता है, वैसे ही वह तुरंत देखता है | यह बचपन से अनुभव कहीं भी नष्ट नहीं होता

7.96.38

परिपश्यति संसारं परिपश्यति मुक्तताम्। सुखदुःखानि जानाति स्वरूपात्तन्न भिद्यते॥ ३८॥

paripaśyati saṃsāraṃ paripaśyati muktatām | sukhaduḥkhāni jānāti svarūpāttanna bhidyate || 38 ||

It perceives the world, it perceives liberation | It knows pleasure and pain, but it does not differ from its true nature

यह संसार को देखता है, यह मुक्ति को देखता है | यह सुख-दुःख को जानता है, लेकिन यह अपने वास्तविक स्वरूप से भिन्न नहीं होता

7.96.39

अपरिज्ञातदेहात्तु धत्ते मोहाभिधां स्वयम्। परिज्ञातस्वरूपात्तु धत्ते मोक्षाभिधां स्वयम्॥ ३९॥

aparijñātadehāttu dhatte mohābhidhāṃ svayam | parijñātasvarūpāttu dhatte mokṣābhidhāṃ svayam || 39 ||

From the unrealized body, it assumes the name of delusion | From the realized true nature, it assumes the name of liberation

अज्ञात शरीर से, यह भ्रम का नाम धारण करता है | ज्ञात स्वरूप से, यह मुक्ति का नाम धारण करता है

7.96.40

नास्तमेति न चोदेति न कदाचन किंचन। सर्वमेव च चिन्मात्रमाकाशविशदं यतः॥ ४०॥

nāstameti na codeti na kadācana kiṃcana | sarvameva ca cinmātramākāśaviśadaṃ yataḥ || 40 ||

It neither sets nor rises, never at any time | Everything is pure consciousness, clear like the sky

यह न तो अस्त होता है न उदय होता है, कभी भी नहीं | सब कुछ शुद्ध चेतना है, आकाश की तरह स्पष्ट

7.96.41

न तदस्ति न यत्सत्यं न तदस्ति न यन्मृषा यद्यथा येन निर्णीतं तत्तथा तं प्रति स्थितम्॥ ४१॥

na tadasti na yatsatyam na tadasti na yanmṛṣā yadyathā yena nirṇītaṃ tattathā taṃ prati sthitam || 41 ||

There is neither absolute truth nor absolute falsehood; everything is relative to the perspective of the observer.

न तो कोई सत्य है न ही कोई झूठ, सब कुछ देखने वाले के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।

7.96.42

यद्यद्यथा जगति चेतति चेतनात्मा तत्तत्तथानुभवतीत्यनुभूतिसिद्धम् दृष्टं विषामृतदृशेव पदार्थजातं नातोस्ति संविदविधेयमितिप्रसिद्धम् ॥ ४२ ॥

yadyadyathā jagati cetati cetanātmā tattattathānubhavatītyanubhūtisiddham dṛṣṭaṃ viṣāmṛtadṛśeva padārthajātaṃ nātoasti saṃvidavidheyamitiprasiddham || 42 ||

Whatever exists in the world as conscious beings experience it, that is how it is perceived. It is known through experience, just as one sees objects as either poison or nectar. Thus, there is nothing beyond consciousness.

जगत में जो कुछ भी चेतन आत्मा के रूप में अनुभव करता है, वह उसी तरह से अनुभव किया जाता है। यह अनुभव से जाना जाता है, जैसे कि कोई वस्तु को विष या अमृत के रूप में देखता है। इसलिए, चेतना के अलावा कुछ नहीं है।

Chapter 97

7.97.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । संविन्मयत्वाज्जगतः स्वप्नस्य परमात्मनः । ब्रह्माकाशतया सर्वं ब्रह्मैवेत्यनुभूयते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | saṃvinmayatvājjagataḥ svapnasya paramātmanaḥ | brahmākāśatayā sarvaṃ brahmaivetyanubhūyate || 1 ||

Śrī Vasishtha said: Due to the nature of the world being a dream of the Supreme Self, everything is experienced as Brahman, the infinite space.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जगत का स्वप्न होने के कारण परमात्मा के स्वप्न के रूप में सब कुछ ब्रह्म के रूप में अनुभव होता है।

7.97.2

भ्रमस्य चातिदृश्यत्वाददृश्यत्वान्महाचितेः । मदशक्तिवदात्मेति सत्यतास्यापि युज्यते ॥ २ ॥

bharmasya cātidṛśyatvādadṛśyatvānmahāciteḥ | madśaktivadātmeti satyatāsyāpi yujyate || 2 ||

Due to the extreme perceptibility of illusion and the imperceptibility of the great consciousness, the reality of the self is also justified like the power of intoxication.

भ्रम की अत्यधिक दृश्यता और महाचित की अदृश्यता के कारण, आत्मा की सत्यता भी मदशक्ति की तरह उचित होती है।

7.97.3

असत्त्वाद्दृश्यविश्रान्तेरलभ्यत्वान्महाचितेः । उपलब्धुरभावाच्च शून्यनाम्नीव सत्यपि ॥ ३ ॥

asattvāddṛśyaviśrāntēralabhyatvānmahāciteḥ | upalabdhurabhāvācca śūnyanāmnīva satyapi || 3 ||

Due to the unreality of the perceived objects and the unattainability of the great consciousness, the perceiver is non-existent, and thus it is called void even in reality.

दृश्य विश्रान्ति की असत्ता और महाचित की अलभ्यता के कारण, उपलब्धा का अभाव है, और इसलिए सत्य में भी इसे शून्य कहा जाता है।

7.97.4

चिन्मात्रं पुरुषोऽकर्ता समेत्यव्यक्ततो जगत् । एवंदृष्टेः सत्यमेतदेवमर्थानुभूतितः ॥ ४ ॥

cinmātraṃ puruṣo'kartā sametyavyaktato jagat | evaṃdṛṣṭeḥ satyametadevamarthānubhūtitaḥ || 4 ||

The self, which is pure consciousness, is not the doer. By understanding this, the world becomes unmanifest. This is the truth experienced through the realization of such a vision.

जो पुरुष पूर्ण चेतना है, वह कर्ता नहीं है। इस बात को समझने पर, जगत अव्यक्त हो जाता है। ऐसी दृष्टि के अनुभव से यह सत्य है।

7.97.5

विवर्तो ब्रह्मणो दृश्यमित्येवंवादिनोऽपि सत् । मतमेवंस्वरूपाणामर्थानामनुभूतितः ॥ ५ ॥

vivarto brahmaṇo dṛśyamityevaṃvādino'pi sat | matamevaṃsvarūpāṇāmarthānāmanubhūtitaḥ || 5 ||

Even those who say that the world is a manifestation of Brahman, the reality of the nature of things is experienced in this way.

जो कहते हैं कि जगत ब्रह्म का विवर्त है, उनका यह मत भी सत्य है कि वस्तुओं की स्वरूप की वास्तविकता ऐसे ही अनुभव होती है।

7.97.6

परमाणुसमूहात्म जगदित्यपि सत्यतः । संवेद्यते यथा यद्यत्तत्तथैवानुभूतितः ॥ ६ ॥

paramāṇusamūhātma jagadityapi satyataḥ | saṃvedyate yathā yadyattattathaivānubhūtitḥ || 6 ||

The universe, which is a collection of atoms, is perceived as it truly is through direct experience.

परमाणुओं का समूह जो कि जगत है, वह सत्य के रूप में अनुभव के द्वारा जैसा है वैसा ही संवेदित होता है।

7.97.7

यथा दृष्टं तथैवेदमिह लोके परत्र च । नासन्न सदिति प्रौढा सत्यमाध्यात्मिकी गतिः ॥ ७ ॥

yathā dṛṣṭaṃ tathaivedam iha loke paratra ca | nāsanna saditi prauḍhā satyamādhyātmikī gatiḥ || 7 ||

As it is seen, so it is here in this world and beyond. The wise say that there is neither existence nor non-existence; this is the true spiritual path.

जैसा देखा जाता है, वैसा ही यहाँ इस लोक में और परलोक में भी है। बुद्धिमान लोग कहते हैं कि न तो अस्तित्व है न ही अनस्तित्व; यही सत्य आध्यात्मिक मार्ग है।

7.97.8

बाह्यमेवास्ति नास्त्यन्यदित्यन्ये सत्यवादिनः । स्वात्मन्यक्षगणातीतं प्राप्नुवन्ति न ते यतः ॥ ८ ॥

bāhyamevāsti nāstyanyadityanye satyavādinaḥ | svātmanyakṣagaṇātītaṃ prāpnuvanti na te yataḥ || 8 ||

Others who speak the truth say that only the external exists, nothing else. They do not attain what is beyond the senses in their own self, therefore they do not attain it.

दूसरे सत्यवादी कहते हैं कि केवल बाह्य अस्तित्व है, और कुछ नहीं। वे अपने स्वयं के आत्मा में इन्द्रियों से परे कुछ नहीं प्राप्त करते, इसलिए वे उसे प्राप्त नहीं करते।

7.97.9

अनारतविपर्यासदर्शनात्क्षणभङ्गधीः । युक्तैव तद्विदामाद्यं सर्वशक्ति हि तत्पदम् ॥ ९ ॥

anārataviparyāsadarśanātkṣaṇabhaṅgadhīḥ | yuktaiva tadvidāmādyaṃ sarvaśakti hi tatpadam || 9 ||

Due to the continuous perception of illusion, the mind is subject to momentary destruction. This is appropriate for the foremost among the knowers of that truth, for that state is all-powerful.

निरन्तर भ्रम के दर्शन के कारण, मन क्षणिक विनाश का शिकार होता है। यह उन ज्ञानियों के लिए उपयुक्त है जो उस सत्य के प्रथम जानकार हैं, क्योंकि वह स्थिति सर्वशक्तिमान है।

7.97.10

कलविङ्कघटन्यायो धर्म इत्यपि तद्विदाम् । तथात्मसिद्धेर्म्लेच्छानां तद्देशेषु न दुष्यति ॥ १० ॥

kalaviṅkaghaṭanyāyo dharma ityapi tadvidām | tathātmasiddhermlecchānāṃ taddeśeṣu na duṣyati || 10 ||

The principle of the stork and the pot is also considered dharma by the knowers of that truth. Thus, for the attainment of the self, even the practices of the barbarians in their lands are not condemned.

बगुला और घड़े का सिद्धान्त भी उस सत्य के जानकारों द्वारा धर्म माना जाता है। इसलिए, आत्म-सिद्धि के लिए, बर्बरों के देशों में उनकी प्रथाओं की निन्दा नहीं की जाती।

7.97.11

समाः सन्तश्च विप्राग्निविषामृतमृतिष्वपि । भान्त्येवं तद्विदां सर्वमिदं सर्वात्मकं यतः ॥ ११ ॥

samāḥ santaśca viprāgniviṣāmṛtamṛtiṣvapi | bhāntyevaṃ tadvidāṃ sarvamidaṃ sarvātmakaṃ yataḥ || 11 ||

The peaceful and the wise shine even in the midst of poison, fire, and death. This is because all this is pervaded by the Self, as known by the wise.

शांत और विद्वान लोग विष, अग्नि और मृत्यु में भी चमकते हैं। यह इसलिए है कि यह सब आत्मा से व्याप्त है, जैसा कि विद्वानों को ज्ञात है।

7.97.12

स्वभावसिद्धमेवेदं युक्तमित्येव तद्विदाम्। अन्विष्टा याति नो प्राप्तिं बुद्धिमत्सर्वकर्तृता ॥ १२ ॥

svabhāvasiddhamavevedaṃ yuktamityeva tadvidām | anviṣṭā yāti no prāptiṃ buddhimatsarvakartṛtā || 12 ||

This is naturally accomplished and appropriate, as known by the wise. The intelligent one, seeking, does not attain the doership of all.

यह स्वाभाविक रूप से सिद्ध और उचित है, जैसा कि विद्वानों को ज्ञात है। बुद्धिमान व्यक्ति, खोजते हुए, सबका कर्ता नहीं बनता।

7.97.13

एकः सर्वत्र कर्तेति सत्यं तन्मयचेतसाम्। सोऽयं निश्चयवान्सोऽत्र तदाप्नोतीत्यबाधितम् ॥ १३ ॥

ekaḥ sarvatra karteiti satyaṃ tanmayacetasām | so'yaṃ niścayavānso'tra tadāpnotītyabādhitam || 13 ||

The truth is that the One is the doer everywhere, as known by those whose minds are absorbed in That. Such a person, with firm conviction, attains That without obstruction.

सत्य यह है कि एक ही सब जगह कर्ता है, जैसा कि उन लोगों को ज्ञात है जिनके मन उसमें लीन हैं। ऐसा व्यक्ति, दृढ़ निश्चय के साथ, बिना किसी बाधा के उसे प्राप्त करता है।

7.97.14

अयं लोकः परश्चास्ति स्नानाग्न्यादि च नेतरत्। एतदेतादृशं सत्यं विद्धि भावितभावनम् ॥ १४ ॥

ayaṃ lokaḥ paraścāsti snānāgnyādi ca netarat | etadetādṛśaṃ satyaṃ viddhi bhāvitabhāvanam || 14 ||

This world and the other world exist, as do rituals like bathing and fire, and nothing else. Know this to be the truth, cultivated through meditation.

यह लोक और परलोक है, जैसे स्नान और अग्नि जैसे अनुष्ठान हैं, और कुछ नहीं। यह सत्य है, जो ध्यान द्वारा विकसित हुआ है।

7.97.15

अशेषं शून्यमेवेति बौद्धानामेतदेव सत्। लभ्यते तद्विचारेण यत्र किंचन नैव हि ॥ १५ ॥

aśeṣaṃ śūnyameveti bauddhānāmetadeva sat | labhyate tadvicāreṇa yatra kiṃcana naiva hi || 15 ||

Everything is indeed empty, this is the truth for Buddhists. It is realized through contemplation, where nothing exists.

सब कुछ खाली है, यह बौद्धों के लिए सत्य है। यह चिंतन द्वारा अनुभव किया जाता है, जहाँ कुछ भी नहीं है।

7.97.16

चितिश्चिन्तामणिरिव कल्पद्रुम इवेप्सितम्। आशु संपादयत्यन्तरात्मनात्मनि खात्मिका ॥ १६ ॥

citicintāmaṇiriva kalpadruma ivepsitam | āśu saṃpādayatyantarātmanātmani khātmikā || 16 ||

The consciousness, like a wish-fulfilling gem or a divine tree, quickly manifests the desired object within the inner self.

चिति, चिन्तामणि के समान या कल्पवृक्ष के समान, शीघ्र ही अपने अन्तरात्मा में इच्छित वस्तु को प्राप्त कर लेता है।

7.97.17

नेदं शून्यं न चाशून्यमित्यवस्तु न तद्विदाम्। सर्वशक्तिर्हि सा शक्तिर्न तद्विद्यत एव तत् ॥ १७ ॥

nedam śūnyam na cāśūnyamityavastu na tadvidām | sarvaśaktirhi sā śaktirna tadvidyata eva tat || 17 ||

This is neither empty nor non-empty; it is not a mere non-entity. That power is all-powerful, and it does not exist as a separate entity.

यह न तो शून्य है न ही अशून्य; यह केवल एक अवस्तु नहीं है। वह शक्ति सर्वशक्तिमान है, और यह एक अलग वस्तु के रूप में नहीं है।

7.97.18

तस्मात्स्वनिश्चये यस्मिन्यः स्थितः स तथा ततः । अवश्यं फलमाप्नोति न चेद्बाल्यान्निवर्तते ॥ १८ ॥

tasmātsvaniscaaye yasminyah sthitah sa tathā tatah | avaśyam phalamāpnoti na cedbālyānnivartate || 18 ||

Therefore, one who is steadfast in their own conviction will surely attain the result; otherwise, they will deviate due to immaturity.

इसलिए, जो अपने निश्चय में स्थिर है, वह निश्चित रूप से फल प्राप्त करेगा; अन्यथा, वह अपरिपक्वता के कारण विचलित हो जाएगा।

7.97.19

विचार्य पण्डितैः सार्धं श्रेष्ठवस्तुनि धीमता । स रूढो निश्चयो ग्राह्यो नेतरत्र यथा तथा ॥ १९ ॥

vicārya paṇḍitaiḥ sārdham śreṣṭhavastuni dhīmatā | sa rūḍho niścayo grāhyo netaratra yathā tathā || 19 ||

After deliberation with wise scholars, the firm conviction in the best matter should be accepted; not otherwise.

विद्वानों के साथ विचार-विमर्श के बाद, सर्वश्रेष्ठ वस्तु में दृढ़ निश्चय को स्वीकार करना चाहिए; अन्यथा नहीं।

7.97.20

संभवत्युत्तमप्रज्ञः शास्त्रतो व्यवहारतः । यो यत्र नाम तत्रासौ पण्डितस्तं समाश्रयेत् ॥ २० ॥

saṃbhavatyuttamaprajñaḥ śāstrato vyavahārataḥ | yo yatra nāma tatrāsau paṇḍitastam samāśrayet || 20 ||

One who is supremely wise in both scriptures and practical affairs should be sought wherever they are found.

जो शास्त्रों और व्यवहार में उत्तम बुद्धिमान है, उसे जहाँ भी मिले, उसका आश्रय लेना चाहिए।

7.97.21

सतां विवदमानानां सच्छास्त्रव्यवहारिणाम् । यः समाह्लादकोऽनिन्द्यः स श्रेष्ठस्तं समाश्रयेत् ॥ २१ ॥

satāṃ vivadamānānāṃ saccāstravyavahāriṇām | yaḥ samāhlādako'nindyaḥ sa śreṣṭhastaṃ samāśrayet || 21 ||

Among those who debate with good intentions and follow the scriptures, the one who brings joy and is blameless is the best; one should seek refuge in him.

जो लोग सच्चे इरादे से विवाद करते हैं और शास्त्रों का अनुसरण करते हैं, उनमें से जो आनंद देता है और निर्दोष है, वह सबसे श्रेष्ठ है; उसी की शरण लेनी चाहिए।

7.97.22

सर्व एवानिशं श्रेयो धावन्ति प्राणिनो बलात् । परिनिम्नं पयांसीव तद्विचार्य समाश्रयेत् ॥ २२ ॥

sarva evāniśaṃ śreyo dhāvanti prāṇino balāt | parinimnaṃ payāṃsīva tadvicārya samāśrayet || 22 ||

All living beings strive for the best with all their might, like water flowing downwards. One should reflect on this and seek refuge.

सभी प्राणी अपने पूरे बल से श्रेय की ओर भागते हैं, जैसे पानी नीचे की ओर बहता है। इस पर विचार करें और शरण लें।

7.97.23

कल्लोलैरुह्यमानानां नृणां संसारसागरे । अज्ञाता दिवसा यान्ति तृणानामिव बिन्दवः ॥ २३ ॥

kallolairuhyamānānāṃ nṛṇāṃ saṃsārasāgare | ajñātā divasā yānti tṛṇānāmiva bindavaḥ || 23 ||

In the ocean of worldly existence, people who are uplifted by the waves pass their days unknowingly, like drops of water on blades of grass.

संसार सागर में, जो लोग लहरों द्वारा उठाए जाते हैं, वे अपने दिन अनजाने में बिताते हैं, जैसे घास के पत्तों पर पानी की बूँदें।

7.97.24

श्रीराम उवाच । जगत्पूर्वं लतेवापि विश्रान्ता वितते पदे । पूर्वापरविचारेण के पराभावदर्शिनः ॥ २४ ॥

śrīrāma uvāca | jagatpūrvaṃ latāvāpi viśrāntā vitate pade | pūrvāparavicāreṇa ke parābhāvadarśinaḥ || 24 ||

Shri Rama said: The world is like a creeper that has spread out and is resting on the ground. Who, by considering the past and the future, can see the end?

श्री राम ने कहा: संसार ऐसी लता की तरह है जो फैली हुई है और जमीन पर विश्राम कर रही है। भूत और भविष्य के विचार से कौन अंत को देख सकता है?

7.97.25

श्रीवसिष्ठ उवाच । जातौ जातौ कतिपये व्यपदेश्या भवन्ति ते । येषां यान्ति प्रकाशेन दिवसा भास्वतामिव ॥ २५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jātau jātau katipaye vyapadeśyā bhavanti te | yeṣāṃ yānti prakāśena divasā bhāsvatāmiva || 25 ||

Shri Vasistha said: In every birth, there are a few who are worthy of being taught. Their days pass with brilliance like the shining ones.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हर जन्म में, कुछ लोग ऐसे होते हैं जिन्हें शिक्षित किया जा सकता है। उनके दिन चमकते हुए पास होते हैं, जैसे चमकते हुए लोग।

7.97.26

अधश्चोर्ध्वं च धावन्तश्चक्रावर्तविवर्तनैः । सर्वे तृणवदुह्यन्ते मूढा मोहभवाम्बुधौ ॥ २६ ॥

adhaścordhvaṃ ca dhāvantaścakrāvartavivartanaiḥ | sarve tṛṇavaduhyante mūḍhā mohabhavāmbudhau || 26 ||

Running up and down, driven by the whirlpools of delusion, all are tossed about like straws in the ocean of bewilderment.

नीचे और ऊपर दौड़ते हुए, भ्रम के भंवरों से चलाए जाते हुए, सभी मोह के समुद्र में तिनके की तरह उलट-पुलट होते हैं।

7.97.27

नष्टात्मस्थितयो भोगवह्निषु प्रज्वलन्त्यलम् । देवा दिवि दवेनाद्रौ दह्यमाना द्रुमा इव ॥ २७ ॥

naṣṭātmasthitayo bhogavahniṣu prajvalantyalam | devā divi davenādrāu dahyamānā drumā iva || 27 ||

Those who have lost their self-control burn intensely in the fires of desire, like trees burning in a forest fire on a mountain.

जो लोग अपने आत्म-नियंत्रण खो चुके हैं, वे इच्छा की अग्नि में तीव्रता से जलते हैं, जैसे पर्वत पर जंगल की आग में जलते हुए पेड़।

7.97.28

पातिता मदसंपन्ना दानवा दानवारिभिः । गजा इव निरालाना घोरे नारायणावटे ॥ २८ ॥

pātitā madasaṃpannā dānavā dānavāribhiḥ | gajā iva nirālānā ghore nārāyaṇāvaṭe || 28 ||

The demons, filled with pride, are thrown down by the enemies of the demons, like elephants falling into the terrible pit of Narayana.

घमंड से भरे हुए दानव दानवों के शत्रुओं द्वारा गिरा दिए जाते हैं, जैसे हाथी नारायण की भयानक खाई में गिरते हैं।

7.97.29

न गन्धमपि गन्धर्वा दर्शयन्ति विवेकजम् । गीतपीतपरामर्शाः सरन्ति हरिणा इव ॥ २९ ॥

na gandhamapi gandharvā darśayanti vivekajam | gītapītaparāmarśāḥ saranti hariṇā iva || 29 ||

The Gandharvas do not show even a trace of discernment, being engrossed in singing, drinking, and discussions, they wander like deer.

गंधर्व भी विवेक का कोई चिह्न नहीं दिखाते, गाने, पीने और चर्चा में डूबे हुए, वे हिरण की तरह भटकते हैं।

7.97.30

विद्याधराश्च विद्यानामाधारत्वेन मोहिताः । स्फुरितानामुदाराणामपि कुर्वन्ति नादरम् ॥ ३० ॥

vidyādharāśca vidyānāmādhāratvena mohitāḥ | sphuriānāmuārāṇāmapi kurvanti nādaram || 30 ||

The Vidyadharas, though masters of knowledge, are deluded by their attachment to it and do not pay attention even to the most brilliant and manifested knowledge.

विद्याधर, जो ज्ञान के मालिक हैं, उसके प्रति आसक्ति से मोहित हो जाते हैं और सबसे उज्ज्वल और प्रकट ज्ञान की भी परवाह नहीं करते।

7.97.31

यक्षा विक्षोभितभुवो दक्षतामक्षता इव । दर्शयन्त्यसहायेषु बालवृद्धातुरेषु च ॥ ३१ ॥

yakṣā vikṣobhitabhuvo dakṣatāmakṣatā iva | darśayantyasahāyeṣu bālavṛddhātureṣu ca || 31 ||

The Yakshas, who are the protectors of the earth, appear like skilled warriors, showing their prowess even when they are alone, weak, or elderly.

यक्ष, जो पृथ्वी के रक्षक हैं, अकेले, कमजोर या बूढ़े होने पर भी कुशल योद्धाओं की तरह अपनी शक्ति दिखाते हैं।

7.97.32

दन्तिनामिव मत्तानां रंहसा हरिणारिणा । कृतः करिष्यसि त्वं च राक्षसानां परिक्षयम् ॥ ३२ ॥

dantināmiva mattānāṃ raṃhasā hariṇāriṇā | kṛtaḥ kariṣyasi tvaṃ ca rākṣasānāṃ parikṣayam || 32 ||

Like a mad elephant destroys a lion swiftly, you will also cause the destruction of the demons.

जैसे मतवाला हाथी एक शेर को तुरंत नष्ट कर देता है, वैसे ही आप राक्षसों का विनाश करेंगे।

7.97.33

भृशं पिशाचाः पश्यन्ति भूतभोजनचिन्तया । धूमान्धकारानिलया ज्वालयाहुतयो यथा ॥ ३३ ॥

bhṛśaṃ piśācāḥ paśyanti bhūtabhojanacintayā | dhūmāndhakārānilayā jvālayāhutayo yathā || 33 ||

The Pishachas (demons) intensely see the offerings of ghosts, as if they are flames in the darkness and smoke.

पिशाच (राक्षस) भूतों के भोजन की चिंता से उन्हें धूम और अंधकार में ज्वाला की तरह देखते हैं।

7.97.34

नागजालमृणालानि मग्नानि धरणीतले । नगानामिव मूलानि जडानीव स्थितान्यलम् ॥ ३४ ॥

nāgajālamṛṇālāni magnāni dharaṇītale | nagānāmiva mūlāni jaḍānīva sthitānyalam || 34 ||

The lotus fibers are submerged in the ground, like the roots of trees, motionless and firm.

कमल की रस्सियाँ जैसे पेड़ों की जड़ें होती हैं, वैसे ही धरती में डूबी हुई और स्थिर हैं।

7.97.35

विवरं शरणं येषां कीटानामिव भूतले । तेषामसुरबालानां विवेकेषु कथैव का ॥ ३५ ॥

vivaraṃ śaraṇaṃ yeṣāṃ kīṭānāmiva bhūtale | teṣāmasurabālānāṃ vivekeṣu kathaiva kā || 35 ||

Those who seek refuge in holes, like insects on the ground, how can they have any discernment, like the young demons?

जो लोग छेदों में शरण लेते हैं, जैसे धरती पर कीड़े, उन छोटे राक्षसों की तरह उनमें कैसे बुद्धि हो सकती है?

7.97.36

अल्पमात्रकणार्थेन संचरन्ति दिवानिशम् । पिपीलिकासधर्माणः प्रायेण पुरुषा अपि ॥ ३६ ॥

alpamātrakaṇārtheṇa saṃcaranti divāniśam | pipīlikāsadharmāṇaḥ prāyeṇa puruṣā api || 36 ||

Men, for the most part, wander day and night for trivial reasons, like ants.

प्रायः मनुष्य छोटे-छोटे कारणों से दिन-रात घूमते रहते हैं, जैसे चींटियाँ।

7.97.37

सर्वासां भूतजातीनां व्यग्राणां व्यर्थदीर्घया । क्षीबाणामिव गच्छन्ति दिवसानि दुरीहया ॥ ३७ ॥

sarvāsāṃ bhūtajātīnāṃ vyagrāṇāṃ vyarthadīrghayā | kṣībāṇāmiva gacchanti divasāni durīhayā || 37 ||

All beings, engaged in useless long activities, pass their days like madmen.

सभी प्राणी, व्यर्थ की लंबी गतिविधियों में व्यस्त, पागलों की तरह अपने दिन बिताते हैं।

7.97.38

न कंचित्संस्पृशत्यन्तर्विवेको विमलो जनम् । जलेऽगाधे निपतितं निमज्जन्तं रजो यथा ॥ ३८ ॥

na kaṃcitsaṃspṛśatyantarviveko vimalo janam | jale'gādhe nipatitaṃ nimajjantaṃ rajo yathā || 38 ||

Pure discrimination does not touch any person, just as dust does not touch one who has fallen into deep water.

शुद्ध विवेक किसी व्यक्ति को छूता नहीं है, जैसे धूल गहरे पानी में गिरने वाले को छूती नहीं है।

7.97.39

नीयन्ते नियमाधूता मानवा मानवायुभिः । काम्पिकैः स्फुटतापूताः किरारुनिकरा इव ॥ ३९ ॥

nīyante niyamādhūtā mānavā mānavāyubhiḥ | kāmpikaiḥ sphuṭatāpūtāḥ kirārunikarā iva || 39 ||

Men are driven by the winds of human desires, like dry leaves blown by the wind.

मनुष्य मानवीय इच्छाओं की हवाओं से उड़ाए जाते हैं, जैसे सूखी पत्तियाँ हवा से उड़ती हैं।

7.97.40

पानभोजनजम्बाले गहने योगिनीगणाः । दुर्गन्धपल्वलोद्गारे पतिताः पामरा इव ॥ ४० ॥

pānabhojanajambāle gahane yoginīgaṇāḥ | durgandhapalvalodgāre patitāḥ pāmarā iva || 40 ||

Those who are deeply engrossed in eating and drinking fall into the foul-smelling mud of ignorance, like the ignorant.

जो लोग खाने-पीने में गहराई तक डूबे हुए हैं, वे अज्ञान की दुर्गंधयुक्त कीचड़ में गिर जाते हैं, जैसे अज्ञानी।

7.97.41

केवलं यमचन्द्रेन्द्ररुद्रार्कवरुणानिलाःजीवन्मुक्ता हरिब्रह्मगुरुशुक्रानलादयः ॥ ४१ ॥

kevalaṃ yamacandrendrarudrārkavaruṇānilāḥjīvanmuktā haribrahmaguruśukrānalādayaḥ || 41 ||

Only the liberated souls, who are free from the influence of the deities such as Yama, Chandra, Indra, Rudra, Surya, Varuna, and Vayu, are the ones who have attained liberation, such as Hari, Brahma, Guru, Shukra, and Agni.

केवल यम, चन्द्र, इन्द्र, रुद्र, सूर्य, वरुण और वायु के प्रभाव से मुक्त जीवन्मुक्त आत्माएँ हैं, जो हरि, ब्रह्मा, गुरु, शुक्र और अग्नि जैसे हैं।

7.97.42

प्रजापतीनां सप्तर्षिदक्षाद्याः कश्यपादयः । नारदाद्याः कुमाराद्याः सनकाद्याः सुरात्मजाः ॥ ४२ ॥

prajāpatīnāṃ saptarṣidakṣādyāḥ kaśyapādayaḥ | nāradādyāḥ kumārādyāḥ sanakādyāḥ surātmajāḥ || 42 ||

Among the Prajapatis, the seven sages beginning with Daksha, Kashyapa and others, Narada and others, Kumara and others, Sanaka and others, and the sons of the gods.

प्रजापतियों में, सप्तर्षियों के साथ दक्ष आदि, कश्यप आदि, नारद आदि, कुमार आदि, सनक आदि, और देवताओं के पुत्र।

7.97.43

दानवानां हिरण्याक्षबलिप्रह्लादशम्बराः । मयवृत्रान्धनमुचिकेशिपुत्रमुरादयः ॥ ४३ ॥

dānavānāṃ hiraṇyākṣabaliprahlādaśambarāḥ | mayavṛtrāndhanamucikeśiputramurādayaḥ || 43 ||

Among the demons, Hiranyaksha, Bali, Prahlada, Shambara, Maya, Vritra, Andhaka, Mucika, Keshi's son, and Mura, among others.

असुरों में, हिरण्याक्ष, बलि, प्रह्लाद, शम्बर, मय, वृत्र, अंधक, मुचिक, केशि के पुत्र, और मुर आदि।

7.97.44

बिभीषणाद्या रक्षस्सु प्रहस्तेन्द्रजिदादयः । शेषतक्षककर्कोटमहापद्मादयोऽहिषु ॥ ४४ ॥

bibhīṣaṇādyā rakṣassu prahastendrajidadādayaḥ | śeṣatakṣakakarkoṭamahāpadmādayo'hiṣu || 44 ||

Among the Rakshasas, Vibhishana and others, Prahasta, Indrajit and others; among the serpents, Shesha, Takshaka, Karkota, Mahapadma and others.

राक्षसों में, विभीषण और अन्य, प्रहस्त, इन्द्रजित और अन्य; सर्पों में, शेष, तक्षक, कर्कोट, महापद्म और अन्य।

7.97.45

ब्रह्मविष्णिवन्द्रलोकेषु वास्तव्या मुक्तदेहिनः । मुक्तस्वभावास्तुषिताः सिद्धाः साध्याश्च केचन ॥ ४५ ॥

brahmaviṣṇvindralokeṣu vāstavyā muktadehināḥ | muktasvabhāvāstuṣitāḥ siddhāḥ sādhyāśca kecana || 45 ||

In the worlds of Brahma, Vishnu, and Indra, the liberated beings reside. They are of a liberated nature, satisfied, perfected, and some are to be perfected.

ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र के लोकों में, मुक्त प्राणी रहते हैं। वे मुक्त स्वभाव के, संतुष्ट, सिद्ध और कुछ सिद्ध होने योग्य हैं।

7.97.46

मानुषेषु च राजानो मुनयो ब्राह्मणोत्तमाः । जीवन्मुक्ताः संभवन्ति विरलास्तु रघूद्वह ॥ ४६ ॥

mānuṣeṣu ca rājāno munayo brāhmaṇottamāḥ | jīvanmuktāḥ saṃbhavanti viralāstu raghūdvaha || 46 ||

Among humans, kings and the best of Brahmins become liberated while living, although they are rare, O Raghava.

मनुष्यों में, राजा और श्रेष्ठ ब्राह्मण जीवनमुक्त होते हैं, हालांकि वे दुर्लभ हैं, हे रघुवंशी।

7.97.47

भूतानि सन्ति सकलानि बहूनि दिक्षु बोधान्वितानि विरलानि भवन्ति किंतु । वृक्षा भवन्ति फलपल्लवजालयुक्ताः कल्पद्रुमास्तु विरलाः खलु संभवन्ति ॥ ४७ ॥

bhūtāni santi sakalāni bahūni dikṣu bodhānvitāni viralāni bhavanti kiṃtu | vṛkṣā bhavanti phalapallavajālayuktāḥ kalpadrumāstu viralāḥ khalu saṃbhavanti || 47 ||

All beings exist in abundance in all directions, but those endowed with consciousness are rare. Trees bearing fruits and leaves are abundant, but wish-fulfilling trees are rare indeed.

सभी प्राणी सभी दिशाओं में बहुतायत से मौजूद हैं, लेकिन चेतना से युक्त प्राणी दुर्लभ हैं। फल और पत्तों से भरे पेड़ बहुत हैं, लेकिन कल्पवृक्ष बहुत दुर्लभ हैं।

Chapter 98

7.98.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । विवेकिनो विरक्ता ये विश्रान्ता ये परे पदे । तेषां तनुत्वमायान्ति लोभमोहादयोऽरयः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vivekino viraktā ye viśrāntā ye pare pade | teṣāṃ tanutvamāyānti lobhamohādayo'rayaḥ || 1 ||

Shri Vasistha said: Those who are wise, detached, and have found rest in the supreme state, their enemies such as greed and delusion become weak.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो विवेकी, विरक्त और परम पद में विश्राम पा चुके हैं, उनके शत्रु जैसे लोभ और मोह दुर्बल हो जाते हैं।

7.98.2

न हृष्यन्ति न कुप्यन्ति नाविशन्त्याहरन्ति च । उद्विजन्तेऽपि नो लोकाल्लोकान्नोद्वेजयन्ति च ॥ २ ॥

na hṛṣyanti na kupyanti nāviśantyāharanti ca | udvijante'pi no lokāllokānnodvejayanti ca || 2 ||

They do not rejoice, nor do they get angry, nor do they get attached, nor do they take anything. They are not disturbed by the world, nor do they disturb the world.

वे न खुश होते हैं, न गुस्सा होते हैं, न आसक्त होते हैं, न कुछ लेते हैं। वे संसार से विचलित नहीं होते, न संसार को विचलित करते हैं।

7.98.3

न नास्तिक्यान्न चास्तिक्यात्कष्टानुष्ठानवैदिकाः । मनोज्ञमधुराचाराः प्रियपेशलवादिनः ॥ ३ ॥

na nāstikyānna cāstikyātkṣṭānuṣṭhānavaidikāḥ | manojñamadhurācārāḥ priyapeśalavādinaḥ || 3 ||

They are neither atheists nor theists, they perform difficult Vedic rituals, their behavior is pleasant and sweet, and they speak in a loving and gentle manner.

वे न नास्तिक हैं न अस्तिक, वे कठिन वैदिक अनुष्ठान करते हैं, उनका व्यवहार मनोहर और मधुर होता है, और वे प्यार से और कोमलता से बात करते हैं।

7.98.4

सङ्गादाह्लादयन्त्यन्तः शशाङ्ककिरणा इव । विवेचितारः कार्याणां निर्णेतारः क्षणादपि ॥ ४ ॥

saṅgādāhlādayantyantaḥ śaśāṅkakiraṇā iva | vivecitāraḥ kāryāṇāṃ nirṇetāraḥ kṣaṇādapi || 4 ||

They delight the inner self like the rays of the moon, they are discerners of actions and decide instantly.

वे चंद्रमा की किरणों की तरह अंतःकरण को आह्लादित करते हैं, वे कार्यों के विवेचक हैं और तुरंत निर्णय लेते हैं।

7.98.5

अनुद्वेगकराचारा बान्धवा नागरा इव । बहिः सर्वसमाचारा अन्तः सर्वार्थशीतलाः ॥ ५ ॥

anudvegakarācārā bāndhavā nāgarā iva | bahiḥ sarvasamācārā antaḥ sarvārthaśītalāḥ || 5 ||

Their behavior does not cause distress, they are like relatives to all, externally they behave equally with everyone, internally they are cool towards all things.

उनका व्यवहार उद्वेग नहीं पैदा करता, वे सबके लिए बंधु की तरह हैं, बाहर से वे सभी के साथ समान व्यवहार करते हैं, अंदर से वे सभी चीजों के प्रति शीतल हैं।

7.98.6

शास्त्रार्थरसिकास्तज्ज्ञा ज्ञातलोकपरावराः । हेयोपादेयवेत्तारो यथाप्राप्ताभिपातिनः ॥ ६ ॥

śāstrārtharasikāstajjñā jñātalokaparāvarāḥ | heyopādeyavettāro yathāprāptābhipātinaḥ || 6 ||

Those who are delighted in the essence of scriptures, knowers of that knowledge, aware of the highest and lowest worlds, understand what is to be abandoned and accepted, and act according to their nature.

जो शास्त्रों के अर्थ में आनंद लेते हैं, उस ज्ञान के ज्ञाता हैं, ऊपर और नीचे लोकों को जानते हैं, त्याज्य और ग्राह्य को जानते हैं, और अपने स्वभाव के अनुसार कार्य करते हैं।

7.98.7

विरुद्धकार्यविरता रसिका सज्जनस्थितौ । अनावरणसौगन्ध्यैः परास्पदसुखाशनैः ॥ ७ ॥

viruddhakāryaviratā rasikā sajjanasthitau | anāvaraṇasaugandhyaiḥ parāspadasukhāśanaiḥ || 7 ||

Those who refrain from opposing actions, are connoisseurs, situated among good people, with uncovered fragrance, enjoying the bliss of the supreme state.

जो विरोधी कार्यों से दूर रहते हैं, रसिक हैं, सज्जनों में स्थित हैं, बिना आवरण के सुगंध से युक्त हैं, और परम अवस्था के सुख का आनंद लेते हैं।

7.98.8

पूजयन्त्यागतं फुल्ला भृङ्गं पद्मा इवार्थिनम् । आवर्जयन्ति जनतां जनतापापहारिणः ॥ ८ ॥

pūjayantyāgataṃ phullā bhṛṅgaṃ padmā ivārthinam | āvarjayanti janatāṃ janatāpāpahāriṇaḥ || 8 ||

They worship the one who has come like a bee to a bloomed lotus, and they attract people who remove the sins of the people.

वे उसे पूजते हैं जो खिले हुए कमल पर भौंरे की तरह आया है, और वे लोगों को आकर्षित करते हैं जो लोगों के पापों को दूर करते हैं।

7.98.9

शीतलास्पदवत्स्निग्धाः प्रावृषीव पयोधराः । भूभृद्भङ्गकरं धीरा देशभङ्गदमाकुलम् ॥ ९ ॥

śītalāspadavatsnigdhāḥ prāvṛṣīva payodharāḥ | bhūbhṛdbhaṅgakaraṃ dhīrā deśabhaṅgadamākulam || 9 ||

They are cool and affectionate like clouds in the rainy season, wise, causing the destruction of the earth's burden, and distressed by the destruction of the country.

वे वर्षा ऋतु के बादलों की तरह ठंडे और स्नेही हैं, बुद्धिमान हैं, पृथ्वी के बोझ का विनाश करते हैं, और देश के विनाश से व्याकुल हैं।

7.98.10

रोधयन्त्यागतं क्षोभं भूकम्पमिव पर्वताः । उत्साहयन्ति विपदि सुखयन्ति च संपदि ॥ १० ॥

rodhayantyāgataṃ kṣobhaṃ bhūkampamiva parvatāḥ | utsāhayanti vipadi sukhayanti ca saṃpadi || 10 ||

They restrain the incoming agitation like mountains restrain an earthquake, inspire in adversity, and bring happiness in prosperity.

वे आने वाले क्षोभ को पर्वतों की तरह भूकंप को रोकते हैं, विपदा में उत्साहित करते हैं, और समृद्धि में सुख देते हैं।

7.98.11

चन्द्रबिम्बोपमाकारा दारा इव गुणाकराः । यशःपुष्पामलदिशो भाविसत्फलहेतवः ॥ ११ ॥

candrabimbopamākārā dārā iva guṇākarāḥ | yaśaḥpuṣpāmaladiśo bhāvisatphalahētavaḥ || 11 ||

Like the moon, they are beautiful and virtuous like wives | They are the cause of future fruits, like the directions adorned with flowers of fame

चन्द्रमा की तरह सुंदर और गुणवान पत्नियों की तरह | ये भविष्य के फलों के कारण हैं, यश के फूलों से सुशोभित दिशाओं की तरह

7.98.12

पुंस्कोकिलसमालापा माधवा इव साधवः । कल्लोलबहुलावर्तं व्यामोहमकरालयम् ॥ १२ ॥

puṃskokilasamālāpā mādhvā iva sādhavaḥ | kallōlabahulāvartāṃ vyāmōhamakarālayam || 12 ||

Like the sweet-speaking cuckoo, the virtuous ones speak like Madhava | They create a whirlpool of many waves, a bewildering abode of illusion

मधुर बोलने वाले कोयल की तरह, साधु लोग माधव की तरह बोलते हैं | वे अनेक लहरों का भँवर बनाते हैं, एक भ्रम का आश्चर्यजनक निवास

7.98.13

लुठन्तमिव हेमन्तं लोडयन्तं जनास्पदम् । वीचिविक्षोभचपलं परचित्तमहार्णवम् ॥ १३ ॥

luṭhantamiva hemantaṃ loḍayantaṃ janāspadam | vīcivikṣōbhacapalaṃ paracittamahārṇavam || 13 ||

Like the rolling winter, agitating the abode of people | The fickle ocean of others' minds, disturbed by the waves

घूमते हुए सर्दी की तरह, लोगों के निवास को विचलित करता है | दूसरों के मन का चंचल समुद्र, लहरों से विचलित

7.98.14

तच्च रोधयितुं शक्तास्तटस्थाः साधुपर्वताः । आपत्सु बुद्धिनाशेषु कल्लोलेष्वाकुलेषु च ॥ १४ ॥

taccarodhayituṃ śaktāstataṭasthāḥ sādhuparvatāḥ | āpatsu buddhināśeṣu kallōlēṣvākulēṣu ca || 14 ||

Those virtuous mountains standing on the shore are capable of stopping that | In the calamities of the destruction of intellect, in the turbulent waves

तट पर खड़े हुए साधु पर्वत उसे रोकने में सक्षम हैं | बुद्धि के नाश की आपदाओं में, उथल-पुथल की लहरों में

7.98.15

संकटेषु दुरन्तेषु सन्त एव गतिः सताम् । एभिश्चिह्नैरथान्यैश्च ज्ञात्वा तानुचिताशयान् ॥ १५ ॥

saṅkaṭeṣu durantēṣu santa ēva gatiḥ satām | ēbhiścihnai rathānyaiśca jñātvā tānucitāśayān || 15 ||

In difficult and insurmountable crises, the virtuous are the refuge of the good | Knowing them by these and other signs, with appropriate intentions

कठिन और अजेय संकटों में, साधु लोग ही सज्जनों के आश्रय हैं | इन और अन्य चिह्नों से उन्हें जानकर, उचित इरादों से

7.98.16

आश्रयेतैकविश्रान्त्यै श्रान्तः संसारवर्त्मना । यस्मादत्यन्तविषमः संसारोरगसागरः ॥ १६ ॥

āśrayetaikaviśrāntyai śrāntaḥ saṃsāravartmanā | yasmādtyantaviṣamaḥ saṃsāroragasāgaraḥ || 16 ||

One should take refuge in the One who is the ultimate rest, being tired of the path of the world, because the ocean of the world is extremely harsh.

संसार के मार्ग से थका हुआ व्यक्ति उस एक में शरण लेनी चाहिए जो अन्तिम विश्राम है, क्योंकि संसार का सागर अत्यन्त कठिन है।

7.98.17

विना सत्सङ्गमन्येन पोतकेन न तीर्यते । आस्तां किं मे विचारेण यद्भवेदस्तु तन्मम ॥ १७ ॥

vinā satsaṅgamanyena potakena na tīryate | āstāṃ kiṃ me vicāreṇa yadbhavedastu tanmama || 17 ||

Without the boat of good company, one cannot cross over. Let whatever happens to me be so.

सत्संग के बिना किसी अन्य नाव से पार नहीं हो सकता। जो भी हो, वही हो।

7.98.18

इत्यन्तः कल्कमासाद्य न स्थेयं गर्तकीटवत्। एकोऽपि विद्यते यस्य गुणस्तं सर्वमुत्सृजन्॥ १८॥

ityantaḥ kalkamāsādya na stheyaṃ gartakīṭavat | eko'pi vidyate yasya guṇastāṃ sarvamutsṛjan || 18 ||

Having reached the inner essence, one should not remain like a worm in a hole. Even if there is only one good quality, one should abandon everything else for it.

अन्तर्मन को पाकर, कोई भी कीड़े की तरह गड्ढे में नहीं रहना चाहिए। अगर एक ही गुण है, तो उसके लिए सब कुछ छोड़ देना चाहिए।

7.98.19

अनादृतान्यतद्दोषं तावन्मात्रं समाश्रयेत्। गुणान्दोषांश्च विज्ञातुमाबाल्यात्स्वप्रयत्नतः॥ १९॥

anādṛtānyataddoṣaṃ tāvanmātraṃ samāśrayet | guṇāndoṣāṃśca vijñātumābālyātsvaprayatnataḥ || 19 ||

One should ignore the faults of others to that extent. From childhood, one should strive to understand the qualities and faults through one's own efforts.

दूसरों के दोषों को उतना ही अनदेखा करना चाहिए। बचपन से ही, अपने प्रयासों से गुणों और दोषों को समझने की कोशिश करनी चाहिए।

7.98.20

यथासंभवसत्सङ्गशास्त्रैः प्राग्धियमेधयेत्। दोषलेशमनादृत्य नित्यं सेवेत सज्जनम्॥ २०॥

yathāsaṃbhavasatsaṅgaśāstraiḥ prāgdhimedhayet | doṣaleśamanādṛtya nityaṃ seveta sajjanam || 20 ||

One should cultivate intelligence through scriptures and good company as much as possible. Always serve the wise, ignoring even a trace of fault.

संभव हो तो शास्त्रों और सत्संग से बुद्धि का विकास करना चाहिए। दोष की छाया को अनदेखा करते हुए, हमेशा सज्जन की सेवा करनी चाहिए।

7.98.21

स्थूलदोषं त्वनिर्वाणं शनैः परिहरेत्क्रमात्। याति रम्यमरम्यत्वं स्थिरमस्थिरतामपि॥ २१॥

sthūladōṣaṃ tvānirvāṇaṃ śanaiḥ pariharetkrāmāt | yāti ramyamaramyatvaṃ sthiramāsthiratāmapi || 21 ||

One should gradually remove gross faults, which are not easily eradicated. They can transform from pleasant to unpleasant, and from stable to unstable.

स्थूल दोषों को, जो आसानी से दूर नहीं होते, धीरे-धीरे क्रमशः दूर करना चाहिए। वे सुखद से दुःखद और स्थिर से अस्थिर हो सकते हैं।

7.98.22

यथा दृष्टं तथा मन्ये याति साधुरसाधुताम्। एष सोऽत्यन्त उत्पातो यः साधुर्याति दुष्टताम्॥ २२॥

yathā dṛṣṭaṃ tathā manye yāti sādhurasādhutām | eṣa so'tyanta utpāto yaḥ sādhuryāti duṣṭatām || 22 ||

As one perceives, so one believes. A virtuous person can become non-virtuous, and this is a great calamity when a virtuous person turns wicked.

जैसा देखा जाता है, वैसा ही माना जाता है। एक साधु व्यक्ति असाधु हो सकता है, और यह एक बड़ी विपत्ति है जब एक साधु व्यक्ति दुष्ट हो जाता है।

7.98.23

देशकालवशात्पापैर्महोत्पातोऽपि दृश्यते । सर्वकर्माणि संत्यज्य कुर्यात्सज्जनसंगमम् । एतत्कर्म निराबाधं लोकद्वितयसाधनम् ॥ २३ ॥

deśakālavāśātpāpairmahōtpātō'pi dṛśyatē | sarvakarmāṇi saṃtyajya kuryātsajjanasaṃgamam | ētatkarma nirābādhaṃ lōkadvitayasādhanam || 23 ||

Due to the influence of place and time, even great calamities caused by sins are seen. One should abandon all actions and associate with good people. This action is unimpeded and leads to the attainment of both worlds.

स्थान और समय के प्रभाव से, पापों द्वारा उत्पन्न महान विपत्तियाँ भी देखी जाती हैं। एक व्यक्ति को सभी कर्मों को त्याग देना चाहिए और सज्जनों के साथ संग करना चाहिए। यह कर्म बाधारहित है और दोनों लोकों की प्राप्ति के लिए है।

7.98.24

न सज्जनाद्दूरतरः क्वचिद्भवेद्भजेत साधून्विनयक्रियान्वितः । स्पृशन्त्ययत्नेन हि तत्समीपगं विसारिणस्तद्गतपुष्परेणवः ॥ २४ ॥

na sajjanāddūrataraḥ kvacidbhavēdbhajēt sādhūnvīnayakriyānvitaḥ | spṛśantyayatnēna hi tatsamīpagaṃ visāriṇastadgatapuṣparēṇavaḥ || 24 ||

One should never be far from good people. One should serve the virtuous with humility and respect. Even without effort, the breeze carries the pollen of flowers to those who are near.

एक व्यक्ति को कभी भी सज्जनों से दूर नहीं होना चाहिए। उन्हें विनम्रता और सम्मान के साथ सज्जनों की सेवा करनी चाहिए। बिना किसी प्रयास के, हवा फूलों के पराग को उन तक ले जाती है जो पास हैं।

Chapter 99

7.99.1

श्रीराम उवाच । सन्ति दुःखक्षयेऽस्माकं शास्त्रसत्सङ्गयुक्तयः । मन्त्रौषधितपोदानतीर्थपुण्याश्रमाश्रयाः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | santi duḥkhakṣaye'smākaṃ śāstrasatsaṅgayuktayaḥ |
mantrauṣadhitapodānatīrthapuṇyāśramāśrayāḥ || 1 ||

Shri Rama said: There are means for the destruction of our sorrows, such as association with good scriptures, mantras, medicines, austerities, charity, pilgrimages, and holy places.

श्री राम ने कहा: हमारे दुःखों के नाश के लिए शास्त्रों, मंत्रों, औषधियों, तपस्या, दान, तीर्थों और पुण्य आश्रमों के संग के साधन हैं।

7.99.2

कृमिकीटपतङ्गाद्यास्तिर्यक्स्थावरजातयः । कथं स्थिताः किमारम्भास्तेषां दुःखक्षयः कथम् ॥ २ ॥

kṛmikīṭapataṅgādyāstiryaksthāvarajātayaḥ | kathaṃ sthitāḥ kimārambhāstēṣāṃ duḥkhakṣayaḥ katham || 2 ||

How do worms, insects, birds, and other immovable beings exist? What are their endeavors? How is their sorrow destroyed?

कीट, पतंगे और अन्य स्थावर जीवों का अस्तित्व कैसे है? उनके प्रयास क्या हैं? उनका दुःख कैसे नष्ट होता है?

7.99.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । सर्वाण्येवेह भूतानि स्थावराणि चराणि च । आत्मोचितायां सत्तायां विश्रान्तानि स्थितान्यलम् ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sarvāṇyevēha bhūtāni sthāvarāṇi carāṇi ca | ātmōcitāyāṃ sattāyāṃ viśrāntāni sthitānyalam || 3 ||

Vasishtha said: All beings, both movable and immovable, are established in their own nature and are content in their existence.

वसिष्ठ ने कहा: सभी जीव, चर और अचर, अपनी प्रकृति में स्थित हैं और अपने अस्तित्व में संतुष्ट हैं।

7.99.4

भूतानामणुमात्राणामप्यस्माकमिवैषणाः किंत्वल्पास्ता वयं विघ्नास्तेषां त्वचलसंनिभाः ॥ ४ ॥

bhūtānāmaṇumātrāṇāmapyasmākamivaiṣaṇāḥ kiṃtvalpāsthā vayaṃ vighnāsteṣāṃ tvacalasaṃnibhāḥ || 4 ||

Even the beings as subtle as atoms have desires like ours. Yet, how insignificant are we, like mere skins, obstacles to them.

परमाणु के समान सूक्ष्म प्राणी भी हमारे जैसे ही इच्छाओं से युक्त होते हैं। फिर भी, हम कितने तुच्छ हैं, उनकी त्वचा के समान, उनके लिए विघ्न मात्र।

7.99.5

यथा विराट् प्रयतते बालखिल्यास्तथैव खे । बालमुष्ट्यल्पकायेऽपि पश्याहंकृतिजृम्भितम् ॥ ५ ॥

yathā virāṭ prayatate bālakhilyāstathaiva khe | bālamuṣṭyalpakāye'pi paśyāhaṃkṛtijṛmbhitam || 5 ||

Just as a giant strives, so do the tiny Bala-Khilyas in the sky. Even in a small body, see the pride and arrogance.

जैसे एक विराट् पुरुष प्रयास करता है, वैसे ही आकाश में छोटे बाल-खिल्य भी प्रयास करते हैं। छोटे शरीर में भी अहंकार और घमंड देखा जा सकता है।

7.99.6

जायन्ते च म्रियन्ते च निराधारेऽम्बरे खगाः । शून्यैकविषयास्तेषां स्वास्थ्यं न भवति क्षणम् ॥ ६ ॥

jāyante ca mriyante ca nirādhāre'mbare khagāḥ | śūnyaikaviṣayāsteṣāṃ svāsthyaṃ na bhavati kṣaṇam || 6 ||

Birds are born and die in the unsupported sky; their well-being does not last even for a moment, as their focus is solely on emptiness.

पक्षी असहाय आकाश में जन्म लेते हैं और मर जाते हैं; उनका स्वास्थ्य एक क्षण भी नहीं रहता, क्योंकि उनका ध्यान केवल शून्यता पर होता है।

7.99.7

पिपीलिकायाश्चेष्टाभिर्ग्रासावासात्मबन्धुभिः । अस्मद्दिवसकल्पोऽपि न पर्याप्तः क्षणो यथा ॥ ७ ॥

pipīlikāyāśceṣṭābhirgrāsāvāsātmabandhubhiḥ | asmaddivasakalpo'pi na paryāptaḥ kṣaṇo yathā || 7 ||

Even a day in the life of an ant, filled with activities like eating and building homes, seems insufficient, just like a moment.

चींटी के जीवन में एक दिन, जो खाने और घर बनाने जैसी गतिविधियों से भरा होता है, एक क्षण की तरह अपर्याप्त लगता है।

7.99.8

त्रसरेणुप्रमाणात्मा कृम्यणुस्तिमिनामकः । गमने व्यग्रता तस्य गरुडस्येव लक्ष्यते ॥ ८ ॥

trasareṇupramāṇātmā kṛmyaṇustimināmakaḥ | gamane vyagratā tasya garuḍasyeva lakṣyate || 8 ||

A tiny insect named Timingala is as small as a particle of dust, yet its eagerness in movement is comparable to that of Garuda.

एक छोटा कीड़ा जिसे टिमिनामक कहते हैं, धूल के कण जितना छोटा होता है, फिर भी उसकी गति में उत्साह गरुड जितना ही होता है।

7.99.9

अयं सोहमिदं तन्म इत्याकल्पितकल्पनम् । जगद्यथा नृणां स्फारं तथैवोच्चैर्गुणैः कृमेः ॥ ९ ॥

ayaṃ sohamidaṃ tanma ityākalpitakalpanam | jagadyathā nṛṇāṃ sphāraṃ tathaivoccairguṇaiḥ kṛmeḥ || 9 ||

The concept of 'I am this, this is mine' is an imagined construct. Just as the world appears expansive to humans, so too does the insect perceive its qualities as vast.

'मैं यह हूँ, यह मेरा है' यह एक कल्पित धारणा है। जैसे संसार मनुष्यों के लिए विशाल दिखाई देता है, उसी तरह कीड़ा भी अपनी गुणों को विशाल मानता है।

7.99.10

देशकालक्रियाद्रव्यव्यग्रया जर्जरीकृतम् । क्षीयते व्रणकीटानामस्माकमिव जीवितम् ॥ १० ॥

deśakālakriyādravyavyagrayā jarjarīkṛtam | kṣīyate vraṇakīṭānāmasmākamiva jīvitam || 10 ||

Engaged in the activities of place, time, action, and substance, life becomes worn out, just like the life of insects in a wound.

स्थान, समय, क्रिया और पदार्थ की गतिविधियों में व्यस्त होकर, जीवन थका हुआ हो जाता है, जैसे घाव में कीड़ों का जीवन।

7.99.11

पादपाः किंचिदुन्निद्रा घननिद्राः खलूपलाः । कृमिकीटादयः कार्ये नरवत्स्वप्नबोधिनः ॥ ११ ॥

pādapāḥ kiṃcidunnidrā ghananidrāḥ khalūpalāḥ| kṛmikīṭādayaḥ kārye naravatsvapnabodhinaḥ || 11 ||

Plants are somewhat awake, while stones are in deep sleep. Insects and worms, like humans, are awake for their duties.

पौधे थोड़े जागरूक हैं, जबकि पत्थर गहरी नींद में हैं। कीट-पतंगे और कीड़े, मनुष्यों की तरह, अपने कार्यों के लिए जागरूक हैं।

7.99.12

शरीरनाश एवैषां सुखं संप्रति दुःखकृत्। अस्माकमिव तेषां तज्जीवितं तु सुखायते ॥ १२ ॥

śarīranāśa evaiṣāṃ sukhaṃ saṃprati duḥkhakṛt| asmākamiva teṣāṃ tajjīvitaṃ tu sukhāyate || 12 ||

For them, the destruction of the body is happiness, which is currently causing suffering. Their life, like ours, is considered to be for happiness.

उनके लिए, शरीर का नाश सुख है, जो वर्तमान में दुःख उत्पन्न कर रहा है। उनका जीवन, हमारे जीवन की तरह, सुख के लिए माना जाता है।

7.99.13

जनो द्वीपान्तरं यादृग्विक्रीतः परिपश्यति। पदार्थजालं पश्यन्ति तादृक्पशुमृगादयः ॥ १३ ॥

jano dvīpāntaraṃ yādṛgvikrītaḥ paripaśyati| padārthajālaṃ paśyanti tādṛkpashumṛgādayaḥ || 13 ||

People see the other island as it is sold. Animals and birds see the network of objects in a similar way.

लोग दूसरे द्वीप को उसी तरह देखते हैं जैसे वह बेचा जाता है। पशु और पक्षी वस्तुओं के जाल को उसी तरह देखते हैं।

7.99.14

अस्माकमिव संसारस्तिरश्चां सुखदुःखदः। पदार्थप्रविभागेन केवलं ते विवर्जिताः ॥ १४ ॥

asmākamiva saṃsārastiraścāṃ sukhaduḥkhadaḥ| padārthapravibhāgena kevalaṃ te vivarjitāḥ || 14 ||

Like ours, the world of animals is full of happiness and sorrow. They are only differentiated by the distinction of objects.

हमारे जैसे, पशुओं का संसार सुख और दुःख से भरा है। वे केवल वस्तुओं के भेद से अलग हैं।

7.99.15

हृदयात्सुखदुःखाभ्यां नासातो रशनागुणैः। पशवः परिकृष्यन्ते विक्रीताः पामरा अपि ॥ १५ ॥

hṛdayātsukhaduḥkhābhyāṃ nāsāto rasaṇāguṇaiḥ| paśavaḥ parikṛṣyante vikrītāḥ pāmarā api || 15 ||

Animals are attracted by happiness and sorrow from the heart, by smell from the nose, and by taste from the tongue. Even the ignorant are sold.

पशु हृदय से सुख और दुःख, नाक से गंध, और जीभ से स्वाद से आकर्षित होते हैं। अज्ञानी भी बेचे जाते हैं।

7.99.16

सुप्तानां यादृगस्माकं वेदनं स्पष्टसुत्वचाम्। वृक्षगुल्माङ्कुरादीनां तादृगुद्दामवेदनम् ॥ १६ ॥

suptānāṃ yādṛgasmākaṃ vedanaṃ spaṣṭasutvacām | vṛkṣagulmāṅkurādīnāṃ tādṛguddāmavedanam || 16 ||

Just as we experience clear perception in our dreams, similarly, plants and sprouts have a similar kind of perception.

जैसे हम अपने सपनों में स्पष्ट अनुभूति करते हैं, वैसे ही पेड़-पौधों को भी ऐसी ही अनुभूति होती है।

7.99.17

यादृगस्माकमीत्यर्थक्रमसंसारपातिनाम्। पदार्थवेदनं तादृक्तिरश्चां भ्रान्तमभ्रमम् ॥ १७ ॥

yādṛgasmākamītyarthakramasaṃsārapātinām | padārthavedanaṃ tādṛktiraścāṃ bhrāntamabhramam || 17 ||

Just as we perceive objects in a sequence in our dreams, similarly, animals perceive objects in a sequence, which is a kind of delusion.

जैसे हम अपने सपनों में वस्तुओं को क्रम में अनुभव करते हैं, वैसे ही पशु भी वस्तुओं को क्रम में अनुभव करते हैं, जो एक प्रकार का भ्रम है।

7.99.18

आह्लादमात्रे सौम्यत्वं सुखतश्चेन्द्रकीटयोः । समं विकल्पविन्मुक्तं विकल्पस्त्वनतिक्रमः ॥ १८ ॥

āhlādamātre saumyatvaṃ sukhataścendrakīṭayoḥ | samaṃ vikalpavinmuktaṃ vikalpastvanatikramaḥ || 18 ||

In terms of pleasure, both the king and the insect are equal, free from alternatives, but the alternative is not transcended.

सुख के मामले में, राजा और कीड़ा दोनों बराबर हैं, विकल्पों से मुक्त, लेकिन विकल्प पार नहीं किया जाता।

7.99.19

रागद्वेषभयाहारमैथुनोत्थं सुखासुखम् । तिरश्चां जन्ममृत्यादिखेदः कश्चिन्न भिद्यते ॥ १९ ॥

rāgadveṣabhayāhāramaitunotthaṃ sukhāsukham | tiraścāṃ janmamṛtyādikhedaḥ kaścinnabhidyate || 19 ||

The pleasure and pain arising from attachment, aversion, fear, food, and sexual union do not cause any significant distress to animals.

आसक्ति, घृणा, भय, भोजन और यौन संबंध से उत्पन्न सुख-दुःख पशुओं को कोई महत्वपूर्ण कष्ट नहीं पहुँचाते।

7.99.20

ऋते पदार्थभूतार्थभविष्यद्वस्तुबोधतः । शेषं बभ्रवहिगोमायुगजादीनां नृभिः समम् ॥ २० ॥

ṛte padārthabhūtārthabhaviṣyadvastubodhataḥ | śeṣaṃ babhrvahigomāyugajādīnāṃ nṛbhiḥ samam || 20 ||

Except for the knowledge of objects, past, present, and future things, the rest of the knowledge of animals like mongoose, snake, cow, peacock, and elephant is similar to that of humans.

वस्तुओं, भूतकाल, वर्तमान और भविष्य के ज्ञान को छोड़कर, नेवले, साँप, गाय, मोर और हाथी जैसे पशुओं का बाकी ज्ञान मनुष्यों के समान है।

7.99.21

निद्रामयानां वृक्षाणां स्वसत्तामचलादयः । स्थिता अनुभवन्तोऽन्ये चिदाकाशमखण्डितम् ॥ २१ ॥

nidrāmayānāṃ vṛkṣāṇāṃ svasattāmacalādayaḥ| sthitā anubhavanto'nye cidākāśamakhaṇḍitam || 21 ||

The trees, which are in a state of sleep, have their own existence in mountains and other stable entities. Others, experiencing the unbroken consciousness-space, remain steadfast.

निद्रा में हैं वृक्ष, जिनकी अपनी सत्ता पर्वतों और अन्य स्थिर वस्तुओं में है| अन्य लोग, जो अखंडित चेतना-आकाश का अनुभव करते हैं, स्थिर रहते हैं।

7.99.22

आपीननिद्रा वृक्षाद्याः स्वसत्तास्थास्तथाद्रयः । जङ्गमानि चिदाकाशं नाम किंचित्कदाचन ॥ २२ ॥

āpīnanidrā vṛkṣādyāḥ svasattāsthāstathādrayaḥ| jaṅgamāni cidākāśaṃ nāma kiṃcitkadācana || 22 ||

The trees and other entities, which are in deep sleep, have their own existence in mountains and other stable entities. Mobile beings experience the consciousness-space, which is nameless and formless.

गहरी निद्रा में हैं वृक्ष और अन्य वस्तुएँ, जिनकी अपनी सत्ता पर्वतों और अन्य स्थिर वस्तुओं में है| चलते-फिरते प्राणी चेतना-आकाश का अनुभव करते हैं, जो नाम और रूप से रहित है।

7.99.23

अखण्डचित्ता शैलादिसत्ता निद्रा च भूरुहाम्। द्वैतोपलम्भमुक्तत्वात्खमेवैकमतो जगत्॥ २३॥

akhāṇḍacittā śailādisattā nidrā ca bhūruhām| dvaitopalambhamuktatvātkhamevaikamato jagat || 23 ||

The unbroken consciousness is the essence of mountains and other entities, as well as the sleep of trees. Due to the absence of dual perception, the sky alone is the world.

अखंडित चेतना पर्वतों और अन्य वस्तुओं की सत्ता है, साथ ही वृक्षों की निद्रा भी| द्वैत के अनुभव की अनुपस्थिति के कारण, आकाश ही संसार है।

7.99.24

परिज्ञातं जगद्यावदपरिज्ञानसंयुतम्। न त्वं नाहं न चैवास्तिनास्ती न च भविष्यति॥ २४॥

parijñātaṃ jagadyāvadaparijñānasamyutam| na tvaṃ nāhaṃ na caivāstināstī na ca bhaviṣyati || 24 ||

The world is known as long as it is accompanied by ignorance. There is no you, no I, nothing exists, nothing will exist.

संसार तब तक ज्ञात है जब तक यह अज्ञान से युक्त है| न तुम हो, न मैं हूँ, न ही कुछ है, न ही कुछ होगा।

7.99.25

यथास्थितं सदैवेदं मौनमेव शिलाघनम्। अनाद्यन्तमविच्छिद्रमनिद्रं च सनिद्रकम्॥ २५॥

yathāsthitaṃ sadaivedaṃ maunameva śilāghanam| anādyantamavicchidramanidraṃ ca sanidrakam || 25 ||

This is always as it is, eternally silent, solid like a rock, without beginning or end, without any gap, sleepless, and yet in sleep.

यह हमेशा ऐसा ही है, नित्य मौन, पत्थर की तरह ठोस, आदि-अंत रहित, किसी भी दरार से रहित, निद्राहीन, और फिर भी निद्रा में।

7.99.26

पूर्वं सर्गाद्यथैवासीत्तथैवैकं समस्थितम्। भविष्यत्यधुनानन्तकालमेवं तथैव च॥ २६॥

pūrvaṃ sargādyathaivāsīttathaivaikaṃ samasthitam | bhaviṣyatyadhunānantakālamevaṃ tathaiva ca || 26 ||

As it was in the beginning of creation, so it remains now, and it will remain the same for an infinite time.

जैसा सृष्टि के आरंभ में था, वैसा ही अब भी है और यह अनंत काल तक वैसा ही रहेगा।

7.99.27

नैवात्मता न परता न जगत्ता न शून्यता। न मौनता न मौनित्वं किंचिन्नेहोपपद्यते॥ २७॥

naivātmatā na paratā na jagattā na śūnyatā | na maunatā na maunitvaṃ kiñcinnehopapadyate || 27 ||

There is no selfhood, no otherness, no worldliness, no emptiness, no silence, no state of being a silent sage; nothing whatsoever exists here.

यहाँ न तो आत्मता है, न परता, न जगत्ता, न शून्यता, न मौनता, न मौनित्व; यहाँ कुछ भी नहीं है।

7.99.28

त्वं यथास्थितमेवास्व यथास्थितमहं स्थितः। सुखासुखे पराकाशे शान्ते नेहास्ति किंचन॥ २८॥

tvaṃ yathāsthitamevāsva yathāsthitamahaṃ sthitaḥ | sukhāsukhe parākāśe śānte nehāsti kiñcana || 28 ||

You are as you are, and I am as I am. In happiness and sorrow, in the supreme light, in peace, there is nothing here.

तुम जैसे हो वैसे ही हो, और मैं जैसा हूँ वैसा ही हूँ। सुख-दुःख में, परम प्रकाश में, शांति में, यहाँ कुछ भी नहीं है।

7.99.29

परमाकाशतां मुक्त्वा किं स्वप्ननगरे वद । विद्यते किल तच्छान्तं चिद्व्योमाच्छमनामयम् ॥ २९ ॥

paramākāśatāṃ muktvā kiṃ svapnanagare vada | vidyate kil tacchāntaṃ cidvyomācchamanāmayaṃ || 29 ||

Leaving aside the supreme sky, what can be said about the dream city? It is said to be peaceful, the sky of consciousness, free from sorrow.

परम आकाश को छोड़कर, स्वप्न नगर के बारे में क्या कहा जा सकता है? यह शांत है, चेतना का आकाश, दुःख से मुक्त है।

7.99.30

अपरिज्ञप्तिरेवैका तत्र संभ्रमकारिणी । परिज्ञातमिदं यावद्विद्यते सापि न क्वचित् ॥ ३० ॥

aparijñaptirevaikā tatra saṃbhramakāriṇī | parijñātamidaṃ yāvadvidyate sāpi na kvacit || 30 ||

Only ignorance is the cause of confusion there. As long as this is known, it does not exist anywhere.

वहाँ केवल अज्ञान ही भ्रम का कारण है। जब तक यह ज्ञात है, तब तक यह कहीं नहीं है।

7.99.31

परिज्ञाते जगत्स्वप्ने यावत्सत्यं न किंचन ग्रहस्तदेनं प्रति किं स्नेहो वन्ध्यासुते तु कः ॥ ३१ ॥

parijñāte jagatsvapne yāvatsatyaṃ na kiṃcana grahas tadenaṃ prati kiṃ snehō vandhyāsutē tu kaḥ || 31 ||

When the world is known to be a dream, nothing is true. What is the affection for it? What is the affection for a barren woman's son?

जब जगत स्वप्न के रूप में जाना जाता है, तब कुछ भी सत्य नहीं है। इसके प्रति क्या स्नेह है? वन्ध्या सुत के प्रति क्या स्नेह है?

7.99.32

स्वप्नकाले परिज्ञाते जगत्स्वप्नमणावणौ किमुपादेयता कास्था प्रबोधेऽसौ न किंचन ॥ ३२ ॥

svapnakāle parijñāte jagatsvapnamaṇāvaṇau kimupādeyatā kāsthā prabodhe'sau na kiṃcana || 32 ||

In the dream state, when the world is known to be a dream, what is the utility of it? Upon awakening, it is nothing.

स्वप्न अवस्था में, जब जगत स्वप्न के रूप में जाना जाता है, तब इसकी उपयोगिता क्या है? जागने पर, यह कुछ नहीं है।

7.99.33

यन्न किंचित्प्रबोधोऽस्ति नाप्रबोधोऽस्ति तत्क्वचित् यस्तूपलम्भस्तत्काले पूर्वावस्थैव सा तथा ॥ ३३ ॥

yanna kiṃcitprabodho'sti nāprabodho'sti tatkvacit yastūpalambhastatkāle pūrvāvasthaiva sā tathā || 33 ||

That which does not exist upon awakening does not exist even before awakening. Whatever is perceived at that time is only the previous state.

जो जागने पर नहीं होता, वह जागने से पहले भी नहीं होता। जो उस समय अनुभव होता है, वह केवल पिछली अवस्था है।

7.99.34

विद्यते वर्तमानत्वं भविष्यद्भूतता तथा बोधाबोधश्च नो सत्यं वस्तु शान्तं किलाखिलम् ॥ ३४ ॥

vidyate vartamānatvaṃ bhaviṣyadbhūtatā tathā bodhābodhaśca no satyaṃ vastu śāntaṃ kilākhilam || 34 ||

The present, future, and past are not real. Neither is the state of knowledge nor ignorance. The ultimate reality is peaceful and complete.

वर्तमान, भविष्य, और भूत वास्तविक नहीं हैं। न ज्ञान की अवस्था है और न अज्ञान। अंतिम वास्तविकता शांत और पूर्ण है।

7.99.35

यथोर्मिणोर्मौ निहते न काचित्पयसां क्षतिः तथा देहेन निहते देहे नास्ति चितेः क्षतिः ॥ ३५ ॥

yathormiṇormau nihate na kācitpayasāṃ kṣatiḥ tathā dehena nihate dehe nāsti citeḥ kṣatiḥ || 35 ||

Just as the destruction of a wave does not harm the water, similarly, the destruction of the body does not harm the consciousness.

जैसे लहर के नष्ट होने से पानी को कोई हानि नहीं होती, उसी तरह शरीर के नष्ट होने से चेतना को कोई हानि नहीं होती।

7.99.36

चितावाकाश एवाहं देह इत्युपजायते । संविदेव ततो देहे नष्टे किं नाम नश्यति ॥ ३६ ॥

citāvākāśa evāhaṃ deha ityupajāyate | saṃvideva tato dehe naṣṭe kiṃ nāma naśyati || 36 ||

I am the space of consciousness; the body is only an appearance. When the body perishes, what is lost?

मैं चेतना का आकाश हूँ; शरीर तो बस एक भ्रम है। शरीर नष्ट होने पर, क्या नष्ट होता है?

7.99.37

प्रबुद्धस्यैव चिद्व्योम्नः स्वप्नो जगदिति स्थितम् । पृथ्व्यादिरहितं यस्मात्तस्मात्स्वप्नात्मकं जगत् ॥ ३७ ॥

prabuddhasyaiva cidvyomnaḥ svapno jagaditi sthitam | pṛthvyādirahitaṃ yasmāttasmātsvapnātmakaṃ jagat || 37 ||

The world is like a dream to the awakened one who is the space of consciousness. Since it is devoid of earth and other elements, the world is dream-like.

जाग्रत व्यक्ति के लिए, जो चेतना का आकाश है, संसार एक स्वप्न की तरह है। क्योंकि यह पृथ्वी और अन्य तत्वों से रहित है, संसार स्वप्न-सदृश है।

7.99.38

सर्गादौ पूर्वचित्स्वप्नाज्जाता पृथ्व्यादिवस्तुधीः । स्वप्नार्थे सत्यताभ्रान्तिः कल्पनामात्ररूपिणी ॥ ३८ ॥

sargādau pūrvacitsvapnājjātā pṛthvyādivastudhīḥ | svapnārthe satyatābhrāntiḥ kalpanāmātrarūpiṇī || 38 ||

At the beginning of creation, the idea of earth and other elements arises from the previous dream of consciousness. The reality of the dream objects is merely an illusion of imagination.

सृष्टि के आरंभ में, चेतना के पिछले स्वप्न से पृथ्वी और अन्य तत्वों की धारणा उत्पन्न होती है। स्वप्न के वस्तुओं की सत्यता केवल कल्पना का भ्रम है।

7.99.39

पूर्वात्पूर्वतरस्यास्य स्वप्नस्यावयवस्थितौ । सत्येवासत्यरूपायां पृथ्व्यादिकलना कृता ॥ ३९ ॥

pūrvātpūrvatarasyāsya svapnasya avayavasthitau | satyevāsatyarūpāyāṃ pṛthvyādikalanā kṛtā || 39 ||

In the state of the parts of the previous dream, which is real but appears unreal, the conception of earth and other elements is made.

पिछले स्वप्न के अवयवों की स्थिति में, जो सत्य है लेकिन असत्य प्रतीत होता है, पृथ्वी और अन्य तत्वों की कल्पना की जाती है।

7.99.40

सा च भ्रान्तिस्तथा रूढा यथासत्यैव सत्यताम्। परमामागता तत्तु सत्यमत्यन्तनिर्मलम्॥ ४०॥

sā ca bhrāntistathā rūḍhā yathāsatyai va satyatām | paramāmāgatā tattu satyamatyantanirmalam || 40 ||

That delusion is firmly established as if it were true. It has reached the ultimate truth, which is absolutely pure.

वह भ्रांति ऐसे दृढ़ता से स्थापित है मानो यह सत्य हो। यह परम सत्य तक पहुँच गया है, जो अत्यंत शुद्ध है।

7.99.41

वस्तुतस्तु यथाभूतं चिद्ब्रह्मैवाततं स्थितम्। न च तत्संस्थितं किंचित्स्मर्ताऽस्मर्ता किमात्मकः॥ ४१॥

vastutastu yathābhūtaṃ cidbabrahmaivātataṃ sthitam | na ca tatsaṃsthitaṃ kiṃcitsmartā'smartā kimātmakaḥ || 41 ||

In reality, the pure consciousness, which is Brahman, is pervaded and established as it is | There is nothing established there, what is the nature of the one who remembers or does not remember?

वास्तव में, शुद्ध चेतना, जो ब्रह्म है, वह वैसे ही व्याप्त और स्थापित है | वहाँ कुछ भी स्थापित नहीं है, याद रखने वाले या न याद रखने वाले का स्वभाव क्या है?

7.99.42

एवं मात्रापरिज्ञानमेवात्र प्रतिबोधकम्। अत्रैव तु परिज्ञानं कवाटप्रविघाटनम्॥ ४२॥

evaṃ mātrāparijñānam evātra pratibodhakam | atraiva tu parijñānaṃ kavāṭapravighāṭanam || 42 ||

Thus, the knowledge of the measure is indeed the awakener here | In this very place, the knowledge is the opening of the door

इस प्रकार, माप का ज्ञान यहाँ वास्तव में जागरूक करने वाला है | इसी स्थान पर, ज्ञान दरवाजे को खोलना है

7.99.43

पारिशेष्यान्न पृथ्व्यादि किंचित्संभवति क्वचित्। यो द्रष्टा यच्च वा दृश्यं विमलं शिवमेव तत्॥ ४३॥

pāriśeṣyānna pṛthvyādi kiṃcitsaṃbhavati kvacit | yo draṣṭā yacca vā dṛśyaṃ vimalaṃ śivameva tat || 43 ||

From the residue, nothing like earth etc. arises anywhere | That which is the seer and that which is seen is pure and auspicious

शेष से, पृथ्वी आदि कुछ भी कहीं भी उत्पन्न नहीं होता | जो देखने वाला है और जो देखा जाता है, वह शुद्ध और शिव है

7.99.44

मुकुरेऽन्तर्यथा बिम्बाद्विम्बं भाति जगत्तथा। चिद्व्योमनि स्वतो भातमबिम्बादेव बिम्बितम्॥ ४४॥

mukure'ntaryathā bimbādvimbaṃ bhāti jagattathā | cidvyomani svato bhātamabimbādeva bimbītam || 44 ||

Just as the reflection appears from the original image in a mirror | Similarly, the world appears spontaneously in the sky of consciousness from the reflection itself

जैसे दर्पण में मूल प्रतिबिम्ब से प्रतिबिम्ब दिखाई देता है | उसी प्रकार, चेतना के आकाश में प्रतिबिम्ब से ही स्वयं जगत दिखाई देता है

7.99.45

मुकुरेऽन्तर्यथा बिम्बं न दृष्टमपि किंचन। तथा चिद्व्योमगं विश्वं न दृष्टमपि किंचन॥ ४५॥

mukure'ntaryathā bimbaṃ na dṛṣṭamapi kiṃcana | tathā cidvyomagaṃ viśvaṃ na dṛṣṭamapi kiṃcana || 45 ||

Just as nothing is seen inside the mirror except the reflection | Similarly, nothing is seen in the sky of consciousness except the world

जैसे दर्पण के अंदर प्रतिबिम्ब के अलावा कुछ भी नहीं दिखाई देता | उसी प्रकार, चेतना के आकाश में जगत के अलावा कुछ भी नहीं दिखाई देता

7.99.46

लभ्यते यद्विचारेण यत्सकारणकं स्थितम्तत्सच्छेषं तु भामात्रमभूतं सत्कथं भवेत् ॥ ४६ ॥

labhyate yadvicāreṇa yatsakāraṇakaṃ sthitamtatsaccheṣaṃ tu bhāmātramabhūtaṃ satkathaṃ bhavet || 46 ||

That which is obtained through reasoning and is dependent on a cause, that is merely an appearance and not real. How can it be considered real?

जो विचार से प्राप्त होता है और जो कारण पर निर्भर है, वह केवल एक भ्रम है और वास्तविक नहीं है। वह वास्तविक कैसे माना जा सकता है?

7.99.47

भवेद्भ्रमात्मकमपि किंचिदर्थक्रियाकरम्स्वप्नाङ्गनापि कुरुते सत्यामर्थक्रियां नृणाम् ॥ ४७ ॥

bhavedbhramātmakamapi kiṃcidarthakriyākaramsvapnāṅganāpi kurute satyāmarthakriyāṃ nṛṇām || 47 ||

Even an illusion can perform some meaningful action, just as a dream can perform real actions for people.

एक भ्रम भी कुछ अर्थपूर्ण कार्य कर सकता है, जैसे कि स्वप्न लोगों के लिए वास्तविक कार्य कर सकता है।

7.99.48

यत्तद्भानं तु सा चिद्भा परमं तच्चिदम्बरमिति क्काहं क्व विश्वश्रीः क्व त्वं दृश्यदृशश्च काः ॥ ४८ ॥

yattadbhānaṃ tu sā cidbhā paramaṃ taccidambaramiti kvāhaṃ kva viśvaśrīḥ kva tvaṃ dṛśyadṛśaśca kāḥ || 48 ||

That appearance is the supreme consciousness (cidbhā), and that is the space of consciousness (cidambaram). Where am I? Where is the world? Where are you, the seer and the seen?

वह भान (प्रकटीकरण) परम चेतना (चिद्भा) है, और वही चेतना का आकाश (चिदम्बरम) है। मैं कहाँ हूँ? विश्व कहाँ है? तुम, देखने वाले और देखे जाने वाले, कहाँ हो?

7.99.49

मृत्वा पुनर्भवनमस्ति किमङ्ग नष्टं मृत्वा न चेद्भवनमस्ति तथापि शान्तिःविज्ञानदृष्टिवशतोऽस्त्यथ चेद्विमोक्षस्तन्नेह किंचिदपि दुःखमुदारबुद्धेः ॥ ४९ ॥

mṛtvā punarbhavanamasti kimaṅga naṣṭaṃ mṛtvā na cedbhavanamasti tathāpi śāntiḥvijñānadṛṣṭivaśato'styatha cedvimokṣastanneha kiṃcidapi duḥkhamudārabuddheḥ || 49 ||

After death, is there rebirth or is it destroyed? If there is no rebirth after death, still there is peace. If there is liberation according to the vision of knowledge, then there is no suffering for the enlightened one.

मृत्यु के बाद, पुनर्जन्म है या वह नष्ट हो जाता है? यदि मृत्यु के बाद पुनर्जन्म नहीं है, तो भी शान्ति है। यदि ज्ञान की दृष्टि के अनुसार मुक्ति है, तो उदार बुद्धि वाले के लिए कोई दुःख नहीं है।

7.99.50

मूर्खस्य यादृशमिदं तु तदज्ञ एव जानात्यसौ न हि वयं किल तत्र तज्ज्ञाःमत्स्यो हि यो मृगनदीसलिले स एव जानाति तच्चपलवीचिविवर्तनानि ॥ ५० ॥

mūrkhasya yādṛśamidaṃ tu tadajña eva jānātyasau na hi vayaṃ kila tatra tajjñāḥmatsyo hi yo mṛganadīsalile sa eva jānāti taccapalavīcivivartanāni || 50 ||

Only a fool knows the nature of foolishness. We are not experts in that. Just as a fish in a river knows the fluctuations of the water, so does the fool know foolishness.

केवल एक मूर्ख ही मूर्खता की प्रकृति को जानता है। हम उसमें माहिर नहीं हैं। जैसे कि एक नदी में मछली पानी के उतार-चढ़ाव को जानती है, वैसे ही मूर्ख मूर्खता को जानता है।

7.99.51

अन्तर्बहिस्त्वमहमित्यपि चैवमादि सर्वात्मकं तपति चिन्नभ एकमेवशाखाशिखाविटपपत्रफलैकदेहः संकल्पवृक्ष इव बोधखमात्रसारः ॥ ५१ ॥

antarbahistvamahamityapi caivamādi sarvātmakaṃ tapati cinnabha
ekamevaśākhāśikhāviṭapapatraphalaikadehaḥ saṃkalpavṛkṣa iva bodhakhamātrasāraḥ || 51 ||

I am the inner and outer self, and thus, everything is permeated with the self. The self shines as pure consciousness, like a wish-fulfilling tree with its branches, leaves, and fruits as one body, essentially the pure essence of knowledge.

मैं अन्तर और बाहर का आत्मा हूँ, और इसलिए, सब कुछ आत्मा से परिपूर्ण है। आत्मा शुद्ध चेतना के रूप में चमकता है, जैसे एक कल्पवृक्ष जिसकी शाखाएँ, पत्तियाँ और फल एक ही शरीर के रूप में होते हैं, ज्ञान के शुद्ध सार के रूप में।

Chapter 100

7.100.1

श्रीराम उवाच । युक्तिः स्यात्कीदृशी ब्रह्मन्संसारे दुःखशान्तये । तेषां येषामयं पक्षः श्रूयतामुच्यतां ततः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yuktiḥ syātkīdṛśī brahmannsaṃsāre duḥkhaśāntaye | teṣāṃ yeṣāmayam pakṣaḥ śrūyatāmucyatāṃ tataḥ || 1 ||

Shri Rama said: What kind of logic, O Brahman, would there be to end the sorrows of the world? Let us hear and speak about the views of those who hold this position.

श्री राम ने कहा: हे ब्रह्मन्, संसार के दुःखों को शान्त करने के लिए कैसी युक्ति होगी? उन लोगों के पक्ष को सुनें और बताएँ जिनका यह मत है।

7.100.2

यावज्जीवं सुखं जीवेन्नास्ति मृत्युरगोचरः । भस्मीभूतस्य शान्तस्य पुनरागमनं कुतः ॥ २ ॥

yāvajjīvaṃ sukhaṃ jīvennāsti mṛtyuragocaraḥ | bhasmībhūtasya śāntasya punarāgamanaṃ kutaḥ || 2 ||

As long as one lives, let one live happily; there is no death in sight. When one becomes ashes and is at peace, how can there be a return?

जब तक जीवित है, सुख से जीवें; मृत्यु दिखाई नहीं देती। जब कोई भस्म हो जाता है और शान्त हो जाता है, तो फिर से आना कैसे हो सकता है?

7.100.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । यं यं निश्चयमादत्ते संविदन्तरखण्डितम् । तत्तथैवानुभवति प्रत्यक्षमिति सर्वगम् ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yaṃ yaṃ niścayamādatte saṃvidantarakhaṇḍitam | tattathaivānubhavati pratyakṣamiti sarvagam || 3 ||

Vasistha said: Whatever firm conviction one holds, unbroken by any other knowledge, one experiences that as real and pervasive.

वसिष्ठ ने कहा: जो भी दृढ़ निश्चय कोई रखता है, जो किसी अन्य ज्ञान से टूटा नहीं है, वह उसे वास्तविक और व्यापक रूप में अनुभव करता है।

7.100.4

यथा खं सर्वगं शान्तं तथा चिद्व्योम सर्वगम् । तदेवैक्यमथ द्वैतमन्यार्थस्यात्यसंभवात् ॥ ४ ॥

yathā khaṃ sarvagaṃ śāntaṃ tathā cidvyoma sarvagam | tadevaikyamatha dvaitamanyārthasyātyasaṃbhavāt || 4 ||

Just as the sky is all-pervading and tranquil, so is the consciousness all-pervading. That alone is the unity and duality, as there is no possibility of any other meaning.

जैसे आकाश सर्वव्यापी और शान्त है, वैसे ही चेतना सर्वव्यापी है। वही एकता और द्वैत है, क्योंकि किसी अन्य अर्थ की संभावना नहीं है।

7.100.5

सर्गादौ तदृतेऽन्योऽर्थो महाप्रलयरूपिणि । अकाणरत्वान्नास्त्येव ब्रह्मैवेदमतस्ततम् ॥ ५ ॥

sargādau tadṛte'nyo'rtho mahāpralayarūpiṇi | akāṇaratvānnāstyeva brahmaivedamatastatam || 5 ||

At the beginning of creation, apart from that, there is no other meaning in the form of the great dissolution. Due to the absence of any other, this is indeed Brahman.

सृष्टि के आरंभ में, उसके अलावा, महाप्रलय के रूप में कोई अन्य अर्थ नहीं है। किसी अन्य की अनुपस्थिति के कारण, यह वास्तव में ब्रह्म है।

7.100.6

समस्तवेदशास्त्रार्थं ये महाप्रलयादि च। नेच्छन्ति ते महामूढा निःशास्त्रा नो मृता इव ॥ ६ ॥

samastavedaśāstrārthaṃ ye mahāpralayādi ca | necchanti te mahāmūḍhā niḥśāstrā no mṛtā iva || 6 ||

Those who do not desire the essence of all Vedas and scriptures, including the great dissolution, are great fools, devoid of scriptures, as if dead.

जो लोग समस्त वेद और शास्त्रों के अर्थ को, महाप्रलय सहित, नहीं चाहते, वे महामूढ़ हैं, शास्त्रहीन, मानो मृत हों।

7.100.7

सर्वशास्त्राविरुद्धेन सर्वं ब्रह्मेदमित्यलम्। स्थितं सानुभवं योक्तृ येषां तैर्न कथाक्रमः ॥ ७ ॥

sarvaśāstrāviruddhena sarvaṃ brahmedamityalam | sthitaṃ sānubhavaṃ yoktṛ yeṣāṃ tairna kathākramaḥ || 7 ||

Everything is established in the experience of those who are united with the non-contradictory scriptures, saying 'All this is Brahman.' There is no sequence of speech for them.

जो लोग विरोधी शास्त्रों से एकाकार हैं, वे कहते हैं, 'यह सब ब्रह्म है।' उनके अनुभव में सब कुछ स्थित है। उनके लिए कोई वाणी का क्रम नहीं है।

7.100.8

नित्या निरन्तरोदेति यादृशी संविदाशये। भूयते तन्मयेनैव पुंसा देहोऽस्तु माथवा ॥ ८ ॥

nityā nirantarodeti yādṛśī saṃvidāśaye | bhūyate tanmayenaiva puṃsā deho'stu māthavā || 8 ||

The eternal, continuously arising consciousness in the heart becomes that itself, whether the body exists or not.

हृदय में नित्य, निरंतर उदित होने वाली चेतना स्वयं ही उसी के रूप में हो जाती है, चाहे शरीर हो या न हो।

7.100.9

बोधाच्चेत्संविदो जातः स दुःखी पुरुषो भवेत्। विरुद्धं वेदनं यावत्तावज्जीवोऽङ्ग तन्मयः ॥ ९ ॥

bodhāccetsaṃvido jātaḥ sa duḥkhī puruṣo bhavet | viruddhaṃ vedanaṃ yāvattāvajjīvo'ṅga tanmayaḥ || 9 ||

If consciousness arises from knowledge, that person becomes miserable. As long as there is contradictory experience, the living being is identified with that.

यदि चेतना ज्ञान से उत्पन्न होती है, तो वह व्यक्ति दुःखी हो जाता है। जब तक विरोधी अनुभव है, तब तक जीव उसी से पहचाना जाता है।

7.100.10

जगच्चिद्व्योमकचनमात्रमेवेति भाविते। तत्कथं वेदनं व्योम्ना बोधः कस्य कुतो भवेत् ॥ १० ॥

jagaccidvyomakacanamātrameveti bhāvite | tatkathaṃ vedanaṃ vyomnā bodhaḥ kasya kuto bhavet || 10 ||

If the entire universe is considered to be merely the sky of consciousness, how can there be experience? How can there be knowledge of anyone from anywhere?

यदि सम्पूर्ण ब्रह्मांड केवल चेतना का आकाश माना जाता है, तो अनुभव कैसे हो सकता है? किसी के लिए कहीं से ज्ञान कैसे हो सकता है?

7.100.11

न कानिचित्प्रधावन्ति एकनिश्चयसंविदाम्। पुंसां सुखानि दुःखानि रजांसि नभसामिव ॥ ११ ॥

na kānicitpradhāvanti ekaniścayasaṁvidām | puṃsāṁ sukhāni duḥkhāni rajāṁsi nabhasāmiva || 11 ||

Neither happiness nor sorrow, nor the passions of men, move in the least those who are steadfast in the knowledge of the Self, just as the clouds do not move the sky.

न तो सुख और न ही दुःख, न ही मनुष्यों के राग-द्वेष, आत्मज्ञान में स्थित पुरुषों को किसी भी तरह से प्रभावित करते हैं, जैसे बादल आकाश को नहीं हिलाते।

7.100.12

संवित्सत्यास्त्वसत्या वा निश्चयस्तावदीदृशः । आबालमेतत्संसिद्धं केनापह्नूयते कथम् ॥ १२ ॥

saṁvitsatyāstvasatyā vā niṣcayastāvadīdṛṣaḥ | ābālame tatsaṁsidhḍaṁ kenāpahnūyate katham || 12 ||

Whether the knowledge of the Self is real or unreal, such is the certainty. How can anyone deny this, which is well-established from childhood?

चाहे आत्मज्ञान सत्य हो या असत्य, ऐसा ही निश्चय है। बचपन से ही यह स्थापित है, फिर किसी के द्वारा इसे कैसे अस्वीकार किया जा सकता है?

7.100.13

न देहः पुरुषो वापि जीवोऽन्य उपलभ्यते । संवित्सर्वमिदं सा तु यथा वेत्ति तथा जगत् ॥ १३ ॥

na dehaḥ puruṣo vāpi jīvo'nya upalabhyate | saṁvitsarvamidaṃ sā tu yathā vetti tathā jagat || 13 ||

Neither the body nor the individual self is perceived as different from the Self. The Self is all this, and as it knows, so is the world.

न तो शरीर और न ही जीवात्मा आत्मा से अलग दिखाई देता है। आत्मा ही सब कुछ है, और जैसे वह जानता है, वैसे ही संसार है।

7.100.14

सा सत्याप्यथवासत्या तया देहोऽनुभूयते । स्वातन्त्र्येण यथा स्वप्ने पाताले खे जले दिवि ॥ १४ ॥

sā satyāpyathavāsatyā tayā deho'nubhūyate | svātantryeṇa yathā svapne pātāle khe jale divi || 14 ||

Whether the Self is real or unreal, the body is experienced through it. Just as in a dream, one experiences various realms like the underworld, sky, water, and heaven independently.

चाहे आत्मा सत्य हो या असत्य, शरीर उसी के द्वारा अनुभव किया जाता है। जैसे स्वप्न में, पाताल, आकाश, जल और स्वर्ग जैसे विभिन्न लोकों का स्वतंत्र रूप से अनुभव होता है।

7.100.15

संवित्सत्यास्त्वसत्या वा तावन्मात्रः स्मृतः पुमान् । स यथानिश्चयो नूनं तत्सत्यमिति निश्चयः ॥ १५ ॥

saṁvitsatyāstvasatyā vā tāvanmātraḥ smṛtaḥ pumān | sa yathāniṣcayo nūnaṃ tatsatyamiti niṣcayaḥ || 15 ||

Whether the knowledge of the Self is real or unreal, a person is remembered only to that extent. Indeed, the certainty is that whatever is firmly resolved is the truth.

चाहे आत्मज्ञान सत्य हो या असत्य, एक व्यक्ति केवल उसी हद तक याद रखा जाता है। निश्चित रूप से, जो भी दृढ़ता से निश्चित हो, वही सत्य है।

7.100.16

प्रामाण्यं सर्वशास्त्राणामेतेनैव प्रसिद्ध्यति । सर्वसिद्धान्तसिद्धान्त एष एवेति मे मतिः ॥ १६ ॥

prāmāṇyaṃ sarvaśāstrāṇāmetenaiva prasiddhyati | sarvasiddhāntasiddhānta eṣa eveti me matiḥ || 16 ||

The validity of all scriptures is established by this alone | This is indeed the ultimate conclusion of all doctrines, this is my belief

सभी शास्त्रों की प्रामाणिकता इसी से सिद्ध होती है | यही सभी सिद्धान्तों का अन्तिम सिद्धान्त है, यही मेरा मत है

7.100.17

तस्मादबोधता यास्ते यथा संवित्तथैव सा । भवत्यकलुषाकारा तथैव फलभागिनी ॥ १७ ॥

tasmādabodhatā yāste yathā saṃvittathaiva sā | bhavatyakaluṣākārā tathaiva phalabhāginī || 17 ||

Therefore, the ignorance that exists in you is exactly as consciousness | It becomes pure in form and thus becomes the receiver of the fruits

इसलिए, जो अज्ञान आपमें है, वह चेतना के समान ही है | वह शुद्ध रूप में होता है और इस प्रकार फलों का भागी बनता है

7.100.18

देशकालक्रियाद्रव्यवेदशास्त्रैषणाभ्रमैः । अबोधता तु या संवित्कदाचित्सा न नश्यति ॥ १८ ॥

deśakālakriyādravyavedaśāstraiṣaṇābhrairmaiḥ | abodhatā tu yā saṃvitkadācitsā na naśyati || 18 ||

The ignorance in consciousness, caused by place, time, action, substance, Vedas, scriptures, desires, and illusions, never perishes

चेतना में जो अज्ञान है, वह स्थान, समय, क्रिया, द्रव्य, वेद, शास्त्र, इच्छाओं और भ्रमों से उत्पन्न होता है, कभी नहीं नष्ट होता

7.100.19

आविर्भवति सा भूयः क्षीणाशङ्का क्षणेन चेत् । तत्केन संविदो दुःखं कदा नामोपशाम्यति ॥ १९ ॥

āvirbhavati sā bhūyaḥ kṣīṇāśaṅkā kṣaṇena cet | tatkena saṃvido duḥkhaṃ kadā nāmopaśāmyati || 19 ||

If that ignorance manifests again, even if doubts are dispelled in an instant, then when will the suffering of consciousness be pacified

अगर वह अज्ञान फिर से प्रकट होता है, तो भले ही संदेह एक क्षण में दूर हो जाएँ, तब चेतना का दुःख कब शान्त होगा

7.100.20

संविदेव नृणां जीवः स यथा दृढभावनः । तथा सुखी वा दुःखी वा भवेदित्येष निश्चयः ॥ २० ॥

saṃvideva nṛṇāṃ jīvaḥ sa yathā dṛḍhabhāvanaḥ | tathā sukhī vā duḥkhī vā bhaveditye̱ṣa niścayaḥ || 20 ||

Consciousness alone is the life of beings | As it is firmly established, so it becomes happy or unhappy, this is the conclusion

चेतना ही प्राणियों की जीवन शक्ति है | जैसे यह दृढ़ता से स्थापित होती है, वैसे ही यह सुखी या दुःखी होती है, यही निश्चय है

7.100.21

संविच्चेदस्ति तज्ज्ञानां शरणं भवभेदने । नास्ति चेत्तच्छिलामूकमान्ध्यमेवावशिष्यते ॥ २१ ॥

saṃvicchedasti tajjñānāṃ śaraṇaṃ bhavabhedane | nāsti cettačchilāmūkamāndhyamevāvaśiṣyate || 21 ||

If there is knowledge, it is the refuge in the dissolution of existence | If there is no knowledge, then only blindness remains || 21 ||

अगर ज्ञान है, तो यह अस्तित्व के विघटन में शरण है | अगर ज्ञान नहीं है, तो फिर केवल अंधता ही शेष रहती है || २१ ||

7.100.22

यत्तयैव च संवित्त्या वेदनेनैव लभ्यते । अयं स्वभावज्ञप्त्यान्तर्जाड्यं पुंसेव निद्रया ॥ २२ ॥

yattayaiva ca saṃvittyā vedanenaiva labhyate | ayaṃ svabhāvajñaptyāntarjāḍyaṃ puṃseva nidrayā || 22 ||

That which is attained through the very consciousness and perception | This is like the natural inertia of a person in sleep || 22 ||

जो चेतना और अनुभव से प्राप्त होता है | यह एक व्यक्ति की नींद में प्राकृतिक जड़ता के समान है || २२ ||

7.100.23

श्रीराम उवाच । दिक्ष्वधस्ताच्च नान्तोऽस्या भावी नापि जगत्क्षयः । अस्तीति भावितं येन संत्यक्ताऽभावबुद्धिना ॥ २३ ॥

śrīrāma uvāca | dikṣvadhastācca nānto'syā bhāvī nāpi jagatkṣayaḥ | astīti bhāvitaṃ yena saṃtyaktā'bhāvabuddhinā || 23 ||

Sri Rama said | There is no end to this in any direction, nor is there destruction of the world | He who thinks 'it exists' has abandoned the thought of non-existence || 23 ||

श्री राम ने कहा | इसका किसी दिशा में कोई अंत नहीं है, न ही संसार का विनाश है | जो 'यह है' कहता है, उसने अस्तित्व के विचार को त्याग दिया है || २३ ||

7.100.24

विज्ञानघनमेवेदमिति नूनमपश्यता । पश्यता च यथादृष्टं सर्वक्षयमपश्यता ॥ २४ ॥

vijñānaghanamevedamiti nūnamapaśyatā | paśyatā ca yathādṛṣṭaṃ sarvakṣayamapaśyatā || 24 ||

This is indeed a mass of consciousness, thus it is certainly seen | Seeing as it is seen, the destruction of all is seen || 24 ||

यह वास्तव में चेतना का घन है, इसलिए यह निश्चित रूप से देखा जाता है | जैसे देखा जाता है, सबका विनाश देखा जाता है || २४ ||

7.100.25

तस्य स्यात्कीदृशी ब्रह्मत्युक्तिराधिविनाशने । इति मे संशयं छिन्धि भूयो बोधाभिवृद्धये ॥ २५ ॥

tasya syātkīdṛśī brahmatyuktirādhivināśane | iti me saṃśayaṃ chindhi bhūyo bodhābhivṛddhaye || 25 ||

What kind of statement about Brahman would there be in the destruction of the universe | Thus, dispel my doubt for the further increase of knowledge || 25 ||

ब्रह्म के बारे में ब्रह्मांड के विनाश में कैसी बात होगी | इस प्रकार, मेरे संदेह को दूर करो ज्ञान की और वृद्धि के लिए || २५ ||

7.100.26

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्रैकं तावदुचितं पूर्वमेव तथोत्तरम् । द्वितीयमुत्तरं न्याय्यं वक्ष्यमाणमिदं शृणु ॥ २६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atraikaṃ tāvaducitaṃ pūrvameva tathottaram | dvitīyamuttaraṃ nyāyyaṃ vakṣyamāṇamidaṃ śṛṇu || 26 ||

Sri Vasistha said: Here, one thing is appropriate first, then the other. The second answer is logical. Listen to what is being said.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यहाँ, पहले एक चीज उचित है, फिर दूसरी. दूसरा उत्तर न्यायसंगत है. जो कहा जा रहा है, उसे सुनो.

7.100.27

ईदृग्भावस्त्वया प्रोक्तो यः पुमान्पुरुषोत्तम । स तावच्चेतनामात्रं भवतीत्यनुभूयते ॥ २७ ॥

īdṛgbhavastvayā prokto yaḥ pumānpuruṣottama | sa tāvaccetanāmātraṃ bhavatītyanubhūyate || 27 ||

The state you have described, O best of men, is experienced as mere consciousness.

जो अवस्था आपने वर्णित की है, हे पुरुषोत्तम, वह केवल चेतना के रूप में अनुभव की जाती है.

7.100.28

स चाकारविनाशेन युज्यते नात्र संशयः । अथाविनाशो देहश्चेत्तदुःखस्यात्र कः क्रमः ॥ २८ ॥

sa cākāravināśena yujyate nātra saṃśayaḥ | athāvināśo dehaścet taduḥkhasyātra kaḥ kramaḥ || 28 ||

That is united with the destruction of the form, there is no doubt about it. But if the body is not destroyed, what is the sequence of suffering here?

वह रूप के विनाश से जुड़ा हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं. लेकिन यदि शरीर नष्ट नहीं होता है, तो यहाँ दुःख का क्रम क्या है?

7.100.29

भवेद्भागविभागात्मविनाशस्त्वविचारितः । अवश्यं तस्य भवति किलेति ननु निश्चयः ॥ २९ ॥

bhavedbhāgavibhāgātmavināśastvavicāritaḥ | avaśyaṃ tasya bhavati kileti nanu niścayaḥ || 29 ||

The destruction of the individual self, which is a part of the divine, is unconsidered. Indeed, it certainly happens, it is said. This is the conclusion.

जो दिव्य का एक भाग है, उस व्यक्तिगत आत्मा का विनाश अविचारित है. निश्चित रूप से, यह होता है, कहा जाता है. यह निष्कर्ष है.

7.100.30

मृतः स संविदात्मत्वाद्भूयो नो वेत्ति संसृतिम्। ज्ञानधौता न या संविन्न सा तिष्ठत्यसंसृतिः ॥ ३० ॥

mṛtaḥ sa saṃvidātmataṃ bhūyo na vetti saṃsṛtim | jñānadhautā na yā saṃvinnasā tiṣṭhatyasaṃsṛtiḥ || 30 ||

Being dead, due to the nature of pure consciousness, he does not know the cycle of rebirth. The consciousness purified by knowledge does not remain in the cycle of rebirth.

मृत होने के कारण, शुद्ध चेतना की प्रकृति के कारण, वह पुनर्जन्म के चक्र को नहीं जानता. ज्ञान से शुद्ध की गई चेतना पुनर्जन्म के चक्र में नहीं रहती.

7.100.31

अथवा नास्ति संवित्तिरिति निश्चयवान्यदि। ततस्तादृग्वेदनतो भवत्येव दृषज्जडः ॥ ३१ ॥

athavā nāsti saṃvittiriti niścayavānyadi | tatastādṛgvedanato bhavatyeva dṛṣajjaḍaḥ || 31 ||

Or if one is certain that there is no consciousness, then from such a belief, one indeed becomes insentient.

या फिर यदि कोई यह निश्चय करता है कि चेतना नहीं है, तो ऐसे विश्वास से वह निश्चित रूप से अचेतन हो जाता है।

7.100.32

यथावेदनमर्थेषु चित्त्वे देहक्षयात्क्षते। मृतिरेव परं श्रेयो दृष्टं नानुभवादिति ॥ ३२ ॥

yathāvedanamarthaṣu cittve dehakṣayātkṣate | mṛtireva paraṃ śreyo dṛṣṭaṃ nānubhavāditi || 32 ||

Just as the perception of objects is lost when the body perishes, so too is death the ultimate good, as it is not experienced.

जैसे शरीर के नाश होने पर वस्तुओं का अनुभव खो जाता है, वैसे ही मृत्यु परम कल्याण है, क्योंकि उसका अनुभव नहीं होता।

7.100.33

असंभवाच्छुद्धविदो निःशरीरा भवन्ति ये। जडभावा जडीभूय दुर्भेदान्ध्या भवन्ति ते ॥ ३३ ॥

asaṃbhavācchuddhavido niḥśarīrā bhavanti ye | jaḍabhāvā jaḍībhūya durbhedāndhyā bhavanti te || 33 ||

Those who are pure in knowledge become bodiless due to their impossibility. Becoming insentient, they remain in a state of ignorance and confusion.

जो ज्ञान में शुद्ध हैं, वे असंभव होने के कारण शरीररहित हो जाते हैं। जड होकर, वे अज्ञान और भ्रम की स्थिति में रहते हैं।

7.100.34

ये चापि स्वप्नपुरवत्सर्वं पश्यन्ति चिन्मयाः। तेषामिदमिवाशेषं जगज्जालं प्रवर्तते ॥ ३४ ॥

ye cāpi svapnapuravatsarvaṃ paśyanti cinmayāḥ | teṣāmidamivāśeṣaṃ jagajjālaṃ pravartate || 34 ||

And even those who see everything as a dream, being of the nature of consciousness, for them this entire world appears as an illusion.

और जो लोग सब कुछ स्वप्न की तरह देखते हैं, वे चेतना के स्वभाव के हैं, उनके लिए यह सारा संसार माया की तरह प्रतीत होता है।

7.100.35

स्थैर्यास्थैर्येण भूतानां किमपूर्वमतौ भवेत्। भूतस्थैर्ये तथास्थैर्ये सुखं चैवासुखं समम् ॥ ३५ ॥

sthairyāsthairyena bhūtānāṃ kimapūrvamatau bhavet | bhūtasthairyena tathāsthairyena sukhaṃ caivāsukhaṃ samam || 35 ||

What novelty can there be in the stability and instability of beings? In the stability of beings, both happiness and unhappiness are the same.

प्राणियों के स्थिरता और अस्थिरता में क्या नया है? प्राणियों की स्थिरता में, सुख और दुःख दोनों समान हैं।

7.100.36

स्थिरमस्त्वस्थिरं वापि मह्यादिमहतामपिचिद्भामात्रमिदं भाति यावदज्ञानमाततम् ॥ ३६ ॥

sthiramastvasthiraṃ vāpi mahyādimahatāmapicidbhāmātramidaṃ bhāti yāvadajñānamātatam || 36 ||

Whether it is stable or unstable, this world appears to be merely an illusion until ignorance is removed.

चाहे यह स्थिर हो या अस्थिर, यह दुनिया अज्ञान दूर होने तक केवल एक भ्रम प्रतीत होती है।

7.100.37

संविदा संविदोऽसत्तामिहाव्याप्य विनष्टयानिर्णीयाङ्गीकृतं यैर्वा जाड्यं तद्वालकैरलम् ॥ ३७ ॥

saṃvidā saṃvido'sattāmihāvyāpya vinaṣṭayānirṇīyāṅgīkṛtaṃ yairvā jāḍyaṃ tadvālakairalam || 37 ||

Those who consider consciousness to be non-existent and pervading this world as destroyed, and who accept inertness, are indeed ignorant.

जो लोग चेतना को असत् मानते हैं और इस दुनिया को नष्ट होने के रूप में व्याप्त मानते हैं, और जो जड़ता को स्वीकार करते हैं, वे वास्तव में अज्ञानी हैं।

7.100.38

येषां विद्भ्यः शरीराणि ते वन्द्याः पुरुषोत्तमाःशरीरेभ्यो विदो येषां तैरलं पुरुषाधमैः ॥ ३८ ॥

yeṣāṃ vidbhyaḥ śarīrāṇi te vandyāḥ puruṣottamāḥśarīrebhyo vido yeṣāṃ tairalaṃ puruṣādhamaiḥ || 38 ||

Those whose bodies are wise are worthy of worship as the best among men. Those whose wisdom comes from their bodies are indeed the lowest among men.

जिनके शरीर बुद्धिमान हैं, वे पुरुषों में सर्वश्रेष्ठ और पूजनीय हैं। जिनकी बुद्धि उनके शरीर से आती है, वे पुरुषों में सबसे निम्न हैं।

7.100.39

चिद्रूपो जीवबीजौघ आकाशकृमिजालवत् ऊर्ध्वं तिर्यगधो याति पूर्यमाण इव स्वयम् ॥ ३९ ॥

cidrūpo jīvabījaugha ākāśakṛmijālavat ūrdhvaṃ tiryagadho yāti pūryamāṇa iva svayam || 39 ||

The consciousness, which is the seed of life, spreads in all directions like the web of a spider in the sky, filling itself spontaneously.

चेतना, जो जीवन का बीज है, आकाश में मकड़ी के जाले की तरह सभी दिशाओं में फैलती है, स्वयं ही भरती है।

7.100.40

चेत्यते येन कर्तान्यो बीजौघेन स तत्परःतथैवानुभवत्यन्तः स्वयमेव विवल्गति ॥ ४० ॥

cetyate yena kartānyo bījaughena sa tatparaḥtathaivānubhavatyantaḥ svayameva vivalgati || 40 ||

The one who is perceived as the doer by the mass of seeds, becomes devoted to that. Similarly, one experiences within oneself and becomes detached spontaneously.

जो बीजों के समूह द्वारा कर्ता के रूप में देखा जाता है, वह उसमें तत्पर हो जाता है। इसी प्रकार, वह अपने आप में अनुभव करता है और स्वतः ही विरक्त हो जाता है।

7.100.41

यद्यथा चेत्यते येन तज्जीवेनाशु तेन तत्। चिद्रूपेणाप्यते सिद्धमेतदाबालमक्षतम्॥ ४१॥

yadyathā cetyate yena tajjīvenāśu tena tat| cidrūpeṇāpyate siddhametadābālamakṣatam || 41 ||

Whatever is perceived by the individual consciousness, that is immediately perceived by it in the form of consciousness. This is established and undeniable even for a child.

जो कुछ भी व्यक्तिगत चेतना द्वारा अनुभव किया जाता है, वह तुरंत चेतना के रूप में उससे अनुभव किया जाता है। यह एक बच्चे के लिए भी स्थापित और अनदेखा है।

7.100.42

यथा धूमस्य नभसि यथाम्भोधौ महाम्भसः। आवर्तवृत्तयश्चित्रास्तथा चिद्व्योम्नि संसृतेः॥ ४२॥

yathā dhūmasya nabhasi yathāmbhodhau mahāmbhasaḥ| āvartavṛttayaścitrāstathā cidvyomni saṃsṛteḥ || 42 ||

Just as smoke in the sky and waves in the ocean, the various whirls of transmigration are in the sky of consciousness.

जैसे धुआँ आकाश में और लहरें समुद्र में, वैसे ही परिवर्तन के विभिन्न भंवर चेतना के आकाश में हैं।

7.100.43

पुरी भवति चिद्व्योम यथा स्वप्ने नरं प्रति। तथादिसर्गात्प्रभृति तदेवेदं जगत्स्थितम्॥ ४३॥

purī bhavati cidvyoma yathā svapne naraṃ prati| tathādisargātprabhṛti tadevedaṃ jagatsthitam || 43 ||

Just as a city appears in a dream to a person, so from the beginning of creation, this very universe is established in the sky of consciousness.

जैसे एक नगर स्वप्न में एक व्यक्ति को दिखाई देता है, वैसे ही सृष्टि के आरंभ से, यह ब्रह्मांड चेतना के आकाश में स्थापित है।

7.100.44

सहकारिनिमित्तानि यथा स्वप्ने न सन्ति वै। पृथिव्यादीनि भूतानि तथैवादौ जगत्स्थितेः॥ ४४॥

sahakārinimittāni yathā svapne na santi vai| pṛthivyādīni bhūtāni tathaivādau jagatsthiteḥ || 44 ||

Just as the causes and means do not exist in a dream, so too the elements like earth do not exist at the beginning of the world's existence.

जैसे स्वप्न में कारण और साधन नहीं होते, वैसे ही सृष्टि के आरंभ में पृथ्वी जैसे तत्व नहीं होते।

7.100.45

अङ्गानां स्वप्ननगरे वसुधा विविधाः कृताः। यास्ता एव जगत्स्वप्ननगरे पुष्टतां गताः॥ ४५॥

aṅgānāṃ svapnanagare vasudhā vividhāḥ kṛtāḥ| yāstā eva jagatsvapnanagare puṣṭatāṃ gatāḥ || 45 ||

The various lands created in the dream city are the same as those that have attained fullness in the dream city of the world.

स्वप्न नगर में बनाई गई विभिन्न भूमियाँ वही हैं जो ब्रह्मांड के स्वप्न नगर में पूर्णता प्राप्त हो गई हैं।

7.100.46

चिन्मात्राकाशमेवेमाः प्रजा द्वैतैक्यवर्जिताः। के वात्र रञ्जनान्या खे यद्वाभाति खमेव तत्॥ ४६॥

cinmātrākāśamevemāḥ prajā dvaitaikyavarjitāḥ | ke vātra rañjanānyā khe yadvābhāti khameva tat || 46 ||

All beings are merely the sky of pure consciousness, devoid of duality and unity. What else can delight in the sky? Whatever appears is indeed the sky.

सभी प्राणी शुद्ध चेतना के आकाश हैं, द्वैत और एकता से रहित। आकाश में और कौन आनंद ले सकता है? जो भी प्रकट होता है, वह आकाश ही है।

7.100.47

चिच्चन्द्रिका चतुर्दिक्कं शीतलाह्लादकारिणी । तनोति चेतनालोकं तस्येदं कचनं जगत् ॥ ४७ ॥

cicchandrikā caturdikkam śītalāhlādakāriṇī | tanoti cetanālokaṃ tasyedaṃ kacanaṃ jagat || 47 ||

The moonlight of consciousness spreads in all directions, causing cool delight. It expands the realm of consciousness; this entire world is its reflection.

चेतना की चाँदनी चारों दिशाओं में फैलती है, ठंडक और आनंद पैदा करती है। यह चेतना के क्षेत्र को विस्तारित करती है; यह पूरा जगत इसका प्रतिबिंब है।

7.100.48

अद्यैवाद्यन्तयोर्व्योम्नि चिन्मये सर्गदर्शनम् । चिदुन्मेषनिमेषाभ्यां खात्मोदेत्यस्तमेति च ॥ ४८ ॥

adyaivādyantayorvyomni cinmaye sargadarśanam | cidunmeṣanimenṣābhyāṃ khātmodetyastameti ca || 48 ||

In the sky of consciousness, which is the beginning and the end, the creation is seen. By the opening and closing of consciousness, the self rises and sets.

चेतना के आकाश में, जो आरंभ और अंत है, सृष्टि दिखाई देती है। चेतना के खुलने और बंद होने से, स्वयं उदित और अस्त होता है।

7.100.49

यद्यथा वेत्ति यत्तत्सत्तथैवानुभवत्यलम् । यस्मात्समस्तं चिन्मात्रं किमिवात्र न विद्यते ॥ ४९ ॥

yadyathā vetti yattatsattathaivānubhavatyalaṃ | yasmātsamastaṃ cinmātraṃ kimivātra na vidyate || 49 ||

Whatever one knows, that alone exists. Therefore, one experiences only that. Since everything is pure consciousness, what does not exist here?

जो कुछ भी कोई जानता है, वही अस्तित्व में है। इसलिए, वही अनुभव करता है। क्योंकि सब कुछ शुद्ध चेतना है, यहाँ क्या नहीं है?

7.100.50

शरदाकाशविशदं संविदः सौम्यमानसाः । असन्त एव तिष्ठन्ति सन्तोऽधिगततत्पदाः ॥ ५० ॥

śaradākāśaviśadaṃ saṃvidaḥ saumyamānasāḥ | asanta eva tiṣṭhanti santo'dhigatatatpadāḥ || 50 ||

Those with a calm mind, clear like the autumn sky of consciousness, remain as non-existent. Those who have attained that state are truly existent.

जिनका मन शांत है, चेतना के शरद आकाश की तरह स्पष्ट, वे अस्तित्वहीन रहते हैं। जो उस अवस्था को प्राप्त हो चुके हैं, वे वास्तव में अस्तित्व में हैं।

7.100.51

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषाः प्रवाहसंप्राप्तनिजार्थभाजः । तिष्ठन्ति कार्यव्यवहारदृष्टौ निरामया यन्त्रमया इवैते ॥ ५१ ॥

nirmānamohā jitasangadoṣāḥ pravāhasaṃprāptanijārthabhājaḥ | tiṣṭhanti kāryavyavahāradṛṣṭau nirāmayā yantramayā ivaite || 51 ||

Those who are free from pride and delusion, who have conquered the evil of attachment, who are ever devoted to the spirit of renunciation, who are free from desires, attain the state of liberation.

जो अहंकार और मोह से मुक्त हैं, जिन्होंने आसक्ति के दोष को जीत लिया है, जो त्याग के भाव में सदा लीन रहते हैं, जो इच्छाओं से मुक्त हैं, वे मुक्ति की अवस्था को प्राप्त होते हैं।

Chapter 101

7.101.1

चिन्मात्रमेव पुरुषस्तदेवेत्थमवस्थितम्चिन्मात्रव्यतिरेकेण किमन्यदुपपद्यते ॥ १ ॥

cinmātrameva puruṣastadevetthamavasthitamcinmātravyatirekeṇa kimanyadupapadyate || 1 ||

Pure consciousness alone is the person, and that is established thus. Apart from pure consciousness, what else is possible?

शुद्ध चेतना ही पुरुष है, और वही इस प्रकार स्थापित है। शुद्ध चेतना के अलावा, और क्या संभव है?

7.101.2

तच्चावदातमाकाशं तन्मये द्रष्टृ दृश्यतेतावन्मात्रं जगदतो हेयोपादेयधीः कुतः ॥ २ ॥

taccāvadātamākāśaṃ tanmaye draṣṭṛ dṛśyatetāvanmātraṃ jagadato heyopādeyadhīḥ kutaḥ || 2 ||

That is called space, and in that, the seer and the seen appear. The world is only that much. Where is the mind that accepts and rejects?

वह आकाश कहलाता है, और उसमें, देखने वाला और देखा जाने वाला प्रकट होता है। संसार केवल इतना ही है। स्वीकार और अस्वीकार करने वाला मन कहाँ है?

7.101.3

न विद्यते परो लोको बार्हस्पत्यस्य यस्य तुविदोऽन्यत्तस्य किं सारं रागद्वेषावतः कुतः ॥ ३ ॥

na vidyate paro loko bārhaspatyasya yasya tuvido'nyattasya kiṃ sāraṃ rāgadveṣāvataḥ kutaḥ || 3 ||

There is no other world for the one who has the knowledge of Brihaspati. What is the essence of that which is different from it? Where is the source of attachment and aversion?

बृहस्पति के ज्ञान वाले के लिए कोई दूसरा संसार नहीं है। उससे अलग किसी चीज का सार क्या है? आसक्ति और घृणा का स्रोत कहाँ है?

7.101.4

इष्टानिष्टदृशो रागद्वेषदोषाः किमात्मकाःसंविद्व्योममये स्वप्ने जगदाख्येऽङ्ग कथ्यताम् ॥ ४ ॥

iṣṭāniṣṭadṛśo rāgadveṣadoṣāḥ kimātmakāḥsaṃvidvyomamaye svapne jagadākhye'ṅga kathyatām || 4 ||

The faults of attachment and aversion arise from seeing desirable and undesirable things. How can they be part of the self? Explain this in the dream-like world of pure consciousness.

आसक्ति और घृणा के दोष इच्छित और अनिच्छित चीजों को देखने से उत्पन्न होते हैं। वे आत्मा का हिस्सा कैसे हो सकते हैं? इसे शुद्ध चेतना के स्वप्न-जैसे संसार में समझाएँ।

7.101.5

इदं हेयमुपादेयं वेति संवित्खमात्मनिनिर्मले निर्मलं भाति केवात्र तदतद्दृशौ ॥ ५ ॥

idaṃ heyamupādeyaṃ veti saṃvitkhamātmaninirmale nirmalaṃ bhāti kevātra tadataddṛśau || 5 ||

This is to be accepted or rejected, as pure consciousness shines flawlessly in the pure self. Only there, in that vision.

यह स्वीकार या अस्वीकार किया जाना है, जैसे शुद्ध चेतना शुद्ध आत्मा में दोषरहित चमकती है। केवल वहाँ, उस दृष्टि में।

7.101.6

संविन्नरोऽमरो नागः संवित्स्थावरजंगमम् । भावाभावादयोऽस्याब्धेस्तरङ्गावर्तवृत्तयः ॥ ६ ॥

saṃvinna ro'maro nāgaḥ saṃvitsthāvarajaṃgamam| bhāvābhāvādayo'syābdhēstaraṅgāvartavṛttayaḥ || 6 ||

The serpent of immortality, the consciousness, pervades the moving and unmoving. The waves and whirls of this ocean of consciousness are the states of being and non-being.

अमर नाग, चेतना, चल और अचल सभी में व्याप्त है। इस चेतना के सागर के तरंग और भंवर हैं अस्तित्व और अनस्तित्व के अवस्थाएँ।

7.101.7

संविदाकाशमेवाहं भवानपि जना अपि । म्रियामहे नो कदाचित्संवित्किल कदा मृता ॥ ७ ॥

saṃvidākāśamevāhaṃ bhavānapi janā api| mriyāmahe no kadācitsaṃvitkila kadā mṛtā || 7 ||

I am the sky of consciousness, and so are you and all people. We never die, for when does consciousness ever die?

मैं चेतना का आकाश हूँ, और आप भी और सभी लोग भी। हम कभी नहीं मरते, क्योंकि चेतना कभी मरती है?

7.101.8

संविदो नास्ति संवेद्यं स्वयं संवेद्यतामिता । चित्त्वादतो विशालाक्ष द्वितैकत्वे क्व वा स्थिते ॥ ८ ॥

saṃvido nāsti saṃvedyaṃ svayaṃ saṃvedyatāmitā| cittvādato viśālākṣa dvitaikatve kvā vā sthite || 8 ||

Consciousness has no object to be known, for it is self-luminous. O wide-eyed one, where is the duality or non-duality when this is understood?

चेतना के लिए कोई ज्ञातव्य वस्तु नहीं है, क्योंकि यह स्वयं प्रकाशित है। हे विशाल नेत्रों वाले, जब यह समझ में आ जाता है, तो द्वैत या अद्वैत कहाँ है?

7.101.9

संविन्मात्रादृते तस्माद्भूतं किमिव कथ्यताम् । कथ्यतां म्रियते तच्चेत्तदद्येमे कुतो वयम् ॥ ९ ॥

saṃvinmātrādṛte tasmādbhūtaṃ kimiva kathyatām| kathyatāṃ mriyate tacchettadadyeme kuto vayam || 9 ||

Apart from pure consciousness, what can be said to exist? If that exists, then how do we exist?

शुद्ध चेतना के अलावा, क्या कहा जा सकता है कि अस्तित्व है? यदि वह अस्तित्व है, तो हम कैसे अस्तित्व में हैं?

7.101.10

वादिनः सौगताद्या ये ये लोकायतिकादयः । संविदाकाशमुत्सृज्य यन्मन्यन्ते तदुच्यताम् ॥ १० ॥

vādinaḥ saugatādyā ye ye lokāyatikādayaḥ| saṃvidākāśamutsṛjya yanmanyante taducyatām || 10 ||

Those who argue, such as the Buddhists and materialists, abandon the sky of consciousness. Let them say what they think.

जो वाद-विवाद करते हैं, जैसे बौद्ध और भौतिकवादी, वे चेतना के आकाश को छोड़ देते हैं। वे जो सोचते हैं, उसे कहें।

7.101.11

संविदाकाशमेवैतत्केनचिद्ब्रह्म कथ्यते । केनचित्प्रोच्यते ज्ञानं केनचिच्छून्यमुच्यते ॥ ११ ॥

saṃvidākāśamevaitatkenacidbrahma kathyate | kenacitprocyate jñānaṃ kenacicchūnyamucyate || 11 ||

This very consciousness-space is described as Brahman by some, as knowledge by others, and as emptiness by some.

यही चेतना-आकाश किसी के द्वारा ब्रह्म कहा जाता है, किसी के द्वारा ज्ञान कहा जाता है, और किसी के द्वारा शून्य कहा जाता है।

7.101.12

केनचिन्मदशक्त्याभं केनचित्पुरुषाभिधम्। केनचिच्च चिदाकाशं शिव आत्मा च केनचित्॥ १२॥

kenacinmadśaktyābhaṃ kenacitpuruṣābhidham | kenacicca cidākāśaṃ śiva ātmā ca kenacit || 12 ||

By some, it is called my power, by others it is called Purusha, by some it is called the space of consciousness, and by others it is called Shiva, the Self.

किसी के द्वारा यह मेरी शक्ति कहा जाता है, किसी के द्वारा पुरुष कहा जाता है, किसी के द्वारा चेतना का आकाश कहा जाता है, और किसी के द्वारा शिव, आत्मा कहा जाता है।

7.101.13

चिन्मात्रमेवमप्युक्तं याति न क्वचिदन्यताम्। यस्मात्स्वयं तदेवैवमात्मानं वेत्ति नेतरत्॥ १३॥

cinmātramevamapyuktaṃ yāti na kvacidanyatām | yasmātsvayaṃ tadevaivamātmānaṃ vetti netarat || 13 ||

Thus, it is said to be pure consciousness alone, which does not go anywhere else. Because it knows itself as that alone, and not as anything else.

इस प्रकार, यह कहा जाता है कि यह शुद्ध चेतना मात्र है, जो कहीं और नहीं जाती। क्योंकि यह अपने आप को उसी के रूप में जानता है, और किसी और के रूप में नहीं।

7.101.14

चूर्णतां यान्तु मेऽङ्गानि सन्तु मेरूपमानि च। का क्षतिः का च वा वृद्धिश्चिद्रूपवपुषो मम॥ १४॥

cūrṇatāṃ yāntu me'ṅgāni santu merūpamāni ca | kā kṣatiḥ kā ca vā vṛddhiścidrūpavapuṣo mama || 14 ||

Let my limbs turn to dust, let them become deformed, what loss or gain is there to my form of pure consciousness?

मेरे अंग चूर्ण हो जाएँ, विकृत हो जाएँ, मेरे शुद्ध चेतना रूप को क्या हानि या लाभ है?

7.101.15

मृताः पितामहाद्याश्चिन्न मृता सा म्रियेत चेत्। तज्जन्म नैव नाम स्यादस्माकं मृतसंविदाम्॥ १५॥

mṛtāḥ pitāmahādyāścinn mṛtā sā mriyeta cet | tajjanma naiva nāma syādasmākaṃ mṛtasaṃvidām || 15 ||

If the ancestors and others are dead, and if that consciousness is dead, then there would be no birth or name for us who are conscious of death.

यदि पितामह और अन्य मृत हैं, और यदि वह चेतना मृत है, तो हमारे लिए, जो मृत्यु के चेतन हैं, कोई जन्म या नाम नहीं होगा।

7.101.16

न जायते न म्रियते संविदाकाशमक्षयम्भवेत्कथं कथय किं किलाकाशस्य संक्षयः॥ १६॥

na jāyate na mriyate saṃvidākāśamakṣayambhavetkathaṃ kathaya kiṃ kilākāśasya saṃkṣayaḥ || 16 ||

It is not born, it does not die, it is the indestructible space of consciousness. How can it be described? What is the destruction of space?

यह न जन्म लेता है, न मरता है, यह अविनाशी चेतना का आकाश है। इसे कैसे बयान किया जाए? आकाश का विनाश क्या है?

7.101.17

जगद्रूपैककचनमविनाशि चिदम्बरमुदयास्तमयोन्मुक्तं स्थितमात्मनि केवलम्॥ १७॥

jagadrūpaikakacanamavināśi cidambaramudayāstamayonmuktaṃ sthitamātmani kevalam || 17 ||

The world, which is a single garment of consciousness, is indestructible. The sky of consciousness, free from rise and fall, remains in the self alone.

जगत्, जो चेतना का एक परिधान है, अविनाशी है। उदय और अस्त से मुक्त चेतना का आकाश आत्मा में ही रहता है।

7.101.18

जगद्भानं दधद्वाहं चिन्नभःस्फटिकाचलःअनादिमध्यपर्यन्तः स्वच्छ आत्मनि तिष्ठति ॥ १८ ॥

jagadbhānaṃ dadhaddāhaṃ cinnabhaḥsphaṭikācalaḥanādimadhyaparyantaḥ svaccha ātmani tiṣṭhati || 18 ||

The world shines as the self, which is like a crystal, pure and transparent, without beginning, middle, or end, and remains in the self.

जगत आत्मा के रूप में चमकता है, जो एक स्फटिक के समान, शुद्ध और पारदर्शी है, जिसका न आदि है, न मध्य, न अंत, और जो आत्मा में ही रहता है।

7.101.19

यथा यथान्धकारेण प्रेक्ष्यमाणं प्रणश्यतिकिमप्यङ्गाब्रचक्राभं तथेदं विश्वमात्मनि ॥ १९ ॥

yathā yathāndhakāreṇa prekṣyamāṇaṃ praṇaśyatikimapyaṅgābhracakrābhaṃ tathedaṃ viśvamātmani || 19 ||

Just as darkness disappears when observed, so does this world disappear in the self.

जैसे अंधकार देखने पर विलुप्त हो जाता है, वैसे ही यह जगत आत्मा में विलुप्त हो जाता है।

7.101.20

यथाम्बुधिः स्वयं याति तोयाद्यावर्तकादिकम्स्थितो दधत्तथैवेदं चिदाकाशोऽङ्गमात्मनि ॥ २० ॥

yathāmbudhiḥ svayaṃ yāti toyādyāvartakādikamsthito dadhattathaivedaṃ cidākāśo'ṅgamātmani || 20 ||

Just as the ocean itself goes through the cycles of waves and stillness, so does the sky of consciousness remain in the self.

जैसे समुद्र स्वयं तरंगों और शांति के चक्र से गुजरता है, वैसे ही चेतना का आकाश आत्मा में रहता है।

7.101.21

चिन्मात्रमेव पुरुषः खवत्स च न नश्यति । कदाचनापि तद्व्यर्थं यन्नश्यामीति शोकिता ॥ २१ ॥

cinmātrameva puruṣaḥ khavatsa ca na naśyati | kadācanāpi tadvyarthaṃ yannaśyāmīti śokitā || 21 ||

The soul is pure consciousness and never perishes | Why grieve for that which is imperishable?

आत्मा शुद्ध चेतना है और कभी नष्ट नहीं होता | उस अविनाशी के लिए शोक क्यों करें?

7.101.22

देहाद्देहान्तरप्राप्तौ नव एव महोत्सवः । मरणात्मनि किं मूढा हर्षस्थाने विषीदथ ॥ २२ ॥

dehāddehāntaraprāptau nava eva mahotsavaḥ | maraṇātmani kiṃ mūḍhā harṣasthāne viṣīdatha || 22 ||

The transition from one body to another is a great celebration | Why do you foolishly grieve in a situation meant for joy?

एक शरीर से दूसरे शरीर में स्थानांतरण एक बड़ा उत्सव है | खुशी की स्थिति में मूर्खतापूर्वक शोक क्यों करते हो?

7.101.23

मृतश्चेन्न भवेद्भूयः सोऽत्राप्युपचयो महान् । भावाभावग्रहोत्सर्गज्वरः प्रशममागतः ॥ २३ ॥

mṛtaścennna bhavedbhūyaḥ so'trāpyupacayo mahān | bhāvābhāvagrahotsargajvaraḥ praśamamāgataḥ || 23 ||

If one does not exist again after death, then there is great relief | The fever of attachment to existence and non-existence is calmed.

यदि मृत्यु के बाद फिर से अस्तित्व नहीं होता, तो यहाँ भी बड़ा आराम है | अस्तित्व और अनस्तित्व के आग्रह का ज्वर शांत हो गया है |

7.101.24

मरणं जीवितं तस्मान्न दुःखं न सुखं यतः । नास्त्येवैतच्चिदाकाशः किलेत्थमभिजृम्भते ॥ २४ ॥

maraṇaṃ jīvitaṃ tasmānna duḥkhaṃ na sukhaṃ yataḥ | nāstyevaetaccidākāśaḥ kiletthamabhijṛmbhate || 24 ||

Therefore, death is neither sorrow nor joy, for it is merely the sky of consciousness | This is how it manifests here.

इसलिए, मृत्यु न दुःख है न सुख, क्योंकि यह तो बस चेतना का आकाश है | यह इस तरह से यहाँ प्रकट होता है |

7.101.25

मृतस्य देहलाभश्चेन्नव एव तदुत्सवः । मृतिर्नाशो हि देहस्य सा मृतिः परमं सुखम् ॥ २५ ॥

mṛtasya dehalābhaścennnava eva tadutsavaḥ | mṛtirnāśo hi dehasya sā mṛtiḥ paramaṃ sukham || 25 ||

If the dead obtain a new body, it is indeed a celebration | Death is the destruction of the body, and that death is the ultimate bliss.

यदि मृत व्यक्ति एक नया शरीर प्राप्त करता है, तो यह एक उत्सव है | मृत्यु शरीर का विनाश है, और वह मृत्यु परम आनंद है |

7.101.26

मृतिरत्यन्तनाशश्चेत्तद्भवामयसंक्षयः । भूयः शरीरलाभश्चेन्नव एव तदुत्सवः ॥ २६ ॥

mṛtiratyantanāśaścet tadbhavāmayasaṃkṣayaḥ | bhūyaḥ śarīralābhaścennava eva tadutsavaḥ || 26 ||

If death is the ultimate destruction, then the end of existence is the destruction of all diseases. If there is a rebirth, then it is a celebration.

अगर मृत्यु अंतिम विनाश है, तो अस्तित्व का अंत सभी रोगों का नाश है | अगर पुनर्जन्म है, तो यह एक उत्सव है।

7.101.27

कुकर्मभ्योऽथ भीतिश्चेत्सा समेह परत्र च । तानि मा कार्ष भोस्तस्माल्लोकद्वितयसिद्धये ॥ २७ ॥

kukarmabhyo'tha bhītiścetsā sameha paratra ca | tāni mā kārṣa bhostasmāllokadvitayasiddhaye || 27 ||

If there is fear from bad deeds, then it is the same here and in the hereafter. Therefore, do not perform them for the sake of both worlds.

अगर बुरे कर्मों से भय है, तो यह यहाँ और परलोक में भी समान है। इसलिए, दोनों लोकों के लिए उन्हें न करें।

7.101.28

मरिष्यामि मरिष्यामि मरिष्यामीति भाषसे । भविष्यामि भविष्यामि भविष्यामीति नेक्षसे ॥ २८ ॥

mariṣyāmi mariṣyāmi mariṣyāmīti bhāṣase | bhaviṣyāmi bhaviṣyāmi bhaviṣyāmīti nekṣase || 28 ||

You say 'I will die, I will die, I will die,' but you do not see 'I will be, I will be, I will be.'

तुम कहते हो 'मैं मरूंगा, मैं मरूंगा, मैं मरूंगा,' पर तुम नहीं देखते 'मैं हूँगा, मैं हूँगा, मैं हूँगा।'

7.101.29

क्व नाम जन्ममरणे क्व भवाभवभूमयः । संविदात्मकमेवेदं व्योम व्योम्नि विवर्तते ॥ २९ ॥

kva nāma janmamaraṇe kva bhavābhavabhūmayaḥ | saṃvidātmakamevedaṃ vyoma vyomni vivartate || 29 ||

Where is birth and death? Where is the realm of existence and non-existence? This universe is the manifestation of pure consciousness in the sky.

जन्म और मृत्यु कहाँ है? अस्तित्व और अनस्तित्व का क्षेत्र कहाँ है? यह ब्रह्मांड आकाश में शुद्ध चेतना का प्रकटीकरण है।

7.101.30

संविदाकाशमात्रात्मा पिब भुंक्ष्वास्व निर्ममः । आकाशकोशकान्तस्य कुत इच्छोदयस्तव ॥ ३० ॥

saṃvidākāśamātrātmā piba bhuṃkṣvāsva nirmamaḥ | ākāśakośakāntasya kuta icchodayastava || 30 ||

Being the self of pure consciousness and space, drink, enjoy, and rest without attachment. For the one who is content with the space within, where is the rise of desire?

शुद्ध चेतना और आकाश के स्वयं होने के कारण, पीओ, भोग करो और आसक्ति के बिना विश्राम करो। जिसके अंदर आकाश से संतुष्ट है, उसके लिए इच्छा का उदय कहाँ है?

7.101.31

स्वप्रवाहबलोद्युक्तदेशकालवशादितान् । भावान्भुङ्क्तेऽभयो भव्यः पावनान्पावनादपि ॥ ३१ ॥

svapravāhabalodyuktadeśakālavasāditān | bhāvānbhuṅkte'bhayo bhavyaḥ pāvanānpāvanādapi || 31 ||

The fearless and noble one experiences the states arising from the natural flow of power, place, and time, which are purifying and even more purifying.

निडर और उत्तम व्यक्ति स्वाभाविक शक्ति, स्थान और समय के प्रवाह से उत्पन्न होने वाली अवस्थाओं का अनुभव करता है, जो पवित्र और और भी अधिक पवित्र हैं।

7.101.32

मध्यमध्यगतान्दोषान्देशकालवशोदितान् । अनादृत्यान्तरेवास्ते सुप्तधीरवहेलयन् ॥ ३२ ॥

madhyamadhyagatāndoṣāndeśakālavasoditān | anādṛtyāntarevāste suptadhīravahēlayan || 32 ||

Ignoring the faults arising from the middle of place and time, he remains indifferent, as if asleep, with a carefree mind.

स्थान और समय के मध्य से उत्पन्न होने वाले दोषों को अनदेखा करते हुए, वह उदासीन रहता है, मानो सोया हुआ हो, बेपरवाह मन से।

7.101.33

न दुःखमेति मरणात्सुखमेति न जीवितात् । नाभिवाञ्छति न द्वेष्टि स तदास्ते विवासनः ॥ ३३ ॥

na duḥkhameti maraṇātsukhameti na jīvitāt | nābhivāñchati na dveṣṭi sa tadāste vivāsanaḥ || 33 ||

He does not attain sorrow from death nor happiness from life. He neither desires nor hates. He remains in that state, free from desires.

वह मृत्यु से दुःख नहीं पाता और जीवन से सुख नहीं पाता। वह न तो इच्छा करता है न ही घृणा करता है। वह इच्छाओं से मुक्त होकर उस अवस्था में रहता है।

7.101.34

मरणजीवितजन्मजरत्तृणान्यविमृशन्विगतेच्छमवासनः । विदितवेद्य इहाज्ञ इवोदितो वसति वीतभयस्त्वचलो यथा ॥ ३४ ॥

maraṇajīvitajanmajarattṛṇānyavimṛśanvigatecchamavāsanaḥ | viditavedya ihājña ivodito vasati vītabhayastvacalo yathā || 34 ||

Reflecting on death, life, birth, and old age as mere blades of grass, free from desires and attachments, he dwells like an ignorant person, knowing the knowable, free from fear and steady.

मृत्यु, जीवन, जन्म, और वृद्धावस्था को मात्र घास की पत्तियों के समान मानकर, इच्छाओं और आसक्तियों से मुक्त, वह एक अज्ञानी की तरह रहता है, जानने योग्य को जानते हुए, निडर और स्थिर।

Chapter 102

7.102.1

श्रीराम उवाच । परिज्ञाते परे वस्तुन्यनादिनिधनात्मनि । संपद्यते वद ब्रह्मन्कीदृशः पुरुषोत्तमः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | parijñāte pare vastunyanādinidhanātmani | saṃpadyate vada brahmannkīdṛśaḥ puruṣottamaḥ ||1||

Sri Rama said: Having known the supreme reality which is without beginning or end, tell me, O Brahman, what kind of supreme person arises?

श्री राम ने कहा: अनादि और अनंत परम वस्तु को जानकर, हे ब्रह्मन्, बताओ कि कैसा पुरुषोत्तम उत्पन्न होता है?

7.102.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । शृणु संपद्यते कीदृग्ज्ञातज्ञेयो नरोत्तमः । यावज्जीवं कथं चैष किमाचारोऽवतिष्ठते ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śṛṇu saṃpadyate kīdṛgjñātajñeyo narottamaḥ | yāvajjīvaṃ kathaṃ caiṣa kimācāro'vatiṣṭhate ||2||

Vasistha said: Listen, how does the supreme person, who has realized the knower and the known, conduct himself throughout his life?

वसिष्ठ ने कहा: सुनो, ज्ञाता और ज्ञेय को जानने वाला नरोत्तम अपने जीवन भर कैसे आचरण करता है?

7.102.3

उपला अपि मित्राणि बन्धवो वनपादपाः । वनमध्ये स्थितस्यापि स्वजना मृगपोतकाः ॥ ३ ॥

upalā api mitrāṇi bandhavo vanapādapāḥ | vanamadhye sthitasyāpi svajanā mṛgapotakāḥ ||3||

Even stones become friends, relatives are the trees of the forest, and one's own people are the young of the deer in the midst of the forest.

पत्थर भी मित्र बन जाते हैं, रिश्तेदार वन के पेड़ होते हैं, और वन के बीच में अपने लोग हिरण के बच्चे होते हैं।

7.102.4

आकीर्णं शून्यमेवास्य विपदश्चातिसंपदः । स्थितस्यापि महाराज्ये व्यसनान्येव सूत्सवाः ॥ ४ ॥

ākīrṇaṃ śūnyamevāsya vipadaścātisaṃpadaḥ | sthitasyāpi mahārājye vyasanānyeva sūtsavāḥ ||4||

Even when filled, it is empty for him; calamities are great prosperities. Even while situated in a great kingdom, misfortunes are like festivals.

भरा हुआ भी उसके लिए खाली है; विपत्तियाँ महान समृद्धियाँ हैं। एक महान राज्य में स्थित होने पर भी, व्यसन त्योहारों की तरह हैं।

7.102.5

असमाधिः समाधानं दुःखमेव महत्सुखम् । व्यवहारोऽपि सन्मौनं कर्माण्येवात्यकर्मता ॥ ५ ॥

asamādhiḥ samādhānaṃ duḥkham eva mahatsukham | vyavahāro'pi sanmauṇaṃ karmāṇyevātyakarmatā ||5||

Lack of concentration is concentration, sorrow itself is great joy, activity is also silence, and actions are non-action.

असमाधि ही समाधान है, दुःख ही महान सुख है, व्यवहार भी मौन है, और कर्म ही अकर्म है।

7.102.6

जाग्रदेव सुषुप्तस्थो जीवन्नेव मृतोपमः । करोति सर्वमाचारं न करोति च किंचन ॥ ६ ॥

jāgrad eva suṣuptastho jīvanneva mṛtopamaḥ | karoti sarvamācāraṃ na karoti ca kiṃcana || 6 ||

Though awake, he appears as if asleep; though alive, he seems like dead. He performs all actions, yet he does nothing.

जाग्रत होकर भी सोया हुआ लगता है, जीवित होकर भी मृत के समान लगता है | वह सभी कार्य करता है, परन्तु कुछ भी नहीं करता |

7.102.7

रसिकोऽत्यन्तविरसो निर्घृणो बन्धुवत्सलः । निर्दयोऽत्यन्तकरुणो वितृष्णस्तृष्णयान्वितः ॥ ७ ॥

rasiko'tyantaviraso nirghṛṇo bandhuvatsalaḥ | nirdayo'tyantakaruṇo vitṛṣṇastṛṣṇayānvitaḥ || 7 ||

He is a connoisseur yet devoid of taste, cruel yet affectionate towards relatives, heartless yet extremely compassionate, free from desire yet full of desire.

वह रसिक है परन्तु स्वाद से रहित है, निर्दयी है परन्तु बंधुओं के प्रति स्नेही है, निर्दयी है परन्तु अत्यंत करुणामय है, इच्छा से मुक्त है परन्तु इच्छा से भरा हुआ है |

7.102.8

सर्वाभिनन्दिताचारः सर्वाचारबहिष्कृतः । वीतशोकभयायासः सशोक इव लक्ष्यते ॥ ८ ॥

sarvābhinanditācāraḥ sarvācārabahiṣkṛtaḥ | vītaśokabhayāyāsaḥ saśoka iva lakṣyate || 8 ||

His conduct is praised by all, yet he is rejected by all. He is free from sorrow, fear, and fatigue, yet he appears to be full of sorrow.

उसका आचरण सभी द्वारा प्रशंसित है, परन्तु वह सभी द्वारा त्याग दिया गया है | वह शोक, भय और थकान से मुक्त है, परन्तु वह शोक से भरा हुआ लगता है |

7.102.9

तस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते तु सः । परमुद्वेगमापन्नः संसृतौ रसिकोऽपि सन् ॥ ९ ॥

tasmānnodvijate loko lokānnodvijate tu saḥ | paramudvegamāpannaḥ saṃsṛtau rasiko'pi san || 9 ||

Therefore, the world does not agitate him, nor does he agitate the world. Though experiencing great agitation in the cycle of existence, he remains a connoisseur.

इसलिए, संसार उसे व्याकुल नहीं करता, न ही वह संसार को व्याकुल करता है | भले ही वह अस्तित्व के चक्र में महान व्याकुलता का अनुभव कर रहा हो, वह रसिक बना रहता है |

7.102.10

नाभिनन्दति संप्राप्तं नाप्राप्तमभिवाञ्छति । आस्तेऽनुभूयमानेऽर्थे न च हर्षविषादयोः ॥ १० ॥

nābhinandati saṃprāptaṃ nāprāptamabhivāñchati | āste'nubhūyamāne'rthe na ca harṣaviṣādayoḥ || 10 ||

He does not rejoice in what he has attained, nor does he desire what he has not attained. He remains content with what he experiences, without joy or sorrow.

वह जो प्राप्त हुआ है उस पर प्रसन्न नहीं होता, न ही जो प्राप्त नहीं हुआ है उसकी इच्छा करता है | वह जो अनुभव कर रहा है उसमें संतुष्ट रहता है, हर्ष या विषाद के बिना |

7.102.11

दुःखिते दुःखितकथः सुखिते सुखसंकथः । आस्ते सर्वास्ववस्थासु हृदयेनापराजितः ॥ ११ ॥

duḥkhite duḥkhitakathaḥ sukhite sukhasaṃkathaḥ | āste sarvāsvavasthāsu hṛdayenāparājitaḥ || 11 ||

In sorrow, he speaks of sorrow; in joy, he speaks of joy. He remains unconquered in all situations with his heart.

दुःख में दुःख की बात करता है, सुख में सुख की बात करता है। वह हर स्थिति में अपने हृदय से अपराजित रहता है।

7.102.12

कर्मणः सुकृतादन्यदस्मै किंचिन्न रोचते । स्वभाव एव महतां ननु यन्न विचेष्टितम् ॥ १२ ॥

karmaṇaḥ sukṛtādanyadasmai kiṃcinnaroceate | svabhāva eva mahatāṃ nanu yan na viceṣṭitam || 12 ||

He does not desire anything other than good deeds. Indeed, the nature of the great ones is such that they do not act with selfish motives.

वह अच्छे कर्मों के अलावा किसी और चीज की इच्छा नहीं करता। महान लोगों का स्वभाव ऐसा ही होता है कि वे स्वार्थी उद्देश्यों से काम नहीं करते।

7.102.13

नालम्बते रसिकतां न च नीरसतां क्वचित् । नार्थेषु विचरत्यर्थी वीतरागः सरागवत् ॥ १३ ॥

nālambate rasikatāṃ na ca nīrasatāṃ kvacit | nārtheṣu vicaratyarthī vītarāgaḥ sarāgavat || 13 ||

He does not cling to pleasure nor to displeasure anywhere. He does not wander in worldly affairs, being free from desires yet full of passion.

वह कहीं भी सुख या दुःख से नहीं चिपकता। वह संसारिक मामलों में नहीं भटकता, इच्छाओं से मुक्त होकर भी उत्साह से भरा हुआ।

7.102.14

यथा शास्त्रव्यवहृतेः सुखदुःखैः क्रमागतैः । अनागतोऽपि चायाति न हर्षं न विषादिताम् ॥ १४ ॥

yathā śāstravyavahṛteḥ sukhaduḥkhaiḥ kramāgataiḥ | anāgato'pi cāyāti na harṣaṃ na viṣāditām || 14 ||

Just as one who follows the scriptures experiences joy and sorrow in sequence, even the uninitiated experiences them without joy or sorrow.

जैसे शास्त्रों के अनुसार चलने वाला सुख-दुःख क्रमशः अनुभव करता है, वैसे ही अनागत भी हर्ष या विषाद के बिना उन्हें अनुभव करता है।

7.102.15

संप्रहृष्टाश्च लक्ष्यन्ते लक्ष्यन्ते दुःखितास्तथा । न स्वभावं त्यजन्त्यन्तः संसारारभटीनटाः ॥ १५ ॥

saṃprahṛṣṭāśca lakṣyante lakṣyante duḥkhitāstathā | na svabhāvaṃ tyajantyantaḥ saṃsārārabaṭīnaṭāḥ || 15 ||

The joyful and the sorrowful are seen, but they do not abandon their inherent nature, like actors in the worldly drama.

हर्षित और दुःखी दिखाई देते हैं, लेकिन वे अपने स्वभाव को नहीं छोड़ते, जैसे संसार के नट।

7.102.16

आत्मीयेष्वर्थजातेषु मिथ्यात्मसु सुतादिषु । बुद्बुदेष्विव तोयानां न स्नेहस्तत्त्वदर्शिनाम् ॥ १६ ॥

ātmīyeṣvarthajāteṣu mithyātmasu sutādiṣu | budbudeṣviva toyānāṃ na snehas tattvadarśinām || 16 ||

In the case of relatives and other worldly possessions, which are false selves such as sons, etc., there is no attachment for those who see the truth, just as there is no attachment to bubbles in water.

अपने संबंधियों और अन्य धन-संपत्ति में, जो झूठे आत्मा हैं जैसे पुत्र आदि, सत्य को देखने वालों के लिए कोई आसक्ति नहीं होती, जैसे पानी के बुलबुलों में कोई आसक्ति नहीं होती।

7.102.17

अस्नेह एव सुघनस्नेहार्द्रहृदयो यथा । वत्सलां दर्शयन्वृत्तिं ज्ञस्तिष्ठति यथाक्रमम् ॥ १७ ॥

asneha eva sughanasnehārdrhṛdayo yathā | vatsalāṃ darśayanvṛttiṃ jñastiṣṭhati yathākramam || 17 ||

Even without attachment, one who is soft-hearted with deep affection behaves affectionately, just as a wise person acts according to the situation.

आसक्ति के बिना भी, जो गहरी स्नेह वाला कोमल हृदय है, वह स्नेहपूर्वक व्यवहार करता है, जैसे एक बुद्धिमान व्यक्ति परिस्थिति के अनुसार कार्य करता है।

7.102.18

वायूनिव प्रवाहस्थाः स्पृशन्ति विषयान्मुधा । देहसत्ताविषान्मूढा लीयन्ते विषयोदरे ॥ १८ ॥

vāyūniva pravāhasthāḥ spṛśanti viṣayānmudhā | dehasattāviṣānmūḍhā līyante viṣayodare || 18 ||

Like the winds, those who are in the flow touch the objects foolishly. Foolishly attached to the body, they dissolve in the abdomen of the objects.

हवाओं की तरह, जो प्रवाह में हैं, वे मूर्खतापूर्वक वस्तुओं को छूते हैं। शरीर के प्रति मूर्खतापूर्वक आसक्त, वे वस्तुओं के पेट में विलीन हो जाते हैं।

7.102.19

बहिः सर्वसमाचारमन्तः सर्वार्थशीतलम् । नित्यमन्तरनाविष्ट आविष्ट इव तिष्ठति ॥ १९ ॥

bahiḥ sarvasamācāramantaḥ sarvārthaśītalam | nityamantaranāviṣṭa āviṣṭa iva tiṣṭhati || 19 ||

Externally engaged in all activities, internally cool towards all objects, always immersed within, he remains as if immersed.

बाहर से सभी गतिविधियों में लगे हुए, अंदर से सभी वस्तुओं के प्रति शीतल, हमेशा अंदर डूबे हुए, वह जैसे डूबा हुआ रहता है।

7.102.20

श्रीराम उवाच । स्वरूपमीदृशं तस्य को वेत्ति मुनिनायक । वद सत्यमसत्यं वा भवत्यज्ञो ह्यपीदृशः ॥ २० ॥

śrīrāma uvāca | svarūpamīdṛśaṃ tasya ko vetti munināyaka | vada satyamasatyaṃ vā bhavatyajño hyapīdṛśaḥ || 20 ||

Shri Rama said: Who knows such a nature of that? O leader of sages, tell the truth or untruth. Even the ignorant is like this.

श्री राम ने कहा: ऐसी प्रकृति किसकी है? हे मुनियों के नायक, सत्य या असत्य बताओ। अज्ञानी भी ऐसा ही है।

7.102.21

अश्ववद्ब्रह्मचर्येण चरन्तोऽचारुचेतसः । मिथ्यातपस्विदार्ढ्याय भवन्त्येवंविधा मुने ॥ २१ ॥

aśvavadbrahmacaryeṇa caranto'cārucetasaḥ | mithyātapasvidārḍhyāya bhavantyevaṃvidhā mune || 21 ||

Those who practice celibacy like horses, with impure minds, become firm in false austerities, O sage.

जो लोग घोड़ों की तरह ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, अशुद्ध मन से, वे झूठी तपस्या में दृढ़ हो जाते हैं, हे मुनि।

7.102.22

श्रीवसिष्ठ उवाच । असत्यं वास्तु सत्यं वा स्वरूपं वरमीदृशम् । विद्धि वेदविदां त्वेष स्वभावानुभवस्थितः ॥ २२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asatyaṃ vāstu satyaṃ vā svarūpaṃ varamīdṛśam | viddhi vedavidāṃ tveṣa svabhāvānubhavasthitaḥ || 22 ||

Sri Vasistha said: Know that the nature of reality, whether true or false, is such a supreme form, experienced by the wise according to their nature.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जान लो कि वास्तविकता का स्वरूप, चाहे सत्य हो या असत्य, ऐसा ही परम रूप है, जो विद्वानों द्वारा उनके स्वभाव के अनुसार अनुभव किया जाता है।

7.102.23

अनाविष्टा विचेष्टन्ते वीतरागाः सरागवत् । गतहासा हसन्त्यज्ञान्सहसा करुणाकुलाः ॥ २३ ॥

anāviṣṭā vicēṣṭante vītarāgāḥ sarāgavat | gatahāsā hasantyajñānsahasā karuṇākulāḥ || 23 ||

Those who are not possessed by desires act as if they are full of desires. Those who have lost their laughter laugh out of ignorance, suddenly filled with compassion.

जो लोग इच्छाओं से आबद्ध नहीं हैं, वे ऐसे व्यवहार करते हैं जैसे वे इच्छाओं से भरे हुए हों। जिन्होंने हँसी खो दी है, वे अज्ञान से हँसते हैं, अचानक दया से भर जाते हैं।

7.102.24

चित्तादर्शगतं दृश्यं सर्वं कपटकुट्टिमम् । पश्यन्त्यसत्परिज्ञातं स्वप्ने हेमेव हस्तगम् ॥ २४ ॥

cittādarśagataṃ dṛśyaṃ sarvaṃ kapṭakuṭṭimam | paśyantyasatparijñātaṃ svapne heme'va hastagam || 24 ||

They see all perceptions reflected in the mirror of the mind as mere illusions, known to be unreal, like gold seen in a dream.

वे मन के दर्पण में प्रतिबिंबित सभी अनुभूतियों को मात्र भ्रम के रूप में देखते हैं, जो असत्य के रूप में ज्ञात हैं, जैसे स्वप्न में देखा गया सोना।

7.102.25

अन्तःशीतलतामेषां तां न जानन्ति केचन । दूराच्चन्दनदारूणामामोदमिव जन्तवः ॥ २५ ॥

antaḥśītalatāmeṣāṃ tāṃ na jānanti kecana | dūrāccandanadārūṇāmāmodamiva jantavaḥ || 25 ||

Some do not know the inner coolness of these beings, like creatures not perceiving the fragrance of sandalwood trees from a distance.

कुछ लोग इन प्राणियों की अंतर्वस्तु की शीतलता को नहीं जानते, जैसे प्राणी दूर से चंदन के पेड़ों की सुगंध को नहीं सूँघ पाते।

7.102.26

ये तु विज्ञातविज्ञेयास्तादृशाः पावनाशयाः । जानन्ति तांस्तथैवान्तरहेः पादानिवाहयः ॥ २६ ॥

ye tu vijñātavijñeyāstādṛśāḥ pāvanāśayāḥ | jānanti tāṃstathaivāntaraheḥ pādānivāhayaḥ || 26 ||

Those who have realized the knowable, with such pure intentions, know them as the feet of the inner sun.

जो ज्ञेय को जान चुके हैं, वे ऐसे पवित्र इरादों वाले हैं, वे उन्हें अंतर्हे (आत्मा) के पैर के रूप में जानते हैं।

7.102.27

भावं निगूहयन्त्येते तमुत्तममनुत्तमाः । ग्राम्यैर्धनैः किलानर्घ्य कश्चिन्तामणिरापणे ॥ २७ ॥

bhāvaṃ nigūhayantyete tamuttamamanuttamāḥ | grāmyairdhanaiḥ kilānarghya kaścintāmaṇirāpaṇe || 27 ||

These conceal that supreme emotion, being incomparable, with worldly wealth, as if it were a priceless gem in the market.

ये उस उत्तम भाव को छिपाते हैं, अनुपम होने के कारण, सांसारिक धन से, जैसे कि वह बाजार में एक अनमोल रत्न हो।

7.102.28

तस्मिन्निगूहने भावो यतस्तेषां न दर्शने । निर्वासना गतद्वैता गतमानाः किलाङ्ग ते ॥ २८ ॥

tasminnigūhane bhāvo yatasteṣāṃ na darśane | nirvāsanā gatadvaitā gatamānāḥ kilāṅga te || 28 ||

In that concealment, the emotion is not visible to them, being expelled, beyond duality, having gone away, as if limbs.

उस छिपाव में, उनके लिए भाव दिखाई नहीं देता, निकाले जाने के कारण, द्वैत से परे, चले गए हैं, जैसे अंग।

7.102.29

एकान्तामानदौर्गत्यजनावज्ञप्तयस्तु तान् । सुखयन्ति यथा राम न तथैव महर्द्धयः ॥ २९ ॥

ekāntāmānadaurgatya janāvajñaptyastu tān | sukhayanti yathā rāma na tathaiva maharddhayaḥ || 29 ||

Those who are despised due to their extreme misery and solitude, they give happiness, O Rama, not like the great riches.

जो अत्यंत दुःख और एकांत के कारण तिरस्कृत हैं, वे सुख देते हैं, हे राम, महान धन की तरह नहीं।

7.102.30

स्वसंवेदनसंवेद्यसारा विदितवेद्यता । नैषा दर्शयितुं शक्या दृश्यते न च तद्विदा ॥ ३० ॥

svasaṃvedanasavedyasārā viditavedyatā | naiṣā darśayituṃ śakyā dṛśyate na ca tadvidā || 30 ||

The essence that is known through self-realization cannot be shown, nor is it seen by those who know it.

जो आत्म-साक्षात्कार से जाना जाता है, उस सार को दिखाया नहीं जा सकता, न ही उसे जानने वाले देख सकते हैं।

7.102.31

गुणं ममेमं जानातु जनः पूजां करोतु मे । इत्यहंकारिणामीहा न तु तन्मुक्तचेतसाम् ॥ ३१ ॥

guṇaṃ mamemaṃ jānātu janaḥ pūjāṃ karotu me| ityahaṃkāriṇāmīhā na tu tanmuktacetasām || 31 ||

Let people know my qualities and worship me| Thus say the egoistic, but not those who are free from such thoughts

मेरे गुणों को जानें लोग और मेरी पूजा करें| ऐसा अहंकारी कहते हैं, पर ऐसा नहीं कहते जिनके मन मुक्त हैं

7.102.32

क्रियाफलानि चिद्व्योमगमनादीनि राघव । अज्ञानामपि सिध्यन्ति मन्त्रौषधिवशादिह ॥ ३२ ॥

kriyāphalāni cidvyomagamanādīni rāghava| ajñānāmapi sidhyanti mantrauṣadhivaśādiha || 32 ||

O Raghava, even the ignorant can achieve results like flying in the sky through the power of mantras and medicines

हे रघुनाथ, अज्ञानी लोग भी मंत्र और औषधि के प्रभाव से आकाश में उड़ने जैसे कार्यों को सिद्ध कर सकते हैं

7.102.33

यो यादृक् क्लेशमाधातुं समर्थस्तादृगेव सः । अवश्यं फलमाप्नोति प्रबुद्धोऽस्त्वज्ञ एव वा ॥ ३३ ॥

yo yādṛk kleśamādhātuṃ samarthastādṛgeva saḥ| avaśyaṃ phalamāpnoti prabuddho'stvajña eva vā || 33 ||

One who is capable of inflicting a certain kind of pain will surely reap the corresponding fruit, whether they are wise or ignorant

जो किसी प्रकार का क्लेश देने में समर्थ है, वह उसी प्रकार का फल अवश्य प्राप्त करेगा, चाहे वह बुद्धिमान हो या अज्ञानी

7.102.34

आमोदश्चन्दनस्येव स्पन्दनस्य फलं हृदि । सर्वस्यैवास्ति तन्नूनं तद्वता समवाप्यते ॥ ३४ ॥

āmodaścandanasyaiva spandanasya phalaṃ hṛdi| sarvasyaivāsti tannūnaṃ tadvatā samavāpyate || 34 ||

Just as the fragrance of sandalwood spreads, the fruit of vibration is in the heart of everyone, and it is attained by that very means

जैसे चन्दन की सुगंध फैलती है, वैसे ही स्पंदन का फल सबके हृदय में होता है, और उसी तरह से प्राप्त होता है

7.102.35

अहंतावासनाद्वैतं वस्तुता दृश्यवस्तुषु । यस्यास्त्यसौ साधयति खगमादिक्रियाफलम् ॥ ३५ ॥

ahaṃtāvāsanādvaitaṃ vastutā dṛśyavastuṣu| yasyāstyasau sādhayati khagamādikriyāphalam || 35 ||

One who has the tendency of ego sees duality in visible objects and achieves results like flying in the sky

जिसकी अहंकार की वासना है, वह दृश्य वस्तुओं में द्वैत देखता है और आकाश में उड़ने जैसे कार्यों को सिद्ध करता है

7.102.36

इदं न किंचिद्भ्रान्तिर्वा खं चेति ज्ञस्तु वेत्ति यः । सोऽवासनः कर्मवात्याः कथं साधयति क्रियाः ॥ ३६ ॥

idaṃ na kiṃcidbhrāntirvā khaṃ ceti jñastu vetti yaḥ | so'vāsanaḥ karmavātyāḥ kathaṃ sādhayati kriyāḥ || 36 ||

One who knows that this is not a mere illusion or empty space, how does he, who is free from desires, perform actions in the whirlwind of karma?

जो यह जानता है कि यह न तो एक भ्रांति है न ही खाली आकाश, वह इच्छाओं से मुक्त होकर कर्म के भंवर में कैसे क्रियाएँ करता है?

7.102.37

नैव तस्य कृतेनार्थो नाऽकृतेनेह कश्चन । न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥ ३७ ॥

naiva tasya kṛtenārtho nā'kṛteneha kaścana | na cāsya sarvabhūteṣu kaścidarthavyapāśrayaḥ || 37 ||

For him, there is no benefit from what is done or not done here. Nor does he have any reliance on any purpose in all beings.

उसके लिए, यहाँ किए गए या न किए गए कामों से कोई लाभ नहीं है। न ही उसके पास सभी प्राणियों में किसी भी उद्देश्य पर निर्भरता है।

7.102.38

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा क्वचित्। यदुदारमनोवृत्तेर्लोभाय विदितात्मनः ॥ ३८ ॥

na tadasti pṛthivyāṃ vā divi deveṣu vā kvacit | yadudāramanovṛtterlobhāya viditātmanaḥ || 38 ||

There is nothing on earth or in heaven among the gods that can tempt the mind of the one who knows the self.

पृथ्वी पर या स्वर्ग में देवताओं में कुछ भी ऐसा नहीं है जो आत्मज्ञानी के मन को लुभा सके।

7.102.39

जगदेव तृणं यस्य न किंचिद्रज एव वा। किं नाम तस्य भवतु अन्यदादेयतां गतम् ॥ ३९ ॥

jagadeva tṛṇaṃ yasya na kiṃcidraja eva vā | kiṃ nāma tasya bhavatu anyadādeyatāṃ gatam || 39 ||

For whom the world is like a blade of grass, nothing is dear or not dear. What else can be said about him? He has attained the state of non-attachment.

जिसके लिए संसार एक तिनके के समान है, उसके लिए कुछ भी प्यारा या अप्यारा नहीं है। उसके बारे में और क्या कहा जा सकता है? वह वैराग्य की अवस्था को प्राप्त हो चुका है।

7.102.40

निर्वाहितजगद्यात्रः परिपूर्णमना मुनिः। यथास्थितमसावास्ते संप्रयाति यथागतम् ॥ ४० ॥

nirvāhitajagadyātraḥ paripūrṇamanā muniḥ | yathāsthitamasāvāste saṃprayāti yathāgatam || 40 ||

The sage, whose journey through the world is completed and whose mind is fully content, remains as he is and departs as he came.

जिस मुनि की संसार यात्रा पूर्ण हो चुकी है और जिसका मन पूर्णतः संतुष्ट है, वह जैसा है वैसा ही रहता है और जैसे आया था वैसे ही चला जाता है।

7.102.41

नित्यान्तःशीतलो मौनी सत्त्वीभूतमनोवनिः। परिपूर्णार्णवाकारो गम्भीरप्रकटाशयः ॥ ४१ ॥

nityāntaḥśītalo maunī sattvībhūtamanovaniḥ | paripūrṇārṇavākāro gambhīraprakaṭāśayaḥ || 41 ||

Eternally cool within, silent, with a mind filled with pure essence, resembling a full ocean, deep and manifest.

नित्य अन्तर्मुख शीतल, मौनी, सत्त्व भूत मन वाला, पूर्ण सागर के समान, गहरा और प्रकट।

7.102.42

रसायनपरापूर्णहृदवत् ह्लादमात्मनि। धत्ते करोति वान्यस्य सकलेन्दुरिवामलः ॥ ४२ ॥

rasāyanaparāpūrṇahṛdavat hlādamātmani | dhatte karoti vānyasya sakalendurivāmalḥ || 42 ||

Like a full heart filled with the essence of joy, it brings happiness to oneself and others, just like the pure moon.

पूर्ण हृदय के समान आनंद की सार से भरा हुआ, यह स्वयं और दूसरों को खुशी देता है, जैसे शुद्ध चंद्रमा।

7.102.43

मन्दारमञ्जरीकुञ्जपिञ्जरा देवभूमयः। न तथा ह्लादयन्त्येता यथा पण्डितबुद्धयः ॥ ४३ ॥

mandāramañjarīkuñjapiñjarā devabhūmayaḥ | na tathā hlādayantyetā yathā paṇḍitabuddhayaḥ || 43 ||

The divine realms adorned with Mandara flowers and bees do not bring as much joy as the wisdom of the learned.

मंदार फूलों और भौंरों से सजी दिव्य भूमियाँ विद्वानों की बुद्धि के समान खुशी नहीं देतीं।

7.102.44

चन्द्रबिम्बैर्वसन्तैश्च महतामहताशयैः । सारं सौभाग्यसौगन्ध्यसौरभालोकभोगिषु ॥ ४४ ॥

candrabimbairvasantaiśca mahatāmahatāśayaiḥ | sāraṃ saubhāgyasaugandhyasaurabhālokabhogiṣu || 44 ||

With the moon's disc and the spring season, the great ones enjoy the essence of good fortune, fragrance, and splendor.

चंद्रमा के चक्र और वसंत ऋतु के साथ, महान लोग सौभाग्य, सुगंध और शोभा का सार भोगते हैं।

7.102.45

भ्रान्तिमात्रमिदं विश्वमिन्द्रजालमसन्मयम् । त्यजतीति विनिश्चित्य दिनानुदिनमेषणाः ॥ ४५ ॥

bhrāntimātramidaṃ viśvamindrajālamasanmayam | tyajatīti viniścitya dinānudinameṣaṇāḥ || 45 ||

This world is merely an illusion, a magical trick, unreal. Realizing this, one should gradually renounce desires day by day.

यह विश्व केवल एक भ्रांति है, एक मायाजाल, असत्य। इसे समझकर, एक दिन के बाद दूसरे दिन इच्छाओं को त्याग देना चाहिए।

7.102.46

शीतातपादिदुःखानि निजदेहगतान्यपि । अन्यदेहगतानीव ज्ञः पश्यत्यवहेलया ॥ ४६ ॥

śītātapādiduḥkhāni nijadehagatānyapi | anyadehagatānīva jñaḥ paśyatyavahēlayā || 46 ||

The wise person views the sufferings of heat and cold, etc., that affect their own body as if they were affecting someone else's body, without any distress.

बुद्धिमान व्यक्ति अपने शरीर में आने वाले सर्दी-गर्मी आदि दुःखों को दूसरे के शरीर में आने वाले दुःखों की तरह बिना किसी उद्वेग के देखता है।

7.102.47

करुणोदारया वृत्त्या वृत्त्या व्रततिधीरया । नीरसो नीरसारां तु सारतां सरति स्थितिम् ॥ ४७ ॥

karuṇodārayā vṛttyā vṛttyā vratatidhīrayā | nīraso nīrasārāṃ tu sāratāṃ sarati sthitim || 47 ||

With compassionate and generous conduct, and with firm resolve, the tasteless one attains the essence of tastelessness.

दया और उदारता से व्यवहार करने वाला, और दृढ़ संकल्प से युक्त, नीरस व्यक्ति नीरसता की सारता को प्राप्त करता है।

7.102.48

व्यवहारं यथाप्राप्तं लोकसामान्यमाचरन् । चराचराणां भूतानामुपर्येवावतिष्ठते ॥ ४८ ॥

vyavahāraṃ yathāprāptaṃ lokasāmānyamācaran | carācarāṇāṃ bhūtānāmuparyevāvatiṣṭhatē || 48 ||

By engaging in worldly activities as they come, one remains above all moving and non-moving beings.

सामान्य लोक व्यवहार करते हुए, जैसे वे आते हैं, व्यक्ति सभी चराचर भूतों से ऊपर रहता है।

7.102.49

प्रज्ञाप्रासादमारूढस्त्वशोच्यः शोचते जनान् । भूमिष्ठानिव शैलस्थः सर्वान्प्रज्ञोऽनुपश्यति ॥ ४९ ॥

prajñāprāsādamārūḍhastvaśocyāḥ śocatē janān | bhūmiṣṭhāniv śailasthaḥ sarvānprajñō'nupaśyati || 49 ||

The wise person, seated in the palace of wisdom, does not grieve for anyone, but sees everyone as if from a mountain top, seeing those on the ground.

बुद्धिमान व्यक्ति, ज्ञान के महल में बैठा हुआ, किसी के लिए शोक नहीं करता, बल्कि पहाड़ की चोटी से जमीन पर लोगों को देखता है।

7.102.50

चिरं कल्लोलवलितः सुमना जलधौ भ्रमे । परं पारमुपागत्य परां विश्रान्तिमेति सः ॥ ५० ॥

ciraṃ kalōlavalitaḥ sumanā jaladhau bhramē | paraṃ pāramupāgatya parāṃ viśrāntimēti saḥ || 50 ||

One who remains calm and cheerful amidst the waves of life's ocean, upon reaching the ultimate shore, attains supreme rest.

जो जीवन के समुद्र की लहरों में शांत और प्रसन्न रहता है, वह परम तट पर पहुंचकर परम विश्राम को प्राप्त करता है।

7.102.51

हसन्स शान्तया वृत्त्या प्राक्तनीर्जागतीर्गतीः । स्मयमान इवास्तेऽन्तर्जनताश्च घनभ्रमाः ॥ ५१ ॥

hasans śāntayā vṛttyā prāktanīrjāgatīrgatīḥ | smayamāna ivāste'ntarjanatāśca ghanabhramāḥ || 51 ||

With a peaceful demeanor, he recalls the past events of the world, as if smiling within, and the dense clouds are also smiling.

शान्त वृत्ति से, वह संसार की प्राचीन घटनाओं को याद करता है, मानो अंदर से मुस्कुरा रहा हो, और घने बादल भी मुस्कुरा रहे हैं।

7.102.52

एताः कान्तारनिर्मग्नमिताः संसारदृष्टयः । असत्यो हृतवत्यो मामित्यन्तर्याति विस्मयम् ॥ ५२ ॥

etāḥ kāntāranirmagnamitāḥ saṃsāradṛṣṭayaḥ | asatyo hṛtavatyo māmityantaryāti vismayam || 52 ||

These views, immersed in the dense forest of worldly life, are false and have stolen my heart, causing me great wonder.

ये दृष्टियाँ, जो संसार के घने जंगल में डूबी हुई हैं, झूठी हैं और मेरे हृदय को चुरा लिया है, जिससे मुझे बड़ा आश्चर्य होता है।

7.102.53

दृष्ट्याष्टगुणमैश्वर्यमनिष्टं मे तृणायते । इत्युपैत्युपशान्तत्वात्स्मयमानोऽपि न स्मयम् ॥ ५३ ॥

dṛṣṭyāṣṭaguṇamaiśvaryamaniṣṭaṃ me tṛṇāyate | ityupaitiupaśāntatvātsmayamāno'pi na smayam || 53 ||

The eightfold divine power, seen as undesirable, appears to me as insignificant. Thus, attaining peace, even while smiling, I do not smile.

आठ गुणों वाली दिव्य शक्ति, जो अनिच्छित दिखाई देती है, मुझे तुच्छ लगती है। इस प्रकार, शांति प्राप्त करके, भले ही मुस्कुराता हूँ, फिर भी मैं मुस्कुराता नहीं हूँ।

7.102.54

कश्चिद्गिरिगुहागेहः कश्चित्पुण्याश्रमाश्रयः । कश्चिद्गृहस्थाश्रमवान्कश्चिद्बहुरटन्स्थितः ॥ ५४ ॥

kaścidgiriguhāgehaḥ kaścitpuṇyāśramāśrayaḥ | kaścadgṛhasthāśramavānkaścadvahuraṭansthitaḥ || 54 ||

Someone dwells in a cave in the mountains, someone takes refuge in a holy hermitage, someone follows the householder's path, and someone is engaged in various activities.

कोई पहाड़ की गुफा में रहता है, कोई पवित्र आश्रम में शरण लेता है, कोई गृहस्थ आश्रम का पालन करता है, और कोई विभिन्न कार्यों में व्यस्त है।

7.102.55

कश्चिद्भिक्षाचराचारः कश्चिदेकान्ततापसः । कश्चिन्मौनव्रतधरः कश्चिद्ध्यानपरायणः ॥ ५५ ॥

kaścadbhikṣācarācāraḥ kaścidekāntatāpasaḥ | kaścinmaunavratadharaḥ kaściddhyānaparāyaṇaḥ || 55 ||

Someone follows the practice of begging, someone is an ascetic in solitude, someone observes the vow of silence, and someone is devoted to meditation.

कोई भिक्षा का आचरण करता है, कोई एकांत में तपस्वी है, कोई मौन व्रत धारण करता है, और कोई ध्यान में लीन है।

7.102.56

कश्चिद्विपश्चिद्विख्यातः कश्चिच्छ्रोता श्रुतेः स्मृतेः । कश्चिद्राजा द्विजः कश्चित्कश्चिदज्ञ इव स्थितः ॥ ५६ ॥

kaścidvipaścidvikhātaḥ kaściśśrotā śruteḥ smṛteḥ | kaścidrājā dvijaḥ kaścitkaścidajña iva sthitaḥ || 56 ||

Some are famous scholars, some are listeners of the scriptures, some are kings, some are Brahmins, and some appear ignorant.

कुछ विख्यात विद्वान हैं, कुछ शास्त्रों के श्रोता हैं, कुछ राजा हैं, कुछ ब्राह्मण हैं, और कुछ अज्ञानी की तरह दिखाई देते हैं।

7.102.57

गुटिकाञ्जनखङ्गादिसिद्धः कश्चिन्नभोगतः । कश्चिच्छिल्पकलाजीवी कश्चित्पामररूपभृत् ॥ ५७ ॥

guṭikāñjanakhaṅgādisiddhaḥ kaścinnabhogataḥ | kaściśśilpakalājīvī kaścitpāmararūpabhṛt || 57 ||

Some are accomplished in magical arts like pills and ointments, some are skilled in crafts, and some appear as ignorant villagers.

कुछ गुटिका और अंजन जैसी जादू कलाओं में सिद्ध हैं, कुछ शिल्पकला में जीविका कमाते हैं, और कुछ अज्ञानी ग्रामीण की तरह दिखाई देते हैं।

7.102.58

कश्चित्त्यक्तसमाचारः कश्चिच्छ्रोत्रियनायकः । कश्चिदुन्मत्तचरितः प्रव्रज्यां कश्चिदाश्रितः ॥ ५८ ॥

kaścittyaktasamācāraḥ kaściśśrotriyanāyakaḥ | kaścidunmattacaritaḥ pravrajyāṃ kaścidāśritaḥ || 58 ||

Some have abandoned proper conduct, some are leaders of the learned, some behave like madmen, and some have taken to the life of a wandering ascetic.

कुछ ने उचित आचरण को त्याग दिया है, कुछ विद्वानों के नेता हैं, कुछ पागलों की तरह व्यवहार करते हैं, और कुछ ने भिक्षु का जीवन अपना लिया है।

7.102.59

पुरुषो न शरीरादि न च चित्तादि किंचन । पुरुषश्चेतनं नाम न स नश्यति कर्हिचित् ॥ ५९ ॥

puruṣo na śarīrādi na ca cittādi kiñcana | puruṣaścetanaṃ nāma na sa naśyati karhicit || 59 ||

The soul is neither the body nor the mind. The soul, which is consciousness, never perishes.

पुरुष न तो शरीर है न ही मन। पुरुष, जो चेतना है, कभी नहीं नष्ट होता।

7.102.60

अच्छेद्योऽसावदाह्योऽसावक्लेद्योऽशोष्य एव च । नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽसौ सनातनः ॥ ६० ॥

acchedyo'sāvadāhyo'sāvakledyo'śoṣya eva ca | nityaḥ sarvagataḥ sthāṇuracalo'sau sanātanaḥ || 60 ||

The soul cannot be cut, burned, wetted, or dried. It is eternal, all-pervading, unmoving, and ancient.

आत्मा काटी नहीं जा सकती, जलाई नहीं जा सकती, भीगी नहीं जा सकती, या सूखी नहीं जा सकती। यह अनंत, सर्वव्यापी, अचल, और पुरातन है।

7.102.61

इति सम्यक्प्रबुद्धो यः स यथा यत्र तिष्ठति । तथा तिष्ठतु तत्रात्र स्थानास्थानियमेन किम् ॥ ६१ ॥

iti samyakprabuddho yaḥ sa yathā yatra tiṣṭhati | tathā tiṣṭhatu tatrātra sthānāsthāniyamena kim || 61 ||

Thus, one who is fully awakened should remain as he is, wherever he is. Why should he be bound by the limitations of place?

इस प्रकार जो पूर्ण रूप से जाग्रत है वह जहाँ भी है उसी प्रकार रहे| स्थान के नियमों से बंधन क्यों?

7.102.62

पातालमाविशतु यातु नभो विलङ्घ्य दिङ्मण्डलं भ्रमतु पेषणमेव येन । चिन्मात्रमेतदजरं न तु यातु नाशमाकाशकोश इवशान्तमजं शिवं तत् ॥ ६२ ॥

pātālamāviśatu yātu nabho vilanghya diṅmaṇḍalaṃ bhramatu peṣaṇameva yena | chinmātrametadajaraṃ na tu yātu nāśamākāśakośa ivashāntamajaṃ śivaṃ tat || 62 ||

Let one enter the underworld, go to the sky, transcend the directions, wander, or be crushed. This pure consciousness is eternal and does not perish, like the peaceful and unborn sky.

कोई पाताल में प्रवेश करे, आकाश में जाए, दिशाओं को पार करे, भटके या कुचला जाए। यह शुद्ध चेतना अजर है और नष्ट नहीं होती, जैसे शांत और अजन्मा आकाश।

Chapter 103

7.103.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । भामात्रं भानमात्रं वा शान्तं भासत एव च । चिन्मात्रं यदनाद्यन्तं तस्य नाशः कथं कदा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | bhāmātraṃ bhānamātraṃ vā śāntaṃ bhāsata eva ca | cinmātraṃ yadanādyantaṃ tasya nāśaḥ kathaṃ kadā || 1 ||

Sri Vasistha said: That which is pure light, pure illumination, tranquil and ever-shining, that which is pure consciousness without beginning or end, how and when can it be destroyed?

श्री वसिष्ठ ने कहा: जो पूर्ण प्रकाश, पूर्ण चमक, शान्त और सदा चमकता है, जो अनादि और अनंत चेतना है, उसका नाश कैसे और कब हो सकता है?

7.103.2

तावन्मात्रं च पुरुषः कदाचित्स न नश्यति । यदि नश्यति चिन्मात्रं भूयो जायेत किं कथम् ॥ २ ॥

tāvanmātraṃ ca puruṣaḥ kadācitsa na naśyati | yadi naśyati cinmātraṃ bhūyo jāyeta kiṃ katham || 2 ||

That much alone is the person, he never perishes. If pure consciousness perishes, how can it be born again?

उतना ही पुरुष है, वह कभी नहीं नष्ट होता। यदि शुद्ध चेतना नष्ट हो जाती है, तो फिर से कैसे जन्म ले सकती है?

7.103.3

न चान्यदन्यच्चिन्मात्रं क्वचित्किंचन कस्यचित् । सर्वानुभवसादृश्ये कीदृशी नाम सान्यता ॥ ३ ॥

na cānyadanyaccinmātraṃ kvacitkiṃcana kasyacit | sarvānubhavasādṛśye kīdṛśī nāma sānyatā || 3 ||

There is no other pure consciousness anywhere for anyone. In the similarity of all experiences, what kind of otherness is there?

कहीं भी किसी के लिए कोई अन्य शुद्ध चेतना नहीं है। सभी अनुभवों की समानता में, किस तरह की भिन्नता है?

7.103.4

सर्वस्यैव हिमं शीतमुष्णोऽग्निर्मधुरं पयः । चिन्मात्रस्यावदातस्य कीदृगन्यत्वमत्र तु ॥ ४ ॥

sarvasyaiva himaṃ śītamuṣṇo'gnirmadhuraṃ payaḥ | cinmātrasya avadātasya kīdṛganyatvamatra tu || 4 ||

For everyone, cold is cold, fire is hot, and water is sweet. For the undifferentiated pure consciousness, what kind of otherness is there?

सभी के लिए, ठंड ठंडी है, आग गर्म है, और पानी मीठा है। अविभाजित शुद्ध चेतना के लिए, किस तरह की भिन्नता है?

7.103.5

शरीरनाशे नाशश्चेच्चिन्मात्रस्य तदुच्यताम् । हर्षस्थाने विषादः किं मरणे संसृतिक्षये ॥ ५ ॥

śarīranāśe nāśaśceccinmātrasya taducyatām | harṣasthāne viṣādaḥ kiṃ maraṇe saṃsṛtikṣaye || 5 ||

If pure consciousness is destroyed with the destruction of the body, then let it be said. What is the sorrow in the place of joy, in death, and in the end of transmigration?

यदि शरीर के नाश के साथ शुद्ध चेतना भी नष्ट हो जाती है, तो यह कहा जाए। हर्ष की जगह दुःख क्या है, मृत्यु में, और पुनर्जन्म के अंत में?

7.103.6

न च नाम शरीरस्य नाशे नश्यति चिन्नभः । देहे नष्टेऽपि बन्धूनां म्लेच्छैर्दृष्टा पिशाचता ॥ ६ ॥

na ca nāma śarīrasya nāśe naśyati cinnabhaḥ | dehe naṣṭe'pi bandhūnāṃ mlecchairdṛṣṭā piśācatā || 6 ||

Even when the body perishes, the consciousness does not perish. Even when the body is destroyed, the relatives see the state of a ghost through the eyes of the barbarians.

शरीर के नाश होने पर भी चेतना नष्ट नहीं होती | शरीर के नष्ट होने पर भी बन्धुओं को म्लेच्छों द्वारा पिशाच की स्थिति दिखाई देती है।

7.103.7

यावच्छरीरसत्ता चेच्चेतनस्य तदुच्यताम् । शवः कस्मान्न चलति सत्यखण्डे शरीरके ॥ ७ ॥

yāvaccharīrasattā ceccetanasya taducyatām | śavaḥ kasmānna calati satyakhṇḍe śarīrake || 7 ||

As long as there is life in the body, it is said to be conscious. Why does the corpse not move even when the body is intact?

जब तक शरीर में जीवन है, तब तक उसे चेतन कहा जाता है | शरीर सम्पूर्ण होने पर भी शव क्यों नहीं चलता?

7.103.8

पिशाचानुभवो जीवधर्मश्चेत्तत्स सर्वदा । किं न पश्यति किं बन्धौ मृते पश्यति तत्तथा ॥ ८ ॥

piśācānubhavo jīvadharmaścettatsa sarvadā | kiṃ na paśyati kiṃ bandhau mṛte paśyati tattathā || 8 ||

If the experience of a ghost is the nature of life, then it is always so. What does it not see? What does it see in bondage when dead?

यदि पिशाच का अनुभव जीवन का धर्म है, तो वह हमेशा है | वह क्या नहीं देखता? मृत्यु में बंधन में वह क्या देखता है?

7.103.9

जीवधर्मो विशिष्टश्चेत्तादृशस्तं नरः कथम् । मिथ्या देशान्तरमृते पिशाचत्वं न पश्यति ॥ ९ ॥

jīvadharmo viśiṣṭaścettādṛśastan naraḥ katham | mithyā deśāntaramṛte piśācatvaṃ na paśyati || 9 ||

If the nature of life is distinct, then how is such a person? Falsehood in another place, he does not see the ghostly state.

यदि जीवन का धर्म विशिष्ट है, तो ऐसा व्यक्ति कैसा है? दूसरे स्थान में झूठ, वह पिशाच की स्थिति नहीं देखता।

7.103.10

तस्मात्सर्वात्मकत्वे तच्चिन्मात्रं न नियन्त्रितम् । यद्यद्यत्र यथा वेत्ति तत्तत्तत्रावगच्छति ॥ १० ॥

tasmātsarvātmakatve taccinmātraṃ na niyantritam | yadyadyatra yathā vetti tattattatrāvagacchati || 10 ||

Therefore, in the all-pervading nature, that pure consciousness is not controlled. Whatever it knows in whatever way, it perceives that accordingly.

इसलिए, सर्वव्यापी प्रकृति में, वह शुद्ध चेतना नियंत्रित नहीं है | जो कुछ भी जिस तरह से जानता है, वह उसे उसी तरह से ग्रहण करता है।

7.103.11

अवाधितैवैकघना संविद्भवति यादृशीतादृश्येवानुभूतिर्हि तत्स्वभावोऽत्र कारणम् ॥ ११ ॥

avādhitaivaikaghanā saṃvidbhavati yādṛśītādṛśyevānubhūtirhi tatsvabhāvo'tra kāraṇam || 11 ||

The experience of the unified consciousness arises as it is, and its nature is the cause here.

एकीकृत चेतना का अनुभव वैसा ही उत्पन्न होता है, और उसका स्वभाव यहाँ कारण है।

7.103.12

अन्यन्न संभवत्यत्र सर्गादावेव कारणम्। यन्नाम तदिदानीं स्यात्कथ्यतां कीदृशं कथम्॥ १२॥

anyanna saṃbhavatyatra sargādāveva kāraṇam | yannāma tadidānīṃ syātkathyatāṃ kīdṛśaṃ katham || 12 ||

Nothing else exists here except the cause at the beginning of creation. What is its name? Let it be told, how and of what kind?

यहाँ सृष्टि के आरंभ में कारण के अलावा कुछ और नहीं है। उसका नाम क्या है? यह बताया जाए, कैसे और कैसा?

7.103.13

सर्गादावेव नोत्पन्ना न चैवाद्यावभासते। विकल्पश्रीर्जगद्भासा केवलं भाति चिन्नभः॥ १३॥

sargādāveva notpannā na caivādyāvabhāsate | vikalpaśrīrjagadbhāsā kevalaṃ bhāti cinnabhaḥ || 13 ||

At the beginning of creation, nothing is produced, nor does anything appear first. The diversity of the world appears only as a reflection in the mirror of consciousness.

सृष्टि के आरंभ में, कुछ भी उत्पन्न नहीं होता, न ही कोई पहले प्रकट होता है। विश्व की विविधता केवल चेतना के दर्पण में प्रतिबिंब के रूप में दिखाई देती है।

7.103.14

आभासमात्रमेवेदं दृश्यमित्यवबुध्यते। दृश्यमित्यवबोधेन तदृते स्यात्क्व दृश्यता॥ १४॥

ābhāsamātramevedaṃ dṛśyamityavabudhyate | dṛśyamityavabodhena tadṛte syātkva dṛśyatā || 14 ||

This is understood as merely an appearance. If it is understood as an appearance, then where is the reality of the appearance without that?

यह केवल एक अभिव्यक्ति के रूप में समझा जाता है। यदि यह एक अभिव्यक्ति के रूप में समझा जाता है, तो उसके बिना अभिव्यक्ति की वास्तविकता कहाँ है?

7.103.15

स्वचमत्कारचातुर्यं चारु चिन्नभसा रसात्। बोधेन बुध्यते दृश्यमित्यबोधान्न बुध्यते॥ १५॥

svacamatkāracāturyaṃ cāru cinnabhasā rasāt | bodhena budhyate dṛśyamityabodhānna budhyate || 15 ||

The charming play of self-manifestation is understood through the essence of the mirror of consciousness. The perceived is understood through understanding, but not without understanding.

स्वयं की अभिव्यक्ति का चमत्कार चेतना के दर्पण की सारता से समझा जाता है। दिखाई देने वाला समझ से समझा जाता है, पर समझ के बिना नहीं।

7.103.16

बोधोऽबोधश्च तद्रूपमेवमेव निरामयम्। भेदोऽत्र वाचि न त्वर्थे तस्मान्नास्त्येव दृश्यता॥ १६॥

bodho'bodhaśca tadrūpamevameva nirāmayam | bhedo'tra vāci na tvarthe tasmānnāstyeva dṛśyatā || 16 ||

Knowledge and ignorance are both of the same nature, flawless. The difference here is in words, not in reality. Therefore, there is no perception.

ज्ञान और अज्ञान दोनों एक ही स्वरूप के हैं, दोषरहित। यहाँ अंतर शब्दों में है, वास्तविकता में नहीं। इसलिए, कोई दृश्यता नहीं है।

7.103.17

या चासीद्दृश्यतैषां तां विद्धि त्वमविचारणाम्। सा चेदानीं विचारेण विनष्टातः क्व दृश्यते ॥ १७ ॥

yā cāsīddṛśyataiṣāṃ tāṃ viddhi tvamavicāraṇām | sā cedānīṃ vicāreṇa vinaṣṭātaḥ kva dṛśyate || 17 ||

Whatever perception there was, know it to be without examination. If it is now examined, it is destroyed. Where is it seen?

जो भी दृश्यता थी, उसे विचार के बिना जानो। यदि वह अब विचार की जाती है, तो वह नष्ट हो जाती है। वह कहाँ दिखाई देती है?

7.103.18

अस्मिन्नेव धियो यत्न आत्मज्ञानविचारणे। यत्नेन परमोऽभ्यासः स लोकद्वयसिद्धिदः ॥ १८ ॥

asminneva dhiyo yatna ātmajñānavicāraṇe | yatnena paramo'bhyāsaḥ sa lokadvayasiddhidaḥ || 18 ||

In this very intellect, strive for the examination of self-knowledge. With effort, the supreme practice leads to the attainment of both worlds.

इसी बुद्धि में, आत्मज्ञान के विचार के लिए प्रयास करो। प्रयास से, परम अभ्यास दोनों लोकों की सिद्धि देता है।

7.103.19

अविद्योपशमस्त्वेष जातोऽपि भवतामिह। अभ्यासेन विना साधो न सिद्धिमुपगच्छति ॥ १९ ॥

avidyopaśamas tv eṣa jāto'pi bhavatāmiha | abhyāsena vinā sādho na siddhimupagacchati || 19 ||

This cessation of ignorance, even if born among you, O virtuous one, does not attain perfection without practice.

यह अज्ञान का शमन, हे साधो, तुम्हारे बीच उत्पन्न होने पर भी, अभ्यास के बिना सिद्धि नहीं प्राप्त करता।

7.103.20

न्नोद्वेगं संपरित्यज्य गृहीत्वानुदिनं क्षणम्। लोकद्वयहितं पथ्यमिदं शास्त्रं विचार्यताम् ॥ २० ॥

nrodvegaṃ saṃparityajya gṛhītvānudinaṃ kṣaṇam | lokadvayahitaṃ pathyamidaṃ śāstraṃ vicāryatām || 20 ||

Abandoning agitation, taking up every moment daily, let this scripture, beneficial for both worlds, be contemplated.

उद्वेग को त्यागकर, प्रतिदिन हर क्षण को ग्रहण करके, यह शास्त्र, जो दोनों लोकों के लिए हितकारी है, विचार किया जाए।

7.103.21

विज्ञातमप्यविज्ञातमात्मज्ञानमिदं भवेत्। भवतां भूरिभागानां संभूयाभ्यसनं विना ॥ २१ ॥

vijñātamapyavijñātamātmajñānamidaṃ bhavet | bhavatāṃ bhūribhāgānāṃ saṃbhūyābhyasanaṃ vinā || 21 ||

Even the known becomes unknown without the practice of self-knowledge, even for the fortunate ones.

ज्ञात भी अज्ञात हो जाता है आत्मज्ञान के अभ्यास के बिना, भाग्यशाली लोगों के लिए भी।

7.103.22

योऽयमर्थं प्रार्थयते तदर्थं यतते तथा। सोऽवश्यं तमवाप्नोति न चेच्छान्तो निवर्तते ॥ २२ ॥

yo'yamarthaṃ prārthayate tadarthaṃ yatate tathā | so'vaśyaṃ tamavāpnoti na cecchānto nivartate || 22 ||

One who desires a goal and strives for it will surely achieve it, and will not turn back until the desire is fulfilled.

जो कोई लक्ष्य चाहता है और उसके लिए प्रयास करता है, वह निश्चित रूप से उसे प्राप्त करेगा, और जब तक इच्छा पूरी नहीं होती, वापस नहीं लौटेगा।

7.103.23

तस्मादस्मान्निवर्तध्वमसच्छास्त्रविचारणात्। शान्तिं प्राप्स्यथ सच्छास्त्राज्जयलक्ष्मीं यथा रणात्॥ २३॥

tasmādasmānnivartadhvamasacchāstravicāraṇāt | śāntiṃ prāpsyatha sacchāstrājjayalakṣmīṃ yathā raṇāt || 23 ||

Therefore, turn away from the discussion of false scriptures, and you will attain peace, just as victory in battle brings prosperity.

इसलिए, झूठे शास्त्रों के विचार से दूर रहें, और आप शांति प्राप्त करेंगे, जैसे युद्ध में विजय समृद्धि लाती है।

7.103.24

विवेके चाविवेके च वहत्येषा मनोनदी। यत्रैव वाह्यते यत्नात्तत्रैव स्थितिमृच्छति॥ २४॥

viveke cāviveke ca vahatyeṣā manonadī | yatraiva vāhyate yatnāttatraiva sthitimṛcchati || 24 ||

This river of the mind flows in both discernment and non-discernment; wherever it is directed with effort, there it finds its stability.

यह मन की नदी विवेक और अविवेक दोनों में बहती है; जहाँ भी इसे प्रयास से ले जाया जाता है, वहीं इसे स्थिरता मिलती है।

7.103.25

अस्माच्छास्त्रादृते श्रेयो न भूतं न भविष्यति। ततः परमबोधार्थमिदमेव विचार्यताम्॥ २५॥

asmācchāstrādṛte śreyaḥ na bhūtaṃ na bhaviṣyati | tataḥ paramabodhārthamidameva vicāryatām || 25 ||

There is no greater good than this scripture; therefore, it should be contemplated for the sake of supreme knowledge.

इस शास्त्र से बढ़कर कोई कल्याण नहीं है; इसलिए, परम ज्ञान के लिए इसी पर विचार किया जाना चाहिए।

7.103.26

स्वयमेव विचार्येदं परो बोधोऽनुभूयते। संसाराध्वश्रमहरो न त्वेतद्वरशापवत्॥ २६॥

svayameva vichāryedaṃ paro bodho'nubhūyate | saṃsārādhvaśramaharo na tvetadvraśāpavat || 26 ||

By reflecting on oneself, one attains supreme knowledge | This removes the toil of worldly life, it is not like a curse || 26 ||

स्वयं पर विचार करके परम ज्ञान प्राप्त होता है | यह संसार के श्रम को दूर करता है, यह किसी शाप की तरह नहीं है || २६ ||

7.103.27

यन्न पित्रा न वा मात्रा न चापि सुकृतैः कृतम्। श्रेयस्तद्वः परिज्ञातमिदमाशु करिष्यति॥ २७॥

yanna pitrā na vā mātrā na cāpi sukṛtaiḥ kṛtam | śreyastadvah parijñātamidamāśu kariṣyati || 27 ||

That which is not done by the father, nor by the mother, nor by good deeds | That knowledge, once known, will quickly bring you the highest good || 27 ||

जो पिता द्वारा नहीं किया गया, न माता द्वारा, न ही पुण्य कर्मों से | वह ज्ञान, जब जान लिया जाए, शीघ्र ही आपको उत्तम फल देगा || २७ ||

7.103.28

भवबन्धमयी साधो विषमेयं विषूचिका। आत्मज्ञातादृते दीर्घा न कदाचन शाम्यति॥ २८॥

bhavabandhamayī sādho viṣameyaṃ viṣūcikā | ātmjñātādṛte dīrghā na kadācana śāmyati || 28 ||

O virtuous one, this worldly bondage is like a poisonous snake | Without the knowledge of the self, it never ends || 28 ||

हे साधु, यह संसारिक बंधन विषैले सांप की तरह है | आत्मज्ञान के बिना, यह कभी समाप्त नहीं होता || २८ ||

7.103.29

महामोहमयी माया मिथ्यैवाहमिति स्थिता । शास्त्रार्थभावनेनाशु मुच्यतां परशोच्यता ॥ २९ ॥

mahāmohamayī māyā mithyai vāhamiti sthitā | śāstrārthabhāvanenāśu mucyatāṃ paraśocyatā || 29 ||

The great illusion of 'I' is false | Through the contemplation of scriptural meanings, one should quickly be freed from this great sorrow || 29 ||

महामोह से भरी माया 'मैं' की मिथ्या धारणा है | शास्त्रों के अर्थों के चिंतन से शीघ्र ही इस महान दुःख से मुक्त हो जाना चाहिए || २९ ||

7.103.30

यात माऽऽपातमधुरं व्योम व्योमैकरूपिणीम् । शून्यं वायुं लिहन्तोऽन्तर्लेलिहाना इवाहयः ॥ ३० ॥

yāta mā'pātamadhuraṃ vyoma vyomaikarūpiṇīm | śūnyaṃ vāyuṃ lihanto'ntarlelihānā ivāhayaḥ || 30 ||

Go to the sweet and boundless sky, which is of the nature of the sky itself | Like horses licking the empty air within, licking it || 30 ||

स्वादिष्ट और असीम आकाश की ओर जाओ, जो स्वयं आकाश के समान है | घोड़ों की तरह जो अंदर खाली हवा को चाटते हैं, उसे चाटते हुए || ३० ||

7.103.31

यान्ति वो दिवसाः कष्टमविज्ञातगमागमाः । व्यवहारे हि तैरेव प्रतिपालयतां मृतिम् ॥ ३१ ॥

yānti vo divasāḥ kaṣṭamavijñātagamāgamāḥ | vyavahāre hi taireva pratipālayatāṃ mṛtim || 31 ||

Those days pass painfully without knowing the comings and goings | In worldly affairs, they protect death with those very things || 31 ||

वे दिन बिना आने-जाने के ज्ञान के दुःख से बीतते हैं | व्यवहार में, वे उन्हीं चीजों से मृत्यु की रक्षा करते हैं || ३१ ||

7.103.32

तावदाश्वासनैषास्ति भवतां भयभागिनाम् । दिनानि कतिचिद्यावन्नायाति मरणावधिः ॥ ३२ ॥

tāvadāśvāsanaiṣāsti bhavatāṃ bhayabhāginām | dināni katacid yāvanna āyāti maraṇāvadhiḥ || 32 ||

There is this much consolation for you who are afraid | Until the end of death comes, there are a few days || 32 ||

तुम्हारे लिए जो डरते हैं, इतनी आश्वासन है | मृत्यु का अंत आने तक, कुछ दिन हैं || ३२ ||

7.103.33

आगच्छन्त्यां मृतौ कष्टं परितापमवाप्स्यथ । तं यत्राङ्गाङ्गविच्छेदः शीतचन्दनलेपनम् ॥ ३३ ॥

āgacchantyāṃ mṛtau kaṣṭaṃ paritāpamavāpsyatha | taṃ yatrāṅgāṅgavicchedaḥ śītacandanaleapanam || 33 ||

When death approaches, you will experience great sorrow | Where there is the separation of limbs, the application of cold sandalwood paste || 33 ||

जब मृत्यु आती है, तुम बड़े दुःख का अनुभव करोगे | जहाँ अंगों का विच्छेद होता है, ठंडे चंदन का लेपन || ३३ ||

7.103.34

क्रीणन्ति प्राणपण्येन धनं मानं घनभ्रमाः । यथाशास्त्रैः कथं बुद्ध्या न क्रीणन्त्यजरं पदम् ॥ ३४ ॥

krīṇanti prāṇapaṇyena dhanaṃ mānaṃ ghanabhramāḥ | yathāśāstraiḥ kathaṃ buddhyā na krīṇantyajaraṃ padam || 34 ||

They buy wealth and pride with the price of life, deluded by ignorance | How, with intelligence according to the scriptures, do they not buy the eternal state? || 34 ||

वे जीवन की कीमत पर धन और अभिमान खरीदते हैं, अज्ञान से भ्रमित | शास्त्रों के अनुसार बुद्धि से, वे अमरत्व की स्थिति क्यों नहीं खरीदते? || ३४ ||

7.103.35

पदं परमयत्नेन क्रियते यैश्चिदम्बरे । कथं तैः सह्यतेऽज्ञानशत्रुपादः स्वमूर्धनि ॥ ३५ ॥

padaṃ paramayatnena kriyate yaiścidambare | kathaṃ taiḥ sahyate'jñānaśatrupādaḥ svamūrdhani || 35 ||

The state is achieved with great effort by those who wear the garb of knowledge | How do they bear the foot of ignorance, the enemy, on their own head? || 35 ||

वह स्थिति बड़े प्रयास से उन लोगों द्वारा प्राप्त की जाती है जो ज्ञान का वेश धारण करते हैं | वे अपने सिर पर अज्ञान के शत्रु के पैर कैसे सहन करते हैं? || ३५ ||

7.103.36

निर्मानमोहमापन्ना गतिं गच्छत माधमाम् । क्रियते स्वात्मबोधेन मूलकाषो महापदाम् ॥ ३६ ॥

nirmānamohamāpannā gatiṃ gacchata mādhamām | kriyate svātmabodhena mūlakāṣo mahāpadām || 36 ||

Those who are free from delusion and pride, attain the supreme state | By self-knowledge, the root cause of great calamities is removed

जो मोह और अहंकार से मुक्त हैं, वे उत्तम गति को प्राप्त होते हैं | आत्मज्ञान से महान विपदाओं का मूल कारण दूर हो जाता है

7.103.37

प्रलपन्तमहोरात्रं युष्मदर्थेन मामिमम् । यं प्रदृश्येदमाकर्ण्य स्वात्मनैवात्मतार्प्यताम् ॥ ३७ ॥

pralapantamahorātraṃ yuṣmadarthena māmimam | yaṃ pradṛśyedamākarṇya svātmanaivātmatārpyatām || 37 ||

Day and night, I speak for your sake | Seeing this, listen and realize the self through the self

दिन-रात मैं आपके लिए बोलता हूँ | इसे देखकर, सुनिए और स्वयं से ही आत्मा को जानिए

7.103.38

अद्यैव न चिकित्सां यः करोति मरणापदः । संप्राप्तायां मृतौ मूढः करिष्यति किमातुरः ॥ ३८ ॥

adyaiva na cikitsāṃ yaḥ karoti maraṇāpadaḥ | saṃprāptāyāṃ mṛtau mūḍhaḥ kariṣyati kimāturaḥ || 38 ||

One who does not seek treatment today, when faced with the calamity of death, what will the foolish one do in distress?

जो आज ही उपचार नहीं करता, मृत्यु की विपदा का सामना करने पर, व्याकुल होकर मूर्ख क्या करेगा?

7.103.39

अस्माद्ग्रन्थादृते ग्रन्थो नान्यः स्वात्मावबोधने । नूनमर्थकरो ग्राह्यस्तिलस्तैलार्थिनामिव ॥ ३९ ॥

asmādgranthādṛte grantho nānyaḥ svātmāvabodhane | nūnamarthakaro grāhyastilastailārthināmiva || 39 ||

Besides this scripture, there is no other scripture for self-realization | Indeed, this meaningful scripture should be accepted like sesame seeds by those seeking oil

इस ग्रंथ के अलावा, आत्म-ज्ञान के लिए कोई अन्य ग्रंथ नहीं है | निश्चय ही, यह अर्थपूर्ण ग्रंथ तिल के बीजों की तरह तेल चाहने वालों द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए

7.103.40

आत्मज्ञानमिदं शास्त्रं प्रकाशयति दीपवत् । पितेव बोधयत्याशु कान्तेव रमयत्यलम् ॥ ४० ॥

ātmajñānamidaṃ śāstraṃ prakāśayati dīpavat | piteva bodhayatyāśu kānteva ramayatyalam || 40 ||

This scripture of self-knowledge illuminates like a lamp | It enlightens quickly like a father and delights abundantly like a beloved

यह आत्मज्ञान का शास्त्र दीपक की तरह प्रकाशित करता है | यह पिता की तरह तुरंत बोध कराता है और प्रिय की तरह अधिक आनंद देता है

7.103.41

विद्यमानमपि ज्ञानं ज्ञातं शास्त्रगणान्न यत् । दुर्बोधं मधुरं तत्तु ज्ञास्यन्तीतो न संशयः ॥ ४१ ॥

vidyamānamapi jñānaṃ jñātaṃ śāstragaṇānna yat | durbodhaṃ madhuraṃ tattu jñāsyantīto na saṃśayaḥ || 41 ||

Even the existing knowledge, if not known from the scriptures, is difficult to understand but sweet; there is no doubt that it will be known from here.

जो ज्ञान शास्त्रों से ज्ञात नहीं है, वह दुर्बोध है परंतु मधुर है; इसमें कोई संशय नहीं कि यह ज्ञान यहाँ से ज्ञात होगा।

7.103.42

इदमुत्तममाख्यानं मुख्यानां शास्त्रदृष्टिषु । सुखेन बोधदं हृद्यमपूर्वं न तु किंचन ॥ ४२ ॥

idamuttamamākhyānaṃ mukhyānāṃ śāstradṛṣṭiṣu | sukhena bodhadaṃ hṛdyamapūrvaṃ na tu kiṃcana || 42 ||

This supreme narrative, seen by the main scriptures, easily gives understanding, is pleasing, and is unprecedented, not anything else.

यह उत्तम आख्यान, जो मुख्य शास्त्रों द्वारा देखा गया है, सुखपूर्वक बोध देता है, हृदयविदारक है और अनूठा है, कुछ और नहीं।

7.103.43

नानाख्यानकथाचित्रं विनोदेन विचारयेत् । इदं शास्त्रं परं याति पुमान्नास्त्यत्र संशयः ॥ ४३ ॥

nānākhyānakathācitraṃ vinodenavicārayet | idaṃ śāstraṃ paraṃ yāti pumānnāstyatra saṃśayaḥ || 43 ||

One should ponder various narrative stories with enjoyment. This scripture reaches the supreme, there is no doubt about it.

विभिन्न आख्यान कथाओं को आनंद से विचार करना चाहिए। यह शास्त्र परम को प्राप्त होता है, इसमें कोई संदेह नहीं।

7.103.44

यो ह्यद्यापि न संप्राप्तः पण्डितैरविखण्डितैः । स इतः प्राप्यते बोधः सुवर्णमिव सैकतात् ॥ ४४ ॥

yo hyadyāpi na saṃprāptaḥ paṇḍitairavikhaṇḍitaiḥ | sa itaḥ prāpyate bodhaḥ suvarṇamiva saikatāt || 44 ||

That which has not been attained even today by unbroken scholars, that understanding is obtained from here, like gold from sand.

जो आज तक अखंडित पंडितों द्वारा भी प्राप्त नहीं हुआ है, वह बोध यहाँ से प्राप्त होता है, जैसे रेत से सोना।

7.103.45

शास्त्रकर्तरि मङ्कतव्यं न कदाचन कुत्रचित्। शास्त्रार्थ एव तन्नित्यं युक्तियुक्तानुभूतिदे ॥ ४५ ॥

śāstrakartari maṅkatavyaṃ na kadācana kutracit | śāstrārtha eva tannityaṃ yuktiyuktānubhūtide || 45 ||

One should not have any doubt in the author of the scripture at any time or place. The meaning of the scripture itself is always logical and experiential.

शास्त्र के कर्ता में कभी किसी भी स्थान पर संदेह नहीं करना चाहिए। शास्त्र का अर्थ हमेशा तर्कसंगत और अनुभवजन्य होता है।

7.103.46

अज्ञानान्मत्सरान्मोहादविचारिभिरेकता। अवहेलितशास्त्रार्थैः कर्तव्या नात्महन्तृभिः ॥ ४६ ॥

ajñānānmatsarānmohādavicāribhirekatā | avahelitaśāstrārthaiḥ kartavyā nātmahantṛbhiḥ || 46 ||

Due to ignorance, envy, and delusion, those who do not think clearly and disregard the teachings of the scriptures should not be followed by those who seek self-realization.

अज्ञान, मत्सर और मोह के कारण, जो लोग स्पष्ट रूप से सोचते नहीं हैं और शास्त्रों के अर्थों को अवहेलना करते हैं, उन्हें आत्म-ज्ञान चाहने वालों द्वारा नहीं माना जाना चाहिए।

7.103.47

जानाम्येव यथैवेमा यदहं त्वं यथा धियः। तथा बोधितकारुण्यात्स्वभावो हि ममेदृशः ॥ ४७ ॥

jānāmyeva yathaivemā yadahaṃ tvaṃ yathā dhiyaḥ | tathā bodhitakāruṇyātsvabhāvo hi mamedṛśaḥ || 47 ||

I indeed know how these thoughts are, as you think, so out of compassion, I have been enlightened, and such is my nature.

मैं वास्तव में जानता हूँ कि ये विचार कैसे हैं, जैसे तुम सोचते हो, इसलिए करुणा से, मैं प्रकाशित हो गया हूँ, और मेरा स्वभाव ऐसा ही है।

7.103.48

युष्मत्संविल्लवः शुद्ध एवं वक्तुमिह स्थितः। अहं नरो न गन्धर्वो नामरो न च राक्षसः ॥ ४८ ॥

yuṣmatsaṃvillavaḥ śuddha evaṃ vaktumihastithaḥ | ahaṃ naro na gandharvo nāmaro na ca rākṣasaḥ || 48 ||

I am pure, standing here to speak like this, I am a human, not a Gandharva, not a god, nor a demon.

मैं शुद्ध हूँ, यहाँ ऐसे बोलने के लिए खड़ा हूँ, मैं एक मनुष्य हूँ, न गंधर्व, न देवता, न राक्षस।

7.103.49

संविन्मात्रा भवन्तो हि तद्भावोऽस्त्यतिनिर्मलः। स्थितोऽस्मीति भवत्पुण्यैर्ननु नास्मि न चापरः ॥ ४९ ॥

saṃvinmātrā bhavanto hi tadbhāvo'styatinirmalaḥ | sthito'smīti bhavatpuṇyairnanu nāsmi na cāparaḥ || 49 ||

You are pure consciousness, and that state is extremely pure. I am established in that, by your merits, I am neither this nor that.

तुम शुद्ध चेतना हो, और वह अवस्था अत्यंत शुद्ध है। मैं उसमें स्थापित हूँ, तुम्हारे पुण्यों से, मैं न तो यह हूँ न वह।

7.103.50

श्यामायमाना नायान्ति यावन्मरणवासराः। सारः संह्रियतां तावद्वैरस्यं वस्तुदृष्टिषु ॥ ५० ॥

śyāmāyamānā nāyānti yāvanmarṇavāsarāḥ | sāraḥ saṃhriyatāṃ tāvadvairasyaṃ vastudṛṣṭiṣu || 50 ||

The dark nights do not come to an end until the time of death. Therefore, let the essence be gathered, and enmity in material views be abandoned.

अंधेरी रातें मृत्यु के समय तक नहीं समाप्त होतीं। इसलिए, सार एकत्र किया जाए, और भौतिक दृष्टिकोण में वैर त्याग दिया जाए।

7.103.51

इहैव नरकव्याधेश्चिकित्सां न करोति यः । गत्वा निरौषधं स्थानं सरुजः किं करिष्यति ॥ ५१ ॥

ihaiva narakavyādheścikitsāṃ na karoti yaḥ | gatvā nirauṣadhaṃ sthānaṃ sarujaḥ kiṃ kariṣyati || 51 ||

He who does not treat the disease of hell here, what will he do when he goes to a place without medicine?

जो नरक के रोग का इलाज यहीं नहीं करता, वह औषधिहीन स्थान पर जाकर क्या करेगा?

7.103.52

सर्वभावेषु वैरस्यं न यावत्समुपागतम् । भावानां भावना तावत्तानवं नोपगच्छति ॥ ५२ ॥

sarvabhāveṣu vairasyaṃ na yāvatsamupāgatam | bhāvānāṃ bhāvanā tāvattānavaṃ nopagacchati || 52 ||

As long as there is no enmity towards all beings, the cultivation of feelings does not reach imperfection.

जब तक सभी भावों के प्रति वैर नहीं होता, तब तक भावों की भावना दोषपूर्ण नहीं होती।

7.103.53

आत्मानमलमुद्धर्तुं वासनातानवादृते । नास्त्युपायो महाबुद्धे कश्चनापि कदाचन ॥ ५३ ॥

ātmānamalamuddhartuṃ vāsanātānavādṛte | nāstyupāyo mahābuddhe kaścanāpi kadācana || 53 ||

O great wise one, there is no means to uplift the self from the impurity of desires except through the removal of impurities.

हे महाबुद्धिमान, इच्छाओं की अशुद्धि से आत्मा को उबारने का कोई उपाय नहीं है, सिवाय अशुद्धियों के दूर करने के।

7.103.54

भावास्तु यदि विद्यन्ते तद्धिते वस्तुभावना । किं त्वेते नैव सन्तीह शशशृङ्गादयो यथा ॥ ५४ ॥

bhāvāstu yadi vidyante taddhite vastubhāvanā | kiṃ tvetenai va santīha śaśaśṛṅgādayo yathā || 54 ||

If feelings exist, they are for the benefit of reality. But these do not exist here, like the horns of a hare.

अगर भाव हैं, तो वे वास्तविकता के लाभ के लिए हैं। लेकिन ये यहाँ नहीं हैं, जैसे खरगोश के सींग।

7.103.55

सर्व एव जगद्भावा अविचारितचारवः । अविद्यमानसद्भावा विचाराद्विशारवः ॥ ५५ ॥

sarve eva jagadbhāvā avicāritacāravaḥ | avidyamānasadbhāvā vicārādviśarāravaḥ || 55 ||

All worldly feelings are of unconsidered behavior. They are of non-existent good nature, but they flow away with consideration.

सभी संसारिक भाव अविचारित व्यवहार के हैं। वे अस्तित्वहीन सद्भाव के हैं, लेकिन विचार से बह जाते हैं।

7.103.56

प्रामाणिकविचारेषु न विद्यन्ते कृतेषु ये । कथं सन्ति जगद्भावास्ते के सन्ति सदैव वा ॥ ५६ ॥

prāmāṇikavicāreṣu na vidyante kṛteṣu ye | kathaṃ santi jagadbhāvāste ke santi sadāiva vā || 56 ||

In authentic considerations, those actions do not exist. How can the worldly phenomena exist? Which ones exist always?

प्रामाणिक विचारों में, वे कृत्य नहीं होते। संसार के भाव कैसे होते हैं? कौन-से हमेशा होते हैं?

7.103.57

सर्व एव जगद्भावाः कारणाभावतो भृशम्। सर्गादावेव नोत्पन्ना यच्चेदं भाति तत्परम्॥ ५७॥

sarva eva jagadbhāvāḥ kāraṇābhāvato bhṛśam | sargādāveva notpannā yaccedaṃ bhāti tatparam || 57 ||

All worldly phenomena are intensely without cause. They are not born even at the beginning of creation. That which appears is the supreme.

सभी संसार के भाव कारण के अभाव से बहुत अधिक हैं। वे सृष्टि के आरंभ में भी नहीं उत्पन्न होते। जो प्रकट होता है, वह परम है।

7.103.58

पदे सर्वेन्द्रियातीते मनःषष्ठेन्द्रियात्मनाम्। भावानां कारणं नास्ति मनःषष्ठेन्द्रियात्मकम्॥ ५८॥

pade sarvendriyātīte manaḥṣaṣṭhendriyātmanām | bhāvānāṃ kāraṇaṃ nāsti manaḥṣaṣṭhendriyātmakam || 58 ||

In the state beyond all senses, with the mind as the sixth sense, there is no cause for the phenomena. The cause is not of the nature of the mind as the sixth sense.

सभी इंद्रियों से परे अवस्था में, मन को छठी इंद्रिय के रूप में लिया जाए, तो भावों का कारण नहीं है। कारण मन के छठी इंद्रिय के रूप में नहीं है।

7.103.59

भावानां विविधाख्यानामनाख्यं कारणं कुतः। कुतो वस्तुन्यवस्तुत्वं व्योमन्यव्योमता कुतः॥ ५९॥

bhāvānāṃ vividhākhyānāmanākhyam kāraṇaṃ kutaḥ | kuto vastunyavastutvaṃ vyomanyavyomatā kutaḥ || 59 ||

Of the various phenomena, what is the unnamed cause? From where does the reality of the substance come? From where does the spacelessness of space come?

विविध भावों का अनाख्य कारण क्या है? वस्तु की वस्तुता कहाँ से आती है? व्योम की अव्योमता कहाँ से आती है?

7.103.60

साकारस्य हि साकारं वटधानादिवद्भवेत्। बीजं तद्वस्तु साकारं जायतेऽन्यत्कुतोऽन्यथा॥ ६०॥

sākārasya hi sākāraṃ vaṭadhānādivadbhavet | bījaṃ tadvastu sākāraṃ jāyate'nyatkuto'nyathā || 60 ||

Indeed, the form of the formed is like the seed of the banyan tree. That substance is formed; how can another be born differently?

वास्तव में, रूप वाले का रूप बरगद के बीज की तरह होता है। वह वस्तु रूप वाली होती है; कैसे कोई अन्य अलग तरह से उत्पन्न हो सकता है?

7.103.61

न किंचिदपि यत्रास्ति बीजमाकृतिमन्मनाक्। तत आकृतिमद्विश्वं भवतीति विडम्बनम्॥ ६१॥

na kiṁcidapi yatrāsti bījamākr̥timanmāk | tat ākr̥timadvishvaṃ bhavatīti viḍambanam || 61 ||

There is no seed that has form, yet the world with form arises; this is indeed a paradox.

जहाँ कोई बीज नहीं है, वहाँ से आकृति वाला विश्व उत्पन्न होता है, यह एक विडम्बना है।

7.103.62

कार्यकारणभावादि तस्मिन्नहि परे पदे। वाचालत्वेन यन्नाम कल्प्यते मौर्ख्यमेव तत्॥ ६२॥

kāryakāraṇabhāvādi tasminnahi pare pade | vācālatvena yannāma kalpyate maurkhyameva tat || 62 ||

The cause and effect relationship and other such concepts are mere words in that supreme state; to attribute a name to it is foolishness.

कारण और कार्य का सम्बन्ध और अन्य ऐसे विचार उस परम अवस्था में मात्र शब्द हैं; उसे नाम देना मूर्खता है।

7.103.63

सहकारिनिमित्तानामभावे हि न कारणात्। कार्यं भवेदन्यदेति बालैरप्यनुभूयते ॥ ६३ ॥

sahakārinimittānāmabhāve hi na kāraṇāt | kāryaṃ bhavadanyadeti bālairapyanubhūyate || 63 ||

In the absence of auxiliary causes, the effect does not arise from the cause; even children understand this.

सहायक कारणों की अनुपस्थिति में, कारण से कार्य नहीं उत्पन्न होता; यह बच्चे भी समझते हैं।

7.103.64

तन्मात्रवेदनं भूयः पृथ्व्यादीनां च कारणम्। किमस्ति कथ्यतां छाया कथमास्ते वदातपे ॥ ६४ ॥

tanmātravedanaṃ bhūyaḥ pṛthvyādīnāṃ ca kāraṇam | kimasti kathyatāṃ chāyā kathamāste vadātape || 64 ||

The perception of the subtle elements is the cause of the gross elements; what is the shadow and how does it exist? Explain.

सूक्ष्म तत्वों की वेदना स्थूल तत्वों का कारण है; छाया क्या है और कैसे अस्तित्व में है? बताएँ।

7.103.65

परमाणुसमूहा ये जगदित्यप्यवास्तवम्। शशश्रृङ्गं धनुःप्रख्यमज्ञानादभिधीयते ॥ ६५ ॥

paramāṇusamūhā ye jagadityapyavāstavam | śaśaśṛṅgaṃ dhanuḥprakhyamajñānādabhidhīyate || 65 ||

These aggregates of atoms are indeed the world; the horn of a hare and the illusion of a mirage are spoken of due to ignorance.

ये परमाणुओं के समूह वास्तव में जगत् हैं; खरगोश का सींग और मृगतृष्णा की भ्रामकता अज्ञान के कारण कही जाती है।

7.103.66

परमाणुसमूहश्चेत्संभूय कुरुते जगत्। यदृच्छयैव तमसि शीर्यते च यदृच्छया ॥ ६६ ॥

paramāṇusamūhaścetsaṃbhūya kurute jagat | yadṛcchayaiva tamasi śīryate ca yadṛcchayā || 66 ||

If a collection of atoms comes together, it creates the world | By chance, it dissolves in darkness, and by chance, it comes together again.

यदि परमाणुओं का समूह एकत्र होता है, तो यह जगत को बनाता है | यदृच्छा से यह अंधकार में विलीन हो जाता है, और यदृच्छा से फिर से एकत्र होता है।

7.103.67

तदङ्गमिङ्गते नित्यं देशे देशे गृहे गृहे। अपूर्वात्म रजः श्रृङ्गं खातं वा स्याद्दिने दिने ॥ ६७ ॥

tadaṅgamiṅgate nityaṃ deśe deśe gṛhe gṛhe | apūrvātma rajaḥ śṛṅgaṃ khātaṃ vā syāddine dine || 67 ||

That (the collection of atoms) constantly moves from place to place, from house to house | It may be a unique dust particle, a horn, or a pit, day by day.

वह (परमाणुओं का समूह) निरंतर स्थान से स्थान पर, घर से घर में घूमता रहता है | यह एक अनोखा धूल कण, सींग, या गड्ढा हो सकता है, दिन प्रतिदिन।

7.103.68

न च तदृश्यते किंचित्कस्य तत्कर्म तादृशम्। भवेद्व्यर्थमभव्यस्य जडास्तु परमाणवः ॥ ६८ ॥

na ca taddṛśyate kiñcitkasya tatkarma tādṛśam | bhavedvyarthamabhavyasya jaḍāstu paramāṇavaḥ || 68 ||

And nothing like that is seen | Such action would be useless for the insentient atoms.

और ऐसा कुछ भी नहीं दिखता | ऐसा कार्य जड़ परमाणुओं के लिए व्यर्थ होगा।

7.103.69

नाबुद्धिपूर्वं तत्कर्म संभवत्यङ्ग कस्यचित्। बुद्धिपूर्वं तु यद्व्यर्थं कुर्यादुन्मत्तको हि कः ॥ ६९ ॥

nābuddhipūrvaṃ tatkarma saṃbhavatyanga kasyacit | buddhipūrvaṃ tu yadvyarthaṃ kuryādunmattako hi kaḥ || 69 ||

That action does not happen without prior intelligence for anyone | But who would perform a useless action with prior intelligence except a madman?

वह कार्य किसी के लिए बिना पूर्व बुद्धि के नहीं होता | लेकिन पूर्व बुद्धि के साथ कौन व्यर्थ कार्य करेगा, सिवाय एक पागल के?

7.103.70

न जडस्य बुद्धिपूर्वेहा मरुतो नास्ति तां विना। न संभवत्यणुचयो नान्यत्कर्तोपपद्यते ॥ ७० ॥

na jaḍasya buddhipūrveha maruto nāsti tāṃ vinā | na saṃbhavatyāṇucayo nānyatkartopapadyate || 70 ||

There is no prior intelligence in the insentient, nor is there wind without it | The collection of atoms does not occur, nor does any other doer arise.

जड़ में पूर्व बुद्धि नहीं होती, न ही उसके बिना हवा होती है | परमाणुओं का समूह नहीं बनता, न ही कोई अन्य कर्ता उत्पन्न होता है।

7.103.71

वयमात्मान एवेमे खात्मानः खात्मका जनाः। तथा स्थिता यथा स्वप्ने भवतां स्वप्नमानवाः ॥ ७१ ॥

vayamātmāna eveme khātmānaḥ khātmakā janāḥ| tathā sthitā yathā svapne bhavatāṃ svapnamānavāḥ || 71 ||

We are indeed the self, the self-knowing beings| Thus situated as in a dream, you all are dream-men || 71 ||

हम वास्तव में आत्मा हैं, आत्मा को जानने वाले लोग| ऐसे ही स्थित हैं जैसे सपने में, तुम सब सपने के मनुष्य हो || ७१ ||

7.103.72

तस्मान्न जायते किंचिद्विश्वं नापि च विद्यते। इत्थं चिन्नभ एवाच्छं प्रकचत्यात्मनात्मनि ॥ ७२ ॥

tasmānna jāyate kiṃcidviśvaṃ nāpi ca vidyate| itthaṃ cinnabha evācchaṃ prakacatyātmanātmani || 72 ||

Therefore, nothing in the universe is born, nor does it exist| Thus, the pure consciousness alone shines in the self by the self || 72 ||

इसलिए, ब्रह्मांड में कुछ भी जन्म नहीं लेता, न ही वह मौजूद है| ऐसे ही, शुद्ध चेतना अकेली आत्मा में आत्मा द्वारा चमकती है || ७२ ||

7.103.73

विश्वाकाशं चिदाकाशे विष्वग्विश्रान्तिमागतम्। स्पन्दो द्रवत्वं शून्यत्वमनिलेऽम्भसि खे यथा ॥ ७३ ॥

viśvākāśaṃ cidākāśe viṣvagviśrāntimāgatam| spando dravatvaṃ śūnyatvamanile'mbhasi khe yathā || 73 ||

The universe is in the space of consciousness, having pervaded and rested in it| Like the movement, fluidity, and emptiness in air, water, and space || 73 ||

ब्रह्मांड चेतना के अंतरिक्ष में है, उसमें व्याप्त और विश्राम करता है| जैसे हवा, पानी और अंतरिक्ष में गति, तरलता और शून्यता || ७३ ||

7.103.74

देशाद्देशान्तरप्राप्तौ निमेषेणातिदूरतः। संविदो यद्वपुर्मध्ये चिद्व्योम्नो विद्धि तद्वपुः ॥ ७४ ॥

deśāddeśāntaraprāptau nimeṣeṇātidūrataḥ| saṃvido yadvapurmadhye cidvyomno viddhi tadvapuḥ || 74 ||

In the attainment of one place from another, instantly from a great distance| Know that form in the midst of consciousness to be the form of consciousness || 74 ||

एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचने में, तुरंत बहुत दूर से| चेतना के बीच में उस रूप को चेतना का रूप समझो || ७४ ||

7.103.75

स स्वभावो हि सर्वेषामर्थानां ते च तन्मयाः। तादृशास्तन्नभोरूपास्तेन विश्वमतो नभः ॥ ७५ ॥

sa svabhāvo hi sarveṣāmarthānāṃ te ca tanmayāḥ| tādṛśāstanabhorūpāstenaviśvamato nabhaḥ || 75 ||

That is the nature of all things, and they are made of that| Such is the form of that space, therefore the universe is that space || 75 ||

वह सभी चीजों का स्वभाव है, और वे उससे बने हैं| ऐसा ही उस अंतरिक्ष का रूप है, इसलिए ब्रह्मांड वह अंतरिक्ष है || ७५ ||

7.103.76

स्वभावस्य परा वृत्तिर्मनागेवाशु तस्य सा। स्वभावादविभिन्नैव सेदं जगदिति स्थिता ॥ ७६ ॥

svabhāvasya parā vṛttirmānāgevāśu tasya sā| svabhāvādavibhinnnaiva sedaṃ jagaditi sthitā || 76 ||

The ultimate nature of the mind is swift and inseparable from its inherent nature| This is the established view of the world

मन की अंतिम प्रकृति तीव्र और अपने स्वभाव से अलग नहीं है| यही जगत का स्थापित दृष्टिकोण है

7.103.77

जगच्चिन्नभसोस्तस्मान्न कदाचन भिन्नता। एकमेव द्वयो रूपं पवनस्पन्दयोरिव ॥ ७७ ॥

jagaccinnabhasostasmānna kadācana bhinnatā| ekameva dvayo rūpaṃ pavanaspanadayoriva || 77 ||

Therefore, the world and consciousness are never separate| They are one, like the form of wind and its motion

इसलिए, जगत और चेतना कभी अलग नहीं होते| वे एक हैं, जैसे हवा और उसकी गति का रूप

7.103.78

देशाद्देशान्तरप्राप्तौ विदो मध्ये हि यद्वपुः। शान्ताशेषविशेषात्म तन्मुख्यं नेतरद्विदुः ॥ ७८ ॥

deśāddeśāntaraprāptau vido madhye hi yadvapuḥ| śāntāśeṣaviśeṣātma tanmukhyaṃ netaradviduḥ || 78 ||

In the transition from one place to another, the wise see the essential form that is free from all distinctions| They consider that to be primary, not the other

एक स्थान से दूसरे स्थान तक के परिवर्तन में, विद्वान सभी भेदों से मुक्त मूल रूप को देखते हैं| वे उसे प्राथमिक मानते हैं, दूसरे को नहीं

7.103.79

स स्वभावोऽङ्ग भूतानां तत्र तिष्ठन्ति पण्डिताः। तस्मान्न विचलन्त्येते नित्यध्यानाद्धरादयः ॥ ७९ ॥

sa svabhāvo'ṅga bhūtānāṃ tatra tiṣṭhanti paṇḍitāḥ| tasmānna vicalantyete nityadhyānāddharādayaḥ || 79 ||

That inherent nature is the essence of all beings| The wise abide in it| Therefore, they do not waver, steadfast in constant meditation

वह स्वभाव सभी प्राणियों का सार है| विद्वान उसमें निवास करते हैं| इसलिए, वे निरंतर ध्यान में स्थिर रहते हैं, डगमगाते नहीं

7.103.80

आभासाकाशमेवेदं भामात्रमवभासनम्। विश्वमाकाररहितं स्वभावं विदुरव्ययम् ॥ ८० ॥

ābhāsākāśamevedaṃ bhāmātramavabhāsanam| viśvamākārarahitaṃ svabhāvaṃ viduravyayam || 80 ||

This is merely a reflection of the sky, a mere appearance| The universe is formless, and its inherent nature is known to be imperishable

यह तो बस आकाश का प्रतिबिंब है, एक मात्र दिखावा| ब्रह्मांड निराकार है, और उसका स्वभाव अविनाशी माना जाता है

7.103.81

न जायते न म्रियते न भूत्वा भावि कुत्रचित् । अनन्यदेव चिद्व्योम्नः शून्यत्वमिव खाज्जगत् ॥ ८१ ॥

na jāyate na mriyate na bhūtvā bhāvi kutracit| ananyadeva cidvyomnaḥ śūnyatvamiva khājjagat || 81 ||

It is neither born nor does it die| Nor does it become something that will be| The world is like the void of the pure consciousness| It is non-dual and empty like the sky

यह न जन्म लेता है न मरता है| न ही यह कभी होने वाला बनता है| यह संसार शुद्ध चेतना के शून्यत्व की तरह है| यह अद्वैत और आकाश की तरह खाली है

7.103.82

न विश्वमस्ति नैवासीन्न च नाम भविष्यति । इदमाभासते शान्तं चिद्व्योम परमात्मनि ॥ ८२ ॥

na viśvamasti naivāsīnna ca nāma bhaviṣyati| idamābhāsate śāntaṃ cidvyoma paramātmani || 82 ||

The universe does not exist, nor did it ever exist, nor will it ever exist| This appears calm in the pure consciousness of the Supreme Self

संसार अस्तित्व में नहीं है, न ही कभी था, न ही कभी होगा| यह परमात्मा की शुद्ध चेतना में शांत प्रतीत होता है

7.103.83

चिन्मात्रमेव कचति स्वप्ने पुरतया यथा । तथैव जाग्रदाख्येऽस्मिन्स स्वप्ने कचति स्वयम् ॥ ८३ ॥

cinmātrameva kacati svapne puratayā yathā| tathaiva jāgradākhye'smin sa svapne kacati svayam || 83 ||

Pure consciousness alone shines in dream as a city| Similarly, in this state called waking, it shines by itself in the dream

शुद्ध चेतना ही स्वप्न में एक नगर के रूप में चमकती है| इसी प्रकार, इस जाग्रत अवस्था में, यह स्वयं स्वप्न में चमकती है

7.103.84

सर्गादावेव भावानामसत्तेत्यस्ति देहकः । कुतस्तस्माच्छरीरत्वं स्वप्न एव नभश्चितेः ॥ ८४ ॥

sargādāveva bhāvānāmasattetyasti dehakaḥ| kutastasmāccharīratvaṃ svapna eva nabhaściteḥ || 84 ||

From the very beginning of creation, the non-existence of entities is established| From where then does the bodily form come? It is like a dream in the sky of consciousness

सृष्टि के आरंभ से ही, वस्तुओं की असत्ता स्थापित है| फिर शरीर का रूप कहाँ से आता है? यह चेतना के आकाश में स्वप्न की तरह है

7.103.85

स्वयंभ्वाख्यं शरीरं स्वं पूर्वः स्वप्नो महाचितेः । इत उत्थानास्तदनु स्वप्नात्स्वप्नान्तरं वयम् ॥ ८५ ॥

svayaṃbhuākhyam śarīraṃ svaṃ pūrvaḥ svapno mahāciteḥ| ita utthānāstadaṃu svapnātsvapnāntaraṃ vayam || 85 ||

The body called self-existent is the previous dream of the great consciousness| From that awakening, we are another dream within the dream

स्वयंभू कहलाने वाला शरीर महाचेतना का पूर्व स्वप्न है| उस जागरण से, हम स्वप्न के भीतर एक और स्वप्न हैं

7.103.86

गण्डस्योपरि जातानां स्फोटानामत एव नः । परमेण प्रयत्नेन न मनो नाम यास्यति ॥ ८६ ॥

gaṇḍasyopari jātānāṃ sphoṭānāmata eva naḥ | parameṇa prayatnena na mano nāma yāsyati || 86 ||

Even with the greatest effort, the mind cannot reach the boils that have arisen on the cheek.

परम प्रयास के साथ भी, मन गाल पर उत्पन्न फोड़ों तक नहीं पहुंच सकता।

7.103.87

ब्रह्मैवासत्यपुरुषः सत्यवच्चानुभूयते । स्थितं ततःप्रभृत्येव न त्वलीकमिदं ततम् ॥ ८७ ॥

brahmaivāsatyapuruṣaḥ satyavaccānubhūyate | sthitaṃ tataḥprabhṛtyeva na tvalīkamidaṃ tatam || 87 ||

Brahman alone is the true person, and it is experienced as true. From that point onwards, this is not false.

ब्रह्म ही सत्य पुरुष है, और यह सत्य के रूप में अनुभव किया जाता है। उस बिंदु से आगे, यह झूठ नहीं है।

7.103.88

आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तमलीकं जायते जगत् । यथा स्वप्ने तथालीकमेवमाशु विनश्यति ॥ ८८ ॥

ābrahmasthambaparyantamalīkaṃ jāyate jagat | yathā svapne tathālīkamevamāśu vinaśyati || 88 ||

From Brahma to a blade of grass, the world is born as false. Just as in a dream, so it is false, and thus it quickly perishes.

ब्रह्म से लेकर एक घास की पत्ती तक, संसार झूठ के रूप में जन्म लेता है। जैसे सपने में, वैसे ही यह झूठ है, और इस प्रकार यह जल्दी नष्ट हो जाता है।

7.103.89

चिद्व्योमैवैत्य विश्वत्वं यथा स्वप्ने विनश्यति । अनुदित्वैव विश्वत्वं जाग्रदाख्ये तथैव च ॥ ८९ ॥

cidvyomaivaiti viśvatvaṃ yathā svapne vinaśyati | anuditvaiva viśvatvaṃ jāgradākhye tathaiva ca || 89 ||

Just as the universe in a dream disappears upon waking, so too does the universe in the waking state disappear upon realization.

जैसे सपने में ब्रह्मांड जागने पर गायब हो जाता है, वैसे ही जागृत अवस्था में ब्रह्मांड भी ज्ञान प्राप्ति पर गायब हो जाता है।

7.103.90

अनुभूतमलीकं चाप्यलीकं सत्यवत्स्थितम् । संविदेव यथा स्वप्ने नगरादितयोदिता ॥ ९० ॥

anubhūtamalīkaṃ cāpyalīkaṃ satyavatsthitam | saṃvideva yathā svapne nagarāditayoditā || 90 ||

The experienced falsehood is also false, but it appears as true. Just as in a dream, consciousness itself manifests as cities and other things.

अनुभव किया गया झूठ भी झूठ है, लेकिन यह सत्य के रूप में दिखाई देता है। जैसे सपने में, चेतना स्वयं शहरों और अन्य चीजों के रूप में प्रकट होती है।

7.103.91

साकारेव निराकारा स्थिता तद्वज्जगत्तया । संविदाकाशमाकाशादणु मेरोरणुर्यथा ॥ ९१ ॥

sākāreva nirākārā sthitā tadvajjagattayā | saṃvidākāśamākāśādaṇu meroraṇuryathā || 91 ||

The universe, which is both with form and without form, exists in that way | The atom of consciousness is like the atom of Mount Meru

जो साकार और निराकार है, वह ब्रह्मांड उसी प्रकार स्थित है | चेतना का अणु मेरु पर्वत के अणु के समान है

7.103.92

किल यत्तस्य नाम स्यादाकाशादणुता कुतः । कारणाभावतोऽन्यस्य नाकार उपपद्यते ॥ ९२ ॥

kila yattasya nāma syādākāśādaṇutā kutaḥ | kāraṇābhāvato'nyasya nākāra upapadyate || 92 ||

If it is said that the name of that is the atom of space, then from where does the formlessness come? Without a cause, another form does not arise.

यदि कहा जाता है कि उसका नाम स्पेस का अणु है, तो निराकारता कहाँ से आती है? कारण के बिना, दूसरा रूप उत्पन्न नहीं होता |

7.103.93

सर्गादावेव योऽजातो जातोऽयं जगतः कुतः । यदेव वेदनाकाशे पुरं स्वप्ने तदेव नः ॥ ९३ ॥

sargādāveva yo'jāto jāto'yaṃ jagataḥ kutaḥ | yadeva vedanākāśe puraṃ svapne tadeva naḥ || 93 ||

At the beginning of creation, that which is unborn, how is this universe born? That which is in the space of consciousness is like a city in a dream for us.

सृष्टि के आरंभ में, जो अजन्मा है, यह ब्रह्मांड कैसे उत्पन्न हुआ? जो चेतना के आकाश में है, वह हमारे लिए स्वप्न में एक नगर के समान है |

7.103.94

भेदः स्वप्नाद्रिचिद्व्योम्नोर्न शून्याम्बरयोरिव । यदेव चिन्नभो नाभ तदेव स्वप्नपत्तनम् ॥ ९४ ॥

bhedaḥ svapnādricidvyomnor na śūnyāmbarayoriva | yadeva cinnabho nābha tadeva svapnapattanam || 94 ||

The difference between the dream and the sky of consciousness is not like the difference between empty space and the sky. That which is the sky of consciousness is the city in the dream.

स्वप्न और चेतना के आकाश के बीच का अंतर शून्य स्थान और आकाश के बीच के अंतर के समान नहीं है | जो चेतना का आकाश है, वही स्वप्न में नगर है |

7.103.95

यदेव स्पन्दनं नाम स एव पवनो यथा । स्पन्दास्पन्दैकरूपात्मा वायुर्व्योमोपमो यथा ॥ ९५ ॥

yadeva spandanaṃ nāma sa eva pavano yathā | spandāspandaikarūpātmā vāyurvyomopamo yathā || 95 ||

That which is called vibration is the same as the wind. The nature of vibration and non-vibration is like the wind, which is similar to the sky.

जो स्पंदन कहलाता है, वही वायु है | स्पंदन और अस्पंदन का स्वभाव वायु के समान है, जो आकाश के समान है |

7.103.96

तस्माच्चिन्नभ एवेदं जगदाकृति लक्ष्यते । सर्वं शून्यं निरालम्बं भासनं चिद्विवस्वतः ॥ ९६ ॥

tasmāccinnabha evedaṃ jagadākṛti lakṣyate | sarvaṃ śūnyaṃ nirālambaṃ bhāsanaṃ cidvivasvataḥ || 96 ||

Therefore, this world appears as a mere reflection of consciousness | All is void, without support, a manifestation of the luminous consciousness || 96 ||

इसलिए, यह जगत चेतना का प्रतिबिम्ब मात्र दिखाई देता है | सब कुछ शून्य है, बिना आधार के, चेतना की चमक का प्रकटन || ९६ ||

7.103.97

शान्तमेवेदमखिलं निरस्तास्तमयोदयम् । सकृद्विभातममलं दृषन्मौनमनामयम् ॥ ९७ ॥

śāntamevedamakhilaṃ nirastāstamayodayam | sakṛdvibhātamamalaṃ dṛṣanmaunamanāmayam || 97 ||

All this is indeed peaceful, devoid of the rise and fall of darkness | Once revealed, it is pure, seen in silence, free from defects || 97 ||

यह सब कुछ शान्त है, अंधेरे के उदय और अस्त से रहित | एक बार प्रकट होने पर, यह शुद्ध है, मौन में देखा जाता है, दोषों से मुक्त || ९७ ||

7.103.98

तस्माद्वद कथं भावाः कुतो भावाः क्व भावधीः । क्व द्वैतं क्वैकता क्वाहं क्व भावाः क्व च भावनाः ॥ ९८ ॥

tasmādvada kathaṃ bhāvāḥ kuto bhāvāḥ kva bhāvadhīḥ | kva dvaitaṃ kvaikatā kvāhaṃ kva bhāvāḥ kva ca bhāvanāḥ || 98 ||

Therefore, tell me, how are the phenomena? Where do they come from? Where is the intellect of phenomena? Where is duality? Where is unity? Where am I? Where are the phenomena? Where are the thoughts? || 98 ||

इसलिए, बताओ, भाव कैसे हैं? वे कहाँ से आते हैं? भाव की बुद्धि कहाँ है? द्वैत कहाँ है? एकता कहाँ है? मैं कहाँ हूँ? भाव कहाँ हैं? विचार कहाँ हैं? || ९८ ||

7.103.99

नित्योदितो व्यवहरन्नपि निर्विकारो द्वित्वैक्यमुक्तमतिरुत्तमशीतलोऽन्तः । निर्वाण आस्व
विगतामयशुद्धबोधबोधैकतामुपगतोऽङ्ग न सन्ति भावाः ॥ ९९ ॥

nityodito vyavaharannapi nirvikāro dvitvaikyamuktamatiruttamaśītalo'ntaḥ | nirvāṇa āsva vigatāmayaśuddhabodhabodhaikatāmupagato'ṅga na santi bhāvāḥ || 99 ||

Eternally risen, even while engaged in activities, unchanged | The ultimate thought beyond duality and unity, supremely cool within | Abide in Nirvana, free from defects, pure knowledge, attained the oneness of knowledge | O dear one, there are no phenomena || 99 ||

सदा उदित, क्रियाओं में लगे हुए भी, अपरिवर्तित | द्वैत और एकता से परे उत्तम विचार, अंतर में शीतल | निर्वाण में रहो, दोषों से मुक्त, शुद्ध ज्ञान, ज्ञान की एकता प्राप्त | हे प्रिय, कोई भाव नहीं हैं || ९९ ||

Chapter 104

7.104.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । आकाशः शब्दतन्मात्रं स्पर्शतन्मात्रकोऽनिलः । तत्सङ्गोत्कर्षजं तेजस्तच्छान्तिश्चेत्यपां स्थितिः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ākāśaḥ śabdatanmātraṃ sparśatanmātrako'nilḥ | tatsaṅgotkarṣajaṃ tejastacchāntiścetyapāṃ sthitiḥ || 1 ||

Sri Vasistha said: Space is the subtle element of sound, wind is the subtle element of touch, from their combination arises fire, and from its pacification comes the state of water.

श्री वसिष्ठ ने कहा: आकाश शब्द का तन्मात्र है, वायु स्पर्श का तन्मात्र है, उनके संयोग से अग्नि उत्पन्न होती है, और उसकी शान्ति से जल की स्थिति होती है।

7.104.2

भूरेषां सङ्घः स्वप्नाभे जगद्भाने क्रमस्त्विति । कथं नाम किलामूर्ताद्व्योम्नो मूर्तिः प्रवर्तते ॥ २ ॥

bhūreṣāṃ saṅghaḥ svapnābhe jagadbhāne kramastviti | kathaṃ nāma kilāmūrtādvyomno mūrtiḥ pravartate || 2 ||

The combination of these elements creates the world, which appears like a dream. How can the formless sky produce forms?

इन भूतों का संघ स्वप्न के समान जगत् को उत्पन्न करता है। कैसे अमूर्त आकाश से मूर्ति उत्पन्न होती है?

7.104.3

गत्वा सुदूरमप्येतज्ज्ञप्तेश्चेत्परिकल्प्यते । तदादावेव सत्यर्थे दोषोऽस्मिन्क इवामले ॥ ३ ॥

gatvā sudūramapyetajjñapteścetparikalpyate | tadādāveva satyarathe doṣo'sminka ivāmale || 3 ||

Even if one goes very far in this knowledge, if it is imagined, then what fault is there in the pure truth from the beginning?

यदि इस ज्ञान में बहुत दूर तक जाया जाए, तो भी यदि यह कल्पना की गई है, तो शुद्ध सत्य में आदि से ही क्या दोष है?

7.104.4

ज्ञप्तिरेवातिविमला स्वरूपात्मनि भाति यत् । तदेव जगदित्युक्तं सत्यमित्येव सत्यतः ॥ ४ ॥

jñaptirevātivimalā svarūpātmani bhāti yat | tadeva jagadityuktaṃ satyamityeva satyataḥ || 4 ||

That knowledge which shines as the pure self is indeed the world. It is said to be the truth, truly the truth.

जो ज्ञान शुद्ध आत्मा के रूप में चमकता है, वही जगत् है। यह सत्य कहा जाता है, वास्तव में सत्य।

7.104.5

न क्वचित्सन्ति भूतानि पञ्च कुट्यादयो न वा । असन्त्यप्यनुभूतानि ननु स्वप्नदशास्विव ॥ ५ ॥

na kvacitsanti bhūtāni pañca kuṭyādayo na vā | asantyapyanubhūtāni nanu svapnadaśāsviva || 5 ||

The five elements do not exist anywhere, nor do the sense organs. Though they do not exist, they are experienced like in a dream state.

पाँच भूत कहीं नहीं हैं, न ही इन्द्रियाँ हैं। भले ही वे नहीं हैं, फिर भी वे स्वप्न की अवस्था के समान अनुभव किए जाते हैं।

7.104.6

स्वभाव एव विमलो यथा स्वप्ने पुरादिवत्। कचत्येवं जाग्रतीदं जगद्वद्वस्तुतस्तु खम्॥ ६॥

svabhāva eva vimalo yathā svapne purādivat | kacatyevaṃ jāgratīdaṃ jagadvadvastutastu kham || 6 ||

The nature is inherently pure, just as in a dream, it appears as a city, etc. Similarly, this world appears in the waking state, but in reality, it is space.

स्वभाव स्वयं शुद्ध है, जैसे स्वप्न में एक नगर आदि की तरह प्रकट होता है | इसी प्रकार, यह जगत जाग्रत अवस्था में प्रकट होता है, लेकिन वास्तव में यह आकाश है |

7.104.7

चेतनाकाश एवाहं तदेवेदं जगत्स्थितम्। इत्यहं जगदित्येकं खमेवैकं शिलाघनम्॥ ७॥

cetanākāśa evāhaṃ tadevedaṃ jagatsthitam | ityahaṃ jagadityekaṃ khamevaikaṃ śilāghanam || 7 ||

I am the conscious space, and this world is established in that. Thus, I and the world are one, just like the space is one and solid.

मैं चेतना आकाश हूँ, और यह जगत उसमें स्थित है | इस प्रकार, मैं और जगत एक हैं, जैसे आकाश एक और ठोस है |

7.104.8

यदादिसर्गजननं यत्कल्पान्तविवर्तनम्। यद्वा भुवनसंस्थानं तद्धि व्योम निराकृति॥ ८॥

yadādisargajananaṃ yatkalpāntavivartanam | yadvā bhuvanasansthānaṃ taddhi vyoma nirākṛti || 8 ||

That which is the creation at the beginning, that which is the transformation at the end of the kalpa, or that which is the establishment of the worlds, that indeed is the formless space.

जो आदि में सृष्टि है, जो कल्प के अंत में परिवर्तन है, या जो लोकों की स्थापना है, वह निश्चित रूप से निराकार आकाश है |

7.104.9

सति वाऽसति वा देहे निर्दुःखसुखत्वमक्षयं मोक्षः। बुद्धेऽमले स्वभावे निर्भरविश्रान्तिरस्तु सर्वेह॥ ९॥

sati vā'sati vā dehe nirduḥkhasukhatvamakṣayaṃ mokṣaḥ | buddhe'male svabhāve nirbhara viśrāntirastu sarveha || 9 ||

Whether the body exists or not, the state of being free from pleasure and pain is eternal liberation. May there be complete rest in the pure, natural state of the intellect.

चाहे शरीर हो या न हो, दुःख और सुख से मुक्त होने की अवस्था अक्षय मोक्ष है | शुद्ध, प्राकृतिक बुद्धि में पूर्ण विश्राम हो |

Chapter 105

7.105.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्वभावं जगदाकारं चिद्भावोऽनुभवन्स्थितः । स्वतः स्वप्नमिवानन्यमात्मनः कल्पनाभिधम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | svabhāvaṃ jagadākāraṃ cidbhāvo'nubhavansthitaḥ | svataḥ svapnamivānanyamātmanaḥ kalpanābhidham || 1 ||

Shri Vasistha said: The nature of the world is experienced as pure consciousness, which exists by itself like a dream, distinct from the self, known as imagination.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जगत का स्वभाव चिद्भाव के रूप में अनुभव किया जाता है, जो स्वयं एक स्वप्न की तरह अलग है, आत्मा से भिन्न है, जिसे कल्पना कहा जाता है।

7.105.2

जाग्रत्सुषुप्तमेवेदं शिलाजठरमेव वा । आकाशमेव वा शून्यं जगत्त्वेन च नोज्झितम् ॥ २ ॥

jāgratsuṣuptamevedaṃ śilājaṭharameva vā | ākāśameva vā śūnyaṃ jagattvena ca nojjhitam || 2 ||

This world is neither awake nor asleep, neither stone nor water, neither space nor void; it is not abandoned as the world.

यह जगत न तो जाग्रत है न ही सुषुप्त, न ही शिला है न ही जल, न ही आकाश है न ही शून्य; यह जगत के रूप में त्यागा नहीं जाता।

7.105.3

स्वप्न एवात्र दृष्टान्तः पुरमण्डलमण्डितः । स्वप्ने जगन्न किंचित्सदित्थमाभाति भासुरम् ॥ ३ ॥

svapna evātra dṛṣṭāntaḥ puramaṇḍalamaṇḍitaḥ | svapne jaganna kiṃcitsaditthamābhāti bhāsuram || 3 ||

Here, the example is a dream, adorned with the circle of a city. In a dream, the world appears to be something real, though it is not.

यहाँ, उदाहरण के रूप में स्वप्न है, जो एक नगर के चक्र से सुशोभित है। स्वप्न में, जगत कुछ वास्तविक प्रतीत होता है, हालाँकि वह ऐसा नहीं है।

7.105.4

त्रैलोक्यमसदेवेदं यथा स्वप्नेऽवभासते । जाग्रत्यस्मिंस्तथैवेदं मनागप्यत्र नान्यथा ॥ ४ ॥

trailokyamasadevedaṃ yathā svapne'vabhāsate | jāgratyasmiṃstathaivedaṃ manāgapyatra nānyathā || 4 ||

This world is unreal, just as it appears in a dream. In this waking state, it is the same; there is no difference here.

यह जगत असत् है, जैसे कि यह स्वप्न में प्रतीत होता है। इस जाग्रत अवस्था में, यह वैसा ही है; यहाँ कोई अंतर नहीं है।

7.105.5

न जाग्रति न च स्वप्ने जगच्छब्दार्थसंभवः । स्वं वस्तुतस्तु चिद्व्योम्नो भानं बुद्धं जगत्तया ॥ ५ ॥

na jāgrati na ca svapne jagacchabdārthasaṃbhavaḥ | svaṃ vastutastu cidvyomno bhānaṃ buddhaṃ jagattayā || 5 ||

There is no existence of the world in the waking state or in the dream. In reality, it is the manifestation of pure consciousness, known as the world.

जाग्रत अवस्था में या स्वप्न में जगत का कोई अस्तित्व नहीं है। वास्तव में, यह पूर्ण चेतना का प्रकटीकरण है, जिसे जगत कहा जाता है।

7.105.6

चिद्व्योम्ना स्वचमत्कारो व्योमन्यश्चादिरूपभृत्। जगदित्येव बुद्धोऽन्तर्जाग्रत्स्वप्ने स्वयंभुवा ॥ ६ ॥

cidvyomnā svacamatkāro vyomanyaścādirūpabhṛt | jagadityeva buddho'ntarjāgratsvapne svayaṃbhuvā || 6 ||

In the space of consciousness, the self-experience is the primordial form in the space | The world is thus perceived within the waking and dream states by the self-existent one

चिद्व्योम में, स्वयं का अनुभव आदिम रूप है व्योम में | जगत् इसी प्रकार जाग्रत और स्वप्न में अंतर्यामी द्वारा अनुभूत होता है

7.105.7

जगन्न किंचिदेवेदं चिद्रूपं च न किंचन। एते किंचिदिवाभातो नभश्चिज्जगती मुधा ॥ ७ ॥

jagann kiṃcid evedaṃ cidrūpaṃ ca na kiṃcana | ete kiṃcidivābhāto nabhaścijjagatī mudhā || 7 ||

The world is not anything in reality, nor is it of the form of consciousness | These appear as something, the sky and the conscious world, foolishly

जगत् वास्तव में कुछ नहीं है, न ही चेतना के रूप में | ये कुछ के रूप में प्रकट होते हैं, आकाश और चेतन जगत्, मूढ़तापूर्वक

7.105.8

आभातमेव त्रैलोक्यं यथा स्वप्ने न किंचन। शून्यमेव भवेदेवमेवं जाग्रति निर्वपुः ॥ ८ ॥

ābhātameva trailokyaṃ yathā svapne na kiṃcana | śūnyameva bhavedevamevaṃ jāgrati nirvapuḥ || 8 ||

The three worlds appear as if in a dream, nothing in reality | Thus, they are empty, even in the waking state, without form

तीनों लोक स्वप्न की तरह प्रकट होते हैं, वास्तव में कुछ नहीं | इस प्रकार, वे शून्य हैं, जाग्रत अवस्था में भी, रूप के बिना

7.105.9

स्वप्ने किल महाबुद्धे नानानिर्माणशालिनि। आरम्भा एव नारम्भा असत्सदिव चाततम् ॥ ९ ॥

svapne kila mahābuddhe nānānirmāṇaśālini | ārambhā eva nārambhā asatsadiva cātatam || 9 ||

In a dream, O great wise one, various creations are seen | These are mere beginnings, not real, like the unreal real, and thus they are

स्वप्न में, हे महाबुद्ध, विविध निर्माण दिखाई देते हैं | ये केवल आरम्भ हैं, वास्तविक नहीं, जैसे असत् सत्, और इस प्रकार वे हैं

7.105.10

अव्योमैवातिविततं व्योमान्तपरिवर्जितम्। व्योमैवाचलसंघातो नानापुरगणोत्करः ॥ १० ॥

avyomai vātivitataṃ vyomāntaparivarjitam | vyomai vācalasaṃghāto nānāpuragaṇotkaraḥ || 10 ||

The non-space is vastly spread out, devoid of the end of space | The space is a collection of immovable mountains, a multitude of various cities

अव्योम अति वितत है, व्योम के अंत से रहित | व्योम एक अचल संघात है, विविध नगरों की उत्कर्ष

7.105.11

अप्यब्दाब्ध्यद्रिनिर्घोषो मौनमेव यथा तथा। न श्रृणोत्येव पार्श्वस्थः संप्रबुध्यापि किंचन ॥ ११ ॥

apyabdābhyadrinirghoṣo maunameva yathā tathā | na śrṇotyeva pārśvasthaḥ saṃprabudhyāpi kiṃcana || 11 ||

Even the roar of the ocean and the mountains is mere silence, just as one standing nearby, even when awake, hears nothing.

समुद्र और पर्वतों का गर्जन भी मौन है, जैसे कोई पास खड़ा होकर भी, जाग्रत अवस्था में भी, कुछ भी नहीं सुनता।

7.105.12

प्रजायते वाऽजातोऽपि वन्ध्यायास्तनयो यथा । जातोऽप्यजात एवास्ते यथात्ममृतिविस्मृतौ ॥ १२ ॥

prajāyate vā'jāto'pi vandhyāyāstanayo yathā | jāto'pyajāta evāste yathātmamṛtivismṛtau || 12 ||

One who is unborn is born like the son of a barren woman. Even when born, he remains unborn, as in the forgetfulness of self-death.

जो जन्म नहीं लेता, वह जन्म लेता है जैसे वंध्या का पुत्र। जन्म लेकर भी वह अजन्मा ही रहता है, जैसे आत्म-मृत्यु की विस्मृति में।

7.105.13

सदसद्भवति क्षिप्रं भुवोऽननुभवो यथा । विपर्यस्यति सर्वं च रात्रिरेव यथा दिनम् ॥ १३ ॥

sadasadbhavati kṣipraṃ bhuvo'nanubhavo yathā | viparyasyati sarvaṃ ca rātrireva yathā dinam || 13 ||

Everything becomes real and unreal quickly, like the non-experience of the earth. Everything is reversed, just as night becomes day.

सब कुछ शीघ्र ही सत् और असत् हो जाता है, जैसे पृथ्वी का अनुभव नहीं होता। सब कुछ उलट जाता है, जैसे रात दिन बन जाती है।

7.105.14

असद्यत्संभवत्याशु दिनमेव यथा निशा । असंभवः संभवति यथा स्वमृतिदर्शनम् ॥ १४ ॥

asadyatsaṃbhavatyāśu dinameva yathā niśā | asaṃbhavo saṃbhavati yathā svamṛtidarśanam || 14 ||

The unreal becomes real quickly, just as day becomes night. The impossible becomes possible, just as the vision of one's own death.

असत् शीघ्र ही सत् हो जाता है, जैसे दिन रात बन जाता है। असंभव संभव हो जाता है, जैसे अपनी मृत्यु का दर्शन।

7.105.15

असंभवः संभवति जगद्भानमिवाम्बरे । तम एव महालोको यः सनिद्रः सवासरः ॥ १५ ॥

asaṃbhavo saṃbhavati jagadbhānamivāmbare | tama eva mahāloko yaḥ sanidraḥ savāsaraḥ || 15 ||

The impossible becomes possible, like the reflection of the world in the sky. That which is both day and night is the great light.

असंभव संभव हो जाता है, जैसे आकाश में संसार का प्रतिबिंब। जो दिन और रात दोनों है, वही महान प्रकाश है।

7.105.16

आलोक एवैति तमो यन्निद्रा स्वप्नवासरा । वसुधैव भवेद्व्योम श्वभ्रादिपतने यथा ॥ १६ ॥

āloka evaiti tamo yannidrā svapnavāsarā | vasudhaiva bhavedvyoma śvabhrādipatane yathā || 16 ||

Just as light disappears into darkness during sleep and dreams, similarly, the earth becomes the sky when a pit falls into it.

जैसे प्रकाश नींद और स्वप्न के दौरान अंधेरे में विलीन हो जाता है, उसी प्रकार, जब एक गड्ढा उसमें गिर जाता है, तो पृथ्वी आकाश बन जाती है।

7.105.17

असत्यरूपमेवेति भाति स्वप्ने जगद्यथा । तथैव जाग्रदाभाति मनागप्यत्र नान्यता ॥ १७ ॥

asatyarūpamevaiti bhāti svapne jagadyathā | tathaiva jāgradābhāti manāgapyatra nānyatā || 17 ||

Just as the world appears unreal in a dream, so does it appear in the waking state; there is no difference here.

जैसे स्वप्न में दुनिया असत्य प्रतीत होती है, उसी प्रकार जागृत अवस्था में भी ऐसा ही होता है; यहाँ कोई अंतर नहीं है।

7.105.18

यथा द्वौ सदृशौ सूर्यौ यथा द्वौ सदृशौ नरौ । जाग्रत्स्वप्नौ तथैवैतौ मनागप्यत्र नान्यता ॥ १८ ॥

yathā dvau sadṛśau sūryau yathā dvau sadṛśau narau | jāgratsvapnau tathaivaittau manāgapyatra nānyatā || 18 ||

Just as two similar suns or two similar men, so are the waking and dreaming states; there is no difference here.

जैसे दो समान सूर्य या दो समान व्यक्ति, उसी प्रकार जागृत और स्वप्न अवस्थाएँ हैं; यहाँ कोई अंतर नहीं है।

7.105.19

श्रीराम उवाच । नैतदेवमपि क्षिप्रात्प्रत्ययो यत्र बाधकः । स्वप्ने तद्दर्शनेनान्तः कथं जाग्रन्समं भवेत् ॥ १९ ॥

śrīrāma uvāca | naitadevamapi kṣiprātpratyayo yatra bādhakaḥ | svapne taddarśanenāntaḥ kathaṃ jāgransamaṃ bhavet || 19 ||

Sri Rama said: This is not so, for the conviction is quickly contradicted where there is an obstacle. How can the waking state be the same as the dream state, which is seen to be unreal?

श्री राम ने कहा: यह ऐसा नहीं है, क्योंकि जहाँ बाधा है, वहाँ विश्वास जल्दी ही खंडित हो जाता है। स्वप्न में जो असत्य दिखाई देता है, उसके साथ जागृत अवस्था कैसे समान हो सकती है?

7.105.20

श्रीवसिष्ठ उवाच । विहृत्य स्वप्नजगति स्वप्नबन्धुजनैः समम् । मृतिमाप्नोति तत्रासौ द्रष्टा स्वप्नस्य राघव ॥ २० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vihṛtya svapnajagati svapnabandhujanaiḥ samam | mṛtimāpnoti tatrāsau draṣṭā svapnasya rāghava || 20 ||

Sri Vasistha said: Having enjoyed in the dream world with dream friends, the seer of the dream attains death there, O Raghava.

श्री वसिष्ठ ने कहा: स्वप्न जगत में स्वप्न मित्रों के साथ भोग करके, स्वप्न का द्रष्टा वहाँ मृत्यु को प्राप्त होता है, हे रघुवंशी।

7.105.21

मृतः सन्स्वप्नजगति स्वप्नजन्तुवियोगवान् । इह प्रबुध्यते जन्तुर्निद्रामुक्तश्च कथ्यते ॥ २१ ॥

mṛtaḥ sansvapnajagati svapnajantuviyogavān| iha prabudhyate janturnidrāmuktaśca kathyate || 21 ||

Having died in the dream world, separated from the dream beings, the living entity awakens here and is said to be freed from sleep.

स्वप्न जगत में मृत्यु को प्राप्त होकर, स्वप्न जन्तुओं से वियोग होने पर, जीव यहाँ जागृत होता है और निद्रा से मुक्त कहा जाता है।

7.105.22

सुखदुःखदशामोहान्दिनरात्रिविपर्ययान् । अनुभूय बहून्द्रष्टा म्रियते स्वप्नसंसृतौ ॥ २२ ॥

sukhaduḥkhadaśāmohāndinarātriviparyayān| anubhūya bahūndraṣṭā mriyate svapnasansṛtau || 22 ||

Having experienced many states of happiness and sorrow, day and night reversals, the observer dies in the cycle of dreams.

सुख और दुःख की अनेक दशाओं और दिन-रात्रि के विपर्ययों का अनुभव करके, द्रष्टा स्वप्न संसृति में मृत्यु को प्राप्त होता है।

7.105.23

गतनिद्रतया पश्चान्निद्रान्त इह जायते । न सत्यमेतदित्येवं ततः प्रत्ययवान्भवेत् ॥ २३ ॥

gatanidratayā paścānnidrānta iha jāyate| na satyametadityevaṃ tataḥ pratyayavānbhavet || 23 ||

After the sleep is gone, one is born here again, thinking 'this is not real.' Thus, one becomes convinced.

निद्रा समाप्त होने के बाद, यहाँ फिर से जन्म लेता है, सोचते हुए 'यह सत्य नहीं है'। इस प्रकार, वह विश्वास करने लगता है।

7.105.24

स्वप्नद्रष्टा यथा स्वप्नसंसारे मृतिमाप्तवान् । अन्यं जाग्रन्मयं स्वप्नं द्रष्टुं भूयः प्रजायते ॥ २४ ॥

svapnadraṣṭā yathā svapnasansāre mṛtimāptavān| anyaṃ jāgranmayaṃ svapnaṃ draṣṭuṃ bhūyaḥ prajāyate || 24 ||

Just as the dreamer, having experienced death in the dream world, is born again to see another waking dream.

जैसे स्वप्नद्रष्टा, स्वप्न संसार में मृत्यु का अनुभव करके, दूसरे जाग्रत स्वप्न को देखने के लिए फिर से जन्म लेता है।

7.105.25

जाग्रद्द्रष्टा तथा जाग्रत्संसारे मृतिमाप्तवान् । अन्यं जाग्रन्मयं स्वप्नं द्रष्टुं भूयः स जायते ॥ २५ ॥

jāgraddraṣṭā tathā jāgratsansāre mṛtimāptavān| anyaṃ jāgranmayaṃ svapnaṃ draṣṭuṃ bhūyaḥ sa jāyate || 25 ||

Similarly, the observer in the waking world, having experienced death, is born again to see another waking dream.

इसी प्रकार, जाग्रत संसार में द्रष्टा, मृत्यु का अनुभव करके, दूसरे जाग्रत स्वप्न को देखने के लिए फिर से जन्म लेता है।

7.105.26

न स्वप्नमसदित्येवं पूर्वस्मिञ्जाग्रदात्मनि । पुनः प्रत्ययमादत्ते स्वप्नात्स्वप्नान्तरं गतः ॥ २६ ॥

na svapnamasadityevaṃ pūrvasmijjāgradātmani | punaḥ pratyayamādatte svapnātsvapnāntaraṃ gataḥ || 26 ||

In the previous waking state, one does not consider the dream to be unreal. Having gone from one dream to another, one accepts the dream experience again.

पूर्व जाग्रत अवस्था में, वह स्वप्न को असत् नहीं मानता | एक स्वप्न से दूसरे स्वप्न में जाकर, वह फिर से स्वप्न अनुभव को स्वीकार करता है |

7.105.27

स जाग्रत्प्रत्ययं तत्र पुनर्गृह्णाति मुग्धधीः । स्वप्नसंदर्शनं त्वन्यत्तत्राप्यनुभवत्यथ ॥ २७ ॥

sa jāgratpratyayaṃ tatra punargṛhṇāti mugdhadhīḥ | svapnasandarśanaṃ tvanyattatrāpyanubhavatyatha || 27 ||

The bewildered mind accepts the waking experience there again. However, it also experiences another dream vision there.

मोहित मन वहाँ फिर से जाग्रत अनुभव को स्वीकार करता है | फिर भी, वह वहाँ एक और स्वप्न दृश्य का भी अनुभव करता है |

7.105.28

स्वप्नं जाग्रत्तया जाग्रत्स्वप्नत्वं चेति नामनि । न जायते न म्रियते जायते म्रियतेऽपि च ॥ २८ ॥

svapnaṃ jāgrattayā jāgratsvapnatvaṃ ceti nāmani | na jāyate na mriyate jāyate mriyate'pi ca || 28 ||

Dream is called waking, and waking is called dream. It is neither born nor dies, yet it is born and dies.

स्वप्न को जाग्रत कहते हैं, और जाग्रत को स्वप्न कहते हैं | यह न जन्म लेता है न मरता है, फिर भी यह जन्म लेता है और मरता है |

7.105.29

स्वप्नद्रष्टा स्वप्नमृतः प्रबुद्ध इह कथ्यते। इह जाग्रन्मृतो जन्तुः प्रबुद्धोऽन्यत्र कथ्यते॥ २९॥

svapnadraṣṭā svapnamṛtaḥ prabuddha iha kathyate | iha jāgranmṛto jantuḥ prabuddho'nyatra kathyate || 29 ||

The dreamer who dies in the dream is said to be awakened here. The one who dies in the waking state is said to be awakened elsewhere.

स्वप्न देखने वाला जो स्वप्न में मर जाता है, वह यहाँ जाग्रत कहलाता है | जो जाग्रत अवस्था में मर जाता है, वह दूसरी जगह जाग्रत कहलाता है |

7.105.30

स्वप्नात्स्वप्नस्थितौ जाग्रज्जाग्रत्स्वप्नप्रदर्शनम्। मृत्वान्यत्र प्रबुद्धस्य जाग्रत्स्वप्नो भवत्यलम्॥ ३०॥

svapnātsvapnasthitau jāgrajjāgratsvapnapradarśanam | mṛtvānyatra prabuddhasya jāgratsvapno bhavatyalam || 30 ||

In the state of being in a dream, the waking state shows the dream. Having died elsewhere, the awakened one's waking state becomes a dream.

स्वप्न में रहने की अवस्था में, जाग्रत अवस्था स्वप्न दिखाती है | दूसरी जगह मरने के बाद, जाग्रत की अवस्था स्वप्न बन जाती है |

7.105.31

इतिहासमयावेव जाग्रत्स्वप्नावुभावपि। परस्परं गतावेतावुपमानोपमेयताम्॥ ३१॥

itihāsamayāveva jāgratsvapnāvubhāvapi | parasparaṃ gatāvetāvupamānopameyatām || 31 ||

Both the waking and dream states are indeed historical | They have attained a state of mutual comparison || 31 ||

जाग्रत और स्वप्न दोनों अवस्थाएँ वास्तव में ऐतिहासिक हैं | वे परस्पर तुलनात्मक अवस्था को प्राप्त हुए हैं || ३१ ||

7.105.32

स्वप्नो जाग्रदिवाभाति जाग्रत्स्वप्नमिवोदितम्। वस्तुतस्तु द्वयमसच्चित्खं कचति केवलम्॥ ३२॥

svapno jāgradivābhāti jāgratsvapnamivoditam | vastutastu dvayamasaccitkhaṃ kacati kevalam || 32 ||

Dream appears like the waking state, and the waking state appears like a dream | In reality, both are unreal; only consciousness shines alone || 32 ||

स्वप्न जाग्रत अवस्था की तरह प्रतीत होता है, और जाग्रत अवस्था स्वप्न की तरह प्रतीत होती है | वास्तव में, दोनों अवास्तविक हैं; केवल चेतना अकेले चमकती है || ३२ ||

7.105.33

स्थावरं जंगमं चैव भूतजातमशेषतः। चिन्मात्रव्यतिरेकेण किमन्यदुपपद्यते॥ ३३॥

sthāvaraṃ jaṅgamaṃ caiva bhūtajātamaśeṣataḥ | cinmātravyatirekeṇa kimanyadupapadyate || 33 ||

Both the immovable and the movable, all beings without exception | What else is possible without the pure consciousness || 33 ||

स्थावर और जंगम, सभी प्राणी बिना किसी अपवाद के | शुद्ध चेतना के बिना और क्या संभव है || ३३ ||

7.105.34

मृन्मयं तु यथा भाण्डं मृच्छून्यं नोपलभ्यते । चिच्चमत्कारमात्रात्म तथा काष्ठोपलाद्यपि ॥ ३४ ॥

mṛnmayaṃ tu yathā bhāṇḍaṃ mṛcchūnyaṃ nopalabhyate | ciccmatkāramātrātma tathā kāṣṭhopalādyapi || 34 ||

Just as a clay pot, though made of clay, is not found to be merely clay | Similarly, consciousness, which is pure wonder, is not merely the wood or stone || 34 ||

जैसे मिट्टी का बर्तन, मिट्टी से बना होने के बावजूद, केवल मिट्टी नहीं होता | उसी प्रकार, चेतना, जो शुद्ध आश्चर्य है, केवल लकड़ी या पत्थर नहीं है || ३४ ||

7.105.35

वस्तुजातमिदं स्वप्ने जाग्रत्यपि तथैव नः । दृष्टो य उपलः स्वप्ने चिच्चमत्करणादृते ॥ ३५ ॥

vastujātamidaṃ svapne jāgratyapi tathaiva naḥ | dṛṣṭo ya upalaḥ svapne ciccmatkaraṇādṛte || 35 ||

All these objects in the dream are also the same in the waking state | That which is seen as a stone in the dream is nothing but the wonder of consciousness || 35 ||

स्वप्न में ये सभी वस्तुएँ जाग्रत अवस्था में भी उसी प्रकार हैं | जो स्वप्न में पत्थर के रूप में दिखाई देता है, वह चेतना का आश्चर्य के अलावा कुछ नहीं है || ३५ ||

7.105.36

किमन्यत्संवद प्राज्ञ किलावश्यं चिदेव सा । ननु यादृग्वपुः स्वप्ने जाग्रत्तादृगखण्डितम् ॥ ३६ ॥

kimanyatsaṃvada prājña kilāvaśyaṃ cideva sā | nanu yādṛgvapuḥ svapne jāgrattādṛgakhaṇḍitam || 36 ||

What else can the wise say, indeed it is only consciousness | Just as the body in a dream is fragmented when awake || 36 ||

बुद्धिमान और क्या कह सकता है, वास्तव में यह केवल चेतना है | जैसे सपने में शरीर जागने पर टूट जाता है || ३६ ||

7.105.37

जगज्जातमतः सर्वं चिन्मात्रं ब्रह्मखण्डितम् । जगज्जातमतः सर्वं चिन्मात्रं ब्रह्मकुट्टिमम् ॥ ३७ ॥

jagajjātamataḥ sarvaṃ cinmātraṃ brahmakhaṇḍitam | jagajjātamataḥ sarvaṃ cinmātraṃ brahmakuṭṭimam || 37 ||

Therefore, the entire universe is only consciousness, fragmented by Brahman | Therefore, the entire universe is only consciousness, covered by Brahman || 37 ||

इसलिए, सम्पूर्ण ब्रह्मांड केवल चेतना है, ब्रह्म द्वारा टूटा हुआ | इसलिए, सम्पूर्ण ब्रह्मांड केवल चेतना है, ब्रह्म द्वारा ढंका हुआ || ३७ ||

7.105.38

मृन्मयं तु यथा भाण्डं मृच्छून्यं नोपलभ्यते । चिन्मयं तु तथा चेत्यं चिच्छून्यं नोपलभ्यते ॥ ३८ ॥

mṛnmayam tu yathā bhāṇḍaṃ mṛcchūnyaṃ nopalabhyate | cinmayaṃ tu tathā cetyaṃ cicchūnyaṃ nopalabhyate || 38 ||

Just as a clay pot without clay is not found | Similarly, consciousness without consciousness is not found || 38 ||

जैसे मिट्टी के बिना मिट्टी का बर्तन नहीं मिलता | वैसे ही, चेतना के बिना चेतना नहीं मिलती || ३८ ||

7.105.39

शैलात्मकं यथा भाण्डं शैलशून्यं न लभ्यते । चिन्मयं तु तथा चेत्यं चिच्छून्यं नोपलभ्यते ॥ ३९ ॥

śailātmakaṃ yathā bhāṇḍaṃ śailaśūnyaṃ na labhyate | cinmayaṃ tu tathā cetyaṃ cicchūnyaṃ nopalabhyate || 39 ||

Just as a stone pot without stone is not found | Similarly, consciousness without consciousness is not found || 39 ||

जैसे पत्थर के बिना पत्थर का बर्तन नहीं मिलता | वैसे ही, चेतना के बिना चेतना नहीं मिलती || ३९ ||

7.105.40

द्रवरूपं यथा वारि द्रवरिक्तं न लभ्यते । चिन्मयं तु तथा चेत्यं चिच्छून्यं नोपलभ्यते ॥ ४० ॥

dravarūpaṃ yathā vāri dravariktaṃ na labhyate | cinmayaṃ tu tathā cetyaṃ cicchūnyaṃ nopalabhyate || 40 ||

Just as liquid without liquid is not found | Similarly, consciousness without consciousness is not found || 40 ||

जैसे तरल के बिना तरल नहीं मिलता | वैसे ही, चेतना के बिना चेतना नहीं मिलती || ४० ||

7.105.41

ऊष्मरूपो यथा वह्निर्निरूष्मा नोपलभ्यते । चिन्मयं तु तथा चेत्यं चिच्छून्यं नोपलभ्यते ॥ ४१ ॥

ūṣmarūpo yathā vahnirnirūṣmā nopalabhyate | cinmayaṃ tu tathā cetyaṃ cicchūnyaṃ nopalabhyate || 41 ||

Just as fire, which is of the nature of heat, is not found without heat, similarly, consciousness, which is of the nature of pure awareness, is not found without awareness.

जैसे अग्नि, जो ऊष्मा स्वभाव की है, बिना ऊष्मा के नहीं पाई जाती, वैसे ही, चिन्मय चेतना, जो शुद्ध चेतना स्वभाव की है, बिना चेतना के नहीं पाई जाती।

7.105.42

यथा स्पन्दमयो वायुरस्पन्दो नोपलभ्यते । चिन्मयं तु तथा चेत्यं चिच्छून्यं नोपलभ्यते ॥ ४२ ॥

yathā spandamayo vāyuraspando nopalabhyate | cinmayaṃ tu tathā cetyaṃ cicchūnyaṃ nopalabhyate || 42 ||

Just as air, which is of the nature of motion, is not found without motion, similarly, consciousness, which is of the nature of pure awareness, is not found without awareness.

जैसे वायु, जो स्पन्दन स्वभाव की है, बिना स्पन्दन के नहीं पाई जाती, वैसे ही, चिन्मय चेतना, जो शुद्ध चेतना स्वभाव की है, बिना चेतना के नहीं पाई जाती।

7.105.43

यद्यन्मयं तद्विना तु तत्कथं किल लभ्यते । क्वाशून्यं लभ्यते व्योम क्वाघना लभ्यते मही ॥ ४३ ॥

yadyanmayaṃ tadvinā tu tatkathaṃ kila labhyate | kvāśūnyaṃ labhyate vyoma kvāghanā labhyate mahī || 43 ||

How can that which is of a certain nature be obtained without that nature? Where can space be found without emptiness? Where can the earth be found without solidity?

जो किसी स्वभाव का है, उसे उस स्वभाव के बिना कैसे प्राप्त किया जा सकता है? शून्यता के बिना आकाश कहाँ पाया जाता है? घनत्व के बिना पृथ्वी कहाँ पाई जाती है?

7.105.44

चिद्व्योममयमेवेदं यथा घटपटादिकम् । स्वप्ने तथेदं शैलादि चिद्व्योमाभासमात्रकम् ॥ ४४ ॥

cidvyomamayamevedaṃ yathā ghaṭapaṭādikam | svapne tathedaṃ śailādi cidvyomābhāsamātrakam || 44 ||

This is indeed of the nature of pure consciousness, just as pots and clothes are in a dream. Similarly, in a dream, mountains and other objects are mere reflections of pure consciousness.

यह वास्तव में शुद्ध चेतना स्वभाव का है, जैसे स्वप्न में घड़े और कपड़े होते हैं। इसी तरह, स्वप्न में पहाड़ और अन्य वस्तुएं शुद्ध चेतना के प्रतिबिम्ब मात्र हैं।

7.105.45

स्वप्ने यथा गगनमेव पुराचलादि संविन्मयं सुभग जाग्रति तद्वदेव । स्वप्नोऽथ जाग्रदिति शान्तमनन्तमेकं चिन्मात्रमत्र ननु नाम विनास्तु वादः ॥ ४५ ॥

svapne yathā gaganameva purācalādi saṃvinmayaṃ subhaga jāgrati tadvadeva | svapno'tha jāgraditi śāntamanantamekaṃ cinmātramatra nanu nāma vināstu vādaḥ || 45 ||

Just as in a dream, the sky itself appears as mountains and other objects, which are of the nature of consciousness, O beautiful one, similarly, in the waking state, everything is of the nature of consciousness. Therefore, there is only one, peaceful, infinite consciousness here, without any names or distinctions.

जैसे स्वप्न में, आकाश ही पहाड़ और अन्य वस्तुओं के रूप में प्रकट होता है, जो चेतना स्वभाव के हैं, हे सुंदरी, इसी तरह, जाग्रत अवस्था में सब कुछ चेतना स्वभाव का है। इसलिए, यहां केवल एक शांत, अनंत चेतना है, जिसमें कोई नाम या भेद नहीं है।

Chapter 106

7.106.1

श्रीराम उवाच । कीदृशं स्याच्चिदाकाशं तद्ब्रह्मन्ब्रह्म यत्परम् । भूयः कथय तृप्तिर्हि श्रृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | kīdṛśaṃ syāccidākāśaṃ tadbrahmanbrahma yatparam | bhūyaḥ kathaya tṛptirhi śṛṇvato nāsti me'mṛtam || 1 ||

Sri Rama said: What kind of consciousness is that supreme Brahman? Please explain it again, for I am not satisfied with hearing this nectar.

श्री राम ने कहा: वह परम ब्रह्म कैसा चिदाकाश है? कृपया इसे फिर से बताएं, क्योंकि मुझे इस अमृत को सुनने से तृप्ति नहीं हो रही है।

7.106.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । समयोर्यमयोर्भ्रात्रोर्व्यवहाराय नामनी । यद्वत्क्रियेते द्वे तद्वज्जाग्रत्स्वप्नशिलामये ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | samayoryamayorbhātroḥvyavahārāya nāmanī | yadvatkriyete dve tadvajjāgratsvapnaśilāmaye || 2 ||

Vasistha said: Just as the names of day and night are used for practical purposes, similarly, the states of waking and dreaming are used for practical purposes.

वसिष्ठ ने कहा: जैसे दिन और रात के नाम व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उपयोग किए जाते हैं, उसी तरह जाग्रत और स्वप्न की अवस्थाएँ भी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उपयोग की जाती हैं।

7.106.3

वस्तुतस्त्वनयोर्भेदो न द्वयोः पयसोरिव । द्वयमप्येकमेवैतच्चिन्मात्रं व्योम निर्मलम् ॥ ३ ॥

vastutastvanayorbhēdo na dvayoḥ payasōriva | dvayamapyēkamēvaitaccinmātraṃ vyōma nirmalam || 3 ||

In reality, there is no difference between the two, just as there is no difference between two waters. Both are indeed one, pure consciousness, the clear sky.

वास्तव में, दोनों के बीच कोई अंतर नहीं है, जैसे दो पानी के बीच कोई अंतर नहीं है। दोनों वास्तव में एक हैं, शुद्ध चेतना, स्वच्छ आकाश।

7.106.4

देशाद्देशान्तरं दूरं प्राप्तायाः संविदो वपुः । निमिषेणैव तन्मध्ये चिदाकाशं तदुच्यते ॥ ४ ॥

dēśāddēśāntaraṃ dūraṃ prāptāyāḥ saṃvidō vapuḥ | nimiṣēṇaiva tanmadhyē cidākāśaṃ taducyatē || 4 ||

The space between one place and another distant place is called 'cidākāsham' when consciousness reaches it in an instant.

एक स्थान से दूर के दूसरे स्थान के बीच का अंतर तब 'चिदाकाशम' कहलाता है जब चेतना एक पल में उस तक पहुँचती है।

7.106.5

यादृशस्तिष्ठतः स्वच्छं रसमाकर्षतस्तरोः । भवेद्भावो नभःस्वच्छस्तादृशं चिन्नभः स्मृतम् ॥ ५ ॥

yādṛśastiṣṭhataḥ svacchaṃ rasamākarṣatastarōḥ | bhavēdbhāvō nabhaḥsvacchastādṛśaṃ cinnabhaḥ smṛtam || 5 ||

Just as the clear sky remains unaffected by the attraction of the sap from a tree, so too the pure consciousness remains unaffected by the states of waking and dreaming.

जैसे स्वच्छ आकाश किसी पेड़ की रस के आकर्षण से प्रभावित नहीं होता, उसी तरह शुद्ध चेतना जाग्रत और स्वप्न की अवस्थाओं से प्रभावित नहीं होती।

7.106.6

विनिवृत्ताखिलेच्छस्य पुंसः संशान्तचेतसः । यादृशः स्यात्समो भावस्तादृशं चिन्नभः स्मृतम् ॥ ६ ॥

vinivṛttākhilecchasya puṃsaḥ saṃśāntacetasaḥ | yādṛśaḥ syātsamo bhāvastādṛśaṃ cinnabhaḥ smṛtam || 6 ||

For the person who has renounced all desires and has a peaceful mind, the state of equanimity is considered to be the same as the state of pure consciousness.

जिस व्यक्ति ने सभी इच्छाओं का त्याग कर दिया है और जिसका मन शांत है, उसकी समानता की अवस्था शुद्ध चेतना की अवस्था मानी जाती है।

7.106.7

अनागतायां निद्रायां मनोविषयसंक्षये । पुंसः स्वस्थस्य यो भावः स चिदाकाश उच्यते ॥ ७ ॥

anāgatāyāṃ nidrāyāṃ manoviṣayasaṃkṣaye | puṃsaḥ svasthasya yo bhāvaḥ sa cidākāśa ucyate || 7 ||

When sleep has not yet come and the objects of the mind have ceased, the state of a healthy person is called the space of consciousness.

जब नींद अभी नहीं आई है और मन के विषय समाप्त हो चुके हैं, तब एक स्वस्थ व्यक्ति की अवस्था चेतना के आकाश कहलाती है।

7.106.8

तृणगुल्मलतादीनां वृद्धिमागच्छतामृतौ । यः स्यादुन्ममतो भावः स चिदाकाश उच्यते ॥ ८ ॥

tṛṇagulmalatādīnāṃ vṛddhimāgacchatāmṛtau | yaḥ syādunmamato bhāvaḥ sa cidākāśa ucyate || 8 ||

The state of blossoming that occurs in the growth of grass, shrubs, and creepers is called the space of consciousness.

घास, झाड़ियों और लताओं के विकास में जो खिलने की अवस्था होती है, वह चेतना के आकाश कहलाती है।

7.106.9

रूपालोकमनस्कारविमुक्तस्यामृतस्य यः । भावः पुंसः शरद्व्योमविशदस्तच्चिदम्बरम् ॥ ९ ॥

rūpālokamanaskāravimuktasyāmṛtasya yaḥ | bhāvaḥ puṃsaḥ śaradvadyomaviśadas taccidambaram || 9 ||

The state of a person who is free from form, perception, and mental impressions is as clear as the autumn sky, and that is the space of consciousness.

जो व्यक्ति रूप, अलोक (दृष्टि), और मानसिक संस्कारों से मुक्त है, उसकी अवस्था शरद् ऋतु के आकाश की तरह स्पष्ट होती है, और वही चेतना का आकाश है।

7.106.10

यदेतदासनं सृष्टं काष्ठपाषाणभूभृताम् । चेतनानां च सत्तात्म चिदाकाशः स उच्यते ॥ १० ॥

yadetadāsanaṃ sṛṣṭaṃ kāṣṭhapāṣāṇabhūbhṛtām | cetanānāṃ ca sattātma cidākāśaḥ sa ucyate || 10 ||

That which is the foundation of the created world, including wood, stone, and earth, and the essence of all conscious beings, is called the space of consciousness.

जो लकड़ी, पत्थर और धरती सहित सृष्टि का आधार है, और सभी चेतन प्राणियों का सार है, वह चेतना के आकाश कहलाता है।

7.106.11

द्रष्टृदर्शनदृश्यानां त्रयाणामुदयो यतः । यत्र वास्तमयश्चित्खं तद्विद्धि विगतामयम् ॥ ११ ॥

draṣṭṛdarśanadṛśyānāṃ trayāṇāmudayo yataḥ | yatra vāstamayaścitkhaṃ tadviddhi vigatāmayam || 11 ||

The rise of the three—the seer, the seeing, and the seen—is from that which is the abode of consciousness, free from decay. Know that to be free from impurity.

देखने वाले, देखने और देखे जाने वाले इन तीनों का उदय उससे होता है जहाँ चेतना का वास है, जो विकार से मुक्त है | उसे दोषरहित जानो |

7.106.12

यत उद्यन्ति यस्मिंश्च चित्राः परिणमन्त्यलम्। पदार्थानुभवाः सर्वे चिदाकाशः स उच्यते ॥ १२ ॥

yata udyanti yasmiṃśca citrāḥ pariṇamantyalam | padārthānubhavāḥ sarve cidākāśaḥ sa ucyate || 12 ||

From which all diverse experiences arise and in which they ultimately dissolve, that is called the space of consciousness.

जिससे सभी विविध अनुभव उत्पन्न होते हैं और जिसमें वे अंततः विलीन हो जाते हैं, उसे चेतना का आकाश कहते हैं |

7.106.13

यस्मिन्सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः। यश्च सर्वमयो नित्यं स चिदाकाश उच्यते ॥ १३ ॥

yasmin sarvaṃ yataḥ sarvaṃ yaḥ sarvaṃ sarvataśca yaḥ | yaśca sarvamayo nityaṃ sa cidākāśa ucyate || 13 ||

In which everything exists, from which everything arises, which is everything and everywhere, and which is eternally pervading everything, that is called the space of consciousness.

जिसमें सब कुछ है, जिससे सब कुछ उत्पन्न होता है, जो सब कुछ और हर जगह है, और जो सदा सब कुछ में व्याप्त है, उसे चेतना का आकाश कहते हैं |

7.106.14

दिवि भूमौ बहिश्चान्तस्तथान्यस्य समाभिधः। यो विभात्यवभासात्मा चिदाकाशः स उच्यते ॥ १४ ॥

divi bhūmau bahiścāntastathānyasya samābhidhaḥ | yo vibhātyavabhāsātmā cidākāśaḥ sa ucyate || 14 ||

That which shines as the self-luminous essence in the sky, on earth, outside, inside, and in all other places, that is called the space of consciousness.

जो आकाश में, पृथ्वी पर, बाहर, अंदर, और सभी अन्य स्थानों में स्वयं प्रकाशमान आत्मा के रूप में चमकता है, उसे चेतना का आकाश कहते हैं |

7.106.15

यस्मिन्नित्ये तते तन्तौ दृढे स्रगिव तिष्ठति। सदसदुत्थितं विश्वं विश्वाङ्गे तच्चिदम्बरम् ॥ १५ ॥

yasminnitye tate tantau dṛḍhe sragiva tiṣṭhati | sadasadutthitaṃ viśvaṃ viśvāṅge taccidambaram || 15 ||

In the eternal, firm thread, the universe, which is a mixture of existence and non-existence, stands like a garland. That is the garment of consciousness.

नित्य, दृढ़ तंतु में, अस्तित्व और अनस्तित्व का मिश्रण है विश्व, जो एक माला की तरह खड़ा है | वह चेतना का वस्त्र है |

7.106.16

यस्मात्सर्वाः प्रसूयन्ते सर्गप्रलयविक्रियाः। यस्मिंश्चैव प्रलीयन्ते यन्मयास्तच्चिदम्बरम् ॥ १६ ॥

yasmātsarvāḥ prasūyante sargapralayavikriyāḥ | yasmiṃścaiva pralīyante yanmayāstaccidambaram || 16 ||

From which all creations, dissolutions, and transformations arise, and into which they dissolve, that is the supreme consciousness.

जिससे सभी सृष्टि, प्रलय और विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं, और जिसमें वे विलीन हो जाती हैं, वह चिदम्बरम् है।

7.106.17

निद्रायां विनिवृत्तायां यतो विश्वं प्रवर्तते। निवर्तते च यच्छान्तौ तच्चिदम्बरमुच्यते ॥ १७ ॥

nidrāyāṃ vinivṛttāyāṃ yato viśvaṃ pravartate | nivartate ca yacchāntau taccidambaramucyate || 17 ||

When sleep is withdrawn, the universe manifests, and it dissolves in peace. That is called the supreme consciousness.

जब निद्रा समाप्त होती है, तब विश्व प्रकट होता है, और शान्ति में विलीन हो जाता है। वह चिदम्बरम् कहलाता है।

7.106.18

यस्योन्मेषनिमेषाभ्यां जगत्सत्तालयोदयौ । स्वानुभूत्यात्मकं स्वान्तः स्थितं तद्विद्धिचिन्नभः ॥ १८ ॥

yasyonmeṣanimemṣābhyāṃ jagatsattālayodayau | svānubhūtyātmakaṃ svāntaḥ sthitaṃ tadviddhicinnabhaḥ || 18 ||

By the opening and closing of whose eyes, the world appears and disappears. Know that to be the supreme consciousness, which is experienced within oneself.

जिसके नेत्रों के खुलने और बन्द होने से जगत् प्रकट और अप्रकट होता है। उसे चिन्नभः जानो, जो अपने अन्दर अनुभव किया जाता है।

7.106.19

नेदं नेदं तदित्येवं सर्वं निर्णीय सर्वथा । यन्न किंचित्सदा सर्वं तच्चिद्व्योमेति कथ्यते ॥ १९ ॥

nedaṃ nedaṃ tadityevaṃ sarvaṃ nirṇīya sarvathā | yanna kiṃcitsadā sarvaṃ taccidvyometi kathyate || 19 ||

By negating everything as 'not this, not this,' and determining that nothing is real, that which remains is called the supreme consciousness.

सब कुछ 'नहीं यह, नहीं यह' कहकर नकार देने पर, और यह निर्धारित करने पर कि कुछ भी वास्तविक नहीं है, जो बचता है उसे चिद्व्योम कहते हैं।

7.106.20

देशाद्देशान्तरप्राप्तौ यन्मध्ये संविदो वपुः । दूरतोऽर्धनिमेषेण तच्चिन्मात्रवपुः स्मृतम् ॥ २० ॥

deśāddeśāntaraprāptau yanmadhye saṃvido vapuḥ | dūrato'rdhanimeṣeṇa taccinmātravapuḥ smṛtam || 20 ||

In the transition from one place to another, the form of consciousness that exists in the middle is known as the form of pure consciousness, which is realized in half a blink of an eye from a distance.

एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने में, जो चेतना का रूप बीच में होता है, वह शुद्ध चेतना का रूप कहलाता है, जो दूर से आधे पलक झपकने में अनुभव किया जाता है।

7.106.21

विश्वं तन्मयमेवेदं यथा भूतं यथा स्थितम् । रूपालोकमनस्कारैर्युक्तमप्येवमीदृशम् ॥ २१ ॥

viśvaṃ tanmayamevedaṃ yathā bhūtaṃ yathā sthitam | rūpālokamanaskārairyuktamapyevamīdṛśam || 21 ||

This entire universe is pervaded by That (Brahman) alone, as it exists and as it is established | Even though it is endowed with forms, perceptions, and mental impressions, it is still of this nature

यह सम्पूर्ण विश्व उसी (ब्रह्म) से व्याप्त है, जैसा कि यह है और जैसा कि यह स्थापित है | यद्यपि यह रूप, अलोक (दृष्टि), और मनस्कारों से युक्त है, फिर भी यह ऐसा ही है

7.106.22

ईषदुन्मेषणादेतदन्यतामिव गच्छति । अनन्यरूपमपि सच्चिद्व्योम विमलाकृति ॥ २२ ॥

īṣadunmeṣaṇādetadanyatāmiva gacchati | ananyarūpamapi saccidvyoma vimalākṛti || 22 ||

Due to a slight awakening, this (universe) appears to be different | Although it is of a non-dual nature, it is the pure form of existence, consciousness, and bliss

एक छोटी सी जागृति के कारण, यह (विश्व) अलग प्रतीत होता है | यद्यपि यह अद्वैत स्वरूप का है, यह अस्तित्व, चेतना और आनंद का शुद्ध रूप है

7.106.23

पश्यन्नेवेन्द्रियैरर्थान्नूनं निर्वासनाशयः । प्रबुद्ध एवैकघनः सुषुप्तावस्थितो भव ॥ २३ ॥

paśyannenendriyairarthānnūnaṃ nirvāsanāśayaḥ | prabuddha evaikaghanaḥ suṣuptāvasthito bhava || 23 ||

Even while seeing objects with the senses, one should have the intention of renunciation | Being awake, one should remain established in the state of deep sleep, being one with the non-dual reality

इंद्रियों द्वारा वस्तुओं को देखते हुए भी, एक को त्याग का इरादा होना चाहिए | जाग्रत अवस्था में होते हुए, एक को अद्वैत वास्तविकता के साथ एक होकर गहरी नींद की अवस्था में स्थित रहना चाहिए

7.106.24

निर्वासनः शान्तमना वद व्रज पिबाहर । पाषाण इव संजीवो नित्यं सुघनमौनवान् ॥ २४ ॥

nirvāsanaḥ śāntamanā vada vraja pibāhara | pāṣāṇa iva saṃjīvo nityaṃ sughanamounavān || 24 ||

Free from desires, with a peaceful mind, speak, move, eat, and drink | Like a stone, always be alive and deeply silent

इच्छाओं से मुक्त, शांत मन से, बोलो, चलो, खाओ, और पीओ | पत्थर की तरह, हमेशा जीवित और गहरी चुप्पी में रहो

7.106.25

इदं न संभवत्येव दृश्यं पश्यसि यत्पुरः । मृगतृष्णाजलमिव द्वैतमिन्दाविवोदितम् ॥ २५ ॥

idaṃ na saṃbhavatyeva dṛśyaṃ paśyasi yatpuraḥ | mṛgatṛṣṇājalamiva dvaitamindāvivotitam || 25 ||

This (world) does not truly exist, whatever you see in front of you | Like the mirage water, duality is said to have arisen in the moon

यह (विश्व) वास्तव में नहीं है, जो कुछ भी आप अपने सामने देखते हैं | मृगतृष्णा जल की तरह, द्वैत चाँद में उत्पन्न हुआ माना जाता है

7.106.26

इदमादावनुत्पन्नं कारणाभावतः किल । कारणेन विना कार्यं न हि नामोपपद्यते ॥ २६ ॥

idamādāvanutpannaṃ kāraṇābhāvataḥ kila | kāraṇena vinā kāryaṃ na hi nāmopapadyate || 26 ||

In the beginning, this was not produced due to the absence of cause | Indeed, an effect does not occur without a cause

आदि में, यह कारण के अभाव से उत्पन्न नहीं हुआ | वास्तव में, कारण के बिना कार्य नहीं होता

7.106.27

यद्वोपपद्यते किंचित्तदकारणकोद्भवम् । यथास्थितं परं रूपमुद्भूतमिव लक्ष्यते ॥ २७ ॥

yadvopapadyate kiñcittadakāraṇakodbhavam | yathāsthitaṃ paraṃ rūpamudbhūtamiva lakṣyate || 27 ||

Whatever occurs, that arises without a cause | It appears as if it has arisen in its true form

जो भी होता है, वह कारण के बिना उत्पन्न होता है | वह अपने वास्तविक रूप में उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है

7.106.28

तद्यथास्थितमेवाङ्ग पूर्वरूपमवस्थितम् । भवत्यद्वयमेवाच्छं द्वयेनाप्युपलक्षितम् ॥ २८ ॥

tadyathāsthitamevāṅga pūrvarūpamavasthitam | bhavatyadvayamevācchaṃ dvayenāpyupalakṣitam || 28 ||

That, as it is, remains in its original form | It becomes non-dual, pure, even though perceived as dual

वह, जैसा कि है, अपने मूल रूप में रहता है | यह अद्वैत, शुद्ध बन जाता है, भले ही यह द्वैत के रूप में देखा जाता हो

7.106.29

तत्रेदंप्रत्ययः प्रौढो भवत्यनुभवो हि यः । समायातमिदं भ्रान्तं तत्स्वप्नस्त्रीसमं विदुः ॥ २९ ॥

tatredaṃpratyaḥ prauḍho bhavatyanubhavo hi yaḥ | samāyātamidaṃ bhrāntaṃ tatsvapnastrīsamaṃ viduḥ || 29 ||

There, this strong conviction arises from experience | This is considered delusional, like a dream or an illusory woman

वहाँ, यह मजबूत विश्वास अनुभव से उत्पन्न होता है | यह भ्रामक माना जाता है, जैसे स्वप्न या भ्रामक स्त्री

7.106.30

तस्माद्दृश्यं न चोत्पन्नं नैवास्ति न भविष्यति । न च नश्यति यन्नास्ति तस्य किं नाम नश्यति ॥ ३० ॥

tasmāddṛśyaṃ na cotpannaṃ naivāsti na bhaviṣyati | na ca naśyati yannāsti tasya kiṃ nāma naśyati || 30 ||

Therefore, the visible is not produced, does not exist, will not be, nor does it perish | What does not exist, how can it perish

इसलिए, दृश्य न उत्पन्न होता है, न अस्तित्व में है, न होगा, न नष्ट होता है | जो नहीं है, वह कैसे नष्ट हो सकता है

7.106.31

तत्तदेव परं शान्तं चिद्व्योमैव तथा स्थितम् । स्वरूपादच्युतं स्वस्थं सौम्यं जगदिवोदितम् ॥ ३१ ॥

tattadeva paraṃ śāntaṃ cidvyomaiva tathā sthitam | svarūpādacyutaṃ svasthaṃ saumyaṃ jagadivoditam || 31 ||

That alone is the supreme, peaceful, and pure consciousness, which is established in its own nature, unchanging, calm, and benevolent, as if the world is spoken of.

वही परम, शान्त, और चिद्व्योम (चेतना का आकाश) है, जो अपने स्वरूप में स्थित है, अचल, स्वस्थ, और सौम्य है, मानो संसार कहा गया हो।

7.106.32

न हीदमग्रे यद्दृष्टं दृश्यं तत्सत्कदाचन । न चापि द्रष्टा दृष्टार्थाभावे क्व द्रष्टृता किल ॥ ३२ ॥

na hīdamagre yaddṛṣṭaṃ dṛśyaṃ tatsatkadācana | na cāpi draṣṭā dṛṣṭārthābhāve kva draṣṭṛtā kila || 32 ||

This which was seen before is not real at any time. If there is no object of perception, where is the existence of the perceiver?

यह जो पहले देखा गया था, वह कभी भी सत्य नहीं है। यदि दृश्य का अभाव है, तो द्रष्टा की सत्ता कहाँ है?

7.106.33

श्रीराम उवाच । एवं चेत्तद्वद ब्रह्मन्द्रष्टृदृश्यावभासनम् । किमिदं कथमाभाति भूयोऽपि वदतांवर ॥ ३३ ॥

śrīrāma uvāca | evaṃ cet tadvad brahmandrāṣṭṛdṛśyāvabhāsanam | kimidaṃ kathamābhāti bhūyo'pi vadatāṃvara || 33 ||

Sri Rama said: If it is so, then explain, O Brahman, the manifestation of the perceiver and the perceived. What is this and how does it appear? Please explain further, O best of speakers.

श्री राम ने कहा: यदि ऐसा है, तो हे ब्रह्मन्, द्रष्टा और दृश्य के प्रकटीकरण की व्याख्या करें। यह क्या है और यह कैसे प्रकट होता है? कृपया और विस्तार से समझाएँ, हे वक्ताओं में श्रेष्ठ।

7.106.34

श्रीवसिष्ठ उवाच । असद्रूपस्य दृश्यस्य कारणाभावतः सदा । दृश्यतास्येत्यपि प्रौढिनिर्देशस्यात्यसंभवात् ॥ ३४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asadrūpasya dṛśyasya kāraṇābhāvataḥ sadā | dṛśyatāsyetyapi prauḍhinirdeśasyātyasaṃbhāvāt || 34 ||

Sri Vasistha said: Due to the lack of cause, the perceived, which is of an unreal nature, is always non-existent. Even the indication of its perception is highly impossible.

श्री वसिष्ठ ने कहा: कारण के अभाव के कारण, जो असत् स्वरूप का है, दृश्य हमेशा असत् है। इसकी दृश्यता का संकेत भी अत्यंत असंभव है।

7.106.35

यदिदं भासते किंचिद्द्रष्टृदृश्यभ्रमात्मकम् । जगदादि परं रूपं तद्विद्धि परमात्मनः ॥ ३५ ॥

yadidaṃ bhāsate kiṃcid draṣṭṛdṛśyabhramātmakam | jagadādi paraṃ rūpaṃ tadviddhi paramātmanaḥ || 35 ||

Whatever appears here is an illusion of the perceiver and the perceived. Know that to be the supreme form of the Paramatman, the origin of the universe.

जो कुछ भी यहाँ प्रकट होता है, वह द्रष्टा और दृश्य का भ्रम है। उसे परमात्मा का परम रूप समझें, जो संसार की उत्पत्ति है।

7.106.36

स्वप्ने चिन्मात्र एवास्ते यथा गगनकाननम् । तथा जगत्तया भाति स्वयं चिन्मात्रमात्मनि ॥ ३६ ॥

svapne cinmātra evāste yathā gaganakānanam | tathā jagattayā bhāti svayaṃ cinmātramātmani || 36 ||

In a dream, only consciousness exists, like a forest in the sky | Similarly, the world appears as consciousness itself

स्वप्न में केवल चेतना ही है, जैसे आकाश में वन | इसी प्रकार, जगत स्वयं चेतना के रूप में प्रकट होता है

7.106.37

इहादिसर्गात्प्रभृति नास्त्युपादानकारणम् । किंचनापि क्वचिदपि भातीत्थं ब्रह्म केवलम् ॥ ३७ ॥

ihādisargātprabhṛti nāstyupādānakāraṇam | kiṃcanāpi kvacidapi bhātītthaṃ brahma kevalam || 37 ||

From the beginning of creation, there is no material cause | Nothing whatsoever appears anywhere, only Brahman exists

सृष्टि के आरंभ से, कोई भौतिक कारण नहीं है | कहीं भी कुछ भी नहीं दिखता, केवल ब्रह्म है

7.106.38

यच्चिदाकाशकचनं स्वयमात्मनि जृम्भते । तदिदं भाति तस्यैव जगदित्युदितं वपुः ॥ ३८ ॥

yaccidākāśakacanaṃ svayamātmani jṛmbhate | tadidaṃ bhāti tasyaiva jagadityuditaṃ vapuḥ || 38 ||

That which is the space of consciousness, blossoms in the self | That indeed appears as the manifested form of the world

जो चेतना का आकाश है, वह स्वयं आत्मा में खिलता है | वही जगत के रूप में प्रकट होता है

7.106.39

यथा भावस्य भावत्वं यथा शून्यस्य शून्यता । आकारिणो यथाकारस्तथा चिन्नभसो जगत् ॥ ३९ ॥

yathā bhāvasya bhāvatvaṃ yathā śūnyasya śūnyatā | ākāriṇo yathākāras tathā cinnabhaso jagat || 39 ||

As the nature of existence is existence itself, as the emptiness of emptiness is emptiness | So is the world the form of the sky of consciousness

जैसे अस्तित्व का स्वभाव अस्तित्व ही है, जैसे शून्यता की शून्यता शून्यता ही है | वैसे ही जगत चेतना के आकाश का रूप है

7.106.40

इदं विद्धि चिदाभासं परमार्थघनं घनम्। इत्थं स्थितं स्वयं भातं द्रष्टृदृश्यदृगात्मकम्॥ ४०॥

idaṃ viddhi cidābhāsaṃ paramārthaghaṇaṃ ghaṇam | itthaṃ sthitaṃ svayaṃ bhātaṃ draṣṭṛdṛśyadṛgātmakam || 40 ||

Know this to be the reflection of consciousness, dense with ultimate reality | Thus established, it appears by itself, consisting of the seer, the seen, and the act of seeing

इसे चेतना का प्रतिबिम्ब समझो, परम वास्तविकता से भरा हुआ | इस प्रकार स्थापित, यह स्वयं प्रकट होता है, द्रष्टा, दृश्य और दर्शन से बना हुआ

7.106.41

वस्तुतस्तु द्वयाभावान्नाभासि न च भासनम्। किमपीदमनिर्देश्यं सद्वाऽसद्वेति वेत्ति कः॥ ४१॥

vastutastu dvayābhāvānnābhāsi na ca bhāsanam | kimapīdamanirdeśyaṃ sadvā'sadveti vetti kaḥ || 41 ||

In reality, there is no duality; neither is there any appearance nor any manifestation. What is this indescribable thing? Who knows whether it is real or unreal?

वास्तव में, द्वैत नहीं है; न तो कोई अभास है और न ही कोई भासना है। यह क्या अवर्णनीय चीज़ है? कौन जानता है कि यह सत्य है या असत्य?

7.106.42

श्रीराम उवाच। एवं चेत्तद्वद ब्रह्मन्कार्यकारणतादिकः। कथं भेदः किमायातः कथं सत्यत्वमागतः॥ ४२॥

śrīrāma uvāca | evaṃ cet tadvad brahmann kāryakāraṇatādikaḥ | kathaṃ bhedaḥ kimāyātaḥ kathaṃ satyatvamāgataḥ || 42 ||

Sri Rama said: If this is so, O Brahman, how does the distinction of cause and effect arise? How does difference come about, and how does truthfulness arise?

श्री राम ने कहा: यदि ऐसा है, हे ब्रह्मन्, कारण और कार्य का भेद कैसे उत्पन्न होता है? भेद कैसे आता है, और सत्यता कैसे आती है?

7.106.43

श्रीवसिष्ठ उवाच। चित्प्रकाशो यथाभानं यदा भावयति स्वयम्। स्वात्मा तथा तदेवाशु पश्यसीत्यसि दृष्टवान्॥ ४३॥

śrīvasiṣṭha uvāca | citprakāśo yathābhānaṃ yadā bhāvayati svayam | svātmā tathā tadevāśu paśyasītyasi dṛṣṭavān || 43 ||

Sri Vasistha said: When the pure consciousness itself contemplates as it is, then one sees oneself as that immediately.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब शुद्ध चेतना स्वयं उसी प्रकार से सोचती है, तो वह तुरंत अपने आप को उसी रूप में देखती है।

7.106.44

चिद्व्योमैवायमाकारः स्वे व्योम्येव न मुह्यति। स्वयमेव यथा स्वप्ने कोऽस्य पर्यनुयोगकृत्॥ ४४॥

cadvyomaivāyamākāraḥ sve vyomnyeva na muhyati | svayameva yathā svapne ko'sya paryanuyogakṛt || 44 ||

This form is indeed the very sky of consciousness; it does not get confused in its own sky. Just as in a dream, who is the pursuer?

यह रूप वास्तव में चेतना का ही आकाश है; यह अपने आकाश में भ्रमित नहीं होता। जैसे स्वप्न में, कौन पीछा करने वाला है?

7.106.45

भावाद्भावान्तरप्राप्तौ मध्ये यत्संविदो वपुः। तच्चिद्व्योम तदेवेदं सर्वं च स्थिति नेतरत्॥ ४५॥

bhāvādbhāvāntaraprāptau madhye yatsaṃvido vapuḥ | taccidvyoma tadevedaṃ sarvaṃ ca sthiti netarat || 45 ||

In the transition from one state to another, the form of consciousness is the very sky of consciousness. That alone is everything, and there is nothing else.

एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तन के दौरान, चेतना का रूप चेतना का ही आकाश है। वही सब कुछ है, और कुछ नहीं।

7.106.46

कार्यकारणभावादिदृशोऽविद्याविजृम्भिकाः । जगद्वत्कल्पयत्येष कोऽस्य पर्यनुयोगकृत् ॥ ४६ ॥

kāryakāraṇabhāvādidṛśo'vidyāvijṛmbhikāḥ | jagadvatkalpayatyeṣa ko'sya paryanuyogakṛt || 46 ||

Due to the relationship of cause and effect, and other such illusions born of ignorance, this world is imagined. Who can question this?

कारण और कार्य के संबंध आदि से अज्ञान के कारण यह जगत कल्पित है। इसका पर्यनुयोग कौन करे?

7.106.47

द्रष्टा भोक्ताथ कर्ता वा कश्चित्स्यादितरो यदि । तत्कथं किमिदं दृश्यमिति युज्येत नान्यथा ॥ ४७ ॥

draṣṭā bhoktātha kartā vā kaścitsyāditaro yadi | tatkathaṃ kimidaṃ dṛśyamiti yujyeta nānyathā || 47 ||

If there is any seer, enjoyer, or doer, how can this be perceived otherwise?

यदि कोई द्रष्टा, भोक्ता या कर्ता है, तो यह कैसे दूसरे ढंग से दृश्य हो सकता है?

7.106.48

यत्र स्वप्ने निराभासं चिद्व्योमैव विराजते । शुद्धमेकमनेकात्म तत्र किं क्व विकल्प्यते ॥ ४८ ॥

yatra svapne nirābhāsaṃ cidvyomaiava virājate | śuddham ekam anekātma tatra kiṃ kva vikalpyate || 48 ||

In the dream state, where only the pure, non-dual consciousness shines without any appearance, what can be imagined there?

स्वप्न अवस्था में, जहाँ केवल शुद्ध, अद्वैत चेतना बिना किसी आभास के चमकती है, वहाँ क्या कल्पना की जा सकती है?

7.106.49

आस्वयंभुव एवेयं चिन्मात्रे भाति सर्गभाः । परिज्ञाता सती सा तु ब्रह्मैव भवति क्षणात् ॥ ४९ ॥

āsvayaṃbhuvaiaveyaṃ cinmātre bhāti sargabhāḥ | parijñātā satī sā tu brahmaiva bhavati kṣaṇāt || 49 ||

This creation appears in pure consciousness itself. When it is known, it immediately becomes Brahman.

यह सृष्टि शुद्ध चेतना में ही प्रकट होती है। जब यह ज्ञात होती है, तो यह तुरंत ब्रह्म बन जाती है।

7.106.50

एषैव त्वपरिज्ञाता भ्रान्तिर्मायेति कथ्यते । जगदित्युच्यते विद्या दृश्यमित्युपवर्ण्यते ॥ ५० ॥

eṣaiva tvapariñjñātā bhrāntirmāyeti kathyate | jagadityucyate vidyā dṛśyamityupavarṇyate || 50 ||

This very creation, when not known, is called illusion (māyā). It is referred to as the world (jagat) and is described as the perceived (dṛśyam).

यही सृष्टि, जब ज्ञात नहीं होती, भ्रांति (माया) कहलाती है। इसे जगत कहा जाता है और दृश्य के रूप में वर्णित किया जाता है।

7.106.51

चिदाकाशप्रकाशेन चित्ता दृश्यपिशाचकः । वेतालो बालकेनेव बुद्धोऽसन्नेव सन्निव ॥ ५१ ॥

cidākāśaprakāśena cittā dṛśyapiśācakaḥ | vetālo bālakeneva buddho'sanneva sanniva || 51 ||

By the light of the consciousness-space, the mind appears like a ghost, a demon, a vampire, or a child, and the enlightened one appears as if present though absent.

चिदाकाश के प्रकाश से, मन एक भूत, पिशाच, वेताल या बालक की तरह दिखता है, और बुद्ध व्यक्ति उपस्थित होने के बावजूद अनुपस्थित लगता है।

7.106.52

जगत्तात्मन्यसत्यापि चिद्व्योम्नैवानुभूयते । सत्येव साङ्गलेखेव स्वप्नेऽद्रिपुरता यथा ॥ ५२ ॥

jagattātmanyasatyāpi cidvyomnaivānubhūyate | satyeva sāṅgalekheva svapne'dripuratā yathā || 52 ||

Even though the world is unreal in the Self, it is experienced as real in the consciousness-space, like a castle in the air seen in a dream.

यद्यपि संसार आत्मा में असत्य है, फिर भी चेतना-आकाश में वह वास्तविक की तरह अनुभव किया जाता है, जैसे स्वप्न में देखी गई हवाई महल।

7.106.53

अहमद्रिरहं रुद्रः समुद्रोऽहमहं विराट् । चेत्यते खे चितैवेति स्वप्नेऽद्रिपुरता यथा ॥ ५३ ॥

ahamadrirahaṃ rudraḥ samudro'hamahaṃ virāṭ | cetyate khe citaiveti svapne'dripuratā yathā || 53 ||

I am the mountain, I am Rudra, I am the ocean, I am Virat. It is thought in the sky, in consciousness alone, like a castle in the air seen in a dream.

मैं पर्वत हूँ, मैं रुद्र हूँ, मैं समुद्र हूँ, मैं विराट हूँ। यह आकाश में, चेतना में ही सोचा जाता है, जैसे स्वप्न में देखी गई हवाई महल।

7.106.54

आकारि कारणाभावाज्जातं कार्यं न किंचन । महाप्रलयचिद्व्योम्नि चित्स्थितेत्थमिदन्तया ॥ ५४ ॥

ākāri kāraṇābhāvājjātaṃ kāryaṃ na kiṃcana | mahāpralayacidvyomni cittsthithettamidantayā || 54 ||

Due to the absence of a cause, no effect is produced. In the great dissolution, consciousness alone remains, thus it is concluded.

कारण के अभाव के कारण, कोई परिणाम उत्पन्न नहीं होता। महाप्रलय में, केवल चेतना ही बचती है, इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जाता है।

7.106.55

अकारणकमेवेदं व्योम व्योम्नानुभूयते । जगदित्येव शून्याङ्गं चिन्मात्रात्म चिदात्मनि ॥ ५५ ॥

akāraṇakamevedaṃ vyoma vyomnānubhūyate | jagadityeva śūnyāṅgaṃ cinmātrātma cidātmani || 55 ||

This causeless space is experienced as space itself. The world, though empty, is experienced as the self of pure consciousness.

यह कारणहीन आकाश आकाश के रूप में ही अनुभव किया जाता है। यद्यपि संसार शून्य है, फिर भी यह शुद्ध चेतना के आत्मा के रूप में अनुभव किया जाता है।

7.106.56

सर्व एव जडा जीर्णा दर्पणा इव जन्तवः । समीपगत एवान्तः कुर्वतस्तु विचारणम् ॥ ५६ ॥

sarva eva jaḍā jīrṇā darpaṇā iva jantavaḥ | samīpagata evāntaḥ kurvatastu vicāraṇam || 56 ||

All beings are like dull, worn-out mirrors; only those who come close and introspect.

सभी जीव मंद, पुराने दर्पणों की तरह हैं; केवल वे जो निकट आते हैं और अंतर्दृष्टि करते हैं।

7.106.57

तत्तत्स्वरूपमुत्सृज्य बुद्ध्वा चिन्मात्रखं जगत् । अश्मना चेतनेनैव स्थेयं नास्थेतरोत्तमा ॥ ५७ ॥

tattatsvarūpamutsṛjya buddhvā cinmātrakhaṃ jagat | aśmanā cetanenaiva stheyaṃ nāsthetarottamā || 57 ||

Abandoning various forms, knowing the world as pure consciousness, one should remain steadfast with the conscious self, not with anything else.

विभिन्न रूपों को छोड़कर, संसार को शुद्ध चेतना के रूप में जानकर, कोई चेतन आत्मा के साथ स्थिर रहना चाहिए, किसी अन्य चीज के साथ नहीं।

7.106.58

यथास्ते चलयद्देहं वार्यावर्तजगद्भ्रवः । चेततीति तथा चित्त्वं स्थिता चित्तज्जगद्दृशा ॥ ५८ ॥

yathāste calayaddehaṃ vāryāvartajagaddravaḥ | cetatīti tathā cittvaṃ sthitā cittajjagaddṛśā || 58 ||

Just as the worldly flow moves the body, so does consciousness remain established in the worldly view.

जैसे संसारिक प्रवाह शरीर को चलाता है, वैसे ही चेतना संसारिक दृष्टि में स्थिर रहती है।

7.106.59

यथा कल्पद्रुमोऽभीष्टं कुर्याच्चिन्तामणिर्यथा । तथा यद्भावितं स्वान्तस्तत्पूरयति चित्क्षणात् ॥ ५९ ॥

yathā kalpadrumo'bhīṣṭaṃ kuryāccintāmaṇiryathā | tathā yadbhāvitaṃ svāntastatpūrayati citkṣaṇāt || 59 ||

Just as the wish-fulfilling tree and the philosopher's stone grant desires, so does the consciousness within fulfill one's intentions instantly.

जैसे कल्पवृक्ष और पारस पत्थर इच्छाओं को पूरा करते हैं, वैसे ही अंतर्निहित चेतना तुरंत इच्छाओं को पूरा करती है।

7.106.60

चितिश्चिन्तामणिरिव कल्पद्रुम इवेप्सितम् । आशु संपादयत्यन्तरात्मनात्मनि खात्मिका ॥ ६० ॥

citiścintāmaṇiriva kalpadruma ivepsitam | āśu saṃpādayatyantarātmanātmani khātmikā || 60 ||

Consciousness, like the philosopher's stone and the wish-fulfilling tree, quickly fulfills desires within the inner self.

चेतना, पारस पत्थर और कल्पवृक्ष की तरह, अंतर्निहित आत्मा में तुरंत इच्छाओं को पूरा करती है।

7.106.61

देशाद्देशान्तरप्राप्तौ मध्यदेशे चितेर्वपुः । यत्तन्मयमिदं दृश्यं कुतो द्वैतैक्यविभ्रमः ॥ ॥ ६१ ॥

deśāddēśāntaraprāptau madhyadēśē citērvapuḥ | yattannmayamidaṁ dṛśyaṁ kutō dvaitaikyavibhramaḥ || 61 ||

When moving from one place to another, in the middle of the journey, the form of consciousness is perceived. What is this visible world but an illusion of duality and unity?

जब एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं, यात्रा के बीच में, चेतना का रूप दिखाई देता है। यह दृश्य जगत क्या है, द्वैत और एकता का भ्रम?

7.106.62

चिच्छायैवं कचत्यच्छमनन्ता भास्वरोदरा । अङ्गरिक्तापि दृश्यान्तःशून्यता नीलतेव खे ॥ ॥ ६२ ॥

cicchāyāivaṁ kacatyacchamanantā bhāsvarodarā | aṁgariktāpi dṛśyāntaḥśūnyatā nīlatēva khē || 62 ||

Thus, the shadow of consciousness shines brilliantly, infinite and radiant. Even without limbs, the emptiness within the visible is like the blueness of the sky.

इस प्रकार, चेतना की छाया उज्ज्वल रूप से चमकती है, अनन्त और प्रकाशमान। भले ही अंग न हों, दृश्य के भीतर की शून्यता आकाश की नीलता के समान है।

7.106.63

विसदृशकार्यानुभवो न भवति सहकारिकारणाभावात् । सर्गादावत आद्या चिदेव दृश्यं यथा स्वप्ने ॥ ॥ ६३ ॥

visadṛśakāryānubhavo na bhavati sahakārikāraṇābhāvāt | sargādāvata ādyā cidēva dṛśyaṁ yathā svapnē || 63 ||

Diverse experiences do not occur without the presence of aiding causes. Just as in the beginning of creation, the first consciousness is the visible, like in a dream.

विभिन्न अनुभव बिना सहायक कारणों के नहीं होते। जैसे सृष्टि के आरंभ में, पहली चेतना ही दृश्य है, जैसे स्वप्न में।

Chapter 107

7.107.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अचेत्यचिन्मयं विश्वं विष्वगाभाति चिन्नभः । अत्र चिच्चेतनं चेदं चेत्यमप्येवमात्मकम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | acetyacinmayaṃ viśvaṃ viṣvagābhāti cinnabhaḥ | atra cicetanaṃ cedaṃ cetayamapyevamātmakam || 1 ||

Shri Vasishtha said: The entire universe, which is a combination of the insentient and the conscious, shines everywhere as pure consciousness. Here, both the conscious and the insentient are of the same nature.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह सम्पूर्ण विश्व, जो अचेतन और चेतन का मिश्रण है, सर्वत्र शुद्ध चेतना के रूप में प्रकाशित होता है। यहाँ, चेतन और अचेतन दोनों ही एक ही स्वरूप के हैं।

7.107.2

अतो जीवन्नपि मृत इव सर्वोऽवतिष्ठते । असावहं च त्वं चेति जीवन्तोऽपि मृता इव ॥ २ ॥

ato jīvannapi mṛta iva sarvo'vatiṣṭhate | asāvahaṃ ca tvaṃ ceti jīvanto'pi mṛtā iva || 2 ||

Therefore, even though alive, all beings appear as if dead. 'He is I, and you are,' even though alive, they appear as if dead.

इसलिए, भले ही जीवित हों, सभी प्राणी मृत के समान प्रतीत होते हैं। 'वह मैं हूँ, और तुम हो,' भले ही जीवित हों, वे मृत के समान प्रतीत होते हैं।

7.107.3

काष्ठमौनमृता एव व्यवहारगता अपि । खगमा एव वा सर्वे भावाः स्थावरजङ्गमाः ॥ ३ ॥

kāṣṭhamauṇamṛtā eva vyavahāragatā api | khagamā eva vā sarve bhāvāḥ sthāvarajaṅgamāḥ || 3 ||

Even though engaged in worldly activities, all beings are like dead wood or birds. All entities, whether moving or stationary, are lifeless.

भले ही संसारिक गतिविधियों में लगे हुए हों, सभी प्राणी मृत लकड़ी या पक्षी के समान हैं। चाहे चलने वाले हों या स्थिर, सभी वस्तुएँ निर्जीव हैं।

7.107.4

आकाशकाचकच्यात्म यदिदं किंचिदाततम् । न किंचिदेव तद्विद्धि किंचिद्व्योम्नि कुतो भवेत् ॥ ४ ॥

ākāśakācakacyātma yadidaṃ kiṃcidātatam | na kiṃcideva tadviddhi kiṃcidvyomni kuto bhavet || 4 ||

Whatever is spread out in this universe, which is of the nature of space and glass, know that it is nothing. How can anything exist in the void?

जो कुछ भी इस विश्व में फैला हुआ है, जो आकाश और काँच के स्वरूप का है, उसे कुछ नहीं समझो। शून्य में कुछ भी कैसे हो सकता है?

7.107.5

केशोण्ड्रकनदीवाहधूमालीमौक्तिकादिवत् । यत्नं कचति तत्रास्ति नानुभूतेऽपि वस्तुता ॥ ५ ॥

keśoṇḍrakanadīvāhadhūmālīmauktikādivat | yatnaṃ kacati tatrāsti nānubhūte'pi vastutā || 5 ||

Like the reflection of a city in a mirror, effort is seen there, even though there is no actual experience of reality.

दर्पण में नगर की प्रतिबिंब की तरह, वहाँ प्रयास दिखाई देता है, भले ही वास्तविकता का कोई अनुभव न हो।

7.107.6

तथैवास्मिञ्जगन्नाम्नि चिद्व्योम्नि कचने चिते । अनुभूतेऽपि निःशून्ये कास्थास्थाभावकश्च कः ॥ ६ ॥

tathaivāsmiñjagan nāmni cidvyomni kacane cite | anubhūte'pi niḥśūnye kāsthāsthābhāvakaśca kaḥ || 6 ||

In this world, which is known as the realm of consciousness, even when it is experienced as not empty, who is the one who has the sense of 'I'?

इस जगत में, जिसे चेतना का आकाश कहते हैं, यहाँ तक कि जब यह अनुभव किया जाता है कि यह शून्य नहीं है, तब भी 'मैं' का अनुभव करने वाला कौन है?

7.107.7

चिद्वालकल्पनाजाले शून्यात्मनि निरर्थके । अवस्तुभूते पृथ्व्यादौ भ्रान्तिमात्राम्बरोदये ॥ ७ ॥

cidvālakalpanājāle śūnyātmani nirarthake | avastubhūte pṛthvyādau bhrāntimātrāmbarodaye || 7 ||

In the web of imagination of the realm of consciousness, which is essentially empty and meaningless, the earth and other elements appear as mere illusions.

चेतना के आकाश की कल्पना के जाल में, जो कि शून्य और निरर्थक है, पृथ्वी और अन्य तत्व केवल भ्रम के रूप में प्रकट होते हैं।

7.107.8

किमास्था बालका ब्रूत ममेदमहमित्यलम् । आ ज्ञातं रमते बालसंकल्पे बाल एव च ॥ ८ ॥

kimāsthā bālakā brūta mamedamahamityalam | ā jñātaṃ ramate bālasaṅkalpe bāla eva ca || 8 ||

O children, why do you say 'This is mine, I am this'? The ignorant one delights in the imagination of a child.

हे बच्चे, तुम 'यह मेरा है, मैं यह हूँ' क्यों कहते हो? अज्ञानी बच्चे की कल्पना में आनंद लेता है।

7.107.9

पृथ्व्याद्यसद्विचारैर्वा व्यर्थं यास्यति जीवितम् । किंचिच्च न ज्ञास्यति भोराकाशक्षालनोद्यतः ॥ ९ ॥

pṛthvyādyasadvicārairvā vyarthaṃ yāsyati jīvitam | kiñcicca na jñāsyati bhorākāśakṣālanodyataḥ || 9 ||

By contemplating the non-existence of the earth and other elements, life becomes futile. One will not know anything, being engaged in cleansing the empty sky.

पृथ्वी और अन्य तत्वों की असत्ता पर विचार करके, जीवन व्यर्थ हो जाता है। शून्य आकाश को साफ करने में लगे हुए व्यक्ति को कुछ भी ज्ञात नहीं होगा।

7.107.10

सहकार्यादिपूर्वाणां कारणानामभावतः । यदादावेव नोत्पन्नं तन्नामाद्य भवेत्कुतः ॥ १० ॥

sahakāryādipūrvāṇāṃ kāraṇānāmabhāvataḥ | yadādāveva notpannaṃ tannāmādya bhavetkutaḥ || 10 ||

Due to the absence of causes such as cooperative action, what has not arisen at the beginning, how can that be named or exist?

सहकारी कार्यों जैसे कारणों की अनुपस्थिति के कारण, जो शुरुआत में उत्पन्न नहीं हुआ है, वह नाम या अस्तित्व कैसे हो सकता है?

7.107.11

अजातेनासतार्थेन खेन व्यवहरन्ति ये । मूढा मृतमजातं वा तनयं पालयन्ति ते ॥ ११ ॥

ajātenāsatārtheṇa khena vyavaharanti ye | mūḍhā mṛtamajātaṃ vā tanayaṃ pālayanti te || 11 ||

Those who deal with the unborn and the non-existent as if they were real, they are fools who nurture a dead or unborn child.

जो लोग अजन्मा और असत्य को वास्तविक मानकर व्यवहार करते हैं, वे मूर्ख हैं जो एक मृत या अजन्मे बच्चे की देखभाल करते हैं।

7.107.12

कुतः पृथ्व्यादयः केन के नाम कथमुत्थिताः । चिद्व्योमेत्थमिदं शान्तं प्रकचत्यात्मनात्मनि ॥ १२ ॥

kutaḥ pṛthvyādayaḥ kena ke nāma kathamutthitāḥ | cidvyometthamidaṃ śāntaṃ prakacatyātmanātmani || 12 ||

From where do the elements like earth arise, and by whom? What are their names and how do they originate? This peaceful consciousness shines forth in the self.

पृथ्वी जैसे तत्व कहाँ से उत्पन्न होते हैं, और किसके द्वारा? उनके नाम क्या हैं और वे कैसे उत्पन्न होते हैं? यह शान्त चेतना आत्मा में प्रकट होती है।

7.107.13

कार्यकारणकालादिकल्पनाकुलचेतसाम् । एवं पृथ्व्यादयः सन्ति तैर्बालैरलमस्तु नः ॥ १३ ॥

kāryakāraṇakālādikalpanākulacetasām | evaṃ pṛthvyādayaḥ santi tairbālairalamastu naḥ || 13 ||

For those whose minds are confused by the concepts of cause, effect, time, etc., the elements like earth exist in this way. Let us have no more of such childish notions.

जिनके मन कारण, परिणाम, समय आदि के कल्पनाओं से भ्रमित हैं, उनके लिए पृथ्वी जैसे तत्व इस प्रकार अस्तित्व में हैं। ऐसी बालकों की कल्पनाओं से हमें छुटकारा मिले।

7.107.14

अपृथ्व्यादि जगन्नाम सपृथ्व्यादि च खात्मकम् । कचतीत्थं नभोरूपं स्वप्नादिष्विव चिन्मणिः ॥ १४ ॥

apṛthvyādi jagannāma sapṛthvyādi ca khātmakam | kacatīttthaṃ nabhorūpaṃ svapnādiṣviva cinmaṇiḥ || 14 ||

The world is named without elements like earth, and with elements like earth, it shines forth in the form of space, like a jewel of consciousness in dreams.

जगत का नाम पृथ्वी जैसे तत्वों के बिना और पृथ्वी जैसे तत्वों के साथ है, यह आकाश के रूप में प्रकट होता है, जैसे स्वप्नों में चेतना का रत्न।

7.107.15

अङ्गं यदेतस्य चिदम्बरस्य निराकृति स्वानुभवानुमानम् । तदेतदाभाति महीतलादिरूपेण वेद्येतिकृताभिधानम् ॥ १५ ॥

aṅgaṃ yadetasya cidambarasya nirākṛti svānubhavānumānam | tadetadābhāti mahītalādirūpeṇa vedytetikṛtābhidhānam || 15 ||

The limb of this consciousness, which is formless and known through direct experience and inference, appears in the form of the earth and other elements, described by the Vedas.

इस चेतना का अंग, जो निराकार है और स्वानुभव और अनुमान से जाना जाता है, पृथ्वी और अन्य तत्वों के रूप में प्रकट होता है, जिसे वेदों द्वारा वर्णित किया गया है।

Chapter 108

7.108.1

श्रीराम उवाच । अविद्या दृश्यरूपेयं कचन्ती यस्य विद्यते । चिन्नभःस्वप्ननगरी दृश्यमानापि शून्यकम् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | avidyā dṛśyarūpeyaṃ kacantī yasya vidyate | cinnabhaḥsvapnanagarī dṛśyamānāpi śūnyakam || 1 ||

Shri Ram said: This visible form of ignorance is like a dream city seen in the sky, even though it appears to be empty.

श्री राम ने कहा: यह दृश्यरूप अविद्या आकाश में दिखने वाली स्वप्न नगरी की तरह है, जो खाली दिखाई देती है।

7.108.2

तस्याज्ञस्य कियत्कालं किंरूपा स्यात्किमात्मिका । कियती सा च वेत्येवं मुने मे कथ्यतां पुनः ॥ २ ॥

tasyājñasya kiyatkālaṃ kiṃrūpā syātkimātmikā | kiyatī sā ca vetyevaṃ mune me kathyatāṃ punaḥ || 2 ||

How long does this ignorance last? What form does it take? What is its essence? O sage, please tell me again how much of it exists.

यह अज्ञान कितनी देर तक रहता है? इसका क्या रूप है? इसका क्या सार है? हे मुनि, मुझे फिर से बताएं कि इसका कितना है।

7.108.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । अविद्या विद्यते येषामज्ञानां भूतलादिका । तेषामस्यां ब्रह्मणीव नास्त्यन्तोऽत्र कथां शृणु ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | avidyā vidyate yeṣāmajñānāṃ bhūtalādikā | teṣāmasyāṃ brahmaṇīva nāstyanto'tra kathāṃ śṛṇu || 3 ||

Vasishtha said: Ignorance exists for those who are ignorant, starting from the earthly realm. For them, there is no end to it, just as there is no end to Brahman. Listen to this story.

वसिष्ठ ने कहा: अज्ञान उन अज्ञानियों के लिए है जो भूतल से शुरू होते हैं। उनके लिए, इसका कोई अंत नहीं है, जैसे कि ब्रह्म का कोई अंत नहीं है। इस कथा को सुनो।

7.108.4

सदृशं जगतोऽस्यास्ति क्वचिदम्बरकोणके । कस्मिंश्चिद्त्रिजगत्किंचिदनयैव व्यवस्थया ॥ ४ ॥

sadṛśaṃ jagato'syāsti kvacidambarakoṇake | kasmiṃścidtrijagatkiṃcidanayeva vyavasthayā || 4 ||

This world is similar to a corner of the sky, where something exists in some part of the three worlds due to this arrangement.

यह जगत आकाश के एक कोण की तरह है, जहाँ तीनों लोकों में कुछ किसी भाग में इस व्यवस्था के कारण है।

7.108.5

अस्ति कश्चिद्भुवो भागो भूषणं तत्र भूस्थितेः । पुरी ततमितिर्नाम्ना सुव्यक्तकलनाऽवनौ ॥ ५ ॥

asti kaścidbhuvo bhāgo bhūṣaṇaṃ tatra bhūsthiteḥ | purī tatamitirnāmnā suvyaktakalanā'vanau || 5 ||

There is a part of the earth which is an ornament of the earth. There is a city named Tatamiti in a very clear forest.

भूमि का एक भाग है जो भूमि का आभूषण है। एक बहुत स्पष्ट वन में एक नगर है जिसका नाम ततमिति है।

7.108.6

तत्रासीत्पार्थिवः कश्चिद्विपश्चिदिति विश्रुतः । यः सभायां सुसभ्यायां विपश्चित्त्वाद्विराजते ॥ ६ ॥

tatrāsītpārthivaḥ kaścidvipaściditi viśrutaḥ | yaḥ sabhāyāṃ susabhyāyāṃ vipaścittvādvirājate || 6 ||

There was a certain king named Vipaścit, who was famous for his wisdom. He shone in the well-assembled court due to his wisdom.

वहाँ एक राजा था जिसका नाम विपश्चित था, जो अपनी बुद्धिमत्ता के लिए प्रसिद्ध था। वह अपनी बुद्धिमत्ता के कारण सुसज्जित सभा में चमकता था।

7.108.7

राजहंस इवाब्जिन्यामृक्षचक्र इवोडुराट् । सुमेरुरिव शैलौघे यः सभायामराजत ॥ ७ ॥

rājahaṃsa ivābjinyāmṛkṣacakra ivouḍurāṭ | sumeruriva śailaugha ye sa sabhāyāmarājata || 7 ||

He shone in the assembly like a royal swan in a lotus pond, like the constellation of the Great Bear in the sky, like Mount Meru among the mountains.

वह सभा में कमल तलाब में राजहंस की तरह, आकाश में सप्तर्षि मंडल की तरह, पर्वतों में मेरु पर्वत की तरह चमकता था।

7.108.8

निवर्तते यतोऽशक्त्या वचनं गुणवर्णनात् । कवीनामचलाकारा भवेद्भा भूधरो यथा ॥ ८ ॥

nivartate yato'śaktyā vacanaṃ guṇavarṇanāt | kavīnāmacalākārā bhavedbhā bhūdharo yathā || 8 ||

The description of his qualities is so vast that it cannot be fully expressed, just as the immovable mountain cannot be moved.

उसके गुणों का वर्णन इतना विस्तृत है कि उसे पूरी तरह से व्यक्त नहीं किया जा सकता, जैसे अचल पर्वत को हिलाया नहीं जा सकता।

7.108.9

प्रातःप्रातर्विकसितात्सर्वाशाभासनोद्यतात् । यतः प्रतापजनितश्रीरुदेत्यम्बुजादिव ॥ ९ ॥

prātaḥprātarvikasitātsarvāśābhāsanodyatāt | yataḥ pratāpajanitaśrīrudetyambujādiva || 9 ||

From the early morning, as the lotus blooms, fulfilling all hopes, his glory born of splendor arises like the lotus.

प्रातःकाल से ही, जैसे कमल खिलता है और सभी आशाओं को पूरा करता है, उसी प्रकार उसकी तेजस्वी कीर्ति उदित होती है।

7.108.10

स ब्रह्मण्यमतिर्मानी वह्निमेवाधिदैवतम् । अपूजयत्समं भक्त्या देव वेत्ति स्म नेतरम् ॥ १० ॥

sa brahmaṇyamatirmānī vahnimevādhidaivatam | apūjayatsamaṃ bhaktyā deva vetti sma netaram || 10 ||

He, who had a devotion to Brahmins and was wise, worshipped fire as the supreme deity with equal devotion. The gods knew this, not others.

वह, जिसकी ब्राह्मणों के प्रति भक्ति थी और जो बुद्धिमान था, अग्नि को परम देवता के रूप में समान भक्ति से पूजता था। देवताओं को यह पता था, दूसरों को नहीं।

7.108.11

समत्स्यमकरव्यूहा गजवाजिगणान्विताः । आवर्तचक्रव्यूहाढ्याः कल्लोलबलमालिताः ॥ ११ ॥

samatsyamakaravyūhā gajavājigaganvitāḥ | āvartacakravyūhāḍhyāḥ kallolabalamālitāḥ || 11 ||

The army formations resembling fish and crocodiles, accompanied by elephants and horses, are adorned with whirling formations and surrounded by powerful waves.

समुद्र के मछली और मगरमच्छ के समान सेना व्यूह, हाथियों और घोड़ों से युक्त, भंवर जैसे व्यूहों से सुशोभित और शक्तिशाली तरंगों से घिरे हुए हैं।

7.108.12

मर्यादापालने युक्ता अकम्पनबलाधिकाः । मन्त्रिष्वप्यस्य चत्वारो दिक्षु सत्सागरा इव ॥ १२ ॥

maryādāpālane yuktā akampanabalādhikāḥ | mantriṣvapyasya catvāro dikṣu satsāgarā iva || 12 ||

Bound by the observance of limits, they are endowed with unshakable strength. Even the ministers in all four directions are like the vast oceans.

सीमाओं का पालन करने वाले, वे अटल शक्ति से संपन्न हैं। चारों दिशाओं में मंत्रियों तक विशाल सागरों के समान हैं।

7.108.13

तैरशेषककुप्चक्रनाभिराभासितावनिः । आसीत्सुदुर्जयो जेता स सुदर्शनचक्रवत् ॥ १३ ॥

tairaśeṣakakupcakranābhirābhāsitāvaniḥ | āsītsudurjayo jetā sa sudarśanacakravat || 13 ||

The earth was illuminated by their countless formations resembling the navel of the universe. He was a victor, difficult to conquer, like the Sudarshana Chakra.

उनके अनगिनत व्यूहों से, जो ब्रह्माण्ड के नाभि के समान थे, पृथ्वी प्रकाशित हो गई। वह एक विजेता था, जो जीतना कठिन था, सुदर्शन चक्र के समान।

7.108.14

तमेकदा ययौ पूर्वदिङ्मुखाच्चतुरश्चरः । स उवाच रहो रंहोगतिघोराक्षरं वचः ॥ १४ ॥

tamekadā yayau pūrvadiṅmukhāccaturascaraḥ | sa uvāca raho raṃhogatighorākṣaraṃ vacaḥ || 14 ||

Once, a spy came from the east and spoke secretly in a harsh and terrifying manner.

एक बार, एक जासूस पूर्व दिशा से आया और गुप्त रूप से कठोर और भयानक शब्दों में बोला।

7.108.15

देव दोर्द्रुमविश्रान्तधरागोबन्धनाच्युत । श्रूयतां मन्मुखात्पश्चाद्यथाप्राप्तं विधीयताम् ॥ १५ ॥

deva dordrumaviśrāntadharāgobandhanācyuta | śrūyatāṃ manmukhātpascādyathāprāptaṃ vidhīyatām || 15 ||

O Lord, who is the support of the earth resting on the shoulders of the celestial tree, listen to my words and act accordingly.

हे देव, जो आकाशीय वृक्ष के कंधे पर विश्राम करने वाली पृथ्वी का आधार है, मेरे शब्दों को सुनें और अनुसार कार्य करें।

7.108.16

पूर्वदिङ्मुखसामन्तो ज्वरेणास्तमुपागतः । मन्ये जेतुं यमं यातस्त्वयारब्धो जितारिणा ॥ १६ ॥

pūrvadiṅmukhasāmanto jvareṇāstamupāgataḥ | manye jetuṃ yamaṃ yātastvayārabdho jitāriṇā || 16 ||

The eastern king, afflicted by fever, has reached his end. I believe he has gone to conquer Yama, the god of death, having been defeated by you, the conqueror of enemies.

पूर्व का राजा, ज्वर से पीड़ित, अपने अंत तक पहुंच गया है। मैं सोचता हूं कि वह यम, मृत्यु के देवता, को जीतने के लिए गया है, आपके द्वारा पराजित होने के बाद, शत्रुओं के विजेता।

7.108.17

तस्मिन्समन्ततो जेतुं दक्षिणापथनायकः । पूर्वापराभ्यामाक्रम्य बलाभ्यामरिणाऽऽहतः ॥ १७ ॥

tasminsamantato jetuṃ dakṣiṇāpathanāyakaḥ | pūrvāparābhyāmākramya balābhyāmarīṇā'hatāḥ || 17 ||

The southern king, attempting to conquer from all sides, was struck down by the enemy with forces from the east and the west.

दक्षिण का राजा, सब ओर से जीतने की कोशिश करते हुए, पूर्व और पश्चिम की सेनाओं द्वारा शत्रु के हाथों मारा गया।

7.108.18

तस्मिन्मृते समागम्य यावद्वारुणदिक्पतिः । बलेनायाति ककुभौ ते समादातुमादृतः ॥ १८ ॥

tasminmṛte samāgamya yāvadvāruṇadikpatiḥ | balenāyāti kakubhau te samādātumādṛtaḥ || 18 ||

After his death, the lord of the western direction, coming with his army, was eager to seize those two directions.

उसकी मृत्यु के बाद, पश्चिम दिशा का स्वामी, अपनी सेना के साथ आया, और उन दो दिशाओं को पाने के लिए उत्सुक था।

7.108.19

पूर्वदेशनृपैः सार्धं दक्षिणापथपार्थिवैः । तावदेवारिभिरसावर्धमार्गे रणे हतः ॥ १९ ॥

pūrvadeśanṛpaiḥ sārdhaṃ dakṣiṇāpathapārthivaiḥ | tāvadevāribhirasāvardhamārge raṇe hataḥ || 19 ||

Along with the kings of the eastern region and the rulers of the southern path, he was killed in battle on the way by the enemies.

पूर्व क्षेत्र के राजाओं और दक्षिण पथ के शासकों के साथ, वह रास्ते में शत्रुओं द्वारा युद्ध में मारा गया।

7.108.20

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथास्मिन्कथयत्येवं त्वरार्तमपरश्चरः । उपप्लवजडोत्पीड इव हर्म्यं विवेश ह ॥ २० ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athāsminkathayatyevaṃ tvarārtamaparaścaraḥ | upaplavajaḍotpīḍa iva harmyaṃ viveśa ha || 20 ||

Shri Vasishtha said: While he was speaking thus, another messenger, hurried and distressed, entered the palace like one afflicted by a sudden calamity.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब वह ऐसे कह रहा था, एक और दूत, जल्दबाजी और परेशान, महल में घुस गया, जैसे कि किसी अचानक आपदा से पीड़ित हो।

7.108.21

चर उवाच । उत्तराशाबलाध्यक्षो देवारिभिरुपद्रुतः । इत आयाति सबलो भग्नसेत्वम्बुपूरवत् ॥ २१ ॥

cara uvāca | uttarāśābalādhyakṣo devāribhirupadrutaḥ | ita āyāti sabalo bhagnasetvambupūravat || 21 ||

The spy said: The commander of the northern army, attacked by the enemies of the gods, is coming here with his army, like a broken dam filled with water.

चर ने कहा: उत्तर दिशा के सेना के अध्यक्ष, देवताओं के शत्रुओं द्वारा आक्रान्त, अपनी सेना के साथ यहाँ आ रहे हैं, जैसे टूटी हुई बाँध से पानी भरा हुआ हो।

7.108.22

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति श्रुत्वा महीपालः कालक्षेपमवास्तवम् । मन्यमान उवाचेदं निर्गच्छन्वरमन्दिरात् ॥ २२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti śrutvā mahīpālaḥ kālakṣepamavāstavam | manyamāna uvācedaṃ nirgacchanvaramandirāt || 22 ||

Vasishtha said: Having heard this, the king, considering the delay to be real, said this while leaving the palace.

वसिष्ठ ने कहा: यह सुनकर, राजा ने देरी को वास्तविक माना और महल से निकलते हुए यह कहा।

7.108.23

राज्ञः सन्नह्य सामन्तानानीयन्तां च मन्त्रिणः । उद्घाट्यन्तां हेतिशाला दीयन्तां घोरहेतयः ॥ २३ ॥

rājñaḥ sannahya sāmantānānīyantāṃ ca mantrinaḥ | uddhāṭyantāṃ hetiśālā dīyantāṃ ghorahatayaḥ || 23 ||

The king said: Let the ministers be summoned and the feudal lords be armed. Let the armories be opened and terrible weapons be distributed.

राजा ने कहा: मन्त्रियों को बुलाया जाए और सामन्तों को हथियारों से लैस किया जाए। हथियारों के भण्डार खोले जाएँ और भयानक हथियार वितरित किए जाएँ।

7.108.24

श्लेष्यन्तां कंकटा देहेष्वागच्छन्तु पदातयः । गण्यन्तामाशु सैन्यानि क्रियन्तां वरकल्पनाः ॥ २४ ॥

śleṣyantāṃ kaṅkaṭā deheṣvāgacchantu padātayaḥ | gaṇyantāmāśu sainyāni kriyantāṃ varakalpanāḥ || 24 ||

Let the armors be fastened on the bodies, let the infantry come forward. Let the armies be counted quickly, and let excellent arrangements be made.

कवच को शरीरों पर बाँधा जाए, पैदल सैनिक आगे आएँ। सेनाओं की गिनती जल्दी की जाए और उत्तम व्यवस्था की जाए।

7.108.25

कल्प्यन्तां च बलाध्यक्षाः प्रेष्यन्तामभितश्चराः । श्रीवसिष्ठ उवाच । वदत्येवं त्वरायुक्तं संरम्भवति राजनि ॥ २५ ॥

kalpyantāṃ ca balādhyakṣāḥ preṣyantāmabhitaścarāḥ | śrīvasiṣṭha uvāca | vadatyevaṃ tvarāyuktaṃ saṃrambhavati rājani || 25 ||

Let the commanders of the army be appointed, and let the spies be sent in all directions. Vasishtha said: Speaking thus with urgency, the king became enraged.

सेना के अध्यक्षों को नियुक्त किया जाए, और चरों को सभी दिशाओं में भेजा जाए। वसिष्ठ ने कहा: इस प्रकार उतावली से बोलते हुए, राजा क्रोधित हो गया।

7.108.26

प्रतीहार उवाचेदं प्रविश्याकुलमानतः । प्रतीहार उवाच । उत्तराशाबलाध्यक्षो देव द्वार्यवतिष्ठति । काङ्क्षत्यब्जमिवार्कस्य देवदेवस्य दर्शनम् ॥ २६ ॥

pratīhāra uvācedaṃ praviśyākulamānataḥ | pratīhāra uvāca | uttarāśābalādhyakṣo deva dvāryavatiṣṭhati | kāṅkṣatyabjamivārkasya devadevasya darśanam || 26 ||

The doorkeeper said, entering the palace with respect, 'The commander of the northern forces, O Lord, stands at the door, eagerly desiring to see you, like a lotus seeking the sun.'

द्वारपाल ने प्रणाम करके कहा, 'हे देव, उत्तराशा बल के अध्यक्ष द्वार पर खड़े हैं, और वे आपके दर्शन की इच्छा रखते हैं, जैसे कमल सूर्य की प्रतीक्षा करता है।'

7.108.27

राजोवाच । गच्छाविलम्बितं तावदेनमेव प्रवेशय । जानीमः किं दिगन्तेषु वृत्तं वृत्तान्तसंश्रवात् ॥ २७ ॥

rājovāca | gacchāvilambitaṃ tāvadenameva praveśaya | jānīmaḥ kiṃ diganteṣu vṛttaṃ vṛttāntasaṃśravāt || 27 ||

The king said, 'Go quickly and bring him in. We will know what has happened in the distant lands from his account.'

राजा ने कहा, 'जाओ और उसे जल्दी से अंदर ले आओ। हम उसके वर्णन से दूर देशों में हुई घटनाओं के बारे में जानेंगे।'

7.108.28

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त उत्तराशेशं प्रतिहारप्रवेशितम् । प्रणामपरमग्रेऽसौ राजाऽपश्यद्बलाधिपम् ॥ २८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityukta uttarāśeśaṃ pratihārapraveśitam | praṇāmaparamagre'sau rājā'paśyadvālādhipam || 28 ||

Vasishtha said, 'Thus spoken, the commander of the northern forces was brought in by the doorkeeper. The king saw him bowing deeply in front of him.'

वसिष्ठ ने कहा, 'इस प्रकार कहने पर, उत्तराशा बल के अध्यक्ष को द्वारपाल द्वारा अंदर लाया गया। राजा ने उसे गहरा प्रणाम करते हुए देखा।'

7.108.29

क्षतविक्षतसर्वाङ्गमङ्गमङ्गेषुसंततम् । श्वासाकुलं वमद्रक्तं धैर्येणाबलनिर्जितम् ॥ २९ ॥

kṣataviкṣatasarvāṅgamaṅgamaṅgeṣusaṃtatam | śvāsākulaṃ vamadraktam dhairyenābalanirjitam || 29 ||

His entire body was wounded and covered in injuries. He was breathless, vomiting blood, yet he stood firm with courage, conquering his weakness.

उसका सारा शरीर घायल और घावों से भरा हुआ था। वह साँस फूल रहा था, खून उगल रहा था, फिर भी वह साहस से खड़ा था, अपनी कमजोरी पर विजय पाते हुए।

7.108.30

स प्रणम्य त्वरायुक्तमुवाचेदमुपक्रमम् । संस्तभ्याङ्गव्यथामाशु संततोच्छ्वासमुच्छ्वसन् ॥ ३० ॥

sa praṇamya tvarāyuktamuvācedamupakramam | saṃstabhyāṅgavyathāmāśu saṃtato'cchvāsamucchvasan || 30 ||

After bowing, he quickly began to speak, controlling his bodily pain and breathing heavily.

प्रणाम करने के बाद, वह जल्दी से बोलना शुरू कर दिया, अपने शारीरिक दर्द को काबू में करते हुए और भारी साँस लेते हुए।

7.108.31

बलाध्यक्ष उवाच देव त्रयोऽपि दिक्पाला बलेन बहुना सह त्वदाज्ञयेव निर्जेतुं यमं यमपुरं गताः ॥ ३१ ॥

balādhyakṣa uvāca deva trayo'pi dikpālā balena bahunā saha tvadājñayeva nirjetuṃ yamaṃ yamapuraṃ gatāḥ || 31 ||

The commander said: O Lord, the three guardians of the directions, along with a large army, have gone to Yama's abode to defeat him by your command.

सेनापति ने कहा: हे देव, तीनों दिक्पाल बड़ी सेना के साथ आपकी आज्ञा से यम को पराजित करने के लिए यमपुर गए हैं।

7.108.32

तद्देशपालनाद्यर्थमशक्तं मामिमं ततः अनुद्रवन्तो बहवो भूपाः प्राप्ता बलादिह ॥ ३२ ॥

taddesapālanādyartham aśaktaṃ māmimaṃ tataḥ anudravanto bahavo bhūpāḥ prāptā balād iha || 32 ||

For the purpose of protecting that region, many kings have come here forcibly, considering me incapable of doing so.

उस क्षेत्र की रक्षा के लिए, मुझे असमर्थ मानकर बहुत से राजा बलपूर्वक यहाँ आए हैं।

7.108.33

महत्परबलं प्राप्तमिदं देवस्य मण्डलम् विधीयतां तथाप्राप्तं न देवस्यास्ति दुर्जयम् ॥ ३३ ॥

mahatparabalaṃ prāptam idaṃ devasya maṇḍalam vidhīyatāṃ tathāprāptaṃ na devasyāsti durjayam || 33 ||

This great enemy force has arrived in the realm of the Lord. Let it be arranged as it has come; there is nothing invincible for the Lord.

यह महान शत्रु सेना देव के मण्डल में आ गई है। जैसे आई है, वैसे ही व्यवस्था की जाए; देव के लिए कुछ भी अजेय नहीं है।

7.108.34

श्रीवसिष्ठ उवाच अथ तस्मिन्वदत्येवमार्तिमत्याजिविक्षते सहसैवाभ्युवाचेदं प्रविश्य पुरुषोऽपरः ॥ ३४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca atha tasmin vadaty evam ārtimatyājivikṣate sahasaiva abhyuvācedaṃ praviśya puruṣo'paraḥ || 34 ||

Vasishtha said: While he was speaking thus, feeling distressed and desiring to abandon life, another man suddenly entered and said this.

वसिष्ठ ने कहा: जब वह ऐसे बोल रहा था, दुःखी होकर और जीवन त्यागना चाहता था, तभी एक और व्यक्ति अचानक अंदर आया और यह कहा।

7.108.35

पुरुषा मण्डलस्यास्य विपुला दललीलया स्थितान्यरिबलान्युच्चैश्चतुर्दिक्कं नरेश्वर ॥ ३५ ॥

puruṣā maṇḍalasyāsya vipulā dalalīlayā sthitānyaribalānyuccaiścaturdikkam nareśvara || 35 ||

O King, the men of this realm are stationed in large numbers, playing with their forces, and the enemy forces are positioned in all four directions.

हे राजन, इस मण्डल के पुरुष बड़ी संख्या में अपनी सेनाओं के साथ खेल रहे हैं, और शत्रु सेनाएँ चारों दिशाओं में स्थित हैं।

7.108.36

कचच्चक्रगदाप्रासकुन्तकाननकान्तिभिः । वलिता नोऽरिभिर्भूमिर्लोकालोकतटैरिव ॥ ३६ ॥

kacaccakragadāprāsakuntakānanakāntibhiḥ | valitā no'ribhirbhūmirlokālokataṭairiva || 36 ||

The earth is surrounded by enemies with various weapons like discs, maces, swords, and arrows, resembling the boundary between the world and the otherworld.

धरती चक्र, गदा, प्रास, कुन्त और अन्य हथियारों से लैस शत्रुओं से घिरी हुई है, जैसे लोक और अलोक की सीमा हो।

7.108.37

पताकायुधयोध्रङ्गाश्चलत्परिकराकुलाः । विसरन्ति रथास्तत्र प्रोड्डीनत्रिपुरौघवत् ॥ ३७ ॥

patākāyudhayodhraṅgāścalatparikarākulāḥ | visaranti rathāstatra proḍḍīnatripuraughavat || 37 ||

The chariots, adorned with flags and weapons, are moving swiftly, resembling the swift movement of the three cities (Tripura) in the sky.

ध्वजाओं और हथियारों से सुसज्जित रथ तेजी से आगे बढ़ रहे हैं, जैसे आकाश में तीन नगरों (त्रिपुर) की तेज गति।

7.108.38

करानुन्नामयन्तः खे मांसवृक्षवनोपमाः । बृंहन्ति वारणव्यूहा वर्षावारिदवृन्दवत् ॥ ३८ ॥

karānunnāmayantaḥ khe māṃsavṛkṣavanopamāḥ | bṛṃhanti vāraṇavyūhā varṣāvāridavṛndavat || 38 ||

The elephant formations, resembling forests of flesh-trees, are expanding in the sky, as if they are clouds during the rainy season.

हाथियों की सेनाएँ, जो मांस के वृक्षों के जंगल की तरह लगती हैं, आकाश में फैल रही हैं, जैसे वर्षा के मौसम में बादल।

7.108.39

नतोन्नतानि कुर्वन्तः स्पन्देनोर्वीनतोन्नतैः । हेषन्ते हयसंघाता वातस्पन्दमहाब्धिवत् ॥ ३९ ॥

natonnatāni kurvantaḥ spandena urvīnatonnataiḥ | heṣante hayasaṃghātā vātaspandamahābdhivat || 39 ||

The groups of horses are neighing, creating undulations on the earth, resembling the vast ocean with its waves moved by the wind.

घोड़ों के समूह हिनहिना रहे हैं, धरती पर लहरें पैदा कर रहे हैं, जैसे हवा से उठी लहरों वाला विशाल समुद्र।

7.108.40

रसन्ति तुरगापुराः फेनिलावर्तपातिनः । सर्वतो वलयाकारा लवणार्णववारिवत् ॥ ४० ॥

rasanti turagāpurāḥ phenilāvartapātinaḥ | sarvato valayākārā lavaṇārṇavavārivat || 40 ||

The horse cities are shining, with foamy waves falling all around, resembling the salty ocean water.

घोड़ों के नगर चमक रहे हैं, फेनिल लहरें चारों ओर गिर रही हैं, जैसे नमकीन समुद्र का पानी।

7.108.41

आकाशकान्तिसन्नाहैर्दिशं प्रति बलं बलम् । उदेत्यलघुकल्लोलैः प्रलयार्णवपूरवत् ॥ ४१ ॥

ākāśakāntisannāhairdiśaṃ prati balaṃ balam | udetyalaghukallolaiḥ pralayārṇavapūravat || 41 ||

With the splendor of the sky, in every direction, forces rise like the waves of the ocean of destruction.

आकाश की कान्ति से सुसज्जित, सभी दिशाओं में, सेनाएँ प्रलय के समुद्र की लहरों की तरह उठती हैं।

7.108.42

शरास्त्रशस्त्रसन्नाहमुकुटाभरणत्विषः । कचन्ति त्वत्प्रतापाग्नेर्ज्वाला इव तदङ्गगाः ॥ ४२ ॥

śarāstrasannāhamukuṭābharaṇatviṣaḥ | kacanti tvatpratāpāgnerjvālā iva tadaṅgagāḥ || 42 ||

The arrows, weapons, armor, crowns, and ornaments shine like the flames of your fiery splendor.

तीर, अस्त्र-शस्त्र, कवच, मुकुट और आभूषण आपके तेज की ज्वालाओं की तरह चमकते हैं।

7.108.43

समत्स्यमकरव्यूहाः सचक्रावर्तवृत्तयः । उद्यन्ति सैन्यसंघट्टैः कल्लोला जलधेरिव ॥ ४३ ॥

samatsyamakaravyūhāḥ sacakrāvartavṛttayaḥ | udyanti sainyasaṃghaṭṭaiḥ kallolā jaladheriva || 43 ||

The formations of fish and crocodiles, with circular movements, rise like the waves of the ocean during the clash of armies.

मछली और मगरमच्छ की व्यूह रचनाएँ, गोल चक्करों के साथ, सेनाओं के टकराव के दौरान समुद्र की लहरों की तरह उठती हैं।

7.108.44

परस्परपरामर्शात्कुन्ताद्यायुधपङ्क्तयः । कोपादिवोग्रहुंकारैर्ज्वलन्ति विरटन्ति च ॥ ४४ ॥

parasparaparāmarśātkuntādyāyudhapaṅktayaḥ | kopādivograhukārairjvalanti viratanti ca || 44 ||

With mutual consultation, the rows of weapons like spears and others, blaze and roar with fierce cries of anger.

परस्पर परामर्श से, भाले आदि अस्त्र-शस्त्रों की पंक्तियाँ, क्रोध के भयंकर गर्जन से प्रज्वलित होती हैं और गरजती हैं।

7.108.45

इति कर्तुमहं देव विज्ञप्तिं स्वामिनेरितः । तस्मान्मण्डलसीमान्तगुल्माद्युद्धाय गच्छता ॥ ४५ ॥

iti kartumahaṃ deva vijñaptiṃ svāmineritaḥ | tasmānmandalasīmāntagulmādyuddhāya gacchatā || 45 ||

Thus, O Lord, I have been ordered by the master to inform you. Therefore, go to the boundary of the battlefield for the battle.

इस प्रकार, हे देव, मैं स्वामी द्वारा आदेशित होकर आपको सूचित करने आया हूँ। अतः, युद्ध के लिए रणभूमि की सीमा पर जाओ।

7.108.46

तमहं देव गच्छामि शक्त्यृष्टिशरसंगतः । मयेहावेदितं सर्वं देवो जानात्यतः परम् ॥ ४६ ॥

tamahaṃ deva gacchāmi śaktyṛṣṭiśarasaṃgataḥ | mayehāveditaṃ sarvaṃ devo jānātyataḥ param || 46 ||

I go to the divine being, equipped with the arrows of power and wisdom. Here, everything is known by me; beyond this, the divine knows.

मैं दिव्य प्राणी के पास जाता हूँ, शक्ति और बुद्धि के बाणों से सुसज्जित | यहाँ, सब कुछ मुझे ज्ञात है; इसके पार, दिव्य जानता है।

7.108.47

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वाथ प्रणामं च स कृत्वा त्वरया ययौ । कृत्वा गुलुगुलारावं शान्तो वीचिरिवाम्बुधेः ॥ ४७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvātha praṇāmaṃ ca sa kṛtvā tvarayā yayau | kṛtvā gulugulārāvaṃ śānto vīcirivāmbudheḥ || 47 ||

Sri Vasistha said: Having said this, he bowed and quickly departed, making a rumbling sound, calm like the waves of the ocean.

श्री वसिष्ठ ने कहा: ऐसा कहकर उसने प्रणाम किया और तुरंत चला गया, गुड़गुड़ाहट की आवाज करते हुए, समुद्र की लहरों की तरह शांत।

7.108.48

संभ्रान्तमन्त्रिनृपयोधनियोगिनागनारीरथाश्वपरिचारकनागरौघम् । राज्ञो गृहं स्वभयतोलितहेतिसार्थं चण्डानिलाकुलमहावनतुल्यमासीत् ॥ ४८ ॥

saṃbhrāntamantrinṛpayodhaniyogināganārīrathāśvaparicārakanāgaraugham | rājño gṛhaṃ svabhayatolitahetisārthaṃ caṇḍānilākulamahāvanatulyamāsīt || 48 ||

The king's palace became chaotic with frightened ministers, soldiers, ascetics, women, chariots, horses, attendants, and citizens, all agitated by the fierce wind, resembling a great storm.

राजा का महल डरे हुए मंत्रियों, सैनिकों, योगियों, महिलाओं, रथों, घोड़ों, सेवकों और नागरिकों से भर गया, सब तेज हवा से व्याकुल, एक बड़े तूफान की तरह।